। ॐ अर्हं नमः ।

श्रीविनयविजयजीउपाध्यायविरचित

श्री लोकप्रकाश ग्रन्थ

विभाग ३ जो–४ थो.

काळलोक तथा भावलोक

मूळ तथा भाषान्तर सहित

: आर्थिक सहायक :

स्व० शेठ अमृतलाल पुरुषोत्तमदासना श्रेयार्थे

हीरालाल अमृतलाल शाह

: छपावी प्रसिद्ध करनार :

श्री जैन धर्म प्रसारक सभा.

भावनगर (काठियावाड)

वीर संवत २४६०] विक्रम संवत १९९० [इस्वी सन १९३४

मूल्य— { हिन्दमां रु. ३/८. पोष्टेज अलग । हिन्द बहार शी० ७/- पोष्टेज सहित ।

{ साधु साध्वीजीने–गुरु मार्फत १ प्रति भेट । जाहेर लाइब्रेरीने–अरधी किमते ।

लोकप्रकाश

(विभाग ३-४)

LOKA PRAKĀS'A

(Vols III—IV)



(Treating "Kāla" Loka and "Bhāva" Loka)

by

Upādhyaya S'ri Vinayavijayaji

Sanskrit Text with Gujarati Translation.



Published by

S'ri Jaina Dharma Prasāraka Sabhā

Bhavnagar (Kathiawad-India.)

Vira Samvat 2460] A.D 1934. [Vikrama Samvat 1990.



Price Rs. 3/8 (Inland) excluding Postage.

Foreign: Sh. 7/- Including Postage charges etc.

Note—To Public Libraries at half the Price.

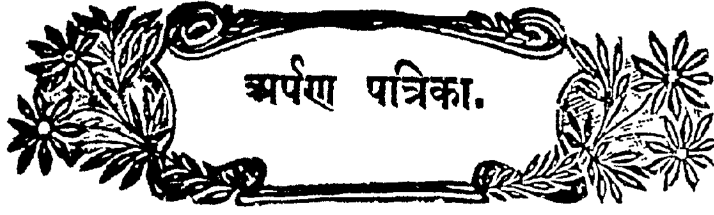


स्व. शेठ अमृतलाल पुरुषोत्तमदास

जन्म-वि स १९२३ मार्ग० शु० ९ रवि   मृत्यु-वि स १९७३ मार्ग० शु० १३ गुरु

Late Seth Amritlal Purushottamdas

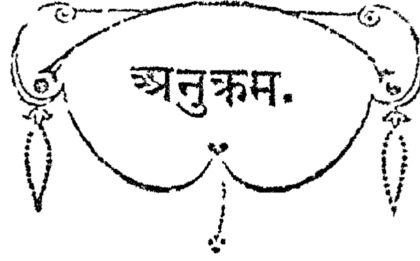
Born 30th Dec. 1866   Died 7th Dec 1916



शेठ अमृतलाल पुरुषोत्तमदास.

स्व० शेठ अमृतलाल पुरुषोत्तमदासनुं कुटुंब मूळ राधणपुर (जैनपुरी) निवासी खानदान गणातुं छे. ते कुटुंब केटलाक वर्षोथी भावनगरमां आवीने वसेलुं छे अने तेमणे पोतानी खानदानी अने धर्मचुस्तपणुं जाळवी राख्युं छे.

स्व० शेठ पुरुषोत्तमदास हेमजीए (जेमना ची. भाई अमृतलाल सुपुत्र छे) पोतानी जींदगीमां अनेक धर्मकार्यो कर्यां छे तेमां खास कार्य भावनगर नजीक मात्र त्रण गाउ दूर वरतेज ग्रामे सुंदर जिनमंदिर जातमहेनत लइ बंधावी श्रीसंभवनाथजी महाराजनी संवत १९२८ ना माहा शुदि १३ से प्रतिष्ठा करावी ते छे. आ ग्राम ते दिवसथी एक तीर्थ जेवुं गणावा लाग्युं छे. सर्व यात्रालु दर्शनार्थे त्यां आवे छे तेम ज तेनी वर्षगांठने दिवसे सेकडो माणसो भावनगरथी त्यां जाय छे अने जिनभक्ति निमित्ते उत्सव करी पूजा भणावे छे तेम ज स्वामीवात्सल्य थाय छे. स्व० शेठ पुरुषोत्तमदास भावनगरना श्री संघमां एक अग्रणी गणाता हता. तेमने त्यां भाइश्री अमृतलालनो जन्म सं. १९२३ ना मागशर वदि ९–१० मे थयो हतो. (फोटो आ साथे आप्यो छे) मागशर वदि १० मे (पोषदशमे) तेनी वधामणी मळी हती. एमणे बाल्यावस्थाथी उदयना सारा चिन्हो बताव्या हता. एमनामां धर्मश्रद्धा पूर्ण हती. धार्मिक कार्योमां एमणे सारो द्रव्यव्यय कर्यो छे. तेओ गरीब अवस्थामांथी स्वाश्रय ने पोतानी बुद्धिथी आगळ वधी व्यापारमां निपुण थया. अने मुंबइ जइ कापडना व्यापारमां निष्णात थइ स्वतंत्र दुकान पोताना पुत्र हीरालाल अमृतलालना नामथी सं. १९५७ मां शरु करी तेओ अनेक धर्मकार्यो करी एक पुत्र, एक पुत्री अने धर्मपत्नीने तजी दइने सं. १९७३ ना मागशर शुदि १३ से ५० वर्षनी वये पंचत्व पाम्या. जैनसमुदायमां एमना अभावथी एक योग्य मनुष्यनी खामी पडी. तेमना पुत्र हीरालाले एक खास कार्य तो पोताना उपकारी पितानी इच्छानुसार तेमना कायमना नामस्मरणमाटे भावनगर स्टेशन उपर एक सुंदर धर्मशाळा यात्रालुओ विगेरे जैनबंधुओने उतरवानी सगवड आपनारी बंधावी, तेमां सुमारे रु. ६००००) लगभग खर्च कर्यो अने तदुपरांत पिताश्रीनी इच्छानुसार तेमना निमित्ते विविध प्रकारे पचासेक हजारनो बीजो खर्च शुभ कार्यो पाछळ कर्यो छे. भाइ श्री हीरालाल केळवणी पर प्रीतिवाळा होवाथी केळवणीना अंगना बीजां पण केटलाक कार्यो तेमणे कर्यां छे ने करे छे. आ पुस्तक छपाववामां पण तेमणे पूरता खर्चनी सहाय करी छे अने ते पोताना पूज्य पिताश्रीने अर्पण करीने किंचित् अनृणी थवानी धारणा राखी छे. एमनुं कार्य पूर्ण प्रशंसनीय छे अने वाचकवर्गना आदरने पात्र थशे तेवी आशा छे. सं. १९९० दीपालिका. प्रकाशक.



अनुक्रम.



प्रस्तावना.

"लोक"

आ जगतमां जीव अने अजीव ए बे ज पदार्थो छे. तेमां संसारी अने मुक्त ए बे प्रकारे जीव छे. रूपी अने अरूपी ए बे प्रकारे अजीव छे. जीवने एकांत दुःखमय संसारमां अटन करवुं अथवा एकांत सुखमय मोक्षमां स्थित थवुं आ बन्ने मार्गनो सहायक अमुक अपेक्षाए अजीव पदार्थ छे. तेना मुख्य पांच भेद छे–धर्मास्तिकाय १, अधर्मास्तिकाय २, आकाशास्तिकाय ३, पुद्गलास्तिकाय ४ अने काळ ५. आनी साथे जीवद्रव्यने भेळवतां कुल छ द्रव्य थाय छे. आ छए द्रव्यो जेमां रहेलां छे ते **लोक** कहेवाय छे. (तेनाथी अन्य **अलोक** कहेवाय छे.) **"लोक्यन्ते द्रव्याणि अस्मिन्निति लोकः"**–जेमां सर्व द्रव्यो जोवामां आवे छे ते **लोक** कहेवाय छे. (अलोकमां आकाश सिवाय अन्य द्रव्य छे ज नहीं.) पुद्गल द्रव्य एक ज रूपी छे, बाकीना पांच अरूपी छे, तेमां जीव पुद्गलसंगे रूपी छे. आ छ द्रव्यरूप लोकनो जे प्रकाश ते **लोकप्रकाश** नामनो आ ग्रंथ छे. आना मुख्य चार विभाग पाड्या छे–द्रव्य, क्षेत्र, काळ अने भाव. जो के एक **द्रव्य** शब्दमां ज क्षेत्रादिक त्रणेनो समास थइ शके छे तो पण क्षेत्र अने काळनी बाबतमां वधारे विस्तार करवानो होवाथी तथा भावनुं स्वरूप अति संक्षिप्त छतां ते आत्माना अध्यवसायरूप होवाथी कर्त्ताए तेमनुं भिन्न निरूपण करवा इच्छयुं छे. षद् द्रव्योनुं विस्तृत स्वरूप कहेनार आ ग्रंथ समान अन्य ग्रन्थ प्राये जोवामां आव्यो नथी.

"ग्रन्थकर्ता"

आ अपूर्व ग्रन्थना कर्ता पण महाप्रसिद्ध विद्वान् उपाध्याय श्री **विनयविजयजी** महाराज छे के जेओ श्री **कल्पसूत्र** उपर **सुबोधिका** नामनी टीका, **श्रीपालरास** विगेरे अनेक संस्कृत ने गुजराती ग्रन्थोना कर्ता तरिके सुप्रसिद्ध छे, जेनुं लीस्ट पाछळ आपवामां आव्युं छे. आ महात्मानो जन्मसमय, निवासस्थान, दीक्षासमय विगेरे केटलोक उपयुक्त वृत्तांत जाणवामां आव्यो नथी, परन्तु आ ज ग्रन्थना दरेक सर्गना अंतिम श्लोकमां **राजश्री** (राजबाइ) माता अने **तेजपाल** पितानुं नाम आवे छे. आवा नामो वणिक ज्ञातिमां ज प्राये होइ शके छे तेथी तेओ सांसारिक दशामां वणिक जातिना हता एम सिद्ध थाय छे, तेम ज वाचकेंद्र (उपाध्याय) श्री **कीर्तिविजयजीना** पोते शिष्य हता एम पण ते ज अंतिम

---

१ क्षेत्र ते आकाशास्तिकाय छे ने तेमां रहेला रूपी पदार्थोनो एमां समास थाय छे.

२ आमां भावनो समास थाय छे.

होवाथी ज्योतिषने लगता २८ मा सर्गनो उपोद्‌घात तेमणे जुदो लख्यो छे अने तेमां तेने अनुसरती हकीकत मेघदूतमांथी, पुरातत्त्व मासिकमां आपेला ज्योतिष वेदांगना लेखमांथी अने कौटिल्यना "अर्थशास्त्र" मांथी जे मळी शकेल छे ते पण वाचकवर्गनी सुगमताने अर्थे दाखल करेल छे ते उपोद्‌घात आ साथे ज आपवामां आवेल छे.

२८ मा सर्गनो उपोद्‌घात.

काललोकना प्रथमना २८ मा सर्गमां काळनुं स्वरूप बतावतां प्रथम काळ ए द्रव्य ज होई शके नहीं ए वातने मजबूत करी पछी छेवटे विस्तारथी युक्तिवडे अने आगमवडे काळने द्रव्यपणे सिद्ध करेल छे. पछी वर्तना, परिणाम, क्रिया अने परापर ए काळना चार प्रकारो प्रथम संक्षेपथी आपीने पछी विस्तारथी आप्या छे; तथा अढी द्वीपनी बहार चरज्योतिषी न होवाथी काळ द्रव्य छे नहीं ते विषय पण ऊहापोहथी सिद्ध कर्यो छे. त्यारपछी सन्नामकाळ १, स्थापनाकाळ २, द्रव्यकाळ ३, अद्धाकाळ ४, यथायुष्ककाळ ५. विगेरे अग्यार प्रकारे कालना निक्षेपा कही तेने विस्तारथी प्रतिभेद सहित समजाव्या छे. तेमां छठ्ठा उपक्रमकाळ नामना निक्षेपामां इच्छाकार, मिच्छाकार विगेरे दश प्रकारनी सामाचारी विस्तारथी वर्णवी छे. नवमो प्रमाणकाळ नामनो काळनो निक्षेपो छे तेनो ज विषय आ काललोकप्रकाशमां छे केमके ते प्रमाणकाळ अतीत, अनागत अने वर्तमान ए त्रण प्रकारनो छे अने ते त्रण प्रकारने आश्रीने ज आ ग्रंथनो विस्तार छे. पछी आ प्रमाणकाळना संख्यात, असंख्यात अने अनंत एवा त्रण विभाग पाड्या छे. तेने अंगे समय–आवली–क्षुल्लकभव–प्राण–स्तोक–लव–मुहूर्त्त–दिवस–मास–वर्ष अने युग विगेरेथी शरु करीने पल्योपम, सागरोपम, काळचक्र, पुद्‌गलपरावर्त पर्यंत काळने दाखला दलील सहित विस्तारथी समजाव्या छे. सूक्ष्ममां सूक्ष्म काळने समय कह्यो छे. ते कोइ रीते लक्ष्यमां आवी शके तेम नथी तेथी कमळना पांदडा विगेरेना दृष्टांतथी तेनी समज पाडी छे. चालता काळने अनुसरीने दृष्टांत आपीए तो पण आपी शकाय छे. जेमके–भावनगरथी मुंबइ सुधी अरजंट तार मूक्यो. तेना अक्षरोना धडाका तारनी दोरी उपर चाल्या ते दोरीना एक पोइंटथी बीजा पोइंट उपर जतां केटलो काळ लाग्यो ते ज कही शकाय तेम नथी, तो तेथी पण घणो सूक्ष्म समयरूप काळ छे ते सूक्ष्मज्ञानी ज समजी शके तेम छे. जेम अति सूक्ष्म काळने समयना नामथी कह्यो छे, तेम सौथी मोटा काळने सागरोपम, काळचक्र अने पुद्‌गलपरावर्तना नामथी ओळखाव्यो छे. ते पण घणा दृष्टांतोथी समजाववामां आवेल छे. ते उपरांत काळनो तोल अने मापथी पण निर्देश थइ शके छे ते युक्तिथी स्पष्ट रीते समजाव्युं छे. आ विषय नूतन वाचकोने आश्चर्य उत्पन्न करे तेवो छे.

सर्ग २८.

त्यारपछी सूर्यसंवत्सर १, ऋतुसंवत्सर २, चंद्रसंवत्सर ३, नक्षत्रसंवत्सर ४ अने

अभिवर्धितसंवत्सर ५–ए पांच प्रकारना वर्ष तथा मास अने तेनो उपयोग विगेरे सविस्तर जणावेल छे. त्यारपछी पांच वर्षना युगनुं स्वरूप, दरेक युगना आरंभनो

प्राचीन ज्योतिष मास, पक्ष, तिथि, दिवस विगेरे बतावी त्यारपछी विषुवत्नुं स्वरूप आप्युं छे. त्यारपछी एक युगमां चंद्रना १३४ अयनोनुं स्वरूप आप्युं छे. (जुओ पृष्ठ ७८)

त्यारपछी सूर्य तथा चंद्रने आश्रीने ऋतुओनुं स्वरूप आप्युं छे, तेमां चंद्रऋतु

ऋतु अप्रसिद्ध छे अने ते एक युगमां एटले पांच वर्षमां ४०२ आवे छे ज्यारे सूर्यऋतु एक युगमां ३० एटले एक वर्षमां ६ आवे छे.

'अहीं आगममां कहेलुं छए ऋतुनुं कांइक स्वरूप कहीए छीए' एम कहीने ज्योतिष करंडना अभिप्राये प्रावृष १, वर्षा २, शरद ३, हेमंत ४, वसंत ५, ग्रीष्म ६ आ अनुक्रमे छ ऋतु लखी छे. अने प्रथम प्रावृष ऋतु अषाड मासनी पूर्णिमाथी शरु थाय छे एम कह्युं छे. ए क्रमे बे बे मासनी एकेक ऋतु कहेली छे. आ विषयने अंगे ज्योतिषकरंडनो पाठ आ प्रमाणे छे. पाउसवासारत्तो, सरओ हेमंतवसंतगिम्हा य । एए खलु छप्पि उऊ जिणवरदिठ्ठा मए सिठ्ठा ।। (पृष्ठ ७९) आ आधार ऋतुओना नाम अने क्रमने माटे ज छे, ऋतुनी शरुआतने माटे तो श्रावणवदि १ कही छे. (जुओ पृष्ठ ६१ श्लोक ६९) आ ऋतुओना आदि तथा अंतनी तिथि जाणवा माटे करण (रीत) बताववा पूर्वक विस्तारथी उदाहरणो मूकी सारी समजूती आपी छे. मतांतरे भगवती सूत्रनी टीका तथा जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रने आधारे प्रावृष ऋतुनी शरुआत श्रावण मासथी करी छे. ते ज अनुक्रमे छेल्ला ग्रीष्म ऋतुनी शरुआत जेठ मासथी करी छे. (जुओ पृष्ठ ८४) आ विषे जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिनो पाठ जुओ पृष्ठ ६०

बीजी तरफ आगममां जोतां निरयावलिका सूत्रमां वन्हिदसा नामना पांचमा वर्गमां वीरंगदत्तकुमारना अधिकारमां छ ऋतुना नाम आ प्रमाणे कह्या छे. "पाउसवरिसारत्तसरयहेमंतगिम्हवसंते छप्पि उऊ" ।। अहीं छेल्ला बे ऋतुना क्रममां फेरफार छे. तेना टबामां प्रावृष ऋतुना जेठ ने अषाड मास लख्या छे. ए अनुक्रमे बबे मासना ऋतु गणी छेवट ग्रीष्मना माघ ने फाल्गुन तथा वसंतना चैत्र ने वैशाख मास गण्या छे तेम ज व्यवहारमां जोइए छीए तो वर्षा, शरद, हेमंत, शिशिर, वसंत अने ग्रीष्म आ प्रमाणे नामनो अनुक्रम चालता पंचांगमां जोवामां आवे छे, ते क्रम मुजब ज प्राचीन ग्रन्थ "कौटिलीय अर्थशास्त्र" (इ. स. पू. ३५० आशरे) मां क्रम छे. व्यवहारमां मासनी प्रधानता राखी नथी परंतु

---

१ दिवस रात्री प्रमाणमा सरखा होय ते.

२ अषाड मासनी पूर्णिमानो दिवस पूर्ण थाय के तरत बीजो दिवस ज श्रावण वदि १ छे. एम वाचनारे ख्यालमा राखवुं

सूर्यसंक्रांति प्रमाणे ऋतुओनी गणतरी करी छे. एटले के—कर्क अने सिंह ए बे संक्रांति वर्षा ऋतु, ए अनुक्रमे छेवट वृष अने मिथुन ए बे संक्रांति छट्ठा ग्रीष्म ऋतुनी आवे छे. तेमां पहेलो वर्षा ऋतु हाल अषाडमां शरु थाय छे परंतु ते शुक्लपक्षमां के कृष्णपक्षमां अने कइ तिथिओ शरु थाय छे तेनो कशो नियम नथी. केमके तेनो आधार सूर्यसंक्रांति उपर छे. (ऋतुओ संबंधी निर्णय स्वसमयने आश्रीने पण मतांतरो होवाथी दुष्कर छे तो परमतादिकने आश्रीने तो घणा मतांतरो थाय ए स्वाभाविक छे)

त्यारपछी मास, पक्ष, तिथि, रात्रिदिवस विगेरेना लौकिक अने लोकोत्तर नाम, तिथिओना नामो, तेना स्वामी, तेमनुं काळमान, क्षयतिथिनुं स्वरूप, बव बालव विगेरे करणनुं स्वरूप हंमेशना त्रीश मुहूर्तोना नाम, चंद्र सूर्यना नक्षत्रोनुं स्वरूप अने छेवट पोरसी, सार्धपोरसी विगेरेना काळमान ने छायाना प्रमाणनुं स्वरूप आ सर्व विषयो विस्तारथी आप्या छे. (सर्ग २८ पर वधारे विवेचन जुदुं करेलुं छे, तेमां बीजी बाबतो विस्तारथी कही छे.)

आ काळलोकना त्रीजा सर्गमां अवसर्पिणीना प्रथमना चार आरानुं स्वरूप सामान्य रीते आप्युं छे अने पांच वर्षना युगथी मांडीने शीर्षप्रहेलिका सुधीनी संख्या वल्लभी ने माथुरी बंने वाचना प्रमाणे आपवामां आवी छे. पल्योपम ने सागरोपमनुं स्वरूप टूंकामां आप्युं छे पछी अवसर्पिणी, उत्सर्पिणीनुं स्वरूप बतावतां अवसर्पिणीना प्रथमना त्रण आरामां थता युगलिकनुं विस्तृत स्वरूप आप्युं छे अने त्रीजा आरानी प्रांते थयेला प्रथम तीर्थंकर ने प्रथम चक्रीनी हकीकत जरा विस्तारथी आपी छे. पछी उेना चोथा आरामां थयेला २३ तीर्थंकर ने ११ चक्रीनुं स्वरूप संक्षेपथी कह्युं छे. एकंदर २४ तीर्थकर, १२ चक्रवर्ती, ९ वासुदेव, ९ बळदेव, ९ प्रतिवासुदेव, ९ नारद ने ११ रुद्र एम ८३ उत्तम पुरुषो संबंधी हकीकत आपीने सर्ग पूरो कर्यो छे.

सर्ग २९ मो.

आ सर्गमां सर्व तीर्थंकरो संबंधी सामान्य हकीकत आपी छे. तेमां प्रथम तीर्थंकरनामकर्म बांधवाना कारणभूत वीश स्थानको होय छे तेना नाम अर्थ सहित आपी तेनी आराधनानो विधि कह्यो छे. आ तीर्थंकरनामकर्म साधु, साध्वी, श्रावक अने श्राविका ए चारेमांथी कोइ पण बांधी शके छे—निकाचित करे छे. ते अरिहंतो पूर्वजन्ममां वैमानिक देव होय छे अथवा तीर्थंकरनामकर्म बांध्या अगाउ आयुष्य बांधी दीधुं होय तो प्रथमनी त्रण नरकमां पण होय छे. देवभवमां होय तो तीर्थंकर थनारा जीवने च्यववाना समय सुधी शरीरनी कांति विगेरे वधती ज रहे छे, तेने तथा चरमशरीरीने पण च्यवनना चिह्न कांइ पण थता नथी. नारकी होय तो बीजा नारकी करतां तेने स्वल्प पीडा होय छे. ते ज्यारे त्यांथी च्यवे छे त्यारे उच्च गोत्रवाळा उत्तम

सर्ग ३० मो.

क्षत्रियकुळमां सुशीला एवी राजपत्नीनी कुक्षिमां (त्रण ज्ञान सहित ज) अवतरे छे. ते वखते माता चौद स्वप्न देखे छे. ते ज प्रमाणे चक्रवर्तीनी माता पण चौद स्वप्न जुए छे, परंतु ते तीर्थंकरनी माता करतां कांइक हीन कांतिवाळा जुए छे. तेम ज जो ते एक ज जीव एक ज भवमां चक्रवर्ती थइ तीर्थंकर थवानो होय तो तेनी माता चौद स्वप्नने बे वखत जुए छे. स्वप्नना अधिकारने प्रसंगे वासुदेवनी माता सात स्वप्न जुए, बळदेवनी माता चार, प्रतिवासुदेवनी माता त्रण अने मांडलिकनी माता एक स्वप्न जुए छे एम कह्युं छे. वळी रावण प्रतिवासुदेव गर्भमां आव्या त्यारे तेनी माता कैकसीए रात्रिए स्वप्नमां पोताना मुखमां प्रवेश करता सिंहने जोयो. एम एक स्वप्न जोयानुं हेमचंद्राचार्यकृत रामचरित्रमां कह्युं छे एम लखे छे. तेम ज मेघकुमार विगेरे महामुनि थनारनी माता पण एक स्वप्न जुए छे. एम पण कह्युं छे. आ प्रमाणे तीर्थंकरनी माता स्वप्न जोइ तरत जागे छे अने पोताना स्वामी पासे तरत ज जइ ते हकीकत कहे छे. ते पण तेनुं घणुं श्रेष्ठ फल प्राप्त थशे एम कहे छे. पछी प्रातःकाले सभामां नैमित्तिकने बोलावी तेनुं फळ पूछतां नैमित्तिक सर्व स्वप्ननी हकीकत जाहेर करी, आ १४ स्वप्नना प्रभावथी तीर्थंकर थनार जीव गर्भमां आव्यानुं जणावे छे. त्यारपछी माता कांति, गुण विगेरेमां सर्व प्रकारे वृद्धि पामे छे. उत्तम दोहद उत्पन्न थाय छे. तेने तेना स्वामी पूर्ण करे छे. तेमना प्रभावथी देश पण आबाद थाय छे. पछी पूर्ण समये शुभ अवसरे तीर्थंकरनो जन्म थाय छे. ते वखते ५६ दिक्कुमारिकाओ आवी तेमनुं सूतिकर्म भक्तिपूर्वक करे छे. शक्रेंद्रादिक ६४ इंद्रो अने देवो मेरुपर्वत उपर तेमनो जन्माभिषेक करे छे. पछी शक्रेंद्र प्रभुने माता पासे मूकी प्रभुना अंगुष्ठमां अमृत संक्रमावे छे जेथी प्रभुने स्तनपाननी अपेक्षा रहेती नथी. पछी प्रभुना पिताने पुत्रजन्मनी वधामणी मळतां ते पोताना वैभव प्रमाणे मोटा विस्तारथी पुत्रजन्मोत्सव, नामकरणोत्सव विगेरे करे छे. अनुक्रमे प्रभुनी बाल्यावस्था, युवावस्था, भोगावळी कर्म अनुसार पाणिग्रहण, राज्याभिषेक, राजनीति विगेरे प्राप्त थाय छे. पछी योग्य समये प्रभु वार्षिकदान आपी प्रव्रज्या ग्रहण करे छे ते वखते पित्रादिक स्वजनो अने इंद्रादिक देवो विस्तारथी दीक्षा महोत्सव करे छे. दीक्षा ग्रहण करे के तरत ज प्रभुने मनःपर्यव नामनुं चोथुं ज्ञान प्राप्त थाय छे. ते दिवसे कांइ पण नानो मोटो तप होय छे अथवा कोइने नथी पण होतो. तेनुं पारणुं प्रभु जे भाग्यवंतने घेर करे त्यां देवो पंचदिव्य प्रगट करे छे—तेमां सुवर्णनी वृष्टि उत्कृष्टथी साडाबार क्रोड अने जघन्यथी साडाबार लाखनी थाय छे. पछी भगवानना छद्मस्थ विहारनो वृत्तांत कर्त्ता लखे छे, ते वखते प्रसंगोपात्त क्षुधा, पिपासा विगेरे बावीश परीषहो विस्तारथी वर्णव्या छे. त्यारपछी देव, मनुष्य, तिर्यंच संबंधी अने स्वसंवेद्य ए चार प्रकारना उपसर्गो तथा तेना दरेकना चार चार भेदो बतावी ते सर्वने तीर्थंकरो सम्यक् प्रकारे सहन करे छे एम बताव्युं छे. तेवे समये पण प्रभुने तो शुभ ध्यान ज होय छे. आ प्रसंगे आर्त, रौद्र, धर्म अने शुक्ल ए चार प्रकारना ध्याननुं सूक्ष्म रीते विस्तृत स्वरूप, तेना आलंबन, अनुप्रेक्षा, चिह्नो विगेरे समजाव्या छे तेमां प्रभु प्रथम पूर्वजन्मथी ज धर्मध्यानमां रक्त होय छे. दीक्षा

ग्रहण कर्या पछी उत्कृष्ट धर्मध्यानमां रही पछी अनुक्रमे शुक्लध्यानना पहेला तथा बीजा पायामां आवी चारे घाती कर्मनो क्षय करी केवळज्ञान पामे छे. ते ज वखते सर्व (६४) इंद्रो देवो सहित त्यां आवे छे अने समवसरण रचे छे. तेमां चारे निकायना देवो पोतपोताना आचार प्रमाणे कार्य करे छे. प्रथम वायुकुमार देवो एक योजन प्रमाण भूमिने साफ करे छे. पछी मेघकुमार देवो सुगंधि जळ छांटे छे. ऋतुना अधिष्ठायक देवो पंचवर्णवाळा सुगंधि पुष्पोवडे पृथ्वीने पूजे छे. पछी व्यतंर देवो सवाकोश ऊंचुं रत्न अने मणिमय पीठ रचे छे. ए स्थाने दश हजार पगथीआ चडतां प्रथम गढ आवे छे.

अनुक्रमे रूपानो, सुवर्णनो अने रत्ननो एम त्रण गढ, तेना चार चार दरवाजाओ, तेना आरक्षक देवो, वच्चेना पगथीआओ, त्रीजा गढनी अंदर मध्यभागे वेदिका, तेना मध्यमां अशोकवृक्ष अने चैत्यवृक्ष, तेनी नीचे प्रभुने देशना देवा माटे चारे दिशामां छत्र–चामरादिक सहित चार सिंहासनो विगेरे पोतपोताना अधिकार प्रमाणे रचे छे. आभ्यंतर गढमां बार पर्षदाओनुं स्थान होय छे. बीजा गढमां तिर्यंचो अने त्रीजा गढमां वाहनोने माटे सगवडता करवामां आवे छे. आवा मोटी शोभावाळा समवसरणनी रचना चारे निकायना देवो पोतपोताना अधिकार प्रमाणे करे छे. अन्यदा कोइ महर्द्धिक देव पोतानी भक्तिथी एकलो पण रची शके छे, त्यारपछी पण भगवान ज्यां ज्यां विचरे छे त्यां त्यां भक्तिवाळा देवो ते ज प्रमाणे समवसरणनी रचना करे छे.

हवे प्रभु देवोए विकुर्वेला नव सुवर्णकमळो उपर पग मूकता अनुक्रमे समवसरणमां पूर्वद्वारथी प्रवेश करी, तीर्थने नमस्कार करी, पूर्व सिंहासनपर पूर्वाभिमुखे बेसे छे. बाकीना त्रण सिंहासन उपर प्रभुना ज अतिशयथी देवोए विकुर्वेला प्रभुना त्रण प्रतिबिंबो बिराजे छे. पछी प्रभु सुंदर वाणीवडे एवी देशना आपे छे के ते पर्षदामां रहेला देव, देवी, मनुष्य, मनुष्यणी, तिर्यंच, तिर्यंची विगेरे सर्व जीवो जाणे भगवान पोताने ज कहे छे एम पोतपातानी भाषामां सारी रीते समजी शके छे. ते उपर भिल्ल अने तेनी त्रण स्त्रीओनुं दृष्टांत आप्युं छे. भगवाननी वाणीनी मधुरता विषे एक डोशीनुं दृष्टांत आप्युं छे. जिनेश्वरनी वाणीना ३५ गुणो नाम अने अर्थ सहित आप्या छे. त्यारपछी भगवान देशनामां प्रथम पांच महाव्रत संबंधी अने पछी अणुव्रत, गुणव्रत, शिक्षाव्रत विगेरे श्रावकना १२ व्रत संबंधी देशना आपे छे. तेना पेटामां हितशिक्षा, सामायिकना प्रकार, अढार हजार शीलांगनुं स्वरूप, अढार हजार सामाचारी संबंधी रथनुं स्वरूप, श्रावकव्रतना अनेक प्रकारना भंगो, त्रण योग अने त्रण करणथी थता २१ भेदो, पांच व्रतोना संयोगी ३१ भांगा, श्रावक व्रतना भांगाथी बनती देवकुलिका विगेरे साधु अने गृहस्थोने उपयोगी घणी हकीकतो सविस्तर यंत्र सहित आपी छे. त्यारपछी ते पर्षदामां गणधरपदने लायक जे मुनिओ होय तेमने प्रभु

उत्पत्ति, विगम अने ध्रौव्य ए त्रण पद (त्रिपदी) कहे छे. ते उपरथी बीजबुद्धिवाळा तेओ एक मुहूर्त्तमां ज द्वादशांगी रचे छे. त्यारपछी प्रभु गणधर स्थापना करे छे. ते वखते इंद्र सुगंधि वासचूर्णनो थाळ प्रभु पासे धरे छे. पछी प्रभु तेमने सूरिमंत्रयुक्त गणधरपदनी अनुज्ञा आपी तेमना पर वासचूर्ण नांखे छे. पछी इंद्रादिक देवो पण नांखे छे, वाजित्रो वगाडे छे अने मोटो उत्सव करे छे, पूर्व सिंहासन पर रहेला मुख्य प्रभु जे रीते करे ते ज रीते तेमना ज अतिशयथी बीजा त्रणे रूपो पण करे छे. ते रूपो प्रभुनी जेवा ज होय छे, तेनाथी रूपमां अनंतगुणहीन गणधरो होय छे, तेनाथी अनंतगुणहीन आहारकशरीरी होय छे, तेनाथी अनंतगुणहीन अनुत्तर विमानना देवोनुं रूप होय छे. ए क्रमे नीचे उतरतां अनंतगुण हीनरूप व्यंतरदेवोनुं, त्यारपछी अनुक्रमे अनंतगुणहीन चक्रवर्तीनुं, वासुदेवनुं, बलदेवनुं विगेरे सविस्तर बताव्युं छे. त्यारपछी प्रभुना आठ प्रातिहार्यो अने चोत्रीश अतिशयो बताव्या छे, अढार दोषोनुं वर्णन आप्युं छे अने छेवट प्रभुना निर्वाणनुं विस्तारथी वर्णन कर्युं छे विगेरे.

आ काळलोकना चोथा सर्गमां चक्रवर्त्तीनुं सामान्य स्वरूप कह्युं छे के जे दरेक चक्रवर्तीमां लभ्य थइ शके छे. चक्रवर्तीना दिग्विजयनुं एटले छ खंड साधवानुं साद्यंत स्वरूप आप्युं छे. छ खंड साधीने राजधानीमां आव्या पछी चक्रवर्तीने थतो चक्रीपणानो

सर्ग ३१ मो.

अभिषेक वर्णव्यो छे. त्यारबाद चौद रत्नो ने नव निधाननुं स्वरूप वर्णव्युं छे. तेमां वार्धकि रत्नना स्वरूपमां वास्तुशास्त्रनो केटलोक समावेश कर्यो छे. प्रांते चक्रवर्तीनी ऋद्धिनुं एकंदर वर्णन आप्युं छे. पछी वासुदेव, बळदेव ने प्रतिवासुदेवनुं सामान्य स्वरूप आप्युं छे ते पण सर्व वासुदेवादिकमां लभ्य थाय तेवुं छे. वासुदेवना रत्नो, स्त्रीओ, शक्तिनी तरतमता विगेरे बताव्युं छे. छेवट नारद ने रुद्रनी टुंकी हकीकत आपीने आ सर्ग पूर्ण कर्यो छे. (त्यारपछी आ बुकमां तीर्थकरोना संबंधमां ३२ मा सर्गमां दरेक प्रभुना चरित्रमां आवनारी अने महावीरचरित्रांतर्गत बधा प्रभु माटे जणावेली विगतो नोट तरीके आपवामां आवी छे.)

आ काळलोकना सर्ग पांचमामां चोवीश तीर्थंकरोना चरित्रो आपेला छे. तेमां प्रथम श्री ऋषभदेवनुं चरित्र घणुं विस्तारथी आपवामां आव्युं छे. तेमां जे हकीकत आपेली छे ते अनुक्रमणिकामां विस्तारथी बतावेली छे. तेनी प्रांते ऋषभदेवनी पछी

सर्ग ३२ मो.

थयेली पुत्र–पौत्रादिकनी परंपरा अने शिष्य–प्रशिष्यादिकनी परंपरा केवी रीते सिद्धस्थानने तेम ज अनुत्तर विमानने पामेली छे ? तेनुं वर्णन आपतां सिद्धदंडिका प्रकरणनो पूरतो समावेश कर्यो छे. तेना अर्थमां जरुरी यंत्रो पण आप्या छे.

त्यारपछी अजितनाथथी पार्श्वनाथ परमात्मा सुधीना चरित्रो पूर्वभव अने पंचकल्याणकनी तिथिओ साथे आप्या छे. तेमां शांतिनाथ, मल्लिनाथ, नेमिनाथ ने पार्श्वनाथना चरित्रमां कांइक विस्तार कर्यो छे. महावीरस्वामीना चरित्रमां तो घणो विस्तार कर्यो छे, तेम ज चोवीशे तीर्थंकरोना संबंधनी पण घणी हकीकत तेमां आपी छे, तेनुं लीस्ट आ ग्रंथमां पत्र ७१८ उपर आपेलुं छे. पछी चोवीशे तीर्थंकरोना गणधर, केवळज्ञानी विगेरे मुनिओनी पृथक् संख्या यंत्र साथे आपेली छे. बाद तीर्थंकर, चक्रवर्ती, वासुदेवादिनो काल सूचवनार यंत्र आपेल छे.

सर्ग ३३ मो.

आ काळलोकना छट्ठा सर्गमां प्रथम आ अवसर्पिणीमां थयेला भरतादि बार चक्रवर्तीओनुं वर्णन छे. तेमां आठमा ने बारमा चक्रीनुं चरित्र विस्तारथी आपेल छे.

त्यारपछी नव वासुदेवादिक जे आ चोवीशीमां थया छे तेनुं वर्णन आपवामां आव्युं छे. तेमां आठमा, नवमा वासुदेवादिकनुं चरित्र विस्तारथी आपेल छे. अने ११ रुद्रोना नामो आपी आ सर्ग समाप्त कर्यो छे.

सर्ग ३४ मो.

आ काळलोक संबंधी सातमा सर्गमां अवसर्पिणीना पांचमा अने छट्ठा आरानुं अने उत्सर्पिणीना छए आरानुं स्वरूप आपवामां आव्युं छे. तेमां प्रस्तुत पांचमा ने छट्ठा आरानुं स्वरूप विस्तारथी आप्युं छे. पांचमा आरामां थनारा उदयो अने तेमां थनारा युगप्रधानाचार्यो विगेरेनुं स्वरूप आप्युं छे. छट्ठा आरानी भीषण विषमता बतावी छे. तेमां शत्रुंजयनी रहेनारी स्थितिने अने तेना २१ नामो, तेनुं छए आरानुं प्रमाण विगेरे आप्युं छे.

पछी उत्सर्पिणीनी शरुआत थतां १९ प्रकारना काळनी शरुआत थाय छे, ते कहीने तेना पहेला ने बीजा आरानुं स्वरूप कहेतां बीजा आराना प्रारंभमां थनारा पांच प्रकारना वरसादनुं स्वरूप कह्युं छे. पछी त्रीजा आरानुं स्वरूप वर्णवतां तेमां थनारा २३ तीर्थंकरो ने ११ चक्रवर्तीओनी हकीकत पूर्वे अवसर्पिणीमां कही गयेला वर्णनथी उत्क्रमे आपवामां आवी छे. भावी चोवीशीमां थनारा चोविशे तीर्थंकरोना पूर्वभवना नामो अने तीर्थंकरपणाना नामो आपवामां आव्या छे. तेमां केटलाक तीर्थंकर थनारा जीवोना पूर्वभवनुं चारित्र पण आपेल छे. अने तेमां जे कांइ विसवाद छे ते पण बतावेल छे.

पछी बारे चक्रवर्ती थनारना नामो आप्या छे. पछी उत्सर्पिणीना चोथा आराना प्रारंभमां थनारा २४ मा तीर्थंकर ने १२ मा चक्रवर्तीनी हकीकत आपी छे. त्यारबाद ते आरामां थनारा १९ कुलकरो, तेना समयमां त्रण प्रकारनी नीति अने त्यारपछी युगलिकपणाना

प्रारंभनी स्थिति बतावावामां आवी छे. ए पछी बाकीना चोथा आरामां, पांचमा आरामां अने छट्ठा आरामां युगलिको थाय छे तेनी हकीकत आपीने आ सर्ग समाप्त कर्यो छे.

प्रथम एक उत्सर्पिणी अने एक अवसर्पिणी मळीने एक काळचक्र कहेवामां आवे छे ते कहीने तेवा अनंत काळचक्रोनुं एक पुद्गलपरावर्तन थाय छे एम कह्युं छे. ते पुद्गलपरावर्तन द्रव्य, क्षेत्र, काळ अने भाव एम चार प्रकारे छे. ते दरेकना सूक्ष्म

सर्ग ३५ मो. अने बादर एवा बे बे भेद होवाथी कुल आठ प्रकारे पुद्गलपरावर्त थाय छे. तेनुं स्वरूप कांइक विस्तारथी अहीं बताव्युं छे. आ विषय टूंकमां समजावी शकाय तेवो नथी तेथी वाचकवर्गे आ स्थळ ज वांचवा योग्य छे. अहीं काळलोक पूर्ण थाय छे.

आ सर्गमां भावलोकनुं स्वरूप आप्युं छे. भाव एटले पोतानी मेळे अथवा ते ते हेतुथी ते ते रूपे आत्मानुं जे होवापणुं अर्थात् आत्मानो जे अमुक प्रकारनो अध्यवसाय ते भाव कहेवाय छे. ते भाव छ प्रकारे होइ शके छे—औपशमिक १, क्षायिक

सर्ग ३६ मो. २, क्षायोपशमिक (मिश्र) ३, औदयिक ४, पारिणामिक ५ अने सांनिपातिक ६. आमांना पहेला पांच भावोना ५३ उत्तरभेदो थाय छे ते सर्वनुं स्वरूप विस्तारथी बताव्युं छे. छट्ठा सांनिपातिक भावना संयोगी भांगाओ २६ थाय छे तेनुं पण स्वरूप बताव्युं छे. ते २६ मांथी मात्र छ ज भांगा उपयोगी छे अने ते छ भांगाना कुल १५ प्रकार थाय छे ए विगेरे बताव्युं छे. पछी अजीव, आठ कर्म, चौद गुण-स्थान विगेरेने आश्रीने मूळ भावो तथा उत्तरभावो विस्तारथी बताव्या छे. आ विषय पण दुर्ज्ञेय छे तेथी वाचकवर्गे साद्यंत ग्रंथ वांचवा योग्य छे. भावलोक माटे आ एक ज सर्ग छे.

त्यारपछी ३७ मा सर्गमां छत्रीशे सर्गमां कहेली हकीकतोनुं बीजक एटले संक्षिप्त अनुक्रमणिका बतावी छे अने त्यारपछी प्रशस्तिमां सुधर्मास्वामीथी

सर्ग ३७ मो. ग्रंथकर्ता सुधीनी पूर्वाचार्यनी पट्टपरंपरा आपी छे ते बाबत प्रथम कही गया छीए.

आ रीते आ ग्रंथना विषयो घणा उत्तम अने आत्माने उपकारी होवाथी शास्त्रना अभ्यासी न होय अने प्राकृत तेम ज संस्कृत भाषानुं पूरतुं ज्ञान न

उपसंहार. होय तेमने तथा अल्प अभ्यासीओने पण उपकारक थइ पडे एवा हेतुथी आनुं एटले काळलोक तथा भावलोकनुं भाषांतर आ सभाना प्रमुख श्रीयुत् शेठ कुंवरजीभाइ आणंदजीए कर्युं छे. तेमांथी मात्र अठ्ठावीशमो सर्ग, वार्धकिरत्ननुं वर्णन अने छेल्ली प्रशस्ति आटलानुं भाषांतर में कर्युं छे ते पण कुंवरजीभाइए साद्यंत जोइ

योग्य सुधारो वधारो कर्यो छे. कुंवरजीभाइए करेलुं सर्व भाषांतर में पण मारी बुद्धि अनुसार जोयुं छे अने तेमां आवेली शंकाओना खुलासा करी बनती काळजीथी शुद्ध कर्युं छे.

आ काळलोकमां काळ संबंधी विषय होवाथी मुख्यत्वे करीने समय, आवलिका विगेरेथी आरंभीने काळचक्र अने पुद्‌गलपरावर्तन सुधीना काळनी अपेक्षा होवाथी ते विषय यथास्थित विस्तारथी लेवामां आव्यो छे. ते साथे २८ मा सर्गमां ज्योतिष संबंधी केटलीक स्थूल अने सूक्ष्म हकीकत संक्षिप्त अने विस्तारथी पण आपी छे तथा चक्रवर्तीना वार्धकि रत्नने प्रसंगे वास्तुशास्त्र संबंधी केटलीक हकीकत विस्तारथी आपी छे. आ विषयो गौण छतां पण मार्गदर्शक तरीके ठीक आप्या छे परंतु चंद्रपन्नत्ती, सूरपन्नति अने ज्योतिष्करंड प्रकीर्णक जेवा खास ज्योतिष संबंधी सूत्रो सुप्रसिद्ध अने सुविस्तृत मोजुद छे. तेवा ग्रंथोना भाषांतरो, लेखो के उताराओ प्रसिद्ध करवामां आवे तो दुनियाने घणो उपकार थाय तेवुं छे, आ सिवाय २९ मा सर्गथी काळलोक संपूर्ण थता सुधीमां तीर्थंकरो, चक्रवर्तीओ अने वासुदेवादिकनी सामान्य हकीकतो तथा तेमना नामवार विशेष चरित्रो जो के मुख्यत्वे करीने क्षेत्रलोकमां आपवा योग्य गणाय तो पण अहीं क्षेत्रलोकनो घणो ज विस्तार थयेलो होवाथी ते विषयो मुख्यत्वे काळने आश्रीने अहीं काळलोकमां लीधा छे, ते पण अस्थाने नथी.

आ ग्रंथकर्ताए संस्कृत तथा गुजराती भाषामां कया कया ग्रंथो रच्या छे तेनुं लीस्ट आ प्रस्तावनाने छेडे आपवामां आव्युं छे. ते उपरथी ग्रंथकारनो सत्तासमय तथा विहारस्थान विगेरेनुं अनुमान थइ शके छे.

आ आखा लोकप्रकाश ग्रंथमां जे जे हकीकत ग्रंथकारे स्वकृति तरीके लखी छे, ते सर्व **अनेक शास्त्रानुसार ज लखी छे.** उपरांत वधारे आश्चर्य तो ए थाय छे के–तेमणे आपेली अनेक सूत्रो, वृत्तिओ, ग्रंथो अने प्रकरणोनी साक्षीओ उपरथी तेमणे केटलां शास्त्रोनो अभ्यास कर्यो हशे? केटलां शास्त्रो तेमने कंठस्थ हशे? केटलां शास्त्रो प्रसंगे स्मृतिमां सांनिध्यकारी हशे? विषयोनी प्ररूपणामां कया कया शास्त्रो कया कया स्थळे केवा केवा अभिप्रायथी जुदा पडे छे–मतांतरवाळा थाय छे? ते बतावेल होवाथी ते संबंधी विचार करतां तेओ एक धुरंधर विद्वान् तरिके मालम पडे छे. आ हकीकत जाणवा माटे आ आखा लोकप्रकाश ग्रंथमां जे जे स्थळे जे जे ग्रंथोनी साक्षी आपी छे ते सर्वनुं प्रयत्नपूर्वक लीस्ट बनाव्युं छे के जे आनी पाछळना भागमां आपवामां आव्युं छे. त्यारपछी आ काळलोक अने भावलोकनी अनुक्रमणिका पण विस्तारथी आपी छे, ते वांचतां पण आमां केटला विषयोनो समावेश कर्यो छे ते समजी शकाय तेम छे.

छेवट कांइ पण प्रमादादिकना कारणथी रहेली स्खलना माटे क्षमा याची तथा दोष होय ते सुधारीने सूचना आपवानी प्रार्थना करी आ प्रस्तावक विराम पामे छे.

जेठालाल हरिभाई

श्री जैनधर्म प्रसारक सभाना शास्त्री.

ग्रंथकर्त्तानी गुरुपरंपरा.

१ श्री सुधर्मास्वामी
२ श्री जंबूस्वामी
३ श्री प्रभवस्वामी
४ श्री शय्यंभवसूरि
५ श्री यशोभद्रसूरि
६ श्री संभूतविजयसूरि तथा श्रीभद्रबाहुस्वामी
७ श्री स्थूलभद्रसूरि
८ श्री आर्य महागिरि अने आर्य सुहस्तीसूरि
९ आर्यसुस्थितसूरि तथा आर्यसुप्रतिबद्धसूरि
१० श्री इंद्रदिन्नसूरि
११ श्री दिन्नसूरि
१२ श्री सिंहगिरि
१३ श्री वज्रस्वामीसूरि
१४ श्री वज्रसेनसूरि
१५ श्री चंद्रसूरि
१६ श्री सामंतभद्रसूरि
१७ श्री देवसूरि
१८ श्री प्रद्योतनसूरि
१९ श्री मानदेवसूरि
२० श्री मानतुंगसूरि
२१ श्री वीरसूरि
२२ श्री जयदेवसूरि
२३ श्री देवानंदसूरि
२४ श्री विक्रमसूरि
२५ श्री नरसिंहसूरि
२६ श्री समुद्रसूरि
२७ श्री मानदेवसूरि
२८ श्री विबुधप्रभसूरि
२९ श्री जयानंदसूरि
३० श्री रविप्रभसूरि
३१ श्री यशोदेवसूरि
३२ श्री प्रद्युम्नसूरि
३३ श्री मानदेवसूरि
३४ श्री विमलचंद्रसूरि
३५ श्री उद्योतनसूरि
३६ श्री सर्वदेवसूरि
३७ श्री देवसूरि
३८ श्री सर्वदेवसूरि (बीजा)
३९ श्री यशोभद्रसूरि अने श्री नेमिचंद्रसूरि
४० श्री मुनिचंद्रसूरि
४१ श्री अजितदेवसूरि अने श्री वादीदेवसूरि
४२ श्री विजयसिंहसूरि
४३ श्री सोमप्रभसूरि तथा श्री मणिरत्नसूरि
४४ श्री जगच्चंद्रसूरि
४५ श्री देवेंद्रसूरि अने श्री विजयचंद्रसूरि
४६ श्री विद्यानंदसूरि अने श्री धर्मघोषसूरि
४७ श्री सोमप्रभसूरि
४८ श्री विमलप्रभ, परमानंद, पद्मतिलक, सोमतिलकसूरि
४९ श्री चंद्रशेखर, श्री जयानंद अने श्री देवसुंदरसूरि
५० श्री ज्ञानसागरसूरि, श्री कुलमंडनसूरि, श्री गुणरत्नसूरि, श्री सोमसुंदरसूरि अने श्री साधुरत्नसूरि
५१ श्री मुनिसुंदर, श्री जयचंद्र, श्री भुवनसुंदर, श्री जिनसुंदर अने श्री जिनकीर्तिसूरि
५२ श्री रत्नशेखरसूरि
५३ श्री लक्ष्मीसागरसूरि
५४ श्री सुमतिसूरि

५५ श्री हेमविमलसूरि
५६ श्री आनंदविमलसूरि
५७ श्री विजयदानसूरि
५८ श्री हीरविजयसूरि
५९ श्री विजयसेनसूरि
६० श्री विजयदेवसूरि
६१ श्री विजयसिंहसूरि
६२ श्री विजयप्रभसूरि

आ ग्रंथकर्त्तानी संस्कृत कृतिओ.

(नयकर्णिका भाषांतरनी प्रस्तावना तथा जैन गुर्जर कविओ भाग बीजा उपरथी.)

\+ १ श्री कल्पसूत्र पर सुबोधिका टीका. संवत १६९६ जेठ शुद २ गुरु. श्लोक ६०००
\+ २ लोकप्रकाश. संवत १७०८ जेठ (वैशाख) शुद ५. जुनागढ. श्लोक १७६११
\+ ३ हैमलघुप्रक्रिया. संवत १७१०. मूळ २५०० श्लोक.
४ हैमलघुप्रक्रिया व्याकरणनी स्वोपज्ञ टीका. श्लोक ३५०००. स्थळ राधनपुर.
\+ ५ नयकर्णिका. श्लोक २३. दिववंदर (अनुवाद साथे)
\+ ६ शांतसुधारसभावना. श्लोक ३५७. जेना उपर पंन्यासजी श्री गंभीरविजयजीए टीका करेली छे.

गुजराती कृतिओ.

\+ ७ श्री धर्मनाथजीनुं स्तवन—लघुउपमितिभवप्रपंच. सं. १७१६ सुरतना चोमासा वखते
\+ ८ पांच कारणनुं स्तवन. सं. १७२३
\+ ९ पुण्य प्रकाश (दश प्रकारनी आराधना) नुं स्तवन. सं. १७२९ विजयादशमी—रांदेर.
\+ १० श्रीपालरास (अपूर्ण) सं. १७३८ रांदेर चोमासुं. पूर्ण करनार श्रीमद्यशोविजयजी
\+ ११ श्री भगवतीसूत्रनी सज्झाय. सं. १७३८ रांदेर चोमासुं.
\+ १२ षड् आवश्यकनुं स्तवन.
१३ जिनपूजानुं चैत्यवंदन.
\+ १४ श्री आदिजिन विनति. गाथा ५७ (शत्रुंजय तीर्थ)
\+ १५ आंबिलनी सज्झाय. + १६ विनयविलास (३७ पदोनो संग्रह)
१७ अध्यात्मगीता. गाथा संख्या २४२. श्लोक ३३०
\+ १८ वर्तमानजिन चोवीशी (२४ स्तवनो)
\+ १९ विहरमानजिन वीशी (२० स्तवनो)
\+ २० सूर्यपुर चैत्यपरिपाटी. सं. १६८९ (सुरतना मंदिरोनुं वर्णन)
२१ श्री नेमिनाथ भ्रमरगीता स्तवन. सं. १७०६
\+ २२ पट्टावळी सज्झाय. सं. १७१० पछी
\+ २३ उपधान स्तवन (उपधान वर्णन)
२४ श्री नेमिनाथ बार मास स्तवन. २५ चौदगुणस्थानगर्भित श्री महावीर स्तवन.
\+ २६ पच्चखखाणनी सज्झाय. बे ढाळनी.

× आ निशानीवाळा पुस्तको छपायेला छे.

काललोकप्रकाश–सर्ग २८–उपोद्घात.

" प्राचीन ज्योतिष् "

" लोकप्रकाश " ग्रन्थमां जे जे वस्तु संगृहीत थइ छे ते संक्षेपथी सर्ग ३७ मां जणावी छे. अहीं अमे मात्र सर्ग २८ ना केटलाक भाग पर विवेचन कर्युं छे.

१. काललोकप्रकाशना अठ्ठावीशमा सर्गनुं महत्त्व विविध रीते छे. ते सर्गमां पूर्वप्रणीत जैन आगमो अने ज्योतिष् विषयक ग्रन्थोनुं सरळ संस्कृत भाषामां ग्रन्थकर्ताए दोहन करेलुं छे. सूर्यप्रज्ञप्ति, चंद्रप्रज्ञप्ति, जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति तथा बीजा आगमग्रन्थोमां ज्योतिष् विषयक हकीकतो छे तेनो विस्तार छोडी अने ज्योतिष्करंडक इ० ग्रन्थोमांथी आवश्यक हकीकतो तारवीने ज्योतिष् विषयनो सुगम परिचय थाय तेवी सरळ संस्कृत श्लोकोमां रचना करी छे. इ. स. पूर्वे छसोनी सदीमां श्रमण भगवान महावीरस्वामीए जे रचना प्ररूपेली छे तेने स्पष्ट करवानो उपरोक्त सर्व ग्रन्थोनो आशय छे. एटले तेने अनुसरनार काललोकप्रकाशमां जे वस्तु संगृहीत थइ छे ते हकीकत स्वाभाविकपणे जुनी तरीके मान्य करी शकाय छे. फेरफार मात्र ऋतुओना विभाग अने तेमां प्रचलित मास परत्वे छे अने तेवा फेरफार प्राचीन अने अर्वाचीन जैन तेमज जैनेतर ग्रन्थोमां पण मळी आवे छे, कारण के ऋतु अने मासना परस्परना संबंधमां काळक्रमे परिवर्तन थतुं गयुं छे अने ते परिवर्तन मुख्यतः दक्षिणायन, उत्तरायण तथा शरत् अने वसंत संपातनो समय एकनो एक ज न रहेतां बदलातो गयो छे तेथी थयुं छे. सर्व ग्रन्थकारो एकनो एक ज समय (दक्षिणायन इ० नो) लइ अर्वाचीन घटना साथे पूर्वेनी घटनानो समन्वय जोडी, अर्वाचीन घटनाने प्राचीन वर्गीकरणनुं ज स्वरूप आपवा सहेजे प्रयत्नवान थया छे. आ कारणथी प्राचीन ज्योतिष्ना अभ्यासमां ऋतु अने मास परत्वेना उल्लेखो संभाळथी वांची जतां ते सिवायनी ज्योतिष्नी अन्य रचना आ सर्गमां प्राप्त थाय छे. वधारे विस्तारथी समजवा माटे जुदा जुदा ग्रन्थोनो आधार लेवो पडे ते निर्विवाद छे.

२. आ सर्गमां निर्दिष्ट प्राचीन ज्योतिष् बीजी रीते मान्य तथा सप्रमाण सिद्ध थाय छे. इ. स. पूर्वे चोथी सदीनो " कौटिलीय अर्थशास्त्र " नामनो ग्रन्थ प्रसिद्ध थयो छे तेमां 'कालमान' प्रकरण छे अने कालपरत्वे व्यवहार पूरता विविध उल्लेखो छे. ते ग्रन्थ पर वैदिक छाया छे. तेनी रचना जैन ज्योतिष्नी रचना साथे मळती आवे छे एटलुं ज नहिं पण तेना अशुद्ध लागे तेवा पाठनी शुद्धि जैन ज्योतिष्द्वारा थाय छे. अर्थशास्त्रमां व्यवहार पूरतो ज्योतिष्नो निर्देश छे अने तेथी ते निर्देश स्थूळ छे. एटले तेमांना (वैदिक)ज्योतिष्नी परिपूर्ति काललोकप्रकाश जेवा ग्रन्थमां संगृहीत करेला प्राचीन (जैन)ज्योतिष्थी थाय छे. अने जैन ज्योतिष्मां जे उल्लेख अधूरो छे तेनी पूर्ति अर्थशास्त्रथी थाय छे. (जूओ पेरा ४). अर्थशास्त्रमांथी प्रस्तुत

प्रकरणने उपयोगी उतारा करी आ साथे छाप्या छे एटले अठ्ठावीशमा सर्गना अभ्यासी वर्ग उपरोक्त हकीकतो समजी शकशे. बन्नेनी योजनाने मळती हकीकत महाकवि कालिदासना मेघदूतना श्लोकोमां पण छे एटले तेनो निर्देश पण अर्थशास्त्रनी साथे साथे कर्यो छे. काललोकप्रकाश पृष्ठ ५९–६० पर मालूम पडशे के जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रमां श्रीगौतमस्वामीना उत्तरमां श्रमण भगवान महावीरस्वामी वर्षनो (तथा युगनो) आरंभ श्रावण वदि १ थी कहे छे अने ते वखते वर्षाऋतु (प्रावृष्) छे. अर्थशास्त्र " आषाढीपर्यवसान वर्ष " अर्थात् आषाढ मासनी शुदि १५ ने दिने पूरुं थतुं वर्ष कहे छे अने श्रावणथी दक्षिणायननो आरंभ गणे छे. मेघदूत आषाढना छेल्ला दिने वर्षाऋतुनो आरंभ मूके छे अने तेनी नजीक श्रावण महिनो कहे छे अने त्यारथी प्रबोधिनी (का० शु० ११) सुधीमां चार मास जणावे छे. आ बधामांथी ए प्रतिपादन थाय छे के मास पूर्णिमान्त हता, वदि एकमथी शरु थता अने श्रावण वदि १ थी दक्षिणायन ने वर्षाऋतु गणाती अने पांच वर्षना युगनो आरंभ आवा वर्षथी थतो. उपरोक्त सिद्ध थता ज्योतिषना हालना प्रचलित वेदांग ज्योतिषना श्लोको साथे कोइ रीते मेळ नहि खाय. प्रचलित वेदांग ज्योतिष् माघशुक्ल प्रतिपदाथी आरंभ करे छे एटले तेमां मूळ ज्योतिषनो केटलो विपर्यास समजवो ते नक्की करवानुं कार्य विद्वानवर्गने शिरे रहे छे, परन्तु जे प्रमाणभूत प्राचीन ज्योतिष्, अर्थशास्त्र, जैन ज्योतिष् तथा मेघदूतथी स्थापित थाय छे तेनो वैदिक साहित्य तथा जनसमाजना उत्सवो समजवा माटे अत्यंत उपयोग छे तेम स्वीकारवुं पडशे अने तेम कर्याथी वैदिक साहित्यनुं योग्य संशोधन शक्य थशे.

३. साथे आपेला पत्रकमांथी वर्षरचना–नक्षत्ररचना तथा सूर्यचंद्रगति, मास इ० स्पष्ट थशे. तेनो अहिं उल्लेख नहिं करीए, परन्तु तेनुं स्वरूप स्पष्ट करवानी जरुर रहे छे.

पहेली नोंध ए छे के प्राचीन ज्योतिषमां अयनो अने संपातना बिन्दु, नक्षत्रो (ताराओ) परत्वे स्थायी छे–तेमां कशो फेरफार नथी समजवानो. (जुओ काल० पृष्ठ ७४, पृष्ठ ७७–७८.) अश्विनी नक्षत्रना १३४ भागमांथी ६९ भाग पूरा थाय त्यारे वसंतसंपात हमेश माटे छे अने स्वाति नक्षत्रना ६७ भागमांथी २३ भाग पूरा थतां शरत्संपात छे. पुष्य नक्षत्रना १३४ भागना ४६ भाग पूरा थतां दक्षिणायन शरु थाय छे अने अभिजित् नक्षत्रना ४२ भागना प्रारंभे उत्तरायण शरु थाय छे.

बीजी नोंध तारात्मक नक्षत्र विभाग परत्वे करवानी छे. आ रचनामां २८ नक्षत्रो आवश्यक छे अने २८ मुं नक्षत्र अभिजित् छे. तेने छोडीने २७ नक्षत्र स्वीकारी आ रचनाना सौर वर्षना ३६६ दिवसमांनी सूर्य–चन्द्रनी गतिने समजी नहि ज शकाय.

त्रीजी नोंध नक्षत्रोना अने ते रीते रविमार्गना भाग परत्वे छे. रविमार्गना हाल ३६० भाग (डीग्री) छे तेवा भाग प्राचीन ज्योतिषमां नथी. प्राचीन ज्योतिषमां

नथी. प्राचीन ज्योतिष्मां स्थूलपणे सौरवर्ष ३६६ सौरदिननुं गण्युं छे अने तेने अनुरूप रविमार्गना ३६६० भाग पाडेला छे. (कोइक ठेकाणे अडधा भाग ले त्यां १८३० भाग आवे ने मुहूर्तना हिसावे पण वधु ले त्यां वधु आवे पण तेथी योजनामां फेर नथी पडतो). एटले प्राचीन ज्योतिष्नुं स्वरूप समजवा माटे उपरनी त्रणे बीना लक्ष्यवहार राखी न शकाय. चोथी नोंधनो उल्लेख चोथा पेरेग्राफमां " मलमास " (= क्षयमास) परत्वे छे.

प्राचीन ज्योतिष्नी रचनामां एक विविधताने अवकाश छे जेनो उल्लेख काललोकप्रकाशमां नथी, अने ते पत्रकमां स्पष्ट करी छे. काल० पृ० ४०–४१ पर चार जातना नक्षत्रोना भाग आप्या छे. अभिजित् नक्षत्रना ४२ भाग छे. पंदर जुदा जुदा नक्षत्रोना प्रत्येकना १३४ भाग छे. छ नक्षत्रोना प्रत्येकना ६७ भाग छे ज्यारे बाकीना छ नक्षत्रोना प्रत्येकना २०१ भाग छे. सरवाळो ३६६० आवे छे. हवे अभिजित्ना ४२ भाग उपरांत बाकीना सतावीश नक्षत्रोना प्रत्येकना एकसरखा १३४ भाग गणतां पण ते ज सरवाळो रहे. आ शक्य योजनानो पण पत्रकमां उल्लेख कर्यो छे. कदाच ते योजना जैनेतर वर्गमां प्रचलित थयेली होय. उत्सवो इ० विषेना संशोधन कार्यमां आ शक्यतानो अवकाश राखवो पडे. अभिजित् नक्षत्रनो आ के बीजी कोइ पण शक्यतामां त्याग नथी ते स्पष्ट छे. हालना ज्योतिष् विषयक सिद्धान्त ग्रन्थो अने तेमनी मान्यताथी जुदुं प्राचीन (जैन के जैनेतर–वेदांग) ज्योतिष् छे ते वस्तु हवे स्वीकारवी पडशे अने संशोधन कार्यमां तेनो अमल करवो पडशे. काललोकप्रकाशना आ सर्गनुं ते रीते अपूर्व महत्त्व छे.

जैन तेमज जैनेतर (वैदिक) ग्रन्थोमां प्रत्येक नक्षत्रना अधिष्ठाता देव एक ज छे एटले जैन अने वैदिक ज्योतिष्नी ग्रन्थि एक ज छे अने लगभग एक ज प्रकारना बन्ने प्राचीन ज्योतिष् छे तेवी मान्यता वधु दृढ करे छे.

४. अर्थशास्त्रमां " अधिकमास " थी जुदो एक " मलमास " नो (= क्षयमासनो) निर्देश करेल छे. जुदी जुदी त्रण मान्यता तेना विषे छे, ते पण संदिग्ध छे, तेथी वधु विगत तेमां नथी. जैन ज्योतिष्मां तेनी कशी विगत हजी जोवामां आवी नथी. एटले तेने लगती हकीकत हाल अनुमाननो विषय बने छे. सूर्य–चन्द्रथी जनित वर्षनो सौरवर्ष साथे पांच सौरवर्षमां (युगमां) मेळ मेळववा माटे रीतसरना साठ चान्द्र महिना उपरांत अढी वर्षे अकेक (चांद्र) महिनो वधारे गणी पांच वर्षमां जे बे महिना वधु लेवाय छे ते " अधिकमास " छे अने " मलमास " तेथी भिन्न छे. गणितमां आपणे खोटुं आगळ वधी गया होइए तेमां पाछळ हठी, साचुं सौर नक्षत्र मळी रहे ते माटे " मलमास " (आपणा गणितमां त्याग करवानो मास) अनुमानथी समजाय छे. ३६६ दिनना वर्षनो आंकडो गोळ रकम छे ते स्थूळ लागे छे. सूक्ष्म वेधथी नक्की थतो हशे ते ३६५। दिन आशरेनो (कांइक वधु के कमी)

लागे छे एटले वस्तुतः सूर्य ३६५। दिन लगभगमां ३६६० भाग पूरा करे छे अर्थात् सूर्य रोजना दश भाग उपरांत कंइक वधु चाले छे. आ तफावत चन्द्रनी तिथि तथा कलामां पण आवे अने खास करीने पूर्णिमा वखते वेध लइने नक्की करी शकाय; अने तेवा वेधनो एक दाखलो काल० पृ० ९१ श्लो० ९३–९४ मां मळे छे जेमां मार्गशीर्ष शुदि १५ ना (पूर्णिमाना) समये चन्द्र आर्द्रा नक्षत्रमां होय तेम निर्देश छे. आ निर्देशने ज्योतिष्करंडकनुं समर्थन नथी एटले केटलो वास्तविक गणवो ते शंका छे परन्तु तेने वास्तविक गणी नीचेनी चर्चा करी छे. श्रा० व० एकमे प्रभाते चन्द्र अभिजित्‌थी प्रारंभ करे अने सूर्य पुष्यना ४७ मा भागथी आरंभ करे त्यारे बन्ने वच्चे १८३० भागनुं अंतर होय छे (अर्थात् आषाढ शुदि पूनमे ते अंतर होय छे). ते समय पछी मार्ग० शु० १५ (प्रान्त) सुधीमां सूर्ये दोढसो तिथिमां १५०×$\frac{६१}{६२}$=१४७$\frac{३६}{६२}$ सौरदिन कर्या होय अने प्रतिदिनना दश भागनी चाल मुजब १४७५ $\frac{५०}{६२}$ भाग पूरा कर्या होय अर्थात् अभिजित्‌थी सूर्य ३३०५$\frac{५०}{६२}$ भागना मूल नक्षत्रमां होय. चन्द्र तेथी बराबर १८३० भाग दूर एटले १४७५$\frac{५०}{६२}$ भागमां (अभिजित्‌थी) मृगशीर्षमां होय, परन्तु चन्द्र आर्द्रामां ते वखते छे. तेम प्रत्यक्ष दर्शन गाथा अनुसार छे* एटले ते उपरथी अनुमान थाय छे के–चंद्र थोडो वधु चालेलो होय ने तेटला समयना हीसाबे (चंद्र १३४ भाग चाले त्यारे सूर्य १० भाग चाले) सूर्य वधु चालेलो होवो जोइए अर्थात् ३६६० भाग पूरा करवा सूर्यने ३६६ दिन नहि पण आशरे पोणो दिन ओछो–आशरे ३६५। दिन समय लागवो जोइए. प्रत्येक वर्षे बरोबर पोणा दिन जेटलो फेर पडे तो ४० वर्षे त्रीश दिननो फेर पडे अने तेवो वेध होय ते मतवाला ४० वर्षे एक सूर्यनो मास गणतरीमांथी बाद करी नांखे. आने " मलमास " कहे.

आ अनुमान देखाय छे तेवुं सरल नथी. (जुओ फुटनोट) परन्तु जूदी जूदी पूर्णिमा ने वर्षो पाकी गणतरीथी स्थापित थाय पछी ज तेनो वधु ऊहापोह करी शकाय. प्राचीन ज्योतिषना ३६६ दिनना स्थूल सौरवर्षमां ने पांच सौरवर्षना युगनी रचनामां "मलमास" आवश्यक छे तेटलुं विना संकोचे कही शकाय, मलमास वगर सूर्यनो नक्षत्र साथेनो अने छेवटे पूर्णिमा वखतनो अने नक्षत्रना गणितनो मेळ तूटी जाय ते थोडा काळमां ज प्रत्यक्ष थाय एटले प्राचीन ज्योतिषना रचनारा ३६६ दिननी योजना करी त्यांज अटकी जइ भीत भूल्या होय तेवुं नथी लागतुं. परन्तु दक्षिणायनना दिने जे छाया होय तेमां अने गणितथी आवता दक्षिणायनना दिनमां काळांतरे

---

* चंद्र आर्द्रामा होय तेना भागथी बरोबर १८३० भाग सामे सूर्य आ वखते कइ रीते होय ते समजातुं नथी. एटले आ निर्देश चर्चास्पद ज रहे छे. 'क्षेत्रलोक प्रकाश' सर्ग २० श्लो० ६८, ७१ मा मार्गशीर्ष पूर्णिमा मृगशीर्षना चन्द्र वखते गणी छे. प्राकृत गाथा पर ग्रन्थकर्ताए कशी नोंध करी नथी मृगशीर्षने बदले आर्द्रा केम छे तेनो खुलासो नथी.

फेर केम पडे तेनो नोंध केम नहि कर्यो होय ते समजी शकातुं नथी. छायामानमां सूर्यनी विषुववृत्तथी दक्षिणोत्तर गतिनो ज संबंध रहे छे ने नक्षत्र साथेनो संबंध लुप्त थाय छे. एटले छायामान अने नक्षत्रमाननो समन्वय ज्यां तूटतो हशे त्यां केनी नोंध करी हशे ते जाणवानुं आपणी पासे आजे साधन नथी. छायामान तेमणे लीधेलुं छे ते अर्थशास्त्र तथा काललोक-प्रकाश परथी मालूम पडे छे; अने तेनो संबंध अयनो साथे जोडेलो छे.

५. हवे आ ज्योतिषनो लौकिक उत्सव परत्वेनो संबंध जोइए. आजे पण प्रचलित छे तेवो एक वैदिक उत्सव सरस्वतीनुं आह्वान, पूजन अने विसर्जननो छे. आश्विन शुदि ७ ना दिने चन्द्र मूळ नक्षत्रमां होय त्यारे आह्वान छे ने आश्विन शुदि ९ ना दिने (चंद्र श्रवण नक्षत्रमां आवे) पछी तेनुं विसर्जन छे.

अहिं महिनाना नाममां पाछळथी विपर्यास थयो होय तेवुं नथी लागतुं. एटले युगनुं प्रथम वर्ष (संकेतनी रीते) लेवानुं, श्रावण वदि १ थी तिथि गणतां आश्विन शुदि ६ तिथि पूर्ण थाय त्यारे श्रावणनी ३० तिथि, भाद्रपदनी ३० तिथि अने आश्विन वदि एकमथी शुदि ७ सुधी २१ तिथि थाय. सरवाळे ८१ तिथिनो समय पूरो थाय एटले तेना सौरदिन ७९–$\frac{४३}{६२}$ पूरा थाय. सूर्यना प्रतिदिन दश भागनी चाल प्रमाणे पुष्यना ४७ मा भागथी ७९६–$\frac{२६}{६२}$ भाग वधु थाय अर्थात् सूर्ये ते वखते अभिजित्‌थी २६२६–$\frac{२६}{६२}$ भाग पूरा कर्या होय अर्थात सूर्य ते वखते चित्रा नक्षत्रमां [अने चित्रा (Spica) तारा पासे आवेल होय]. चन्द्र ७९–$\frac{४३}{६२}$ दिनमां रोजना १३४ भागनी चाल प्रमाणे बे वखत फरीने अभिजित्‌थी ३३५८–$\frac{५८}{६२}$ भाग पूरा कर्या होय अर्थात् (जैनेतर योजना मुजब) मूल नक्षत्रमां होय. त्रण तिथिमां ते रीते श्रवण नक्षत्रमां नवमीए होय. उत्सवमां चन्द्रनक्षत्रनुं तिथि साथेनुं सूचन रविमार्गमां सूर्यनुं तारात्मक नक्षत्र परत्वे स्थान स्पष्ट करवा माटे होय तेम अत्रे समजाय छे; कारण के युगना बीजा वर्षोमां तेना ते ज चन्द्र नक्षत्रो तिथिए न होय ते देखीतुं छे. चित्रा नक्षत्रना सूर्ये वखते शरत्‌काळ होवाथी सरस्वतीनुं बीजुं ऋतु सूचक नाम तथा वर्णन 'शारदा' (शरदि भवा–शारदा) यथार्थ थाय छे.

६. आटला प्रस्तावथी प्राचीन ज्योतिषनुं विविध दिशाएथी नक्की थतुं स्वरूप अने तेमां रही जती उणपो वाचकवर्गने प्रतीत थशे. तेनी रचनानी आपातप्रतीति माटे अत्रे नीचेना प्रथम पत्रकमां नक्षत्र–तेना भाग, बीजी योजना–नक्षत्र देवता तथा बीजा पत्रकमां सौरमास साथे नक्षत्र ने ऋतुसंबंध आपेल छे. विगतो माटे काळलोकप्रकाशनो सर्ग २८ जोवो. वाचक-वर्गने एटलुं स्पष्ट थशे के २८ नक्षत्र, रविमार्गना ३६६० भाग अने वर्षना ३६६ दिन (स्थूलमान), पांच वर्षनो युग अने मलमास आटला तत्त्व प्राचीन ज्योतिषमां न होय तो तेनी

रचना अशक्य छे. युगनो आरंभ दक्षिणायनथी छे, ते ज्योतिषनी रचनानुं बीजुं तत्त्व छे जेथी प्रचलित वेदांग कहेवातुं ज्योतिष् भिन्न छे.

आ ग्रन्थ हिन्दमां सर्वत्र तथा इतरत्र सुगमताथी वंचाय ते सारु भाषांतर साथे देवनागरी लिपिमां साद्यंत छपाव्यो छे. वाचकवर्गने ते आवकारपात्र थशे तेम आशा राखीए. आ ग्रन्थ पाछळ विविध प्रकारे जे श्रम प्रकाशक संस्थाए, श्री. कुंवरजी आणंदजीए तथा शास्त्रीजी जेठालाल हरिभाईए लीधो छे ते वाचकवर्गनी अने विद्वद्वर्गनी प्रशंसाने पात्र थशे तेम आशा प्रदर्शित करी आ टूंको उपोद्घात पूरो करुं छुं.

मुंबइ. ता. १७–७–३४. } हीरालाल अमृतलाल शाह.



नोट—उपोद्घातना लेखक महाशये अधिकमासथी जुदो मळमास एटले क्षयमास उपरना लेखमा जणावेल छे परंतु कोषमा जोता अने वर्तमान ज्योतिष्ना अनुभवीओने पूछता अधिकमासने मळमास कहे छे, क्षयमासने कहेता नथी.

पत्रक (१)

क्रम.	नक्षत्रो (तारात्मक).	जैन योजना. भाग.	जैन योजना. रविमार्गमां भाग सरवाळो.	जैनेतर योजना. (संभवित) रविमार्गमां भाग सरवाळो.	जैनेतर योजना. (संभवित) भाग.	जैन अने जैनेतर अधिष्ठाता देवता.	तारा. वर्ण.
१	अभिजित्	४२	०— ४२	०— ४२	४२	ब्रह्मा	३
२	श्रवण	१३४	४२— १७६	४२— १७६	१३४	विष्णु	३
३	धनिष्ठा (श्रविष्ठा)	१३४	१७६— ३१०	१७६— ३१०	१३४	वसु	५
४	शतभिषा	६७	३१०— ३७७	३१०— ४४४	१३४	वरुण	१००
५	पू० भाद्रपदा	१३४	३७७— ५११	४४४— ५७८	१३४	अजैकपाद	२
६	उ० भाद्रपदा	२०१	५११— ७१२	५७८— ७१२	१३४	अहिर्बुध्न्य	२
७	रेवती	१३४	७१२— ८४६	७१२— ८४६	१२४	पूषन्	३२
८	अश्विनी	१३४	८४६— ९८०	८४६— ९८०	१३४	अश्विनौ	३ (२ ?)
९	भरणी	६७	९८०—१०४७	९८०—१११४	१३४	यम	३
१०	कृत्तिका	१३४	१०४७—११८१	१११४—१२४८	१३४	अग्नि	६ (७ ?)
११	रोहिणी	२०१	११८१—१३८२	१२४८—१३८२	१३४	प्रजापति	५ (रक्त)
१२	मृगशिरस् (मृगशीर्ष)	१३४	१३८२—१५१६	१३८२—१५१६	१३४	सोम	३
१३	आर्द्रा	६७	१५१६—१५८३	१५१६—१६५०	१३४	रुद्र	१ (रुधिर)
१४	पुनर्वसु	२०१	१५८३—१७८४	१६५०—१७८४	१३४	अदिति	४ (२ ?)
१५	पुष्य	१३४	१७८४—१९१८	१७८४—१९१८	१३४	बृहस्पति	३
१६	अश्लेषा	६७	१९१८—१९८५	१९१८—२०५२	१३४	सर्प	५ (६?७?१०?)
१७	मघा	१३४	१९८५—२११९	२०५२—२१८६	१३४	पितृ	५
१८	पू०फाल्गुणी	१३४	२११९—२२५३	२१८६—२३२०	१३४	भग	२
१९	उ०फाल्गुणी	२०१	२२५३—२४५४	२३२०—२४५४	१३४	अर्यमा	२
२०	हस्त	१३४	२४५४—२५८८	२४५४—२५८८	१३४	सवितृ	५
२१	चित्रा	१३४	२५८८—२७२२	२५८८—२७२२	१३४	त्वष्टृ	१ (मुक्ता)
२२	स्वाति	६७	२७२२—२७८९	२७२२—२८५६	१३४	वायु	१ (प्रवाल)

क्रम.	नक्षत्रो (तारात्मक).	जैन योजना. भाग.	जैन योजना. रविमार्गमां भाग सरवाळो.	जैनेतर योजना. (संभवित) रविमार्गमां भाग सरवाळो.	जैनेतर योजना. (संभवित) भाग.	जैन अने जैनेतर अधिष्ठाता देवता.	तारा. वर्ण.
२३	विशाखा (राधा)	२०१	२७८९–२९९०	२८५६–२९९०	१३४	इन्द्राग्नी	४ (२?)
२४	अनुराधा	१३४	२९९०–३१२४	२९९०–३११४	१३४	मित्र	४
२५	ज्येष्ठा	६७	३१२४–३१९१	३१२४–३२५८	१३४	इन्द्र	३
२६	मूल	१३४	३१९१–३३२५	३२५८–३३९२	१३४	राक्षस (निर्ऋति)	११
२७	पूर्वाषाढा	१३४	३३२५–३४५९	३३९२–३५२६	१३४	आपः	४ (२?)
२८	उत्तराषाढा	२०१	३४५९–३६६०	३५२६–३६६०	१३४	विश्वेदेवाः	४ (३?)
पुनः१	अभिजित् इ.	३६६०			३६६०		

प्राचीन ज्योतिषनुं आवश्यक धोरण.

(१) रविमार्ग—कुले ३६६० भाग. अभिजित् साथे २८ नक्षत्रो.

(२) युगना पांच सौरवर्ष, १८३० (सौर) दिन, १८६० तिथि, ६० सौरमास, ६२ चांद्रमास (६० चांद्रमास तथा अढीवर्षे एक अधिक चांद्रमास), ६७ नक्षत्रमास (चन्द्रना नक्षत्रो परत्वे).

(३) सौरवर्षमां ३६६ (सौर) दिन, रविमार्गना ३६६० भाग ३६६ दिनमां सूर्य करे. (स्थूळमान छे.)

(४) चांद्रवर्षनी ३६० तिथि, $३५४\frac{१२}{६२}$ (सौर) दिन, बार चांद्रमास ($२९\frac{३२}{६२}$ सौरदिनना अथवा ३० तिथिना). त्रीजा अने पांचमा चांद्रवर्षमां एक अधिक चांद्रमास अने तेवा वर्षोनां (सौर) दिन $३८३\frac{४४}{६२}$ अने तेर मास.

(५) युगनो आरंभ—युगना प्रथम वर्षथी सौरवर्षनो, चांद्रवर्षनो, श्रावण वदि एकमनी प्रभाते (आषाढ शुदि पूर्णिमा पूर्ण थाय ते समये) सूर्य पुष्यनक्षत्रना ४६ भाग पूरा करी ४७ मा भागमां प्रवेश करे त्यारे, चंद्र उत्तराषाढा नक्षत्र पूर्ण करी अभिजित् नक्षत्रनो प्रारंभ करे त्यारे, वर्षाऋतुनो (अगर प्रावृट्ऋतुनो) आरंभ थाय अने दक्षिणायननो आरंभ थाय.

(६) **सौरदिन**—३० मुहूर्तनो, ६० घडीनो, रविमार्गमां सूर्यना दश भागनो अने चन्द्रगतिना १३४ भागनो. एक सूर्योदयथी बीजा सूर्योदय पर्यन्तनो.

(७) **तिथि**—$\frac{६१}{६२}$ (सौर) दिन जेटली जेमां चंद्रगति १३१$\frac{२६}{३१}$ भागनी थाय ($\frac{६१\times१३४}{६२}$=१३१ $\frac{२६}{३१}$) जेमां सूर्यगति ९$\frac{५२}{६२}$ भागनी थाय (स्थूळमान छे.) एक तिथिमां चन्द्रनी एक कळानी हानि–वृद्धि थाय.

(८) **भाग**—सूर्य प्रति (सौर) दिन (रविमार्गमां) दश भाग चाले. ते ज समयमां चंद्र १३४ भाग चाले. (स्थूलमान छे.)

(९) **अयन**—दक्षिणायननो आरंभ सूर्य पुष्यनक्षत्रना ४७ भागथी करे; उत्तरायणनो आरंभ सूर्य अभिजित् नक्षत्रना पहेला भागथी करे, अयन स्थायी छे.

(१०) **संपात**—शरत्संपात सूर्य स्वाति नक्षत्रना २३ भाग पूरा करे त्यारे होय, वसन्तसंपात सूर्य अश्विनी नक्षत्रना ६९ भाग पूरा करे त्यारे होय, संपात स्थायी छे.

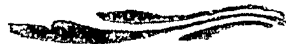
(११) **सूर्य**—एक अयनथी संपात सुधीमां अने संपातथी अयन सुधीमां रविमार्गना ९१९ भाग पूरा करे, पुनरावृत्ति युगमां पांच वखत थाय.

(१२) **चन्द्र**—एक अयनथी संपात सुधीमां अने संपातथी अयन सुधीमां रविमार्गनी त्रण आवृत्ति (=१०९८० भाग) उपरांत १२८१ भाग (कुले १२२६१ भाग) चंद्र पूरा करे. युगना आरंभे दक्षिणायन वखते अभिजित् नक्षत्रमां चन्द्रनो प्रवेश थतो होय. पछी प्रत्येक अयन अने संपात वखते चन्द्रना नक्षत्रो बदलाता होय.

(१३) **मलमास**—(जूओ " अर्थशास्त्र ") जूदा जूदा वर्षो पछी क्षेप करवानो सौरमास (कारण ३६६ दिननुं सौरवर्ष स्थूळमान छे. सूर्य चन्द्रनी गति स्थूळ लीधी छे.)

(१४) **चांद्रमास**—एक चांद्रमासमां, त्रीश तिथिमां, चन्द्रगति ३९५९$\frac{१०}{६२}$ भागनी थाय अने सूर्यगति २९५$\frac{१०}{६२}$ भागनी थाय.

(१५) **नक्षत्रमास**—चंद्रनी पोतानी रविमार्गमां एक आवृत्ति २७$\frac{४२}{१३४}$ (सौर) दिनमां थाय ते.



पत्रक (२)

क्रम	जैन योजना. सूर्य नक्षत्रो	भाग.	सरवाळो	सौरमास (३०॥ सौर दिनना.)	अर्थशास्त्र अनुसार ऋतु.	अयन. संपात इ०	जैनेतर योजना. सूर्य नक्षत्रो	भाग	सरवाळो	संभवित राशि (तारात्मक)
१	पुष्य	८८		श्रावण	वर्षा	दक्षिणा-	पुष्य	८८		कर्क
	अश्लेषा	६७				यननो	अश्लेषा	१३४		
	मघा	१३४				आरंभ	मघा	८३		
	पूर्वा फा०	१६						३०५	३०५	
		३०५	३०५							
२	पूर्वा फा०	११८		भाद्रपद	वर्षा		मघा	५१		सिंह
	उ० फा०	१८७		(प्रोष्टपद)			पूर्वा फा०	१३४		
		३०५	६१०				उ० फा०	१२०		
								३०५	६१०	
३	उ० फा०	१४		आश्विन	शरत्		उ० फा०	१४		कन्या
	हस्त	१३४		(आश्वयुज)			हस्त	१३४		
	चित्रा	१३४					चित्रा	१३४		
	स्वाति	२३					स्वाति	२३		
		३०५	९१५					३०५	९१५	
						शरत्संपात				
४	स्वाति	४४		कार्तिक	शरत्		स्वाति	१११		तुला
	विशाखा	२०१					विशाखा	१३४		
	अनुराधा	६०					अनुराधा	६०		
		३०५	१२२०					३०५	१२२०	
५	अनुराधा	७४		मार्गशीर्ष	हेमन्त		अनुराधा	७४		वृश्चिक
	ज्येष्ठा	६७					ज्येष्ठा	१३४		
	मूल	१३४					मूल	९७		
	पूर्वाषाढा	३०						३०५	१५२५	
		३०५	१५२५							

६	पूर्वाषाढा १०४ उत्तराषाढा २०१ ३०५	१८३०	पौष	हेमन्त		मूल ३७ पूर्वाषाढा १३४ उत्तराषाढा १३४ ३०५	१८३०	धन
७	अभिजित् ४२ श्रवण १३४ धनिष्ठा १२९ ३०५	२१३५	माघ	शिशिर	उत्तरायणनो आरंभ	अभिजित् ४२ श्रवण १३४ धनिष्ठा १२९ ३०५	२१३५	मकर
८	धनिष्ठा ५ शतभिषा ६७ पूर्वा भाद्र० १३४ उ० भाद्र० ९९ ३०५	२४४०	फाल्गुन	शिशिर		धनिष्ठा ५ शतभिषा १३४ पूर्वा भाद्र० १३४ उ० भाद्र० ३२ ३०५	२४४०	कुंभ
९	उ० भाद्र० १०२ रेवती १३४ अश्विनी ६९ ३०५	२७४५	चैत्र	वसन्त		उ०भाद्र० १०२ रेवती १३४ अश्विनी ६९ ३०५	२७४५	मीन
					वसन्त संपात			
					वसन्त संपात			
१०	अश्विनी ६५ भरणी ६७ कृत्तिका १३४ रोहिणी ३९ ३०५	३०५०	वैशाख	वसन्त		अश्विनी ६५ भरणी १३४ कृत्तिका १०६ ३०५	३०५०	मेष

११	रोहिणी १६२ मृगशीर्ष १३४ आर्द्रा ६ ३०९	३३९९	ज्येष्ठ (ज्येष्ठा मूलीय)	ग्रीष्म		कृत्तिका २८ रोहिणी १३४ मृगशीर्ष १३४ आर्द्रा ९ ३०९	३३९९	वृष
१२	आर्द्रा ९८ पुनर्वसु २०१ पुष्य ४६ ३०९	३६६०	आपाढ	ग्रीष्म		आर्द्रा १२९ पुनर्वसु १३४ पुष्य ४६ ३०९	३६६०	मिथुन
१	पुष्य इ०		श्रावण इ०	वर्षा इ०	दक्षिणा यननो आरंभ	पुष्य इ०		कर्क इ०

" उतारा "

(जुओ काळ लोकप्रकाश सर्ग २८ परनो उपोद्‌घात्)

" मेघदूत " काव्य (कवि कालिदासनुं–पाठकवाळी आवृत्ति) मांथी.

" आषाढस्य × प्रशमदिवसे मेघमाश्लिष्टसानुम् "। श्लोक २.

" आषाढ मासना छेल्ला दिवसे पर्वतना शिखरने आलिंगन करीने रहेला मेघने जोयो."

× (पा० ' प्रथमदिवसे ' खोटो छे कारण के श्लोक ४ तथा श्लोक ११९ थी विरुद्ध छे.)

" प्रत्यासन्ने नभसि दयितजीवितालम्बनार्थी "। श्लोक ४.

" श्रावण मास नजीक आवे सते (वर्षा ऋतु चालु थाय तेथी विरहातुर) प्रियाना जीवितनो उपाय करवाने इच्छतो यक्ष. "

" शापान्तो मे भुजगशयनादुत्थिते शार्ङ्गपाणौ ।
*मासानन्यान् गमय चतुरो लोचने मीलयित्वा " ॥ ११५ ॥
*[पा. शेषान्मासान्]

" विष्णु शेषनागना शयनथी उभा थशे त्यारे (कार्तिक शुदि ११ ने दिने) मारा शापनो अंत थशे, माटे हवे बाकीना चार मास (आषाढ शुदि पूनमथी) लोचनो मींचीने निर्गमन कर "

" कौटिलीयं अर्थशास्त्रम् " (माइसोर युनीवर्सीटीनुं. सने १९१९) मांथी.

तंत्री डॉ. आर शामशास्त्री.

१. " कालः शीतोष्णवर्षात्मा, तस्य रात्रिरहः पक्षो मास ऋतुरयनं संवत्सरो युगमिति विशेषाः ।....हैमनं च मुष्टिमुपहन्तुं मार्गशीर्षीं यात्रां यायात् ।...वासन्तिकं च मुष्टिमुपहन्तुं चैत्रीं यात्रां यायात् । (अधि. ९, अ० १, प्र. १३५-३६)

शीयाळो, उनाळो अने वर्षा (चोमासु) आ काळ छे. तेना रात्रि, दिवस, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, सवत्सर अने युग ए सर्व विशेषो छे.. हेमंत ऋतुनी मुष्टिने हणवा माटे मार्गशीर्षमां स्वारी करवी....वसंत ऋतुनी मुष्टिने हणवा माटे चैत्रमां स्वारी करवी.

२. " त्रिशतं चतुःपञ्चाशच्चाहोरात्राणां कर्मसंवत्सरः। तमाषाढीपर्यवसानमूनं पूर्णं वा दद्यात् । करणाधिष्ठितमधिमासकं कुर्यात्" ।

(अधि. २, अ. ७. प्र. २९. जुओ काळलोक पृ. ६०. पृ. ३८-४०)

त्रणसो ने चोपन दिवस-रात्रीनो एक कर्मसंवत्सर थाय छे. ते आषाढीने छेडे (अर्थात् आषाढ शुदि १९ ने छेडे) पूरो थाय त्यारे अधूरो के पूरो (पगार) देवो. करण (तेना गणित) प्रमाणे अधिक मास गणीने वर्तवुं.

३. "राजवर्षं मासः पक्षो दिवसश्च व्युष्टं, वर्षाहेमन्तग्रीष्माणां तृतीयसप्तमा दिवसोनाः पक्षाः शेषाः पूर्णाः पृथगधिमासक इति कालः । "

(अधि. २, अ. ६. प्र. २४.) [जुओ काळ० पृ. १०२-१०३]

" राजवर्ष (राजाए मान्य करेलुं वर्ष), मास, पक्ष अने दिवस ए सर्व व्युष्ट (जुदा जुदा ?) छे. वर्षा, हेमन्त अने ग्रीष्मना त्रीजा अने सातमा पक्षोमां एक एक दिवस ओछो (गणाय) छे अने बाकीना पक्षोमां पूर्ण दिवसो छे. अधिक मास जुदो गणवो. इति काळ. " [अर्थात् भाद्रपद, कार्तिक, पौष, फाल्गुण, वैशाख अने आषाढ मासना वदि पक्षमां एक दिन ओछो गणतां वर्षना ३६० (बे पक्षनो मास, ३० दिननो प्रकर्ममास ने बार मासना ३६०) दिन थाय तेमांथी छ दिन ओछा गणाय एटले चांद्र वर्षना ३९४ दिन साथे मळी रहे.]

४. 'अधि' २ अध्याय २०, प्रक० ३८ " देशकालमानम् " ।

" मानाध्यक्षो देशकालमानं विद्यात् " मानाध्यक्षे देश अने काळनुं मान जाणवुं जोइए.

अष्टौ परमाणवो रथचक्रविप्रुट् आठ परमाणुए एक रथचक्रनी रज थाय छे.

ता अष्टौ लिक्षा आठ रजनी एक लिक्षा थाय छे.

ता अष्टौ यूकामध्यः आठ लीखनो एक यूकामध्य (सामान्य यूका) थाय छे.

ते अष्टौ यवमध्यः आठ यूकामध्यनो एक यवमध्य (सामान्य यव) थाय छे.

अष्टौ यवमध्या अङ्गुलं, मध्यमस्य पुरुषस्य मध्यमाया अङ्गुल्या मध्यप्रकर्षो वाऽङ्गुलम्।

आठ यव (मध्य) मळीने एक अंगुल थाय छे अथवा तो मध्यम पुरुषनी मध्यम आंगळीनो मध्यप्रकर्ष जेटलो अंगुल कहेवाय छे.

चतुरङ्गुलो धनुर्ग्रहः । चार अंगुलनो एक धनुर्ग्रह थाय छे.

अष्टाङ्गुला धनुर्मुष्टिः । आठ आंगळनी एक धनुर्मुष्टि थाय छे.

द्वादशाङ्गुलो वितस्तिः छायापौरुषं च ।

बार आंगळनी एक वितस्ति (वेंत) तथा छायापौरुष (छाया माटेनुं पुरुषमाप) पण थाय छे.

चतुर्दशाङ्गुलं शमः शलः परिरयः पदं च ।

चौद आंगळनो एक शम, शल, परिरय अथवा पद थाय छे.

द्विवितस्तिररत्निः प्राजापत्यो हस्तः ।

बे वितस्तिनी एक अरत्नि एटले प्राजापत्य हस्त (हाथ) थाय छे.

सधनुर्ग्रहः पौतवविवीतमानम् ।

धनुर्ग्रह सहित हस्त (२८ आंगळनो) ते पौतव (तुलानी लाकडी) विवीत (गौचर) मानमां वपराय छे.

सधनुर्मुष्टिः किष्कुः कंसो वा ।

धनुर्मुष्टि सहित हाथ (३२ आंगळनो) ते किष्कु अथवा कंस कहेवाय छे.

द्विचत्वारिंशदङ्गुलस्तक्ष्णः क्राकचिककिष्कुः स्कन्धावारदुर्गराजपरिग्रहमानम् ।

बेंताळीश आंगळनो एक सुतारनी करवत जेवडो किष्कु थाय छे. स्कंधावार (सैन्यनी छावणी), दुर्ग (किल्लो) अने राजमहेलना मान माटे पण आ छे.

चतुःपञ्चाशदङ्गुलः कुप्यवनहस्तः ।

चोपन अंगुलनो एक वनहस्त लाकडाना जंगल माटे वपराय छे.

चतुरशीत्यङ्गुलो व्यामो रज्जुमानं खातपौरुषं च ।

चोराशी अंगुलनो एक व्याम (वाम), दोरडाना मान अथवा खोदकामना मानमां पुरुषनी उंचाइ गणाय छे.

चतुररत्निर्दण्डो धनुर्नालिकापौरुषं च ।

चार अरत्निनो (९६ आंगळनो) एक दंड, धनुष् अथवा नालिका माननो पौरुष थाय.

गार्हपत्यमष्टशताङ्गुलं धनुः पथिप्राकारमानं पौरुषं च अग्निचित्यानाम् ।

१०८ आंगळनो गृहपति (अर्थात् सुतारनो) धनु छे. तेनो उपयोग सडक तथा किल्लानी रांगना मापमां वपराय तथा यज्ञ संबंधी कार्यमां पुरुषमान गणाय.

षट्कंसो दण्डो ब्रह्मदेयातिथ्यमानम् ।

छ कंसनो (१९२ अंगुलनो) एक दंड थाय छे ते (ऋत्विक् आदि) ब्राह्मणोने देवानी वस्तु माटे तथा अतिथिने देवानी वस्तु माटे गणाय.

दशदण्डो रज्जुः ।

दश दंडनो एक रज्जु (९६० आंगळनो) थाय–(दण्ड–४ अरत्नीनो–९६ आंगळनो)

द्विरज्जुकः परिदेशः बे रज्जुनो एक परिदेश थाय. (१९२० आंगळनो)

त्रिरज्जुकं निवर्तनम् । त्रण रज्जुनुं एक निवर्तन थाय (२८८० आंगळनो).

एकतो द्विदण्डाधिको बाहुः ।

एक बाजु (चार बाजुमांनी एक बाजु) ए निवर्तन (३०दण्ड) तथा बे दण्ड वधु थइने बाहु गणाय.

धनुस्सहस्रं गोरुतम् । (पाठान्तर–द्विधनु०)

हजार धनुष(दण्ड) नो एक गोरुत (गाउ) थाय. (टीकाकार पण बे हजार धनुष्यनो गाउ कहे छे.)

चतुर्गोरुतं योजनम् । चार गोरुत (गाउ) नुं एक योजन थाय.

इति देशमानं व्याख्यातम् । आ प्रमाणे देशनुं मान कह्युं.

कालमानमत ऊर्ध्वम् । हवे पछी काळनुं मान कहे छेः–

त्रुटो लवो निमेषः काष्ठा कला नालिका मुहूर्त्तः पूर्वापरभागौ दिवसो रात्रिः पक्षो मासो ऋतुरयनं संवत्सरो युगमिति कालाः

त्रुटि, लव, निमेष, काष्ठा, कला, नाळिका, मुहूर्त्त, पूर्वाह्ण, अपराह्ण, दिवस, रात्रि, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, संवत्सर अने युग आ सर्व विभाग काळना छे ते आ प्रमाणे—

द्वौ त्रुटौ लवः । बे त्रुटिनो एक लव कहेवाय.

द्वौ लवौ निमेषः । बे लवनो एक निमेष.

पञ्च निमेषाः काष्ठा । पांच निमेषनी एक काष्ठा.

त्रिंशत्काष्ठाः कला । त्रीश काष्ठानी एक कळा.

चत्वारिंशत्कलाः नाडिका । चाळीश कळानी एक नालिका

सुवर्णमाषकाश्चत्वारश्चतुरङ्गुलायामाः कुम्भाच्छिद्रमाढकमम्भसो वा नालिका ।

अथवा चार मासा सुवर्णनी चार आंगळ लांबी (शलाका जेटला छिद्रमां समाय तेटलुं)*

---

१ काललोक पृ ३३ श्लो ५२–५३ " यद्वा चतुःस्वर्णमाप...तौल्यमेयप्रमाणतः " । बे आढक =१०० पल प्रमाण जल पृ ३६ उपर कहेल छे ते योग्य लागे छे. ज्योतिष्करण्डक पण तेम ज कहे छे.

घडामां छिद्र होय तेमांथी आढक माप जेटलुं पाणी जाय ते समय नालिका. (आढक माप अर्थशास्त्रना आगळना प्रकरणमां छे.)

द्विनालिको मुहूर्तः । बे नालिकानो एक मुहूर्त.

पञ्चदशमुहूर्तो दिवसो रात्रिश्च चैत्रे मास्याश्वयुजे च मासि भवतः ।

पंदर मुहूर्त्तनो एक दिवस थाय छे. तेटली ज एक रात्रि थाय छे. आवो दिवस अने रात्रि चैत्र मासमां अने आश्विन मासमां होय छे.

ततः परं त्रिभिर्मुहूर्तैरन्यतरः षण्मासं वर्धते ह्रसते चेति ।

त्यारपछी छ मास सुधी दिवस के रात्रि ते मांथी एक त्रण मुहूर्त्त वधे छे अने घटे छे.

छायायामष्टपौरुष्यामष्टादशभागश्छेदः, षट्पौरुष्यां चतुर्दशभागः, चतुष्पौरुष्यामष्टभागः, द्विपौरुष्यां षड्भागः, पौरुष्यां चतुर्भागः, अष्टाङ्गुलायां त्रयोदश भागाः, अच्छायो मध्याह्न इति ।

आठ पौरुषप्रमाण (आठ वेंत प्रमाण=९६ अंगुल प्रमाण) छाया होय त्यारे अढारमा भागनो छेद जाणवो (एटले के अढारमा भाग जेटलो दिवस चड्यो छे अर्थात् त्रीश नालिकानो १८ मा भागनो दिन थयो छे एम जाणवुं.) ए ज रीते छ पौरुष प्रमाण (७२ अंगुल) छाया होय त्यारे चौदमा भागनो छेद जाणवो. चार पौरुष प्रमाण (=४८ अंगुल) छाया होय त्यारे आठमा भागनो छेद जाणवो. बे पौरुष प्रमाण (=२४ अंगुल) छाया होय त्यारे छट्ठा भागनो छेद जाणवो. एक पौरुष प्रमाण (=१२ अंगुल) छाया होय त्यारे दिवसना चोथा भागनो छेद जाणवो आठ अंगुल प्रमाण छाया होय त्यारे दिवसना दश भाग गणतां त्रण भागनो छेद जाणवो. चार अंगुल प्रमाण छाया होय त्यारे दिनना आठ भाग गणतां त्रण भागनो छेद जाणवो अने बिलकुल छाया न होय त्यारे बरोबर मध्याह्न थयो छे एम जाणवुं.

परावृत्ते दिवसे शेषमेवं विद्यात् ।

दिवसना मध्याह्न पछीना भागमां उपर कह्या प्रमाणे छाया होय त्यारे तेटलो दिवस शेष रह्यो छे एम जाणवुं

आषाढे मासि नष्टच्छायो मध्याह्नो भवति ।

अषाड मासमां मध्याह्न समये बिलकुल छाया होती नथी.

अतः परं श्रावणादीनां षण्मासानां द्व्यङ्गुलोत्तरा माघादीनां द्व्यङ्गुलावरा छाया इति ।

त्यारपछी श्रावणादिक छ मासमां बबे अंगुल प्रमाण छाया उत्तर दिशा तरफ वधती होय छे. अने माघादिक छ मासमां बबे अंगुल प्रमाण छाया दक्षिण दिशा तरफ होय छे.

(उत्तर दिशा तरफ छाया होय त्यारे सूर्य दक्षिणायन होय छे अने दक्षिण तरफ छाया होय त्यारे सूर्य उत्तरायण कहेवाय छे.)

पञ्चदशाहोरात्राः पक्षः । पंदर दिवस अने रात्रिनो एक पक्ष (पखवाडीयुं) थाय छे.

सोमाप्यायनः शुक्लः । सोमावच्छेदनो बहुलः ।

जेमां चंद्र वृद्धि पामतो होय ते शुक्लपक्ष, जेमां चंद्र क्षीण थतो होय ते बहुल (कृष्ण) पक्ष कहेवाय छे.

द्विपक्षो मासः । त्रिंशदहोरात्रः प्रकर्ममासः । सार्धः सौरः । अर्धन्यूनश्चान्द्रमासः । सप्तविंशतिर्नक्षत्रमासः । द्वात्रिंशत् मलमासः ।

बे पक्षनो एक मास, त्रीश दिवस-रात्रिनो एक प्रकर्ममास, साडीत्रीश दिवसरात्रिनो एक सौर (सूर्य) मास, साडीओगणत्रीश दिवस-रात्रिनो एक चान्द्रमास, सत्तावीश दिवस-रात्रिनो एक नक्षत्रमास, बत्रीश दिवस-रात्रिनो (१) एक मलमास छे. ('बत्रीशमा वर्षे मलमास आवे' ते वधारे युक्त लागे छे.)

पञ्चत्रिंशदश्ववाहायाः । चत्वारिंशद्धस्तिवाहायाः ।

पांत्रीश दिवसरात्रिनो एक अश्ववाह मास थाय छे एटले के अश्व संबंधी नोकरी करनारने पांत्रीश दिवसनो मास गणीने ते प्रमाणे पगार अपाय छे. चाळीश दिवसरात्रिनो एक हस्तिवाह मास थाय छे एटले के हाथी संबंधी नोकरी करनारने चाळीश दिवसनो मास गणीने ते प्रमाणे पगार अपाय छे.

द्वौ मासावृतुः । श्रावणः[२] प्रोष्ठपदश्च वर्षाः । आश्वयुजः कार्तिकश्च शरद् । मार्गशीर्षः पौषश्च हेमन्तः । माघः फाल्गुनश्च शिशिरः । चैत्रो वैशाखश्च वसन्तः । ज्येष्ठामूलीय आषाढश्च ग्रीष्मः ।

बे मासनी एक ऋतु थाय छे. तेमां श्रावण अने भाद्रपद ए बे मासनी वर्षाऋतु छे, आश्विन अने कार्तिक मासनी शरद्ऋतु छे, मार्गशीर्ष अने पोष मासनी हेमन्तऋतु छे, माघ अने फाल्गुन मासनी शिशिरऋतु छे, चैत्र अने वैशाख मासनी वसंतऋतु छे अने ज्येष्ठ तथा अषाढ मासनी ग्रीष्मऋतु छे.

---

१ जुओ विवेचन—सर्ग २८ उपरना उपोद्घातमा पेरा ४

२ अधि० २, अ० ६, प्र० २४ मा वर्षा, हेमन्त, ग्रीष्म एम वर्षना त्रण भाग पाड्या छे एटले वर्षाना चार मासमा उपरोक्त वर्षा ने शरद् ऋतु आवी जती हशे? हेमन्तमा हेमन्त ने शिशिर ऋतु आवी जती हशे? वसन्त अने ग्रीष्म ऋतु ग्रीष्ममा अन्तर्गत थती हशे? जो तेम होय तो जैन ग्रन्थोमा वर्षा शरद्ने बदले प्रावृट् ने वर्षा छे ते बरोबर छे.

शिशिराद्युत्तरायणम् । वर्षादि दक्षिणायनम् । द्व्ययनः संवत्सरः । पञ्चसंवत्सरो युगमिति ।

शिशिरादि (शिशिर, वसंत अने ग्रीष्म ए त्रण) ऋतु उत्तरायण छे अने वर्षादि (वर्षा, शरद् अने हेमन्त ए त्रण , ऋतु दक्षिणायन छे आ बे अयन मळीने एक संवत्सर (वर्ष) थाय छे. पांच संवत्सर मळीने एक युग थाय छे.

दिवसस्य हरत्यर्कः षष्टिभागमृतौ ततः । करोत्येकमहश्छेदं तथैवैकं च चन्द्रमाः ॥१॥
एवमर्धतृतीयानामब्दानामधिमासकम् । ग्रीष्मे जनयतः पूर्वं पञ्चाब्दान्ते च पश्चिमम् ॥ २ ॥

---

३ " शिशिराद्युत्तरायणम "

शिशिर अने वर्षा वगेरे ऋतुने अयन साथे जोडवाथी ऋतुओना संबंध सूर्यनी विषुव परत्वेनी दक्षिणोत्तर गति साथे जोडाय छे हाल दक्षिणायन जूननी २१ मीए थाय छे अने ते वखते सामान्यतः वर्षानो खरो समय समस्त देशपरत्वे थाय छे.

४ " तथैवैकं च चन्द्रमाः"

२९॥ दिननो चान्द्रमास ते स्थूल मान लागे छे ६२ चान्द्रमासना १८२९ दिन एक युगमां थाय, वस्तुतः १८३० दिन जोइए एटले अहिं स्थूळ मान गणाय ? काललोकप्रकाशमां मान २९$\frac{३२}{६२}$ दिन छे.

नक्षत्रमास २७ दिननो गण्यो छे ते पण स्थूळमान लागे छे. लोक० २७$\frac{२१}{६७}$ दिननो नक्षत्रमास गणे छे. जो २७ दिनमां चन्द्रनी आवृत्ति पूरी थाय तो पछीना २॥ दिननी चन्द्रनी चालना भाग १३४ लेखे ३३५ भाग थाय अने तेटला भाग सूर्यना २९॥ दिननी गतिना गणाय (कारण के एक अयमां सूर्यचन्द्रे साथे प्रस्थान कर्युं होय ते बीजी अमासे पुन भेगा थाय) जो आ ज गति सूर्यनी वास्तविक थाय तो सूर्यनी-रविमार्गनी आवृत्ति ३१८/३१९ दिनमां थइ जाय ते खोटुं छे सूर्यनी आवृत्ति ३६५।/३६६ दिन आसरेनी छे अर्थात् अर्थशास्त्रमां आपेला मानमां अपूर्णांक छोडी दीधेलां छे एटले स्थूलमान जेवां ज गणाय. रचना काललोकप्रकाशने मळती छे एटले काललोकप्रकाशनी रचनाना मान स्वीकारवामां कांइ वांधो नथी लागतो. जुओ वधु चर्चा " मलमास " उपर.

५ आ श्लोक अशुद्ध छे. अधि० २, अ० ७, प्र० २५ मां " आषाढी पर्यवसान " वर्ष गण्युं छे अर्थात् आषाढ शुदि पूनमे वर्षनो अन्त एटले श्रावण वदि प्रतिपदाथी नवा वर्षनो आरंभ छे त्यारथी अढी वर्षे पौष मास अधिक थाय जे शीतकाल गणाय अ० ९ अ० १ प्र० १३५/१३६ मा ' काल. शीतोष्ण वर्षात्मा " गणाव्यो छे ते जोता श्लोकमां " ग्रीष्मे " शब्दने बदले " शीते " पाठ योग्य गणाय अने तेनो संबध ' पूर्वं ' शब्द साथे बेसे जो ' ग्रीष्मे ' पाठ रहे तो पछी पाछळनो अधिक मास (बीजो आषाढ) ग्रीष्ममां आवे त्यां ' पूर्वं ' पाठने बदले ' नून ' पाठ जोइए

जो युगनो आरंभ माघ मासथी उत्तरायणथी होय तो ज अर्थशास्त्रनो श्लोक यथार्थ गणाय, परन्तु अर्थशास्त्रना अन्य उल्लेखोथी माघ मासथी वर्षनो आरंभ समजातो नथी काललोक० पृ. ४७ श्लो. ६४/६५ स्पष्टपणे कहे छे के—

" मासोऽधिकोऽयं स्यात्त्रिंश-त्सूर्यमासव्यतिक्रमे ॥ ६४ ॥
युगस्य मध्ये पौषोऽय-मन्ते त्वाषाढ एव च । "

एटले अर्थशास्त्रनो अशुद्ध श्लोक काललोकप्रकाशना श्लोक अनुसार शुद्ध वाचवो जोइए.

अधिकमासनुं निरूपण करे छे—सूर्य एक दिवसना साठमा भागने एटले एक घडीने हरे छे. एटले वृद्धि करे छे तेथी एक ऋतुमां एटले बे मासमां थइने एक दिवसनी (रात्रि-दिवसनी) वृद्धि करे छे, तेथी छ ऋतुमां थइने एटले एक वर्षे ६ दिवस वधवाथी अढी वर्षे १५ दिवस वधे छे. ते ज प्रमाणे चंद्रमा एक दिवसे साठमा भागनो एटले एक घडीनो छेद करे छे तेथी एक ऋतुमां एटले बे मासमां थइने एक दिवसनी हानि थाय छे. ते रीते गणतां छ ऋतु एटले एक वर्षमां ६ दिवस घटवाथी अढी वर्षे १५ दिवस घटे छे. आ रीते अढी वर्षे सूर्य–चंद्र बन्ने मळीने ग्रीष्मऋतुमां पहेला अधिक मासने उत्पन्न करे छे अने पांच वर्षने छेडे हेमंतऋतुमां बीजा अधिक मासने उत्पन्न करे छे. (आ रीते एक युगमां बे अधिक मास आवे छे.) १–२.

"इत्यध्यक्षप्रचारे द्वितीयेऽधिकरणे देशकालमानं विंशोऽध्यायः॥ आदित एकचत्वारिंशः"॥

" अध्यक्षप्रचार नामना बीजा अधिकरणमां ' देशकालमान ' नामनो वीशमो अध्याय समाप्त थयो. पहलेथी ४१ मो अध्याय संपूर्ण. " ।

" वेदांगज्योतिष् "

[यजुर्वेदांग जुओ " पुरातत्त्व ", वर्ष १, अंक ३, पृ० २८९....३२३].।

पृ० २८९ " पञ्चसंवत्सरमय–युगाध्यक्षं प्रजापतिम् ।
दिनर्त्वयनमासाङ्गं, प्रणम्य शिरसा शुचिः " ॥ १ ॥

" दिवस, ऋतु, अयन अने मासरूपी अंगवाळा अने पांचवर्षमय युगना अध्यक्ष एवा प्रजापतिने मस्तकवडे प्रणाम करीने पवित्र थयेलो हुं " (१).

" वेदा हि यज्ञार्थमभिप्रवृत्ताः कालानुपूर्व्या विहिताश्च यज्ञाः ।
तस्मादिदं कालविज्ञानशास्त्रं यो ज्योतिषं वेद स वेद यज्ञम् " ॥ ३ ॥

" वेदो यज्ञने माटे प्रवर्तेला छे, अने यज्ञो काळनी आनुपूर्वीए कहेला छे तेथी आ काळविज्ञानना शास्त्ररूप ज्योतिषने जे पुरुष जाणे छे, ते पुरुष यज्ञने जाणे छे " ३.

पृ० २९० " माघशुक्लप्रपन्नस्य पौषकृष्णसमापिनः ।
युगस्य पञ्चवर्षस्य कालज्ञानं प्रचक्षते ॥ ५ ॥

स्वराक्रमेते सोमार्कौ यदा साकं सवासवौ ।
स्यात्तदादि युगं माघस्तपः शुक्लोऽयनं ह्युदक् ॥ ६ ॥

श्री लोकप्रकाश–आखा ग्रंथमां आपेल सहादतोनुं लीस्ट.

प्रथम ४५ आगमो संबंधी आगमना क्रमवार आपेल छे ते पछी ग्रंथो विगेरे संबंधी अक्षरानुक्रमे आपेल छे. आमां जे अंक नीचे एक ने बे करेला छे ते दे+ला. पु. फंड तरफथी छापेली प्रतना पृष्ठांक समजवा, अने जे एकला अंको छे ते अमारा छपावेला काळलोकप्रकाश सार्थना पृष्ठांक समजवा.

सूत्रो—१–२ श्रीआचारांगसूत्र अने वृत्ति– १९–३५–३५ ३६ ३६ ३७ ४९ ५२
२ २ २ २ २ १ २ २

८१ ८४ ८८ ९० १५५–२३८–४३२ (१५)
१ २ १ २

३ श्रीलोकसार अध्ययन निर्युक्ति वृत्ति—१५५ (१)

४ श्री आचारांग निर्युक्ति— १३४
२ (१)

५–६ श्री सूत्रकृतांगसूत्र अने वृत्ति— ८६ १०० १०४
१ १ २ (३)

७–श्रीसूत्रकृतांग चूर्णि— २०७
२ (१)

८–९ श्री स्थानांगसूत्र अने वृत्ति– ९ १० ३५ ४२ ४९ | १३३ १४० १५२ १५४
२ १ २ १ २ | २ १ २ २

१५४ १८५ २०७ २७२ २७६ २७६ २९२ २९४ २९४ २९५ २९८ ३५३ |
२ १ १ १ १ १ १ १ २ १ २ १ |

१३ १९ ३५ ११० | १४० १४१ १५२ १६४ २०७ २१३ २७६ २९३
२ २ १ २ | १ २ २ २ १ २ १ १

२९३ २९५ २९५ २९७ ३०० ३२६ ३३१ ३३२ ३४२ ३६३ २०१–२५३–
२ १ २ २ १ १ १ २ २ १

३०१–३६५–३९४–४१३–४४०–४४०–६२५–६३२–६३९–६४०–६४८. (५६)

१०–११ श्री समवायांग सूत्र अने वृत्ति— १४४ १६९ १७० १७८ १८४ २०८
२ २ २ २ २ १

२१० २२४ २४५ २८३ २९४ ३३२ ३६६ २१४–२६२–४८०–४९१
२ २ २ २ १ २ २

५००–५१८–५१९–५२३–५६६–६४१–६४३–६४४–६४४–६४८ (२७)

१२-१३ श्री भगवतीसूत्र अने वृत्ति— १०/२ १०/२ ११/१ ११/२ २१/१ २६/२ ३३/१ ३५/१ ४८/१
५७/१ ६४/१ ७०/२ ७०/२ ७७/१ ७७/२ ८४/१ ८६/२ ८९/२ ९१/२ ९२/१ ९३/२ ९३/२ ९४/१
१०२/१ १०५/१ १०६/२ १०६/२ ११०/२ १११/१ ११९/१ १२६/२ १२६/२ १२७/२ १२८/१
१२९/२ १३६/२ १३२/२ १३३/२ १३४/२ १३५/१ १३५/१ १३८/१ १४४/१ १४७/२ १५२/१
१५५/२ १५५/२ १५६/१ २२६/२ २३७/१ २४३/१ २४३/१ २४३/२ २४५/१ २४९/१ २५८/२
२७६/२ २८७/२ २९९/१ २९९/२ ३१२/१ ३१६/२ ३२३/२ ३२४/२ ३२७/२ ३२७/२ ३२८/१
३३०/२ ३३०/२ ३३१/१ ३३१/२ ३३१/२ ३३२/१ ३३२/२ ३३२/२ ३३३/१ ३३३/२ ३३५/१
३३५/१ ३३५/२ ३३६/२ ३३६/२ ३३६/२ ३३७/१ ३३७/२ ३४०/१ ३४३/२ ३४३/२ ३४४/१
३४४/२ ३५०/२ ३५१/१ ३५३/१ ३५६/१ ३५७/१ ३६७/१ ३६७/१ ३६८/२ | ६१-१४३-
१४५-१६८-२६७-६३२-८४-१४६-६०७-६१६-६७३-६७५-६७६-
६७७-६७९ (११३)

१४-१५-श्री ज्ञाताधर्मकथा सूत्र अने वृत्ति— ३००/१ ३४२/२ १९१-१९३-२२४-
२२६-४०२-४०७-४९७-५०० (१०)

१६ ज्ञानसागरसूरिकृत षष्ठांग अवचूरि—२२४ (१)

१७ श्री अंतगडदशांग सूत्र—४०२-६४२ (२)

१८ श्री प्रश्नव्याकरण सूत्र-वृत्ति—१९०-४०१-४०१-४०२-४०७ (५)

१९ श्री विपाकसूत्र—२७९ (१)

२०-२१ श्री औपपातिकसूत्र अने वृत्ति- १४/२ १५/२ ५७/१ ५७/१ १७८/२ ३२३/१ ३२३/१ (७)

२२-२३ श्री राजप्रश्नीय सूत्र अने वृत्ति— ३९/२ ५७/१ २८६/१ ३१६/२ ३१९/१ ३२२/२ (६)

२४-२५ श्री जीवाभिगमसूत्र अने वृत्ति- १८/१ २१/२ २४/२ २५/१ ३३/२ ७९/१ ८८/१ ८८/२

४५ श्री आवश्यक सूत्र हारिभद्री वृत्ति–४६/१ ७३/१ १८०/१ ३००/२ ३०१/२ ३१–१९१–३१८–१९२–१९७ (१०)

४६ श्री आवश्यकवृत्ति मलयगिरि—१७० (१)

४७ श्री आवश्यक निर्युक्ति—१५/१ ७२/२ १३२/२ १९२–१९५—२२९—२७२–३११–३२४–४३१–५५४–६३५ (१२)

४८ श्री आवश्यकचूर्णि—१३२/२ २९६/२ २६३–४३० (४)

४९ श्री आवश्यक अवचूर्णि—५७–४१४/१ (२)

५० श्री आवश्यक वृहद्वृत्ति टिप्पनक—१८०/१ ३४० (२)

५१ श्राद्ध प्रतिक्रमण सूत्र चूर्णि—२०३/२ (१)

५२ श्री विशेषावश्यक सूत्र—४०/१ ४१/२ ५२/१ ३६६/१ (४)

५३ श्री विशेषावश्यक वृत्ति—४३/१ ४४/२ ५१/१ ५७/१ ६८/१ ३६८/१ ७१०–७११ (८)

५४ श्री दशवैकालिक सूत्र वृत्ति—८८/१ १०६/२ (२)

५५ श्री अनुयोगद्वार सूत्र अने वृत्ति—७/१ १४३–१४५–३६६–६८१–१७४–३६९ (७)

५६ श्री अनुयोगद्वार चूर्णि—३/१ २९९/२ (२)

५७ श्री नंदिसूत्र अने वृत्ति—४९/२ ५५/२ ५७/१ ५८/१ ५८/२ ५८/२ ५९/१ १३०–५३३–५३५–६२८ (११)

५८ श्री नंदिसूत्र चूर्णि—४१/१ ४१/२ १२६ (३)

५९ श्री वृहत्कल्प चूर्णि–५२/१ (१)

६० श्री महानिशीथ सूत्र—३५६/१ ३९९ (२)

६१ कल्पसूत्र अने वृत्ति— ३३३/१ ३३४/१ ३३५/२ २२४–२३२–४३६–५१२–५१२–५२३–५२४ (१०)

६२ कल्पांतरवाच्य टीका– २१३/२ (१)

६३ सामान्य सिद्धांते— ९/१ ६२/१ ६३/१ ६८/२ ३९/१ ४३/२ ४५/२ ५०/१ ५९/१ ८३/१ ८४/२ ८५/२ १०१/१ २२९/१ २३०/१ २३७/१ ३०८/१ ३२८/२ ३३९/२ २–८–१५ (२२)

६४ ज्योतिष्करंड मूळ—१–६१–६३–७४–७९–८४–८४–१०२–१३० (९)

६५ ज्योतिष्करंडवृत्ति—३३–६३–७२–१०२–१४४–१४८–१६२— १८१/२ २८८/१ (९)

६६ गच्छाचारवृत्ति—५२१–५३३–५३५ (३)

६७ मरणसमाधि प्रकीर्णक—५४७ (१)

६८ तंदुलवैचालिक पयन्नो—५९९ (१)

ग्रंथो, प्रकरणो विगेरे.

१ अंगुलसप्ततिका— ३/१ (१)

२ अभिधानचिंतामणि— ८८/१ ७४ (२)

३ अलंकारचूडामणि—१६३ (१)

४ आरंभसिद्धिवार्तिक—११३ (१)

५ उपदेशमाळा कर्णिकावृत्ति— ३२६/२ ५५७ (२)

६ ऋषिमंडल—५४७ (१)

७ करुणावज्रायुध नाटक—४८९ (१)

८–१३ कर्मग्रंथ—

८ कर्मग्रंथवृत्ति— ७/१ ९/१ ४३/२ ४६/२ ५१/१ ५३/२ ५७/१ ९४/२ ३१—१७० ६५९–६७३–६८१–६८५–६८७–६९९–१९२ (१७)

९ कर्मस्तववृत्ति-६७/१ (१)

१० कर्मग्रंथ अवचूर्णि—६७/१ १२१/१ (२)

११ कर्मग्रंथ लघुवृत्ति—६८/१ ६८/१ १२१/१ (३)

१२ कर्मप्रकृति वृत्ति—४३/२ १३९/१ ३१-६९९ (४)

१३ पंचम कर्मग्रंथ—३६७/२ १९२-६९९ (३)

१४ काव्यानुशासन मूळ अने वृत्ति—१६३-१६३ (२)

१५ काळसप्ततिका—१७२-६१०-६२९-६४३-६४४-६४७ (६)

१६ चुल्लकभव प्रकरण—३० (१)

१७-२१ क्षेत्रसमास.

१७ वीरंजयसेहर क्षेत्रसमास (विचार) स्वोपज्ञवृत्ति—४/१ २०६/२ २२०/१ २३४/१ २५४/२ २५७/२ २७०/२ २७६/२ २७७/१ (९)

१८ बृहत्क्षेत्रसमास बृहद्वृत्ति-४/१ १६८/१ १७२/१ १७२/१ १७२/२ १७३/२ १७९/१ १८०/१ १८३/१ १८४/१ १८८/१ १८८/२ १९७/२ १९८/१ १९९/१ २०२/२ २०३/२ २०४/१ २०५/१ २०५/२ २०६/१ २०८/१ २१३/२ २१३/२ २१४/१ २१५/२ २१६/२ २१९/२ २२०/२ २२४/१ २२८/१ २४१/२ २५७/२ २७१/१ २७६/२ (३५)

१९ सिरिनिलयक्षेत्रसमासवृत्ति—१८३/१ २०५/२ २१३/२ (३)

२० नव्य (बृहत्) क्षेत्रसमास—२०२/२ (१)

२१ रत्नशेखरसूरिकृत स्वोपज्ञक्षेत्रसमास—२१२/१ २१४/१ (२)

३८ धर्मसंग्रहणीवृत्ति—९ (१)

३९ नवतत्त्व अवचूरि—११/२ (१)

४० नवतत्त्व मूळ—१२/२ (१)

४१ नवपद प्रकरण वृत्ति—१०६/२ (१)

४२ नंदीश्वरकल्प—२९३/१ २९३/२ २९६/२ २९८/१ (४)

४३ नंदीश्वरस्तोत्र—२९३/१ २९३/२ २९८/१ (३)

४४ पंचनिर्ग्रंथी—६०० (१)

४५ पंचवस्तुक—३०८/२ (१)

४६–४७ पंचसंग्रह मूळ अने वृत्ति—२५/२ ४२/१ ८९/२ १०७/१ ३२८/१ ३२८/१ ६५५–६५९–६५९–६६३–६७१–६७३ (१२)

४८ पद्मानंद महाकाव्य (ऋषभचरित्र)—४३० (१)

४९–५० प्रवचनसारोद्धार मूल अने वृत्ति—२/२ ४/१ ५/२ १८/१ ३१/२ ३५/२ ५७/१ ८४/१ १८०/१ १८०/२ २८३/२ २९४/१ ३५३/१ ४३२–६४२–६४५–६५९–६७३ (१८)

५१ भक्तामरवृत्ति—४३०–४३१ (२)

५२ भावप्रकरण—६८१ (१)

५३ योगशास्त्रवृत्ति—५४/२ १३२/२ १४१/२ २९०/१ २९८/१ ३०३/१ ३६७/२ २७–४३२—५२१–५४६ (११)

५४ रत्नमाळा—२५०/२ (१)

५५ रत्नमाळा भाष्य—३७३ (१)

५६ रत्नाकरावतारिका—३९/१ ४६/१ ५८/१ (३)

५७ रसवतीशास्त्र—१९२ (१)

९७ हीरप्रश्नोत्तर—१८५-१९९ (२)

९८ हैमअजितचरित्र—१८०/२ (१)

९९ हैमऋषभचरित्र—१७२-३४१-३६९-३९५-४३० (५)

१०० हैमनेमिनाथचरित्र—६३५ (१)

१०१ हैमरामचरित्र (७ मुं पर्व)—१९९-४०२-४०३-४१९-५५७-१६१/१ (६)

१०२ हैमवीरचरित्र-१०६/२ ६१७ ६३३ (३)

१०३ हैमशांतिचरित्र—३२९ (१)

नोट—तथाहुः, तथोक्तं, इति वचनात्, वृद्धसंप्रदायः, इति आम्नायः, इत्युक्तं पूर्वसूरिभिः, पुरातनाः, त्रुटितपत्रे, त्रुटितगाथायां, इति जनप्रवादः–आवा शब्दोथी सूचवेला आधारो उपर जणावेल नथी. एवा आधारो पण घणा छे. तेनी संख्या करवामां आवी नथी.

३४ मा सर्गमां सुधारो

पृष्ट ६३१ श्लोक २८ मा अने ३० माना अर्थमां काले पौषध करवानुं लख्युं छ. ते बदल रात्री पौषध करवानुं समजवुं.

श्लोक २८ माना अर्थमां पाक्षिक पर्व करीए एम लखेल छे. तेने बदले पाक्षिक पर्वनो पौषध करीए एम समजवुं.

पृष्ट ६३२ श्लोक ३५ माना अर्थमां जम्या विना पौषध करवानुं लख्युं छे ते उपवास करवानुं समजवुं.

श्लोक ३६ माना अर्थमां बीजा श्रावको पण आव्या एम कह्युं छे त्यां ते तेवी ज रीते (पौषध पार्या विना) आव्या एम समजवुं.

કાળલોક અનુક્રમણિકા (ભાવલોક સહિત)

સર્ગ ૨૮ મો. (યુગસ્વરૂપ)

सर्ग २९ मो. (चार आरानुं सामान्य वर्णन)

सर्ग ३० मो. (तीर्थंकरोनुं सर्वसामान्य वर्णन)

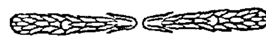
सर्ग २१ मो. (चक्रवर्तीनुं, वासुदेवनुं अने बलदेवनुं सामान्य स्वरूप)

सर्ग ३२ मो. (तीर्थंकरोना चरित्रो)

सर्ग ३३ मो. (चक्रवर्ती, वासुदेव विगेरेनुं वर्णन.)

सर्ग ३४ मो.

(अवसर्पिणीना पांचमा-छठ्ठा आरानुं अने उत्सर्पिणीना छए आरानुं वर्णन)

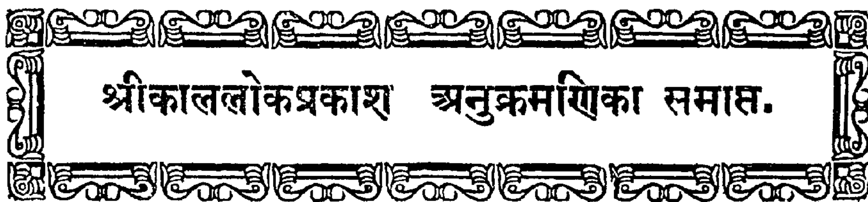


सर्ग ३५ मो.

सर्ग ३६ मो. (भावलोकप्रकाश)

सर्ग ३७ मो.

प्रशस्ति.







श्रीकाल लोकप्रकाश

ग्रंथ प्रारंभ.



॥ श्री जिनाय नमः ॥

॥ श्री विनयविजयजीगणिना विरचितः ॥

॥ अथ श्रीकाललोकप्रकाशः ॥



॥ अथ अष्टाविंशतितमः सर्गः प्रारभ्यते ॥



केवलालोकवत्रैका—लिकीमुल्लासयन् धियं ।
श्रीमान् शंखेश्वरः पार्श्वो वितनोतु सतां श्रियं ॥ १ ॥
स्वरूपं दिष्टलोकस्य जिनोद्दिष्टमथ ब्रुवे ।
गुरुश्रीकीर्त्तिविजय—क्रमसेवाप्तधीधनः ॥ २ ॥

लोकानुभावतो ज्योति—श्चक्रं भ्रमति सर्वदा । नृक्षेत्रे तद्गतिभवः कालो नानाविधः स्मृतः ॥ ३ ॥ तथोक्तं ज्योतिष्करंडे—लोगाणुभागजणिअं जोइसचक्कं भणंति अरिहंता । सव्वे कालविसेसा जस्स गइविसे-

---

अथ श्रीकाललोकप्रकाश सर्ग २८ मानुं
भाषान्तर.



केवलज्ञाननी जेम त्रण लोकना ज्ञाननो विकास करनार ज्ञानादिक लक्ष्मीवाळा श्रीशंखेश्वर पार्श्वनाथ सत्पुरुषोनी ज्ञानादिक लक्ष्मीने विस्तारो. (१).

गुरु महाराज श्रीकीर्त्तिविजयजीमहाराजना चरणनी सेवा करवाथी मने बुद्धिरूप धन प्राप्त थयुं छे, तेथी हुं श्रीजिनेश्वरोए कहेलुं दिष्टलोक (काललोक) नुं स्वरूप कहुं छुं. (२)

आ मनुष्यक्षेत्र (अढीद्वीप) ने विषे निरंतर आकाशमां सूर्यचंद्रादिक ज्योतिषचक्र लोकना अनुभावथी (स्वभावथी) ज फर्या करे छे. तेनी गतिथी काळनी उत्पत्ति थाय छे. ते काळ विविध प्रकारनो कह्यो छे. (३). ते विषे ज्योतिष्करंड नामना ग्रंथमां कह्युं

सनिष्पन्ना ॥ ४ ॥ अत्राहुः केऽपि जीवादि–पर्याया वर्त्तनादयः। काल इत्युच्यते तज्ज्ञैः पृथग् द्रव्यं तु नास्त्यसौ ॥ ५ ॥ तथाहि—जीवादीनां वर्त्तना च परिणामोऽप्यनेकधा। क्रिया परापरत्वं च स्यात्कालव्यपदेश-भाक् ॥ ६ ॥ तत्र च—द्रव्याणां सादिसांतादि–भेदैः स्थित्यां चतुर्भिदि। यत्केनचित्प्रकारेण वर्त्तनं वर्त्तना हि सा ॥ ७ ॥ द्रव्याणां या परिणतिः प्रयोगविस्रसादिजा। नवत्वजीर्णताद्या च परिणामः स कीर्त्तितः ॥ ८ ॥ भूतत्ववर्त्तमानत्व–भविष्यत्वविशेषणा। यानस्थानादि-कार्थानां या चेष्टा सा क्रियोदिता ॥ ९ ॥ पूर्वभावि परं पश्चा–द्भावि चापरमिष्यते। द्रव्यं यदाश्रयादुक्ते ते परत्वापरत्वके ॥ १० ॥ एवं च द्रव्यपर्याया एवामी वर्त्तनादयः। संपन्नाः कालशब्देन व्यपदेश्या भवंति ये ॥ ११ ॥ पर्यायाश्च कथंचित्स्यु–र्द्रव्याभिन्नास्ततश्च ते। द्रव्यनाम्नापि कथ्यंते जातु प्रोक्तं यदागमे ॥ १२ ॥ तद्यथा—

छे के—लोकना अनुभावथी आ ज्योतिषचक्र उत्पन्न थयेलुं छे, अने तेनी ज गति-विशेषथी विविध प्रकारनो काळ उत्पन्न थयो छे एम जिनेश्वरो कहे छे. (४). अहीं काळनी बाबतमां कोइ आचार्यो कहे छे के—जीवादिकना पर्यायो ज वर्त्तमान आदिक काळ छे एम विद्वानो कहे छे, तेथी काळ नामनुं जूदुं द्रव्य नथी. (५). तेओ आ प्रमाणे कहे छे—जीव, अजीव विगेरेनी वर्तना होवापणुं १, तेमनो अनेक प्रकारनो परिणाम २, तेमनी क्रिया ३ तथा तेमनुं परापरत्व ४ (पर एटले प्रथम थनार अने अपर एटले पछी थनार तेपणुं.) ए सर्व काळना व्यपदेशने भजनार छे; एटले के ए सर्व काळशब्दवडे कही शकाय छे. (६). तेमां सादिसांत विगेरे भेदोवडे चार प्रकारनी स्थितिने विषे कोइपण प्रकारवडे द्रव्योनुं जे होवापणुं ते वर्तना कहेवाय छे. १. (७) प्रयोगथी के विस्रसादिकथी द्रव्योनी जे परिणति थाय छे तथा नवापणुं के जूनापणुं जे थाय छे ते परिणाम कहेवाय छे. २. (८). भूतकाळपणुं, वर्त्तमानकाळपणुं के भविष्यकाळपणुं एवा विशेषवाळी जे पदार्थोनी गति के स्थिति विगेरे चेष्टा थाय छे ते क्रिया कहेवाय छे. ३. (९). कोइपण द्रव्य (पदार्थ) जेना आश्रयथी पहेलो थाय ते पर अने पछी थाय ते अपर कहेवाय छे. ४. (१०) आ प्रमाणे आ वर्तनादिक चार पदार्थो कह्या, ते द्रव्यना पर्यायो ज सिद्ध थाय छे अने तेमने काळशब्दवडे कही शकाय छे. (११). तथा पर्यायो कोइक प्रकारे द्रव्यथी अभिन्न पण होइ शके छे, तेथी ते पर्यायोने कोइक वखत द्रव्यना नामथी एटले द्रव्यरूपे

' किमिदं भंते कालेत्ति पवुच्चति ? गो० ! जीवा चेव अजीवा चेव त्ति ' अत्र द्रव्याभेदवर्त्ति–वर्त्तनादिविवक्षया। कालोऽपि वर्त्तनाद्यात्मा जीवाजीवतयोदितः ॥ १३ ॥ वर्त्तनाद्याश्च पर्याया एवेति प्राग् विनिश्चितं। तद्वर्त्तनादिसंपन्नः कालो द्रव्यं भवेत्कथम् ? ॥ १४ ॥ पर्यायाणां हि द्रव्यत्वे–ऽनवस्थापि प्रसज्यते। पर्यायरूपस्तत्कालः पृथग् द्रव्यं न संभवेत् ॥ १५ ॥ इत्थं चैतदुरीकार्यं वर्त्तनाद्यात्मकोऽन्यथा। कालास्तिकायः स्वीकार्यो भवेद्व्योमेव सर्वगः ॥ १६ ॥ न चार्हदिष्टादिष्टं तत् सिद्धांते यत्पुनः पुनः। पंचास्तिकाया एवोक्ताः कालो द्रव्यं पृथग् न तत् ॥१७॥ परे त्वाहुः समद्रव्य–प्रवर्त्ती वर्त्तनादिकः। पर्यायः कालनामा मा पृथग् द्रव्यं भवत्वहो ॥ १८ ॥ किंतु योऽर्कादिचाराभि–व्यंग्यो नृक्षेत्रमध्यगः। कालो न स्यात्कथं कार्या–नुमेयः परमाणुवत् ॥ १९ ॥ यच्चु-

---

पण कही शकाय छे. ते विषे आगममां कह्युं छे के (१२).–" हे भगवान् ! काळ ए शुं कहेवाय छे ? हे गौतम ! जीव अने अजीव ए काळ ज कहेवाय छे. " आ सूत्रमां द्रव्यथी अभेदपणे रहेला वर्तनादिकने ज मुख्यपणे विवक्षाए करीने एटले कहेवानी इच्छाए करीने वर्तनादिक पर्यायरूप काळने पण जीव अने अजीवपणे ज कह्यो छे. (१३). वळी आ वर्तनादिक चारे पर्यायो ज छे एम प्रथम (उपर) सिद्ध करी गया छीए, तेथी वर्तनादिकवडे प्राप्त थयेलो काळ जूदुं द्रव्य शी रीते थइ शके ? (१४). जो कदाच पर्यायोने जूदा द्रव्य तरीके मानवामां आवे तो अनवस्था नामनो दोष प्राप्त थाय छे. (एटले के दरेक द्रव्यना अनंत पर्यायो होवाथी द्रव्यनुं नियतपणुं थइ शकशे नहीं ए अनवस्था दोष कहेवाय छे.) तेथी करीने पर्यायरूप काळने जूदुं द्रव्य कहेवुं ते असंभवित छे. (१५). आ रीते ज आ वात स्वीकारवी योग्य छे. नहीं तो सर्वत्र व्यापीने रहेला आकाशने जेम अस्तिकाय कहेवामां आवे छे तेम सर्वत्र व्यापीने रहेला वर्तनादिक स्वरूपवाळा काळने पण अस्तिकायपणे स्वीकारवो जोइशे. (१६) अने ते रीते तो तीर्थंकरोने इष्ट पण नथी अने तेमणे कह्युं पण नथी, कारण के सिद्धांतमां वारंवार पांच ज अस्तिकाय कहेला छे; तेथी काळ ए जूदुं द्रव्य नथी. (एम सिद्ध थाय छे.) (१७).

आ बाबत उपर बीजा आचार्यो तो आ प्रमाणे कहे छे—अहो ! सर्व द्रव्योमां रहेला वर्तनादिक पर्यायने भले काळ नामना जूदा द्रव्य तरीके न कहो. (१८). परंतु सूर्यादिकनी गतिवडे स्पष्ट जाणी शकाय तेवो मनुष्यक्षेत्रमां (अढी द्वीपमां) रहेलो–वर्ततो काळ

द्धपदवाच्यं तत् सदित्यनुमितेरपि । षष्ठं द्रव्यं दधत् सिद्धिं कालाख्यं को निवारयेत् ॥ २० ॥ कालद्रव्ये चासति त–द्विशेषाः समयादयः । कथं नु स्युर्विशेषा हि सामान्यानुचराः खलु ॥ २१ ॥ समयाद्याश्च कालस्य विशेषाः सर्वसंमताः । जगत्प्रसिद्धाः संसिद्धाः सिद्धांतादिप्रमाणतः ॥ २२ ॥ किंच—सहैव स्यात्किसलय–कलिकाफलसंभवः । एषां नियामके काल–रूपे द्रव्येऽसति क्षितौ ॥ २३ ॥ बालो मृदुतनुर्दीप्र–देहश्च तरुणः पुमान् । जीर्णांगः स्थविरश्चेति विना कालं दशाः कथम् ॥ २४ ॥ ऋतूनामपि षण्णां यः परिणामोऽस्त्यनेकधा । न संभवेत्सोऽपि कालं विनातिविदितः क्षितौ ॥ २५ ॥ तथाहि—हिमातिपाताद्धेमंते प्रत्यग्नि शलभा इव । कंप्रकाया रणद्दंता पतंति मुदिता जनाः ॥ २६ ॥ जनयंति जने जाड्यं तुषाराश्लेषिणोऽनिलाः । परिष्वजंति नीरंध्रं युवानः कामिनीर्निशि

परमाणुनी जेम कार्यवडे अनुमान प्रमाणथी केम सिद्ध न थाय ? (१९). वळी जे द्रव्य शुद्ध (एक ज) पदथी (शब्दथी) कहेवातुं होय, ते सत् एटले विद्यमान ज छे, एवा अनुमान प्रमाणथी पण काळ नामनुं छठ्ठुं द्रव्य सिद्ध थाय छे. तेने कोण निवारी शके तेम छे ? (२०) छतां पण जो काळ नामनुं जूदुं द्रव्य न होय तो ते काळना समयादिक जे विशेषो (भेदो) छे ते शी रीते थइ शकशे–कही शकाशे ? केमके सामान्यने अनुसरनारा ज विशेषो होय छे. एटले के सामान्य (काळ) विना विशेषो (समयादिक) होइ शके ज नहीं. (२१). अने समयादिक ए काळना ज विशेषो छे ए वात सर्वने मान्य छे, जगतमां प्रसिद्ध छे अने सिद्धांत विगेरेना प्रमाणथी पण सिद्ध छे. (२२). वळी जो पृथ्वी उपर (पत्रादिकनुं) नियामक काळरूप जूदुं द्रव्य न होय तो वृक्षोने एकी साथे ज पत्र, पुष्प अने फळनी उत्पत्ति थवी जोइए. (२३). वळी बाळकनुं शरीर कोमळ होय छे, युवान पुरुषनुं शरीर देदीप्यमान होय छे अने वृद्धनुं शरीर जीर्ण होय छे, तो आवी बाल्यादिक अवस्थाओ काळ विना शी रीते घटी शकशे ? (२४). छए ऋतुओनो अनेक प्रकारनो परिणाम के जे पृथ्वी पर अत्यंत प्रसिद्ध छे ते पण काळ विना संभवतो नथी. (२५). ते आ प्रमाणे—

हेमंत ऋतुमां घणुं हिम पडवाथी कंपता शरीरवाळा अने कडकडता दांतवाळा लोको हर्षथी ज पतंगीयानी जेम अग्नि तरफ दोडे छे. (२६). जळकणने स्पर्श करनारा वायुओ मनुष्योने विषे जडता उत्पन्न करे छे, तेथी युवान पुरुषो रात्रीए स्त्रीओनुं गाढ आलिंगन

---

१ शीतल वायुथी मनुष्यो ठरी जाय छे.

॥ २७ ॥ महासरांसि स्त्यायंति दह्यतेऽभोजिनीवनं । उज्जृंभते नवो-द्भिन्न-यवादिषु च यौवनं ॥ २८ ॥ अबहिश्चारिणां रात्रौ शिशिरे संवृतात्मनां । असंयम इवर्षीणां विशां स्यादप्रियः शशी ॥ २९ ॥ पूर्णोत्संगाः फलैः पक्वै-र्वृताः शिशुकदंबकैः । बदर्यो मातर इव दधति द्युतिमद्भुतां ॥ ३० ॥ कुंदवल्ल्यः शुभ्रदीप्र-प्रसूनदशनश्रियः । हसंतीव हिमम्लाना-ननं कमलकाननं ॥ ३१ ॥ उत्फुल्लनानाकुसुमा-सवपानमदोद्धुराः । भ्राम्यंति भ्रमरा भूरि-रजोधूसरभूघनाः ॥ ३२ ॥ दत्ताश्रया दत्तभोज्या माकंदैरुपकारिभिः । अभ्यस्यंतीव कामोप-निषदं कोकिलद्विजाः ॥ ३३ ॥ ग्रीष्मे दिनकरः क्रूरैः करैः शोषयति क्षितिं । कलौ नृप इवोदेति तृष्णा लोकेऽधिकाधिका ॥ ३४ ॥ भाग्याढ्यानां धनमिव

करे छे. (२७). मोटा सरोवरो ठरी जाय छे, कमळनां वन बळी जाय छे अने नवा उगेला यवादिक धान्योने विषे युवावस्था विकास पामे छे (धान्यो बहु सारां पाके छे.) (२८). मुनिओनी जेम माणसो शिशिर ऋतुमां रात्रे बहार नीकळता नथी अने आत्मानो संवर करे छे, तथा मुनिओने असंयमनी जेम तेमने (मनुष्यने) चंद्र उपर प्रीति थती नथी. (२९). पाकेलां फळो (बोर) वडे जेमना उत्संग (मध्यभाग) पूर्ण थया छे एवी बोरडीओ मातानी जेम बाळकोना समूहथी परिवरेली (वींटायेली) होय छे तेथी ते अद्भुत कांतिने धारण करे छे. (३०). हिमथी करमाइ गयेला मुखवाळा कमळना वनने श्वेत अने विकस्वर पुष्परूपी दांतवडे शोभती कुंदलताओ हसे छे. अर्थात् शिशिर ऋतुमां बोरडीने बोर आवे छे, कुंदलता खीले छे अने कमळो करमाइ जाय छे. (३१). वसंत ऋतुमां खीलेला विविध प्रकारना पुष्पोना रसनुं पान करवाथी मदोन्मत्त थयेला भमराओ चोतरफ भमे छे अने तेमनां शरीर घणी रजथी धूसरवर्णवाळां (भुखरां) थयेलां होय छे. (३२). आम्रवृक्षोरूपी उपकारी (दातार) पुरुषोए कोयलरूपी ब्राह्मणोने रहेवानो आश्रय आप्यो होय छे अने भोजन पण आप्युं होय छे, तेथी तेओ जाणे कामरूपी उपनिषद (वेद) नो अभ्यास करता होय तेम शोभे छे. ३. (३३). ग्रीष्म ऋतुमां कलियुगना राजानी जेम सूर्य पोताना उग्र करो (किरणो) वडे पृथ्वीने चुसी ले छे अने लोको अधिक अधिक तृष्णावाळा थाय छे. (३४). भाग्यशाळी पुरुषोना धननी जेम दिन दिन

१ माणसो शरीरने वस्त्रथी ढांकी दे छे अने मुनिओ पांच महाव्रतोथी आत्माने ढांकी दे छे तेथी तेमां शीतलता जेवा कर्मनो प्रवेश थइ शकतो नथी.

वर्द्धतेऽनुदिनं दिनं । निरुद्यमानां विद्येव क्षीयते चानिशं निशा ॥३५॥ चंद्रचंदननिर्यास–वासितांगा विलासिनः । नयंत्यहान्युपवने–ष्वंबुक्रीडा-परायणाः ॥ ३६ ॥ वर्षासु जलमुग्धारा–धोरणीधौतधूलयः । कृतस्नाना धराधीशा इवाभांति धराधराः ॥ ३७ ॥ मही भाति महीयोभिः सर्वतो हरितांकुरैः । रोमांचितेवांबुवाह–प्राणप्रियसमागमात् ॥ ३८ ॥ रुंधंति सरितो लोकं मार्गगं कुलटा इव । प्रिया इव प्रियान् गाढ–मालिंगंति लतास्तरून् ॥ ३९ ॥ द्योतंते विद्युतो मेघा वर्षंत्यूर्जितगर्जिताः । उच्चैर्नंदंतो माद्यंति शिखिचातकदर्दुराः ॥४०॥ उपैति वृद्धिं शरदि प्रतापः पुष्पदंतयोः ॥ नृपांतिकेऽन्यायिवक्त्र–मिव शुष्यति कर्दमः ॥ ४१ ॥ शालिप्रभृतयो धान्य–श्रेणयो नम्रमौलयः । फलोद्रेकेऽपि विनया–द्व्यंजयंति सतां स्थितिं ॥ ४२ ॥ क्रीडंति फुल्लांभोजेषु सरस्सु स्वच्छवारिषु । राजहंसा राजहंसा इव दर्पणवेश्मसु ॥ ४३ ॥ शनैः शनैः संचरंति शालि-

---

प्रत्ये दिवस वृद्धि पामे छे अने उद्यम रहित (आळसु) पुरुषोनी विद्यानी जेम रात्रि निरंतर क्षय पामे छे (ओछी ओछी थती जाय छे). (३५) विलासी पुरुषो बागमां जइने पोताना शरीरने चंद्र जेवा शीतळ चंदनना रसवडे वासित करी तथा जळक्रीडामां तत्पर थइ दिवसोने निर्गमन करे छे. ४ (३६). वर्षा ऋतुमां मेघनी धाराना समूहवडे पर्वतोनी धूळ धोवाइ जाय छे तेथी ते पर्वतो स्नान करेला राजानी जेवा शोभे छे. (३७). मेघरूपी प्राणप्रिय (पति) नो समागम थवाथी पृथ्वीरूपी स्त्री चोतरफ उगेला मोटा लीला घासना अंकुरावडे जाणे रोमांचित थइ होय तेम शोभे छे. (३८) कुलटा स्त्रीओनी जेम नदीओ मार्गमां चालनारा (वटेमार्गु) लोकोने रुंधे छे–अटकावे छे, जेम प्रियाओ पतिने आलिंगन करे छे तेम लताओ वृक्षोने गाढ आलिंगन करे छे. (३९) वीजळीओ झबके छे, मेघो मोटी गर्जनापूर्वक वृष्टि करे छे, तथा मोर, चातक अने देडकाओ मोटा शब्द-पूर्वक हर्ष पामे छे–नृत्यादिक करे छे. ५ (४०) शरद ऋतुमां सूर्य चंद्रनो प्रताप वृद्धि पामे छे, राजानी पासे अन्यायी माणसना मुखनी जेम कादव सुकाइ जाय छे. (४१) फळनुं अधिकपणुं छतां पण डांगर विगेरे धान्यसमूहना मस्तको नीचा नमी जाय छे, तेथी तेओ एम जणावे छे के नम्रता विगेरे विनयथी ज सत्पुरुषनी स्थिति होय छे. (४२). जेम अरिसाभवनने विषे चक्रवर्त्ती राजाओ क्रीडा करे छे, तेम विकस्वर कमळवाळा अने स्वच्छ पाणीवाळा सरोवरने विषे राजहंस पक्षीओ क्रीडा करे छे. (४३). शालिना क्षेत्रनी प्रांत भूमिने विषे

क्षेत्रांतभूमिषु । प्रसरद्गोपिकागीत–दत्तकर्णाः प्रवासिनः ॥ ४४ ॥ उच्चै-रुपदिशंतीव मंचस्थाः क्षेत्ररक्षकाः । परोपकारं धान्येषु धुतमौलिषु विस्मयात् ॥ ४५ ॥ रक्षितेष्वपि जाग्रद्भि–र्दृषद्ग्रग्रकरैर्नरैः । परक्षेत्रेष्वापतंति पक्षिणः कामुका इव ॥ ४६ ॥

एवं नानाविधो लोके ऋतुभेदोऽपि विश्रुतः । निर्हेतुको भवन् कालं स्वमाक्षिपति कारणं ॥ ४७ ॥ तथाहि–चूताद्याः शेषहेतूनां सत्त्वेऽपि फलवंचिताः । कालद्रव्यमपेक्षंते नानाशक्तिसमन्वितम् ॥ ४८ ॥ किंच–वर्त्तमानातीतभावि–व्यपदेशोऽपि दुर्घटः । विना कालं मिथोऽर्थानां सांकीर्ण्यं चापि संभवेत् ॥ ४९ ॥ तथाहि–वर्त्तमानव्यपदेश–मतीतोऽनागतोऽपि वा । भजेन्नियामकाभावे तत्कालोऽस्ति नियामकः ॥ ५० ॥ तत्रातीतो द्विधाऽभाव–विषयप्रतिभेदतः । विनष्टो घट इत्याद्यो–ऽद्राक्षं तमिति चापरः ॥ ५१ ॥ भाव्यप्येवं द्विधा तत्रा–दिम उत्पत्स्यमानकः ।

(छेडे) गवाता गोपिकाओना गीत सांभळवामां पथिकजनोए पोताना कान मांड्या होय छे, तेथी तेओ धीमे धीमे चाले छे. (४४). मांचा उपर रहेला क्षेत्रना रक्षको मस्तकने धुणावता एवा धान्योने विषे विस्मय पामीने जाणे परोपकारनो उपदेश देता होय तेम जणाय छे. (४५). जागता (सावधान) अने हाथमां पत्थरवाळी गोफण राखीने रहेला पुरुषो क्षेत्रनुं चोतरफथी रक्षण करे छे, तोपण तेमां परघरमां कामुक पुरुषोनी जेम पक्षिओ आवे ज छे. (अटकता नथी) ६. (४६).

आ रीते विविध प्रकारनो ऋतुनो भेद पण जगतमां प्रसिद्ध छे, ते हेतु विना होइ शके नहीं, तेथी काळ ज तेनुं कारण छे एम ते आक्षेप करे छे. (४७). ते आ प्रमाणे –आम्र विगेरे वृक्षो बीजां सर्व कारणो छतां पण (तरतमां) फळ रहित होय छे, तेथी ते विविध शक्तिवाळा काळद्रव्यनी अपेक्षा राखे छे. (४८). वळी काळद्रव्य न मानीए तो वर्तमान, भूत अने भविष्यनुं कथन पण घटी शकतुं नथी, तथा पदार्थोनी परस्पर मिश्रता थइ जवानो संभव छे. (४९). कारणके जो पदार्थनो नियामक काळ न होय तो अतीत अथवा अनागत पदार्थ पण वर्तमानना व्यपदेशने पामी शके छे, तेथी तेनो नियामक काळ ज छे एम मानवुं योग्य छे. (५०). तेमां अतीत काळ बे प्रकारनो छे–अभाव अने विषय. तेमां 'घट विनाश पाम्यो' ए अभाव अतीत छे, अने '[1]तेने में जोयो हतो.'

---

१ घट विगेरे पदार्थने.

घटाद्यर्थो द्वितीयस्तु गमिष्यन्नङ्गगोचरं ॥ ५२ ॥ किंच—क्षिप्रं चिरं च युगप—न्मासवर्षयुगादयः । परुत्परार्यैषमोद्य—ह्यः श्वःकदाचिदादयः ॥ ५३ ॥ लोके ख्याताः संति शब्दाः कालद्रव्याभिधायिनः । तेऽपि शुद्धपदत्वा-त्स्वा—भिधेयमनुमांति वै ॥ ५४ ॥ कालः षष्ठं पृथग् द्रव्य—मागमेऽपि निरूपितं । कालाभावे च तानि स्युः सिद्धांतोक्तानि षट् कथं ॥ ५५ ॥ तथा चागमः—'कइ णं भंते ! दव्वाए ? गो० छ दव्वा प० तं० धम्मत्थि-काए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, पुग्गलत्थिकाए, जीवत्थिकाए, अद्धासमए य' एवं कालः पृथग्द्रव्यं सिद्धो युक्त्यागमेन च । उपकारश्च तस्य स्युः पूर्वोक्ता वर्त्तनादयः ॥ ५६ ॥ वर्त्तनादिस्वरूपं च सामान्येनो-दितं पुरा । अथ किंचिद्विशेषेणो—च्यते शास्त्रानुसारतः ॥ ५७ ॥ तत्र च—द्रव्यस्य परमाण्वादे—र्या तद्रूपतया स्थितिः । नवजीर्णतया वा सा वर्त्तना परिकीर्त्तिता ॥ ५८ ॥ इतिमहाभाष्यवृत्त्यभिप्रायः, तथाच तत्पाठः

ए बीजो विषय अतीत छे. (५१) भविष्यकाळना पण ते ज बे प्रकार छे. तेमां 'घटादिक पदार्थ काले उत्पन्न थशे.' ए अभाव भविष्य छे, अने 'तेने हुं काले जोइश.' ए बीजो विषय भविष्य कहेवाय छे. (५२). तेमज वळी जलदी, चिरकाळ, एकी साथे, मास, वर्ष, युग विगेरे, पोर, परार, ओगण, आज, गइ काल, आवती काल अने कदाचित् विगेरे जे कालद्रव्यने कहेनारा शब्दो लोकमां प्रसिद्ध छे, ते पण शुद्धपद (एक ज शब्द) होवाथी पोताना अर्थने अनुमानथी सिद्ध करे छे. (५४). वळी काल नामनुं छठ्ठुं जूदुं द्रव्य आगममां पण कहेलुं छे. केमके कालद्रव्य न होय तो सिद्धांतमां कहेलां ते छ द्रव्यो शी रीते थइ शके ? (५५). ते विषे आगममां कह्युं छे के—" हे भगवान् ! द्रव्य केटलां छे? हे गौतम ! छ द्रव्यो कहेलां छे, ते आ प्रमाणे.—धर्मास्तिकाय १, अधर्मास्तिकाय २, आकाशास्ति-काय ३, पुद्गलास्तिकाय ४, जीवास्तिकाय ५ अने अद्धासमय (काल) ६." आ प्रमाणे युक्तिवडे अने आगमवडे काळ भिन्नद्रव्य छे एम सिद्ध थयुं. ते काळनो उपकार (उपयोगिता) पूर्वे कहेला वर्तनादिक ज छे. (५६). आ वर्तनादिकनुं स्वरूप प्रथम सामान्यपणे कही गया छीए. हवे अहीं शास्त्रने अनुसारे कांइक विशेष प्रकारे कहीए छीए. (५७)—

तेमां परमाणु विगेरे द्रव्यनी जे ते रूपे स्थिति, अथवा ते परमाण्वादिकनी जे नवापणाए के जुनापणाए स्थिति, ते वर्तना कहेली छे. (५८). आ प्रमाणे महा-

---

१ द्रव्यरूपे होवापणाने. २ परमाण्वादिकरूपे.

—अत्रैव तत्परमाण्वादिरूपेण (द्व्यणुकत्र्यणुकादिरूपेण) परमाण्वादिद्रव्याणां (वर्तनं) वर्त्तना इति ४३५ तमपत्रे, तथा तत्र " विवक्षितेन नवपुराणादिना तेन तेन रूपेण यत्पदार्थानां वर्त्तनं शश्वद्भवनं सा वर्त्तना " इत्याद्यपि तत्रैव ८३६ पत्रे. तथा तैस्तैर्भावैः स्वतो ह्यर्था वर्त्तंते, तत्प्रयोजिका वृत्तिः—कालाश्रया या सा वर्त्तनेत्यभिधीयते इति तत्त्वार्थवृत्त्याशयः, तथा च तद्वचः—वर्त्तना कालाश्रया वृत्तिरिति वर्त्ततेऽर्थाः स्वयमेव तेषां वर्त्तमानानां (प्रयोजिका) कालाश्रया वृत्तिर्वर्त्यते यया सा वर्त्तना इति २४५ तमपत्रे. धर्मसंग्रहणीवृत्तेरप्ययमेवाशयः।

नानाविधा परिणति–र्द्रव्यस्य सत एव या। परिणामः स कुंभादि–मृद्द्रव्यादेरिवोदितः ॥ ५९ ॥ यथांकुराद्यवस्थस्य परिणामो वनस्पतेः। मूलकांडादिभावेन स्वजात्यपरिहारतः ॥ ६० ॥ यथा वयःपरीणामो देह-

भाष्यनी वृत्तिनो अभिप्राय छे. तेमां ४३५ मा पानामां कह्युं छे के–परमाण्वादिक द्रव्योनुं जे परमाण्वादिकरूपे रहेवुं ते वर्तना कहेवाय छे, तथा ते परमाण्वादिकने विषे कहेवाने इच्छेला नवीन, पुराण विगेरे ते ते रूपे पदार्थोनुं जे वर्तवापणुं एटले निरंतर होवापणुं ते पण वर्तना कहेवाय छे. इत्यादि पण ते ज महाभाष्यनी वृत्तिमां ८३६ मा पानामां कह्युं छे. तथा " पदार्थो ते ते भावे करीने (ते ते रूपे) पोतानी मेळे ज वर्ते छे, ते वर्तवामां जे प्रयोजन (कारण) रूपे होय, ते काळना आश्रयवाळी वर्तना कहेवाय छे. " एम तत्त्वार्थनी टीकानो अभिप्राय छे. ते विषे तेमां कह्युं छे के—" वर्तना एटले काळना आश्रयवाळुं होवापणुं, एटले के पदार्थो पोतानी मेळे ज वर्ते छे, अने वर्तता एवा ते पदार्थोनी काळना आश्रयवाळी जे वृत्ति (एटले जेनावडे वर्तवानुं थाय) ते वर्तना कहेवाय छे. " आ प्रमाणे २४५ मा पानामां कह्युं छे. धर्मसंग्रहणीनी टीकानो पण आ ज अभिप्राय छे. इति वर्तना. १.

छता पदार्थनी जे विविध प्रकारनी परिणति ते परिणाम कहेवाय छे. जेमके माटी विगेरे पदार्थनी जे कुंभादिकरूपे परिणति ते (कुंभादिक) परिणाम कहेवाय छे. (५९). जेम अंकुरादिक अवस्थावाळा वनस्पति (वृक्षादिक) ना मूळ, थड विगेरे पोतानी जातिने अनुसरता परिणाम थाय छे. (६०). जेम प्राणीओना शरीररूपी

१ विशेषावश्यक भाष्य छापेल भाग ९. २ तत्त्वार्थ सटीक छापेल.

द्रव्यस्य चांगिनां । दध्यादिपरिणामो वा द्रव्यस्य पयसो यथा ॥ ६१ ॥ हेम्नो वा मौलिमुद्रादि–भावैः परिणतिर्यथा । परिणामो विफणत्वो–त्फणत्वादिरहेर्यथा ॥६२॥ द्विधा सादिरनादिश्च स चाद्योऽभ्रादिगोचरः । धर्माधर्मास्तिकायादि–गोचरः स्यात्ततोऽपरः ॥६३॥ त्रिधा यद्वा परीणाम–स्तत्राद्यः स्यात्प्रयोगजः । द्वितीयस्तु वैस्रसिक–स्तृतीयो मिश्रकः स्मृतः ॥ ६४ ॥ तत्र जीवप्रयत्नोत्थः परिणामः प्रयोगजः । शरीराहारसंस्थान–वर्णगंधरसादिकः ॥ ६५ ॥ केवलोऽजीवद्रव्यस्य यः स वैस्रसिको भवेत् । परमाण्वभ्रेंद्रधनुः–परिवेषादिरूपकः ॥ ६६ ॥ प्रयोगसहचरिता—चेतन-द्रव्यगोचरः । परिणामः स्तंभकुंभा—दिकः स मिश्रको भवेत् ॥ ६७ ॥ अशक्ताः स्वयमुत्पत्तुं परिणामेन तादृशाः । कुंभादयः कुलालादि–साचि-व्येन भवंति हि ॥ ६८ ॥ इति परिणामः ॥

पदार्थनो बाल्यावस्थादिक वयरूपे परिणाम थाय छे. जेम दूधरूप द्रव्यनो दहींरूपे परिणाम थाय छे. (६१). जेम सुवर्णरूप द्रव्यनो मुगट अने मुद्रा (वींटी) विगेरे रूपे परिणाम थाय छे, तथा जेम सर्परूप द्रव्यनो फणा रहितपणुं अने फणा सहितपणुं विगेरे परिणाम थाय छे. (६२). आ परिणाम सादि अने अनादि एवा बे प्रकारनो छे, तेमां वादळां विगेरे परिणाम सादि कहेवाय छे अने धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय विगेरे परिणाम अनादि कहेवाय छे. (६३). अथवा आ परिणाम त्रण प्रकारनो कह्यो छे. तेमां पहेलो प्रयोगथी थयेलो, बीजो विस्रसा (स्वभाव) थी उत्पन्न थयेलो अने त्रीजो मिश्र (बन्नेथी उत्पन्न थयेलो) कह्यो छे. (६४) तेमां जीवना प्रयत्नथी जे परिणाम थाय छे ते प्रयोगज कहेवाय छे. शरीर, आहार, संस्थान, वर्ण, गंध, रस विगेरे परिणाम प्रयोगज कहेवाय छे (६५). परमाणु, वादळां, इंद्रधनुष अने [1]परिवेष विगेरे जे केवळ अजीव द्रव्यनो परिणाम थाय छे, ते वैस्रसिक कहेवाय छे. (६६). जीवना प्रयोग सहित अचेतन द्रव्यना विषयवाळो जे स्तंभ, कुंभ विगेरे परिणाम थाय छे ते मिश्र परिणाम कहेवाय छे. (६७). कारणके पोतानी मेळे परिणामवडे उत्पन्न न थइ शके तेवा कुंभादिक पदार्थो कुंभार विगेरेनी सहायथी ज थाय छे. (६८). इति परिणाम. २.

---

१ चंद्रनी फरतुं कुंडाळुं थाय छे ते.

क्रिया देशांतरप्राप्ति--रूपातीतादिका तथा। प्रोक्ता भाष्यस्य टीकायां तत्वार्थविवृतौ पुनः ॥६९॥ करणं स्यात्क्रिया द्रव्य--परिणामात्मिका च सा। कालोऽनुग्राहकस्तस्याः प्रयोगादेस्त्रिधा च सा ॥ ७० ॥ तत्र च—प्रयोगजात्मयोगोत्था विस्रसाजा त्वजीवजा। मिश्रा पुनस्तदुभय--संयोगजनिता मता ॥ ७१ ॥ इति क्रिया ॥

प्रशंसाक्षेत्रकालाख्य--भेदतस्त्रिविधं मतं। परत्वमपरत्वं च तत्राद्यं गुणसंभवं ॥७२॥ परः सर्वोत्तमत्वेन जैनो धर्मः परोऽपरः। क्षेत्रजं तत्तु दूरस्थः परोऽभ्यर्णगतोऽपरः ॥ ७३ ॥ तथा—अभ्यर्णदेशसंस्थोऽपि पर एव वयोऽधिकः। वयोलघुर्विप्रकृष्ट–देशस्थोऽप्युच्यतेऽपरः ॥ ७४ ॥ दिशः परापरत्वाभ्यां वैपरीत्यात् स्फुटे तु ये। इमे परापरत्वे स्तः कालोऽनुग्राहकस्तयोः ॥ ७५ ॥ वर्त्तनाद्यास्त्रयः पूर्वो–दितास्त्रिषु तथातिमं। परापरत्वं

देशांतरनी[1] प्राप्तिरूप क्रिया कहेवाय छे. ते अतीतादिक (एटले अतीत, वर्तमान अने भविष्य) एम त्रण प्रकारे भाष्यनी टीकामां कहेली छे, तथा तत्त्वार्थनी टीकाने विषे तो करणने[2] क्रिया कही छे. ते द्रव्यना परिणामरूप छे. ते क्रियानो अनुग्रह (उपकार) करनार काळ छे तथा ते क्रियाना प्रयोगादिक त्रण प्रकार कह्या छे. (७०) तेमां जे जीवना व्यापारथी उत्पन्न थाय ते प्रयोगजा, केवळ अजीव द्रव्यथी उत्पन्न थाय ते विस्रसाजा अने जीव तथा अजीव बन्नेना संयोगथी जे उत्पन्न थाय ते मिश्रा क्रिया कहेवाय छे. (७१). इति क्रिया. ३.

प्रशंसा, क्षेत्र अने काळ नामना भेदथी परत्व अने अपरत्व त्रण प्रकारनुं कह्युं छे. तेमां पहेलुं परत्वापरत्व गुणथी उत्पन्न थाय छे. (७२). जेमके जैनधर्म सर्व धर्ममां उत्तम होवाथी पर छे अने अन्य धर्म अपर छे. हवे बीजुं क्षेत्रथी उत्पन्न थतुं परत्व अने अपरत्व आ प्रमाणे छे.—जे जीवादिक पदार्थ दूर स्थानमां रहेला होय ते पर कहेवाय छे अने पासेना स्थानमां रहेला होय ते अपर कहेवाय छे. (७३). तथा (काळथी परापरत्व आ प्रमाणे छे– पासेना स्थानमां रहेलो पण जो ते वयथी अधिक (मोटो) होय तो ते पर कहेवाय छे अने दूर स्थानमां रहेलो पण जो ते लघु वयवाळो होय तो ते अपर कहेवाय छे. (७४). दिशाना (क्षेत्रना) परापरत्वथी अने तेथी विपरीतपणाथी एटले मोटी नानी वयने आश्रीने जे आ बीजा अने त्रीजा प्रकारना परापरत्व कह्या तेनो अनुग्रह करनार काळ छे. (७५). इति परापरत्व. ४.

१ एक स्थानथी बीजा स्थाने जवानी. २ करवुं ते.

कालस्य चत्वारोऽनुग्रहा अमी ॥ ७६ ॥ तथोक्तं तत्त्वार्थभाष्ये—अथ कालस्योपकारः क इत्यत्रोच्यते—वर्त्तना परिणामः क्रिया परापरत्वे च कालस्येति. सार्द्धं द्वीपद्वयं वार्द्धि—युगं च व्याप्य स स्थितः । त्रिःपंचदशभिर्लक्षैर्योजनानि मतस्ततः ॥ ७७ ॥ नन्वेवं वर्त्तनादीनां लिंगानां भावतो यथा । नृक्षेत्रमध्ये कालोऽगी—क्रियते श्रुतकोविदैः ॥ ७८ ॥ नृक्षेत्रात्परतोऽप्येप ऊर्ध्वाधोलोकयोरपि । वर्त्तनादिलिंगसत्वा—त्कुतो नाभ्युपगम्यते ॥ ७९ ॥ वर्त्तना किल भावानां वृत्तिः सा तत्र वर्त्तते । आयुः प्राणापानमानं परापरस्थिती अपि ॥ ८० ॥ अत्रोच्यते—वर्त्तते तत्र भावानां वृत्तिः सा किंतु नेष्यते । काललिंगं तदीयाया अपेक्षाया अभावतः ॥ ८१ ॥ उत्पद्यंते विलीयंते तिष्ठंति स्वयमेव हि । संतः पदार्थास्तेषां चा—स्तित्वं नान्यव्यपेक्षया ॥ ८२ ॥ प्राणादयोऽपि जायंते

पूर्वे कहेला वर्तनादिक त्रण अने छेल्लुं कहेलुं जे परापरत्व, ते चारे काळना ज अनुग्रहो छे; एटले के ते चारेनो उपयोग काळथी ज थाय छे. (७६). ते विषे तत्त्वार्थभाष्यमां कह्युं छे के—" काळनो उपकार शुं छे ? (काळ शुं उपकार करे छे ?) उत्तर—वर्तना, परिणाम, क्रिया अने परापरत्व ए चारे काळना उपकार छे (सिद्ध करनारा छे)." ते काळ मात्र अढी द्वीप अने बे समुद्रमां व्यापीने (आश्रीने) रहेलो छे, तेथी ते पीस्तालीश लाख योजन प्रमाण क्षेत्रमां ज मानेलो छे. (७७). अहीं कोइ शंका करे के—जेम वर्तनादिक लिंगना होवापणाथी पंडितो मनुष्यक्षेत्रमां काळने अंगीकार करे छे. (७८). तेम मनुष्यक्षेत्रनी बहार तथा ऊर्ध्वलोकमां अने अधोलोकमां पण वर्तनादिक लिंग होवाथी केम काळने अंगीकार करता नथी ? (७९). कारणके अढी द्वीपनी बहार पण सर्वत्र पदार्थोनी [1]वृत्तिरूप वर्तना तथा आयुष्य, प्राणापाननुं (श्वासोच्छ्वासनुं) प्रमाण अने परापरत्वनी स्थिति पण रहेली छे. (८०). आ शंकानो उत्तर आपे छे के—अढी द्वीपनी बहार सर्वत्र पदार्थोनी वृत्तिरूप वर्तना छे खरी, परंतु ते वर्तना काळनुं लिंग छे एम इच्छातुं नथी; केमके त्यां पदार्थनी वर्तनाने काळलिंगनी अपेक्षा ज होती नथी. (८१). त्यां रहेला पदार्थो पोतानी मेळे ज उत्पन्न थाय छे, नाश पामे छे अने स्थिर रहे छे. तेमना होवापणामां बीजानी अपेक्षा ज नथी. (८२) तथा त्यां प्राणादिक पण काळनी अपेक्षाए

---

१ होवापणारूप.

तत्र नाद्धाव्यपेक्षया। सजातीयेषु सर्वेषु युगपत्तदनुद्भवात् ॥ ८३ ॥ कालापेक्षाः पदार्था हि युगपत्तुल्यजातिषु। संभवंतीह माकंदा-दिषु मंजरिकादिवत् ॥ ८४ ॥ भवंति युगपन्नैव ताः प्राणादिप्रवृत्तयः। तत्रत्यानां तदेताः स्युः कालापेक्षा न कर्हिचित् ॥ ८५ ॥ परापरत्वे ये तत्र कालापेक्षे न ते अपि। स्थित्यपेक्षे किंतु षष्टि-वर्षाद्वर्षशतः परः ॥ ८६ ॥ जातवर्षशताच्चापि षष्टिवर्षो नरोऽपरः। वत्सराणां शतं षष्टि-रित्येषा च स्थितिः खलु ॥ ८७ ॥ स्थितिश्च सर्वभावानां भवेत्सत्त्वव्यपेक्षया। सत्त्वं चास्तित्वमेव स्या-त्तच्च नान्यमपेक्षते ॥ ८८ ॥ एवं च कालापेक्षाया अभावादेव नोच्यते। तत्रत्यवर्त्तनादीनां काललिंगत्वमुत्तमैः ॥ ८९ ॥ अत्रेदं तत्त्वं प्रतिभासते---भूपसत्त्वाद्यथेह स्या-त्सौस्थ्यादि तदपेक्षितं। भूपाभावात्सदपि त-त्तदपेक्षं न युग्मिषु ॥ ९० ॥ तथेह

एटले काळने आश्रीने थता नथी; केमके समान जातिवाळा ते सर्वने विषे एकसाथे ते प्राणादिकनी उत्पत्ति छे नहीं. (८३). कारणके समान जातिवाळा पदार्थोने विषे काळनी अपेक्षावाळा पदार्थो एकी साथे ज उत्पन्न थाय छे. जेमके आम्र विगेरे वृक्षो उपर तेनी मांजर विगेरे एकीसाथे ज उत्पन्न थाय छे (तेवुं अढी द्वीपनी बहार क्यांइ पण नथी) (त्यां छ ऋतुओ नथी अने तज्जन्य वर्तना नथी). (८४). त्यां रहेला पदार्थोनी ते उपर कहेली प्राणादिकनी प्रवृत्ति पण एकीसाथे थती ज नथी, तेथी ते प्राणादिकनी प्रवृत्तिने कदापि काळनी अपेक्षा छे ज नहीं. (८५). तेम ज त्यांना पदार्थोमां जे परत्व अने अपरत्व छे ते पण काळनी अपेक्षावाळा नथी; परंतु स्थितिनी अपेक्षावाळा छे. एटले के साठ वर्षना नरथी सो वर्षनो नर पर छे अने सो वर्षना नरथी साठ वर्षनो नर अपर छे. सो वर्ष अने साठ वर्ष एवी ज ते स्थिति छे. (८७). सर्व पदार्थोनी आवा प्रकारनी स्थिति सत्त्वनी अपेक्षावडे ज होय छे. सत्त्व एटले [1]अस्तित्व अने अस्तित्व बीजानी अपेक्षा करतुं ज नथी. (८८). आ रीते काळनी अपेक्षा नहीं होवाथी ज उत्तम पुरुषो त्यां रहेला पदार्थोना वर्तनादिकने काळनुं लिंग कहेता नथी. (८९). अहीं आ तत्त्व जणाय छे.–जेम हालना वखतमां आ देशमां राजा होवाथी लोकोने ते राजानी अपेक्षावाळुं सुखादिक थाय छे अने युगलियाना वखतमां राजा नहोता अने लोकोने सुख हतुं तो पण ते सुख राजानी

१ सत्ता–होवापणुं.

कालसत्त्वात्त-त्सापेक्षं वर्त्तनादिकं । कालाभावात्तदपेक्षं नरक्षेत्राद्बहिर्न तत् ॥ ९१ ॥ तद्वर्षादिऋतुद्रुम-सुमादिनैयत्यकारणं कालः । तपनादि-गतिव्यंग्यः समयादिर्ननु नृलोक एव स्यात् ॥ ९२ ॥

कालशब्दस्य निक्षेपा-श्चैकादश निरूपिताः । सन्नाम १ स्थापना २ कालौ द्रव्या ३ द्धा ४ संज्ञकौ च तौ ॥९३॥ यथायुष्को ५ पक्रमाख्यौ ६ देश ७ काला ८ भिधौ च तौ । प्रमाण ९ वर्ण १० नामानौ भाव ११ कालश्च ते स्मृताः ॥ ९४ ॥ सचेतनाचेतनयो-र्द्रव्ययोर्यद्विधीयते । कालेत्याख्या स्थापना वा नौ नामस्थापनाभिधौ ॥ ९५ ॥ द्रव्यमेव द्रव्यकालः सचेतनमचेतनं । कालोऽथानां वर्त्तनादि-पर्यायाणामभेदतः ॥ ९६ ॥ सचित्ताचित्तद्रव्याणां सादिसांतादिभेदजा । स्थितिश्चतुर्विधा यद्वा द्रव्यकालः प्रकीर्त्यते ॥ ९७ ॥ सचेतनस्य द्रव्यस्य सादिः सांता स्थितिर्भवेत् । सुरनारकमर्त्यादि-पर्यायाणामपेक्षया ॥ ९८ ॥ सिद्धाः

अपेक्षावाळुं होतुं नथी. (९०). ते ज प्रमाणे अहीं अढी द्वीपमां काळ छे. तेथी तेनी अपेक्षावाळा वर्तनादिक कहेवाय छे, अने मनुष्यक्षेत्रनी बहार काळनो अभाव छे तेथी तेनी अपेक्षावाळा वर्तनादिक कहेवाता नथी. (९१). तेथी करीने वर्षादिक छए ऋतुओ अने वृक्षना पुष्पादिकने नियमित उत्पन्न करवानुं कारण काळ ज छे अने तेवो सूर्यादिकनी गतिथी जाणी शकाय एवो काळ आ मनुष्यक्षेत्रमां ज छे. (९२).

हवे काळ शब्दना अग्यार निक्षेपा कहेला छे. ते आ प्रमाणे.—सन्नामकाळ १, स्थापनाकाळ २, द्रव्यकाळ ३, अद्धाकाळ ४, यथायुष्ककाळ ५, उपक्रमकाळ ६, देशकाळ ७, काळकाळ ८, प्रमाणकाळ ९, वर्णकाळ १० अने भावकाळ ११. (९४). तेमां सचेतन के अचेतन कोइ पण पदार्थनुं काळ एवुं नाम पाडयुं होय ते सन्नामकाळ कहेवाय छे. १. कोइ पण पदार्थनी काळरूपे स्थापना करी होय ते स्थापनाकाळ कहेवाय छे. २. (९५). सचेतन के अचेतन द्रव्य ज द्रव्यकाळ कहेवाय छे, केमके ते द्रव्य अने काळने आश्रीने उत्पन्न थता तेना वर्तनादिक पर्यायो ए बन्नेनो परस्पर अभेद छे माटे. (९६). अथवा सचित्त अने अचित्त द्रव्योनी जे सादिसांत विगेरे चार प्रकारनी स्थिति छे, ते द्रव्यकाळ कहेवाय छे. (९७). सचेतन (जीव) द्रव्यनी देव, नारक, मनुष्य विगेरे पर्यायोनी अपेक्षाए सादिसांत (१) स्थिति छे. (९८). सिद्धना जीवो सिद्धपणाने

सिद्धत्वमाश्रित्य साद्यनंतां स्थितिं श्रिताः। भव्या भव्यत्वमाश्रित्या-नादिसांतां गताः स्थितिं ॥ ९९ ॥ जीवो मोक्षस्य योग्यो हि भव्य इत्युच्यते श्रुते। मोक्षं प्राप्तस्तु नो भव्यो नाप्यभव्य इतीर्यते ॥१००॥ यदुक्तं—'सिद्धे नो भव्वे नो अभव्वे' इति. अभव्याश्चाभव्यतया-ऽनाद्यनंतस्थितौ स्थिताः। द्रव्यस्येति सचित्तस्य स्थितिरुक्ता चतुर्विधा ॥ १ ॥ द्विप्रदेशादयः स्कंधाः स्युः सांताः सादयोऽपि च। उत्कर्षतोऽप्य-संख्येय-कालस्थितिजुषो हि ते ॥ २ ॥ साद्यनंताऽनागताद्धा--तीता सांता निरादिका। अनाद्यनंताश्चाकाश--धर्माधर्मादयो मताः ॥ ३ ॥ अचेतनस्य द्रव्यस्य चतुर्द्धेति स्मृता स्थितिः। एवमुक्त्वा द्रव्यकाल-मद्धाकालमथ ब्रुवे ॥ ४ ॥ सूर्यादिक्रियया व्यक्ती-कृतो नृक्षेत्रगोचरः। गोदोहादि-क्रियानिर्व्य-पेक्षोऽद्धाकाल उच्यते ॥५॥ तथाहि---यावत्क्षेत्रं स्वकिरणै-

आश्रीने सादिअनंत (२) स्थितिने पामेला छे, भव्य जीवो भव्यत्वने आश्रीने अनादि-सांत (३) स्थितिने पामेला छे. (९९). केमके जे जीव मोक्षने योग्य होय ते भव्य छे एम सिद्धांतमां कह्युं छे, ते जीव ज्यारे मोक्ष पामे छे त्यारे ते भव्य पण नथी अने अभव्य पण नथी एम कह्युं छे. (१००). ते विषे सिद्धांतमां कह्युं छे के—"सिद्धनो जीव भव्य पण नथी अने अभव्य पण नथी." तथा अभव्य जीवो अभव्यपणाने आश्रीने अनादि अनंत (४) स्थितिमां रहेला छे. (केमके ते कदापि मोक्षने पामता ज नथी, एटले तेनो अंत नथी अने तेनुं अभव्यपणुं अनादि काळनुं छे, तेथी तेनुं अभव्यपणुं अनादिअनंत छे.) आ प्रमाणे सचित्त द्रव्यनी चार प्रकारनी स्थिति कही. (१०१). अचेतन द्रव्यमां द्विप्रदेशादिक स्कंधो सादिसांत (१) छे, केमके ते स्कंधो उत्कर्षथी पण असंख्य काळनी स्थितिवाळा ज छे. (२). भविष्यकाळ सादिअनंत (२) छे, भूतकाळ अनादिसांत (३) छे, तथा आकाशास्तिकाय, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय विगेरे अनादि अनंत (४) कहेला छे. (३). आ प्रमाणे अचेतन द्रव्यनी चार प्रकारनी स्थिति कही. ए रीते त्रीजो द्रव्यकाळ कह्यो. ३. हवे चोथा अद्धाकाळने हुं कहुं छुं.—(४). सूर्यादिकनी क्रियाए प्रगट करेलो अने [1]गोदोहादिक क्रियानी अपेक्षा रहित जे मनुष्यक्षेत्रमां वर्ततो काळ छे ते अद्धाकाळ कहेवाय छे. (५). ते आ प्रमाणे—चालवानी क्रिया करतो सूर्य

१ गायोने दोहवा विगेरेनी क्रिया.

श्चरन्नुद्योतयेद्रविः । दिवसस्तावति क्षेत्रे परतो रजनी भवेत् ॥ ६ ॥ एवं सदा प्रवृत्तोऽद्धा-कालोऽर्कादिगतिस्फुटः । गोदोहान्नपाचनाद्या-मन्यां नापेक्षते क्रियां ॥ ७ ॥ अद्धाकालस्यैव भेदाः समयावलिकादयः । अथो यथायुष्ककाल-स्वरूपं किंचिदुच्यते ॥ ८ ॥ यश्चाद्धाकाल एवासु-मता-मायुर्विशेषितः । वर्त्तनादिमयः ख्यातः स यथायुष्कसंज्ञया ॥ ९ ॥ अयं भावः—यद्येन तिर्यग्मनुजा-दिकजीवितमर्जितं । तस्यानुभवकालो यः स यथायुष्क उच्यते ॥ १० ॥ येनोपक्रम्यते दूर-स्थं वस्त्वानीयतेऽन्तिकं । तैस्तैः क्रियाविशेषैः स उपक्रम इति स्मृतः ॥ ११ ॥ उपक्रमणमभ्यर्णा-नयनं वा दवीयसः । उपक्रमस्तत्कालोऽपि ह्युपचारादुपक्रमः ॥ १२ ॥ सामाचारीयथायुष्क-भेदाच्चोपक्रमो द्विधा । सामाचारी तत्र साधु-जना-चीर्णा शुभक्रिया ॥ १३ ॥ तस्या आनयनं प्रौढ-शास्त्रादुद्धृत्य यत्क्वचित् । आसन्नतायै लघुनि शास्त्रे स स्यादुपक्रमः ॥ १४ ॥ अयं भावः—ज्ञान-

---

पोताना किरणोवडे जेटला क्षेत्रने प्रकाशित करे छे तेटला क्षेत्रमां दिवस होय छे अने तेथी बीजा क्षेत्रमां रात्रि होय छे. (६). आ प्रमाणे सूर्यादिकनी गतिथी स्पष्ट जणातो अने निरंतर प्रवर्ततो अद्धाकाळ गोदोह अने अन्नने पकाववुं ए विगेरे अन्य क्रियानी अपेक्षा राखतो नथी. (७). समय अने आवलिका (तथा मिनिट, कलाक) विगेरे सर्व आ अद्धाकाळना ज भेदो छे. ४. हवे पांचमा यथायुष्ककाळनुं कांइक स्वरूप कहेवाय छे. (८).—उपर कहेलो जे अद्धाकाळ प्राणीओना आयुष्यना विशेषणपणे कहेवामां आवे छे, ते ज वर्तनादिक स्वरूपवाळो काळ यथायुष्क नामथी प्रसिद्ध छे. (९). भावार्थ ए छे के—जे जीवे तिर्यंच, मनुष्य विगेरेनुं जे जीवित (आयु) उपार्जन कर्युं होय ते जीवितना अनुभवनो जे काळ छे, ते काळ यथायुष्क कहेवाय छे. (१०). हवे छठ्ठो उपक्रमकाळ कहे छे—जेनावडे उपक्रम कराय एटले दूर रहेली वस्तुने ते ते प्रकारनी क्रियाओए करीने पासे (नजीक) लाववामां आवे ते उपक्रम कहेवाय छे. (११). अथवा तो उपक्रमण एटले जे दूरने नजीक लाववुं ते उपक्रम कहेवाय छे, ते उपक्रमनो काळ पण उपचारथी उपक्रमकाळ कहेवाय छे. (१२). आ उपक्रम सामाचारी अने यथायुष्क एम बे प्रकारनो कह्यो छे, तेमां सामाचारी एटले साधुओए आचरेली शुभ क्रिया. (१३). ते शुभ क्रियाने दूररूप मोटा शास्त्रमांथी उद्धरीने समीपताने माटे नाना शास्त्रमां जे लाववी, ते उपक्रम कहेवाय छे. (१४). भावार्थ ए छे के—मोटा शास्त्रनो अभ्यास करवाथी आ

स्यास्याः प्रौढशास्त्रा–ध्ययनाच्चिरभाविनः। अल्पग्रंथादाशुकारी स्यात्सा-माचार्युपक्रमः॥ १५॥ ओघः पदविभागश्च दशधा चेति स त्रिधा। सामाचारीत्रिधात्वेनो–पक्रमोऽप्युदितो बुधैः॥ १६॥ तत्र च—ओघा-त्सामान्यतः साधु–सामाचार्या यदीरणं। ओघसामाचार्यसौ स्या–दोघनिर्युक्तिरूपिका॥१७॥ भवेत्पदविभागाख्या सामाचारी महात्मनां। छेदग्रंथसूत्ररूपा दशधेच्छादिका त्वियं॥ १८॥

इच्छामिच्छातहक्कारो आवस्सिया य निसीहिया। आपुच्छणा य पडिपुच्छा छंदणा य निमंतणा॥ १९॥ उवसंपया य काले सामायारी भवे दसहा। इच्छया कुर्विदमिति रात्निकाद्या दिशंति यत्। इच्छा-कारेण तत्कुर्या-दितीच्छाकार उच्यते॥ २०॥ अनाभोगाज्जिनाद्याज्ञा–विरुद्धे कथिते कृते। मिथ्याकारं यदाहुर्ज्ञाः स मिथ्याकार उच्यते॥२१॥ गुर्वाद्युक्तेषु सूत्रार्था–दिषु कार्येषु वा बुधाः। तथैवमिति यद्ब्रूयु–स्तथा-

---

साधुक्रियानुं ज्ञान घणे काळे थाय छे, ते नानो ग्रंथ भणवाथी थोडा काळमां थाय छे, तेथी ते सामाचारी उपक्रम कहेवाय छे. (१५). ओघ सामाचारी, पदविभाग सामाचारी अने दश प्रकारनी (चक्रवाळ) सामाचारी एम सामाचारी त्रण प्रकारनी होवाथी पंडितोए उपक्रमना पण ए ज त्रण प्रकार कह्या छे. (१६). तेमां ओघथी एटले सामान्यथी सामाचारीनुं जे कहेवुं ते ओघ सामाचारी ओघनिर्युक्तिमां कहेली छे. (१७). बीजी पदविभाग नामनी साधुनी सामाचारी छेदग्रंथना सूत्ररूप छे, (छेद सूत्रमां कहेली छे) तथा त्रीजी दश प्रकारनी सामाचारी आ प्रमाणे छे.—(१८).

इच्छाकार १, मिच्छाकार २, तहकार ३, आवस्सिया ४, निसीहिया ५, आपुच्छणा ६, पडिपुच्छणा ७, छंदणा ८, निमंत्रणा ९ अने उपसंपदा १०. आ दश प्रकारनी सामाचारी काळने आश्रीने कहेली छे. (१९). 'अमुक कार्य तुं तारी इच्छा प्रमाणे कर' एम गुर्वादिक मोटा जे आदेश आपे, ते पोतानी इच्छाए करवुं. आ इच्छाकार कहेवाय छे. १. (२०). अनाभोगने लीधे तीर्थकरादि-कनी आज्ञाविरुद्ध कांइ बोलायुं होय अथवा करायुं होय, तेने माटे पंडितो जे मिथ्याकार (मिथ्यादुष्कृत) आपे, ते मिथ्याकार कहेवाय छे. २. (२१). गुर्वादिके सूत्र अने अर्थ विगेरे कहे सते अथवा बीजुं कांइ कार्य बतावे सते डाह्या साधुओ तथा (तहत्ति–ते ज

कारः स उच्यते ॥ २२ ॥ योगैरवश्यकर्तव्यै-र्निष्पन्नावश्यकी भवेत् । वसत्यादेर्निर्गमे सा मुनिधुर्यैः प्रयुज्यते ॥ २३ ॥ अप्रस्तुतनिषेधेन वृत्ता नैषेधिकीति तां । कृतकार्या वसत्यादौ प्रविशंतः प्रयुंजते ॥ २४ ॥ आपृच्छनं स्यादापृच्छा गुरोः कार्ये चिकीर्षिते । प्रतिपृच्छा कार्यकाले भूयो यत्पृच्छनं गुरोः ॥ २५ ॥ स्वयं पूर्वं गृहीतेन गुर्वादेरशनादिना । याभ्यर्थना छंदनाख्या सामाचारी स्मृतागमे ॥ २६ ॥ आनयामि युष्मदर्थ-मशनाद्यादिशंतु मां । गुर्वादीनां तदादाना-त्प्राग् विज्ञप्तिर्निमंत्रणा ॥ २७ ॥ उपसंपत् पुनर्गच्छां-तराचार्याद्युपासनं । ज्ञानाद्यर्थं कियत्कालं सामाचार्यो दशेत्यमूः ॥ २८ ॥ तृतीयं नवमे पूर्वे यद्वस्त्वाचारनामकं । तस्य यद्विंशतितम-मोघाख्यं प्राभृतं महत् ॥ २९ ॥ तत उद्धृत्य कारुण्य-धनैः स्थविरधीधनैः । ओघनिर्युक्तिरूपाल्प-ग्रंथन्यस्ता महार्थभृत् ॥ ३० ॥ पूर्वादिपाठानर्हाणां हीनबुद्धिबलायुषां । ऐदंयुगीन-

---

प्रमाणे) अने एवं (बहु सारुं) एम जे बोले ते तथाकार कहेवाय छे. ३. (२२). अवश्य करवा लायक योगवडे जे नीपजे छे-करवामां आवे छे ते आवश्यकी कहेवाय छे. ते आवश्यकीनो श्रेष्ठ मुनिओ उपाश्रयादिकथी बहार नीकळे त्यारे (तेम बोलवापणे) उपयोग करे छे. ४. (२३). अप्रस्तुत कार्यनो निषेध करवाथी जे उत्पन्न थाय छे ते नैषेधिकी (निसीहि) कहेवाय छे. ते नैषेधिकीनो कार्य करीने उपाश्रयादिकमां प्रवेश करतां वखते मुनिओ उपयोग करे छे. ५. (२४). कांइ पण कार्य करवानी इच्छा थाय त्यारे तेने माटे गुरुने जे पूछवुं ते आपृच्छणा कहेवाय छे. ६. कार्य करती वखते फरीथी गुरुने जे पूछवुं ते प्रतिपृच्छना कहेवाय छे. ७. (२५). साधुए पोते प्रथम जे आहारादिक ग्रहण कर्युं होय (आण्युं होय) ते लेवा माटे गुरुनी पासे प्रथम जे प्रार्थना करवी ते छंदना नामनी सामाचारी आगममां कहेली छे. ८. (२६). " हुं आपने माटे अशनादिक लावुं, मने आप आज्ञा आपो. " ए प्रमाणे अशनादिक ग्रहण कर्या पहेलां गुर्वादिकने विज्ञप्ति करवी ते निमंत्रणा कहेवाय छे. ९. (२७). ज्ञानादिक शीखवा माटे केटलोक वखत अन्य गच्छना आचार्य विगेरेनी जे सेवा करवी ते उपसंपत् कहेवाय छे. १०. आ प्रमाणे दश प्रकारनी सामाचारी छे. (२८). नवमा पूर्वमां जे आचार नामनी त्रीजी वस्तु छे, तेनुं जे वीशमुं ओघ नामनुं मोटुं प्राभृत छे. (२९). तेमाथी उद्धरीने करुणारूप धनवाळा स्थविर मुनिओए ओघनिर्युक्तिरूप नाना ग्रंथमां मोटा अर्थवाळी सामाचारीने स्थापन करी

जीवाना-मुपकाराय सत्वरं ॥ ३१ ॥ तदर्थज्ञानतत्सम्य-गनुष्ठानार्थमुत्तमा। आसन्नीकृत्य दत्तौघ-सामाचारी भवत्यसौ ॥ ३२ ॥ त्रिभिर्विशेषकं ॥ एवं पदविभागाख्या-प्यात्ता नवमपूर्वतः। उत्तराध्ययनादेत्या षड्विंशाच्च समुद्धृता ॥ ३३ ॥ ज्ञानमास्तां हि पूर्वादि-पाठसाध्यं चिराद्भवेत् ॥ तदुद्धारात्तु तूर्णं स्या-दित्यसौ तदुपक्रमः ॥ ३४ ॥

अनल्पकालवेद्यस्या-युषः संवर्त्तनेन यत्। अल्पकालोपभोग्यत्वं भवेत्सोपक्रमायुषां ॥ ३५ ॥ यथायुष्कोपक्रमाख्यः स कालः परिकीर्त्तितः। दूरस्थस्यायुरंतस्य समीपानयनात्मकः ॥ ३६ ॥ उपक्रमो भवत्येवं सर्वेषामपि कर्मणां। स्थित्यादिखंडनद्वारा प्रातानामनिकाचनां ॥ ३७ ॥ प्रायोऽनिकाचितानां यत् किल्विषेतरकर्मणां। शुभाशुभपरीणाम-वशात्स्यादपवर्त्तना ॥ ३८ ॥ निकाचितानामप्येवं तीव्रेण तपसा भवेत्। स्फूर्जत्शुभपरीणामा-त्कर्मणामपवर्त्तना ॥ ३९ ॥ तथाहुर्महाभाष्ये-सव्वपगईणमेवं। परिणामवसा उवक्कमो होज्जा। पायम-

---

पूर्वादिकनो अभ्यास करवामां अयोग्य अने हीन बुद्धि, बळ तथा आयुष्यवाळा आ युगना जीवोनो उपकार करवा माटे तत्काळ ते (सामाचारी) ना अर्थनुं ज्ञान थाय अने सम्यक् प्रकारे तेनुं अनुष्ठान थइ शके तेटला माटे आ उत्तम सामाचारी समीपे करीने आपी छे, तेथी ते ओघसामाचारी कहेवाय छे (३२). ए ज प्रमाणे पदविभाग नामनी सामाचारी पण नवमा पूर्वमांथी ग्रहण करी छे तथा छेल्ली (दश प्रकारनी चक्रवाल समाचारी) छवीशमा उत्तराध्ययनमांथी उद्धरेली छे. (३३). आ सामाचारीनुं ज्ञान पूर्वादिकनो अभ्यास करवाथी घणे काळे थइ शके छे अने तेनो उद्धार करवाथी शीघ्रपणे थइ शके छे; तेथी आ तेनो उपक्रम कहेवाय छे. (३४).

सोपक्रम आयुष्यवाळा जीवो घणा काळ सुधी वेदवा (अनुभववा) लायक पोताना आयुष्यने संवर्तन (संक्षेप) करवावडे जे अल्पकाळमां भोगववा लायक करे, ते यथायुष्क उपक्रम नामनो काळ कहेलो छे; केमके दूर रहेला आयुष्यना अंतने समीपे लाववापणुं छे माटे. (३६). ए ज प्रमाणे कर्मोनी स्थित्यादिक ओछी करवाथी सर्वे अनिकाचित कर्मोनो पण उपक्रम थइ शके छे. (३७). कारणके प्राये करीने शुभ अने अशुभ परिणामना वशथी अनिकाचित एवा पाप अने पुण्य कर्मनी अपवर्तना थइ शके छे. (३८). ए ज प्रमाणे तीव्र तपवडे उत्कट शुभ परिणामथी निकाचित कर्मनी पण अपवर्तना थइ शके छे. (३९). तेने माटे महाभाष्यमां कह्युं छे के-" ए ज प्रमाणे प्राये करीने अनिका-

निकाइयाणं तवसाओ निकाइयाणंपि ॥ ४० ॥ नन्वप्राप्तकालमपि यद्येवं कर्म भुज्यते । प्रसज्यते तदा नूनं कृतनाशाकृतागमौ ॥ ४१ ॥ यत्प्रागनल्पस्थितिकं बद्धं भुक्तं न कर्म तत् । यच्चाल्पस्थितिकं भुक्तं तद्बद्धं तेन नात्मना ॥ ४२ ॥ अत्रोच्यते–नोपक्रमेण क्रियते दीर्घ-स्थितिककर्मणः । नाशः किंत्वध्यवसाय–विशेषाद्भुज्यते द्रुतं ॥ ४३ ॥ यथा भूयःकालभोग्यान् प्रभूतान् धान्यमूढकान् । रुग्णा भस्मकवातेन नचिरादेव भुंजते ॥ ४४ ॥ न चात्र वर्त्तमानानां धान्यानां विगमो भवेत् । तद्भोगः स्यात्किंतु तूर्णं न्यायोऽयं कर्मणामपि ॥ ४५ ॥ चिरेण दह्यते रज्जु–र्वह्निना वितता यथा । सैव संक्षिप्य निक्षिप्ता क्षिप्रं भवति भस्मसात् ॥ ४६ ॥ चिरेण पच्यते वृक्ष–स्थितमाम्रादिकं फलं । गर्त्ताक्षे-पपलालादि–युक्त्या तु क्षिप्रमप्यहो ॥ ४७ ॥ विपाकः कर्मणोऽप्येवं द्विधा प्रोक्तो जिनागमे । यथास्थित्योपक्रमाद्वा बद्धं कर्मेह भुज्यते

चित पण सर्व कर्मोनी प्रकृतिओनो परिणामना वशथी उपक्रम थाय छे, अने तपवडे करीने निकाचित कर्मोनो पण उपक्रम थाय छे." (४०). अहीं कोइ शंका करे के–जो आ प्रमाणे काळ प्राप्त थया विना पण कर्म भोगववातुं होय तो कृतनाश[1] अने अकृतागम[2] ए नामना बे दोषनी प्राप्ति थाय छे. (४१). केमके जे प्रथम मोटी स्थितिवाळुं कर्म बांध्युं हतुं, ते भोगववामां आव्युं नहीं (तेथी कृतनाश नामनो दोष आव्यो) अने जे अल्प स्थितिवाळुं कर्म भोगववामां आव्युं ते जीवे बांधेलुं ज नहोतुं (तेथी अकृतागम नामनो दोष आव्यो.) (४२). आ शंकानो उत्तर आपे छे के–दीर्घ स्थितिवाळा कर्मनो उपक्रमवडे नाश थतो नथी, परंतु विशेष प्रकारना अध्यवसाय (परिणाम) ने लीधे ते कर्म जलदी थोडा काळमां भोगवी लेवाय छे. (४३). जेम घणा काळे खाइ शकाय तेवा घणा धान्यना मूढाने भस्मक नामना वायुना रोगवाळा मनुष्यो थोडा काळमां खाइ जाय छे. (४४). तेमां कांइ वर्तता धान्यनो नाश थतो नथी, परंतु ते शीघ्र खाइ जवाय छे. ए ज न्याय कर्मनो पण समजवो. (४५). जेम लांबी करेली दोरीने अग्निवडे सळगावीए तो ते चिरकाळे बळे छे अने ते ज दोरीनो दडो करी अग्निमां नांखीए तो ते शीघ्र भस्मसात् थाय छे (४६). तथा जेम वृक्ष पर रहेला आम्रफळ (केरी विगेरे फळ) चिरकाळे पाके छे अने ते ज फळने जो खाडामां नांखी तेने घासवडे ढांक्या

१ करेलानो नाश. २ नहीं करेलानी प्राप्ति.

॥४८॥ नन्वेवं कर्म यद्बद्धं तत्सर्वं वेद्यमेव चेत्। उपक्रमेणाल्पकाला–यथास्थित्यथवा चिरात्॥ ४९ ॥ तदा प्रसन्नचंद्रादे–र्भोगो बद्धस्य कर्मणः। सप्तमावनियोग्यस्य प्राप्तो दुःखविपाकिनः॥ ५० ॥ न चास्य श्रूयते दुःख–विपाकः सप्तमक्षितेः। अचिरादेव कैवल्यं प्राप्तस्य शुभभावतः ॥ ५१ ॥ अत्रोच्यते–यद्बद्धं कर्म तत्सर्वं प्रदेशपरिभोगतः। अवश्यं भुज्यते जीवै रसानुभवतः पुनः ॥ ५२ ॥ कर्मानुभूयते किंचित् किंचित्तु नानुभूयते। तथाविधपरीणामा–त्तद्रसस्यापवर्त्तनात् ॥ ५३ ॥ ततः प्रसन्नचंद्राद्यैः सप्तमावनिकर्मणां। प्रदेशा नीरसा भुक्ता नानुभागस्तदुद्भवः ॥५४॥ ननु प्रसन्नचंद्राद्यै–र्बद्धं कर्म रसांचितं। यद्भुक्तं तन्नीरसं त–त्कृतनाशाकृतागमौ ॥ ५५ ॥ अत्रोच्यते–परिणामविशेषेण यद्येषां क्षीयते रसः। किमनिष्टं तदा कौ वा कृतनाशाकृतागमौ ॥५६॥ तीव्रातपोपतप्तस्य यदीक्षोः क्षीयते रसः। अपूर्वस्यागमः कोऽत्र

होय तो ते शीघ्र पाके छे. (४७). ए ज प्रमाणे कर्मनो विपाक पण जिनागमने विषे बे प्रकारनो कह्यो छे, ते आ प्रमाणे–बांधेलुं कर्म यथास्थितिए भोगवे अथवा उपक्रमथी भोगवे. (४८). वळी शंका करे छे के–जो आ प्रमाणे (तमे कह्युं ते प्रमाणे) जे कर्म जीवे बांध्युं होय ते सर्व कर्म उपक्रमवडे अल्प काळमां अथवा यथास्थितिवडे चिरकाळे भोगववानुं ज होय. (४९). तो प्रसन्नचंद्र ऋषि विगेरेए सातमी नरकपृथ्वीने योग्य दुःखना विपाकवाळुं कर्म बांध्युं हतुं, तेनो भोग तेने प्राप्त थवो जोइए, (५०) छतां ते तो शुभ परिणामथी तत्काळ केवळज्ञान पाम्या हता. तेने सातमी नरक पृथ्वीना दुःखनो विपाक सांभळवामां आवतो नथी ते केम ? (५१). उत्तर–जीवोए जे कर्म बांध्युं होय ते सर्व प्रदेशना अनुभवथी अवश्य भोगवाय छे, परंतु रसना अनुभवथी तो कोइक कर्म अनुभवाय छे अने कोइक कर्म तथाप्रकारना परिणामथी तेना रसनी अपवर्तना थवाथी अनुभवातुं नथी. (५३). तेथी प्रसन्नचंद्रादिके सातमी पृथ्वीना कर्मना प्रदेशो नीरस (रस विनाना) भोगव्या हता, परंतु तेनाथी उत्पन्न थयेलो रस भोगव्यो नथी. (५४). शंका–प्रसन्नचंद्रादिके रसवाळुं कर्म बांध्युं अने नीरस कर्म भोगव्युं, तेथी कृतनाश अने अकृतागम नामना बे दोष प्राप्त थया. (५५). उत्तर–जो कदाच विशेष प्रकारना शुभ परिणामे करीने तेवां कर्मोनो रस क्षीण थाय, तो तेमां शुं अनिष्ट छे ? तथा कृतनाश अने अकृतागम दोष शी रीते प्राप्त थाय ? (५६). जो कदाच तीव्र तडकाथी तपेली

जायते वद लभ्यते ॥ ५७ ॥ रसनाशात्कृतनाशो यः स्यात्स त्विष्ट एव च । तदर्थमेव यतयो यतंते यत्तपोविधौ ॥ ५८ ॥ अवश्यं भुज्यते कर्म यथा बद्धं तथैव चेत् । तदा तपोविधिः सर्वो व्यर्थः स्याद्दुरिताक्षयात् ॥ ५९ ॥ मोक्षप्राप्तिश्च कस्यापि न स्यादेव यतोंगिनां । ध्रुवं तद्भव-सिद्धीना-मपि कर्मावशिष्यते ॥ ६० ॥ सत्तायामंतरंभोधि-कोटाकोटि-स्थिति स्फुटं । प्रदेशैर्वेद्यते तच्च ततस्तन्नीरसं मतं ॥ ६१ ॥ किंचासं-ख्यभवोपात्तं नानागतिनिबंधनं । स्यादेव कर्म सत्तायां तद्भवेऽप्यंग सिद्ध्यतः ॥ ६२ ॥ विपाकरूपेणैवास्य भवत्यनुभवो यदि । तदा तत्र भवे नाना-भवानुभवसंभवः ॥ ६३ ॥ भवांस्तांस्तान् विपाकेना-नुभवे-द्यद्यनुक्रमात् । तदा पुनः पुनः कर्म तत्र तत्रार्जयत्यसौ ॥ ६४ ॥ एवं च कर्मसंताना-विच्छेदान्न भवेच्छिवं । ततः प्रदेशानुभवः कर्मणोऽस्तीति युक्तिमत् ॥ ६५ ॥ आह—चेत्कृत्वोपक्रमैरल्प-स्थितिकं कर्म वेद्यते ।

शेरडीनो रस क्षीण थइ जाय, तो तेमां कया अपूर्व पदार्थनुं आगमन थाय ? ते हे बुद्धिमान् ! तुं कहे. (५७). तथा रसनो नाश थवाथी जे कृतनाश थाय छे ते तो इष्ट ज छे. कारणके तेटला माटे ज मुनिओ तपविधिमां यत्न करे छे. (५८). जे कर्म जे प्रकारे बांध्युं होय ते कर्म ते ज प्रकारे अवश्य भोगवाय छे, एम जो तुं कहेतो हो तो सर्व करेलो तप पापकर्मनो क्षय न करवाथी व्यर्थ ज थशे (५९). अने कोइ पण जीवने मोक्षनी प्राप्ति थशे ज नहीं, केमके ते ज भवे सिद्ध थनारा प्राणीओनुं पण कर्म बाकी रहेवानुं ज छे. (६०). तेथी करीने सत्तामां रहेलुं अंतःकोटाकोटि सागरोपमनी स्थितिवाळुं ते कर्म प्रदेशे करीने वेदाय छे, तेथी ते कर्मने नीरस मानेलुं छे. (६१). तथा वळी हे अंग (भाइ) ! ते ज भवमां सिद्ध थनारा प्राणीने पण असंख्य भवोमां उपार्जन करेलुं भिन्न भिन्न गतिनुं कारणभूत कर्म सत्तामां तो होय ज छे. (६२). तेनो अनुभव जो विपाकरूपे ज थतो होय तो ते चरम भवमां विविध प्रकारना भवोनो अनुभव संभवे छे (६३). अने तेथी करीने जो ते ते भवोने विपाकवडे अनुक्रमे अनुभवे तो ते जीव ते ते भवोने विषे फरी फरीने कर्म उपार्जन करे ज. (६४). ते प्रमाणे थवाथी कर्मनी परंपरानो विच्छेद नहीं थवाथी कोइ पण जीवनो मोक्ष थशे नहीं, तेथी करीने कर्मनो प्रदेश अनुभव छे, एम कहेवुं युक्तियुक्त छे. (६५). प्रश्न—जो उपक्रमवडे अल्प स्थितिवाळुं कर्म करीने वेदातुं होय तो भवांतरमां

भवांतरकृतस्यासौ न भोगस्तर्हि कर्मणः ॥ ६६ ॥ यद्बद्धं बंधसमये भोग्यं वर्षशतादिभिः । भुक्तं त्वंतर्मुहूर्त्तेन तदेवैतत्कथं नु तत् ॥ ६७ ॥ किंच—अस्तु सोपक्रमं सर्वं सर्वं वा निरुपक्रमं । भेदः कुतः कथं नो वा परावर्त्तोऽनयोर्मिथः ॥ ६८ ॥ अत्रोच्यते-बद्धं यद्बंधसमये परिणामेन तादृशा । तत्स्यादुपक्रमैः साध्यं साध्यो रोग इवौषधैः ॥ ६९ ॥ असाध्यरोगवद्यत्तु परिणामेन तादृशा । बद्धं तदुचितात्काल--विपाकादेव नश्यति ॥ ७० ॥ रोगे ह्यसाध्ये शक्तिर्नौ--षधादेर्विद्यते यथा । कर्मण्यु-पक्रमाभाव--स्तथा स्यान्निरुपक्रमे ॥ ७१॥ विचित्राणि कर्मबंधा-ध्यवसा-यास्पदानि यत् । वर्त्ततेऽसंख्यलोकाभ्र--प्रदेशप्रमितानि वै ॥ ७२ ॥ तेषु सोपक्रमकर्म--जनकान्येव कानिचित् । कानिचिद्बंधजनका-न्यनुपक्रमक-र्मणां ॥ ७३ ॥ यादृशाध्यवसायेन बद्धं यत्कर्म यादृशं । तद्भोक्तव्यं तथा नैवं कृतनाशाकृतागमौ ॥ ७४ ॥ क्षेत्रे तुल्येऽपि गंतव्ये

करेला (बांधेला) कर्मनो ते भोग नहीं कहेवाय. (६६). केमके बंधने समये सो आदिक वर्षोवडे भोगवी शकाय तेवुं जे कर्म बांध्युं होय, ते ज कर्म एक अंतर्मुहूर्तमां ज भोगवाइ जाय एम शी रीते बने ? (६७). वळी बीजो प्रश्न करे छे के–सर्व कर्म उपक्रम सहित ज हो अथवा सर्व कर्म उपक्रम रहित ज हो. शा माटे भेद होवो जोइए (बे प्रकार शामाटे मानवा जोइए ?) अथवा तो ते बन्नेनो परस्पर परावर्त केम न मानवो ? (६८) उत्तर–जे कर्म बंधने समये तेवा प्रकारना (मंद) परिणामवडे बांध्युं होय, ते कर्म औषधवडे साध्य एवा रोगनी जेम उपक्रमवडे साध्य थइ शके छे (६९). अने जे कर्म असाध्य रोगनी जेम तेवा प्रकारना (तीव्र) परिणामवडे बांध्युं होय, ते कर्म योग्यकाळे उदयमां आववाथी ज नष्ट थाय छे (क्षीण थाय छे). (७०). जेम असाध्य रोगमां औषधादिकनी शक्ति चालती नथी, तेम निरुपक्रम कर्ममां उपक्रम थइ शकतो नथी. (७१). कारणके कर्म-बंधना अध्यवसायनां स्थानो विचित्र प्रकारनां छे अने ते असंख्य लोकाकाशना प्रदेश जेटला छे. (७२). तेमां केटलाक अध्यवसायनां स्थानो सोपक्रम कर्मने ज उत्पन्न करनारां छे अने केटलाक स्थानो निरुपक्रम कर्मना बंधने ज करनारां छे. (७३). जे कर्म जेवा अध्यवसायवडे जेवा प्रकारनुं बांध्युं होय, ते कर्म ते ज प्रकारे भोगववानुं होय छे, तेथी कृतनाश अने अकृतागम दोष आवता ज नथी. (७४). जेम घणा माणसोने अमुक योज-

बहूनां योजनादिके । गतिपाटवभेदेन कालभेदो यथेक्ष्यते ॥ ७५ ॥ तुल्येऽपि शास्त्रेऽध्येतव्ये बहूनां ग्रंथमानतः । बुद्धिपाटवभेदेन कालभेदो यथेक्ष्यते ॥ ७६ ॥ तुल्येऽपि रोगे भैषज्य–पथ्यादितारतम्यतः । निवृत्तिकालो रोगस्य बहूनां बहुधा यथा ॥ ७७ ॥ समानस्थितिकेऽनेकै–र्बद्धे कर्मणि देहिभिः । परिणामविशेषेण भोगकालस्तथा पृथक् ॥ ७८ ॥ पिंडीभूतः पटः क्लिन्न–श्चिरकालेन शुष्यति । प्रसारितः स एवाशु तथा कर्माप्युपक्रमैः ॥ ७९ ॥ विनापवर्त्तनां लक्षा–दिको राशिर्विभज्यते । चिरेणापवर्त्तितस्तु क्षिप्रं कर्मापि तत्तथा ॥ ८० ॥ द्वेधोपक्रमकालोऽयं सप्रसंगः प्ररूपितः । देशकालाभिधं काल–मथ ब्रूमो यथागमं ॥ ८१ ॥

कार्यस्यार्यस्य वान्यस्य यो यस्यावसरः स्फुटः । स तस्य देशकालः स्याद् द्विधाप्येष निरूप्यते ॥ ८२ ॥ अन्नपाकक्रियो-

---

नादिक दूर एक सरखा क्षेत्रमां जवुं छे, तेमां गतिनी त्वरादिकना भेदथी काळनो भेद जोवामां आवे छे (उतावळो माणस वहेलो पहोंचे छे विगेरे). (७५). जेम घणा विद्यार्थीओने ग्रंथना माने करीने एक सरखुं शास्त्र भणवानुं होय छे, तेमां बुद्धिनी पटुता विगेरेना भेदथी काळनो भेद जोवामां आवे छे. (७६). जेम घणा माणसोने एक सरखो व्याधि थयो होय, तेमां औषध अने पथ्य विगेरेनी तरतमताए करीने रोगनी निवृत्तिनो काळ घणा प्रकारनो जोवामां आवे छे. (७७). ते ज प्रमाणे घणा प्राणीओए एक सरखी स्थितिवाळुं कर्म बांध्युं होय, तोपण परिणामना विशेषे करीने भोगनो काळ जूदो जूदो होइ शके छे. (७८). जेम भीनुं वस्त्र पिंडरूप होय तो ते चिरकाळे सुकाय छे, अने ते ज भीनुं वस्त्र पहोळुं कर्युं होय तो शीघ्र सुकाय छे. ते ज प्रमाणे कर्म पण उपक्रमवडे शीघ्र भोगवाय छे. (७९). जेम लाख विगेरे संख्यावाळो पदार्थनो राशि अपवर्तना न करी होय तो ते चिरकाळे विभाग करी शकाय छे अने अपवर्तना करी होय तो अल्पकाळे विभाग करी शकाय छे. ए ज प्रमाणे कर्म पण अपवर्तना करवाथी शीघ्र भोगवाइ जाय छे. (८०). आ प्रमाणे छट्ठो बे प्रकारनो उपक्रमकाळ विस्तारथी कह्यो. ६. हवे सातमो देशकाळ नामनो काळ आगममां कह्या प्रमाणे कहीए छीए. (८१).

जे शुभ के अशुभ कार्यनो जे अवसर स्फुट रीते जोवामां आवतो होय ते बे प्रकारनो तेनो देशकाळकहेवाय छे. ते बन्ने प्रकारने विस्तारथी कहे छे. (८२).–गाममां अन्नपाकनी

द्भूत-धूमानां प्रशमं पुरे। पानीयहारिणीशून्यं दृष्ट्वा वाप्यवटादिकं ॥ ८३॥ काकांश्चापततो दृष्ट्वा गृहेषु गृहमेधिनां। साधुना लक्ष्यते भिक्षा-वसरोऽतिसमीपगः ॥ ८४ ॥ तथाहुर्भाष्यकाराः-निद्धूमगं च गामं महिलासुन्नं च सुण्णयं (कूवयं) दट्ठुं। नीयं च काया ओलेंति जाया भिक्खस्स हरहरा ॥ ८५॥ आमोदिमोदकाकीर्णं शून्यं कांदविकापणं। मत्तां गृहांगणे सुप्तां तथा प्रोषितभर्तृकां ॥ ८६ ॥ निर्मक्षिकं मधु स्वच्छं पश्यतां प्रकटं निधिं। तत्तत्पदार्थग्रहण देशकालस्तदर्थिनां ॥८७॥ एवं शुभाशुभे कार्ये। यः प्रस्तावस्तदर्थिनां ॥ स सर्वो देशकालः स्या-द्वक्तुं शक्यः स्फुटं कियान् ॥ ८८ ॥

यो यस्य मृत्युकालः स्यात् कालकालः स तस्य यत्। कालं गतो मृत इति गम्यते लोकरूढितः ॥ ८९ ॥ कृष्णवर्णे च मरणे स्यात्कालग्रहणेऽपि च। कालशब्दो देशकालः प्रस्तावे परिभाषितः

क्रियाथी उत्पन्न थयेल धूमाडो बंध थयेलो जोवामां आवे, अथवा कुवा विगेरे जळाशयो पाणी भरनारी स्त्रीओथी रहित जोवामां आवे. (८३). तथा गृह-स्थोनां घरो उपर उडता कागडा जोवामां आवे, त्यारे भिक्षानो काळ समीपे आव्यो छे एम साधुओ जाणे छे. (८४). ते बाबत भाष्यकार कहे छे के— "धूमाडा रहित गामने जोइने, स्त्रीओ रहित कुवाने जोइने तथा नीचा (घर उपर) कागडाने उडता जोइने भिक्षानो अवसर थयो छे एम साधु जाणे." (८५). सुगंधि मोदकवडे भरेली कंदोइनी दुकानने शून्य जोइने, जेनो पति परदेश गयो होय एवी मदोन्मत्त स्त्रीने घरना आंगणामां सुतेली जोइने, स्वच्छ मधपोडुं मक्षिका रहित जोइने तथा प्रगट थयेला निधानने जोइने तेना अर्थीजनोने ते ते पदार्थ ग्रहण करवानो देश-काळ जाणवो. (८६-८७). आ प्रमाणे शुभाशुभ कार्यने विषे तेना अर्थीजनोनो जे अवसर ते सर्व देशकाळ कहेवाय छे. ते स्फुट रीते केटलोक कही शकाय? ७. (८८). हवे आठमो काळकाळ कहे छे-जे जेनो मृत्युसमय होय ते तेनो काळकाळ कहेवाय छे. काळने पाम्यो एटले मरण पाम्यो एम लोकरूढिथी कहेवाय छे. (८९). श्याम वर्णने विषे, मरणने विषे अने काळग्रहणने विषे पण काळ शब्द कहेवामां आवे छे अने देशकाळ शब्द प्रस्तावने

॥ ९० ॥ तथोक्तं–कालेण कओ कालो अम्हं सज्झायदेसकालंमि । तो तेण हओ कालो अकालिकाले करंतेणं ॥ ९१ ॥ अद्धाकालस्यैव भेदः प्रमाणकाल उच्यते । अहोरात्रादिको वक्ष्य–माणविस्तारवैभवः ॥९२॥ पंचानामथ वर्णानां मध्ये यः श्यामलद्युतिः । स वर्णकालो विज्ञेयः सचित्ताचित्तरूपकः ॥ ९३ ॥ भवस्यौदयिकादीनां या भावानामवस्थितिः । सादिसांतादिभिर्भंगै–र्भावकालः स उच्यते ॥ ९४ ॥

अत्र प्रमाणकालोऽस्ति प्रकृतः स प्रतन्यते । अतीतोऽनागतो वर्त्त–मानश्चेति त्रिधा स च ॥ ९५ ॥ अवधीकृत्य समयं वर्त्तमानं विवक्षितं ॥ भूतः समयराशिर्यः कालोऽतीतः स उच्यते ॥ ९६ ॥ अवधीकृत्य समयं वर्त्तमानं विवक्षितं । भावी समयराशिर्यः कालः स स्यादनागतः ॥९७॥ वर्त्तमानः पुनर्वर्त्त–मानैकसमयात्मकः । असौ नैश्चयिकः सर्वो–ऽप्यन्यस्तु व्यावहारिकः ॥ ९८ ॥ इति जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्त्या-

---

विषे कहेवामां आवे छे. (९०). ते विषे कह्युं छे के–" अमारा सज्झाय (काळग्रहण) रूप देशकाळने विषे काळवडे काळ कर्यो छे, तेथी अवसर विना सज्झाय करनारा तेणे (साधुए) काळने हण्यो छे एम जाणवुं. " ८. (९१). हवे नवमो प्रमाणकाळ ते अध्धाकाळनो ज भेद छे, तेनो अहोरात्रादिक विस्तारनो वैभव आगळ कहेवामां आवशे. ९. (९२). हवे पांच वर्णोना मध्यमां जे श्याम कांतिवाळो वर्ण छे ते दशमो वर्णकाळ जाणवो. ते सचित्त अने अचित्त एम बे प्रकारनो छे. १०. (९३). तथा औदयिकादिक भावोनी सादिसांत विगेरे भांगावडे जे स्थिति छे ते अग्यारमो (छेल्लो) भावकाळ कहेवाय छे. ११. (९४).

आ अग्यार प्रकारना काळशब्दना निक्षेपामांथी अहीं नवमा प्रमाणकाळनो प्रस्ताव कहेवामां आवनार छे. ते प्रमाणकाळ अतीत, अनागत अने वर्तमान एम त्रण प्रकारनो छे. (९५). तेमां कहेवाने इच्छेला एक समयना वर्तमानकाळने आश्रीने गयेलो जे समयोनो राशि (समूह) ते अतीतकाळ कहेवाय छे. (९६). कहेवाने इच्छेला एक समयरूप वर्तमानने आश्रीने जे समयराशि थवानो छे ते अनागतकाळ कहेवाय छे. (९७). तथा चालु काळमां वर्ततो एक समयरूप वर्तमानकाळ कहेवाय छे. आ वर्तमानकाळ निश्चयवाळो छे अने बीजो सर्व काळ व्यावहारिक छे. (९८). आ प्रमाणे जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिनी टीका विगे-

ऽभिप्रायः, योगशास्त्राद्यप्रकाशवृत्तौ तु—लोकाकाशप्रदेशस्था भिन्नाः कालाणवस्तु ये। भावानां परिवर्ताय मुख्यः कालः स उच्यते ॥ ९९ ॥ ज्योतिःशास्त्रे यस्य मान–मुच्यते समयादिकं। स व्यावहारिकः कालः कालवेदिभिरामतः ॥ २०० ॥ इत्युक्तमिति ज्ञेयं. एतदनुसारेण च समयक्षेत्राद्बहिरपि कालस्वीकारो मुख्यतया संपन्नः, तत्त्वं पुनः सर्वज्ञवेद्यमिति. संख्येयश्चाप्यसंख्येयो–ऽनंतश्चेत्यथवा त्रिधा। शीर्षप्रहेलिकांतः स्या–त्तत्राद्यः समयादिकः ॥ १ ॥ असंख्येयः पुनः कालः ख्यातः पल्योपमादिकः। अनंतः पुद्गलपरा–वर्त्तादिः परिकीर्त्तितः ॥ २ ॥

तत्र कालविशेषो यः सूक्ष्मत्वाद्योगिनापि नो। विभक्तुं शक्यते सैष समयः समये श्रुतः ॥ ३ ॥ जीर्णे पटे भिद्यमाने तरुणेन बलीयसा। कालेन यावता तंतु–स्त्रुट्यत्येको जरातुरः ॥ ४ ॥ असंख्येयतमो भागो यः स्यात्कालस्य तावतः। समये समयः सैष। कथितस्तत्त्ववेदिभिः ॥ ५ ॥ तस्मिंस्तंतौ यदेकस्मिन् पक्ष्माणि स्युरनेकशः। प्रति-

---

रेनो अभिप्राय छे, परंतु योगशास्त्रना पहेला प्रकाशनी टीकामां तो आ प्रमाणे कह्युं छे– " पदार्थोनो फेरफार करवा माटे लोकाकाश प्रदेशमां जे जूदा काळना अणुओ रहेला छे ते मुख्य काळ कहेवाय छे. (९९). ज्योतिष शास्त्रमां जेतुं समयादिक मान कहेलुं छे ते व्यावहारिक काळ छे, एम काळने जाणनाराओ कहे छे. " (२००) आ योगशास्त्रने अनुसारे जोइए तो समयक्षेत्र (अढीद्वीप)नी बहार पण मुख्य काळनो स्वीकार थाय छे, तेनुं तत्त्व तो सर्वज्ञ जाणे.

आ काळ संख्यात, असंख्यात अने अनंत एम त्रण प्रकारे पण कहेवाय छे, तेमां एक समयथी आरंभीने शीर्षप्रहेलिका सुधीनो काळ पहेलो संख्यात काळ कहेवाय छे. (२०१). पल्योपम विगेरे असंख्यात काळ कहेवाय छे, अने पुद्गलपरावर्तादिक अनंत काळ कहेवाय छे. (२). तेमां सूक्ष्मपणाने लीधे योगी पण जे काळनो विभाग करी शके नहीं, ते समय कहेवाय छे एम सिद्धांतमां कह्युं छे. (३). कोइ जुवान बळवान पुरुष एक जीर्ण वस्त्र जोरथी फाडे, ते वखते तेना सडेला एक तंतुने तूटतां जेटलो काळ लागे, तेटला काळनो जे असंख्यातमो भाग होय ते समय कहेवाय छे एम तत्त्ववेदीओए सिद्धांतमां कह्युं छे. (५). कारणके ते एक सडेला तंतुमां घणा पक्ष्मो होय छे, अने दरेक

पद्म च संघाताः क्षणच्छेद्या असंख्यशः ॥ ६ ॥ तेषां क्रमाच्छेदनेषु भवंति समयाः पृथक् । असंख्यैः समयैस्तत्स्या–त्तंतोरेकस्य भेदनं ॥ ७ ॥ एवं पत्रशतोद्वेधे चक्षुरुन्मेष एव च । भाव्याश्चप्पुटिकायां चा–संख्येयाः समया बुधैः ॥ ८ ॥ तं स्वरूपेण जानंतो–ऽप्यर्हंतोऽत्यंतसौक्ष्म्यतः । शृंगग्राहिकयान्येभ्यो निर्देष्टुं शक्नुवंति न ॥ ९ ॥ निर्देशो हि भवेत्तत्त–द्वचोव्यापारपूर्वकः ॥ व्यापारो वचसां चैषो–ऽसंख्येयैः समयैर्भवेत् ॥ १० ॥ यावत्समय इत्येषो–च्चार्यतेऽक्षरसंततिः । असंख्याः समयास्ताव–दति-क्रामंत्यनेकशः ॥ ११ ॥ जघन्ययुक्तासंख्यान–मितैः स्यादावली क्षणैः । संख्येयाभिश्चावलीभिः प्राणो भवति निश्चितं ॥ १२ ॥ नीरोगस्यानुप-हत–करणस्य बलीयसः । प्रशस्ते यौवने वर्त्त–मानस्याऽव्याकुलस्य च ॥ १३ ॥ अप्राप्तस्याध्वनः खेद–माश्रितस्य सुखासनं । स्याद्यदुच्छ्व-वासनिःश्वास–मानं प्राणः स कीर्त्तितः ॥ १४ ॥ तत्र च—उच्छ्वास ऊर्ध्वगमन–स्वभावः परिकीर्त्तितः । अधोगमनशीलश्च निःश्वास इति

पद्मे क्षणवडे छेदवा लायक असंख्य संघातो (परमाणुना स्कंधो) होय छे. ते संघातोने अनुक्रमे छेदतां जूदा जूदा समयो लागे छे, तेथी एक तंतुने छेदतां असंख्यात समयो जाय छे. (७). ए ज प्रमाणे कमळनी सो पांखडीओ (उपराउपर मूकेला पत्रो)ने जो-रथी वींधतां, नेत्रनो उन्मेष करतां अने चपटी वगाडतां असंख्य समयो लागे छे एम बुद्धिमान माणसोए जाणवुं. (८). आवा एक समयनुं स्वरूप अरिहंतो जाणे छे, तोपण तेओ ते समयने अत्यंत सूक्ष्मपणुं होवाथी शृंगग्राहीपणाए (प्रत्यक्षपणे) बीजाओने बतावी शकता नथी. (९). कारणके जेनो निर्देश करवो होय ते तेवा तेवा वचनना व्यापारपूर्वक थइ शके छे, अने आ वचननो व्यापार तो असंख्य समयोवडे थइ शके छे. (१०). जेटलामां 'समय' एवा अक्षरोनो उच्चार कराय तेटलामां तो घणा असंख्य समयो वीती जाय छे. (११). आवा जघन्ययुक्त असंख्य (चोथुं असंख्यातु तत्प्रमाण) समयोनी एक आवली थाय छे. संख्याती आवलिकानो एक प्राण थाय छे. (१२). कोइ पुरुष नीरोगी, परिपूर्ण इंद्रियोवाळो, बळवान, भरजुवानीमां वर्ततो, व्याकुलता रहित, मार्गमां चालवाना खेदने नहीं पामेलो अने सुखासन उपर बेठेलो होय, तेवा पुरुषनो जे एक उच्छ्वास निश्वास ते प्राण कहेवाय छे. (१४). तेमां उंची गति करवाना स्वभाववाळा प्राणने उच्छ्वास कहेवामां

कीर्त्तितः ॥ १५ ॥ संख्येयावलिकामानौ प्रत्येकं तावुभावपि । द्वाभ्यां समुदिताभ्यां स्या–त्कालः प्राण इति श्रुतः ॥१६॥ रोगार्त्तादेश्च निःश्वासो–च्छ्वासावनियताविति ॥ उक्तं पुंसोऽरोगतादि–विशेषेण कदंबकं ॥ १७ ॥

भवंति क्षुल्लकभवा एकप्राणे यथोदिते । सातिरेकाः सप्तदश श्रूयतां तत्र भावना ॥ १८ ॥ मुहूर्त्ते क्षुल्लकभवा एकस्मिन् परिकीर्त्तिताः । पंचषष्टिः सहस्राणि षट्त्रिंशा पंचशत्यपि ॥ १९ ॥ अत्र कः प्रत्यय इति यदि शुश्रूषति भवान् ॥ तदा तदपि निश्चित्य श्रूयतां प्रतिपाद्यते ॥२०॥ एका कोटी सप्तषष्टि–र्लक्षाण्यथ सहस्रकाः । स्युः सप्तसप्ततिर्युक्ता द्विशत्या षोडशाढ्यया ॥ २१ ॥ १६७७७२१६ एता मुहूर्त्त एकस्मि–न्नुक्ता आवलिका जिनैः । एकक्षुल्लभवे चैताः षट्पंचाशा शतद्वयी ॥ २२ ॥ क्षुल्लभवावलिकाभि–र्मुहूर्त्तावलिका यदि । विभज्यंते तदा लभ्या मौहूर्त्ताः क्षुल्लका भवाः ॥ २३ ॥ अथ प्रकृतं—प्राणाश्चैकमुहूर्त्ते स्युः सप्तत्रिंशच्छतानि वै । त्रिसप्तत्या संयुतानि ३७७३ राशिरेष विभाजकः ॥२४॥ मौहूर्त्तक्षुल्लकभव–६५५३६ राशिरेतेन भज्यते ॥ तदाप्यंते सप्तदश प्राण-

आवे छे अने नीचे गति करवाना स्वभाववाळाने निःश्वास कहेवामां आवे छे. (१५). आ बन्नेमांना दरेक संख्याती आवलिकाना प्रमाणवाळा छे, अने ते बन्ने मळीने एक प्राण थाय छे एम कह्युं छे. (१६). रोगी विगेरे पुरुषना निःश्वास अने उच्छ्वास नियमित होता नथी, तेथी ते पुरुषने नीरोगता विगेरे विशेषणोनो समूह आप्यो छे. (१७). आवा उपर कहेला एक प्राणने विषे सतरथी कांइक अधिक क्षुल्लक भवो थाय छे; तेनी भावना (रीत) सांभळो.—(१८). एक मुहूर्त्तमां पांसठ हजर पांच सो ने छत्रीश (६५५३६) क्षुल्लक भवो कहेला छे. (१९). ते संख्यानी शी रीते प्रतीति करवी ? एम कहीने जो तुं ते सांभळवा इच्छतो हो तो ते पण तुं निश्चे सांभळ. अमे कहीए छीए. (२०)–जिनेश्वरोए एक मुहूर्त्तमां एक करोड सडसठ लाख सीतोतेर हजार बसो ने सोळ (१६७७७२१६) आवलिकाओ कही छे, अने एक क्षुल्लक भवमां बसो ने छप्पन (२५६) आवलिका कही छे; तेथी एक मुहूर्त्तनी आवलिकाओने क्षुल्लक भवनी आवलिकावडे भांगाकार करीए त्यारे एक मुहूर्त्तना क्षुल्लक भवो (६५५३६) आवे छे. (२३). हवे प्रकृत कहे छे.—एक मुहूर्त्तमां साडत्रीश सो ने तोंतेर (३७७३) प्राणो थाय छे. आ राशि (संख्या) विभाजक (भांगनार) छे. (२४). आ (३७७३) विभाजक राशिवडे एक मुहूर्त्तना (६५५३६) क्षुल्लक भवना राशिनो

स्य क्षुल्लका भवाः ॥ २५ ॥ त्रयोदशशताः पंच–नवत्या च समन्विताः । अंशा उपरि शिष्यंते भवस्याष्टादशस्य वै ॥ २६ ॥ अष्टसप्ततिसंयुक्ता–स्त्रयोविंशतिः शताः । क्षिप्यंतेंशा एषु पूर्णः स्यात्तदाष्टादशो भवः ॥ २७ ॥ अथो कियत्य आवल्यः स्युस्त्रयोदशभिः शतैः । भागैः पंच-नवत्याढ्यैः शेषैस्तदपि कथ्यते ॥ २८ ॥ शतास्त्रयोदशांशानां ये पंचनव-तिस्पृशः । षट्पंचाशद् द्विशत्या ते हंतव्याः कर्त्तुमावलीः ॥ २९ ॥ शेषांकाः क्षुल्लकभव–सत्का एते हि संत्यतः । क्षुल्लभवावलिकाभि–र्भवं-त्यावलयो हताः ॥ ३० ॥ जाताश्चावलिकास्तेषां घाते लक्षत्रयं तथा । सप्तपंचाशत्सहस्राः शतं विंशतिसंयुतं ३५७१२० ॥ ३१ ॥ त्रिसप्ततिसमा-युक्त–सप्तत्रिंशच्छतात्मना ३७७३ । प्रागुक्तभाजकेनास्य राशेर्विभजने सति ॥ ३२ ॥ चतुर्नवतिरावल्यो लभ्यंतेंशाः पुनः स्थिताः । चतुर्विंश-तिरेवाष्ट–पंचाशदधिकाः शताः ॥ ३३ ॥ एवं च क्षुल्लकभवाः प्राणे सप्त-दशैकके । चतुर्नवतिरावल्य आवल्या अंशकाः पुनः ॥ ३४ ॥ त्रिसप्तत्या युतैः सप्त–त्रिंशता विकलैः शतैः । छिन्नाया अष्टपंचाशाः स्युश्चतुर्विंशतिः शताः ॥ ३५ ॥ इति क्षुल्लकभवप्रकरणम् ॥

भांगाकार करवो. तेम करवाथी एक प्राणना सत्तर (१७) क्षुल्लक भव प्राप्त थाय छे. (२५). तथा अढारमा भवना तेर सो ने पंचाणुं (१३९५) अंशो शेष रहे छे. (२६). ते अंशोमां त्रेवीश सो ने अठोतेर (२३७८) नांखीए त्यारे अढारमो क्षुल्लक भव पूर्ण थाय. (२७). हवे जे तेर सो ने पंचाणुं (१३९५) अंशो शेष रहेला छे तेवडे केटली आवलिका थाय ? ते पण कहेवाय छे. (२८).—जे तेर सो ने पंचाणुं (१३९५) अंशो बाकी रहेला छे, तेनी आवलिका करवा माटे ते अंकने बसो ने छप्पने (२५६) गुणवा. (२९). कारणके आ शेष अंक क्षुल्लक भवनो छे, तेथी तेने क्षुल्लक भवनी (२५६) आवलिकावडे गुणीए त्यारे तेनी आवलिका आवे छे. (३०). तेथी १३९५ ने २५६ वडे गुणवाथी त्रण लाख सतावन हजार एक सो ने वीश (३५७१२०) थाय छे. (३१). पछी आ राशिने (अंकने) पूर्वे कहेला साड-त्रीश सो ने तोंतेर (३७७३) भांगीए त्यारे चोराणुं (९४) आवलिका भागमां आवे छे, अने चोवीश सो ने अठावन (२४५८) बाकी शेष रहे छे. (३३). आ प्रमाणे एक प्राणमां सत्तर (१७) क्षुल्लक भवो, चोराणुं (९४) आवलिका तथा साडत्रीश सो ने तोंतेरवडे (३७७३) भांगेली आवलिकाना चोवीश सो ने अठावन (२४५८) अंशो थाय छे. (३५).

इति क्षुल्लक भव प्रकरण.

क्षुल्लकभवप्रयोजनं चैवं—आयुःक्षुल्लभवमित-मौदारिकवपुर्भृतां। जघन्यतो विनिर्दिष्टं पंचमांगे जिनेश्वरैः ॥ ३६ ॥ कर्मप्रकृत्यादिष्वपि औदारिकशरीराणां तिर्यग्मनुष्याणामायुषो जघन्यस्थितिः क्षुल्लकभव-ग्रहणरूपा प्रतिपादिता, यत्पुनरावश्यकटीकायां क्षुल्लकभवग्रहणं वनस्पतिष्वेव प्राप्यते इत्युक्तं तन्मतांतरमित्यवसीयते, इति कर्मग्रंथवृत्तौ. एकप्राणे चावलीनां षट्चत्वारिंशदन्विताः। शताः प्रोक्ताश्चतुश्चत्वारिंशदंशाश्च पूर्ववत् ॥ ३७ ॥ तच्चैवं—एकक्षुल्लभवसत्का-वलीभिः परिताडयेत्। प्राणक्षुल्लभवांस्तेषु शेषा आवलिकाः क्षिपेत् ॥ ३८ ॥ एवं चासंख्यसमयै-रावली ताभिरत्र यत्। संख्येयाभिः प्राण उक्त—स्तत्सर्वं विशदीकृतं ॥ ३९ ॥ नन्वावलिकादीनां यदसंख्यक्षणरूपता ॥ प्रोक्ता तत्प्रोच्छलद्भेकै-र्गोकलिंजस्य पूरणं ॥ ४० ॥ यतः पूर्वस्य सद्भावे—नोद्भवेदुत्तरः क्षणः। नश्यत्यवश्यमाद्यश्च द्वितीये जनिमीयुषि ॥ ४१ ॥ समु-

क्षुल्लक भवनुं प्रयोजन आ प्रमाणे छे.-पांचमा अंगमां जिनेश्वरोए औदारिक शरीरवाळानुं जघन्य आयुष्य क्षुल्लक भव जेटलुं कह्युं छे. (३६). कर्मप्रकृति विगेरे ग्रंथोने विषे पण औदारिक शरीरवाळा तिर्यंच अने मनुष्यना आयुष्यनी जघन्य स्थिति क्षुल्लक भव ग्रहणरूप कहेली छे, परंतु आवश्यकनी टीकामां "क्षुल्लक भवनुं ग्रहण (साधारण) वनस्पतिने विषे ज प्राप्त थाय छे." एम कह्युं छे. ए मतांतर छे एम जणाय छे. ए प्रमाणे कर्मग्रंथनी टीकामां कह्युं छे. एक प्राणने विषे आवलिका चुमाळीश सो ने छेंतालीश (४४४६) अने ते उपर अंशो पूर्वनी जेम (६४) थाय छे. (३७). ते आ प्रमाणे—एक क्षुल्लक भवनी आवलिका (२५६) वडे एक प्राणना क्षुल्लक भवो (१७) ने गुणवा. पछी तेमां शेष आवलिका (९४) नांखवी. (३८). आ रीते जे असंख्य समयोनी एक आवलिका थाय छे अने संख्याति आवलिकानो एक प्राण कह्यो छे, ते सर्व सिद्ध थाय छे. (३९). अहीं कोइ शंका करे के—आवलिकाना जे असंख्य समयो कह्या ते तो उडता देडकाओए करीने गोकलिंजने (गायना वाडाने) भरी देवा जेवुं छे. (४०). कारणके पूर्वनो (पहेलो) समय वर्ततो होय त्यारे उत्तर (पछीना) समयनी उत्पत्ति थइ शकती नथी. बीजो समय उत्पन्न थाय त्यारे पहेलो समय अवश्य नाश पामे छे. (४१). कारणके विमात्र

१ सरखी संख्याना प्रवेशो विनाना एवा.

च्चयादिको धर्मः पुद्गलानां हि संभवेत् ॥ विमात्रस्निग्धरूक्षाणां कालस्य तु न जातुचित् ॥ ४२ ॥ अत्रोच्यते—प्ररूपयितुकामेन कालमावलिकादिकं । प्रज्ञापकेन यावंतः क्षणा धीगोचरीकृताः ॥ ४३ ॥ विनष्टा अपि तावंतः समुच्चिततयाखिलाः । उपचर्यंत इत्येव—मावल्यादिनिरूपणा ॥ ४४ ॥ अत एवोपचरितः सर्वोऽप्यावलिकादिकः ॥ कालो न वास्तवः किंतु समयः खलु वास्तवः ॥ ४५ ॥ प्राणैः स्यात्सप्तभिः स्तोकः स्तोकैश्च सप्तभिर्लवः । सार्द्धैरष्टात्रिंशता च लवैर्भवति नालिका ॥ ४६ ॥

भंग्यंतरेणाथ मानं नाडिकाया निरूप्यते । श्रूयतां तत्सावधानै-रुक्तं ज्योतिष्करंडके ॥ ४७ ॥ नालिका नाम घटिका कार्या लोहमयी च सा । दाडिमीकुसुमाकारा सत्तला वर्त्तुलाकृतिः ॥ ४८ ॥ केशास्त्रिवर्ष-जातायाः करिण्याः पुच्छमूलजाः । ऋजूकृताः षण्णवति—र्मीलिताश्च परस्परं ॥ ४९ ॥ विशंति यादृशे छिद्रे तिष्ठंति च निरंतराः । छिद्रं कार्यं तादृगस्या नालिकाया अधस्तले ॥ ५० ॥ यद्वा द्विवर्षजातायाः करिण्याः

एवा स्निग्ध अने रुक्ष पुद्गलोनो ज समूहादिक धर्म संभवे छे, परंतु काळनो समुच्चय कदापि संभवतो नथी. (४२). आ शंकानो उत्तर आपे छे के–आवलिका विगेरे काळने कहेवानी इच्छावाळा प्रज्ञापके (आचार्ये) जेटला क्षणो (समयो) पोतानी बुद्धिना विषयमां कर्या होय तेटला क्षणो जो के नाश पाम्या छे, तोपण ते सर्वे समूहपणे उपचारथी ज कहेला छे; तेथी आवलिका विगेरेनी प्ररूपणा थइ शके छे. (४३–४४). एटला माटे ज आवलिका विगेरे उपचारथी कहेलो सर्व काळ वास्तविक नथी, परंतु मात्र समय ज वास्तविक काळ छे. (४५). हवे सात प्राणोवडे एक स्तोक थाय छे, सात स्तोकनो एक लव थाय छे, साडी आडत्रीश लववडे एक नालिका थाय छे. (४६). आ नालिकानुं मान बीजी रीते बतावे छे. ते बाबत ज्योतिषकरंडक नामना ग्रंथमां कह्युं छे, ते तमे सांभळो. (४७).—नालिका नाम घडीनुं छे. ते दाडमना पुष्पना आकारवाळी, सारा तळियावाळी, गोळ आकृतिवाळी लोढानी करवी. (४८). पछी त्रण वर्षनी थयेली हाथणीना पुच्छना मूळमां उगेला केशोमांथी छन्नु केशो लइ तेने सरल करी परस्पर मेळववा–भेगा करवा. (४९). ते केशो जेटला छिद्रमां पेसे अने आंतरा रहित गाढरीते रही शके तेटलुं ते नालिकानी नीचे छिद्र करवुं. (५०). अथवा बे वर्षनी हाथणीना पुच्छना मूळमां उगेला छन्नु वाळ

पुच्छमूलजाः । वालाः षण्णवतिः प्राप्ता द्वैगुण्यं मांति यादृशे ॥५१॥ यद्वा–चतुःस्वर्णमाषजाता शलाका चतुरंगुला । यादृशे विशति च्छिद्रे कर्त्तव्यं तादृशं तकत् ॥ ५२ ॥ अथैतस्यां जलं धार्यं तौल्यमेयप्रमाणतः ॥ ततः प्रसंगतो ब्रूमः स्वरूपं तौल्यमेययोः ॥ ५३ ॥ तृणस्य मधुराख्यस्य चतुर्भिस्तंडुलैर्भवेत् । तौल्यतः सर्षपः श्वेत–स्तैश्च षोडशभिः समं ॥ ५४ ॥ धान्यमाषफलं ताभ्यां द्वाभ्यां गुंजाफलं भवेत् । द्वाभ्यां गुंजाभ्यां च कर्म(र्ष)–माषः षोडशभिश्च तैः ॥ ५५ ॥ धरणापरपर्यायं मानं गद्याणकाभिधं । गद्याणकाभ्यां सार्द्धाभ्यां कर्षः सुवर्णसंज्ञकः ॥ ५६ ॥ चतुःकर्षं पलं सार्द्धैः प्रस्थो द्वादशभिश्च तैः । तुला पलशतेनासां विंशत्या भार ईरितः ॥ ५७ ॥ इति ज्योतिष्करंडवृत्त्यभिप्रायः, लोके तु—तुल्या यवाभ्यां कथितात्र गुंजा, वल्लस्त्रिगुंजो धरणं च तेऽष्टौ। गद्याणकस्तद्द्वयमिंद्रतुल्यै–र्वल्लैस्तथैको घटकः प्रदिष्टः ॥ १ ॥ दशार्द्धगुंजं प्रवदंति माषं, माषाह्वयैः षोडशभिश्च कर्षं । कर्षैश्चतुर्भिश्च पलं तुलाज्ञाः, कर्षं सुवर्णस्य

लइ तेने द्विगुण करवा. ते जेटला छिद्रमां माय तेटलुं छिद्र करवुं. (५१). अथवा चार मासा सुवर्णनी चार आंगळ लांबी बनावेली शलाका जेटला छिद्रमां माय तेटलुं छिद्र करवुं. (५२). पछी ते घडीमां तोलना अथवा मापना प्रमाणथी जळ नांखवानुं छे, तेथी तेना प्रसंगने लीधे ते तोल अने मापनुं स्वरूप कहीए छीए. (५३).—मधुर नामना तृणना चार चोखा जोखवाथी एक श्वेत सर्षप थाय छे, ते सोळ श्वेत सर्षप जेटलो एक धान्यमाष (अडद) थाय छे, तेवा बे मापनी एक गुंजा थाय छे, बे गुंजावडे एक कर्म(र्ष)माष (वाल) थाय छे, सोळ कर्म(र्ष)माषवडे गद्याणक नामनुं मान (अर्ध तोलुं) थाय छे, तेनुं बीजुं नाम धरण कहेवाय छे, बे गद्याणकनो एक सुवर्ण नामनो कर्ष (तोलुं) थाय छे, चार कर्षनो एक पल थाय छे, साडा बार पलनो एक प्रस्थ (५० तोला–१। शेर) थाय छे, सो पलवडे एक तुला (४०० तोला–१० शेर) थाय छे; अने वीश तुलावडे एक भार (२०० शेर–५ मण) कहेलो छे. (५७) आ प्रमाणे ज्योतिष्करंडकनी टीकानो अभिप्राय छे. आ बाबत लौकिक शास्त्रमां आ प्रमाणे कह्युं छे—" अहीं बे यवनी एक गुंजा कहेली छे, त्रण गुंजानो एक वाल कहेलो छे, आठ वालनुं एक धरण कह्युं छे, बे धरणनो एक गद्याणक (०॥ तोलुं) कह्यो छे, अने इंद्र एटले चोसठ वालनो एक घटक

सुवर्णसंज्ञं ॥ २ ॥ पादोनगद्याणकतुल्यटंकै-र्द्विसप्तसंख्यैः कथितोऽत्र सेरः । मणाभिधानः खयुगैश्च सेरै-र्धान्यादितौल्येषु तुरुष्कसंज्ञा ॥ ३ ॥ इति लीलावत्यां ॥

तौल्यप्रमाणमित्युक्तं पूर्वाचार्यप्रदर्शितम । अथ स्वरूपं मानं च तुलायाः किंचिदुच्यते ॥ ५८ ॥ पंचत्रिंशल्लोहपल-मयी वृत्ता घना भृशं । द्वासप्ततिं चांगुलानि दीर्घा लोहतुला भवेत् ॥ ५९ ॥ तस्याः पंचपलमितं धरणं रचयेद्बुधः । येन धृत्वा तोल्यते त-द्धरणं परिकीर्त्तितं ॥ ६० ॥ तस्यां चाथ धरणके योजिते सति सा तुला । ध्रियमाणा यत्र देशे समा स्यात्पार्श्वयोर्द्वयोः ॥ ६१ ॥ तत्र प्रदेशे समता-ज्ञानाय परिकल्पयेत् । रेखामेकां ततश्चान्यां रेखाणां पंचविंशतिं ॥ ६२ ॥ तत्र स्यात्प्रथमा रेखा कर्षार्द्धस्यैव सूचिका । द्वितीयैकस्य कर्षस्य तृतीया कर्षयोर्द्वयोः ॥ ६३ ॥ त्रिकर्षसूचिका तुर्या स्याच्चतुःकर्षसूचिका । पंचम्यथ नव रेखाः स्युरे-

---

(बे तोला) कह्यो छे; तथा पांच गुंजानो एक माष, सोळ माषनो एक कर्ष (तोलुं) अने चार कर्षनो एक पल थाय छे, एम तोलने जाणनारा पंडितो सुवर्ण नामनो सुवर्ण कर्ष कहे छे. पोणा गद्याणक जेटलो एटले बोंतेर टंकनो एक शेर (२७ तोला) कह्यो छे, अने चाळीश शेरनो एक मण कह्यो छे. धान्यादिक तोळवामां तेनुं तुरुष्क नाम छे." आ प्रमाणे लीलावती नामना ग्रंथमां कह्युं छे.

उपर प्रमाणे पूर्वना आचार्योए देखाडेलुं तोलानुं प्रमाण कह्युं. हवे तुला (त्राजवा) नुं कांइक मान कहीए छीए.—(५८). पांत्रीश पल लोढानी गोळ अने अत्यंत गाढ बत्रीश आंगळ लांबी तुला[1] करवी. (५९). ते तुलानुं डाह्या पुरुषे पांच पलनुं (लोढानुं) धरण करवुं, जेनावडे पकडीने तोळवामां आवे ते धरण कहेवाय छे. (६०). ते तुलानी वच्चे धरणकने लगाडवुं, ते एवा स्थानमां लगाडवुं के तेवडे धारण करातो तुला बन्ने पडखे सरखी (सीधी) रहे. (६१). तेनुं सरखापणुं जाणवा माटे ते मध्य प्रदेशमां एक रेखा करवी अने त्यारपछी बीजी पचीश रेखाओ करवी. (६२). तेमां पहेली रेखा अर्ध कर्षने कहेनारी छे, बीजी रेखा एक कर्षने सूचवे छे, त्रीजी रेखा बे कर्षने सूचवे छे. (६३). चोथी रेखा त्रण कर्षने सूचवे छे, अने पांचमी

---

१ डांडी.

कैकपलाधिकाः ॥ ६४ ॥ यथा तत्र भवेद्रेखा षष्ठी द्विपलसूचिका । एवं यावद्दशपल–सूचिका स्याच्चतुर्दशी ॥ ६५ ॥ ततश्च द्वादशपल–सूचिका पंचदश्यसौ । षोडशी च पंचदश–पलाभिव्यंजिका स्मृता ॥ ६६ ॥ ततः सप्तदशी रेखा पलविंशतिसूचिका । अत ऊर्ध्वं च दशक–वृद्धा अष्टाप्यमूः स्मृताः ॥ ६७ ॥ अष्टादशी यथा रेखा स्यात्त्रिंशत्पलसूचिका । क्रमादेवं शतपल–सूचिका कीर्त्तितांतिमा ॥ ६८ ॥ पंचपंचदशत्रिंश–त्पंचाशत्पलसूचिका । नवमी षोडशी चाष्टा–दशी च पंचविंशिका ॥ ६९ ॥ एताश्चतस्रो रेखाः स्युः फुल्लफुल्लडिकायुताः । स्युः शेषा ऋजवः सर्वा एकविंशतिसंमिताः ॥ ७० ॥

तुलास्वरूपमित्येवं यथागममुदीरितं । प्रमाणमथ मेयस्य यथागममुदीर्यते ॥ ७१ ॥ देशेषु मगधाख्येषु प्रसिद्धं कुडवाभिधं । मानं स्यात्तौल्यचिंतायां सकर्षार्द्धं पलत्रयं ॥ ७२ ॥ चतुर्भिः कुडवैरेकः प्रस्थो माग-

रेखा चार कर्षने सूचवे छे. त्यारपछीनी नव रेखा एक एक पल अधिक सूचवनारी कहेवी. (६४). ते आ प्रमाणे–छठ्ठी रेखा बे पलने सूचवे छे. ए ज प्रमाणे एक एक पल वधारतां चौदमी रेखा दश पलने सूचवे छे. (६५). त्यारपछी पंदरमी रेखा बार पलने सूचवे छे, सोळमी रेखा पंदर पलने सूचवनारी कही छे. (६६). त्यारपछी सतरमी रेखा वीश पलने सूचवनारी छे, त्यारपछीनी बाकीनी आठ रेखा दश दश पलनी वृद्धिवाळी कहेली छे. (६७). ते आ प्रमाणे—अढारमी रेखा त्रीश पलने सूचवनारी छे, ए ज अनुक्रमे छेल्ली पचीशमी रेखा सो पलने सूचवे छे. (६८). पांच पलने सूचवनारी नवमी रेखा, पंदर पलने सूचवनारी सोळमी रेखा, त्रीश पलने सूचवनारी अढारमी रेखा अने पचास पलने सूचवनारी पचीशमी रेखा, आ चार रेखाओ स्पष्ट फुलवाळी* होय छे अने बाकीनी एकवीश रेखाओ सरळ (सीधी–लींटा जेवी) होय छे. (७०). आ प्रमाणे तुलानुं स्वरूप आगममां कह्या प्रमाणे अहीं कह्युं छे. हवे मेयनुं (मापनुं) प्रमाण आगममां कह्या प्रमाणे कहेवामां आवे छे. (७१).

मगध देशमां कुडव नामनुं माप प्रसिद्ध छे, ते तोलने आश्रीने कहीए तो त्रण पल अने अर्ध कर्षनुं होय छे. (७२) चार कुडवनो एक मगध देशनो प्रस्थ थाय छे, तेने

१ चार कर्ष एटले एक पल. २ छेल्ली रेखा तो सो पलने सूचवे छे. अहीं आम केम लख्युं ? ते समजातुं नथी.

धिको भवेत् । सार्द्धानि द्वादश पला-न्येष तौल्यप्रमाणतः ॥ ७३ ॥ प्रस्थैश्चतुर्भिरेकः स्या-दाढकः प्रथितो जने । पंचाशत्पलमानोऽयं । ज्ञेय-स्तौल्यविवक्षया ॥ ७४ ॥ चतुर्भिराढकैर्द्रोणो जने योऽत्यतिविश्रुतः । पलानां द्वे शते स्यातः स च तौल्यप्रमाणतः ॥ ७५ ॥ खारी षोडश-भिर्द्रोणैः सा स्यात्तौल्यप्रमाणतः । द्वात्रिंशता पलशतैः प्रमिता लोक-संमता ॥ ७६ ॥ वाहः स्याद्विंशतिः खार्यः स भवेत्तौल्यमानतः । चतुः-षष्टिः सहस्राणि पलानां तुलया धृतः ॥ ७७ ॥

अथ प्रकृतं—कालेन यावता तस्यां नालिकायां विशेज्जलं । आढकौ द्वौ सुरंध्रेण तावान् कालो हि नालिका ॥ ७८ ॥ भवे-त्पलशतं चैत-त्तुलया तुलितं जलं । तच्च स्वभावतः स्वच्छ-मिष्टव्यं शारदादिकं ॥ ७९ ॥ देवः श्रीसर्वज्ञो विश्वश्रीशः सिद्धिस्त्रीकांतः, काम-द्रुद्रोहाग्निर्मायादोषाभास्वान्नीरागः । चंद्रश्वेतश्लोकः स्याद्वादारामाब्दो लोकार्च्यो, वांतापायः शांतो लोकेभ्योऽसंख्यं सौख्यं देयात् ॥ ८० ॥

तोलना प्रमाणथी कहीए तो साडा बार पल थाय छे. (७३). चार प्रस्थनो एक आढक लोकने विषे प्रसिद्ध छे. तेने तोलनी अपेक्षाए कहीए तो पचास पलना प्रमाणवाळो जाणवो. (७४). चार आढकनो एक द्रोण थाय छे. ते पण लोकने विषे अति प्रसिद्ध छे. तेने तोलना प्रमाणथी कहीए तो ते बसो पलनो प्रसिद्ध छे. (७५). सोळ द्रोणनी एक खारी थाय छे. तेने तोलना प्रमाणथी कहीए तो ते बत्रीश सो पलना प्रमाणवाळी लोकमां मानेली छे. (७६). वीश खारीनो एक वाह थाय छे, तेने तोलना मानथी कहीए तो त्राजवामां नांखीने जोखवाथी चोसठ हजार पल थाय छे. (७७).

हवे प्रस्तुत वातने कहे छे.—जेटला काळे ते नालिका (घडी) मां तेना सारा छिद्रद्वारा बे आढक प्रमाण जळ पेसे, तेटला काळने नालिका (घडी) कहेवामां आवे छे. (७८). ते जळने तुलावडे तोळीए तो सो पल (४०० तोला) प्रमाण थाय छे, आ जळ शरदऋतु विगेरे संबंधी स्वभावथी ज स्वच्छ होय तेवुं इच्छवा लायक छे. (७९). विश्वनी लक्ष्मीना स्वामी, सिद्धिरूप स्त्रीना पति, कामदेवरूप वृक्षनो द्रोह करवामां अग्नि समान, मायारूपी रात्रिनो नाश करवामां सूर्य समान, राग रहित, चंद्र जेवी उज्वळ कीर्त्तिवाळा, स्याद्वादरूपी उद्यानने विकस्वर करवामां मेघ समान, सर्व लोकने पूज्य, कष्टनो नाश करनार अने शांत

अद्रुतमंथरमध्यम–गत्या पठनेऽस्य भवति वृत्तस्य। कामक्रीडाछंदसि षष्ठ्या गुर्वक्षरैः पलं लोके ॥ ८१ ॥ सूक्ष्मेक्षिकार्थिनां चैवं वाच्यं— संगीतशास्त्रप्रसिद्धस्य पंचमात्रिकतालस्याविच्छेदेन चतुर्विंशतिवारान् हस्तमुखाभ्यामुद्घटने सर्वथाप्यविसंवादि जलपलमेकं स्यादिति लौकिकज्योतिःशास्त्रानुसारेण पलमानं, एभिश्च षष्ठ्या पलैर्घटिकापरपर्याया नाडिकेति.

नाडिकाभ्यां भवेद् द्वाभ्यां मुहूर्त्तस्तौल्यतः स च। पलानां द्वे शते माना–श्चत्वारो नूनमाढकाः ॥ ८२ ॥ अहोरात्रो मुहूर्त्तैः स्या–त्रिंशता षष्टिनालिकः। स तौल्यतस्त्रयो भाराः षट्सहस्राः पलानि वा ॥ ८३ ॥ मेयप्रमाणचिंतायां सविंशं शतमाढकाः। पक्षः पुनरहोरात्रैः स्यात्पंचदशभिर्ध्रुवं ॥ ८४ ॥ स तौल्यतः पंचचत्वा–रिंशद्भारात्मको भवेत्। आढकानां शतान्यष्टा–दश मेयप्रमाणतः ॥ ८५ ॥ तौल्यतो नवतिर्भारा मासः पक्षद्वयात्मकः। षट्त्रिंशदाढकशता–न्येष मेयप्रमाणतः ॥ ८६ ॥

स्वभाववाळा श्री सर्वज्ञ देव लोकोने असंख्य सुख आपो. (८०). आ कामक्रीडा नामना श्लोकमां साठ गुरु अक्षरो छे. आ वृत्त (श्लोक) बहु जलदीथी के बहु धीमेथी नहीं बोलतां मध्यम रीते बोलीए तो एक पल प्रमाण जळ नालिकामां पेसे छे (तेटलो वखत लागे छे). (८१). सूक्ष्म जोवानी इच्छावाळाने आ प्रमाणे कहेवुं.–संगीत शास्त्रमां प्रसिद्ध पांच मात्रावाळा तालने निरंतर (विश्राम विना) चोवीश वार हाथ अने मुखवडे उद्घट्टन करवामां सर्वथा प्रकारे विसंवाद रहितपणे एक पल प्रमाण जळ नालिकामां पेसे छे. ए प्रमाणे लौकिक ज्योतिष् शास्त्रने अनुसारे पलनुं मान जाणवुं अने आवा साठ पले करीने एक नालिका थाय छे तेनुं बीजुं नाम घटिका (घडी) कहेवाय छे. हवे बे नाडिकानुं एक मुहूर्त्त थाय छे. तोलनी अपेक्षाए बसो पल अने मापनी अपेक्षाए चार आढक (जळनुं प्रमाण) थाय छे. (८२). त्रीश मुहूर्तनो एटले साठ नाडिका (घडी) नो एक रात्रि दिवस थाय छे, ते तोलनी अपेक्षाए त्रण भार अथवा छ हजार पल थाय छे. (८३). अने मापनी अपेक्षाए एक सो ने वीश आढक थाय छे. हवे पंदर रात्रि–दिवसनो एक पक्ष (पखवाडीयुं) थाय छे. (८४). ते तोलनी अपेक्षाए पीस्तालीश भारवाळो अने मापनी अपेक्षाए अढार सो आढकवाळो थाय छे. (८५). बे पखवाडीयानो एक मास थाय छे, ते तोलनी अपेक्षाए नेवुं भार अने मापनी अपेक्षाए छत्रीश सो आढक थाय छे.

मासैर्द्वादशभिश्चैकः कर्मसंवत्सरो भवेत् । शतानि त्रीणि षष्ट्याढ्या-न्यत्र रात्रिंदिवानि च ॥ ८७ ॥ तोल्ये सहस्रं साशीनि भाराणां स्यात्स मानतः । त्रिचत्वारिंशत्सहस्रा-ण्याढकानां द्विशत्यपि ॥ ८८ ॥ ऋतु-संवत्सरोऽप्येष ऋतुषट्कात्मको भवेत् । ऋतवो हि वसंताद्याः पृथग्मा-सद्वयात्मकाः ॥ ८९ ॥ किं च संवत्सराः पंच-विधाः प्रोक्ता जिनेश्वरैः । सूर्यर्तुचंद्रनक्षत्रा-ह्वयास्तथाभिवर्द्धिनः ॥ ९० ॥ तत्र च—द्विमंडलाली-चारेण मार्त्तंडेनायनद्वये । परिपूर्णे कृते पूर्णः सूर्यसंवत्सरो भवेत् ॥ ९१ ॥ सत्र्यशीतौ मंडलानां शते चारो भवेद्रवेः । एकस्मिन्नयने तस्मा-त्सत्र्य-शीतिशतं दिनाः ॥ ९२ ॥ षट्षष्ट्याभ्यधिका चैव—महोरात्रशतत्रयी । सूर्यसंवत्सरे दृष्टा विशिष्टज्ञानदर्शनैः ॥ ९३ ॥ सर्वे कालविशेषा ये । ख्याता वर्षशतादयः । पूर्वांगपूर्वप्रमुखाः पल्यवार्द्ध्यादयोऽपि च ॥ ९४ ॥ कर्मणां स्थितयः सर्वा आयूंष्यखिलदेहिनां । सूर्यवर्षप्रमाणेन ज्ञेयान्ये-तानि धीधनैः ॥ ९५ ॥ नन्वत्र वक्ष्यते वर्षे-र्युगं चंद्राभिवर्द्धितैः । युगा-

---

(८६). बार मासनो एक कर्मसंवत्सर (वर्ष) थाय छे, तेमां त्रण सो ने साठ रात्रि दिवस थाय छे. (८७). ते तोलनी अपेक्षाए एक हजार ने एंशी भार अने मापनी अपेक्षाए तेंतालीश हजार ने बसो आढक थाय छे. (८८). छ ऋतुना स्वरूपवाळो आ कर्मसंवत्सरने ऋतुसंवत्सर पण कहेवामां आवे छे. ते ऋतुओ वसंतादिक बबे मासनी होय छे. (८९).

वळी जिनेश्वरोए पांच प्रकारना संवत्सर कह्या छे–सूर्यसंवत्सर १, ऋतुसंवत्सर २, चंद्रसंवत्सर ३, नक्षत्रसंवत्सर ४ अने अभिवर्धितसंवत्सर ५. (९०). तेमां बे वार मंडळनी (मांडलानी) श्रेणिमां चालवावडे ज्यारे सूर्य बे अयन (उत्तरायन अने दक्षिणायन) ने परिपूर्ण करे छे त्यारे सूर्यसंवत्सर संपूर्ण थाय छे. (९१). एक सो ने त्राशी मांडलामां सूर्यनो चार (गति) थाय छे, तेथी एक अयनमां एक सो ने त्राशी दिवस होय छे. (९२). बे अयनना मळीने सूर्यसंवत्सरने विषे विशेष ज्ञानदर्शन-वाळा (जिनेश्वरो)ए त्रण सो ने छासठ रात्रि दिवस जोया छे. (९३). काळना विशेषो जे सो वर्ष विगेरे, पूर्वांग अने पूर्व विगेरे तथा पल्योपम अने सागरोपम विगेरे प्रसिद्ध छे तथा कर्मनी सर्व स्थितिओ अने समग्र प्राणीओनां आयुष्य ए सर्व बुद्धिमान पुरुषोए सूर्यवर्षना प्रमाणे करीने जाणवा. (९५). अहीं कोइ शंका करे के–अहीं चांद्रवर्ष अने

धीनं चान्यकाल-मानं वर्षशतादिकं ॥ ९६ ॥ कथं तदिह निर्दिष्टाः सर्वे वर्षशतादयः। कालाः सूर्याब्दमानेन तत्राकर्णयतोत्तरं ॥ ९७ ॥ युगं यदुच्यते तस्या-श्चांद्रैस्संवत्सरैस्त्रिभिः। द्वाभ्यां चाभिवर्द्धिताभ्या-मिति तत्पंचवार्षिकं ॥ ९८ ॥ सूर्यवर्षप्रमाणेन तदेव यदि चिंत्यते। तदापि तुल्यमेव स्या-त्पंचवर्षात्मकं युगं ॥ ९९ ॥ तथाहि-सूर्याब्दस्य सषट्-षष्टि-रहोरात्रशतत्रयी। पंचघ्नाष्टादशशता-स्त्रिंशाः स्युर्युगवासराः ॥३००॥ इयंत एव द्वाषष्टिचंद्रमासात्मके युगे। वासराः स्युस्ततो नार्थ-भेदः कोऽप्यत्र वास्तवः ॥ १ ॥ ततो युगैर्मीयते य-त्संवत्सरशतादिकं। तत्सूर्य-वर्षमानेने-त्यादि युक्तं यथोदितं ॥ २ ॥

स्यात्पूर्णिमापरावर्त्तै-रब्दं द्वादशभिर्विधोः। चतुःपंचाशदधिक-महोरात्रशतत्रयं ॥ ३ ॥ अहोरात्रस्य चैकस्य द्वादशांशा द्विषष्टिजाः। चंद्रसंवत्सरे मान-मित्युक्तं सर्वदर्शिभिः ॥ ४ ॥ नक्षत्रैः सप्तविंशत्या यः साकल्येन शीतगोः। योगः स द्वादशगुण ऋक्षाब्दं मानमस्य च ॥५॥

अभिवर्धित वर्षे करीने युग कहेवामां आवशे, अने सो वर्ष विगेरे अन्य काळनुं मान युगने आधीन छे, तो अहीं सो वर्ष विगेरे सर्व काळविशेषो सूर्यवर्षना मानवडे केम कह्या ? आ प्रश्ननो उत्तर सांभळो. (९७).-अहीं जे युग कहेवामां आवे छे ते त्रण चंद्रवर्ष अने बे अभिवर्धित वर्षे करीने कहेवामां आवे छे, तेथी पांच वर्षनो एक युग थाय छे. (९८). ते ज युग सूर्यवर्षना प्रमाणवडे विचारीए (कहीए) तो पण पांच वर्षना स्वरूपवाळो युग बराबर ज थाय छे. (९९). ते आ प्रमाणे-एक सूर्यवर्षना त्रण सो ने छासठ रात्रिदिवस छे, तेने पांचे गुणवाथी अढार सो ने त्रीश रात्रिदिवस एक युगमां थाय छे. (३००). तथा एक युगमां चंद्रवर्षना बासठ मास (त्रण चांद्रना ३६ बे अभिवर्धितना २६) आवे छे, तेना पण दिवसो तेटला ज थाय छे; तेथी वास्तविक रीते ते बन्नेनी अपेक्षाए अर्थनो भेद कांइ पण नथी. (१). तेथी करीने युगवडे जे सो वर्ष विगेरेनुं मान करवामां आवे छे, ते सूर्यवर्षनी अपेक्षाए करवामां आवे छे. इत्यादि जे कह्युं छे ते युक्त ज छे. (२).

बार वखत पूर्णिमानुं परावर्तन थाय (बार पूर्णिमाओ जाय) त्यारे एक चंद्रवर्ष थाय छे. तेमां त्रण सो ने चोपन रात्रिदिवस तथा एक रात्रिदिवसना बासठीया बार अंश ($\frac{12}{62}$) अधिक, एटलुं चंद्रसंवत्सरनुं प्रमाण सर्वदर्शीए (जिनेश्वरे) कह्युं छे. (४). सत्तावीश नक्षत्रोनी साथे चंद्रनो जे समग्रपणे संयोग थाय ते बार गुणो करवाथी एक

सप्तविंशतिसंयुक्त–महोरात्रशतत्रयं । अहोरात्रस्यैकपंचा–शच्चांशाः सप्तषष्टिजाः ॥ ६ ॥ अभिवर्द्धितमब्दं च त्रयोदशभिरिंदवैः । मासैर्भवेदस्य मान–मेवमुक्तं महर्षिभिः ॥ ७ ॥ युक्तं त्र्यशीत्याहोरात्रै–रहोरात्रशतत्रयं । चतुश्चत्वारिंशदहो–रात्रांशाश्च द्विषष्टिजाः ॥ ८ ॥

अथ क्रमेण पंचानां मासानां मानमुच्यते । सूर्यर्तुचंद्रनक्षत्रा–भिवर्द्धित संज्ञिनाम् ॥९॥ स्वस्वसंवत्सराणां हि भागे द्वादशभिर्हृते । स्वीयस्वीयमासमानं जायते तदिदं यथा ॥१०॥ सार्द्धास्त्रिंशदहोरात्रा मासमानं भवेद्रवेः । ऋतुमासः पुनस्त्रिंश–दहोरात्रात्मकः स्फुटः ॥ ११ ॥ एकोनत्रिंशता चाहो–रात्रैर्मासोऽमृतद्युतेः । द्विषष्टिजैरहोरात्र–भागैर्द्वात्रिंशताधिकैः ॥१२॥ नक्षत्रमासोऽहोरात्राः सप्तविंशतिरन्विताः । अहोरात्रलवैरेकविंशत्या सप्तषष्टिजैः ॥१३॥ एकत्रिंशदहोरात्रा–श्चैकविंशं शतं लवाः । चतुर्विंशतिविच्छिन्ना–होरात्रस्याभिवर्द्धिते ॥१४॥ एषामुपपत्तिस्त्वेवं–भरणीशततारार्द्रा–श्लेषास्वातिमहेंद्रभं । एतान्यपार्द्धक्षेत्राणि नक्षत्राणि जगु-

---

नक्षत्रसंवत्सर थाय छे. तेनुं प्रमाण त्रण सो ने सतावीश रात्रिदिवस अने एक रात्रिदिवसना सडसठीया एकावन अंश ($\frac{५१}{६७}$) अधिक थाय छे. (६). हवे चंद्रना तेर मासे करीने एक अभिवर्धित संवत्सर थाय छे. तेनुं प्रमाण महर्षिओए आ प्रमाणे कह्युं छे.–त्रण सो ने त्र्याशी रात्रिदिवस अने एक रात्रिदिवसना बासठीया चुमाळीश अंश ($\frac{४४}{६२}$) अधिक थाय छे. (८).

हवे सूर्य, ऋतु, चंद्र, नक्षत्र अने अभिवर्धित नामना पांचे मासनुं अनुक्रमे प्रमाण कहे छे. (९). पोतपोताना वर्षनुं जेटलुं (रात्रिदिवसनुं) प्रमाण कह्युं छे, तेने बारे भागवाथी पोतपोताना मासनुं प्रमाण थाय छे, ते आ प्रमाणे (१०).–सूर्यना मासनुं प्रमाण साडी त्रीश रात्रिदिवसनुं छे, ऋतुमासनुं प्रमाण त्रीश रात्रिदिवसनुं प्रगट ज छे. (११). चंद्रमासनुं प्रमाण ओगणत्रीश रात्रिदिवस अने उपर एक रात्रिदिवसना बासठीया बत्रीश भाग ($\frac{३२}{६२}$) अधिक थाय छे. (१२). नक्षत्रमासनुं प्रमाण सतावीश रात्रिदिवस अने उपर सडसठीया एकवीश अंश ($\frac{२१}{६७}$) अधिक थाय छे. (१३). अभिवर्धित मासमां एकत्रीश रात्रिदिवस अने उपर एक सो ने चोवीशीया एक सो एकवीश अंश ($\frac{१२१}{१२४}$) आवे छे. (१४). आ पांचे मासनी उत्पत्ति आ प्रमाणे थाय छे.–भरणी, शततारका, आर्द्रा, अश्लेषा, स्वाति अने ज्येष्ठा ए छ नक्षत्रो अपार्धक्षेत्र (अर्धक्षेत्र) वाळा छे एम

जिनाः ॥ १५ ॥ पुनर्वसू विशाखा च रोहिणी चोत्तरात्रयं। सार्द्धक्षे-त्राण्यमून्याहु-र्नक्षत्राणि जिनेश्वराः ॥ १६ ॥ भानि पंचदशान्यानि तुल्यक्षेत्राण्यथाभिजित्। एभ्यो विसदृशं भागा-स्त्रिंशदाढ्यास्य षट्-शती ॥ १७ ॥ अर्द्धक्षेत्राणां च भानां क्षेत्रविष्कंभ ईरितः। अंशाः सहस्रं पंचाढ्यं प्रत्येकं तत्ववेदिभिः ॥ १८ ॥ सार्द्धक्षेत्राणां सहस्रा-स्त्रयः पंच-दशाधिकाः। तुल्यक्षेत्राणां च भागा द्वे सहस्रे दशाधिके ॥ १९ ॥ क्षेत्रविष्कंभ इत्येषां भानां संकलितोऽखिलः। चतुष्पंचाशदंशानां सह-स्राश्च शता नव ॥ २० ॥ सप्तषष्टिं चैषु भागान् मुहूर्त्तेन शशी व्रजेत्। अहोरात्रेण चैकेन द्वे सहस्रे दशाधिके ॥ २१ ॥ सप्तषष्ट्या ततः स्वस्व-भागराशौ हृते भवेत्। मुहूर्त्तमानमृक्षाणां तच्चैवं स्पष्टमुच्यते ॥ २२ ॥ चंद्रस्याभिजिता योगे मुहूर्त्ता नव कीर्त्तिताः। सप्तषष्टिभुवोंशाश्च

जिनेश्वरे कह्युं छे. (१५). पुनर्वसु, विशाखा, रोहिणी अने त्रण उत्तरा (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा अने उत्तराभाद्रपद) आ छ नक्षत्रो सार्ध (दोढ) क्षेत्रवाळा छे एम जिनेश्वरो कहे छे. (१६). बाकीना बीजा पंदर नक्षत्रो तुल्य क्षेत्रवाळा छे, तथा अभिजित् नक्षत्र ए सर्व नक्षत्रोथी विलक्षण छे. आ अभिजित् नक्षत्रना भाग (अंश) छ सो ने त्रीश छे. (एटलो तेना क्षेत्रनो विष्कंभ छे.) (१७). अर्ध क्षेत्रवाळा छ नक्षत्रोना क्षेत्रनो विष्कंभ दरेकनो तत्त्ववेत्ताओए एक हजार ने पांच अंशो कह्या छे. (छ नक्षत्रना मळीने ६०३० अंशो थाय छे) (१८). दोढ क्षेत्रवाळा दरेक नक्षत्रना त्रण हजार ने पंदर अंशो छे, (छ नक्षत्रना मळीने १८०९० अंशो थाय छे.) अने तुल्य क्षेत्रवाळा दरेक नक्षत्रनो क्षेत्रविष्कंभ बे हजार ने दश अंशो छे. (पंदरना मळीने ३०१५० अंशो थाय छे). (१९). आ प्रमाणे सर्व नक्षत्रोनो समग्र क्षेत्रविष्कंभ एकत्र करीए त्यारे चोपन हजार ने नव सो अंशो थाय छे. (६३०-६०३०-१८०९०-३०१५० मळीने) (२०). तेमां एक मुहूर्त्त (बे घडी) वडे करीने चंद्रमा सडसठ अंशो चाले छे, तेथी एक रात्रिदिवसे करीने बे हजार ने दश अंशो चाले छे. (सडसठने त्रीशे गुणवाथी २०१० थाय छे.) (२१). तेथी करीने नक्षत्रोना जे जे अंशो कह्या छे ते ते अंशोने सडसठे भांगवाथी एक मुहूर्त्तनुं प्रमाण थाय छे, ते स्पष्टपणे कहीए छीए. (२२).-अभिजित्नी साथे चंद्रनो योग थाय त्यारे नव मुहूर्त्त अने उपर एक मुहूर्त्तना सडसठीया सत्तावीश ($\frac{27}{67}$) अंशो थाय छे. (६३० ने ६७ वडे

मौहूर्त्ताः सप्तविंशतिः ॥२३॥ तुल्यक्षेत्रेषु च त्रिंश–न्मुहूर्त्ता भेषु कीर्त्तिताः। पंचचत्वारिंशदेते सार्धक्षेत्रेषु भेषु च ॥ २४ ॥ एकाहोरात्रभोक्तव्य–ऋक्षक्षेत्रांशराशिना । सर्वर्क्षांशराशिभागो मासः पूर्येत शीतगोः ॥२५॥ तथाहि–चतुःपंचाशत्सहस्राः शतैर्नवभिरन्विताः । भागहारेण भक्तव्या । द्विसहस्र्या दशाढ्यया ॥ २६ ॥ सप्तविंशतिराप्यंते–ऽहोरात्रास्त्रिंशता पुनः ॥ शेषभाज्यभाजकयो राश्योः कार्यापवर्त्तना ॥२७॥ सप्तषष्टिभवा भागा–स्ततोऽमी एकविंशतिः । अहोरात्रस्य संपन्ना–स्तेऽधिकाः सप्तविंशतौ ॥ २८ ॥

एवं नक्षत्रमासस्यो–पपत्तिरिह वर्णिता । चंद्रमासस्योपपत्ति–मथ वक्ष्ये यथागमं ॥ २९ ॥ त्रिंशता तिथिभिः प्रोक्त–श्चंद्रमासो जिनेश्वरैः। भवंति तिथयश्चेंदोः कलावृद्धिक्षयोद्भवाः ॥ ३० ॥ कलाः कुर्यात् षोड-

भांगवाथी तेटला थाय छे.) (२३). तुल्य क्षेत्रवाळा नक्षत्र साथे चंद्रनो योग थाय त्यारे त्रीश मुहूर्त्त थाय छे (२०१० ने ६७ वडे भांगवाथी तेटला थाय छे.) तथा दोढ क्षेत्रवाळा नक्षत्र साथे चंद्रनो योग थाय त्यारे पीस्तालीश मुहूर्त्त थाय छे (३०१५ ने ६७ वडे भांगवाथी तेटला थाय छे). (२४). एक नक्षत्र एक रात्रिदिवसवडे क्षेत्रविष्कंभना जेटला अंशो भोगवे छे (२०१०), ते अंशनी राशिवडे सर्व नक्षत्रोना अंशना राशिने (५४९००) भाग देवाथी एक चंद्रमास पूर्ण थाय छे. (२५). ते आ प्रमाणे–चोपन हजार अने नव सोने बे हजार ने दशे भांगवा. (२६), तेथी सत्तावीश रात्रिदिवस भागमां आवे छे. शेष रहेला भाज्य (६३०) अने भाजक (२०१०) आ बे राशिनी अपवर्तना करवी (एटले त्रीशवडे छेद उडाडवो). (२७). तेम करवाथी सडसठीया एकवीश भाग (अंश $\frac{21}{67}$) आवे छे. ते सतावीश रात्रिदिवसनी उपर अधिक (२७$\frac{21}{67}$) जाणवा. (२८). आ प्रमाणे नक्षत्रमासनी उत्पत्ति कही. हवे आगममां कह्या प्रमाणे चंद्रमासनी उत्पत्ति कहुं छुं. (२९).

जिनेश्वरोए त्रीश तिथिनो एक चंद्रमास कह्यो छे, अने तिथिओ तो चंद्रनी कळानी वृद्धि–हानिथी उत्पन्न थाय छे. (३०). ते आ प्रमाणे–प्रथम चंद्रनी सोळ कळा करवी,

१ अर्धा क्षेत्रवाळा नक्षत्र साथे चंद्रनो योग थतां पंदर मुहूर्त्त थाय छे केमके १००९ ने ६७ वडे भांगतां १९ थाय छे. आ हकिकत मूळमां लखी नथी.

२ आखा चंद्रबिंबना सोळ भाग करवा ते.

शेंदो–स्तत्र चैका कला भवेत्। द्वाषष्टिभागीकृतेंदु–विभागद्वितयात्मिका ॥ ३१ ॥ अन्याः पुनस्ता द्वाषष्टि–भागीकृतसितत्विषः। भागचतुष्टय-रूपाः स्युः पंचदशसंमिताः ॥ ३२ ॥ तत्राद्यांशद्वयरूपा सदैव स्यादनावृता। आव्रियंते च मुच्यंते राहुणान्याः कला मुहुः ॥ ३३ ॥ कालश्चैककलायाः स्या–त्पिधाने वा प्रकाशने। एकषष्टिरहोरात्र–स्यांशा द्वाषष्टिकल्पिताः ॥ ३४ ॥ पिधीयमानचंद्रांशा–स्तिथयः कृष्णपक्षजाः। प्रकाशमानचंद्रांशा–स्तिथयः शुक्लपक्षजाः ॥ ३५ ॥ यथोक्तस्तिथिकालोऽसौ त्रिंशता गुणितो भवेत्। अष्टादशशतास्त्रिंशा द्वाषष्टिप्रभवा लवाः ॥ ३६ ॥ द्वाषष्ट्यैषां हृते भागे विधुमासो यथोदितः। एकन्यूनत्रिंशदहो–रात्रा द्वात्रिंशदंशकाः ॥ ३७ ॥ कृष्णपक्षप्रतिपदः प्रारभ्य पूर्णिमावधि। ऋतुमासो भवेत्त्रिंश–दहोरात्रात्मकः स्फुटं ॥ ३८ ॥

सूर्यमासस्योपपत्ति–रथ किंचिन्निगद्यते। भान्यष्टाविंशतिर्मेषा–दयो

तेमांनी एक कळा चंद्रना बासठीया बे भाग जेटली रहे छे. (३१). बाकीनी पंदर कळाओ चंद्रना बासठीया चार चार भाग जेटली थाय छे. (तेथी आखा चंद्रबिंबनी सोळे कळाना मळीने बासठ भाग संपूर्ण थया). (३२) तेमां जे पहेली बे अंशरूप कळा छे ते हमेशां अनावृत (खुल्ली) ज रहे छे, अने बाकीनी जे पंदर कळाओ छे ते राहुए वारंवार आवरण कराय छे (ढंकाय छे) अने पाछी मूकाय छे. (३३). एक रात्रिदिवसना बासठ भाग करीए, तेमांथी एकसठ भाग जेटलो काळ एक कळाना आवरणमां अथवा प्रकाश करवामां लागे छे. (३४). जेमां चंद्रनी कळाओ ढंकाती जाय ते तिथिओ कृष्णपक्षनी कहेवाय छे, अने जेमां चंद्रनी कळानो प्रकाश थतो जाय ते तिथिओ शुक्लपक्षनी कहेवाय छे. (३५). जे आ तिथिनो काळ (बासठीया एकसठ भागरूप) कह्यो, तेने त्रीशे गुणवाथी बासठीया अढार सो ने त्रीश अंश (१८३०) थाय छे. (३६). तेने बासठे भांगतां एक चंद्रमासना रात्रिदिवसो ओगणत्रीश अने बासठीया बत्रीश अंशो (२९$\frac{32}{62}$) थाय छे. (३७).

हवे ऋतुमास कहे छे–कृष्णपक्षनी एकमथी आरंभीने पूर्णिमा सुधी त्रीश रात्रिदिवसनो एक ऋतुमास थाय छे. (३८). हवे सूर्यमासनी उत्पत्तिने माटे कांइक कहे छे–

---

१ आखा चंद्रबिंबना बासठ भाग करवा ते.

द्वादश राशयः ॥ ३९ ॥ चतुष्पंचाशत्सहस्रान् शतैर्नवभिरन्वितान् । प्राग्निरूपितनक्षत्र–भागान् द्वादशभिर्भजेत् ॥ ४० ॥ सपंचसप्ततिपंच–च-त्वारिंशच्छती ततः । प्राप्ता नक्षत्रभागानां राशिमानं तदेव हि ॥ ४१ ॥ सार्द्धत्रिंशदहोरात्र–भोग्योऽयं राशिरिष्यते । अयमेवार्कमासः स्यात्यः संक्रांतिरितीर्यते ॥४२॥ पंच पंचैव ऋक्षांशान् मुहूर्त्तेन पुरोदितान् । अहो-रात्रेण चाध्यर्द्धं शतं भुंक्ते दिनेश्वरः ॥४३॥ एवं च त्रिंशता सार्द्धै–रहो-रात्रैर्भुनक्त्यसौ । पंचचत्वारिंशदंश–शतान् सपंचसप्ततीन् ॥४४॥ प्रत्य-यश्चात्र–एकाहोरात्रभोग्येन सार्द्धेनांशशतेन चेत् । पंचसप्ततियुक्पंच–चत्वारिंशच्छतात्मकः ॥४५॥ राशिर्विभज्यते त्रिंश–दहोरात्री तदाप्यते । पंचसप्तत्याथ भाज्य–भाजकावपवर्त्तयेत् ॥४६॥ ततो लब्धमहोरात्र–स्या-र्द्धमेवं च दर्शिता । भावना सूर्यमासे सा प्रोच्यतेऽथाधिमासके ॥४७॥

यस्मिन्नब्दे विधोर्मासा–स्त्रयोदश भवंति तत् । अभिवर्द्धितवर्षं स्या–

अठावीश नक्षत्रो छे अने मेष विगेरे बार राशिओ छे. (३९). तेथी पूर्वे कहेला सर्व नक्षत्रोना चोपन हजार अने नव सो अंशोने (५४९००) बारे भांगवा. (४०). तेम करवाथी नक्षत्रना अंशो पीस्तालीश सो अने पंचोतेर (४५७५) आवे छे. तेटलुं एक राशिनुं प्रमाण थयुं. (४१). आवो एक राशि साडीत्रीश रात्रिदिवसने भोगवे छे. आ सूर्यमास कहेवाय छे के जे संक्रांति नामे ओळखाय छे. (४२). एक मुहूर्त्तमां पहेलां कहेला नक्षत्रना पांच पांच अंशोने सूर्य भोगवे छे, तेथी एक रात्रिदिवसमां (एटले त्रीश मुहूर्त्तमां) दोढ सो (१५०) अंशोने भोगवे छे. (४३). ए ज प्रमाणे साडीत्रीश रात्रि-दिवसमां थइने सूर्य पीस्तालीश सो ने पंचोतेर (४५७५) अंशोने भोगवे छे. (४४). तेनी खात्री आ प्रमाणे छे–एक रात्रिदिवसमां दोढ सो अंश भोगवाय छे, तेथी पीस्तालीश सो ने पंचोतेर (४५७५) ने दोढ सो (१५०) ए भांगवाथी भागमां त्रीश रात्रिदिवस आवे छे, अने बाकी पंचोतेर (७५) वधे छे. पछी शेष भाज्य (७५) अने भाजक (१५०) ए बन्नेनी अपवर्तना करवी (एटले छेद उडाडवो). तेथी रात्रिदिवसनो अर्ध भाग ($\frac{1}{2}$) आवे छे. (आ रीते साडीत्रीश अहोरात्रनो एक सूर्यमास थाय छे.) आ प्रमाणे सूर्यमासनी भावना करी. हवे अधिक मासनी उत्पत्ति कहे छे. (४७).

जे वर्षमां चंद्रना तेर मास थाय छे, ते अभिवर्धित वर्ष कहेवाय छे. तेना दिवसोने

त्तस्मिन् द्वादशभिर्हृते ॥ ४८ ॥ एकत्रिंशदहोरात्रा लभ्या मासेऽभिवर्द्धिते । चतुर्विंशशतं छिन्ना-श्चैकविंशं शतं लवाः ॥४९॥ अ. ३१×अं. १२१×१२४ तथाहि-त्रयोदशसु शीतांशु-मासेष्वह्नां शतत्रयं । त्र्यशीतियुक्चतुश्चत्वा-रिंशच्चांशा द्विषष्टिजाः ३८३×४४×६२ ॥ ५० ॥ वैसादृश्यादहोरात्रां-केष्वंशांको न संमिलेत् । अंशच्छेदेन तदहो-रात्रान् हत्वा सवर्णयेत् ॥ ५१ ॥ ततश्च-द्वाषष्ट्याहोरात्रराशा-वंशच्छेदेन ताडिते । चतुश्चत्वारिंशदंश-युक्ते चांशा भवंत्यमी ॥ ५२ ॥ त्रयोविंशतिरंशानां सहस्राः सप्तशत्यपि । नवतिश्चाहोरात्रस्य द्विषष्टिच्छेदशालिनः ॥ २३७९० +६२ ॥ ५३ ॥ एषां द्वादशभिर्भागे मासः स्यादभिवर्धितः ॥ विधिर्भिन्नभागहारे लीलावत्यामिति श्रुतः ॥ ५४ ॥ छेदं लवं च परिवर्त्त्य हरस्य शेषः कार्योऽथ भागहरणे गुणनाविधिश्च । भाज्यभाजकस्थापना २३७९०+६२-१२×१ छेदं लवं च परिवर्त्य स्थापना २३७९०×६२-१×१२ भिन्नगुणनविधिश्चायं-अंशाहतिश्छेदवधेन भक्ता । लब्धं विभिन्ने गुणने

बारे भांगवाथी एकत्रीश रात्रिदिवस अने उपर एक सो चोवीशीया एक सो एकवीश अंशो रहे छे (३१$\frac{१२१}{१२४}$). आ अभिवर्धित (अधिक) मास कहेवाय छे. ते आ प्रमाणे.- (बे) चंद्रवर्षमां अधिक मास आवे छे तेथी ते दरेकना तेर मासना दिवसो करवा. ते त्रण सो त्राशी (३८३) रात्रिदिवस अने उपर बासठीया चुमालीश अंशो ($\frac{४४}{६२}$) अधिक थाय छे. (५०). हवे जो विसदृशपणाने लीधे रात्रिदिवसना अंकने विषे अंशनो अंक मळतो आवतो न होय तो अंशछेदवडे रात्रिदिवसनो गुणाकार करी सदृशपणुं करवुं. (५१) तेथी करीने अहीं पण (३८३) रात्रिदिवसनी संख्याने बासठ (६२) अंशछेद[१] (भाजक) वडे गुणी तेमां चुमालीश अंशो मेळववाथी एक रात्रिदिवसना बासठीया त्रेवीश हजार सात सो ने नेवुं अंशो ($\frac{२३७९०}{६२}$) थाय छे. (५२-५३). आ अंशोने बारे भांगतां एक अभिवर्धित मास थाय छे. जो भांगाकार भिन्न (विषम) थतो होय तो तेनो विधि लीलावती ग्रंथमां आ प्रमाणे कह्यो छे. (५४).-छेदने अने लवने परावर्तन (उलटपालट) करीने भांगाकारनो शेष करवो. पछी भागहरणनो गुणाकार करवो. (तेमां भाज्य अने भाजकनी स्थापना $\frac{२३७९०}{६२}$-$\frac{१२}{१}$) अहीं छेद अने लवनुं परावर्तन आ प्रमाणे-$\frac{२३७९०}{६२}$-$\frac{१}{१२}$.

---

१ जेनावडे भांग्या होय ते.

फलं स्यात् ॥ इत्यादि. द्वाषष्टिर्द्वादशघ्नाः स्यु–रेवं सप्तशतास्तथा । चतुश्चत्वारिंशदाढ्या अथैतौ भाज्यभाजकौ २३७६०×७४४ ॥ ५५ ॥ षड्भिरेवापवर्त्येते पंचषष्टियुतास्ततः । शता एकोनचत्वारिं–शदंशानां भवंति वै ॥ ५६ ॥ चतुश्चत्वारिंशदाढ्य–सप्तशत्यात्मकस्तथा । छेदोऽपवर्त्तितः षड्भि–श्चतुर्विंशं शतं भवेत् ॥ ५७ ॥ अपवर्त्तितभाज्यभाजकस्थापना ३९६५×१२४ राशौ विभक्तेऽस्मिन् छेदे–नासुना स्याद्यथोदितः । मासोऽभिवर्द्धिताब्दस्य द्वादशांशात्मकः खलु ॥ ५८ ॥ वर्षे द्वादश मासाः स्यु–रित्यस्येयं मितिर्मता । वर्द्धते तु विधोर्मास एव वर्षेऽभिवर्द्धिते ॥ ५९ ॥ एतन्निष्पत्तिश्चैवं–परस्परं यो विश्लेषो भवेत्सूर्येंदुमासयोः । स त्रिंशद्गुणितः ख्यातो–ऽधिमासस्तत्त्ववेदिभिः ॥६०॥ सार्द्धत्रिंशदहोरात्रो भवेन्मासो विवस्वतः । एकोनत्रिंशदिंदोस्ते द्वाषष्ट्यंशा रदैर्मिताः ॥ ६१ ॥ विश्लेषश्चानयोरेको–ऽहोरात्रः परिकीर्त्तितः । द्वाषष्टिभागेनैकेन । न्यूनस्तत्रेति भावना ॥ ६२ ॥ इह चंद्रमासे दिनराशेरु-

---

भागहरणना गुणाकारनो विधि आ प्रमाणे–छेदना अंकवडे अंशनो गुणाकार करवो, जे लावे ते भागहरणना गुणाकारनुं फळ थाय छे. तेथी करीने बासठने बारे गुणवाथी सात सो ने चुमाळीश थाय छे. हवे ते भाज्य अने भाजक थया ($\frac{२३७६०}{७४४}$) (५५) आ बे अंकनो छेद उडाडवो छे, तेथी छवडे तेनो छेद उडी शके छे. तेम करवाथी ओगणचाळीश सो ने पांसठ (३९६५) अंशो उपरना अंकमां आवे छे, (५६) अने नीचेनो अंक जे सात सो ने चुमाळीश (७४४) छे तेने छवडे छेद उडाडवाथी एक सो ने चोवीश (१२४) थाय छे. (५७). छेद उडाडेला भाज्य अने भाजकनी स्थापना $\frac{३९६५}{१२४}$, आ ३९६५ ने १२४ वडे भांगतां उपर कहेला अभिवर्धित वर्षना बारमा भागरूप मासनुं प्रमाण उपर कह्या प्रमाणे रात्रिदिवस ३१–$\frac{१२१}{१२४}$ थाय छे. (५८). आ अभिवर्धित वर्षमां बार ज मास होय छे तेथी तेनुं आटलुं प्रमाण थाय छे, परंतु वधवामां तो चंद्रनो ज मास वधे छे. (५९). तेनी सिद्धि आ प्रमाणे–सूर्यमास अने चंद्रमासनो परस्पर विश्लेष करवो (बादबाकी करवी) बाकी रहेलाने त्रीश गुणो करवो, ते तत्त्वज्ञानीओए अधिकमास कह्यो छे. (६०). एटले के साडीत्रीश रात्रिदिवसनो एक सूर्यमास थाय छे, अने चंद्रमासना रात्रिदिवस ओगणत्रीश अने उपर बासठीया बत्रीश भाग छे. (६१). आ बन्नेनो विश्लेष करवाथी एटले सूर्यमासना रात्रिदिवसमांथी चंद्रमासना रात्रिदिवस बाद करवाथी बासठीया एक अंश

परि ये द्वात्रिंशद्द्वाषष्टिभागाः संति, तत्र एकत्रिंशता द्वाषष्टिभागैर्दिनार्धं जातं, तेन च सूर्यमासे यद्दिनराशेरुपरितनं दिनार्धं तच्छुद्धं, अथैको द्वाषष्टिभाग एकोनत्रिंशच्च दिनानि सूर्यमाससंबंधिभ्यस्त्रिंशतो दिनेभ्यः शोध्यंते, तदा एकद्वाषष्टिभागन्यून एकोऽहोरात्रः स्थित इत्येष विश्लेषो ज्ञेयः, त्रिंशद्भवंत्यहोरात्रा एकस्मिंस्त्रिंशता हते। द्वाषष्टिभागश्चैकोऽस्मा–त्रिंशद्गुणोऽपसार्यते ॥ ६३ ॥ एकोनत्रिंशदित्येवं दिनान्यंशा रदैर्मिताः। मासोऽधिकोऽयं स्यात्त्रिंश–त्सूर्यमासव्यतिक्रमे ॥ ६४ ॥ युगस्य मध्ये पौषोऽय–मंते त्वाषाढ एव च। तृतीयपंचमे वर्षे तत एवाभिवर्द्धि(र्ध)ते ॥ ६५ ॥ एते पंचापि मासानां भेदा द्वादशभिर्हताः। भवंति स्वस्ववर्षाणि। तन्मानं प्राग्निरूपितं ॥ ६६ ॥ एतेषां पंचानां मासानां प्रयोजनं त्वेवं–जीवे सिंहस्थे धन्वमीनस्थितेऽर्के। विष्णौ निद्राणे चाधिमासे न

न्यून एक दिवस रहे छे. तेनी रीत आ प्रमाणे.–(६२). चंद्रमासना दिवसना राशि उपर जे बासठीया बत्रीश भाग छे, तेमांथी बासठीया एकत्रीश भागनो अर्ध दिवस थाय, ते सूर्यमासना दिवसनी राशि उपरना अर्ध दिवसमांथी बाद कर्यो. पछी ओगणत्रीश दिवस अने बासठीयो एक भाग सूर्यमास संबंधी त्रीश दिवसमांथी बाद करीए त्यारे बासठीया एक भाग न्यून एक रात्रिदिवस बाकी रह्यो. आ विश्लेष जाणवो (बादबाकी जाणवी). हवे एक रात्रिदिवसने त्रीशे गुणतां त्रीश रात्रि दिवस थाय छे. तेमांथी बासठीयो एक भाग त्रीश गुणो करी बाद करीए त्यारे ओगणत्रीश दिवस अने बासठीया बत्रीश भाग ($29\frac{32}{62}$) आटला प्रमाणवाळो अधिक मास सूर्यना त्रीश मास जाय त्यारे आवे. (६३–६४) तेथी करीने ज पांच वर्ष प्रमाण एक युगनी मध्ये त्रीजा वर्षमां पोष मास अने पांचमा वर्षमां अषाढ मास ज वृद्धि पामे छे[1]. (६५). आ पांचे प्रकारना मासोने बारे गुणवाथी पोतपोताना (चंद्र, सूर्य, नक्षत्र, ऋतु ने अभिवर्धित) नामना वर्षो थाय छे. तेनुं प्रमाण प्रथम बतावी गया छीए. (६६).

आ पांचे प्रकारना मासनुं प्रयोजन आ प्रमाणे छे –सिंहराशिमां बृहस्पति होय, धन अने मीन राशिमां सूर्य होय, विष्णुना शयनना[2] मास होय अने अधिक मास होय, ते

---

१ जैन शैली प्रमाणे आ बे मास ज अधिक आववा जोइए पण हाल अन्यदर्शनीना ज्योतिष प्रमाणे प्रवृत्ति थवाथी बीजा मासो पण अधिक आवे छे.

२ अषाड शुदि ११ थी कार्तिक शुदी ११ सुधी.

लग्नं । इत्यादि सूर्यमासाधिमासयोः प्रयोजनं. ऋतुमासश्च पूर्णत्रिंशदहोरात्रात्मक इति निरंशतया लोकव्यवहारकारक इति, शेषास्तु सूर्यादयो मासाः सांशतया प्रायो न व्यवहारपथमवतरंतीति. अत एवायमृतुमासः कर्ममास इत्यपि शास्त्रांतरेऽभिधीयत इति ऋतुमासप्रयोजनं. वैशाखे श्रावणे मार्गे पौषे फाल्गुन एव च । कुर्वीत वास्तुप्रारंभं न तु शेषेषु सप्तसु ॥ ६७ ॥ इति चंद्रमासप्रयोजनं. नक्षत्रमासप्रयोजनं तु संप्रदायगम्यं, इत्याद्यर्थतो जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्तौ.

सषट्षष्टित्र्यहोरात्र–शतात्मकमुदीरितं । यदर्काब्दं तत्र काचिदुपपत्तिर्निरूप्यते ॥ ६८ ॥ नक्षत्रक्षेत्रभागा ये प्रागत्र प्रतिपादिताः । तेषां सार्द्धं शतं भानु–रहोरात्रेण गच्छति ॥ ६९ ॥ ततः शतेन सार्द्धेन भागहारे कृते सति । नक्षत्रक्षेत्रभागानां सूर्यभोगार्हनिर्णयः ॥ ७० ॥ दिनपंचमभागाढ्य–महोरात्रचतुष्टयं । मुहूर्त्तस्य च षष्ठोंऽशोऽभिजिद्भोगो

वखत लग्न थाय नहीं. इत्यादि सूर्यमास अने अधिकमास विगेरेनुं प्रयोजन छे, तथा ऋतुमास संपूर्ण त्रीश रात्रिदिवसनो होवाथी अंश रहितपणाने लीधे लोक व्यवहारमां उपयोगी छे. बाकीना सूर्यादिक मासो अंश सहित होवाथी प्राये व्यवहारमार्गमां आवता नथी. ए ज कारणथी आ ऋतुमास कर्ममास पण कहेवाय छे एम शास्त्रांतरमां कह्युं छे. आ ऋतुमासनुं प्रयोजन कह्युं. वैशाख, श्रावण, मार्गशीर्ष, पोष अने फागण मासमां ज वास्तुनो (मकाननो) प्रारंभ करवो. बाकीना सात मासमां करवो नहीं. (६७). आ चंद्रमासनुं प्रयोजन कह्युं, तथा नक्षत्रमासनुं प्रयोजन संप्रदायथी जाणवुं. इत्यादि जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिनी टीकामां अर्थथी कह्युं छे.

हवे सूर्यवर्षना जे त्रण सो ने छासठ रात्रिदिवस कह्या, तेनी कांइक रीत बतावे छे. (६८).–अहीं प्रथम नक्षत्रना क्षेत्रना जे विभागो देखाड्या छे, तेमांथी सूर्य एक रात्रिदिवसे करीने दोढसो विभाग जेटलुं क्षेत्र ओळंगे छे; तेथी करीने ते ते नक्षत्रना क्षेत्रना अंशोने दोढसोए (१५०) भांगाकार करवाथी सूर्यना भोगवेला दिवसनो निर्णय थाय छे. (६९–७०). ते आ प्रमाणे–अभिजित् नक्षत्रनो क्षेत्रविष्कंभ ६३० अंश छे, तेने १५० वडे भांगाकार करतां चार दिवस अने बाकी शेष रहेला त्रीशनो अने १५० नो पंदरे छेद उडाडतां एक दिवसनो पांचमो भाग एटले ४ $\frac{1}{5}$ दिवस अने एक मुहूर्त्तनो छठ्ठो भाग आटलो वखत सूर्य अभिजित् नक्षत्रने भोगवे छे. (७१). अपार्ध क्षेत्रना दरेक नक्षत्रनो

विवस्वतः ॥ ७१ ॥ अपार्द्धक्षेत्रभानां च भोगमानं पृथक् पृथक् । अहोरात्राः षट् दशांशा अहोरात्रस्य सप्त च ॥ ७२ ॥ समक्षेत्राणां च भाना—महोरात्रास्त्रयोदश । भक्तस्य पंचभिरहो—रात्रस्यांशद्वयं तथा ॥७३॥ सार्द्धक्षेत्राणां च भानां भोगः प्रत्येकमुष्णगोः । स्याद्विंशतिरहोरात्रा—स्तद्दशांशस्तथैककः ॥७४॥ अहोरात्रात्मको भागा—त्मकश्च निखिलोऽप्ययं । कालः संकलितो भानो—र्हायनं स्याद्यथोदितं ॥ ७५ ॥ सहस्राणि दश नव शताः साशीतयः किल १०९८० । एतन्मुहूर्त्तगणितं सूर्यवर्षे जिनैः स्मृतं ॥ ७६ ॥ शतैरष्टाभिराढ्यानि सहस्राणि दश स्फुटं १०८०० । एतन्मुहूर्त्तगणितं । कर्मसंवत्सरे भवेत् ॥ ७७ ॥ सहस्रा दश षट्शत्या पंचविंशत्युपेतया । युक्ताः पंचाशदंशाश्च मुहूर्त्तस्य द्विषष्टिजाः १०६२५×

क्षेत्रविष्कंभ १००५ छे तेने १५० वडे भांगतां छ रात्रिदिवस अने शेष रहेला १०५ तथा १५० नो १५ वडे छेद उडाडतां एक रात्रिदिवसना सात दशांश आवे छे (६$\frac{7}{10}$). आटलो वखत सूर्य एक अपार्ध नक्षत्रने भोगवे छे. (७२). समक्षेत्रना दरेक नक्षत्रनो क्षेत्रविष्कंभ २०१० छे तेने १५० वडे भाग देतां तेर रात्रिदिवस अने शेष रहेला ६० तथा १५० नो ३० वडे छेद उडाडतां एक रात्रिदिवसना पांचीया बे अंश आवे छे (१३$\frac{2}{5}$). आटलो वखत सूर्य एक समक्षेत्र नक्षत्रने भोगवे छे. (७३). तथा सार्धक्षेत्रना दरेक नक्षत्रनो क्षेत्रविष्कंभ ३०१५ छे, तेने १५० वडे भाग देतां वीश रात्रिदिवस अने शेष रहेला पंदर तथा १५० नो पंदरवडे छेद उडाडतां एक दशांश आवे छे (२०$\frac{1}{10}$). आटलो वखत सूर्य एक सार्धनक्षत्रने भोगवे छे. (७४). आ प्रमाणे सर्व नक्षत्रोना भोगवटाना रात्रिदिवसो तथा अंशोने एकठा करवाथी त्रण सो ने छासठ (३६६) रात्रिदिवसनुं एक सूर्यवर्ष प्रथम कह्या प्रमाणे सिद्ध थाय छे. (७५). तेना मुहूर्त्त करवा माटे त्रीशे गुणवाथी एक सूर्यवर्षना मुहूर्त्तो दश हजार नव सो ने अेंशी (१०९८०) थाय छे एम जिनेश्वरोए कह्युं छे. (७६). ए ज प्रमाणे एक कर्म (ऋतु) वर्षना (३६०) रात्रिदिवसने त्रीशे गुणतां दश हजार ने आठ सो (१०८००) मुहूर्त्त थाय छे. (७७). दश हजार छ सो ने पचीश तथा उपर बासठीया पचास अंश (१०६२५ $\frac{50}{62}$) आटला मुहूर्त्तनुं गणित एक

---

१ अभिजित ४$\frac{1}{5}$, छ अर्ध नक्षत्रना ४०$\frac{1}{5}$, १५ समनक्षत्रना २०१, छ सार्धनक्षत्रना १२०$\frac{3}{5}$ ए प्रमाणे ३६६

५०×६२ ॥ ७८ ॥ एतन्मुहूर्त्तगणितं चंद्रसंवत्सरे मतं । अथ नक्षत्रवर्षस्य मुहूर्त्तमानमुच्यते ॥ ७९ ॥ सहस्रनवसंयुक्ता द्वात्रिंशैरष्टभिः शतैः। षट्पंचाशन्मुहूर्त्तस्य भागाश्च सप्तषष्टिजाः ९८३२×५६×६७ ॥ ८० ॥ एकादश सहस्राणि पंच चैकादशाः शताः । अष्टादशमुहूर्त्तस्य भागा द्वाषष्टिनिर्मिताः ११५११×१८×६२ ॥ ८१ ॥ मुहूर्त्तसंख्येत्युद्दिष्टा बुधैर्वर्षेऽभिवर्द्धिते ॥ त्रिंशद्गुणो स्वस्ववर्षे त्वेषां स्यादुपपादनं ॥ ८२ ॥

सूर्यसंवत्सरस्तौल्य–रूपेण यदि चिंत्यते । तदा सहस्रं भाराणामष्टानवतिसंयुतं १०९८ ॥ ८३ ॥ आढकानां त्रिचत्वारिं–शत्सहस्राः शता नव । विंशत्युपेताः ४३९२० सूर्याब्दं मेयरूपतया मतं ॥ ८४ ॥ द्वाषष्ट्याभ्यधिकं भार–सहस्रं चंद्रवत्सरे। द्वाषष्टिभागा भारस्य षट्त्रिंशत्तौल्यमानतः १०६२×३६×६२ ॥ ८५ ॥ द्विचत्वारिंशत्सहस्राः पंच च त्र्युत्तराः शताः। आढकानामाढकस्य द्विषष्ट्यंशाश्चतुर्दश ४२५०३–१४×६२ ॥८६॥ एतन्मेयतया मानं चंद्रसंवत्सरे भवेत् । ब्रूमो नक्षत्रवर्षस्य तौल्यमाने यथाक्रमे ॥ ८७ ॥ शतानि नव भाराणां त्र्यशीत्याभ्यधिकानि च ।

चंद्रवर्षनुं कहेलुं छे (३५४ $\frac{12}{62}$ ने त्रीशे गुणतां थाय छे). हवे नक्षत्रवर्षना मुहूर्त्तनुं प्रमाण कहे छे. (७९).—(३२७ $\frac{51}{67}$ ने त्रीशे गुणतां नव हजार आठ सो ने बत्रीश तथा एक मुहूर्त्तना सडसठीया छप्पन भाग (९८३२ $\frac{56}{67}$) थाय छे. (८०). अग्यार हजार पांच सो ने अग्यार अने उपर एक मुहूर्त्तना बासठीया अढार भाग (११५११ $\frac{18}{62}$) आटला मुहूर्त्तनी संख्या (३८३ $\frac{44}{62}$) दिवसना प्रमाणवाळा अभिवर्धित वर्षनी थाय छे एम पंडितोए कह्युं छे. पोतपोताना वर्षना दिवसोने त्रीशे गुणतां आ मुहूर्तनी संख्या सिद्ध थाय छे. (८२)

हवे सूर्यवर्षने तोलनी अपेक्षाए विचारीए तो एक हजार ने अठ्ठाणुं भार (१०९८) थाय छे. (८३). अने माननी अपेक्षाए कहीए तो तेंतालीश हजार नव सो ने वीश (४३९२०) एटला प्रमाण सूर्यवर्ष थाय छे. (८४). चंद्रवर्षने तोलनी अपेक्षाए विचारीए तो एक हजार अने बासठ (१०६२) भार तथा एक भारना बासठीया छत्रीश भाग (अंश) ($\frac{36}{62}$) थाय छे. (८५). तथा बेंतालीश हजार पांच सो ने त्रण आढक अने एक आढकना बासठीया चौद भाग (४२५०३ $\frac{14}{62}$) आटलुं चंद्रवर्षनुं मान थाय छे. हवे नक्षत्रवर्षना अनुक्रमे तोल अने मान कहे छे. (८७). नव सो ने त्राशी भार अने एक भारना सडसठीया

एकोनविंशतिर्भागा भारस्य सप्तषष्टिजाः ९८३-१९-६७ ॥ ८८ इति नक्षत्रवर्षे तौल्यमानं. त्रयोदशसहस्राणि-रेकत्रिंशं शतत्रयं । त्रयोविंशतिरंशाश्चा-ढकानां सप्तषष्टिजाः ३९३३१-२३×६७ ॥ ८९ ॥ इति नक्षत्रवर्षे मेयमानं. एकपंचाशानि भार-शतान्येकादशाष्ट च । द्वाषष्टिभागा भारस्य तौल्यं वर्षेऽभिवर्द्धिते ११५१-८×६२ ॥ ९० ॥ पंचचत्वारिंशदाढ्या आढकानां सहस्रकाः । षट्चत्वारिंशदंशाश्च मानं द्वाषष्टिजा दश ४६०४५-१०×६२ ॥ ९१ ॥

पंचलक्षणभेदेना-प्युक्ताः संवत्सरा युगे । नक्षत्रचंद्रकर्मौष्ण-कराभिवर्द्धिताह्वयाः ॥ ९२ ॥ तथाहि—नक्षत्राणि यथायोगं स्वस्वमासानुसारतः । भवंति यत्र राकायां कार्त्तिके कृत्तिका यथा ॥ ९३ ॥ तथोक्तं—'जेट्ठो वच्चइ मूलेण सावणो धणिट्ठाहिं । अद्दासु अ मग्गसिरो, सेसा नक्खत्तनामिया मासा' ॥ ऋतवोऽपि यथायोगं प्रवर्त्तंते महीतले । स्थितिं बध्नाति हेमंतः कार्त्तिक्याः परतो यथा ॥ ९४ ॥ भवेत्संवत्सरो

ओगणीश भाग (९८३ $\frac{19}{67}$) थाय छे. आ नक्षत्रवर्षना तोलनुं प्रमाण छे. (८८). त्रण वार तेर हजार एटले ३९ हजार त्रण सो ने एकत्रीश आढक अने एक आढकना सडसठीया त्रेवीश अंशो (३९३३१ $\frac{23}{67}$) आटलुं नक्षत्रवर्षनुं मेयमान जाणवुं. (८९). अभिवर्द्धितवर्षना तोलनुं मान अग्यार सो ने एकावन भार अने एक भारना बासठीया आठ भाग थाय छे (११५१ $\frac{8}{62}$) (९०). ते ज अभिवर्धितवर्षनुं मेयमान छेंतालीश हजार ने पीस्तालीश आढक तथा एक आढकना बासठीया दश अंश (४६०४५ $\frac{10}{62}$) थाय छे[1]. (९१).

नक्षत्र, चंद्र, कर्म, सूर्य अने अभिवर्धित नामना पांचे वर्ष एक युगने विषे लक्षणना भेदे करीने पण कह्या छे. (९२). ते आ प्रमाणे—नक्षत्रो यथायोग्य पोतपोताना मासने अनुसारे जे पूर्णिमाने दिवसे होय ते नक्षत्र नामनो ते मास कहेवाय छे. जेमके कार्तिक मासनी पूर्णिमाए कृत्तिका नक्षत्र होय छे, तेथी ते कार्तिक मास कहेवाय छे. (९३). (बीजा मासो माटे फेर छे ते माटे) कह्युं छे के—मूळ नक्षत्रना योगथी जेठ मास कहेवाय छे, धनिष्ठाना योगथी श्रावण मास, आर्द्रांना योगथी मार्गशीर्ष मास कहेवाय छे, बाकीना मासो ते ते नक्षत्रना नामवाळा होय छे (आ चंद्र नक्षत्रो एटले प्रतिदिवसना नक्षत्रो जाणवा). ऋतुओ

---

१ पांचमा ऋतुवर्षनुं तोल तथा मेय लख्युं नथी.

यश्च नात्युष्णो नातिशीतलः । बहूदकश्च नक्षत्र–संवत्सरमुशंति तं ॥९५॥ मासासदृशनामानि यत्र ऋक्षाणि पूर्णिमाः । समापयंति यः शीता–तप-रोगादिदारुणः ॥ ९६ ॥ बहूदकश्च तं प्राहु–श्चंद्रसंवत्सरं बुधाः । कर्म-संवत्सरस्येदं विज्ञेयमथ लक्षणं ॥ ९७ ॥ दधत्यकाले तरव–स्तत्र पुष्पफलादिकं । सम्यग् यच्छति नांभोदो मितंपच इवोदकं ॥ ९८ ॥ इति कर्मवर्षफलं ॥ यत्रातिसरसा पृथ्वी पाथोऽतिसरसं हितं । रसो महान्मधूकाम्रा—दीनां पुष्पफलादिषु ॥ ९९ ॥ यत्राल्पेनापि वर्षेण धान्यं सम्यक् प्रजायते । सूर्यसंवत्सरं प्राहु–स्तमतिप्रौढबुद्धयः ॥४००॥ यत्रार्कतेजःसंतप्ता भवंति दिवसर्त्तवः । स्थलं निम्नाद्यंबुपूर्णं तमाहुरभि-वर्द्धितं ॥ १ ॥ इत्यर्थतो जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्त्यादिषु.

पंचभिः खलु वर्षैश्च युगं भवति तत्र च । आद्यं चंद्राभिधं वर्ष द्वितीयमपि तादृशं ॥२॥ अभिवर्द्धितसंज्ञं च तृतीयं वर्षमीरितं । चतुर्थं

पण पृथ्वीतळ उपर योग प्रमाणे प्रवर्ते छे. जेमके कार्तिकी पछी हेमंत ऋतु स्थितिने पामे छे. (९४). जे वर्ष अति उष्ण के अति शीतळ न होय अने घणा पाणीवाळुं होय ते नक्षत्र-वर्ष कहेवाय छे. (९५). जे वर्षमां पूर्णिमाओने ते ते मासना असमान नामवाळा नक्षत्रो समाप्त करता होय अने जे वर्ष शीत, ताप अने रोगादिकवडे भयंकर होय (९६), तथा घणा पाणीवाळुं होय ते वर्षने पंडितो चंद्रवर्ष कहे छे. हवे कर्म (ऋतु) वर्षनुं लक्षण आ प्रमाणे जाणवुं. (९७). कर्मवर्षमां अकाळे वृक्षो पुष्प फलादिकने धारण करे छे, अने मेघ कृपणनी जेम सारी रीते जळ आपतो नथी. (९८). (आ कर्मवर्षनुं फळ जाणवुं.) जे वर्षमां पृथ्वी घणा रसवाळी होय, पाणी अति सरस अने हितकारक होय, मधूकना पुष्प अने आम्रादिकना फळादिकमां घणो रस होय, (९९), अने जे वर्षमां अल्प वरसादवडे पण धान्य सारुं पाके, तेने अति मोटी बुद्धिवाळा पंडितो सूर्यवर्ष कहे छे. (४००). जे वर्षमां दिवस अने ऋतुओ सूर्यना तेजथी तप्त थता होय अने नीचा स्थळ पाणीथी पूर्ण होय, तेने अभिवर्धित वर्ष कहे छे. (१). आ हकिकत जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिनी टीका विगेरेमां कही छे.

पांच वर्षनो एक युग थाय छे, तेमां पहेलुं चंद्र नामनुं वर्ष छे, बीजुं वर्ष पण ते ज नामनुं एटले चंद्र नामनुं छे. (२). अभिवर्धित नामनुं त्रीजुं वर्ष कह्युं छे, चोथुं चंद्र नामनुं

चंद्रसंज्ञं च पंचमं चाभिवर्द्धितं ॥ ३ ॥ स्युर्मासाश्चंद्रवर्षेषु द्वादश द्वादश त्रिषु । अभिवर्द्धितवर्षे च द्वे त्रयोदशमासके ॥ ४ ॥ द्वितीयस्येंदुवर्षस्य प्रथमः समयो हि यः । तदनंतरपाश्चात्यः स्यादाद्यस्य क्षणोऽतिमः ॥ ५ ॥ आषाढाभिरुत्तराभि–स्तदा योगो हिमद्युतेः । तासां तदानीं स्युर्भोग्याः षड्विंशतिर्मुहूर्त्तकाः ॥ ६ ॥ षड्विंशतिर्मुहूर्त्तस्य भागा द्वाषष्टिजास्तथा । द्वाषष्ट्यंशस्य चैकस्य सप्तषष्ट्यंशशालिनः ॥ ७ ॥ चतुष्पंचाशद्विभागा इह द्वाषष्टिजो लवः । सप्तषष्टिप्रविभक्त–श्चूर्णिकाभाग उच्यते ॥ ८ ॥ पुनर्वसुभ्यां साकं च तदा योगो रवेर्भवेत् । मुहूर्त्ताः षोडश तदा तयोर्भोग्या भवंति हि ॥ ९ ॥ अष्टौ द्वाषष्टिजा भागा मुहूर्त्तस्य तथोपरि । एकस्य द्वाषष्ट्यंशस्य विंशतिश्चूर्णिका लवाः ॥ १० ॥ तथोक्तं सूर्यप्रज्ञप्तौ–' जे णं दोच्चस्स संवच्छरस्स आई से णं पढमस्स चंदसंवच्छरस्स पज्जवसाणे अणंतरपच्छाकडे समए, तं समयं च णं चंदे केणं नक्खत्तेणं

वर्ष छे अने पांचमुं अभिवर्धित नामनुं वर्ष छे. (३). एक युगमां त्रण चंद्रवर्ष छे ते दरेकमां बार बार मास होय छे; तथा बे अभिवर्धित वर्ष छे, तेमां तेर तेर मास आवे छे. (४). बीजा चंद्रवर्षनो जे प्रथम समय छे, तेनी पहेलानो जे समय छे ते पहेला चंद्र वर्षनो छेल्लो समय होय छे. (५). ते समये चंद्रने उत्तराषाढा नक्षत्रनो योग होय छे. ते वखते ते उत्तराषाढाना छवीश मुहूर्त्त भोग्य होय छे, तथा ते उपर एक मुहूर्त्तना बासठीया छवीश भाग (अंश) तथा एक बासठीया अंशना सडसठीया चोपन अंश (२६ $\frac{२६}{६२}$ $\frac{५४}{६७}$) होय छे. अहीं बासठीया अंशना जे सडसठ भाग थाय छे, तेनुं बीजुं नाम चूर्णिकाभाग कहेवाय छे. (८). ते वखते सूर्यने पुनर्वसु नक्षत्रनी साथे योग होय छे, ते वखते ते पुनर्वसु नक्षत्रना सोळ मुहूर्त्त सूर्यने भोग्य होय छे, तथा उपर एक मुहूर्त्तना बासठीया आठ भाग अने एक बासठीया भागना वीश चूर्णिका अंश (१६ $\frac{८}{६२}$ $\frac{२०}{६७}$) होय छे (१०). ते विषे सूर्यप्रज्ञप्तिमां कह्युं छे के—" जे बीजा चंद्रवर्षनो पहेलो समय छे, तेनी पहेलानो जे समय ते पहेला चंद्रवर्षनो छेल्लो समय छे. ते समये चंद्रनो योग कया नक्षत्र साथे होय छे ? (उत्तर)–उत्तराषाढा नक्षत्र साथे होय छे. उत्तराषाढा नक्षत्रना छवीश मुहूर्त्त, उपर बासठीया छवीश भाग, तथा ते उपर मुहूर्त्तना एक बासठीया भागना सडसठीया चोपन चूर्णिका भाग शेष (२६ $\frac{२६}{६२}$ $\frac{५४}{६७}$) आटलुं चंद्रने भोग्य होय छे. आ समये

१ हवे पछी भोगववा लायक.

जोएइ ता उत्तराहिं आसाढाहिं उत्तराणं आसाढाणं छव्वीसं मुहुत्ता छव्वीसं च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभागं च सत्तट्ठिहाछेत्ता चउपण्णं चुण्णिया भागा सेसा, तं समयं च णं सूरे केणं णक्खत्तेणं जोएइ ता पुणव्वसुणा पुणव्वसुस्स सोलस मुहुत्ता अट्ठ य बावट्ठि भागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभागं च सत्तट्ठिहाछेत्ता वीसं चुण्णिया भागा सेसा इति, एवं शेषेष्वपि सूत्रेषु सूत्रालापकपद्धतिर्बोद्धव्या ' योऽभिवर्द्धितवर्षस्य तृतीयस्यादिमः क्षणः । तदनंतरपाश्चात्यो द्वितीयस्यांतिमः क्षणः ॥ ११ ॥ तदा च पूर्वाषाढाभि–स्सह योगो हिमद्युतेः । मुहूर्त्ताः सप्त भागाश्च त्रिपंचाशद् द्विषष्टिजाः ॥ १२ ॥ द्वाषष्ट्यंशस्य चैकस्य विभागाः सप्तषष्टिजाः । एकोनचत्वारिंशत्स्यु–स्तासां भोग्याः सितत्विषः ॥ १३ ॥ पुनर्वसुभ्यां संयोग–स्तदा स्यादुष्णरोचिषः । तन्मुहूर्त्तांशप्रत्यंशान् भानुभोग्यानथ ब्रुवे ॥ १४ ॥ द्विचत्वारिंशन्मुहूर्त्ताः पुनर्वस्वोस्तदा रवेः । पंचत्रिंशद्द्विषष्ट्यंशा भोग्याः सप्त च चूर्णिकाः ॥ १५ ॥ तुर्यस्य चंद्रवर्षस्य य इह प्रथमः क्षणः । क्षणस्तृतीयस्यांत्यः स्या–त्तदनंतरपश्चिमः

सूर्यनो योग कया नक्षत्र साथे होय छे ? (उत्तर)–ते समये पुनर्वसु साथे सूर्यनो योग होय छे. ते पुनर्वसु नक्षत्रना सोळ मुहूर्त्त, ते उपर एक मुहूर्त्तना बासठीया आठ भाग, तथा उपर एक बासठीया भागना सडसठ भाग करी तेमांथी वीश चूर्णिका भाग शेष (१६ $\frac{8}{62}$ $\frac{20}{67}$) एटलुं सूर्यने भोग्य होय छे. इति. " आ प्रमाणे बाकीना सूत्रोमां सूत्रना आलावानी पद्धति जाणवी. हवे त्रीजा अभिवर्धितवर्षनो जे पहेलो समय छे, तेनी पहेलानो जे समय ते बीजा चंद्रवर्षनो छेल्लो समय छे. (११). ते समये पूर्वाषाढा नक्षत्रनी साथे चंद्रनो योग सात मुहूर्त्त, ते उपर एक मुहूर्त्तना बासठीया त्रेपन अंश, अने ते उपर एक बासठीया भागना सडसठीया ओगणचालीश भाग (७ $\frac{53}{62}$ $\frac{39}{67}$) होय छे एटले आटलो काळ चंद्रनो भोग्य होय छे. (१३). आ वखते पुनर्वसु नक्षत्रनी साथे सूर्यनो संयोग होय छे, ते वखते सूर्यना भोग्य मुहूर्त्त, अंश अने प्रत्यंश केटला होय ? ते कहे छे. (१४). ते वखते सूर्यने पुनर्वसुना बेंतालीश मुहूर्त्त, ते उपर एक मुहूर्त्तना बासठीया पांत्रीश अंश, अने ते उपर एक बासठीया अंशना सडसठीया सात अंश एटले चूर्णिका भाग (४२ $\frac{35}{62}$ $\frac{7}{67}$) भोग्य होय छे. (१५). चोथा चंद्रवर्षनो जे पहेलो समय छे, तेनी पहेलानो जे समय ते

॥१६॥ आषाढाभिश्चोत्तराभि–स्तदा योगो हिमद्युतेः । भुक्तशेषास्तदानीं स्यु–स्तन्मुहूर्त्तास्त्रयोदश ॥ १७ ॥ एकस्य च मुहूर्त्तस्य द्वाषष्ठ्यंशास्त्रयोदश । अंशस्य तादृशः सप्त–विंशतिश्चूर्णिका लवाः ॥ १८ ॥ पुनर्वसुभ्यां सूर्यस्य तदा योगो निरूपितः । मुहूर्त्तौ द्वौ च तद्भुक्त–शेषौ भागास्तथोपरि ॥ १९ ॥ षट्पंचाशद् द्विषष्ठ्युत्था भागस्यैकस्य तस्य च । सप्तषष्टिविभक्तस्य षष्टिर्भागाः प्रकीर्त्तिताः ॥ २० ॥ अभिवर्द्धितवर्षस्य पंचमस्यादिमक्षणात् । स्याद्योऽनंतरपाश्चात्यः स तुर्यस्यांतिमः क्षणः ॥ २१ ॥ आषाढाभिरुत्तराभि–स्तदा योगोऽमृतद्युतेः । तद्भुक्तशेषा एकोन–चत्वारिंशन्मुहूर्त्तकाः ॥ २२ ॥ द्वाषष्टिभागाश्चत्वारिं–शदेकस्याथ तस्य च । सप्तषष्टिभवाः सप्त–चत्वारिंशत्किलांशकाः ॥ २३ ॥ पुनर्वसुभ्यां सूर्यस्य तदा योगः प्रकीर्त्तितः । तद्भुक्तशेषा एकोन–त्रिंशदेव मुहूर्त्तकाः ॥ २४ ॥ एकविंशतिरंशाश्च मुहूर्त्तस्य द्विषष्टिजाः । तस्यैकस्य सप्तचत्वा–रिंशच्च चूर्णिकांशकाः ॥ २५ ॥ युगस्यादेरादिमस्य चंद्रा-

---

त्रीजा अभिवर्धित वर्षनो छेल्लो समय होय छे. (१६). ते वखते उत्तराषाढा नक्षत्रनी साथे चंद्रनो योग होय छे. ते वखते उत्तराषाढाना तेर मुहूर्त्त चंद्रने भोग्य होय छे, ते उपर एक मुहूर्त्तना बासठीया तेर अंश अने बासठीया एक अंशना सतावीश चूर्णिका अंश शेष होय छे (१३ $\frac{13}{62}$ $\frac{27}{67}$) (१८). आ वखते पुनर्वसु नक्षत्रनी साथे सूर्यनो योग कहेलो छे ते वखते ते पुनर्वसुना बे मुहूर्त्त ते उपर एक मुहूर्त्तना बासठीया छप्पन अंश अने एक बासठीया अंशना सडसठीया साठ भाग (२ $\frac{56}{62}$ $\frac{60}{67}$) भुक्त शेष एटले भोग्य कहेला छे. (२०). पांचमा अभिवर्धित वर्षना पहेला समयनी पहेलानो जे समय होय ते चोथा चंद्रवर्षनो छेल्लो समय होय छे. (२१). ते वखते उत्तराषाढा नक्षत्रनी साथे चंद्रनो योग होय छे. ते वखते ते उत्तराषाढाना ओगणचाळीश मुहूर्त्त, ते उपर एक मुहूर्त्तना बासठीया चाळीश अंश अने एक बासठीया अंशना सडसठीया सुडताळीश अंश (३९ $\frac{40}{62}$ $\frac{47}{67}$) भुक्तशेष एटले भोग्य होय छे. (२३). आ वखते पुनर्वसु नक्षत्रनी साथे सूर्यनो योग कहेलो छे. ते वखते ते पुनर्वसु नक्षत्रना ओगणत्रीश मुहूर्त्त, ते उपर एक मुहूर्त्तना बासठीया एकवीश अंश अने एक बासठीया अंशना सडसठीया सुडतालीश चूर्णिका अंश (२९ $\frac{21}{62}$ $\frac{47}{67}$) सूर्यने भोगववाना बाकी (भोग्य) होय छे. (२५). युगनी

ब्दस्यादिमक्षणात् । अनंतरो यः पाश्चात्यः पंचमाब्दस्य सोंतिमः ॥ २६ ॥ आषाढाभिरुत्तराभि–स्तदा योगः सितद्युतेः । चरमे समये तासां वर्त्तमानो भवेत्स हि ॥ २७ ॥ सूर्यस्य च तदा योगः पुष्येण परिकीर्त्तितः । भुक्तशेषास्तदा तस्य मुहूर्त्ता एकविंशतिः ॥ २८ ॥ द्वाषष्टिजास्त्रयश्चत्वा–रिंशदंशास्तथोपरि । तस्यांशस्य त्रयस्त्रिंश–द्विभागाः सप्तषष्टिजाः ॥ २९ ॥ अत्र येऽर्कस्य नक्षत्र–योगे प्रोक्ता मुहूर्त्तकाः । ते भानुसत्का बोद्धव्या विधोस्तु व्यावहारिकाः ॥ ३० ॥

आह च–अहोरात्रस्य हि त्रिंश–त्तमोंशो व्यावहारिकः । मुहूर्त्त इति जानीमः किंरूपोऽसौ रवेः पुनः ॥ ३१ ॥ अत्रोच्यते–यत्संपूर्णमहोरात्रं युज्यते भं हिमांशुना । तस्य योगोऽभवद्याव–त्कालमुष्णांशुना सह ॥३२॥ तस्य त्रिंशत्तमो भागो यावान् जायेत निश्चितः । तावन्मानो मुहूर्त्तोऽत्र ज्ञेयो विज्ञैर्विवस्वतः ॥ ३३ ॥ स चायं–त्रयोदशमुहूर्त्तानि मुहूर्त्तस्यैककस्य च । कृतद्वाषष्टिभागस्य चतुर्विंशतिरंशकाः ॥ ३४ ॥ द्वाषष्ट्यंशस्य चैकस्य

आदिमां वर्तता पहेला चंद्र वर्षना पहेला समयनी पहेलानो जे समय होय ते पांचमा अभिवर्धितवर्षनो छेल्लो समय होय छे. (२६). ते वखते उत्तराषाढा नक्षत्रनी साथे चंद्रनो योग होय छे. ते योग ते उत्तराषाढाना छेल्ला समये होय छे. (२७). आ समये सूर्यनो योग पुष्य नक्षत्रनी साथे कहेलो छे. ते वखते ते पुष्य नक्षत्रना भुक्तशेष (भोग्य) मुहूर्त्त एकवीश, तेना उपर बासठीया तेंतालीश अंश अने एक बासठीया अंशना सडसठीया तेत्रीश भाग (२१ $\frac{४३}{६२}$ $\frac{३३}{६७}$) होय छे. (२८). अहीं सूर्यनो नक्षत्र साथे योग थतां जे मुहूर्त्तो कह्यां छे, ते सूर्य संबंधी जाणवा, अने चंद्रना योगमां जे मुहूर्त्तो कह्यां ते व्यावहारिक जाणवा. (३०).

अहीं कोइ शंका करे के–एक रात्रि दिवसनो जे त्रीशमो भाग ते व्यवहारथी मुहूर्त्त कहेवाय छे एम अमे जाणीए छीए. परंतु ते मुहूर्त्तने सूर्य साथे शो संबंध छे ? (३१). आनो उत्तर ए छे जे–जे नक्षत्रनो चंद्र साथे संपूर्ण रात्रि दिवस योग थाय छे, ते नक्षत्रनो योग जेटलो काळ सूर्य साथे निश्चित थाय, तेनो त्रीशमो भाग जेटलो थाय तेटला प्रमाणवाळुं सूर्यनुं मुहूर्त्त कहेवाय छे एम पंडितोए जाणवुं. (३३). ते आ प्रमाणे—तेर मुहूर्त्त, उपर एक मुहूर्त्तना बासठीया चोवीश अंश तथा बासठीया एक अंशना सडसठ

छिन्नस्य सप्तषष्टिधा। किंचित्समधिकाः सार्द्धा–स्त्रिपंचाशद्विभागकाः ॥ ३५ ॥ तथाहि–स्युर्द्वादशमुहूर्त्ताढ्या अहोरात्रास्त्रयोदश। समक्षेत्राणामुडूनां योगकालो विवस्वतः ॥ ३६ ॥ त्रयोदशाहोरात्रा ये मुहूर्त्तकरणाय ते। त्रिंशद्गुणीकृता जाता नवत्याढ्या शतत्रयी ॥ ३७ ॥ द्वादशानां मुहूर्त्तानां शेषाणामत्र योजने। चतुःशती द्व्युत्तरा स्या–त्त्रिंशता सा विभज्यते ॥ ३८ ॥ पूर्णास्त्रयोदश प्राप्ताः शिष्यंते द्वादशाथ ते। द्वाषष्टिघ्नाश्चतुश्चत्वा–रिंशा सप्तशती भवेत् ॥ ३९ ॥ एतस्यास्त्रिंशता भागे चतुर्विंशतिराप्यते। शेषा चतुर्विंशतिः सा सप्तषष्ट्या हता भवेत् ॥ ४० ॥ अष्टाढ्या षोडशशती त्रिंशतासौ विभज्यते। प्राप्ताः सार्द्धास्त्रिपंचाश–त्किंचित्समधिका इति ॥ ४१ ॥ इति सूर्यमुहूर्त्तप्रमाणानयनोपायः।

तुल्यार्द्धसार्द्धक्षेत्रोडु–ष्वर्कमाना मुहूर्त्तकाः। त्रिंशत्पंचदश पंच–चत्वारिंशत्स्युरुष्णगाः ॥ ४२ ॥ तैश्च त्रयोदश दिनाः सद्वादशमुहूर्त्तकाः। तथा स्युः षडहोरात्रा मुहूर्त्ताश्चैकविंशतिः ॥ ४३ ॥ अहोरात्रा विंशतिश्च मुहूर्त्तैस्त्रितयाधिकाः। क्रमात्त्रैधेषु भेष्वर्क–भोगः स्याद्व्यावहारिकः ॥४४॥

भाग करीए तेमांथी साडीपांत्रीशथी कांइ अधिक अंश आवे छे. (३५). ते आ प्रमाणे–समक्षेत्रवाळा नक्षत्रनी साथे सूर्यनो योग तेर रात्रिदिवस अने उपर बार मुहूर्त्तनो छे. (३६). तेथी जे तेर रात्रिदिवस छे तेना मुहूर्त्त करवा माटे तेने त्रीशे गुणतां त्रण सो ने नेवुं (३९०) थाय छे. तेमां उपरना बार मुहूर्त्त मेळवीए त्यारे चार सो ने बे (४०२) थाय छे, तेने त्रीशे भांगतां भागमां तेर आव्या. बाकी शेष बार वध्या, तेने बासठे गुणवाथी सात सो ने चुमाळीश (७४४) थया. (३९). तेने त्रीशे भांगतां भागमां चोवीश आवे छे, शेष पण चोवीश रहे छे. तेने सडसठे गुणतां सोळ सो ने आठ (१६०८) थाय छे. तेने त्रीशे भांगवाथी साडीतेपन (५३॥) अने कांइक (त्रीशीया त्रण भाग) अधिक थाय छे. (४१). आ प्रमाणे सूर्यना मुहूर्त्तनुं प्रमाण लाववानो उपाय कह्यो.

तुल्य (सम) क्षेत्रवाळा नक्षत्रोने विषे सूर्यना त्रीश मुहूर्त्त, अर्धक्षेत्रना नक्षत्रोने विषे पंदर मुहूर्त्त अने सार्ध (दोढ) क्षेत्रवाळा नक्षत्रोने विषे सूर्यना पीस्तालीश मुहूर्त्त आवे छे. (४२). ते त्रणे प्रकारना नक्षत्रो साथे सूर्यनो भोग आ प्रमाणे छे.–सम नक्षत्र साथे तेर रात्रिदिवस ने बार मुहूर्त्त, अर्ध नक्षत्र साथे छ रात्रिदिवस ने एकवीश मुहूर्त्त तथा सार्ध

अष्टादश शतास्त्रिंशा अहोरात्रा युगे स्मृताः । पंचानामपि वर्षाणां तत्तत्संख्यासमुच्चयात् ॥ ४५ ॥ तथाहि—

संवत्सरास्त्रयश्चांद्रा युगे द्वौ चाभिवर्द्धितौ । तत्र चंद्राब्दस्य मानमित्येतत्प्राग्निरूपितं ॥ ४६ ॥ चतुःपंचाशदधिक–महोरात्रशतत्रयं । द्वादश द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य चोपरि ॥ ४७ ॥ अस्मिंस्त्रिगुणिते जातमहोरात्रसहस्रकं । द्वाषष्ट्याभ्यधिकं षट्त्रिं–शच्च द्वाषष्टिजा लवाः ॥४८॥ अभिवर्द्धितमानं चा–होरात्राणां शतत्रयं । त्र्यशीति चतुश्चत्वा–रिंशद्द्वाषष्टिजा लवाः ॥ ४९ ॥ अस्मिन् द्विगुणिते सप्त शताः षट्षष्टिसंयुताः । अहोरात्राः स्युस्तथाष्टा–शीतिर्द्वाषष्टिजा लवाः ॥ ५० ॥ अष्टाशीतिरमी भागाः प्राच्यषट्त्रिंशता युताः । जाताश्चतुर्विंशमेव शतं द्वाषष्टिजा लवाः ॥ ५१ ॥ अहोरात्रद्वयं लब्धं द्वाषष्ट्यास्मिन् हृते सति । अष्टादशशतास्त्रिंशाः सर्वे संकलितास्ततः ॥ ५२ ॥ सप्तषष्टिर्ऋक्षमासा द्वाषष्टिस्ते

नक्षत्र साथे वीश रात्रिदिवस अने त्रण मुहूर्त्त. आ सूर्यनो भोग व्यावहारिक कहेवाय छे. (४४). एक युगना पांचे वर्षनी ते ते संख्याने एकठी करीए त्यारे अढार सो ने त्रीश रात्रिदिवस थाय छे. (४५) ते आ प्रमाणे.—

एक युगमां त्रण चंद्र वर्ष अने बे अभिवर्धित वर्ष आवे छे. तेमां चंद्र वर्षनुं मान त्रण सो ने चोपन रात्रिदिवस अने उपर एक रात्रिदिवसना बासठीया बार भाग ($३५४\frac{१२}{६२}$) थाय छे. (४७). तेने त्रण गुणा करतां एक हजार ने बासठ रात्रिदिवस अने उपर एक रात्रिदिवसना बासठीया छत्रीश भाग ($१०६२\frac{३६}{६२}$) थाय छे. (४८) तथा अभिवर्धित वर्षनुं मान त्रण सो ने त्राशी रात्रिदिवस तथा उपर एक रात्रिदिवसना बासठीया चुमाळीश भाग ($३८३\frac{४४}{६२}$) छे. (४९) तेने बमणा करवाथी सात सो ने छासठ रात्रिदिवस अने उपर एक रात्रिदिवसना बासठीया अठ्याशी भाग ($७६६\frac{८८}{६२}$) थाय छे. (५०). आ अठ्याशी भागमां उपरना छत्रीश भाग नांखवाथी बासठीया भाग एक सो ने चोवीश (१२४) थया, तेने बासठे भाग देतां बे रात्रिदिवस थाय. तेनी साथे उपरना (१०६२ तथा ७६६) मेळवतां कुल अढार सो ने त्रीश (१८३०) रात्रिदिवस एक युगना थाय छे. (५२).

तथैंदवाः। ऋतुमासाश्चैकषष्टिः षष्टिर्मासा विवस्वतः ॥ ५३ ॥ अभिवर्द्धितमासाश्च सप्तपंचाशदाहिताः। शिष्येत सप्ताहोरात्री सैकादशमुहूर्त्तिका ॥ ५४ ॥ त्रयोविंशतिरंशाश्च मुहूर्त्तस्य द्विषष्टिजाः। मासानां मानमित्येवं युगे प्रोक्तं पृथक् पृथक् ॥ ५५ ॥ युगाहोरात्रवृंदस्य हृते भागे यथोदितैः। स्वीयस्वीयमासमानै–र्युगे मासास्तथाऽत्र च ॥ ५६ ॥ अयनानि दश प्राहु–र्ऋतवस्त्रिंशदाहिताः। षष्टिर्मासाः शतं विंशं पक्षाः सौरप्रमाणतः ॥ ५७ ॥ चतुष्पंचाशत्सहस्राः शतैर्नवभिरन्विताः ५४९०० । युगे मुहूर्त्ता निर्दिष्टाः शिष्टैर्विष्टपपूजितैः ॥ ५८ ॥ एकोनविंशतिसह–स्राधिकं लक्षयोर्द्वयं। आढकानां षट्शतानि तौल्यमानं युगे जगुः २१९६०० ॥ ५९ ॥ चतुष्पंचाशच्छतानि भाराणां नवतिस्तथा ५४९० । मेयरूपतया मानं युगस्याहुर्मनीषिणः ॥ ६० ॥ चांद्रं वर्षं युगस्यादि–स्तस्यादिर्मास इष्यते। मासादिरसितः पक्ष–स्तस्यादिर्दिवसो भवेत् ॥ ६१ ॥ तत्रापि भरतक्षेत्रे क्षेत्रे चैरवताभिधे। युगस्यादिर्दिनस्यादौ विदेहेषु निशामुखे ॥ ६२ ॥

एक युगमां सडसठ नक्षत्रमास होय छे, बासठ चंद्रमास होय छे, एकसठ ऋतुमास होय छे, साठ सूर्यमास होय छे अने सत्तावन अभिवर्धितमास कहेला छे तथा उपर सात रात्रिदिवस, अग्यार मुहूर्त्त अने एक मुहूर्त्तना बासठीया त्रेवीश अंश. आ प्रमाणे एक युगमां जूदुं जूदुं मासनुं प्रमाण कहेलुं छे. (५५). एक युगना जेटला रात्रिदिवस (१८३०) उपर कह्या छे, तेने पोतपोताना मासना (अहोरात्ररूप) प्रमाणवडे भांगीए त्यारे ते युगना मासनी संख्या आवे छे. (५६). तथा एक युगमां दश अयन आवे छे, त्रीश ऋतुओ कहेली छे, साठ मास अने एक सो ने वीश पखवाडीया आवे छे. आ सूर्यवर्षना प्रमाणथी कहेलुं छे. (५७). जगतने पूज्य तीर्थंकरोए एक युगमां (१८३० अहोरात्रने ३०वडे गुणतां) चोपन हजार ने नव सो मुहूर्त्तो कहेलां छे (५४९००) (५८). एक युगमां तोलनुं प्रमाण बे लाख ओगणीश हजार ने छ सो आढक कह्युं छे (२१९६००). (५९) एक युगनुं मेयपणाए करीने प्रमाण करीए तो चोपन सो ने नेवुं भार (५४९०) थाय छे एम पंडितो कहे छे. (६०).

युगनो आरंभ चंद्रवर्षथी थाय छे, वर्षनो प्रारंभ मासथी थाय छे, मासना आरंभमां कृष्णपक्ष होय छे अने कृष्णपक्षमां प्रथम दिवस आवे छे (दिवसथी ते शरु थाय छे). (६१). तेमां पण भरत अने ऐरवत ए बे क्षेत्रमां दिवसनी आदिमां युगनो प्रारंभ थया

यदाषाढपौर्णमासी–रजन्याः समनन्तरं । प्रवर्त्तते युगस्यादि–र्भरतैरवता-ख्ययोः ॥ ६३ ॥ पूर्वापरविदेहेषु तदा च रजनीमुखं । ततो निशामुखादेव युगादिस्तत्र कीर्त्तितः ॥ ६४ ॥ किंच–रुद्रादयो मुहूर्त्ताः स्यु–रहोरात्रा दिनादयः । उक्ता जिनेंद्रैर्भरतै–रावताह्वयवर्षयोः ॥ ६५ ॥ महाविदेहेषु पुन–रहोरात्रा निशादयः । यतस्तत्र युगस्यादि–र्निशारंभात्प्रवर्त्तते ॥ ६६॥ तथोक्तं जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रे–' किमाई णं भंते संवच्छरा किमाइया अयणा किमाइया उऊ किमाइया मासा किमाइया पक्खा किमाइया अहोरत्ता किमाइया मुहुत्ता किमाइया करणा किमाइया नक्खत्ता? गोअमा! चंदाइया संवच्छरा, दक्खिणाइया अयणा, पाउसाइया उऊ, सावणाइया मासा, बहुलाइया पक्खा, दिवसाइया अहोरत्ता, रुद्दाइया मुहुत्ता, बा-लवाइया करणा, अभियाइया नक्खत्ता पन्नत्ता समणाउसो '

छे, अने महाविदेह क्षेत्रमां रात्रिना प्रारंभमां युगनी शरुआत थाय छे. (६२). ज्यारे अषाढ मासनी पूर्णिमानी रात्रि पूर्ण थाय त्यारे (श्रावण वदि १ आपणा अशाड वदि १) भरत अने ऐरवत क्षेत्रने विषे युगनी शरुआत थाय छे. (६३). आ वखते पूर्व अने पश्चिम बन्ने महाविदेह क्षेत्रने विषे रात्रिनो प्रारंभ होय छे, तेथी ते बन्ने क्षेत्रमां रात्रिना आरंभथी ज युगनी शरुआत कहेली छे. (६४). वळी रुद्र विगेरे मुहूर्त्तो अने अहोरात्रनी गणतरी भरत अने ऐरवत क्षेत्रमां दिवसना प्रारंभथी थाय छे, एम जिनेश्वरोए कह्युं छे. (६५). परंतु महाविदेह क्षेत्रमां रात्रिना प्रारंभथी अहोरात्रनी गणतरी थाय छे, केमके ते क्षेत्रमां रात्रिना प्रारंभथी युगनी शरुआत थाय छे. (६६). ते विषे जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिमां कह्युं छे के—" हे भगवान्! वर्षनो प्रारंभ क्यांथी थाय छे? अयननो आरंभ शेनाथी थाय छे? ऋतुनो आरंभ क्यारथी थाय छे? मासनो आरंभ क्यारथी थाय छे? पखवाडीयानो आरंभ क्यारथी थाय छे? अहोरात्रनो आरंभ क्यारथी थाय छे? मुहूर्त्तनो आरंभ क्यारथी थाय छे? करणनो आरंभ क्यारथी थाय छे? अने नक्षत्रनो आरंभ क्यारथी थाय छे?' (उत्तर) हे गौतम! वर्षनो आरंभ चंद्रथी (चांद्रवर्षथी) थाय छे, अयननो आरंभ दक्षिणायनथी थाय छे, ऋतुनो आरंभ वर्षाऋतुथी थाय छे, मासनो आरंभ श्रावणथी थाय छे, पखवाडीयानो आरंभ कृष्णपक्षथी थाय छे, अहोरात्रनो आरंभ दिवसथी थाय छे, मुहूर्त्तनो आरंभ रुद्रथी थाय छे, करणनो आरंभ बालवथी थाय छे, तथा हे आयुष्मन् श्रमण! नक्षत्रनो आरंभ अभिजितथी थाय छे."

श्रावणाऽसितपक्षस्य तिथेः प्रतिपदोऽपि च। बालवस्य करणस्य ऋक्षस्याभिजितस्तथा ॥ ६७ ॥ प्रथमे समये प्रोक्तो युगारंभश्चिदुत्तरैः। भरतैरावतमहा–विदेहेषु समं जिनैः ॥ ६८ ॥ तथोक्तं ज्योतिष्करंडे–सावणबहुलपडिवए बालवकरणे अभीइनक्खत्ते। सव्वत्थ पढमसमए जुगस्स आइं वियाणाहि ॥ ६९ ॥ इदं तु वाल्लभ्यवाचनानुगतं ज्ञेयं, ज्योतिष्करंडकर्त्तुर्वाल्लभ्यत्वात्, माथुरवाचनानुगतभगवत्यादिसूत्रेषु तु यस्मिन् समये मेरोर्दक्षिणोत्तरयोर्युगस्य प्रतिपत्तिस्ततोऽनंतरे द्वितीये समये मेरोः पूर्वापरयोर्युगस्य प्रतिपत्तिरित्यभिप्रायो दृश्यते, तथा च तद्ग्रंथः–जया णं भंते! जंबूद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ, तया णं उत्तरड्ढे वि वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ? जया णं उत्तरड्ढे वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ तया णं जंबूद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरच्छिमपच्चत्थिमेणं अणंतरपुरक्खडसमयंसि वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ? हंता गोयमा! जया णं जंबूद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ

श्रावण मासना कृष्णपक्षनी प्रतिपदा (एकम) ने दिवसे बालव नामना करणना अने अभिजित नक्षत्रना पहेले समये भरत, ऐरवत अने महाविदेह क्षेत्रमां एकीसाथे (वखते) उत्तम (केवळ) ज्ञानवाळा जिनेश्वरोए युगनो आरंभ कह्यो छे. (६७–६८). ते विषे ज्योतिष्करंडकमां कह्युं छे के—"श्रावण मासना कृष्णपक्षनी प्रतिपदाने दिवसे बालव करण अने अभिजित नक्षत्रना प्रथम समयने विषे सर्व क्षेत्रोमां युगनो प्रारंभ थाय छे एम जाणवुं. (६९). आ वल्लभीवाचनाने अनुसारे कह्युं छे एम जाणवुं, केमके ज्योतिष्करंडना कर्त्ता वल्लभी संप्रदायना हता; परंतु माथुरी वाचनाने अनुसरता भगवती विगेरे सूत्रोमां तो—"जे समये मेरुपर्वतनी उत्तर अने दक्षिणमां युगनो आरंभ थाय छे, तेनी पछीना बीजे समये मेरुनी पूर्व अने पश्चिममां युगनो आरंभ थाय छे." एवो अभिप्राय जोवामां आवे छे." ते विषे ते ग्रंथमां कह्युं छे के—"हे भगवान्! ज्यारे जंबूद्वीप नामना द्वीपमां दक्षिणार्धने विषे वर्षनो प्रथम समय अंगीकार कराय छे, ते ज वखते उत्तरार्धने विषे पण वर्षनो प्रथम समय अंगीकार कराय छे? अने ज्यारे उत्तरार्धने विषे वर्षनो प्रथम समय अंगीकार कराय छे, त्यारपछीना बीजा समये जंबूद्वीप नामना द्वीपमां मेरुपर्वतनी पूर्व अने पश्चिमने विषे (महाविदेह क्षेत्रने विषे) वर्षनो प्रथम समय अंगीकार कराय छे? उत्तर—हे गौतम! हा. ज्यारे जंबूद्वीप नामना द्वीपमां दक्षिणार्धने विषे वर्षनो पहेलो समय अंगीकार कराय छे, विगेरे ते ज प्रमाणे

तह चेव जाव पडिवज्जइ,एवं चावलिकादिसूत्रगर्भितं ऋतुत्रयसूत्रं अयनसूत्रं चाधीत्य जहा अयणेणं अभिलावो तहा संवच्छरेण वि भाणिअव्वो, जुएण वि वाससएण वि इत्यादि भूयान् सूत्रसंदर्भो भगवतीसूत्रादर्शाद्बोध्यः.

जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रेऽपि इदमेव सूत्रं "जहा पंचमसए पढमुद्देसए" इत्यतिदेशेन संगृहीतं बोद्धव्यं. अत्र च जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्तौ उ० श्रीशांतिचंद्रगणिभिरिहैवमुक्तं, युक्त्यानुकूल्यं तु युगपत्प्रतिपत्तिसमये संभावयामः, तथाहि–' सव्वे कालविसेसा सूरपमाणेण हुंति नायव्वा ' इति वचनाद्यदि सूर्यचारविशेषेण कालविशेषप्रतिपत्तिर्दक्षिणोत्तरयोराद्यसमये तर्हि दक्षिणोत्तरप्रतिपत्तिसमये पूर्वापरयोः पूर्वकालस्यापर्यवसानं वाच्यं, पूर्वापरविदेहापेक्षयास्त्येव तदिति चेत्सूर्ययोश्चीर्णचरणं अपरं वा सूर्यद्वयं वाच्यं, ययोश्चारविशेषाद्दक्षिणोत्तरप्रतिपत्तिसमयापेक्षयोत्तरसमये पूर्वापरयोः

कहेवुं. यावत् अंगीकार कराय छे." ए ज प्रमाणे आवलिका विगेरेना सूत्रथी गर्भित (सहित) त्रण ऋतुनुं सूत्र अने अयननुं सूत्र कहीने–" जेम अयननो आलावो छे तेम ज वर्षनो पण आलावो कहेवो. ते ज प्रमाणे युगनो तथा सो वर्षनो पण आलावो कहेवो." इत्यादिक घणां सूत्रोनो समूह भगवतीसूत्रना ग्रंथथी जाणवो.

जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्रमां पण " जेम पांचमा अंगना पांचमा शतकना पहेला उद्देशामां कह्युं छे तेम " ए प्रमाणे भलामण करीने आ ज सूत्र ग्रहण कर्युं छे एम जाणवुं. अहीं जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिनी टीकामां उपाध्याय श्री शांतिचंद्रगणिए कह्युं छे के–" अहीं आ प्रमाणे कह्युं छे, परंतु युक्तिनुं अनुकूळपणुं तो समकाळे प्रतिपत्ति (शरुआत) नो समय होय तेमां छे. एम अमे संभावना करीए छीए. कह्युं छे के–' सर्वे काळना विशेषो सूर्यना प्रमाणथी थाय छे एम जाणवुं. ' आवुं वचन होवाथी. जो सूर्यना चार[1] विशेषे करीने दक्षिण अने उत्तरमां काळ विशेषनो स्वीकार पहेले समये थतो होय तो दक्षिण अने उत्तरमां काळ विशेषना स्वीकारने समये पूर्व अने पश्चिममां पूर्वना काळनी असमाप्ति[2] कहेवी जोइए. कदाच कोइ कहे के–' पूर्व-पश्चिम महाविदेहनी अपेक्षाए तेम (पूर्व काळनी असमाप्ति) छे ज. तेनो उत्तर ए छे के–जो एम होय तो बे सूर्यनुं चीर्णचरण[3] कहेवुं जोइशे अथवा बीजा बे सूर्य कहेवा जोइशे, के तेमना जूदा प्रकारना चार (गति) थी दक्षिण अने उत्तरमां स्वीकारेला समयनी अपेक्षाए तेनी पछीना समये पूर्व-पश्चिममां काळ

१ अमुक प्रकारनी गतिए करीने. २ पूर्वना वर्षनो के युगनो छेल्लो समय कहेवो जोइए. ३ चारनी समाप्ति अने चारनी शरुआत.

कालविशेषप्रतिपत्तिरित्यादिको भूयान् परवचनावकाश इत्यलं प्रसंगेनेति।

वक्ष्यंते ये च कालांशाः सुषमसुषमादयः। आरंभं प्रतिपद्यंते सर्वे तेऽपि युगादितः॥ ७०॥ युगपर्यवसाने च ते यांति परिपूर्णतां। तस्मात्कालविशेषेषु युगं प्रागुदितं जिनैः॥ ७१॥ तदुक्तं ज्योतिष्करंडके एए कालविभागा पडिवज्जंते जुगंमि खलु सव्वे। पत्तेयं पत्तेयं जुगस्स अंते समप्पिंति॥ ७२॥ ज्योतिष्करंडटीकाकाराः पादलिप्तसूरयोऽप्याहुः- एए उ सुसमसुसमादयो अद्धाविसेसा जुगाइणा सह पवत्तंते जुगंतेण सह समप्पिंति।

अथ वक्ष्ये प्रतियुग-मयनानि यथागमं। आवृत्तीः सूर्यशशिनो-स्तत्तिथीनुडुभिस्सह॥ ७३॥ स्वरूपमृतुमासानां तिथीनां चावमस्य च। नक्षत्राणि यथायोग-मेतेषां करणान्यपि॥ ७४॥ युगे युगेऽयनानि स्यु-र्भानोर्दश दश ध्रुवं। तदेकैकमहोरात्र-सत्र्यशीतिशतात्मकं॥ ७५॥ प्रत्ययः क इहात्रेति यदि शुश्रूष्यते त्वया। त्रैराशिकं तदात्रेदं श्रूयतां

विशेषनो (वर्षना आरंभनो) स्वीकार थइ शके. " इत्यादिक घणा प्रकारे अन्य अन्य विद्वानोना वचन (प्रश्नोत्तर) नो अवकाश रहे छे; माटे आ प्रसंगे करीने सर्यु. "

आगळ उपर सुषमसुषम विगेरे जे काळना अंशो कहेवामां आवशे, ते सर्वेनो युगनी शरुआतथी ज प्रारंभ थाय छे. अने युगने अंते तेओ पूर्णताने पामे छे, तेथी सर्व काळ विशेषोने विषे सौथी पहेलां जिनेश्वरोए युगनुं प्रमाण बताव्युं छे. (७०-७१). ते बाबत ज्योतिष्करंडकमां कह्युं छे के—आ सर्व काळना विभागो प्रत्येक प्रत्येक युगना प्रारंभने आश्रीने ज अंगीकार कराय छे (प्रारंभ थाय छे) अने युगने अंते ज समाप्त थाय छे. (७२). ज्योतिष्करंडकना टीकाकार श्री पादलिप्तसूरिमहाराज पण कहे छे के— आ सुषमसुषम विगेरे काळ विशेषो युगना आरंभनी साथे ज प्रवर्ते छे अने युगना अंतनी साथे ज समाप्त थाय छे.

हवे आगममां कह्या प्रमाणे दरेक युगना अयनो, सूर्य अने चंद्रनी आवृत्ति, नक्षत्रनी साथे तेनी तिथिओ, ऋतुमासनुं स्वरूप, तिथिनुं स्वरूप, क्षय तिथिनुं स्वरूप, नक्षत्रो अने तेना संयोगथी थतां करणोने हुं कहीश. (७३-७४). दरेक युगमां सूर्यना दश-दश अयनो होय छे. ते दरेक अयनमां एक सो ने त्र्याशी अहोरात्र होय छे. (७५). आ बाबतनी शी खात्री ? एम कहीने हे मित्र ! जो तारे सांभळवानी इच्छा होय तो आ

तह चेव जाव पडिवज्जइ,एवं आवलिकादिसूत्रगर्भितं ऋतुत्रयसूत्रं अयनसूत्रं चाधीत्य जहा अयणेणं अभिलावो तहा संवच्छरेण वि भाणिअव्वो, जुगेण वि वाससएण वि इत्यादि भूयान् सूत्रसंदर्भो भगवतीसूत्रादवसेयः.

जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रेऽपि इदमेव सूत्रं "जहा पंचमसए पढमुद्देसए" इत्यतिदेशेन संगृहीतं बोद्धव्यं. अत्र च जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्तौ उ० श्रीशांतिचंद्रगणिभिरिहैवमुक्तं, युक्त्यानुकूल्यं तु युगपत्प्रतिपत्तिसमये संभावयामः, तथाहि–'सव्वे कालविसेसा सूरपमाणेण हुंति नायव्वा' इति वचनाद्यदि सूर्यचारविशेषेण कालविशेषप्रतिपत्तिर्दक्षिणोत्तरयोराद्यसमये तर्हि दक्षिणोत्तरप्रतिपत्तिसमये पूर्वापरयोः पूर्वकालस्यापर्यवसानं वाच्यं, पूर्वापरविदेहापेक्षयास्त्येव तदिति चेत्सूर्ययोश्चीर्णचरणं अपरं वा सूर्यद्वयं वाच्यं, ययोश्चारविशेषाद्दक्षिणोत्तरप्रतिपत्तिसमयापेक्षयोत्तरसमये पूर्वापरयोः

कहेवुं. यावत् अंगीकार कराय छे." ए ज प्रमाणे आवलिका विगेरेना सूत्रथी गर्भित (सहित) त्रण ऋतुनुं सूत्र अने अयननुं सूत्र कहीने—"जेम अयननो आलावो छे तेम ज वर्षनो पण आलावो कहेवो. ते ज प्रमाणे युगनो तथा सो वर्षनो पण आलावो कहेवो." इत्यादिक घणां सूत्रोनो समूह भगवतीसूत्रना ग्रंथथी जाणवो.

जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्रमां पण "जेम पांचमा अंगना पांचमा शतकना पहेला उद्देशामां कह्युं छे तेम" ए प्रमाणे भलामण करीने आ ज सूत्र ग्रहण कर्युं छे एम जाणवुं. अहीं जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिनी टीकामां उपाध्याय श्री शांतिचंद्रगणिए कह्युं छे के—"अहीं आ प्रमाणे कह्युं छे, परंतु युक्तिनुं अनुकूळपणुं तो समकाळे प्रतिपत्ति (शरुआत) नो समय होय तेमां छे. एम अमे संभावना करीए छीए. कह्युं छे के–'सर्वे काळना विशेषो सूर्यना प्रमाणथी थाय छे एम जाणवुं.' आवुं वचन होवाथी. जो सूर्यना चार विशेषे करीने दक्षिण अने उत्तरमां काळ विशेषनो स्वीकार पहेले समये थतो होय तो दक्षिण अने उत्तरमां काळ विशेषना स्वीकारने समये पूर्व अने पश्चिममां पूर्वना काळनी असमाप्ति कहेवी जोइए. कदाच कोइ कहे के—'पूर्व-पश्चिम महाविदेहनी अपेक्षाए तेम (पूर्व काळनी असमाप्ति) छे ज. तेनो उत्तर ए छे के—जो एम होय तो बे सूर्यनुं चीर्णचरण कहेवुं जोइशे अथवा बीजा बे सूर्य कहेवा जोइशे, के तेमना जूदा प्रकारना चार (गति) थी दक्षिण अने उत्तरमां स्वीकारेला समयनी अपेक्षाए तेनी पछीना समये पूर्व-पश्चिममां काळ

---

१ अमुक प्रकारनी गतिए करीने. २ पूर्वना वर्षनो के युगनो छेल्लो समय कहेवो जोइए. ३ चारनी समाप्ति अने चारनी शरुआत.

कालविशेषप्रतिपत्तिरित्यादिको भूयान् परवचनावकाश इत्यलं प्रसंगेनेति।

वक्ष्यंते ये च कालांशाः सुषमसुषमादयः। आरंभं प्रतिपद्यंते सर्वे तेऽपि युगादितः॥ ७०॥ युगपर्यवसाने च ते यांति परिपूर्णतां। तस्मात्कालविशेषेषु युगं प्रागुदितं जिनैः॥ ७१॥ तदुक्तं ज्योतिष्करंडके एए कालविभागा पडिवज्जंते जुगंमि खलु सव्वे। पत्तेयं पत्तेयं जुगस्स अंते समप्पिंति॥ ७२॥ ज्योतिष्करंडटीकाकाराः पादलिप्तसूरयोऽप्याहुः- एए उ सुसमसुसमादयो अद्धाविसेसा जुगाइणा सह पवत्तंते जुगंतेण सह समप्पिंति।

अथ वक्ष्ये प्रतियुग–मयनानि यथागमं। आवृत्तीः सूर्यशशिनो–स्तत्तिथीनुडुभिस्सह॥ ७३॥ स्वरूपमृतुमासानां तिथीनां चावमस्य च। नक्षत्राणि यथायोग–मेतेषां करणान्यपि॥ ७४॥ युगे युगेऽयनानि स्यु–र्भानोर्दश दश ध्रुवं। तदेकैकमहोरात्र–सत्र्यशीतिशतात्मकं॥ ७५॥ प्रत्ययः क इहात्रेति यदि शुश्रूष्यते त्वया। त्रैराशिकं तदात्रेदं श्रूयतां

विशेषनो (वर्षना आरंभनो) स्वीकार थइ शके." इत्यादिक घणा प्रकारे अन्य अन्य विद्वानोना वचन (प्रश्नोत्तर) नो अवकाश रहे छे; माटे आ प्रसंगे करीने सर्युं."

आगळ उपर सुषमसुषम विगेरे जे काळना अंशो कहेवामां आवशे, ते सर्वेनो युगनी शरुआतथी ज प्रारंभ थाय छे. अने युगने अंते तेओ पूर्णताने पामे छे, तेथी सर्व काळ विशेषोने विषे सौथी पहेलां जिनेश्वरोए युगनुं प्रमाण बताव्युं छे. (७०–७१). ते बाबत ज्योतिष्करंडकमां कह्युं छे के—आ सर्व काळना विभागो प्रत्येक प्रत्येक युगना प्रारंभने आश्रीने ज अंगीकार कराय छे (प्रारंभ थाय छे) अने युगने अंते ज समाप्त थाय छे. (७२). ज्योतिष्करंडकना टीकाकार श्री पादलिप्तसूरिमहाराज पण कहे छे के—आ सुषमसुषम विगेरे काळ विशेषो युगना आरंभनी साथे ज प्रवर्ते छे अने युगना अंतनी साथे ज समाप्त थाय छे.

हवे आगममां कह्या प्रमाणे दरेक युगना अयनो, सूर्य अने चंद्रनी आवृत्ति, नक्षत्रनी साथे तेनी तिथिओ, ऋतुमासनुं स्वरूप, तिथिनुं स्वरूप, क्षय तिथिनुं स्वरूप, नक्षत्रो अने तेना संयोगथी थतां करणोने हुं कहीश. (७३–७४). दरेक युगमां सूर्यना दश–दश अयनो होय छे. ते दरेक अयनमां एक सो ने त्याशी अहोरात्र होय छे. (७५). आ बाबतनी शी खात्री ? एम कहीने हे मित्र ! जो तारे सांभळवानी इच्छा होय तो आ

मित्र दर्श्यते ॥ ७६ ॥ अष्टादशशतास्त्रिंशा अयनैर्दशभिर्यदि । अहोरात्रा-स्तदैकेना–यनेन किं लभामहे ॥ ७७ ॥ अत्रांत्येनैकरूपेण राशिना गुणितः स्थितः । तथैव मध्यमो राशि–रेकेन गुणितं हि तत् ॥ ७८ ॥ ततो दशकरूपेण हृतेऽस्मिन्नाद्यराशिना । अहोरात्रशतं लब्धं सत्र्यशीति यथोदितं ॥ ७९ ॥ मंडलानामपि शतं सत्र्यशीति चरेद्रविः । एकैकं प्रत्यहोरात्रं पूरयन्नयनेऽयने ॥ ८० ॥ सर्वांतरानंतरे य–न्मंडले दक्षिणा-यनं । आरभ्यते पूर्यते त–त्सर्वबाह्ये च मंडले ॥ ८१ ॥ सर्वबाह्यानंतरे च मंडलेऽथोत्तरायणं । आरभ्यते पूर्यते त–त्सर्वाभ्यंतरमंडले ॥ ८२ ॥

अथ सूर्यायनज्ञान–विषये करणं ब्रुवे । यतोऽतीतवर्त्तमाना–यनज्ञानं सुखं भवेत् ॥ ८३ ॥ राकामावास्यारूपाणि प्राग्विवक्षितवासरात् । तानि पंचदशघ्नानि कर्त्तव्यानि ततोऽत्र च ॥ ८४ ॥ अतीतास्तिथयः क्षेप्या वर्त्तमानस्य पर्वणः । पात्यंतेऽवमरात्राश्च युगादारभ्य ये गताः ॥ ८५ ॥

त्रिराशिने तुं सांभळ. हुं कहुं छुं. (७६) जो दश अयनना अढार सो ने त्रीश अहोरात्र छे तो एक अयनना केटला अहोरात्र पामीए (थाय) ? (७७). उत्तर—अहीं छेल्ला एकरूप राशिवडे मध्यम राशिने (१८३० ने) गुणवाथी तेटलो ज राशि रहे छे, केमके एकवडे जेने गुणवामां आवे ते तेटलुं ज रहे छे. (७८). त्यारपछी (१८३० ने) दशरूप पहेला राशिवडे भांगाकार करवाथी उपर कह्या प्रमाणे एक सो ने त्र्याशी (१८३) अहोरात्र आवे छे. (७६), सूर्यनी गतिना एक सो ने त्र्याशी मांडला होय छे. तेमां दरेक अय-नमां सूर्य गतिवडे हमेशां एक एक मांडलुं पूरुं करे छे. (८०) सर्व आभ्यंतर (अंदरना) मांडलानी पछीना मांडलामां ज्यारे सूर्य चाले छे त्यारे दक्षिणायननो आरंभ थाय छे, अने सर्वथी बहारना (छेल्ला) मांडलामां ज्यारे सूर्य चाले छे त्यारे ते दक्षिणायन पूर्ण थाय छे (८१). ए ज रीते सर्व बाह्य मांडलानी पछीना मांडलामां सूर्य चालतो होय त्यारे उत्तरायणनो आरंभ थाय छे, अने सर्व आभ्यंतर मांडलामां ज्यारे गति करतो होय त्यारे ते उत्तरायण पूर्ण थाय छे. (८२).

हवे सूर्यना अयनने जाणवानी रीत कहुं छुं, के जेथी वीती गयेला अने वर्तता अयननुं ज्ञान सुखे करीने थइ शके छे. (८३). ते आ प्रमाणे.–कहेवाने इच्छेला दिवसनी पहेलां जेटली पूर्णिमा अने अमावास्या व्यतीत थइ होय, तेने पंदरे गुणवा. पछी तेमां चालता पर्वनी जेटलामी तिथिए पूछ्युं होय तेटली तिथिओ नांखवी. पछी युगनी शरुआतथी अत्यार सुधीमां जेटली क्षय तिथिओ गइ होय तेटली तेमांथी बाद करवी. (८५).

राशौ तस्मिंस्ततो भक्ते–सत्र्यशीतिशतेन यत् । लब्धमेकद्व्यादिरूपं तत्संस्थाप्य विचिंत्यते ॥ ८६ ॥ लब्धः समोंको यदि त–द्व्यतीत-मुत्तरायणं । विषमोंकोऽथ लब्धश्चे–त्तद्गतं दक्षिणायनं ॥ ८७ ॥ अंशास्तु ये पूर्वराशौ भागशेषा अवस्थिताः । ते तत्कालं प्रवृत्तस्या–यनस्य दिवसाः किल ॥ ८८ ॥

युगमध्ये यथा कश्चि–न्नवमासव्यतिक्रमे । जनः पृच्छति पंचम्यां किमद्यायनमस्ति भोः ॥ ८९ ॥ अनंतरं च कतर–द्व्यतीतमिति तत्र च । पूर्वोक्तविधिना प्राज्ञो दद्यादित्येवमुत्तरं ॥ ९० ॥ नवानां ननु मासानां पर्वाण्यष्टादशागमन् । तानि पंचदशघ्नानि द्वौ शतौ स्तः ससप्तती ॥ ९१ ॥ पंचम्यां पृष्टमिति च क्षिप्यते तत्र पंचकं । पंचसप्ततिसंयुक्ते संजाते द्वे शते ततः ॥९२॥ नवमास्यां च चत्वारो–ऽवमरात्रा भवंति ये । ते त्यज्यंते ततो जातौ द्वौ शतौ सैकसप्तती॥ ९३ ॥ अस्य राशेः सत्र्यशी-ति–शतेन भजने सति । लब्धमेकं रूपमष्टा–शीतिः शेषावतिष्ठते ॥ ९४॥

पछी ते राशिने एक सो ने त्र्याशीए भागतां जे एक बे विगेरे लाधे (भागमां आवे) तेने स्थापीने आ प्रमाणे विचारवुं.–जो भागमां सम (बेकी) अंक आव्यो होय तो उत्तरायन वीती गयुं छे, अने जो विषम (एकी) अंक आव्यो होय तो दक्षिणायन वीती गयुं छे एम जाणवुं. (८७). पूर्वनी राशिमां जे शेष अंशो रह्या होय, तेटला ते काळे चालता अयनना दिवसो जाणवा. (८८).

जेमके युगने मध्ये नव मास वीती गया पछी पांचमने दिवसे कोइ प्रश्न करे के–' अरे ! आजे कयुं अयन छे ? अने कयुं व्यतीत थयुं छे ? ' आ प्रश्न उपर विद्वाने पूर्वे कहेला विधि प्रमाणे आ रीते उत्तर आपवो. (९०). नव मासमां अढार पर्वो[1] वीती गया छे तेथी अढारने पंदरे गुणतां बसो ने सीतेर थाय छे. (२७०). (९१). पांचमने दिवसे प्रश्न कर्यो छे तेथी तेमां पांच उमेरतां बसो ने पंचोतेर (२७५) थाय छे. (९२). पछी नव मासमां चार क्षय तिथिओ आवे छे तेथी तेमांथी चार बाद करतां बाकी बसो ने एकोतेर (२७१) रहे छे. (९३). पछी आ राशिने एक सो ने त्र्याशीए भागतां भागमां एक आवे छे, अने अठ्याशी शेष रहे छे. (९४).

---

१. पूर्णिमा अने अमावास्या.

ततश्चातीतमयन–मेकं तदपि दक्षिणं । सांप्रतं वर्त्तमानं च गण्यतामुत्तरायणं ॥ ६५ ॥ तस्याप्यष्टाशीतितमं सांप्रतं वर्त्तते दिनं । द्वितीयोऽप्यत्र दृष्टांतो दर्श्यते गुरुदर्शिनः ॥ ६६ ॥ पंचविंशतिमासानि–क्रमे केनापि पृच्छ्यते। दशम्यामयनं किं भो वर्त्ततेऽथ गतं च किं ॥ ६७ ॥ पंचाशद्यानि पर्वाणि मासेषु पंचविंशतौ । तानि पंचदशघ्नानि पंचाशा सप्तशत्यभूत् ॥ ६८ ॥ दशम्यां पृष्टमिति च क्षिप्यंते दश तेन च । शतानि सप्त जातानि षष्ट्याढ्यानि ततः परं ॥ ६९ ॥ द्वादशावमरात्राः स्यु–र्मासेषु पंचविंशतौ । तेषु त्यक्तेष्वष्टचत्वा–रिंशा सप्तशती भवेत् ॥ ५०० ॥ सऽयशीतिशतेनास्य राशेर्विभजने सति । चत्वार एव लभ्यंते शेषास्तिष्ठंति षोडश ॥ १ ॥ गतानि चत्वार्ययना–न्यतीतं यदनंतरं । तदुत्तरायणं दक्षि–णायनं त्वस्ति सांप्रतं ॥ २ ॥ षोडशो दिवसस्तस्या–प्यधुना खलु वर्त्तते । एवमन्यत्रापि भाव्यं करणं ज्ञैर्यथोचितं ॥ ३ ॥

युगे युगे चतुस्त्रिंश–मयनानां शतं विधोः । तच्चैकैकं भचक्रार्द्धभोग-

---

तेथी एक अयन व्यतीत थयुं, ते पण दक्षिणायन व्यतीत थयुं, अने हमणां बीजुं एटले उत्तरायण वर्त्ते छे एम जाणवुं. (९५). ते उत्तरायणनो पण आजे अठ्याशीमो दिवस वर्ते छे एम सिद्ध थयुं. हवे गुरुनुं देखाडेलुं बीजुं पण उदाहरण देखाडे छे. (६६).–पचीश मास गया पछी दशमने दिवसे कोइए प्रश्न कर्यो के–अरे! आजे कयुं अयन वर्ते छे? अने कयुं अयन वीती गयुं छे? (६७). उत्तर–पचीश मासमां जे पचास पर्वो वीती गया, तेने पंदरे गुणतां सात सो ने पचास (७५०) थया. (६८). तेमां दशमने दिवसे पूछयुं छे माटे दश नांखवाथी सात सो ने साठ (७६०) थया. (६९). त्यारपछी पचीश मासमां बार क्षय तिथिओ आवे छे, तेथी तेमांथी बार बाद करतां सात सो ने अडताळीश (७४८) बाकी रहे छे. (५००) पछी आ राशिने एक सो ने ञ्याशीए भांगतां भागमां चार आवे छे, अने सोळ बाकी वधे छे. (१). तेथी चार अयन वीती गयां, तेमां पण जे हमणां छेल्लुं (चोथुं) व्यतीत थयुं ते उत्तरायण अने अत्यारे जे वर्ते छे ते दक्षिणायन. (२). ते दक्षिणायननो पण आजे सोळमो दिवस वर्ते छे. आ रीते बीजे स्थळे पण पंडितोए उचितता प्रमाणे जाणवुं. (३).

हवे एक एक युगमां एक सो ने चोत्रीश (१३४) चंद्रना अयनो आवे छे. ते अयननुं

मानमिहोदितं ॥ ४ ॥ सर्वर्क्षभोगकालो हि विधोः संकलितो भवेत् । सप्तविंशतिरेवाहो–रात्राः पूर्णास्तथोपरि ॥ ५ ॥ सप्तषष्टिविभक्ताहो–रात्रांशाश्चैकविंशतिः । भमासोऽप्ययमेवेंदो–रुदग्याम्यायनात्मकः ॥ ६ ॥ सप्तषष्टिविभक्ताहो–रात्रांशानां भवेदिह । भमासस्त्रिंशदधिकै–रष्टादशमितैः शतैः ॥ ७ ॥ ईदृशाश्च भमासाः स्युः सप्तषष्टिर्युगे युगे । एकैकस्मिन् भमासे च स्यादिंदोरयनद्वयं ॥ ८ ॥ युक्तं ततश्चतुस्त्रिंश–मयनानां शतं युगे । एकैकस्यायनस्याथ मानं व्यक्त्या निशम्यतां ॥ ९ ॥

चरेत्प्रत्ययनं चंद्रो मंडलानि त्रयोदश । चतुश्चत्वारिंशदंशां–श्चैकस्य सप्तषष्टिजान् ॥ १० ॥ ततश्च—त्रयोदशैवाहोरात्रा भागाश्च सप्तषष्टिजाः । चतुश्चत्वारिंशदहो–रात्रस्यायनमैंदवं ॥ ११ ॥ यद्वा—सप्तषष्टिभवैः पंच–दशाढ्यैर्नवभिः शतैः । अहोरात्रस्य भागैः स्या–द्भमासार्द्धं सुनिश्चितं ॥ १२ ॥ चंद्रस्यैकैकमयन–मेतन्मानं निरूपितं । त्रैराशिकबलेनात्र प्रत्ययोऽपि निरूप्यते ॥ १३ ॥ चतुस्त्रिंशेनायनानां शतेन तुहिन-

---

एक एक नक्षत्रचक्रना अर्ध भागने भोगववा जेटलुं प्रमाण अहीं कह्युं छे. (४). कारण के चंद्र सर्व नक्षत्रचक्रने भोगवे त्यारे कुल सतावीश अहोरात्र पूर्ण अने उपर एक अहोरात्रना सडसठीया एकवीश अंश (२७ $\frac{२१}{६७}$) आटलो वखत लागे छे. चंद्रना उत्तरायण अने दक्षिणायन स्वरूपवाळो आटलो ज नक्षत्रमास पण छे. (६). आवा नक्षत्रमासना सर्व अहोरात्रना अंशो करवा होय तो सतावीशने सडसठे गुणी तेमां एकवीश अंश उमेरवा; तेथी सडसठीया अढार सो ने त्रीश (१८३०) अंशो थाय छे. (७). आवा नक्षत्रना मास एक एक युगमां सडसठ थाय छे, अने एक एक नक्षत्र मासमां चंद्रना बचे अयन होय छे. (८). तेथी करीने एक युगमां कुल एक सो चोत्रीश अयन होय छे, ते योग्य ज छे हवे एक एक अयननुं प्रमाण स्पष्ट रीते कहुं छुं ते सांभळो–(९). चंद्र एक एक अयनमां तेर मांडला अने उपर एक मांडलाना सडसठीया चुमाळीश अंश (१३ $\frac{४४}{६७}$) आटलुं क्षेत्र चाले छे (ओळंगे छे). (१०) तेथी करीने चंद्रना एक अयनमां तेर अहोरात्र अने उपर एक अहोरात्रना सडसठीया चुमाळीश अंश (१३ $\frac{४४}{६७}$) आटलो वखत लागे छे. (११). अथवा तो अर्ध नक्षत्रमासनुं प्रमाण एक अहोरात्रना सडसठ भाग करीए तेवा नव सो ने पंदर (९१५) भाग ज आवे छे. (१२). तेटलुं ज एक एक चंद्र अयननुं प्रमाण कहेलुं छे. आ बाबतनी खात्रीने माटे त्रिराशिनी रीत पण बतावे छे–(१३).

द्युतेः। प्राप्तान्यष्टादश त्रिंशान्यहोरात्रशतानि चेत् ॥ १४ ॥ तदैकेनायने-नेंदो-र्लभ्यते किमिति त्रिषु। अंत्येनैकेन गुणितो मध्यराशिस्तथा स्थितः ॥ १५ ॥ आद्येन च चतुस्त्रिंश-शतरूपेण राशिना। मध्यराशौ हृते लब्धा अहोरात्रास्त्रयोदश ॥ १६ ॥ अष्टाशीतिः शिष्यते सा सप्तषष्ट्या निहन्यते। अष्टापंचाशच्छतानि स्युः षण्णवतिरथ ॥१७॥ चतुस्त्रिंशशतेनैषां हृते भागे यथोदिताः। चतुश्चत्वारिंशदंशाः संप्राप्ताः सप्तषष्टिजाः ॥ १८ ॥ अत्र चंद्रायणज्ञानविषये करणादिनिरूपणं तु क्षेत्रलोके विंशतितमे सर्गे कृतमस्तीति ततो ज्ञेयं.

अयनानि दशार्कस्य चतुस्त्रिंशं शतं विधोः। युगे युगे स्युर्यत्तत्र त्रैराशिकमथोच्यते ॥ १९ ॥ सत्र्यशीतिशतेनाहो-रात्राणामयनं रवेः। स्याच्चेदेकं तदा त्रिंशैः किमष्टादशभिः शतैः ॥ २० ॥ त्रैराशिक स्थापना १८३-१-१८३० अंत्येन राशिना राशा-वेकरूपेऽत्र मध्यमे। गुणिते स्युः शतान्यष्टा-दश त्रिंशद्युतान्यथ ॥ २१ ॥ आद्येन राशिना भागे सत्र्यशीतिशतात्मना। लब्धा दशैतावंत्येवा-यनानि स्युर्युगे

चंद्रना एक सो चोत्रीश अयनना अढार सो ने त्रीश अहोरात्र थाय छे, तो चंद्रना एक अयनना केटला अहोरात्र थाय ? उत्तर-आ त्रण राशिमांना छेल्ला एक राशिवडे मध्यना (१८३०) राशिनो गुणाकार करीए त्यारे ते मध्य राशि तेटलो ने तेटलो ज रहे छे. पछी पहेलो राशि जे एक सो ने चोत्रीश छे तेणे करीने मध्य राशि (१८३०) ने भागवाथी भागमां तेर अहोरात्र आव्या. बाकी शेष जे अठ्याशी रह्या तेने सडसठे गुणवाथी अठ्ठावन सो ने छन्नु (५८९६) थाय छे. तेने एक सो ने चोत्रीशे (१३४) भांगवाथी उपर कह्या प्रमाणे सडसठीया चुमाळीश अंश आवे छे. (१८). अहीं चंद्रायणना ज्ञान माटे रीत विगेरेनुं कथन क्षेत्रलोकना वीशमा सर्गमां कर्युं छे, त्यांथी ज जाणी लेवुं.

हवे दरेक युगमां सूर्यना दश अयनो आवे छे अने चंद्रना एक सो ने चोत्रीश अयनो आवे छे, तेनी स्पष्टता माटे त्रिराशि बतावे छे. (१९). एक सो ने त्र्याशी अहोरात्रवडे सूर्यनुं एक अयन थाय छे, तो अढार सो ने त्रीश अहोरात्रवडे केटला अयन थाय ? (२०). त्रिराशिनी स्थापना-१८३-१-१८३०. उत्तर-अहीं छेल्ला राशिने मध्यना एक राशिवडे गुणतां तेटला ज अढार सो ने त्रीश (१८३०) थाय छे, तेने एक सो ने त्र्याशी (१८३) रूप पहेला राशिवडे भांगाकार करवाथी भागमां दश प्राप्त थया; तेथी एक युगमां सूर्यना दश

रवेः ॥ २२ ॥ सप्तषष्ट्युद्भवचतु-श्चत्वारिंशल्लवाधिकैः। त्रयोदशभिरेकं चे-दहोरात्रैः किलायनं ॥ २३ ॥ त्रिंशैस्तदाष्टादशभि-रहोरात्रशतैर्विधोः। अय-नानि कियंति स्यु-रिति राशित्रयं लिखेत् ॥ २४॥ राशित्रयस्थापना—१३ $\frac{४४}{६७}$ —१—१८३० सावर्ण्यार्थमाद्यराशा-वहोरात्रास्त्रयोदश । सप्तषष्ट्या निहृ-त्यांशाः क्षिप्यंते संति येऽधिकाः॥ २५॥ जाता नवशती पंच-दशोपेताथ संति ये । अष्टादश शतास्त्रिंशाः सप्तषष्ट्यैव तेऽपि च ॥ २६ ॥ सवर्णनार्थं ताड्यंते लक्षमेकं भवेत्ततः । द्वाविंशतिः सहस्राणि षट्शती च दशो-त्तरा ॥ २७ ॥ अंत्येन राशिनाथैवं-रूपेण मध्यमो हतः । नूनमेकात्मको राशि-र्गुणकेन समोऽभवत् ॥ २८ ॥ ततोऽस्मिन्नवभिः पंच-दशोपेतैः शतैर्हृते । चतुस्त्रिंशं शतं लब्ध-मयनानां युगे विधोः ॥ २९ ॥

अथायनारंभरूपा भवंत्यावृत्तयो दश। तत्र स्युः श्रावणे पंच पंच माघे विवस्वतः ॥३०॥ याम्यायनारंभरूपाः पंच ताः श्रावणे स्मृताः। तथोत्तरा-यणारंभ-रूपा माघे च पंच ताः ॥३१॥ आद्यावृत्तिः श्रावणाद्य-प्रतिपद्य-

---

अयनो आवे छे एम सिद्ध थयुं. (२१-२२). हवे जो तेर अहोरात्र अने उपर एक अहोरात्रना सडसठीया चुमाळीश अंशो (१३ $\frac{४४}{६७}$) वडे चंद्रनुं एक अयन थाय छे. तो अढार सो ने त्रीश (१८३०) अहोरात्रवडे चंद्रना केटला अयनो थाय ? तेनी त्रिराशि लखवी. (२४). त्रिराशिनी स्थापना—१३ $\frac{४४}{६७}$-१-१८३०. अहीं समान अंक लाववा माटे पहेली राशिमां जे तेर छे, तेने सडसठे गुणीने तेमां जे चुमाळीश अंश अधिक छे, ते नांखवा. तेथी नव सो ने पंदर (९१५) थाय. हवे जे अढार सो ने त्रीशनी राशि छे, तेने पण सवर्ण करवा माटे सडसठे गुणवा, तेथी एक लाख बावीश हजार छ सो ने दश (१२२६१०) थाय छे. पछी आ अंत्य राशिनो मध्यना एक राशिवडे गुणाकार करवो, तेथी एकवडे गुणवाथी ते ज राशि आवे छे. पछी ते (१२२६१०) राशिने नव सो ने पंदरे (९१५) भाग देवो; तेथी एक युगमां चंद्रना अयनो एक सो ने चोत्रीश (१३४) आवे छे. (२९).

हवे अयनना आरंभरूप सूर्यनी आवृत्ति एक युगमां दश वखत थाय छे (केम के एक युगमां दश अयन आवे छे अने एक अयनमां सर्व मांडलाने विषे सूर्य एक वार फरी वळे छे एटले एक आवृत्ति करे छे; तेथी एक युगमां सूर्यनी दश आवृत्ति थाय छे.) तेमां श्रावण मासमां सूर्यनी पांच आवृत्ति अने माघ मासमां पांच आवृत्ति थाय छे (आ रीते दश आवृत्ति थइ). (३०). तेमां श्रावण मासमां दक्षिणायनना आरंभवाळी पांच आवृत्तिओ कही छे, अने माघ मासमां उत्तरायणना आरंभवाळी पांच आवृत्ति कही छे. (३१). पहेली आवृत्ति

भिजियुता । माघस्य श्यामसप्तम्यां द्वितीया हस्तसंयुता ॥३२॥ तृतीया स्यान्नभःकृष्ण–त्रयोदश्यां मृगान्विता । चतुर्थी शुक्लतुर्यायां माघे शतभिषग्युता ॥ ३३ ॥ विशाखायुग्नभःश्वेत--दशम्यां पंचमी भवेत् । षष्ठी माघे प्रतिपदि श्यामायां पुष्यशालिनी ॥३४॥ सप्तमी कृष्णसप्तम्यां श्रावणे रेवतीयुता । माघे कृष्णत्रयोदश्या--मष्टमी मूलसंयुता ॥३५॥ नभश्चतुर्थ्यां शुक्लायां नवमी योनिदेवयुग् । माघकृष्णत्रयोदश्यां दशमी कृत्तिकांचिता ॥ ३६ ॥

अथात्र करणं—विशिष्टतिथियुक्ता या ह्यावृत्तिर्ज्ञातुमिष्यते । गुण्यते तत्संख्ययैको–नया त्र्यशीतियुक् शतं ॥ ३७ ॥ अंकस्थानेन गुणितं येन त्र्यशीतियुक्शतं । त्रिघ्नं रूपेणाधिकं त–द्राशौ जाते नियोजयेत् ॥ ३८ ॥ ततश्च पंचदशभि--र्हृते भागे यदाप्यते । गतेष्वेतावत्सु पर्वस्वावृत्तिः सा विवक्षिता ॥ ३९ ॥ पश्चादुद्धरिता यैका–स्तावत्सु दिवसे-

---

श्रावण मासनी शरुआतमां प्रतिपदाने दिवसे अभिजित नक्षत्रना योगमां थाय छे, बीजी आवृत्ति हस्त नक्षत्रना योगे माघ वद सातमे थाय छे. (३२). त्रीजी आवृत्ति श्रावण वद तेरशने दिवसे मृगशिर नक्षत्रना योगे थाय छे, चोथी आवृत्ति माघ शुदी त्रीजने[1] दिवसे शतभिषा नक्षत्रना योगे थाय छे. (३३). पांचमी आवृत्ति श्रावण शुदी दशमे[2] विशाखा नक्षत्रना योगे थाय छे, छट्ठी आवृत्ति माघ वद प्रतिपदाए पुष्य नक्षत्रना योगे थाय छे. (३४). सातमी आवृत्ति श्रावण वद सातमे रेवती नक्षत्रना योगे थाय छे, आठमी आवृत्ति माघ वद तेरशे मूल नक्षत्रना योगे थाय छे. (३५). नवमी आवृत्ति श्रावण शुद चोथने दिवसे योनिदेव (पूर्वाफाल्गुनी) नक्षत्रना योगे थाय छे, अने दशमी आवृत्ति माघ वद तेरशे[3] कृत्तिका नक्षत्रना योगे थाय छे. (३६). आ जाणवानी रीत बतावे छे.—

कोइपण आवृत्ति कइ तिथिए आवे छे ? ते जाणवानी इच्छा थाय, त्यारे ते आवृत्तिनी संख्यामांथी एक बाद करवो. जे अंक शेष रह्यो होय तेनावडे एक सो ने त्र्याशीनो गुणाकार करवो. पछी ते थयेला राशिमां जे अंकवडे एक सो ने त्र्याशीने गुण्या होय ते अंकने त्रण गुणो करी तेमां एक उमेरवो. पछी तेने पंदरे भांगवा. भागमां जे संख्या आवे तेटला पर्व गये सते ते कहेवाने इच्छेली आवृत्ति थाय छे, अने नीचे जे संख्या वधी होय—शेष रही होय तेटला दिवसोमांना छेल्ले दिवसे कहेवाने इच्छेली ते

---

१ चोथ केम नहीं ? बताव्या प्रमाणे गणत्री गणता पण चोथ आवे छे. २ उपर चोथ आवे तो अहीं दशमनो वांधो आवे नहीं. ३ माघ शुदी दशम आववी जोइए, केमके १८६ दिवसनो आंतरो छे. बताव्या प्रमाणे गणत्री करतां पण दशम आवे छे.

ष्वथ। चरमे दिवसे विंद्या--दावृत्तिं तां विवक्षितां ॥ ४० ॥ आद्यावृत्ति-र्युगे कस्यां तिथावित्यूह्यते यदि। तत्प्रस्तुतेयं प्रथमा--वृत्तिरित्येकको धृतः ॥ ४१ ॥ अस्मिंश्चैकोनिते शेषः कश्चिदंको न तिष्ठति। तत्पाश्चात्ययुगा-वृत्ति--र्दशमी ध्रियतेंतिमा ॥ ४२ ॥ ततस्त्र्यशीत्याभ्यधिकं दशभिर्गुण्यते शतं। त्रिंशान्येवं शतान्यष्टा--दश १८३० जातान्यतः परं ॥ ४३ ॥ दश-भिर्गुणितं यस्मा--त्तत्र्यशीतिशतं ततः। दश त्रिघ्ना: सैकरूपा--श्चैकत्रिंश-द्भवंति ये ॥ ४४ ॥ ते पूर्वराशौ क्षिप्यंते एकषष्ट्यधिका ततः। अष्टादश-शती जाता १८६१ तां पंचदशभिर्भजेत् ॥ ४५ ॥ चतुर्विंशं शतं लब्ध--मेकं रूपं च शिष्यते। जिज्ञासिताया आवृत्ते--स्ततोऽभूदिति निर्णयः ॥ ४६ ॥ चतुर्विंशपर्वशता--त्मके प्राच्ययुगे गते। प्रवर्त्तमानेऽभिनवे यु-गेऽस्य प्रथमे तिथौ ॥ ४७ ॥ आद्यावृत्तिः प्रतिपदि भवतीत्यथ कथ्यते। द्वितीयोऽप्यत्र दृष्टांतो बोधदाढ्र्याय धीमतां ॥ ४८ ॥ कस्यां तिथौ द्वितीया स्या--दावृत्तिर्माघभाविनी। इति प्रश्ने कृते धार्य आवृत्त्यंको द्वि-

---

आवृत्ति जाणवी. (४०). उदाहरण—युगने विषे पहेली आवृत्ति कइ तिथिए थाय ? एम जाणवाने कोइ इच्छे, तो पहेली आवृत्ति जाणवानी इच्छा होवाथी एकनो अंक धारण कर्यो (१). तेमांथी एक बाद करीए त्यारे शेष कांइपण अंक रहेतो नथी, तेथी पूर्वना युगनी छेल्ली दशमी आवृत्ति धारण करवी (लखवी). त्यारपछी एक सो ने त्याशीने दशे गुणवा, तेथी अढार सो ने त्रीश (१८३०) थाय छे. पछी एक सो ने त्याशीने दशे गुण्या हता तेथी दशने त्रण गुणा करी (३०) तेमां एक नांखीए, त्यारे एकत्रीश (३१) थाय, तेने पूर्वनी (१८३०) राशिमां नांखीए, त्यारे अढार सो ने एकसठ (१८६१) थाय छे. तेने पंदरे (१५) भागतां एक सो ने चोवीश (१२४) आवे छे, अने एक शेष रहे छे; तेथी जाणवाने इच्छेली आवृत्तिनो आ प्रमाणे निर्णय थाय छे के—एक सो ने चोवीश (१२४) पर्ववाळो पूर्व युग गया पछी अत्यारे वर्त्तता नवा युगमां ते युगनी पहेली[1] तिथिए एटले प्रतिपदाने दिवसे पहेली आवृत्ति थाय छे. हवे बुद्धिमान पुरुषोना बोधने दृढ करवा माटे बीजुं उदाहरण आपे छे. (४८).—माघ मासमां थती बीजी आवृत्ति कइ तिथिए थाय छे ? एम कोइ प्रश्न करे, त्यारे बीजी आवृत्तिनो प्रश्न

---

१ चंद्र संबंधी.

कस्तदा ॥ ४९ ॥ अस्मिन्नंके चैककोने एक एवावशिष्यते । सत्र्यशीतिशतं तेन गुण्यते स्यात्तथा स्थितं ॥ ५० ॥ एकोऽत्र गुणकस्त्रिघ्नः सैको जातश्चतुष्टयं । एतद्युक्तोऽभवद्राशिः सप्ताशीतियुतं शतं ॥५१॥ भागेऽस्य पंचदशभि–र्लभ्यंते द्वादशोपरि । शिष्यंते सप्त तेनैव पूर्वोक्तप्रश्ननिर्णयः ॥ ५२ ॥ स्याद् द्वितीया द्वादशानां विगमे युगपर्वणां । माघस्य श्याम-सप्तम्या–मावृत्तिस्तिग्मरोचिषः ॥ ५३ ॥ कस्यां तिथौ स्यादावृत्ति–स्तृतीयेतीष्यते यदि । तदा धृतस्त्रिको रूपो–निते‍ऽस्मिन् शिष्यते द्विकः ॥ ५४ ॥ सत्र्यशीतिशतं तेन गुणितं जायते किल । शतत्रयं सषट्षष्टि द्विकेऽथ त्रिगुणीकृते ॥ ५५ ॥ सैके जाताः सप्त ते च पूर्वराशौ नियोजिताः । त्रिसप्तत्या समधिक–मेवं जातं शतत्रयं ॥ ५६ ॥ हृतेऽस्मिन् पंचदशभि–श्चतुर्विंशतिराप्यते । त्रयोदशावशिष्यंते तदेव प्रश्ननिर्णयः ॥५७॥ चतुर्विंशतिपक्षाति–क्रमे तीर्थेश्वरैर्युगे । नभःकृष्णत्रयोदश्यां तृतीयावृत्तिरीरिता ॥ ५८ ॥ एवमन्यास्वपि तिथिषु करणभावना कार्या. आवृत्ति-

---

होवाथी बेनो अंक (२) धारण करवो, तेमांथी एक बाद करतां बाकी एक ज रहे छे, ते एकवडे एक सो ने त्र्याशीने गुणवाथी तेटलो ज (१८३) अंक थाय छे. हवे एकनो गुणाकार हतो तेथी ते एकने त्रण गुणो करी तेमां एक नांख्यो, तेथी चार थया. ते चारने उपरना (१८३) राशिमां नांखवाथी एक सो ने सत्याशी (१८७) थया. तेने पंदरे भांगतां भागमां बार आवे छे, बाकी सात शेष रहे छे. तेथी पूर्वे पूछेला प्रश्ननो आ प्रमाणे निर्णय थयो के—बार पर्व (छ मास) गया पछी माघ वद सातमने रोज सूर्यनी बीजी आवृत्ति थाय छे. (५३). प्रश्न—त्रीजी आवृत्ति कइ तिथिए थाय ? एम जाणवानी इच्छा होय तो त्रणनो अंक धारण करी तेमांथी एक बाद करवो, एटले बाकी बे रहे छे. ते बेवडे एक सो ने त्र्याशीने गुणवाथी त्रण सो ने छासठ (३६६) थाय छे. पछी बेने त्रण गुणा करी तेमां एक नांखवाथी सात (७) थाय. ते सातने पूर्वनी (३६६) राशिमां मेळववाथी त्रण सो ने तोंतेर (३७३) थाय. तेने पंदरे भांगतां भागमां चोवीश (२४) आवे छे अने तेर (१३) शेष रहे छे; तेथी प्रश्ननो निर्णय आ प्रमाणे जाणवो के—युगने विषे चोवीश पखवाडीया (बार मास) गया पछी श्रावण वद तेरशने रोज त्रीजी आवृत्ति थाय छे एम जिनेश्वरोए कह्युं छे. (५८). ए ज प्रमाणे बीजी तिथिओने विषे पण करणनी भावना करवी. आवृत्तिना नक्षत्र जाणवा माटे जे रीत कही छे ते

नक्षत्रज्ञानमुद्दिश्य करणं त्वतिविस्तरमिति नात्र प्रपंचितं, तज्ज्योतिष्करंडवृत्त्यादिभ्योऽवसेयं. अत्र वासना चैवं—आवृत्तिघस्रादेकस्मा—दावृत्तिरपरा भवेत्। दिने चतुरशीत्याढ्य—शततमे यथाक्रमं ॥५९॥ सत्र्यशीतिदिनशत—मानमेकं यतोऽयनं। समाप्यारभ्यते नव्या—यनं घस्रे ततोऽग्रिमे ॥ ६० ॥ नभःकृष्णप्रतिपदो माघस्य श्यामसप्तमी। भवेच्चतुरशीत्याढ्य—शततम्येव तद्यथा ॥ ६१ ॥ षण्णां मासामहोरात्राः स्युरशीतियुतं शतं। माघस्य सप्ताहानीति सप्ताशीतियुतं शतं ॥ ६२ ॥ एभ्यस्त्रयोऽवमरात्राः पात्यंते मासषट्कजाः। ततश्चतुरशीत्याढ्यं शतमेव व्यवस्थितं ॥ ६३ ॥ तत्र च—सत्र्यशीतिदिनशत—मानमेकं किलायनं। षष्ठ्यां पूर्णं पुनश्चान्य—त्सप्तम्यां प्रत्यपद्यत ॥६४॥ एवं च—माघस्य श्यामसप्तम्या द्वादशी नभसोऽसिता। सत्र्यशीतिशततमी पूर्णं तत्र ततोऽयनं ॥ ६५ ॥ त्रयोदश्यां च संप्राप्तं भूयोऽपि दक्षिणायनं। एवमावृत्तितिथिषु कार्यान्यास्वपि भावना ॥ ६६ ॥

अति विस्तारवाळी होवाथी अहीं कही नथी, ते ज्योतिष्करंडनी टीका विगेरेमांथी जाणी लेवी. अहीं तात्पर्य आ प्रमाणे जाणवुं—सूर्यनी एक आवृत्तिना दिवसथी बीजी आवृत्ति अनुक्रमे एक सो ने चोराशी (१८४) दिवसे आवे छे. (५९). कारणके एक अयननुं प्रमाण एक सो ने त्र्याशी (१८३) दिवसनुं छे, तेथी १८३ दिवसे अयनने समाप्त करी त्यारपछीना १८४ मे दिवसे नवा अयननो आरंभ थाय छे. (६०). श्रावण वद प्रतिपदाथी माघ वद सातमनो दिवस एक सो ने चोराशीमे दिवसे आवे छे. ते आ प्रमाणे.—(६१). छ मासना अहोरात्र एक सो ने एंशी (१८०) थाय छे, ते उपर माघ मासना सात दिवस होवाथी एक सो ने सत्याशी (१८७) अहोरात्र थाय छे. (६२). तेमांथी छ मासमां त्रण अवमरात्री (तिथिनो क्षय) आवे छे माटे त्रण बाद करतां बाकी एक सो चोराशी (१८४) रहे छे. (६३) तेमां एक सो ने त्र्याशी दिवसना प्रमाणवाळुं एक अयन माघ वद छठने दिवसे पूर्ण थाय छे, अने सातमे बीजुं शरु थाय छे. (६४). ए ज प्रमाणे माघ वद सातमथी श्रावण वद बारश एक सो ने त्र्याशीमे दिवसे आवे छे, तेथी ते दिवसे ते अयन पूर्ण थाय छे. (६५). अने तेने बीजे दिवसे एटले श्रावण वदि तेरशने दिवसे फरीथी दक्षिणायन शरु थाय छे. ए प्रमाणे बीजी पण आवृत्तिनी तिथिओने विषे भावना करवी. (६६).

इंदुभोग्योडुसंयोगः प्रागुक्तस्तिथिभिः सह । वक्ष्येऽर्कभोग्यनक्षत्रा-ण्यावृत्तिषु दशस्वथ ॥ ६७ ॥ आवृत्तीः श्रावणे पंचा-प्यादित्यः कुरुते युगे । पुष्ययुक्तो बहिर्गच्छन् सर्वाभ्यंतरमंडलात् ॥ ६८ ॥ अष्टादश-मुहूर्त्ताढ्य-महोरात्रचतुष्टयं । पुष्यस्य भुक्त्वार्कः सर्वा आवृत्तीः श्रावणे सृजेत् ॥ ६९ ॥ अभ्यंतरं विशन् बाह्य-मंडलात् कुरुते रविः । पंचापि माघस्यावृत्ती-रभिजित्प्रथमक्षणे ॥७०॥ तथोक्तं ज्योतिष्करंडके-अब्भि-तराहि नितो आइच्चो पुस्सजोगमुवगम्म । सव्वा आउट्टीओ करेइ सो सावणे मासे ॥७१॥ बाहिरओ पविसंतो आइच्चो अभिइजोगमुवगम्म । सव्वा आउट्टीओ करेइ सो माघमासंमि ॥ ७२ ॥ एवं च मकरे राशौ यद्भानोरुत्तरायणं । कर्के याम्यायनं लोके ख्यातं तदपि संगतं ॥ ७३ ॥

अथ विषुवत्प्रकरणं निरूप्यते—पंचदशमुहूर्त्तात्मा रजनी दिवसोऽपि च । यत्र तुल्यावुभौ स्यातां स कालो विषुवं स्मृतं ॥ ७४ ॥ तथोक्तम-भिधानचिंतामणौ-" तुल्यनक्तंदिने काले विषुवद् विषुवं च तत् । " तच्च

चंद्रे भोगववा लायक तिथिनी साथे नक्षत्रनो संयोग प्रथम कह्यो छे. हवे दशे आवृत्तिने विषे सूर्यभोग्य[1] नक्षत्रोने हुं कहीश. (६७) सर्व आभ्यंतर मांडलाथी बहार नीकळतो सूर्य एक युगमां पुष्यनक्षत्रवडे युक्त थइने पांच आवृत्ति श्रावण मासमां शरु करे छे. (६८). सूर्य श्रावण मासमां पुष्य नक्षत्रना चार रात्रिदिवस अने अढार मुहूर्त्तने भोगवीने सर्व आवृत्तिओ शरु करे छे. (६९). बाह्य मंडळथी आभ्यंतर मंडळमां प्रवेश करतो सूर्य माघमासमां अभिजित नक्षत्रना पहेले समये पांचे आवृत्तिओ शरु करे छे. (७०). ते विषे ज्योतिष्करं-डकमां कह्युं छे के-"आभ्यंतर मंडळथी बहार नीकळतो सूर्य पुष्य नक्षत्रना योगने पामीने श्रावण मासमां सर्वे (पांचे) आवृत्तिओने करे छे. (७१). अने बहारना मंडळथी आभ्यंतर मंडळमां प्रवेश करतो सूर्य अभिजित नक्षत्रना योगने पामीने माघ मासने विषे सर्वे (पांचे) आवृत्तिओ करे छे. (७२). " आ प्रमाणे मकर राशिमां सूर्यनुं उत्तरायण अने कर्क राशिमां दक्षिणायन लोकमां प्रसिद्ध छे ते पण संगत थाय छे. (७३).

हवे विषुवत्नुं प्रकरण कहेवामां आवे छे.-जे काळे पंदर मुहूर्त्तनी रात्रि अने पंदर मुहूर्त्तनो दिवस एम बन्ने तुल्य होय ते काळ विषुवत् कहेवाय छे. (७४). ते विषे अभिधानचिंतामणिमां कह्युं छे के-" रात्रि अने दिवस तुल्य होय एवो काळ विषुवत्

---

१ सूर्ये भोगववा लायक.

श्यामादिवसयोः पंचदशमुहूर्त्तयोः । प्रदोषकाले विज्ञेयं निश्चयापेक्षया बुधैः ॥ ७५ ॥ यतः—सार्द्धैकनवतौ बाह्या–दाभ्यंतराच्च मंडलात् । समाक्रांतेषु सूर्येण मंडलेषु भवेदिदं ॥ ७६ ॥ तत्प्रत्ययनमेकैकं ततस्तानि युगे दश । याम्यायनस्य पंचौजा–न्येषु स्युर्मासि कार्त्तिके ॥ ७७ ॥ समानि माधवे मासि पंच सौम्यायनस्य च । तिथिचंद्रार्कनक्षत्र–योगो-ऽथैषां निरूप्यते ॥ ७८ ॥ तृतीयायां तिथौ षट्सु व्यतिक्रांतेषु पर्वसु । रोहिणीचंद्रनक्षत्रे विषुवं प्रथमं भवेत् ॥ ७९ ॥ पर्वाण्यष्टादशातीत्य नवम्यां वासवोडुनि । द्वितीयं विषुवं प्रोक्तं युगे तीर्थकरादिभिः ॥ ८० ॥ त्रिंशत्पर्वातिक्रमे च पंचदश्यां तृतीयकं । प्रज्ञप्तं स्वातिनक्षत्रे विषुवं पुरुषोत्तमैः ॥ ८१ ॥ त्रिचत्वारिंशतं पर्वा–ण्यतिक्रम्य युगादितः । स्यात्पुनर्वसुनक्षत्रे तुर्यं षष्ठीतिथौ ध्रुवं ॥ ८२ ॥ पंचपंचाशतं पर्वा–ण्यतिक्रम्य च पंचमं । उत्तरासु भद्रपदा–स्वाख्यातं द्वादशीतिथौ ॥ ८३ ॥ अष्टष-

---

अने विषुव कहेवाय छे. ते पंदर मुहूर्त्तनी रात्रि अने पंदर मुहूर्त्तनो दिवस होय ते दिवसे प्रदोषकाळे पंडितोए निश्चयनी अपेक्षाए जाणवो. (७५). " कह्युं छे के–" बाह्य अने आभ्यंतर मंडळथी ज्यारे सूर्य साडीएकाणुं मांडलाने ओळंगे छे त्यारे आ विषुव होय छे. (७६). " ते विषुव एक अयनमां एक ज आवे छे, तेथी एक युगमां ते दश वार आवे छे, तेमां दक्षिणायनना पांच एकी (१–३–५–७–९) विषुवो कार्तिक मासमां आवे छे (७७) अने उत्तरायणना पांच बेकी (२–४–६–८–१०) विषुवो वैशाख मासमां आवे छे. हवे आ विषुवोनी साथे तिथि, सूर्य, चंद्र अने नक्षत्रनो योग कहे छे.– (७८). प्रथमथी छ पर्व व्यतीत थाय त्यारे त्रीजने दिवसे रोहिणी नामना चंद्रनक्षत्रने विषे पहेलुं विषुव आवे छे. (७९). युगना आरंभथी अढार पर्व व्यतीत थाय त्यारे नवमीने दिवसे वासव एटले ज्येष्ठा नामना चंद्र नक्षत्रने विषे बीजुं विषुव आवे छे एम तीर्थंकरादिए कह्युं छे. (८०). त्रीश पर्व जाय त्यारे पूर्णिमाने दिवसे स्वाति नक्षत्रने विषे त्रीजुं विषुव आवे छे एम उत्तम पुरुषोए कह्युं छे. (८१). युगना आरंभथी तेंताळीश पर्व जाय त्यारे छठ्ठने दिवसे पुनर्वसु नक्षत्रमां चोथुं विषुव आवे छे. (८२). पंचावन पर्व जाय त्यारे बारशनी तिथिए उत्तराभाद्रपद नक्षत्रने विषे पांचमुं विषुव कह्युं छे.

१ पूर्णिमा अने अमावास्या.

ष्टिमतिक्रम्य पर्वाणि विषुवं भवेत् । षष्ठं तिथौ तृतीयायां मैत्रनक्षत्र एव च ॥ ८४ ॥ पर्वाण्यशीतिमुल्लंघ्य नवम्यां सप्तमं पुनः । मघासु मघवत्पूज्यै–र्विषुवं कथितं जिनैः ॥ ८५ ॥ अतिक्रम्य द्विनवति पर्वाण्यष्टममीरितं । अश्विनीनाम्नि नक्षत्रे पंचदश्यां तथा तिथौ ॥ ८६ ॥ पंचाधिकं पर्वशतं व्यतीत्य नवमं जिनैः । स्यादाषाढासूत्तरासु तिथौ षष्ठ्यामितीरितं ॥ ८७ ॥ अतिक्रम्य तथा पर्व–शतं सप्तदशाधिकं । उत्तरासु फाल्गुनीषु द्वादश्यां दशमं भवेत् ॥ ८८ ॥ अत्रेयं वाम्नना–विषुवं स्यात्तृतीयायां षट्पर्वातिक्रमेऽग्रिमे । ततो यथोत्तरं योज्याः षट् तिथ्यंके विचक्षणैः ॥ ८९ ॥ द्वितीयादिविषुवता–मित्येवं लभ्यते तिथिः । षट्सु क्षिप्तेषु चेत्संख्या भवेत्पंचदशाधिका ॥ ९० ॥ तदैकं पर्व पर्वांके क्षिप्त्वा पंचदशात्मकं । शेषांकप्रमिता विज्ञै–र्विज्ञेया विषुवत्तिथिः ॥ ९१ ॥

अथात्र करणं निरूप्यते–द्विगुणेष्टविषुवसंख्या रूपोना षड्गुणा च पर्वमितिम् । वक्ति तथा पर्वांको दलीकृतस्त्वाह विषुवतिथिं ॥ ९२ ॥

---

(८३). अडसठ पर्व जाय त्यारे त्रीजने दिवसे अनुराधा नक्षत्रमां छठ्ठुं विषुव आवे छे. (८४) एंशी पर्व जाय त्यारे नवमीनें दिवसे मघा नक्षत्रमां सातमुं विषुव आवे छे एम इंद्रोने पूज्य एवा जिनेश्वरोए कह्युं छे. (८५). बाणुं पर्व ओळंगीने पंदरमी तिथि (अमावास्या) ने विषे अश्विनी नामना नक्षत्रमां आठमुं विषुव कह्युं छे. (८६). एक सो ने पांच पर्व जाय त्यारे छठनी तिथिए उत्तराषाढा नक्षत्रमां नवमुं विषुव कह्युं छे. (८७). तथा एक सो ने सतर पर्व जाय त्यारे बारशनी तिथिए उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमां दशमुं विषुव आवे छे. (८८). अहीं आ प्रमाणे भावार्थ जाणवो.–प्रथम छ पर्व जाय त्यारे त्रीजनी तिथिए प्रथम विषुव आवे छे. त्यारपछी आगळ आगळ पंडितोए तिथिना अंकमां छ–छ मेळववा. (८९). एम करवाथी बीजा, त्रीजा विगेरे विषुवोनी तिथिनो अंक आवे छे, तेमां पण जो छ–छ नांखवाथी पंदर करतां वधारे अंक आवे तो पर्वना अंकमां पंदर तिथिवाळुं एक पर्व वधारी शेष अंकवाळी विषुवनी तिथि पंडितोए जाणवी. (९१).

हवे आ बाबतनुं करण (रीत) बतावे छे.—जेटलामुं विषुव जाणवानी इच्छा होय तेटला अंकने बमणा करी तेमांथी एक बाद करी तेने छगुणा करवा. जे अंक आवे तेटला पव जाणवा. पछी ते पर्वना अंकने अर्ध करवाथी जे आवे ते विषुव तिथिनो अंक जाणवो. (९२).

पर्वांकार्द्धं पंचदशा–धिकं तु तिथिभिर्भजेत् । पर्वांकेष्वागतं दद्या–च्छेषांकान्निर्णयेत्तिथिं ॥ ९३ ॥ तथाहि—युगे विषुवमाद्यं स्या–त्कतिपर्वव्यतिक्रमे । कस्यां तिथावििति प्रश्ने करणं भावयेदिति ॥ ९४ ॥ आद्यं विषुवदित्येको द्विघ्नो रूपोनितः पुनः । एकः स षड्गुणः षट्कः पर्वांकः सोऽर्द्धितस्तिथिः ॥ ९५ ॥ एवं च—षट्सु पर्वस्वतीतेषु युगे विषुवमादिमं । तृतीयायां तिथावेवं चतुर्थमथ भाव्यते ॥ ९६ ॥ तद्यथा—द्विघ्नश्चतुष्को रूपोनः सप्त स्युस्ते च षड्गुणाः । द्वाचत्वारिंशद्भवंति तेऽर्द्धितास्त्वेकविंशतिः ॥ ९७ ॥ अधिका पंचदशांका–दियं त २१ द्भज्यतेऽथ तैः १५ ॥ पर्वस्वेकं क्षिपेल्लब्धं शेषाः षट् तिथिसूचकाः ॥ ९८ ॥ ततश्च–स्यात्पर्वसु त्रिचत्वारिं–शत्यतीतेष्वथो युगे। षष्ठ्यां तिथौ तद्विषुव–मेवं सर्वत्र भाव्यतां ॥ ९९ ॥ पंचापि विषुवंत्यर्कः कुर्याद्याम्यायनस्थितः । स्वातेर्नक्षत्रस्य भुक्त्वा त्रयोविंशतिमंशकान् ॥ ६०० ॥ अंशाश्चात्र चतुस्त्रिंशदधिक-

---

पर्वना अंकने अर्ध करतां जो पंदरथी वधारे आवे तो तेने पंदरे भागवा. भागमां जे अंक आवे तेने पर्वना अंकमां उमेरवा अने जे अंक शेष रह्यो होय ते तिथिनो अंक जाणवो. (९३). उदाहरण.—युगने विषे पहेलुं विषुव केटला पर्व गया पछी कइ तिथिने विषे आवे ? एम कोइ प्रश्न करे तो तेनी आ रीत करवी.—(९४). पहेला विषुवनो प्रश्न छे तेथी एकने बमणो करतां बे थाय, तेमांथी एक बाद करतां एक रहे, तेने छगुणो करवाथी छ थाय ते पर्वनो अंक जाणवो. तेने अर्ध करवाथी तिथिनो अंक आवे छे. (९५). तेथी करीने युगने विषे पहेला छ पर्व गया पछी त्रीजनी तिथिने विषे पहेलुं विषुव आवे. हवे चोथुं विषुव लाववानी रीत बतावे छे.—(९६). चोथुं विषुव लाववुं छे माटे चारने बेए गुणतां आठ थया, तेमांथी एक बाद करतां सात थया, तेने छगुणा करतां बेंतालीश थया. ते पर्वनो अंक जाणवो, तेने अर्ध करतां एकवीश आवे. (९७). ते एकवीशनो अंक पंदर करतां अधिक छे तेथी ते एकवीशने पंदरे भागतां भागमां एक आवे छे तेने पर्वना अंकमां उमेरवो अने शेष छ रहे छे ते तिथिना अंकने सूचवनार छे. (९८). तेथी करीने युगने विषे तेंतालीश पर्व गया बाद छठनी तिथिए चोथुं विषुव आवे छे. ए प्रमाणे सर्वत्र जाणी लेवुं. (९९). दक्षिणायनमां रहेलो सूर्य स्वाति नक्षत्रना त्रेवीश अंश भोगवे त्यारे तेना पांचे विषुवत् आवे छे. (६००). अहीं एक सो ने चोत्रीशना छेद रूप अंशो

शतच्छिन्नरूपस्य ज्ञेयाः. पंचापि विषुवंत्यर्कः कुर्यात्सौम्यायनस्थितः । एको-नसप्तति भागा—नश्विन्या अवगाह्य च ॥ १ ॥ इति विषुवत्प्रकरणं.

अयनानां चतुस्त्रिंशं शतं शीतद्युतेर्युगे । तत्रोत्तरायणानि स्युः सप्तषष्टिर्युगे युगे ॥ २ ॥ सप्तषष्टिरेव याम्या—यनान्येकांतराण्यथ । प्रागु-त्तरायणं पश्चा—द्याम्यायनमिति क्रमः ॥ ३ ॥ ततश्च—या नक्षत्रार्द्धमा-सेनै—वोत्तराभिमुखा विधोः । आवृत्तयस्ताः सर्वाः स्यु—रभिजित्प्रथमक्षणे ॥ ४ ॥ अमासार्द्धेनाथ पुन—र्दक्षिणाभिमुखा विधुः । आवृत्तीः कुरुते पुष्य—योगं प्राप्याखिला अपि ॥ ५ ॥ तत्रापि—मुहूर्त्तदशकं भुक्त्वा विधुर्भागांश्च विंशतिं । पुष्यस्य सप्तषष्ट्युत्थान् याम्यावृत्तीः प्रपद्यते ॥ ६ ॥ इत्ययनप्रकरणं.

ब्रूमः षण्णामथर्त्तूनां स्वरूपं किंचिदागमात् । सूर्यसंबंधिनस्ते स्यु—श्चंद्रसंबंधिनोऽपि च ॥ ७ ॥ सार्द्धात्रिंशदहोरात्रा एको मासो विवस्वतः। ताभ्यां द्वाभ्यामहोरात्रा । एकषष्टिर्ऋतू रवेः ॥ ८ ॥ ऋतुः प्रावृड् भवेदाद्यो वर्षारात्रो द्वितीयकः । शरदाख्यस्तृतीयः स्या—त्तुर्यो हेमंतसंज्ञकः ॥ ९ ॥

जाणवा ($\frac{२३}{१३४}$). उत्तरायणमां रहेलो सूर्य अश्विनी नक्षत्रना ओगणोतेर अंशोने भोगवे त्यारे तेना पांचे विषुव आवे छे. (१). इति विषुवत्प्रकरण.

एक युगमां चंद्रना एक सो ने चोत्रीश (१३४) अयन आवे छे, तेमां दरेक युगमां सडसठ (६७) उत्तरायण आवे छे. (२) अने एकांतरे सडसठ (६७) दक्षिणायन आवे छे. तेमां प्रथम उत्तरायण अने पछी दक्षिणायन एवो क्रम छे. (३). तेथी करीने अर्ध नक्षत्रमासे करीने उत्तर दिशा तरफ चंद्रनी जे आवृत्ति थाय छे ते सर्व आवृत्तिओ अभिजित् नक्षत्रना प्रथम समये थाय छे. (४). तथा अर्ध नक्षत्रमासे करीने दक्षिण दिशा तरफ चंद्र जे आवृत्ति करे छे ते सर्वे पुष्य नक्षत्रना योगने पामीने करे छे. (५). तेमां पण चंद्र पुष्य नक्षत्रना दश मुहूर्त्त अने सडसठीआ वीश भाग (अंश) ने भोगव्या पछी दक्षिणनी आवृत्ति शरु करे छे. (६). इति अयन प्रकरण.

हवे आगममां कहेलुं छए ऋतुनुं कांइक स्वरूप कहीए छीए.—ते ऋतुओ सूर्यने तथा चंद्रने आश्रीने प्रवर्ते छे. (७). साडीत्रीश रात्रिदिवसनो एक सूर्यमास थाय छे. तेवा बे मासनो एटले एकसठ रात्रीदिवसनो एक सूर्य ऋतु कहेवाय छे. (८). तेमां पहेलो प्रावृष् ऋतु छे, बीजो वर्षा ऋतु छे, त्रीजो शरद नामनो ऋतु छे, चोथो हेमंत नामनो छे,

॥ वसंतः पंचमः ख्यातः षष्ठो ग्रीष्मः प्रकीर्त्तितः । षडेते ऋतवः ख्याता युगे त्रिंशद्भवंति ते ॥ १० ॥ उक्तं च ज्योतिष्करंडके—पाउस वासारत्तो सरओ हेमंतवसंतगिम्हा य। एए खलु छप्पि उऊ जिणवरदिट्ठा मए सिट्ठा ॥ ११ ॥ प्रथमाषाढराकायाः प्रारभ्यैषामुपक्रमः । भवंति त्रिंशतैभिश्च यथोक्ता युगवासराः १८३० ॥ १२ ॥ द्वावाषाढौ युगांते स्त–स्तत्राद्यस्य सितत्विषि । चतुर्दश्यां प्राग्युगर्त्तुः पूर्णस्त्रिंशत्तमो भवेत् ॥ १३ ॥ ततस्तस्यैव राकायां युगस्याभिनवस्य तु। ऋतुराद्यो लगेद्भाद्र-स्याद्येऽसौ पूर्यते तिथौ॥१४॥ आद्याषाढस्यैकदिनं त्रिंशत्त्रिंशद्दिनात्मकौ। द्वितीयाषाढनभसौ भाद्रस्यैकं दिनं ततः ॥ १५ ॥ स्युर्द्वाषष्टिरेभ्य एको—ऽवमरात्रो निपात्यते । एकषष्टिदिनात्मेति सूर्यर्त्तुः प्रथमो युगे ॥ १६ ॥ एकषष्टिस्त्रिंशता च गुण्या सर्वर्त्तुसंख्यया । अष्टादशशतास्त्रिंशा एवं स्युर्युगवासराः ॥१७॥ एवमन्यत्रापि भाव्यं, यंत्रकं वा विलोकनीयं. सूर्यर्त्तुज्ञानविषये करणं प्रतिपाद्यते। येन विज्ञातमात्रेण सुखेन ऋतुरूह्यते

---

(९). पांचमो वसंत ऋतु कहेलो छे, तथा छट्ठो ग्रीष्म ऋतु कह्यो छे. आ छ ऋतुओ कह्या छे. एक युगमां त्रीश ऋतुओ आवे छे. (१०). ते विषे ज्योतिष्करंडकमां कह्युं छे के—"प्रावृष्, वर्षारात्र, शरद, हेमंत, वसंत अने ग्रीष्म आ छ ऋतुओ जिनेश्वरोए जोयेला छे, ते में कह्या छे. (११)." प्रथम आषाढ मासनी पूर्णिमाथी प्रारंभीने आ ऋतुओनी शरुआत थाय छे अने तेवा त्रीश ऋतुए करीने प्रथम कहेला एक युगना (१८३०) दिवसो थाय छे. (१२). युगने छेडे बे आषाढ मास होय छे, तेमां पहेला आषाढ मासनी शुक्ल चतुर्दशीने दिवसे पहेला युगनो त्रीशमो (छेल्लो) ऋतु पूर्ण थाय छे. (१३). त्यारपछी ते ज पहेला आषाढ मासनी पूर्णिमाने दिवसे नवा (बीजा) युगनो पहेलो ऋतु शरु थाय छे, अने भाद्रपद मासनी एकमनी तिथिए ते पूर्ण थाय छे. (१४). केमके पहेला आषाढ मासनो एक दिवस अने त्रीश–त्रीश रात्रीदिवसनो बीजो आषाढ अने श्रावण मास तथा त्यारपछी भाद्रपद मासनो एक दिवस (१५) सर्व मळीने बासठ रात्रीदिवस थया, तेमांथी एक क्षयतिथिनो दिवस बाद करवो. ए रीते युगनी शरुआतमां एकसठ दिवसनो पहेलो सूर्य ऋतु थयो. (१६). हवे एक युगमां त्रीश ऋतु होवाथी ते एकसठने त्रीशे गुणतां एक युगना अढार सो ने त्रीश दिवसो थया. (१७). ए ज प्रमाणे अन्यत्र पण जाणवुं, अथवा यंत्र जोवुं. हवे आ सूर्य ऋतुने जाणवा माटे करण (रीत)

॥ १८ ॥ युगेऽतीतपर्वसंख्या कार्या पंचदशाहता । पर्वणो वर्त्तमानस्य विवक्षितदिनावधि ॥ १९ ॥ क्षिप्यंते तत्र तिथयः पात्यंतेऽवमरात्रकाः । ततस्ता द्विगुणीकृत्य सैकषष्टिर्विधीयते ॥ २० ॥ द्वाविंशेन शतेनास्यां हृते भागे यदाप्यते । तस्मिन् षड्भिर्हृते शेष–मतिक्रांत ऋतुर्भवेत् ॥ २१ ॥ द्वाविंशशतभक्तस्य राशेर्यच्छेषमास्थितं । तस्मिन् द्वाभ्यां हृते लभ्या वर्त्तमानर्तुवासराः ॥ २२ ॥ युगे प्रथमदीपाल्यां यदि कश्चन पृच्छति । सूर्यर्त्तुः कतमोऽतीतः कतमो वर्त्ततेऽधुना ॥ २३ ॥ सप्त पर्वाण्यतीतानि तदा तत्र युगादितः । तानि पंचदशघ्नानि स्युः पंचाभ्यधिकं शतं ॥ २४ ॥ द्वाभ्यामवमरात्राभ्यां हीनं तत् त्र्युत्तरं शतं । तद् द्वाभ्यां गुणने जाते द्वे शते षड्भिरुत्तरे ॥ २५ ॥ तत्रैकषष्टिक्षेपे द्वे शते सप्तषष्टिके ॥ एतयोर्ह्रियते भागो द्वाविंशेन शतेन च ॥ २६ ॥ द्वौ लभ्येते न तौ भागं सहेते षड्भिरित्यतः ॥ स्थितौ द्वावेव शेषा ये त्रयोविंशतिरंशकाः ॥ २७ ॥ तेषामर्धे कृते सार्धा एकादश स्थिता इति ॥ आगतं द्वावृतू यातौ तृतीयो वर्त्त-

---

कहे छे, के जे रीत जाणवामात्रथी ज सहेलाइथी ऋतु जाणी शकाय छे. (१८). युगने विषे जेटला पर्व व्यतीत थया होय तेने पंदरे गुणवा. तेमां इष्ट दिवस सुधीना चालता पर्वना दिवसो उमेरवा, तेमांथी क्षयतिथिओ बाद करवी. पछी तेने बमणा करी तेमां एकसठ उमेरवा. (२०) तेने एक सो ने बावीशे (१२२) भाग लेतां जे लाधे (भागमां आवे) तेने छए भागतां जे शेष रहे ते वीती गयेलो ऋतु जाणवो. (२१). एक सो ने बावीशे भागतां जे शेष रह्युं होय तेने बे वडे भागतां जे लाधे ते चालता ऋतुना दिवस जाणवा. (२२). उदाहरण.—कोइ प्रश्न करे के युगनी पहेली दीवाळीने दिवसे क्यो सूर्यऋतु व्यतीत थयो अने हमणां क्यो वर्ते छे ? (२३). उत्तर—तेमां युगनी शरुआतथी सात पर्व वीती गया छे तेथी ते सातने पंदरे गुणतां एक सो ने पांच थाय छे. (२४). तेमांथी बे चयतिथिओ बाद करतां एक सो ने त्रण रहे छे. तेने बेए गुणतां बसो ने छ थया. (२५) तेमां एकसठ (६१) उमेरतां बसो ने सडसठ (२६७) थया. तेने एक सो ने बावीशे (१२२) भागतां (२६). भागमां बे आवे छे, तेनो छए भाग चाली शकतो नथी तेथी बे ज शेष रह्या. पछी बसो ने सडसठने एक सो बावीशे भागतां बे आव्या ने जे त्रेवीश शेष रह्या छे (२७) तेने अर्ध करतां एटले बे ए भांगतां साडा अग्यार लाधे छे, तेथी जवाब ए आव्यो के बे ऋतु वीती गया छे अने त्रीजो ऋतु चाले छे.

तेऽधुना ॥ २८ ॥ वर्त्तमानस्य तस्यैका–दश जग्मुर्दिना इति । द्वादशोऽस्त्यधुना घस्त्र इति प्रश्नस्य निर्णयः ॥ २९ ॥ यद्वाक्षयतृतीयाया–माद्यायां यदि पृच्छति । तदा पंचदशघ्नानि पर्वाण्येकोनविंशतिः ॥ ३० ॥ पंचाशीत्या समधिकं ततो जातं शतद्वयं २८५ । तृतीयायां पृष्टमिति क्षिप्यंते तिथयस्त्रयः ॥ ३१ ॥ साष्टाशीति शतद्वंद्वं २८८ जज्ञेऽथावमरात्रकैः । पंचभिस्त्यक्तमेतत् स्यात् सत्र्यशीतिशतद्वयं २८३ ॥३२॥ अस्मिन् द्विगुणिते पंच–शती षट्षष्टियुग्भवेत् । सैकषष्टिरियं सप्त–विंशा भवति षट्शती ६२७ ॥ ३३ ॥ द्वाविंशेन शतेनास्या १२२ भागे पंचकमाप्यते । उद्धरंति सप्तदश स्युः सार्द्धा अष्ट तेऽर्द्धिताः ॥ ३४ ॥ पंचर्त्तवस्ततोऽतीताः षष्ठोऽसौ वर्त्ततेऽधुना । अष्टौ जग्मुर्दिनान्यस्या–धुना नवममस्ति च ॥ ३५ ॥

त्रिंशतोऽपि युगर्त्तूनां पूर्त्तेर्मासांस्तिथीनपि । पक्षांश्च कृष्णशुक्लाख्यान् ब्रूमोऽथ समयोदितान् ॥ ३६ ॥ आद्यो भाद्रपदश्याम–प्रतिपद्यंतमश्नुते ।

---

(२८). ते चालता ऋतुना पण अग्यार दिवसो वीती गया छे अने बारमो दिवस आजे वर्ते छे. ए रीते प्रश्ननो निर्णय थयो. (२९). अथवा युगनी पहेली अक्षयतृतीया (अखात्रीज) ने दिवसे कोइ प्रश्न करे के हालमां केटला ऋतु गया अने कयो ऋतु चाले छे ? उत्तर—ओगणीश पर्व वीती गया छे तेने पंदरे गुणतां बसो ने पंचाशी (२८५) थया. तेमां त्रीजने दिवसे पूछेलुं होवाथी त्रण उमेर्या त्यारे बसो ने अठाशी (२८८) थया. तेमांथी पांच क्षयतिथिओ बाद करतां बसो ने त्र्याशी (२८३) रहे छे. तेने बमणा करवाथी पांच सो ने छासठ (५६६) थाय छे. तेमां एकसठ (६१) उमेरवाथी छ सो ने सत्तावीश (६२७) थाय छे. तेने एक सो ने बावीशे भागतां भागमां पांच आवे छे अने सतर बाकी शेष रहे छे. तेने अर्ध करवाथी साडाआठ थाय छे. तेथी करीने पांच ऋतुओ व्यतीत थया अने छट्ठो ऋतु हालमां वर्ते छे, तेना पण आठ दिवस व्यतीत थया अने आजे नवमो दिवस वर्ते छे. (३०–३५).

हवे युगना त्रीशे ऋतुओ क्यारे पूर्ण थाय छे, तेना मास, तिथि तथा शुक्ल अने कृष्णपक्ष सिद्धांतमां कह्या प्रमाणे कहीए छीए. (३६).—पहेलो ऋतु भाद्रपद मासनी कृष्ण प्रतिपदाने दिवसे पूर्ण थाय छे, बीजो ऋतु कार्तिक मासना कृष्णपक्षमां त्रीजने

कार्त्तिकस्य तृतीयायां कृष्णपक्षे द्वितीयकः ॥ ३७ ॥ पौषस्य कृष्णपंचम्यां तृतीयः पूर्त्तिमश्नुते । फाल्गुनश्यामसप्तम्यां पूर्यते च तुरीयकः ॥ ३८ ॥ राधश्यामनवम्यां च पंचमः परिपूर्यते । शुचेरशुभ्रैकादश्यां षष्ठः पूर्णो भवेदृतुः ॥ ३९ ॥ पूर्णो भाद्रपदश्याम–त्रयोदश्यां च सप्तमः । अमावास्यां कार्त्तिकस्य पूर्णो भवति चाष्टमः ॥ ४० ॥ एते यथोक्तमासेषु कृष्णपक्षे-ऽत्तमाप्नुयुः । ऋतवोऽष्टापि तीर्थेशै–रित्युक्तं सर्वदर्शिभिः ॥ ४१ ॥ पौष-शुक्लद्वितीयायां नवमर्त्तुः समाप्यते । फाल्गुनश्वेततुर्यायां दशमोऽतं प्रपद्यते ॥ ४२ ॥ एकादशोऽतं वैशाख–शुक्लपक्ष्यां बिभर्त्यथ । आषाढशुक्लाष्टम्यां च द्वादशः परिपूर्यते ॥ ४३ ॥ त्रयोदशो भाद्रपद–दशम्यां विशदत्विषि । चतुर्दशः कार्त्तिकीक–द्वादश्यां धवलद्युतौ ॥ ४४ ॥ पौषश्वेतचतुर्दश्यां पूर्त्तिं पंचदशोऽश्नुते । वलक्षपक्षप्राप्तांताः सप्तामी ऋतवः स्मृताः ॥ ४५ ॥ ऋतवोऽमी पंचदश–युगपूर्वार्द्धभाविनः । इतः पंचदशोच्यंते युगपश्चार्द्ध-भाविनः ॥ ४६ ॥ फाल्गुनस्य प्रतिपदि श्यामायामथ षोडश । राधकृष्ण-

---

दिवसे पूर्ण थाय छे. (३७). पोष मासनी कृष्ण पांचमने दिवसे त्रीजो ऋतु पूर्ण थाय छे, फागण वद सातमने दिवसे चोथो ऋतु पूर्ण थाय छे. (३८). वैशाख वद नवमीने दिवसे पांचमो ऋतु पूर्ण थाय छे, अषाढ वद अग्यारशने दिवसे छठ्ठो ऋतु पूर्ण थाय छे. (३९). भाद्रपद मासनी कृष्ण त्रयोदशीने दिवसे सातमो ऋतु पूर्ण थाय छे, कार्तिक मासनी अमावास्याए आठमो ऋतु पूर्ण थाय छे. (४०). आ आठ ऋतुओ उपर कहेला मासमां कहेली कृष्णपक्षनी तिथिओमां पूर्ण थाय छे, एम सर्वदर्शी तीर्थंकरोए कह्युं छे. (४१). हवे पोष मासना शुक्लपक्षनी द्वितीयाने दिवसे नवमो ऋतु समाप्त थाय छे. फाल्गुन मासना शुक्लपक्षनी चतुर्थीने दिवसे दशमो ऋतु पूर्ण थाय छे. (४२). वैशाख शुदि छठ्ठने दिवसे अग्यारमो ऋतु पूर्ण थाय छे, अषाढ शुदि आठमने दिवसे बारमो ऋतु समाप्त थाय छे. (४३). भाद्रपद मासना शुक्लपक्षमां दशमने दिवसे तेरमो ऋतु समाप्त थाय छे, कार्तिक मासना शुक्लपक्षमां बारशने दिवसे चौदमो ऋतु पूर्ण थाय छे. (४४). पोष शुदि चौदशने दिवसे पंदरमो ऋतु पूर्ण थाय छे, आ सात ऋतुओ शुक्लपक्षने विषे संपूर्णताने पामे छे. (४५). आ पंदरे ऋतुओ युगना प्रथम अर्ध भागमां आवे छे. हवे युगना पाछला अर्ध भागमां थनारा पंदर ऋतुओ कहे छे. (४६)— फागण वद एकमने दिवसे सोळमो ऋतु समाप्त थाय छे, वैशाख वद त्रीजने दिवसे

तृतीयाया–मंतं सप्तदशोंचति ॥ ४७ ॥ आषाढासितपंचम्या–मंतमष्टादशो भजेत् । भाद्रानुज्ज्वलसप्तम्यां पूर्यतेऽष्टादशाग्रिमः १९ ॥ ४८ ॥ कार्त्तिके विंशतितमो नवम्यां मेचकद्युतौ । पौषस्य कृष्णैकादश्या–मेकविंशतिसंख्यकः ॥ ४९ ॥ फाल्गुनस्य त्रयोदश्यां द्वाविंशः श्यामलत्विषि । स त्रयोविंशतितमो राधामायां प्रपूर्यते ॥ ५० ॥ अष्टाप्यमी कृष्णपक्ष–प्राप्तांताः पूर्यतेऽथ च । शुचिशुक्लद्वितीयायां चतुर्विंशतिपूरणः ॥ ५१ ॥ भाद्रस्य श्वेततुर्यायां पंचविंशस्तु पूर्यते । षड्विंशतितमः षष्ठ्यां शुभ्रायां कार्त्तिकस्य तु ॥ ५२ ॥ स सप्तविंशतितमः पौषाष्टम्यां सितद्युतौ । दशम्यां फाल्गुने श्वेत–त्विष्यष्टाविंशतिप्रमः ॥ ५३ ॥ द्वादश्यां राध एकोन–त्रिंशत्तमः सितत्विषौ । शुचिशुक्लचतुर्दश्यां पूर्त्तिं त्रिंशत्तमोऽश्नुते ॥ ५४ ॥ त्रिंशदप्येवमृतवः प्रोक्ताः प्राप्तसमाप्तयः । एकांतरेषु मासेषु तिथिष्वेकांतरास्विति ॥ ५५ ॥ किंच–कर्ममासात्सूर्यमासे–ऽहोरात्रार्द्धं यदेधते । ऋतौ द्विभानुमासोत्थे–ऽहोरात्रो वर्द्धते ततः ॥ ५६ ॥ ततश्च–

सत्तरमो ऋतु समाप्त थाय छे. (४७). अषाढ वद पांचमने दिवसे अढारमो ऋतु पूर्ण थाय छे, भादरवा वद सातमने दिवसे ओगणीशमो ऋतु पूर्ण थाय छे. (४८). कार्तिक वद नवमीने दिवसे वीशमो ऋतु पूर्ण थाय छे, पोष वद अग्यारशने दिवसे एकवीशमो ऋतु पूर्ण थाय छे. (४९). फागण वद तेरशने दिवसे बावीशमो ऋतु पूर्ण थाय छे, वैशाख मासनी अमावास्याने दिवसे त्रेवीशमो ऋतु पूर्ण थाय छे. (५०). आ आठ ऋतुओ कृष्णपक्षमां अंतने पामे छे. हवे अषाढ शुदि बीजने दिवसे चोवीशमो ऋतु पूर्ण थाय छे. (५१). भादरवा शुदि चोथने दिवसे पचीशमो ऋतु पूर्ण थाय छे, कार्तिक शुदि छठने दिवसे छवीशमो ऋतु समाप्त थाय छे. (५२). पोष शुदि आठमने दिवसे सतावीशमो ऋतु पूर्ण थाय छे, फागण शुदि दशमने दिवसे अठ्ठावीशमो ऋतु समाप्त थाय छे. (५३). वैशाख शुदि बारशने दिवसे ओगणत्रीशमो ऋतु पूर्ण थाय छे अने अषाढ मासना शुक्लपक्षनी चौदशने दिवसे त्रीशमो ऋतु समाप्त थाय छे. (५४). आ प्रमाणे त्रीशे ऋतुओनी समाप्ति एकांतर मासमां अने एकांतर तिथिए थाय छे ते कह्युं. (५५). वळी बीजुं कहीए छीए के—कर्ममास करतां सूर्यमासमां अर्ध अहोरात्रनी वृद्धि छे, तेथी करीने बे सूर्यमासना एक ऋतुमां एक अहोरात्र वृद्धि पामे छे (वधारे छे). (५६). तेथी करीने ज बे कर्ममासमां साठ अहोरात्र होय छे अने बे सूर्यमासना एक

कर्ममासद्वये षष्टि-रहोरात्रा भवंति वै । सूर्यमासद्वयात्मर्तु-स्त्वेकषष्टि-दिनात्मकः ॥ ५७ ॥ द्विकर्ममासापेक्षस्त-द्भवेदृतुमृतुं प्रति । अहोरात्रः समधिक-श्चतुर्मास्यां तु तद्द्वयं ॥ ५८ ॥ वर्षाशीतोष्णकालेषु चतुर्मास-मितेषु यत् । अधिरात्रं भवेत्पर्व तृतीयमथ सप्तमं ॥ ५९ ॥ तथोक्तं ज्योतिष्करंडे—तइयंमि य कायव्वं अइरत्तं सत्तमे य पव्वंमि । वासहि-मगिम्हकाले चउचउमासे वि हीयंते ॥ ६० ॥ श्रावणो मार्गशीर्षश्च चैत्रश्चेति यथाक्रमं । वर्षाशीतोष्णकालाना-मादिमासाः प्रकीर्त्तिताः ॥६१॥ सूर्यर्त्तुपूर्त्तिसमये कर्ममासव्यपेक्षया । अहोरात्रः समधिकः स्यादेकैक इति स्फुटं ॥ ६२ ॥ आषाढे च भाद्रपदे कार्त्तिके पौष एव च । फाल्गुने माधवे चाति-रात्रं नान्येषु कर्हिचित् ॥ ६३ ॥ ऋतुप्रारंभका मासा अप्येत एव कीर्त्तिताः । ज्योतिष्करंडप्रज्ञप्ति-वृत्त्यादेर्मतमेतकत् ॥ ६४ ॥ भगवती-वृत्तौ तु-प्रावृट् श्रावणादिः, वर्षारात्रोऽश्वयुजादिः, शरन्मार्गशीर्षादिः, हेमंतो माघादिः, वसंतश्चैत्रादिः, ग्रीष्मो ज्येष्ठादिरिति पक्षांतरं दृश्यते.

ऋतुमां एकसठ अहोरात्र होय छे. (५७). तेथी करीने बे कर्ममासनी अपेक्षाए ऋतु ऋतु प्रत्ये एक एक अहोरात्र अधिक होय छे अने चार मासमां थइने बे अहोरात्र अधिक होय छे. (५८). वर्षाकाळ (चोमासुं), शीतकाळ (शीयाळो) अने उष्णकाळ (उनाळो) ए चार चार मासना काळने विषे त्रीज अने सातमनी तिथि अधिक होय छे (वृद्धि पामे छे). (५९). ते विषे ज्योतिष्करंडकने विषे कह्युं छे के—" चार चार मासना प्रमाण-वाळा वर्षाकाळ, शीतकाळ अने उष्णकाळने विषे त्रीज अने सातमनी तिथि वृद्धि पामे छे. (६०) " वर्षाकाळनो प्रथम मास श्रावण छे, शीतकाळनो पहेलो मास मार्गशीर्ष छे अने उष्णकाळनो पहेलो मास चैत्र कह्यो छे. (६१). सूर्य ऋतुनी पूर्तिने समये कर्म-मासनी अपेक्षाए एक एक अहोरात्र अधिक होय छे ए वात प्रगट ज छे. (६२). अषाढ, भाद्रपद, कार्तिक, पोष, फाल्गुन अने वैशाख ए छ मासमां ज अधिक तिथि होय छे; बीजा मासोमां होती नथी. (६३). तेम ज ऋतुना प्रारंभना मास पण ए छ ज कह्या छे. ज्योतिष्करंडक अने प्रज्ञप्तिनी टीका विगेरेनो आ मत छे. (६४). परंतु भगवतीनी टीकामां तो " प्रावृष् ऋतु श्रावणथी शरु थाय छे, वर्षारात्र आश्विनथी, शरद ऋतु मार्गशीर्षथी, हेमंत ऋतु माघ मासथी, वसंत ऋतु चैत्रथी अने ग्रीष्म ऋतु ज्येष्ठ मासथी शरु थाय छे. " एम पक्षांतर देखाय छे. आवो पक्ष जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रमां

इदं च पक्षांतरं जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रेऽपि उत्सर्पिणीनिरूपणे 'चउद्दस पढमसमए' इत्यस्मिन् सूत्रे संगृहीतमस्ति. यतस्तत्र श्रावणे मासि उत्सर्पिणी लगति, तत्प्रथमसमय एव चतुर्दश काला युगपल्लगंति, तन्मध्ये ऋतुरप्यस्ति, तत ऋतोरप्यारंभः श्रावणे मासि भवतीति पक्षांतरमिति ज्ञेयं. किंच दक्षिणायनारंभकोऽपि श्रावण एव, चातुर्मासकारंभकोऽप्ययमेव, तेन ऋत्वारंभकोऽप्यसाविति पक्षोऽपि युज्यत एवेति. यदि वा सूर्यवर्षमाश्रित्य युगे ऋतवः प्रथमाषाढपूर्णिमादयः स्युः, कर्मवर्षस्य तु ऋतवः श्रावणासितप्रतिपदाद्याः स्युरित्यतो वा पक्षांतरमिदं भावीति संभाव्यते, तत्त्वं त्विह तद्विद्वेद्यमिति.

ऋतूनामित्यमी मासा यथाशास्त्रं निरूपिताः । अथर्त्तुपूरकतिथिज्ञानाय करणं ब्रुवे ॥ ६५ ॥ जिज्ञासितर्त्तोर्या संख्या द्विगुणा सा विधीयते । रूपोना क्रियते द्वाभ्यां गुण्यते च ततः पुनः ॥ ६६ ॥ द्विः स्थाप्यतेऽथ चैकस्याः कृतेऽर्द्धे ज्ञायते सुखं । युगातीतपर्वयुक्ता–

पण उत्सर्पिणीनुं स्वरूप कहेती वखते 'चउद्दस पढमसमए' (पहेले समये चौद) आ सूत्रमां कहेलो छे, कारण के तेमां श्रावण मासमां उत्सर्पिणीनी शरुआत कहेली छे. तेना पहेला समये ज चौद प्रकारना काळ एकीसाथे शरु थाय छे. ते चौदने मध्ये ऋतु पण गणेलो छे. तेथी ऋतुनो पण आरंभ श्रावण मासथी ज थाय छे, एम बीजो पक्ष समजवो. वळी दक्षिणायननो आरंभ पण श्रावणथी ज थाय छे, चातुर्मासनो आरंभ पण श्रावणथी ज थाय छे, तेथी करीने ऋतुनो आरंभ पण श्रावणथी ज थाय छे, एवो पक्ष पण योग्य ज छे अथवा तो सूर्यवर्षने आश्रीने युगने विषे ऋतुओ पहेला अषाढनी पूर्णिमाथी शरु थाय छे अने कर्मवर्षने आश्रीने ऋतुओ श्रावण वद एकमथी शरु थाय छे. आ कारणथी पण आ पक्षांतर हशे एम संभवे छे. तत्त्व तो ते विषयना विद्वानो ज जाणे.

आ प्रमाणे ऋतुना मासो शास्त्रमां कह्या प्रमाणे अहीं बताव्या छे. हवे ऋतुने समाप्त करनारी तिथिने जाणवा माटे करण (रीत) कहुं छुं. (६५).—जाणवाने इच्छेला ऋतुनी जे संख्या होय तेने बमणी करवी. तेमांथी एक बाद करवो. तेने फरीथी बेए गुणवा. (६६). ते अंकने बे ठेकाणे जूदो जूदो स्थापवो. तेमांथी एक तरफना अंकने अर्ध करवो. तेम करवाथी युगना वीती गयेला पर्व सहित इच्छित ऋतुनी छेल्ली तिथि

भीष्टर्त्तोरंतिमा तिथिः ॥ ६७ ॥ यथा युगे तिथौ कस्यां प्रथमर्त्तुः समाप्यते । इति प्रश्ने ऋतुसंख्यै–ककः स द्विगुणीकृतः ॥ ६८ ॥ द्वौ स्यातां तौ च रूपोना–वेकः स द्विगुणः पुनः । द्वावेव तौ द्विः स्थाप्येते एकत्रार्द्धे कृते पुनः ॥ ६९ ॥ एकोऽवशिष्ट एवं च द्विपर्वातिक्रमे युगे । ऋतुराद्यः प्रतिपदि संपूर्णः प्रथमे तिथौ ॥ ७० ॥ जिज्ञासिते द्वितीयर्त्तौ द्वावेव द्विगुणीकृतौ । जाताश्चत्वार एकोना–स्त्रयस्ते द्विगुणीकृताः ॥७१॥ जाताः षट् ते स्थापिता द्वि–रेकत्र चार्द्धितास्त्रयः । अन्यत्र तु षडेव स्यु-स्तदेवं प्रश्ननिर्णयः ॥ ७२ ॥ युगादितः षट् पर्वाणि व्यतीत्यर्त्तुर्द्वितीयकः । तृतीयायां तिथौ पूर्ण एवं सर्वत्र भावना ॥ ७३ ॥ त्रिंशत्तमे ऋतौ जिज्ञा–सिते त्रिंशद् द्विताडिता । षष्टिः स्यादथ सैकोन–षष्टी रूपोज्झिता भवेत् ॥ ७४ ॥ भूयः सा द्विगुणा जात–मष्टादशोत्तरं शतं । द्विः संस्थाप्य च तस्यार्द्धे कृत एकत्र शिष्यते ॥ ७५ ॥ एकोनषष्टिरित्येवं विवक्षितविनिश्चयः । अष्टादशोत्तरे पर्व–शतेऽतीते युगादितः

सुखेथी जाणी शकाय छे. (६७). जेमके युगने विषे पहेलो ऋतु कइ तिथिए समाप्त थाय ? एम कोइ प्रश्न करे तो ऋतुनी संख्या एक होवाथी तेने बमणी करवाथी बे थया. तेमांथी एक बाद करतां बाकी एक रह्यो. तेने फरीथी बेए गुणतां बे थया. तेने जूदा जूदा बे ठेकाणे स्थापन कर्या. तेमांथी एक ठेकाणे स्थापेला बेने अर्ध कर्या, तो एक आव्यो; तेथी बे पर्व वीती गया पछी एकमने दिवसे पहेलो ऋतु पूर्ण थयो एम सिद्ध थयुं. (७०). बीजा ऋतुनी छेल्ली तिथि जाणवानी इच्छा थाय तो बेने बमणा करवाथी चार थाय. तेमांथी एक बाद करतां त्रण रह्या. तेने फरीथी बमणा करतां छ थया. तेने बे ठेकाणे स्थापन कर्या. तेमांथी एक ठेकाणे स्थापेला छने अर्धा कर्या त्यारे त्रण रह्या अने बीजे ठेकाणे तो छ ज छे; तेथी प्रश्ननो जवाब ए आव्यो के युगनी शरुआतथी छ पर्व वीती गया पछी त्रीजने दिवसे बीजो ऋतु पूर्ण थयो, एम सर्वत्र जाणवुं. (७३). त्रीशमो ऋतु कइ तिथिए समाप्त थयो ? एम जाणवानी इच्छा होय तो त्रीशने बेए गुणवाथी साठ थया. तेमांथी एक बाद करतां ओगणसाठ रह्या. (७४). तेने फरीथी बेए गुणतां एक सो ने अढार थया. तेने बे ठेकाणे स्थापी एकने अर्धा कर्या त्यारे ओगणसाठ थया; तेथी कहेवाने इच्छेली तिथिनो निर्णय थयो के युगनी शरुआतथी एक

॥ ७६ ॥ एकोनषष्टितमायां तिथौ संपूर्णतां दधौ । ऋतुस्त्रिंशत्तम इति ज्ञेयं तत्त्वमिदं त्विह ॥ ७७ ॥ नैकोनषष्टिस्तिथयः स्युरित्येकोनषष्टिका । ह्रियते पंचदशभिः स्याच्छेषांकसमा तिथिः ॥ ७८ ॥ ततश्च—युगस्य पंचमे वर्षे आषाढे प्रथमेऽस्य च । पूर्णः शुक्लचतुर्दश्यामृतुस्त्रिंशत्तमोंतिमः ॥ ७९ ॥

अथ चंद्रर्तुस्वरूपमुच्यते—सर्वर्क्षभोगो नक्षत्र–पर्याय इति कथ्यते । ते च भानोर्युगे पंच सप्तषष्टिर्निशापतेः ॥ ८० ॥ एकैकस्मिंश्च नक्षत्र–पर्याये ऋतवो हि षट् । ततोऽर्कस्य युगे त्रिंशत् द्व्युत्तरेंदोश्चतुःशती ॥ ८१ ॥ एकैकश्च मृगांकर्तु–रहोरात्रचतुष्टयी । सप्तत्रिंशदहोरात्र–भागाश्च सप्तषष्टिजाः ॥ ८२ ॥ विधोर्यदेकनक्षत्र–पर्याये सप्तविंशतिः । अहोरात्राः सप्तषष्टि–भागास्तथैकविंशतिः ॥ ८३ ॥ तेषां भागे हृते षड्भि–र्लब्धा दिनचतुष्टयी । शेषं दिनत्रयं तच्च सप्तषष्ट्या हतं भवेत् ॥ ८४ ॥ द्विशत्येकोत्तराऽत्रैक–विंशत्यंशविमिश्रणे । द्वाविंशे द्वे शते सप्त–

सो ने अढार पर्व वीती गया पछी ओगणसाठमी तिथिने रोज त्रीशमो ऋतु समाप्त थयो. अहीं आ तत्त्व जाणवुं के ओगणसाठ तिथिओ होती नथी, तेथी ओगणसाठने पंदरे भांगतां जे शेष रहे ते तिथि (अने जे भागमां आवे ते पर्वमां उमेरवा); तेथी सिद्ध थयुं के—युगना पांचमा वर्षमां पहेला अषाढ मासमां शुक्लपक्षनी चौदशने दिवसे छेल्लो त्रीशमो ऋतु समाप्त थाय छे. (७९).

हवे चंद्रने आश्री ऋतुओनुं स्वरूप बतावे छे.—सर्व नक्षत्रोनो भोगवटो थाय ते नक्षत्रपर्याय कहेवाय छे (सूर्य के चंद्र सर्व नक्षत्रोने भोगवी रहे तेटलो काळ एक नक्षत्रपर्याय कहेवाय छे). एक युगमां सूर्यना नक्षत्रपर्यायो पांच थाय छे अने चंद्रना नक्षत्रपर्यायो सडसठ थाय छे. (८०). एक एक नक्षत्रपर्यायमां छ छ ऋतुओ आवे छे; तेथी एक युगमां सूर्यने आश्रीने त्रीश ऋतुओ अने चंद्रने आश्रीने चार सो ने बे ऋतुओ आवे छे. (८१). एक चंद्रऋतुनो काळ चार अहोरात्र अने एक अहोरात्रना सडसठीया साडत्रीश अंशो होय छे. (८२). कारणके चंद्रना एक नक्षत्रपर्यायमां सतावीश अहोरात्र अने एक अहोरात्रना सडसठीया एकवीश भाग ($२७\frac{२१}{६७}$) होय छे. (८३). तेने छए भागवाथी भागमां चार दिवस आवे छे अने शेष त्रण दिवस रहे छे. तेने सडसठे गुणतां बसो ने एक थाय छे. तेमां एकवीश अंश भेळववाथी सडसठीया बसो ने बावीश ($\frac{२२२}{६७}$) अंश

एकेनाद्ये मृगांकर्त्तौ ध्रुवराशिर्निहन्यते । जिज्ञासिते द्वितीये तु ध्रुवांकस्ताड्यते त्रिभिः ॥ ३ ॥ एवं च—द्व्याढ्यचतुःशततम-जिज्ञासायां तु ताड्यते । ध्रुवराशिस्त्र्युत्तराष्ट-शतमानेन राशिना ॥ ४ ॥ राशिर्द्व्युत्तरया वृद्ध्या वर्द्धमानो हि जायते । रूपोनो द्विगुणः स्वस्वा-भीष्टचंद्रर्त्तुमानतः ॥ ५ ॥ यथा तृतीये चंद्रर्त्तौ वृद्ध्या द्व्युत्तरया भवेत् । गुणाकः पंचमः सोऽस्मा-द्रूपोनो द्विघ्न एव हि ॥ ६ ॥ ततस्तथा नाडितोऽसौ ध्रुवराशिर्विभज्यते । चतुस्त्रिंशशतेनायं तिथिश्चंद्रर्त्तुपूर्त्तिभाग् ॥ ७ ॥ यथा द्वितीयचंद्रर्त्तु-पृच्छायां त्रिगुणीकृता । पंचाढ्या त्रिशती पंच-दशाढ्याः स्युः शता नव ॥ ८ ॥ चतुस्त्रिंशशतेनैषां भागे षट् करमागताः । शेषमेकादशशतं तद्द्विकेनापवर्त्यते ॥ ९ ॥ अध्यर्द्धाः पंचपंचाशत् लवाः स्युः सप्तषष्टिजाः । तदेवमिष्टचंद्रर्त्तु-निश्चयोऽयमुपस्थितः ॥ १० ॥ युगादेः षट्स्वतीतेषु दिनेषु सप्तमस्य च । अध्यर्द्धैः पंचपंचाश-न्नांशकैः सप्त-

---

चंद्रऋतु जाणवानी इच्छा होय तो ध्रुवराशिने एके गुणवो अने बीजो चंद्रऋतु जाणवानी इच्छा होय तो ध्रुवराशिने त्रणवडे गुणवो. (३). ए प्रमाणे छेवट चार सो ने बेमो चंद्रऋतु जाणवानी इच्छा होय तो ध्रुवराशिने आठ सो ने त्रणवडे गुणवो. (४). अर्थात् अहीं जेटलामो चंद्रऋतु जाणवानी इच्छा होय ते अंकने बमणो करी तेमांथी एक बाद करीए त्यारे एकथी आगळ आगळ बबेनी वृद्धिवाळो अंक प्राप्त थाय छे. (५). जेमके त्रीजो चंद्रऋतु जाणवाने इष्ट होय तो बबेनी वृद्धिवाळो पांचनो अंक आवे छे. ते पांचनो अंक त्रणने बमणा करी एक बाद करीए त्यारे आवे छे. (ए ज रीते चार सो ने बेमा चंद्रऋतुने जाणवानी इच्छा होय तो तेने बमणा करी एक बाद करतां आठ सो ने त्रण आवे छे.) (६). त्यारपछी उपर कह्या प्रमाणे ८०३ ने ३०५ वडे गुणेला आ ध्रुवराशिने एक सो ने चोत्रीशे भागवाथी चंद्रऋतुनी समाप्तिनी तिथि आवे छे. (७). उदाहरण—बीजो चंद्रऋतु कइ तिथिए पूर्ण थाय ? एम कोइ प्रश्न करे तो ध्रुवराशि त्रण सो ने पांचने (३०५) त्रणे गुणतां नव सो ने पंदर (९१५) थाय छे. तेने एक सो चोत्रीशे (१३४) भागतां छ हाथमां (भागमां) आवे छे. बाकी एक सो ने अग्यार (१११) शेष रहे छे. तेने बेवडे भागवा त्यारे सडसठीया साडीपंचावन (५५॥) अंशो आवे छे; तेथी करीने इच्छेला (बीजा) चंद्रऋतुनी समाप्तिनो आ निश्चय थयो के-

षष्टिजैः ॥ ११ ॥ व्यतीतैः स्यान्मृगांकर्त्तु-र्द्वितीयः पूर्णतां गतः । कार्या विचक्षणैरेवं सर्वत्रान्यत्र भावना ॥ १२ ॥

अथ सूर्यर्त्तुसंपूर्त्तौ भोग्यमिंदोस्तथा रवेः । यन्नक्षत्रं भवेत्तस्य ज्ञानाय करणं ब्रुवे ॥ १३ ॥ ध्रुवांकराशिर्ज्ञेयोऽत्र पंचोपेतं शतं त्रयं । चतुस्त्रिंशशतच्छिन्ना-होरात्रांशात्मकोऽस्त्ययं ॥ १४ ॥ एकादिद्व्युत्तरेणामुं त्रिंशदंतेन राशिना । हत्वा शोधनकान्यस्मा-द्वक्ष्यमाणानि शोधयेत् ॥ १५ ॥ तेषु यच्छोध्यमानेषु सर्वाग्रेण न शुध्यति । सूर्यर्त्तुपूर्त्तौ नक्षत्रं स्याच्चंद्रस्य रवेरपि ॥१६॥ राशेर्द्व्युत्तरवृद्धस्य ज्ञेया प्राग्वत्प्ररूपणा । बोध्या शोधनकानां तु प्राज्ञैः प्रज्ञापनासकौ ॥ १७ ॥ अर्द्धक्षेत्रे सप्तषष्टि-र्ऋक्षे शोधनकं स्मृतं । समक्षेत्रे चतुस्त्रिंशं शतं शोधनकं भवेत् ॥ १८ ॥ सार्द्धक्षेत्रे च नक्षत्रे स्यादेकाढ्यं शतद्वयं । इंदोरभिजितो भानि शोध्यान्यर्कस्य पुष्यतः ॥ १९ ॥ ऋक्षस्याभिजितः पूर्वं द्विचत्वारिंशदंशकान् । राशेर्विशोधये-

युगनी शरुआतथी छ दिवसो गया पछी सातमा दिवसना सडसठीया साडीपंचावन अंशो जाय ते वखते बीजो चंद्रऋतु पूर्ण थयो. ए प्रमाणे बीजे सर्व ठेकाणे जाणवुं. (८-१२).

हवे सूर्यऋतुनी समाप्ति वखते चंद्र तथा सूर्यनुं जे भोग्य नक्षत्र होय ते जाणवा माटे करण (रीत)ने हुं कहुं छुं. (१३)—अहीं त्रण सो ने पांच (३०५) ध्रुवांक राशि जाणवो. अहोरात्रना एक सो चोत्रीश भागरूप त्रिराशि $\frac{३०५}{१३४}$ छे. (१४). एकथी आरंभीने आगळ आगळ बबेनी वृद्धिवडे (१-३-५ विगेरेवडे) त्रीश सुधी ते ध्रुवांकनी राशिने गुणवो. पछी तेमांथी आगळ कहेवाशे ते प्रमाणे बादबाकी करवी. (१५). बादबाकी करतां करतां ज्यारे सर्व प्रकारे बाद न थइ शके त्यारे सूर्यऋतुनी समाप्ति करनारुं चंद्र अने सूर्यनुं नक्षत्र आवे छे. (१६). आगळ आगळ बबेनी वृद्धिवाळा राशिनी प्ररूपणा पूर्वे कह्या प्रमाणे जाणवी अने बादबाकी करवानी प्ररूपणा पंडितोए आ प्रमाणे जाणवी. (१७).—अर्धक्षेत्रवाळा नक्षत्र होय तो सडसठ बाद करवा एम कह्युं छे, समक्षेत्र नक्षत्र होय तो तेमांथी एक सो ने चोत्रीश बाद करवा (१८) अने सार्धक्षेत्र नक्षत्र होय तो तेमांथी बसो ने एक बाद करवा. तेमां चंद्रनुं भोग्य नक्षत्र लाववुं होय तो अभिजित् नक्षत्रथी बादबाकी करवी अने सूर्यनुं भोग्य नक्षत्र लाववुं होय तो पुष्य नक्षत्रथी बादबाकी करवी. (१९). तेमज चंद्रना भोग्य नक्षत्रनो विचार करवो होय तो ते ध्रुवांक राशिमांथी प्रथम अभिजित् नक्षत्रना बेंताळीश (४२) अंशो बाद करवा, अने सूर्य नक्षत्रना योगनो विचार

स्तस्मा-च्चंद्रयुक्तर्चचिंतने ॥ २० ॥ सूर्यर्क्षयोगचिंतायां चादौ पुष्यस्य शोधयेत् । अष्टाशीतिं ततः शोध्या-न्युडूनि प्रोक्तवत्क्रमात् ॥ २१ ॥ यथा प्रथमसूर्यर्त्तुः कस्मिन्नुडुपशालिनि । नक्षत्रे पूर्णतामेति युगे तत्रे-दमादिशेत् ॥ २२ ॥ प्रागुक्तो ध्रुवराशिर्यः पंचोपेतं शतत्रयं । एकेन गुणितः सोऽयं तावानेव व्यवस्थितः ॥ २३ ॥ तस्मादभिजितः शुद्धा द्वाचत्वारिं-शदादितः । सत्रिषष्टि शतद्वंद्वं शेषं तस्माच्च शोध्यते ॥ २४ ॥ श्रुतेः शतं चतुस्त्रिंश-मथ शेषं शतं स्थितं । एकोनत्रिंशमस्माच्च धनिष्ठा तु न शुध्यति ॥ २५ ॥ ततश्च—एतावत्सु १२९ धनिष्ठाया भुक्तेष्वंशेष्विहेंदुना । सूर्यर्त्तुः प्रथमः पूर्ण इति पूर्वोक्तनिर्णयः ॥ २६ ॥ अथ प्रथमसूर्यर्त्तु-पूर्त्तौ सूर्यर्क्षमुच्यतां । ध्रुवांकोऽत्रापि पूर्वोक्तः पंचोपेतं शतत्रयं ॥ २७ ॥ एत-च्चैकेन गुणितं तादृगेव व्यवस्थितं । अष्टाशीतिः शोध्यतेऽस्मात् । पुष्यस्य प्रथमं ततः ॥ २८ ॥ शेषे च द्वे शते सप्त-दशाढ्ये शोध्यते ततः ।

करवो होय त्यारे ते ध्रुवांक राशिमांथी प्रथम पुष्य नक्षत्रना अठ्ठाशी (८८) अंशो बाद करवा अने त्यारपछी कहेला क्रम प्रमाणे पछीना नक्षत्रना अंशो बाद करवा. (२१). उदाहरण—युगने विषे पहेलो सूर्यऋतु कया चंद्रनक्षत्रमां संपूर्ण थाय छे ? एम कोइ प्रश्न करे तो तेना जवाबमां आ प्रमाणे कहेवुं. (२२).—प्रथम जे त्रण सो ने पांचनो ध्रुवराशि कह्यो छे, तेने एके गुणतां तेटला ज (३०५) आवे छे. तेमांथी प्रथम अभि-जित्‌ना बेंताळीश अंशो बाद करतां बाकी बसो ने त्रेसठ (२६३) रहे छे. तेमांथी श्रवण नक्षत्रना एक सो ने चोत्रीश (१३४) अंशो बाद करतां एक सो ने ओगणत्रीश (१२९) शेष रहे छे अने तेमांथी धनिष्ठाना अंशो बाद थइ शकता नथी. (२५). तेथी करीने चंद्रवडे धनिष्ठाना आटला (१२९) अंशो भोगवाइ जाय त्यारे पहेलो सूर्यऋतु पूर्ण थाय छे, एम सिद्ध थाय छे. (२६). बीजुं उदाहरण—युगने विषे पहेलो सूर्यऋतु कया सूर्यनक्षत्रमां पूर्ण थाय छे ? ते कहो, एम कोइए प्रश्न पूछ्यो, तेना जवाबमां आ प्रमाणे कहेवुं.—अहीं पण पूर्वे कहेलो ध्रुवांक त्रण सो ने पांच (३०५) छे. तेने एके गुणतां तेटला ज (३०५) थाय छे. तेमांथी प्रथम पुष्य नक्षत्रना अठ्ठाशी (८८) अंश बाद करवा. बाद करतां बाकी बसो ने सतर (२१७) रहे छे. तेमांथी अश्लेषा नक्षत्रना सडसठ (६७) अंशो बाद करतां बाकी एक सो ने

अश्लेषायाः सप्तषष्टिः । शेषं सार्द्धं शतं स्थितं ॥ २९ ॥ शतमस्माच्चतुस्त्रिंशं मघासंबंधि शोध्यते । षोडशावस्थिताः शेषा—स्तदेष प्रश्ननिर्णयः ॥ ३० ॥ सूर्येण पूर्वफाल्गुन्या भागेषु षोडशस्विह । भुक्तेषु प्रथमोऽर्कर्त्तुः संपूर्ण इति बुध्यतां ॥ ३१ ॥ लोके तु—मासौ मार्गादिकौ द्वौ द्वा—वृतुर्हेमंत एव च । शिशिरश्च वसंतश्च ग्रीष्मो वर्षास्तथा शरत् ॥ ३२ ॥ ऋतुभिश्चायने भानोः शिशिराद्यैस्त्रिभिस्त्रिभिः । उदग्याम्याभिधे ताभ्यां द्वाभ्यामर्कस्य वत्सरः ॥ ३३ ॥ इति श्रूयते ॥ इति ऋतुप्रकरणं ॥

ऋतौ ऋतौ द्वौ द्वौ मासा—विरयद्बे द्वादशैव ते । नामान्येषां द्विधा लौकि—कानि लोकोत्तराणि च ॥ ३४ ॥ तत्र लौकिकान्येवं—स्याच्छ्रावणो भाद्रपद आश्विनः कार्त्तिकोऽपि च । मार्गशीर्षश्च पौषश्च माघः फाल्गुन एव च ॥ ३५ ॥ चैत्रस्तथा च वैशाखो ज्येष्ठाषाढाविति क्रमात् । लोकोत्तराण्यथोच्यन्ते नामान्येषां यथाक्रमं ॥ ३६ ॥ अभिनंदित इत्याद्यो द्वितीयः स्यात्प्रतिष्ठितः । तृतीयो विजयाख्यः स्या—च्चतुर्थः प्रीतिवर्द्धनः

पचास (१५०) रहे छे. तेमांथी मघा नक्षत्रना एक सो ने चोत्रीश (१३४) बाद करतां बाकी सोळ (१६) रहे छे; तेथी प्रश्ननो निर्णय आ प्रमाणे थयो के—सूर्य पूर्वफाल्गुनी नक्षत्रना सोळ (१६) अंश भोगवे त्यारे पहेलो सूर्यऋतु पूर्ण थाय छे एम जाणवुं. (२७–३१). लौकिक शास्त्रमां तो आ प्रमाणे कहेलुं छे—मार्गशीर्ष मासथी बबे मासनो एक एक ऋतु थाय छे, ते आ प्रमाणे.—हेमंत, शिशिर, वसंत, ग्रीष्म, वर्षा अने शरद्. (३२). शिशिरादिक त्रण त्रण ऋतुए करीने सूर्यना उत्तर अने दक्षिण नामना बे अयन थाय छे अने ते बे अयनवडे सूर्यनुं एक वर्ष थाय छे. (३३) ए प्रमाणे संभळाय छे. इति ऋतुप्रकरण.

एक एक ऋतुना बबे मास होय छे तेथी एक वर्षमां बार मास होय छे. ते मासनां नाम लौकिक अने लोकोत्तर एम बे प्रकारे छे. (३४). तेमां लौकिक मासनां नाम आ प्रमाणे अनुक्रमे छे—श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पोष, माघ, फाल्गुन, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ अने अषाढ. हवे लोकोत्तर मासनां नाम अनुक्रमे कहीए छीए. (३६).—पहेलो मास अभिनंदित, बीजो प्रतिष्ठित, त्रीजो विजय, चोथो प्रीतिवर्धन, (३७). पांचमो श्रेयान, छट्ठो शिव कह्यो छे, सातमो शिशिर कह्यो छे,

॥ ३७ ॥ पंचमो भवति श्रेयान् षष्ठः शिव इति स्मृतः । सप्तमः शिशिरः ख्यातो हिमवानिति चाष्टमः ॥ ३८ ॥ वसंतमासो नवम–स्ततः कुसुमसंभवः । एकादशो निदाघो द्वा–दशो वनविरोहकः ॥ ३९ ॥ अत्र सूर्यप्रज्ञप्तिवृत्तौ अभिनंदितस्थानेऽभिनंद इति, वनविरोहस्थाने वनविरोधीति दृश्यते. प्रतिमासं च पक्षौ द्वौ बहुलः शुक्ल एव च । आद्यः पिधीयमानेंदु–र्मुच्यमानविधुः परः ॥ ४० ॥ प्रतिपक्षं पंचदश दिवसा रात्रयोऽपि च । प्रतिपद्दिवसो याव–दंते पंचदशीदिनः ॥ ४१ ॥ पूर्वांगनामा प्रथमः परः सिद्धमनोरमः । मनोहरस्तृतीयः स्या–द्यशोभद्रस्तुरीयकः ॥ ४२ ॥ परो यशोधरः षष्ठः सर्वकामसमृद्धकः । सप्तमस्त्विद्रमूर्द्धाभि–षिक्तः सौमनसोऽष्टमः ॥ ४३ ॥ धनंजयस्तु नवमोऽर्थसिद्धो दशमः स्मृतः । एकादशश्चाभिजातो द्वादशोऽत्यशनाभिधः ॥ ४४ ॥ शतंजयस्तदग्र्यः स्या–दग्निवेश्मा चतुर्दशः । पंचदशस्तूपशम–संज्ञको दिवसो मतः ॥ ४५ ॥ अह्नां पंचदशानाम–प्येताः संज्ञाः श्रुते स्मृताः । अथाह्वयक्रमः पंच—दशानामुच्यते निशां ॥ ४६ ॥ उत्तमा १ च सुनक्षत्रा २ एलापत्या ३ यशो-

---

आठमो हिमवान छे. (३८). नवमो वसंत मास छे, त्यारपछी (दशमो) कुसुमसंभव छे, अग्यारमो निदाघ अने बारमो वनविरोहक छे. (३९). अहीं सूर्यप्रज्ञप्तिनी टीकामां अभिनंदितने ठेकाणे अभिनंद अने वनविरोहने ठेकाणे वनविरोधी एवां नाम देखाय छे. दरेक मासमां कृष्णपक्ष अने शुक्लपक्ष एम बे पखवाडीयां होय छे. तेमां पहेला कृष्णपक्षमां चंद्र ढंकातो जाय छे (क्षीण थाय छे) अने बीजा शुक्लपक्षमां मूकातो जाय छे (वृद्धि पामे छे). (४०). दरेक पक्षमां पंदर दिवसो अने पंदर रात्रिओ होय छे. तेमां पहेलो प्रतिपदानो दिवस अने छेल्लो पूर्णिमा (अथवा अमावास्या)नो दिवस होय छे. (४१). तेमां पहेला दिवसनुं नाम पूर्वांग छे, बीजो दिवस सिद्धमनोरम, त्रीजो मनोहर, चोथो यशोभद्र, पांचमो यशोधर, छठो सर्वकामसमृद्धक, सातमो इंद्रमूर्धाभिषिक्त, आठमो सौमनस, नवमो धनंजय, दशमो अर्थसिद्ध कह्यो छे, अग्यारमो अभिजात, बारमो अत्यशन नामनो, त्यारपछीनो (तेरमो) शतंजय, चौदमो अग्निवेश्मा अने पंदरमो दिवस उपशम नामनो कह्यो छे. (४२–४५). आ प्रमाणे पंदरे दिवसोनां नाम श्रुतमां कहेलां छे. हवे पंदरे रात्रिओनां नाम अनुक्रमे कहीए छीए. (४६).—उत्तमा १,

धरा ४। सौमनसा ५ श्रीसंभूता ६ विजया ७ वैजयंत्यपि ८ ॥ ४७ ॥ जयंती ९ नवमी ज्ञेया दशमी चापराजिता १०। इच्छा ११ तथा समाहारा १२ भवेत्तेजा १३ स्त्रयोदशी ॥ ४८॥ अतितेजा १४ स्ततो देवा-नंदा १५ पंचदशी भवेत्। नामांतरं भवत्यस्या नूनं निरतिरित्यपि ॥ ४९ ॥ इत्यहोरात्राणां दिनरात्रिनामानि ॥

तिथयोऽपि स्मृताः पंच-दश द्वेधा भवंति ताः। दिनरात्रिविभेदेन तासां नामान्यथ ब्रुवे ॥ ५० ॥ नंदा १ भद्रा २ जया ३ तुच्छा ४ पूर्णा ५ स्यावर्त्यंते त्रिशः। पंचैवं त्रिगुणाः पंच-दशोक्तास्तिथयो जिनैः ॥५१॥ नंदाख्या प्रतिपत् षष्ठी भवेदेकादशी तथा। द्वितीया सप्तमी द्वाद-श्येता भद्राभिधा मताः ॥५२॥ जयास्तृतीयाष्टम्यौ च त्रयोदशी च कीर्त्तिताः। चतुर्थी नवमी भूते-ष्टा च तुच्छाह्वयाः स्मृताः ॥ ५३ ॥ पंचमी दशमी पंच-दशी पूर्णाभिधा इमाः। अहस्तिथीनां नामानि ज्ञेयान्येवं यथाक्रमं ॥ ५४ ॥ उग्रवती भोगवती तृतीया च यशोमती। सर्वसिद्धा शुभनामा पंचैतास्तिथयस्त्रिशः ॥ ५५ ॥ अयं भावः-उग्रवत्यभिधानेन नंदातिथि-

---

सुनक्षत्रा २, एलापत्या ३, यशोधरा ४, सौमनसा ५, श्रीसंभूता ६, विजया ७, वैजयंती ८, जयंती नवमी जाणवी ९, दशमी अपराजिता १०, इच्छा ११, समाहारा १२, तेरमी तेजा १३, अतितेजा १४ अने पंदरमी देवानंदा १५ छे. आ देवानंदानुं बीजुं नाम निरति पण छे. (४९). आ प्रमाणे दिवस अने रात्रिनां नाम कह्यां छे.

तिथिओ पण पंदर छे ते पण दिवस अने रात्रिना भेदवडे बे प्रकारनी छे. तेनां नाम हुं कहुं छुं. (५०).—नंदा १, भद्रा २, जया ३, तुच्छा ४ अने पूर्णा ५. आ पांच नामने त्रण वार आवर्तन करवां. पांचने त्रणगुणा करवाथी पंदर तिथिओ थाय छे एम जिनेश्वरोए कह्युं छे. (५१). तेमां प्रतिपदा, छठ्ठ अने अग्यारश ए त्रण तिथिओ नंदा नामनी छे. बीज, सातम अने बारश ए त्रण तिथिओ भद्रा नामनी मानेली छे. (५२). त्रीज, आठम अने तेरश ए त्रण तिथिओ जया नामनी कहेली छे. चोथ, नोम अने चौदश ए त्रण तिथिओ तुच्छा (रिक्ता) नामनी कही छे. (५३). पांचम, दशम अने पुनम ए त्रण तिथिओ पूर्णा नामनी कहेवाय छे. आ प्रमाणे दिवसनी तिथिनां नामो अनुक्रमे जाणवां. (५४). उग्रवती, भोगवती, त्रीजी यशोमती, सर्वसिद्धा अने शुभा नामनी आ पांच तिथिओने त्रणवार आवर्तन करवी. (५५). अहीं भावार्थ ए छे के—नंदा तिथि

निशातिथिः भद्रातिथीनां रजनी—तिथिर्भोगवतीति च ॥ ५६ ॥ यशोमतीति च ज्ञेया जयानां यामिर्नातिथिः । तुच्छा रात्रितिथिर्ज्ञेया सर्वसिद्धेति नामतः ॥ ५७ ॥ शुभनाला भवेत्पूर्णा तिथौ रात्रितिथिः स्फुटं । एवं पंचदश ज्ञेया रजनीतिथयो बुधैः ॥ ५८ ॥ एषां पंचदशानां तिथीनां स्वामिनश्चैवं लौकिकशास्त्रेषु निरूपिताः—तिथिपाश्चतुर्मुख १ विधातृ २ विष्णवो ३ यम ४ शीतदीधिति ५ विशाख ६ वज्रिणः ७। वसु ८ नाग ९ धर्म १० शिव ११ तिग्मरश्मयो १२ मदनः १३ कलि १४-स्तदनु विश्व १५ इत्यपि ॥ ५९ ॥ तिथौ हि दर्शसंज्ञके पितॄनुशंत्यधीश्वरान् । त्रयोदशीतृतीययोः स्मृतस्तु वित्तपोऽपरैः ॥ ६० ॥ मतांतरे च—वह्नि १ विरञ्चो २ गिरिजा ३ गणेशः ४ फणी ५ विशाखो ६ दिनकृत् ७ महेशः ८ । दुर्गा ९ तको १० विश्व ११ हरि १२ स्मरश्च १३ शर्वः १४ शशी १५ चेति पुराणदृष्टाः ॥ ६१ ॥ एषां देवानां प्रतिष्ठादौ च तत्तत्ति-

---

(१-६-११)नी रात्रिनी तिथि उग्रवती नामनी जाणवी, भद्रा तिथि (२-७-१२)नी रात्रिनी तिथि भोगवती नामनी जाणवी. (५६). जया तिथि (३-८-१३)नी रात्रिनी तिथि यशोमती जाणवी, तुच्छा तिथि (४-९-१४)नी रात्रिनी तिथि सर्वसिद्धा नामनी जाणवी. (५७) अने पूर्णा तिथि (५-१०-१५)नी रात्रिनी तिथि शुभा नामनी जाणवी. आ प्रमाणे पंडितोए पंदर रात्रिनी तिथिओ जाणवी. (५८).

आ पंदर तिथिओना स्वामी लौकिक शास्त्रमां आ प्रमाणे कह्या छे.—चतुर्मुख (ब्रह्मा) १, विधाता २, विष्णु ३, यम ४, शीतदीधिति (चंद्र) ५, विशाख ६, वज्रि ७, वसु ८, नाग ९, धर्म १०, शिव ११, तिग्मरश्मि (सूर्य) १२, मदन १३, कलि १४ अने विश्व १५. आ अनुक्रमे पंदर तिथिओना पंदर स्वामीओ छे. (५९). अमावास्यानी तिथिना स्वामी पितृ नामना छे. तेरश अने त्रीजनो स्वामी वित्तप (कुबेर) छे एम केटलाक कहे छे. (६०). वळी बीजो मत आ प्रमाणे छे.—अग्नि १, विरंच २, गिरिजा (पार्वती) ३, गणेश ४, फणी ५, विशाख ६, दिनकर ७, महेश ८, दुर्गा ९, अंतक १०, विश्व ११, हरि १२, स्मर १३, शर्व १४ अने शशी १५. आ प्रमाणे पंदर तिथिओना पंदर स्वामी पुराणमां कह्या छे. (६१). आ उपर कहेला देवोनी प्रतिष्ठा विगेरे कार्यमां ते ते देवनी तिथिनो उपयोग करवामां आवे छे; परंतु जिनेश्वरनी प्रतिष्ठा-

थीनामुपयोगः, जिनस्य तु प्रतिष्ठादौ सर्वेऽपि तिथिनक्षत्रकरणक्षणाः शुद्धत्वे सत्युपयोगिन एव, तस्य सर्वदेवाधिदेवत्वादित्याद्यारंभसिद्धिवार्त्तिके.

अहोरात्रतिथीनां च विशेषोऽयमुदीरितः । भानूत्पन्ना अहोरात्रास्तिथयः पुनरिंदुजाः ॥ ६२ ॥ उक्तं च—सूरस्स गगणमंडल–विभागनिष्फाइया अहोरत्ता । चंदस्स हाणिवुड्ढी–कएण निप्फज्जए उ तिही ॥ १ ॥ किं च–अहोरात्रो भवेदर्कोदयादर्कोदयावधि । द्वाषष्टितमभागोना–होरात्रप्रमिता तिथिः ॥६३॥ इत्यादिभिर्विशेषैः स्या–दहोरात्रात्पृथक् तिथिः । द्विधात्वं च भवेत्तस्या दिनरात्र्यंशकल्पनात् ॥ ६४ ॥ यद्वदेकोऽप्यहोरात्रः सूर्यजातो द्विधाकृतः । दिनरात्रिविभेदेन संज्ञाभेदप्ररूपणात् ॥ ६५ ॥ तथैव तिथिरेकापि शशिजाता द्विधा कृता । दिनरात्रिविभेदेन संज्ञाभेदप्ररूपणात् ॥ ६६ ॥ एकैकस्यास्तिथेः काल–मानमेवं प्रकीर्त्तितं । मुहूर्त्तानां त्रिंशदेक–न्यूनभागास्तथोपरि ॥ ६७ ॥ स्युर्द्वात्रिंशन्मुहूर्त्तस्यै–कस्य

दिकमां तो सर्वे तिथिओ, नक्षत्रो, करणो अने क्षणो शुभ होय तो उपयोगमां आवे छे; केमके जिनेश्वर सर्व देवना अधिदेव छे. इत्यादि आरंभसिद्धिनी टीकामां लख्युं छे.

अहोरात्र अने तिथिओनो ए ज विशेष कह्यो छे के—अहोरात्रनी उत्पत्ति सूर्यथी थाय छे अने तिथिनी उत्पत्ति चंद्रथी थाय छे. (६२). ते विषे कह्युं छे के—" सूर्य गगनमंडळना विभागने ओळंगे छे तेने आश्रीने अहोरात्र थाय छे अने चंद्रनी हानि–वृद्धिवडे तिथि उत्पन्न थाय छे. (१)." वळी सूर्यना उदयथी आरंभी फरीथी सूर्योदय थाय त्यां सुधीनो अहोरात्र थाय छे अने एक अहोरात्रना बासठमा भागे ऊणी तिथि थाय छे. (६३). आवा आवा विशेषने लइने अहोरात्रथी तिथि भिन्न (जूदी) छे, अने दिवसरात्रिरूप विभागनी कल्पना करवाथी ज ते तिथि बे प्रकारनी कहेवाय छे. (६४). जेम सूर्यथी उत्पन्न थयेलो अहोरात्र एक ज छे छतां संज्ञा (नाम)ना भेदनी प्ररूपणा करवाथी दिवस अने रात्रिना भेदवडे बे प्रकारनो कर्यो छे. (६५). ते ज प्रमाणे चंद्रथी उत्पन्न थयेली एक ज तिथि संज्ञाना भेदनी प्ररूपणा करवाथी दिवस अने रात्रिना भेदवडे बे प्रकारनी कराय छे. (६६). एक एक तिथिना काळनुं प्रमाण आ प्रमाणे कह्युं छे—एक न्यून त्रीश (२९) मुहूर्त्त तथा उपर एक मुहूर्त्तना बासठ भाग करीए तेवा बत्रीश

द्वाषष्टिकल्पिताः । अस्योत्पत्तिः कथमिति श्रद्धा चेत् श्रूयतां तदा ॥ ६८ ॥ अहोरात्रस्य भागा द्वा–षष्टिभागीकृतस्य हि । एकषष्टिस्तिथेर्मान–मेकैकस्य यदीरितं ॥ ६९ ॥ द्वाषष्टिजांशरूपैक–षष्टिस्त्रिंशता हता । अहोरात्रमुहूर्त्तैः स्या–त्रिंशाष्टादशशत्यहो १८३० ॥ ७० ॥ एते चांशा द्वाष–ष्ट्यंशीकृत-सकलतिथिमुहूर्त्तानां । संतीति द्वाषष्ट्या मुहूर्त्तकरणाय भजनीयाः ॥७१॥ ततो मुहूर्त्ता एकोन–त्रिंशद् द्वात्रिंशदंशकाः । द्वाषष्टिजा मुहूर्त्तस्या—गतास्तैश्च तिथेर्मितिः ॥ ७२ ॥ कालेन चयता पंच-दशांशश्चतुरंशकः । द्वाषष्ट्यंशीकृतस्येंदो–र्हीयते वर्द्धते तथा ॥ ७३ ॥ ततश्च—यत्तिथिश्चंद्रजे-त्युक्तं तदप्येवं विनिश्चितं । इंदोः पंचदशांशस्य हानिवृद्ध्यनुवर्त्तनात् ॥७४॥ इति तिथिमाननिरूपणं.

सांप्रतं चेप्सितदिने कियन्मानेप्सिता तिथिः । इति ज्ञानाय करणं यथाशास्त्रं निरूप्यते ॥ ७५ ॥ अभीष्टतिथिपर्यन्त–स्तिथिराशिर्युगादितः । द्वाषष्ट्या ह्रियते लब्धं त्याज्यं शेषं तु यत्स्थितं ॥ ७६ ॥ तदेकषष्ट्या

भाग (एटले के ओगणत्रीश मुहूर्त्त अने एक मुहूर्त्तना बासठीआ बत्रीश भाग एक तिथिना काळनुं मान जाणवुं.) आटला काळनी उत्पत्ति शी रीते थाय ? ते जो श्रद्धा होय तो सांभळ. (६८).—एक अहोरात्रना बासठ भाग करीए तेमांथी एकसठ भाग जेटलुं एक एक तिथिनुं काळमान जे कह्युं छे, ते बासठीआ एकसठ अंशोने एक अहो-रात्रना त्रीश मुहूर्त्तवडे गुणवाथी अढार सो ने त्रीश (१८३०) थाय छे. (६९–७०). आ (१८३०) अंशो बासठीआ करेला आखी तिथिना मुहूर्त्तोना छे, तेथी तेना मुहूर्त्त करवा माटे बासठवडे भागवा. (७१). तेम करवाथी ओगणत्रीश (२९) मुहूर्त्तो अने एक मुहूर्त्तना बासठीआ बत्रीश अंश आटलुं तिथिनुं काळमान थयुं. (७२). आटला काळे पंदरीओ एक भाग एटले बासठीआ भाग करेला चंद्रना चार अंश ($\frac{4}{62}$) हानि पामे छे अने वृद्धि पामे छे. (७३). तेथी करीने तिथि चंद्रथी उत्पन्न थाय छे एम जे कह्युं ते पण आ प्रमाणे पंदर अंशवाळा चंद्रनी हानि–वृद्धिने अनुसरीने निश्चित थाय छे. (७४). इति तिथिमानप्ररूपणा.

हवे इच्छेला दिवसे इच्छेली तिथि केटला काळना प्रमाणवाळी होय छे ? ते जाणवा माटे शास्त्रमां कह्या प्रमाणे करण बतावीए छीए. (७५).—युगना आरंभथी इच्छेली तिथि सुधीना तिथिराशिने बासठे भागवो. भागमां जे आवे तेनो त्याग करवो. शेष जे

गुणितं द्वाषष्ट्या प्रविभज्यते । लब्धमत्रापि च त्याज्यं शेषास्तिष्ठंति ये लवाः ॥ ७७ ॥ तावन्मानाभीष्टतिथि-र्विवक्षितदिने भवेत् । उदाहरण-मस्याथ करणस्य निशम्यतां ॥ ७८ ॥ युगस्य प्रथमे चंद्र-वर्षे मासे तथाश्विने । कियन्माना भवेच्छुक्ल-पंचमीत्यत्र कथ्यते ॥ ७९ ॥ तिथि-राशिर्भवत्येत-त्पंचम्यंतो युगादितः । अशीतिसंख्यो द्वाषष्ट्या भक्तेऽस्मि-न्नेक आप्यते ॥ ८० ॥ स च त्याज्यः शेषमष्टा-दश तान् परिताडयेत् । एकषष्ट्या स्यात्ततोऽष्टा-नवत्याढ्यं सहस्रकं ॥ ८१ ॥ द्वाषष्ट्यास्मिन् हृते लब्धं त्यक्तं शेषमिह स्थितं । द्वाषष्ट्यंशाश्चतुश्चत्वा-रिंशदित्येष निर्णयः ॥ ८२ ॥ युगस्याद्ये चंद्रवर्षे धवलाश्विनपंचमी । चतुश्चत्वारिंशदंश-माना-स्तीत्यत्र भावना ॥ ८३ ॥ अत्र चेयं वासना—द्वाषष्ट्या हि तिथिभिः परिपूर्णा एकषष्टिरहोरात्रा भवंति, ततः परिपूर्णाहोरात्रपातनार्थं द्वाषष्ट्या ईप्सिततिथिराशेर्विभागः क्रियते, विभागे च कृते यच्छेषमुपलभ्यते, तदेकषष्टिगुणं क्रियते तदेकैकस्यास्तिथेर्द्वाषष्टिभागीकृताहोरात्रसत्कैक-षष्टिभागप्रमाणत्वादिति ज्ञेयं.

अंक रह्यो होय तेने एकसठे गुणी बासठे भाग देवो. भागमां जे आवे तेनो अहीं पण त्याग करवो. शेष जे अंश रह्या होय तेटला प्रमाणवाळी इष्ट दिवसनी इष्ट तिथि जाणवी. आ करणनुं उदाहरण सांभळो. (७६-७८).—युगना पहेला चंद्रवर्षमां आश्विन मासमां शुक्लपक्षनी पांचम केटला प्रमाणवाळी होय ? आ प्रश्ननो जवाब कहीए छीए. (७९).—युगना आरंभथी आ आश्विन शुक्ल पंचमी सुधीनो तिथिराशि ऍंशीनी संख्यावाळो छे, तेथी ते (८०)ने बासठे भागतां भागमां एक आवे छे तेनो त्याग करवो. बाकी अढार (१८) रह्या तेने एकसठे गुणवा; तेथी एक हजार ने अट्ठाणुं (१०९८) थाय छे. (८१). तेने बासठे भागतां भागमां आवेला (१७)नो त्याग कर्यो. बाकी बासठीया चुमाळीश अंश रह्या; तेथी आ प्रमाणे जवाब आव्यो. (८२) के—युगना पहेला चंद्रवर्षमां आश्विन शुक्लपक्षनी पांचम बासठीया चुमाळीश अंशना प्रमाणवाळी छे एम अहीं जाणवुं. (८३). अहीं भावार्थ आ प्रमाणे छे के—बासठ तिथिए करीने परिपूर्ण एकसठ अहोरात्र थाय छे, तेथी परिपूर्ण अहोरात्र करवा माटे इष्ट तिथिना राशिने बासठे भांगवा जोइए. भांगाकार करवाथी जे शेष रहे तेने एकसठे गुणवा जोइए. कारणके दरेक तिथिनुं प्रमाण एक अहोरात्रना बासठीया एकसठ भागनुं छे; तेथी एम जाणवुं.

युगेऽथावमरात्राणां स्वरूपं किंचिदुच्यते । भवंति ते च षड् वर्षे तथा त्रिंशद्युगेऽखिले ॥ ८४ ॥ एकैकस्मिन्नहोरात्र एको द्वाषष्टिकल्पितः । लभ्यतेऽवमरात्रांश एकवृद्ध्या यथोत्तरं ॥ ८५ ॥ कर्ममासे ततः पूर्णे त्रिंशद् द्वाषष्टिजा लवाः । लभ्यंतेऽवमरात्रस्य तत एवोच्यते बुधैः ॥ ८६ ॥ विश्लेषे विहिते येंशाः शेषाः कर्मेंदुमासयोः । त्रिंशद् द्वाषष्टिजाः कर्ममासस्यैतेऽवमांशकाः ॥ ८७ ॥ उक्तं च—चंदउडुमासाणं अंसा जे दिस्सए विसेसंमि । ते ओमरत्तभागा भवंति मासस्स नायव्वा ॥ ८८ ॥ कर्ममासद्वये पूर्णे ततः षष्टिदिनात्मके । संपूर्णोऽवमरात्रः स्या—देकषष्टितमे दिने ॥ ८९ ॥ अयं भावः—द्वाषष्टिरंशाः कल्प्यंते—ऽहोरात्रस्यादिमेऽथ च । तत्रैकषष्टिभागात्मा संपूर्णा प्रथमा तिथिः ॥ ९० ॥ एको द्वाषष्टिभागो यो—ऽहोरात्रस्यावशिष्यते । एकांशेन द्वितीयापि तिथिस्तत्र समाविशत् ॥ ९१ ॥ एको द्वाषष्टिभागोऽस्या अतीतः प्रथमे दिने । ततः

हवे एक युगमां केटला अवमरात्र आवे ? तेनुं कांइक स्वरूप कहीए छीए. ते अवमरात्रो एक वर्षमां छ आवे छे तेथी आखा एक युगमां त्रीश आवे छे. (८४). एक एक अहोरात्रमां एक अहोरात्रनो बासठीयो एक अंश अवमरात्रनो आवे छे. ए ज रीते उत्तरोत्तर एक एक अवमरात्रना अंशनी वृद्धि करवी. (८५) तेथी करीने एक कर्ममास पूर्ण थाय त्यारे अवमरात्रना बासठीया त्रीश अंश प्राप्त थाय छे; तेथी करीने ज पंडितो कहे छे के (८६)—कर्ममास अने चंद्रमासनो विश्लेष करीए त्यारे कर्ममासना जे बासठीया त्रीश अंश बाकी रहे छे ते अवमरात्रना अंशो छे. (८७). कह्युं छे के—"चंद्रमास अने कर्ममासनो विश्लेष करतां जे कर्ममासना शेष अंशो जोवामां आवे छे ते अवमरात्रना अंशो जाणवा. (८८)" त्यारपछी साठ दिवसना प्रमाणवाळा बे कर्ममास पूर्ण थाय त्यारे एकसठमे दिवसे एक अवमरात्र (क्षयतिथि) पूर्ण थाय छे. (८९). अहीं भावार्थ आ प्रमाणे छे—एक अहोरात्रना बासठ अंश कल्पवा (करवा), तेमां पहेला एकसठ भागमां पहेली तिथि संपूर्ण थाय छे. (९०). ते अहोरात्रनो जे बासठीयो (छेल्लो) एक भाग बाकी रह्यो छे त्यां ते एक अंशे करीने बीजी तिथि प्रवेश करे छे. (बीजी तिथिनो एक अंश तेमां समाय छे). (९१). आ बीजी तिथिनो बासठीयो एक अंश पहेला

---

१ क्षयतिथि.

षष्ठ्यंशात्मिकेऽय–महोरात्रे द्वितीयके ॥ ९२ ॥ द्वाषष्ट्यंशद्वये तस्य शेषेऽसौ पूर्णतां गता। द्वाभ्यां भागाभ्यां प्रविष्टा तृतीयास्मिंस्ततस्तिथिः ॥ ९३ ॥ अहोरात्रे तृतीयेऽथ भागास्तुर्यतिथेस्त्रयः। प्रविशंत्यथ पंचम्या–श्चत्वारोंशास्तुरीयके ॥ ९४ ॥ एवमेकैकभागेन हीयते प्राक्तना तिथिः। वर्द्धते प्रत्यहोरात्रं तिथिरागामिनी पुनः ॥ ९५ ॥ एकत्रिंशत्तमतिथे–रेवं त्रिंशत्तमे दिने। त्रिंशदंशाः प्रविष्टाः स्यु–स्ततस्तस्मिन् दिने खलु ॥ ९६ ॥ द्वात्रिंशदंशप्रमिता तिथिस्त्रिंशत्तमी भवेत्। त्रिंशद्द्वाषष्ट्यंशमाना चैकत्रिंशत्तमी तिथिः ॥ ९७ ॥ क्रमाच्च—द्वावंशौ स्तः षष्टितम–तिथेः षष्टितमे दिने। एकषष्टितमतिथे–स्तत्र षष्टिः स्युरंशकाः ॥ ९८ ॥ एकषष्टितमतिथे–श्चैकषष्टितमे दिने। एकोंशः स्यात्ततो द्वाष–ष्टितमी चाखिला तिथिः ॥ ९९ ॥ एवं च द्वाषष्टितमी प्रविष्टा निखिला तिथिः। एकषष्टिभागरूपा–त्रैकषष्टितमे दिने ॥ ८०० ॥ एकषष्टितमदिन–स्याद्यो

अहोरात्रमां व्यतीत थयो, तेथी बीजा अहोरात्रमां आ बीजी तिथि साठ अंशवाळी रही. (९२). ते बीजा अहोरात्रना बासठीया बे अंश बाकी रह्या त्यारे आ बीजी तिथि पूर्ण थाय छे; तेथी करीने ते बीजा अहोरात्रना छेल्ला बे अंशमां त्रीजी तिथिनो प्रवेश थाय छे. (९३). पछी त्रीजा अहोरात्रने छेडे चोथी तिथिना बासठीया त्रण अंश प्रवेश करे छे, अने चोथा अहोरात्रने छेडे पांचमी तिथिना चार अंशो प्रवेश करे छे. (९४). ए ज प्रमाणे उत्तरोत्तर अहोरात्रमां पूर्वनी तिथिनो एक एक अंश हानि पामे छे अने एक एक अहोरात्रमां आवती (पछीनी) तिथिनो एक एक अंश वृद्धि पामे छे. (९५). आ प्रमाणे गणतां त्रीशमा अहोरात्रने विषे एकत्रीशमी तिथिना त्रीश अंश प्रवेश करे छे, तेथी ते अहोरात्रे त्रीशमी तिथिना बत्रीश अंशो भोगवाय छे अने बासठीया त्रीश अंश एकत्रीशमी तिथिना होय छे. (९६–९७). ए ज अनुक्रमे करीने साठमा अहोरात्रे साठमी तिथिना बे अंशो ज होय छे, अने एकसठमी तिथिना साठ अंशो होय छे. (९८) तथा एकसठमा अहोरात्रे एकसठमी तिथिनो एक अंश होय छे तेथी बासठमी आखी तिथि तेमां समाइ जाय छे. (९९). आ प्रमाणे आ एकसठमा अहोरात्रमां एकसठ अंशना प्रमाणवाळी बासठमी तिथि आखी समाइ जाय छे. (८००). तेथी एकसठमा अहोरात्रनो जे पहेलो बासठीयो अंश छे, ते एकसठमी तिथिनो

द्वाषष्टिजो लवः । एकषष्टितमतिथे-श्चरमोऽसौ विभाव्यतां ॥ १ ॥ ततश्च द्वाषष्टितमो-ऽप्यत्रैवांतं गतस्तिथिः । एवमस्मिन्नहोरात्रे द्वे तिथी पूर्णतां गते ॥ २ ॥ द्वाषष्टितमघस्रस्य ततः सूर्योदयक्षणे । उपस्थिता पूर्वरीत्या द्राक् त्रिषष्टितमी तिथिः ॥ ३ ॥ एवं च द्वाषष्टितमी नाप्ता सूर्योदयं तिथिः । पतितेति ततो लोके शुभकार्येष्वनादृता ॥ ४ ॥ तथाहुः-एक्कंमि अहोरत्ते दोवि तिही जत्थ निहणमेज्जासु । सोत्थ तिही परिहायइ सुहुमेण हविज्ज सो चरिमो ॥ ५ ॥ 'सुहुमेणत्ति' सूक्ष्मेण-अतिश्लक्ष्णेन द्वाषष्टितमरूपतया एकैकेन भागेन हीनेन परिहीयमानाया द्वाषष्टितमायास्तिथेः स एकषष्टितमो दिवसश्चरम इति, तथाहि-युगस्याद्यप्रतिपद-श्चतुःपर्वव्यतिक्रमे । लभतेऽवमरात्रत्व-मेकषष्टितमा तिथिः ॥ ६ ॥ आश्विनप्रतिपत् कृष्णा सा ज्ञेयास्यां यतोऽविशत् । तिथिर्द्वितीया सर्वांशै-रेकषष्टिलवात्मिका ॥ ७ ॥ ज्योतिष्करंडके तु-तइयंमि ओमरत्तं कायव्वं सत्तमंमि पक्खंमि । वासहिमगिम्हकाले चउचउमासे विधीयंते

छेल्लो अंश होय छे एम जाणवुं. (१). तेथी करीने बासठमी तिथि पण आ एकसठमा अहोरात्रमां ज पूर्ण थाय छे, तेथी आ एकसठमा अहोरात्रमां बे (एकसठमी अने बासठमी) तिथि पूर्णताने पामे छे. (२). तेथी बासठमा अहोरात्रना सूर्योदय वखते पूर्वनी रीते गणतां त्रेसठमी तिथि प्राप्त थाय छे (शरु थाय छे). (३). एम थवाथी बासठमी तिथि सूर्योदयने पामी नहीं, तेथी ते लोकमां पतित (क्षय) तिथि कहेवाय छे. ते क्षयतिथिनो शुभ कार्यमां आदर करातो नथी. (४). कह्युं छे के—"जे एक ज अहोरात्रमां बे तिथि पूर्ण थाय छे, ते दिवस शुभ कार्यमां तजवा लायक छे; केमके सूक्ष्मताने लीधे ते दिवस छेल्लो कहेवाय छे. (५). अहीं सूक्ष्म एटले बासठीया एक एक अंशे करीने हीन थती बासठमी तिथिनो ते एकसठमो दिवस चरम एटले छेल्लो छे. ते आ प्रमाणे—युगनी पहेली प्रतिपदाथी चार पर्व व्यतीत थाय त्यारे एकसठमी तिथि अवमरात्रपणाने पामे छे. (६). ते आश्विन मासनी कृष्णपक्षनी प्रतिपदा जाणवी, केमके तेमां (प्रतिपदामां) एकसठ अंशवाळी बीजनी तिथि आखी समाय जाय छे. (७). ज्योतिष्करंडकमां तो आ प्रमाणे कह्युं छे.—"वर्षा, हिम अने ग्रीष्मकाळना चार चार मासने विषे त्रीजा अने सातमा पखवाडीयामां अवमरात्र आवे छे." (८).

॥ ८ ॥ इत्युक्तं. एतदनुसारेण च आषाढप्रतिपद् आरभ्य यथोत्तरमेकषष्टितमासु भाद्रपदकृष्णप्रतिपदादिष्ववमरात्राः स्युः, परं ज्योतिष्करंडटीकायां श्रीमलयगिरिपादैरेवमुक्तं–इहाषाढाद्या लोके ऋतवः प्रसिद्धिमैयरुस्ततो लौकिकव्यवहारमपेक्ष्याषाढादारभ्य प्रतिदिवसमेकैकद्वाषष्टिभागहान्या वर्षाकालादिगतेषु तृतीयादिपर्वसु यथोक्ता अवमरात्राः प्रतिपाद्यंते, परमार्थतः पुनः श्रावणबहुलप्रतिपल्लक्षणाद्युगादित आरभ्य चतुश्चतुःपर्वातिक्रमे वेदितव्या इति ज्ञेयं. आश्विनस्य तृतीयाया–असितायाः प्रभृत्यथ। कृष्णा तृतीया मार्गस्या—वमस्तुर्यान्विता भवेत् ॥ ९ ॥ प्रभृत्यस्याश्च पंचम्याः कृष्णा माघस्य पंचमी। युक्ता पतितया षष्ठ्या प्राप्नोत्यवमरात्रतां ॥ १० ॥ एवं च—आश्विनो मार्गशीर्षश्च माघश्चैत्रस्तथा परः। ज्येष्ठस्ततः श्रावणश्च पुनरप्येत एव षट् ॥ ११ ॥ पुनरप्याश्विनो मार्गो द्वितीयः पौष एव च। युगाद्यर्द्धे पंचदश मासाः सावमरात्रकाः॥१२॥ आश्विनाद्येषु मार्गांते–ष्वष्टस्वाद्येष्वनुक्रमात्। विषमाः

आ वचनने अनुसारे अषाढ मासनी प्रतिपदाने आरंभी उत्तरोत्तर एकसठमी तिथिओने विषे एटले भाद्रपद कृष्णपक्षनी प्रतिपदा विगेरे तिथिने विषे अवमरात्रो होय छे; परंतु ज्योतिष्करंडकनी टीकामां श्रीमलयगिरिमहाराजे आ प्रमाणे कह्युं छे के—"अहीं लोकमां अषाढ मासने आरंभीने ऋतुनी प्रवृत्ति प्रसिद्ध छे, तेथी लौकिक व्यवहारनी अपेक्षाए अषाढ मासथी आरंभीने हमेशां एक एक बासठीया अंशनी हानिवडे वर्षाकालादिकमां रहेला तृतीयादिक पर्वने विषे उपर कह्या प्रमाणे अवमरात्रो कह्या छे; परंतु परमार्थथी तो श्रावण वद एकमरूप युगना आदिथी आरंभीने चार चार पर्व गया पछी अवमरात्रो आवे छे एम जाणवुं." आश्विन मासना कृष्णपक्षनी तृतीयाथी आरंभीने मार्गशीर्ष मासना कृष्णपक्षनी चोथनी साथे रहेली त्रीज अवमरात्र थाय छे. (९). मार्गशीर्ष कृष्ण पंचमीथी आरंभीने माघनी पतित षष्ठी सहित कृष्ण पंचमी अवमरात्रपणाने पामे छे. (१०). आ रीते होवाथी आश्विन, मार्गशीर्ष, माघ, चैत्र, ज्येष्ठ अने श्रावण तथा फरीथी पण ते ज छ मास अने त्यारपछी आश्विन, मार्गशीर्ष अने बीजो पोष आ पंदर मास युगना प्रथम अर्धमां अवमरात्रवाळा आवे छे. (११–१२). आश्विनथी आरंभी मार्गशीर्ष

प्रतिपन्मुख्याः स्युः कृष्णास्तिथयोऽवमाः ॥१३॥ माघादिषु स्युर्द्वितीय-पौषांतेषु च सप्तसु । समसंख्या द्वितीयाद्या उज्ज्वलास्तिथयोऽवमाः ॥ १४ ॥ विषमेभ्योऽवमेभ्यश्चा-नंतरास्तिथयः समाः । पतिताः स्युर्द्वितीयाद्या-स्तेऽष्ट प्रतिपदन्विताः ॥ १५ ॥ अवमेभ्यः समेभ्यस्तु विषमास्तिथयः खलु । भवंति पतिताः सप्त तृतीयाद्या यथोदिताः ॥ १६ ॥ चैत्रो ज्येष्ठः श्रावणोऽश्व-युग्मार्गो माघ एव च । पुनः षडेते चैत्रोऽथ ज्येष्ठोंत्याषाढ एव च ॥१७॥ युगांत्यार्द्धे पंचदश मासाः सावमरात्रकाः। तिथयस्त्ववमाः कृष्ण-शुक्लाः पूर्वार्द्धवत्स्मृताः ॥ १८॥

प्रतिपद्यवमरात्री-भूतायां कुत्र पर्वणि । द्वितीयांतः समाविश्य जायते पतिता तिथिः ॥ १९ ॥ अवमत्वं द्वितीयायां प्राप्तायां क्व च पर्वणि । तृतीया पततीत्येवं पृच्छेत्कोऽप्यखिलाः क्रमात् ॥ २० ॥ ततोऽत्र करणाम्नायः कश्चित्तादृग्निरूप्यते ।

पर्यंत पहेला [1]आठ मासमां अनुक्रमे कृष्णपक्षनी एकम विगेरे एकी तिथिओ अवमरात्रो होय छे. (१३). अने माघथी आरंभी बीजा पोष सुधीना सात मासमां शुक्लपक्षनी बीज विगेरे बेकी तिथिओ अवमरात्रो होय छे. (१४). एकी अवमरात्रोनी पछीनी बीज विगेरे बेकी पतित (क्षय) तिथिओ जे आवे छे ते प्रतिपदा सहित करवाथी आठ थाय छे. (१५). अने बेकी अवमरात्रोनी पछीनी त्रीज विगेरे सात एकी तिथिओ पतित थाय छे. (१६). चैत्र, ज्येष्ठ, श्रावण, आश्विन, मार्गशीर्ष अने माघ तथा फरीथी पण ते ज छ मास, त्यारपछी पाछो चैत्र, ज्येष्ठ अने बीजो अषाढ आ युगना पाछला अर्धभागना पंदर मास अवमरात्रवाळा होय छे. तेनी अवम तिथिओ कृष्ण अने शुक्लपक्षमां पहेला अर्धमां कह्या प्रमाणे कही छे. (१८).

प्रश्न—प्रतिपदा अवमरात्र होय तेमां द्वितीया तिथि पेसीने पतित थाय छे, ते कया पर्वमां ? (तथा ते अवमरात्र पण केटलामो होय ?) (१९). प्रश्न—अवमरात्र द्वितीया होय तेमां तृतीया पतित थाय ते कया पर्वमां ? (तथा ते केटलामो अवमरात्र होय ?) आ प्रमाणे अनुक्रमे सर्व अवमरात्र संबंधी कोइ प्रश्नो करे. (२०) तो आ बाबतमां एक एवुं करण कहेवामां आवे छे के जेथी आ सर्व प्रश्नोना उत्तर

१ आश्विनथी श्रावण सुधीना छ अने फरीथी आश्विन तथा मार्गशीर्ष मळी आठ.

यस्माद्यथोक्तपृच्छासु कुर्यात्प्रतिविधीन् सुखं ॥ २१ ॥ पृच्छास्वेतासु विषमा–स्तिथयोऽत्र भवंति याः । रूपाधिकासु द्विघ्नासु तासु स्यात्पर्वनिर्णयः ॥ २२ ॥ समास्तु तिथयो रूपा--भ्यधिका द्विगुणीकृताः । एकत्रिंशद्युताः सत्यो–ऽतीतपर्वप्रकाशिकाः ॥ २३ ॥ पर्वसंख्या सा च पंच-दशघ्ना सपतत्तिथिः । विभज्यमाना द्वाषष्ट्या--वमसंख्यां प्रकाशयेत् ॥२४॥ आद्ये प्रश्ने यथोद्दिष्टा प्रतिपत्तिथिरित्यतः । एकको विषमः सैको द्विघ्नो जातं चतुष्टयं ॥ २५ ॥ युगादितो व्यतिक्रांते ततः पर्वचतुष्टये । अवमायां प्रतिपदि द्वितीया न्यपतत्तिथिः ॥ २६ ॥ चतूरूपा पर्वसंख्या षष्टिः पंच-दशाहता । पतत्तिथिर्द्वितीयेति द्वाभ्यां युक्ता विधीयते ॥ २७ ॥ जाता द्वाषष्टिरेषा च द्वाषष्ट्या प्रविभज्यते । लब्ध एकस्ततो जातो–ऽवमरात्रोऽ-यमादिमः ॥ २८ ॥ कदा पुनर्द्वितीयायां तृतीया पततीति च । प्रश्ने द्वितीयोद्दिष्टेति द्विको रूपाधिकस्त्रयः ॥ २९ ॥ ते च द्विगुणिताः षट् स्यु–र्द्वितीया यत्समा तिथिः । एकत्रिंशद्युताः षट् ते सप्तत्रिंशद्भवंति

सुखेथी कही शकाय. (२१). आ प्रश्नोने विषे जे विषम (एकी) तिथिओ होय तेमां एक उमेरी बेए गुणवाथी पर्वनो निर्णय थाय छे. (२२). अने जे सम (बेकी) तिथिओ होय तेमां एक उमेरी बेए गुणी तेमां एकत्रीश उमेरवाथी व्यतीत पर्वनी संख्या स्पष्ट थाय छे. (२३). हवे जे पर्वनी संख्या आवी होय तेने पंदरे गुणी पतित तिथिनी संख्या तेमां उमेरवी. पछी तेने बासठे भागवाथी अवमतिथिनी संख्या स्पष्ट थाय छे. (२४). जेमके पहेला प्रश्नमां एकमनी तिथि कही छे, ते एकनो अंक विषम (एकी) छे, तेथी तेमां एक उमेरतां बे थया, तेने बेए गुणतां चार थया. (२५). तेथी युगना प्रारंभथी चार पर्व जाय त्यारे अवमरात्र प्रतिपदाने विषे द्वितीया तिथि पडे छे (समाय छे) ए जवाब आव्यो. (२६). हवे पर्वनी संख्या चार छे तेने पंदरे गुणतां साठ थाय तेमां पडती तिथि द्वितीया होवाथी बे उमेरतां बासठ थाय. आ बासठने बासठवडे भागतां भागमां एक आवे छे, तेथी आ प्रतिपदा अवमरात्र पहेलो छे एम जवाब आव्यो. (२७–२८). प्रश्न—क्या पर्वमां द्वितीया तिथिमां तृतीया पडे छे ? आ बीजा प्रश्नमां बीज कही छे तेथी बेमां एक उमेरतां त्रण थाय. (२९). तेने बेए गुणवाथी छ थाय. ते बीजनी तिथि सम (बेकी) छे तेथी छमां एकत्रीश उमेरवाथी साडत्रीश थाय. (३०). तेथी युगनी

तत् ॥३०॥ ततश्च--सप्तत्रिंशत्तमे पर्व--ण्यतिक्रांते युगादितः । द्वितीयायां निपतिता तृतीयेत्येष निर्णयः ॥ ३१ ॥ पर्वसंख्या चात्र सप्त--त्रिंशत्पंचदशाहता । पंचपंचाशदधिका शताः पंच भवंत्यतः ॥ ३२ ॥ पतत्तिथिस्तृतीयेति त्रीणि तेषु विनिक्षिपेत् । अष्टपंचाशदधिका जाता पंचशती ततः ॥ ३३ ॥ विभज्यतेऽसौ द्वाषष्ठ्या नव प्राप्तास्ततः खलु । नवमोऽवमरात्रोऽयं जात इत्येष निर्णयः ॥ ३४ ॥ सर्वास्वपि तिथिष्वेवं कार्या करणभावना । पर्वनिर्देशमात्रं तु क्रियते नाममात्रतः ॥ ३५ ॥ तृतीयायां पतेत्तुर्या गते पर्वण्यथाष्टमे । चतुर्थ्यां पंचमी चैक--चत्वारिंशत्तमे गते ॥३६॥ षष्ठी पतति पंचम्यां पर्वणि द्वादशे गते । षष्ठ्यां च सप्तमी पंच--चत्वारिंशत्तमे गते ॥ ३७ ॥ सप्तम्यामष्टमी याया--द्याते पर्वणि षोडशे । अष्टम्यां नवमी चैको--नपंचाशत्तमे गते ॥ ३८ ॥ नवम्यां माति दशमी द्राविंशतितमे गते । एकादशी दशम्यां च त्रिपंचाशत्तमे गते ॥ ३९ ॥ एकादश्यां द्वादशी च चतुर्विंशतिसंख्यके । तस्यां त्रयोदशी सप्त--पंचाशत्संख्यके गते ॥ ४० ॥ गतेऽष्टाविंशतितमे त्रयोदश्यां चतुर्दशी ।

शरुआतथी साडत्रीशमुं पर्व वीती गये सते द्वितीयामां तृतीया पडे छे एम निर्णय थयो. (३१). तथा अहीं पर्वनी संख्या साडत्रीश छे तेने पंदरे गुणवाथी पांच सो ने पंचावन थाय छे. (३२). तेमां पडती तिथि तृतीया छे माटे त्रण उमेरतां पांच सो ने अट्ठावन थाय छे. (३३). तेने बासठे भागतां भागमां नव आवे छे, तेथी युगनी शरुआतथी आ नवमो अवमरात्र छे एम निर्णय थयो. (३४). आ प्रमाणे सर्व तिथिओने विषे करणनी भावना करवी, तो पण अहीं मात्र पर्वनी संख्यानो निर्देश नाममात्र करीए छीए. (३५) —युगनी आदिथी आठमुं पर्व जाय त्यारे त्रीजने विषे चोथ पडे छे. एकताळीशमुं पर्व जाय त्यारे चोथने विषे पांचम पडे छे. (३६). बारमुं पर्व जाय त्यारे पांचमने विषे छठ पडे छे, पीस्താळीशमुं पर्व जाय त्यारे छठने विषे सातम पडे छे, (३७), सोळमुं पर्व जाय त्यारे सातमने विषे आठम पडे छे, ओगणपचासमुं पर्व जाय त्यारे आठमने विषे नोम पडे छे, (३८), वीशमुं पर्व गये सते नोमने विषे दशम पडे छे, त्रेपनमुं पर्व जाय त्यारे दशमने विषे अग्यारश पडे छे, (३९), चोवीशमुं पर्व जाय त्यारे अग्यारशमां बारश पडे छे, सतावनमुं पर्व जाय त्यारे बारशमां तेरश पडे छे, (४०), अट्ठावीशमुं पर्व जाय

चतुर्दश्यां विशेद्राका चैकषष्टितमे गते ॥ ४१ ॥ गते द्वात्रिंशत्तमेऽमा-
वास्यायां प्रतिपद्विशेत् । एता युगस्य पूर्वार्द्धे परार्द्धेऽप्येवमेव ताः ॥ ४२ ॥
राकायां च प्रतिपदो भूतेष्टायाममातिथेः । संपातसंभवो नास्ती--त्येतद्
ज्ञेयं मनस्विभिः ॥ ४३ ॥ एतस्य यंत्रके दृष्टे भवतां प्रत्ययो दृढः ।
भविष्यतीति तत्सम्यग् वीक्षणीयं विचक्षणाः ॥ ४४ ॥

त्यारे तेरशमां चौदश पडे छे, एकसठमुं पर्व जाय त्यारे चौदशमां पूर्णिमा पडे छे, (४१) अने बत्रीशमुं पर्व जाय त्यारे अमावास्याने विषे प्रतिपदा पडे छे. आ तिथिओ युगना पहेला अर्धमां पडे छे, युगना बीजा अर्धमां पण ए ज प्रमाणे जाणवुं. (४२). पूर्णिमाने विषे प्रतिपदानुं पडवुं अने चौदशने विषे अमावास्यानुं पडवुं संभवतुं नथी एम पंडितोए जाणवुं. (४३) आ बाबतनो यंत्र जोवाथी तमोने दृढ प्रतीति थशे, तेथी हे विचक्षण पुरुषो ! ते यंत्र सारी रीते जुओ. (४४).

यंत्र.

युगपूर्वार्ध.

वर्ष	प्रथम चंद्रवर्ष						द्वितीय चंद्रवर्ष						अर्धअभिवर्धित		
मास	आसो	मार्ग	माघ	चैत्र	ज्येष्ठ	श्रा.	आ.	मार्ग	माघ	चैत्र	ज्येष्ठ	श्रा.	आ	मार्ग	बीजोपोष
पक्ष	कृष्ण	कृ.	कृ.	कृ.	कृ.	कृ.	कृ.	कृ.	शुक्ल	शु	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.
अवमतिथि	१	३	५	७	९	११	१३	०	२	४	६	८	१०	१२	१४
पाततिथि	२	४	६	८	१०	१२	१४	१	३	५	७	९	११	१३	१५

युगपश्चिमार्ध.

वर्ष	अर्धअभिवर्धित			चंद्रवर्ष						अभिवर्धितवर्ष					
मास	चैत्र	ज्येष्ठ	श्रा.	आ.	मार्ग	माघ	चैत्र	ज्येष्ठ	श्रा.	आ.	मार्ग	माघ	चैत्र	ज्ये.	बी.अषाढ.
पक्ष	कृष्ण	कृ.	कृ.	कृ.	कृ.	कृ.	कृ.	कृ.	शुक्ल	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.
अवमतिथि	१	३	५	७	९	११	१३	०	२	४	६	८	१०	१२	१४
पाततिथि	२	४	६	८	१०	१२	१४	१	३	५	७	९	११	१३	१५

ननु कालः सदाऽनादि-प्रवाहः परिवर्त्तते । जगत्स्वभावान्नियत-स्वरूपेण दिवानिशं ॥ ४५ ॥ न हानिः कापि कालस्य न च वृद्धिः स्वरूपतः । ततोऽत्रावमरात्राधि-मासादीनां कथा वृथा ॥ ४६ ॥ सत्यं किंत्विह मासानां विरूपाणां परस्परं । अंशादिभिर्विशेषो यो वर्त्तते तदपेक्षया ॥४७॥ विवक्ष्येते हानिवृद्धी कालस्य न तु वास्तवी । वस्तुतस्त्वेष नियत-स्वरूपः परिवर्त्तते ॥ ४८ ॥ तथाहि—चंद्रमासविवक्षायां कर्म-मासव्यपेक्षया । कालस्य हानिर्वृद्धिश्च सूर्यमासविवक्षणे ॥ ४९ ॥ पृथग् पृथग् विवर्त्तते वस्तुतस्तु त्रयोऽप्यमी । मासा अनादिनियत-स्वरूपेण सदा भुवि ॥ ५० ॥

अथ नष्टतिथिं ज्ञातुं करणं प्रतिपाद्यते । विज्ञायते सुखं येना-नुक्तापि पर्वयुक् तिथिः ॥ ५१ ॥ समुद्गच्छति मार्त्तंडे यद्येकाभिजितः कला । भुक्ता चंद्रमसा तर्हि कतमत्पर्व का तिथिः ॥ ५२ ॥ अत्र करणं— अभिजित्प्रमुखर्क्षाणा-मतीतानां यथाक्रमं । इष्टमेष्टकलां यावत्

अहीं कोइ शंका करे के-अनादि प्रवाहथी चाल्यो आवतो काळ सदा जगतना स्वभावथी ज रात्रिदिवस नियमितपणे ज परिवर्तन कर्या करे छे. (४५). तेमां कांइ स्वरूपथी काळनी हानि के वृद्धि थती नथी, तेथी अहीं अवमरात्र अने अधिकमास विगेरेनी कथा करवी वृथा छे. (४६). उत्तर—तमारी शंका खरी छे; परंतु अहीं जूदा जूदा स्वरूपवाळा मासोनो परस्पर अंशादिके करीने जे विशेष वर्त्ते छे तेनी अपेक्षाए (ते मासादिकनी) हानि-वृद्धि कहेवाय छे; कांइ काळनी हानि-वृद्धि वास्तविक नथी. खरी रीते तो आ काळ नियमितपणे ज फर्या करे छे. (४८). ज्यारे चंद्रमास कहेवानी इच्छा थाय त्यारे कर्ममासनी अपेक्षाए काळनी हानि-वृद्धि कहेवामां आवे छे. ए ज रीते सूर्यमासनी विवक्षामां पण जाणवुं. (४९). वास्तविक रीते तो आ त्रणे प्रकारना मासो अनादिकाळथी नियमितपणे सदा पृथ्वीपर जूदा जूदा प्रवर्त्ते छे. (५०).

हवे नष्ट तिथि जाणवाने माटे करण कहेवामां आवे छे. ते जाणवाथी नहीं कहेला पण पर्व अने तिथि सुखे करीने जाणी शकाय छे. (५१). प्रश्न—सूर्यनो उदय थाय त्यारे जो अभिजित् नक्षत्रनी एक कळा चंद्रमाए भोगवी होय तो ते वखते केटलामुं पर्व होय ? अने कइ तिथि होय ? (५२). आनो निर्णय करवा माटे आ प्रमाणे करण करवुं.—अभिजित् नक्षत्रथी प्रारंभीने जेटलां नक्षत्रो वीती गयां होय तेनी कळाओने इष्ट

कला एकत्र मेलयेत् ॥ ५३ ॥ कला चात्राहोरात्रस्य सप्तषष्टितमो भागो बोद्धव्यः. इष्टभेष्टकलां ताभ्यो–ऽपनीयेत स्थितं च यत् । त्रिनवत्यधिकै-स्ताड्यं तत्त्रयोदशभिः शतैः ॥ ५४ ॥ विभज्यते च तत्त्रिंशै–स्ततोऽष्टा-दशभिः शतैः । लब्धं संत्यज्यते शेषं यत्स्यात्तत्स्थाप्यते द्विशः ॥ ५५ ॥ एकत्रास्मिन्नेकषष्ट्या विभक्ते यद्वाप्यते । अन्यराशौ क्षिप्यते तत् सोऽङ्कराशिः पुनस्ततः ॥ ५६ ॥ ह्रियते पंचदशभि–र्हृते च यद्वाप्यते । तानि पर्वाणि शेषांशा–स्तिथिसंख्या भवेदिह ॥ ५७ ॥ किंच––भमत्रा-भिजिदेवाद्यं तत्कलाप्याद्दिमोदिता । तदेककात्तत्कलांका–न्न किंचिद-पनीयते ॥ ५८ ॥ यदस्मादेककादेक–कलापनयने भवेत् । शून्यं शेषं ततो न स्या–द्गुणनाद्या क्रियोत्तरा ॥ ५९ ॥ यथा पूर्वोक्तपृच्छाया–मेका याभिजितः कला । गुण्यते त्रिनवत्याढ्यैः सा त्रयोदशभिः शतैः ॥ ६० ॥ तावदंका भवेत्त्रिंशै–र्नैषाष्टादशभिः शतैः । विभक्तुं शक्यते तेन विधिः शेषो विधीयते ॥ ६१ ॥ त्रयोदशशती सत्रि–नवतिर्द्विर्निधीयते । एको

नक्षत्रनी इष्ट कळा सुधी अनुक्रमे एकठी मेळववी (सर्वनो सरवाळो करवो). (५३). अहीं कळा एटले एक अहोरात्रनो सडसठमो भाग जाणवो. ते कळाओमांथी इष्ट नक्षत्रनी इष्ट कळाने बाद करवी. जे बाकी रहे तेने तेर सो ने त्राणुए गुणवा. (५४). पछी तेने अढार सो ने त्रीशे भांगवा. भागमां जे आवे तेनो त्याग करवो अने जे शेष रहे तेने बे वार स्थापवा. (५५). तेमांथी एक तरफना स्थापेला अंकने एकसठे भांगतां जे भागमां आवे तेने बीजी राशिमां (बीजी तरफना स्थापेला अंकमां) भेळववा, ते अंकराशि कहेवाय छे. (५६). ते अंकराशिने पंदरे भांगतां जे भागमां आवे ते पर्व जाणवा अने जे शेष रहे ते तिथिनी संख्या जाणवी. (५७). आ रीत प्रमाणे अहीं प्रश्नमां अभिजित् नक्षत्र कह्युं ते पहेलुं ज छे, तेनी कळा पण पहेली ज कही छे; तेथी एकनी संख्यावाळा तेनी कळाना अंकथी कांइ पण बाद थइ शकतुं नथी. (५८). कारणके आ एकनी संख्यामांथी एक कळा बाद करतां शेष शून्य रहे छे; तेथी करीने आगळ करवानी कहेली गुणाकार विगेरेनी क्रिया थइ शकती नथी. (५९). पूर्वे पूछेला प्रश्नमां जे अभिजित्नी एक कळा कही छे, तेने तेर सो ने त्राणुए गुणतां तेटलो ज (१३९३) अंक आवे छे. तेने अढार सो ने त्रीशवडे भांगी शकाता नथी, तेथी बाकीनो विधि करवो. (६१). एटले के तेर सो ने त्राणुना अंकने बे ठेकाणे स्थापन करवो. तेमांथी एक तरफना अंकने

राशिश्चैकषष्ठ्या ह्रियते तत्र चाप्यते ॥ ६२ ॥ द्वाविंशतिः क्षिप्यते सा परराशौ ततो भवेत् । चतुर्दशशती पंच-दशभिस्सहिताथ सा ॥ ६३ ॥ ह्रियते पंचदशभि-श्चतुर्नवतिराप्यते । शेषास्तिष्ठंति पंचांशा-स्ततः पूर्वोक्तनिर्णयः ॥ ६४ ॥ चतुर्नवतिसंख्यस्य पर्वणः पंचमीतिथौ । सूर्योदये चंद्रमसा भुक्तैकाभिजितः कला ॥ ६५ ॥

करणानि निरूप्यन्ते तिथ्यर्द्धप्रमितान्यथ । भवंति तानि द्वैधानि चराणि च स्थिराणि च ॥६६॥ ववं च बालवं चैव कौलवं स्त्रीविलोचनं। गरादि वणिजं विष्टिः सप्तैतानि चराणि यत् ॥ ६७ ॥ अन्यत्र स्त्रीविलोचनस्थाने तैतिलमिति, गरादिस्थाने च गरमिति संज्ञा श्रूयते इति ज्ञेयं. तिथिष्वनियतास्वेता-न्यावर्त्तते यथाक्रमं । शुक्लपक्षे प्रतिपदः पश्चिमार्द्धे ववं भवेत् ॥६८॥ द्वितीयायाश्चादिमेऽर्द्धे बालवं कौलवं परे । तृतीयायाश्चादिमेऽर्द्धे भवति स्त्रीविलोचनं ॥६९॥ अपरार्द्धे तृतीयाया गरादिकरणं भवेत् । चतुर्थ्याः प्रथमेऽर्द्धे स्या-द्वणिजं विष्टिरंतिमे ॥७०॥ पुनर्ववं बालवं च पंचम्या

एकसठे भांगवो; तेथी भागमां बावीश आवे छे. तेने बीजी स्थापेली राशिमां नांखवाथी चौद सो ने पंदर (१४१५) थाय छे. (६३). तेने पंदरे भांगतां भागमां चोराणुं आवे छे अने बाकी पांच शेष रहे छे; तेथी पूर्वे कहेला प्रश्नो निर्णय ए थयो के (६४)—चोराणुमा पर्वनी पांचमनी तिथिए सूर्योदयने समये चंद्रमाए अभिजित्नी एक कळा भोगवी. (६५).

हवे करणोनी प्ररूपणा करे छे.—ते दरेक करणो अर्ध तिथिना प्रमाणवाळा होय छे. ते चर अने स्थिर एम बे प्रकारनां होय छे. (६६). बव, बालव, कौलव, स्त्रीविलोचन, गरादि, वणिज अने विष्टि आ सात करणो चर छे. (६७). कोइक ठेकाणे स्त्रीविलोचनने ठेकाणे तैतिल अने गरादिने ठेकाणे गर एवां नाम संभळाय छे एम जाणवुं. आ करणो अनियमित तिथिओने विषे अनुक्रमे फर्या करे छे. तेमां शुक्लपक्षने विषे प्रतिपदाना पाछला अर्ध भागमां बव नामनुं करण होय छे, (६८), द्वितीया तिथिना पहेला अर्ध भागमां बालव नामनुं करण होय छे, पाछला अर्ध भागमां कौलव नामनुं करण होय छे, त्रीजना आदि अर्ध भागमां स्त्रीविलोचन नामनुं करण होय छे (६९), त्रीजना पाछला अर्ध भागमां गरादि नामनुं करण होय छे, चोथना पहेला अर्ध भागमां वणिज नामनुं करण होय छे अने चोथना पाछला अर्ध भागमां विष्टि नामनुं करण होय छे. (७०).

अर्द्धयोर्द्वयोः। क्रमादर्द्धद्वये षष्ठ्याः कौलवस्त्रीविलोचने ॥ ७१॥ अर्द्धद्वये च सप्तम्या गरादिवणिजे स्मृते। अष्टम्याः प्रथमेऽर्द्धे स्याद्विष्टिरंत्ये पुनर्बवं ॥ ७२ ॥ बालवं कौलवं चेति नवम्या अर्द्धयोर्द्वयोः अर्द्धद्वये दशम्याः स्त्री-विलोचनगराभिधे ॥ ७३ ॥ एकादश्याः प्राक्तनेऽर्द्धे वणिजं विष्टिरंतिमे। पुनर्बवं बालवं च द्वादश्या अर्द्धयोर्द्वयोः ॥ ७४ ॥ अर्द्धद्वये त्रयोदश्याः कौलवस्त्रीविलोचने। अर्द्धद्वये चतुर्दश्या गरादिवणिजे क्रमात् ॥ ७५ ॥ पूर्णिमायाः प्राक्तनेऽर्द्धे विष्टिरंत्ये पुनर्बवं। कृष्णपक्षे प्रतिपदः पूर्वार्द्धे बालवं स्मृतं ॥ ७६ ॥ अत एव युगस्यादिर्बालवकरणे पूर्वं निरूपितेति ज्ञेयं. अंतिमेऽर्द्धे प्रतिपदः कौलवं करणं भवेत्। द्वितीयाहर्निशोश्च स्त्री-विलोचनगरादिके ॥ ७७ ॥ तृतीयायां च वणिज-विष्टी स्यातामहर्निशोः। चतुर्थ्याश्चाह्नि रात्रौ च क्रमेण बवबालवे ॥ ७८ ॥ दिने रात्रौ च पंचम्याः कौलवस्त्रीविलोचने। गरादिवणिजे षष्ठ्याः सप्तम्या विष्टि-

फरीथी बव अने बालव ए बे करणो अनुक्रमे पांचमना बन्ने अर्धभागमां होय छे, कौलव अने स्त्रीविलोचन ए बे करणो अनुक्रमे छठ्ठना बन्ने अर्धभागमां होय छे, (७१), गरादि अने वणिज ए बे करणो सातमना बन्ने अर्धभागमां अनुक्रमे होय छे; तथा आठमना पहेला अर्धने विषे विष्टि करण होय छे अने आठमना पाछला अर्धने विषे बव करण होय छे (७२). बालव अने कौलव ए बे करणो नोमना बन्ने अर्धने विषे होय छे, स्त्रीविलोचन अने गर ए बे करणो दशमना बन्ने अर्धभागमां होय छे (७३). अग्यारशना पहेला अर्धमां वणिज अने बीजा अर्धमां विष्टि होय छे. फरीथी बव अने बालव ए बे करणो बारशना बन्ने अर्धमां होय छे (७४), तेरशना बन्ने अर्धमां कौलव अने स्त्रीविलोचन होय छे, चौदशना बन्ने अर्धमां अनुक्रमे गरादि अने वणिज होय छे (७५) तथा पूर्णिमाना पहेला अर्धभागमां विष्टि अने बीजा अर्धभागमां फरीथी बव आवे छे. पछी कृष्णपक्षनी प्रतिपदाना पूर्वार्धमां बालव कहेलुं छे. (७६). आ कारणथी ज युगनी शरुआत बालव करणमां थाय छे एम प्रथम कही गया छीए. पछी कृष्णपक्षनी एकमना पश्चार्धमां कौलव करण आवे छे, बीजना दिवस अने रात्रिरूप बन्ने अर्ध भागमां स्त्रीविलोचन अने गरादि आवे छे (७७), त्रीजना दिवसे (पूर्वार्धमां) वणिज अने रात्रे (पश्चार्धमां) विष्टि होय छे, चोथने दिवसे बव अने रात्रे बालव आवे छे (७८), पांचमने दिवसे कौलव अने रात्रे स्त्रीविलोचन

सद्बवे ॥ ७९ ॥ अष्टम्यास्त्वह्नि रात्रौ च क्रमाद्बालवकौलवे । अर्द्धद्वये नवम्याः स्त्री-विलोचनगरादिके ॥ ८० ॥ दशम्यां वणिजं विष्टिः क्रमादर्द्धद्वये भवेत् । एकादश्यां दिवारात्रौ क्रमेण ववबालवे ॥ ८१ ॥ द्वादश्याश्च दिने रात्रौ कौलवस्त्रीविलोचने । गरादिवणिजे ज्ञेये त्रयोदश्यामहर्निशोः ॥ ८२ ॥ चतुर्दश्यां दिवा विष्टि-रष्टावावृत्तयः स्मृताः । चराणामिति सप्तानां मासे मासे पुनः पुनः ॥ ८३ ॥ तथाहुः—" मासेऽष्टशश्चराणि स्युरुज्ज्वलप्रतिपद्दलयार्द्धात्." रात्रौ कृष्णचतुर्दश्याः शकुनिः करणं भवेत् । चतुष्पदं च नागं चा-मावास्यामर्द्धयोर्द्वयोः ॥ ८४ ॥ किंस्तुघ्नं स्यात्प्रतिपदः शुक्लायाः प्रथमेऽर्द्धके । एतानि स्युस्तिथिष्वेते- ष्वेव प्राहुः स्थिराण्यतः ॥ ८५ ॥ अत्र सर्वत्र दिनरात्रिशब्देनापि तिथीनां पूर्वार्द्धापरार्द्धे एव लक्षणीये करणानां तिथ्यर्द्धप्रमितत्वादिति.

एतेषां स्वामिनः प्रयोजनं चैवं लौकिकशास्त्रेषु-इंद्रो १ विधि २

आवे छे, छठ्ठने विषे गरादि अने वणिज होय छे, सातमे विष्टि अने बव होय छे (७९), आठमने दिवसे अने रात्रिए अनुक्रमे बालव अने कौलव आवे छे, नोमना बन्ने अर्धमां स्त्रीविलोचन अने गरादि आवे छे (८०), दशमना बन्ने अर्धमां अनुक्रमे वणिज अने विष्टि होय छे, अग्यारशने दिवसे अने रात्रे अनुक्रमे बव अने बालव होय छे, (८१), बारशने दिवसे अने रात्रे कौलव अने स्त्रीविलोचन होय छे, गरादि अने वणिज तेरशने दिवसे अने रात्रे जाणवा (८२), चौदशने दिवसे विष्टि होय छे. आ प्रमाणे दरेक मासमां आ सात चर करणोनी वारंवार आवृत्तिओ कहेली छे. (८३). कह्युं छे के—" दरेक मासमां शुक्लपक्षनी प्रतिपदाना बीजा अर्धभागथी आरंभीने चर करणो आठ वार आवृत्ति करे छे. " वद चौदशनी रात्रिए शकुनि नामनुं करण होय छे, तथा अमावास्याना बन्ने अर्धभागमां अनुक्रमे चतुष्पद अने नाग नामनां करणो आवे छे (८४), तथा शुक्ल प्रतिपदाना पहेला अर्धभागमां किंस्तुघ्न नामनुं करण होय छे. आ करणो आ तिथिओमां ज आवे छे तेथी ते स्थिर कहेवाय छे. (८५). अहीं सर्व ठेकाणे दिवस अने रात्रि शब्दे करीने तिथिनो प्रथम अर्धभाग अने पाछळनो अर्धभाग जाणवो; केमके अर्ध तिथिना प्रमाणवाळां करणो होय छे.

आ करणोना स्वामी तथा प्रयोजन लौकिक शास्त्रमां आ प्रमाणे कहे छे.— " इंद्र १, विधि २, मित्र ३, अर्यमा ४, भू ५, श्री ६ अने शमन ७ आ सात

मित्रा ३ र्यम ४ भू ५ श्री ६ शमना ७ श्चलेषु करणेषु । कलि १ वृष २ फणि ३ मरुतः ४ पुन–रीशाः क्रमशः स्थिरेषु स्युः ॥ १ ॥ अत्र शमनो यमः स भद्रायाः स्वामी. दशामूनि विविष्टीनि दिष्टान्यखिलकर्मसु । रात्र्यहर्व्यत्ययाद्भद्रा–प्यदुष्टैवेति तद्विदः ॥ २ ॥ विविष्टीनीति कोऽर्थः ? एकादशसु करणेषु भद्रा दुष्टेति. शेषकरणप्रयोजनं त्वेवं—शकुनिचतुष्पदनागे किंस्तुघ्ने कौलवे च वणिजे च । ऊर्ध्वं संक्रमणं गर–तैतिल-विष्टिषु पुनः सुप्तं ॥ ३ ॥ बवबालवे निविष्टं सुभिक्षं चोर्ध्वसंक्रमे । उपविष्टो रोगकरः सुप्तो दुर्भिक्षकारकः ॥ ४ ॥ तथा शीतोष्णवर्षर्तुषु सूर्यसंक्रमाः क्रमेण सुप्तोर्ध्वनिवेशिनः शुभाः. तथा पूर्वोत्तरकरणद्वय-संधिगा संक्रांतिस्तु सुप्तोत्थितेत्याख्या सर्वदाप्यशुभेति पूर्णभद्र इत्याद्यारंभसिद्धिवार्त्तिके. इति करणप्रकरणम् ।

स्वामी सात चर करणना छे, तथा कलि १, वृष २, फणी ३ अने मरुत ४ आ चार स्वामी चार स्थिर करणना छे. (१). " अहीं शमन एटले यम, ते भद्रा (विष्टि)नो स्वामी छे. एक विष्टिने छोडीने बाकीनां दश करणो सर्व शुभ कार्यमां सारां छे; तथा रात्रि अने दिवसना व्यत्ययथी (एटले दिवसनी विष्टि रात्रे आवती होय अने रात्रिनी विष्टि दिवसे आवती होय तो) ते भद्रा पण दोष रहित ज छे, एम तेना विद्वानो कहे छे. (२). अहीं मूळमां ' विविष्टीनि ' शब्द लख्यो छे तेनो अर्थ आ प्रमाणे छे के—अग्यारे करणोने विषे एक भद्रा दुष्ट छे. बाकीना करणोनुं प्रयोजन आ प्रमाणे छे.–शकुनि, चतुष्पद, नाग, किंस्तुघ्न, कौलव अने वणिज ए छ करणो ऊर्ध्व गति करनारां छे. गर, तैतिल अने विष्टि ए त्रण करणो सुता कहेवाय छे, (३) तथा बव अने बालव ए बे करण बेठा कहेवाय छे. तेमां ऊर्ध्व गतिवाळा होय तो सुकाळ थाय छे, बेठा होय तो रोग थाय छे अने सुता होय तो दुकाळ थाय छे. (४). तथा सूर्यनी संक्रांति शीतऋतुमां सुतेला करणमां थाय, उष्णऋतुमां ऊर्ध्व गतिवाळा करणमां थाय अने वर्षाऋतुमां बेठा करणमां थाय तो ते शुभ छे; तथा पहेला अने पछीना ए बे करणोनी संधिमां सूर्यसंक्रांति थती होय तो ते सुप्तोत्थिता नामनी कहेवाय छे. ते सर्वदा अशुभ छे एम पूर्णभद्र कहे छे. इत्यादिक आरंभसिद्धिनी टीकामां लखेलुं छे. " इति करणप्रकरण.

मुहूर्त्ताः परिवर्त्तंते ये त्रिंशत्प्रतिवासरं । तेषां नामक्रमं वक्ष्ये सर्वज्ञागमदर्शितं ॥ ८६ ॥ आद्यो रुद्रो दिनस्यादौ श्रेयानिति द्वितीयकः । मित्रवायुसुपीताख्या–स्तृतीयतुर्यपंचमाः ॥ ८७ ॥ षष्ठोऽभिचंद्रो माहेंद्रः सप्तमः स्यादथाष्टमः । बलवान्नवमः पद्मो दशमो बहुसत्यकः ॥ ८८ ॥ एकादशः स्यादैशानो द्वादशस्तस्थसंज्ञकः । भावितात्मवैश्रवणौ त्रयोदशचतुर्दशौ ॥ ८९ ॥ वारुणः स्यात्पंचदश आनंदः षोडशः स्मृतः । विजयः स्यात्सप्तदशो–ऽष्टादशो विश्वसेनकः ॥ ९० ॥ एकोनविंशतितमः प्राजापत्याह्वयो भवेत् । मुहूर्त्तो विंशतितमो भवत्युपशमाभिधः ॥ ९१ ॥ स्यादेकविंशतितमो गंधर्वोऽथाग्निवैश्यकः । द्वाविंशः स्यात्त्रयोविंशः शतादिवृषभाभिधः ॥ ९२ ॥ चतुर्विंशस्त्वातपवान् पंचविंशोऽममो भवेत् । षड्विंशोऽरुणवान् सप्त–विंशो भौमाभिधः स्मृतः ॥ ९३ ॥ अष्टाविंशस्तु ऋषभः सर्वार्थः स्यात्ततः परः । त्रिंशत्तमो राक्षसाख्यो मुहूर्त्तो यो निशोऽतिमः ॥ ९४ ॥ इति मुहूर्त्तप्रकरणम् ।

नक्षत्राणां परावर्त्तं चंद्रसंबंधिनामथ । ब्रूमहे प्रत्यहोरात्रं सूर्यसंबंधिनामपि ॥ ९५ ॥ भवत्यभिजिदारंभो युगस्य प्रथमक्षणे । अस्य

हवे हमेशां जे त्रीश मुहूर्त्तो फर्या करे छे, तेमनां नाम अनुक्रमे सर्वज्ञना आगममां कह्यां छे ते हुं कहुं छुं. (८६).—दिवसना आरंभमां पहेलुं मुहूर्त्त रुद्र नामनुं छे, बीजुं श्रेयान नामनुं छे, त्रीजुं मित्र, चोथुं वायु, पांचमुं सुपीत नामनुं, छठुं अभिचंद्र, सातमुं माहेंद्र, आठमुं बलवान, नवमुं पद्म, दशमुं बहुसत्यक, अग्यारमुं ऐशान, बारमुं तस्थ नामनुं, तेरमुं भावितात्मा, चौदमुं वैश्रवण, पंदरमुं वारुण, सोळमुं आनंद, सतरमुं विजय, अढारमुं विश्वसेन, ओगणीशमुं प्राजापत्य नामनुं, वीशमुं उपशम नामनुं, एकवीशमुं गंधर्व, बावीशमुं अग्निवैश्यक, त्रेवीशमुं शतवृषभ, चोवीशमुं आतपवान, पचीशमुं अमम, छवीशमुं अरुणवान, सत्तावीशमुं भौम नामनुं कह्युं छे, अठ्ठावीशमुं ऋषभ, ओगणत्रीशमुं सर्वार्थ अने त्रीशमुं राक्षस नामनुं मुहूर्त्त छे. ते रात्रिने छेडे आवे छे. (८७ थी ९४). इति मुहूर्त्तप्रकरण.

हवे दरेक अहोरात्रिए चंद्र संबंधी नक्षत्रो फर्या करे छे तेने अमे कहीए छीए, तथा सूर्य संबंधी नक्षत्रो पण कहीए छीए. (९५).—युगना पहेला क्षणमां अभिजित् नक्षत्रनो

पूर्वोक्तशीतांशु–भोगकालादनंतरं ॥ ९६ ॥ श्रवणं स्यात्तस्य चेंदु–भोगकालव्यतिक्रमे । धनिष्ठेत्येवमादीनि ज्ञेयानि निखिलान्यपि ॥ ९७ ॥ अथेंदुना भुज्यमान–महोरात्रे विवक्षिते । इष्टे तिथौ च नक्षत्रं ज्ञातुं करणमुच्यते ॥ ९८ ॥ यस्मिन् दिने चंद्रयुक्तं नक्षत्रं ज्ञातुमिष्यते । तस्माद्दिनात्प्रागतीत–पर्वसंख्या युगादितः ॥ ९९ ॥ गुण्यते पंचदशभि–स्ततः प्रागीप्सितात्तिथेः । तिथीनतीतान् सत्पर्व–सत्कांस्तत्र नियोजयेत् ॥ १०० ॥ अतीतावमरात्रोना द्व्यशीत्या ह्रियतेऽथ सा । लब्धमंशाश्च ये शेषा–स्तानूर्ध्वाधो न्यसेत्क्रमात् ॥ १ ॥ लब्धमूर्ध्वं स्थापितं य–त्तद्राशिरिति कथ्यते । अंशा अधःस्थिताः शेष–राशिरित्यभिधीयते ॥ २ ॥ राशिं चतुर्गुणीकृत्य शोधयेदेकविंशतिं । शेषराशेरधःस्थाच्च शोधयेत्सप्तविंशतिं ॥ ३ ॥ आसंभवं लब्धराशेः शेषराशेश्च शोधयेत् । तामेकविंशतिं सप्त–विंशतिं च क्रमान्मुहुः ॥४॥ अथोपरितनो राशि–रेकविंशतिशोधनं । यद्यल्पत्वान्न क्षमेत तदा राशेरधस्तनात् ॥ ५ ॥ एकं रूपं समादाय

आरंभ होय छे, तेनो पूर्वे कह्या प्रमाणे चंद्रनो भोग थया पछी तरत ज श्रवण नक्षत्र आवे छे, तेने पण चंद्र भोगवीने मूकी दे छे त्यारे धनिष्ठा नक्षत्र आवे छे. ए विगेरे अनुक्रमे सर्व नक्षत्रोने चंद्र भोगवे छे. (९६–९७). हवे कहेवाने इच्छेला अहोरात्रिए अने इच्छेली तिथिने विषे चंद्रवडे जे नक्षत्र भोगवातुं होय ते जाणवा माटे करण कहे छे. (९८).— जे दिवसे चंद्रयुक्त (चंद्रवडे भोगवातुं) नक्षत्र जाणवानी इच्छा होय ते दिवसनी पहेलां युगनी शरुआतथी जेटला पर्व वीती गया होय तेटला अंकने पंदरे गुणवा. पछी तेमां इच्छित तिथिनी पहेलानी जेटली तिथिओ व्यतीत थइ होय तेटली संख्या मेळववी. (९९–१००). तेमांथी जेटला अवमरात्रो गया हता तेटला बाद करवा. पछी तेने बाशीए भांगवा. जे भागमां आवे तेने तथा जे शेष रह्या होय तेने अनुक्रमे उपर अने नीचे स्थापन करवा. (१). भागमां आवेला अंकने जे उपर स्थाप्यो छे तेने राशि कहेवो, अने शेष वधेला अंशो जे नीचे स्थाप्या छे तेने शेषराशि कहेवो. (२). हवे ते राशिने चारे गुणी तेमांथी एकवीश बाद करवा, तथा नीचेनी शेषराशिमांथी सतावीश बाद करवा. (३). ए ज रीते शेष रहेला उपरना राशिमांथी तथा शेष राशिमांथी अनुक्रमे एकवीश अने सतावीश ज्यां सुधी बादबाकी संभवे त्यां सुधी वारंवार बाद करवा. (४). ए रीते बाद करतां जो उपरनो राशि नानो होवाथी तेमांथी एकवीश बाद करी शकाय

सप्तषष्ट्या निहत्य च । राशौ क्षिप्त्वोर्ध्वगे कुर्या–देकविंशतिशोधनं ॥ ६ ॥ यात्रैकविंशती राशेः शोध्यतेऽभिजितो हि सा । भावनैवं शेषराशेः सप्तविंशतिशोधने ॥ ७ ॥ आरभ्य श्रवणादत्रो–त्तराषाढावसानकं । सप्तविंशतिसंख्याक–मवधार्यं भमंडलं ॥ ८ ॥ शेषराशेस्ततः सप्त–विंशतिर्यदि शुध्यति । शुद्धं तदाखिलमपि ज्ञेयमस्माद्भमंडलं ॥ ९ ॥ नाल्पत्वाच्चेदितः सप्त–विंशतिः शोद्धुमर्हति । तदा द्वाविंशतिः शोध्या शुद्ध्येन्नैषापि चेत्तदा ॥ १० ॥ शोध्या अष्टादशामीषां शोधनासंभवे सति । त्रयोदशदशैषां वा–संभवे पंच शोधयेत् ॥ ११ ॥ द्वाविंशतौ विशुद्धायां–मत्र शुद्धानि भावयेत् । सर्वाणि श्रवणादीनि विशाखांतानि भान्यथ ॥ १२ ॥ अष्टादशसु शुद्धेषु शुद्धानीह विचिंतयेत् । श्रुत्यादीन्युत्तराफाल्गु–न्यंतान्यष्टादशाप्यथ ॥ १३ ॥ त्रयोदशसु शुद्धेषु शुद्धानि परिभावयेत् । श्रुत्यादीनि पुनर्वस्वं–तानि भानि त्रयोदश ॥ १४ ॥ एवं दशसु शुद्धेषु रोहिण्यंतानि चिंतयेत् । उदग्भद्रपदांतानि तथा शुद्धेषु पंचसु ॥ १५ ॥ पर्यंतसूचकान्यत्र

तेवो न होय तो नीचेना राशिमांथी एक लइ तेने सडसठे गुणी उपरना राशिमां मेळवी तेमांथी एकवीश बाद करवा. (५–६). अहीं जे राशिमांथी एकवीश बाद करवामां आवे छे ते अभिजित् संबंधी छे, अने शेष राशिमांथी सतावीश बाद करवामां आवे छे त्यां आ प्रमाणे जाणवुं. (७).—अहीं श्रवण नक्षत्रथी आरंभीने उत्तराषाढा नक्षत्र सुधीना नक्षत्रमंडळमां सतावीश नक्षत्रो आवे छे; तेथी जो शेष राशिमांथी सतावीश बाद करी शकाय तो ते शेष राशिमांथी समग्र नक्षत्रमंडळने बाद कर्युं एम जाणवुं. (८–९). जो ते शेष राशिनी अल्प संख्या होवाथी सतावीश बाद करी शकाय तेम न होय तो तेमांथी बावीश बाद करवा. जो बावीश पण बाद न करी शकाय तो अढार बाद करवा. अढार पण बाद करवानो असंभव होय तो तेर बाद करवा. ते पण न संभवे तो दश बाद करवा. ते पण न संभवे तो पांच बाद करवा. (१०–११). तेमां जो बावीश बाद थया होय तो श्रवणथी आरंभीने विशाखापर्यंत सर्व नक्षत्रो शोधायां एम जाणवुं. (१२). अढार बाद थया होय तो श्रवणथी आरंभीने उत्तराफाल्गुनी पर्यंत अढारे नक्षत्रो शोधायां एम विचारवुं. (१३). तेर बाद थया होय तो श्रवणथी आरंभीने पुनर्वसु पर्यंत तेर नक्षत्रो शोधायां एम जाणवुं. (१४). ए ज प्रमाणे दश बाद थया होय तो श्रवणथी रोहिणी पर्यंत दश नक्षत्र शोधायां जाणवां, अने पांच बाद थया होय तो श्रवणथी उत्तराभाद्रपद-

यानि प्रोक्तानि भानि षट्। सार्द्धक्षेत्राण्येव तानि ज्ञेयानि निखिलान्यपि ॥ १६ ॥ तथाहि—श्रवणात्पंचमी सार्द्ध-क्षेत्रा भाद्रपदोत्तरा। दशमं ब्राह्ममादित्यं त्रयोदशं च तादृशं ॥ १७ ॥ उत्तराफाल्गुनी चाष्टा-दशी भवति तादृशी। सार्द्धक्षेत्रं विशाखाख्यं द्वाविंशतितमं श्रुतेः ॥ १८ ॥ स्यात्सप्तविंशा तत्राथो-त्तराषाढापि तादृशी। एतानि स्युः पंचचत्वा-रिंशन्मुहूर्त्तकानि यत् ॥ १९ ॥ तथाहुः—पंच १ दस २ तेरस ३-ट्ठारसेव ४ बावीस ५ सत्तवीसा य ६। सोज्झा दिवड्ढखित्तंत भद्दवाई असाढंता ॥ २० ॥ एवं चाधस्तने शेष-राशौ संशोधिते सति। एकादिचतुरंतं य-च्छेषं तच्चंद्रभं गतं ॥ २१ ॥ अत्र च एकादिचतुरंतं यच्छेषं तत्रिंशद्गुणनेन मुहूर्त्तीकृत्य तस्मात्क्रमप्राप्तं यन्नक्षत्रं तद्यदि समक्षेत्रं तदा त्रिंशच्छोध्यते, अर्द्धक्षेत्रं चेत्पंचदश शोध्यंते, एवं शोधने यच्छेषं तच्चंद्राक्रांतस्य नक्षत्रस्यातीतं मुहूर्त्तादिकं भवतीति ज्ञेयं. यच्चोपरितने राशा-वेकविंशति-शोधने। शेषं तत्त्रिंशताहत्य सप्तषष्ट्या विभज्यते ॥ २२ ॥ लब्धा मुहूर्त्ता

पर्यंत पांच नक्षत्र शोधायां छे एम जाणवुं. (१५). अहीं पर्यंतने सूचवनारां जे छ नक्षत्रो कह्यां छे, ते सर्वे (छए) सार्धक्षेत्रवाळां ज छे. (१६). ते आ प्रमाणे—श्रवणथी पांचमुं नक्षत्र उत्तराभाद्रपद कह्युं ते सार्धक्षेत्री छे, ए ज प्रमाणे दशमुं रोहिणी अने तेरमुं पुनर्वसु पण तेवुं ज एटले सार्धक्षेत्री छे. (१७). अढारमुं उत्तराफाल्गुनी पण तेवुं ज (सार्धक्षेत्री) छे, विशाखा नामनुं बावीशमुं पण सार्धक्षेत्री छे (१८), अने सतावीशमुं उत्तराषाढा पण सार्धक्षेत्री छे. आ छए नक्षत्रो पीस्ताळीश मुहूर्त्तीयां छे. (१९). कह्युं छे के—" पांच, दश, तेर, अढार, बावीश अने सतावीश एटला अंकवडे श्रवणथी उत्तराषाढापर्यंत सार्ध नक्षत्रोने बाद करवां. (२०)." आ प्रमाणे करवाथी नीचेना शेषराशिने शोधतां एकथी चार सुधीनो जे अंक शेष रहे तेटलामुं चंद्रनक्षत्र गयुं एम जाणवुं. (२१). अहीं एकथी आरंभीने चार सुधीनो जे अंक शेष रह्यो होय तेने त्रीशे गुणी मुहूर्त्त करवा. त्यारपछी तेमांथी क्रमे प्राप्त थयेलुं नक्षत्र जो समक्षेत्री होय तो त्रीश शोधवा एटले के ते मुहूर्त्तना अंकमांथी त्रीश बाद करवा, अने अर्धक्षेत्री नक्षत्र होय तो पंदर बाद करवा. ए प्रमाणे बाद करतां जे शेष रहे ते चंद्रे भोगवाता नक्षत्रना वीती गयेला मुहूर्त्त विगेरे आवे छे एम जाणवुं. जे उपरना राशिमांथी एकवीश बाद करतां शेष रह्या होय तेने त्रीशे गुणी सडसठे भागवा. (२२). भागमां जे आवे ते मुहूर्त्त

ज्ञातव्या यत्तु तत्रापि शिष्यते । ते विज्ञेया मुहूर्त्तस्य विभागाः सप्तषष्टिजाः ॥ २३ ॥ यथा युगस्य प्रथमे ऽर्षे दशसु पर्वसु । अतिक्रांतेषु पंचम्यां किं नक्षत्रं निशापतेः ॥ २४ ॥ यात्रातीतपर्वसंख्या वर्त्तते दशलक्षणा । तस्यां पंचदशघ्नायां पंचाशं जायते शतं ॥ २५ ॥ पंचम्यां पृष्टमिति च चत्वारस्तिथयो गताः । ततश्चतुष्टयं तत्र योजनीयं मनस्विभिः ॥ २६ ॥ चतुःपंचाशदधिकं शतं स्याद्राशिरेष च । हीनो द्वाभ्यामवमाभ्यां द्विपंचाशं भवेच्छतं ॥ २७ ॥ तस्य द्व्यशीत्या भागे य–द्रूपमेकमवाप्यते । तदूर्ध्वं न्यस्यते शेषां सप्ततिं च न्यसेदधः ॥ २८ ॥ कृतश्चतुर्गुणो लब्ध–राशिरत्रैकलक्षणः । चत्वारः सप्ततिश्चोर्ध्वा–धोभावेन स्थिता इह $\frac{4}{70}$ ॥ २९ ॥ अथोपरितनाद्राशेः स्तोकत्वादेकविंशतिः । शोद्धुं न शक्यते तेना–धःस्थात्सप्ततिलक्षणात् ॥ ३० ॥ एकं रूपं समादाय सप्तषष्टिगुणीकृतं । निक्षिपेदूर्ध्वगे राशौ तज्जाता सैकसप्ततिः ॥ ३१ ॥ एकोनसप्ततिश्चाध–स्तिष्ठेद्राशेरथोर्ध्वगात् $\frac{71}{69}$ । शोधितायामभिजितः सत्काया-मेकविंशतौ ॥ ३२ ॥ पंचाशच्छिष्यतेऽधःस्था–द्राशेश्च सप्तविंशतौ ।

जाणवा अने जे शेष रह्या होय तेटला एक मुहूर्त्तना सडसठीया भाग जाणवा. (२३).

उदाहरण—युगना पहेला वर्षमां दश पर्व गया पछी पांचमने दिवसे चंद्रनुं क्युं नक्षत्र छे ? (२४). उत्तर—अहीं जे गयेला पर्वनी संख्या दश छे तेने पंदरे गुणतां एक सो ने पचास थाय छे. (२५). पांचमनी तिथिनो प्रश्न छे तेथी चार तिथिओ व्यतीत थयेली होवाथी पंडितोए तेमां (१५० मां) चार मेळववा. (२६). एटले एक सो ने चोपन (१५४) थया. आटला काळे बे अवमातिथि गयेली होवाथी तेमांथी बे बाद करतां शेष एक सो ने बावन (१५२) रहे छे. (२७). तेने बाशीए (८२) भांगतां भागमां एक आवे छे तेने उपर स्थापवो. शेष रहेला सीतेरने नीचे स्थापवा. ($\frac{1}{70}$) पछी भागमां आवेला एकने चारे गुणतां चार थया, तेने उपर स्थापवा अने नीचे सीतेर स्थापवा ($\frac{4}{70}$). (२८–२९). हवे उपरनो राशि अल्प होवाथी तेमांथी एकवीश बाद थइ शकशे नहीं; तेथी नीचेना राशि सीतेरमांथी एक लइ तेने सडसठे गुणी उपरना राशिमां मेळव्या त्यारे एकोतेर (७१) थया. (३०–३१). अने नीचेनो राशि ओगणोतेर रह्यो ($\frac{71}{69}$). पछी उपरना राशि एकोतेरमांथी अभिजित् संबंधी एकवीश बाद करीए त्यारे पचास (५०) शेष रह्या, अने नीचेना (६९) राशिमांथी सतावीश बाद करीए त्यारे

शोधितायां भचक्रस्य द्विचत्वारिंशदास्थिता $\frac{५०}{४२}$ ॥ ३३ ॥ शोध्यते चोर्ध्वगाद्राशेः पुनरप्येकविंशतिः। राशेरधस्तनात्सप्त–विंशतिर्भगणस्य च ॥ ३४ ॥ एकोनत्रिंशदूर्ध्वं स्या–दधः पंचदश स्थिताः $\frac{२९}{१५}$ । एक-विंशतिरूर्ध्वस्था–द्राशेर्भूयोऽपि शोध्यते ॥ ३५ ॥ अष्टौ ततोऽवशिष्यंते $\frac{८}{१५}$ राशावूर्ध्वं व्यवस्थिते । तेषां च पुरतो वक्ष्ये–ऽवशिष्टां परिकर्मणां ॥ ३६॥ राशेरधस्ताच्छक्यंते शोद्धुं पंचदशात्मकात्। न सप्तविंशतिर्द्वाविं–शतिर्नाष्टादशापि न ॥ ३७ ॥ त्रयोदश तु शक्यंते शोद्धुं तेषां च शोधने। श्रुत्याद्यादित्यांतभानि शुद्धानि स्युस्त्रयोदश ॥ ३८ ॥ शेषाच्च द्वितया-त्रिंश–द्गुणात्पुष्यो विशोध्यते । मुहूर्तैस्त्रिंशता पंच–दशभिस्सार्द्धमेव च ॥३९॥ ये पंचदश शिष्यंते मघानां ते मुहूर्त्तकाः । अथोर्ध्वराशौ संत्यष्टौ तेषु त्रिंशद्गुणेषु च ॥ ४० ॥ चत्वारिंशा द्विशतीस्यात् सप्तषष्ट्या हरेच्च तां । लब्धास्त्रयो मुहूर्त्तास्तान् क्षिपेद्राशावधस्तने ॥ ४१ ॥ अष्टादश मुहूर्त्ताः स्यु–स्तद्भागाः सप्तषष्टिजाः। एकोनचत्वारिंशच्च तदेष प्रश्ननिर्णयः ॥ ४२ ॥ अष्टादशसु भुक्तेषु मुहूर्त्तेष्वमृतांशुना । मघानामधिकैकोन–चत्वारिंशल्लवेष्विह ॥ ४३ ॥ युगस्य प्रथमे वर्षे दशपर्वव्यतिक्रमे । उदेति

बेंताळीश शेष रह्या ($\frac{५०}{४२}$). (३२–३३). फरीथी उपरना राशि (५०)मांथी एकवीश बाद करतां ओगणत्रीश शेष रहे छे, अने नीचेनी राशि (४२)मांथी सत्तावीश बाद करतां पंदर शेष रहे छे ($\frac{२९}{१५}$). पछी उपरना (३४) राशिमांथी फरीथी एकवीश बाद करीए त्यारे आठ शेष रह्या. ते उपर स्थापवा ($\frac{८}{१५}$). हवे आगळ बाकी रहेली रीत बतावे छे. (३५).—नीचेनो राशि जे पंदर छे तेमांथी सत्तावीश, बावीश के अढार बाद करी शकाय तेम नथी; परंतु तेर बाद करी शकाय छे, तेथी पंदरमांथी तेर बाद करतां श्रवणथी पुनर्वसु पर्यंतना तेर नक्षत्रो बाद कर्या कहेवाय. बाकी रहेला बेने त्रीशे गुणतां साठ थया, तेमांथी पुष्यना पंदर सहित त्रीश मुहूर्त्त एटले पीस्ताळीश बाद करवा, त्यारे पंदर शेष रहे छे. ते मघाना मुहूर्त्तो जाणवा. हवे उपरना राशिमां जे आठ छे तेने त्रीशे गुणवाथी बसो ने चाळीश (२४०) थाय. तेने सडसठे (६७) भागतां भागमां त्रण मुहूर्त्त आव्या, तेने नीचेना राशिमां (१५ मां) मेळववा; तेथी अढार (१८) मुहूर्त्त थया. नीचे शेष रहेला ओगणचाळीश छे ते सडसठीया भाग छे. ($\frac{३९}{६७}$), तेथी प्रश्ननो जवाब ए आव्यो के–चंद्र मघा नक्षत्रना अढार मुहूर्त्तो अने सडसठीया ओगणचाळीश अंशो

सूर्यः पंचम्या–महोरात्रेऽपि तावति ॥ ४४ ॥ अहोरात्रे युगस्याद्ये प्रतिपत्संज्ञके तिथौ । चंद्रसंबंधि नक्षत्रं किमत्र प्रतिपाद्यते ॥ ४५ ॥ चतुर्विंशं शतं संख्या पाश्चात्ययुगपर्वणां । अष्टादशशती षष्टि–युक् स्यात्पंचदशाहता ॥ ४६ ॥ त्रिंशतोऽवमरात्राणा–मेतस्याः पातने भवेत् । अष्टादशशती त्रिंशा सा द्व्यशीत्या विभज्यते ॥ ४७ ॥ लब्धां द्वाविंशतिं न्यस्यो–परि कुर्याच्चतुर्गुणां । अष्टाशीतिर्भवेच्छेषा–मधः षड्विंशतिं न्यसेत् $\frac{88}{26}$ ॥ ४८ ॥ राशेरष्टाशीतिरूपा–देकविंशतिशोधने । संजाताभिजितः शुद्धिः सप्तषष्टिस्तु शिष्यते ॥४९॥ कल्पितैतावदंशत्वा–त्तया चैकं भवेदुडु । तस्मिंश्च मेऽधस्त्यराशौ क्षिप्ते स्यात्सप्तविंशतिः ॥५०॥ स्यात्सप्तविंशतेर्भानां शुद्धिरङ्कादतस्ततः । श्रुत्यादीन्युत्तराषाढा–न्तानि शुद्धानि भान्यतः ॥५१॥ पूर्वोक्तनिर्णयोऽयं त–द्यद्युगस्यादिमे दिने । सूर्योदये शशी योगं प्राप्नोत्यभिजिता सह ॥५२॥ युगस्याह्नि द्वितीयस्मिन् द्वितीयायां तिथावथ । चंद्रेण युक्तं नक्षत्रं किं स्यादित्यत्र कथ्यते ॥५३॥ प्रतिपल्लक्षणैकैवा–तिक्रांता तिथिरत्र या ।

भोगवे त्यारे युगना पहेला वर्षमां दश पर्व वीती गया बाद पांचमने दिवसे अने तेटला अहोरात्रे सूर्यनो उदय थाय छे. (३६–४४).

प्रश्न—युगना पहेला अहोरात्रे एटले एकमनी तिथिए चंद्रनुं कयुं नक्षत्र आवे ? आ प्रश्ननो जवाब कहे छे.—(४५). पहेलाना युगना एक सो ने चोवीश पर्वने पंदरे गुणतां अढार सो ने साठ (१८६०) थाय छे. (४६). तेमांथी त्रीश अवमरात्रो बाद करतां अढार सो ने त्रीश (१८३०) रहे छे. तेने बाशीए (८२) भागवा. (४७). भागमां बावीश आव्या, तेने उपर स्थापन करी चारे गुणतां अठ्ठाशी थाय. शेष रहेला छवीशने नीचे स्थापन करवा ($\frac{88}{26}$). (४८). पछी अठ्ठाशीना राशिमांथी एकवीश बाद करतां अभिजित्नी शुद्धि थइ (बादबाकी थइ); बाकी सडसठ रह्या. (४९). केमके तेना तेटला अंशोनी ज कल्पना करेली छे अने ते बाकीना सडसठ अंशनुं एक नक्षत्र थाय छे; तेथी ते नक्षत्रने एटले एकनी संख्याने नीचेना राशि (२६)मां मेळवतां सतावीश (२७) थाय छे. (५०). आ अंकथी सतावीश नक्षत्रोनी शुद्धि थाय छे, तेथी करीने श्रवणथी उत्तराषाढा सुधीनां नक्षत्रोनी शुद्धि थाय छे. (५१). तेथी पूर्वे करेला प्रश्ननो निर्णय ए थयो के–युगना पहेले दिवसे सूर्योदय समये अभिजित्नी साथे चंद्रनो योग थाय छे. (५२).

प्रश्न—युगथी शरुआतथी बीजे दिवसे एटले बीजनी तिथिए कयुं नक्षत्र चंद्रयुक्त होय ? आनो उत्तर कहे छे. (५३).—अहीं व्यतीत थयेली तिथि एक पडवानी ज छे,

द्व्यशीत्या भजनं सा न क्षमते यत्तनीयसी ॥ ५४ ॥ तदेतस्याः सप्तषष्टिः कर्त्तव्याः शकलास्ततः । ऋक्षस्याभिजितः प्राज्ञैः शोधनीयैकविंशतिः ॥ ५५ ॥ शेषा तिष्ठति षट्चत्वा-रिंशत्सा त्रिंशता हता । कर्त्तुं मुहूर्त्तान् साशीति-स्त्रयोदशशती भवेत् ॥ ५६ ॥ सप्तषष्ट्या विभागेऽस्या लब्धा मुहूर्त्तविंशतिः । चत्वारिंशन्मुहूर्त्तांशाः शिष्यंते सप्तषष्टिजाः ॥ ५७ ॥ ततश्च—सचत्वारिंशदंशायां श्रुतेर्मुहूर्त्तविंशतौ । भुक्तायामिंदुनोदेति द्वितीयेऽह्नि युगे रविः ॥ ५८ ॥ एवं सर्वत्राप्यन्यत्र करणभावना कार्या॰ इति चंद्रनक्षत्रप्रकरणं ॥

अष्टादशमुहूर्त्ताढ्य-महोरात्रचतुष्टयं । भुक्त्वा पुष्यस्य पंचापि स्वाब्दान्यारभते रविः ॥ ५९ ॥ चतुर्विंशत्या मुहूर्त्तै-रधिका भुक्तशेषकाः । भवंत्यष्टाहोरात्रा-स्तदा पुष्यस्य भास्वतः ॥ ६० ॥ ततश्च-स्युर्द्वादशमुहूर्त्ताढ्या अहोरात्रास्त्रयोदश । तथा स्युः षडहोरात्रा मुहूर्त्तश्चैकविंशतिः ॥ ६१ ॥ अहोरात्रा विंशतिश्च मुहूर्त्तत्रितयाधिकाः । समार्द्धसार्द्धक्षेत्राणां

ते अल्प होवाथी तेने बाशीए भागी शकाय नहीं. (५४). तेथी तेना सडसठ अंशो करवा. पछी तेमांथी अभिजितना एकवीश अंश बाद करवा. (५५). बाकी छेंताळीश रह्या, तेने मुहूर्त्त करवा माटे त्रीशे गुणवा त्यारे तेर सो ने ऐंशी (१३८०) थाय. (५६). तेने सडसठे भागतां भागमां वीश मुहूर्त्त आव्या अने एक मुहूर्त्तना सडसठीया चाळीश अंश शेष रह्या. (५७). तेथी करीने प्रश्ननो निर्णय ए थयो के-श्रवणना वीश मुहूर्त्त अने उपर सडसठीया चाळीश अंश चंद्र भोगवी रहे त्यारे युगने बीजे दिवसे सूर्यनो उदय थाय छे. (५८). आ प्रमाणे बीजे सर्व ठेकाणे करणनी भावना करवी. इति चंद्रनक्षत्रप्रकरण.

सूर्य पुष्य नक्षत्रना चार अहोरात्र अने अढार मुहूर्त्त भोगवीने पोताना पांचे वर्षोनो प्रारंभ करे छे. (५९). ते वखते पुष्य नक्षत्रना आठ अहोरात्र अने चोवीश मुहूर्तो सूर्ये भोगव्या विनाना बाकी रह्या छे एम जाणवुं. (६०). तेथी करीने सूर्यने समनक्षत्रनो भोग तेर अहोरात्र अने बार मुहूर्त्तनो छे, अर्धनक्षत्रनो भोग छ अहोरात्र अने एकवीश मुहूर्त्तनो छे; तथा सार्धनक्षत्रनो भोग वीश अहोरात्र अने त्रण मुहूर्त्तनो छे. (६१-६२).

भानां भोगः क्रमाद्रवेः ॥ ६२ ॥ एवं भैः सप्तविंशत्या षष्टियुक्तशतत्रये । अह्नामतीतेऽर्काब्दं स्या–देकषष्टितमे दिने ॥ ६३ ॥ द्वादशानां मुहूर्त्तानां पूर्त्तौ पूर्णौ पुनर्वसू । पुष्यस्याष्टादश ततो मुहूर्त्तास्तद्दिने गताः ॥ ६४ ॥ ततः परं च पुष्यस्या–तीते दिनचतुष्टये । पूर्णार्काब्दस्य षट्षष्टि–युक्ता दिनशतत्रयी ॥ ६५ ॥ सुखावबोधाय चात्र यन्त्रकम्—

आ प्रमाणे सतावीशे नक्षत्रो सूर्यवडे भोगवाइ जाय त्यारे त्रण सो ने एकसठ अहोरात्र पूरा थाय छे. त्यारपछीना बासठमे दिवसे बार मुहूर्त्त जाय त्यारे पुनर्वसु नक्षत्र पूर्ण थाय छे, तेथी ते दिवसे बाकीना अढार मुहूर्त्त पुष्यना गया एम जाणवुं. (६४). त्यारपछी पुष्यना चार अहोरात्र व्यतीत थाय त्यारे सूर्यवर्षना त्रण सो ने छासठ अहोरात्र पूर्ण थाय छे. (६५). आ बाबत सुखेथी जाणवा माटे नीचेनुं यंत्र जोवुं.

नक्षत्रना मुहूर्त्त	सम ३०	अर्ध १५	सम ३०	सम ३०	सार्ध ४५	सम ३०	सम ३०	अर्ध १५	सार्ध ४५	सम ३०	अर्ध १५	सम ३०	सम ३०	सार्ध ४५
नक्षत्र नाम	पुष्य	अश्ले-षा	मघा	पू. फा.	उ. फा.	हस्त	चित्रा	स्वा-ति	विशा खा	अनु-राधा	ज्येष्ठा	मूळ	पू.षा.	उ. षा.
अहोरात्र	शेष८	६	१३	१३	२०	१३	१३	६	२०	१३	६	१३	१३	२०
मुहूर्त्त	२४	२१	१२	१२	३	१२	१२	२१	३	१२	२१	१२	१२	३
अहो. सकळ	०	१५	२८	४२	६२	७५	८९	९५	११६	१२९	१३६	१४९	१६२	१८३
मुहूर्त्त सकळ	०	१५	२७	९	१२ शो.	२४	६	२७	० शो.	१२	३	१५	२७	० शो.

०	सम ३०	सम ३०	अर्ध १५	सम ३०	सार्ध ४५	सम ३०	सम ३०	अर्ध १५	सम ३०	सार्ध ४५	सम ३०	अर्ध १५	सार्ध ४५	सम ३०
अभिजित्	श्रवण	धनि-ष्ठा	शत-भिषा	पूर्वा भा.	उ. भा.	रेवती	अश्वि नी	भर-णी	कृत्ति का	रोहि-णी	मृग-शिर	आर्द्रा	पुन-र्वसु	पुष्य प्रा.
४	१३	१३	६	१३	२०	१३	१३	६	१३	२०	१३	६	२०	४
६	१२	१२	२१	१२	३	१२	१२	२१	१२	३	१२	२१	३	१८
१८७	२००	२१४	२२०	२३४	२५४	२६७	२८१	२८७	३०१	३२१	३३४	३४१	३६१	३६६
६	१८	०	२१	३	६ शो.	१८	०	२१	३	६ शो.	१८	९	१२ शो.	०

यथार्कोडुव्यवस्थैव-मेकस्याब्दस्य दर्शिता । पंचानामपि वर्षाणां तथा ज्ञेया युगे बुधैः ॥ ६६ ॥ ज्ञातुं सूर्यस्य नक्षत्रं विवक्षिततिथावथ । करणं प्रोच्यते पूर्वा-चार्यदर्शितया दिशा ॥ ६७ ॥ युगेऽतीतपर्वसंख्या प्राग्वत्पंचदशाहता । विवक्षितदिनात्पूर्व-मतीतैस्तिथिभिर्युता ॥ ६८ ॥ गतैरवमरात्रैश्च वर्जिताथ त्रिभिः शतैः। विभज्यते सा षट्षष्ठ्या-धिकैर्लब्धं च वत्सरः ॥६९॥ शेषं भवति यत्तस्मा-द्यथार्हं वक्ष्यमाणकं। संशोध्यते शोधनकं गतनक्षत्रसूचकं ॥ ७० ॥ सषट्षष्ठ्या त्रिशत्याऽल्पा भागं चेन्न क्षमेत सा। तदा शोध्यं शोधनक-मादावेवात्र संभवेत् ॥७१॥ चतुर्विंशत्या मुहूर्त्तै-रधिकं दिवसाष्टकं। पुष्यस्य स्याच्छोधनक-मथान्येषां तदुच्यते ॥ ७२ ॥ रात्रिंदिवानि द्वाषष्टि-र्मुहूर्त्ता द्वादशोपरि। उडूनामुत्तराफाल्गु-न्यंतानां शोधनं भवेत् ॥ ७३ ॥ भानां विशाखांतानां च षोडशाभ्यधिकं

जेम आ प्रमाणे सूर्यना नक्षत्रोनी व्यवस्था एक वर्षने माटे बतावी, ते ज रीते पंडितोए एक युगना पांचे वर्षोनी जाणवी. (६६). हवे इष्ट तिथिने दिवसे सूर्यनुं कयुं नक्षत्र हशे ? ते जाणवा माटे पूर्वाचार्योए बतावेली दिशा प्रमाणे करण कहीए छीए. (६७).—युगना प्रारंभथी जेटला पर्व गया होय तेने पूर्वनी जेम पंदरे गुणवा. पछी तेमां इष्ट दिवसनी पूर्वे जेटली तिथिओ गइ होय तेटला मेळववा. (६८). तेमांथी अवमरात्र जेटला गया होय तेटला बाद करवा. पछी तेने त्रण सो ने छासठे भागवा. भागमां जे आवे ते वर्ष जाणवा. (६९). जे शेष रह्या होय तेमांथी संभव प्रमाणे आगळ कहीए ते रीते शोधनक करवुं (बादबाकी करवी). तेम करवाथी गयेला नक्षत्रनी सूचना थाय छे. (७०). जो कदाच ते संख्या अल्प होवाथी त्रण सो ने छासठे भांगी न शकाय तो प्रथम ज जे संभवतुं होय ते शोधनक करवुं (बादबाकी करवी). (७१). हवे बादबाकीनी रीत बतावे छे.—पुष्य नक्षत्र बाद करवुं होय तो आठ दिवस अने चोवीश मुहूर्त्त बाद करवां. हवे बीजां नक्षत्रोनी बादबाकीनी रीत कहे छे. (७२).—अश्लेषाथी उत्तराफाल्गुनी सुधीना बीजां चार नक्षत्रो बाद करवां होय तो बासठ रात्रिदिवस अने बार मुहूर्त्त बाद करवां. हस्तथी विशाखा पर्यंत बीजां चार नक्षत्रो बाद करवा होय तो एक सो ने सोळ रात्रिदिवस बाद करवा.

शतं । भानां तथोत्तराषाढां–तानां त्र्यशीतियुक् शतं ॥ ७४ ॥ चतुःपंचाशदधिक—महोरात्रशतद्वयं । षण्मुहूर्त्ताधिकं प्रौष्ठ—पदांतानां विशोधनं ॥ ७५ ॥ एकविंशतिसंयुक्त—महोरात्रशतत्रयं । षण्मुहूर्त्तयुतं रोहिण्यंतानां शोधनं मतं ॥ ७६ ॥ एकषष्ट्यासमधिक–महोरात्रशतत्रयं । स्याद् द्वादशमुहूर्त्ताढ्यं पुनर्वस्वंतशोधनं ॥ ७७ ॥ विना पुष्यं शोधनका–न्यमूनि निखिलान्यपि। अध्यर्द्धचैत्रनक्षत्रा–नधिकानि भवंति वै ॥ ७८ ॥ यथार्हं च शोधनके शोधिते शिष्यतेऽत्र यत् । एकादीनि ततो भानि शोध्यानि स्वस्वमानतः ॥ ७९ ॥ स्वस्वमानं चार्द्धचैत्रादीनां नक्षत्राणां प्रागुक्तमेव. एवं क्रमाच्छोध्यमानं यन्नक्षत्रं न शुध्यति। तद्वर्त्तमानं नक्षत्रं ज्ञेयं तस्यां तिथौ रवेः ॥ ८० ॥ उदाहरणं चात्र–युगस्य प्रथमे वर्षे दशपर्वव्यतिक्रमे । पंचम्यां सूर्यनक्षत्रं किमित्यत्र निरूप्यते ॥ ८१ ॥ अतीतपर्वणां संख्या यास्त्यत्र दशलक्षणा। सा पंचदशनिघ्ना स्या–त्पंचाशदधिकं शतं ॥ ८२ ॥ चतुःपंचाशं शतं स्या–त्तद्गतैस्तिथिभिर्युतं ।

अनुराधाथी उत्तराषाढा सुधीना बीजां पांच नक्षत्रो बाद करवा होय तो एक सो ने त्राशी रात्रिदिवस बाद करवा. श्रवणथी उत्तराभाद्रपद सुधीना बीजां पांच नक्षत्र (अभिजित् सहित) बाद करवा होय तो बसो ने चोपन अहोरात्र अने छ मुहूर्त्त बाद करवां. रेवतीथी रोहिणी सुधीना बीजा पांच नक्षत्रो बाद करवा होय तो त्रण सो ने एकवीश अहोरात्र अने छ मुहूर्त्त बाद करवा, अने पुनर्वसु सुधीना नक्षत्रो बाद करवा होय तो त्रण सो ने एकसठ अहोरात्र अने बार मुहूर्त्त बाद करवा. (७३–७७). पुष्य सिवाय बाकीनां सर्व नक्षत्रो संबंधी सर्व बादबाकीओ सार्धचैत्री नक्षत्रपर्यंत थाय छे. (७८). हवे संभव प्रमाणे बादबाकी करतां जे शेष रहे, तेमांथी पोतपोताना मान प्रमाणे एकादिक नक्षत्रो बाद करवा. (७९). अर्धचैत्र विगेरे नक्षत्रोनुं पोतपोतानुं मान प्रथम कह्युं छे ते जाणवुं. आ प्रमाणे अनुक्रमे बादबाकी करतां जे नक्षत्र बाद न थइ शकतुं होय ते नक्षत्र ते तिथिए सूर्यनुं वर्ते छे एम जाणवुं. (८०).

उदाहरण—युगना पहेला वर्षमां दश पर्व गया पछी पांचमनी तिथिए कयुं सूर्यनक्षत्र आवे ? आ प्रश्ननो जवाब आपे छे. (८१).—अहीं जे वीती गयेला दश पर्व छे तेने पंदरे गुणतां एक सो ने पचास (१५०) थाय छे. (८२). तेमां पांचमनी तिथि होवाथी

शतं च स्याद् द्विपंचाश-मवमद्वितयोज्झितं ॥८३॥ सषट्षष्ठ्या त्रिशत्या त-द्भागं न सहते कृशं। तत आदित एवात्र शोधनोपक्रमोऽर्हति ॥८४॥ संभवेच्छोधनं चात्र षोडशाभ्यधिकं शतं। विशाखांतानि शुद्धानि भानि ज्ञेयानि तेन च ॥ ८५ ॥ शेषं तिष्ठति षट्त्रिंशत् ततः शुद्ध्यति राधिका। या द्वादशमुहूर्त्ताढ्य-त्रयोदशदिनात्मिका ॥८६॥ द्वाविंशतिर्दिनाः शेषाः साष्टादशमुहूर्त्तकाः। षड्दिन्याऽथैकविंशत्या मुहूर्त्तैः शुद्धमिंद्रभं ॥ ८७ ॥ शेषा दिनाः पंचदश मुहूर्त्ताः सप्तविंशतिः। तेभ्यः शुद्धं मूलभं त-न्मानतो राधिकोपमं ॥ ८८ ॥ शेषौ द्वौ पंचदशभि-र्मुहूर्त्तैरधिकौ दिनौ। एतौ च पूर्वाषाढाया-स्तदा भुक्तौ विवस्वता ॥ ८९ ॥ युगेऽर्कोडुनिर्णयोऽयं दशपर्वव्यतिक्रमे। ज्ञेयस्तिथौ च पंचम्या-मेवं सर्वत्र भावना ॥ ९० ॥

युगेऽथ पौरुषीमानं ज्ञातुं करणमुच्यते। वर्द्धमानं हीयमानं याम्ये सौम्येऽयने क्रमात् ॥ ९१ ॥ शंकुः पुरुषशब्देन स्याद्देहः पुरुषस्य वा।

वीती गयेली चार तिथिओ उमेरी, त्यारे एक सो ने चोपन (१५४) थया. तेमांथी बे अवमतिथिओ गयेली होवाथी बे बाद करतां बाकी एक सो ने बावन (१५२) रह्या. (८३). आ संख्या अल्प होवाथी तेने त्रण सो ने छासठे (३६६) भांगी शकाय तेम नथी, तेथी प्रथमथी ज बादबाकीनो क्रम करवो अहीं योग्य छे. (८४). अहीं आ (१५२)मांथी एक सो ने सोळ (११६) बाद थइ शके तेम छे, तेथी विशाखापर्यंतनां नक्षत्रो बाद कर्यां एम जाणवुं. (८५). ते प्रमाणे बाद करतां शेष छत्रीश (३६) रहे छे, तेमांथी तेर दिवस अने बार मुहूर्त्तना प्रमाणवाळुं राधिका (अनुराधा) नक्षत्र बाद करतां शेष बावीश दिवस अने अढार मुहूर्त्त रहे छे. तेमांथी इंद्र नक्षत्र (ज्येष्ठा)ना छ दिवस अने एकवीश मुहूर्त्त बाद करतां बाकी पंदर दिवस अने सतावीश मुहूर्त्त शेष रहे छे. तेमांथी अनुराधाना प्रमाणवाळा मूळनक्षत्रना तेर दिवस अने बार मुहूर्त्त बाद करतां बाकी बे दिवस अने पंदर मुहूर्त्त शेष रहे छे. आटलुं प्रमाण (बे दिवस अने पंदर मुहूर्त्त) सूर्ये पूर्वाषाढाना भोगव्या. (८६–८९). तेथी करीने युगने विषे दश पर्व गया पछी पांचमने दिवसे आ उपर कहेला सूर्यनक्षत्रनो निर्णय जाणवो. ए ज प्रमाणे सर्वत्र जाणवुं. (९०).

हवे युगने विषे पोरसीनुं प्रमाण जाणवा माटे करण बतावे छे. ते पोरसीनुं प्रमाण दक्षिणायनमां अनुक्रमे वृद्धि पामे छे अने उत्तरायणमां हानि पामतुं जाय छे. (९१).

निष्पन्ना पुरुषात्तस्मा–त्पौरुषीत्यपि सिद्ध्यति ॥ ९२ ॥ तथोक्तं नंदीचूर्णौ–
' पुरिसोत्ति संकू पुरिससरीरं वा, तत्र पुरिसाओ निप्फन्ना पोरिसी इति '
अयं भावः—स्वप्रमाणा भवेच्छाया यदा सर्वस्य वस्तुनः । तदा स्यात्पौरुषी
याम्या–यनस्य प्रथमे दिने ॥ ९३ ॥ ततश्च तस्य पौरुष्यां तथा छाया
विवर्द्धते । यथा सौम्यायनस्यादौ स्वमानाद् द्विगुणा भवेत् ॥ ९४ ॥
ततः पुनस्तथा छाया हीयते सर्ववस्तुनः । यथा याम्यायनादौ सा
स्वस्ववस्तुमिता भवेत् ॥ ९५ ॥ त्र्यशीतिशततमः स्वस्वमानस्य योंशकः ।
प्रत्यहं तावती वृद्धि–र्याम्ये सौम्येऽयने क्षयः ॥ ९६ ॥ तथाहि–चतु-
र्विंशत्यंगुलस्य शंकोर्भवति तावती । छाया याम्यायनस्यादौ वर्द्धते प्रत्यहं
ततः ॥ ९७ ॥ एकषष्टिविभक्तस्यांगुलस्याष्टौ लवा अयं । भागः शंकोर्य-
थोक्तस्य त्र्यशीतिशतोद्भवः ॥ ९८ ॥ तथाहि–एकैकमंगुलं कर्त्तु–मेक-
षष्टिलवात्मकं । संख्या शंकोरंगुलाना–मेकषष्ट्यानिहन्यते ॥ ९९ ॥

अहीं पुरुषशब्दे करीने शंकु (खीलो) कहेवाय छे, अथवा पुरुषनुं शरीर कहेवाय छे.
ते पुरुषने आश्रीने जे थइ ते पौरुषी (पोरसी) कहेवाय छे एम सिद्ध थाय छे. (९२).
ते विषे नंदीसूत्रनी चूर्णिमां कह्युं छे के—" पुरुष एटले शंकु अथवा पुरुषनुं शरीर. ते
पुरुषथी जे उत्पन्न थइ ते पौरुषी कहेवाय छे. " आनो भावार्थ ए छे जे–ज्यारे सर्व कोइ
पण वस्तुनी छाया पोताना ज प्रमाण जेटली थाय त्यारे दक्षिणायनने पहेले दिवसे ते
पौरुषी थाय छे (पोरसीनुं प्रमाण थाय छे). (९३). त्यारपछी ते दक्षिणायननी
पौरुषीनी छाया अनुक्रमे एवी रीते वधे छे के जेथी उत्तरायणने पहेले दिवसे पोताना
प्रमाणथी बमणी थाय. (९४). त्यारपछी सर्व वस्तुनी छाया अनुक्रमे एवी रीते हानि
पामती जाय के जेथी दक्षिणायनने पहेले दिवसे पाछी ते छाया पोतपोतानी जेटली अथवा
वस्तुना प्रमाण जेटली ज थाय. (९५). दरेक वस्तुना पोतपोताना प्रमाणनो जे एक सो ने
त्राशीमो भाग (अंश) थाय तेटली वृद्धि दररोज दक्षिणायनमां थाय छे अने उत्तरायणमां
तेटली ज हानि थाय छे. (९६). ते आ प्रमाणे—चोवीश आंगळना प्रमाणवाळो शंकु
करीए तो दक्षियायनने पहेले दिवसे पोरसी वखते तेटली ज (चोवीश आंगळ ज) छाया
होय छे. त्यारपछी प्रतिदिन एक अंगुलना एकसठीया आठ अंश वृद्धि पामे छे. चोवीश अंगु-
लना आ अंश एक सो ने त्राशी (छ मासना दिवसो)मांथी उत्पन्न थाय छे. (९७–९८).
ते आ प्रमाणे—एक एक अंगुलना एकसठीया भाग करवा माटे शंकुना आंगळनी

चतुर्दश शतानि स्यु–श्चतुष्षष्टियुतान्यथ। सत्र्यशीतिशतेनैषां विभागेऽष्टक-माप्यते ॥१०००॥ प्राप्यं त्रैराशिकादप्ये–कषष्टिजलवाष्टकं। वृद्धिहान्यो-रंगुलस्य तदपि श्रूयतामिह ॥ १ ॥ सत्र्यशीतिशतेनाह्वां चतुर्विंशतिराप्यते। यद्यंगुलानामेकेन किमह्ना लभ्यते तदा ॥ २ ॥ त्रैराशिकस्थापना— १८३–२४–१ एकेनांत्येन गुणित–श्चतुर्विंशतिलक्षणः। मध्यराशिस्तथै-वास्था–देकेन गुणितं हि तत् ॥ ३ ॥ सत्र्यशीतिशतेनैष न भक्तुं शक्यते ततः २४×१८३। छेद्यछेदकयो राश्यो–स्त्रिभिः कार्यापवर्त्तना ॥ ४ ॥ राशिश्छेद्योऽष्टात्मकोऽभू–देकषष्ट्यात्मकः परः ८×६१। एवं त्रैराशिकाल्ल-ब्ध–मेकषष्टिलवाष्टकं ॥ ५ ॥ सार्द्धत्रिंशदहोरात्रा–त्मके मासे विवस्वतः। चतुश्चत्वारिंशमेव स्यादंशानां शतद्वयं ॥ ६ ॥ यतस्त्रिंशद्गुणा अष्टौ चत्वारिंशं शतद्वयं। अहोरात्रार्द्धस्य चांश–चतुष्कमत्र मील्यते ॥ ७ ॥ चतुश्चत्वारिंशमेत–द्यत्किलांशशतद्वयं। एकषष्ट्याऽस्य भागे स्या–दंगुलानां चतुष्टयं ॥ ८ ॥ तथा चाहुः—'वड्ढए हायए वावि मासेणं चउरंगुलं।'

संख्याने (२४ ने) एकसठे गुणवी. (९९). तेम गुणतां चौद सो ने चोसठ (१४६४) थाय छे. तेने एक सो ने त्राशीए (१८३) भागतां भागमां आठ आवे छे. (१०००). प्रतिदिन वृद्धि अने हानिना आ अंगुलना एकसठीया आठ भाग त्रैराशिकनी रीते पण प्राप्त थाय छे, ते पण सांभळो. (१).—एक सो ने त्राशी दिवसवडे चोवीश अंगुलनी वृद्धि प्राप्त थाय छे तो एक दिवसवडे केटला अंगुल प्राप्त थाय ? (२) त्रिराशिनी स्थापना—१८३–२४–१. अहीं छेल्ला एकवडे मध्यराशि चोवीशने गुणवाथी चोवीश ज आवे छे; केमके एके गुणवाथी ते ज संख्या आवे. (३). हवे आ चोवीशने एक सो ने त्राशीए भांगी शकाय तेम नथी (२४–१८३) तेथी छेद्य अने छेदक ए बन्ने राशिनी त्रणवडे अपवर्तना करवी (त्रणे छेद उडाडवो). (४). तेम करवाथी छेद्य (२४) राशि आठ थयो अने छेदक (१८३) राशि एकसठ थयो ($\frac{8}{61}$). आ प्रमाणे त्रैराशिक करवाथी पण एकसठीया आठ भाग प्राप्त थया. (५). एक सूर्यमासना साडीत्रीश दिवस होय छे, तेना अंशो बसो ने चुमाळीश (२४४) थाय छे. (६). केमके त्रीशने आठे गुणतां बसो ने चाळीश थाय छे तेमां अर्ध अहोरात्रना चार अंशो भेळववा. (७). तेथी बसो ने चुमाळीश थाय छे, तेने अंगुल करवा माटे एकसठे भाग देवो; तेथी चार अंगुल आवे छे. (८). कह्युं छे के—" एक मासे (पोरसीनी छाया) चार आंगळ वधे

'मासेगां ति' सूर्यमासेनेत्यर्थः. त्रिभिर्मासैरंगुलानि वर्द्धते द्वादश क्रमात्। षड्भिर्मासैश्च वर्द्धते चतुर्विंशतिरंगुलाः ॥ ९ ॥ चतुर्विंशत्यंगुलस्य शंकोश्छाया भवेदिति । दिने सौम्यायनस्याद्ये-ऽष्टचत्वारिंशदंगुलाः ॥ १० ॥ चतुर्विंशत्यंगुलस्य शंकोश्छाया यथोदिता । चतुर्विंशत्यंगुलस्य जानोरपि तथा भवेत् ॥ ११ ॥ अत एव च—दिने याम्यायनस्याद्ये द्विपदा पौरुषी भवेत् । जानुच्छायाप्रमाणा सा मीयमाना स्वजानुना ॥ १२ ॥ पादद्वितयमानश्च जानुः स्यात्पादमूलतः । द्वादशांगुलमानोऽत्र पादो न तु षडंगुलः ॥ १३ ॥ वितस्तिमाना स्याच्छाया मीयमाना वितस्तिना । याम्यायनादौ पौरुष्यां पादोऽत्र स्यात् षडंगुलः ॥ १४ ॥ ततश्च जानुच्छायाया-मंगुलं वर्द्धते यदा । तदा वितस्तिच्छायाया-मंगुलार्द्धं विवर्द्धते ॥ १५ ॥ लघीयसो वस्तुनोऽपि स्वस्वमानानुसारतः । एवं छायावृद्धिहानी भावनीये स्वयं बुधैः ॥ १६ ॥ अयने दक्षिणे वृद्धौ ध्रुवकः स्यात्पदद्वयं । हानौ च ध्रुवकः सौम्या-यने पदचतुष्टयं ॥ १७ ॥

छे अने चार आंगळ घटे छे." अहीं मास एटले सूर्यमास जाणवो. अनुक्रमे त्रण मासे बार आंगळ वधे छे अने छ मासे चोवीश आंगळ वधे छे. (९). आ रीते उत्तरायणने पहेले दिवसे चोवीश अंगुलप्रमाण शंकुनी छाया हती ते अडतालीश आगळनी थाय छे. (१०). जे प्रमाणे चोवीश अंगुलप्रमाण शंकुनी छाया कही, ते ज प्रमाणे चोवीश आंगळना प्रमाणवाळा जानु (ढींचण)नी पण तेटली ज छाया थाय छे. (११). तेथी करीने ज दक्षिणायनने पहेले दिवसे बे पगलां जेटली छायाए पोरसी थाय छे. ते छाया पोताना जानुवडे मापीए तो जानुप्रमाण ज थाय छे. (१२). केमके पगना मूळथी भरीए तो जानुनुं मान बे पाद ज थाय छे. अहीं एक पादना बार अंगुल जाणवा, पण छ अंगुल जाणवा नहीं. (१३). दक्षिणायनना पहेला दिवसनी पोरसीए छायाने जो वेंतथी मापीए तो ते छाया एक वेंतप्रमाण थाय छे. अहीं छ अंगुलनो एक पाद जाणवो. (१४). तेथी करीने ज्यारे जानुनी छायामां एक आंगळ वधे छे त्यारे वेंतनी छायामां अर्ध आंगळ वधे छे. (१५). आ ज प्रमाणे पंडितोए पोतपोताना प्रमाणने अनुसारे नानी वस्तुनी छायामां पण वृद्धि अने हानि पोतानी मेळे जाणी लेवी. (१६). दक्षिणायनमां छायानी वृद्धि थाय छे त्यारे प्रारंभमां बे पादनो ध्रुवांक होय छे अने उत्तरायणमां हानि थाय छे त्यारे प्रारंभमां चार पादनो ध्रुवांक होय छे. (१७).

नभःकृष्णप्रतिपदि द्विपादा पौरुषी भवेत् । युगस्य प्रथमेऽर्काब्दे वर्द्धते च ततः क्रमात् ॥ १८ ॥ एवं च— माघस्य कृष्णसप्तम्यां पौरुषी स्याच्चतुष्पदा । प्रागुक्तरीत्या क्रमत-स्तत आरभ्य च क्षयः ॥ १९ ॥ द्वितीयेऽब्दे नभःकृष्ण-त्रयोदश्याः प्रभृत्यथ । वृद्धिर्माघ-श्वेततुर्यां चादिकृत्वा भवेत्क्षयः ॥ २० ॥ तृतीयेऽब्दे नभःशुक्ल-दशम्यां वृध्ध्युपक्रमः । माघकृष्णप्रतिपदि क्षयस्यादिः प्रकीर्त्तितः ॥ २१ ॥ वृद्ध्यारंभश्चतुर्थेऽब्दे सप्तम्यां नभसः शितौ । माघकृष्ण-त्रयोदश्या आरभ्य च ततः क्षयः ॥ २२ ॥ नभःशुक्लचतुर्थ्यां च वृद्ध्यादिः पंचमेऽब्दके । माघशुभ्रदशम्याश्च प्रारभ्य भवति क्षयः ॥ २३ ॥ वृद्धौ क्षये च सतत-मंगुलस्यैकषष्टिजाः । अष्टांशाः पंचभागोन-मंगुलं सप्तभिर्दिनैः ॥ २४ ॥ सविंशतिशतं भागाः स्युः पंचदशभिर्दिनैः । एक-षष्ठ्यंशयुग्मोनं तैश्च स्यादंगुलद्वयं ॥ २५ ॥ यत्तु ' अंगुलं सत्तरत्तेण पक्खेणं तु दुअंगुलं । ' इत्युच्यते तद्व्यवहार इति ज्ञेयं. श्रीउत्तराध्ययन-

---

युगना पहेला सूर्यवर्षमां श्रावण वद प्रतिपदाए बे पादनी छायाप्रमाण पोरसी थाय छे, अने त्यारपछी अनुक्रमे छाया वृद्धि पामे छे. (१८). तथा माघ मासनी कृष्ण सातमने दिवसे चार पादनी पोरसी थाय छे अने त्यारपछी प्रथम कह्या प्रमाणे अनुक्रमे हानि पामे छे. (१९). युगना बीजा वर्षमां श्रावण वद तेरशथी आरंभीने वृद्धि थाय छे अने माघ शुदी चोथथी आरंभीने हानि थाय छे. (२०). त्रीजे वर्षे श्रावण शुदी दशमने दिवसे वृद्धिनी शरुआत थाय छे अने माघ वद प्रतिपदाने दिवसे हानिनी शरुआत कहेली छे. (२१). चोथे वर्षे श्रावण वद सातमे वृद्धिनो आरंभ थाय छे अने माघ वद तेरशथी आरंभीने हानि थाय छे. (२२). तथा युगना पांचमे वर्षे श्रावण शुदी चोथने दिवसे वृद्धि शरु थाय छे अने माघ शुदी दशमथी आरंभीने हानि थती जाय छे. (२३). आ वृद्धि अने हानि प्रतिदिन एक अंगुलना एकसठीया आठ अंश जेटली थाय छे, तेथी सात दिवसे एक अंगुलमां पांच अंश ओछा जेटली वृद्धि–हानि थाय छे. (२४). पंदर दिवसे एक अंगुलना एकसठीया एक सो ने वीश अंश जेटली वृद्धि–हानि थाय छे, तेथी बे अंगुलमां बे अंश ओछा जेटली वृद्धि–हानि थाय छे. (२५). वळी अन्य स्थळे जे कह्युं छे के—"सात रात्रिवडे एक अंगुल अने एक पखवाडीए बे अंगुल वृद्धि अने हानि थाय छे."

सूत्रवृत्तौ च ' अंगुलं सत्तरत्तेणं ' इत्यस्य व्याख्याने अंगुलं सप्तरात्रेण सार्द्धेनेति शेषो दृष्टव्यः इत्युक्तमस्ति, तथा चांगुलमेकैकषष्ठ्यंशन्यूनमत्र स्यादिति ध्येयं. त्रिंशता च दिनैश्चत्वा–रिंशमंशशतद्वयं । चतुर्भिरेकषष्ठ्यंशै–स्तेनोना चतुरंगुली ॥ २६ ॥ अहोरात्रार्द्धस्य भाग–चतुष्कस्यात्र योजने । सार्द्धया त्रिंशताह्नां स्या–त्पूर्णांगुलचतुष्टयी ॥ २७ ॥ एकः पादस्त्रिभिर्मासै–र्वृद्धिहान्योर्भवेदिति । अयनेन च पूर्णेन भवत्येवं पदद्वयं ॥ २८ ॥ इदमर्थलेशतो नंदीवृत्त्यादौ. यत्तु ज्योतिष्करंडादौ वृद्धिहान्यो- निरूपिताः । चत्वारोऽत्रांगुलस्यांशा एकत्रिंशत्समुद्भवाः ॥ २९ ॥ तात्पर्यभेदस्तत्रापि न कश्चिदिति भाव्यतां । यतस्तिथीन् पुरस्कृत्य तत्रेयं पद्धतिः कृता ॥ ३० ॥ अहोरात्रान् पुरस्कृत्य पूर्वमुक्ता च पद्धतिः । हानिवृद्धिफलं त्वत्र न किंचिदपि भिद्यते ॥ ३१ ॥ तथा ह्येकत्रिंशता स्यु–स्तिथिभिः परिपूर्णकाः । सार्द्धात्रिंशदहोरात्रा–स्तच्च प्राक् सुष्ठु भावितं ॥३२॥ तत्सार्द्धत्रिंशताह्नां स्या–द्यथांगुलचतुष्टयं । तथैकत्रिंशतापि

ते व्यवहारथी कह्युं छे एम जाणवुं श्रीउत्तराध्ययनसूत्रनी टीकामां—" सात रात्रिवडे एक अंगुल." आ शब्दोना व्याख्यानमां—" सार्ध एटले अर्ध सहित सात रात्र एम (अर्धशेषनो) अध्याहार जाणवो. " एम कह्युं छे. आथी करीने दरेक आंगळ एक एक अंश ओछुं जाणवुं, तथा त्रीश दिवसे एकसठीया बसो ने चाळीश अंश वृद्धि अने हानि थाय छे; तेथी करीने चार आंगळमां एकसठीया चार अंश ओछा जेटली वृद्धि–हानि थाय छे. (२६). बाकीना अर्ध अहोरात्रना एकसठीया चार अंश तेमां नाखवाथी साडीत्रीश दिवसे चार अंगुल परिपूर्ण वृद्धि–हानि थाय छे. (२७). ए रीते गणतां त्रण मासे एक पाद छायानी वृद्धि–हानि थाय छे अने एक संपूर्ण अयने (छ मासे) बे पाद छायानी वृद्धि–हानि थाय छे. (२८). आ प्रमाणे नंदीसूत्रनी टीकादिकमां आ अर्थ लेशथी देखाड्यो छे. वळी जे ज्योतिष्करंडादिकमा आ वृद्धि अने हानिनी बाबतमां एक अंगुलना एकत्रीशीया चार अंश कहेला छे. (२९). तेमा पण तात्पर्यथी कांइ पण भेद नथी एम जाणवुं; कारणके त्यां तिथिने आश्रीने एवी रीत बतावी छे. (३०). अने उपर बतावेली रीत अहोरात्रने आश्रीने कही छे, तेथी अहीं वृद्धि अने हानिना कार्यमां कांइ पण भेद (तफावत) पडतो नथी. (३१). ते आ प्रमाणे—एकत्रीश तिथिए करीने साडीत्रीश अहोरात्र परिपूर्ण थाय छे, एम आगळ सारी रीते (विस्तारथी) सिद्ध कर्युं छे. (३२). तेथी

स्या–त्तिथिभिस्तच्चतुष्टयं ॥ ३३ ॥ तथाहि—चत्वार एकत्रिंशद्घ्ना–श्चतु-र्विंशं शतं भवेत्। एकत्रिंशद्विभक्तेऽस्मिन् स्यादंगुलचतुष्टयं ॥ ३४॥ मासे मासे रवेरेवं तिथ्यर्द्धाधिक्यमूह्यतां। अहोरात्रैकषष्टौ स्यु–र्द्वाषष्टिस्तिथयो यथा ॥ ३५॥ त्र्यशीत्याढ्यमहोरात्र–शतं यदयनेऽयने। भवेत्तत्र तिथीनां त–त्षडशीत्यधिकं शतं ॥ ३६ ॥ एकत्रिंशद्विभक्तस्यां–गुलस्यांशचतुष्टयं। वृद्धिहान्योर्यदुक्तं त–ल्लभ्यं त्रैराशिकादपि ॥ ३७ ॥ षडशीत्यातिरिक्तेन तिथीनां शतकेन चेत्। हानिवृद्ध्योरंगुलानां चतुर्विंशतिराप्यते ॥ ३८ ॥ तदैकतिथ्या किं प्राप्य–मिति ज्ञातुमिदं लिखेत् १८६–२४–१। अंत्येनैकेन मध्यस्थो राशिरत्र निहन्यते ॥ ३९ ॥ चतुर्विंशतिरेव स्या–देकेन गुणितं हि तत्। षडशीतिशतेनाल्पो भक्तुं नार्हत्ययं ततः ॥४०॥ छेद्यछेदकयो राश्योः षड्भिः कार्यापवर्त्तना। छेद्यश्चतुष्कात्मान्यस्तु स्यादेकत्रिंशदात्मकः ॥ ४१ ॥ इत्येकत्रिंशदुद्भूत–मंगुलांशचतुष्टयं। त्रैराशिकबलेनापि वृद्धि-हान्योः समर्थितं ॥ ४२ ॥

करीने जेम साडीत्रीश अहोरात्रवडे चार अंगुल वृद्धि–हानि थाय छे तेम अहीं एकत्रीश तिथि-वडे चार अंगुल वृद्धि–हानि थाय छे. (३३). ते आ प्रमाणे—चारने एकत्रीशे गुणतां एक सो ने चोवीश (१२४) थाय, अने तेने एकत्रीशे भागतां भागमां चार अंगुल आवे छे. (३४). आ प्रमाणे सूर्यना महिने महिने अर्धतिथि वधारे कहेवी, तेथी करीने एकसठ अहोरात्रनी बासठ तिथिओ थाय छे. (३५). दरेक अयनमां एक सो ने त्राशी अहोरात्र आवे छे त्यां तिथिओ एक सो ने छाशी आवे छे. (३६). तिथिने आश्रीने वृद्धि–हानिमां अंगुलना एकत्रीशीया चार अंश जे कह्या ते त्रैराशिकनी रीते पण आवी शके छे. (३७). ते आ प्रमाणे—जो एक सो ने छाशी तिथिओए करीने चोवीश आंगळनी वृद्धि–हानि थाय छे, तो एक तिथिए केटली वृद्धि–हानि थाय ? आ जाणवा माटे आ प्रमाणे लखवुं—१८६–२४–१. अहीं छेल्ला एकवडे मध्यनो राशि (२४) गुणवो, तेथी चोवीश ज थाय; केमके एके गुणवाथी ते ज अंक आवे छे. पछी आ (२४ नो) अंक नानो होवाथी तेने एक सो ने छाशीए भांगी शकातो नथी, तेथी छेद्य अने छेदक ए बे राशिनी छवडे अपवर्त्तना करवी (छए छेद उडाडवो); तेथी छेद्य राशि चार अने छेदक राशि एकत्रीश ($\frac{४}{३१}$) आवे छे. (४१). आ प्रमाणे एक अंगुलना एकत्रीशीया चार भाग वृद्धि–हानिने विषे त्रैराशिकना बळथी पण सिद्ध थाय छे. (४२).

अथात्र करणं–यत्पर्वणोऽभीष्टतिथौ पौरुषी ज्ञातुमिष्यते । ततः पूर्वमतीतानि पर्वाणीह युगादितः ॥ ४३ ॥ स्युर्यानि पंचदशभि–र्गुण-येत्तानि तत्र च । अभीष्टतिथिपर्यंतान् पर्वणोऽस्य तिथीन् क्षिपेत् ॥४४॥ ह्रियते षडशीत्याढ्य–शतेन राशिरेष च । लब्धेंके विषमे ज्ञेय–मतीतं दक्षिणायनं ॥ ४५ ॥ ज्ञेयं लब्धे समे चांके–ऽतिक्रांतमुत्तरायणं । एवं चात्रायनज्ञानो–पाय एष प्रदर्शितः ॥ ४६ ॥ षडशीतिशतेनाथ । तिथि-राशौ हृतेऽत्र यत् । शेषं स्यादथवा भागा–लाभे यत्स्याद्यथास्थितं ॥ ४७ ॥ तच्चतुर्घ्नं विधायैक–त्रिंशता प्रविभज्यते । यल्लब्धं तान्यंगुलानि यच्छेषं तेंगुलांशकाः ॥४८॥ याम्यायने ध्रुवांकोऽस्ति यः पादद्वयलक्षणः । स्यात्तत्रैतावतो वृद्धौ पौरुष्यहि विवक्षिते ॥४९॥ सौम्यायने ध्रुवांकोऽस्ति यश्चतुष्पादलक्षणः । ततश्चैतावतो हानौ पौरुष्यहि विवक्षिते ॥ ५० ॥

युगस्य पर्वणि प्राज्ञ पंचाशीतितमे ननु । पंचम्यां स्यात्कतिपदा पौरुषीति वद द्रुतं ॥ ५१ ॥ अतीतानामिह चतु–रशीतिर्यास्ति पर्वणां । षष्ठ्याढ्या द्वादशशती सा स्यात्पंचदशाहता ॥ ५२ ॥ पंचम्यां पृष्टमिति

हवे पोरसी जाणवानुं करण कहे छे.—जे पर्वनी इष्ट तिथिए पोरसी जाणवानी इच्छा होय ते तिथिनी पहेलां युगनी शरुआतथी जेटला पर्व वीती गया होय तेने पंदरे गुणवा, तेमां इष्ट तिथि सुधीनी चालता पर्वनी तिथिओ नाखवी. (४४). ते राशिने एक सो ने छाशीए भाग देवो. भागमां विषम (एकी) अंक आवे तो दक्षिणायन वीती गयुं छे एम जाणवुं. (४५). अने भागमां सम (बेकी) अंक आवे तो उत्तरायण वीती गयुं छे एम जाणवुं. आ प्रमाणे अयन जाणवानो उपाय बताव्यो. (४६). तिथिना राशिने एक सो ने छाशीए भांगतां जे शेष रह्या होय अथवा भाग नहीं चालवाथी जे मूळ अंक रह्यो होय, तेने चारे गुणी एकत्रीशे भांगवा. भागमां जे आवे ते अंगुल अने जे शेष रहे ते अंगुलना अंश जाणवा. (४८). दक्षिणायनमां जे बे पादनो ध्रुवांक छे तेमां तेटला अंगुल अने अंशनी वृद्धि करवाथी इष्ट दिवसे पोरसी आवे छे. (४९). तथा उत्तरायणमां जे चार पादनो ध्रुवांक छे, तेमांथी तेटला अंगुल अने अंश बाद करवाथी इष्ट दिवसे पोरसी आवे छे. (५०).

उदाहरण—हे पंडित ! युगना पंचाशीमा पर्वमां पांचमनी तिथिए केटला पगलानी छायाए पोरसी थाय ? एनो उत्तर जलदी कहो. (५१). उत्तर—अहीं जे चोराशी पर्व व्यतीत थयां छे, तेने पंदरे गुणवाथी बार सो ने साठ (१२६०) थाय छे. (५२).

च क्षिप्यते तत्र पंचकं। पंचषष्टियुतानीति शतानि द्वादशाभवन् ॥ ५३ ॥ षडशीतिशतेनैषां भागे लब्धाश्च षट् ततः। षड् गतान्ययनान्यस्ति सांप्रतं दक्षिणायनं ॥ ५४ ॥ शेषमेकोनपंचाश–दधिकं शतमस्ति यत्। तस्मिंश्चतुर्गुणे पंच शताः षण्णवतिस्पृशः ॥ ५५ ॥ हृताश्चैकत्रिंशतामी प्राप्ता चैकोनविंशतिः। शेषाः सप्तांगुलास्ते च स्युर्यवा अष्टभिर्हताः ॥५६॥ षट्पंचाशद्यवा जाता–स्ते चैकत्रिंशता हृताः। लब्ध एको यवः शेषाः पंच-विंशतिरंशकाः ॥५७॥ पाद एकोनविंशत्यां–गुलैः सप्तांगुलाधिकः। याम्या-यनत्वादेतच्च वर्द्धनीयं पदद्वये ॥५८॥ ततः पादत्रयं सप्तां–गुलान्येकस्तथा यवः। एकत्रिंशद्भवाः पंच–विंशतिश्च यवांशकाः ॥५९॥ पंचाशीतितमे पर्व–ण्येतन्माना युगे भवेत्। पंचम्यां पौरुषीत्येवं कार्यान्यत्रापि भावना ॥६०॥

युगे वा सप्तनवतेः पर्वणां समतिक्रमे। पंचम्यां स्यात्कतिपदा पौरुषीत्यत्र कथ्यते ॥ ६१ ॥ अत्र षण्णवतिः पंच–दशघ्ना गतपर्वणां।

तेमां पांचमनी तिथिनुं पूछेलुं होवाथी पांच उमेरवा; तेथी बार सो ने पांसठ (१२६५) थाय छे. (५३). तेने एक सो ने छाशीए (१८६) भाग देतां भागमां छ आवे छे, तेथी छ अयन वीती गया छे अने हमणां दक्षिणायन वर्त्ते छे एम जाणवुं. (५४). भागाकार करतां जे शेष एक सो ने ओगणपचास (१४९) रह्या छे तेने चारे गुणतां पांच सो ने छन्नु (५९६) थाय छे. (५५). तेने एकत्रीशे (३१) भाग देतां भागमां ओगणीश (१९) आवे छे अने बाकी सात अंगुल शेष रहे छे, तेने आठे गुणवाथी यव थाय छे. (५६). तेथी सातने आठे गुणतां छप्पन यव थया, तेने एकत्रीशे भांगतां भागमां एक यव आव्यो अने शेष पचीश अंश रह्या. (५७). हवे भागमां जे ओगणीश (१९) अंगुल आव्या छे तेनो एक पाद अने उपर सात अंगुल एटलुं प्रमाण दक्षिणायन होवाथी बे पादमां वधारवुं. (५८). तेथी त्रण पाद, सात अंगुल, एक यव अने एक यवना एकत्रीशीया पचीश अंश, आटला प्रमाणवाळी छाया थाय त्यारे युगना पंचाशीमा पर्वमां पांचमनी तिथिए पोरसी थाय छे. आ प्रमाणे बीजे ठेकाणे पण जाणवुं. (६०).

प्रश्न—युगना सताणुं[1] पर्व जाय त्यारे पांचमनी तिथिए केटला पगलानी पोरसी थाय ? ए प्रश्ननो उत्तर आपे छे. (६१).—अहीं छन्नु पर्व वीती गया छे माटे छन्नुने

---

१ सताणुमुं पर्व चालतुं होय त्यारे एम समजवुं.

पंचाढ्या स्याच्छताः पंच–चत्वारिंशाश्चतुर्दश ॥ ६२ ॥ षडशीतिशतेनैषां भागे सप्त करं गताः । सप्तायनी गता तस्मा–त्संप्रत्यस्त्युत्तरायणं ॥ ६३ ॥ त्रिचत्वारिंशदधिकं शेषं यद्वर्द्धते शतं । तस्मिंश्चतुर्गुणे पंच–शती स्यात्सद्विसप्ततिः ॥ ६४ ॥ विभक्तैकत्रिंशतेयं प्राप्ता चाष्टादशांगुली । तथा चैकं पदं लब्ध–मधिकान्यंगुलानि षट् ॥ ६५ ॥ शेषाश्चतुर्दशांशा ये स्युर्यवास्तेऽष्टताडिताः । शतमेकं भवत्येवं यवानां द्वादशोत्तरं ॥ ६६ ॥ तस्यैकत्रिंशता भागे हृते लब्धास्त्रयो यवाः । शेषाश्चैकत्रिंशदंशा यवस्यैकोनविंशतिः ॥ ६७ ॥ सौम्यायनत्वादेतच्च शोध्यं पदचतुष्टयात् । ततः स्यात्पौरुषी मान–मेवं पूर्वोदिते दिने ॥ ६८ ॥ पंचांगुलानि द्वौ पादौ तथा यवचतुष्टयं । एकत्रिंशद्विभक्तस्य यवस्य द्वादशांशकाः ॥६९॥

किंच–अतीततिथिविज्ञानं पौरुषीमानतोऽयने । यत्स्यात्त्रैराशिकायत्तं तदप्यत्र निशम्यतां ॥ ७० ॥ चतुर्भिरंगुलस्यैक–त्रिंशद्भागैर्यदाप्यते ।

पंदरे गुणी तेमां पांच उमेरवाथी चौद सो ने पीस्તाळीश (१४४५) थाय छे. (६२). तेने एक सो ने छाशीए (१८६) भांगतां भागमां सात हाथमां लागे छे (आवे छे); तेथी सात अयन गयेला होवाथी हमणाँ उत्तरायण चाले छे एम सिद्ध थयुं. (६३). जे बाकी एक सो ने तेंताळीश शेष रह्या छे तेने चारे गुणतां पांच सो ने बोंतेर (५७२) थाय छे. (६४). तेने एकत्रीशे (३१) भांगतां भागमां अढार (१८) अंगुल आवे छे, तेमांथी बार अंगुलनो एक पाद लेतां बाकी छ अंगुल वधे छे. (६५). भांगाकार करतां जे शेष चौद (१४) अंश वध्या छे, तेने आठे (८) गुणी यव कराय छे; तेथी एक सो ने बार (११२) यव थाय छे. (६६). तेने एकत्रीशे भांगतां त्रण यव भागमां आवे छे अने बाकी एक यवना एकत्रीशा ओगणीश (१९) अंश शेष रहे छे. (६७). हवे आ उत्तरायण होवाथी चार पादमांथी (एक पाद, ६ आंगळ, ३ यव अने १९ अंश) बाद करवा; तेथी इष्ट तिथिए पोरसीनुं मान आटलुं थाय छे. (६८).—बे पाद, पांच आंगळ, चार यव अने एक यवना एकत्रीशा बार अंश (२–५–४–१२) आटली छायाए पोरसी थाय छे. (६९).

वळी अयनने विषे पोरसीना प्रमाणथी व्यतीत तिथिनुं जे ज्ञान त्रैराशिकथी थाय छे ते पण अहीं सांभळो. (७०).—प्रश्न—जो अंगुलना एकत्रीशा चार अंशे करीने एक

एका तिथिस्तत्तिथय-श्चतुर्भिरंगुलैः कति ४×३१-१-४ ॥ ७१ ॥ अंगुलात्मांतिमो राशिः सावर्ण्यायाद्यराशिना । भवेच्छतं चतुर्विंश-मेकत्रिंशद्गुणीकृतः ॥ ७२ ॥ एतेन गुणितो मध्य-राशिर्जात इयन्मितः । आद्येन राशिना भागे चैकत्रिंशदवाप्यते ॥ ७३ ॥ चतुरंगुलवृद्धायां पौरुष्यां ध्रुवकोपरि । गता याम्यायनस्यैक-त्रिंशत्तिथय एव तत् ॥ ७४॥

ध्रुवाच्चतुष्पादरूपा-दथ क्षीणेष्विहाष्टसु । अंगुलेषु कियत्सौम्या-यनस्य गतमुच्यताम् ॥७५॥ अत्रोच्यते—चतुर्भिरंगुलस्यैक-त्रिंशद्भागैः क्षयं गतैः । तिथिरेकाप्यते चेत्त-त्ताः कत्यष्टभिरंगुलैः ॥ ७६ ॥ ४×३१-१-८ सावर्ण्यायांतिमो राशि-रेकत्रिंशद्गुणीकृतः । जायेते द्वे शते अष्टचत्वारिंशत्समन्विते ॥ ७७ ॥ ४×३१-१-२४८×३१ अंत्येन राशिनानेन राशिर्मध्यो हतोऽभवत् । इयन्मानोऽथायमाद्य-राशिना प्रविभज्यते ॥ ७८ ॥ द्वाषष्टिराप्यते तस्मात् द्वाषष्टिस्तिथयो गताः । ज्ञेया सौम्यायन-

---

तिथि थाय छे, तो चार अंगुलवडे केटली तिथिओ प्राप्त थाय ? (४×३१-१-४). (७१). अहीं अंगुलना स्वरूपवाळा छेल्ला (४) राशिने सवर्ण करवा माटे पहेलाना एकत्रीशना राशिवडे गुणतां एक सो ने चोवीश (१२४) थाय छे. (७२). आ राशिवडे मध्यनो (१) राशि गुणीए त्यारे पण तेटलो ज (१२४) राशि थाय छे. तेने पहेला (४) राशिवडे भागतां भागमां एकत्रीश आवे छे. (७३). तेथी पोरसीना प्रमाणमां ध्रुवांकनी उपर चार अंगुल वधे त्यारे दक्षिणायननी एकत्रीश (३१) तिथिओ गइ एम सिद्ध थयुं. (७४).

प्रश्न—चार पादवाळा ध्रुवांकमांथी आठ अंगुलनी छाया हानि पामे त्यारे उत्तरायणना केटला दिवस गया कहेवाय ? (७५). उत्तर—अंगुलना एकत्रीशा चार भाग (जेटली छाया) क्षय पामे त्यारे जो एक तिथि प्राप्त थाय छे तो आठ अंगुलनी छाया हानि पामे त्यारे केटली तिथिओ प्राप्त थाय ? (४×३१-१-८). (७६). उत्तरमां आनुं सवर्णपणुं करवा माटे छेल्ला (८) राशिने एकत्रीशे गुणवाथी बसो ने अडताळीश (२४८) थाय छे. (४×३१-१-२४८×३१). (७७). आ (२४८) छेल्ला राशिवडे मध्य (१)नो राशि गुणतां एटलो ज (२४८) अंक आवे छे. तेने पहेला (४) राशिवडे भाग देवो. (७८). तेम करवाथी भागमां बासठ (६२) आवे छे; तेथी आ प्रमाणे पोरसीना प्रमाणने आश्रीने उत्तरायणनी बासठ तिथिओ गइ एम सिद्ध थयुं.

स्येदृक्–पौरुषी मानदर्शनात् ॥ ७९ ॥ इति पौरुषीप्रकरणं.

पादोनपौरुषीरूपा या पात्रप्रतिलेखना । प्रातःस्यात्सांगुलैः षड्भि–र्ज्येष्ठाषाढनभस्त्रिके ॥ ८० ॥ भाद्रादित्रितयेऽष्टाभि–र्मार्गादित्रितये पुनः । अंगुलैर्दशभिः शेषत्रये त्वष्टाभिरंगुलैः ॥ ८१ ॥ अत्रेदं तत्त्वं–यत्र यत्र हि मासादौ या योक्ता पौरुषीमितिः । तत्र तत्रोक्तांगुलानां क्षेपे पादोनपौरुषी ॥ ८२ ॥ इति पादोनपौरुषी ।

पौषमासे तनुच्छाया नवपादमिता यदि । तदा स्यात्पौरुषी सार्द्धा मासे मासे ततः क्रमात् ॥ ८३ ॥ एकैको हीयते पाद–स्तदाषाढे पदत्रयं । यथा हानिस्ततोवृद्धि–स्ततः पौषे यथोदितं ॥ ८४ ॥ इति सार्द्धपौरुषी ।

पौषे वितस्तिच्छायाथ यदि स्याद् द्वादशांगुला । तदा दिनस्य पूर्वार्द्धं मासे मासे ततः पुनः ॥ ८५ ॥ द्वयोर्द्वयोरंगुलयो–र्हानिर्भाव्या ततः शुचौ । मध्याह्ने स्यान्न तच्छाया खलमैत्रीव मूलतः ॥ ८६ ॥ यद्वा—

---

(७९). इति पौरुषीप्रकरण.

हवे पादोनपौरुषीरूप जे पात्रप्रतिलेखनानो काळ कह्यो छे, ते ज्येष्ठ, असाढ अने श्रावण ए त्रण मासमां प्रातःकाळे छ आंगळप्रमाण छायावडे थाय छे. (८०). भादरवो, आशो अने कार्तिक ए त्रण मासमां आठ आंगळवडे, मार्गशीर्ष पोष अने माघ ए त्रण मासमां दश आंगळवडे अने बाकीना एटले फाल्गुन, चैत्र अने वैशाख ए त्रण मासमां आठ आंगळप्रमाण छायावडे पादोनपोरसी थाय छे. (८१). अहीं तात्पर्य ए छे के– जे जे मासनी आदिमां पोरसीनुं जे जे प्रमाण कह्युं छे ते ते प्रमाणमां अहीं कहेला अंगुलो नाखवाथी पादोनपोरसी थाय छे. (८२). इति पादोनपौरुषी.

पोष मासमां जे वखते शरीरनी छाया नव पगलांनी थाय त्यारे सार्धपौरुषी थाय छे. त्यारपछी मासे मासे अनुक्रमे एक एक पाद (पगलुं) घटाडवो; तेथी असाढ मासमां त्रण पादनी छायाए साढपोरसी थाय छे. अहीं जे प्रमाणे पादनी हानि करवानी छे तेम श्रावणथी वृद्धि करवी; तेथी पोष मासे प्रथम कह्या प्रमाणे नव पाद आवशे. (८४). इति सार्धपौरुषी.

पोष मासमां जे वखते वितस्ति (वेंत)नी छाया बार आंगळनी थाय त्यारे दिवसनो पूर्वार्ध (पुरिमड्ढ) पूर्ण थाय छे. त्यारपछी मासे मासे बबे अंगुलनी हानि करवी; तेथी असाढ मासमां मध्याह्न समये खळ पुरुषनी मित्राइनी जेम बिलकुल छाया रहेती नथी.

पौषे दिनार्द्धंगच्छाया षट्पादा हीयते ततः। एकैकोंह्रिर्मासि मासि चाषाढे निष्ठिताखिला ॥ ८७ ॥ एतत्पादोनपौरुष्या-दिकं मानं यदीरितं । तत्सर्वं स्वस्वराकायां विज्ञेयं व्यवहारतः ॥ ८८ ॥ इति पूर्वार्द्धं ॥

इत्थं युगस्याभिहितं स्वरूपं, मयाप्तवाक्यानुगमेन किंचित् ।
विशेषबोधस्पृहयालुभिस्तु, ज्योतिष्करंडाद्यवलोकनीयं ॥ ८९ ॥

विश्वाश्चर्यदकीर्त्तिकीर्त्तिविजयश्रीवाचकेंद्रांतिष-
द्राजश्रीतनयोऽतनिष्ट विनयः श्रीतेजपालात्मजः ।
काव्यं यत्किल तत्र निश्चितजगत्तत्वप्रदीपोपमे-
ऽष्टाविंशः परिपूर्णतामकलयत्सर्गो निसर्गोज्ज्वलः ॥ ९० ॥

॥ इति श्रीलोकप्रकाशेऽष्टाविंशतितमः सर्गः समाप्तः ॥ श्रीरस्तु ॥
। ग्रंथाग्र. १२२२ अ. २१ ।

---

(८६). अथवा पोष मासमां मध्याह्न समये शरीरनी छाया छ पाद होय छे. त्यारपछी मासे मासे एक एक पाद हानि थतां अषाढ मासमां बिलकुल छाया रहेती नथी. (८७). आ पादोनपौरुषी विगेरेनुं जे मान अहीं कह्युं छे, ते सर्व व्यवहारथी पोतपोतानी पूर्णिमाए जाणवुं. (८८). इति पूर्वार्ध.

आ प्रमाणे में आप्तवचनने अनुसारे युगनुं कांइक स्वरूप कह्युं छे. विशेष जाणवानी इच्छावाळाए ज्योतिष्करंडादिक ग्रंथो जोवा. (८९).

विश्वने आश्चर्य उत्पन्न करे एवी कीर्त्तिवाळा श्रीकीर्त्तिविजयवाचकेंद्रना शिष्य, राजश्री(माता)ना आत्मज अने श्रीतेजपाळना पुत्र विनये जे काव्य रच्युं छे, ते जगतना तत्त्वनो निश्चय करवामां दीपक समान आ ग्रंथमां स्वाभाविक उज्ज्वळ एवो आ अठ्ठावीशमो सर्ग पूर्ण थयो. (९०).

इति श्रीलोकप्रकाशे अष्टाविंशतितमः सर्गः ॥ ग्रं. १२२२ अ. २१.

पृष्ठ ४० श्लोक १४ पछीनी स्थापना.

संवत्सर नाम	सूर्यसंवत्सर	ऋतु सं०	चन्द्र सं०	नक्षत्र सं०	अभिवर्धित सं०
दिन	३६६	३६०	३५४	३२७	३८३
भाग	०	०	१२	५१	४४
भाग छेदांक	०	०	६२	६७	६२

मास नाम	सूर्य मास	ऋतु मास	चन्द्र मास	नक्षत्र मास	अभिवर्धित मास
दिन	३०	३०	२९	२७	३१
भाग	३०	०	३२	२१	१२१
भाग छेदांक	६०	०	६२	६७	१२४

पृष्ठ ७९ श्लोक १७ पछीनुं यंत्रकम्.

ऋतु नाम	मास दिन	मास दिन	मास दिन	ऋतु समाप्ति तिथि	ऋतु समाप्ति पक्ष
प्रावृष १	प्रथम श्र. दि. १ द्वि. श्र. दि. ३०	श्रावण दिन ३०	भाद्रपद दिन १	१	कृष्ण पक्ष
वर्षा २	भाद्रपद दिन २९	आश्विन दिन ३०	कार्तिक दिन ३	३	कृ.
शरद् ३	कार्तिक दिन २७	मार्गशीर्ष दि. ३०	पोष दिन ५	५	कृ.
हेमन्त ४	पोष दिन २५	माघ दिन ३०	फाल्गुन दिन ७	७	कृ.
वसंत ५	फाल्गुन दिन २३	चैत्र दिन ३०	वैशाख दिन ९	९	कृ.
शिशिर ६	वैशाख दिन २१	ज्येष्ठ दिन ३०	अषाढ दिन ११	११	कृ. प्र. वर्ष
प्रावृष ७	अषाढ दिन १९	श्रा. दि. ३०	भाद्र. दिन १३	१३	कृ.
वर्षा ८	भाद्र. दि. १७	आश्विन दि. ३०	कार्ति. दिन १५	०	कृ.
शरद् ९	का. दि. १५	मार्ग. दि. ३०	पोष दिन १७	२	शुक्लपक्ष
हेमन्त १०	पोष दि. १३	माघ दि. ३०	फा. दि. १९	४	शु.
वसंत ११	फा. दि. ११	चैत्र. दि. ३०	वै. दि. २१	६	शु.

शिशिर १२	वै. दि. ९	ज्ये. दि. ३०	अ. दि. २३	८	शु. द्वि. वर्ष
प्रावृष १३	अ. दि. ७	श्रा. दि. ३०	भा. दि. २५	१०	शु.
वर्षा १४	भा. दि. ५	आ. दि. ३०	का. दि. २७	१२	शु.
शरद् १५	का. दि. ३	मार्ग दि. ३०	पो. दि. २९	१४	शु.
हेमन्त १६	प्रथम पोष दि. १ द्वि. पो. दि. ३०	माघ दि. ३०	फा. दि. १	१	कृ.
वसंत १७	फा. दि. २९	चै. दि. ३०	वै. दि. ३	३	कृ.
शिशिर १८	वै. दि. २७	ज्ये. दि. ३०	अ. दि. ५	५	कृ. तृ. वर्ष
प्रावृष १९	अ. दि. २५	श्रा. दि. ३०	भा. दि. ७	७	कृ.
वर्षा २०	भा. दि. २३	आ. दि. ३०	का. दि. ९	९	कृ.
शरद् २१	का. दि. २१	मार्ग दि. ३०	पो. दि. ११	११	कृ.
हेमन्त २२	पो. दि. १९	माघ दि. ३०	फा. दि. १३	१३	कृ.
वसंत २३	फा. दि. १७	चैत्र. दि. ३०	वै. दि. १५	०	कृ.
शिशिर २४	वै. दि. १५	ज्ये. दि. ३०	अ. दि. १७	२	शु. च. वर्ष
प्रावृष २५	अ. दि. १३	श्रा. दि. ३०	भा. दि. १९	४	शु.
वर्षा २६	भा. दि. ११	आ. दि. ३०	का. दि. २१	६	शु.
शरद् २७	का. दि. ९	मार्ग दि. ३०	पो. दि. २३	८	शु.
हेमन्त २८	पो. दि. ७	माघ दि. ३०	फा. दि. २५	१०	शु.
वसंत २९	फा. दि. ५	चै. दि. ३०	वै. दि. २७	१२	शु.
शिशिर ३०	वै. दि. ३	ज्ये. दि. ३०	प्र. अ. दि. २९	१४	शु. पं. वर्ष



काळना माप ने नाम संबंधी यंत्र.

(गुजराती भाषामां)

१ सर्वथी सूक्ष्म समय.

२ असंख्य समयनी एक आवलिका.

३ संख्याती आवलिकानो १ उच्छ्वास ने १ निःश्वास बे मळीने एक प्राण.

४ सात प्राणनो एक स्तोक.

५ सात स्तोकनो एक लव.

६ सत्योतेर लवनुं एक मुहूर्त्त (बे घडी).

७ त्रीश मुहूर्त्तनुं एक अहोरात्र.

८ पंदर अहोरात्रे एक पक्ष.

९ बे पक्षनो एक मास.

१० बे मासनो एक ऋतु.

११ त्रण ऋतुनो एक अयन.

१२ बे अयननुं एक वर्ष.

१३ पांच वर्षनो एक युग.

१४ वीश युगे सो वर्ष.

१५ दश सोए एक हजार वर्ष.

१६ सो हजारे एक लाख वर्ष.

१७ चोराशी लाख वर्षे एक पूर्वांग. ८४००००० अंक २, शून्य पांच. हवे पछीना अंको प्रथमना अंकने ८४ लाखवडे गुणवाथी आवे छे तेथी ते प्रमाणे गुणवा.

१८ ८४ लाख पूर्वांगे एक पूर्व. अंक ४, बिंदु १०, ७०५६००००००००००

१९ त्रुटितांग ५९२७०४ अंक ६, बिंदु १५

२० त्रुटित ४९७८७१३६ अंक ८, बिंदु २०

२१ अडडांग ४१८२११९४२४ अंक १०, बिंदु २५

२२ अडड ३५१२९८०३१६१६ अंक १२, बिंदु ३०

२३ अववांग २९५०९०३४६५५७४४ अंक १४, बिंदु ३५

२४ अवव २४७८७५८९११०८२४९६ अंक १६, बिंदु ४०

२५ हूहूकांग २०८२१५७४८५३०९२०६६४ अंक १८, बिंदु ४५

२६ हूहूक १७४९०१२२८७६५९८०९१७७६ अंक २०, बिंदु ५०

२७ उत्पलांग १४६९१७०३२१६३४२३९७०९१८४ अंक २२, बिंदु ५५

२८ उत्पल १२३४१०३०७०१७२७६१३५५७१४५६ अंक २४, बिंदु ६०

२९ पद्मांग १०३६६४६५७८९४५११९५३८८००२३०४ अंक २६, बिंदु ६५

३० पद्म ८७०७८३१२६३१३९००४१२५९२१९३५३६ अंक २७, बिंदु ७०

३१ नलिनांग ७३१४५७८२६१०३६७६३४६५७७४४२५७०२४ अंक २९, बिंदु ७५

३२ नलिन ६१४४२४५७३९२७०८८१३-११२५०५१७५९००१६ अंक ३१, बिंदु ८०

३३ अर्थनिपूरांग ५१६११६६५२०९८७-५४०३०१४५०४३५७७५६१३४४ अंक ३३, बिंदु ८५

३४ अर्थनिपूर ४३३५२७९७९३६२९५३-३८५३२१८३६५२११५१५२८९६ अंक ३५, बिंदु ९०

३५ अयुतांग ३६४१७१९०२६६४८८०८-४३६७०३४२६७७७६७२८४३२६४ अंक ३७, बिंदु ९५

३६ अयुत ३०५९०४३९८२३८४९९९०-८६८३०८७८४९३२४५१८८३४१७६ अंक ३९, बिंदु १००

३७ प्रयुतांग २५६९५९६९४५२०३३९९-२३२९३७९३७९३४३२५९५८२०७-०७८४ अंक ४१, बिंदु १०५

३८ प्रयुत २१५८४६१४३३९७०८५५३-५५६६७८६७८६४८३३८०४८९३९-४५८५६ अंक ४३, बिंदु ११०

३९ नयुतांग १८१३१०७६०४५३५५१८-४९८७६१००९००६४६०३९६११०-९१४५१९०४ अंक ४५, बिंदु ११५

४० नयुत १५२३०१०३८७८०९८३५५३-८९५९२४७५६५४२६७३२७३३१६-८१९५९९३६ अंक ४७, बिंदु १२०

४१ चूलिकांग १२७९३२८७२५७६०२६-१८५२७२५७६७९५४९५८४५५४९-५८६१२८४६३४६२४ अंक ४९, बिंदु १२५

४२ चूलिका १०७४३३६१२९६३८६१९-९५६२८९६४५०८२१६५१०२६१६-५२३४७९०९३०८४१६ अंक ५१, बिंदु १३०

४३ शीर्षप्रहेलिकांग ९०२३९४३४८८९-६४४०७६३२८३३०१८६९०१८६८-६१९७८७९७२२४३८१९०६९४४ अंक ५२, बिंदु १३५

४४ शीर्षप्रहेलिका ७५८२६३२५३०७३०-१०२४११५७९७३५६९९७५६९६४०-६२१८९६६८४८०८०१८३२९६ अंक ५४, बिंदु १४० जुओ प्रत पृष्ठ ३९–४०



॥ अथैकोनत्रिंशत्तमः सर्गः प्रारभ्यते ॥

युगैरित्युक्तरूपैः स्या–च्चतुर्भिर्वर्षविंशतिः । पंच विंशतयोऽब्दानां वर्षाणां शतमीरितं ॥ १ ॥ दशवर्षशतान्यब्द–सहस्रं परिकीर्त्तितं ॥ शतं वर्षसहस्राणां वर्षलक्षं भवेदिह ॥ २ ॥ अतः परं च सर्वांकः शीर्षप्रहेलिकावधिः । भाव्यः क्रमेण चतुर–शीतिलक्षगुणो बुधैः ॥ ३ ॥ तथाहि— वर्षलक्षाणि चतुर–शीतिः पूर्वांगमुच्यते । पूर्वांगलक्षैश्चतुर–शीत्या पूर्वं प्रकीर्त्तितं ॥ ४ ॥ पूर्वे च वर्षकोटीनां लक्षाणि किल सप्ततिः । षट्पंचाशत्सहस्राणि निर्दिष्टानि जिनेश्वरैः ॥ ५ ॥ पूर्वलक्षाणि चतुर–शीतिश्च त्रुटितांगकं । आयुर्मानं भवत्येत–न्नाभेयस्य जिनेशितुः ॥६॥ त्रुटितांगैश्च चतुर–शीतिलक्षमितैर्मतं । त्रुटितं स्यात्क्रमादेव–मडडांगं ततः परं ॥७॥ अडडं चाववांगं चा–ववं च हुहुकांगकं । हुहुकं चोत्पलांगं चो–त्पलं पद्मांगमेव च ॥८॥ पद्मं च नलिनांगं च नलिनं स्यात्ततः परं । भवत्यर्थ-

---

सर्ग २९ मानुं भाषांतर.

पूर्वना सर्गमां कह्या प्रमाणे स्वरूपवाळा चार युग (पांच पांच वर्ष) थी वीश वर्ष थाय छे अने पांच वीशथी सो वर्ष थाय छे. (१). दश सोथी एक हजार वर्ष थाय छे, सो हजारथी लाख वर्ष थाय छे. (२). आ संख्या पछी शीर्षप्रहेलिका सुधी जे अंकोनी संज्ञा आवे छे ते अनुक्रमे ८४ लाख ८४ लाखे गुणवाथी आवे छे. एम डाह्या पुरुषोए जाणवुं. (३). ते आ प्रमाणे—८४ लाख वर्षने पूर्वांग कहे छे, ८४ लाख पूर्वांगवडे एक पूर्व थाय छे. (४). एक पूर्वना वर्ष ७० लाख ने ५६ हजार क्रोड थाय छे एम जिनेश्वरोए कह्युं छे. (५). ८४ लाख पूर्वे एक त्रुटितांग थाय छे. एटलुं आयुष्य श्रीऋषभदेवप्रभुनुं हतुं. (६). ८४ लाख त्रुटितांगवडे एक त्रुटित थाय छे. ए प्रमाणे क्रमसर ८४ लाखगुणा करवाथी अडडांग, अडड, अववांग, अवव, हूहूकांग, हूहूक, उत्पलांग, उत्पल, पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, अर्थनिपूरांग, अर्थनिपूर, अयुतांग, अयुत, नयुतांग, नयुत, प्रयुतांग, प्रयुत, चूलिकांग, चूलिका, शीर्षप्रहेलिकांग, शीर्षप्रहेलिका. गणितगोचर संख्या अहीं पूर्ण थाय छे. शीर्षप्रहेलिकाना अंको १९४ थाय छे. आ

निपूरांगं ततश्चार्थनिपूरकं ॥ ९ ॥ अयुतांगं चायुतं च नयुतांगं भवेत्ततः। नयुतं प्रयुतांगं च प्रयुतं चूलिकांगकं ॥ १० ॥ चूलिका स्यात्ततश्चाग्रे शीर्षप्रहेलिकांगकं। शीर्षप्रहेलिका चेति पूर्णो गणितगोचरः ॥ ११ ॥ शिर्षप्रहेलिकांकाः स्यु-श्चतुर्णवतियुक्शतं। अंकस्थानाभिधाश्चेमाः श्रित्वा माथुरवाचनां ॥ १२ ॥ भगवतीसूत्रानुयोगद्वारसूत्रजंबूद्वीपप्रज्ञप्त्यादिष्वयमंकक्रमो ज्ञेय इति भावः.

वालभ्यवाचना चेयं-संख्याह्वयाश्च संत्यंक-स्थानराशेरितोऽन्यथा। स्यादंकोऽत्रापि चतुर-शीतिलक्षगुणो मुहुः ॥ १३ ॥ तथाहि-स्यात्पूर्वलक्षैश्चतुर-शीत्यात्रैकं लतांगकं। लतांगानां च चतुर-शीत्या लक्षैर्भवेल्लता ॥ १४ ॥ लताभिस्तावतीभिश्च भवेन्महालतांगकं। महालता तैस्तावद्भि-रित्याशीर्षप्रहेलिका ॥ १५ ॥ नलिनांगं च नलिनं स्यान्महानलिनांगकं। महानलिनमेवं स्या-त्पद्मांगं पद्ममेव च ॥ १६ ॥ महापद्मांगं च महा-पद्मं स्यात्कमलांगकं। कमलं महाकमलां-गं महाकमलं तथा ॥ १७ ॥ कुमुदांगं च कुमुदं स्यान्महाकुमुदांगकं। महाकुमुदमेवं स्यात् त्रुटितांगं ततः परं ॥ १८ ॥ त्रुटितं महात्रुटितां-गं महात्रुटितं तथा। अडडांगं चाडडं च महाडडांगमेव च ॥ १९ ॥ महाडडमथोहांग-मूहं प्रोक्तं ततः परं। महोहांगं महोहं च शीर्षप्रहेलिकांगकं ॥ २० ॥ शीर्ष-

---

अंकस्थाननी नामावली माथुरवाचनाने अनुसरीने कहेली छे. (७ थी १२.) श्री भगवतीसूत्र, अनुयोगद्वारसूत्र, जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति विगेरेने विषे पण आ प्रमाणे अंकनो क्रम कहेलो छे.

वालभ्य वाचनामां आ प्रमाणे छे—तेमां संख्याना नामोमां फेरफार छे. बाकी ते अंको तो ८४ लाखगुणा करवाथी ज आवे छे. तेमां कहेला अंकसंख्याना नामो बतावे छे—८४ लाख पूर्वे एक लतांग, ८४ लाख लतांगे एक लता, ८४ लाख लताए एक महालतांग, तेने ८४ लाखवडे गुणवाथी महालता, ए ज प्रमाणे शीर्षप्रहेलिका सुधी गुणवा. तेनां नाम—नलिनांग, नलिन, महानलिनांग, महानलिन, पद्मांग, पद्म, महापद्मांग, महापद्म, कमलांग, कमल, महाकमलांग, महाकमल, कुमुदांग, कुमुद, महाकुमुदांग, महाकुमुद, त्रुटितांग, त्रुटित, महात्रुटितांग, महात्रुटित, अडडांग, अडड, महाअडडांग, महाअडड,

प्रहेलिका च स्या—त्संख्या पर्यंतवर्त्तिनी । अस्यां पंचाशदधिकं स्यादंकानां शतद्वयं ॥ २१ ॥ १८७९५ ५१७९५ ५०११२ ५९५४१ ९००९६ ९९८१३ ४३०७७ ०७९७४ ६ ५४९४ २६ १९७ ७७४७६ ५७२५७ ३४५७१ ८६८१६ इति सप्ततिरंकाः, अग्रे चाशीत्यधिकं बिंदुशतं. अत्र ज्योतिष्करंडवृत्तौ श्री मलयगिरिपूज्या इति स्माहुः—इह स्कंदिलाचार्यप्रवृत्तौ (प्रतिपत्तौ) दुःषमानुभावतो दुर्भिक्षप्रवृत्त्या साधूनां पठनगुणनादिकं सर्वमप्यनेशत्, ततो दुर्भिक्षातिक्रमे सुभिक्षप्रवृत्तौ द्वयोः स्थानयोः संघमेलकोऽभवत्तद्यथा—एको वलभ्यामेको मथुरायां, तत्र च सूत्रार्थसंघटने परस्परं वाचनाभेदो जातो, विस्मृतयोर्हि सूत्रार्थयोः स्मृत्वा संघटने भवत्यवश्यं वाचनाभेद इति न काचिदनुपपत्तिः, तत्रानुयोगद्वारादिकमिदानीं वर्त्तमानं माथुरवाचनानुगतं, ज्योतिष्करंडसूत्रकर्त्ता चाचार्यो वालभ्यस्तत इदं संख्यानप्रतिपादनं वालभ्यवाचनानुगतमिति नास्यानुयोगद्वारादिप्रतिपादितसंख्यास्थानैः सह विसदृशत्वमुपलभ्य विचिकित्सितव्यमिति.

ऊहांग, ऊह, महाऊहांग, महाऊह, शीर्षप्रहेलिकांग, शीर्षप्रहेलिका. आ प्रमाणे संख्या करतां तेमां अंकसंख्या २५० नी थाय छे, (२१). तेमां ७० अंक अने १८० शून्य आवे छे. ते अंको आ प्रमाणे—१८७९५५१७९५५०११२५९५४१९००९६९९८१३४३०७७०७९७४६५४९४२६१९७७७४७६५७२५७३४५७१८६८१६ पछी एक सो एंशी शून्य.

श्रीज्योतिष्करंडनी वृत्तिमां श्री मलयगिरिमहाराज कहे छे के—"आ प्रमाणे स्कंदिलाचार्यनी प्रतिपत्तिमां छे. दुःषमकाळना अनुभावथी दुर्भिक्षनी प्रवृत्तिए करीने साधुनुं पठनगुणनादिक सर्व आळसी गयुं—सर्व भूलाइ गयुं. पछी दुर्भिक्ष दूर थयो अने सुभिक्ष प्रवर्त्यो एटले बे स्थानके संघ एकत्र मळ्यो. एक वल्लभिमां अने बीजो मथुरामां; तेथी सूत्रार्थना संघट्टनमां परस्पर वाचनाभेद थयो. भूली गयेल सूत्रार्थने संभारीने संघट्टन करवामां अवश्य वाचनाभेद थवा संभव छे, एमां कांइ असंभवितपणुं नथी. ते बंने स्थानमांथी अहीं जे अनुयोगद्वारादि वर्त्ते छे ते माथुरवाचना प्रमाणे छे. ज्योतिष्करंडसूत्रना कर्त्ता आचार्य वल्लभिवाचनावाळा छे, तेथी बीजी रीतनुं कहेल संख्यानुं प्रतिपादन वालभ्यवाचना प्रमाणे छे. तेथी आ संख्यानुं अनुयोगद्वारादि प्रतिपादित संख्यास्थाननी साथे विसदृशपणुं जोइने शंका (विचिकित्सा) करवानुं कारण नथी."

आरभ्य समयादेवं शीर्षप्रहेलिकावधि । कालस्य गणितं ज्ञेय–मुपमेयं ततः परं ॥ २२ ॥ तथोक्तं भगवत्यनुयोगद्वारजंबूद्वीपप्रज्ञप्त्यादिसूत्रेषु—'एतावतावगणिए एतावतावगणियस्स विसए, ते ण परं उवमिए' अनेन कालमानेन घर्मायां नारकांगिनां । यथासंभवमायूंषि मीयंते तत्त्ववेदिभिः ॥ २३ ॥ भवनेशव्यंतराणां केषांचिन्नाकिनामपि । केषांचिन्नृतिरश्चां चा-तृतीयारकवर्त्तिनां ॥ २४ ॥ यद्यप्यस्मात्परोऽप्यस्ति संख्याया विषयो महान् । पूर्वोदितचतुःपल्य–प्ररूपणानिरूपितः ॥ २५ ॥ किंत्वसंव्यवहार्योऽसौ भवति स्थूलदर्शिनां । ततः संव्यवहार्येऽस्मिन् संख्यानेन निरूपितः ॥ २६ ॥ तथोक्तं जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्तौ—एतस्माच्च परतोऽपि सर्षपचतुःपल्यप्ररूपणागम्यः संख्येयः कालोऽस्ति, किंत्वनतिशायिनामसंव्यवहार्यत्वान्नेहोक्त इति. स्थित्यधिकारे तु सर्वत्रापि सिद्धांते पूर्वकोटेः परतोऽधिकां स्थितिं बिभ्राणौ नरतिर्यंचौ संख्येयायुष्कतया न व्यवह्रियेते, तथोक्तं—इहासंख्यातवर्षायुर्जघन्यस्थितिकः प्रक्रांतः, स च सातिरेकपूर्वकोट्यायु-

---

समयथी मांडीने शीर्षप्रहेलिका सुधी काळनुं गणित उपर प्रमाणे जाणवुं अने त्यारपछी उपमावडे (पल्योपमादि) गणित समजवुं. (२२). ते बाबत श्रीभगवती, अनुयोगद्वार, जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति विगेरे सूत्रोमां कह्युं छे के—"एटले सुधी गणित कहेलुं छे, एटले सुधी गणितनो विषय छे. त्यारपछी उपमाथी समजवानुं छे." आ प्रमाणे (पल्योपमादि) काळमानवडे करीने घर्मा विगेरे नारकीना जीवोना यथासंभव आयुष्य तत्त्ववेत्ताओ मापे छे. (२३). भवनपति ने व्यंतरदेवोनुं तेमज केटलाक देवलोकना देवोनुं तथा त्रीजा आराना प्रांतभागना मनुष्यो अने तिर्यंचोनुं आयुष्य पण ए ज प्रमाणे मापेलुं छे. (२४). जो के एनी पछी पण संख्यानो विषय घणो मोटो छे के जे प्रथम चार प्रकारना पालानी प्ररूपणाथी प्ररूपित करेलो छे; परंतु ते स्थूळदर्शी मनुष्योने माटे असंव्यवहार्य छे, तेथी आ संव्यवहार्य विषयमां संख्यात शब्दवडे ते विषयनुं ज निरूपण करेलुं छे. (२५–२६). ते विषे श्री जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिनी वृत्तिमां कह्युं छे के–"एनी आगळ पण सरसववडे भरेला चार पालानी प्ररूपणारूप संख्यातकाळ छे, परंतु ते अनतिशायी ज्ञानवाळाने असंव्यवहार्य होवाथी अहीं कहेल नथी." परंतु स्थिति (आयु)ना अधिकारमां तो सिद्धांतमां सर्वत्र पूर्वकोटिथी आगळ अधिक स्थिति धरावनारा मनुष्य तिर्यंचोने संख्याता आयुवाळा तरीके

भवति, तथैवागमे व्यवहृतत्वात् इति भग० चतुर्विंशे शते द्वितीयोद्देशकवृत्तौ अत एव पूर्वकोट्यधिकायुषश्चारित्रप्राप्तिमुक्तिगमनादिकमपि निषिध्यत इति ज्ञेयं. अथ द्विधोपमेयं स्या–त्पल्यसागरभेदतः । तत्स्वरूपं चात्रशास्त्रे संज्ञासर्गे निरूपितं ॥ २७ ॥ पल्योपमानां सूक्ष्माद्धा–ह्वयानां कोटिकोटिभिः । दशभिर्जायतेऽत्रैकं सूक्ष्माद्धासागरोपमं ॥ २८ ॥ एतेषां सागराणां च चतस्रः कोटिकोटयः । आद्यः कालोऽवसर्पिण्यां सुषमसुषमाभिधः ॥ २९ ॥ तिस्रोऽब्धिकोटिकोट्योऽथ द्वितीयः सुषमाभिधः । तृतीयोऽब्धिकोटिकोटि–द्वयं सुषमदुःषमा ॥३०॥ न्यूनः कालो द्विचत्वारिंशता वर्षसहस्रकैः । तुर्योऽब्धिकोटाकोट्येका दुःषमसुषमाभिधः ॥ ३१ ॥ पंचमोऽब्दसहस्राणि स्याद्दुःषमैकविंशतिः । तावंत्यब्दसहस्राणि षष्ठो दुःषमदुःषमा ॥३२॥ एवं दशभिरब्धीनां कोटाकोटिभिरीरिता । एकावसर्पिणी कालचक्रार्द्धं षडरात्मिका ॥३३॥ विपरीता व्यवस्थेय–मुत्सर्पिण्यां

व्यवहार करेलो ज नथी. तेने माटे आ प्रमाणे कह्युं छे के—" अहीं असंख्यात वर्षना आयुवाळामां जे जघन्यस्थितिवाळो कहेल छे ते सातिरेक क्रोडपूर्वनी आयुवाळो समजवो. केमके ते ज प्रमाणे आगममां व्यवहार करेलो छे." ए प्रमाणे श्रीभगवतीसूत्रना चोवीशमा शतकना बीजा उद्देशामां कह्युं छे. आ कारणथी ज क्रोडपूर्वथी अधिक आयुवाळाने चारित्रनी प्राप्ति ने मुक्तिगमनादिकनो निषेध कहेलो छे एम समजवुं.

हवे आ उपमा पल्योपम ने सागरोपमना भेदथी बे प्रकारनी छे, तेनुं स्वरूप आ ज शास्त्रमां संज्ञासर्गमां प्रथम निरूपण करेल छे. (२७). दश कोटाकोटि सूक्ष्म अद्धापल्योपमनुं एक सूक्ष्म अद्धासागरोपम थाय छे. (२८). एवा चार कोटाकोटि सागरोपमनो अवसर्पिणीनो पहेलो सुषमसुषमा काल नामनो आरो[1] छे, बीजो सुषमा नामनो आरो त्रण कोटाकोटि सागरोपमनो छे, त्रीजो सुषमदुःषमा नामनो आरो बे कोटाकोटि सागरोपम प्रमाण छे, चोथो दुःषमसुषमा नामनो आरो बेंताळीश हजार वर्षे न्यून एक कोटाकोटि सागरोपमनो छे, पांचमो दुःषमा नामनो आरो २१००० वर्षनो छे अने छठ्ठो दुःषमदुःषमा नामनो आरो पण २१००० वर्षप्रमाण होय छे. (२९–३२). ए प्रमाणे दश कोटाकोटि सागरोपमवडे छ आरारूप एक अवसर्पिणी एटले अर्ध कालचक्र थाय छे अने तेथी विपरीत व्यवस्थावाळी उत्सर्पिणी कही छे. ते आ प्रमाणे— तेमां पहेलो दुःषमदुःषमा नामनो आरो २१००० वर्षप्रमाण अने बीजो दुःषमा

१ आने माटे मूळमां काळ शब्द छे, तेनो अर्थ आगळ आरो करेल छे.

प्रकीर्तिता। तथाहि तत्र प्रथमः कालो दुःषमदुःषमा ॥३४॥ प्राग्वन्मानं त्वस्य वर्ष–सहस्राण्येकविंशतिः । द्वितीयो दुःषमाप्यब्द–सहस्राण्येकविंशतिः ॥ ३५ ॥ तृतीयोऽब्धिकोटिकोटी दुःषमसुषमाभिधः । न्यूना सा च द्विचत्वारिं–शता वर्षसहस्रकैः ॥३६॥ वार्द्धिकोटाकोटियुग्मं तुर्यः सुषमदुःषमा । पंचमः सुषमाकाल–स्तिस्रोऽब्धिकोटिकोटयः ॥ ३७ ॥ चतस्रोऽब्धिकोटिकोट्यः सुषमसुषमांऽतिमः । उत्सर्पिणीति वार्द्धीनां दशभिः कोटिकोटिभिः ॥ ३८ ॥ एवं द्वादशकालाव–सर्पिण्युत्सर्पिणी भवेत् । पुनः कालविभागास्ते सुषमसुषमादयः ॥ ३९ ॥ सदा विवर्तमानत्व–साधर्म्यादेतदुच्यते । कालचक्रं कालभागाः पूर्वोक्तास्त्वरका इह ॥ ४० ॥ चक्रस्य भ्रमतो यद्व–त्पूर्वार्द्धे योंतिमोऽरकः । परार्द्धे प्रथमः स स्या–द्यस्तत्राद्योऽत्र सोंतिमः ॥४१॥ एवमत्राप्युक्तनीत्या कालचक्रेऽर्द्धयोर्द्वयोः । वैपरीत्याद्विवर्त्तंते द्वादशाप्यरकाः क्रमात् ॥ ४२ ॥ भरतैरावताख्येषु क्षेत्रेषु स्याद्दशस्वयं । कालः परावर्त्तमानः सदा शेषेष्ववस्थितः ॥ ४३ ॥ यस्यां सर्वे शुभा भावाः क्षीयंतेऽनुक्षणं क्रमात् ।

नामनो आरो पण २१००० वर्षप्रमाण समजवो. त्रीजो दुःषमसुषमा नामनो आरो ४२००० वर्षे न्यून एक कोटाकोटी सागरोपमनो, चोथो सुषमदुःषमा नामनो आरो बे कोटाकोटी सागरोपमनो अने पांचमो सुषमा नामनो आरो त्रण कोटाकोटी सागरोपमनो तथा छट्ठो सुषमसुषमा नामनो आरो चार कोटाकोटी सागरोपमनो होय छे. ए प्रमाणे उत्सर्पिणी पण दश कोटाकोटी सागरोपमप्रमाण होय छे. (३३–३८).

आ प्रमाणे बार काळ(आरा)वडे अवसर्पिणी उत्सर्पिणी–अर्थात् एक काळचक्र थाय छे. त्यारपछी पाछी पूर्व प्रमाणे ज अवसर्पिणीना पहेला काळ(आरा)थी शरुआत समजवी. एम कायम परिवर्त्तमानपणे सरखाइ होवाथी काळचक्रना काळना जे भाग पूर्वे कह्या तेने बार आरा समजवा. चक्र भमतां जेम पूर्वार्धमां जे छेल्लो आरो आवे ते अपरार्धमां पहेलो आवे अने पूर्वार्धमां पहेलो आवे ते अपरार्धमां छेल्लो आवे, तेम अहीं पण उक्त नीति अनुसार काळचक्रना बे अध अध विभागमां एकबीजाथी विपरीतपणे बार आरा फर्या करे छे. (३९–४२).

पांच भरत ने पांच ऐरवतरूप दश क्षेत्रोमां आ प्रमाणे काळनुं परावर्त्तमानपणुं होय छे. बीजा क्षेत्रोमां अवस्थितकाळ होय छे. (४३). जे काळमां सर्वे शुभ भावो

अशुभाश्च प्रवर्द्धंते सा भवत्यवसर्पिणी ॥ ४४ ॥ इति ज्योतिष्करंडवृत्त्य-भिप्रायः जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रे तु-' अणंतेहिं वण्णपज्जवेहिं गंधपज्जवेहिं यावत्परिहायमाणेहिं २ ओसप्पिणी पडिवज्जइ ' इत्येवं दृश्यते इति ज्ञेयं. शुभा भावा विवर्द्धंते क्रमाद्यस्यां प्रतिक्षणं । हीयंते चाशुभा भावा भवत्युत्सर्पिणीति सा ॥४५॥ तथाहि-प्राप्तप्रकर्षे सुषम-सुषमाख्येऽरके भवेत् । भरतैरवताख्येषु मही करतलोपमा ॥४६॥ सा पंचवर्णैर्मणिभिः स्याद्रम्या तादृशैस्तृणैः । तत्रासते शेरते च रमंते च जनाः सुखं ॥ ४७ ॥ भांत्यत्रोद्दालकोद्दाला-दयो वृक्षाः पदे पदे । स्थूलमूलाश्चारुशाखा दलपुष्पफलांचिताः ॥ ४८ ॥ ते चामी-उद्दालाः कोद्दाला मोद्दाला नृत्तमालकृतमालाः । स्युर्दंतशृंगशंख-श्वेतान्मालास्तरुविशेषाः ॥ ४९ ॥ भेरुमेरुहेरुतालाः सालः सरल एव च । सप्तपर्णनागपूगाः खर्जूरी नालिकेरिका ॥ ५० ॥ एषां वनानि भूयांसि विराजंते पदे पदे । मल्लिका यूथिका जाति-बाणमुद्गरबीजकाः ॥ ५१ ॥ सिंदुवारमनोवेद्य-सरिकानवमालिकाः ।

अनुक्रमे प्रत्येक क्षणे क्षीण थता जाय छे अने अशुभ भावो वृद्धि पामे छे तेने अवसर्पिणी समजवो. (४४). आ प्रमाणे ज्योतिष्करंडनी वृत्तिनो अभिप्राय छे. जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्रमां तो " अनंता वर्णना पर्यायवडे, अनंता गंधना पर्यायवडे यावत् रस-स्पर्शादिवडे पण प्रतिक्षणे जेमां हानि थती जाय छे तेने अवसर्पिणी काळ समजवो. " एम कहेलुं छे. जे काळमां प्रतिक्षणे शुभ भावो वृद्धि पामे छे अने अशुभ भावो क्षीण थता जाय छे तेने उत्सर्पिणी जाणवो. (४५). प्रकर्ष पामेला (अवसर्पिणीना) सुषमसुषमा नामना पहेला आराना प्रारंभमां भरत ऐरवत क्षेत्रमां भूमि हस्ततळ जेवी सपाट होय छे अने ते पांच वर्णना मणि जेवा तृणवडे रमणिक होय छे. ते जमीन उपर ते काळना मनुष्यो (युगलिको) सुखे बेसे छे, सुवे छे, अने रमे छे. (४६-४७). वळी उद्दाल कोद्दालादि वृक्षो स्थूळ मूळवाळा, मनोहर शाखावाळा, पत्र, पुष्प तथा फळथी भरपूर स्थानके स्थानके होय छे. (४८). ए वृक्षोना नामो—उद्दाल, कोद्दाल, मोद्दाल, नृत्तमाल, कृतमाल, दंतमाल, शृंगमाल, शंखमाल अने श्वेतमाल; तेमज भेरु, मेरु, हेरु, ताल, साल, सरल, सप्तवर्ण, नाग, पूग, खर्जूरी, नालिकेरी विगेरे वृक्षोना घणा वनो पगले पगले होय छे. मल्लिका, यूथिका, जाति, बाण, मुद्गर,

बंधुजीवककोरिंट–वासंतीकुंदचंपकाः ॥५२॥ एषां गुल्मा मृदुमरु–त्कंपिताः कुर्वते तदा। सुगंधिभिः पंचवर्णैः कुसुमैरास्तृतां महीं ॥ ५३ ॥ वनराज्यस्तदा हंसैः सारसैश्च कपिंजलैः। जीवंजीवैः कोकिलाद्यै–र्भांति कांतान्वितैरिह (तैः खगैः) ॥ ५४ ॥

मत्तांगाख्यास्तदा कल्पद्रुमाः स्युर्भासुरश्रियः। मत्तं मदस्तस्य चांगं कारणं येषु ते तथा ॥५५॥ चंद्रप्रभाद्याः स्युर्मद्य–विशेषा यादृशा इह। उत्कृष्टद्रव्यनिष्पन्ना वर्णगंधरसोत्तराः ॥ ५६ ॥ आरोग्यपुष्टिसौभाग्य–मदतुष्ट्यादिकारकान्। तेषां फलानि पुष्पाणि स्रवंति तादृशान् रसान् ॥५७॥ भृतांगाख्यास्तथा कल्प–तरवो बिभ्रति श्रियं। फलादि (नि) येषां रत्नादि–नानापात्रत्वमियूति ॥ ५८ ॥ तुर्यांगाख्यास्तदा कल्प–तरवः सुखयंति च। चतुर्विधानां वाद्यानां ततादीनां वरारवैः ॥ ५९ ॥ अयं भावः–पत्रपुष्पफलादीनां भवेत्तेषां मरुज्जुषां। दक्षशिल्पिप्रयुक्ताना–

बीभक, सिंदुवार, मनोवेद्य, सरिका, नवमालिका, बंधु, जीवक, कोरिंट, वासंती, कुंद ने चंपकना गुल्मो स्थाने स्थाने होय छे. ते गुल्मो ज्यारे मृदु पवनवडे कंपायमान थाय छे त्यारे पांच वर्णना सुगंधी पुष्पोवडे पृथ्वीने व्याप्त करी दे छे. (४९–५३). ते वखते वनराजिओ हंस, सारस, कपिंजल, जीवजीव, कोकिल विगेरे स्त्रीसहित बेठेला पक्षीओवडे शोभी रहे छे. (५४).

१ ए काळे मत्तांग नामना कल्पवृक्षो घणी सुंदर शोभावाळा होय छे. तेमां मत्त एटले मद तेने उत्पन्न थवानुं अंग एटले कारण जेमां होय ते मत्तांग कहेवाय छे. उत्कृष्ट द्रव्योथी बनेली, उत्तम वर्ण, गंध ने रसवाळी चंद्रप्रभा विगेरे मदिरानी जेवा अने आरोग्य, पुष्टि, सौभाग्य, मद ने तुष्टि विगेरेना करनारा एवा रसोने ते जातिना वृक्षना फळो ने पुष्पो स्रवे छे. (५५–५७).

२ बीजा भृतांग जातिना कल्पवृक्षो शोभावाळा होय छे, जेना फळादि रत्न विगेरेना नाना प्रकारना पात्रोनी जेवा देखाववाळा होय छे. (५८).

३ त्रीजा तूर्यांग नामना कल्पवृक्षो चार प्रकारना तत, वितत विगेरे वाजित्रोनी जेवा श्रेष्ठ शब्दोथी सुखने आपे छे. ए वृक्षना पत्र, पुष्प ने फळादिक ज्यारे पवनना संयोगथी हालेचाले छे त्यारे तेमांथी विचक्षण एवा शिल्पीए बनावेला वाजित्रोनी जेवो ध्वनि

मातोद्यानामिव ध्वनिः ॥ ६० ॥ आतोद्यचातुर्विध्यं चैवं–ततं वीणाप्रभृतिकं तालप्रभृतिकं घनं । वंशादिकं तु शुषिर–मानद्धं मुरजादिकं ॥ ६१ ॥ तदा दीपशिखा नाम कल्पवृक्षाः स्फुरद्रुचः । दीपा इव स्नेहसिक्ता दीप्यंते तिमिरच्छिदः ॥ ६२ ॥ अयं भावः–यथा दीपशिखा रात्रौ गृहांतर्द्योतते भृशं । दिवसे वा गृहाद्यंत–स्तद्वदेते द्रुमा अपि ॥ ६३ ॥ एवं च वक्ष्यमाणकल्पद्रुमेभ्य एषां विशेषो भावितो भवतीति ज्ञेयं. अथ ज्योतिषिका नाम शोभंते कल्पपादपाः । ज्योतिर्वह्निर्दिनेशो वा तत्तुल्यत्वात्तथाभिधाः ॥ ६४ ॥ ज्योतिर्वह्निदिनेशयोरिति वचनात्. अयं भावः–तेषां स्वभावात्स्यात्कांति–रचिरोद्गतसूर्यवत् । विद्युदुल्कावलयव–न्निर्धूमानलपुंजवत् ॥ ६५ ॥ अत एव प्रभा तेषां द्रष्टृणां सुखदायिनी । दुःखदाऽक्षिप्रातिकूल्या–न्न तु मध्यंदिनार्कवत् ॥ ६६ ॥ नरक्षेत्राद्बहिर्वर्त्ति–चंद्रसूर्यग्रहादिवत् । परस्परावगाढाभि–र्लेश्याभिर्भांति ते स्थिराः ॥ ६७ ॥ चित्रांगा

नीकळे छे. वाजित्रना चार प्रकार आ प्रमाणे छे—वीणा विगेरे तत कहेवाय छे, ताळ (कांशी) विगेरे घन कहेवाय छे, वांसळी विगेरे शुषिर कहेवाय छे अने मुरज–मृदंगादिक आनद्ध कहेवाय छे. (५९–६१).

४ चोथा दीपशिखांग नामना कल्पवृक्षो स्फुरायमान कांतिवाळा होवाथी तेलथी भरेला दीपकनी जेम अंधकारने छेदता सता शोभे छे. जेम दीपशिखा रात्रे घरमां अत्यंत प्रकाश करे छे अने दिवसे भोंयरा विगेरेमां प्रकाश आपे छे तेम आ वृक्षो पण प्रकाश आपे छे. (६२–६३). बीजा आगळ कहेवाशे ते कल्पवृक्षो करतां आमां आटलुं विशेष छे.

५ ज्योतिषिकांग नामना पांचमी जातिना कल्पवृक्षो अग्नि अने सूर्यनी जेवो प्रकाश आपनारा होवाथी ते नामथी ओळखाय छे अने शोभी रहेला छे. "अग्नि अने सूर्यनी ज्योति जेवा छे" एवुं अन्यत्र कह्युं छे. अहीं एम समजवुं के ए वृक्षनी कांति स्वभावथी ज तरतना उगेला सूर्य जेवी, विद्युत जेवी, उल्काना वलय जेवी तेमज निर्धूम अग्निना पुंज जेवी होय छे. तेथी ते वृक्षनी प्रभा जोनारनी दृष्टिने सुख आपनारी होय छे, पण मध्याह्नना सूर्य जेवी आंखने प्रतिकूळ अने दुःख आपनारी होती नथी. वळी नरक्षेत्रनी बहार रहेला चंद्र, सूर्य ने ग्रहादिकनी जेम ते वृक्षो परस्पर अवगाढ एवी लेश्या (कांति) वडे स्थिर–कायम एकसरखा होय छे. (६४–६७).

नाम ये कल्प–वृक्षास्ते माल्यदायिनः। चित्रं विवक्षया माल्यं तद्धेतुत्वा-त्तथाभिधाः ॥ ६८ ॥ यथा प्रेक्षागृहं नाना–चित्रोपेतं मनोरमं। सर्वतो लंबमानाभिः पुष्पस्रग्भिरलंकृतं ॥ ६९ ॥ ग्रथितैर्वेष्टिमैः संघा–तिमैश्च पूरिमैरिति। माल्यैः पूर्णं द्वारदेशो–ल्लसद्वंदनमालिकं ॥ ७० ॥ पंचवर्ण-पुष्पपुंजो–पचारचारुभूतलं। सुखदायि भवेल्लोके तथा ते स्वद्रुमा अपि ॥ ७१ ॥ त्रिभिर्विशेषकं ॥ भोज्यसंपादकाः कल्पवृक्षाश्चित्ररसाह्वयाः। चित्रो नानाश्चर्यदो वा रसो ह्येषां ततस्तथा ॥ ७२ ॥ सुगंधिस्वच्छकलम–शालितंडुलगर्भितं। तादृग्गोदुग्धसंराद्धं परमान्नं सुसंस्कृतं ॥ ७३ ॥ सद्यस्कशारदघृत–शर्कराक्षोदमिश्रितं। तुष्टिपुष्ट्यादिजनक–मतिस्वादु भवेद्यथा ॥ ७४ ॥ संस्कृतो वा सूपकारै–रोदनश्चक्रवर्त्तिनः। चतुष्कल्प-सेकसिक्तो–ऽखंडः कमलशालिजः ॥ ७५ ॥ सुपक्वो बाष्पमुन्मुंच–न्मृदु-स्तुषमलोज्झितः। विविक्तसिक्थो विविध–शाकशाली भवेद्यथा ॥ ७६ ॥

---

६ छठ्ठा चित्रांग नामना कल्पवृक्षो पुष्पमाळाने आपनारा होय छे. ते माळा आश्चर्य आपनारी होवाथी अहीं चित्र शब्द माळावाचक समजवो. जेम नाना प्रकारना चित्रोवाळुं प्रेक्षागृह मनोरम अने सर्वत्र लटकावेली लांबी लांबी पुष्पोनी माळाओवडे अलंकृत होय छे. ग्रथितं[1], वेष्टिमं[2], संघातिमं[3] ने पूरिमं, एवी चार प्रकारनी माळादिकवडे शोभती वंदन-मालिका (तोरण)वडे शोभित द्वारदेशवाळुं होय छे अने पांच वर्णना पुष्पोना पुंजोवडे आच्छादित भूतळवाळुं होय छे. ते लोकोने सुखदायी लागे छे तेवी ज शोभावाळा आ कल्पवृक्षो पण सुखदायी होय छे. (६८ थी ७१.)

७ चित्ररस नामना सातमी जातिना कल्पवृक्षो नाना प्रकारना आश्चर्यकारी रसवाळा भोजनने आपनारा होय छे. (७२). सुगंधी, स्वच्छ, कलमशालिना तंदुळथी गर्भित अने तेवा प्रकारना गायना दुधमां रांधेल होवाथी सुसंस्कृत एवी जे क्षीर ते पण तरतनुं शरद ऋतुनुं घी तथा शर्कराना चूर्णथी मिश्रित करी सती अति स्वादु अने तुष्टि–पुष्टि विगेरे आपनार होय छे, अथवा सुसंस्कृत एटले चक्रवर्तीना रसोयाए रांधेल अखंड कलमशालि के जे चतुष्कल्पना सेकथी सींचेल होय, तेमज सारी रीते पक्व थयेल होय, जेमांथी वराळ छूटती होय तेवी, मृदु अने फोतरा तथा मेल विनानी, छूटा छूटा दाणावाळी अने

---

१ गुंथेला. २ सळी साथे वींटेला. ३ एकठा करेला के आगळ भरेला.

चतुष्कल्पसेकसिक्त इति. विज्ञा रसवतीशास्त्रे कोमलं कर्तुमोदनं। कुर्वंति चतुरः कल्पांस्ते सेकविषयानिह ॥ ७७ ॥ वस्त्रपूतस्वग्निपक्व–प्राज्याज्यसमितोद्भवः। यथा वा मोदको भूरि–शर्कराक्षोदमेदुरः ॥ ७८ ॥ द्राक्षाचारुकुलीनाली–केरखंडादिबंधुरः। कर्पूरैलालवंगादि–राजद्रव्यपरिष्कृतः ॥ ७९ ॥ सुरभिः कोमलः स्वच्छो बलपुष्ट्यादिकृद्भवेत्। क्षुत्पिपासाप्रशमनः सर्वांगीणप्रमोदकृत् ॥ ८० ॥ अष्टभिः कुलकं ॥ तथा नानारसोपेत–सद्भोज्यविधिशालिभिः। फलपुष्पैर्विराजंते वृक्षाश्चित्ररसा अपि ॥ ८१ ॥ मण्यंगा नाम ये कल्प–द्रुमास्ते भूषणप्रदाः। मणीमणिमयी भूषा–स्तद्दायित्वाच्च ते तथा ॥ ८२ ॥ हारोऽर्द्धहारो मुकुटः कुंडलं कर्णवालिका। कर्णवेष्टनकं ग्रैवे–यकं कंकणमुद्रिका ॥ ८३ ॥ हेमजालं रत्नजालं कटकं वलयांगदे। बाहुबंधो बाहुरक्षा पुष्पकं तिलकोऽपि च ॥ ८४ ॥ दीनारमालिका चंद्र–मालिका सूर्यमालिका। शिरोमणिर्झुंबनकं कांची च कटिसूत्रकं ॥ ८५ ॥ नूपुरः पादकटको घर्घरी क्षुद्रघंटिका।

विविध प्रकारना शाकथी शोभती होय, चतुष्कल्पसेकसिक्त–एटले रसवती शास्त्रना विज्ञ पुरुषो ओदन (भात)ने कोमळ करवा माटे चार प्रकारे सींचे छे. ते आ प्रमाणे—जेम मोदक वस्त्रथी चाळेला, अग्निथी सारी रीते पकवेला, पुष्कळ घी मेळवेला घउंना आटाथी उत्पन्न थयेलो अने पुष्कळ शर्कराना चूर्णथी व्याप्त, वळी द्राक्ष, चारोळी, श्रीफळनी शेषो (ककडाओ)वडे शोभावेल अने कर्पूर, एलची, लविंग विगेरे राजद्रव्यथी सुगंधी करेल, कोमळ, स्वच्छ अने बळनी पुष्टिने करनार होय छे तेमज क्षुधा–तृषाने शमावनार अने सर्व जीवोने प्रमोद आपनार होय छे तेम पूर्वोक्त ओदन चार प्रकारना सेकथी सींचेला समजवा. (७३–८०) ए ज प्रमाणे चित्ररसजातिना कल्पवृक्षो नाना प्रकारना रसयुक्त विविध प्रकारना सारा भोजनरूप फल पुष्पोवडे विराजित होय छे. (८१).

८ मण्यंग नामना आठमा प्रकारना कल्पवृक्षो अनेक प्रकारना भूषणोने आपनारा होय छे. खासकरीने मणि तथा मणिमय भूषणो आपनार होवाथी ते मण्यंगजातिना कहेवाय छे. ते हार, अर्धहार, मुकुट, कुंडळ, कानना वालिका एटले कडीओ कानने वींटवानुं झुमणुं, ग्रैवेयक (कंठो), कंकण (बंगडी विगेरे) मुद्रिका (वींटीओ), हेमजाल, रत्नजाल, कटक (कडां), वलय, अंगद, बाजुबंध, बाहुरक्षक (बेरखा), पुष्पक, तिलक, सोनामहोरनी माळा, चंद्रमाळा, सूर्यमाळा, मस्तकनो मणि, झुंमणां, कांची, कटिसूत्र, नूपुर, पादकटक, घर्घरी, क्षुद्रघंटिका

भूषाभिदो या इत्याद्याः स्वर्णमुक्तामणीभवाः ॥ ८६ ॥ स्वभावतस्तथारूपैः फलपुष्पैरलंकृताः । तदर्थिनां द्रुमास्ते द्राक् पूरयंति मनोरथान् ॥ ८७ ॥ पंचभिः कुलकं ॥ गेहाकाराः कल्पवृक्षा नानागेहाकृतिस्पृशः । निवास-सौख्यं विपुलं वितरंति तदर्थिनां ॥ ८८ ॥ कपिशीर्षस्फुरद्वप्र—चरिकाट्टाल-कांचिताः । मनोज्ञमंडपास्तुंग—तोरणांचितगोपुराः ॥ ८९ ॥ एकद्वित्रि-चतुःपंच—षट्सप्ताद्युरुभूमयः । गवाक्षालीपरिक्षिप्ताः सन्निर्यूहविटं-किकाः ॥ ९० ॥ अभ्रंलिहशिरश्चंद्र—शालाशालिनमौलयः । सद्वारपट्टव-लभी—स्तंभसंबंधबंधुराः ॥ ९१ ॥ वृत्तास्त्र्यस्राश्चतुःकोणा आदर्शोपम-कुट्टिमाः । चंचच्चंद्रोदयाश्चारु—चित्रचित्रितभित्तयः ॥ ९२ ॥ एकद्वित्रिचतु-रादि—शाला गर्भगृहांचिताः । श्रीवत्ससर्वतोभद्र—नन्दावर्त्तादिसंज्ञिनः ॥ ९३ ॥ शैलार्द्धशैलसंस्थाना गिरिकूटाकृतिस्पृशः । आस्थानप्रेक्षण-गृह—चित्रशालाद्यलंकृताः ॥ ९४ ॥ मज्जनादर्शशृंगार—मोहनागारमंडि-ताः । आपणाद्यैर्विशेषैश्च विविधैरुपलक्षिताः ॥ ९५ ॥ सर्वर्त्तुसुखदा

इत्यादि जे सुवर्ण, मोति अने मणिना बनावेला आभूषणोना प्रकारो छे तेने आपनारा तथा स्वभावे ज तेवा प्रकारना एटले तेवी आकृतिवाळा फळ अने पुष्पोवडे शोभता ते वृक्षो तेवा अलंकारोना अर्थी युगलिकोना मनोरथोने शीघ्र पूर्ण करे छे. (८२–८७).

९ नवमा गेहाकार नामना कल्पवृक्षो नाना प्रकारना घरनी आकृतिवाळा ज होय छे. तेना (निवासना) अर्थी युगलिकोने ते विपुळ एवुं निवास संबंधी सुख आपे छे. ते गेहाकार कल्पवृक्षो केवा होय छे? कांगरावडे स्फुरायमान गढ, अने तेना उपर चोतरफ रहेली चाल अने गोख विगेरेथी शोभता, मनोज्ञमंडपवाळा ने तुंग तोरणवाळा दरवाजाओथी शोभता, एक, बे, त्रण, चार, पांच, छ अने सात मोटी भूमि (माळ)वाळा, चोतरफ बारीओ अने गोखवाळा, उत्तम खींटीओ अने पक्षीओ बेसे तेवा झुलता भागवाळा आकाश सुधी पहोंचे तेवी उंची चंद्रशाळा (अगाशी)वडे शोभता शिखरवाळा, सुंदर भारपट्ट, अने वल्लभी तथा स्तंभोथी व्याप्त, गोळ, त्रिकोण ने चोरस आकारवाळा, आदर्श जेवी सपाट भूमि-वाळा, शोभायमान चंद्रुआवाळा, चित्रवडे विचित्र भींतोवाळा, एक, बे, त्रण, चार विगेरे शाळा—ओरडाओवाळा, गर्भगृहवाळा, श्रीवत्स, सर्वतोभद्र ने नंदावर्त्तादि नामवाळा, शैल ने अर्धशैलना संस्थानवाळा, पर्वतपरना कूटनी आकृतिवाळा, आस्थान, प्रेक्षागृह ने चित्रशाळादिकथी युक्त, मज्जनगृह, आदर्शगृह, शृंगारगृह अने मोहनागारथी मंडित, विविध प्रकारनी हाट विगेरेनी श्रेणिथी ओळखाता, सर्व ऋतुमां सुख आपनारा, रम्य,

रम्या लसत्सोपानदर्दराः । सुखारोहावताराश्च सुखप्रवेशनिर्गमाः ॥ ९६ ॥ लिप्ता गुप्ता घृष्टमृष्टा मार्जिताः सुधयोज्ज्वलाः । प्रासादाः स्युर्यथा लोके स्वभावात्ते तथा द्रुमाः ॥ ९७ ॥ नवभिः कुलकं ॥

अनग्नाख्याः कल्पवृक्षाः स्युर्नानावस्त्रदायिनः । जना अनग्नास्तेभ्यः स्यु–स्ततस्ते तादृशाभिधाः ॥९८॥ चीनांशुकं दुकूलं च कौशेयमतसीमयं । कार्पासिकं चाजिनकं तार्णरल्लककंबलाः ॥ ९९ ॥ इत्यादयोवस्त्रभेदा देशे देशे भवंति ये । नानावर्णा मृदीयांसो मनश्चक्षुर्वपुःसुखाः ॥१००॥ द्रुमास्ते तादृशैर्वस्त्रैः कम्रैः स्त्रीपुरुषोचितैः । स्वभावतः समुद्भूतैः प्रीणयंति तदर्थिनः ॥ १ ॥ त्रिभिर्विशेषकं ।

एवमेते दशविधाः कल्पवृक्षाः स्वभावतः । यथोक्तरूपा जायंते तादृक्कालानुभावतः ॥ २ ॥ तथोक्तं जीवाभिगमसूत्रे— ‘तहेव ते मत्तंगावि दुमगणा अणेगबहुवीससापरिणयाए मज्जविहीए उववेया फलेहिं पुण्णा वीसंदंतीत्यादि’ एतन्नामसंग्रहश्चैवं–मत्त १

शोभिता पगथीआयुक्त दादरावाळा, सुखे चढी–उतरी शकाय तेवा अने सुखे पेसी नीकळी शकाय तेवा, लींपेला–गुंपेला, घठारेला–मठारेला, मार्जित करेला, चुना (खडी) वडे धोळेला–आवा मकानो जेम लोकमां होय छे तेवा आकारना स्वभावे ज ते वृक्षो होय छे. (८८–९७)

१० दशमा अनग्न जातिना–ते नामना कल्पवृक्षो विविध वस्त्रोने आपनारा होय छे. तेथी युगलिको अनग्नपणाने पामे छे, एटले ते वृक्षो पण ते ज नामथी ओळखाय छे. ते वृक्षो चीनांशुक, दुकूळ, कौशेय तेम ज अतसीमय अने कार्पासिक (सुतरना) वस्त्रो आपे छे. चर्मनां वस्त्रो पण आपे छे. तार्ण (तृणना), रल्लक अने कंबळ (उनना वस्त्रो) पण आपे छे. ओ प्रमाणे वस्त्रना भेदो जुदा जुदा देशमां जूदा जूदा होय छे. तेवा बधी जातनां वस्त्रो आपे छे. ते वस्त्रो अनेक प्रकारना वर्णवाळा, सुकोमळ, मन चक्षु अने शरीरने सुख आपनारा होय छे. तेवा स्त्रीपुरुषने उचित सुंदर अने स्वभावे ज उत्पन्न थयेला वस्त्रो आपीने तेना अर्थी युगलिकोने प्रसन्न करे छे. ९८–१०१.

ए प्रमाणे दशे प्रकारना कल्पवृक्षो तेवा प्रकारना काळना अनुभावथी यथोक्त स्वरूपवाळा स्वभावथी होय छे. १०२ श्रीजीवाभिगमसूत्रमां कह्युं छे के ‘ते ज प्रमाणे ते मत्तांगादि वृक्षगण अनेक प्रकारना विस्रसा परिणामे परिणमेला मद्यादिक वस्तुओथी भरेला–उप-

भृत २ त्रुटितांगा ३ दीपशिख ४ ज्योतिरंग ५ चित्रांगाः ६ । चित्ररसा ७ मण्यंगा ८ गेहाकारा ९ अनग्नाश्च १० ॥ ३ ॥ एते च वनस्पतय इति ज्ञायंते, तथोक्तं जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्तौ–" अथात्र वृक्षाधिकारात्कल्पद्रुमस्वरूपमाहे"ति। आचारांगलोकसाराध्ययननिर्युक्तिवृत्तावप्युक्तं–सचित्तो द्विपदश्चतुष्पदोऽपदश्चेति, द्विपदेषु जिनः, चतुष्पदेषु सिंहादिः, अपदेषु कल्पवृक्ष इति.

तस्मिन्नवसरे च स्यु–र्मनुष्या युग्मधर्मिणः । सुरूपाः सुभगा दक्षा न्यक्षलक्षणलक्षिताः ॥ ४ ॥ स्वर्णकच्छपसंस्थान–मृदुरक्ततलक्रमाः । पुराद्रिमकराब्धींदु–मुख्यरेखांकितांघ्रयः ॥ ५ ॥ संहतर्जुक्रमवृद्ध–चरणांगुलिमंजुलाः । ताम्रोन्नततनुस्निग्ध–सन्नखा गुप्तगुल्फकाः ॥ ६ ॥ मृदुवृत्तक्रमस्थूल–जंघा निगूढजानवः । हस्तिहस्तोरवो जात्य–तुरंगगुप्तगुह्यकाः ॥ ७ ॥ जात्याश्ववद्बहिर्मूत्रा–द्युपलेपविवर्जिताः । कंठीरवकटीराः स–द्वज्रमध्या झषोदराः ॥ ८ ॥ स्फुरत्तरंगसुभग–त्रिवलीललितोदराः ।

युक्त एवा फळादिकथी पूर्ण प्रवर्ते छे–होय छे. एनां नाम आ प्रमाणे—मत्तांग, भृतांग, त्रुटितांग, दीपशिखांग, ज्योतिरंग, चित्रांग, चित्ररसांग, मण्यंग, गेहाकार अने अनग्न–आ बधा वनस्पतिकाय समजवा. श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिनी वृत्तिमां कह्युं छे के—अहीं वृक्षनो अधिकार चालतो होवाथी कल्पवृक्षोनुं स्वरूप पण कहुं छुं.' आचारांगसूत्रना लोकसार अध्ययननी निर्युक्तिनी वृत्तिमां पण कह्युं छे के–' सचित्त त्रण प्रकारना–द्विपद, चतुष्पद ने अपद–द्विपदमां जिनेश्वरो, चतुष्पदमां सिंहादि तिर्यंचो अने अपदमां कल्पवृक्षो समजवा.

हवे ते अवसरे–पहेला आरामां मनुष्यो युग्मधर्मी होय छे. तेमां पुरुषो सुरूप, सुभग, दक्ष, समग्र लक्षणोवडे लक्षित, सोनाना काचबाना संस्थानवाळा, मृदु तेम ज रक्त पगना पंजावाळा; नगर, पर्वत, मकर, समुद्र अने चंद्रमा विगेरे मुख्य रेखाओथी अंकित चरण (पग) वाळा; मळेली, सरल अने अनुक्रमे वधती पगनी आंगळीओथी शोभता; लाल, उन्नत, पातळा ने स्निग्ध एवा सुंदर नखवाळा, गुल्फ (घुंटी) जेनी गुप्त छे एवा, कोमळ, गोळ अने क्रमथी स्थूळ एवी जांघवाळा, निगूढ जानु (ढींचण)वाळा, हस्तिनी सुंढ समान ऊरुवाळा, जात्य तुरंगमनी जेवा गुप्त गुह्यस्थानवाळा, जातिवंत अश्वनी जेम बहार मूत्रादिना लेप विनाना, सिंहनी जेवी कटीवाळा, वज्रना जेवा मध्यभागवाळा अने मत्स्यनी जेवा उदरवाळा, तेम ज स्फुरायमान तरंग जेवी सुंदर त्रिवलीथी शोभता उदरवाळा;

निम्नप्रदक्षिणावर्त्त–गंगावर्त्ताभनाभयः ॥ ९ ॥ मृदुस्निग्धतनुश्याम–रोमराजीविराजिताः । मंजुमानोपेतपार्श्वा अनालक्ष्यकरंडकाः ॥ १० ॥ पृथुस्वर्णशिलाकल्प–श्रीवत्सांकितवक्षसः । पुष्टप्रकोष्ठकद्रंग–परिघोपमबाहवः ॥ ११ ॥ रक्ताब्जमंजुलतल–मणिबंधाढ्यपाणयः । स्वस्तिकार्केन्दुचक्रादि–रेखाराजिकरांबुजाः ॥ १२ ॥ वृषस्कंधोन्नतस्कंधा दधानाः कंठकंदलं । त्रिरेखं कंबुसदृशं चतुरंगुलमात्रकं ॥ १३ ॥ व्याघ्रविस्तीर्णहनवो–ऽवस्थितश्मश्रुराजयः । पक्वबिंबाभाधरोष्ठा–स्तद्विश्रांतसितस्मिताः ॥१४॥ कुंदपुष्पोपमाखंड–स्थिराच्छिद्ररदालयः । सुरक्तरसनाः कोक–नदकोमलतालवः ॥ १५ ॥ शुकचंचूपमोत्तुंग–सरलायतनासिकाः । स्मेराब्जत्रस्तहरिण–नेत्रजैत्रोरुलोचनाः ॥ १६ ॥ आरोपितधनुर्वक्र- सलीलश्यामलभ्रुवः । प्रमाणोपेतसुभगा–व्याहतश्रवणेंद्रियाः ॥ १७ ॥ पीनादर्शतलाकार–कपोलललिताननाः । चंद्रार्द्धभाला निर्लक्ष्म– कार्तिकेंदुसमाननाः ॥१८॥ उष्णीषशिखरोदार–सच्छत्राकारमौलयः । दाडिमीपुष्परक्ताच्छ–

उंडी ने प्रदक्षिणावर्त तेम ज गंगाना आवर्त जेवी नाभि (डुंटी)वाळा; कोमळ, स्निग्ध, पातळी अने श्याम रोमराजीथी विराजित, मनोहर अने प्रमाणोपेत पार्श्व (पडखा)वाळा, पांसळीओ न देखाय तेवी पीठवाळा, विस्तीर्ण, सुवर्णनी शिला जेवा अने श्रीवत्सना लंछनयुक्त वक्षस्थळवाळा; पुष्ट प्रकोष्टक (पोंचावाळा) अने किल्लानी परिघ (भोगळ) जेवा बाहुवाळा तेम ज रक्तकमळ जेवा मंजुल तळ अने मणिबंध वडे युक्त हाथवाळा; स्वस्तिक, सूर्य, चंद्र ने चक्रादि रेखावडे शोभिता करकमळवाळा; वृषभना स्कंध जेवा उन्नतस्कंधवाळा; त्रण रेखावाळा, शंखसदृश अने चार अंगुल प्रमाण कंठने धारण करनारा; व्याघ्र जेवी विस्तीर्ण हनु (हडपची)वाळा, अवस्थित (वृद्धिहानिविना) दाढीमुछवाळा, पाकेल बिंबना फळ जेवा लाल होठवाळा अने तेमां रहेला उज्वळ स्मितवाळा; कुंदना पुष्पनी उपमावाळा, अखंड, स्थिर अने अछिद्र एवा दांतोवाळा, लाल जिव्हावाळा; कोकनद जेवा कोमळ ताळुवाळा; शुकनी चंचु जेवी उत्तुंग, सरल अने आयत नासिकावाळा; विकस्वर कमळ अने त्रास पामेला हरणना नेत्रने पण जीते एवा लोचनवाळा; पणछ चडावेला धनुष्यनी जेवी वक्र अने लीलाकारी श्याम भमरवाळा; प्रमाणोपेत, सुभग अने अव्याहत श्रवणेंद्रियवाळा; पुष्ट अने आदर्श (काच)ना तळा जेवा कपोळवडे शोभित मुखवाळा; अर्धचंद्रसमान भाळ (कपाळ)वाळा; कलंक रहित कार्त्तिकमासनी पूर्णिमाना चंद्र समान मुख-

मृदुकेशांतभूमयः ॥ १९ ॥ स्निग्धश्यामसुगंधीष-द्वक्रस्वावर्त्तमूर्द्धजाः । मत्तद्विपेंद्रगतयो द्वात्रिंशल्लक्षणान्विताः ॥ २० ॥ तानि चैवं—यूप १ स्तूप २ ध्वज ३ च्छत्र ४-कमंडलु ५ यवां ६ कुशाः ७ । पताका ८ कूर्म ९ मकर १० मयूर ११ सुप्रतिष्ठकाः १२ ॥ २१ ॥ मेदिनी १३ तोरणां १४ भोधि १५-मंदिरा १६ दर्श १७ पर्वताः १८ । गजो १९-क्ष २० सिंह २१ कलश २२ रथ २३ मत्स्य २४ शुका २५ स्तथा ॥ २२ ॥ वरस्थाला २६ ष्टापद २७ श्री-दामा २८ भिषेक २९ चामराः ३० । वापी ३१ सौव-स्तिक ३२ श्चेति द्वात्रिंशत्पुण्यशालिनां ॥ २३ ॥

तदा सर्वांगसुंदर्यः प्रशस्तस्त्रीगुणांचिताः । पुण्यनैपुण्यलावण्या भवंति महिला अपि ॥ २४ ॥ सुवर्णकूर्मसंस्थान-मृदुरक्ततलांह्रयः । सुश्लिष्टवृत्तसरल-क्रमदीर्घांगुलिव्रजाः ॥ २५ ॥ ललितानुन्नतान् रक्तान् दधत्यः पादयोर्नखान् । दशदिक्पतिदेवीना-मात्तान् मौलिमणीनिव

वाळा; उष्णीषना शिखर जेवा अने उदार छत्राकार मस्तकवाळा, दाडिमना पुष्पजेवी कांइक रक्त, स्वच्छ ने मृदु केशांतनी भूमिवाळाः स्निग्ध, श्याम, सुगंधी अने कांइक वक्र आवर्त्तयुक्त केशवाळा; मदोन्मत्त हस्ति जेवी गतिवाळा अने बत्रीश लक्षणवाळा होय छे. १०४ थी १२०

बत्रीश लक्षणो आ प्रमाणे–१ यूप, २ स्तूप, ३ ध्वज, ४ छत्र, ५ कमंडळ, ६ यव, ७ अंकुश, ८ पताका, ९ कूर्म, १० मकर, ११ मयूर, १२ सुप्रतिष्ठक, १३ पृथ्वी, १४ तोरण, १५ समुद्र, १६ मंदिर, १७ आदर्श, १८ पर्वत, १९ गज, २० वृषभ, २१ सिंह, २२ कळश, २३ रथ, २४ मत्स्य, २५ शुक, २६ श्रेष्ठथाळ, २७ अष्टापद, २८ श्रीदाम[1], २९ अभिषेक[2], ३० चामर, ३१ वाव ने ३२ स्वस्तिक–पुण्यशाळीना शरीर उपर आ ३२ लक्षणो–चिन्हो होय छे. १२१–१२३

ते काळे स्त्रीओ पण सर्वांग सुंदर, प्रशस्त एवा स्त्रीजातिना गुणोवडे युक्त अने पवित्र एवी निपुणता अने लावण्यवाळी होय छे, १२४. तेना शरीरनुं कर्त्ता वर्णन करे छे–सुवर्णना काचबानी पीठ सरखा, मृदु अने रक्तवर्णना पगना पंजावाळी; सारी रीते मळेली, सरल, गोळ अने क्रमथी वधती अंगुळीओवाळी; स्वच्छ, उन्नत अने रक्त पादांगुळीओना नखने धारण करती तेमज दशदिग्पाळनी देवीओना मस्तकपर राखेल मणिनी

---

१ पुष्पमाळा. २ अभिषेक करातो लक्ष्मी.

॥ २६ ॥ यासां वृत्तक्रमस्थूल—मृदुजंघापराजिताः । वसंति विपिनेऽद्यापि हरिण्यो लज्जिता इव ॥ २७ ॥ जिता वृत्ताऽरोमपीन—मृदुगौरैर्यदूरुभिः । कदल्योंतर्दधुः शून्य—भावं व्रीडातुरा इव ॥ २८ ॥ समुद्गसंपुट इव श्लिष्टसंधिर्न दृश्यते । यासां जानुर्भृशं गूढः कृपणस्येव सेवधिः ॥ २९॥ नितंबबिंबं पृथु या दधते पीनवर्त्तुलं । जंगमं त्रिजगज्जिष्णोः स्मरस्येव सुदर्शनं ॥ ३० ॥ वदनद्विगुणायामं मृदुलं मांसलं घनं । विभाति जघनं यासां स्वःसरित्पुलिनोपमं ॥ ३१ ॥ यतो लक्षणोपेतस्त्रीणां जघनं मुखायामाद् द्विगुणविस्तारं भवतीति. कटी पटीयसी यासां कंठीरवविजित्वरी । नाभिः सौंदर्यसर्वस्व—भूमभूमिगृहोपमा ॥ ३२ ॥ प्रक्षीणमुदरं यासां न स्पष्टमुपलक्ष्यते । किंतु त्रिवल्याद्याधेया—नुपपत्त्या प्रतीयते ॥ ३३ ॥ यासामतिकृशो मध्य—देशो भंगभयादिव । त्रिवलीदंभतः स्वर्णसूत्रत्रयदृढीकृतः ॥ ३४ ॥ यद्वा—पुरो रोमावली चारु—र्यासां पश्चात्तु वेणियुक् । शंके भंगभिया मध्यो दत्तायःपट्टिकाद्वयः ॥ ३५ ॥ रोमा-

---

जेवा नखवाळी; जेमनी गोळ, क्रमथी स्थूळ थती अने सुकोमळ एवी जंघा (पींडी)थी पराजित थयेली मृगलीओ जाणे लज्जा पामी होय तेम अद्यापि पण जंगलमां वसे छे; तेम ज जेना गोळ, रोम विनाना, पुष्ट, कोमळ अने उज्वळ एवा ऊरुवडे जीतायेली केळो लज्जातुर थइने हृदयमां शून्य भावने धारण करे छे एवी. डाबडाना संपुटनी जेवा मळेला सांधावाळा जेना अतिगुप्त जानु (ढींचण) कृपणनी लक्ष्मीनी जेम जोवामां आवता नथी एवी; वळी विस्तारवाळा, पुष्ट अने गोळ एवा नितंबना बिंबने धारण करनारी के जे नितंब जाणे त्रण जगतने जीतनार कामदेवनुं जंगम सुदर्शनचक्र होय तेवुं देखाय छे; वदनथी बमणा विस्तारवाळा, सुंवाळा, मांसल अने घन एवा जघनने धारण करनारी के जे जघन देवनदी (गंगाना) पुलिन जेवुं देखाय छे; (लक्षणोपेत स्त्रीनुं जघन वदन करतां बमणा विस्तारवाळुं होय छे.) वळी जेनी कटी सिंहनी कटीने जीते एवी सुंदर होय छे; नाभि सौंदर्यसर्वस्वने छुपाववा माटे करेला भूमिगृह जेवी होय छे; तेनुं उदर एटलुं कृश होय छे के जे स्पष्ट देखातुं पण नथी, परंतु त्रिवली विगेरेना आधेयनी अन्यत्र अनुपपत्ति होवाथी ते छे एवी प्रतीति थाय छे; तेनो शरीरनो मध्यभाग एटलो कृश होय छे के जेना भांगी जवाना भयथी तेने त्रिवलिरूपी सोनाना त्रण दोरा वडे दृढ करेलो छे, (बांधी लेवामां आवेल छे.) अथवा तो भंगना भयथी आगळना भागमां रोमावळीथी

वळी कुंडलिनी यासां नाभिबिलोद्गता। रागोरुगरलग्रस्तं न केषां कुरुते मनः ॥ ३६ ॥ तनुस्निग्धश्यामरोम—तरंगोच्चैः प्रसर्पति। यासां नाभिह्रदोद्भूता रोमराजीतरंगिणी ॥ ३७ ॥ यासामुरोजौ राजेते पीनवृत्तदृढोन्नतौ। मनःस्थयो रत्यनंग—वेश्मनोः कलशाविव ॥ ३८ ॥ कुचौ सच्चूचुकौ यासां नीलाब्जपिहिताननौ। मनःस्मरगृहद्वार—मांगल्यकलशाविव ॥ ३९ ॥ स्थातुं यत्कुचयोरंत—रक्षमा चारुवृत्तयोः। गुणान्वितापि सच्छिद्रा मुक्तास्रग् लंबते बहिः ॥ ४० ॥ मृणालिकामृदू बाहू करौ यासां कजोपमौ। मृदुरक्ततलौ सूर्य—चंद्रचक्रादिचिह्नितौ ॥ ४१ ॥ सरलाभिः सुवृत्ताभिः स्निग्धारुणनखांशुभिः। अंगुलीभिः करौ यासां राजतः स्मरतूणवत् ॥ ४२ ॥ त्रिलोकोत्तरसौभाग्य—व्यंजिरेखात्रयांकितः। कंठो यासां विभाति स्म चतुरंगुलसंमितः ॥ ४३ ॥ यासां हनुरनूनश्रीः शोभते भासुरद्युतिः। स्वैरं विलसतो रत्य—नंगयोरिव दर्पणः ॥ ४४ ॥ अध-

---

अने पाछला भागमां लांबी वेणीथी जाणे लोढानी बे पाटीना बंधवडे बांधी लीधेल होय तेवो जणाय छे; वळी नाभिरूपी बिलमांथी नीकळेली रोमावली रूपी सापण एवी छे के तेणे रागरूपी तीव्र विषथी कोना मनने व्याप्त करेल नथी ? वळी नाभिरूपी द्रहमांथी नीकळेली रोमराजीरूपी नदी पातळा, स्निग्ध अने श्याम एवा उंचा उछळता रोमरूपी तरंगोवडे विस्तार पामेली छे; वळी जेना उरोज (स्तन) पुष्ट, गोळ, मजबुत अने उंचा, मनमां रहेला अनंग ने रतिना मंदिर उपरना बे कळश होय तेवा शोभे छे; वळी डींटडीवाळा ते बंने स्तनो नील कमळ वडे ढंकायेला मुखवाळा अने कामदेवना घरना द्वारपासे स्थापेला बे मंगळ कळश जेवा शोभे छे; ते सुंदर ने गोळ एवा बे स्तनना मध्यमां रहेवा माटे असमर्थ थवाथी दोरावाळी अने छिद्रवाळी एवी मोतीनी माळा पण बहार लटक्या करे छे. कमलिनी सरखा कोमळ बे बाहु छे अने हाथ (पंजा) कमळनी उपमावाळा छे तथा तेना हाथना तळीया कोमळ, राता अने सूर्य, चंद्र तथा चक्रादिना चिन्हो वडे सुशोभित छे; वळी सरल, गोळाकार, स्निग्ध अने लाल नखनी कांति वडे शोभती एवी आंगळीओवडे कामदेवना भाथानी जेवा बे हाथ शोभी रह्या छे; त्रण लोकमां अपूर्व सौभाग्यने बतावती एवी त्रण रेखावडे चिह्नित अने चार आंगळना प्रमाणवाळो जेनो कंठ शोभी रह्यो छे; जेनी हडपची पूर्ण शोभावाळी अने जळहळती कांतिवाळी तेमज स्वेच्छाए विचरता एवा रति अने कामदेवना दर्पण समान शोभे छे; जेना अधरोष्ठपुट

रोष्ठपुटं यासां क्लृप्तं रागरसैरिव । विरक्तानपि यद्रक्तान् कुरुते चिंतनादपि ॥ ४५ ॥ ईषद्रक्तं सुरक्तेन नीरसं सरसेन च । स्याद्यदोष्टेन सस्पर्द्धं प्रवालं सार्थकाभिधं ॥ ४६ ॥ रक्तत्वं नीरसे रत्ने माधुर्यं पांडुरेऽमृते । स्थाने द्वयोस्तयोर्योगा–द्यदोष्टस्तद्द्वयाधिकः ॥ ४७ ॥ अंतर्मुखं दंतपंक्ति-र्यासामविरला समा । माणिक्यसंपुटन्यस्ता मुक्तालिरिव राजते ॥४८॥ यासां रक्तोऽधरो रागं जनयत्युचितं हि तत् । रागं मुक्तोपमा दंता-वली सूते तदद्भुतं ॥ ४९ ॥ शोभते रसना यासां कमलच्छदकोमला । सुखशय्येव भारत्या जाग्रत्या मुखमंदिरे ॥ ५० ॥ दीर्घोन्नतातिसरला यासां नासा विराजते । कलिका दीपकस्येव श्रियः क्रीडागृहे मुखे ॥ ५१ ॥ तीक्ष्णाग्रे विपुले श्याम–तारके च यदीक्षणे । अंतर्निविष्टभ्रमरे भातः पद्मे इव स्मिते ॥५२॥ अक्षिभिः सुभगैर्यासां हृतसौंदर्यसंपदः । उद्घाटपक्ष्मारस्थ–स्तस्थुः स्वःसुदृशां दृशः ॥ ५३ ॥ विलासचटुले यासां कर्णोपांतप्रसर्पिणी । नेत्रे सांजनलक्ष्मीके भातः प्रास्तांजने अपि

(बे होठ) एवा रंगवडे रंगायेला छे के जे चिंतववा मात्रथी पण विरक्तजनोने रागवाळा बनावे छे; अत्यंत रक्त अने रस सहित एवा तेनां ओष्ठनी साथे कांइक रातुं अने नीरस स्पर्धा करनारा प्रवाळनुं नाम सार्थक छे, नीरस एवा रत्नमां रक्तत्वमात्र छे अने पांडुर (उज्वळ) एवा अमृतमां मधुरता मात्र छे, ओष्ठमां ते बंनेनो संयोग–रक्तता ने मधुरतारूपे होवाथी ते बंनेथी ओष्ठ अधिक छे; जेना मुखमां अविरल (वच्चे मार्ग विनानी) अने सम (सरखी) एवी दांतनी श्रेणि माणिक्यना संपुटमां राखेली मोतिनी श्रेणि जेवी शोभे छे; जेना रक्त एवा अधर रागने (रंगने) उत्पन्न करे छे ते तो उचित छे पण ते राग मोतीनी उपमावाळी श्वेत दांतोनी श्रेणि उत्पन्न करे छे ते आश्चर्यकारी छे; तेना मुखरूपी मंदिरमां जागे जागती भारतिनी सुखशय्या होय तेवी तेम ज कमळपत्र जेवी कोमळ रसना (जीभ) शोभे छे. दीर्घ, उन्नत अने अति सरल एवी नासिका दीपनी कलिका जेवी लक्ष्मीना क्रीडागृह जेवा मुखनी उपर शोभे छे; तीक्ष्ण अग्रभाग (छेडा) वाळा अने विपूळ (विस्तृत) एवा तेना नेत्रमां रहेली बे काळी कीकीओ कमळमां रहेला भ्रमर जेवी शोभे छे. तेनी अति सुभग (सौभाग्यशाळी) एवी आंखो वडे जेनी सौंदर्य संपदा हणाइ गइ छे एवी देवांगनाओनी दृष्टि उघाडी ज रही गइ छे. (वींचाती ज नथी) मटकुं पण मारी शकती नथी. वळी विलासवाळा अने कर्ण पर्यंत पहोंचेला (लांबा),

॥ ५४ ॥ यासु कामास्त्रशालासु लंबिते धनुषी इव । भ्रुवौ सदा सहस्थायि-चक्षुर्बाणे विराजतः ॥ ५५ ॥ चक्षुःकासारयोर्यासां शृंगाररसपूर्णयोः । कटाक्षा वीचय इवा-भांति कामानिलोत्थिताः ॥ ५६ ॥ भूषणालंकृते यासां श्रवणे दीर्घवर्त्तुले । दोलाविलासं बिभृतः क्रीडतो रत्यनंगयोः ॥ ५७ ॥ सुवर्णशालिनोर्मुक्ता-मययोश्चारुवृत्तयोः । तुल्ययोः शोभते संगो यत्कुंडलकपोलयोः ॥ ५८ ॥ यद्गौरगल्लयोर्भाति कुटिलालकवल्लयः । प्रसूनेषोरिव जय-प्रशस्त्यक्षरपंक्तयः ॥ ५९ ॥ मलिनांशव्यपोहाय योऽयमर्द्धीकृतो विधुः । यासां भालस्थलं तेन निर्मलेनेव निर्मितं ॥ ६० ॥ यदास्यसुषमाकांक्षी ममज्जांभोनिधौ विधुः । तथापि योनिजातस्य तस्य तातस्य सा कुतः ॥ ६१ ॥ किंचिदाकुंचिताः स्निग्धा मृदुलाः श्यामलांशवः । यासामत्यंततनवः केशा लेशा इव श्रियाः ॥ ६२ ॥

मानवा मौलितो वर्ण्या यद्यप्यंह्रेस्तु नाकिनः । तथाप्येतेऽतिपुण्यत्वा-द्देवत्वेन विवक्षिताः ॥ ६३ ॥ सिद्धांतेऽप्यत एवैषा-मनेनैव क्रमेण हि ।

अंजननी शोभावाळा तेना नेत्रो अंजन कर्या विना पण शोभे छे. कामदेवनी शस्त्रशाळारूप जेमनी धनुष्यना जेवी लांबी बे भ्रूओ (भमरो) निरंतर साथे रहेला चक्षुरूप बाणोथी शोभी रहेल छे. शृंगाररसथी पूर्ण एवा चक्षुरूप सरोवरमां कामरूप पवनथी उछळता जाणे तरंगो होय होय तेम तेणीना कटाक्षो शोभे छे. भूषणोथी अलंकृत अने दीर्घ तेम ज वर्तुल (गोळ) एवा तेना कर्णो क्रीडा करता रति अने अनंगना हींडोळा जेवा शोभे छे. सुवर्णना, मुक्तामय, चारु अने गोळ एवा कुंडळयुगलनो तेनी समान स्थितिवाळा कपोळ (गाल) साथेनो संयोग शोभे छे. जेना गौर एवा गल्ल (कंठना पाछला भाग) उपर लोटती कुटिल एवी केशनी वल्लीओ कामदेवने प्रसिद्धि आपनारी जयप्रशस्तिनी अक्षर पंक्तिओ जेवी शोभे छे. मलिन भागने दूर करवा माटे अर्ध करेला चंद्रमानी निर्मळतावडे ज निर्माण करेलुं होयनी तेवुं तेनुं भाळस्थळ शोभे छे. जेना मुखनी शोभाने प्राप्त करवा माटे तेवी इच्छाथी चंद्रमा समुद्रमां डुबी जाय छे, तोपण योनिजात एवा तेना तात पासे ते क्यांथी होय ? कांइक वांका, स्निग्ध, मृदुल, श्याम कांतिवाळा अने अत्यंत पातळा एवा तेना केश लक्ष्मीना लेश (विभाग) जेवा शोभे छे. (१२५–६२)

मनुष्योनुं वर्णन मस्तकथी करवुं अने देवोनुं चरणथी करवुं एवो नियम छे छतां अतिपुण्यशाळी होवाथी युगलिकोनुं वर्णन देवोनी रीते चरणथी करवामां आव्युं छे. सिद्धांतमां पण आ क्रमे करीने ज तेनुं वर्णन पूज्यपुरुषोए करेलुं छे, तेथी अमे पण ते

आदिष्टं वर्णनं पूज्यै-रियं तद्दिक् प्रदर्शिता ॥ ६४ ॥ एवं च ताः सुवदनाः सुकेश्यः स्युः सुलोचनाः । चारुवक्षोजजघनाः सदावस्थितयौवनाः ॥ ६५ ॥ सद्राजहंसगतयः कलकंठीकलस्वराः । स्वर्णचंपकचार्वंग्यो द्वात्रिंशल्लक्षणांचिताः ॥ ६६ ॥ द्वात्रिंशल्लक्षणानि च ज्योतिष्करंडवृत्तौ श्रीमलयगिरिभिर्दर्शितानि पूर्वोक्तान्येव, किं त्वत्र जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्तौ मकरस्थाने मकरध्वज इति दृश्यते, तथा च तद्ग्रंथः-मकरध्वजः कामदेवस्तत्संसूचकं सूचनीये सूचकोपचाराल्लक्षणमिति, तच्च सर्वकालमविधवत्वादिसूचकमिति. स्वभर्तुः किंचिदूनोच्चा भाग्यसौभाग्यभूमयः । सर्वेषामप्यनुमता दक्षालापाः प्रियंवदाः ॥ ६७ ॥ सुस्था भाविकशृंगाराः सीमंताद्युज्झिता अपि । मदमंथरगामिन्यो निर्विकाराशया अपि ॥ ६८ ॥ स्वाभाविकैरलंकारै-र्दशभिः स्त्रीजनोचितैः । सुशिक्षिता इव सदा लीलादिभिरलंकृताः ॥ ६९ ॥ ते चामी-लीला १ विलासो २ विच्छित्ति ३ बिब्बोकः ४ किलकिंचितं ५ । मोट्टायितं ६ कुट्टमितं ७ ललितं ८

दिशा बतावेल छे. आ प्रमाणे ते स्त्रीओ सारा मुखवाळी, सारा केशवाळी, सारा लोचनवाळी, सारा वक्षोज ने जघनवाळी, सदा अवस्थित यौवनवाळी, राजहंस समान गतिवाळी, कोयल जेवा मधुर स्वरवाळी. स्वर्ण ने चंपक सरखा मनोहर शरीरवाळी तथा बत्रीश लक्षणवाळी होय छे. (१६३ थी १६६) तेना बत्रीश लक्षणो ज्योतिष्करंडवृत्तिमां श्रीमलयगिरि महाराजे पूर्वे कह्या प्रमाणे ज कहेला छे, परंतु जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिनी वृत्तिमां मकरने स्थाने मकरध्वज देखाय छे. ते आ प्रमाणे-मकरध्वज एटले कामदेव तेना सूचक एटले सूचनीयने विषे सूचकनो उपचार करवाथी तेने ओळखावनार लक्षण. ते सर्वकाळ अविधवापणुं विगेरेना सूचक छे. युगलिक स्त्रीओ पोताना स्वामीथी कांइक ओछी उंची, भाग्य ने सौभाग्यनी भूमि जेवी, सर्वने गमे तेवी, दक्ष आलापवाळी, प्रिय बोलनारी, सुस्थ, सीमंतादि-केशनी व्यवस्था रहित छतां पण शृंगारथी शोभित होय तेवी, निर्विकार आशयवाळी छतां पण जाणे मदवडे मंदगतिवाळी होय तेवी स्त्रीजनने उचित एवा स्वाभाविक लीला विगेरे दश अलंकारवडे जाणे सारी रीते शीखेली होय तेम सर्वदा अलंकृत होय छे. (१६७-६९.) ते दश प्रकारना स्वाभाविक अलंकार आ प्रमाणे-१ लीला, २ विलास, ३ विच्छित्ति, ४ बिब्बोक, ५ किलकिंचित, ६ मोट्टायित, ७ कुट्टमित, ८ ललित, ९ विहृत तथा १० विभ्रम आ दश स्त्रीओना स्वाभाविक अलंकारो समजवा. एना लक्षण काव्यानुशासनसूत्रमां आ प्रमाणे कहेला छे—वाणी, वेष अने

विहृतं ९ तथा ॥ ७० ॥ विभ्रम १० श्चेत्यलंकाराः स्त्रीणां स्वाभाविका दश । एतल्लक्षणानि चैवं काव्यानुशासनसूत्रे-वाग्वेषचेष्टितैः प्रियस्यानुकृतिर्लीला १ स्थानादीनां वैशिष्ट्यं विलासः २ ग्रंथांतरेऽप्युक्तं-स्थानासनगमनानां हस्तभ्रूनेत्रकर्मणां चैव । उत्पद्यते विशेषो यः श्लिष्टः स तु विलासः स्यात् ॥ १ ॥ गर्वादल्पाकल्पन्यासः शोभाकृद्विच्छित्तिः ३ इष्टेऽवज्ञा बिब्वोकः ४ वागंगभूषणानां व्यत्यासो विभ्रमः ५ स्मितहसितरुदितभयरोषगर्वदुःख-श्रमाभिलाषसंकरः किलकिंचितं ६ प्रियकथादौ तद्भावभावनोत्था चेष्टा मोट्टायितं ७ अधरादिग्रहाद्दुःखेऽपि हर्षः कुट्टमितं ८ मसृणोऽगन्यासो ललितं ९ व्याजादेः प्राप्तकालस्याप्यवचनं विहृतं १० एतेषां दशानां सूत्राणां सोदाहरणा वृत्तयस्तु काव्यानुशासनटीकाया अलंकारचूडामणेरवसेयाः, एतच्च जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रेऽपि सूचितं. तथाहि-संगयहगयसिअभणिअचिट्ठिअविलाससंलावणिउणजुत्तोवयारकुसला इति,

---

चेष्टितवडे भर्त्तारनुं अनुकरण करवुं ते लीला. १, स्थानादिनुं विशिष्टपणुं ते विलास २, ग्रंथांतरमां पण कह्युं छे के-'स्थान, आसन ने गमननी तथा हस्त, भ्रू ने नेत्रनी जे श्लिष्ट एवी चेष्टा विशेष थाय छे ते विलास कहेवाय छे.' गर्वथी अल्प अने अकल्प एवो जे न्यास शोभा आपे छे ते विच्छित्ति. ३, इष्ट छतां अवज्ञा करवी ते बिब्वोक ४, वाणीनो ने अंगभूषणोनो जे व्यत्यास करवो ते विभ्रम. ५, स्मित, हसित, रुदित, भय, रोष, गर्व, दुःख, श्रम ने अभिलाष एनो जे संकरभाव एकबीजामां मळी जवारूप थवो ते किलकिंचित ६, प्रियनी कथा विगेरेमां ते भाव भाववाथी उत्पन्न थती चेष्टा ते मोट्टायित. ७, अधरादिना ग्रहणमां-चुंबनादिमां महा दुःख थतां पण हर्ष धारण करवो ते कुट्टमित. ८, कोमळ एवो जे अंगन्यास ते ललित ९, कांइ मिष करीने-कपटथी प्राप्त काळे पण न बोलवुं ते विहृत. १०, ए दश सूत्रोना उदाहरण साथेनी वृत्ति-विस्तार काव्यानुशासनटीकामांथी तेम ज अलंकारचूडामणिमांथी जाणी लेवो. आ हकीकत श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रमां पण सूचवेल छे. ते आ प्रमाणे--'संगत, गत, हसित, भणित, त्रिष्टित, चेष्टित, विलास, संलाप, निपुण अने युक्तोपचार करवामां कुशळ होय छे.' इति.

न तूद्दिश्यान्यमर्त्यांस्ता विकारं बिभ्रते मनाक् । कालस्वभावादेवाल्प-विकारा न्यायमार्गगाः ॥७०॥ अनभ्यस्तनीतिकाम-शास्त्रा अपि स्वभावतः । युक्तकामोपचारेषु चतुराश्चतुराशयाः ॥ ७१ ॥ नयनोत्सवकारिण्य-श्चित्र-कृत्प्रियदर्शनाः । साक्षादप्सरसः स्वर्गा-दवतीर्णा इव क्षितिं ॥ ७२ ॥ तत्पतिप्राग्भवाचीर्ण-दानादिसुकृतोद्भवैः । पचेलिमैरिव फलै-र्जातेदृग्रूप-संपदः ॥ ७३ ॥ नास्त्रीदृश्यस्तदानीं स्युः स्त्रियः कालस्वभावतः । युग्मिन्यः परिभोगार्हा युग्मिनां पुण्यशालिनां ॥ ७४ ॥ सर्वे-ऽपि पुंस्त्रीरूपास्ते मनुष्याः शुभलक्षणाः । नांदीसिंहक्रौंचहंस-गंभीरमधुरस्वराः ॥ ७५ ॥ आद्यसंहनना आद्य-संस्थानाः कांतिशालिनः । दद्रुकुष्ठकिलासादि-त्वग्दोषरहितांगकाः ॥ ७६ ॥ कपोतवत्परिणता-हाराः कंकवयोगुदाः । अलग्नमलमूत्रादि-लेपापानास्तुरंगवत् ॥ ७७ ॥ पृष्ठकरंडकवाच्यानि पृष्ठवंशोन्नतास्थिशकलानि । षट्पंचाशां द्विशतीं दधतः क्रोशत्रयोन्नतयः ॥ ७८ ॥ आर्या । पद्मोत्पलादिवच्चारु-गंधश्वास-

---

ते युगलिक स्त्रीओ अन्य पुरुषोने जोइने किंचित् पण विकारने पामती नथी, कारण के काळस्वभावथी ज ते काळनी स्त्रीओ अल्पविकारवाळी अने न्याय-मार्गे गमन करनारी होय छे. (१७०) नीतिशास्त्र के कामशास्त्रनो अभ्यास कर्या विना पण स्वभावे ज योग्य एवा कामोपचारमां चतुर अने चतुर (शुभ) आशयवाळी ते काळनी स्त्रीओ होय छे. वळी नेत्रने उत्सव करनार, आश्चर्यपमाडनार, प्रियदर्शनवाळी अने साचात् अप्सराओ ज देवलोकमांथी पृथ्वीपर आवी होय तेवी ते देखाय छे. तेना पतिना पूर्वभवे आचरेला दानादि सुकृतोथी उद्भवेला अतिपक्व फळोथी एवा प्रकारनी रूपसंपदाने पामेली होय छे. ते स्त्रीओ पूर्वे कह्या प्रमाणेना स्वरूपवाळी काळस्वभावथी ज ते काळे पुण्यशाळी एवा युग्मीओना भोगने योग्य होय छे. (१७१-१७४) स्त्री अने पुरुषो सर्वे मनुष्यो शुभ लचणवाळा, नांदी, सिंह, क्रौंच अने हंसनी जेवा गंभीर अने मधुर स्वर-वाळा होय छे. वळी प्रथम संहननवाळा, प्रथम संस्थानवाळा, कांतिशाळी, धाधर, कुष्ठ ने किलासादि त्वचाना दोषथी रहित, कपोतनी जेवा परिणत आहारवाळा, कंकपचीनी जेवी संकुचित गुदावाळा, अश्वनी जेम मळमूत्रादिना लेप विनानी गुदावाळा, जेना पृष्ठकरंडक तरीके ओळखाता पृष्ठवंशना उन्नत एवा अस्थिना विभागो २५६नी संख्यामां होय छे अने त्रण गाउना शरीरवाळा होय छे.(१७२-१७८) पद्म अने उत्पल (कमळ) नी जेवा सुगंधी श्वासवाळा

मुखांबुजाः। तनुक्रोधमानमाया–लोभदोषाः स्वभावतः ॥ ७९ ॥ विनीता भद्रकास्त्यक्त–भक्ष्यभोज्यादिसंचयाः। संतोषिणो निरौत्सुक्या मार्दवा-जवशालिनः ॥ ८० ॥ सत्यपि स्वर्णरत्नादौ ममत्वावेशवर्जिताः। परस्परं त्यक्तवैर–कलहद्रोहमत्सराः ॥ ८१ ॥ अश्वमातंगकरभ–वृषभादिषु सत्स्वपि। तद्भोगविमुखाः पाद–विहाराः स्वैरचारिणः ॥ ८२ ॥ गोमहि-ष्येडकाजासु सुव्रतासु सतीष्वपि। तदंगीकारतद्दोह–तद्दुग्धास्वादव-र्जिताः ॥ ८३ ॥ यक्षभूतपिशाचादि–ग्रहमारिविवर्जिताः। कासश्वास-ज्वराद्यर्ति–व्याधिव्यसनवंचिताः ॥ ८४ ॥ कृषिसेवावणिज्यादिवृत्तिक्लेश-परिच्युताः। वांछामात्रप्राप्तकामा निश्चिताः सुखमासते ॥ ८५ ॥ भूपालयुवराजेभ्य–श्रेष्ठिसैन्याधिपादिभिः। नायकै रहितास्तुल्याः स्युः सर्वेऽप्यहमिंद्रकाः ॥ ८६ ॥ एकादशभिः कुलकं ॥

तदा न कोऽपि कस्यापि दासः प्रेष्यश्च कर्मकृत्। भागिको भृतकः शिष्य आभियोग्योज्झिता हि ते ॥ ८७ ॥ प्रसूपितृस्वसृभ्रातृ–भार्यापुत्र-

---

मुखो छे जेना एवा, स्वभावथी ज पातळा क्रोध, मान, माया, लोभरूप कषायोवाळा, विनीत, भद्रक, भक्ष्य अने भोग्य पदार्थोना संचय विनाना, संतोषी, निरौत्सुक्य (उत्सुकता विनाना), मृदुता अने सरलतावाळा होय छे. (१७९–१८०) सुवर्ण रत्नादिक छतां पण तेनी उपर ममताना आग्रह विनाना होय छे, अने परस्पर वैर, कलह, द्रोह अने मत्सर रहित होय छे. (१८१) ते काळे अश्व, गज, उंट अने वृषभादिक होय छे छतां ते युगळिको तेनो उपभोग करता नथी. तेओ पगे ज चालनारा अने स्वेच्छा-विहारी होय छे. (१८२) गाय, भेंश, बकरी ने घेटी विगेरे दूधाळां जनावर सारा होता छतां तेने अंगीकार करता नथी अने तेने दोहता नथी तेमज तेना दूधनो स्वाद पण लेता नथी. (१८३) यक्ष, भूत, पिशाच विगेरेना उपद्रवथी तेमज ग्रहपीडा अने मारी (मरकी)थी वर्जित होय छे. कास, श्वास, ज्वर विगेरे व्याधिथी अने तेनी पीडाथी विरहित होय छे. (१८४) खेती, सेवा, व्यापार विगेरे करीने आजीविका चलाववाना क्लेशथी रहित होय छे. वांच्छा करवामात्रथी ज इच्छितने मेळवनारा होवाथी निश्चितपणे सुखमां रहे छे. (१८५) राजा, युवराज, शेठ, धनवान, सेनापति विगेरेना व्यवहारवर्जित होय छे, तेम ज नायक रहित, सर्व समानभाववाळा ने सर्व अहमिंद्र होय छे. (१८६)

ते काळे कोइ कोइनो दास, प्रेष्य के कर्मकर होतो नथी, तेमज भागीदार, भृतक, शिष्य के आभियोगिकपणुं पण होतुं नथी. (१८७) माता, पिता,

स्नुषादिषु । स्वजनेष्वपि ते मर्त्या न तीव्रप्रेमबंधनाः ॥ ८८ ॥ तदा गोधूमशाल्याद्या भवंत्योषधयः स्वयं । सरसत्वाद्भुवो भूम्ना सांप्रतीन-तृणादिवत् ॥ ८९ ॥ आहारायोपयुज्यंते न तास्तेषां नृणां परं । पृथ्वी-कल्पद्रुमफल-पुष्पाहारा हि ते जनाः ॥ ९० ॥ शर्करामोदकादिभ्यो-ऽप्य-नंतगुणमाधुरी । भूमिर्भवत्तदा स्निग्धा परिणामे हितावहा ॥ ९१ ॥ नीरोगाणां सुजातीनां पालितानां प्रयत्नतः । पुंड्रेक्षुचारिणीनां च गवां लक्षस्य यत्पयः ॥ ९२ ॥ एकगव्यां संक्रमित-मर्द्धार्द्धादिव्यवस्थया । निष्पादितं तेन लक्ष-द्रव्यव्ययसमुद्भवं ॥ ९३ ॥ दीपनीयं बृंहणीयं सर्वा-गीणप्रमोदकृत् । सुरभि स्वादु कल्याण-भोज्यं यच्चक्रवर्तिनः ॥ ९४ ॥ ततोऽप्यधिकमाधुर्य-स्तुष्टिपुष्ट्यादिकृद्रसः । कल्पद्रुमाणां तेषां स्या-त्पु-ष्पेषु च फलेषु च ॥ ९५ ॥ चतुर्भिः कलापकं । तुवरीकणमात्रेण तेना-हारेण ते जनाः । अहोरात्रत्रयं याव-त्सुहिताः सुखमासते ॥ ९६ ॥ अ-थाहृत्य तमाहारं प्रासादाकारशालिषु । प्रागुक्तकल्पवृक्षेषु ते रमंते

बहेन, भाइ, भार्या, पुत्र, पुत्रवधू विगेरे स्वजनोने विषे पण ते युगलिको तीव्र प्रेमबंधनवाळा होता नथी. (१८८) ते काळे गोधूम, शालि विगेरे औषधिओ (धान्यो) स्वभावे ज जमीन प्राये रसवाळी होवाथी सांप्रतकाळे तृणादिक थाय छे तेम पोतानी मेळे ज उगे छे, पण ते धान्यो ते काळना मनुष्योने आहारना उप-योगमां आवता नथी. तेओ तो पृथ्वी अने कल्पवृक्षना फळ ने पुष्पादिनो आहार करनारा होय छे. (१८९-९०). साकरना मोदक करतां पण अनंतगुणी मधुर, स्निग्ध अने परि-णामे हितकारक एवी ते काळे भूमि (मृत्तिका) होय छे. निरोगी, जातिवंत, प्रयत्नपूर्वक पाळेली, पुंड्र ने शेरडीनो ज चारो चरावेली लाख गायोनुं दूध तेथी अर्ध संख्यानी गायने पातां, एम क्रमे क्रमे अर्ध अर्धने पातां, छेवटनी एक गायना दूधथी बनावेल लक्ष द्रव्यना व्ययथी थयेल, दीपनीय, बृंहणीय, सर्व अंगमां प्रमोद उत्पन्न कर-नार, सुगंधी, स्वादु एवुं चक्रवर्तीनुं जे कल्याण भोजन (क्षीर) होय छे ते करतां पण अधिक मधुरतावाळो, तुष्टिपुष्टि विगेरेने करनारो एवो कल्पवृक्षोना फळमां ने पुष्पमां रस (स्वाद) होय छे. (१९१-९५) तुरना दाणा जेटला तेना आहारथी ते काळना युगलिको त्रण दिवस सुधी आहारनी इच्छा विनाना सुखे अने स्वस्थताए रहे छे. (१९६) तेवो ने तेटलो आहार करीने तेओ प्रासादना आकारवाळा पूर्वे कहेला कल्पवृक्षोमां जेम सुख उपजे तेम आनं-

यथासुखं ॥ ९७ ॥ यदा चतुर्विधातोद्य–हृद्यनादरसार्थिनः । तदा ते त्रुटितांगाख्या–नुपयांति सुरद्रुमान् ॥ ९८ ॥ एवं च–वस्त्रमाल्यविभूषाद्यै–र्यदा यैर्यैः प्रयोजनं । उपसर्पंति ते लोका–स्तदा तांस्तान् सुरद्रुमान् ॥ ९९ ॥ तदास्ति न पुरग्राम–दुर्गपणगृहादिकं । ततस्ते स्युर्जना वृक्ष–वासिनः स्वैरचारिणः ॥ २०० ॥ वीवाहयजनप्रेत–कार्यादीनामभावतः । न तेषां कार्यवैयग्र्यं तेऽव्यग्रमनसः सदा ॥ १ ॥ तदा प्रमार्जनी नास्ति न च कश्चित्प्रमार्जकः । स्वभावाद्भूः कचवर–पत्रस्थाणुतृणोज्झिता ॥ २ ॥ भवंति दंशमशक–यूकाचंचटमत्कुणाः । मक्षिकाद्याश्च न तदा जंतवो देहिदुःखदाः ॥ ३ ॥ ये सिंहचित्रकव्याघ्र–भुजगाजगरादयः । कालस्वभावतस्तेऽपि न रौद्रा नापि हिंसकाः ॥ ४ ॥ एवं मृगा वृकाः श्वानः पक्षिमार्जारमूषकाः । मिथो वैरोज्झिताः सर्वे भद्रकाः स्युरहिंसकाः ॥ ५ ॥ न खड्गादीनि शस्त्राणि नागबाणादयोऽपि न । न तत्प्रयोगी संग्रामः कोऽपि कस्यापि नाशकृत् ॥ ६ ॥ नागबाणादयश्चैवं–

दथी रहे छे. (१९७) तेओ ज्यारे चार प्रकारना वाजित्रोने सांभळवाना अर्थी थाय छे त्यारे त्रुटितांग जातिना कल्पवृक्षो ते इच्छाने पूर्ण करे छे. (१९८) तेम ज तेमने ज्यारे ज्यारे वस्त्र, माल्य, अलंकार विगेरेनी इच्छा थाय छे त्यारे ते ते वस्तुने आपनारा कल्पवृक्षो तेनी ते ते इच्छा पूर्ण करे छे. (१९९) ते काळे नगर, गाम, कील्लो, हाट, घर विगेरे होता नथी तेथी ते काळना मनुष्यो स्वेच्छाचारी अने वृक्षवासी ज होय छे. (२००) विवाह, पूजन, प्रेतकार्य विगेरेनो अभाव होवाथी तेमने कोइपण कार्यनी व्यग्रता होती नथी एटले तेओ निरंतर अव्यग्रमनवाळा ज होय छे. (२०१) ते काळे प्रमार्जनी (सावरणी) होती नथी अने कोइ प्रमार्जक (वाळनार) पण होतो नथी. स्वभावे ज जमीन कचरो, पत्र, तृण के स्थाणु रहित ज होय छे. (२०२) वळी डांस, मच्छर, जु, चांचड, मांकण, माखी विगेरे शरीरने दुःख आपनारा जीवोनी ते काळे उत्पत्ति होती नथी. (२०३) जे सिंह, चित्रा, व्याघ्र, भुजंगम, अजगर विगेरे जीवो होय छे, ते पण काळ स्वभावथी ज रौद्र परिणामी के हिंसक होता नथी, तेमज हरण, वरगडा, कुतरा, पक्षीओ, बीलाडा, उंदर विगेरे जीवो जातिवैर विनाना, भद्रक अने अहिंसक होय छे. (२०४–५) वळी खड्गादि शस्त्रो ने नागास्त्रादि बाणो पण होता नथी तेमज एकबीजानो नाश करनारा संग्राम पण होता नथी के जेमां तेनो उपयोग थइ शके. (२०६) नागबाण विगेरे आ प्रमाणे–नागबाण, तमोबाण, वह्निबाण, वायुबाण,

नागबाणस्तमोबाणो वह्निबाणो मरुच्छरः । एवमन्येऽपि ते स्वस्व–नाम-कार्यप्रसाधकाः ॥ ७ ॥ नेतयः सप्त नो मारि–ज्वरा नैकांतरादयः । तदा नाकालमरणं न दुर्भिक्षं न विड्वरः ॥ ८ ॥ एवं च ते निरातंका निर्बाधा निरुपद्रवाः । सुखानि भुंजते याव—ज्जीवं प्राचीन-पुण्यतः ॥ ९ ॥

ते च षोढा पद्मगंधा १ मृगगंधा २ स्तथाऽममाः ३ । सहाश्च ४ तेजस्तलिनः ५ शनैश्चारिण ६ इत्यपि ॥ १० ॥ इमे जातिवाचकाः शब्दाः संज्ञाशब्देन रूढाः, यथा पूर्वमेकाकारापि मनुष्यजातिस्तृतीयारकप्रांते श्रीऋषभदेवेन उग्रभोगराजन्यक्षत्रियभेदैश्चतुर्धा कृता, तथात्राप्येवं षड्विधा सा स्वभावत एवास्तीति जीवाभिगमवृत्तौ जंबूप्र० वृ० च. पंचमांगषष्ठशतकसप्तमोद्देशके तु पद्मसमगंधयः, मृगमदगंधयः ममकाररहिताः, तेजश्च तलं च रूपं येषामस्तीति तेजस्तलिनः, सहिष्णवः समर्थाः, शनैर्मंदमुत्सुकत्वाभावाच्चरंतीत्येवंशीला इत्यन्वर्थता व्याख्यातास्तीति.

ए प्रमाणे पोतपोताना नाम प्रमाणे कार्य करनारा अनेक प्रकारना बाणो समजवा. (२०७) वळी सात प्रकारनी ईतिओ, मारि (मरकी), एकांतरा विगेरे ज्वरो होता नथी, अकाळ मरण थतुं नथी अने दुर्भिक्ष के बीजा कोइ प्रकारनो विड्वर (उपद्रव) थतो नथी. एटले तेओ आतंक विनाना, बाधा विनाना, उपद्रव विनाना होय छे अने पूर्वभवना पुण्यथी यावज्जीव सुखने ज भोगवे छे. (२०८–९.)

ते युगलिको छ प्रकारना होय छे, ते आ प्रमाणे. १ पद्मगंधी, २ मृगगंधी, ३ अममा, ४ सहा, ५ तेजस्तलिन अने ६ शनैश्चारी (धीमे धीमे चालनारा).(२१०) आ बधा जातिवाचक शब्दो संज्ञाशब्दे करीने रूढ छे. जेम पूर्वे मनुष्यपणे एकाकारवाळा छतां पण त्रीजा आराना प्रांते श्री ऋषभदेवे उग्र, भोग, राजन्य अने क्षत्रिय–भेदवडे चार प्रकार पाड्या तेम अहीं पण छ प्रकारना तेओ स्वभावथी ज छे, एवुं श्री जीवाभिगमनी वृत्तिमां अने जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिनी वृत्तिमां कहेल छे. पंचमांग (भगवती) ना छठ्ठा शतकना सातमा उद्देशामां तो पद्म समान गंधवाळा, मृगमद (कस्तुरी) समान गंधवाळा, ममकार विनाना, तेजवाळुं तळ तेमज रूप होवाथी तेजस्तलिन, सहिष्णु एटले समर्थ, अने शनैः एटले मंदपणे–उत्सुकता रहित पणे चालनारा आ प्रमाणे पूर्वे कहेला शब्दोना यथार्थ अर्थ कहेला छे.

आयुषः शेषषण्मास्यां बद्धाग्रिमभवायुषः । ते युग्ममेकं स्त्रीपुंस–रूपं प्रसुवते जनाः ॥ ११ ॥ अहोरात्रांस्तदैकोन–पंचाशतममी जनाः। रक्षंति तावता तौ च स्यातां संप्राप्तयौवनौ ॥ १२ ॥ एषामेकोनपंचाश–द्दिनावधि च पालने । केचिदेवं पूर्वशास्त्रे व्यवस्थां कोविदा विदुः ॥ १३ ॥ तथाहि–सुप्तोत्तानशया लिहंति दिवसान् स्वांगुष्ठमार्यास्ततः कौ रिंखंति पदैस्ततः कलगिरो यांति स्खलद्भिस्ततः । स्थेयोभिश्च ततः कलागुणभृतस्तारुण्यभोगोद्गताः सप्ताहेन ततो भवंति सुदृगादानेऽपि योग्यास्ततः ॥ १४ ॥ अयं भावः–सप्ताहे प्रथमेंगुष्ठं लिहंत्युत्तानशायिनः । द्वितीये भुवि रिंखंति व्यक्तवाचस्तृतीयके ॥ १५ ॥ पदैः स्खलद्भिर्गच्छंति चतुर्थे पंचमे पुनः । स्थिरैः पदैस्ते गच्छंति षष्ठे सर्वकलाविदः ॥ १६ ॥ सप्ताहे सप्तमे प्राप्त–यौवनाः प्रभविष्णवः । स्युः स्त्रीभोगेऽपि केचिच्च सम्यक्त्वग्रहणोचिताः ॥ १७ ॥ तथोक्तं जंबू० प्र० वृ० "केचिच्च सुदृगादानेऽपि सम्य-

---

ए युगलिको ज्यारे छ मास आयुष्य बाकी रहे त्यारे आगला भवनुं आयुष्य बांधे छे अने एक युग्म (स्त्री–पुरुष) ने जन्म आपे छे. (२११) ते वखते ते युगलिको प्रसवेला युग्मने ४९ दिवस प्रतिपालना करे छे एटला दिवसमां ते यौवन प्राप्त थयेला थइ जाय छे. (२१२) आ प्रमाणे ४९ दिवसनी प्रतिपालनामां केटलाक बुद्धिमानो पूर्वना शास्त्रमां आ प्रमाणे व्यवस्था बतावे छे.–प्रथम सात दिवस चत्ता सुता सता पोताना अंगुठाने चुस्या करे छे, पछी बीजा सात दिवस पृथ्वीपर जरा जरा पग मांडे छे, त्रीजा सात दिवस कांइक मधुरवाणीवडे बोले छे, चोथा सात दिवस कांइक स्खलना पामता चाले छे, पांचमा सात दिवसमां सारी रीते स्थिरताथी चालवा मांडे छे, छट्ठा सात दिवसमां समस्त कळाना जाणनार थाय छे अने सातमा सात दिवसमां यौवनावस्था पामीने भोगसमर्थ थइ जाय छे अने पछी केटलाक तो समकित ग्रहणने योग्य थाय छे. आ प्रमाणे ४९ दिवसो पसार थाय छे. (२१३.) आनी पछीना त्रण श्लोकमां पण आ ज हकीकत कही छे. (२१४ थी २१६.) ते विषे श्री जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिनी वृत्तिमां कह्युं छे के–केटलाक युगलिको सुदृक्‌ना आदानमां अर्थात् सम्यक्त्वना ग्रहणमां पण योग्यतावाळा थाय छे. अहीं सात सप्तक वीत्या बाद समकितनी योग्यता कही, परंतु प्रज्ञापनाना विशेष पदनी वृत्तिमां तो उत्कृष्ट स्थितिवाळा मनुष्यो संबंधी सूत्रमां ' बे ज्ञान अने बे अज्ञानवाळा कह्या छे. ' तेमां

त्त्वग्रहणेऽपि योग्या भवंतीति. " एवं चात्र सप्तसप्तकव्यतिक्रमे सम्यक्त्वयोग्यतोक्ता. प्रज्ञापनाविशेषपदवृत्तौ च उत्कृष्टस्थितिमनुष्यसूत्रे ' दो नाणा दो अन्नाणा ' इति उत्कृष्टस्थितिका मनुष्यास्त्रिपल्योपमायुषस्तेषां तावद् अज्ञाने नियमेन, यदा पुनः षण्मासावशेषायुषो वैमानिकेषु बद्धायुषस्तदा सम्यक्त्वलाभाद् द्वे ज्ञाने लभ्येते, अवधिविभंगौ चासंख्येयवर्षायुषां न स्त इति. तत्रोत्सर्पिण्यामवसर्पिण्यां च प्रत्येकं षड्विधेऽपि कालविभागे सम्यक्त्वस्य श्रुतस्य च द्वयोरप्यनयोः प्रतिपत्तिः संभवतीति प्रतिपद्यमानकस्संभवति, स च प्रतिपद्यमानकस्सुषमदुःषमादिषु देशन्यूनकोट्यायुश्शेष एव प्रतिपद्यते, नाधिकायुश्शेष इत्यावश्यकमलयगिरिवृत्तौ. तदत्र मतत्रये तत्त्वं सर्वविद्वेद्यमिति ज्ञेयं. असंख्यायुस्तिर्यक्षु तु जन्मतोऽपि सम्यक्त्वं संभवति, तथोक्तं षष्ठकर्मग्रंथवृत्तौ—क्षायिकसम्यग्दृष्टिस्तिर्यक्षु न संख्येयवर्षायुष्केषु मध्ये समुत्पद्यते. किं त्वसंख्येयवर्षायुष्केषु.

सप्तावस्थाकालमान—मित्यादौ प्रथमारके । ततः कालक्रमात्किंचित्संभवत्यधिकाधिकं ॥ १८ ॥ इदमर्थतो जंबूप्रज्ञप्तिवृत्तौ. ततस्ते पितर-

---

उत्कृष्ट स्थितिवाळा एटले त्रण पल्योपमना आयुष्यवाळा. तेमने बे अज्ञान अवश्य होय छे. परंतु ज्यारे छ मासनुं आयुष्य बाकी रहे अने वैमानिकनुं आयुष्य बांधे त्यारे सम्यक्त्वनो लाभ थयेलो होवाथी बे ज्ञान लभ्य थाय छे. अवधि के विभंग असंख्य वर्षना आयुष्यवाळा (मनुष्य तिर्यंच) ने होतुं नथी. तेमां अवसर्पिणी ने उत्सर्पिणीमां प्रत्येके छए आरामां सम्यक्त्व ने श्रुत बंने सामायिकनी प्रतिपत्ति संभवे छे एटले तेना प्रतिपद्यमान जीवो संभवे छे. ते प्रतिपद्यमानपणुं सुषमदुःषमादिमां वधारेमां वधारे देशेन्यून पूर्व कोटी आयु शेष रहे सते ज लभ्य थाय छे. ते करतां वधारे आयुष्य बाकी रह्युं होय त्यारे संभवतु नथी, एम आवश्यकनी मलयगिरिकृत वृत्तिमां कह्युं छे. आ प्रमाणे त्रण मत छे, तेनुं तत्त्व (सार) सर्वज्ञ जाणे. असंख्य वर्षना आयुवाळा तिर्यंचोमां तो जन्मथी पण सम्यक्त्वनो संभव छे. ते संबंधी छठ्ठा कर्मग्रंथनी वृत्तिमां कह्युं छे के—क्षायिकसमकितदृष्टि संख्याता वर्षना आयुवाळा तिर्यंचोमां उपजता नथी; परंतु असंख्याता वर्षना आयुवाळामां ज उपजे छे.

सात अवस्थानुं काळमान सात सात दिवसनुं उपर जे कह्युं छे ते पहेला आराना प्रारंभमां समजवुं. त्यारपछी काळना क्रमथी (प्रतिपालना वधे त्यारे) कांइक कांइक वधतुं वधतुं समजवुं. (२१७) आ प्रमाणे श्री जंबूद्वीपनी वृत्तिमां कह्युं छे. त्यार-

स्तेषां युग्मिनां पूरितायुषः । कासजृंभादिभिर्मृत्वो–द्भवंति त्रिदशालये ॥ १९ ॥ एतद्भवायुषा तुल्या–युषो न्यूनायुषोऽथवा । ते देवाः स्युर्युग्मिभवा–युष्कान्न त्वधिकायुषः ॥ २० ॥ तिर्यंचोऽपि तदा तादृ–ग्गुणाः कालानुभावतः । समापितायुषो यांति युग्मिनस्त्रिदशालयं ॥ २१ ॥ तिर्यक्षु युग्मिनश्च स्युः संज्ञिपक्षिचतुष्पदाः । तेषामेव ह्यसंख्यायु–ष्टया स्वर्गतिनिश्चयात् ॥ २२ ॥ तथोक्तं–नरतिरि असंखजीवी सव्वे नियमेण जंति देवेसु । इति. अन्येषां तु न युग्मित्वं नापि स्वर्गतिनिश्चयः । पूर्वकोटिप्रांतमायु–स्तेषामुत्कर्षतोऽपि यत् ॥ २३ ॥ गब्भभुअजलयरोभय-गब्भोरगपुव्वकोडि उक्कोसा । तथा–संमुच्छिपणिंदिथलखयरो–रगभुअग जिट्ठठिइ कमसो । वाससहस्सा चुलसी बिसत्तरि तिपन्न बायाला ॥ १ ॥ इति वचनात्, पूर्वकोट्यायुष्काश्च न युग्मिनः संख्यातायुष्कत्वादिति संभावयामः, किंच–संख्येयायुःपंचेंद्रियाणां नपुंसकत्वेनैव युगलित्वं दुःश्रद्धानं, नपुंसकत्वमप्येषां दुर्वारं ' गब्भनरतिरिआ

पछी युग्मीओना मातापिता आयुष्य पूर्ण थये उधरस के बगासादिवडे मरण पामीने देव गतिमां उत्पन्न थाय छे. ते युगळिकपणाना आयुष्य समान अथवा तेथी ओछा आयुषे उत्पन्न थाय छे, तेथी वधारे आयुषे उत्पन्न थता नथी. (२१८–१९) ते काळे तिर्यंचो पण तेवा गुणवाळा (युगलिक) काळ स्वभावथी ज थाय छे अने तेओ पण मरण पामीने देवगतिमां जाय छे. तिर्यंचोमां संज्ञी एवा पक्षीओ अने चतुष्पदो युगलिक थाय छे. तेओ ज असंख्यात वर्षना आयुष्यवाळा होवाथी देवगतिमां जनारा निश्चये होय छे. कह्युं छे के–'मनुष्य ने तिर्यंच सर्वे असंख्य वर्षना आयुवाळा अवश्य देवगतिमां ज जाय छे.' ते सिवायना बीजा तिर्यंचो युगलिक होता नथी अने तेमनो स्वर्गे जवानो निश्चय पण होतो नथी केमके तेमनुं उत्कृष्टथी पण पूर्व कोटीनुं ज आयुष्य होय छे. (२०–२२) गर्भज भुजपरिसर्प, गर्भज उरपरिसर्प ने बंने प्रकारना जळचरो (समूर्छिम ने गर्भज) पूर्वकोटीना उत्कृष्ट आयुष्यवाळा होय छे. तथा संमूर्छिम तिर्यंच पंचेंद्रिय थळचर, खेचर, उरपरि ने भुजपरिनी उत्कृष्ट स्थिति अनुक्रमे ८४०००–७२०००–५३००० ने ४२००० वर्षनी होय छे. आ वचनथी पूर्व कोटी सुधीना आयुष्यवाळा युगलिक होता नथी कारण के तेमनुं आयुष्य संख्यातुं छे. आ प्रमाणे अमे संभावना करीए छीए. वळी संख्याता आयुष्यवाळा पंचेंद्रियोमां नपुंसकपणुं पण संभवे छे, तेथी तेमनामां युगलिकपणुं घटी शकतुं नथी अने तेमां नपुंसक-

संखाउआ तिवेआ ' इति वचनात्. कालसप्ततिकायां तु—अवि सव्वजीव-जुअला निअसमहीणाउ सुरगई तह य । थोवकसाया नवरं सव्वारयथलयराउमिणं ॥ १ ॥ मणुयाउसमगयाई चउरंसहयाद् जा य अट्ठंसा । गोमहिसुट्टखराइ पणंस साणाइ दसमंसा ॥ २ ॥ उरभुअग पुव्वकोडि-पलियासंखंस खयरपढमारे । इत्युक्तं, तदत्र तत्त्वं बहुश्रुतगम्यं.

मृतानां नास्ति संस्कारो युग्मिनामग्न्यभावतः । ततस्तेषां शरीराणि तदासन्नवनस्थिताः ॥ २४ ॥ भारंडाद्याः पक्षिणो द्राग् जगत्स्वाभाव्यतस्तथा । नीडकाष्ठवदादाय प्रक्षिपंत्यर्णवादिषु ॥ २५ ॥ तदुक्तं श्रीहैमऋषभचरित्रे—पुरा हि मृतमिथुन—शरीराणि महाखगाः । नीडकाष्ठमिवोत्पाट्य सद्यश्चिक्षिपुरम्बुधौ ॥ २६ ॥ अत्रांबुधेरुपलक्षणत्वाद्यथायोगं गंगाप्रभृतिनदीष्वपीति ज्ञेयं. ननूत्कर्षादपि धनुःपृथक्त्वांगैः पतत्रिभिः । तेषां त्रिक्रोशमानानां वहनं संभवेत्कथं ॥ २७ ॥ अत्रोच्यते—खगांगमाने यत्प्रोक्तं पृथक्त्वं धनुषां श्रुते । तत्रैकवचनं जातौ यथा व्रीहिः

-पणुं दुर्वार छे. कह्युं छे के—' गर्भज मनुष्य ने तिर्यंचो संख्याता आयुवाळा त्रणे वेदवाळा होय छे. ' कालसप्ततिकामां कह्युं छे के—' सर्व युगलिक जीवो पोतानी सरखा अथवा ओछा आयुष्यवाळा देव थाय छे. ते अल्पकषायी होय छे. सर्व आरामां थळचरोनुं आयुष्य आ प्रमाणे होय छे. मनुष्यना आयु समान (सरखुं) आयुष्य हाथीनुं होय छे. घोडा चोथा भागना, बकरा आठमा भागना, गाय, भैंश, उंट ने गधेडा पांचमा अंशना अने श्वान दशमा भागना आयुवाळा होय छे. उरपरि ने भुजपरिनुं क्रोड पूर्वनुं अने खेचरनुं पल्योपमना असंख्याता भागनुं आयु पहेले आरे होय छे. आ बाबतमां खरो खुलासो बहुश्रुतगम्य छे.

मरण पामेल युगलिकना शरीरनो अग्निनो अभाव होवाथी संस्कार करवामां आवतो नथी; तेमना शरीरो तेनी नजीक वनमां रहेला भारंड विगेरे पक्षीओ तरत ज जगत् स्वभावे माळाना काष्ठनी जेम उपाडीने समुद्रादिकमां नांखी दे छे. श्रीहेमचंद्राचार्यकृत ऋषभचरित्रमां कह्युं छे के—' पूर्वे मृतमिथुनना शरीरोने महान् शरीरवाळा पक्षीओ माळाना काष्ठनी जेम उपाडीने तत्काळ समुद्रमां नांखी देता हता. ' अहीं समुद्रना उपलक्षणथी गंगा विगेरे महा नदीओमां पण नांखे छे एम समजवुं. अहीं शिष्य प्रश्न करे छे के—' उत्कृष्ट पण धनुष्य पृथक्त्वना शरीरवाळा पक्षीओ त्रण गाउना प्रमाणवाळा युगलिक शरीरने शी रीते उपाडी शके ? ' तेनो उत्तर आपे छे के—' खेचर (पक्षी) ना शरीरना मानमां जे धनुष्य पृथक्त्व शास्त्रमां कहेल छे ते जातिमां एकवचन

सुभिक्षकृत् ॥ २८ ॥ ततो धनुःपृथक्त्वानां बहुत्वमपि संभवेत् । विहंगानां देहमानं तादृक्कालाद्यपेक्षया ॥ २९ ॥ ततश्च—भूयोधनुःपृथक्त्वांगैर्नरहस्त्याद्यपेक्षया । सुवहानि तदंगानि खगैराद्यारकादिषु ॥ ३० ॥ एवं च सूत्रे एकवचननिर्देशेऽपि बहुवचनव्याख्यानं श्रीमलयगिरिपादैरपि श्रीबृहत्संग्रहणीवृत्तौ—दसवाससहस्साइं समयाइ जाव सागरं ऊणं। दिवसमुहुत्तपुहुत्ता आहारुस्सास सेसाणं ॥ १ ॥ इत्यस्या गाथाया व्याख्याने कृतमस्तीति सर्वं सुस्थमित्याद्यधिकमुपाध्यायश्रीशांतिचंद्रीयजंबू० प्र० वृ० यद्वा—भारंडपक्षिणां लोक—ख्यातेभोद्वहनादिवत् । तेषां खगानां तद्युग्मि—देहोद्वहनसंभवः ॥ ३१ ॥

एवं स्वरूपमुक्तं य—त्प्रथमं प्रथमारके । क्रमात्ततो हीयमान—मवसेयं

समजवुं. जेम शाळ सुभिक्ष (सुकाळ) करे छे एम कहेल छे तेनी जेम एटले धनुष्य पृथक्त्व कहेवाथी घणा धनुष्य पृथक्त्व पण ते काळना पक्षीओना शरीरना मानने माटे समजवा, तेथी घणा धनुष्यवाळा शरीरथी पहेला आरा विगेरेमां मनुष्य ने हस्तिविगेरेना शरीर सारी रीते उपाडी शकाय एम समजवुं. आ रीते सूत्रमां एकवचनना निर्देशमां बहुवचननुं व्याख्यान श्रीमलयगिरि महाराजे पण श्रीबृहत्संग्रहणीनी वृत्तिमां कहेल छे. ते गाथा आ प्रमाणे—

दसवाससहस्साइं, समयाइ जाव सागरं ऊणं ।
दिवसमुहुत्तपुहुत्ता, आहारुस्साससेसाणं ॥

आ गाथानी व्याख्यामां उपर जणाव्या प्रमाणे घणा पृथकत्व एवो अर्थ करेल छे. एटले आ हकीकतनुं समाधान बराबर थइ शके छे. इत्यादि श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिनी उपाध्याय श्रीशांतिचंद्रगणि कृत वृत्तिमां पण कह्युं छे. अथवा—

भारंडपक्षिणां लोक—ख्यातेभोद्वहनादिवत् ।
तेषां खगानां तद्युग्मि—देहोद्वहनसंभवः ॥

भारंड पक्षीओ पोतानी पांख विगेरेथी सात हाथीओने उपाडे छे ए वात जेम लोकप्रसिद्ध छे तेनी जेम प्रथम आराना पक्षीओनुं ते युग्मिना देहने उपाडीने वहन करवानुं पण संभवे छे. (२३१)

पहेला आराना प्रारंभमां जे स्वरूप होय छे ते अमे उपर बतावेलुं छे, त्यारपछी क्रमे क्रमे प्रतिक्षण हीयमान (घटतुं घटतुं) समजवुं. वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, संस्थान, उच्चत्व,

प्रतिच्चणं ॥ ३२ ॥ वर्णगंधरसस्पर्श–संस्थानोच्चत्वपर्यवैः । तथा संहनना-युष्क–बलवीर्यादिपर्यवैः ॥ ३३ ॥ अनंतगुणहान्यानुसमयं हीयमानकैः । संपूर्णाः स्युः सागराणां चतस्रः कोटिकोटयः ॥ ३४ ॥ गुणशब्दश्चात्र भाग–पर्यायस्तेन हीयते । अंनतभागहान्यैव वर्णादिः पर्यवव्रजः ॥ ३५ ॥ इत्थमेवानुयोगद्वारवृत्तौ एकगुणकालकविचारे स्पष्टमाख्यातं. अनंतगुणा-नां हानि–रेवं तत्पुरुषोऽत्र सः । न त्वनंतगुणा हानि–रित्येवं कर्मधा-रयः ॥ ३६ ॥ अत्र स इति समासो वैयाकरणरूढेः, पदैकदेशे पद-समुदायोपचाराद्वेति. अनंतगुणहानिभावना चैवं–आद्यारकाद्यसमये वर्त्तते यो द्रुमादिषु । सर्वोत्कृष्टः शुक्लवर्णः केवलिप्रज्ञयास्य च ॥ ३७ ॥ छिद्यमानस्य भागाः स्यु–र्निर्विभागा अनंतशः । एते सर्वजीवराशेः स्युरनंतगुणाधिकाः ॥ ३८ ॥ तेषां मध्याद्राशिरेको–ऽनंतभागात्मकस्त्रु-टेत् । द्वितीये समये चैवं तृतीयादिक्षणेष्वपि ॥ ३९ ॥ इत्येवम-वसर्पिण्याः सर्वान्त्यसमयावधि । तत्र चायं निकृष्टः स्या–त्ताद्द-क्कालानुभावतः ॥ ४० ॥ उत्सर्पिण्याद्यसमये–ऽप्येवंरूपो भवत्ययं । ततो

संहनन, आयु तथा बळ वीर्य विगेरे पर्यवो वडे करीने अनंतगुण हानिए समये समये हीयमान थतां चार कोटाकोटी सागरोपमनो पहेलो आरो पूर्ण थाय छे. अहीं श्लोकमां अनंतगुण शब्द कहेल छे तेमां गुण शब्दे भागपर्याय समजवो. एटले वर्णादि पर्यवोनो समूह अनंतभागहानिए घटतो जाय छे. (२३२ थी २३५) आ ज हकीकत श्री अनुयोगद्वार सूत्रनी वृत्तिमां एक गुण काळा विगेरेना विचारमां स्पष्टपणे कहेल छे. अनंतगुणोनी हानि एवो तत्पुरुष समास अहीं करवो; अनंतगुणी हानि एवो कर्मधारय समास न करवो. अहीं स एटले समास वैयाकरणनी रूढिथी अथवा ' पदैकदेशे पदसमुदायोपचारात् ' अर्थात् पदना एक देशथी पदना समुदायनो उपचार करवो एम समजवुं.

अनंतगुणहानिनी भावना आ प्रमाणे–पहेला आराना पहेला समये वृक्षादिकने विषे जे सर्वोत्कृष्ट शुक्लवर्ण होय छे के जेना केवळीनी प्रज्ञाथी छिद्यमान कर्या सता अनंता निर्वि-भाग एवा भागो थाय छे के जे सर्व जीवराशिथी अनंतगुणा होय छे. तेमांथी एक राशि अनंत-भागरूप बीजे समये त्रुटे (घटे–ओछी थाय), त्रीजा विगेरे समयोमां पण ए प्रमाणे समजवुं. ए प्रमाणे अवसर्पिणीना सर्वान्त्य समय सुधी समजवुं एटले तेवा प्रकारना काळना अनु-भावथी छेल्ले समये तद्दन निकृष्ट होय छे. उत्सर्पिणीना आद्य समये एवा ज रूपना निकृष्ट

द्वितीयसमये यथाहानि विवर्द्धते ॥ ४१ ॥ अनंतगुणवृद्ध्यैवं वर्द्धमानः क्षणे क्षणे । उत्सर्पिण्यंत्यसमये सर्वोत्कृष्टः स जायते ॥ ४२ ॥

नन्वेवं शुक्लवर्णस्य मूलोच्छेदः प्रसज्यते। प्रत्यक्षबाधितं तच्च जात्यादौ शौक्ल्य दर्शनात् ॥ ४३ ॥ अत्रोच्यतेऽनंतकस्या–नंतभेदाः स्मृतास्ततः । प्रक्षीयमाणपर्याया–शानामल्पमनंतकं ॥४४॥ मूलपर्यायांशराशे–स्त्वनंतकं महत्तमं । ततोऽनुसमयेऽनंत–हान्याप्युच्छिद्यते न तत् ॥४५॥ यदि भव्येषु सिध्यत्सु संसारेऽस्मिन् प्रतिक्षणं । अनंतेनापि कालेन भव्योच्छेदो न जायते ॥ ४६ ॥ तदेषां सर्वजीवेभ्यो–ऽनंतघ्नानां कथं भवेत् । उत्कृष्टवर्णभागाना–मुच्छेदोऽसंख्यकालतः ॥ ४७ ॥ ननु भव्यास्तु संख्येया एव सिद्ध्यंत्यनुक्षणं । एते त्वनंता हीयंते तत्साम्यमनयोः कथं ॥ ४८ ॥ सत्यं यद्यपि संख्येया भव्याः सिध्यंत्यनुक्षणं । तथापि तत्सिद्धिकालो–ऽनंतकालात्मको भवेत् ॥ ४९ ॥ हीयंतेऽनुक्षणं वर्णा–शास्तु यद्यप्य-

भाव होय छे. त्यारपछी बीजे समये–प्रथम जेम हानि थइ हती तेम क्षणे क्षणे अनंतगुणवृद्धिवडे वधे छे, एटले उत्सर्पिणीना अंत्य समये सर्वोत्कृष्ट भाव उत्पन्न थाय छे (२३४ थी २४०) (अहीं पण अनंतभागवृद्धि समजवी.)

अहीं शिष्य शंका करे छे के–" ए प्रमाणे समये समये हानि थवाथी तो शुक्लवर्णनो मूळथी उच्छेद थइ जशे, अने तेम कहेवाथी जाति विगेरेमां शुक्लपणुं जोवामां आवतुं होवाथी प्रत्यक्ष बाधा आवशे" तेने उत्तर आपे छे के–" शास्त्रमां अनंतना अनंत भेद कहेला छे तेथी क्षीयमान पर्यायना अंशोनुं अनंतक नानुं छे अने मूळ पर्यायमां रहेल अंशराशीनुं अनंतक मोटुं छे; तेथी प्रत्येक समये अनंतांशनी हानि थता छतां पण तेनो सर्वथा उच्छेद थतो नथी ' तेनी उपर दृष्टांत कहे छे के–' आ संसारमांथी प्रत्येक क्षणे भव्यजीवो सिद्धावस्था पामे छे छतां अनंतकाळे पण भव्यजीवोनो उच्छेद (समाप्ति) थतो नथी तो आ पर्यवांश तो सर्व जीवो करतां अनंतगुणा छे तेनो एटले उत्कृष्ट वर्णविभागोनो उच्छेद असंख्य काळे केम थाय? न ज थाय.' (४७) वळी शिष्य बीजो प्रश्न करे छे के–' भव्यो तो प्रत्येक क्षणे संख्याता सिद्धावस्था पामे छे अने आमांथी तो समये समये अनंता पर्यवोनी हानि थाय छे तो तमे कह्युं ते दृष्टांत केम घटी शके?' एने उत्तर आपे छे के–' तारुं कहेवुं साचुं छे जो के भव्यो

नंतशः । तथापि कालोऽत्रैकाव–सर्पिण्यात्मक एव हि ॥ ५० ॥ तद्दार्ष्टां-तिकदृष्टांत–वैषम्यं चिंत्यमत्र न । एवं पीतादिवर्णेषु गंधादिष्वपि भावना ॥ ५१ ॥ एवं च द्रव्याणामानंत्यात्प्रतिद्रव्यमेकैकांशहानिरिति यत्केचि-दनंतगुणहानिं समर्थयंति तदपास्तं द्रष्टव्यं.

ननूक्ता क्षीयमाणा ये देहोच्चत्वस्य पर्यवाः । एकद्व्यादिखप्रतरा–वगाहन्यूनतात्मकाः ॥ ५२ ॥ असंख्या एव ते यस्मा–त्त्रिक्रोशवपुषापि हि । वगाह्यंते खप्रतरा असंख्या एव नाधिकाः ॥ ५३ ॥ अनं-तगुणहानिस्त–त्कथमेतेषु संभवेत् । अत्र ब्रूमः समाधानं यदि शुश्रू-ष्यते त्वया ॥ ५४ ॥ देहस्थानां खप्रतरा–वगाहकारिणामिह । पुद्गला-नामनंतानां हानिर्ज्ञेयात्र धीधनैः ॥ ५५ ॥ तथोक्तं जंबूद्वीपप्रज्ञ-प्तिवृत्तौ–प्रथमारके प्रथमसमयोत्पन्नानामुत्कृष्टं शरीरोच्चत्वं भवति, ततो द्वितीयादिसमयोत्पन्नानां यावतामेकनभःप्रतरावगाहित्वलक्षणपर्यवाणां

प्रत्येक क्षणे संख्याता ज सिद्धिपदने पामे छे परंतु तेनो सिद्धिगमनकाळ अनंतो कह्यो छे. अने प्रत्येक क्षणे वर्णविभागो अनंता घटे छे तथापि अहीं एक अवसर्पिणीरूप काळ कह्यो छे ते असंख्य समयात्मक ज छे, तेथी तारे दृष्टांत ने दार्ष्टांतिकनी विषमता छे एम न समजवुं ' शुक्लवर्ण प्रमाणे पीतादिवर्ण माटे तेम ज गंधादि माटे पण भावना करवी (२४८ थी ५१) आ प्रमाणे कहेवावडे द्रव्योनुं अनंतपणुं होवाथी प्रत्येक द्रव्यमां एकेक अंशनी हानि थाय छे एम मानीने केटलाक अनंतगुणहानिनी समर्थना करे छे तेना मतने अपास्त कर्यो छे एम समजवुं.

शिष्य प्रश्न करे छे के–देह उच्चत्वना पर्यवो एक बे विगेरे आकाश प्रतररूप अव-गाहनामां न्यून थवापणुं समये समये कहेल छे तो ते न्यून थनारा प्रतरो असंख्य ज छे कारण के त्रण गाउना शरीरमां पण आकाश प्रतरो असंख्य ज होय छे वधारे होता नथी. तो तेमां अनंतगुणहानि शीरीते संभवे ? एना समाधानमां कहे छे के–(दरेक) आकाश प्रतरमां अवगाहना करीने रहेला देहमां अनंता पुद्गळो होय छे, तेथी बुद्धि-मानोए तेमांना अनंता पुद्गळोनी हानि समजवी (आखा प्रतरनी समवी नहीं. ते विषे श्री जंबुद्वीपप्रज्ञप्तिनी वृत्तिमां कह्युं छे के–पहेला आरामां प्रथम समय उत्पन्न युगलिकना शरीरनुं ज उत्कृष्ट उच्चत्व होय छे. त्यार पछी बीजे समये उत्पन्न थयेलाना शरीरनी

हानिस्तावत्पुद्गलानंतकं हीयमानं द्रष्टव्यं. आधारहानावाधेयहानेरावश्य-कत्वादिति, तेनोच्चत्वपर्यायाणामनंतत्वं सिद्धं, नभःप्रतरावगाहस्य पुद्गलो-पचयसाध्यत्वादिति.

पर्याया आयुषोऽप्येक–द्व्यादिक्षणोनतात्मकाः । असंख्येया एव तेऽपि स्युस्त्रिपल्यायुषोऽपि हि ॥५४॥ किं त्वेकादिक्षणोनेषु स्थितिस्थानेषु तेष्विव्ह । प्रत्येकं तद्धेतुकर्म–प्रदेशाः स्युरनंतशः ॥ ५५ ॥ तेप्यायुःपर्यवा एव हेतौ कार्योपचारतः । एवं भाव्यायुषोऽनंतगुणहानिः प्रतिक्षणं ॥ ५६ ॥ अत एव श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रेऽभिहितं–' अणंतेहिं उच्चत्तपज्जवेहिं अणं-तेहिं आउअपज्जवेहिं अणंतगुणपरिहाणीए परिहायमाणे २ ' इति. एवं चाद्यारकस्यादौ त्रिक्रोशप्रमितं वपुः । त्रिपल्यप्रमितं चायु–र्युग्मिनां प्राग् यदीरितं ॥ ५७ ॥ तद्धीयमानं क्रमेण–द्यारकांते तु युग्मिनां । स्याद् द्विक्रोशोच्चमंगं द्वि–पल्यमानं च जीवितं ॥ ५८ ॥

एवं दशस्वपि क्षेत्रे–ष्वरके प्रथमे गते । द्वैतीयीकोऽरकस्तेषु सुष-

---

उंचाइमां एक आकाशप्रदेशावगाही प्रतरमां अनंता पर्यवो छे. तेमांथी अनंता भागरूप अनंता पर्यवोनी हानि समजवी. एम प्रत्येक समय माटे समजवुं. आधारनी हानिमां आधेयनी हानि आवश्यक ज छे, तेथी उच्चत्व पर्यायनुं अनंतत्व सिद्ध थाय छे कारण के ते आकाशप्रतररूप अवगाहना पुद्गळोना उपचयथी साध्य छे. इति '

आयुष्यमां पण एक बे समयऊणा असंख्य पर्यायो त्रण पल्योपमना आयुष्यमां होय छे एटले ते पण क्षणे क्षणे ऊन थाय छे, एटलुं ज नहीं पण एकादिक्षण ऊन स्थिति-स्थानने विषे पण तेना हेतुरूप कर्मप्रदेशो अनंता होय छे तेने पण कारणमां कार्यनो उपचार करीने आयुना पर्यवो समजवा. ए रीते आयुष्यमां पण प्रतिक्षणे अनंतगुणहानि समजी लेवी. (२५६) आ कारणने अनुसरीने ज श्री जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्रमां कह्युं छे के अनंता उच्चत्व पर्यायो वडे अने अनंता आयु संबंधी पर्यायो वडे अनंतगुणहानिए हीन थतो जाय छे. ' आ प्रमाणे पहेला आराना प्रारंभमां त्रण गाउनुं शरीर अने त्रण पल्योपमनुं आयुष्य जे पूर्वे कहेल छे ते अनुक्रमे समये समये हानि थतां पहेला आराना अंते युग्मि-ओनुं शरीर बे गाउ उंचुं अने आयु बे पल्योपमनुं होय छे एम समजवुं. (२५८)

आ प्रमाणे पांच भरत ने पांच ऐरवतरूप दशे क्षेत्रोमां पहेलो आरो पूरो थये बीजो

क्रियंतेंशास्त्रयस्तस्य प्रथमो मध्यमोंतिमः ॥ ७९ ॥ एकैकस्य विभागस्य मानमेवं भवेदिह । षट्षष्टिकोटिलक्षाणि तावत्कोटिसहस्रकाः ॥ ८० ॥ षट् शतानि च कोटीनां षट्षष्टिः कोटयोऽपि च । लक्षाः षट्षष्टिरब्धीनां षट्षष्टिश्च सहस्रकाः ॥ ८१ ॥ षट्शती च सषट्षष्टि-र्द्वौ तृतीयलवौ तथा । एकस्य वार्द्धेरित्येवं भाव्यं गणितकोविदैः ॥ ८२ ॥ ६६६६६६६६६६६६६६६६—⅔ इत्यंकस्थापना. तृतीयभागयोरस्या-रकस्याद्यद्वितीययोः । कल्पवृक्षादिकं सर्वं पूर्वोक्तमनुवर्त्तते ॥ ८३ ॥ एकक्रोशोच्छ्रिता आद्या-वेकपल्योपमायुषः । जनाश्चतुःषष्टिपृष्ठ-करंडकयुतांगकाः ॥ ८४ ॥ अहोरात्रानिहैकोना-शीतिं रक्षंति तेंगजान् । अवस्थाः प्राग्वदत्रापि सप्त तन्मानमुच्यते ॥ ८५ ॥ युग्मं ॥ एकादश दिनाः सप्तदश घट्यः पलाष्टकं । चतुस्त्रिंशदक्षराणि किंचित्समधिकानि च ॥ ८६ ॥ आद्यसंहननाः प्राग्व-दाद्यसंस्थानशालिनः । कासजृंभादिभिर्मृत्वै-तेऽपि यांति ध्रुवं दिवं ॥ ८७ ॥

तृतीयेऽस्य त्रिभागे तु समतिक्रामति क्रमात् । षोढा संहननानि स्युः संस्थानान्यपि देहिनां ॥ ८८ ॥ धनुःशतानि भूयांसि प्रथमं तूच्छ्रिता

त्रण भाग करवा. १ प्रथम २ मध्यम ने ३ अंतिम. ते एकेक विभागनुं प्रमाण ६६ क्रोड, ६६ लाख, ६६ हजार ने ६६६ एटला क्रोड, ६६ लाख, ६६ हजार छसो ने छासठ अने ⅔ भाग एटलुं थाय छे. एम गणितशास्त्रना जाणनाराओ कहे छे. तेनी अंक स्थापना आ प्रमाणे ६६६६६६६६६६६६६६६६ ⅔ समजवी. आ आराना प्रथमना बे भागमां कल्पवृक्षादि सर्वे पूर्वे कह्या प्रमाणे होय छे. (२७८–२८३)

आ त्रीजा आराना प्रारंभमां एक गाउना शरीरवाळा ने एक पल्योपमना आयुष्यवाळा युग्मिओ होय छे अने (६४) पृष्ठकरंडकवाळा होय छे. बाळकोनुं ७९ दिवस प्रतिपालन करे छे. तेनी अवस्था अहीं पण पूर्वे कह्या प्रमाणे सात प्रकारनी होय छे. ७९ दिवसना सात भाग करीए तो एकेके अवस्थानुं प्रमाण ११ दिवस, १७ घडी, ८ पळ, ने ३४ अक्षरथी कांइक अधिक आवे छे. ते युग्मिओ प्रथमनी जेम पहेला संघयणवाळा, पहेला संस्थानवाळा अने कास के बगासावडे मृत्यु पामनारा तेम ज स्वर्गे जनारा होय छे. (२८४–८७)

आ आरानो छेलो त्रीजो भाग शरु थाय त्यारथी अनुक्रमे ते बधी बाबतोमां घणो घटाडो थाय छे. संहननो छए प्रकारना होय छे अने संस्थानो पण छए प्रकारना होय छे. ते त्रीजा

जनाः। असंख्याब्दसहस्रायु-र्भृतः स्वर्गतिगामिनः ॥ ८९ ॥ कालक्रमेण पर्यंते हीयमानोच्छ्रयायुषः। अल्पांतराशनाः प्रेम-रागद्वेषस्मयाधिकाः ॥ ९० ॥ प्राक्तनापेक्षया भूरि-कालपालितबालकाः। यथार्हं यांति गतिषु चतसृष्वपि ते मृताः ॥ ९१ ॥ संख्येयाब्दसहस्राणि जघन्यं चायुरंगिनां। उत्कृष्टमत्रासंख्याब्द-सहस्रप्रमितं मतं ॥ ९२ ॥ आयुर्देहो-च्छ्रयाहारां-तरस्य प्राग् यथाभवत्। नियता हानिरत्रांशे चैषा न नियता तथा ॥ ९३ ॥ यथात्रारकयोराद्य-द्वितीययोः क्रमात् ह्रसेत्। क्रोशो दिनं च पल्यं चोच्छ्रयाहारांतरायुषां ॥ ९४ ॥ द्वयोस्त्रिभागयोस्तद्व-द्धीयते तच्छनैः शनैः। तृतीये तु त्रिभागेस्मि-न्न नैयत्येन हीयते ॥ ९५ ॥ इदमेवारकस्यास्य त्र्यंशक्लृप्तौ प्रयोजनं। पूर्वैः संभावितं भाग-श्चायमस्य पृथक् ततः ॥ ९६ ॥ कल्पवृक्षा अपि तदा स्युः क्रमाद् दृढमुष्टयः। लोभार्त्ता इव मूर्खाणां वार्त्तेव विरसा क्षितिः ॥९७॥ ततस्ते सततं वृक्ष-फलौषध्यादिभोजिनः। तत्संग्रहममत्वाभि-निविष्टा विविदंत्यपि ॥ ९८ ॥

भागना प्रारंभमां घणा सेंकडो धनुष्यप्रमाण शरीर ने असंख्य हजार वर्षोनुं आयुष्य होय छे, तेम ज मरण पामीने स्वर्गे जाय छे. काळक्रमे घटती घटती शरीरनी उंचाइ ने आयुवाळा होय छे, अल्प अंतरे अशननी इच्छावाळा होय छे अने प्रेम, राग, द्वेष तथा गर्व वधारे थता जाय छे. प्राक्तननी अपेक्षाए घणा वखत सुधी बाळकोने पाळनारा होय छे अने मरण पामीने यथायोग्य चारे गतिमां जाय छे. जघन्य आयुष्य संख्याता हजार वर्षनुं अने उत्कृष्टुं असंख्याता हजार वर्षनुं होय छे. आ त्रीजा भागमां आयु, देहनी उंचाइ, आहारनुं अंतर प्रथम करतां अवश्य हीयमान होय छे पण ते नियत होतुं नथी. जेम पहेला-बीजा आरामां शरीरप्रमाण-एक कोश, आयु एक पल्योपम अने आहारांतर एक दिवस क्रमशः घटतुं घटतुं होय छे. तेम आ आराना पण प्रथमना बे भागमां ते ज प्रमाणे क्रमशः घटतुं घटतुं होय छे. त्रीजा त्रिभागमां तेवो क्रम बराबर होतो नथी; अनियतपणुं होय छे. आ आराना त्रण विभाग पाडवानुं कारण ते ज छे, एम पूर्वाचार्योए मान्युं छे अने तेथी करीने ज आ त्रीजा आरानो आ त्रीजो विभाग पृथक् कर्यो छे. कल्पवृक्षो पण दृढ मुष्टिवाळा एटले लोभार्त्तनी जेम ओछुं आपनारा होय छे अने मूर्खनी वार्त्तानी जेम पृथ्वी पण ओछा रसवाळी (विरस) थती जाय छे, तेथी ते वखतना युग्मिओ निरंतर वृक्षना फळ, फुल अने औषधि (धान्य) विगेरे खानारा अने ते ते वस्तुनो संग्रह करवामां अने ममता करवामां अभिनिविष्ट (घेराएला) होता सता परस्पर विवाद पण करे छे. (२८४-२९८)

पल्याष्टमांशे शेषे स्यु–रस्मिन् कुलकरा वराः । प्रकाशांशा इवासन्नो–दयाद्यजिनभास्वतः ॥ ९९ ॥ रागद्वेषाभिवृद्ध्यात्र नीतिमार्गातिपातिनां । शिक्षणाय कुलकर–कृताः स्युर्दंडनीतयः ॥ ३०० ॥ सैकोननवतिपक्षे शेषेऽस्य त्रुटितांगके । उदेत्यादिमतीर्थेशो जगच्चक्षुरिवोत्तमः ॥ १ ॥ लोकानामुपकाराय व्यवहारं दिशत्यसौ । अज्ञानतिमिरच्छेदी सदसन्मार्गदर्शकः ॥ २ ॥ क्रमाच्च मध्यमरस–त्वेन कालस्य भूरुहां । मिथः संघर्षणादग्निः प्रादुर्भवति भूतले ॥ ३ ॥ तदा मंदोदराग्नीनां नैरस्याद्भूरिभोजिनां । रुजत्यजीर्णे जठर–मामौषध्यादिभोजने ॥ ४ ॥ तेषामनुग्रहायार्हन् मृदमत्राणि शिक्षयेत् । अन्नपाकजलाधाना–द्युचितानि यथायथं ॥ ५ ॥ शिक्षितं प्रथमं येषां शिल्पमेतद्युगादिना । तेषां वंशः कुंभकार इति नाम्ना प्रवर्त्तते ॥ ६ ॥ एवं वक्ष्यमाणशिल्प–कर्मणामनुसारतः । ते ते वंशाः प्रवर्त्तेरं–श्चित्रकृन्नापितादयः ॥ ७ ॥ अधुनापि वदंत्येवं कुंभकारादयो जनाः । वयमस्मिन्नियुक्ताः स्मो जगदीशेन कर्मणि ॥ ८ ॥ लोहशिल्पं

त्रीजो आरो पल्योपमना आठमा अंश जेटलो बाकी रहे त्यारे श्रेष्ठ एवा कुलकरो प्रथम तीर्थंकररूप सूर्य नजीकमां उगनार होवाथी जाणे तेना प्रकाशना अंशो होय तेवा थाय छे. ए वखते रागद्वेषनी वृद्धि थवाथी नीतिमार्गने उल्लंघन करनारा युगलिकने शिक्षण आपवा सारु ते कुलकरो दंडनीतिनी योजना करे छे. त्रीजा आराना एक त्रुटितांग ने त्रण वर्ष साडाआठ मास (८९ पक्ष) बाकी रहे त्यारे जगच्चक्षु जेवा उत्तम प्रथम तीर्थंकर उदय पामे छे (माताना गर्भमां आवे छे.) (२९९–३०१) लोकोना उपकारने माटे अज्ञानरूप तिमिरने दूर करनार अने सदसत् मार्गने बतावनार ते तीर्थंकर व्यवहार शिखवे छे. अनुक्रमे काळना प्रभावे जमीनना मध्यम रसपणाथी वृक्षोना अंदरअंदर घसावावडे पृथ्वी उपर अग्नि प्रगट थाय छे. ते वखते उदराग्निनी मंदताथी, नीरसपणाने लीधे घणुं भोजन करवुं पडवाथी अने काचुं भोजन करवाथी ते न पचवाने लीधे जठरमां व्याधि थवा मांडे छे. एटले तेमना अनुग्रहने माटे अरिहंत अन्न पकाववा योग्य तेम ज जळ भरी राखवा योग्य माटीना पात्र बनाववानुं शिखवे छे. युगादि जिने ए पहेलुं शिल्प जेने शिखव्युं तेना वंशवाळा कुंभकार तरीके ओळखाय छे. ए प्रमाणे आगळ कहेवाशे एवा शिल्पो अने कर्मोने अनुसारे चित्रकार, नापित विगेरेना वंशो पण प्रवर्ते छे. अत्यारे पण कुंभकार विगेरे जनो एम बोले छे के अमने जगदीश्वरे ज आ काममां नियुक्त कर्या छे. हवे लोह-

विना वेश्म–वाहनास्त्राद्यसंभवः । ततः प्रभुर्लोहकार–शिल्पं लोके प्रवर्त्तयेत् ॥ ९ ॥ विना चित्रं न शोभेत वेश्मशय्यासनादिकं । ततः प्रभुश्चित्रकार–शिल्पं लोके प्रदर्शयेत् ॥ १० ॥ कल्पद्रुदत्तवस्त्राणा–मभावेन गतांबराः । जनाः स्युर्दुःखिनस्तंतु–वायशिल्पं ततो दिशेत् ॥ ११ ॥ असंस्कृतश्मश्रुनखाः स्युर्भीष्माकृतयो जनाः । ततो नापितशिल्पं त–त्कृपया दर्शयेत्प्रभुः ॥ १२ ॥ पंचैवं मूलशिल्पानि शंसति त्रिजगत्प्रभुः । एकैकस्य ततो भेदाः प्रवर्त्तंते च विंशतिः ॥ १३ ॥ एवं प्रवर्त्तते शिल्प–शतं गुरूपदेशजं । कर्माणि तु प्रवर्त्तंते कृष्यादीनि स्वयं ततः ॥ १४ ॥ एवं च–द्वासप्तति कलाः पुंसां चतुष्षष्टिं च योषितां । तथा शिल्पशतं लोकहितायार्हन् समादिशेत् ॥ १५ ॥ शस्त्रे शास्त्रे वणिज्यायां जनानां भोजनादिषु । चातुर्यं दर्शयत्येष पितेव तनुजन्मनां ॥ १६ ॥ तादृक्कालानुभावाच्च क्रमेण त्वधिकाधिकं । कलाशिल्पेषु लोकानां चातुर्यं परिवर्द्धते ॥१७॥ ततो भगवतस्तस्य पाणिग्रहमहोत्सवं । कुर्याद्राज्याभिषेकं च स्वयमा-

---

शिल्प विना घर, वाहन, अस्त्रो विगेरेनो असंभव होवाथी प्रभु लोहकारनुं शिल्प लोकमां प्रवर्तावे छे. चित्र विना घर, शय्या, आसनादिक शोभे नहीं तेथी प्रभु चित्रकारनुं शिल्प प्रवर्तावे छे. कल्पवृक्षोथी मळता वस्त्रोनो अभाव थवाथी वस्त्र विना मनुष्यो दुःखी थता होवाथी प्रभु तंतुवाय (वणकर)नुं शिल्प प्रवर्तावे छे. दाढी मुछ विगेरेना वाळ तेम ज नख वधवाथी लोको भयंकर आकृतिवाळा देखावा लाग्या तेथी तेनी कृपावडे प्रभु नापितनुं शिल्प प्रवर्तावे छे. आ प्रमाणे पांच मूळ शिल्पोने प्रभु बतावे छे, त्यारपछी ते एक एक शिल्पना वीश वीश भेदो प्रवर्ते छे. ए प्रमाणे गुरुना उपदेशथी सो प्रकारना शिल्पो प्रवर्ते छे अने त्यारपछी खेती विगेरे जे कर्मो कहेवाय छे ते पोतानी मेळे प्रवर्ते छे. (२०२–२१६)

ए ज प्रमाणे पुरुषनी ७२ कळा अने स्त्रीनी ६४ कळा तेम ज १०० शिल्पो लोकना हित माटे प्रभु उपदेशे छे. वळी शस्त्रमां, शास्त्रमां, वेपारमां, तेम ज भोजनादिकने विषे मनुष्योना हितने माटे प्रभु पुत्रोने पितानी जेम चातुर्य शीखवे छे. पछी तेवा प्रकारना काळानुभावथी अनुक्रमे कळाशिल्पादिकमां लोकोनुं चातुर्य दिनपरदिन अधिक अधिक वधतुं जाय छे. त्यारपछी इंद्र पोते आवीने ते भगवंतनो पाणिग्रहण महोत्सव अने राज्याभिषेक

गत्य वासवः ॥ १८ ॥ नवयोजनविस्तिर्णां द्वादशयोजनायतां । शक्रः सुवर्णप्राकारां माणिक्यकपिशिर्षकां ॥ १९ ॥ धनधान्यसमाकीर्णा—तुंगप्रासादबंधुरां ॥ निर्माय राजधानीं द्राक् जगन्नाथाय ढौकयेत् ॥ २० ॥ ॥युग्मं॥ ततोऽसौ प्रथमो राजा राजनीतिं समर्थयेत् । तथा वर्णविभागांश्च चतुरश्चतुराशयः ॥ २१ ॥ गोतुरंगगजादीनां ग्रहं दमनशिक्षणे । युद्धशस्त्रप्रयोगादीन् नीतीः सामादिका अपि ॥ २२ ॥युग्मं॥ काश्चित्पुनः समुत्पन्ने प्रथमे चक्रवर्त्तिनि । निधेर्माणवकाद्दंड—नीतयः स्युः परिस्फुटाः ॥ २३ ॥ भगिनीपरिभोगादीन् व्यवहारांश्च युग्मिनां । निवर्त्तयन्सोऽन्यगोत्र—जातोद्वाहादि दर्शयेत् ॥ २४ ॥ दशानामपि वर्षाणां याम्यस्यार्द्धस्य मध्यमे । खंडे प्रथमतीर्थेशो व्यवस्थामिति दर्शयेत् ॥ २५ ॥ पंचस्वन्येषु खंडेषु तां जातिस्मरणादिभाक् । क्षेत्राधिष्ठाता देवो वा लोकनीतिं प्रवर्त्तयेत् ॥ २६ ॥ काश्चित्तु कालमाहात्म्या—त्प्रवर्त्तंते स्वयं ततः । संप्रत्यपि युवा वेत्ति यथा बह्वप्यशिक्षितं ॥ २७ ॥

करे छे. (३१५–३१८) पछी नव योजन विस्तृत, बार योजन लांबी, सोनाना गढ अने माणिक्यना कांगरावाळी, धनधान्यथी परिपूर्ण, उंचा उंचा प्रासादोथी व्याप्त एवी राजधानी (अयोध्या) नीपजावीने इंद्र प्रभुने अर्पण करे छे (३१९–२०) एटले ऋषभदेव प्रथम राजा थाय छे. राजनीति प्रवर्तावे छे अने चतुर आशयवाळा तेओ चार वर्णोना विभाग पाडे छे. गाय, घोडा, हाथी विगेरेनो संग्रह करवामां आवे छे. तेमनुं दमन ने शिक्षण तथा युद्ध, शस्त्रना प्रयोग विगेरे अने सामादिक चार प्रकारनी नीति शीखवे छे. (३२१–२२) पहेला चक्रवर्ती प्रगट थतां माणवक नामना निधानमांथी बीजी पण केटलीक दंडनीतिओ परिस्फुट थाय छे. (३२३)

पछी युगलिकनो जे पोतानी साथे जन्मेली बहेननी साथे परिभोगरूप व्यवहार हतो तेने अळसावीने अन्य गोत्रमां उत्पन्न थयेली कन्यासाथे विवाह करवानुं बतावे छे. पांच भरत ने पांच ऐरवतरूप दशे क्षेत्रमां दक्षिणबाजुना अर्धभागना मध्यखंडमां आ प्रमाणे प्रथम तीर्थंकर बधी व्यवस्था बतावे छे. बाकीना ते दशे क्षेत्रना पांच खंडोमां जातिस्मरणादिकथी मनुष्यो अथवा ते क्षेत्रना अधिष्ठाता देवो लोकनीति प्रवर्तावे छे. त्यारपछी केटलीक नीति तो काळना माहात्म्यथी पोतानी मेळे ज प्रवर्ते छे, जेम अत्यारे पण केटलाक युवानो घणी बाबतो वगर शिखव्ये पण समजी जाय छे तेम (३२४—२७)

तथाहुरस्मद्गुरुपादसमुच्चिते श्रीहीरप्रश्नोत्तरे श्रीजगद्गुरवः—अत्रोत्तरभरतार्द्धेऽपि जातिस्मरणादिभाक् क्षेत्राधिष्ठायकदेवो वा कश्चित्तत्र नीतिप्रणेता, कालानुभावतः स्वतो वा कियन्नैपुण्यं जायते इति.

जायतेऽस्मिन्नवसरे प्रथमश्चक्रवर्त्यपि। न्यायमार्गं दृढीकुर्या–त्स च षट्खंडसाधकः ॥ २८ ॥ एवं कृत्वा स भगवान् व्यवस्थासुस्थितं जगत्। वितीर्य वार्षिकं दानं चारित्रं प्रतिपद्यते ॥ २९ ॥ स प्राप्य केवलज्ञानं देवमानवपर्षदि। दिशति द्विविधं धर्मं यतिश्राद्धजनोचितं ॥ ३० ॥ ततो गणधरान् गच्छां–स्तथा संघं चतुर्विधं। संस्थाप्य द्वादशांगीं चार्थाप्य तीर्थं प्रवर्त्तयेत् ॥ ३१ ॥ एवं कृत्वा मोक्षमार्गं वहमानं स सिद्ध्यति। एकोननवतिपक्षा–वशेषेऽरे तृतीयके ॥ ३२ ॥

एकोननवतिपक्षैः समाप्तेऽरे तृतीयके। दुष्षमसुषमाभिख्यो–ऽरकस्तुर्यः प्रवर्त्तते ॥ ३३ ॥ एतस्मिंश्चारके भूमि–र्नानावृक्षाद्यलंकृता। स्यात्कृत्रिमतृणाढ्यापि कृष्यादीनां प्रवृत्तितः ॥ ३४ ॥ कल्पवृक्षादिरहितं स्वरूपं पूर्ववर्णितं। अत्रापि स्यादनंतघ्न–हीनवर्णादिपर्ययं ॥ ३५ ॥

अमारा गुरुमहाराजना कहेला हीरप्रश्नोत्तरमां ते जगद्गुरू कहे छे के–" अहीं उत्तर भरतार्धमां पण जातिस्मरणादिवाळो मनुष्य अथवा क्षेत्रनो अधिष्ठायक देव नीतिनो प्रणेता थाय छे. काळानुभावथी पोतानी मेळे पण केटलीक निपुणता प्राप्त थाय छे. "

ते अवसरे प्रथम चक्रवर्त्ती पण उत्पन्न थाय छे. छ खंडना साधनार एवा ते न्यायमार्गने दृढ करे छे. (२८) आ प्रमाणे भगवान् जगतने व्यवस्थामां सुस्थित बनावीने पछी वार्षिकदान आपी चारित्र अंगीकार करे छे. ते प्रभु केवळज्ञान पामीने देव अने मनुष्योनी पर्षदामां यति अने श्राद्धजनोने उचित एवो बे प्रकारनो धर्म उपदेशे छे. पछी गणधरोनी, गच्छनी तथा चतुर्विध संघनी स्थापना करीने द्वादशांगी अर्थथी प्ररूपी तीर्थ प्रवर्तावे छे. ए प्रमाणे मोक्षमार्गने वहेतो करीने पछी प्रभु पोते सिद्धिपदने पामे छे. ते वखते त्रीजा आराना ८९ पक्ष बाकी रहेला होय छे. (२९- ३२)

बाकी रहेला ८९ पक्ष व्यतीत थये त्रीजो आरो पुरो थाय छे अने चोथो दुःषमसुषमा नामनो आरो प्रवर्ते छे. ए आरामां भूमि नाना प्रकारना वृक्षोथी अलंकृत होय छे. तथा खेती विगेरेनी प्रवृत्ति थवाथी कृत्रिम तृण (वनस्पति)थी पण व्याप्त होय छे. पूर्वे वर्णवेलुं स्वरूप कल्पवृक्षादि विनानुं आ काळे पण होय छे, परंतु ते अनं-

अत्र चादौ मनुष्याः स्यु–र्धनुःपंचशतोच्छ्रिताः । पूर्वकोट्यंतर्मुहूर्त्तो–त्कृष्टाल्पिष्ठायुषस्तथा ॥ ३६ ॥ अग्निसंपक्वनानान्न–घृतदुग्धादिभोजिनः । नित्यमाहारार्थिनः स्यु–रेकत्राप्यह्नि चासकृत् ॥ ३७ ॥ पुत्रपौत्रदुहित्रादि–परिवारा महर्द्धयः । प्रमदापत्यमित्रादि–स्नेहासक्ता जितशत्रवः ॥ ३८ ॥ स्तन्यपानादिभिर्भूयः–कालपालितबालकाः । वर्षक्रमाद्व्यक्तवाक्य–गति-चातुर्ययौवनाः ॥ ३९ ॥ राजानो मंत्रिसामंत–श्रेष्ठिसेनापतीश्वराः । केचित्केचिच्चाल्पधनाः प्रेष्याः कर्मकृतोऽपि च ॥ ४० ॥ एवं प्राक्कृत-कर्मानु –सारेण प्राप्तवैभवाः । केचिन्मिथ्यादृशः केचि–द्भद्रका मिश्रदृष्टयः ॥ ४१ ॥ केचित्प्रपन्नसम्यक्त्वा देशचारित्रिणः परे । केचिच्चारित्रिणो यांति पंचस्वपि गतिष्वमी ॥ ४२ ॥

मेघाश्चतुर्विधास्ते च पुष्करावर्त्तसंज्ञकः । तथा प्रद्युम्नजीमूतौ झिमि-काख्यस्तुरीयकः ॥ ४३ ॥ तत्राद्यस्यैकया वृष्ट्या सुस्निग्धा रसभाविता ।

गुणहीनवर्णादि पर्यववाळुं होय छे. आ आराना प्रारंभमां मनुष्यो पांचशें धनुष्य उंचा शरीरवाळा अने जघन्य अंतर्मुहूर्त्तना ने उत्कृष्ट क्रोडपूर्वना आयुवाळा होय छे. तेओ अग्निथी पकावेलुं नाना प्रकारनुं अन्न, घृत अने दुध विगेरेनुं भोजन करनारा होय छे. तेओ दररोज आहार करनारा होय छे एटलुं ज नहीं पण एक दिवसमां वारंवार खानारा होय छे. पुत्र, पौत्र, दुहित्रादि मोटा परिवारवाळा, मोटी ऋद्धिवाळा, स्त्री–पुरुष ने मित्रादिना स्नेहमां आसक्त अने शत्रुने जीतनारा होय छे. स्तन्यपानादिवडे घणा काळ सुधी अपत्यनुं पालन करे छे अने वर्षना क्रमथी बाळको व्यक्त बोलनारां, चालनारां, यौवनावस्थावाळा तेम ज चतुराइवाळा थाय छे. केटलाक राजाओ, मंत्रि, सामंत, श्रेष्ठि, सेनापति अने धनवान होय छे. केटलाक अल्पधनवाळा, केटलाक सेवा करनारा अने केटलाक अनेक प्रकारना काम करनारा होय छे. आ प्रमाणे पूर्वकृत कर्मने अनुसारे केटलाक वैभववाळा होय छे, केटलाक मिथ्यादृष्टि, केटलाक भद्रक, केटलाक मिश्रदृष्टि, केटलाक समकित पामेला, केटलाक देशविरति ने केटलाक सर्वविरति होय छे. आ सर्वे पांचे गतिमां जनारा होय छे (२३३–२४२)

वरसाद चार प्रकारना वरसे छे. १ पुष्करावर्त, २ प्रद्युम्न, ३ जीमूत अने ४ झिमिक–तेमां पहेला प्रकारना वरसादनी एक वृष्टिथी जमीन सुस्निग्ध, रसभावित अने

भवत्यब्दायुतं भूमि–र्धान्याद्युत्पादनक्षमा ॥ ४४ ॥ द्वितीयस्यैकवृष्ट्या भू–र्भाव्यतेऽब्दसहस्रकं । वृष्टेः स्नेहस्तृतीयस्य दशाब्दानि भवेद्भुवि ॥ ४५ ॥ निरंतरं प्रवृत्ताभि–स्तुरीयस्य च वृष्टिभिः । भूयसीभिर्वर्षमेकं स्नेहस्तिष्ठति वा न वा ॥ ४६ ॥ तत्र तुर्यारकांभोदा उत्तमाः कालवर्षिणः । स्युः स्निग्धा सरसा भूमि–स्ततो भूरिफलप्रदा ॥ ४७ ॥ प्रायो विड्वरदुर्भिक्षे नेतयो न न तस्कराः । रोगशोकवियोगाधि–दुःखदौःस्थादि चाल्पकं ॥ ४८ ॥ न्यायाऽनुल्लंघिनो लोकाः पुरुषायुषजीविनः । राजानः श्रावकाः प्रायो धार्मिका न्यायतत्पराः ॥ ४९ ॥ तस्मिन् कालेऽनुक्रमेण स्युस्त्रयोविंशतिर्जिनाः । एकादश चक्रभृतः शार्ङ्गिणः सीरिणो नव ॥ ५० ॥ एवं च—

एकस्यामवसर्पिण्यां स्युश्चतुर्विंशतिर्जिनाः । चक्रभृतो (चक्रिणो) द्वादश नव केशवा नव सीरिणः ॥५१॥ चतुष्पंचाशदित्येवं भवंति पुरुषोत्तमाः। स्युस्त्रिषष्टिरमी युक्ता नवभिः प्रतिविष्णुभिः ॥ ५२ ॥ नवभिर्नारदैर्युक्ता–स्ते भवंति द्विसप्ततिः । तथैकादशरुद्राढ्याः स्युस्त्र्यशीतिः समुच्चिताः ॥ ५३ ॥

१०००० वर्षो सुधी धान्य उपजाववाने योग्य थाय छे, बीजा प्रकारना वरसादनी एक वृष्टिथी एक हजार वर्ष सुधी तेवी रहे छे, त्रीजा प्रकारना वरसादनी एक वृष्टिथी दश वर्ष सुधी पृथ्वी तेवी रसवाळी रहे छे अने चोथा प्रकारना वरसादनी घणी वृष्टि निरंतर थया छतां पण एक वर्ष सुधी ज जमीन रसवाळी रहे छे अथवा नथी पण रहेती. तेमां चोथा आरामां वरसाद उत्तम प्रकारना अने योग्यकाळे वरसनारा होय छे, तेथी जमीन स्निग्ध, सरस अने घणा फळने आपनारी होय छे. प्रायः ते आरामां विड्वर, दुर्भिक्ष, ईतिओ होती नथी, चोर होता नथी अने रोग, शोक, वियोग, आधि, दुःख ने दौःस्थ्य विगेरे अल्प होय छे. (३४३–३४८) ते काळे लोको न्यायनुं उल्लंघन नहीं करनारा, पूर्ण आयु सुधी जीवनारा होय छे. राजाओ प्रायः श्रावक (जैन धर्म पाळनारा), धार्मिक अने न्यायमां तत्पर होय छे. ते चोथा आरामां अनुक्रमे २३ तीर्थंकरो थाय छे. ११ चक्रवर्तीओ थाय छे अने नव बळदेव–वासुदेव थाय छे. (३४९–५०)

एक अवसर्पिणीमां एकंदर २४ तीर्थंकरो, १२ चक्रवर्तीओ अने नव वासुदेव तथा नव बळदेव थाय छे. आ प्रमाणे ५४ उत्तम पुरुषो थाय छे तेमां नव प्रतिवासुदेवने भेळववाथी ६३ थाय छे. नव नारदने भेळववाथी ७२ थाय छे. तेमज ११ रुद्रने भेळववाथी

चतुर्धेति वा पंचधा वाथ षोढा–थवा सप्तधा विश्रुताः स्युः पुमांसः ।
जिनाश्चक्रिणः केशवाः सीरिणस्त–द्विपक्षास्तथा नारदाः किंच
रुद्राः ॥ ५४ ॥

विश्वाश्चर्यदकीर्त्तिकीर्त्तिविजयश्रीवाचकेंद्रांतिष–
द्राजश्रीतनयोऽतनिष्ट विनयः श्रीतेजपालात्मजः ।
काव्यं यत्किल तत्र निश्चितजगत्तत्वाद्भुते त्रिंशते–
कोनेन प्रमितः समाप्तिमगमत्सर्गो निसर्गोज्ज्वलः ॥ ५५ ॥

॥ इति श्रीलोकप्रकाशे एकोनत्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥ श्रीरस्तु ॥



८३ थाय छे. ए प्रमाणे उत्तम पुरूषोना चार, पांच, छ अने सात प्रकारो प्रसिद्ध छे. ते तीर्थंकर, चक्री, वासुदेव अने बळदेव एम चार प्रकारे, प्रतिवासुदेव युक्त पांच प्रकारे, नारद युक्त छ प्रकारे अने रुद्र युक्त सात प्रकारे समजवा. (३५१–३५४)

विश्वने आश्चर्य पमाडे तेवी कीर्त्तिवाळा श्री कीर्त्तिविजय वाचकेंद्रना शिष्य, तेजपाळ ने राजश्रीना पुत्र एवा श्रीविनयविजय उपाध्याये जे काव्य रच्युं छे, ते निश्चित करेला जगतना तत्त्ववडे अद्भुत एवा आ लोकप्रकाश नामना ग्रंथमां स्वभावे ज उज्वळ एवो २९ मो सर्ग संपूर्ण थयो. (३५५)

इति श्रीलोकप्रकाशे २९ मो सर्ग संपूर्ण.



॥ अथ त्रिंशत्तमः सर्गः प्रारभ्यते ॥

तत्र तीर्थंकरास्तु स्यु–रितस्तृतीयजन्मनि। विंशत्या सेवितैः स्थानै–स्तीर्थकृन्नामहेतुभिः ॥ १ ॥ तानि चैवं—अर्हत् १ सिद्ध २ प्रवचन ३ गुरवः ४ स्थविरा ५ स्तथा। बहुश्रुत ६ स्तपस्वी ७ च वात्सल्यान्येषु सप्तसु ॥ २ ॥ अर्हंश्चतुर्धा नामादिः १ सिद्धाः कर्ममलोज्झिताः २। श्रुतं प्रवचनं संघ–स्तदाधारतयाथवा ३ ॥ ३ ॥ गुरुर्धर्मस्योपदेष्टा ४ स्थविरो वृद्ध उच्यते। वयश्चारित्रपर्याय–श्रुतैरेष त्रिधा भवेत् ॥ ४ ॥ षष्टिं वर्षाण्यतिक्रांतो वयःस्थविर उच्यते। पर्यायस्थविरो जात–विंशत्यब्दव्रतस्थितिः ॥ ५ ॥ सूत्रार्थज्ञश्चतुर्थांगं यावद्योऽसौ श्रुतेन च। स्थविरः स्याद्यदुत्सर्गा–पवादादीनि वेत्त्यसौ ५ ॥ ६ ॥ तत्कालापेक्षया भूरि–श्रुतोऽत्र स्याद्बहुश्रुतः ६। तपस्वी चानशनादि–विचित्रोग्रतपःस्थितः ७ ॥ ७ ॥ भक्तिरागो यथाभूत–गुणप्रख्यापनं जने। यथोचितोपचारश्च तेषां वात्सल्यमीरितं ॥ ८ ॥ सदा ज्ञानोपयोगश्च भवति

सर्ग ३० मानुं भाषांतर.

प्रथमना (२९ मा) सर्गना प्रांतभागमां बतावेला शलाका पुरुषो पैकी जे २४ तीर्थंकरो छे ते आ जन्मथी पाछला त्रीजे भवे तीर्थंकरनामकर्मना हेतुरूप वीश स्थानकना आराधनवडे थाय छे. (१) ते वीश स्थानको आ प्रमाणे—अरिहंत १, सिद्ध २, प्रवचन ३, आचार्य ४, स्थविर ५, बहुश्रुत (उपाध्याय) ६ अने तपस्वी (मुनि) ७–आ सातनुं वात्सल्य. (२) तेमां प्रथम अरिहंत कह्या छे ते नामादि चार प्रकारे, सिद्ध-सर्वकर्ममळथी रहित, प्रवचन ते श्रुत अथवा तेना आधारभूत संघ, गुरु ते धर्मना उपदेष्टा (आचार्य), स्थविर ते वृद्ध–तेना त्रण प्रकार–वयवडे वृद्ध, चारित्रपर्याये वृद्ध अने श्रुतवडे वृद्ध–साठ वर्षथी वधारे उमरना ते वयस्थविर, वीश वर्ष उपरांतना चारित्र-पर्यायवाळा ते पर्यायस्थविर, चोथा समवायांगसूत्र सुधीना सूत्रार्थना जाणवावाळा ते श्रुतस्थविर के जे उत्सर्ग अपवादादिना जाण होय. ते ते काळनी अपेक्षाए वधारे श्रुतना अभ्यासी ते बहुश्रुत अने अनशनादि विचित्र प्रकारना उग्र तप करनारा ते तपस्वी. ए साते उपरनो भक्तिराग, लोकमां तेना यथाभूत (सत्य) गुणनुं ख्यापन

स्थानमष्टमं ८। सम्यक्त्वे ९ विनये १० चाव-श्यके ११ ऽतीचारवर्जनं ॥९॥ एतानि नवमदशमैकादशानि स्थानानीति शेषः. शीलव्रतेषु निरती-चारत्वं द्वादशं पदं । व्रतान्यत्रोत्तरगुणाः शीलं मूलगुणाः स्मृताः १२ ॥ १० ॥ त्रयोदशं क्षणलवा-भिधानं स्थानमीरितं । तच्च प्रतिक्षणलवं सदा वैराग्यभावनं १३ ॥ ११ ॥ तपश्चतुर्दशं स्थानं नानाविधतपःक्रिया १४ । त्यागः पंचदशं साध्वा-यहान्नादिसमर्पणं १५ ॥ १२ ॥ बालादि-वैयावृत्यं स्या-त्षोडशं स्थानकं च तत् ॥ शुद्धापथ्यन्नादिदान-मंगसंवा-हनादि च ॥ १३ ॥ तथोक्तं प्रश्नव्याकरणांगे—

केरिसए पुण आराहए वयमिणं ? जे से उवहिभत्तपाणसंगहदाण-कुसले, अच्चंतबालदुब्बलवुड्ढखवगपवत्तिआयरियउवज्झायसाहम्मियतवस्सीकुलगणसंघचेइयट्ठे य निज्जरट्ठी वेयावच्चं अणिस्सियं दसविहं बहुविहं करेइ. अत्र श्रीजिनप्रतिमाया अन्नोपधिदानांगसंवाहनाद्यसंभवा-

---

अने तेमनो यथोचित उपचार ते तेमनुं वात्सल्य कह्युं छे. (३-८) सर्वदा ज्ञानोपयोग ते आठमुं स्थान, सम्यक्त्वमां अतिचारनुं वर्जवुं ते नवमुं, विनयमां अतिचारनुं वर्जवुं ते दशमुं, छ आवश्यकमां अतिचारनुं वर्जन ते अग्यारमुं (९) शीलव्रतमां निरतिचारपणुं ते बारमुं. अहीं शील ते मूळगुण अने व्रतो ते उत्तरगुण कह्या छे. (१०) क्षणलव नामनुं तेरमुं स्थान छे, तेमां प्रतिक्षण के प्रतिलव सदा वैराग्य भाववापणुं (११) तप ए चौदमुं स्थान छे, तेमां नाना प्रकारनी तपक्रियानो समावेश छे. दान पंदरमुं स्थान, तेमां साधु विगेरेने योग्य अन्नादिनुं आपवापणुं छे. (१२) बाळादि मुनिनी वैयावच्च करवी ते सोळमुं स्थान छे. ते वैयावच्चमां शुद्ध उपधि, अन्नपानादि लावी आपवुं तेम ज अंगनुं संवाहन करवुं ए विगेरेनो समावेश छे. (१३) ते विषे श्रीप्रश्नव्याकरण नामना दशमा अंगमां कह्युं छे के–' आ व्रतनुं आराधन केवी रीते करवुं ? ' तेने उत्तर आपे छे के–' उपधि अने भातपाणी लाववामां ने आपवामां कुशळ, अत्यंत बाळ, दुर्बळ, वृद्ध, क्षपक, प्रवर्तक, आचार्य, उपाध्याय, साधर्मिक (साधु), तपस्वी, कुळ, गण, संघ अने चैत्य–एमने माटे निर्जरार्थी मुनि अनिश्रितपणे दशविध तेमज बहुविध वैयावच्च करे. अहीं जिनप्रतिमाने अंगे अन्न अने उपधिनुं आपवुं अने अंगसं-वाहना करवी विगेरेनो अभाव होवाथी चैत्यनी वैयावच्च शी रीते करे ? तत्र चैत्यने ओ-

चैत्यस्य किं वैयावृत्त्यमिति यत्कश्चिच्चैत्यापलापी गुरुकर्मा शंकते तत्र जक्खा हु वेयावडियं करेंति तम्हा उ एए निहया कुमारा' इत्युत्तराध्ययनोक्तहरिकेशिमहर्षिवचनात् अवज्ञानिवारणादेरपि वैयावृत्त्यत्वमित्यादि युक्त्या समाधेयं १६ ॥ समाधिः स्यात्सप्तदशं स्थानं दुर्ध्यानवर्जनं । चित्तस्वास्थ्योत्पादनं वा गुर्वादेर्विनयादिभिः ॥ १४ ॥ अत्राद्यः पक्ष आवश्यकवृत्तौ, द्वितीयस्तु ज्ञाताधर्मकथांगमह्ल्यध्ययनवृत्तौ १७. अष्टादशमपूर्वस्य ज्ञानस्य ग्रहणादरः १८ । एकोनविंशतितमं श्रुतस्य बहुमाननं १९ ॥ १५ ॥ स्थानमंत्यं प्रवचन–प्रभावनमिहोदितं । तत्कुर्यात् श्रुतवान् धर्म–कथादिगुणवांस्तथा ॥ १६ ॥ तथाहुः—सम्मदंसणजुत्तो सइ सामत्थे पभावगो होइ । सो पुण इत्थ विसिट्ठो निद्दिठ्ठो अट्ठहा सुत्ते ॥ १७ ॥ पावयणी १ धम्मकही २ वाई ३ नेमित्तिओ ४ तवस्सी य ५ । विज्जा ६ सिद्धो ७ य कई ८ अट्ठेव पभावगा भणिया ॥१॥

एषु द्वित्रादिभिः स्थानैः सर्वैर्वा सेवितैर्भृशं । जिननामार्जयेन्म-

---

ळवनारो कोइक भारेकर्मी शंका करे, तो आ संबंधमां श्री उत्तराध्यनसूत्रमां कहेला हरिकेशी महर्षिना वचन प्रमाणे जे कोइ चैत्य (जिनप्रतिमा)नो अपलाप करे, गुरुकर्मी होवाथी तेना पूजनिकपणामां शंका करे तेने अटकावीने यक्ष वैयावच्च करे. ते कारणथी ए जिनप्रतिमानुं अपमान करनार यक्षे ए कुमारोने हण्या छे. एटला उपरथी समजवुं के–जिनप्रतिमानी अवज्ञा करनारनुं निवारण करवुं ते तेमनी वैयावच्च छे. आ प्रमाणे युक्तिथी समाधान करवुं. हवे सत्तरमुं समाधिस्थान छे, तेमां दुर्ध्याननुं वर्जन अने गुर्वादिकनो विनय करवा वडे तेमने चित्तस्वास्थ्य उपजाववुं ते (१४) अहीं पहेलो पक्ष आवश्यकवृत्ति अनुसार अने बीजो पक्ष श्री ज्ञाताधर्मकथांगमां मल्ल्यध्ययननी वृत्ति अनुसार समजवो. अढारमुं स्थान अपूर्व ज्ञानना ग्रहणमां आदररूप, ओगणीशमुं श्रुतना बहुमानरूप (१५) अने वीशमुं प्रवचननी प्रभावनारूप कहेलुं छे. ते प्रभावना श्रुतवान् अने धर्मकथादिकना गुणवाळो करी शके छे (१६) कह्युं छे के–सम्यग्दर्शन युक्त मनुष्य छते सामर्थ्ये शासननो प्रभावक होय छे. (जे प्रभावनाने विशेष प्रकारे जाणवाना इच्छक होय) तेने माटे सूत्रमां आठ प्रकारना प्रभावक कह्या छे. (१७) प्रावचनी १, धर्मकथी २, वादी ३, नैमित्तिक ४, तपस्वी ५, विद्यावान् ६, सिद्ध ७, अने कवि ८–ए आठ प्रभावक छे. (१)

उपर बतावेला वीश स्थानको पैकी बे–त्रण विगेरे अथवा बधा स्थानोना सेवनवडे

र्थः पुमान् स्त्री वा नपुंसकं ॥ १८ ॥ तथाहुः श्रीभद्रबाहुस्वामिपादाः–नियमा मणुयगईए इत्थीपुरिसेयरो व सुहलेसो । आसेवियबहुलेहिं वीसाए अन्नयरएहिं ॥ १९ ॥ नियमान्मनुष्यगतौ बध्यते, कस्तस्यां बध्नातीत्याशंक्याह–स्त्री पुरुष इतरो वेति नपुंसक इत्यावश्यकहारिभद्र्यां. तृतीयकर्मग्रंथे तु बंधस्वामित्वनिरूपणे प्रथमनरकत्रयनारको वैमानिकदेवो गर्भजमनुष्यश्च सम्यक्त्वादिगुणस्थानवर्त्तिनस्तीर्थकृन्नामकर्म बध्नंतीत्युक्तमिति ज्ञेयं. अत्र चैवमुपपत्तिः—बद्धतीर्थकरनामा मनुष्यो मृत्वा नरकदेवगत्योरुत्पन्नस्तत्रापि तीर्थकरनामकर्म बध्नाति, जिननामकर्मणः सततबंधकालस्योत्कृष्टतस्त्रयस्त्रिंशत्सागरोपममानस्यानुत्तरसुरानाश्रित्य शतके प्रोक्तत्वात्, इति कार्मग्रंथिकैर्गतित्रये जिननामबंध उक्तः, प्रथमतस्तु मनुष्य एव तद्बंधमारभत इत्यावश्यके ' नियमा मणुअगईए ' इति निरूपितमिति. यद्वा नरकस्वर्गत्योः सामान्येन जिननाम्नो बंधः स्यात्. निकाचितबंधस्तु तस्य मनुजगतावेवेत्यावश्यके ' नियमा

मनुष्य तीर्थंकरनामकर्म पुरुष, स्त्री नपुंसक त्रणे वेदमां वर्तता उपार्जन करे छे. (१८) ते विषे श्री भद्रबाहुस्वामीए कह्युं छे के–" निश्चये मनुष्यगतिमां, स्त्री, पुरुष के नपुंसक, शुभलेश्यावाळो वीशमांथी अन्यतर एक अथवा घणा स्थानोना सेवनवडे तीर्थंकरनामकर्म बांधे छे" (१९) "निश्चये ते मनुष्यगतिमां ज बंधाय छे. ते मनुष्यगतिमां कोण बांधे ? एवी आशंकाना उत्तरमां स्त्री, पुरुष के इतर एटले नपुंसक" एम आवश्यक हारिभद्रीमां कह्युं छे, परन्तु त्रीजा कर्मग्रंथमां तो बंधस्वामित्वनी निरूपणामां " पहेली त्रण नरकनो नारकी, वैमानिक देव अने गर्भज मनुष्य सम्यक्त्वादि गुणस्थाने वर्तता होय ते तीर्थंकरनामकर्म बांधे " एम कह्युं छे. आ हकीकतनी उपपत्ति–समन्वय आ रीते करवी के तीर्थंकरनामकर्म जेणे बांध्युं छे एवो मनुष्य मरण पामीने प्रथमनी त्रण नरकमां अथवा वैमानिक देवमां उपजे छे, अने त्यां पण तीर्थंकरनामकर्म बांधे छे एटले तेना दळीयां मेळवे छे. जिननामकर्मनो सतत बंधकाळ उत्कृष्ट तेत्रीश सागरोपम प्रमाण अनुत्तर विमानना देवोने आश्रीने पांचमा शतककर्मग्रंथमां कहेल छे. एटले कर्मग्रंथिकोए त्रण गतिमां जिननामनो बंध कह्यो अने प्रथम तो मनुष्य ज तेना बंधनो आरंभ करेछे, एवा विचारथी श्री आवश्यकमां 'नियमा मणुअगईए' एम कहेलुं छे. तेनुं समाधान करी लेवुं अथवा नरकमां ने देवगतिमां सामान्यपणे तेनो बंध थाय छे. निकाचित बंध तो मनुष्यगतिमां ज थाय

मणुए ' इत्याद्युक्तं भावीति संभाव्यते. एतत्संग्रहश्चैवमावश्यकषष्ठांगादिषु—अरिहंत १ सिद्ध २ पवयण ३ गुरु ४ थेर ५ बहुस्सुए ६ तवस्सीसु ७। वच्छल्लया य तेसिं अभिक्खनाणोवओगे य ८ ॥ १ ॥ दंसण ९ विणए १० आव-स्सए ११ य सीलव्वए १२ निरइयारो । खणलव १३ तव १४ च्चियाए १५ वेयावच्चे १६ समाही य १७ ॥ २ ॥ अपुव्वनाणगहणे १८ सुअभत्ती १९ पवयणे पभावणया २० । एएहिं कारणेहिं तित्थयरत्तं लहइ जीवो ॥ ३ ॥ एतत्तपोविधिसंप्रदायश्चैवं—

चेत्करोत्युपवस्त्रेण विंशतिस्थानकं तपः । तदा विंशत्योपवासै-रेका पंक्तिः समाप्यते ॥ २० ॥ निरंतरं कृत्यशक्तौ सांतरां तां करोति चेत् । पंक्तिरेका पूरणीया तत्षण्मासांतरे ध्रुवं ॥ २१ ॥ विंशत्या पंक्तिभिश्चैत-त्तपो भवति पूरितं । उपवासानां चत्वारि शतानीह भवंति तत् ॥ २२ ॥ एवं शक्त्यनुसारेण प्राज्ञैः षष्ठाष्टमादिभिः । मासक्षपणपर्यंते-स्तप एतद्विधीयते ॥ २३ ॥ पंचशक्रस्तवपाठो-त्कृष्टा या चैत्यवंदना । सावश्यं वि-

---

छे एवो श्री आवश्यकना ' नियमा मणुए ' कथननो आशय होय एम पण संभवे छे.

आ वीश स्थानकनो संग्रह श्रीआवश्यकमां अने षष्ठांग विगेरेमां आ प्रमाणे छे–अरिहंत १ सिद्ध २, प्रवचन ३, गुरु ४, स्थविर ५, बहुश्रुत ६, तपस्वी ७, आ सातनुं वात्सल्य. वारंवार ज्ञानोपयोग ८, (१) दर्शन ९, विनय १०, आवश्यक ११, शीलव्रत (निरतिचार) १२, क्षणलव १३, तप १४, दान १५, वैयावच्च १६, समाधि १७, (२) अपूर्वज्ञानग्रहण १८, श्रुतभक्ति १९, प्रवचनप्रभावना २०. आ कारणोवडे जीव तीर्थकरत्वने मेळवे छे. (३) ए तपनो विधि आ प्रमाणे—

जो उपवासवडे वीशस्थानकने आराधे तो वीश उपवासवडे एक पंक्ति (एक पदनी आराधना) पूर्ण थाय छे (२०). आ प्रमाणे सतत वीश उपवास (आंतरे पारणुं करीने पण) करी न शके तो आंतरे आंतरे उपवास करे, पण छ मासमां तो एक पंक्ति (वीश उपवास) जरुर पूर्ण करे. (२१) ए प्रमाणे वीश पंक्ति करवाथी आ तप पूर्ण थाय छे. एटले तेमां कुल ४०० उपवास थाय छे. (२२) आ प्रमाणे शक्ति-अनुसार बुद्धिमानोए छठ्ठअठ्ठमादि यावत् मासक्षपणादिकवडे आ तप करवो. (एटले ४०० उपवासने बदले यावत् ४०० मासक्षपण करवा, आ प्रमाणे नंदनमुनिए करेल छे.) (२३) तपने दिवसे पांच शक्रस्तववडे उत्कृष्ट चैत्यवंदना अवश्य विधि

धिना कार्या तपस्यत्रोपवैरणवं ॥ २४ ॥ एकैकस्यामत्र पंक्ता–वेकैकेन दिनेन च । क्रमेणाराधयेद्भक्त्या स्थानकानीति विंशतिं ॥ २५ ॥ आद्ये नमोऽर्हद्भ्य इति द्विसहस्रीं जपेद्दिने । अर्हद्भक्तिं विशेषेण कुर्वीत स्तवनादिभिः ॥ २६ ॥ अन्येष्वपि दिनेष्वेव–माराध्यास्ते पुरोदिताः । ज्ञानक्रियाद्यास्तु शुद्ध–पाठाभ्यासादरादिभिः ॥ २७ ॥ रागद्वेषादयो दोषा वर्जनीया विशेषतः । तपोदिने जपेन्मौनी वक्ष्यमाणपदानि च ॥ २८ ॥ सांप्रतीनानि जापपदानि चैवं–अरिहंत १ सिद्ध २ पवयण ३ आयरिया ४ थेर ५ वायगा ६ साहू ७ । नाणं ८ दंसण ९ विणया १० चारित्तं ११ बंभवयधारी १२ ॥ १ ॥ किरियाणं च १३ नमो तह तवस्स १४ सिरिगोयमस्स १५ य जिणाणं १६ । चारित्तं १७ नाम १८ सुश्रा १९ तित्थं २० इअ वीस जावपया ॥ २ ॥ अत्र सर्वत्रापि नमो अरिहंताणं, नमो सिद्धाणं, नमो पवयणस्स, इत्यादिपाठक्रमो ज्ञेयः. केचिच्चैकैकया पंक्त्या स्थानमेकैकमेव हि । आराधयंति विंशत्या पंक्तिभिस्तानि विंशतिं ॥ २९ ॥ उद्यापनादिविधिस्तु संप्रदायादवसेयः.

प्रमाणे जिनप्रतिमानी सन्मुख करवी. (२४) दरेक पंक्तिमां अने दरेक दिवसे अनुक्रमे भक्तिवडे वीश पदोनुं आराधन करवुं. (२५) पहेले दिवसे नमोऽर्हद्भ्यः ए पदनो बे हजार जाप करवो अने अरिहंतनी भक्ति सविशेषपणे स्तवनादिवडे करवी. (२६) बीजा दिवसोमां पण ए ज प्रमाणे पूर्वे कहेला अरिहंतादिकने आराधवा, अने ज्ञानक्रिया विगेरेने शुद्ध पाठ, अभ्यास अने सादर–बहुमानादिकवडे आराधवा. (२७) तपने दिवसे रागद्वेषादि दोषने विशेषपणे वर्जवा अने मौनपणे आगळ कहेवाशे ते पदोनो जाप करवो. (२८) सांप्रतीन जापपदो आ प्रमाणे—१ अरिहंत, २ सिद्ध, ३ प्रवचन, ४ आचार्य, ५ स्थविर, ६ वाचक, ७ साधु, ८ ज्ञान, ९ दर्शन, १० विनय, ११ चारित्र, १२ ब्रह्मव्रतधारी, (१) १३ क्रिया, १४ तप, १५ श्रीगौतम, १६ जिन, १७ चारित्र, १८ अपूर्वज्ञान, १९ श्रुत अने २० तीर्थ. आ वीश पदनो जाप करवो. (२) तेमां सर्वत्र नमो अरिहंताणं, नमो सिद्धाणं, नमो पवयणस्स इत्यादि पाठनो क्रम जाणवो. केटलाक एकेक पंक्ति (वीश उपवास) वडे एकेक स्थानने आराधे छे, ते वीश पंक्तिवडे वीश स्थानने आराधे छे. (२९) तेना उद्यापननो विधि संप्रदायथी जाणी लेवो.

तपोऽशक्तः पुनः स्थान-मेकं द्वे सकलानि वा। यथाशक्ति स्फुरद्भक्तिः सेवेत श्रेणिकादिवत्॥ ३०॥ एवं साधुः श्रावको वा साध्वी वा श्राविकापि वा। अमून्याराधयन् स्थाना-न्याप्नोति जिनसंपदं॥ ३१॥ तीर्थकृन्नामकर्मैत-द्वेद्यते जिनपुंगवैः। विश्वोपकारैरग्लान्या धर्मार्थकथनादिभिः॥ ३२॥ तथाहुरावश्यकनिर्युक्तिकृतः—

तं च कहं वेइज्जइ? अगिलाए धम्मदेसणाईहिं। बज्झइ तं तु भयवओ तइयभवोसक्कइत्ताणं॥ ३३॥ अथार्जितार्हत्पदाः स्यु-स्ते वैमानिकनाकिनः। प्राग्निबद्धायुषश्चाधः शैलावध्येव नारकाः॥ ३४॥ तथोक्तं संग्रहण्यां-सुरनेरइएहिं चिअ हवंति हरिअरिहचक्किबलदेवा। चउविहसुरचक्किबला वेमाणिअ हुंति हरिअरिहा॥ १॥ वसुदेवचरिते तु नागकुमारेभ्योऽप्युद्धृतोऽनंतरमैरवतक्षेत्रेऽस्यामवसर्पिण्यां जिन उक्त इति ज्ञेयं. तेजोऽभिवर्द्धते तेषां देवानां च्यवनावधि। न प्रादुष्यंति चिह्नानि च्यवनस्यान्यदेववत्॥ ३५॥ अन्येषामपि विज्ञेय-मेतदंत्य-

---

तपनी अशक्तिवाळा एक बे अथवा बधा स्थान यथाशक्ति आराधे छे अने श्रेणिकादिनी जेम स्फुरायमान भक्तिथी तेनी सेवना करे छे. (३०) आ प्रमाणे साधु, श्रावक, साध्वी अथवा श्राविका आ स्थानोने आराधवाथी तीर्थंकरपदने प्राप्त करे छे. (३१) अने ए तीर्थंकरनामकर्मने जिनपुंगव (तीर्थंकरपणाना भवमां केवळज्ञान पाम्या पछी) अग्लानपणे विश्वनो उपकार करनार धर्मदेशना आपवादिकवडे वेदे छे (३२) श्री आवश्यकनिर्युक्तिमां कह्युं छे-" ते केवी रीते वेदे? उ० अग्लानपणे धर्मदेशनादिवडे. अने ते कर्म भगवंत पाछले त्रीजे भवे एक ज वार बांधे (निकाचित करे)" (३३)

हवे जेमणे तीर्थंकरनामकर्म बांध्युं छे ते वैमानिक देव थाय, पण जो प्रथम आयुष्य बांध्युं होय तो नीचे त्रीजी नरक सुधी नारकी थाय छे. (३४) श्रीसंग्रहणीमां कह्युं छे के-" देव ने नारकी त्यांथी नीकळीने वासुदेव, अरिहंत, चक्रवर्त्ती ने बळदेव थाय छे. तेमां चार प्रकारना देवमांथी चक्रवर्त्ती ने बळदेव थाय छे, वासुदेव ने अरिहंत वैमानिकमांथी ज थाय छे." पण वसुदेवचरित्रमां तो नागकुमारथी नीकळीने अनंतरभवे ऐरवत क्षेत्रमां आ अवसर्पिणीमां एक तीर्थंकर थयानुं कह्युं छे. ते प्रसंगोपात जणाव्युं छे.

तीर्थंकर थनार देव तेना च्यवनकाळ सुधी तेजमां वृद्धि पामतो ज रहे छे अने तेने अन्य देवोनी जेम च्यवनना चिन्हो थता नथी. (३५) बीजा चरमशरीरी देवो माटे

शरीरिणां । तेऽन्यव्यपेक्षया स्वल्प-पीडाः स्युर्नारका अपि ॥ ३६ ॥

ततश्च्युत्वा कर्मभूमौ सज्जातिकुलशालिनः । क्षत्रियस्योच्चगोत्रस्य प्राज्यराज्यर्द्धिराजिनः ॥ ३७ ॥ उत्कृष्टभागधेयस्य गुणाढ्यस्य महीपतेः। पत्न्याः कुक्षौ सुशीलाया गर्भत्वेनोद्भवंति ते ॥ ३८ ॥ स्वर्गाद्वा नरकाद्वा ये यस्मादायांति तीर्थपाः । ज्ञानत्रयं ते तत्रत्यं बिभ्रते गर्भगा अपि ॥ ३९ ॥ जानंत्येष्यदतीतं च च्यवनं तत्क्षणे तु न । गर्भोत्पत्तिक्षणेऽप्येषां स्यादेवं महिमोदयः ॥ ४० ॥ अशिवोपद्रवादीनां भवत्युपशमः क्षितौ । नारका अपि मोदंते क्षणं प्राप्तसुखोदयाः ॥ ४१ ॥ उदयाभिमुखस्तीर्थ-करार्कः समभूदिति । ज्ञात्वासनप्रकंपेन मुदिता नाकिनायकाः ॥ ४२ ॥ सिंहासनात्समुत्थाय विनयात्त्यक्तपादुकाः । पदान्यागत्य सप्ताष्टौ श्रीजिनाभिमुखं रयात् ॥ ४३ ॥ पंचांगप्रणिपातेन प्रणम्य जगदीश्वरान् । घटितांजलयः कुर्युः स्तुतिं शक्रस्तवेन ते ॥ ४४ ॥ अत्र-

सक्कस्स आसणं चलिअं सिग्घं आगमणं भणइ, यावत्तव पुत्तो पढ-

पण ते प्रमाणे समजवुं. नारकीपणामां पण बीजा नारकीओ करतां तेमने स्वल्प पीडा होय छे. (३६)

हवे त्यांथी च्यवीने कर्मभूमिमां उत्तम जातिकुळवाळा, उच्च गोत्रवाळा अने प्राज्य राज्य ऋद्धिवाळा क्षत्रियने त्यां पुत्रपणे उपजे. उत्कृष्ट भाग्यशाळी अने गुणाढ्य महीपतिनी सुशीला एवी पत्नीनी कुक्षिमां गर्भपणे अवतरे. (३८) स्वर्गमांथी के नरकमांथी ज्यांथी ते तीर्थंकर आवेला होय त्यां जेटला होय तेटला प्रमाणवाळा त्रण ज्ञान गर्भमां पण ते जीवने होय. (३९) तेओ अतीत ने अनागतकाळनी हकीकत च्यवीश अथवा च्यव्यो एम जाणे, पण च्यवन समय अल्प होवाथी न जाणे, गर्भोत्पत्तिना समये पण आ प्रमाणे तेमनो महिमा होय. (४०) सर्व पृथ्वीपर अशिव-उपद्रव शांत थाय अने नारकी पण क्षणवार सुखोदयनी प्राप्तिथी हर्ष पामे. (४१) तीर्थंकररूप सूर्य उदयने अभिमुख थयेल छे, एम आसनप्रकंपथी जाणीने देवनायको (इंद्रो) हर्ष पामे. (४२) पछी सिंहासनथी उठीने, पादुका तजी दइने, विनयथकी सात आठ पगलां उतावळे प्रभु सन्मुख आवीने श्री जगदीश्वरने पंचांग प्रणिपातवडे नमस्कार करीने अजंळी जोडी शक्रस्तववडे प्रभुनी स्तुति करे. (४४) अहीं शक्रनुं आसन चलायमान थाय अने ते शीघ्रपणे माता पासे आवीने कहे के-तमारो पुत्र प्रथम धर्मचक्रवर्त्ती थशे. एम कहेल छे

मधम्मचक्कवट्टी भविस्सति, केइ भणंति–बत्तीसंपि इंदा आगंतूण वागरिंति, इत्यावश्यकहारिभद्र्यां श्रीऋषभगर्भावताराधिकारे, सक्कस्स य आसणकंपो यावत् वाणारसीमागंतूण भयवतो जणणिं अहिनंदइ, इति केशीगौतमीयोत्तराध्ययनप्राकृतवृत्तौ. इदं हि घटते यस्मा–द्गर्भवासदिने मुदा। वंदितोऽयं समागत्य सहावाभ्यां सुरेश्वरैः ॥ १ ॥ इति श्रीशांतिचरित्रे श्रीशांतिनाथमातापितृवचनमित्यादि दृश्यते, ततो विस्तरतः प्रथमकल्याणकोत्सवपद्धतिर्बहुश्रुतेभ्योऽवसेया.

तस्मिन्नवसरे वास–भवने स्वर्गृहोपमे। स्वःशय्योपमशय्यायां शयिता सा मृगेक्षणा ॥ ४५ ॥ समधातुः सुप्रसन्न–चित्ता स्वप्नांश्चतुर्दश। निशीथे गर्भमायाति जिने साक्षाद्विवेक्षते ॥ ४६ ॥ गजं तत्र चतुर्दंतं शुभ्रमैरावणोपमं। शुभ्रं दांतं दीप्रदंतं वृषं पिंडमिव त्विषां ॥ ४७ ॥ तीक्ष्णदंष्ट्रं लोलनेत्रं हर्यक्षं शूरमुज्ज्वलं। देव्याः श्रियोऽभिषेकं च क्रियमाणं दिशां गजैः ॥ ४८ ॥ सौरभाकृष्टमधुपां नानापुष्पमयीं स्रजं।

कोइ कहे छे के बत्रीश इंद्रो माता पासे आवीने कहे छे. आ प्रमाणे आवश्यकहारिभद्रीमां श्रीऋषभदेवना गर्भावतारना अधिकारमां कह्युं छे. वळी 'शक्रनुं आसन कंप्युं अने यावत् तेणे वाणारसीमां आवी भगवंतनी माताने अभिनंदन कर्युं.' आ प्रमाणे श्री उत्तराध्ययनना केशी–गौतमीय अध्ययननी प्राकृत वृत्तिमां कह्युं छे. श्री शांतिनाथ चरित्रमां–गर्भावासने दिवसे हर्षपूर्वक इंद्रे आवीने अमने तथा प्रभुने वंदना करी तेथी आ वात घटे ज छे' एवुं श्री शांतिनाथना मातापितानुं वचन देखाय छे आ प्रमाणे होवाथी प्रथम कल्याणकना उत्सवनी पद्धति बहुश्रुतोथी जाणी लेवी.

हवे प्रभु च्यव्या ते अवसरे देवगृह जेवा वासगृहमां देवशय्या जेवी शय्यामां सुतेला एवा मृगसमान नेत्रवाळा, समधातुवाळा, सुप्रसन्न चित्तवाळा माता जे रात्रिए जिनेश्वर गर्भमां आवे ते रात्रिए मध्यरात्रिने वखते साक्षात्नी जेम चौद स्वप्न देखे (४५–४६) ते चौद स्वप्न आ प्रमाणे–चार दांतवाळो, उज्वळ, ऐरावण जेवो हस्ती १, उज्वळ, शांत, देदीप्यमान दांतवाळो, जाणे कांतिनो पिंड होय तेवो वृषभ २, तीक्ष्ण दाढवाळो, चपळ नेत्रवाळो, शूरवीर अने उज्वळ सिंह ३, दिग्गजोवडे अभिषेक कराती लक्ष्मीदेवी ४, सुगंधवडे आकर्षित थयेला भ्रमरोवाळी अने नाना प्रकारना पुष्पवडे गुंथेली माळा ५, क्षीरसागरमांथी नीकळेलो जाणे माखणनो पिंड होय तेवो पूर्णचंद्र ६, लोकोना नेत्रोने

पूर्णं चंद्रं नवनीत–मिवोत्तीर्तं सुधांबुधेः ॥ ४९ ॥ सहस्रकिरणं लोक-लोचनालोचनौषधं । शुभ्रमभ्रंलिहं कंप्रं हर्यंकांकं महाध्वजं ॥ ५० ॥ कलशं जलसंपूर्णं रौप्यं पद्मप्रतिष्ठितं । पूर्णं पद्मसरः पद्म–प्रकरालंकृतोदकं ॥ ५१ ॥ वियच्चुंबिचलल्लोल–कल्लोलं क्षीरसागरं । दीप्यमानं विमानं च दिव्यतूर्यत्रिकांचितं ॥ ५२ ॥ अनर्घ्यनानारत्नानां निकरं मंदरोच्छ्रितं । निर्धूमसुज्ज्वलज्वालं घृतसिक्तं महानलं ॥ ५३ ॥ श्रेयस्करान् महास्वप्नान् सुखदान् कीर्त्तनादपि । निरीक्ष्यैतान् मृगाक्षी सा भृशं प्रमुदिताभवत् ॥ ५४ ॥ निर्गत्य नरकाद्यस्याः कुक्षावेति जगत्पतिः । स्वभावात्सा विमानस्य स्थाने भवनमीक्षते ॥ ५५ ॥ सार्वभौमस्य मातापि स्वप्नानेतान्निरीक्षते । किंतु किंचिन्न्यूनकांती–नर्हन्मातुरपेक्षया ॥ ५६ ॥ तथा चोक्तं—चतुर्दशाप्यमून् स्वप्नान् या पश्येत् किंचिदस्फुटान् । सा प्रभो प्रमदा सूते नंदनं चक्रवर्त्तिनं ॥ १ ॥ इयं पुनर्जया देवी स्फुटानेतानलोकत । तन्नाथ त्रिजगन्नाथं जिनं सा जनयिष्यति ॥ २ ॥ इति श्रीवासुपूज्यचरित्रे. यस्याः पुत्रो भवेत्सार्व–भौमोऽर्हंश्चेह

जोवा माटे अपूर्व औषधि जेवो सूर्य ७, उजळो, आकाशपर्यंत लांबो, कंपतो अने सिंहना चिन्हवाळो महाध्वज ८, जळथी भरेलो, रुपानो, पद्मवडे ढांकेलो कळश ९, पद्मना समूहथी अलंकृत पाणीवाळुं पूर्ण पद्मसरोवर १०, आकाशने चुंबन करता उछळता चपळ तरंगोवाळो क्षीरसमुद्र ११, दिव्य एवा त्रण प्रकारना वागता वाजित्रो युक्त दीपतुं एवुं देवविमान १२, अमूल्य एवा नाना प्रकारना रत्नोनो मेरुपर्वत जेवडो ढगलो १३, निर्धूम, उज्वळ ज्वाळावाळो अने घीए सींचेलो एवो अग्नि १४, (४७–५३) आ प्रमाणे श्रेयस्कर अने कीर्तनथी (नाम लेवाथी) पण सुख आपनार एवा महा स्वप्नो जोइने मृगाक्षी एवी ते राणी घणी हर्षित थाय. (५४) तीर्थंकर नरकमांथी नीकळीने जे मातानी कुक्षिमां आव्या होय ते माता स्वभावथीज विमानने स्थाने भुवन देखे छे. (५५) चक्रवर्त्तीनी माता पण आ ज चौद स्वप्नो देखे छे, पण ते अरिहंतनी माताए जोवाता स्वप्नो करतां कांइक हीन कांतिवाळा होय छे. (५६) कह्युं छे के "हे स्वामी ! आ ज चौद स्वप्नो कांइक अस्फुट एवा जे माता जुए छे ते चक्रवर्त्ती एवा पुत्रने प्रसवे छे (१) आ जयादेवीए तो ए चौद स्वप्नो बहु स्फुट जोया छे तेथी हे नाथ ! ते त्रण जगतना नाथ एवा जिनने जन्म आपशे. (२)" आ प्रमाणे श्री वासुपूज्यचरित्रमां कह्युं छे. जे मातानो पुत्र एक जन्ममां अरिहंत ने चक्रवर्त्ती बे पदवीधर थवानो होय तेनी माता

जन्मनि । सा द्विः स्वप्नानिमान् पश्ये-त्तथोक्तं पूर्वसूरिभिः ॥ ५७ ॥ अचिरा नाम तत्पत्नी शीललीलासमुज्ज्वला । सा द्विश्चतुर्दश स्वप्नान्निशाशेषे व्यलोकयत् ॥ ५८ ॥ इति वृद्धशत्रुंजयमाहात्म्ये.

एषामन्यतरान् स्वप्नान् लोकयेद्वासुदेवसूः । चतुरो बलदेवांबाथैकं मांडलिकप्रसूः ॥५९॥ प्रतिकेशवमाता तु त्रीन् स्वप्नानवलोकयेत् । मातैकं पश्यति स्वप्नं मुनेरपि महात्मनः ॥ ६० ॥ तथाचोक्तं सप्ततिशतस्थानके-जिणचक्कीणय जणणी निथंति चउदस गयाइवर सुविणे । सग चउ तिण्णि इगाई हरिबलपडिहरिमंडलियमाया ॥ १ ॥ श्रीहीरप्रश्नोत्तरेऽप्युक्तं-प्रतिवासुदेवे गर्भावतीर्णे तन्माता कियतः स्वप्नान् पश्यतीत्यत्र त्रीन् स्वप्नान् पश्यतीति ज्ञायते सप्ततिशतस्थानकशांतिचरित्राद्यनुसारेणेति. श्रीहैमरामचरित्रे तु रावणप्रतिवासुदेवे गर्भावतीर्णे तन्मात्रा कैकस्या एक एव स्वप्नो दृष्ट इत्युक्तमस्ति. तथा च तद्ग्रंथः—अन्यदा कैकसी स्वप्ने विशंतं स्वमुखे निशि । कुंभिकुंभस्थलीभेद-प्रसक्तं सिंह-

---

बे वखत आ चौद स्वप्नो जुए छे. ते विषे पूर्वाचार्योए कह्युं छे (५७) के-" शीलनी लीलावडे समुज्वळ एवी अचिरा नामे विश्वसेन राजानी पत्नी शेष रात्रीए पूर्वोक्त चौद स्वप्नोने बे वार जोती हवी. " (५८) आ प्रमाणे श्री वृद्धशत्रुंजयमाहात्म्यमां कह्युं छे.

आ चौदमांथी कोइ पण सात स्वप्नो वासुदेवनी माता जुए छे. बळदेवनी माता चार स्वप्नो जुए छे अने मांडलिक राजानी माता एक स्वप्न जुए छे. (५९) प्रतिवासुदेवनी माता त्रण स्वप्नो जुए छे अने महामुनिनी माता पण एक स्वप्न जुए छे. (६०) श्रीसप्ततिशतस्थान ग्रंथमां कह्युं छे के-' तीर्थंकर अने चक्रवर्तीनी माता हाथी विगेरे श्रेष्ठ चौद स्वप्नो जुए छे, अने सात, चार, त्रण अने एक स्वप्न वासुदेव, बलदेव, प्रतिवासुदेव ने मांडलिकनी माता अनुक्रमे जुए छे ' (१) श्री हीरप्रश्नोत्तरमां पण कह्युं छे के-' प्रतिवासुदेव गर्भमां आव्ये सते तेनी माता केटला स्वप्नो देखे ? तेना उत्तरमां कहेवानुं के त्रण स्वप्न देखे एम सप्ततिशतस्थान अने शांतिचरित्र विगेरेने अनुसारे जणाय छे ' श्री हेमचंद्राचार्यकृत रामचरित्रमां तो रावण प्रतिवासुदेव गर्भमां आवे सते तेनी माता कैकसीए एक स्वप्न दीठुं एम कहेल छे. ते संबंधी श्लोक आ प्रमाणे छे-" एकदा कैकसीए स्वप्नमां रात्रिए हाथीना कुंभस्थळने भेदवामां तत्पर थयेला सिंहने पोताना मुखमां प्रवेश करतो जोयो " (१) महामुनि धनारनी माता पण एक स्वप्न देखे एम कह्युं छे

मैक्षत ॥ १ ॥ मुनिमातुरेकस्वप्ननिरीक्षणं च मेघकुमारादिमातृवत्.

सोपेत्य कांतं विनया—त्प्रबोध्यैतान्निवेदयेत् । सोऽपि स्वप्नफलं ब्रूते विश्वोत्कृष्टांगजोद्भवं ॥ ६१ ॥ आकार्य स्वप्नशास्त्रज्ञान् प्रातरंतःसभं ततः । नृपः स्वप्नफलं पृच्छे—त्तेऽपि शास्त्रानुसारतः ॥ ६२ ॥ वदंत्येवं महाराज सुतो भावी भवत्कुले । तीर्थकरो वा चक्री वा महास्वप्नानुभावतः ॥ ६३ ॥ स्वप्नशास्त्रे यतः प्रोक्ताः सर्वे स्वप्ना द्विसप्ततिः । तत्र त्रिंशन्महास्वप्ना—स्तेषु चैते चतुर्दश ॥ ६४ ॥ इत्याकर्ण्य प्रमुदिता पुत्रजन्ममनोरथान् । दधाना विविधान् राज्ञी सा कुर्याद्गर्भपोषणं ॥६५॥ गर्भानुभावोत्पन्नानां दोहदानां शुभात्मनां । सा सेवनात्प्रपूर्णेच्छा सश्रीका शोभतेऽधिकं ॥ ६६ ॥ अथानुकूले मरुति प्रसर्पति सुखावहे । भूमौ निष्पन्नशस्यायां फलपूर्णेषु च द्रुषु ॥ ६७ ॥ ग्रहेषु सर्वेषूच्चेषु निमित्तेषु शुभेषु च । छत्रादिजन्मयोगेषु शुभे लग्ननवांशके॥ ६८ ॥ जने प्रमुदिते श्रेष्ठे निमित्ते शकुनादिके । अर्द्धरात्रे प्रसूते सा जिनं

ते मेघकुमारादिकनी माताए जोयेल छे ते प्रमाणे समजवुं.

पछी माता ज्यां पोताना स्वामी सुता होय त्यां आवीने विनयपूर्वक तेमने जगाडीने पोताने स्वप्न आव्यानी हकीकत निवेदन करे. ते पण 'विश्वमां उत्कृष्ट एवो तने पुत्र थशे' एवुं स्वप्नफळ कहे (६१) प्रभाते स्वप्नशास्त्रना जाणनार स्वप्नपाठकोने राजा सभामां बोलावे अने राजा तेने स्वप्ननुं फळ पूछे. तेओ पण शास्त्रानुसारे कहे छे के—हे महाराज ! आ महा स्वप्नना अनुभावथी तमारा कुळमां तीर्थंकर अथवा चक्रवर्त्ती पुत्र थशे. (६३) कारण के स्वप्नशास्त्रमां कुल ७२ स्वप्नो कह्या छे. तेमां त्रीश महा स्वप्नो कह्या छे, तेमांथी आ १४ स्वप्नो छे. (६४) स्वप्नपाठक पासेथी आ प्रमाणे सांभळीने हर्षित थयेली राणी पुत्रजन्मने लगता अनेक प्रकारना मनोरथो करती सती सारी रीते गर्भनुं पोषण करे (६५) गर्भना अनुभावथी उत्पन्न थता शुभ दोहलाने राजा पूर्ण करे एटले पूर्णेच्छावाळी माता अधिक शोभाने धारण करे. (६६) पछी अनुकूळ अने सुखावह पवन वातो होय त्यारे, सर्वभूमि धान्य निष्पन्न थयेली होय त्यारे अने वृक्षो फळथी पूर्ण थयेल होय त्यारे तेमज सर्व ग्रहो उच्च स्थाने आवेला होय, शुभ निमित्तो मळ्या होय अने छत्रादि शुभ जन्म योग आव्या होय, शुभ एवा लग्ननो नवांश होय त्यारे अने लोको सर्व प्रमुदित होय, शकुनादिक शुभनिमित्त वर्तता होय ते वखते

निधिमिव क्षितिः । ॥ ६९ ॥ उच्चग्रहास्त्वेवं—अर्काद्युच्चान्यजवृष-मृगकन्याकर्कमीनवणिजोंशैः । दिग्दहनाष्टाविंशति–तिथीषु नक्षत्रविंशतिभिः ॥ ७० ॥ छत्रादियोगास्त्वेवं–द्वितीये द्वादशे मूर्त्तौ सप्तमे भवने ग्रहाः । छत्रयोगस्तदा ज्ञेयः पुत्रो जातो नृपो भवेत् ॥ ७१ ॥ धने व्यये रिपुस्थाने मृत्युस्थाने यदा ग्रहः । योगः सिंहासनो नाम देवानामपि दुर्लभः ॥ ७२ ॥ तृतीये पंचमे स्थाने नवमैकादशे ग्रहाः । बलयोगस्तदाख्यातः सर्वसौख्यकरस्सदा ॥ ७३ ॥ चंद्रात्सप्तमगो जीवो–ऽथवा स्याच्चंद्रसंयुतः । जीवयोगं तमित्याहु–श्चिरायुः सुखवान् भवेत् ॥ ७४ ॥ केंद्रस्थानेषु सर्वेषु यदि सौम्यग्रहस्तदा । चतुःसागरयोगोऽयं देवानामपि दुर्लभः ॥ ७५ ॥ इत्यादि.

तदा दिशः प्रसीदंति सर्वाः प्रमुदिता इव । भवेन्नित्यांधकारेषु प्रकाशो नरकेष्वपि ॥ ७६ ॥ तथोक्तं स्थानांगेऽर्थतः–चतुर्भिः स्थान-

---

अर्धरात्रे पृथ्वी जेम निधानने प्रसवे तेम माता पुत्रने जन्म आपे (प्रसवे) (६९) उच्च ग्रहो आ प्रमाणे–मेष राशिनो सूर्य दश अंश, वृष राशिनो चन्द्र त्रण अंश, मकर राशिनो मंगळ अठ्ठावीश अंश, कन्या राशिनो बुध पंदर अंश, कर्क राशिनो गुरु पांच अंश, मीन राशिनो शुक्र सत्तावीश अंश अने तुला राशिनो शनि वीश अंश सुधी उच्च कहेवाय छे. (७०) वळी छत्रादि योग आ प्रमाणे–बीजे, बारमे, पहेले अने सातमे भवने उच्च ग्रहो आव्या होय त्यारे छत्रयोग थाय छे. ते वखते जन्मेल पुत्र राजा थाय छे. (७१) धने (२) व्यये (१२) रिपु (६) स्थाने अने मृत्यु (८) स्थाने ज्यारे ग्रहो आव्या होय त्यारे सिंहासन नामनो योग थाय छे ते देवोने पण दुर्लभ छे. (७२) त्रीजे, पांचमे, नवमे अने अग्यारमे स्थाने ग्रहो आव्या होय त्यारे बळ नामनो योग थाय छे, ते सर्व प्रकारना सुखनो करनार छे. (७३) चन्द्रथी सातमे स्थाने बृहस्पति आवेल होय अथवा चन्द्र संयुत होय त्यारे जीवयोग थाय छे, ते चिरायु करनार तेमज सुख आपनार छे. (७४) सर्व केंद्रस्थान (१–४–७–१०) मां ज्यारे सौम्य ग्रहो आव्या होय त्यारे चतुःसागरयोग थाय छे, ते देवोने पण दुर्लभ छे. इत्यादि (७५)

प्रभुना जन्म वखते सर्व दिशाओ पण जाणे प्रमुदित थइ होय तेम प्रसन्न देखाय छे अने नित्यांधकारवाळा नरकमां पण प्रकाश थाय छे, (७६) श्री स्थानांगसूत्रमां आ

कैरेभि–र्लोकोद्योतः प्रसर्पति । अर्हज्जन्मज्ञानदीक्षा–स्तेषां मोक्षोत्सवेऽपि च ॥ १ ॥ तत्रायांति तदा द्राक् षट्–पंचाशद्दिक्कुमारिकाः । कंपासनाः प्रभोर्जन्म विज्ञायावधिचक्षुषा ॥ ७७ ॥ तथाहि— भोगंकरा १ भोगवती २ सुभोगा ३ भोगमालिनी ४ । तोयधारा ५ विचित्रा च ६ पुष्पमाला ७ त्वनिंदिता ८ ॥ ७८ ॥ अष्टाधोलोकवासिन्यः किलैता दिक्कुमारिकाः । वदंत्यन्योन्यमाकार्य जातो भो जगदीश्वरः ॥ ७९ ॥ जीतं नो दिक्कुमारीणा–मित्यधोलोकवेश्मनां । त्रैकालिकीनां यज्जन्मो–त्सवः कार्यो जिनेशितुः ॥ ८० ॥ यामस्ततो वयमपि कृत्वा श्रीजगदीशितुः । सूतिकर्मादिकां सेवां कुर्महे सफलं जनुः॥ ८१ ॥ निश्चित्यान्योन्यमित्येताः प्रत्येकं स्वाभियोगिकान् । आज्ञापयंति निर्मातुं विमानं गमनोत्सुकाः ॥ ८२ ॥ तेऽपि योजनविस्तीर्णं रत्नस्तंभशतांचितं । विचित्रचित्रं निर्माय ढौकयंति तदद्भुतं ॥ ८३ ॥ सामानिकानां देवानां ताश्चतुर्भिः सहस्रकैः । महत्तराचतुष्केण प्रत्येकं समुपासिताः ॥ ८४ ॥ अनीकैः सप्तभिः सेना–धिपैर्देवैश्च सप्तभिः । सहस्रैश्च षोडशभि–र्देवाना-

---

प्रमाणे अर्थथी कह्युं छे के–" अरिहंतना जन्म, दीक्षा, ज्ञान अने मोक्ष कल्याणक वखते–ए प्रमाणे चार कल्याणके सर्व लोकमां उद्योत प्रसरे छे. " ते वखते तरत ज ५६ दिशाकुमारिका आसनप्रकंपथी अवधिज्ञानवडे प्रभुनो जन्म थयेल जाणीने त्यां आवे छे. (७७) ते आ प्रमाणे–भोगंकरा १, भोगवती, सुभोगा ३, भोगमालिनी ४, तोयधारा ५, विचित्रा ६, पुष्पमाळा ७ ने अनिंदिता ८–नामनी आठ अधोलोकवासी दिग्कुमारिका अन्योअन्य एक बीजीने बोलावीने कहे छे के–" प्रभुनो जन्म थयो छे. (७९) आ प्रसंगे आपणो अधोलोकवासी दिक्कुमारिकानो त्रणे काळमां थनारीनो ए जीत (आचार) छे के आपणे जिनेश्वरनो जन्मोत्सव करवो. (८०) माटे चालो आपणे त्यां जइए अने श्रीजगदीश्वरनी सूतिकर्मादि सेवा करीने आपणो जन्म सफळ करीए (८१) " आ प्रमाणे निश्चय करीने गमनोत्सुक एवी ते पोतपोतना आभियोगिक देवने त्यां जवा माटे विमान रचवानो हुकम करे (८२) ते देव पण तरत ज एक योजन विस्तीर्ण, सो रत्नना स्तंभोवाळुं अने चित्रविचित्र रचनावाळुं विमान तैयार करीने तेमनी पासे रजु करे. (८३) एटले ते दरेक देवी पोताना चार हजार सामानिक देवो अने चार महत्तरा देवीओथी, सेवाती सात सेना, सात सेनाधिपति देवो, सोळ हजार आत्मरक्षक देवो

मात्मरक्षिणां ॥ ८५ ॥ देवदेवीसमुदायै-रन्यैरप्यमितैर्वृताः । प्रपन्नदिव्यवादित्र-गीतनाट्या महर्द्धिकाः ॥ ८६ ॥ तद्विमानं समारुह्य गत्या सत्वरया रयात् । आगत्यार्हज्जन्मवेश्म-न्युत्तरंति विमानतः ॥ ८७ ॥ तिस्रः प्रदक्षिणाः कृत्वा जिनं च जिनमातरं । स्तुवंति मधुरैर्वाक्यै-र्विनयावनता इति ॥ ८८ ॥ नमोस्तु ते कुक्षिरत्न-धारिके विश्वदीपिके । लोकनाथस्य जननि स्वयंबुद्धस्य भास्वतः ॥ ८९ ॥ अधोलोकनिवासिन्यो वयं स्मो दिक्कुमारिकाः । अर्हज्जन्मोत्सवं कुर्मो भेतव्यं न त्वया ततः ॥ ९० ॥ इत्युदीर्य समुद्घातं कृत्वा वैक्रियमंजसा । संवर्त्तकं विकुर्वंति वायुं भूमिविशोधकं ॥ ९१ ॥ चतुर्दिशं ततो जन्म-गेहाद्योजनमात्रकं । क्षेत्रं तेन प्रसरता मारुतेन सुगंधिना ॥ ९२ ॥ रजःकाष्ठतृणादीनां दुष्टानां दूरमुज्झनात् । क्रियते निर्मलं राज्ञो भृत्येनेव गृहांगणं ॥ ९३ ॥ युग्मं ॥ प्रशमय्याथ तं वायुं समागत्य जिनांतिके । कृतस्वकार्या गायंत्य-स्तिष्ठंति मधुरस्वरं ॥ ९४ ॥

अन्यासां दिक्कुमारीणा-मप्यागमनपद्धतिः । इयमेव विशेष-

अने बीजा अपरिमित देवदेवीओथी परिवारित थइने दिव्य एवुं वाजित्र, गीत अने नृत्य जेमां थइ रहेल छे एवा ते विमानमां महर्द्धि संयुक्त आरोहण करे, अने उतावळी गतिवडे अरिहंतना जन्मगृह पासे आवीने विमानमांथी उतरे. (८४-८७) पछी जिनेश्वरने तेम ज जिनमाताने त्रण प्रदक्षिणा दइ विनयवडे नमस्कार करी मधुर वाक्योवडे आ प्रमाणे स्तवना करे (८८) " हे कुक्षिरत्नधारिके ! विश्वदीपिके ! स्वयंबुद्ध अने सूर्य समान तेजस्वी लोकनाथना हे माता ! तमने नमस्कार छे. (८९) अमे अधोलोकवासी दिग्कुमारिकाओ छीए. अमे अरिहंतनो जन्मोत्सव करवा आवी छीए, तमे अमाराथी बीशो नहीं. " (९०) आम कहीने तरत ज वैक्रिय समुद्घात करीने भूमिने शोधनार एवो संवर्तक वायु विकुर्वे. (९१) पछी प्रभुना जन्मगृहथी चार दिशाए एकेक योजन प्रमाण क्षेत्रने प्रसरता एवा सुगंधी वायुवडे रज, काष्ठ, तृणादि दुष्ट पदार्थोने दूर फेंकी देवावडे राजाना सेवकनी जेम राजाना घरनुं आंगणुं शुद्ध करे. (९२-९३) पछी ते वायुने समावी दइने पोतानुं कार्य समाप्त करी प्रभु पासे आवी मधुर स्वरे गाती गाती उभी रहे. (९४)

बीजी पण दिक्कुमारिकाओनी आगमन पद्धति आ प्रमाणे ज समजवी. तेमना

स्तु कर्त्तव्यः सोऽत्र वक्ष्यते ॥ ९५ ॥ मेघंकरा १ मेघवती २ सुमेघा ३ मेघमालिनी ४ । सुवत्सा ५ वत्समित्रा च ६ वारिषेणा ७ बलाहका ८ ॥ ९६ ॥ अष्टोर्ध्वलोकवासिन्य इत्येता दिक्कुमारिकाः । विकृत्य गगने मेघान् सुगंधिजलवर्षणैः ॥ ९७ ॥ पूर्वं प्रमार्जितं क्षेत्रं भृत्या इव नृपांगणं । अपंकिलं रजोमुक्तं कुर्युः सुरभि शीतलं ॥ ९८ ॥ युग्मं ॥ ततो विसृज्य तान् मेघान् पुष्पमेघान् विकृत्य च । तद्योजनमितं क्षेत्रं शक्रस्येव सभांगणं ॥ ९९ ॥ पंचवर्णप्रसूनानां प्रकरेण सुगंधिना । जानुमात्रोच्चेन वृंत–स्थायिना परिमंडितं ॥ १०० ॥ कृष्णागुरुतुरुष्कादि–सुगंधिद्रव्यजन्मना ॥ धूपेन धूपितं कुर्युः क्रीडार्हं द्युसदामपि ॥ १ ॥ त्रिभिर्विशेषकं ॥ नंदोत्तरा १ तथा नंदा २ आनंदा ३ नंदिवर्द्धना ४ । विजया ५ वैजयंती ६ च जयंती ७ चापराजिता ८ ॥ २ ॥ पूर्वरुचकवास्तव्या इत्येता दिक्कुमारिकाः । एत्य नत्वा जिनं सांबं गायंत्यादर्शपाणयः ॥ ३ ॥ समाहारा १ सुप्रदत्ता २ सुप्रबुद्धा ३ यशोधरा ४ । लक्ष्मीवती ५ शेषवती ६ चित्रगुप्ता ७ वसुंधरा ८ ॥ ४ ॥ याम्यदिग्-

---

कर्त्तव्यमां जे विशेषपणुं छे ते कहे छे. (९५) मेघंकरा, मेघवती, सुमेघा, मेघमालिनी, सुवत्सा, वत्समित्रा, वारिषेणा अने बलाहका—आ नामनी आठ ऊर्ध्वलोकवासी दिक्कुमारिका प्रभुना गृहपासे आवी (प्रभु तथा माताने नमी) आकाशमां मेघ विकुर्वी सुगंधी जळ वरसावीने पूर्वे प्रमार्जित करेला क्षेत्रने सेवकोनी जेम राजाना आंगणाने रज रहित, पंक रहित, सुगंधी अने शीतळ करे. (९६–९८) त्यारपछी जळना मेघने विसर्जीने पुष्पना मेघने विकुर्वी ते योजनप्रमाण क्षेत्रने शक्रनी सभाना आंगणानी जेम पांच वर्णना सुगंधी एवा पुष्पोनो समूह वरसावीने नीचा डींटवाळा पुष्पोथी जानुप्रमाण व्याप्त करे. (९९–१००) पछी कृष्णागुरु ने तुरुष्कादि सुगंधी द्रव्योथी बनावेला धूपवडे ते जमीनने धूपित करी देवोने पण क्रीडा करवा योग्य ते क्षेत्रने बनावे. (१०१) (पछी गाती सती प्रभुपासे उभी रहे.) त्यारपछी नंदोत्तरा, नंदा, आनंदा, नंदिवर्धना, विजया, वैजयंती, जयंती ने अपराजिता–नामनी पूर्वरुचकपर रहेनारी आठ दिक्कुमारिका त्यां आवी प्रभुने अने प्रभुनी माताने नमी हाथमां आदर्श लइने उभी रहे. (१०२–३) पछी समाहारा, सुप्रदत्ता, सुप्रबुद्धा, यशोधरा, लक्ष्मीवती, शेषवती, चित्रगुप्ता ने वसुंधरा नामनी दक्षिण रुचक-

रुचकादेता एत्याष्टौ दिक्कुमारिकाः । गायंति पूर्णकलशकरा दक्षिणतः प्रभोः ॥ ५ ॥ इलादेवी १ सुरादेवी २ पृथ्वी ३ पद्मावतीति ४ च । एकनासा ५ नवमिका ६ भद्रा ७ शीतेति ८ नामतः ॥ ६ ॥ पाश्चात्यरुचकादेताः समेता दिक्कुमारिकाः । गायंत्यात्ततालवृंताः प्रभोः पश्चिमतः स्थिताः ॥ ७ ॥ अलंबुसा १ मिश्रकेशी २ पुंडरीका ३ च वारुणी ४ । हासा ५ सर्वप्रभा ६ श्री ७ ह्रीं ८–रित्यष्टौ दिक्कुमारिकाः ॥ ८ ॥ उदीच्यरुचकादेत्य प्रभोरुत्तरतः स्थिताः । वीजयंत्यश्चामराणि मुदा गायंति तद्गुणान् ॥ ९ ॥ चित्रा १ च चित्रकनका २ शतेरा ३ च ततः परा । सौदामिनी ४ चतस्रोऽमू–र्विदिग्रुचकमंदिराः ॥ १० ॥ दिक्कुमार्योऽभ्येत्य नत्वा विदिक्षु चतसृष्वपि । सुष्ठु तिष्ठंति गायंत्यो दीपिकाव्यग्रपाणयः ॥ ११ ॥

रूपा १ रूपासिका २ चापि सुरूपा ३ रूपकावती ४। एता मध्यमरुचक–वासिन्यो दिक्कुमारिकाः ॥ १२ ॥ वर्द्धयित्वा प्रभोर्नालं चतुरंगुलवर्जितं । भूमौ निधाय सद्रत्नै–स्तत्खातं पूरयंति च ॥ १३ ॥ पीठं

वासी दिक्कुमारिका त्यां आवी (प्रभु अने माताने नमी) पूर्ण कळश हाथमां लइने दक्षिण बाजुए गाती सती उभी रहे. (१०४–५) पछी इलादेवी, सुरादेवी, पृथ्वी, पद्मावती, एकनासा, नवमिका, भद्रा ने शीता–ए आठ दिक्कुमारिका पश्चिम रुचकथी आवीने (प्रभु तथा माताने नमी) हाथमां पंखा लइ गाती सती प्रभुनी पश्चिम बाजुए उभी रहे. (१०७) पछी अलंबुसा, मिश्रकेशी, पुंडरीका, वारुणी, हासा, सर्वप्रभा, श्री ने ह्री–ए आठ दिक्कुमारिका उत्तर रुचकथी आवीने (प्रभु तथा माताने नमी) चामर वींजती अने हर्षथी प्रभुना गुण गाती सती प्रभुनी उत्तर बाजुए उभी रहे. (१०९) पछी चित्रा, चित्रकनका, शतेरा ने सौदामिनी–ए चार दिक्कुमारिका विदिशाना रुचक पर्वतोथी आवी, प्रभुने तथा माताने नमीने हाथमां दीपक लइ प्रभुना गुण गाती सती चारे विदिशामां उभी रहे. (१११)

पछी रूपा, रूपासिका, सुरूपा ने रूपकावती–आ चार दिक्कुमारिका मध्य रुचकमां रहेनारी प्रभुना गृहे आवी (प्रभुने तथा माताने नमी) प्रभुनुं नाळ चार अंगुळ उपरांतनुं छेदीने भूमिमां नाखी ते खाडो उत्तम रत्नोवडे पूरी तेनी उपर पीठ बांधे

बध्ध्वा तदुपरि दूर्वांकुरान् वपंति च । अर्हदंगप्रतीकस्य मा भूदाशातनेति ताः ॥ १४ ॥ दिक्त्रये पश्चिमावर्जे कुर्वंति कदलीगृहान् । तेष्वेकैकं चतुःशालं वेश्म सिंहासनान्वितं ॥ १५ ॥ ततो गृहीत्वा तास्तीर्थ–करं स्वकरसंपुटे । दत्तालंबां जिनांबां च पुरस्कृत्येश्वरीमिव ॥ १६ ॥ स्वामिनीत इत इति नीत्वा दक्षिणदिग्गृहे । सिंहासने चोपवेश्य मृदुविज्ञप्तिपूर्वकं ॥ १७ ॥ शतपाकादिभिस्तैलै–रभ्यंजंति सुगंधिभिः । उद्वर्त्तयन्ति सुरभि–द्रव्योद्वर्त्तनकैस्ततः ॥ १८ ॥ त्रिभिर्विशेषकं ॥ ततः प्राग्वत्समानीय पौरस्त्यकदलीगृहे । सिंहासने स्थापयंति सप्रभुं प्रभुमातरं ॥ १९ ॥ गंधोदकैस्तथा पुष्पो–दकैः शुद्धोदकैरपि । मज्जयित्वा प्रकुर्वंति सर्वालंकारभूषितां ॥ २० ॥ समानीय ततः प्राग्वदुदीच्यकदलीगृहे । अध्यासयंति तां सिंहा–सनेंकन्यस्तनंदनां ॥ २१ ॥ गोशीर्षचंदनैर्धास्या–नाययंत्याभियोगिकैः । शरकारणिमाथेनो–त्पादयंत्यनलं नवं ॥ २२ ॥ संधुक्ष्योद्दीपयंत्यग्निं ज्ञाकलैश्चंदनैः कृशैः । चंदनानि

अने ते पीठ उपर दूर्वांकुरने वावे. आ क्रिया प्रभुना अंगभूत विभागनी पण कोइ आशातना न करे ते माटे करे. (११४) पछी पश्चिम सिवायनी त्रण दिशामां त्रण केळना घर करे अने ते दरेकमां सिंहासन सहित एकएक चतुःशाल करे. (११५) पछी प्रभुने पोताना करसंपुटमां लइने अने माताने स्वामिनीनी जेम हाथनुं आलंबन दइने ' हे स्वामिनी ! आम चालो, आम चालो, ' एम कहेती दक्षिणदिशाना कदळीगृहमां लावे अने माताने कोमळ विज्ञप्तिपूर्वक सिंहासन उपर बेसारे. (११७) पछी सुगंधी एवा शतपाकादि तेलवडे प्रभुनी माताने अभ्यंगन करे अने सुगंधी द्रव्यवाळा उद्वर्त्तनवडे उद्वर्तना करे. (११८) पछी प्रथमनी जेम पूर्व बाजुना कदळीगृहमां लावीने सिंहासनपर बेसारी प्रभु सहित माताने गंधोदक, पुष्पोदक ने शुद्धोदकवडे न्हवरावे, अने (शरीर कोरुं करी) सर्व वस्त्रालंकारथी विभूषित करे. (१२०) पछी प्रथमनी जेम उत्तर बाजुना कदळीगृहमां लावी खोळामां बेसाडेला पुत्र सहित माताने सिंहासनपर बेसारे. (१२१) पछी आभियोगिक देव पासे गोशीर्षचंदनना लाकडां मंगावी शरक ने अरणिना मंथनवडे नवो अग्नि प्रगटावे. (१२२) चंदनना काष्टोवडे तेने प्रदिप्त करे. पछी तेमां

---

१ वेदिका अथवा बाजोठ.

ततो हुत्वा रक्षां कुर्वंति पावनां ॥ २३ ॥ प्रभोश्च प्रभुमातुश्च रक्षापोट्टलिकां तया । बध्नंति ता दुष्टशाकि-न्यादिदृग्दोषघातिनीं ॥ २४ ॥ आस्फाल्य रत्नरचना-चित्रौ वृत्ताश्मगोलकौ । भूयाः शैलायुरित्याशी-र्गिरं संगिरते प्रभोः ॥ २५ ॥ प्रभुं करतले धृत्वा गृहीत्वांबां च बाह्वोः । जन्मवेश्मनि शय्यायां नीत्वा गायंति भक्तितः ॥ २६ ॥

एवं च दिक्कुमारीभिः कृते जन्मोत्सवे प्रभोः । सिंहासनं सुरेंद्रस्य कंपते युधि भीरुवत् ॥ २७ ॥ सोऽप्यर्हज्जन्म विज्ञाय प्रयुक्तावधिचक्षुषा । उत्थाय विनयं प्राग्व-त्कुर्याच्छक्रस्तवावधि ॥ २८ ॥ ततः पूर्वामुखः शक्रः शक्रसिंहासने स्थितः । चतुरश्चिंतयत्येवं जातोऽयं जगदीश्वरः ॥ २९ ॥ तज्जीतमेतदस्माकं त्रैकालिकमरुत्वतां । कार्यो यदर्हतां स्फीतो जन्मकल्याणकोत्सवः ॥३०॥ इति निश्चित्य पादात्य-नायकं नैगमेषिणं । आकार्य ज्ञापयत्येवं स्वःपतिर्विनयानतं ॥ ३१ ॥ स्वर्गेऽस्मिन् सर्वदेवानां घंटावादनपूर्वकं । प्रस्थानं ज्ञापयास्माकं जिन-

---

गोशीर्षचंदन होमी तेनी पवित्र रक्षा करे. (१२३) अने ते रक्षानी बे पोटली करीने माताने अने प्रभुने हाथे दुष्ट शाकिन्यादिनो दृष्टिदोष न लागवा माटे बांधे. (१२४) पछी रत्ननी रचनावडे विचित्र एवा पत्थरना बे गोळा परस्पर अफळावीने 'हे प्रभु ! तमे पर्वत समान दीर्घ आयुषवाळा थाओ.' एम आशीष आपे. (१२५) पछी प्रभुने करसंपुटमां लइ माताना हाथने टेको आपी तेमने जन्मगृहमां लावी तेमनी शय्यापर बेसारे अने बधी दिक्कुमारिकाओ भक्तिथी गायन करीने पोतपोताने स्थाने जाय. (१२६) इति दिक्कुमारिकाकृत जन्मोत्सव.

आ प्रमाणे प्रभुनो जन्मोत्सव करीने दिक्कुमारिका जाय एटले युद्धमां बीकणनी जेम सुरेंद्रनुं आसन कंपायमान थाय. (१२७) एटले अवधिज्ञानवडे उपयोग देतां प्रभुनो जन्म थएल जाणीने आसनथी उठी शक्रस्तव कहेवा सुधी सर्व प्रकारनो विनय पूर्ववत् करे. (१२८) पछी शक्र पूर्वाभिमुखे पोताना सिंहासनपर बेसी चतुर एवो पोते एम विचारे के—' जगदीश्वर (तीर्थंकर)नो जन्म थयो छे. (१२९) तो त्रणे काळमां थनारा इंद्रोनो ए आचार छे के तेणे अरिहंतना जन्मकल्याणकनो उत्सव बहु सारी रीते करवो. (१३०) आ प्रमाणे निश्चय करीने पोतानी पदाति सेनाना नायक नैगमेषी देवने बोलावे अने नमस्कार करता एवा ते देवने स्वर्गनो पति आ प्रमाणे कहे के-(१३१) आ स्वर्गना सर्व देवोने घंटावादनपूर्वक अमारुं जिनजन्मोत्सवमाटे

॥५०॥ त्रिभिर्विशेषकं ॥ उदीच्येन त्रिसोपाना-ध्वना सामानिकाः सुराः । प्रविश्यान्ये च याम्येन यथास्थानकमासते ॥ ५१ ॥

जंगमस्वर्गवत्तस्मिन् विमाने प्रस्थिते पुरः । चलंति मंगलान्यष्टौ संपूर्णः कलशस्ततः ॥ ५२ ॥ छत्रं पताकाश्चमरा महेंद्राख्यो ध्वजस्ततः । सहस्रयोजनोत्तुंगो लघुध्वजसहस्रयुक् ॥ ५३ ॥ ततः सेनाः पंच सेना-पतयोऽथाभियोगिकाः । यथाशक्तिप्रकटित-वपुर्वस्त्रविभूषणाः ॥ ५४ ॥ पश्चात्केचित्पुरः केचि-त्केचिच्चोभयपार्श्वतः । परिवृत्य विमानं त-त्प्रतिष्ठंते सुधाभुजः ॥ ५५ ॥ देवेंद्रशासनात्केचि-त्केचिन्मित्रानुवृत्तितः । पत्नीप्रेरणया केचि-त्केचिच्छ्रीजिनभक्तितः ॥ ५६ ॥ केचिद्धर्मधिया केचि-ज्जीतबुद्ध्या सुराः परे । कुतूहलार्थिनो नाना-भूषणांवरवाहनाः ॥ ५७ ॥ प्राच्यपुण्यानुसारेण संप्राप्तैश्वर्यशालिनः । देवेंद्रमनुगच्छंति सर्वे सौधर्मवासिनः ॥ ५८ ॥ त्रिभिर्विशेषकं ॥

सौधर्मस्वर्गमध्येन समृद्ध्यैवं सुरेश्वरः । वीचितो देवदेवीभि-

पछी उत्तर बाजुना त्रण सोपानवडे उपर चडी सामानिक देवो पोताना आसन पर बेसे अने बीजा देवो दक्षिण बाजुना त्रण सोपानवडे उपर चडी पोतपोताना आसन पर बेसे. (१५१)

जंगम स्वर्ग तुल्य ते विमान चालवाने तैयार थये सते आगळ अष्ट मंगलिक चाले. पछी संपूर्ण कळश, छत्र, पताका, चामर अने महेन्द्रध्वज के जे एक हजार योजन उंचो अने नानी नानी हजार ध्वजाओवाळो होय छे ते चाले. (१५३) त्यारपछी पांच सेना, पांच सेनापतिओ अने यथाशक्ति प्रगट करेल छे शरीर, वस्त्र अने आभूषणो जेणे एवा आभियोगिक देवो चाले. (१५४) केटलाक ते विमाननी आगळ, केटलाक पाछळ, केटलाक बे बाजुए अने केटलाक देवताओ ते विमानना फरता फरी वळीने चाले. (१५५) केटलाक देवो इंद्रनी आज्ञाथी, केटलाक मित्रनी अनुवृत्तिथी, केटलाक देवांगनानी प्रेरणाथी, केटलाक प्रभुपरनी भक्तिथी, केटलाक धर्मबुद्धिथी, केटलाक पोतानो आचार छे एवी बुद्धिथी अने केटलाक कुतूहळ जोवा माटे एम असंख्य देवो अनेक प्रकारना वस्त्राभूषण धारण करी जूदा जूदा वाहनपर बेसीने पूर्वपुण्यना अनुसारे जेमने ऐश्वर्यनी ओछीवत्ती प्राप्ति थयेल छे एवा सर्व सौधर्म देवलोकनिवासी देवो देवेंद्रनी साथे आकाशमार्गे चाले. (१५८)

सौधर्म देवलोकना मध्यमां थइने सर्व समृद्धि साथे नीकळता एवा सुरेश्वरने सर्व

राश्चर्यस्मेरदृष्टिभिः ॥ ५९ ॥ पंचानीकपरिक्षिप्त–महेंद्रध्वजभाक् पुरः। उद्दंडशुंडद्विपवद् द्विषां चेतांसि कंपयन् ॥ ६० ॥ दिव्यदुंदुभिनिः-स्वान–ध्वानव्याप्तनभोंतरः। उत्तराहेण निर्याण–मार्गेणोत्तरति द्रुतं ॥ ६१ ॥ त्रिभिर्विशेषकं ॥ यथा वरयिता लोके राजमार्गेण गच्छति। स्वसमृद्धिं दर्शयितुं जनानां स्वं प्रशंसतां ॥ ६२ ॥ तथेंद्रोऽपि पथानेन जिनजन्मोत्सवादिषु। निर्याति भूयसां बोधि–लब्धये तत्प्रशंसिनां ॥६३॥

अथासंख्यद्वीपवार्द्धि–मध्येन द्रुतमापतन्। नंदीश्वरे रतिकर–पर्वतेऽग्निविदिग्गते ॥ ६४ ॥ कृत्वा विमानसंक्षेपं जिनजन्मपवित्रिते। नगरे शीघ्रमागत्य मंदिरं जिनजन्मनः ॥ ६५ ॥ द्राक् त्रिप्रदक्षिणीकृत्य विमानेन सुरेश्वरः। विमुंचति तदैशान्यां चतुर्भिरंगुलैर्भुवः ॥ ६६ ॥ विशेत्ततो गृहं स्वाम्या–लोकने घटितांजलिः। पुलकैर्जलदासिक्त–कदंबकुसुमायितः ॥ ६७ ॥ जिनं समातृकं नत्वा दत्त्वा च त्रिःप्रदक्षिणां। सुरेश्वरो

देवदेवीओ आश्चर्ययुक्त दृष्टिवडे जोवे. (१५९) पांच प्रकारना सैन्यथी वींटायेला, आगळ चालता महेंद्रध्वजथी उंचा करेला शुंडादंडवाळा हस्तीनी जेम शत्रुओना दिलने कंपावता अने दिव्य दुंदुभिना नादथी आकाशना अंतरने भरी देता सौधर्मेंद्र उत्तर दिशाना मार्गे उतावळा नीचे उतरे. (१६१) जेम श्रेष्ठ जनो लोकमां पोताने प्रशंसता जनोने पोतानी समृद्धि देखाडवाने माटे राजमार्गे चाले छे तेम इंद्र पण जिनजन्मोत्सवादि प्रसंगे पोतानी प्रशंसा करनारा अनेक जनोने बोधिबीजनो लाभ थवाने माटे आ मार्गे ज नीकळे छे. (१६३)

एवी रीते नीचे उतर्या पछी असंख्य द्वीप समुद्रोनी उपर थइने उतावळा प्रयाण करतां नंदीश्वरद्वीपमां अग्निकोणमां आवेला रतिकर पर्वत उपर आवे. (१६४) त्यां विमान संक्षेपीने एटले बीजुं नानुं विमान विकुर्वीने जिनेश्वरना जन्मथी पवित्र थयेला नगरमां जिनेश्वरना जन्मवाळा मंदिर पासे उतावळा आवे. (१६५) पछी विमान सहित इंद्र ते मंदिरने त्रण प्रदक्षिणा दइने भूमिथी चार अंगुळ उंचुं ईशानकोणमां ते विमान स्थापन करे. (१६६) पछी ते मंदिरमां प्रवेश करे अने स्वामीने देखतां ज अंजली जोडी, वरसादथी सींचायेल कदंबवृक्षना पुष्पनी जेम रोमांचित थइने माता सहित प्रभुने नमस्कार करे. पछी तेमने त्रण प्रदक्षिणा दइने इंद्र कहे के–" हे जगत्पूज्य माता!

वदत्येवं जगत्पूज्ये नमोऽस्तु ते ॥ ६८ ॥ धन्यासि कृतपुण्यासि सफलं तव जीवितं । जगच्चिंतामणिर्यत्ते कुक्षौ जातो जिनेश्वरः ॥ ६९ ॥ विभासि मातस्त्वं विश्व–चक्षुषा शिशुनामुना । लोकंपृणेन शुचिना प्रातःसंध्येव भानुना ॥ ७० ॥ जनयंत्या जगन्नाथं मुक्तिमार्गोपदेशकं । सर्वेषामप्युपकृतं जनानां जननि त्वया ॥ ७१ ॥ विमोहतिमिरोद्रेक–लुप्तविज्ञानचक्षुषां । अददत्यामुमगदं किं नो नोपकृतं त्वया ॥ ७२ ॥ अहं शक्रोऽस्मि देवेंद्रः सौधर्मस्वर्गनायकः । त्वन्नंदनगुणाकृष्ट इहायातोऽस्मि पावने ॥ ७३ ॥ मातस्ततोऽनुजानीहि न भेतव्यं मनागपि । त्वत्सुतस्य करिष्यामो जन्मकल्याणकोत्सवं ॥ ७४ ॥

इत्युदित्वा प्रभोर्मातु–र्दत्तेऽवस्वापिनीं हरिः । पार्श्वे च स्थापयत्यस्याः कृत्वा प्रतिकृतिं प्रभोः ॥ ७५ ॥ केनचिद्दुष्टदेवेन हृतनिद्रेह मा स्म भूत् । इयं पुत्रमनालोक्य पिंजलेत्ययमुद्यमः ॥ ७६ ॥ यद्वा परिजनस्तस्या जातमात्रं तदंगजं । अनालोक्य विषादं मा यासीदित्ययमुद्यमः ॥ ७७ ॥

तमने नमस्कार थाओ. (१६८) तमे धन्य छो, कृतपुण्य छो, तमारुं जीवित सफळ छे; कारणके तमारी कुक्षिथी जगचिंतामणि एवा जिनेश्वर जन्म्या छे. (१६९) हे माता ! तमे विश्वना चक्षुरूप आ पुत्रवडे जेम पवित्र अने लोकने प्रीतिकारक सूर्यवडे प्रातःसंध्या शोभे तेवा शोभो छो. (१७०) आ मुक्तिमार्गना उपदेशक एवा जगनाथने जन्म आपीने तमे हे माता ! सर्व जनो उपर उपकार कर्यो छे. (१७१) मोहरूप तिमिरना उद्रेकथी जेना विज्ञानरूपी चक्षुओ लुप्त थया छे तेवा जीवोने औषधरूप आ परमात्माने आपता तमे शुं उपकार कर्यो नथी ? (१७२) हुं शक्र नामनो देवेंद्र छुं. सौधर्म स्वर्गनो स्वामी छुं. तमारा पुत्रना गुणथी आकर्षित थइने हे पवित्र माता ! हुं अहीं आव्यो छुं. (१७३) हे माता ! हुं तमारी आज्ञा मागुं छुं. तमारे माराथी जरा पण बीवुं नहीं. तमारा पुत्रना जन्मकल्याणक संबंधी उत्सव करीशुं. " (१७४)

आ प्रमाणे कहीने प्रभुनी माताने अवस्वापिनी निद्रा दइने मातानी पासे प्रभुनुं प्रतिबिंब करीने मूके. (१७५) कोइ दुष्ट देव निद्रा हरी ले अने माता पोतानी पासे पुत्रने न जोवाथी आकुळव्याकुळ न थाय ते माटे आ उद्यम छे. (१७६) अथवा तेना परिजनमांथी कोइ त्यां आवे अने तरतना जन्मेला बाळकने त्यां न जुए तेथी विषाद पामी जाय तेम न बने तेटला माटे आ उद्यम छे. (१७७)

ततश्चार्हतमादत्ते पंचमूर्तिः सुरेश्वरः । मूर्त्यैकया धौतपूत–धूपिते करसंपुटे ॥ ७८ ॥ एकया छत्रमाधत्ते धत्ते द्वाभ्यां च चामरौ । पंचम्या वज्रमादाय पुरो गच्छति भृत्यवत् ॥ ७९ ॥ तत्पालकविमानं च रिक्तमेवानुगच्छति । स्वामिनः पादचारित्वा–न्नृपानुगगजादिवत् ॥ ८० ॥ तुष्टैः परिवृतो देवैः सानंदः स पुरंदरः । ययौ मंदरमौलिस्थे कानने पांडुकाह्वये ॥ ८१ ॥ एवं च—

ज्ञातार्हज्जन्मनेशान–स्वामिना शूलपाणिना । आदिष्टः पूर्ववत्पत्ति–प्रष्ठोऽलघुपराक्रमः ॥ ८२ ॥ सोऽपि घंटां महाघोषां वादयत्यन्वितावयां । उद्घोषणां च कुरुते जिनजन्मोत्सवोचितां ॥ ८३ ॥ विमानं पुष्पकं नाम पुष्पकामरसज्जितं । आरुह्योत्तरलोकार्द्ध–पतिर्गच्छति शक्रवत् ॥ ८४ ॥ दाक्षिणात्येन निर्याण–मार्गेणोत्तीर्य सत्वरं । नंदीश्वरे रतिकर–गिरावीशानदिग्गते ॥ ८५ ॥ संक्षिप्य पुष्पकं स्वर्ण–महीधरमुपागतः । शक्रवत्प्रणिपत्यानु–शीलति त्रिजगद्गुरुं ॥ ८६ ॥

त्यारपछी इंद्र पांच रूप करीने एक रूप वडे जळवडे धोइने पवित्र करेला तेम ज धूपित करेला करसंपुटमां प्रभुने ग्रहण करे. (१७८) एक रूपवडे पाछळ छत्र धारण करे, बेरूपवडे बे बाजु रही चामर वींजे अने पांचमा रूपवडे हाथमां वज्र धारण करीने सेवकनी जेम आगळ चाले. (१७९) स्वामी एटले इंद्र पगे चालता होवाथी तेनुं पालक विमान खाली ज तेनी पाछळ चाले. ते पगे चालता राजानी पाछळ तेना गजादिक खाली चालता होय तेवुं लागे. (१८०) तुष्टमान एवा देवोथी परिवृत एवा इंद्र आनंद सहित मेरुपर्वतपर रहेला पांडुक नामना वनमां आवे. (१८१)

ए ज प्रमाणे आसनकंपथी प्रभुना जन्मने जाणीने शूळपाणि एवा ईशानेंद्र पण सौधर्मेंद्रनी जेम पोताना पायदळ सेनाना नायक अलघुपराक्रम नामना सेनापतिने आज्ञा करे (१८२) ते पण सार्थक नामवाळी महाघोषा घंटा वगाडे अने जिनजन्मोत्सवने उचित उद्घोषणा करे. (१८३) पछी पुष्पक नामनो देव पुष्पक नामनुं विमान सज्ज करे. एटले तेमां बेसीने उत्तरार्धना अधिपति ईशानेंद्र परिवार साथे शक्रेंद्रनी जेम चाले. (१८४) ते दक्षिण बाजुना नीकळवाना मार्गे नीकळी, नीचे उतरी सत्वर नंदीश्वरद्वीपे आवी, ईशान कोणना रतिकर पर्वत उपर पोताना पुष्पक विमानने संक्षेपे अने तरत ज मेरुपर्वत उपर आवी शक्रेंद्रनी जेम त्रिजगद्गुरुने नमस्कार करी सेवा करवा लागे. (१८६)

एवं शेषा अपि समे देवराजा जिनेश्वरं । सभक्ति मंदरमुपा-गम्य सम्यगुपासते ॥ ८७ ॥ दश वैमानिका इंद्रा भवनेशाश्च विंशतिः । द्वात्रिंशद्व्यंतरेंद्रा द्वौ सूर्यचंद्रमसाविति ॥ ८८ ॥ संख्यातीताः समायांति यद्यप्यर्कहिमांशवः । विवक्ष्येते तथापि द्वा-वत्र जातिव्यपेक्षया ॥ ८९ ॥ तथोक्तं श्रीमुनिदेवसूरिकृते श्रीशांतिचरित्रे-ज्योतिष्कनायकौ पुष्प-दंतौ संख्यातिगाविति । हेमाद्रिमाद्रियंते स्म चतुःषष्टिः सुरेश्वराः ॥ ९० ॥ उत्तराध्ययनप्राकृतवृत्तौ केशीगौतमीयाध्ययने आवश्यकहारिभद्र्यां च श्रीऋषभदेवजन्मोत्सवाधिकारे श्रीसमवायांगे द्वात्रिंशे समवाये च व्यंतराणामिंद्रत्वाविवक्षया द्वात्रिंशदेवेंद्रा उक्ताः संतीति.

सर्वेऽप्यागच्छंति मेरु-पर्वतं सपरिच्छदाः । विशेषो योऽत्र घंटादि-नाम्नां सोऽथ निरूप्यते ॥ ९१ ॥ तृतीये पंचमे स्वर्गे सप्तमे दशमेऽपि च । घंटा सुघोषाथ हरि-नैगमेषी पदातिराट् ॥ ९२ ॥ निर्याणमार्गश्चोदीच्यो गिरी रतिकरोऽपि च । भवेद्विमानसंक्षेप-स्थानं सौधर्मराजवत् ॥ ९३ ॥ तुर्ये षष्ठेऽष्टमेऽथ द्वा-

---

ए प्रमाणे बीजा सर्व इंद्रो पण समकाळे मेरुपर्वत उपर आवे अने भक्तिपूर्वक जिनेश्वरने प्रणाम करी सम्यग् प्रकारे सेवा करवा लागे (१८७) दश वैमानिकना इंद्र, वीश भवनपतिना इंद्र, बत्रीश व्यंतरोना इंद्र अने सूर्य तथा चंद्र (बे ज्योतिषिना इंद्र) आ प्रमाणे कुल ६४ इंद्रो आवे. (१८८) जोके चंद्र-सूर्य तो असंख्याता आवे परन्तु अहीं जातिनी अपेक्षाए ज बे कह्या छे. (१८९) ते विषे श्री मुनिसुन्दरसूरिकृत श्री शांतिचरित्रमां कह्युं छे के-' ज्योतिष्कना नायक सूर्य-चंद्र असंख्याता मंदरगिरिपर आवे छे, छतां ६४ इंद्रो आवे छे एम कहेवाय छे. (१९०) श्री उत्तराध्ययनसूत्रनी प्राकृतवृत्तिमां केशीगौतमीय अध्ययनमां अने आवश्यकहारिभद्रीमां श्री ऋषभदेवना जन्मोत्सवना अधिकारमां तथा श्री समवायांगना बत्रीशमा समवायमां व्यंतरोना इंद्रपणानी अविवक्षा करीने बत्रीश ज इंद्रो आवे एम कह्युं छे.

आ बधा इंद्रो परिवार सहित मेरुपर्वत पर आवे छे. एमां घंटानां नामो विगेरेमां फेरफार छे ते कहीए छीए (१९१) त्रीजे, पांचमे, सातमे ने दशमे देवलोके सुघोषा घंटा अने पत्तिनो सेनापति हरिनैगमेषी छे. (१९२) नीकळवानो मार्ग उत्तर दिशाए छे अने रतिकर पर्वत ज सौधर्मेंद्रनी जेम विमानने संक्षेपवानुं स्थान छे. (१९३) चोथे, छठे,

दशे स्वर्गे बिडौजसां। घंटापत्तीशनामादि पूर्वोक्तं शूलपाणिवत्॥९४॥ पालकः १ पुष्पकः २ सौम–नसः ३ श्रीवत्ससंज्ञकः ४। नंद्यावर्त्तः ५ कामगम ६–स्तथा प्रीतिगमोऽपि ७ च॥९५॥ मनोरमश्च ८ विमलः ९ सर्वतोभद्र १० इत्यमी। क्रमाद्दशानामिंद्राणां प्रोक्ता यानविमानकाः॥९६॥ तत्तन्नाम्ना तदध्यक्षाः प्रोक्ता देवा अपि श्रुते। सामानिकादयस्त्वेषां विज्ञेयाः क्षेत्रलोकतः॥९७॥

भवत्योघस्वरा घंटा द्रुमः पादात्यनायकः। विमानं चमरेंद्रस्य पालकार्द्धप्रमाणयुक्॥९८॥ योजनानां शतान् पंचो–त्तुंग इंद्रध्वजोऽस्य च। शेषमुक्तस्वरूपं तु शक्रवत्परिभाव्यतां॥९९॥ बलींद्रस्यापि विज्ञेयं सर्वं चमरवत्परं। घंटा महौघस्वरा स्यात् पादात्येशो महाद्रुमः॥२००॥ न स्युर्यानविमानोप–कल्पिनोऽधिकृताः सुराः। भवनव्यंतरज्योति–ष्काणां किंत्वाभियोगिकाः॥१॥ शेषाणां दाक्षिणात्यानां भद्रसेनः पदातिराट्। उदीच्यानां च विज्ञेयः पत्तीशो दक्षसंज्ञकः॥२॥ विमानं चार्द्धमानं स्या–च्चमरेंद्रविमानतः। इंद्र-

---

आठमे ने बारमे स्वर्गे इंद्रोनी घंटानुं ने पत्तीशनुं नाम विगेरे प्रथम कहेला ईशानेंद्र प्रमाणे छे. (१९४) पालक, पुष्पक, सौमनस, श्रीवत्स, नंद्यावर्त, कामगम, प्रीतिगम, मनोरम, विमळ ने सर्वतोभद्र ए दश अनुक्रमे दश इंद्रोना यान–विमानानां नामो छे. (१९६) तेम ज ते ते नामना तेना अध्यक्ष देवो पण शास्त्रमां कह्या छे. तेना सामानिक विगेरे देवोनी संख्या क्षेत्रलोकथी जाणवी. (१९७)

हवे भवनपति माटे कहे छे–चमरेंद्रनी घंटा ओघस्वरा नामनी छे. पदातिनायक द्रुम नामनो छे अने तेनुं विमान पालक विमानथी अर्ध प्रमाणवाळुं छे. (१९८) तेनो इंद्रध्वज पांचशें योजन उंचो होय छे, बाकीनुं स्वरूप शक्रेंद्र प्रमाणे जाणवुं. (१९९) बळींद्रनुं पण बधुं चमरेंद्र प्रमाणे जाणवुं, परंतु घंटा महौघस्वरा नामनी अने पदातिनायक महाद्रुम नामे जाणवो. (२००) बाकीना भवनपति, व्यंतर अने ज्योतिष्कोने यान–विमानना रचनारा खास देवो नथी, पण तेना आभियोगिक देवो ज ते कार्य करे छे. (२०१) बाकीना दक्षिण बाजुना नव इंद्रोनो पदातिस्वामी भद्रसेन नामनो छे अने उत्तर बाजुना नव इंद्रोनो पदातिस्वामी दक्ष नामनो छे. (२०२) विमान चमरेंद्रना विमानथी अर्ध प्रमाणवाळुं होय छे, अने सर्वनो इंद्रध्वज पण तेमनी ध्वजाथी

ध्वजश्च सर्वेषां तध्वजार्द्धमितो मतः ॥ ३ ॥ तथा मेघस्वरा १ हंस-स्वरा २ क्रौंचस्वरापि ३ च । मंजुस्वरा ४ मंजुघोषा ५ सुस्वरा ६ मधुरस्वरा ७ ॥ ४ ॥ नंदिस्वरा ८ नंदिघोषा ९ घंटासंज्ञाः क्रमादिमाः । नागादिषु निकायेषु देवेंद्राणां निरूपिताः ॥ ५ ॥ याम्यानां व्यंतरेंद्राणां घंटा मंजुस्वराभिधा । उदीच्यानां च सर्वेषां मंजुघोषाभिधा भवेत् ॥ ६ ॥ सहस्रयोजनव्यासा-यामं यानविमानकं । तेषां शतं सपादं च योजनान्युच्छ्रितो ध्वजः ॥ ७ ॥ ज्योतिष्केषु च चंद्राणां घंटा स्यात्सुस्वराभिधा । तथा सुस्वरनिर्घोषा भास्वतां शेषमुक्तवत् ॥ ८ ॥ घंटावादनमेतेषां प्राग्वदुद्घोषणादि च । प्राप्तानुशिष्टयस्तुष्टा विदधत्याभियोगिकाः ॥ ९ ॥

वज्रपाणिः परिवृतो देवैरेवं चतुर्विधैः । मंदराचलमौलिस्थे कानने पांडकाह्वये ॥ १० ॥ अभिषेकशिलायां च तस्मिन् सिंहासनोत्तमे । निधायार्हतमुत्संगे तुष्टचित्तो निषीदति ॥ ११ ॥ ततश्चाच्युतदेवेंद्रो वदति स्वाभियोगिकान् । अर्हज्जन्माभिषेकार्हां सामग्रीं

अर्ध प्रमाणवाळो होय छे. (२०३) घंटानां नाम अनुक्रमे मेघस्वरा १, हंसस्वरा २, क्रौंचस्वरा ३, मंजुस्वरा ४, मंजुघोषा ५, सुस्वरा ६, मधुस्वरा ७, नंदिस्वरा ८ अने नंदिघोषा ९, ए प्रमाणे नागकुमारादि नव निकायना देवेंद्रोनी समजवी. (२०५) दक्षिण बाजुना व्यंतरेंद्रोनी घंटा मंजुस्वरा नामनी अने उत्तर बाजुना इंद्रोनी मंजुघोषा नामनी कहेली छे. (२०६) एक हजार योजन लांबुं पहोळुं अने सवासो योजन उंचुं तेमनुं यानविमान होय छे ने इंद्रध्वज पण १२५ योजन उंचो होय छे. (२०७) ज्योतिष्कमां चंद्रनी घंटा सुस्वरा नामनी अने सूर्यनी सुस्वरनिर्घोषा नामनी होय छे. बीजुं प्रथम प्रमाणे जाणवुं. (२०८) घंटा वगाडवानुं अने उद्घोषणादि करवानुं तेमनुं कार्य इंद्र पासेथी आज्ञा पामीने तुष्टमान थयेला तेमना आभियोगिक देवो करे छे. (२०९)

आ प्रमाणे चारे प्रकारना देवोथी परिवृत वज्रपाणि (सौधर्मेंद्र) मंदराचलना शिखर पर रहेला पांडुक नामना वनमां आवी, त्यां रहेली अभिषेक शिलानी उपर रहेला उत्तम सिंहासन उपर खोळामां प्रभुने लइने तुष्टचित्तवाळा थया सता बेसे. (२१०-११) ते वखते अच्युतेंद्र पोताना आभियोगिक देवोने आज्ञा करे के-' हे देवो! अरिहंतना जन्मा-

सज्जयंतु भोः ॥ १२ ॥ सौवर्णान् राजतान् रात्नान् स्वर्णरत्नमयानपि । रूप्यरत्नमयान् रूप्य-रैजान् रैरूप्यरत्नजान् ॥ १३ ॥ मृत्स्नामयांश्च प्रत्येकं सहस्रमष्टकाधिकं । एवं चंगेर्यादर्श-स्थालपात्रीकरंडकान् ॥ १४ ॥ सिंहासनच्छत्रताल-वृंततैलसमुद्गकान् । चामरादीन् विकुर्वंति तेऽष्टाधिकसहस्रकान् ॥ १५ ॥ त्रिभिर्विशेषकं । कृत्रिमाकृत्रिमान् कुंभा-दीनादायाभियोगिकाः । क्षीरोदादिपयोधीनां गंगादिसरितामपि ॥ १६ ॥ तीर्थानां मागधादीनां ह्रदानामपि भूयसां । पवित्रमुदकं मृत्स्नां विविधान्यंबुजानि च ॥ १७ ॥ तथा हिमवदादिभ्यो गिरिभ्यः सकलर्तुजान् । नंदनादिवनेभ्यश्च पुष्पौघान् विविधान् शुभान् ॥ १८ ॥ गोशीर्षचंदनागुर्वा-दिकान् गंधाननेकशः । कषायांश्चामलकादीन् सिद्धार्थान् विविधौषधीः ॥ १९ ॥ गृहीत्वागत्य संभूय ढौकयंत्यखिलं च तत् । स्वस्वामिनेऽच्युतेंद्राय विनयेन प्रणम्य ते ॥ २० ॥ पंचभिः कुलकं ॥

ततोऽच्युतसुरेन्द्रस्तैः कलशैश्चंदनार्चितैः । पुष्पस्रक्शोभित-

---

भिषेकने योग्य सर्व सामग्री तैयार करो. (२१२) एटले ते देवो सोनाना, रुपाना, रत्नना, स्वर्णना ने रत्नना, रुपा ने रत्नना, सोनाना अने रुपाना, सोना रुपा ने रत्नना तथा मृत्तिकाना एम आठ जातिना प्रत्येक एक हजार ने आठ कळशो, ते ज प्रमाणे चंगेरी, आदर्श, थाळ, पात्री (रकेबी) करंडीया, सिंहासन, छत्र, पंखा, तेलना डाबडा तथा चामरादि पण १००८-१००८ विकुर्वे. (२१३-१५) पछी कृत्रिम ने अकृत्रिम एवा कळशो विगेरेने लइने आभियोगिक देवो क्षीरोदधि विगेरे समुद्रोना, गंगादि नदीओना, मागधादि तीर्थोना अने पद्मादि अनेक द्रहोना पाणी तेमां ग्रहण करे, तेम ज तीर्थोनी मृत्तिका, विविध प्रकारना कमळो, हिमवतादि पर्वतोपरथी अने नंदनादि वनोमांथी सर्व ऋतुओना विविध प्रकारना शुभ पुष्पोनो समूह ग्रहण करे. तेम ज गोशीर्षचंदन, अगरु विगेरे अनेक प्रकारना सुगंधी पदार्थो, आमळा विगेरे कषायेला पदार्थो, सिद्धार्थ (सरसव) तथा सर्व प्रकारनी औषधिओ ग्रहण करे अने ते बधुं लइने मेरुपर्वतपर आवी अच्युतेंद्र पासे ते बधुं रजु करे, तेम ज पोताना स्वामी अच्युतेंद्रने विनयपूर्वक प्रणाम करे. (२१६-२२०)

पछी अच्युतेंद्र चंदनार्चित, पुष्पमाळावडे शोभित कंठवाळा अने पद्मोत्पलथी ढांकेला एवा ८०६४ कळशो भवोदधिनो पार पामवा माटे ज होयनी तेम ग्रहण करीने

गलैः पद्मोत्पलपिधानकैः ॥ २१ ॥ सर्वाग्रेण चतुःषष्ट्या–धिकैः किल सहस्रकैः । अष्टभिर्भवपाथोधि–पाराय स्वीकृतैरिव ॥ २२ ॥ सामानिकादि निःशेष–परिवारसमन्वितः । प्रागुक्तोदकपुष्पाद्यै–रर्हंतमभिषिंचति ॥ २३ ॥ त्रिभिर्विशेषकं । अच्युतेंद्राभिषेकेऽस्मि–न्नीशानेंद्रादयः परे । ऊर्ध्वंदमा निषेवंते विविधायुधपाणयः ॥ २४ ॥ चामरांश्चालयंत्येके केचिच्छत्राणि बिभ्रति । केचिद्धूपानुत्क्षिपंति परे नृत्यानि कुर्वते ॥२५॥ वादयंतेऽथ वाद्यानि केचिद्गायंति केचन । केचिद्गर्जंति वर्षंति केचित्तन्वंति विद्युतः ॥ २६ ॥ पुष्पाभरणवस्त्राणां वृष्टिं कुर्वंति केचन । बालविस्मयदाश्चेष्टाः केचित्कुर्युः प्रभोः पुरः ॥ २७ ॥

अभिषिच्यैवमर्हंतं नत्वा कृतजयध्वनिः । गंधकाषायिकेणांगं रूक्षयत्यच्युतेश्वरः ॥ २८ ॥ ततोऽलंकारसंभार–भासुरं स्वर्द्रुमोपमं । प्रभुं विधाय पुरतो दर्शयेन्नृत्यकौशलं ॥ २९ ॥ आलिख्य मंगलान्यष्टौ ढौकयेत्पुरतः प्रभोः । वितत्य पुष्पप्रकर–मुत्क्षिपेद्धूपमुत्तमं ॥ ३० ॥ ततो वृत्तशतेनाष्टा–धिकेनार्थगुणस्पृशा । स्तुत्वा कृतांजलिर्ब्रूते भूयः

सामानिकादि सर्व देवोना परिवार साथे उपर कहेला जळ अने पुष्पादिकवडे प्रभुने अभिषेक करे (२२१–२३) अच्युतेंद्रना अभिषेक वखते ईशानेंद्रादि बीजा देवो विविध प्रकारना आयुधो हाथमां लइने प्रभुनी सेवामां उभा रहे. (२२४) केटलाक चामर वींजे, केटलाक छत्र धरावे, केटलाक धूप करे, केटलाक नृत्य करे, केटलाक वाजित्र वगाडे, केटलाक गायन करे, केटलाक गाजे, केटलाक वरसे, केटलाक विद्युतने करे, केटलाक पुष्प, आभरण अने वस्त्रोनी वृष्टि करे, अने केटलाक प्रभु पासे बाळकोने, विस्मय पमाडे एवी चेष्टाओ करे. (२२५–२२७)

अच्युतेंद्र उपर कह्या प्रमाणे प्रभुने अभिषिंचन करी, जयध्वनिपूर्वक नमस्कार करी गंधकाषायी वस्त्रवडे प्रभुना अंगने रूक्ष करे. (२२८) पछी अलंकारना समूहथी भास्वर एवा कल्पवृक्ष सरखा प्रभुने करीने प्रभुनी पासे पोतानुं नृत्यकौशल बतावे. (२२९) प्रभुनी पासे अष्ट मंगलिक आळेखे, पुष्पना प्रकर चेपवे (पगर भरे) अने धूप उखेवे. (२३०) त्यारपछी एक सो आठ विशिष्ट अर्थ अने गुणवाळा वृत्तोवडे प्रभुनी स्तुति करीने हाथ

स्तुतिपदावलीं ॥ ३१ ॥ सा चैवं जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रे—'णमोत्थु ते सिद्ध बुद्ध णीरय समण समाहिअ समत्त समजोगि सल्लगत्तण णिब्भय णीरागदोस णिम्मम णिस्संग णीसल्ल माणमूरण गुणरयण सीलसागरमणंतमप्पमेय भवियधम्मवरचाउरंतचक्कवट्टी णमोत्थु ते ' इत्यादि. एवं समापिताशेषजन्मस्नात्रविधिः प्रभोः । नातिदूरांतिकस्थोऽसौ विनयेन निषेवते ॥ ३२ ॥ त्रिषष्टिरपि देवेंद्राः सौधर्मेंद्रविवर्जिताः। अभिषिंचंत्ययनेनैव विधिनानुक्रमेण च ॥ ३३ ॥

ततश्चेशानदेवेंद्रः पंच मूर्त्तीर्विकुर्वेति । जिनं धृत्वैकयोत्संगे शक्रस्थाने निषीदति ॥ ३४ ॥ एकया छत्रमाधत्ते धत्ते द्वाभ्यां च चामरौ । एकया पुरतः शूलं धृत्वा तिष्ठति भृत्यवत् ॥ ३५ ॥ अथ सौधर्मराजोऽपि सामग्रीमखिलामपि । प्राग्वद्विधाय कुरुते विशेषं चैकमद्भुतं ॥ ३६ ॥ कृत्वा चत्वारि शुक्लोक्ष–स्वरूपाणि चतुर्दिशं । तेषां शृंगाष्टकाक्षीर–धारा-

---

जोडी फरीने स्तुति पदोनी श्रेणि कहे. (२३१) ते संबंधी जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रमां आ प्रमाणे कह्युं छे.–नमोत्थु ते सिद्ध बुद्ध णीरय-समण समाहिअ समत्त समजोगि सल्लगत्तण णिब्भय णीरागदोस णिम्मम णिस्संग णीसल्ल माणमूरण गुणरयण सीलसागरमणंतमप्पमेय भवियधम्मवरचाउरंतचक्कवट्टी णमोत्थु ते। इत्यादि. अच्युतेंद्र आ प्रमाणे जन्मस्नात्र विधि बधो समाप्त करीने प्रभुथी अतिदूर नहीं तेम अति नजीक नहीं ए रीते उभा रही विनयपूर्वक सेवा करे. (२३२) ए रीते सौधर्मेंद्र सिवाय ६३ इंद्रो अच्युतेंद्रे करेल विधि प्रमाणे जन्माभिषेकने लगतो सर्व विधि करे. (२३३)

पछी ईशानेंद्र पांच रूप विकुर्वे, तेमांना एक रूपे प्रभुने खोळामां लइने शक्रेंद्रने ठेकाणे सिंहासनपर बेसे, एक रूपे छत्र धारण करे, बे रूपे बे बाजु चामर वींजे, एक रूपे प्रभुनी आगळ शूल हाथमां धारण करीने सेवकनी जेम उभा रहे. (२३४–३५) पछी सौधर्मराज पण सर्व सामग्री पूर्वनी पेठे एकत्र करीने एक अद्भुत विशेषकार्य करे. (२३६) चार उज्वळ वृषभना रूप करी प्रभुनी फरता चारे दिशाए रही तेना आठ

---

१ हे सिद्ध, बुद्ध, कर्मरज रहित, श्रमण, समाधिमान, कार्यने समाप्त करनार, सर्वयोगनो नाश करनार, भय रहित, राग–द्वेष रहित, ममता रहित, संग रहित, शल्य रहित, मानने नाश करनार, गुणोमां रत्न समान, शीलना सागर, अंत रहित, प्रमेय रहित, सुंदर एवा धर्ममां श्रेष्ठ चातुरंत चक्रवर्ती एवा तमने नमस्कार थाओ.

भिर्गगनावधि ॥ ३७ ॥ ऊर्ध्वमुत्पत्य संभूय पतंतीभिः प्रभूपरि । छत्राकारं बिभ्रतीभि–र्जिनं शक्रोऽभिषिंचति ॥ ३८ ॥

स एवं विहिताशेष–जन्मस्नात्रविधिस्ततः । प्राग्वदर्हंतमादाय पंचमूर्त्तिर्निवर्त्तते ॥ ३९ ॥ युक्तश्चतुर्विधैर्देवैः कृतप्रौढमहोत्सवैः । जिनं जन्मगृहे नीत्वा स्थापयेन्मातुरंतिके ॥ ४० ॥ हृत्वावस्वापिनीं मातुः प्रतिबिंबं प्रभोश्च तत् । न्यस्यत्युच्छीर्षके क्षौम–युग्मं कुंडल-युग्मयुक् ॥ ४१ ॥ विचित्ररत्नमालाभिः कृतं श्रीदामकुंडलं (गंडकं) । लंबयत्यर्हदुल्लोचे स्फुरज्झुंबनकाकृति ॥ ४२ ॥ उत्तानशायिनस्तच्च पश्यंतः परमेश्वराः । रमंते विकसन्नेत्रा अनुत्तरसुरा इव ॥ ४३ ॥ स्वाम्यंगुष्ठे क्षुधः शांत्यै स्थापयत्यमृतं हरिः । मुखे यत्क्षेपतोऽर्हंत–स्तृप्यंत्यस्तन्यपा अपि ॥ ४४ ॥ ततः शक्राज्ञया श्रीदा–ज्ञापिता जृंभकामराः । कोटीर्द्वात्रिंशतं स्वर्ण–हिरण्यानां जिनालये ॥ ४५ ॥ निदधत्यन्यदप्येवं भूरिभद्रासनादिकं । उद्घोषणां ततः शक्रः कारयत्याभियो-

शृंगनी धारा आकाशमां उंचे उडीने भेळी थइ प्रभुनी उपर छत्राकारने धारण करती पडे तेम करे . आ रीते शक्रेंद्र प्रभुने अभिषेक करे. (३३७–३८)

आ प्रमाणे शक्रेंद्र बधो जन्मस्नात्रविधि अच्युतेंद्रे कर्यो हतो तेम करीने पछी पांच रूप करीने प्रथमनी पेठे प्रभुने ग्रहण करी पाछा फरे अने चारे प्रकारना देवोथी कराता प्रौढ महोत्सवपूर्वक जिनेश्वरना जन्मगृहे आवीने प्रभुने मातानी पासे मूके. (२३९–४०) पछी मातानी अवस्वापिनी निद्रा अने प्रभुनुं प्रतिबिंब हरी लइ तेमने ओशीके वस्त्रयुग्म अने कुंडळयुग्म स्थापन करे. (२४१) अने अरिहंतना उपरना भागमां उल्लोचमां विचित्र रत्नमाळावडे बनावेल श्रीदामकुंडळ (गेंडक–पुष्पनो दडो) स्फुरायमान झुमणानी आकृतिवाळो लटकावे. (२४२) ते दडाने जोइने उत्तानशायी[1] एवा प्रभु विकसायमान नेत्रवाळा थइने अनुत्तर विमानना देवोनी जेम रमे. (२४३) पछी शक्रेंद्र क्षुधानी शांतिने माटे प्रभुना अंगुठामां अमृतनो संचार करे के जे अंगुठाने मुखमां राखवाथी स्तनपान नहीं करनारा एवा प्रभु पण तृप्ति पामे. (२४४) त्यारपछी शक्रनी आज्ञाथी कुबेरे आज्ञा करेला जृंभक देवो बत्रीश क्रोड स्वर्ण ने हिरण्यनी वृष्टि प्रभुना घरमां करे. (२४५) बीजा अनेक भद्रासनो विगेरे पण स्थापन करे. पछी शक्र पोताना आभियोगिक देवो

१ उंचुं मुख राखीने सुनार.

गिकैः ॥ ४६ ॥ कुर्वंति भगवज्जन्म–नगर्यां तेऽपि हर्षिताः। विष्वकूत्रिकचतुष्कादौ बाढमुद्घोषणामिति ॥ ४७ ॥ भो भोश्चतुर्विधा देवाः शृण्वंतु वचनं हरेः। यः प्रभोः प्रभुमातुर्वा विरूपं चिंतयिष्यति ॥ ४८ ॥ आर्यकस्य मंजरीवत् मूर्द्धा तस्य स्फुटिष्यति। आराध्येन विरोधो हि नचिरादेव नाशयेत् ॥ ४९ ॥ ततश्चतुर्विधा देवा इंद्राः शक्रादयोऽखिलाः। गत्वा नंदीश्वरद्वीपे कुर्युरष्टाहिकोत्सवं ॥ ५० ॥

यदा च युगपज्जन्म यावतामर्हतां भवेत्। तदा तावंति रूपाणि कृत्वोक्तं सकलं विधिं ॥ ५१ ॥ कुर्वंति दिक्कुमार्याद्याः सर्वेऽर्हद्भक्तिनिर्भराः। मनःसंकल्पसिद्धीनां किमशक्यं हि नाकिनां ॥ ५२ ॥

विज्ञातसुतजन्मार्ह–त्पिताथ नगरं निजं। कारयेद्वहिरंतश्च दूरिताशेषकश्मलं ॥५३॥ सुगंधिजलसंसिक्ता–पणवीथ्यादिभूमिकं। तथा त्रिकचतुष्कादौ लिप्तं पुष्पाद्यलंकृतं ॥ ५४ ॥ स्थाने स्थाने दह्यमान–काकतुंडादिधूपितं। अलंकृताशेषगेहं तोरणस्वस्तिकादिभिः ॥५५॥ ध्वजैर्नानावि-

---

पासे उद्घोषणा करावे. (२४६) ते देवो पण भगवंतनी जन्मनगरीमां चारेबाजु त्रिक चतुष्क विगेरे स्थानकोए हर्षित थइने आ प्रमाणे उद्घोषणा करे. (२४७) के–' भो भो चारे प्रकारना देवो ! इंद्रनुं आ वचन सांभळो के—जे कोइ प्रभुनुं के प्रभुनी मातानुं विरूप चिंतवशे तेनुं मस्तक आर्यकमंजरीनी जेम फूटी जशे, केमके आराध्य जनो साथेनो विरोध थोडा काळमां नाश करे ज छे. (२४८–४९) त्यारपछी चारे प्रकारना देवो अने शक्रादि बधा इंद्रो नंदीश्वरद्वीपे जइने अष्टान्हिकोत्सव करे. (२५०)

ज्यारे जेटला प्रभुनो समकाळे जन्म थाय त्यारे तेटला रूपो करीने उपर कह्या प्रमाणे सर्व विधि अरिहंतनी भक्तिमां निर्भर एवी दिक्कुमारीओ विगेरे सर्व देवो करे. ' मनना संकल्पवडे ज जेमनी कार्यसिद्धि थाय छे एवा देवोने शुं अशक्य छे ? ' (२५१–५२)

पुत्रना जन्मनी हकीकत अरिहंतना पिता प्रातःकाळे जाणे के तरत पोतानुं आखुं नगर अंदर अने बहार समस्त कचरा विनानुं साफ करावे (२५३) दुकाननी श्रेणिवाळा मार्गो जळवडे सिंचावे, तथा त्रिक चतुष्कादि लींपवापूर्वक पुष्पोवडे अलंकृत करावे (२५४) स्थाने स्थाने काकतुंडादिनो सुगंधी धूप करावे. बधा घरो तोरण स्वस्तिकादिवडे अलंकृत करावे. बधी दुकानो नाना प्रकारनी ध्वजाओ तथा वस्त्रोवडे

धैर्वैस्त्रै-र्विराजन्निखिलापणं । पदे पदे भवद्गीत–नटनर्त्तककौतुकं ॥ ५६ ॥ क्वचिद्भवन्मल्लयुद्धं क्वचिदारब्धरासकं । क्वचिद्विदूषकव्यास–कलाविस्मितमानवं ॥ ५७ ॥ वरत्राक्रीडिभिः कीर्णं व्याप्तं वंशाग्रखेलकैः । कथकैश्च कथावीथी–व्याक्षिप्तमनुजव्रजं ॥ ५८ ॥ निरंतरं वाद्यमान–भंभाभेरीमृदंगकं । झल्लरीवेणुवीणादि–वाद्यैः शब्दमयीकृतं ॥ ५९ ॥ रिक्तकारागृहं मुक्तै–स्तस्करद्विड्नृपादिभिः । ऋणानि दत्त्वा लोकानां निःशेषमनृणीकृतं ॥ ६० ॥ विवृद्धमानोन्मानादि–सानंदनिखिलप्रजं । उद्गीयमानधवल–मंगलं प्रतिमंदिरं ॥ ६१ ॥ प्रतीष्टेष्टानीयमान–रत्नाद्युरुसवढौकनं । नानासत्कारसंतुष्ट–ज्ञातिस्वजनबांधवं ॥ ६२ ॥ अनेकैः स्वर्णरजत -रत्नांबरविभूषणैः । अनर्गलं दीयमानैः पूरितार्थिमनोरथं ॥ ६३ ॥ आदित एकादशभिः कुलकं ॥

अतुच्छोत्सवसच्छाये–ष्वहस्स्वेकादशस्विति । अतिक्रांतेष्वथामंत्र्य

शोभावे. स्थाने स्थाने गीत–वाजित्र अने नाटको विगेरे कौतुकना साधनो करावे. (२५५–५६) कोइ जग्याए मल्लयुद्ध, कोइ जग्याए रासडा लेवानुं अने कोइ जग्याए विदूषकोनी अने व्यासनी कळा विगेरे प्रगट करावीने लोको कौतुक तेम ज आनंद मेळवे तेवी गोठवण करे. (२५७) स्थाने स्थाने दोरडा उपर नृत्य करनार नटोथी व्याप्त करे, वांसना अग्रभागउपर खेल करनारा नटोवडे सहित करे, कथाओनी श्रेणिथी मनुष्योना समूहने तन्मय करे एवा कथा करनारा व्यासोने बेसाडे. (२५८) वगर विसामे वागता एवा भंभा, भेरी, मृदंग, झल्लरी, वेणु, वीणादि वाजित्रोवडे आखुं नगर शब्दमय करे. (२५९) तस्करादि तेम ज राजद्रोही जनोमात्रने छोडी दइने कारागृह (केदखानुं) खाली करे. लोकोनुं ऋण (देवुं) आपी दइने सर्व प्रजाने अनृणी करे. (२६०) मानोन्मानादिमां वधारो करीने सर्व प्रजाने आनंद उपजावे. दरेक मंदिरमां धवळमंगळ गावानुं शरु थइ जाय. (२६१) उत्तम इष्टजनोना लावेला रत्नादिक प्रभुना पिता पासे ढोकन करवामां आवे. पोतानी ज्ञातिवाळा तेम ज स्वजन बांधवोने नाना प्रकारना सत्कारथी संतुष्ट करे. (२६२) अनेक प्रकारना स्वर्ण, रजत अने रत्नोना अनर्गल आभूषणो देवावडे अर्थीजनोना मनोरथोने पूर्ण करे. (२६३)

आ प्रमाणे अतुच्छ एवा उत्सवयुक्त अग्यार दिवस व्यतिक्रम्ये सते बारमे दिवसे

स्वजनान् भोजनादिभिः ॥ ६४ ॥ संतोष्याथो तत्समक्षं गुणस्वप्नाद्य-पेक्षया । अर्हतां स्थापयेन्नाम पिता भद्रंकराक्षरं ॥ ६५ ॥

पाल्यमानाश्च वर्द्धते धात्रीभिस्तेऽथ पंचभिः । अंकादंकं संचरंतः सह पित्रोर्मनोरथैः ॥ ६६ ॥ कलाहेतोरनारब्ध–कलाचार्यान्तिका अपि । स्वत एवात्तसकल–कलाः संपूर्णचंद्रवत् ॥ ६७ ॥ विद्यानां पारदृश्वानो विनाभ्यासं वचस्विनः । बाल्येऽपि दक्षस्थविरा इव प्रोद्बुद्धबुद्धयः ॥ ६८ ॥ प्राच्याद्भवादनुगतैः स्नेहवश्यैरिवोत्तमैः । मतिश्रुतावधिज्ञानै–रमात्यैरिव सेविताः ॥ ६९ ॥ क्रीडापराङ्मुखाः प्रायो बालचेष्टाविवर्जिताः । जगदुत्कृष्टसौंदर्य–भाग्यसौभाग्यशोभनाः ॥ ७० ॥ स्वजनानां जनानां च नयनानंददायिनः । प्रियंकराः प्रियालापाः प्रियाश्च द्विषतामपि ॥ ७१ ॥ जितेंद्रियाः स्थिरात्मानो यौवनोद्योतिता अपि । अचला अचला एव महावाताहता अपि ॥ ७२ ॥ स्त्रीपरिग्रहजय्यानि चेत्प्राक्कर्माणि जानते । तदा वीवाहमप्यंगी–कुर्वते ते यथाविधि ॥ ७३ ॥ सह पाणिगृहीतीभि–र्विषयानपि भुंजते । क्षेप्तुं कर्माणि यन्नीचो–पाये-

---

पोताना स्वजनोने आमंत्रण करी, भोजनादिवडे संतुष्ट करी तेमनी समक्ष गुणस्वप्नादिनी अपेक्षाए भद्रकारी अक्षरवाळुं प्रभुनुं नामस्थापन तेमना पिता करे. (२६४–६५)

एकबीजाना खोळामां संचरता एवा प्रभु पांच धाव्योवडे पालन कराता सता मातापिताना मनोरथ साथे वृद्धि पामे. (२६६) पछी कळाग्रहण करवा माटे कळाचार्य पासे मूक्या विना ज स्वयमेव संपूर्ण चंद्रनी जेम समग्र कळाना धारक थाय. (२६७) कह्युं छे के–'अभ्यास विना ज विद्याना पारगामी, वचस्वी (वाचाळ) अने बाल्यावस्था छतां पण दक्ष एवा वृद्धनी जेवा प्रौढ बुद्धिवाळा प्रभु होय.' (२६८) स्नेहथी वश करेला उत्तम जनोनी जेम पूर्वभवथी साथे आवेला मति श्रुत ने अवधिज्ञानरूप अमात्योवडे सेवित होय. (२६९) प्राये क्रीडाथी पराङ्मुख होय, बाळचेष्टा रहित होय अने जगतमां उत्कृष्ट एवा सौंदर्य, भाग्य अने सौभाग्यवडे शोभित होय. (२७०) स्वजन परिवारने नेत्रानंदना आपनार, प्रियंकर, प्रियालापी, द्वेषीजनोने पण प्रिय लागे तेवा, यौवनवडे द्योतित थया छतां पण जितेंद्रिय अने स्थिर आत्मावाळा होय केमके महापवने हणायेला छतां पण पर्वतो अचळ ज होय छे. (२७२) स्त्री परणवावडे ज पूर्वनुं भोगावळी कर्म क्षय थशे–तेनो जय थशे एम जो तेओ जाणे तो यथाविधि विवाहने पण स्वीकारनारा होय. (२७३) पाणिग्रहण करेली स्त्रीसाथे कर्म खपाववा माटे सांसारिक विष-

नापि रिपुं जयेत् ॥ ७४ ॥ बही रागं दर्शयंतो-ऽप्यंतः शुद्धाः प्रवालवत् प्राप्तेऽपि चक्रभृद्राज्ये न व्यासक्ता भवंति ते ॥ ७५ ॥

प्रव्रज्यावसरं स्वस्य ते ज्ञानेन विदंत्यथ । तस्मिंश्च समयेऽभ्येत्य देवा लौकांतिका अपि ॥ ७६ ॥ नत्वा विज्ञपयंत्येवं जय नंद जगद्गुरो । त्रैलोक्यस्योपकाराय धर्मतीर्थं प्रवर्त्तय ॥ ७७ ॥ लौकांतिकस्वरूपं तु क्षेत्रलोकतो ज्ञेयं. अत्र कल्पसूत्रे श्रीवीरजिनाधिकारे प्रथमं लौकांतिकदेवागमनं, ततो वार्षिकदानमिति क्रमो दृश्यते, षष्ठांगे तु श्रीमल्लिजिनाधिकारे पूर्वं सांवत्सरिकदानं, ततो लौकांतिकदेवागमनमिति क्रमो दृश्यते, श्रीआवश्यके तु श्रीऋषभजिनाधिकारे कल्पसूत्रवत्, श्रीमहावीराधिकारे तु षष्ठांगवत्तथा चोक्तं श्रीज्ञानसागरसूरिभिः स्वकृतावचूर्णौ, आह-ऋषभाधिकारे संबोधनोत्तरकालं परित्यागद्वारमुक्तमिह तु कस्माद्विपर्ययः ? उच्यते-न सर्वार्हतामयं नियमः, यदुत संबोधनोत्तरकालभाविनी महादानप्रवृत्तिरिति.

योने पण सेवे, कारण के नीच उपायवडे पण कोइ वखते शत्रुने जीतवा पडे छे. (२७४) प्रभु बहारथी राग दर्शावे छे छतां पण अंतरथी प्रवाळनी जेम शुद्ध होय छे. चक्रवर्तीपणुं प्राप्त थाय तो पण तेमां आसक्त थता नथी. (२७५)

पछी योग्यकाळे पोताना ज्ञानथी पोते प्रव्रज्यानो अवसर जाणे, ते समये लोकांतिक देवो पण आवीने नमस्कार करी विज्ञप्ति करे के-" हे जगद्गुरु ! तमे जय पामो ! आनंद पामो ! त्रण लोकना उपकारने माटे धर्मतीर्थ प्रवर्तावो. " (२७६-७७) लोकांतिकोनुं स्वरूप क्षेत्रलोकथी जाणवुं. श्रीकल्पसूत्रमां श्रीवीरजिनना अधिकारमां प्रथम लोकांतिक देवोनुं आगमन थाय अने पछी वार्षिकदान आपे एवो क्रम देखाय छे, पण छठा श्रीज्ञाताधर्मकथांगमां श्रीमल्लिजिनना अधिकारमां प्रथम वार्षिकदान अने पछी लोकांतिकनुं आगमन-एवो क्रम देखाय छे, तथा श्रीआवश्यकमां श्रीऋषभजिनाधिकारे कल्पसूत्रनी जेम ज कहेल छे अने श्रीमहावीराधिकारे छठा अंग प्रमाणे कहेल छे. ते विषे श्रीज्ञानसागरसूरिए पोतानी करेली अवचूर्णिमां कह्युं छे के-शंका-' ऋषभाधिकारे लोकांतिकना संबोधन पछी परित्यागद्वार (वार्षिकदान) कहेल छे अने अहीं तेथी विपर्यय कहेल छे तेनुं शुं कारण ? उत्तर—सर्व अरिहंतमां संबोधन उत्तरकाळे ज महादाननी प्रवृत्ति होय एवो नियम नथी. '

ततो दीक्षादिनादर्वाग् वर्षे शेषे जिनेश्वराः । दानस्य धर्मेष्वग्यूत्वा-द्दानं ददति वार्षिकं ॥ ७८ ॥ कोटिमेकां सुवर्णानां लक्षैरष्टभिरन्वितां । आप्रातराशसमया-न्नित्यं ददति तीर्थपाः ॥ ७९ ॥ पुरे त्रिकचतुष्कादौ कारयेद्घोषणामिति । ईप्सितं यस्य यद्वस्त्र-विभूषावाहनादिकं ॥ ८० ॥ तद्यथेच्छमिहागत्य स गृह्णात्वविशंकितः । सर्वाशाः पूरयत्येवं दानैः कीर्त्या च तीर्थकृत् ॥८१॥ धर्मप्रभावनाबुद्ध्या लोकानां चानुकंपया । जिना ददति तद्दानं न तु कीर्त्यादिकांक्षिणः ॥८२॥ दानं यथा यथा दद्युः स्वापतेयं तथा तथा । शक्रवैश्रमणादिष्टा देवाः पिप्रति जृंभकाः ॥ ८३ ॥ त्रीणि कोटि-शतान्यष्टा-शीतिश्चोपरि कोटयः । लक्षाण्यशीतिः स्वर्णानां दद्युर्वर्षेण तीर्थपाः ॥ ८४ ॥ एतावद्वार्षिके दाने जृंभकामरढौकितं । जिनेश्वराणां सर्वेषां नियतं परिकीर्त्तितं ॥ ८५ ॥ तच्चैवं-दातुं यदाब्दिकं दान-मध्य-वस्यंति तीर्थपाः । तदासनप्रकंपेन जानात्यवधिना हरिः ॥ ८६ ॥ जीतमे-

---

दीक्षादिवसनी अगाउ एक वर्ष बाकी रहे त्यारे जिनेश्वरो चार प्रकारना धर्ममां दानधर्म प्रथम होवाथी वार्षिकदान आपे छे. (२७८) सूर्योदयथी आरंभीने प्रातःकाळना भोजन समय सुधी (बे प्रहर) दररोज एक क्रोड ने आठ लाख सोनैयानुं दान तीर्थंकर आपे छे. (२७९) नगरना त्रिक चतुष्क विगेरे स्थानोमां आ प्रमाणे उद्घोषणा करा-ववामां आवे छे के-' जेने जे वस्त्र, आभूषण, वाहनादिकनी इच्छा होय ते यथेच्छपणे प्रभु पासे आवीने निःशंकपणे ग्रहण करो.' ए प्रमाणे प्रभु दानवडे सर्वनी आशा (इच्छा) पूर्ण करे छे अने कीर्तिवडे सर्व आशा(दिशाओ)ने पूर्ण करे छे. (२८०-८१) धर्मनी प्रभावना थवानी बुद्धिथी तेमज लोकोपरनी अनुकंपाथी जिनेश्वरो दान आपे छे, कीर्त्यादिनी आकांक्षाथी आपता नथी. (२८२) प्रभु जेम जेम दान आपे छे तेम तेम शक्रना लोकपाळ वैश्रमणनी आज्ञाथी जृंभको ते द्रव्य पूर्ण करे छे. (२८३) एक वर्षमां ३८८ क्रोड ने ऐंशी लाख सोनैयानुं दान तीर्थंकरो आपे छे. (२८४) ए बधुं वार्षिकदान संबंधी द्रव्य जृंभकामरोए प्रभु पासे रजु करेलुं होय छे, अने सर्व जिनेश्वरो माटे एटलुं दान नियतपणे कहेलुं छे. (२८५) ते आ प्रमाणे—" ज्यारे तीर्थंकरो वार्षिकदान आपवानी इच्छा करे छे त्यारे आसनकंपवडे अवधिज्ञानथी ते हकीकत जाणीने इंद्र विचारे छे. (२८६)-के ' त्रण काळमां थएला एवा अमारो ए आचार

वेदमस्माकं त्रिकालोद्भववज्रिणां । यद्वार्षिकाय दानाय प्रव्रज्यावसरेऽर्हतां ॥ ८७ ॥ ढौकनीयं स्वापतेयं स्वर्णकोटीशतात्रयः । अष्टाशीतिःकोटयश्चा–शीतिलक्षसमन्विताः ॥ ८८ ॥ एवं निश्चित्य धनद–माज्ञापयति वज्रभृत् । स जृंभकामरांस्ते स्वं निक्षिपंति गृहेऽर्हतां ॥ ८९ ॥ अन्यदप्यश्वहस्त्यादि–भूषावस्त्रादि मंदिरात् । यच्छंत्यभीष्टं लोकानां दानवीरा जिनेश्वराः ॥ ९० ॥ महानसान्यनेकानि कारयित्वा स्वसेवकैः । दापयंत्यन्नपानादि दीनादीनामनर्गलं ॥ ९१ ॥ तथोक्तं षष्ठांगे–' तए णं कुंभए मिहिलाए रायहाणीए तत्थ तत्थ तहिं तहिं देसे बहुईओ महाणससालाओ कारेइ ' इत्यादि मल्ल्यध्ययने.

पित्रादेः स्वजनस्याथ प्राप्यानुज्ञां कथंचन । यस्मिन् दिने यतंते ते चारित्राय महाशयाः ॥९२॥ तस्मिन् दिने तन्नगरं ध्वजश्रेण्याद्यलंकृतं । स्वजनाः कारयंत्येषां विष्वक् पूर्वोक्तया दिशा ॥ ९३ ॥ तस्मिन्नवसरे प्राग्व–च्चतुःषष्टिः सुरेश्वराः । आयांत्यासनकंपेन ज्ञात्वा दीक्षाक्षणं प्रभोः ॥ ९४ ॥ देवानां समुदायेना–गच्छता त्रिदिवात्तदा । द्यावाभू-

---

छे के प्रव्रज्यावसरे अरिहंतोने वार्षिकदान माटे ३८८ क्रोड ने एंशी लाख सोनैया जेटलुं द्रव्य अमारे पूरुं पाडवुं. (२८७–८८) ' आ प्रमाणे निश्चय करीने सौधर्मेंद्र धनदने आज्ञा करे अने ते जृंभक देवताओने आज्ञा करे अने तेओ आटलुं द्रव्य जिनेश्वरना घरमां नाखे छे. (२८९) एटला द्रव्य उपरांत बीजुं पण हाथी, घोडा, आभूषणो, वस्त्रो विगेरे पोताना मंदिरमांथी दानवीर एवा जिनेश्वरो लोकोने तेनी इच्छा प्रमाणे आपे छे. (२९०) वळी पोताना सेवको पासे अनेक रसोडा शरु करावीने दीनजनोने अन्नपानादि पण अनर्गळ आपे छे. (२९१) " श्रीज्ञाताधर्मकथांगमां कह्युं छे के—' त्यारपछी कुंभराजा मिथिला राजधानीमां त्यां त्यां–ते ते प्रदेशमां घणी महानसशाळा (रसोडा) करावे. ' इत्यादि श्रीमल्ल्यध्ययने.

पछी मातापिता विगेरे स्वजनोनी कोइपण रीते अनुज्ञा मेळवीने ए महाशयो जे दिवसे चारित्र लेवा माटे तत्पर थाय ते दिवसे ते नगर पूर्वे जन्मोत्सवमां कही गया प्रमाणे स्वजनो ध्वजश्रेण्यादिवडे अलंकृत करे. (२९२–९३) ते अवसरे आसनकंपवडे प्रभुनो दीक्षा अवसर जाणीने चोसठे इंद्रो प्रथमनी जेम त्यां आवे. (२९४) ते वखते देव–देवीना समुदाय सहित स्वर्गमांथी आवतां पृथ्वी ने आकाशनो मध्यभाग

म्योर्मध्यमुद्य–त्कोट्यकमिव दीप्यते ॥ ९५ ॥ कलशांस्तेऽष्टजातीयान् पूजोपकरणानि च । पृथक् सहस्रमष्टानां कारयंत्याभियोगिकैः ॥ ९६ ॥ इंद्रवत्कलशानष्ट–प्रकारान् स्वजना अपि । शिल्पिभिः कारयंत्यन्या–न्यचोपकरणान्यपि ॥ ९७ ॥ कलशास्ते मनुष्याणां दिव्येषु कलशेष्वथ । अनुप्रविष्टेषु भृशं शोभन्ते दिव्यशक्तिनः ॥ ९८ ॥ ततः सुराहृतैस्तीर्थ–नीरौषधिमृदादिभिः । वासवाः स्वजनाश्चाप्त–मभिषिंचंति सोत्सवं ॥ ९९ ॥ तदा दर्पणभृंगारा–द्यलंकृतकराः सुराः । इंद्राद्याः परिषेवंते प्रोच्चारितजयारवाः ॥ ३०० ॥ ततश्च गंधकाषाय्या रूक्षितांगो जगत्प्रभुः । यथास्थानं परिहित–सर्वालंकारभासुरः ॥ १ ॥ कल्पद्रुमप्रसूनस्र–ग्विराजिगलकंदलः । लक्षार्घं सदृशं श्वेतं परिधत्तेम्बरं वरं ॥ २ ॥ युग्मं ॥

स्वजनाः कारयंत्येकां शिबिकां शिल्पिपुंगवैः । विचित्ररचनां भूरि–रत्नस्तंभशतांचितां ॥ ३ ॥ तादृश्या स्वर्गिकृतया मिश्रा शिबिकया च सा । भृशं विभाति मेघेव संगता शास्त्रसं-

---

उदय पामेला क्रोडो सूर्य जेवो दीपी रहे. (२९५) पछी इंद्रो आभियोगिक देवो पासे पूर्वे कह्या प्रमाणे आठ जातिना १००८–१००८ कळशो अने पूजाना अन्य उपकरणो विरचावे. (२९६) स्वजनो पण इंद्रनी जेम आठ प्रकारना कळशो तेम ज अन्य पूजाना उपकरणो पण शील्पी पासे तैयार करावे. (२९७) ते मनुष्योना करेला कळशोमां दिव्य शक्तिथी दिव्य कळशो प्रवेश करी जाय तेथी ते अत्यंत शोभावाळा थइ रहे. (२९८) त्यारपछी देवोए लावेल तीर्थजळ, औषधि अने मृत्तिकादिवडे प्रभुना स्वजनो अने इंद्रो आप्त एवा प्रभुने उत्सवपूर्वक अभिषेक करे. (२९९) ते वखते इंद्रादिक देवो दर्पण, भृंगार, चामरादिवडे अलंकृत करवाळा थइने (ते ते वस्तुओ हाथमां लइने) जय जय शब्द बोलता प्रभुनी सेवा करे. (३००) त्यारपछी गंधकाषायी वस्त्रवडे जगत्प्रभुना शरीरने रूक्ष करीने (लुहीने) यथास्थान धारण करावेला सर्व अलंकारोथी विभूषित करे. पछी कल्पवृक्षना पुष्पोनी माळावडे विराजित कंठवाळा प्रभु लक्षमूल्यवाळुं, सदश एवुं श्रेष्ठ श्वेतवस्त्र धारण करे. (३०१–२)

पछी स्वजनो सारा शील्पीओ पासे विचित्र रचनावाळी अने रत्नमय सेंकडो स्तंभोवाळी शिबिका तैयार करावे. (३०३) शिबिकामां देवोए करेली तेवी ज शिबिका

विदा ॥ ४ ॥ षष्ठादिना विशिष्टेन तपसालंकृतस्ततः । उत्तरोत्तर-मुत्कृष्ट–वर्द्धमानशुभाशयः ॥ ५ ॥ तत्र सिंहासने पूर्वा–मुखः स्वामी निषीदति । प्रभोर्दक्षिणतश्चोप–विशेत्कुलमहत्तरा ॥ ६ ॥ पटशाटकमंकं सा बिभृते हंसलक्षणं । अंबधात्री वामतश्च चारुवेषा निषीदति ॥ ७ ॥ पृष्ठेऽवतिष्ठते चैका तरुणी चारुभूषणा । प्रभूपरि सितच्छत्रं दधाना स्व-र्वधूपमा ॥ ८ ॥ एका च कृतशृंगारा चकोराक्षी निषीदति । ऐशान्यां दधती हस्ते कलशं जलसंभृतं ॥ ९ ॥ एका निषीदत्याग्नेय्यां रम्यालंका-रबंधुरा । हस्ते धृत्वा मणिमयं तालवृंतं मृगेक्षणा ॥ १० ॥ ततश्च स्वजनादिष्टाः सहस्रं पुरुषर्षभाः । समोच्छ्रायोत्साहरूप–वेषभूषणशा-लिनः ॥ ११ ॥ वहंति शिबिकां याव–त्तावत्सौधर्मनायकः । तस्य बाहां दाक्षिणात्या–मूर्ध्वगां वहति स्वयं ॥ १२ ॥ उदीच्यामूर्ध्वगां बाहां वहतीशाननायकः । अधस्तनीं दाक्षिणात्यां चमरेंद्रः स्वयं वहेत् ॥१३॥ अधस्तनीमौत्तराहां बलींद्रस्तामुदस्यति । चत्वार उद्वहंत्येव–मिंद्रा बाहा-चतुष्टयं ॥ १४ ॥ शेषाः सुराः सुरेंद्राश्च चलत्कुंडलभूषणाः । प्रौढप्रेमप्र-

---

मळी जवाथी ते जेम शास्त्रना ज्ञानवडे बुद्धि शोभे तेम शोभी नीकळे. (२०४) पछी छठ्ठ विगेरे विशिष्ट तपवडे शोभता अने उत्तरोत्तर उत्कृष्ट तेम ज वर्धमान शुभाशयवाळा प्रभु ते शिबिकाना मध्यमां पूर्वसन्मुख सिंहासनपर बेसे अने प्रभुनी दक्षिण बाजुए तेमनी कुळमहत्तरा बेसे. (२०५–६) ते हंसना लक्षण (चित्र)वाळुं एक पटशाटक (वस्त्र) हाथमां राखे. डावी बाजुए सुंदर वेशवाळी धावमाता बेसे. (२०७) पाछळ एक सुंदर आभूषणवाळी तरुणी देवांगना जेवी प्रभुनी उपर श्वेत छत्र धारण करीने बेसे. (२०८) एक शृंगार करेली चकोराची (स्त्री) ईशानकूणमां हाथमां जळथी भरेलो कळश लइने बेसे. (२०९) एक रमणिक अलंकार धारण करेली मृगाक्षी (स्त्री) अग्निकोणे हाथमां मणिमय पंखो लइने बेसे. (२१०) पछी स्वजनोए आदेश करेला सरखी उंचाइ, उत्साह, रूप, वेष अने भूषणवाळा पुरुषश्रेष्ठो ते शिबिकाने उपाडे. ते वखत सौधर्मेंद्र तेनी जमणी बाजुनी उपरली बाहाने धारण करे (उपाडे) (२११–१२) उत्तर बाजुनी उपली बाहाने ईशानेंद्र उपाडे, जमणी बाजुनी नीचेनी बाहाने चमरेंद्र उपाडे. (२१३) अने उत्तर बाजुनी नीचली बाहाने बलींद्र उपाडे. आ प्रमाणे चार बाहा चार इंद्रो उपाडे. (२१४) बाकीना चळायमान कुंडळ तथा भूषणवाळा अने

कटित–पुलकांकुरदंतुराः ॥ १५ ॥ पंचवर्णानि पुष्पाणि वर्षंतो देवदुंदुभीन् । वादयंतः स्वमात्मानं धन्यंमन्याः स्फुरन्मुदः ॥ १६ ॥ अहंपूर्वमहंपूर्व–मिति सत्वरचेतसः । शेषेष्वशेषदेशेषु वहंति शिबिकां प्रभोः ॥ १७ ॥ त्रिभिर्विशेषकं ॥

तथाहुः श्रीभद्रबाहुस्वामिनः–' पुव्वं उक्खित्ता माणुसेहिं साहट्ठु रोमकूवेहिं । पच्छा वहंति सीअं असुरिंदसुरिंदनागिंदा ॥१८॥ ' इदमिश्चमश्चात्र चतुर्थांगे–पुरतो वहंति देवा नागा पुण दाहिणंमि पासंमि । पच्चच्छिमेण असुरा गरुला पुण उत्तरे पासे ॥ १९ ॥ शक्रेशानौ ततस्तां तां त्यक्त्वा बाहां सुरेश्वरौ । चामराणि वीजयतः प्रभोरुभयतः स्थितौ ॥ २० ॥ तदा नभोंगणं देवैः स्फुरद्वसनभूषणैः । भूमंडलं च मनुजैर्भवेद्विष्वगलंकृतं ॥ २१ ॥ निरंतरं वाद्यमानै–रातोद्यैर्विविधैस्तदा । जयारवैश्च लोकानां भवेच्छब्दमयं जगत् ॥ २२ ॥ नागराणां नागरीणां समुदायैः पदे पदे । वीक्ष्यमाणः स्तूयमानः प्रार्थ्यमानो मनोरथैः ॥ २३ ॥

प्रभुउपरना प्रौढ प्रेमथी प्रगटित थएल पुलकांकुरवाळा देवो अने देवेंद्रो पांचवर्णना पुष्पोने वरसावता, देवदुंदुभी वगाडता, पोताना आत्माने धन्य मानता, स्फुरायमान हर्षवाळा थइने हुं पहेलो हुं पहेलो एम सत्वर चित्तवाळा समस्त भागोथी प्रभुनी शिबिकाने उपाडता चाले. (२१५–२१७)

श्रीभद्रबाहुस्वामी कहे छे के—" प्रभुनी शिबिका प्रथम विकस्वर रोमराजीवाळा मनुष्यो उपाडे; पछी असुरेंद्र, सुरेंद्र ने नागेंद्रो ते शिबिकाने उपाडे. ' (२१८) चोथा अंग समवायांगमां आवो नियम बताव्यो छे के–' पूर्व दिशाए वैमानिक देवो उपाडे, दक्षिण बाजुए नागकुमारो उपाडे, पश्चिम बाजुए असुरकुमारो उपाडे अने उत्तर बाजुए सुवर्णकुमारो उपाडे. (२१९) थोडेक चाल्या पछी शक्र ने ईशानेंद्र ते बाहा तजी प्रभुनी बे बाजु रहीने चामर वींजता चाले. (२२०) ते वखते स्फुरायमान वस्त्राभूषणवाळा देवोवडे आकाश अने मनुष्योवडे भूमंडळ चोतरथी अलंकृत थइ रहे. (२२१) तेमज अविच्छिन्न वागता विविध प्रकारना वाजीत्रोवडे अने लोकोना जयजयारववडे आखुं जगत शब्दमय थइ रहे. (२२२) नगरजनो अने नगरस्त्रीओना समुदायथी पगले पगले जोवाता, स्तवाता अने मनोरथोवडे प्रार्थना कराता एवा जगद्गुरु हजारो घरो ने हाटोनुं अतिक्रमण करता,

भवनाद्दसहस्त्राणि व्यतिक्रामन् जगद्गुरुः । जनांजलिसहस्त्राणि गृह्णान् शृण्वंश्च तस्स्तुतीः ॥ २४ ॥ वनाय पुर्या निर्याति राजमार्गेण मार्गवित् । सौधर्मेंद्र इव स्वर्गा–त्पूर्वोक्ताभिः समृद्धिभिः ॥ २५ ॥

प्रथमं मंगालान्यष्टौ संपूर्णः कलशस्ततः । भृंगारचामरच्छत्र–वैजयंत्यस्ततः क्रमात् ॥ २६ ॥ पादपीठान्वितं रत्न–स्वर्णसिंहासनं ततः । ततः पृथक् साष्टशत–मनारोहेभवाजिनां ॥ २७ ॥ रथानामस्त्रपूर्णानां ध्वजघंटावलीस्पृशां । प्रधानपुरुषाणां च प्रत्येकं शतमष्टयुक् ॥ २८ ॥ गजाश्वरथपादात्य–सैन्यानि च ततस्ततः । सहस्त्रयोजनोत्तुंगो ध्वजो ध्वजसहस्त्रयुक् ॥ २९ ॥ खड्गग्राहाः कुंतपीठ–फलकग्राहिणस्ततः । हास्यादिकारकाः कांद–र्पिकाश्च सजयारवाः ॥ ३० ॥ उग्रा भोगाश्च राजन्याः क्षत्रियाद्यास्ततः क्रमात् । संचरंति ततो देवा देव्यश्च स्वामिनः पुरः ॥३१॥ वदंति सर्वे तत्रैवं जय जीव जगद्गुरो । ज्ञानाद्यैर्निरतीचारै–र्जहि कर्मरिपून् द्रुतं ॥ ३२ ॥ जयाजितानींद्रियाणि जीतं धर्मं च पालय।

लोकोनी हजारो अंजळी (प्रणामो) ने ग्रहण करता, तेमनी करेली स्तुतिओने सांभळता मोक्षमार्गना जाणकार एवा प्रभु वनमां जवा माटे राजमार्गे थइने पूर्वोक्त समृद्धिवडे जेम सौधर्मेंद्र स्वर्गमांथी नीकळे तेम नगरमांथी नीकळे. (३२३–३२५)

दीक्षा महोत्सवना वरघोडामां प्रथम आठ मंगळ चाले. त्यारपछी संपूर्ण कळश, भृंगार, चामर, छत्र, ध्वजाओ, पादपीठ सहित रत्न स्वर्णमय सिंहासन, त्यारपछी एक सो आठ हाथी अने एक सो आठ घोडा (अनारोहवाळां) अस्त्रपूर्ण अने ध्वजा घंटावळीवाळा १०८ रथो, त्यारपछी १०८ प्रधान पुरुषो, त्यारपछी हाथी, घोडा, रथ अने पादातिरूप चार प्रकारनी सेना, पछी हजार योजन उंचो हजार ध्वजावाळो इंद्रध्वज, त्यारपछी खड्ग भाला अने पीठफलकने ग्रहण करीने चालनारा, तेम ज हास्य उत्पन्न करनारा अने जयजय शब्द करनारा कांदर्पिको चाले. (३२६–३०) त्यारपछी उग्र, भोग, राजन्य अने क्षत्रियो अनुक्रमे चाले. त्यारपछी देवदेवीओ स्वामीनी आगळ चाले. (३३१) ते सर्वे आ प्रमाणे बोले के–" हे जगद्गुरु ! जयवंता वर्तो, घणुं जीवो. निरतिचार एवा ज्ञानादिवडे कर्मशत्रुने शीघ्र तजी द्यो (नाश करो). (३३२) अजित एवी इंद्रियोने जीतो. आचार अने धर्मनुं पालन करो. सर्व विघ्नोने जीती त्रिभुवननुं ऐश्वर्य उतावळे मेळवो (३३३)

---

१ जेना पर कोइ वखत कोइपण बेठेल नहीं तेवा.

विघ्नान् जित्वा त्रिभुवनै-श्वर्यमासादय द्रुतं ॥ ३३ ॥ रागद्वेषमहामल्लौ हत्वा मल्ल इवोद्भटः। आराधनापताकां द्राग् जगद्रंगे समाहर ॥ ३४ ॥ विशुद्धं केवलज्ञानं प्रभो शीघ्रमवाप्नुहि। सन्मार्गं दर्शयास्माकं धर्मे निर्वि-घ्नमस्तु ते ॥ ३५ ॥

एवं महैः प्राप्य वन-मशोकादितरोस्तले। संस्थाप्य शिबिकां तस्याः समुत्तरति तीर्थकृत् ॥ ३६ ॥ यथोचितं भूषणानि विमुंचति ततः प्रभुः। तान्यादाय हितं शास्ती-त्येवं कुलमहत्तरा ॥ ३७ ॥ उच्चोच्चगोत्रस्त्वं वत्स त्वमसि क्षत्रियोत्तमः। प्रसिद्धमातापितृको व्याप्तकीर्तिर्जगत्त्रये ॥ ३८ ॥ दुराराधं दुश्चरं च व्रतमंगीकृतं त्वया। यद्वालुकानां कवल इवास्वादलवोज्झितं ॥३९॥ दुर्वहं मेरुवत्खड्ग-धाराग्रमिव दुश्चरं। दुस्तरं वार्द्धिवद्भीष्मं क्लीबानां श्रवणादपि ॥ ४० ॥ ततः प्रमादं मा कार्षी-र्वत्सो-ऽसि त्वं सुखोचितः। तथा यतेथास्त्वं धर्मे यथा सिद्ध्येत्तवेप्सितं ॥४१॥

इत्युदित्वा नमस्कृत्य शाटकं हंसलक्षणं। आदाय भूषणैः पूर्ण-मे-

रागद्वेषरूप महामल्लने उद्भट मल्लनी जेवा तमे हणीने जगत्‌रूपी रणभूमिमां आरा-धना पताका मेळवो. (३३४) हे प्रभु ! तमे विशुद्ध एवा केवळज्ञानने शीघ्र प्राप्त करो. अमने सन्मार्ग देखाडो, तमने धर्ममां निर्विघ्नपणुं हो. " (३३५)

आ प्रमाणे महोत्सवपूर्वक उद्यानमां आवीने अशोकादि वृक्षनी नीचे शिविका स्था-पन करे, एटले प्रभु तेमांथी उतरे (३३६) यथोचितपणे आभूषणो प्रभु उतारे एटले ते लइने कुलमहत्तरा तेमने आ प्रमाणे हितवचनो कहे (३३७) " हे वत्स ! तमे घणा उच्च गोत्रवाळा छो, तमो क्षत्रियोत्तम छो, प्रसिद्ध माता-पितावाळा छो, त्रण जगतमां जेमनी कीर्त्ति पसरेली छे एवा छो. (३३८) तमे दुराराध्य अने दुश्चर एवुं व्रत अंगीकार करो छो के जे आस्वादना अंश पण विनानुं वेळुना कवळ जेवुं छे. (३३९) मेरुपर्वतनी जेवुं दुर्वह छे, खड्गनी धारा जेवुं दुश्चर छे, समुद्रनी जेवुं दुस्तर छे, क्लीब जनोने सांभ-ळतां पण भीष्म लागे तेवुं छे. (३४०) हे वत्स ! तमे सुखोचित[1] छो तेथी तेना आराधनमां प्रमाद न करशो. तमे ते धर्मना आराधनमां एवो प्रयत्न करजो के जेथी तमारुं इच्छित सिद्ध थाय " (३४१)

आ प्रमाणे कही नमस्कार करीने ते कुळमहत्तरा आभूषणोथी पूर्ण एवुं हंसलक्षणशाटक ग्रहण करी एक बाजु उभी रहे. (३४२) एटले प्रभु एक मुष्टिवडे दाढी—मुछना अने

---

१ सुखमां रहेला. (उछरेला)

कतः सापसर्पेति ॥ ४२ ॥ ततो मुष्ट्यैकया कूर्चं तच्चतुष्केण मुर्द्धजान् । उद्धरन् कुरुते लोचं भगवान् पंचमौष्टिकं ॥ ४३ ॥ तदा च प्राप्तवैराग्यै-र्जिनाः केचिन्नृपादिभिः । प्रव्रजंति परिवृताः केचिदेकाकिनोऽपि च ॥ ४४ ॥ केशांस्त्वादाय शक्रस्तान् सुरभीन् श्यामलान्मृदून् । अनुज्ञाप्य जगन्नाथ-मुत्सृजेत्क्षीरनीरधौ ॥ ४५ ॥ वस्त्रं च स्थापयत्येकं प्रभोः स्कंधे हरिस्तदा । देवदूष्याभिधं स्वर्ण-लक्षमूल्यमनुत्तरं ॥ ४६ ॥ देवमानवशब्दौघो नानातूर्यरवोऽपि च । क्षिप्रमेवेंद्रवाक्येन निखिलोऽप्युपशाम्यति ॥ ४७ ॥ नमो सिद्धाणमित्युक्त्वा स्वामी सामायिकं ततः । निषिद्धसर्वसावद्य-योगं संप्रतिपद्यते ॥ ४८ ॥

अत्र सामायिकपाठे भंते इति जिना न कथयंतीति कल्पवृत्त्यादिषु करोमि भदंत सामायिकं । सर्वान्सावद्ययोगान् प्रत्याचक्षे । नचास्यान्यो भदंतोऽन्यत्र सिद्धेभ्यः आचारार्थं त्वनेन सिद्धान् वा प्रत्युक्तमिति तु तत्त्वार्थवृत्तौ.

चार मुष्टिवडे मस्तकना केशोनो-एम पांच मुष्टिवडे सर्व केशोनो लोच करे. (३४३) ते वखते जेमने वैराग्य उत्पन्न थयो छे एवा राजाओ अथवा राजकुमारो साथे केटलाक जिनेश्वरो प्रव्रज्या ग्रहण करे अने केटलाक एकला पण प्रव्रज्या ग्रहण करे. (३४४) प्रभुना सुगंधी, श्याम अने मृदु एवा केशोने ग्रहण करी प्रभुने जणावीने इंद्र तेने क्षीरसमुद्रमां क्षेपवे. (३४५) पछी इंद्र लक्ष सोनैयाना मूल्यवाळुं ने अनुत्तर एवुं एक देवदूष्य नामनुं वस्त्र प्रभुना स्कंधपर स्थापन करे. (३४६) त्यारपछी इंद्रना एकवार ज कहेवाथी देवमानवोनो शब्दसमूह तेम ज नाना प्रकारना वाजीत्रोना शब्दसमूह तत्काळ शांत थइ जाय. (३४७) एटले प्रभु नमो सिद्धाणं एम कहीने सर्व सावद्ययोगना निषेधरूप सामायिक उच्चरे-अंगीकार करे. (३४८)

अहीं सामायिकना पाठमां भंते एम जिनेश्वरो न कहे एम कल्पवृत्त्यादिमां कह्युं छे. तत्त्वार्थवृत्तिमां तो-"करोमि भदंत सामायिकं । सर्वान् सावद्ययोगान् प्रत्याचक्षे । न चास्यान्यो भदंतोऽन्यत्र सिद्धेभ्यः आचारार्थं त्वनेन सिद्धान् वा प्रत्युक्तमिति ।" एम कह्युं छे. एटले के " तेमनी मान्यता प्रमाणे भदंत शब्द प्रभु कहे छे, परंतु प्रभुने सिद्धथकी अन्य कोइ भदंत नथी तेथी अन्यत्र सिद्धेभ्यः एम कहेल छे. एवो तेमनो आचार छे. अथवा आ भदंत शब्दवडे सिद्धने ज उद्देशीने तेमना प्रत्ये भदंत शब्द कहेल होय एम जणाय छे.

ततस्तस्य च चारित्रप्रतिपत्त्युत्तरक्षणे । उत्पद्यते महाज्ञानं मनःपर्यायसंज्ञकं ॥ ४९ ॥ एवं गृहीतचारित्रा–स्तेऽर्हंतः परमेश्वराः । आपृच्छय स्वजनांस्तस्मि–न्नेवाह्नि विहरंत्यपि ॥ ५० ॥ वसंत्येकमहोरात्रं ग्रामे द्रंगे च पंच तान् । चंदनाभ्यर्चने वास्था तक्षणे च समाशयाः ॥ ५१ ॥ मणौ मृदि रिपौ मित्रे समाश्च स्तुतिनिंदयोः । द्रव्यक्षेत्रकालभाव–प्रतिबंधविवर्जिताः ॥ ५२ ॥ तत्र द्रव्यं सचित्तादि क्षेत्रं ग्रामगृहादिकं । कालः स्यान्मासवर्षादिर्भावो रागादिरुच्यते ॥ ५३ ॥ एकांते च सभायां च पुरेऽरण्ये समक्रियाः । समाहिताः समितिभि–र्गुप्तिभिश्च निराश्रवाः ॥ ५४ ॥ व्योमवत्ते निरालंबा आत्मेवास्खलितास्पदाः । सौम्याः शीतांशुवद्दीप्राः सहस्रकरबिंबवत् ॥ ५५ ॥ वायुवच्चाप्रतिबंधाः शरदंभोऽमलाशयाः । पाथोनिधिवदक्षोभ्या अप्रकंप्याश्च मेरुवत् ॥ ५६ ॥ अप्रमत्ताश्च भारंड–खगवद्गजराजवत् । शौंडीराः सिंहवच्छूरा–त्मानो भुवि चरंति ते ॥ ५७ ॥ चतुर्भिः

त्यारपछी प्रभुने चारित्रप्रतिपत्तिनी उत्तर क्षणे ज मनःपर्याय नामनुं महाज्ञान उत्पन्न थाय. (३४९) ए प्रमाणे जेमणे चारित्र ग्रहण करेलुं छे एवा अरिहंत परमेश्वर स्वजनोने पूछीने ते दिवसे ज त्यांथी विहार करे. (३५०) तेओ गाममां एक रात्रि अने शहेरमां पांच रात्रि रहे छे. तेओने कोइ चंदनवडे चर्चे के वांसलावडे छेदे ते बंनेपर तेओ समान आशयवाळा होय. (३५१) मणिमां ने माटीमां, शत्रुमां ने मित्रमां, स्तुतिमां ने निंदामां समान होय. द्रव्य–क्षेत्र–काळ–भावना प्रतिबंधरहित होय. (३५२) तेमां द्रव्य ते सचित्तादि, क्षेत्र ते ग्राम, घर, विगेरे काळ ते मास, वर्षादि अने भाव ते रागादि कहेवाय छे. (३५३) एकांतमां के सभामां, नगरमां के अरण्यमां समक्रियावाळा होय, पांच समिति ने त्रण गुप्तिथी समाहित (सहित) होय, निराश्रव (आश्रवरहित) होय. (३५४) तेओ आकाशनी जेम निरालंबी होय, आत्मानी जेम अस्खलित गतिवाळा होय, चंद्र जेवा सौम्य होय, सूर्यना बिंब जेवा दीप्तिमान् होय, (३५५) वायुनी जेवा अप्रतिबंध होय, शरदऋतुना जळ जेवा निर्मळ आशयवाळा होय, समुद्रनी जेवा अक्षोभ्य होय, मेरुनी जेवा निष्प्रकंप होय, (३५६) भारंड पक्षी जेवा अप्रमत्त होय, गजराज जेवा शौंडीर होय अने सिंहनी जेवा शूरवीर आत्मावाळा तेओ भूमिपर विचरे (३५७) शंख जेम

कलापकं ॥ शंखो विविधरागेण कांस्यपात्रं यथांभसा । रज्यते लिप्यते नैव तथा तेऽपि जिनेश्वराः ॥ ५८ ॥

तपसः पारणां ते च कुर्वते यस्य वेश्मनि । तद्गृहे पंच दिव्यानि स्युर्देवैर्विहितानि वै ॥ ५९ ॥ सुगंधिजलवृष्टिः स्यात् १ पुष्पवृष्टिस्तथा भवेत् २ । स्यात् स्वर्णवृष्टि ३ र्ध्वनति गगने दिव्यदुंदुभिः ४ ॥ ६० ॥ अहो दानमहो दान–मित्युद्घोषणपूर्वकं । नृत्यंति मुदिता देवा नर-जन्मानुमोदिनः ॥ ६१ ॥ स्वर्णवृष्टौ गरिष्ठायां सार्द्धा द्वादश कोटयः । कनिष्ठायां तु तस्यां स्यु–र्लक्षास्तावत्य एव च ॥ ६२ ॥ त्रैलोक्यस्थामवि-क्षोभ–प्रभविष्णुभुजा अपि । परीषहोपसर्गांस्ते सहंते निर्जरार्थिनः ॥६३॥

क्षुत् १ पिपासा २ च शीतोष्णे ३–४ । दंशा ५ चेला ६ ऽरति ७ स्त्रियः ८ । चर्या ९ नैषेधिकी १० शय्या ११–ऽऽक्रोशश्च १२ वध १३ याचने १४ ॥ ६४ ॥ रोगा १५ ऽलाभ १६ तृणस्पर्शाः १७ सत्कारो १८ मलिनांगता १९ । प्रज्ञा २० ऽज्ञानं २१ च सम्यक्त्वं २२ द्वाविंशतिः परीषहाः ॥ ६५ ॥ अरत्याख्यान्मोहनीया–दरतिः स्यात्परीषहः । जुगु-

---

विविध रंगथी रंगातो नथी अथवा कांस्यपात्र जळथी लेपातुं नथी तेम प्रभु पण रंग के लेप विनाना होय छे. (३५८)

प्रभु जेने त्यां तपनुं पारणुं करे तेने त्यां देवोना करेला पांच दिव्य प्रगट थाय. (३५९) ते आ प्रमाणे—सुगंधी जळनी वृष्टि, पुष्पोनी वृष्टि, स्वर्णनी वृष्टि, आकाशमां देवदुंदुभिनो नाद अने अहोदान अहोदान एवी उद्घोषणापूर्वक हर्ष पामेला देवो मनुष्य जन्मनी अनुमोदना करता सता नाचे. (३६०–६१) स्वर्णवृष्टि उत्कृष्टी साडाबार क्रोड सोनैयानी थाय छे अने जघन्य थाय तो साडाबार लाख सोनैयानी थाय. (३६२) त्रण लोकना बळने विक्षोभ पमाडवाने समर्थ एवी भुजावाळा छतां प्रभु निर्जराने माटे अनेक प्रकारना परिषह तथा उपसर्गोने सहन करे. (३६३)

परिषहो बावीश छे तेना नाम आ प्रमाणे–क्षुधा १, पिपासा २, शीत ३, उष्ण ४, दंश ५, अचेल ६, अरति ७, स्त्री ८, चर्या ९, नैषेधिकी १०, शय्या ११, आक्रोश १२, वध १३, याचना १४, रोग १५, अलाभ १६, तृणस्पर्श १७, सत्कार १८, मलिनांगता १९, प्रज्ञा २०, अज्ञान २१ अने सम्यक्त्व २२. (३६४–६५) आ परिषह कइ कइ कर्मप्रकृतिना उदयथी थाय छे ते कहे छे–अरति मोहनीयना उदयथी अरति

प्सामोहनीयाच्चा–चेलत्वं स्यात्त्रपावहं ॥ ६६ ॥ पुंवेदमोहनीयाच्च स्यात्पुसां स्त्रीपरीषहः । स्त्रीवेदमोहनीयाच्च स्त्रीणां स्यात्पुंपरीषहः ॥ ६७ ॥ भयमोहाद्भवेद्भीष्मो नैषेधिक्याः परीषहः । याञ्चापरीषहो मान–भंगकृन्मानमोहतः ॥ ६८ ॥ क्रोधहेतुः क्रोधमोह–भूराक्रोशपरीषहः । मानहेतुर्मानमोह–भूः सत्कारपरीषहः ॥ ६९ ॥ चारित्रमोहमाश्रित्य । स्युः सप्तामी परीषहाः । प्रज्ञाऽज्ञानद्वयं ज्ञाना–वरणीयसमाश्रितं ॥ ७० ॥ सम्यक्त्वं दर्शनमोह–मलाभो विघ्नकर्म च । आश्रित्य वेदनीयं तु भवंत्येकादशापरे ॥ ७१ ॥ तत्राद्याः क्रमतः पंच चर्या शय्या वधो रुजा । तृणस्पर्शश्च मालिन्य–मित्येते वेदनीयजाः ॥ ७२ ॥ एवं च ज्ञानावरणे मोहनीयांतराययोः । वेदनीये चेति कर्म–चतुष्कें तर्भवंत्यमी ॥ ७३ ॥

स्युर्द्वाविंशतिरप्येते सप्ताष्टकर्मबंधिनां । युगपद्विंशतिं चामून् वेदयंत्यपि जातु ते ॥ ७४ ॥ चर्यानैषेधिकीयुग्मं युग्मं शीतोष्णयोरपि ।

परिषह थाय छे, जुगुप्सा मोहनीयना उदयथी लज्जा आपनार अचेल परिषह थाय छे. (३६६) पुरुषवेदरूप मोहनीयना उदयथी पुरुषने स्त्री परिषह थाय छे, स्त्रीवेदरूप मोहनीयना उदयथी स्त्रीने पुरुष परिषह थाय छे. (३६७) भय मोहनीयना उदयथी भीष्म एवो नैषेधिकी परिषह थाय छे. मानभंग करनारो याचना परिषह मानमोहनीयना उदयथी उत्पन्न थाय छे. (३६८) क्रोधना हेतुभूत आक्रोश परिषह क्रोधमोहनीयथी उत्पन्न थाय छे. मानना हेतुभूत सत्कार परिषह मानमोहनीयथी उत्पन्न थाय छे. (३६९) आ प्रमाणे सात परिषहो चारित्रमोहनीयकर्मना उदयथी उत्पन्न थाय छे. प्रज्ञा परिषह ने अज्ञान परिषह ज्ञानावरणीयना, उदयथी उत्पन्न थाय छे. (३७०) सम्यक्त्व परिषह दर्शनमोहनीयना उदयथी उत्पन्न थाय छे. अलाभ परिषह अंतरायकर्मना उदयथी थाय छे. बाकीना ११ परिषहो वेदनीयकर्मना उदयथी उत्पन्न थाय छे. (३७१) तेमां प्रथमना पांच तथा चर्या, शय्या, वध, रोग, तृणस्पर्श अने मालिन्य ए ११ वेदनीयकर्मना उदयथी थाय छे. (३७२) ए प्रमाणे ज्ञानावरणीय, मोहनीय, अंतराय ने वेदनीय, ए चार कर्ममां बधा परिषहो अंतर्भाव पामे छे. (३७३)

आ बावीशे परिषहो सात आठ कर्म बांधनार जीवने होय छे. कोइक वखत समकाळे एमांना २० परिषहो वेदाय छे, (३७४) कारण के चर्या अने नैषेधिकी तेम ज

न भवेद्युगपत्तेनानुभवो विंशतेः स्मृतः ॥ ७५ ॥ ननु चात्यंतिके शीते पतति ज्वलितेऽनले । मध्यस्थस्यैकतः शीतं तुदत्येवोष्णमन्यतः ॥ ७६ ॥ अत्रोच्यते–शीतोष्णकालोत्थे शीतो–ष्णे एवात्र विवक्षिते । व्यभिचारो न तत्पूर्वो–क्तैः शीतज्वरिभिस्तथा ॥ ७७ ॥ एवंविधो व्यतिकरो न भवेद्वा तपस्विनां । तस्माच्छीतोष्णयोर्नैक–काले संभव इष्यते ॥ ७८ ॥ ननु शय्या च चर्या च न स्यातां युगपत्ततः । एकोनविंशतेरेव कथं नोक्तः सहोद्भवः ॥ ७९ ॥ अत्रोच्यते–कंचिद्ग्रामं समुद्दिश्य गच्छन्नु-त्सुकमानसः । मार्गे यदीत्वरां शय्यां तादृशीं प्रतिपद्यते ॥ ८० ॥ गम-नेच्छानिवृत्तत्वा–त्तदा चर्यापरीषहः । कंचित्कालं च शय्यापि यौगपद्यं द्वयोरिति ॥ ८१ ॥

मोहायुर्वर्जषट्कर्म–बंधिनां तु चतुर्दश । छद्मस्थानां स्युरष्टाभि–र्व-र्जिता मोहनीयजैः ॥ ८२ ॥ चर्याशय्ये वोष्णशीते स्यातामेषां समं न

शीत अने उष्ण एनो अनुभव समकाळे थतो नथी, तेथी २० नो अनुभव कह्यो छे (३७५) अहीं कोइ प्रश्न करे छे–' अत्यंत शीतनो उपद्रव सते ज्वलित एवा अनल (अग्नि)नो कोइ आश्रय ले छे, तो ते एक बाजुथी शीतने वेदे छे. अने बीजी बाजुथी उष्णताने वेदे छे; तो तेथी बे समकाळे केम न होय ? (३७६) तेने उत्तर आपे छे के–' अहीं शीत अने उष्णकाळमां (ऋतुमां) लागती शीत ने उष्णतानी विवक्षा करी छे, तेथी शीत ज्वरादिवाळो मनुष्य तमारा कहेवा प्रमाणे अनुभव करे तो तेथी अमारा कथनमां व्यभिचार आवतो नथी. (३७७) अथवा एवो व्यतिकर तपस्वीओने बनतो नथी, तेथी शीत ने उष्ण परिषह एक काळे संभवता नथी.' (३७८) वळी प्रश्न करे छे के–' तमे शय्या ने नैषेधिकी परिषह एक काळे थता नथी एम कहो छो ते ज प्रमाणे शय्या ने चर्या पण एककाळे थता नथी तो १९ परिषह समकाळे वेदाय एम केम न कह्युं ?' (३७९) तेने उत्तर आपे छे के–' कोइ ग्रामने उद्देशीने उत्सुक मनथी जतां मार्गमां जो इत्वरी (थोडा काळनी) शय्या मळी आवे, ते वखते गमनेच्छा निवृत्त थयेली होवाथी चर्या परिषह होय छे अने किंचित् काळ शय्यापरिषह पण होय छे तेथी ते बंने परिषह सम-काळे विवक्ष्या छे.' (३८०–८१)

मोहनीय ने आयु सिवायना छ कर्मना बंधक छद्मस्थने मोहनीयकर्मथी उत्पन्न थता आठ परिषह सिवायना १४ परिषहो होय छे. (३८२) तेमने चर्या ने शय्या तेम ज

यत्। द्वादशानुभवंत्येते सूक्ष्ममोहास्ततः समं ॥ ८३ ॥ ननु पूर्वोक्तया युक्त्या न शय्याचर्ययोः कथं। सहोद्भवो भवत्येषा-मिति चेत् श्रूयता-मिह ॥ ८४ ॥ तद्धेतुमोहानुदया-न्नैषामौत्सुक्यसंभवः ॥ ततो नेत्वर-शय्यायामेषां चर्यापरीषहः ॥ ८५ ॥ छद्मस्थवीतरागाणा-मथैकं कर्म बध्नतां। सयोगानां केवलिनां भवस्थायोगिनामपि ॥ ८६ ॥ एका-दशोपसर्गाः स्यु-र्वेदयंति समं नव। न चर्याशय्ययोः शीतो-ष्णयोर्यत्समुद्भवः ॥ ८७ ॥ मोहकर्मोदयाभावादेषामौत्सुक्यसंभवः। न जातु स्यात्ततश्चर्या-शय्ययोर्न सहोद्भवः ॥ ८८ ॥ अमी च सम्यक् सह्यंते दक्षैर्मोक्षाभिकांक्षिभिः। रागद्वेषाकरणत-स्तस्मा-दुक्ताः परीषहाः ॥ ८९ ॥ प्रज्ञाप्रकर्षे नोत्कर्षं न चाल्पज्ञपराभवं। विदधीतेति सोढव्यो बुधैः प्रज्ञापरीषहः ॥ ९० ॥ सत्कारेऽपि कृते भक्तै-र्भोज्यवस्त्रोत्सवादिभिः। न माद्यतीति सोढः स्या-त्सत्काराख्यः परीषहः

उष्ण ने शीत समकाळे थता न होवाथी सूक्ष्म मोहवाळाने समकाळे १२ परिषहो होय छे. (३८३) अहीं शिष्य प्रश्न करे छे के-' तमे कहेली पूर्वयुक्तिवडे तेने समकाळे शय्या ने चर्या परिषह केम न होय ? ' (३८४) तेने उत्तर आपे छे के-' सांभळ! औत्सुक्यना हेतुभूत मोहनीयकर्मनो उदय न होवाथी तेमने उत्सुकता होती नथी, तेथी तेमने इत्वरकाळना शय्या ने चर्या परिषह साथे होता नथी. (३८५) छद्मस्थ वीतराग एवा एक ज (वेदनीय) कर्मना बंधकने, सयोगी केवळीने तेम ज भवस्थ अयोगीने पण ११ परिषहो (प्रज्ञा, अज्ञान ने अलाभ विना) होय छे अने समकाळे नव परिषहने वेदे छे, केमके तेमने चर्या ने शय्या तेम ज शीत ने उष्ण परिषह समकाळे उत्पन्न थता नथी. (३८६-८७) तेमने मोहनीयकर्मनो उदय न होवाथी कदापि उत्सुकतानो संभव नथी; तेथी चर्या अने शय्या एकी साथे उत्पन्न थता नथी. (३८८) आ परिषहो मोक्षना अभिकांक्षी एवा दक्ष जीवो रागद्वेष कर्या विना समभावे सहन करे छे तेथी तेने परिषहो कह्या छे. (३८९) प्रज्ञानो प्रकर्ष सते अभिमान करवु नहीं अने अल्पज्ञनो पराभव पण करवो नहीं एम जाणीने बुधजनोए प्रज्ञापरिषह सहन करवो. (३९०) भक्तजनोए भोजन, वस्त्र तथा उत्सवादिवडे सत्कार कर्या छतां पण अभिमान करवुं नहीं. ते रीते सत्कार परिषह सहन कर्यो कहेवाय.

॥ ९१ ॥ अभ्यासेऽपि श्रुतानाप्तौ ज्ञानद्विष्टो विषण्णधीः । न स्यात्सोढव्य इत्येव–मज्ञानाख्यः परीषहः ॥ ९२ ॥ तपश्चारित्रकष्टानां सोढानामिह जन्मनि । फलासंदेहतः सह्यः सम्यक्त्वाख्यः परीषहः ॥९३॥ शीतोष्णप्रभृतीनां तु वपुश्चेतस्तुदां स्वयं । परीषहत्वं विज्ञेयं स्पष्टत्वान्नेह वर्णितं ॥ ९४ ॥ स्त्रीप्रज्ञालोकसत्कारा अनुकूला अमी त्रयः । प्रतिकूलाश्च विज्ञेयाः शेषा एकोनविंशतिः ॥ ९५ ॥ अत्रानुकूलशीतलयोर्विशेषोऽन्वेषणीय इति. परीषहौ स्त्रीसत्कारौ द्वौ स्यातां भावशीतलौ । उष्णाश्च भावतः शेषा विंशतिः स्युः परीषहाः ॥९६॥ तथाहुः—' इत्थीसक्कारपरीसहो य दो भावसीअला एए ' (आचा०–२०२ नि०) इत्यादि. इति परीषहाः ।

उपसृज्यत एभिर्यत् धर्मात्प्रच्याव्यतेऽसुमान् । बाधाविशेषास्ते प्रोक्ता उपसर्गा इति श्रुते ॥ ९७ ॥ दिव्य १ मानुष २ तैरश्चाः ३ स्वसंवेद्या ४ स्तथैव च । एकैकश्च चतुर्भेद इति ते षोडश स्मृताः ॥ ९८ ॥ हास्यात्प्रद्वेषतो वापि तृतीयः स्यात्परीक्षणात् । तुर्यः पृथग्विमात्राख्यो हास्य-

---

(३९१) अभ्यास करतां छतां पण श्रुत न आवडे तो तेथी विषण्ण (खेदवाळी) बुद्धिवाळा थइने ज्ञानना द्वेषी बनवुं नहीं. आ रीते अज्ञान परिषह सहन करवो. (३९२) तप–चारित्रादिना कष्टो आ भवमां सहन करवाथी तेना फळमां संदेह नहीं राखीने सम्यक्त्वपरिषह सहन करवो. (३९३) शीतोष्ण विगेरे शरीर तेम ज चित्तने खेद आपनारा परिषहो पोतानी मेळे ज जाणी लेवा. ए हकीकत स्पष्ट होवाथी अहीं तेनुं वर्णन करेल नथी. (३९४) स्त्री, प्रज्ञा ने लोकोनो सत्कार ए त्रण अनुकूळ परिषह छे, बाकीना १९ प्रतिकूळ परिषहो छे. (३९५) अहीं अनुकूळ ने शीतळमां शुं विशेषपणुं छे ते विचारवुं. स्त्री ने सत्कार ए बे भावशीतळ छे अने बाकीना वीश परिषह भावथी उष्ण छे. (३९६) श्रीआचारांगनिर्युक्तिमां कह्युं छे के—स्त्री अने सत्कार ए बे परिषहो भावथी शीतल छे इत्यादि. इति परिषहाः ॥

जेनावडे प्राणी उपसर्ग पामे अने जे धर्मथी प्रच्युत करी दे—ते बाधाविशेषने उपसर्गो समजवा, एम श्रुतमां कह्युं छे. (३९७) उपसर्गोना मुख्य चार प्रकार छे. १ देवसंबंधी, २ मनुष्यसंबंधी, ३ तिर्यंचसंबंधी अने ४ स्वसंवेद्य–ए एकेकना चार चार भेद छे. ए प्रमाणे १६ भेद समजवा. (३९८) देवसंबंधी हास्यथी, द्वेषथी, परीक्षा माटे अने चोथो पृथक् विमात्राथी थाय छे. ए चोथो भेद हास्य–द्वेषादिना संकरपणाथी

द्वेषादिसंकरात् ॥ ९९ ॥ स च हास्यात्समारब्धो द्वेषे यद्वा परीक्षणे । निष्ठां यायात्क्रुधारब्धो-ऽप्येवं हास्यपरीक्षयोः ॥ ४०० ॥ यद्वारब्धः परीक्षार्थे निष्ठां हास्यक्रुधोर्व्रजेत् । एतेषां त्रिकसंयोगो-ऽप्येवं भाव्यो मनीषिभिः ॥ १ ॥ मानुषा अप्येत एव भवंत्याद्यास्त्रयस्ततः । कुशीलप्रतिसेवाख्य-स्तुर्यो भोगार्थनादिजः ॥ २ ॥ भयाद् द्वेषाद्भक्ष्यहेतो-रपत्यपालनाय च । इति तिर्यक्कृता ज्ञेया उपसर्गाश्चतुर्विधाः ॥ ३ ॥ प्रद्वेषात्क्रुद्धसर्पाद्या-स्तुदंति श्वादयो भयात् । आहारहेतोर्व्याघ्राद्या धेन्वाद्यास्त्रातुमात्मजान् ॥ ४ ॥ घट्टनाच्च प्रपतनात् स्तंभनात् श्लेषणादिति । आत्मसंवेदनीयाः स्यु-रुपसर्गाश्चतुर्विधाः ॥ ५ ॥ यथाक्ष्णि पतिते रेणौ तस्मिन् हस्तेन मर्दिते । मांसांकुरैर्वा कंठादौ कष्टं स्याद्धट्टनोद्भवं ॥ ६ ॥ गमनादावयत्नेन दुःखं स्यात्पतनोद्भवं । सुप्तस्य चोपविष्टस्य पादादौ प्रसृते चिरं ॥ ७ ॥ स्थिते स्तब्धे स्तंभनोत्थ-मेवं संकुचिते चिरं । स्थिते

थाय छे. (३९९) ते आवी रीते-हास्यथी आरंभेल होय पण जेनुं परिणाम परीक्षणमां के द्वेषमां थाय, क्रोधथी आरंभेल होय पण ते हास्य के परीक्षामां परिणाम पामे. (४००) तेम ज जे परीक्षा माटे आरंभेल होय पण ते हास्य के क्रोधमां परिणाम पामे. एवी रीते त्रिकसंयोगी भेद पण बुद्धिमानोए समजी लेवो. (४०१) मनुष्य संबंधी उपसर्गो पण एवा ज त्रण प्रकारे हास्यथी, द्वेषथी अने परीक्षा माटे थाय छे अने चोथो कुशील प्रतिसेवा नामनो प्रकार छे, ते प्रार्थनादिकथी थाय छे. (४०२) भयथी, द्वेषथी, भक्ष्य माटे अने अपत्यपालना माटे एम तिर्यंचकृत उपसर्गना पण चार भेद समजवा. (४०३) ते आवी रीते-प्रद्वेषथी सर्पादि डसे छे, भयथी श्वानादि करडे छे, आहार माटे व्याघ्रादि उपसर्ग करे छे अने गाय विगेरे पोताना बाळकोने बचाववा माटे सामी थइ जाय छे. (४०४) घट्टनथी, प्रपतनथी, स्तंभनथी अने श्लेषणथी एम आत्मसंवेदनीय उपसर्गो चार प्रकारे थाय छे. (४०५) ते आवी रीते-आंखमां रज विगेरे पड्ये सते हाथवडे मर्दित करवाथी अथवा कंठादि उपर मांसांकुर थवाथी जे कष्ट उत्पन्न थाय ते घट्टनोद्भव समजवुं. (४०६) अयत्ने गमन करवाथी पडी जवाय ते पतनोद्भव जाणवुं, तेम ज सुतेलाने के बेठेलाने घणा काळसुधी पग विगेरे लंबावी राखवाथी ने स्तब्धपणे स्थित रहेवाथी दुःख उत्पन्न थाय ते स्तंभनोद्भव समजवुं अने ए ज रीते घणा वखत सुधी संकुचितपणे रहेवाथी शरीरनो अमुक भाग बळगी

तस्मिन् विलग्ने च दुःखं स्यात् श्लेषणोद्भवं ॥ ८ ॥ इदमर्थतः स्थानांग-सूत्रवृत्त्यादौ॰

एतांश्च सहमानानां चीयते कर्मसंततिः । तेषामनुत्तरज्ञान-तपःक्षां-त्यादिशालिनां ॥ ९ ॥ त्यक्तार्त्तरौद्रध्यानास्ते धर्मध्यानसमाहिताः । ध्यानं ध्यातुं प्रवर्त्तते शुक्लं कर्मेंधनानलं ॥ १० ॥ ध्यानं नाम मनःस्थैर्यं यावदंतर्मुहूर्त्तकं । आर्त्तं रौद्रं तथा धर्म्यं शुक्लं चेति चतुर्विधं ॥ ११ ॥ तथोक्तं स्थानांगवृत्तौ–अंतोमुहुत्तमेत्तं चित्तावत्थाणमेगवत्थुंमि । छउम-त्थाणं झाणं जोगनिरोहो जिणाणं तु ॥ १२ ॥ योगास्तत्रौदारिकादि-देहसंयोगसंभवाः । आत्मवीर्यपरीणाम-विशेषाः कथितास्त्रिधा ॥ १३ ॥ इत्यावश्यकहारिभद्र्यां ध्यानशतकवृत्तौ, मुहूर्त्तात्परं चित्ता–वस्थानमेक-वस्तुनि । सा चिंतेत्युच्यते प्राज्ञै–र्यद्वा ध्यानांतरं भवेत् ॥ १४ ॥ तथोक्तं–अंतोमुहुत्तपरओ चिंता झाणंतरं व होज्जाहि । सुचिरंपि होज्ज बहुवत्थु-संकमे झाणसंताणो ॥ १५ ॥ तत्रेह न ध्यानादन्यद्ध्यानांतरं गृह्यते, किं

रहे–लांबो टुंको थइ न शके तेथी उपजतुं दुःख ते श्लेषणोद्भव समजवुं. (४०७-८) आ हकीकत स्थानांगसूत्रवृत्त्यादिमां अर्थथी कहेली छे.

ए परिषह तथा उपसर्गोने सम्यक्प्रकारे सहन करनारा अनुत्तरज्ञान, तप ने क्षांति-वाळा एवा तीर्थंकरनी कर्मसंतति (घातिकर्मो) क्षय पामे छे. (४०९) तेओ आर्त्त, रौद्रध्यानने तजीने प्रथम धर्मध्यानमां स्थित रहेला होय छे, पछी कर्मरूप इंधनने बाळ-वामां दावानळ सरखा शुक्लध्यान ध्यावानुं शरु करे छे. (४१०) ध्यान एटले मननी स्थिरता. ते अंतर्मुहूर्त्त सुधी रहे छे. ते ध्यानना चार भेद छे· १ आर्त्त, २ रौद्र, ३ धर्म्य अने ४ शुक्ल· (४११) श्रीस्थानांगसूत्रनी वृत्तिमां कह्युं छे के–' एक वस्तुमां अंतर्मु-हूर्त्त सुधी चित्तनुं अवस्थान ते छद्मस्थोने माटे ध्यान कहेवाय छे अने जिनोने (केव-ळीने) माटे योगनिरोधरूप ध्यान होय छे· (४१२) औदारिकादिक त्रण शरीरथी उत्पन्न थएला आत्मवीर्यना परिणाम विशेषरूप योगो त्रण प्रकारना कह्या छे. (४१३) एम श्रीआवश्यकहारिभद्रीमां ध्यानशतकनी वृत्तिमां कहेल छे. मुहूर्त्त उपरांत जे एक वस्तुमां चित्तनुं अवस्थान तेने प्राज्ञ पुरुषोए चिंता कही छे अथवा ते ध्यानांतर दशा होय छे. (४१४) तथोक्तं–अंतर्मुहूर्त्तथी पर चिंता अथवा ध्यानांतर होय छे. बहु वस्तुना संक्रमथी जे घणो काळ टकी रहे छे ते ध्यानसंतान जाणवुं. (४१५) अहीं एक वस्तुना ध्यानमांथी

तर्हि ? भावानुप्रेक्षात्मकं चेत इति. बहूनि च तानि वस्तूनि च बहुवस्तूनि, आत्मगतपरगतानि मनःप्रभृतीनि, तेषु संक्रमः संचरणमिति हारिभद्र्यां. गाढमालंबने लग्नं चित्तं ध्यानं निरेजनं । यत्तु चित्तं चलं मूढ—मव्यक्तं तन्मनो मतं ॥ १६ ॥ अव्यक्तानां मूर्छितानां मत्तानां स्वापमीयुषां । सद्योजातार्भकाणां चा—ऽव्यक्तं मूढं भवेन्मनः ॥ १७ ॥ एवं ध्यानं ध्रुवं चित्तं चित्तं ध्यानं न निश्चयात् । खदिरो वृक्ष एव स्यात् स चान्यो वा तरुः पुनः ॥ १८ ॥ यन्मानसः परीणामः केवलो ध्यानमिष्यते । तन्मिथ्या यज्जिनैस्त्रेधे—ष्वपि योगेषु तत्स्मृतं ॥ १९ ॥ नन्वंगमनसोः स्थैर्या—पादनात्संभवेद् द्विधा । ध्यानं कथं तृतीयं तु वाचिकं संभवेदिह ॥ २० ॥ अत्रोच्यते—यथा मानसिकं ध्यान—मेकाग्रं निश्चलं मनः । यथा च कायिकं ध्यानं स्थिरः कायो निरेजनः ॥ २१ ॥ तथा यतनया भाषां भाषमाणस्य शोभनां । दुष्टां वर्जयतो ध्यानं वाचिकं कथितं जिनैः ॥ २२ ॥ तथाहुः—एवंविहा गिरा मे वत्तव्वा एरिसा न

बीजी वस्तुना ध्यानमां जवुं ते रूप ध्यानांतर न समजवुं, त्यारे शुं समजवुं ? उत्तर—भावानुप्रेक्षारूप चित्त समजवुं. बहु एवी वस्तुओ ते बहु वस्तुओ—आत्मगत ने परगत मन विगेरे. तेमां संक्रम—संचरण—एवो अर्थ हारिभद्रीमां कर्यो छे ने आलंबनमां गाढपणे लग्न थइ जाय एवुं निष्कंपध्यान ते चित्त कह्युं छे अने जे चळ, मूढ तेम ज अव्यक्त होय ते मन कहेवाय छे. (४१६) अव्यक्त, मूर्च्छित, मत्त, उंघमां पडेल अने तरतना जन्मेला बाळकनुं मन अव्यक्तमूढ कहेलुं छे. (४१७) एम ध्यान ते तो ध्रुवपणे चित्त ज छे पण चित्त ध्यानरूप होय एवो निश्चय नथी. जेम 'खेरनुं झाड ते तो वृक्ष छे ज पण वृक्ष ते तो खेर होय पण खरो अने न पण होय.' (४१८) जेओ मानसना परिणामने केवळ ध्यान इच्छे छे—माने छे ते मिथ्या छे, कारण के जिनेश्वरोए पूर्वे कह्या प्रमाणे त्रण प्रकारना योगमां ज ध्यान कहेल छे. (४१९) ए ध्यान अंगनी ने मननी स्थिरता उत्पन्न करनार तरीके बे प्रकारनुं संभवे छे, परंतु त्रीजुं वाचिक ध्यान शी रीते संभवे ? (४२०) तेनो उत्तर आपे छे—जेम मानसिक ध्यान एकाग्र निश्चळ एवुं मन अने जेम कायिकध्यान निष्कंप स्थिर एवी काया, (४२१) तेम यतनावडे शोभन भाषा बोलतां अने दुष्ट भाषाने वर्जवां वाचिकध्यान जिनेश्वरोए कह्युं छे. (४२२) ते

वत्तव्वा । इय वेयालिअवक्कस्स भासओ वाइगं झाणं ॥ २३ ॥ मनोवचः-काययोगा-न्नयन्नेकाग्रतां मुनिः । वर्त्तते त्रिविधे ध्याने गणयन् भंगिकश्रुतं ॥ २४ ॥ त्रैधेष्वपीति योगेषु ध्यानत्वे किल निश्चिते । मुख्येनैकतमेनैव व्यपदेशः स्फुटो भवेत् ॥ २५ ॥ यथा सत्स्वपि दोषेषु वातपित्तकफात्मसु । यदा भवेदुत्कटो यः कुपितः स तदोच्यते ॥ २६ ॥ यथा गच्छन् राजमार्गे नृपतिस्सपरिच्छदः । गच्छत्ययं नृप इति मुख्यत्वाद्व्यपदिश्यते ॥ २७ ॥ तथा चित्तस्य मुख्यत्वा-द्ध्यानं चित्तोत्थमुच्यते । वाक्काययोस्त्वमुख्यत्वा-त्तद्ध्यानं नोच्यते पृथक् ॥ २८ ॥

ज्ञातविश्वस्वभावस्य निस्संगस्य महात्मनः । निर्ममस्य विरक्तस्य भवेद्ध्याने स्थिरं मनः ॥२९॥ नित्यं यतीनां युवती-पशुक्लीबादिवर्जितं । विजनं शस्यते स्थानं ध्यानकाले विशेषतः ॥३०॥ महात्मनां हि शमिनां ध्याननिश्चलचेतसां । न विशेषो जनाकीर्णे पुरे वा निर्जने वने ॥ ३१ ॥ ततो वा-

---

विषे कह्युं छे के—' आवा प्रकारनी (शुभ) वाणी मारे बोलवायोग्य छे, अने आवी वाणी मारे बोलवा योग्य नथी, आ प्रमाणे विचार करीने जे अवक्रभाषा बोले तेने वाचिकध्यान जाणवुं. (४२३) मन, वचन, कायाना योगने एकाग्र करता मुनि भंगिकश्रुतने गणता सता त्रिविध ध्यानमां वर्त्ते छे. (४२४) आ प्रमाणे त्रणे प्रकारना योगने विषे ध्यानपणुं निश्चित कर्ये सते मुख्यपणे एकतम (योग)वडे ज स्फुट व्यपदेश थाय छे. (४२५) जेम शरीरमां वात, पित्त ने कफ त्रणे दोष छतां ज्यारे जे दोष उत्कट कोपेल होय तेनो ज व्यपदेश कराय छे. (४२६) वळी जेम परिवार सहित राजा राजमार्गे जतो होय त्यारे मुख्यपणुं होवाथी आ राजा जाय छे एम व्यपदेश कराय छे. (४२७) ए ज प्रमाणे चित्तनी मुख्यता होवाथी ध्यान चित्तथी उत्पन्न थयेल ज कहेवाय छे. वचन ने कायानी अमुख्यता (गौणता) होवाथी ते बे प्रकारना ध्यान जूदा कहेवाता नथी. (४२८)

जेणे विश्वनो स्वभाव जाण्यो होय, जे महात्मा निस्संग, निर्मम अने विरक्त होय तेमनुं मन ज ध्यानमां स्थिर थाय छे. (४२९) मुनिओने निरंतरने माटे युवति, पशु ने नपुंसकना निवास रहित स्थान ज रहेवा योग्य कहेल छे अने ध्यान काळे तो विशेषे करीने विजन-मनुष्य रहित एवुं स्थान जोइए. (४३०) जेओ ध्यानमां निश्चळ मनवाळा थइ गया छे एवा महात्मा मुनिने तो जनाकीर्ण नगरमां के विजन एवा वनमां कांइ विशेषता नथी. (बंने समान छे) (४३१) तेथी वचन, काया ने मननी ज्यां स्थिरता

कायमनसां समाधिर्यत्र जायते । भूतोपघातहीनोऽसौ देशः स्याद् ध्यायतो मुनेः ॥ ३२ ॥ यत्र योगसमाधान–मुत्तमं लभते मुनिः । स ध्यानकालो दिवस–निशादिनियमस्तु न ॥ ३३ ॥ ध्यानस्थैर्यं प्रजायेता–सनाद्यवस्थया यया । स्थितो निषण्णः सुप्तो वा ध्यायेत्तस्यामवस्थितः ॥ ३४ ॥ यद्देशकालचेष्टास्व–वस्थासु निखिलासु च । मुनीश्वराः शिवं प्राप्ताः क्षपिताशेषकल्मषाः ॥ ३५ ॥ तद्देशकालचेष्टानां ध्याने कोऽपि न निश्चयः । यथा योगसमाधिः स्या–द्यतितव्यं तथा बुधैः ॥ ३६ ॥

अत्रार्त्तरौद्रे दुर्ध्याने स्मृते दुर्गतिदायिनी । शुभध्याने पुनर्धर्म्य–शुक्ले स्वःशिवदायिनी ॥ ३७ ॥ एषां स्वरूपं यथा–तत्रार्त्तस्य पीडितस्य रोगाकिंचनतादिभिः । लोभादिभिर्वा यद्ध्यानं तदार्त्तं स्याच्चतुर्विधं ॥ ३८ ॥ शब्दादीनामनिष्टानां संबंधे सति देहिनः । ध्यानं यत्तद्वियोगस्य तदार्त्तं प्रथमं भवेत् ॥ ३९ ॥ अभीष्टानां च लब्धानां शब्दादीनां निरंतरं । अविच्छेदस्य या चिंता तद् द्वितीयं प्रकीर्त्तितं ॥ ४० ॥ आतंके सति

(समाधि) थाय तेवुं प्राणीओना उपघात विनानुं स्थान ध्यान करनारा मुनि माटे योग्य गणाय छे. (४३२) हवे जे वखते मुनि योगनुं समाधान उत्तम प्रकारे मेळवी शके ते ध्याननो काळ समजवो, तेमां दिवस के रात्रिनो नियम नथी. (४३३) वळी जे आसनादि अवस्थाए ध्याननी स्थिरता थाय ते अवस्थामां एटले उभा, बेठेला के सुता अवस्थित थइने ध्यान करे, (४३४) कारण के सर्व देशकाळ, सर्व चेष्टा अथवा सर्व अवस्थाने विषे रहेला मुनीश्वरो अशेष कर्मकल्मष खपावीने मोक्षने पामेला छे. (४३५) तेथी कांइ पण देशकाळ के चेष्टानो ध्यानने विषे निश्चय नथी; माटे पंडितजनोए जे रीते योग समाधि थाय तेम प्रयत्न करवो. (४३६)

अहीं आर्त्त ने रौद्र बे दुर्ध्यान छे अने ते दुर्गति आपनारा छे. धर्म ने शुक्ल बे शुभ ध्यान छे अने ते स्वर्ग के मोक्षने आपनारा छे. (४३७) ए चार ध्याननुं स्वरूप आ प्रमाणे समजवुं. रोग अने अकिंचनता (दरिद्रता) विगेरेथी तथा लोभादिकथी पीडायेल–दुःखी थयेल मनुष्य जे ध्यान ध्याय ते आर्त कहेलुं छे, तेना चार प्रकारो छे. (४३८) अनिष्ट शब्दादिक विषयोना शरीर साथे संबंध थवाथी तेनो वियोग केम थाय? एवुं ध्यान करवुं ते आर्त ध्यान (अनिष्ट संयोग) प्रथम कह्युं छे. (४३९) अभीष्ट एवा शब्दादि प्राप्त थए सते निरंतर ते टकी रहे तेनो व्यवच्छेद न थाय तो ठीक एम चिंतववुं ते (इष्ट वियोग) बीजुं आर्त ध्यान कह्युं छे. (४४०) कोइ पण प्रकारनो व्याधि थये सते तेनी उपशांतिनी

तस्योप–शान्तेश्चिंतातृतीयकं । भुक्तानां कामभोगानां स्मरणे स्यात्तुरीयकं ॥ ४१ ॥ अन्ये त्वाहुश्चक्रिविष्णु–सुरशक्रादिसंपदां । आशंसया निदानस्य चिंतने तत्तुरीयकं ॥ ४२ ॥ तथाहुः–देविंदचक्कवट्टि–त्तणाइं गुणरिद्धिप-त्थणामइयं । अहमं नियाणचिंतण–मन्नाणाणुगयमच्चत्तं ति ॥४३॥ क्रंदनं शोचनं चाश्रु–मोचनं परिदेवनं । आर्त्तध्यानस्य चत्वारि लक्षणान्याहु-रार्हताः ॥ ४४ ॥ तत्र–क्रंदनं स्याद्विरवणं शोचनं दीनता मता । स्पष्टं तृतीयं तत्क्लिष्ट–वाक्याढ्यं परिदेवनं ॥ ४५ ॥ आत्मवर्त्तित्वादलक्ष्य-मप्येभिर्लक्षणैरदः । लक्ष्यते इत्यमून्याहु–र्लक्षणान्यस्य धीधनाः ॥ ४६ ॥

हिंसामृषाद्यतिक्रूरा–ध्यवसायात्मकं भवेत् । परप्रद्वेषजं रौद्र–ध्यानं तच्च चतुर्विधं ॥४७॥ हिंसा १ मृषा २ स्तैन्य ३ संर–क्षणा ४ नुबंधिभेदतः । तत्राद्यं प्राणिनां दाह–वधबंधादिचिंतनं ॥ ४८ ॥ पैशून्यासभ्यवितथ–वचसां परिचिंतनं । अन्येषां द्रोहबुद्ध्या य–न्मृषावादानुबंधि तत् ॥ ४९ ॥

चिंता करवी ते त्रीजुं (रोग चिंता) आर्त ध्यान छे. अने भोगवेला कामभोगनुं स्मरण करवुं ते चोथुं आर्त ध्यान छे. (४४१) बीजाओ एम कहे छे के–चक्री, विष्णु, देव, देवेंद्रादिकनी संपदानी आशंसा (इच्छा) वडे जे नियाणुं करवानुं चिंतन करवुं ते (अग्रशोच) चोथुं आर्त ध्यान छे. (४४२) तथाहुः–देवेंद्र के चक्रवर्ती विगेरेनी गुण ऋद्धिनी प्रार्थनारूप अधम नियाणानुं अज्ञानने अनुगतवर्त्तनथी चिंतववुं ते चोथुं आर्त्तध्यान छे. (४४३) आ आर्त ध्यानना क्रंदन, शोचन, अश्रुमोचन ने परिदेवन ए चार लक्षणो अर्हंतोए कहेला छे. (४४४) तेमां क्रंदन ते विलाप करवो, शोचन ते दीनता धारण करवी, अश्रुमोचन–आंसु पाडवा ते तो स्पष्ट छे, अने क्लिष्ट वाक्यो बोलवा ते परिदेवन समजवुं. (४४५) ध्यान आत्मवर्ती होवाथी अलक्ष्य छे पण आ लक्षणोवडे ते लक्ष्यमां आवी शके छे. तेथी बुद्धिमानोए आने लक्षणो कह्या छे. (४४६)

हवे रौद्र ध्याननुं स्वरूप कहे छे. हिंसा, मृषादि अतिक्रूर अध्यवसायरूप परना प्रद्वे-षथी उत्पन्न थयेल रौद्र ध्यान छे. तेना चार प्रकार छे. (४४७) हिंसानुबंधी, मृषानु-बंधी, स्तैन्यानुबंधी अने संरक्षणानुबंधी. तेमां पहेलुं हिंसानुबंधी ध्यान प्राणीओने दाह देवो, वध करवो, बंधन करवुं इत्यादि चिंतनरूप छे. (४४८) अन्य उपरनी द्रोहबुद्धिवडे पैशून्य, असभ्य अने वितथ (असत्य) वचन बोलवा संबंधी चिंतन करवुं ते बीजुं मृषावादानुबंधी छे. (४४९) तथाहुः–मायावीनुं, अभिसंधान तत्परनुं अने प्रच्छन्न

तथाहुः—पिसुणासब्भासब्भूअ—भूयघायाइवयणपणिहाणं । मायाविणोभिसंधण—परस्स पच्छन्नपावस्स ॥५०॥ परद्रव्यापहरण—चिंतनं तीव्ररोषतः । तन्नायकोपघाताद्यै—र्भवेत्स्तैन्यानुबंधि तत् ॥ ५१ ॥ स्वीयस्वरक्षणार्थं य—च्छंकमानस्य सर्वतः । परोपघाताभिप्रायः संरक्षणानुबंधि तत् ॥ ॥ ५२॥ तथोक्तं—सद्दाइविसयसाहण—धणसंरक्खणपरायणमणिट्ठं । सव्वाभिसंकणपरो—वघायकलुसाउलं चित्तं ॥ ५३॥ हिंसादिषु चतुष्केषु यदेकासेऽवनं मुहुः । रौद्रध्यानस्य तद् ज्ञेयं प्रथमं लक्षणं बुधैः ॥ ५४ ॥ चतुर्ष्वेषु प्रवृत्तिस्तु द्वितीयं तस्य लक्षणं । तथा कुशास्त्रसंस्कारा—त्मकादज्ञानदोषतः ॥ ५५ ॥ हिंसादिकेष्वधर्मेषु धर्मबुद्ध्या प्रवर्त्तनं । तृतीयं लक्षणं ज्ञेयं चतुर्थं तु भवेदिदं ॥ ५६ ॥ मरणांतेऽपि संप्राप्ते हिंसादेरनिवर्तनं । महासंक्लिष्टमनसः कालशौकरिकादिवत् ॥ ५७ ॥

श्रुतचारित्रधर्माभ्या—मनपेतं तु यद्भवेत् । तद्धर्म्यं ध्यानमुक्तं त—च्चतुर्भेदं जिनोत्तमैः ॥५८॥ आज्ञाविचयसंज्ञं स्यात् श्रुतार्थचिंतनात्मकं । अपाय-

---

पापीनुं पिशून, असभ्य, असद्भूत अने घातकारी वचनो बोलवानुं चिंतवन (ते मृषानुबंधी छे). (४५०) तीव्र रोषथी परद्रव्यना अपहरणनुं तेम ज तेना स्वामीना उपघातादिनुं जे चिंतवन करवुं ते स्तैन्यानुबंधी रौद्र ध्यान छे. (४५१) पोताना द्रव्यना रक्षणने माटे चोतरफथी शंकित चित्तवाळानुं परोपघातनुं जे चिंतवन ते संरक्षणानुबंधी रौद्र ध्यान छे. (४५२) तथोक्तं—शब्दादि विषयना साधनभूत धनना संरक्षणमां परायणनुं अनिष्ट अने सर्व तरफथी शंकावाळुं तेमज परना उपघातरूप कलुषताथी आकुळ जे चित्त ते (संरक्षणानुबंधी) छे. (४५३) हिंसादि चतुष्कमांथी जे कोइ पण एकनुं वारंवार आसेवन ते बुधजनोए रौद्र ध्याननुं प्रथम स्थान समजवुं. (४५४) अने ए चारेमां प्रवृत्ति ते रौद्र ध्याननुं बीजुं लक्षण जाणवुं, तेथी कुशास्त्र संस्काररूप अज्ञान दोषथी हिंसादिक अधर्ममां जे धर्मबुद्धिए प्रवर्तन ते त्रीजुं लक्षण जाणवुं; अने मरणांत प्राप्त थये सते पण हिंसादिकथी न निवर्तवुं—महासंक्लिष्ट मनवाळा काळ नामना शौकरिक (कसाइ) नी जेम ते चोथुं लक्षण जाणवुं. (४५५–५७)

हवे धर्मध्याननुं स्वरूप कहे छे. जे ध्यान श्रुतधर्म ने चारित्रधर्मथी युक्त होय ते धर्मध्यान जिनेश्वरोए चार प्रकारनुं कह्युं छे. (४५८) प्रथम श्रुतार्थना चिंतवनरूप

विचयं त्वाश्र–वादिभ्योऽपायचिंतनं ॥५९॥ पुण्यपापफलचिंता–विपाक‐विचयाभिधं । संस्थानविचयं तु स्या–ल्लोकाकृत्यादिचिंतनं ॥ ६० ॥ तथाहुः–आप्तवचनं हि प्रवचन–माज्ञाविचयस्तदर्थनिर्णयनं १। आश्रववि‐कथागौरव–परीषहाद्यैरपायस्तु २ ॥६१॥ अशुभशुभकर्मपाका–नुचिंतनार्थो विपाकविचयः स्यात् ३ । द्रव्यक्षेत्राकृत्यनु–गमनं संस्थानविचयस्तु ४ ॥ ६२ ॥ रुची आज्ञानिसर्गाभ्यां सूत्रविस्तारयो रुची । चतुर्द्धा रुचयो धर्म–ध्यानचिह्नचतुष्टयं ॥ ६३ ॥ सूत्रव्याख्यानमाज्ञा स्या–न्निर्युक्त्यादीह तत्र या । रुचिः श्रद्धानमेषाज्ञा–रुचिरुक्ता महर्षिभिः ॥ ६४ ॥ विनोप‐देशं या तत्त्व–श्रद्धा सा स्यान्निसर्गजा । सूत्रे श्रद्धा सूत्ररुचि–स्तद्विस्ता‐रेतिमा रुचिः ॥ ६५ ॥ तथोक्तं–आगमउवएसाणं निसग्गओ जं जिणप्प‐णीयाणं । भावाणं सद्दहणं धम्मज्झाणस्स तं लिंगं ॥ ६६ ॥

धर्मध्यानस्य चत्वारि भवंत्यालंबनान्यथ । सौधाद्यारोहणे रज्ज्वा‐दिवद्यानि जिना जगुः ॥६७॥ वाचना च पृच्छना च तथैव परिवर्त्तना । अनु‐

आज्ञाविचय नामनुं छे. बीजुं आश्रवादिकथी प्राप्त थता अपाय–कष्टोनुं चिंतवन करवुं ते अपायविचय नामनुं छे. (४५९) त्रीजुं पुण्य–पापना फळनी चिंतारूप विपाक विचय नामनुं छे अने चोथुं लोकाकृति विगेरेनुं चिंतवन करवुं ते संस्थानविचय नामनुं छे. (४६०) तथाहुः–"आप्तवचन ते ज प्रवचन, तेना अर्थनो निर्णय ते आज्ञा‐विचय. आश्रव, विकथा अने गौरव तथा परिषहादिनुं चिंतवन ते अपायविचय. (४६१) अशुभ ने शुभ कर्मना विपाकनुं अनुचिंतन ते विपाकविचय अने षड्द्रव्य युक्त क्षेत्रनी आकृतिनुं (लोकनालिकानुं अनुगमन (चिंतवन) ते संस्थानविचय." (४६२) आज्ञारुचि, निसर्गरुचि, सूत्ररुचि ने विस्ताररुचि–आ चार प्रकारनी रुचि धर्मध्या‐नना चार चिन्हरूप छे. (४६३) सूत्रनुं व्याख्यान ते आज्ञा. ते व्याख्यान, निर्युक्ति विगेरेने मेळवीने करवानी जे रुचि–श्रद्धान तेने महर्षिओए आज्ञारुचि कही छे. (४६४) गुरु उपदेश विना जे श्रद्धा ते निसर्गरुचि, सूत्रमां जे श्रद्धान ते सूत्ररुचि अने तेना विस्तारथी जे श्रद्धान ते विस्ताररुचि जाणवी. (४६५) तथोक्तं–जिनप्रणीत आग‐मना उपदेशनुं, तेमां कहेला भावनुं (पदार्थोनुं) जे स्वभावथी ज सद्दहवुं ते धर्मध्याननुं चिन्ह छे. (४६६)

धर्मध्यानना चार आलंबन छे के जे महेलविगेरे पर चडवा माटे रज्जु (दोरडा) विगेरेनी जेवा जिनेश्वरोए कह्या छे. (४६७) वाचना, पृच्छना, परिवर्तना

प्रेक्षा चेत्यमूषां स्वरूपमपि कीर्त्यते ॥६८॥ निर्जरार्थं विनेयानां सूत्रदानादिवाचना। सूत्रादौ शंकिते प्रश्नो गुरूणां पृच्छना मता ॥६९॥ पूर्वाधीतस्य सूत्रादे–रविस्मरणहेतवे। निर्जरार्थं च योऽभ्यासः स भवेत्परिवर्त्तना ॥ ७० ॥ सूत्रार्थानुस्मरणं वा–नुप्रेक्षेत्यभिधीयते। धर्मध्याने चतस्रोऽनु–प्रेक्षाः प्रोक्ता इमाः पराः ॥ ७१ ॥ अन्विति ध्यानतः पश्चात् प्रेक्षा त्वालोचनं हृदि। अनुप्रेक्षा स्यादसौ चा–श्रयभेदात् चतुर्विधा ॥ ७२ ॥ एकत्वानित्यत्वा–शरणत्वानां भवस्वरूपस्य। चिंता धर्मध्याना–नुप्रेक्षाः स्युः क्रमादेताः ॥ ७३ ॥ एकोहं नास्ति मे कश्चि–न्नाहमन्यस्य कस्यचित्। न तं पश्यामि यस्याहं नासौ भवति यो मम ॥ ७४ ॥ इत्येकत्वानुप्रेक्षा. कायः सन्निहितापायः संपदः पदमापदां। समागमाः स्वप्नसमाः सर्वमुत्पादि भंगुरं ॥ ७५ ॥ इत्यनित्यत्वानुप्रेक्षा। जन्मजरामरणभयै–रभिद्रुतेव्याधिवेदनाग्रस्ते। जिनवरवचनादन्य–न्न चास्ति शरणं कचिल्लोके ॥ ७६ ॥ इत्यशरणानुप्रेक्षा. माता भूत्वा

अने अनुप्रेक्षा–आ चार आलंबन छे, तेनुं स्वरूप पण कहे छे–(४६८) निर्जराने माटे शिष्योने सूत्रदानादि ते वाचना, सूत्रादिमां शंका पड्ये सते गुरुमहाराजने जे पूछवुं ते पृच्छना, (४६९) पूर्वे भणेला सूत्रादि न भूली जवा माटे जे वारंवार निर्जरार्थे अभ्यास करवो ते परिवर्तना (४७०) अने सूत्रार्थनुं स्मरण करवुं ते अनुप्रेक्षा कहेल छे. धर्मध्यानमां बीजी चार अनुप्रेक्षा कही छे ते आ प्रमाणे–(४७१) अनु. एटले ध्याननी पछी प्रेक्षा एटले हृदयमां आलोचन ते अनुप्रेक्षा कहेवाय. ते आश्रयना भेदथी चार प्रकारनी छे. (४७२) एकत्व, अनित्यत्व, अशरणत्व अने भवस्वरूपनुं जे चिंतवन ते धर्मध्याननी अनुक्रमे चार अनुप्रेक्षा कही छे. (४७३) हुं एकलो छुं, मारुं कोइ नथी, हुं पण अन्य कोइनो नथी, हुं एवो कोइने जोतो नथी के हुं जेनो होउं अने एवो कोइ नथी के जे मारो होय. (४७४) आ एकत्वानुप्रेक्षा. काया अपायने आपनारी छे, संपत्ति बधी आपदानुं स्थान छे, समागम बधा स्वप्न समान छे अने जे उपजे छे ते बधुं विनाशी छे आ अनित्यत्वानुप्रेक्षा. (४७५) जन्म, जरा, मरण अने भयवडे अभिद्रुत (व्याप्त), व्याधि–वेदनाथी ग्रस्त एवा आ संसारमां (लोकमां) जिनेश्वरना वचन उपरांत बीजुं कोइ शरणभूत नथी. (४७६) ए अशरणानुप्रेक्षा. माता थइने पुत्री, बहेन के स्त्रीपणे आ संसा-

दुहिता भगिनी भार्या च भवति संसारे । व्रजति सुतः पितृतां भ्रा–तृतां पुनः शत्रुतां चैव ॥ ७७ ॥ गर्भोत्पत्तौ महादुःखं महादुःखं च जन्मनि । मरणे च महादुःखमिति दुःखमयो भवः ॥ ७८ ॥ इति संसारानुप्रेक्षा ॥

शोधयत्यष्टधा कर्म–मलं शुक्लमिति स्म तत् । शुचं वा क्लमयतीति शुक्लं तच्च चतुर्विधं ॥ ७९ ॥ सविचारं स्यात्पृथक्त्व–वितर्काख्यमिहादिमं । तथैकत्ववितर्काख्य–मविचारं द्वितीयकं ॥ ८० ॥ सूक्ष्मक्रियं चानिवृत्ति शुक्लध्यानं तृतीयकं । समुच्छिन्नक्रियं चैवा–प्रतिपाति चतुर्थकं ॥८१॥ उत्पादादिपर्यवाणामेकद्रव्यविवर्तिनां । विस्तारेण पृथग्भेदै–र्वितर्को यद्विकल्पनं ॥८२॥ नाना नयानुसरणा–त्मकात्पूर्वगतश्रुतात् । यत्र ध्याने तत्पृथक्त्व–वितर्कमिति वर्णितं ॥ ८३ ॥ युग्मम् । अत्र च व्यंजनादर्थे तथार्थाद्व्यंजनेऽसकृत् । विचारोऽस्ति विचरणं सविचारं तदीरितं ॥ ८४ ॥ मनःप्रभृतियोगाना–मेकस्मादपरत्र च । विचारोऽस्ति विचरणं सविचारं ततोप्यदः ॥ ८५ ॥ एवं च–यत्पृथक्त्ववितर्काढ्यं सविचारं

रमां थाय छे अने पुत्र पितापणे, भाइपणे तेम ज शत्रुपणे थाय छे. (४७७) गर्भनी उत्पत्तिमां महा दुःख छे, जन्मतां पण महा दुःख छे, मरण पामतां पण महा दुःख छे. आ संसार दुःखमय ज छे. (४७८) इति संसारानुप्रेक्षा.

हवे शुक्ल ध्याननुं स्वरूप कहे छे. अष्ट कर्मरूपी मळने जे शोधे छे ते शुक्ल अथवा जे शोकने दूर करे छे ते शुक्ल ध्यान कहेवाय छे. ते पण चार प्रकारनुं छे. (४७९) तेमां प्रथम पृथक्त्ववितर्कसविचार नामनुं छे, बीजुं एकत्ववितर्कअविचार नामनुं छे (४८०) सूक्ष्मक्रियअनिवृत्ति नामनुं त्रीजुं छे अने समुच्छिन्नक्रियअप्रतिपाति नामनुं चोथुं शुक्लध्यान छे. (४८१) एक द्रव्यमां वर्त्तता उत्पादादि पर्यव तेनो अनेक प्रकारना नयने अनुसरनारा पूर्वगत अनुसार पृथक् भेदवडे विस्तारथी वितर्क–विकल्पन जे ध्यानमां होय ते पृथक्त्व वितर्क कहेवाय छे. (४८२–८३) अहीं व्यंजनथी अर्थ अने अर्थथी व्यंजनमां जे वारंवार विचार थाय ते विचरणने सविचार कहेल छे. (४८४) मन विगेरे योगोनुं एकमांथी बीजामां जे विचरवुं ते विचरण तेने पण सविचार कहेल छे. (४८५) एवी रीते पृथक्त्वना वितर्क सहित अने विचार सहित जे उभय धर्मवाळुं होय

भवेदिह। तत्स्यादुभयधर्माढ्यं शुक्लध्यानं किलादिमं ॥ ८६ ॥ उक्तं च–
उप्पायठिइभंगाइं पज्जयाणं जमेगदव्वंमि। नाणानयाणुसरणं पुव्वगय-
सुयाणुसारेण ॥ ८७ ॥ सवियारमत्थवंजण–जोगंतरओ तयं पढमसुक्कं।
होइ पुहत्तवियक्कं सवियारमरागभावस्स ॥ ८८ ॥

अनेकेषां पर्यवाणा–मेकद्रव्यावलंबिनां। एकस्यैव वितर्को यः पूर्व-
गतश्रुताश्रयः॥ ८९ ॥ स च व्यंजनरूपोऽर्थ–रूपो वैकतमो भवेत्।
यत्रैकत्ववितर्काख्यं तद्ध्यानमिह वर्णितं ॥ ९० ॥ न च स्याद्व्यंजनादर्थे
तथार्थाद्व्यंजनेऽपि च। विचारोऽत्र तदेकत्व–वितर्कमविचारि च ॥ ९१॥
मनःप्रभृतियोगाना–मप्येकस्मात्परत्र नो। विचारोऽत्र तदेकत्व–वितर्कम-
विचारि च ॥ ९२ ॥ इदं ह्येकत्र पर्याये योगचांचल्यवर्जितं। चिरमुज्जृं-
भते दीप्रं निर्वातगृहदीपवत् ॥ ९३ ॥ तथाहुः—जं पुण सुनिप्पकंपं

ते प्रथम शुक्लध्यान कह्युं छे. (४८६) उक्तं च—उत्पाद, स्थिति ने विनाश जे एक द्रव्यमां रहेला पर्यायो छे तेनो पूर्वश्रुतने अनुसारे अनेक नयोने अनुसरीने विचार करवो तेम ज अर्थथी व्यंजनमां ने व्यंजनथी अर्थमां अने एक योगथी योगांतरमां संक्रमण करवुं ते प्रथम शुक्लध्यान पृथक्त्ववितर्कसविचार नामनुं अरागभावीने[1] होय छे. (४८७–८८)

एक द्रव्यावलंबी अनेक पर्यवोमांथी एक पर्यवनो ज वितर्क पूर्वगत श्रुतने आश्रयीने करवामां आवे ते विचार पण व्यंजनरूपे के अर्थरूपे एकरूपे ज होय ते एकत्ववितर्क नामनुं बीजुं शुक्लध्यान कह्युं छे. (४८९–९०) तेमां व्यंजनथी अर्थमां के अर्थथी व्यंजनमां विचारना फेरफार थतो नथी तेथी ते एकत्ववितर्कअविचार नामनुं कहेवाय छे. (४९१) एमां मन विगेरे योगनो पण एकमांथी बीजामां फेरफाररूप विचार वर्ततो नथी. तेनो पण एकत्ववितर्कअविचारमां ज समावेश छे. (४९२) अहीं एक पर्यायमां योगनी चंचळता विनानुं होवाथी पवन विनाना घरमां रहेला स्थिर दीपक जेवुं दीप्र शुक्लध्यान चिरकाल सुधी विस्तार पामे छे–वर्ते छे. (४९३) तथाहुः–जे अति

---

१ अग्यारमा अने बारमा गुणस्थानवाळाने होय छे.

निवायसरणप्पईवमिव चित्तं । उप्पायठिईभंगा–इयाणमेगंमि पज्जाए ॥ ९४ ॥ अवियारमत्थवंजण–जोगंतरओ तयं बिइयसुक्कं । पुव्वगयसुया-लंबण–मेगत्तवियारमवियक्कं ॥ ९५ ॥

क्रियोच्छ्वासादिका सूक्ष्मा ध्याने यत्रास्ति कायिकी । निवर्त्तेत न यत्सूक्ष्म–क्रियं चैवानिवर्ति तत् ॥ ९६ ॥ स्याद्वर्द्धमान एवात्र परिणामः क्षणे क्षणे । न हीयमानस्तदिद–मनिवर्त्ति प्रकीर्त्तितं ॥ ९७ ॥ तच्च निर्वाणगमन–काले केवलिनो भवेत् । रुद्धवाक्चित्तयोगस्य वपुर्योगार्द्धरो-धिनः ॥ ९८ ॥ उक्तं च–निव्वाणगमणकाले केवलिणो दरनिरुद्धजो-गस्स । सुहुमकिरियानियट्टी तइयं तणुकायकिरियस्स ॥ ९९ ॥

समुच्छिन्नाः क्रियाः कायि–क्याद्या योगनिरोधतः । यस्मिन् यच्चा-प्रतिपाति तच्छुक्लध्यानमंतिमं ॥ ५०० ॥ इदं त्ववस्थां शैलेशीं प्राप्तस्या-खिलवेदिनः । निरुद्धाशेषयोगस्य शुक्लं परममीरितं ॥ १ ॥ सिद्धत्वेऽपि हि

निष्प्रकंप निवात मकानमां रहेला दीपकनी जेम उत्पाद, व्यय ने स्थितिमांथी कोइ एक पर्यायमां पूर्वगत श्रुतने अनुसारे स्थिर चित्त रह्युं होय तेमांथी एक पर्यवनो ज विचार होय. वळी व्यंजन ने अर्थनो के योगान्तरनो फेरफार थवापणुं जेमां न होय ते एकत्ववितर्क-अविचार नामनुं शुक्लध्यान छे. (४९४–९५)

जे ध्यानमां काया संबंधी उच्छ्वासादि सूक्ष्म क्रिया वर्ते छे अने जे निवर्तती नथी ते सूक्ष्मक्रियाअनिवर्ति नामनुं त्रीजुं शुक्लध्यान छे. (४९६) आ ध्यानमां क्षणे क्षणे वर्द्धमान परिणाम होय छे. हीयमान होता नथी, तेथी आने अनिवर्ति कहेल छे. (४९७) आ ध्यान निर्वाणगमन काळे केवळीओने होय छे, के जेमणे वाग्योग ने मनयोग पूरा रोक्या होय छे अने काययोग अर्ध रोकेलो (रुंधेलो) होय छे. (बादरकाययोग रुंध्यो होय छे, सूक्ष्म काययोगमां वर्तता होय छे) (४९८) उक्तं च–निर्वाणगमन-काळे अर्धकाययोग जेणे रुंध्यो होय छे एवा सूक्ष्मकायनी क्रियावाळा केवळीने सूक्ष्म-क्रियाअनिवर्ति नामनुं त्रीजुं शुक्लध्यान होय छे. (४९९)

जे ध्यानमां योगनिरोधवडे कायिकी विगेरे क्रिया जेमनी समुच्छिन्न थइ होय छे अने जे अप्रतिपाती होय छे ते चोथुं समुच्छिन्नक्रियाअप्रतिपाति नामनुं शुक्लध्यान कहीए. (५००) आ ध्यान शैलेशी अवस्था प्राप्त थयेला अखिलवेदी (केवळी) ने-समस्त योग रुंधेला होय तेने होय छे. ते श्रेष्ठ शुक्लध्यान कहेवाय छे. (५०१)

संप्राप्ते भवत्येतदवस्थितं । न तु न्यूनाधिकं तेना-प्रतिपातीदमुच्यते ॥ २ ॥ इयं हि परमा कोटिः शुक्लध्यानस्य निश्चिता । अतः परं तन्नास्तीति परमं शुक्लमुच्यते ॥ ३ ॥ तथोक्तं-तस्सेव य सेलेसीं गयस्स सेलव्व निप्पकंपस्स । वोच्छिन्नकिरियमप्पडि-वाइ झाणं परमसुक्कं ॥ ४ ॥ योगनिरोधपद्धतिस्तु द्रव्यलोकतो ज्ञेयेति.

अव्यथं चाप्यसंमोहो विवेकः स्यात्तथा परः। व्युत्सर्गश्च भवेच्छुक्लध्यानचिह्नचतुष्टयं ॥५॥ यद्देवाद्युपसर्गेभ्यो भयं तत्कथ्यते व्यथा । तदभावोऽव्यथं शुक्ल-ध्यानलक्षणमादिमं ॥ ६ ॥ देवादिमायाक्लृप्तस्य सूक्ष्मार्थजनितस्य वा। संमोहस्येह मौढ्यस्या-ऽभावोऽसंमोह इष्यते ॥७॥ जीवस्य देहात्सर्वेभ्यः संयोगेभ्यश्च शुद्धया । भिन्नत्वभावनं बुद्ध्या स विवेको विवेचनात् ॥ ८ ॥ यन्निःसंगतयांगस्य परित्यागस्तथोपधेः । स व्युत्सर्गश्चतुर्थं स्या-च्छुक्लध्यानस्य लक्षणं ॥ ९ ॥ यदाहुः—चालिज्जइ बीहेइ व धीरो न परीसहोवसग्गेहिं १ । सुहुमेसु न संमुज्झइ

सिद्धपणुं प्राप्त थये सते पण आ ध्यान अवस्थित ज रहे छे-न्यूनाधिक थतुं नथी तेथी आ ध्यानने अप्रतिपाति कहेल छे. (५०२) आ शुक्लध्याननी निश्चित परम (उत्कृष्ट) कोटि छे, आथी अधिक कांइ पण नथी तेथी आने परम शुक्ल कहे छे. (५०३) तथोक्तं-मेरु पर्वतनी जेवा निष्प्रकंप शैलेशीगत एवाने व्युच्छिन्नक्रियअप्रतिपाति नामनुं परम शुक्लध्यान होय छे. (५०४) योगनिरोधनी पद्धति द्रव्यलोकथी जाणी लेवी.

आ शुक्लध्यानना अव्यथ, असंमोह, विवेक तथा व्युत्सर्ग-ए चार चिन्हो कह्या छे. (५०५) जे देवादिकना उपसर्गोथी थतो भय ते व्यथा कहेवाय छे, तेनो अभाव ते अव्यथ नामनुं शुक्लध्याननुं प्रथम चिन्ह छे. (५०६) देवादिमायाए करेलो अथवा सूक्ष्मार्थथी थयेलो जे संमोह-मौढ्य तेनो अभाव ते असंमोह नामनुं बीजुं चिन्ह छे. (५०७) देहथी जीवनुं तेम ज सर्व संयोगथी आत्मानुं शुद्ध बुद्धिवडे जे भिन्नत्व भाववुं ते विवेचनाथी विवेक नामनुं त्रीजुं चिन्ह छे. (५०८) जे निःसंगपणे अंगनो तेम ज उपधिमात्रनो परित्याग ते व्युत्सर्ग नामनुं शुक्लध्याननुं चोथुं चिन्ह छे. (५०९) यदाहुः-बीकणनी जेम जे धीर पुरुष परिषह-उपसर्गथी चळे नहीं, सूक्ष्मभावमां के देव-

भावेसु न देवमायासु २ ॥ १० ॥ देहविवित्तं पिच्छइ अप्पाणं तह य सव्व-संजोगा ३ । देहोवहिवुस्सग्गं निस्संगो सव्वहा कुणइ ४ ॥ ११ ॥

चत्वार्यालंबनानि स्युः शुक्लध्यानस्य च क्रमात् । कषायाणां त्त्वयात् क्षांति–मार्द्दवार्जवमुक्तयः ॥ १२ ॥ आत्मनोऽनंतवर्तित्वा–नुप्रेक्षा प्रथमा भवेत् १ । तथा विपरिणामानु–प्रेक्षा प्रोक्ता द्वितीयिका २ ॥ १३ ॥ अनुप्रेक्षाऽशुभत्वस्या ३–पायानां ४ चेति नामतः । शुक्लध्याने चतस्रोऽनु–प्रेक्षाः प्रेक्षाश्रयैः स्मृताः ॥ १४ ॥ अनंतकालं भ्रमतो जीवस्य भवसागरे । भावनानंतवर्त्तित्वा–नुप्रेक्षा परिकीर्त्तिता ॥ १५ ॥ सा चैवं–एसो अणाइनिहणो संसारे सागरु व्व दुत्तारे । नारयतिरिअनरामर–भवेसु परिहिंडए जीवो ॥ १६ ॥ विविधा ये परीणामा वस्तूनां तद्विभावना । भवेद्विपरिणामानु–प्रेक्षा प्रेक्षावतां प्रिया ॥ १७ ॥ तथाहि–सव्वट्ठाणाइं असासयाइं इह चेव देवलोगे य । सुरअसुरनराईणं रिद्धिविसेसा सुहाइं च ॥ १८ ॥ क्षणभंगुरसंपत्ते–वि-

---

मायामां जे मुंझाय नहीं, देहथी जूदा आत्माने तेम ज सर्वसंयोगने जे जाणे अने देह तेम ज उपधिनो त्याग निःसंगपणे जे सर्वथा करे ते चार चिन्हो कह्या छे. (५१०–११)

शुक्लध्यानना चार आलंबनो आ अनुक्रमे कह्या छे. चार कषायोना क्षयथी उत्पन्न थता क्षांति, मार्दव, आर्जव अने मुक्ति (निर्लोभता). (५१२) आत्माना अनंतवर्त्तिपणानी अनुप्रेक्षा ते प्रथम, विपरिणामनी अनुप्रेक्षा ते बीजी, अशुभत्वनी अनुप्रेक्षा ते त्रीजी अने अपायनी अनुप्रेक्षा ते चोथी–आ चार प्रकारनी अनुप्रेक्षा प्रेक्षाश्रयोए (ज्ञानीए) शुक्लध्याननी कही छे. (५१३–१४) आ भवसागरमां अनंतकाळथी भमता जीवनी जे भावना (विचारणा) ते अनंतवर्त्तित्व अनुप्रेक्षा कही छे. (५१५) ते भावना आ प्रमाणे—" आ अनादिअनंत अने समुद्रनी जेवा दुस्तर संसारने विषे नारक, तिर्यंच, नर अने अमरना भवमां आ जीव भम्या करे छे. " (५१६) वस्तुओना जे विविध परिणामो तेनी जे विभावना (विचारणा) ते प्रेक्षावंतने प्रिय एवी बीजी विपरिणाम अनुप्रेक्षा कही छे. (५१७) ते आ प्रमाणे—" अहीं तेम ज देवलोकमां सुर असुर अने मनुष्योनी ऋद्धि विशेष ने सुखो विगेरे सर्व स्थानको अशाश्वता छे. " (५१८) क्षणभंगुर एवी संपत्तिनी तेम ज विरूप एवा संसारनी जे विचारणा ते

रूपस्य भवस्य यत्। विभावनाऽशुभत्वानु–प्रेक्षा सा परिकीर्त्तिता ॥ १९ ॥ तथाहि–धि द्धी संसारो जंमि जुआणो परमरूवगव्विअओ। मरिऊण जायइ किमी तत्थेव कलेवरे नियए ॥ २० ॥ कषायेभ्योऽथाश्रवेभ्यः प्रमादविषयादितः। अपायभावनापाया–नुप्रेक्षा सा प्रकीर्त्तिता ॥ २१ ॥ यथा–कोहो य माणो य अणिग्गहीया माया य लोहो य पवड्ढमाणा। चत्तारि एए कसिणा कसाया सिंचंति मूलाइं पुणब्भवस्स ॥ ॥ २२ ॥ इत्यादि इदं चार्थतः प्रायस्तृतीयांगगतं.

आद्येऽथ शुक्लध्यानस्य ध्याते भेदद्वयेऽर्हतां। घातिकर्मक्षयादाविर्भवेत्केवलमुज्ज्वलं ॥ २३ ॥ ततो जानंत्यनंतानि द्रव्याणि विविधानि ते। त्रैकालिकांश्च पर्यायान् प्रतिद्रव्यमनंतकान् ॥ २४ ॥ सर्वेषामपि जानंति जीवानामागतिं गतिं। स्थितिं चेतश्चिंतितं च कृतं भुक्तं निषेवितं ॥२५॥ न जानंति न पश्यंति यत्तन्नास्ति जगत्त्रये। भवंत्यतस्तेऽरहसो–ऽर्हंतश्च जगदर्चिताः ॥ २६ ॥ यत्तृतीयभवे बद्धं तीर्थकृन्नामकर्म तत्। प्राप्तोदयं विपाकेन जिनानां जायते तदा ॥ २७ ॥ तस्मिन्नेव क्षणे देवे–

त्रीजी अशुभत्व अनुप्रेक्षा कही छे. (५१९) तथाहि–'आ संसारने धिक्कार छे, धिक्कार छे! के जेमां परमरूपगर्वित युवान मरण पामीने पोताना ज कलेवरमां कृमिपणे उत्पन्न थाय छे. (५२०) कषायोथी, आश्रवोथी, प्रमाद ने विषयादिथी जे अपायपणानी भावना ते अपायानुप्रेक्षा चोथी कही छे. (५२१) यथा—निग्रह नहीं करेला अने प्रवर्तता एवा क्रोध, मान, माया अने लोभ—ए चारे कषायो पुनर्भवना मूळने सींचे छे. इत्यादि. (५२२) आ प्रमाणे अर्थथी प्राय: त्रीजा अंग (ठाणांग)मां कहेल छे.

आ चार पैकी प्रथमना शुक्लध्यानना बे भेद ध्याते सते अरिहंतने घातिकर्मनो क्षय थवाथी उज्वळ केवळज्ञान प्रगट थाय छे. (५२३) तेथी अनंता अने विविध प्रकारना द्रव्यो तथा त्रैकालिक पर्यायो के जे प्रतिद्रव्ये अनंता छे तेने जाणे छे. (५२४) सर्व जीवोनी गति–आगति जाणे छे तेमज तेनी स्थिति, चित्तमां चिंतित, करेलुं, भोगवेलुं ने सेवेलुं सर्व जाणे छे. (५२५) तेओ न जाणे के न जुए एवुं त्रण लोकमां कांइ नथी, तेथी अरहस्य (जेनाथी कांइ छानुं नथी) एवा अर्हत् जगतपूजित थाय छे. (५२६) प्रथम त्रीजे भवे जे तीर्थंकर नामकर्म बांधेलुं छे ते आ समये जिनेश्वरोने उदयमां आवे छे तेने विपाकोदयपणे भोगवे छे. (५२७) ते ज क्षणे सर्व देवेंद्रो आसनकंपथी अरि-

श्वरा आसनकंपतः । केवलज्ञानमुत्पन्नं सर्वे जानीयुरर्हतां ॥ २८ ॥ ततः पूर्वोक्तया रीत्या चतुष्षष्टिः सुरेश्वराः । आगच्छंति प्रमुदिता ज्ञानोत्पादास्पदेऽर्हतां ॥ २९ ॥

तत्र वायुकुमारा द्राग् योजनप्रमितां महीं । शोधयेयुः कचवर-तृणाद्युत्सृज्य दूरतः ॥ ३० ॥ ततो मेघकुमारास्तां सिंचंत्यद्भिः सुगंधिभिः। पंचवर्णैः पूजयंति पुष्पैर्ऋत्वधिदेवताः ॥ ३१ ॥ रचयंति ततः पीठं व्यंतरास्तत्र भूतले । भूमेः सपादक्रोशोच्चं स्वर्णरत्नमणीमयं ॥ ३२ ॥ तत्र रूप्यमयं वप्रं कुर्वते भवनाधिपाः । सहस्रैर्दशभिः प्राप्यं सोपानानां भुवस्तलात् ॥ ३३ ॥ तच्च सोपानमेकैक-मेकहस्तपृथूच्छ्रितं । भूमेर्द्धनुःसहस्रे द्वे सार्द्धे तेषां समुच्छ्रयः ॥ ३४ ॥ तस्य वप्रस्य भित्तिः स्या-त्पंचचापशतोच्छ्रिता । द्वात्रिंशदंगुलोपेत-त्रयस्त्रिंशद्धनुः पृथुः ॥ ३५ ॥ शोभंते कपिशीर्षाणि तस्या भित्तेरुपर्यथ । निर्धौतस्वर्णसारेण रचितानि स्फुरद्रुचा ॥ ३६ ॥ तस्मिन् वप्रे च चत्वारि द्वाराणि रचयंति ते । नानारत्नमयान्युच्चै-र्द्वारशाखादिमंति च ॥ ३७ ॥ प्रतिद्वारं तोरणानां त्रयं मणिमयं

हंतने केवळज्ञान उत्पन्न थयुं छे एम जाणे छे. (५२८) त्यारपछी पूर्वोक्त रीतिवडे चोसठे इंद्रो हर्षित थया सता अरिहंतना केवळज्ञान उत्पत्तिवाळा स्थळे आवे छे. (५२९)

हवे त्यां समवसरणनी रचना करवामां आवे छे तेनुं वर्णन—प्रथम वायुकुमारना देवो शीघ्रपणे एक योजनप्रमाण भूमिने कचरो तृणादि दूर करवावडे शोधे छे. (५३०) पछी मेघकुमारना देवो तेटली पृथ्वीने सुगंधी जळवडे सींचे छे अने ऋतुना अधिष्ठायक देवो पांच वर्णना पुष्पोवडे ते पृथ्वीने पूजे छे. (५३१) त्यारपछी व्यंतरदेवो ते भूतळ उपर जमीनथी सवाकोश उंचुं स्वर्ण, रत्न ने मणिमय पीठ रचे छे. (५३२) त्यां जमीनथी दश हजार पगथीया चड्या पछी प्रथम रूपानो गढ भवनपतिना देवो रचे छे. (५३३) ते दरेक पगथीयाओ एकेक हाथ उंचा ने पहोळा होय छे, तेथी आ प्रथम गढ जमीनथी अढी हजार धनुष्य एटले सवागाउ उंचो होय छे. (५३४) ते गढनी भिंतो पांचशें धनुष्य उंची अने ३३ धनुष्य ने ३२ अंगुळ पहोळी होय छे. (५३५) तेना कोसीसा (कांगरा) ते भिंतनी उपर अत्यंत उज्वळ एवा स्वर्णना सारे करीने बनावेला स्फुरायमान कांतिवाळा होय छे. (५३६) ते गढमां चार द्वारो ते देवो रचे छे. ते नाना रत्नमय अने उंचा प्रकारना बे बाजु रहेली द्वारशाखावाळा होय छे. (५३७) दरेक द्वारे पांचालिका, मणिमय छत्र अने मकरना चिन्हवाळा ध्वजथी सुंदर

सुराः । पांचालिकामणिच्छत्र–मकरध्वजमंजुलं ॥ ३८ ॥ ध्वजांश्च मंग-लान्यष्टौ पुष्पदाम्नां तथावलीः । रचयंति प्रतिद्वारं कलशान् वेदिकां तथा ॥ ३९ ॥ युग्मं ॥ कृष्णागुरुतुरुष्कादि–धूपान् दिव्यान् समंततः । वितन्वतीर्धूपघटी–स्तन्वते निर्जरा बहूः ॥ ४० ॥ कोणे कोणे च वप्रस्य तस्य स्वादूदकांचिता । एकैका क्रियते वापी मणिसोपानभृत्सुरैः ॥४१॥ प्राच्ये द्वारे द्वारपालः सुरः स्यात्तस्य तुंबरुः । दाक्षिणात्ये च खट्वांगी स्यात्कपाली च पश्चिमे ॥४२॥ जटामुकुटधारी स्या–दुदीच्यद्वारपालकः । तुंबुरुर्नाम देवश्च प्रतीहारोऽर्हतां भवेत् ॥ ४३ ॥

अथ तस्याद्यवप्रस्य भवेन्मध्ये समंततः । प्रतरः समभूम्यात्मा पंचाशच्चापविस्तृतः ॥ ४४ ॥ तिष्ठंत्यत्र च यानानि देवतिर्यग्नरा अपि । स्युः प्रत्येकं विमिश्रास्ते प्रवेशनिर्गमोन्मुखाः ॥ ४५ ॥ ततः प्रतरसंपूर्त्तौ सोपानानामुपक्रमः । भवेद् द्वितीयवप्रस्य हस्तोच्चत्वायतिस्पृशाम् ॥४६॥ पंचानामिति सोपान–सहस्राणामतिक्रमे । प्राकारः सुंदराकारो द्वितीयः प्राप्यते जनैः ॥ ४७ ॥ जात्यस्वर्णमयं तं च कुर्युर्ज्योतिष्कनाकिनः ।

एवा मणिमय त्रण तोरण रचे छे. (५३८) वळी दरेक द्वारे ध्वजाओ, आठ मांगलिको, पुष्पनी माळाओनी श्रेणि, कळशो तथा वेदिका रचे छे. (५३९) कृष्णागुरु अने तुरुष्कादिना दिव्य धूपने विस्तारती घणी धूपघटीओ देवो चोतरफ विस्तारे छे. (५४०) ते गढने चारे खुणे एकेक वापी (वाव) स्वादु जळवाळी अने मणिमय पगथीयावाळी देवो रचे छे. (५४१) ते गढने पूर्वद्वारे तुंबरु नामनो देव, दक्षिणद्वारे खट्वांगी नामे देव, पश्चिमद्वारे कपाली नामे देव अने उत्तरद्वारे जटामुकुटधारी नामे देव द्वारपाळ तरीके उभो रहे छे. तेमां तुंबरु नामनो देव प्रभुनो प्रतीहार तरीके छे. (केमके ते बाजुथी प्रभु उपर चडे छे.) (५४२–४३)

हवे ते पहेला गढनी अंदर चार बाजु सरखी भूमिरूप प्रतर ५० धनुषप्रमाण होय छे. (५४४) आ गढमां वाहनो रहे छे अने देव, तिर्यंच तथा मनुष्य प्रवेश निर्गमोन्मुख थया सता एक–बीजा साथे मळीने ज प्रवर्ते छे. (५४५) उपर कह्या प्रमाणे ५० धनुष्यना प्रतर पछी बीजा गढना पगथीआनी शरुआत थाय छे. ते एक हाथ उंचा अने पहोळा एवा पांच हजार पगथीया होय छे, तेटलानुं अतिक्रमण करीए–तेटला पगथीया चडीए त्यारे जनोने बीजो सुंदर आकारवाळो गढ प्राप्त थाय छे. (५४६–५४७) ते

नानारत्नमयैर्दीप्रैः कपिशीर्षैरलंकृतं ॥ ४८ ॥ भित्त्युच्चत्वपृथुत्वादि ज्ञेयमस्याद्यवप्रवत् । ज्ञेया चतुर्णां द्वाराणां रचनाप्यखिला तथा ॥ ४९ ॥ जयाभिधाने देव्यौ द्वे पूर्वस्यां द्वारपालिके । श्वेतवर्णे अभयया राजमानकरांबुजे ॥ ५० ॥ मा भैषीरिति हस्तेन प्रसृतेन प्रदर्शनं । अभया नाम मुद्रेयं श्रुता वृद्धानुवादतः ॥ ५१ ॥ याम्यद्वारे विजयाख्यौ देव्यौ रक्ततनुद्युती । हस्तन्यस्तांकुशे शोभां बिभृतो द्वारपालिके ॥५२॥ अजिते पश्चिमायां च पीते पाशोल्लसत्करे । मकराढ्यकरे नीले उदीच्यामपराजिते ॥ ५३ ॥ तथोक्तं समवसरणस्तोत्रे—जयविजयाजियअवरा—जियत्ति सिअअरुणपीअनीलाभा । बीए देवीजुअला अभयंकुसपासमगरकरा ॥ ५४ ॥

पंचाशतं धनूंषि स्या—त्प्रतरोऽत्रापि पूर्ववत् । तिष्ठंत्यत्र च तिर्यंचः सिंहव्याघ्रमृगादयः ॥ ५५ ॥ ऐशान्यां च भवत्यत्र देवच्छंदो मनोरमः । क्षणोत्तरक्षणेऽध्यास्ते प्रभुर्यं सुरसेवितः ॥ ५६ ॥ अथोर्ध्वं पंचसोपान-

---

बीजो गढ जात्यस्वर्णमय ज्योतिष्क देवो रचे छे. तेने नाना प्रकारना रत्नमय देदीप्यमान कांगरावडे अलंकृत करे छे. (५४८) ते गढनी भिंतोनी उंचाइ ने पहोळाइ विगेरे प्रथम गढ प्रमाणे जाणवुं तेम ज चार द्वारनी रचना पण बधी ते ज प्रमाणे जाणवी. (५४९) ते गढना पूर्वद्वारे जया नामनी बे देवीओ द्वारपालिका तरीके श्वेतवर्णवाळी अने अभयामुद्रावडे शोभता करकमळवाळी होय छे. (५५०) 'मा भैषीः' बीशो नहीं एम पोताना प्रसार पामता हाथवडे जे बताववुं ते अभया नामनी मुद्रा छे एम वृद्धानुवादथी सांभळेल छे. (५५१) दक्षिणद्वारे विजया नामनी बे देवीओ रक्तमय शरीरनी कांतिवाळी हाथमां राखेला अंकुशवडे शोभती द्वारपालिका होय छे. (५५२) पश्चिमद्वारे पीतवर्णवाळी, पाशवडे उल्लसित हाथवाळी अजिता नामनी बे देवीओ अने उत्तर द्वारे मकराढ्य करवाळी नीलवर्णनी अपराजिता नामनी बे देवीओ द्वारपालिका होय छे. (५५३) श्रीसमवसरणस्तोत्रमां कह्युं छे के—बीजा गढमां जया, विजया, अजिता अने अपराजिता ए देवीओना युगलो अनुक्रमे श्वेत, रक्त, पीत अने नीलवर्णवाळा अने अभया, अंकुश, पाश अने मकरने हाथमां धारण करनार होय छे. (५५४)

आ गढना प्रारंभमां पण पचास धनुष्यनुं पूर्ववत् प्रतर होय छे. आ गढमां तिर्यंचो सिंह, वाघ, मृग विगेरे रहे छे. (५५५) आ गढमां ईशान कोणे मनोहर देवच्छंदो रचे छे, जेमां प्रथम पहोरे देशना आप्या पछी सुरसेवित एवा प्रभु आवीने बेसे छे. (५५६)

सहस्रातिक्रमे ततः। तृतीयः प्राप्यते वप्रो जनैर्भाविमहोदयैः ॥ ५७ ॥ एनं रत्नमयं वप्रं कुर्युर्वैमानिकाः सुराः। नानामणिमयैर्दीप्रैः शालितं कपिशीर्षकैः ॥ ५८ ॥ भित्त्युच्चत्वपृथुत्वादि द्वाराणां रचनापि च। अत्रापि पूर्ववद् ज्ञेया विशेषस्त्वेष कथ्यते ॥ ५९ ॥ पूर्वस्यां द्वारपालोऽत्र सोमो वैमानिकः सुरः। जात्यचामीकरज्योति-र्दधानः पाणिना धनुः ॥ ६० ॥ दंडपाणिर्यमो याम्यां गौरांगो व्यंतरामरः। प्रतीच्यां पाश-भृद्रक्तो ज्योतिष्को वरुणः सुरः ॥ ६१ ॥ उत्तरस्यां च धनदो भवनाधि-पनिर्जरः। गदाहस्तः श्यामकांति-र्भवति द्वारपालकः ॥ ६२ ॥ तथोक्तं-पीअसिअरत्तसामा सुरवणजोइभवणा रयणवप्पे। धणुदंडपासगयहत्थ सोमजमवरुणधणयक्खा ॥ ६३ ॥

तस्य वप्रस्य मध्ये च पीठं स्यात्समभूतलं। धनुःशतानि षट् क्रोश-मेकं च विस्तृतायतं ॥ ६४ ॥ एतावदेव विस्तार-मानमाद्यद्वितीययोः।

आ गढथी उंचे पांच हजार पगथीआ चडे त्यारे भाविमहोदयवाळा जनो त्रीजो गढ पामे छे. (५५७) ते गढ रत्नमय अने नाना प्रकारना मणिमय दीप्त कांगराओथी सुशोभित वैमानिकना देवो करे छे. (५५८) एनी भींतोनुं उचपणुं ने पहोळापणुं तेम ज चार द्वारोनी रचना पूर्व प्रमाणे ज जाणवी. तेमां जे विशेष छे ते कहे छे. (५५९) आ गढना पूर्वद्वारे सोम नामनो द्वारपाळ वैमानिक देव जात्यवंत सुवर्ण जेवी कांतिवाळो अने हाथमां धनुष्यने धारण करनारो होय छे. (५६०) दक्षिणद्वारे गौर अंगवाळो व्यंतर जातिनो यम नामनो देव हाथमां दंड धारण करेलो होय छे. पश्चिमद्वारे वरुण नामनो रक्तवर्णवाळो ज्योतिषीनो देव हाथमां पाश लइने उभो रहे छे. (५६१) उत्तर बाजुना द्वारे श्यामकांतिवाळो भवनपतिनिकायनो धनद नामनो देव हाथमां गदा धारण करीने उभो रहे छे. (आ प्रमाणे त्रीजा गढना चार द्वारपाळो होय छे.) (५६२) तथोक्तं-त्रीजा रत्नना गढे सोम, यम, वरुण अने धनद अनुक्रमे पीत, श्वेत, रक्त अने श्याम वर्णवाळा, वैमानिक, व्यंतर, ज्योतिष अने भवनपतिजातिना तथा धनुष, पाश, दंड अने गदाने हाथमां धारण करनारा होय छे. (५६३)

हवे ते त्रीजा गढना मध्यमां समभूतल एवुं पीठ छे ते एक गाउ ने छसो धनुष्य लांबुं-पहोळुं छे. (५६४) एज प्रमाणे विस्तारनुं मान पहेला अने बीजा गढना अंतरनुं

वप्रयोरंतरे किंतु तत्पार्श्वद्वयमीलनात् ॥ ६५ ॥ तथाहि—स्याद्रूप्यवप्रात्पं-चाश-द्धनूंषि प्रतरोऽग्रतः । शताश्च द्वादशाध्यर्द्धाः सोपानधनुषां ततः ॥ ६६ ॥ त्रयोदशशतान्येवं धनुषामेकतोंतरं । रूप्यस्वर्णवप्रयोः स्यात् परतोऽपि तथैव च ॥ ६७ ॥ पार्श्वयोरुभयोश्चैवं स्याद्विस्तारे समुच्चिते । एकः क्रोशः षट् च चापशतमानं यथोदितं ॥ ६८ ॥ मानमेवं स्वर्णरत्न-वप्रांतरेऽपि विस्तृतेः । एकः क्रोशः षट् शतानि धनुषां भाव्यतां स्वयं ॥ ६९ ॥ एवं त्रयाणां वप्राणां व्यासमाने समुच्चिते । क्रोशत्रयं स्याद्ध-नुषा-मष्टादश शतानि च ॥ ७० ॥ षट् वप्रभित्तयोऽत्र स्यु-रेकैकस्याश्च विस्तृतौ । स्युर्धनूंषि त्रयस्त्रिंशद् द्वात्रिंशदंगुलानि च ॥ ७१ ॥ धनूंषि षड्गुणानि स्यु-रष्टानवतियुक् शतं । अंगुलान्यपि षड्घ्नानि स्युर्द्वानवति-युक् शतं ॥ ७२ ॥ एषा चापद्वये तस्मिं-श्चापराशौ नियोजिते । स्याच्चा-पद्विशती प्राच्य-चापौघे सा नियोज्यतं ॥ ७३ ॥ जातः क्रोशोऽस्मिंश्च पूर्वो-दितैः क्रोशैस्त्रिभिर्युते । वृत्तं समवसरणं जातं योजनसंमितं ॥७४॥ अस्मिंश्च वृत्तसमव-सरणे ये चतुर्दिशं । सोपानानां सहस्राः स्यु-र्दश ते योजनाद्बहिः ॥ ७५ ॥

छे, परंतु ते बे बाजुनुं मळीने छे. (५६५) ते ज बतावे छे–रूपाना गढथी आगळ पचास धनुष्यनुं प्रतर छे अने ५००० पगथीआना १२५० धनुष्यो थाय छे. ए प्रमाणे एक बाजुनुं अंतर १३०० धनुषनुं रूपासोनाना गढ वच्चे छे. ते ज प्रमाणे बीजी बाजुनुं अंतर छे. बे बाजुना विस्तारने एकत्र करीए एटले एक गाउ ने ६०० धनुष उपर कह्या ते थाय छे. (५६६–६८) ए ज प्रमाणे सोनाना ने रत्नना गढनी वच्चेना अंतरना विस्तारनुं मान पण एक गाउ ने ६०० धनुषनुं छे ते स्वयमेव समजी लेवुं. (५६९) ए प्रमाणे त्रणे गढना अंतरनुं मान एकत्र करीए त्यारे ३ गाउ ने १८०० धनुष थाय छे. (५७०) हवे अहीं त्रण गढनी बे बाजुनी थइने छ भींतो छे ते एकेक भींत विस्तारमां ३३ धनुष ने ३२ अंगुळ छे. ते ३३ धनुषने छगुणा करतां १९८ धनुष अने ३२ अंगुळने छगुणी करतां १९२ अंगुळ तेना बे धनुष थाय ते धनुषनी राशिमां भेळवतां २०० धनुष थाय. ते पूर्वेना त्रण गाउ उपरना १८०० धनुषमां भेळवीए एटले २००० धनुष थाय. तेनो एक गाउ थाय ते प्रथमना त्रण गाउमां भेळवतां चार गाउ एटले एक योजन प्रमाण गोळ समव-सरण थाय. (५७१–७४) आ गोळ समवसरणनी चारे दिशामां जे दश दश हजार पगथीआ छे ते योजननी बहार समजवा. (५७५)

अयं भावः–अर्हत्सिंहासनाधःस्थ–भूभागादेकतो भुवि । क्रोशद्वयेन स्याद्बाह्य–वप्रपर्यंतभूतलं ॥ ७६ ॥ चतसृष्वपि दिक्ष्वेवं योगे च पार्श्वयोर्द्वयोः । आयामतो व्यासतश्च पूर्णं स्यादेकयोजनं ॥ ७७ ॥ बाह्यसोपानपर्यंत–भूतलं तु भवेत्ततः । पादाधिकैस्त्रिभिः क्रोशै–र्जिनाधःस्थमहीतलात् ॥ ७८ ॥ सोपानानां सहस्रैर्य–द्दशभिर्जायते किल । क्रोशः सपादस्तद्योगे भवेन्मानं यथोदितं ॥ ७९ ॥ भूमावलग्नं समव–सरणं च भवेदिदं । तथोर्ध्वमूर्ध्वं सोपान–रचनाभिस्समंततः ॥ ८० ॥ रत्नवप्रस्य परिधि–रेकं योजनमीरितं । न्यूनत्रयस्त्रिंशदाढ्या चापानां च चतुःशती ॥ ८१ ॥ द्वे योजने पंचषष्टि–युक् चापाष्टशती तथा । द्विहस्ती त्र्यंगुलोना रै–वप्रस्य परिधिर्भवेत् ॥ ८२ ॥ त्रियोजनी चापशता–स्त्रयस्त्रिंशास्त्रयोदश । हस्त एकोंगुलान्यष्टौ परिधी रौप्यवप्रगः ॥ ८३ ॥

चतुरस्रेऽथ समव–सरणे विस्तृतिर्भवेत् । सर्वासां वप्रभित्तीना–मेकं चापशतं किल ॥८४॥ कोदंडानां शताः पंच–दशात्रांतरमीरितं । रूप्यस्वर्णवप्रभित्त्योः प्रत्येकं पार्श्वयोर्द्वयोः ॥ ८५ ॥ अत्र पूर्वोक्तसोपान–रुद्धक्षेत्रे

रहस्य–अरिहंतना सिंहासनना नीचेना भूभागथी एक बाजु पृथ्वीने विषे बे गाउ बाह्यगढना बहारना भागपर्यंत भूतळ थाय. (५७६) ए प्रमाणे चार दिशामां बे बे पासानो संयोग करवाथी लंबाइ ने पहोळाइ एक पूर्ण योजन थाय. (५७७) बाह्य सोपानना पर्यंत भाग सुधीनुं भूतळ जिनेश्वरना अधस्थ महीतळथी सवात्रण गाउ थाय (५७८) ते दश हजार पगथीआना २५०० धनुष तेनो सवा गाउ बे गाउमां मेळववाथी थाय. (५७९) आ समवसरण भूमिथी अधर होय छे अने ते पगथीआओनी रचनावडे चारे तरफथी उंचुं उंचुं होय छे. (५८०) रत्नना गढनी परिधि एक योजन ने ४३३ धनुषमां कांइक न्यून होय छे. (५८१) सुवर्णना गढनी परिधि बे योजन ८६५ धनुष अने त्रण अंगुळ ऊणा बे हाथनी होय छे. (५८२) रूपाना गढनी परिधि त्रण योजन, १३३३ धनुष, एक हाथ ने ८ अंगुळनी होय छे. (५८३) (एक योजनना समवसरणनी परिधि ३ योजन १२९८ धनुष्य झाझेरी थाय छे.)

हवे चोरस समवसरणनी हकीकत कहे छे तेमां दरेक गढनी भींतोनी पहोळाइ एकसो धनुष्यनी होय छे. (५८४) रूपाना ने सोनाना गढनी भींतोनुं बंने बाजुनुं जूदुं जूदुं अंतर १५०० धनुष्यनुं होय छे. (५८५) एमां पूर्वे कह्या प्रमाणे ५००० पगथीआना १२५०

पृथक्कृते । धनुःशतद्वयी सार्द्धा शेषा प्रतर उह्यते ॥८६॥ एवं च–स्यात्सार्द्धक्रोशविस्तारां–तरो वप्रोऽत्र राजतः । विस्तारमीलने प्राग्व–दुभयोरपि पार्श्वयोः ॥ ८७ ॥ स्वर्णवप्रांतरव्यास एकक्रोशमितो मतः । यतः क्रोशार्द्धसेकैक–पार्श्वे व्यासो भवेदिह ॥ ८८ ॥ यदुक्तं समवसरणस्तोत्रे–चउरंसे इगधणुसय–पिहु वप्पा सड्ढकोसअंतरया । पढमबिया बिअतइआ कोसंतरपुव्वमिव सेसं ॥ ८९ ॥ यद्यप्यस्यावचूर्णावित्युक्तं दृश्यते–अत्र चांतरं पूर्ववत्प्रतरसोपानापेक्षया न गण्यते, किंतु आद्याद् द्वितीयस्यैकतः १५०० धनूंषि, परतोऽप्येवं, द्वितीयात्तृतीयस्यैकतः १००० धनूंषि, द्वितीयपार्श्वेऽप्येवं संतीत्येवमेव ज्ञेयं, एवमेव पूर्वाचार्याम्नायादिति. तथाप्यत्र सुवर्णवप्रे एकस्मिन् पार्श्वे एकधनुःसहस्रांतरे सार्द्धद्वादशधनुःशतक्षेत्रसंमातव्यानि एकैकहस्तपृथुलानां सोपानानां पंचसहस्राणि कथं संमांतीति बहुश्रुतेभ्यो भावनीयमिति. रत्नप्राकारविस्तारो भवेत्तत्रापि पूर्ववत् । क्रोशेनैकेन धनुषां शतैः षड्भिश्च संमितः ॥ ९० ॥ वप्रत्रयांतर·

धनुष्य बाद करतां बाकी रहेल २५० धनुष्यनुं प्रतर होय छे. (५८६) ए प्रमाणे बे बाजुनो अंतर भेळो गणतां रुपाना ने सोनाना गढ वच्चे दोढ गाउनुं अंतर थाय छे. (५८७) सोनाना ने रत्नना गढ वच्चे अंतर एक गाउनुं छे, केमके बे बाजुना बे भाग पाडतां एकेक बाजुए अर्ध अर्ध कोशनुं अंतर छे. (५८८) समवसरणस्तोत्रमां कह्युं छे के–चउरंसे इगधणुसयपिहु वप्पा, सड्ढकोसअंतरया । पढमबिया बियतइया, कोसंतरपुव्वमिव सेसं ॥ (आनो भावार्थ उपर आवी गयो छे.) (५८९) जो के एनी अवचूर्णीमां कह्युं छे के–अहीं अंतर पूर्वनी जेम प्रतर ने सोपाननी अपेक्षाए न गणवुं पण पहेला ने बीजा गढ वच्चे एक बाजु अंतर १५०० धनुष, बीजी बाजु पण ते ज प्रमाणे १५०० धनुष्य, बीजा ने त्रीजा गढ वच्चे अंतर एक बाजु १००० धनुष्य, बीजी बाजु पण ते ज प्रमाणे १००० धनुष्य समजवुं; केमके आ प्रमाणे पूर्वाचार्यनी आम्नाय छे. एम कह्युं छे, तो पण अहीं सुवर्णना गढनी अंदर एक बाजु एक हजार धनुष्यना अंतरमां १२५० धनुष्यमां समाइ शके तेवा एक एक हाथना प्रमाणवाळा ५००० पगथीआ[1] शी रीते समाय ? ते बहुश्रुतथी जाणी लेवुं. रत्नना गढनी अंदरनो विस्तार अहीं पण पूर्व प्रमाणे एक गाउ ने ६०० धनुष्य प्रमाण समजवो. (५९०) ए प्रमाणे त्रणे गढनुं

---

१ पेला बीजा वच्चे ६०००ने बीजा त्रीजा वच्चे ४००० कुल १०००० पगथीया संभवे छे.

व्यासे पूर्वोक्त इति मीलिते । सार्द्धं क्रोशत्रयं स्यात् षट्-शती च धनुषामिह ॥ ९१ ॥ सुवर्णरत्नप्राकार-भित्तीनां च चतसृणां । चतुर्धनुःशतव्यास--योगे भवति योजनं ॥ ९२ ॥ रूप्यवप्रस्य भित्तेस्तु विस्तृतिर्या धनुःशतं । सा न गण्या योजनेऽस्मिन् बाह्यसोपानकान्यपि ॥९३॥ त्रयाणामपि वप्राणां परिधिस्तु स्वयं बुधैः । चतुरस्रतया भाव्यो व्यासमानाच्चतुर्गुणः ॥ ९४ ॥ कोणे कोणे च भवतो द्वे द्वे वाप्याविहोत्तमे । उक्तं च वक्ष्यमाणं च शेषमत्रापि पूर्ववत् ॥ ९५ ॥

अथो तृतीयवप्रे यत् प्रागुक्तं समभूतलं । तस्य मध्ये पीठमेकं मणिरत्नमयं भवेत् ॥ ९६ ॥ तत्स्याज्जिनतनूच्छ्राय-परिमाणसमोच्छ्रयं । चतुर्द्वारं त्रिसोपान-रमणीयं चतुर्दिशं ॥ ९७ ॥ विष्कंभायामतस्तच्च कोदंडानां शतद्वयं । क्रोशद्वयेन सार्द्धेन भवत्युच्चैर्महीतलात् ॥ ९८ ॥ यदेकहस्तोत्तुंगानां सोपानानां सहस्रकैः । विंशत्या क्रोशयोर्युग्मं सार्द्धमेवोच्छ्रयो भवेत् ॥ ९९ ॥ तच्च सिंहासनाधःस्थ-धरायाः पीठिका-

---

अंतर एकत्र करीए त्यारे ३॥ कोश ने ६०० धनुष्य थाय (५९१) तेमां रत्न ने सुवर्णना (बे) गढनी चार भींतोनी पहोळाइना ४०० धनुष्य मेळवीए एटले एक योजन थाय. (५९२) रूपाना बे बाजुना गढनी पहोळाइना २०० धनुष्य तेमज बहारना दश-दश हजार पगथीआ आ एक योजनमां न गणवा. (५९३) आ चोरस समवसरणमां त्रण गढनो परिधि चोखंडुं होवाथी व्यास (लंबाइ-पहोळाइ) थी चारगणो बुध जनोए पोतानी मेळे समजी लेवो. (५९४) आ समवसरणमां एकेक कोणमां उत्तम एवी बे बे वावो होय छे. उक्त[1] अने वक्ष्यमाण[2] बाकीनुं बधुं पूर्वना गोळ समवसरण प्रमाणे जाणी लेवुं. (५९५)

हवे त्रीजा गढमां जे पूर्वे समभूतळ (१ कोस ने ६०० धनुष्य) कहेल छे तेना मध्यमां एक मणिरत्नमय पीठ होय छे. (५९६) ते जिनेश्वरना शरीरनी उंचाइ जेटली उंची, चार द्वारवाळी अने चारे दिशाए त्रण त्रण पगथीआवाळी होय छे. (५९७) ते लंबाइ-पहोळाइमां २०० धनुष्य होय छे अने पृथ्वीतळथी उंची अढी गाउ होय छे. (५९८) ते एक हाथ उंचा वीश हजार पगथीआ होवाथी तेना ५००० धनुष्य एटले अढी गाउ थाय छे. (५९९) ते सिंहासन नीचेनी पृथ्वीथी पीठबंध सुधी समश्रेणिनी

---

१ कहेलुं. २ कहेवाशे ते.

वधि । उच्छ्रयस्य भवेन्मानं मतोऽभिविवक्षया ॥ ६०० ॥ कर्ण-भूमिस्तु भगव-त्सिंहासनस्य मूलतः । बाह्यसोपानमूलान्तं रज्जुर्वि-स्तार्यते यदि ॥ ६०१ ॥ अष्टौ चापसहस्राणि द्विशताभ्यधिकानि तत् । सर्वत्रैकस्तथा हस्तो-ऽङ्गुलानि च दशोपरि ॥ ६०२ ॥ जिनासनाद्बाह्यवप्र-शीर्षावधि तु कर्णभूः । धनुषां षट् सहस्राणि त्र्यधिका च चतुःशती ॥३॥ एकादशाङ्गुलान्येवं सर्वतोऽपि विभाव्यताम् । लीलावत्युक्तरीत्या च कार्या गणितभावना ॥ ४ ॥

मध्यदेशेऽस्य पीठस्य स्यादशोकतरुः शुभः । विस्तीर्णशाखो नीरंध्र-च्छायो योजनविस्तृतः ॥ ५ ॥ तत्तज्जिनवपुर्मानात् स द्वादशगुणो-न्नतः । शश्वत्पुष्पच्छत्रकेतु-पताकातोरणादियुक् ॥ ६ ॥ अत्र समवसरणस्तोत्रावचूर्णिः—अस्य च जिनतनुद्वादशगुणोच्चस्य वप्रभि-त्तितो बहिर्निर्गमाभावेन योजनपृथुत्वं दुर्घटं, परं तदुपरिस्थायितुंग-तरसालवृक्षेण कृत्वास्य योजनपृथुत्वं संभाव्यते. उक्तं च समवायांग-

---

विवक्षाए उंचाइनुं मान समजवुं. (६००) अने कर्णभूमि तो भगवंतना सिंहासनना मूळथी बाह्य सोपानना मूळसुधी जो रज्जु (दोरडी) लांबी करीए, (६०१) तो ८२०० धनुष्य, १ हाथ ने १० अंगुळ उपर थाय. (६०२) जिनेश्वरना आसनथी बाह्य वप्रना मस्तक सुधी कर्णभूमि ६४०३ धनुष्य ने ११ अंगुळ थाय. एम चारे बाजुए समजवुं. आमां गणितनी भावना लीलावती ग्रंथमां कहेला गणितनी रीतिथी करवी. (६०३-४)

आ पीठना मध्य भागमां उत्तम एवो अशोकवृक्ष होय छे. ते विस्तिर्ण शाखा-वाळो अने गाढ छायावाळो तेम ज एक योजन विस्तारवाळो होय छे. (६०५) ते अशोकवृक्ष ते ते जिनेश्वरना शरीरना मानथकी बारगुणो उंचो अने चारे बाजु पुष्प, (त्रण) छत्र, केतु, पताका अने तोरण संयुक्त होय छे. (६०६) आ प्रसंगमां समवसरणस्तोत्रनी अवचूर्णिमां कह्युं छे के—' आ प्रभुना शरीरथी बार-गुणा उंचा अशोकवृक्षनुं गढनी (५०० धनुष्य उंची) भींतनी बहार नीकळवुं बनशे नहीं, तेथी तेनुं योजन पृथुत्व घटी शकशे नहीं; पण ए तेनी उपर रहेला अति उंचा शाळवृक्षे करीने योजनपृथुत्व संभवे छे. ' श्रीसमवायांगसूत्रमां कह्युं छे के—चोवीशे

चउवीसाए तित्थयराणं चउवीसं चेइयरुक्का होच्छा, तं जहा—निग्गोह १ सत्तवण्णे २ साले ३ पिअए ४ पिअंगु ५ छत्ताहे ६ । सरिसे ७ अ नागरुक्के ८ मालीय ९ पिलक्खुरुक्के १० य ॥ ७ ॥ तिंदुग ११ पाडल १२ जंबू १३ आसोत्थे १४ खलु तहेव दहिवण्णे १५ । नंदीरुक्के १६ तिलए य १७ अंबरुक्के १८ असोगे १९ य ॥८॥ चंपय २० बउले य २१ तहा वेडसरुक्के २२ तहेव धवरुक्के २३ । साले य २४ वद्धमाणस्स चेइयरुक्का जिणवराणं ॥९॥ बत्तीसं धणुयाइं चेइयरुक्को य वद्धमाणस्स । निग्गोउगो असोओ उच्छन्नो सालरुक्केण ॥१०॥ तिन्नेव गाउआइं चेइयरुक्को जिणस्स उसभस्स । सेसाण जिणाणं पुण सरीरओ बारसगुणोउ ॥ ११ ॥ सच्छत्ता सपडागा सवेइया तोरणेहिं उववेया । असुरसुरगरुलमहिया चेइयरुक्का जिणवराणं ॥१२॥ 'चेइअरुक्खत्ति' चैत्यवृक्षा ज्ञानोत्पत्तिवृक्षाः, चतुर्थगाथायां 'बत्तीसं धणुआइंति' असोगवरपायवं जिणउच्चत्ताओ बारसगुणं विउव्वइ' इत्यावश्यकचूर्णिवचनात्सप्तहस्तमानाद्वीरस्वामिदेहाद् द्वादशगुणीकृतः सन् २१ धनूंषि भवत्यशोकः, तदुपरि ११ धनुर्मानः सालवृक्षश्च स्यात्, उभयोर्मीलने ३२ धनूंषि चैत्यद्रुमो वीर-

---

तीर्थंकरना २४ चैत्यवृक्षो होय छे. ते आ प्रमाणे—न्यग्रोध, सप्तपर्ण, साल, प्रियक, प्रियंगु, छत्रांघ, सरिस, नागवृक्ष, मालीक, पीलक्षु, तिंदुग, पाडल, जम्बू, अश्वत्थ, दधिपर्ण, नंदीवृक्ष, तिलक, अंबवृक्ष, अशोक, चंपक, बकुल, वेडस, धव अने साल. श्रीवर्धमानस्वामीनुं चैत्यवृक्ष ३२ धनुष्यनुं कह्युं छे, तेमां नीचे (२१ धनुष्य) सर्व ऋतुमां फळवाळो अशोकवृक्ष ने उपर (११ धनुष्य) सालवृक्ष समजवो. (६०७–९) प्रथम ऋषभजिनेंद्रनुं चैत्यवृक्ष त्रण गाउनुं अने बाकीना जिनेश्वरोनुं तेमना शरीरथी बारगणुं समजवुं. (६११) आ जिनेश्वरोना चैत्यवृक्षो छत्र सहित, पताका सहित, वेदिका सहित, तोरणो सहित अने असुर, सुर तेमज गरुल (व्यंतर)वडे पूजित होय छे. (६१२) चैत्यवृक्ष एटले ज्ञानोत्पत्ति वृक्ष समजवुं. उपर कहेली चार गाथाओ पैकी चोथी (अंक ९) गाथामां बत्रीश धनुष्यनुं चैत्यवृक्ष कह्युं छे तेमां अशोकवृक्ष वीरजिनेश्वरनी उंचाइथी बारगणुं अंतर्गत समजवुं. आ प्रमाणे आवश्यकचूर्णिमां कहेल छे एटले सातहाथप्रमाण वीरप्रभुना देहथी बारगणुं करतां २१ धनुष्य थाय, तेवडुं अशोकवृक्ष ने तेनी उपर ११ धनुष्यप्रमाण सालवृक्ष होय—एटले बंनेना मळवाथी ३२ धनुष्य

स्येति संप्रदायः, तथा 'निच्चोउगो' नित्यं ऋतुरेव पुष्पादिकालोऽस्येति नित्यर्त्तुक इति समवसरणस्तवावचूर्णौ. अत्र श्रीवीरचैत्यवृक्षाशोकवृक्षयोः समुदितयोर्द्वात्रिंशद्धनुर्मानत्वमुक्तं. शेषाणामप्यर्हतां स्वस्वशरीरमानाद् द्वादशगुणत्वं चैत्यतरूणामूचे, तथापि पूर्वोक्तानुपपत्तिस्तदवस्थैव. पंचधनुःशतोच्चाया वप्रभित्तेरुपरि भूत्वा तच्छाखानां बहिः प्रसरणस्य दुरुपपादत्वात्, जिनांगानि हि उत्सेधांगुलेन पंचधनुःशतादिमानानि स्युः, वप्रभित्तिस्तु वर्तमानजिनात्मांगुलेन पंचधनुःशतमानेत्यादि सम्यक् चिंतनीयं, तेन यदि दिव्यानुभावाद्वप्रभित्तिमध्यभागेनाशोकचैत्यवृक्षाणां शाखाः प्रथमवप्राद्बहिः प्रसर्पेयुस्तदा किमनुपपन्नं स्यादित्यवधार्यं । अन्यथा वा यथागमं परिभावनीयमिदमिति. न्यग्रोधाद्या अमी ज्ञानो--त्पत्तिवृक्षा यथायथं । सर्वेषामर्हतां भाव्या अशोकोपरिवर्त्तिनः ॥१३॥

वीरप्रभुनुं चैत्यवृक्ष छे एम संप्रदायथी कहेलुं छे. तथा ते गाथामां निचोउगो पद छे एटले नित्यर्त्तुक-छए ऋतुना पुष्पादिवाळो. आ प्रमाणे समवसरणस्तवनी अवचूर्णिमां कह्युं छे. अहीं श्रीवीरपरमात्मानुं चैत्यवृक्ष अने अशोकवृक्ष मळीने ३२ धनुष्यनुं मान कह्युं. बाकीना प्रभुनुं स्वस्वशरीरना मानथी बारगणुं चैत्यवृक्ष कह्युं; तथापि पूर्वे कहेली अनुपपत्ति (अशोकवृक्षनी पहेला रत्नना गढथी बहार नीकळवानी अशक्यतारूप) तो कायम रही छे केमके पांचशें धनुष्य उंची गढनी भींतनी उपर थइने तेनी शाखानुं बहार प्रसार पामवुं न बनी शके तेवुं छे. जिनेश्वरना शरीर उत्सेधांगुळे पांचशें धनुष्य विगेरे प्रमाणवाळा छे अने गढनी भींत तो वर्तमान जिनना आत्मांगुळथी पांचशें धनुष्यप्रमाण छे. इत्यादि सम्यग्प्रकारे चिंतववा योग्य छे, तेथी जो दिव्यानुभावथी गढनी भींतना मध्य भागमांथी अशोक ने चैत्यवृक्षोनी शाखा प्रथमना गढनी बहार पसरे तो शुं वांधो आवे ते विचारी जोवुं अथवा जेम आगममां कह्युं छे तेम परिभावना करवी[1]. उपर न्यग्रोधादि जे ज्ञानोत्पत्ति वृक्षो कह्या छे ते यथायोग्यपणे सर्वे अरिहंतना अशोकवृक्षनी उपर समजी लेवा. (६१३).

---

१ समवसरणना गढनी भींतो प्रभुना आत्मांगुळथी ५०० धनुष्यनी न होय पण मध्यनी मणिपीठिका जेम प्रभुना शरीरप्रमाण उंची होय छे तेम शरीरप्रमाण उंची होय तो प्रथम प्रभुना समवसरण माटे ५०० धनुष्य कहेलमां वांधो आवे नहीं अने अशोकवृक्षने एक योजन विस्तार पामवामां पण अटके नहीं.

तस्याशोकस्य मूले च देवच्छंदोऽर्हतां भवेत्। सिंहासनानि चत्वारि तत्र च स्युश्चतुर्दिशं ॥ १४॥ तानि स्वर्णमयान्युद्य-द्रत्नालीखचितानि च। जिनं द्रष्टुं क्लृप्तलक्षा-क्षाणीवानेकहीरकैः ॥ १५ ॥ पुरश्चैकैकमुद्योति-रत्नज्योतिर्भरैर्लसत्। पादपीठं धृतोल्लास-मिवार्हत्पदसंगमे ॥ १६ ॥ प्रतिसिंहासनं प्रौढ-च्छत्राणां स्यात्रयं त्रयं। उपर्युपरिसंस्थायि-मौक्तिकश्रेण्यलंकृतं ॥ १७ ॥ तथाहुः—तवोर्ध्वमूर्ध्वं पुण्यर्द्धि-क्रमसब्रह्मचारिणी। छत्रत्रयी त्रिभुवन-प्रभुत्वप्रौढिशंसिनी ॥ १८ ॥ प्रतिसिंहासनं चंद्र-चारुचामरधारिणौ। सुरौ द्वौ द्वावुभयतः सर्वालंकारभासुरौ ॥ १९ ॥ सिंहासनस्य पुरतः सुवर्णकमलस्थितं। चतुर्दिशं धर्मचक्र-मेकैकं भानुजित्वरं ॥ २० ॥ तच्चार्हतां त्रिभुवन-धर्मचक्रित्वसूचकं। स्फुरज्ज्योतिः स्मृतमपि प्रतिपक्षमदापहं ॥ २१ ॥ सिंहासनं धर्मचक्रं ध्वजश्छत्रं च चामराः। चरंत्याकाशमार्गेण क्षितौ विहरति प्रभौ ॥२२॥ तथाहुः-आगासगएणं चक्केणं, आगासगएणं छत्तेणं, आगास-

ते अशोकवृक्षना मूळमां नीचे अरिहंतनो देवच्छंदो (उपदेश देवानुं स्थान) होय छे. त्यां चारे दिशाए चार सिंहासन होय छे. (६१४) ते सिंहासन स्वर्णमय, उद्योतवाळा रत्नो जडेला अने जिनेश्वरने जोवा माटे करेला लाखो नेत्रो ज जाणे होय एम अनेक हीरावाळा होय छे. (६१५) ते सिंहासननी आगळ एकेक उद्योतवाळा रत्नोनी ज्योतिथी उल्लसायमान पादपीठ होय छे, ते जाणे अरिहंतना पगना समागमथी उल्लासवाळा थया होय एम जणाय छे. (६१६) दरेक सिंहासननी उपर प्रौढ एवा छत्रना त्रिको होय छे. ते उपराउपर रहेला अने मोतीओनी श्रेणिओथी अलंकृत होय छे. (६१७) तथाहुः—'हे प्रभु! उपर उपर पुण्यर्द्धिना क्रमना सब्रह्मचारी होय तेम मोटा मोटा त्रण छत्रो तमारी उपर त्रिभुवनना प्रभुत्वनी प्रौढीना कहेनारा होय छे.' (६१८) दरेक सिंहासने चंद्र समान उज्वळ चामरधारी बे बे देवो बंने बाजु होय छे, ते देवो सर्व अलंकारवडे शोभीता होय छे. (६१९) सिंहासननी आगळ सुवर्णकमळ उपर राखेलुं चारे दिशाए एकेक धर्मचक्र सूर्यनी कांतिने जीते एवुं होय छे. (६२०) ते धर्मचक्र तीर्थंकरनुं धर्मचक्रीपणुं सूचवनारुं, स्फुरायमान कांतिवाळुं अने जोवामात्रथी प्रतिपक्षना मदने दूर करनार होय छे. (६२१) आ सिंहासन, धर्मचक्र, ध्वजा, छत्र अने चामरो ज्यारे प्रभु विहार करे त्यारे आकाशमार्गे साथे चाले छे. (६२२) तथाहुः-आकाशगत चक्रथी, आकाशगत छत्रथी, आ-

गएणं सपायपीढेणं सिंहासणेणं आगासगयाहिं सेअवरचामराहिं इत्यादि.

चतुर्दिशं च चत्वारः सहस्रयोजनोच्छ्रिताः । घंटालघुपताकादिमंडिताः स्युर्महाध्वजाः ॥ २३ ॥ तत्र धर्मध्वजः प्राच्यां याम्यां मानध्वजो भवेत् । गजध्वजः पश्चिमाया–मुदक् सिंहध्वजो महान् ॥ २४ ॥ यदत्र चापक्रोशादि मानमुक्तं यथास्पदं । भवेत्तदत्राधिकृत–जिनात्मांगुलमानतः ॥२५॥ तदुक्तं–'सव्वं माणमिणं नियनियकरेणेति' पीठं च चैत्यवृक्षं चा–सनं च छत्रचामरान् । सद्देवच्छंदकादीनि कुर्वंति व्यंतरामराः ॥२६॥ साधारणोऽयं समव–सरणे कथितो विधिः । सर्वमेकोप्यदः कुर्यात्कश्चिद्भक्त्या सुरो महान् ॥ २७ ॥ हर्षोत्कर्षात्सिंहनादं तत्र कुर्वंति नाकिनः । समापतंतः स्वर्गेभ्यो वादयंति च दुंदुभिम् ॥ २८ ॥ तत्र सूर्योदये स्वामी द्वयोः कनकपद्मयोः । क्रमेण स्थापयन्पादौ सुरसंचार्यमाणयोः ॥ २९ ॥ अन्वीयमानः शेषैश्च सप्तभिः स्वर्णपंकजैः । एवं निजपदन्यास–कृतार्थितनवांबुजः ॥ ३० ॥ पूर्वद्वारेण समव–सरणे

काशगत पादपीठयुक्त सिंहासनथी अने आकाशगत श्वेतचामरोथी (प्रभु) युक्त होय छे. इत्यादि. चारे दिशाए मळीने चार महाध्वजो एक हजार योजन उंचा अने घंटा तथा लघुपताका विगेरेथी मंडित होय छे. (६२३) तेमां पूर्वे धर्मध्वज, दक्षिणे मानध्वज, पश्चिमे गजध्वज अने उत्तरे सिंहध्वज होय छे. (६२४) अहीं जे धनुष्य ने क्रोशादि मान कहेल छे ते जेनो अधिकार चालतो होय ते प्रभुना आत्मांगुळथी समजवुं. (६२५) तदुक्तं आ सर्व प्रमाण पोतपोताना हाथवडे जाणवुं इति. मणिपीठ, चैत्यवृक्ष, आसन, छत्र, चामर अने देवच्छंदो विगेरे व्यंतर देवो करे छे. (६२६)

आ बधो विधि साधारण समवसरण माटे कह्यो छे. बाकी तो कोइ महान देव भक्तिथी आवे तो ते एकलो पण बधुं करी शके छे. (६२७) हर्षना उत्कर्षथी त्यां देवो सिंहनाद करे छे अने स्वर्गमांथी उतरतां दुंदुभी वगाडे छे. (६२८) त्यां सूर्योदये स्वामी देवोए संचारेला बे सुवर्णकमळ पर पग देता देता अने बाकीना सात कमळो पछवाडे चालतां अनुक्रमे तेमांथी बे बे आगळ आववाथी नवे कमळोने पादस्थापनवडे कृतार्थ

१ चारे निकायना देवो मळीने करे तेवा

प्रविशत्यथ। प्रदक्षिणीकृत्य पूर्व–सिंहासने निषीदति ॥ ३१ ॥ पादपीठन्यस्तपादः कृततीर्थनमस्कृतिः। विधत्ते देशनां स्वामी गंभीरमधुरध्वनिः ॥ ३२ ॥

तीर्थं नाम श्रुतज्ञानं यद्वा संघश्चतुर्विधः। आद्यो वा गणभृत्तेन तीर्यते यद्भवांबुधिः ॥३३॥ तथोक्तं–तित्थं भंते तित्थं तित्थयरे तित्थं ? गो० अरहा ताव नियमा तित्थयरे, तित्थं पुण चाउव्वण्णो संघो पढमगणहरो वेति भगवतीसूत्रे. अर्हत्तैतत्पूर्विका य–त्तथा पूजितपूजकः। लोकोऽप्यर्हत्पूजितत्वा–त्पूजयेत्तीर्थमादरात् ॥ ३४ ॥ ततस्तीर्थं नमत्यर्हन् कृतकृत्योऽपि वा यथा। धर्मं कथयति स्वामी तथा तीर्थं नमस्यति ॥३५॥ तथाहुः श्रीभद्रबाहुस्वामिपादाः–तप्पुव्विया अरहया पूइयपूआ य विणयकम्मं च। कयकिच्चोवि जह कहं कहए णमए तहा तित्थं ॥ १ ॥ अस्य वृत्तौ–तीर्थं श्रुतज्ञानं तत्पूर्विकाऽर्हत्ता तदभ्यासप्राप्तेरिति. वक्ष्यमाणैर्गुणैः पंच–त्रिंशतालंकृता सदा। व्याप्नोत्यायोजनं वाणी सर्वभाषानुगा प्रभोः

करता पूर्वद्वारवडे समवसरणमां प्रवेश करे छे अने (मणिपीठने) प्रदक्षिणा दइने पूर्व सिंहासनपर बेसे छे. (६२९–३१) पादपीठ उपर पग स्थापन करे छे, तीर्थने नमस्कार करे छे अने गंभीर तेम ज मधुर ध्वनिवडे स्वामी देशना आपे छे. (६३२)

अहीं तीर्थ शब्दे श्रुतज्ञान अथवा चतुर्विधसंघ अथवा प्रथम गणधर समजवा, तेम ज जेनाथी संसारसमुद्र तरीए ते तीर्थ एवी तेनी व्युत्पत्ति समजवी. (६३३) तथोक्तं–' हे भगवंत ! तीर्थने तीर्थ कहीए के तीर्थकरने तीर्थ कहीए ? ' प्रभु उत्तर आपे छे—' हे गोयम ! अरिहंतने तो निश्चये तीर्थकर समजवा अने तीर्थ चतुर्विध संघ अथवा प्रथम गणधरने समजवा. ' इति भगवतीसूत्रे. अर्हत्ता एतत्पूर्विका एटले श्रुतज्ञानपूर्वक समजवी, तथा लोक पण पूजितपूजक होय छे; तेथी अर्हत्पूजित एवा तीर्थने एटले चतुर्विध संघने आदरपूर्वक पूजे छे. (६३४) तेथी करीने ज अर्हन् तीर्थने नमे छे अथवा तो अरिहंत कृतकृत्य छतां पण जेम धर्म कहे छे तेम ज तीर्थने नमस्कार करे छे. (६३५) श्रीभद्रबाहुस्वामी कहे छे के—' अर्हत्ता तत्पूर्विका छे. ' पूजितनी पूजा ते विनयकर्म छे. कृतकृत्य एवा भगवंत जेम कथा कहे छे–उपदेश आपे छे, तेम तीर्थने नमे छे.' आनी वृत्तिमां कहे छे के—'तीर्थ एटले श्रुतज्ञान. तत्पूर्विका अर्हत्ता–तेना अभ्यासवडे प्राप्त थयेली होवाथी.' आगळ कहेवाशे एवा पांत्रीश गुणे अलंकृत एवी प्रभुनी वाणी निरंतर सर्व भाषामां

॥ ३६ ॥ तथाहुः श्रीहेमसूरयः काव्यानुशासने—अकृत्रिमस्वादुपदां परमार्थाभिधायिनीं । सर्वभाषापरिणतां जैनीं वाचमुपास्महे ॥ ३७ ॥ तथा— देवा दैवीं नरा नारीं शबराश्चापि शाबरीं । तिर्यंचोऽपि च तैरश्चीं मेनिरे भगवद्गिरं ॥ ३८ ॥ यथा जलधरस्यांभ आश्रयाणां विशेषतः । नानारसं भवत्येवं वाणी भगवतामपि ॥ ३९ ॥ स्यात्प्रभोर्मूलभाषा च स्वभावादर्द्धमागधी । स्यातां द्वे लक्षणे ह्यस्यां मागध्याः प्राकृतस्य च ॥ ४० ॥ येनैकेनैव वचसा भूयसामपि संशयाः । छिद्यंते वक्ति तत्सार्वो ज्ञाताशेषवचोविधिः ॥ ४१ ॥ क्रमच्छेदे संशयाना—मसंख्यत्वाद्वपुष्मतां । असंख्येनापि कालेन भवेत्कथमनुग्रहः ॥ ४२ ॥ शब्दशक्तेर्विचित्रत्वा—त्तं ॥ ४३ ॥ तीदृंशि वचांसि च । प्रयुक्तैरुत्तरं यत्स्या—द्युगपद्भूयसामपि सरःशरस्वरार्थेन भिल्लेन युगपद्यथा । सरो नत्थि त्ति वाक्येन प्रियास्तिस्रोऽपि बोधिताः ॥ ४४ ॥ तथोक्तं—भिल्लस्स तिन्नि भज्जा एगा मग्गेइ पाणियं पाहि । बीया मग्गइ हरिणं

समजाय तेवी एक योजनमां विस्तार पामे छे. (६३६) श्रीहेमचंद्राचार्य काव्यानुशासनमां कहे छे के—' अकृत्रिमस्वादुपदवाळी, परमार्थने कहेनारी, सर्व भाषामां परिणमनारी एवी जैनी वाणीनी अमे उपासना करीए छीए. (६३७) तथा—देवो दैवी, मनुष्यो मनुष्य संबंधी, शबरो (भिल्लो) शाबरी अने तिर्यंचो तिर्यंचनी भाषा तरीके भगवंतनी वाणीने माने छे. (६३८) जेम जळधर (वरसाद)नुं पाणी आश्रयना विशेषपणाथी नाना प्रकारना रसपणाने पामे छे तेम भगवंतनी वाणी माटे पण समजवुं. (६३९) प्रभुनी मूळ भाषा तो स्वभावे अर्धमागधी छे, एटले तेमां मागधी ने प्राकृत बे भाषानो समावेश छे. (६४०) जे एक ज वचनवडे अनेकना संशय नाश पामे तेवुं वचन वाणीना समस्त विधिने जाणनारा सर्वज्ञ बोले छे. (६४१) प्राणीओनुं असंख्यातपणुं होवाथी जो तेमना संशयनो क्रमथी छेद थाय तो असंख्य काळे पण ते सर्वनो अनुग्रह केम थाय ? (न थाय). (६४२) शब्दशक्तिनी विचित्रता होवाथी एवी वाणीनो प्रयोग करवामां आवे छे के जे बोलवाथी समकाळे घणाओना प्रश्नोना उत्तरो मळी जाय छे. (६४३) सर, शर ने स्वरना अर्थमां भिल्ले सरो नत्थि एवा वाक्यवडे त्रणे स्त्रीओने एक साथे समजावी दीधी हती. (६४४) तथोक्तं—

' एक भिल्लने त्रण स्त्री हती, तेमांथी एक मागे छे के ' मने पाणी पा ',

तइया गवरावए गीयं ॥ ४५ ॥ प्रष्टुमाकांक्षितो योऽर्थः प्राक् संदिग्धश्च यो भवेत्। येन वा यस्य वैराग्यं यो वा यस्यावबोधकृत् ॥ ४६ ॥ सर्वोऽपि लोकः प्रत्येकं तमर्थमवबुध्यते। अर्हदुच्चारितादेक-वाक्यादप्यतिशायिनः ॥ ४७ ॥ अविच्छेदेन भगवान् विधत्ते देशनां यदि। तदा नोद्विजते श्रोता यावज्जीवमहर्निशं ॥ ४८ ॥ न क्षुत्तृष्णा न च व्याधिः काचिदाधिश्च न स्पृशेत्। शृण्वतो भगवद्वाणीं सकलानपि देहिनः ॥ ४९ ॥ माधुर्यं भगवद्वाण्या वाचां यद्यप्यगोचरं। तथापि सौख्यवन्मुक्ते-रौपम्येन निरूप्यते ॥ ५० ॥

यथासीद्वाणिजः कोऽपि मितंपचशिरोमणिः। आतृप्तिं नात्मनाप्याद योऽन्नं लोभ इवांगभृत् ॥ ५१ ॥ अन्नं नाजीर्यदन्येषां यस्मिन् पश्यति भक्षितं। यः सिक्थाशंकया पश्यन् स्थालीक्षालनवार्यपि ॥ ५२ ॥ लिहति स्म स्वयं स्थालीं योऽसकृत्पाणिना भृशं। काका वराकाः श्वानो वा

बीजी मागे छे के 'मने हरण लावी आप' ने त्रीजी मागे छे के 'गीत गाओ.' (६४५) (आना उत्तर माटे उपरनो सरो नत्थि शब्द समजी लेवो.) जे अर्थ पूछवाने इच्छयो होय, जे अर्थ पूर्वनो संदेहवाळो होय अथवा जे अर्थथी जेने वैराग्य थाय तेम होय अथवा जे जेने अवबोध पमाडनार होय, ते दरेक अर्थने अरिहंतना कहेला, अतिशयवाळा एक वाक्यथी ज सर्व लोक समजी जाय छे. (६४६-४७) जो भगवंत अविश्रांत (अविच्छेद)पणे देशना आप्या ज करे तो यावज्जीव अहर्निश सांभळतां पण श्रोता उद्वेग (खेद) पामे नहीं, क्षुधा लागे नहीं, तृषा लागे नहीं अने कोइ आधि के व्याधि स्पर्श करे नहीं. भगवंतनी वाणी सांभळतां सर्व जीवोने ए प्रमाणे स्थिति वर्ते. (६४८-४९) भगवंतनी वाणीनुं माधुर्य जो के वाचाने अगोचर छे, तथापि मुक्तिना सुखनी जेम उपमावडे करीने तेनुं निरूपण करवामां आव छे. (६५०)

एक वणिक जरुर पूरतुं ज रांधनारमां (लोभीओमां) शिरोमणि हतो. ते जाणे अंगधारी लोभ ज होय तेम पोते पण तृप्ति थाय तेटलुं पूरुं अन्न खातो नहोतो. (६५१) तेना जोतां जो बीजो कोइ खाय तो तेने पण अन्न पचतुं नहोतुं. वळी थाळी धोयेल पाणी पण रखे तेमां अन्ननो दाणो रह्यो गयो होय तेने माटे जोया करतो अने पोते वारंवार थाळीने हाथवडे चाटतो हतो; तेथी रांक एवा कागडा के श्वान पण तेने आंगणे शुं

किं लिहेयुस्तदंगणे ॥ ५३ ॥ जना नोच्चारयंति स्मा–ऽवश्यकेऽपि प्रयोजने । यन्नाम जातूक्ते त्विष्ट–देवान् श्रेयोऽर्थमस्मरन् ॥ ५४ ॥ भार्या तस्यानुरूपासी–द्या शुनीव वनीपकं । दूरादपि क्षोभयति दुर्वाक् तृष्णेव जंगमा ॥ ५५ ॥ आसीद्दासी च तस्यैका जरती गरतीव्ररुक् । क्षुज्जराजर्जरा दीना कृशा मूर्तेव दुर्दशा ॥ ५६ ॥ प्रातः स्माह वणिक्पत्नी तां रंडे याहि काननं । एधांस्याहर भूयांसि न दास्याम्यन्यथाशनं ॥५७॥ पतिपद्य वचस्तस्याः चीणोपायाश्रयागमत् । वनं शनैः शनैर्यष्टि–मवष्टभ्य सुतामिव ॥ ५८ ॥ तत्रान्यच्छिन्नकाष्ठानां शिलोञ्छं छेदनाचमा । संगृह्य श्रेष्ठिनीतुष्ट्यै सामर्थ्याधिकवीवधं ॥ ५९ ॥ कृत्वा शिरसि तृट्ताप–त्तुत्खेदस्वेदविह्वला । पुरस्तस्या ढौकयित्वा दैन्यादन्नं ययाच तां ॥ ६० ॥ युग्मं । निस्त्रिंशा निस्त्रपा सैवं तामभाषिष्ट दुष्टधीः । अल्पीयांसि किमेधांसि रे रे रंडे त्वमाहरः ॥ ६१ ॥ काष्ठैः प्रज्वाल्यते चुद्रै–र्नै-

चाटे ? कांइ चाटवा पामता नहोता. (६५२–५३) लोको अवश्यना प्रयोजने पण तेनुं नाम लेता नहोता. कदापि बोलाइ जाय तो श्रेयने माटे इष्टदेवनुं नाम तरत ज संभारता हता. (६५४) स्त्री पण तेने अनुरूप ज मळी हती के जे दुर्वचनवाळी अने जाणे जंगम तृष्णा होय तेवी हती, तेथी ते भिक्षुकादिकने दूरथी ज कुतरीनी जेम क्षोभ पमाडती हती. (६५५) तेने एक दासी हती ते वृद्ध अने अति तीव्र व्याधिवाळी हती, तेम ज क्षुधा अने जरावडे जर्जर थयेली, दीन, कृश अने मूर्त्तिमान दुर्दशा जेवी हती. (६५६) एक दिवस प्रातःकाळमां ज ते वणिकनी स्त्रीए पेली दासीने कह्युं के— ' हे रंडे ! जलदी वगडामां जा अने पुष्कळ काष्ठो लइ आव. नहीं तो हुं तने खावानुं आपीश नहीं. (६५७) तेनुं वचन अंगीकार करीने ते बीजा उपाय के आश्रय विनानी धीमे धीमे पुत्रीनी जेम लाकडीनुं अवलंबन करीने वनमां चाली. (६५८) त्यां ते काष्ठो छेदवामां असमर्थ होवाथी बीजाओए कापेला लाकडाना कोइ कोइ ककडा पड्या रहेला ते वीणीने तेनो भारो बांधीने शेठाणीने प्रसन्न करवा माटे शक्ति उपरांत भारने माथे उपाडीने चाली. क्षुधा, तृषा, ताप, खेद ने स्वेदथी विह्वळ थएली ते दासीए शेठाणी पासे ते भारो नाखीने दीनपणे अन्ननी याचना करी. (६५९–६०) निर्दय अने निर्लज्ज एवी ते दुष्ट बुद्धिवाळी शेठाणी तेने कहेवा लागी के—अरे रंडे ! आटला थोडा काष्ठो केम लावी ? (६६१) आटला तुच्छ काष्ठथी तो तुं पण बळी शके एम नथी.

तावद्भिर्भवत्यपि । गृहं मे भक्षितं सर्वं रेऽकिंचित्करया त्वया ॥ ६२ ॥ जरत्युवाच हे मात-र्दीनायां मयि मा कुपः । भक्ष्यमुद्धरितं किंचि-द्यच्छ क्षुत्पीडितास्म्यहं ॥ ६३ ॥ पुनरप्याहरिष्यामि स्वस्थीभूय क्षणांतरे । शरणं निःशरण्याया-स्त्वमेवासि ममांबिके ॥६४॥ सा प्रोचे जनकास्थीनि खाद प्रश्रवणं पिब । मृत्वा स्वस्था भवाद्यापि म्रियसे किं न दुर्मरे ॥ ६५ ॥ आनीतेभ्यश्चतुर्ग्रेषु पुनरप्याहृतेषु रे । काष्ठेषु तुभ्यं दास्यामि भक्ष्यं तद्गच्छ सत्वरं ॥ ६६ ॥ तथैव गत्वा सारण्ये काष्ठभारं चतुर्गुणं । कष्टेन महतोच्चित्य निदधौ मूर्ध्नि दुर्वहं ॥ ६७ ॥ प्रस्फुटद्धृदया श्वासै-रारोहतीव भूधरं । उत्फुल्लगल्लप्रसर-त्फूत्कारा भुजगीव च ॥ ६८ ॥ स्नातेव क्लिन्नसर्वांग-चीवरा स्वेदनिर्झरैः । पीतमद्येव निश्चेष्टा प्रपतंती पदे पदे ॥ ६९ ॥ पतंतमप्यादधती भारं मूर्ध्नि पुनः पुनः । रुष्टाभीष्टमिवानिष्ट-मपि वेश्येव गर्द्धना ॥ ७० ॥ प्राप्तपाताप्यवष्टब्धा यष्ट्या जीर्णकुटीव सा । प्रकंपमानसर्वांगो-त्पन्न-

---

अरे अकिंचित्कर एवी तुं मारुं घर बधुं खाइ गइ. ' (६६२) डोशी बोली के—' हे माता ! दीन एवी मारी उपर तमे कोपायमान न थाओ, कांइक खातां वधेलुं होय ते मने आपो, कारणके हुं क्षुधाथी घणी पीडा पामुं छुं. (६६३) हुं जरा स्वस्थ थइने थोडीवार पछी वळी बीजा काष्ट लावी आपीश. मने शरण विनानीने हे मारी माता ! तमे ज एक शरणभूत छो. (६६४) ' शेठाणी बोली के—' तारा बापना हाडका खा ने तेनो पेशाब पी–मरी जइने स्वस्थ था. अरे दुःखे मरवावाळी ! तुं हजी मरती केम नथी ? (६६५) आ लावीछुं ते करतां चोगणा काष्ट लावीश, त्यारे तने खावानुं आपीश. माटे जलदी काष्ट लेवा जा. ' (६६६) शेठाणीनुं आवुं वचन सांभळीने ते तरत ज पाछी अरण्यमां गइ अने प्रथम करतां चोगणा काष्टो मोटा कष्टवडे एकठा करीने तेनो मोटो भारो बांधीने दुःखे उपाडाय एवो ते भारो माथे मूक्यो. (६६७) जाणे पर्वतपर चडती होय तेम श्वासवडे जेनुं हृदय फुटी जतुं हतुं अने फुलेला गालवडे सापणनी जेम फूत्कारा करती. (६६८) परशेवाना निझरणावडे जाणे न्हायेली होय तेम सर्व अंग ने वस्त्रो जेना भींजाइ गया छे एवी जाणे, मदिरा पीधेली होय एम निश्चेष्ट थइने पगले पगले पडती. (६६९) माथेथी पडी जता भाराने वारंवार पाछी उपाडती, रुष्ट एवा अभीष्ट पुरुषनी जेम अनिष्ट एवा पण ते भाराने वेश्यानी जेम इच्छती. (६७०) जीर्ण झुंपडानी जेम पडी गया छतां पण लाकडीना आधारवडे उभी रहेती, टाढीओ

शीतज्वरेव च ॥ ७१ ॥ विविक्षुरिव भूम्यंत–र्न्यग्भूता भूरिभारतः। मृत्युं संभाषमाणेव हृदि न्यस्तकरा मुहुः ॥ ७२ ॥ क्षुत्क्षीणजठरास्थित्वक्शेषाऽशेषाऽसुखाश्रिता । समंताद्विश्लथा शुष्क–शमीवाततकोटरा ॥७३॥ असकृद्रसनालीढ–सृक्का शुष्कगलाधरा दंतशून्यास्यविगल–ल्लालाक्षिप्चरदश्रुका ॥ ७४ ॥ क्षणे क्षणे स्मरंती तं वणिक्पत्न्याः पराभवं । भक्ष्यं दास्यति सा नो वे–त्येवं चिंताग्निचुंबिता ॥ ७५ ॥ अनन्यगतिकत्वेनागच्छंती मंदिरं प्रति । यावत्साऽऽयाति समव–सरणस्यांतिके प्रभोः । ॥ ७६ ॥ तावत्कंटकमुद्धर्तुं सोच्चिक्षेप निजं क्रमं । न्यास्थत् पाणिं च तत्र स्वं तदा तत्कर्णकोटरे ॥ ७७ ॥ प्रविवेशार्हतां वाणी पीयूषद्रवपेशला । शुश्राव सैकचित्ता तां विस्मृताखिलवेदना ॥ ७८ ॥ एकादशभिः कुलकं । दिशत्यब्दसहस्राणि भगवान् देशनां यदि। तस्याश्च तावदायुश्चे–त्तर्हि सावस्थिता तथा ॥७९॥ शृणोत्येवोदूढभारा पादं न्यस्यति न

ताव आवेलानी जेम सर्वांगे कंपती (धूजती), (६७१) पण भारवडे जाणे पृथ्वीमां पेसवा इच्छती होय तेम नीची नमी गयेली, मृत्यु साथे वात करती होय तेम वारंवार हृदय उपर हाथ मूकती, (६७२) क्षुधावडे क्षीण थइ गएल जठरवाळी अने हाड ने चामडी ज जेना शरीरमां शेष रहेल छे एवी तेम ज समस्त दुःखना आश्रयभूत, चारेबाजुथी विश्लथ, सुकायेला शमीना झाडनी जेम विस्तृत कोटरवाळी, (६७३) वारंवार जीभवडे होठने चाटती, जेनुं गळुं ने होठ सुकाइ गएल छे एवी, दांत विनाना मुखमांथी झरी रही छे लाळ जेने एवी, (६७४) झरता आंसुवाळी, क्षणे क्षणे पोतानी शेठाणीना पराभवने संभारती, मने हजी पण खावानुं आपशे के नहीं ? एवी चिंतारूपी अग्निथी चुंबित. (६७५) शेठना घरतरफ अनन्य गतिपणे–बीजे जवानो आशरो न होवाथी चालती एवी ते डोसी जेवी प्रभुना समवसरण नजीकथी नीकळी. (६७६) तेवामां तेना पगमां कांटो वागवाथी ते काढवा माटे पोतानो पग उंचो करीने पोतानो हाथ त्यां लगाडे छे तेवामां तेना कर्णरूप कोटरमां अमृतना रस जेवी मधुर अरिहंतनी वाणीए प्रवेश कर्यो. ते सांभळतां ज समस्त वेदनाने भूली जइने ते एक चित्ते स्थिर थइ जइने सांभळवा लागी. (६७७–७८) जो भगवान हजारो वर्ष पर्यंत देशना आपे अने तेनुं तेटलुं आयुष्य होय तो ते अवस्थित थइने माथे भार छतां ते वाणी सांभळ्या ज करे

क्षितौ । न स्मरेत्क्षुत्तृडाद्यर्त्तिं नाप्युद्धरति कंटकं ॥८०॥ ईदृग्रसाया भगव-द्वाण्याः स्वाभाविकानिह । पंचत्रिंशतमित्याहु-र्गुणान् श्रीहेमसूरयः ॥८१॥

संस्कारवत्त्व १ मौदात्त्य २ मुपचारपरीतता ३ । मेघगंभीरघोषत्वं ४ प्रतिनादविधायिता ५ ॥ ८२ ॥ दक्षिणत्व ६ मुपनीत-रागत्वं च ७ महार्थता ८ । अव्याहतत्वं ९ शिष्टत्वं १० संशयानामसंभवः ११ ॥८३॥ निराकृतान्योत्तरत्वं १२ हृदयंगमतापि च १३ । मिथः साकांक्षता १४ प्रस्ता-वौचित्यं १५ तत्त्वनिष्ठता १६ ॥ ८४ ॥ अप्रकीर्णप्रसृतत्व १७ मस्वश्लाघान्यनिंदिता १८ । अभिजात्य १९ मतिस्निग्ध-मधुरत्वं २० प्रश-

---

एक पगलुं पण पृथ्वीपर आगळ भरे नहीं, क्षुधातृषादिकनी पीडाने संभारे नहीं अने कांटो काढवानुं पण विसरी जाय. (६७९-८०) आवा प्रकारना रसवाळी भगवंतनी वाणीना स्वाभाविक एवा ३५ गुण श्रीहेमचंद्राचार्य आ प्रमाणे कहे छे. (६८१)

१ संस्कारवाळी, २ उदात्त एटले उंचा स्वरवाळी , ३ उपचारवाळी, ४ मेघसरखा गंभीर नादवाळी, ५ पडछंदावाळी, ६ दक्षतावाळी, ७ प्रेम उत्पन्न करनारी, ८ विस्तृतार्थवाळी, ९ व्याघातविनानी, १० शिष्टतावाळी, ११ शंकाविनानी, १२ अन्यना उत्तरो आवी जाय तेवी, १३ हृदयने गमे तेवी, १४ पूर्वापर संबंधवाळी, १५ संगने अनुप्रसरती, १६ तत्त्वज्ञानवाळी, १७ छुटाछवाया विना एटले तुटक शब्दो न बोलाय तेवीरीते विस्तार पामे तेवी, १८ स्वश्लाघा ने परनिंदा विनानी, १९ कुलीनतावाळी, २० अत्यंत स्नेहाळ ने माधुर्यवाळी, २१ प्रसंसापात्र, २२ कोइना मर्मने आघात न करे तेवी, २३ गंभीर अर्थवाळी, २४ धर्म ने अर्थ साथे संबंधवाळी २५ कारकादिना विपर्यास विनानी २६ भ्रांतिआदिना अभाववाळी, २७ आश्चर्य पमाडनारी, २८ अद्भुत, २९ विलंब विनानी, ३० अनेक प्रकारनी विचित्रतावाळी, ३१ विशेषताना आरोपवाळी, ३२ सत्वगुणनी प्राधान्यतावाळी, ३३ वर्ण, पद ने वाक्यनी स्पष्टतावाळी, ३४ संबंधना उच्छेद विनानी, ३५ सांभळतां खेद न उपजे तेवी-आ ३५ वाणीना गुण छे.

आ ३५ वाणीना गुण भाषामां नीचे प्रमाणे कह्या छेः—१ जे जग्याए जे भाषानो प्रचार होय त्यां ते भाषामिश्र अर्धमागधी भाषा बोले. २ एक योजन प्रमाण समवसरणमां वगर हरकते संभळाय तेम उच्चस्वरे बोले. ३ गामडीआ भाषा के तोछडी भाषाना वपराश विना बोले. ४ मेघनी गर्जना सरखी गंभीर वाणीए बोले. ५ सांभळनारने पडछंदासह वचनरचनाना छुटा छुटा बोलो संभळाय ने सारी पेठे समजवामां आवे तेवी रीते बोले. ६ सांभळनारने संतोष उपजे तेवी सरल भाषामां बोले. ७ सांभळनार पोत-

स्यता २१ ॥ ८५ ॥ अमर्मवेदितो २२ दार्थ २३ धर्मार्थप्रतिबद्धता २४ । कारकाद्यविपर्यासो २५ विभ्रमादिवियुक्तता २६ ॥ ८६ ॥ चित्रकृत्त्व २७ मद्भुतत्वं २८ तथानतिविलंबिता २९ । अनेकजातिवैचित्र्य ३० मारोपितविशेषता ३१ ॥ ८७ ॥ सत्वप्रधानता ३२ वर्ण–पदवाक्यविविक्तता ३३ । अव्युच्छित्ति ३४ रखेदित्वं ३५ पंचत्रिंशच्च वाग्गुणाः ॥ ८८ ॥

पोताना हृदयमां एवुं समजे के प्रभु मने उद्देशीने ज देशना आपे छे एवी छटाथी बोले. ८ विस्तार सहित अर्थनी पुष्टियुक्त बोले. ९ आगळ पाछळना संबंधमां बांधो न आवे तेवा मळतेमळता प्रबंधनी रचनायुक्त बोले. १० मोटा पुरुषने छाजे तेवा प्रशंसनीय वाक्यो बोले तेम ज अप्रतिहत सिद्धांतो प्रकाशे. ११ सांभळनारने शंका न पडे तेवी स्पष्ट वाणी बोले. १२ कोइपण दूषण लागु थइ न शके तेवुं निर्दूषण व्याख्यान करे. १३ कठिन अने सूक्ष्म विचारवाळा विषयोने पण सांभळनार तरत समजी शके एवी सरल भाषामां प्रकाशे. १४ जे जग्याए जेवुं दृष्टांत के सिद्धांत योग्य ने रुचिकर लागे तेवुं ज प्ररूपे. १५ षड्द्रव्य ने नवतत्त्वनी पुष्टिरूप अपेक्षा सहित बोले. १६ संबंध, प्रयोजन ने अधिकारीवाळुं वाक्य बोले. १७ पदरचनानी अपेक्षायुक्त बोले. १८ षड्द्रव्य ने नवतत्त्वनुं स्वरूप चातुर्य साथे समजावे. १९ स्निग्ध ने माधुर्यता सहित घी गोळ करतां पण वधारे स्वादिष्ट लागे तेवी वाणी वापरे. २० परना मर्म न खुले तेवी चतुराइथी बोले. २१ धर्म अर्थ प्रतिबद्ध बोले. २२ दीपकना प्रकाशतुल्य प्रकाशवंत अर्थ प्रकाशे. २३ परनिंदा ने आत्मप्रशंसा रहित वाणी वदे. २४ उपदेश देनार सर्वगुणसंपन्न छे, एवी प्रतीति थाय तेवां प्रमाणिक वाक्य बोले. २५ कर्त्ता–कर्म–क्रिया–लिंग–कारक–काळ अने विभक्तियुक्त बोले. २६ श्रोताने आश्चर्य उत्पन्न थाय ने हर्ष वधे तेवुं बोले. २७ घणी धीरजथी वर्णन करी बतावे. २८ अविच्छिन्न मेघधारा समान चालु प्रवाहयुक्त बोले. २९ भ्रांति उपजवा ज न पामे तेवुं निर्भ्रांत वचन वदे. ३० देव, मनुष्य अने पशु–पक्षी विगेरे पोतपोतानी भाषामां समजी शके तेवी भाषामां बोले. ३१ शिष्यगणनो बुद्धिगुण वधे तेवी वाणी वदे. ३२ पदना अर्थने अनेकपणे आरोपण करीने बोले. ३३ साहसिकपणे बोले. ३४ पुनरुक्ति रहित बोले अने ३५ कोइनुं मन किंचित् पण न दुभाय तेवी रीते बोले. इति.

(उपर जणावेला ३५ संस्कृत शब्दोमांथी घणानो (प्राये बधानो) भावार्थ आमां आवी जाय छे. आ हकीकत श्रीपाळरासना अर्थमांथी ग्रहण करी छे. तेथी उपरना मूळ ग्रंथना पदोनो जे अनुक्रम छे ते अनुक्रम प्रमाणे आ अर्थनो अनुक्रम नथी. आगळपाछळ आवेल छे.)

अथार्हन्नीदृशा वाण्या धर्मं पंचमहाव्रतं । साधूनां श्रावकाणां च दिशति द्वादशव्रतं ॥ ८९ ॥ अहिंसासुनृतास्तेय–ब्रह्मचर्यापरिग्रहाः । महाव्रतानि पंचेति निर्ग्रंथानां महात्मनां ॥ ९० ॥ केचित्कालविशेषेण चत्वार्येवादिशंति च । महाव्रतानि स्त्रीत्याग–संग्रहो ह्यपरिग्रहे ॥ ९१ ॥ अणुव्रतानि पंचादौ त्रीणि गुणव्रतानि च । शिक्षाव्रतानि चत्वारि व्रतानि गृहिणामिति ॥ ९२ ॥

संकल्प्य त्रसजीवानां निरपेक्षान्निरागसां । प्राणघातान्निवृत्तिर्या प्रथमं तदणुव्रतं ॥ ९३ ॥ कन्यागोभूम्यलीकेभ्यो न्यासापहरणाच्च या । निवृत्तिः कूटसाक्ष्याच्च द्वितीयं तदणुव्रतं ॥ ९४ ॥ संधिग्रंथ्यादिभेदाद्यै राजनिग्रहकारि यत् । चौर्यं तस्मान्निवृत्तिर्या तृतीयं तदणुव्रतं ॥ ९५ ॥ स्वदारैरेव संतुष्टिः स्वीकृतैर्जनसाक्षिकं । निवृत्तिर्वान्यदारेभ्य–श्चतुर्थं तदणुव्रतं ॥ ९६ ॥ परिग्रहस्य सत्तेच्छा–परिमाणान्नियंत्रणा । परिग्रहपरीमाणं पंचमं तदणुव्रतं ॥ ९७ ॥ सीमा नोल्लंघ्यते यत्र कृता दिक्षु दशस्वपि । ख्यातं दिक्परिमाणाख्यं प्रथमं तद्गुणव्रतं ॥९८॥ भोगोपभोगद्रव्याणां

अरिहंतो उपर जणावी तेवी वाणीवडे साधुनो पांच महाव्रतरूप धर्म अने श्रावकोनो बारव्रतरूप धर्म उपदिशे. (६८९) अहिंसा, सुनृत, अस्तेय, ब्रह्मचर्य ने अपरिग्रह–आ पांच निर्ग्रंथ महात्माना महाव्रतो छे. (६९०) कोइ काळविशेषने लीधे बावीश तीर्थंकरो स्त्रीत्यागनो संग्रह अपरिग्रहमां करीने चार महाव्रतोने ज प्ररूपे छे. (६९१) श्रावकना पांच अणुव्रत, त्रण गुणव्रत ने चार शिक्षाव्रत–एम बार व्रतो कहे छे. (६९२)

निरपराधी एवा त्रस जीवोनी निरपेक्षपणे संकल्पथी हिंसा न करवी ते श्रावकनुं पहेलुं अणुव्रत छे. (६९३) कन्या, गो ने भूमिसंबंधी असत्य न बोलवुं, थापण न ओळववी ने खोटी साक्षी न पूरवी ए बीजुं अणुव्रत छे. (६९४) संधि, ग्रंथि विगेरेनो भेद करवो विगेरे राज्यदंड उपजे तेवी चोरी न करवी ते त्रीजुं अणुव्रत छे. (६९५) जनसाक्षीए स्वीकारेली स्वदारावडे ज संतुष्ट रहेवुं अथवा परदारानो त्याग करवो ए चोथुं अणुव्रत छे. (६९६) छता परिग्रहनुं अथवा इच्छानुं परिमाण करवावडे जे नियंत्रणा करवी ते परिग्रहपरिमाणरूप पांचमुं अणुव्रत छे. (६९७) दशे दिशामां परिमाण बांधेली दिशानी सीमानुं उल्लंघन न करवुं ते दिग्परिमाण नामनुं पहेलुं गुणव्रत छे. (६९८) भोग ने उपभोगना द्रव्योनुं जन्मपर्यंतने माटे अने रोजने माटे जे प्रमाण

मानमाजन्म चान्वहं । क्रियते यत्र तद्भोगो–पभोगविरतिर्व्रतं ॥ ९९ ॥ तत्र च–सकृदेव भुज्यते यः स भोगोऽन्नस्रगादिकः । पुनः पुनः पुनर्भोग्य उपभोगोंगनादिकः ॥ ७०० ॥ द्वाविंशतेरभक्ष्याणा–मनंतकायिनामपि । यावज्जीवं परीहारः कीर्त्त्यतेऽस्मिन् व्रते जिनैः ॥ ७०१ ॥

तथाहुः– पंचुंबरि चउविगई ९ हिम १० विस ११ करगा १२ य सव्वमट्टीय १३ । रयणीभोअणगं चिय १४ बहुबीअं १५ अणंत १६ संधाणं १७ ॥ २ ॥ घोलवडां १८ वायंगण १९ अमुणियनामाणि फुल्लफलयाणि २० । तुच्छफलं २१ चलिअरसं २२ वज्जेह अभक्ख बावीसं ॥३॥

उदुंबरवटप्लक्ष–काकोदुंबरशाखिनां । पिप्पलस्य चेत्यभक्ष्य–मार्याणां फलपंचकं ॥४॥ मद्यं १ मांसं २ नवनीतं क्षौद्रं चेति ४ चतुष्टयं । विकृतीनामभक्ष्यं स्या–च्छ्रद्धालूनां शुभात्मनां ॥ ५ ॥ द्विदलान्नं पर्युषितं शाकपूपादिकं च यत् । दध्यहर्द्वितयातीतं क्वथितान्नफलादिकं ॥ ६ ॥ वर्षासु पक्षात्परतः शीततौं मासतः परं । पक्वान्नं विंशतिदिना–तिक्रमे

करवुं ते भोगोपभोगविरति नामे बीजुं गुणव्रत छे. (६९९) तेमां जे एक वार भोगमां आवे तेवा अन्न ने पुष्पमाळा विगेरे ते भोग कहीए अने वारंवार भोगमां आवे तेवा अंगना (स्त्री) विगेरे उपभोग कहीए. (७००) आ व्रतमां बावीश अभक्ष्योनो अने अनंतकायोनो पण यावज्जीव परिहार करवानुं श्रीजिनेश्वरोए कह्युं छे. (७०१)

बावीश अभक्ष्य आ प्रमाणे–पांच उंबरा विगेरेना त्रसजीवाकुळ फळो, चार महाविगय (मध, मदिरा, मांस ने माखण) ए ९. हीम १०, विष ११, करा १२, सर्व जातनी माटी १३, रात्रिभोजन १४, बहुबीज १५, अनंतकाय १६, संधान (बोळ-अथाणुं) १७, घोळवडां १८, वेंगण १९, अज्ञातफळ ने फुल २०, तुच्छफळ २१ ने चलितरस २२. आ २२ अभक्ष्य वर्जवा. (७०२–३)

हवे बावीश अभक्ष्यमांथी केटलाकनुं वर्णन करे छेः—उदुंबर, वड, प्लक्ष, काकोदुंबर अने पिप्पळ–आ पांच वृक्षना फळो, ते फळपंचक आर्यजनोने खावालायक नथी. (७०४) मद्य, मांस, नवनीत ने मध–आ चार विकृति (विगय) छे ते श्रद्धालु एवा शुभात्माने अभक्ष्य छे. (७०५) हवे चलितरस बतावे छे–द्विदळान्न (जेमां अंकुरा उगी जाय छे ते), वासी एवा शाक, पुडला विगेरे, बे दिवस व्यतीत थएलुं दहीं, कोही गयेल अन्न ने फळ विगेरे, वर्षाऋतुमां १५ दिवस उपरांत, शीततुर्मां एक महीना उप-

ग्रीष्म एव च ॥७॥ इत्याद्यभक्ष्यं चलित–रसमुक्तं जिनेश्वरैः। द्वींद्रियत्र-सजीवानां यदुत्पत्तिर्भवेदिह ॥८॥ शेषाण्यभक्ष्याणि प्रतीतानि। अनंतकायनामानि प्रागुक्तान्येव.

पापोपदेशो विविधः १ पापोपकरणार्पणं २। आर्त्तरौद्राभिधे ध्याने ३ प्रमादाचरणं ४ तथा ॥ ९ ॥ चतुर्भेदादित्यनर्थ–दंडाद्यद्विनिवर्त्तनं। श्रावकाणां तदाख्यातं तार्त्तीयीकं गुणव्रतं॥१०॥ विषयाश्च कषायाश्च निद्रा च विकथापि च। मद्यं चेति परित्याज्याः प्रमादाः पंच सात्त्विकैः ॥११॥ राज्ञां स्त्रीणां च देशानां भक्तानां विविधाः कथाः। संग्राम १ रूप २ सद्व-स्तु ३–स्वादा ४ द्या विकथाः स्मृताः ॥ १२ ॥

मुहूर्त्तावधि सावद्य–व्यापारपरिवर्जनं। आद्यं शिक्षाव्रतं सामा-यिकं स्यात्समताजुषां ॥ १३ ॥ देशावकाशिकं नाम दिक्संक्षेपो दिनं प्रति। चतुर्दशानां संक्षेपो नियमानामुतान्वहं ॥ १४ ॥ ते चामी–स-चित्त १ दव्व २ विगई ३ वाणह ४ तंबोल ५ वत्थ ६ कुसुमेसु ७। वाहण

रांत अने ग्रीष्मऋतुमां २० दिवस उपरांत–पक्वान्न इत्यादि चलितरस कहेवाय छे. तेने जिनेश्वरोए अभक्ष्य कहेल छे; कारण के तेमां द्वींद्रियत्रसजीवोनी उत्पत्ति थाय छे. (७०६–८) बाकीना अभक्ष्यो प्रसिद्ध छे. अनंतकायना नामो पूर्वे कहेला छे. इति सप्तमव्रत.

विविध पापोपदेश, पापोपकरणनुं अर्पण, आर्त्त–रौद्रध्यान ने प्रमादाचरण–आ चार प्रकारना अनर्थदंडथी विरमवुं ते श्रावकनुं त्रीजुं गुणव्रत कह्युं छे. (७०९–१०) मद्य, विषय, कषाय, निद्रा अने विकथा ए पांच प्रमादो सात्विक मनुष्योए तजवा. (७११) राजकथा, स्त्रीकथा, देशकथा अने भक्त (भोजन) कथा आ चार प्रकारनी विविधकथा तेम ज संग्रामकथा, रूपकथा, सद्वस्तुकथा ने स्वादकथा विगेरे पण विकथाओ कहेली छे. अथवा तो राजानी संग्रामकथा, स्त्रीनी रूपकथा, देशमां रहेली जूदी जूदी वस्तुओनी कथा अने भोजननी शुभाशुभ स्वादुपणानी कथा आ प्रमाणे समजवुं. (७१२)

एक मुहूर्त्त (बे घडी) पर्यंत सावद्य व्यापारनुं वर्जन ते समतायुक्त जीवोने माटे सामायिक नामनुं पहेलुं शिक्षाव्रत कह्युं छे. (७१३) देशावगाशिकनामनुं बीजुं शिक्षा-व्रत छे, तेमां दररोज दिशानो संक्षेप करवामां आवे छे तेम ज चौद नियमोनो पण संक्षेप करवामां आवे छे. (७१४) ते चौद नियम आ प्रमाणे–सचित्त, द्रव्य, विगइ

सयण ९ विलेवण १०–बंभ ११ दिसि १२ न्हाण १३ भत्तेसु १४ ॥१५॥

पोषं धर्मस्य धत्ते य–त्तद्भवेत्पौषधव्रतं । आहार १ देहसत्कारा २–ब्रह्म ३ व्यापार ४ वर्जनं ॥ १६ ॥ चतुर्विधः स्यादाहारो–ऽशनं तत्रौदनादिकं । पानं सुराखिलं चांबु सौवीरप्रभृतीन्यपि ॥ १७ ॥ खादिमं भृष्टधान्यानि द्राक्षादीनि फलान्यपि । स्वादिमं तु लवंगैला–पूगजातीफलादिकं ॥ १८ ॥ कृते चतुर्विधाहार –त्याग आहारपौषधः । सर्वतः स्यान्निर्विकृतया चामाम्लादौ तु देशतः ॥ १९ ॥ एवमन्येऽपि त्रयः स्युर्देशसर्वत्वयोर्द्विधा । आद्य एव हि भेदे त–द्व्यवहारस्तु सांप्रतं ॥ २० ॥

सदा क्वचिद्वा दिवसे साधूनां दानपूर्वकं । भुज्यते यत्तदतिथि–संविभागाभिधं व्रतं ॥ २१ ॥ महाव्रतापेक्षयाद्य–पंचव्रत्यां मताणुता । तद्गुणाधायकत्वेन गुणता चोत्तरत्रये ॥ २२ ॥ मुहुर्गुर्वादिशिक्षाव–त्क्षिपेव्यानि यथोचितं । शिक्षाव्रतत्वमंत्येषु चतुर्ष्विति मतं जिनैः ॥ २३ ॥ अन्यत्र

उपानह, तंबोळ, वस्त्र, कुसुम, वाहन, शयन, विलेपन, ब्रह्मचर्य, दिशि, स्नान, भात-पाणी (आहार) (७१५)

धर्मने जे पोषण करे ते पौषध कहीए, ते चार प्रकारे छे—आहारपोसह, देहसत्कार-पोसह, ब्रह्मचर्यपोसह ने अव्यापार पोसह. (७१६) आहारना चार प्रकारमां अशन ते ओदनादिक, पानशब्दे सुरा, सर्व जातना पाणी अने सौवीर विगेरे, (७१७) खादिम ते पकवेला धान्यो, पकवानो तथा द्राक्षादिक फळो अने स्वादिम ते लविंग, एलची, सोपारी, जायफळ विगेरे. (७१८) आ चारे प्रकारना आहारनो त्याग कर्ये सते सर्वथी आहार पौषध अने आयंबिल, नीवी विगेरे करवा ते देशथी आहारपोसह–(७१९) ए प्रमाणे बीजा त्रणे पोसह पण सर्वथी ने देशथी एम बे प्रकारे छे; परंतु हाल व्यवहार आहारपोसह ज देशथी ने सर्वथी करवानो छे. बीजा त्रणे पोसह सर्वथी ज कराय छे. (आ त्रीजुं शिक्षाव्रत छे.) (७२०)

दररोज अथवा कोइ दिवसे साधुने दानदेवापूर्वक भोजन करवुं ते अतिथिसंविभाग नामनुं चोथुं शिक्षाव्रत छे. (७२१) महाव्रतोनी अपेक्षाए आद्यना पांच व्रतोमां व्रतोनी अणुता छे अने ते व्रतोमां गुणोना आधायक (स्थापन करनार) होवाथी त्यारपछीना त्रण गुणव्रत कहेवाय छे. (७२२) गुरुमहाराजनी शिक्षा (शिखामण)नी जेम यथोचितपणे वारंवार सेवन करवा योग्य होवाथी छेल्ला चारने जिनेश्वरोए शिक्षाव्रत कह्या छे.

तु अंत्यानि सप्तापि शिक्षाव्रतान्युच्यंते. तथोक्तं–'पंचाणुवइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं' इत्यादि विपाकसूत्रे सुबाहूवधिकारे।

तथा–तत्त्वानि सप्त नव वा धर्माद्यर्थांश्चतुर्विधान्। दानादिकं चतुर्द्धा च धर्ममादिशति प्रभुः॥ २४॥ तथोक्तं–दानशीलतपोभावभेदाद्धर्मं चतुर्विधं। मन्ये युगपदाख्यातुं चतुर्वक्त्रोऽभवद्भवान्॥२५॥ यथा-सुमंतो बध्यंते मुच्यंतेऽपि च कर्मभिः। यथा च यांति निर्वाणं स्वामी सर्वं तथादिशेत्॥ २६॥ यथादिशति पूर्णस्य तुच्छस्यापि तथैव सः। निःस्पृहः समचित्तश्च चक्रवर्त्तिदरिद्रयोः॥ २७॥ पूर्णतुच्छस्वरूपं चैवमाचारांगवृत्तौ–ज्ञानैश्वर्यधनोपेतो जात्यन्वयबलान्वितः। तेजस्वी मतिमान् ख्यातः पूर्णस्तुच्छो विपर्ययात्॥ २८॥ स्वयं कृतार्थोऽप्यन्येषां हितार्थं धर्ममादिशन्। लोकेषु षड्विधेष्वेष उत्तमोत्तम उच्यते॥ २९॥ तथाहुः श्रीउमास्वातिवाचकपादाः—

कर्माहितमिह चामुत्र चाधमतमो नरः समारभते। इह फलमेव

---

(७२३) अन्यत्र पाछला सातेने शिक्षाव्रत कह्यां छे. तथोक्तं–पांच अणुव्रत अने सात शिक्षाव्रत एम बार प्रकारना थाय छे इत्यादि विपाकसूत्रमां सुबाहुना अधिकारमां कह्युं छे.

आ प्रमाणे श्रावकना बार व्रतोनुं स्वरूप प्रभु कहे छे, उपरांत सात अथवा नव तत्त्वो, धर्मादि चार अर्थो अने दानादिक चार प्रकारनो धर्म प्रभु उपदिशे छे. (७२४) ते विषे कह्युं छे के–" हे प्रभु! दान, शीळ, तप अने भाव ए चार प्रकारना धर्म एक साथे कहेवाने माटे ज आप चार मुखवाळा थयाछो एम हुं मानुं छुं. (७२५) वळी जेवी रीते प्राणी कर्मथी बंधाय छे, जेवी रीते कर्मोथी मूकाय छे अने जेवी रीते जीव निर्वाण पामे छे ते सर्व ते रीते ज प्रभु कहे छे. (७२६) चक्रवर्ती ने दरिद्रीमां समचित्त एवा अने निःस्पृह एवा प्रभु जेवी रीते पूर्णने कहे छे तेवी रीते तुच्छने–अपूर्णने पण उपदेश आपे छे. (७२७)" पूर्ण ने तुच्छनुं स्वरूप श्री आचारांगवृत्तिमां आ प्रमाणे कह्युं छे–ज्ञान, ऐश्वर्य अने धनवाळो, जाति कुळ ने बळयुक्त, तेजस्वी अने बुद्धिमान तेने पूर्ण कहेल छे; अने तेथी विपर्ययवाळाने तुच्छ कहेल छे. (७२८) तीर्थंकर पोते कृतार्थ होवा छतां पण अन्यना हितने माटे धर्मोपदेश आपे छे; कारण के छ प्रकारना मनुष्योमां प्रभु उत्तमोत्तम कहेवाय छे. (७२९) तथाहुः श्री उमास्वातिवाचकपादाः

आ भवमां अने परभवमां अहितनी प्राप्ति माटे ज अधमतर नर कोइ पण कार्य

त्वधमो विमध्यमस्तूभयफलार्थं ॥ ३० ॥ परलोकहितायैव प्रवर्त्तते मध्यमः क्रियासु सदा । मोक्षायैव तु घटते विशिष्टमतिरुत्तमः पुरुषः ॥ ३१ ॥ यस्तु कृतार्थोऽप्युत्तम–मवाप्य धर्मं परेभ्य उपदिशति । नित्यं स उत्तमेभ्यो–ऽप्युत्तम इति पूज्यतम एव ॥ ३२ ॥ तस्मादर्हति पूजामर्हन्नेवोत्तमोत्तमो लोके । देवर्षिनरेंद्रेभ्यः पूज्येभ्योऽप्यन्यसत्वानां ॥ ३३ ॥ कदापि निष्फला नैषां देशना जायतेऽर्हतां । लाभाभावेऽमूढलक्ष्याः प्रवर्त्तेरन्न ते यतः ॥ ३४ ॥

सामायिकं स्यात्सम्यक्त्वं श्रुतसामायिकं तथा । सामायिके द्वे विरती देशतः सर्वतोऽपि ये ॥ ३५ ॥ सामायिकस्वरूपं चैवमाहुः— सावज्जजोगविरओ तिगुत्तो छसु संजओ । उवउत्तो जयमाणो आया सामाइयं होइ ॥ ३६ ॥ जो समो सव्वभूएसु तसेसु थावरेसु य । तस्स सामाइयं होइ इइ केवलिभासिअं ॥ ३७ ॥ सामायिकानि चत्वारि त्रीणि द्वे एकमेव वा । निश्चयात्प्रतिपद्यंते नरतिर्यक्सुधाशिषु

आरंभे छे. अधम नर आ भवनां सुखने माटे ज आरंभे छे. विमध्यम उभय लोकना फळने माटे आरंभे छे, मध्यम परलोकना हितने माटे ज सदा क्रियामां प्रवृत्ति करे छे, विशिष्टमतिवाळो उत्तम पुरुष मोक्षने माटे ज उद्यम करे छे अने जे कृतार्थ थयेल उत्तम पुरुष पोते उत्तम धर्मने प्राप्त कर्या छतां पण परना हितने माटे धर्मोपदेश करे छे, ते उत्तममां पण उत्तम होवाथी पूज्यतम छे. (७३०–३२) आ प्रमाणे होवाथी ज लोकमां उत्तमोत्तम एवा अरिहंत ज अन्य प्राणीओने पूज्य एवा पण देव, मुनि ने नरेंद्रोथी पण अत्यंत पूजा करवायोग्य छे–पूजनीय छे. (७३३) ए परमात्मानी देशना क्यारे पण निष्फळ जती नथी; कारण के अमूढलक्ष्य एवा मनुष्य लाभना अभावमां प्रवृत्ति करता ज नथी. (७३४)

सामायिक चार प्रकारे छे–१ सम्यक्त्वसामायिक, २ श्रुतसामायिक, ३ देशविरतिसामायिक ने ४ सर्वविरतिसामायिक. (७३५) सामायिकनुं स्वरूप आ प्रमाणे कह्युं छे, सावद्य योगथी विरत, त्रण गुप्तिए गुप्त, षट् कायमां अथवा पांच इंद्रिय ने मन ए छमां संयत अने उपयोगपूर्वक जयणा साथे प्रवृत्ति करतो आत्मा ज सामायिक थाय छे. (७३६) जे त्रस ने स्थावर सर्व जीवोमां समान भाववाळा छे. तेने सामायिक होय छे, एम केवलीए कह्युं छे. (७३७) उपर कहेला चार प्रकारना सामायिकमांथी चार, त्रण, बे ने एक

॥ ३८ ॥ चत्वारि प्रतिपद्यंते नरा एत्रादितस्त्रयं । तिर्यंचस्त्वमराश्च द्वे अंतिमासंभवात्क्रमात् ॥ ३९ ॥ पूर्वं प्रपन्नसम्यक्त्वो देशतः सर्वतोऽथवा । विरतिं चेल्लभेत स्या-त्तदा ह्येकातिसंभवः ॥ ४० ॥ सामायिकस्य कस्यापि प्रतिपत्ता भवेन्न चेत् । नृषु तिर्यक्षु वा कश्चि-त्तदावश्यं सुधाशिषु ॥ ४१ ॥ कश्चित्प्रक्षीणसम्यक्त्वः सम्यक्त्वं प्रतिपद्यते । अर्हद्गिरामवंध्यत्वा-दसंख्यत्वाच्च नाकिनां ॥ ४२ ॥

तत्र ये सर्वविरतिं प्रपद्यंते नराः स्त्रियः । प्रव्राजयति तान्नाथः शिक्षयन् सकलं विधिं ॥ ४३ ॥ गंतव्यमेवं स्थातव्यं भोक्तव्यं विधिनामुना । वक्तव्यं भाषयैवं च यथा धर्मो न सीदति ॥ ४४ ॥ याश्च चारित्रपुत्रस्य मातरोऽष्टौ भवंत्यमूः । सम्यगाराधनीयास्ता मोक्षाकांक्षिमुमुक्षुभिः ॥४५॥ युगमात्रावलोकिन्या दृष्ट्या सूर्यांशुभासितं । विलोक्य मार्गं गंतव्य-मितीर्यासमितिर्भवेत् ॥ ४६ ॥ हितं यत्सर्वजीवानां

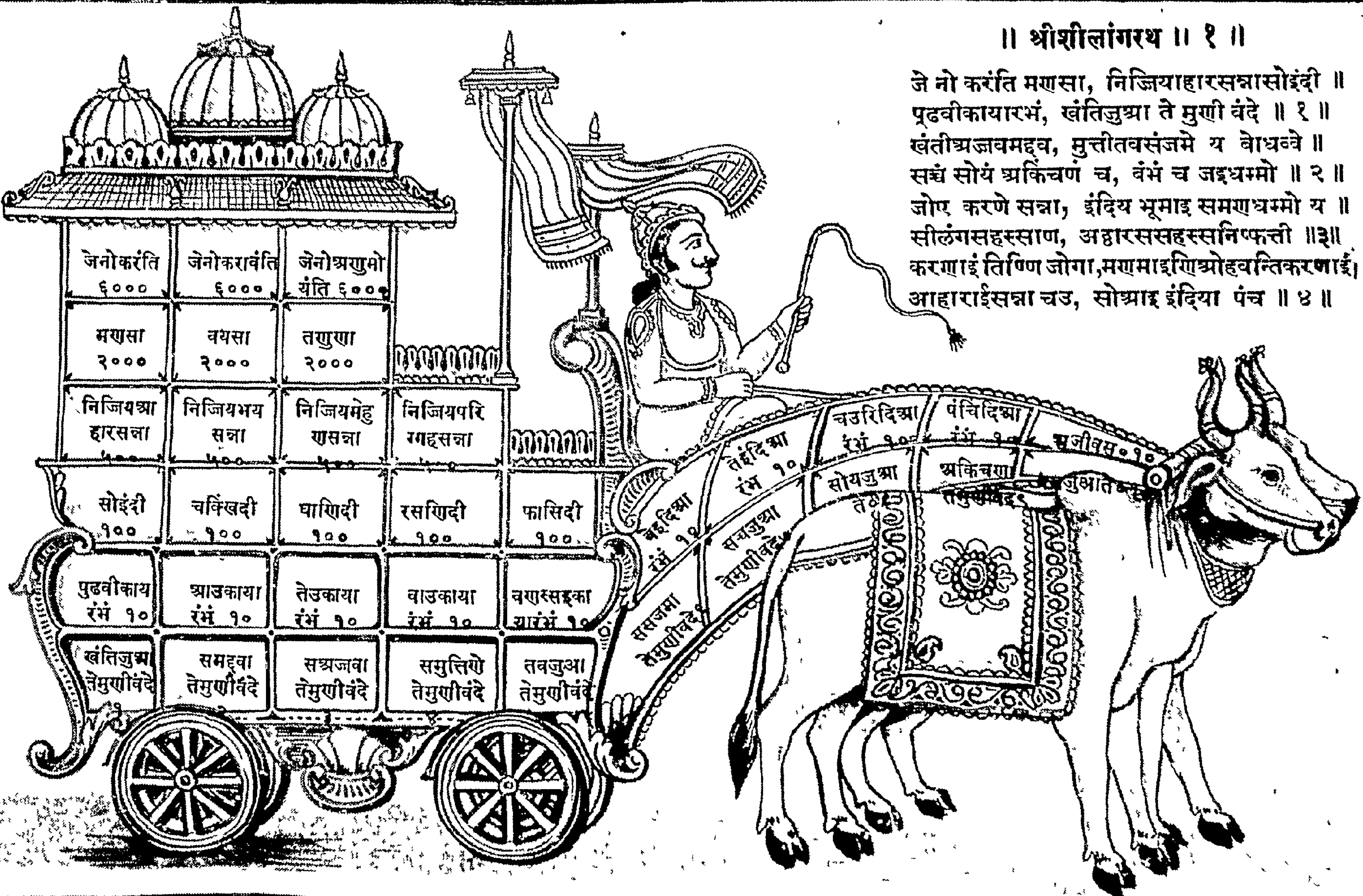
निश्चयथी मनुष्य, तिर्यंच ने देवगतिमां पामी शकाय छे. (७३८) मनुष्य चारे सामायिक प्राप्त करे छे. प्रथमना त्रण सामायिक तिर्यंचो प्राप्त करे छे अने देवो (उपलक्षणथी नारकी जीवो) प्रथमना बे प्राप्त करे छे. अनुक्रमे पाछलानो तेमां असंभव छे. (७३९) पूर्वभवे जेणे सम्यक्त्व प्राप्त कर्युं छे एवो जीव आ भवमां सर्वविरति के देशविरति प्राप्त करे त्यारे एक सामायिक प्राप्त करे एम समजवुं. (७४०) जो कोइ पण सामायिकनो प्रतिपत्ता मनुष्यमां के तिर्यंचमां (प्रभुनी देशनावडे) कोइ पण न होय तो देवगतिमां तो जरूर प्रतिपत्ता होय. (७४१) कारण के—अरिहंतनी वाणी अवंध्य होवाथी अने देवोनुं असंख्यपणुं होवाथी (भगवंतनी वाणीवडे) कोइ प्रक्षीणसम्यक्त्वी देव फरीने सम्यक्त्व पामे छे. (७४२)

तेमां जे पुरुषो अने स्त्रीओ सर्वविरतिने अंगीकार करे छे तेओने भगवान चारित्रना सर्व विधिने शिखवीने प्रव्रज्या आपे छे. (७४३) ते विधि कहे छे—आ प्रमाणे चालवुं, आ प्रमाणे उभा रहेवुं, आ विधिए आहार करवो, आवी भाषावडे बोलवुं के जेथी धर्म सीदाय नहीं. (७४४) तथा वळी चारित्रपुत्रनी जे आठ माताओ छे तेने मोक्षाकांक्षी मनुष्योए सम्यग् प्रकारे आराधवी. (७४५) ते आठ माता आ प्रमाणे—सूर्यना किरणोवडे प्रकाशित मार्गने युगमात्र (चार हाथ) प्रमाण जोनारी दृष्टिवडे जे जोइने चालवुं ते ईर्यासमिति छे. (७४६) सर्व जीवोने हितकारी, निरवद्य अने मित-प्रमाणो-

निरवद्यं मितं वचः । तद्धर्महेतोर्वक्तव्यं भाषासमितिरित्यसौ ॥ ४७ ॥ तदुक्तं–सत्यं ब्रूयात्प्रियं ब्रूया–न्न ब्रूयात्सत्यमप्रियं । प्रियं च नानृतं ब्रूया–त्सा भाषासमितिर्भवेत् (देष धर्मः सनातनः) ॥ ४८ ॥ सप्तचत्वारिंशता य–दोषैरशनमुज्झितं । भोक्तव्यं धर्मयात्रायै सैषणासमितिर्भवेत् ॥ ४९ ॥ ग्राह्यं मोच्यं च धर्मोप–करणं प्रत्युपेक्ष्य यत् । प्रमार्ज्य चेयमादान–निक्षेपसमितिः स्मृता ॥ ५० ॥ निर्जीवेऽशुषिरे देशे प्रत्युपेक्ष्य प्रमार्ज्य च । यत्त्यागो मलमूत्रादेः सोत्सर्गसमितिः स्मृता ॥ ५१ ॥ कल्पनाजालनिर्मुक्तं समभावेन पावनं । मुनीनां यन्मनः स्थैर्यं मनोगुप्तिर्भवत्यसौ ॥ ५२ ॥ मौनावलंबनं साधोः संज्ञादिपरिहारतः । वाग्वृत्तेर्वा निरोधो यः सा वाग्गुप्तिरिहोदिता ॥ ५३ ॥ स्थितस्य कायोत्सर्गादा–वुपसर्गजुषोऽपि यत् । स्थैर्यं धैर्येण कायस्य कायगुप्तिरियं मता ॥ ५४ ॥ शय्यासनोर्ध्वस्थानादौ कायचेष्टा नियम्यते । साधुभिर्धर्मबुद्ध्या य–त्कायगुप्तिस्तु साऽपरा ॥५५॥ एता एव द्वादशांग्याः सारो धर्मस्य साधनं । ततो युष्मा-

---

पेत जे वचन होय ते ज सद्धर्मना हेतुए बोलवुं ते भाषासमिति छे. (७४७) तदुक्तं— ' सत्य बोलवुं, प्रिय बोलवुं, अप्रिय एवुं सत्य न बोलवुं, तेम ज प्रिय एवुं असत्य न बोलवुं. आ भाषासमिति कहेवाय छे. (आ सनातन धर्म छे,) (७४८) ४७ दोष रहित अन्न जे संयमना निर्वाह माटे ज भोगववुं (खावुं) ते एषणासमिति छे. (७४९) जोइने अने प्रमार्जीने धर्मना उपकरणो लेवा अने मूकवा तेने आदाननिक्षेप–समिति कही छे. (७५०) निर्जीव अने पोलाण विनानी जमीनपर जोइने अने प्रमार्जीने मळमूत्रादिनो त्याग करवो ते उत्सर्गसमिति कही छे. (७५१) कल्पनाजाळरहित अने समभावथी पवित्र एवुं मुनिना मननुं जे स्थैर्य ते मनोगुप्ति समजवी. (७५२) मुनिए संज्ञादिकना पण परिहार युक्त मौनपणानुं आलंबन करवुं अथवा वाग्वृत्तिनो निरोध करवो तेने अहीं वचनगुप्ति कहेली छे. (७५३) कायोत्सर्गादिमां स्थित रहेलाने उपसर्गादि थतां पण कायानी जे स्थिरता धैर्यवडे राखवी ते कायगुप्ति कहेवाय छे. (७५४) शय्यामां बेसतां के उभा रहेतां साधुए धर्मबुद्धिवडे जे कायचेष्टाने नियममां राखवी ते बीजी रीते कायगुप्ति कहेवाय छे. (७५५) आ आठ माताओ ज द्वादशांगीना सारभूत ने धर्मना साधनभूत छे, माटे तमारे वारंवार एना आराधनमां यत्न


॥ श्रीशीलांगरथ ॥ १ ॥
जे नो करंति मणसा, निज्जियाहारसन्नासोइंदी ॥
पूढवीकायारभं, खंतिजुआ ते मुणी वंदे ॥ १ ॥
खंतीअज्जवमद्दव, मुत्तीतवसंजमे य बोधव्वे ॥
सच्चं सोयं अकिंचणं च, बंभं च जइधम्मो ॥ २ ॥
जोए करणे सन्ना, इंदिय भूमाइ समणधम्मो य ॥
सीलंगसहस्साण, अट्ठारससहस्सनिप्फत्ती ॥३॥
करणाइं तिण्णि जोगा, मणमाइणिओहवन्तिकरणाइं।
आहाराईसन्ना चउ, सोआइ इंदिया पंच ॥ ४ ॥
जेनोकरंति ६०००
जेनोकरावंति ६०००
मणसा २०००
वयसा २०००
तणुणा २०००
निजियआहारसन्ना
निजियभय सन्ना
निजियमेहुणसन्ना
निजियपरिग्गहसन्ना
सोइंदी १००
चक्खिंदी १००
घाणिंदी १००
रसणिंदी १००
फासिंदी १००
पुढवीकाय रंभं १०
आउकाया रंभं १०
तेउकाया रंभं १०
वाउकाया रंभं १०
खंतिजुआ तेमुणीवंदे
समद्दवा तेमुणीवंदे
सअजवा तेमुणीवंदे
समुत्तिणे तेमुणीवंदे
तवजुआ तेमुणीवंदे
चउरिंदिआ
पंचिंदिआ
सोयजुआ
अकिंचणा

भिरेतासु यत्नः कार्यो मुहुर्मुहुः ॥ ५६ ॥ आदिश्यैवं साधुसाध्वी–श्रावक-श्राविका इति । प्रभुश्चतुर्विधं संघं स्थापयेत्तीर्थमद्भुतं ॥ ५७ ॥

तत्र च–साधवः स्युः पात्रगुच्छ–रजोहरणधारिणः । येऽष्टादशसहस्राणि शीलांगानां च बिभ्रते ॥ ५८ ॥ तानि चैवमाहुः–जे नो करिंति मणसा निज्जिअआहारसन्नसोइंदी । पुढविक्कायारंभं खंतिजुआ ते मुणी वंदे ॥ ५९ ॥ करणं कारणं चानु–मतिर्योगत्रयं तथा । आहाराद्याश्चतस्रश्च संज्ञाः पंचेंद्रियाणि च ॥ ६० ॥ पृथ्व्यंबुवह्निमरुता–मारंभाः स्युर्वनस्पतेः । द्वित्रिचतुःपंचखाना–मजीवस्येत्यमी दश ॥ ६१ ॥ क्षमार्जवं मार्दवं च मुक्तिस्तपश्च संयमः । साधोर्धर्मा दश ब्रह्म–सत्यशौचापरिग्रहाः ॥ ६२ ॥

भवंति दश शीलागा–न्यधःस्थैर्दशभिः पदैः । क्षमादिभिः साधुधर्मवाचिभिः परिवर्त्तितैः ॥ ६३ ॥ शतं दशभिरारंभ–पदैः स्युः परिवर्त्तितैः । प्रत्येकमारंभपदे पूर्वोक्तदशकान्वयात् ॥ ६४ ॥ शतं शतानि पंच स्युः पदैरिंद्रियवाचिभिः । सहस्रद्वितयी तेषां चतुःसंज्ञापदान्वयात् ॥ ६५ ॥

करवो. (७५६) आ प्रमाणे कहीने पछी प्रभु साधु, साध्वी, श्रावक ने श्राविकारूप चतुर्विध संघने अद्भुत तीर्थपणे स्थापन करे छे. (७५७)

ते (चतुर्विध संघ)मां पात्र, गुच्छ ने रजोहरणादिना धारण करनारा अने अढार हजार शीलांगने धारण करनारा ते साधु केवाय छे. (७५८) ते शीलांग आ प्रमाणे— ' जे मुनि आहारसंज्ञा जीतेला, श्रोत्रेंद्रियने वश करेला, क्षांतीयुक्त मनवडे पृथ्वीकायनो आरंभ न करे तेने हुं वंदुं छुं. ' (७५९) आ प्रमाणे करण, करावण ने अनुमोदनरूप त्रण करणवडे, मन, वचन, कायारूप त्रण योगवडे, आहारादि चार संज्ञा तेम ज श्रोत्रेंद्रियादि पांच इंद्रियोने जीतीने पृथ्वी, जळ, अग्नि, वायु, वनस्पति, द्वींद्रिय, त्रींद्रिय, चतुरिंद्रिय, पंचेंद्रिय अने अजीव ए दशनो आरंभ, क्षमा, आर्जव, मार्दव, मुक्ति, तप, संयम, ब्रह्म, सत्य, शौच अने अपरिग्रह–ए दश प्रकारना यतिधर्मयुक्त थइने न करे. (७६०–६२) (तेवा मुनिने हुं वांदुं छुं.)

हवे उपर जणावेल रीते १८००० शीलांग शी रीते थाय ? ते कहे छे—शीलना अंगने नीचे स्थापन करेला क्षमादि दश प्रकारना साधुधर्मवडे गुणवाथी दश थाय. (७६३) पछी दश प्रकारना आरंभपदवडे पूर्वोक्त दशने गुणवाथी सो थाय. (७६४) पछी पांच इंद्रियोवडे गुणवाथी पांच सो थाय. पछी चार संज्ञावडे गुणवाथी बे हजार

मनोवाक्काययोगेन षट् सहस्रा भवंति ते । अष्टादश सहस्राश्च करणादित्रयान्विताः ॥ ६६ ॥ नष्टोद्दिष्टविधिं चात्र वक्ष्ये येनाप्यते द्रुतं । अंकाद्विवक्षितं रूपं रूपाच्चांको विवक्षितः ॥ ६७ ॥ त्रिकं त्रिकं चतुष्कं च पंचकं द्विर्दश न्यसेत् । भाजकानां ध्रुवांकाना–मियं भवति पद्धतिः ॥ ६८ ॥ ३,३,४,५,१०,१० अंकराशिं परिपूर्णं प्रथमं दशभिर्भजेत् । लब्धं भूयोऽपि दशभि–र्लब्धं तत्रापि पंचभिः ॥ ६९ ॥ चतुस्त्रिस्त्रिभिरेवं च लब्धं लब्धं विभज्यते । सर्वत्र भागशेषं स्व–भाजकस्य लिखेदधः ॥ ७० ॥ भाजकेन हृते राशौ यदि किंचिन्न शिष्यते । तदा तद्भाजकस्याधः शून्यं स्थाप्यमिति स्थितिः ॥ ७१ ॥

किंच–यदा राशौ भज्यमाने किंचिदप्यवशिष्यते । सैकं कार्यं तदा लब्धं निःशेषे तु न तत्तथा ॥ ७२ ॥ यथा–मितं चतुर्भिर्नवकै रूपं भवति कीदृशं । शीलांगानां तत्र राशिं यथोक्तं दशभिर्भजेत् ॥ ७३ ॥

थाय. (७६५) पछी मन, वचन, कायरूप त्रण योगवडे गुणवाथी छ हजार थाय. तेने त्रण करणवडे गुणवाथी १८००० थाय. (७६६)

नष्टोद्दिष्ट विधिवडे हवे समजावे छे के जेथी अंकथी विवक्षित रूप अने रूपथी विवक्षित अंक सत्वर आवे. (७६७) तेने माटे त्रण, त्रण, चार, पांच अने ब वार दश एम छ अंक स्थापवा. ध्रुवांकना भाजकनी आ पद्धति छे. (३–३–४–५–१०–१०) (७६८) पछी पूर्वेली १८००० राशिने पहेलां दशे भांगवा, तेथी जे अंक आवे तेने फरीने दशवडे भांगीए, तेथी जे अंक आवे तेने पांचवडे भांगीए, (७६९) तेथी जे अंक आवे तेने चारवडे भांगीए, तेथी जे अंक आवे तेने त्रणवडे भांगीए, तेथी जे अंक आवे तेने फरीने त्रणवडे भांगीए. एवी रीते लाधेला लाधेला अंकने सर्वत्र भांगवा. जे शेष रहे तेने भाजकनी नीचे स्थापवो. (७७०) भांगाकार करवाथी छेवटे शेष कांइ न आवे त्यारे भाजकनी नीचे शून्य मूकीए. (७७१) (जेमके–१८००० ने दशवडे भांगता १८००, तेने दशवडे भांगता १८०, तेने पांचवडे भांगतां ३६, तेने चारवडे भांगता ९, तेने त्रणवडे भांगतां ३ ने तेने त्रणवडे भांगतां शून्य अथवा एक आवे छे.)

हवे बीजी रीते भांगाकार करवानो प्रकार कहे छे—जो राशिने भांगतां कांइपण अवशेष रहे तो ते लब्ध अंकमां एक उमेरवो. जो निःशेष थइ जाय–कांइपण बाकी न रहे तो तेम न करवुं. (७७२) यथा–जो शीलांगोनी राशि चार नवडा प्रमाण होय

लब्धा नवनवत्याढ्याः शता नव नवोपरि। शिष्यंते ते च सर्वांत्य–दश-कस्य लिखेदधः ॥ ७४ ॥ भागशेषतया राशे–र्लब्धं सैकं विधीयते। सहस्रं जायते तच्च दशभिः प्रविभज्यते ॥ ७५ ॥ लब्धं शतं भागशेषा–भावाच्छून्यं निवेश्यते। उपांत्यदशकस्याधः सर्वत्रैवं विधीयतां ॥ ७६ ॥ शते च पंचभिर्भक्ते विंशतिः प्राप्यतेऽथ सा। चतुर्भिर्भज्यते लब्धाः पंच तांश्च त्रिभिर्भजेत् ॥ ७७ ॥ लब्ध एको द्वयं शिष्टं लिख्यतेऽधस्त्रि-कस्य तत्। लब्ध एकोऽपि सैकस्त–ल्लेख्य आद्यत्रिकादधः ॥ ७८ ॥

३/२ ३/२ ४/० ५/० १०/० १०/९

आदौ द्विकद्वयं शून्य–त्रयं नवक एव च। शीलांगरूपमित्यूह्यं च-तुर्भिर्नवकैर्मितं ॥ ७९ ॥ पदसंख्योह्यतामंकै–र्यथास्थानं पदानि च। स्वस्वपंक्तेः पदं सर्वां–तिमं शून्यैश्च भाव्यतां ॥ ८० ॥ तद्रूपं चैवं–जे कारिंति न वयसा निज्जिअपरिग्गहसन्नसोइंदी। अजिआणं आरंभं अकिंचणा ते मुणी वंदे ॥ ८१ ॥ अथ द्विकद्वयं शून्य–त्रयं नवक एव

तो केवुं रूप आवे? उक्तराशि ९९९९ ने प्रथम दशवडे भांगीए एटले नवशें ने नवाणुं आवे ने नव वधे. ते आंक छेवटना दशकनी नीचे मूकवो. (७७३–७४) भाग शेष रहेल होवाथी लब्धराशि ९९९ ने एक सहित करीए त्यारे हजार थाय, तेने दशवडे भांगीए. एटले सो आवे. शेष कांइ न वधे, तेथी शून्य उपांत्य दशकनी नीचे मूकीए. सर्वत्र आ प्रमाणे करवुं. (७७५–७६) सोने पांचे भांगता वीश आवे. हवे वीशने चारे भांगीए एटले पांच आवे तेने त्रणवडे भांगीए एटले एक आवे ने बे वधे. तेने बीजा त्रणनी नीचे लखीए अने लब्ध थएल अंकमां एक उमेरी पहेला त्रणनी नीचे मूकीए. ३/२ ३/२ ४/० ५/० १०/० १०/१ (७७७–७८)

पहेला बे बगडा, पछी त्रण शून्य, पछी नवडो. आ प्रमाणे चार नवडा प्रमाण शीलांगनुं रूप समजवु. (७७९) पदसंख्या अंकोवडे जाणवी. तथा पदो यथास्थाने एटले अनुक्रमे जाणवा अने पोतपोतानी पंक्तिनुं छेल्लुं पद शून्योवडे जाणवुं. (७८०) तेनुं रूप तेनाथी बनती गाथा आप्रमाणे—जे कारिंति न वयसा, निज्जिअपरिग्गहसन्नसोइंदी; अजिआणं आरंभं, अकिंचणा ते मुणी वंदे "जे परिग्रह संज्ञाने अने श्रोत्रेंद्रियने जीतनार वचनवडे अजीवोनो आरंभ न करावे तेवा अकिंचन मुनिने हुं वंदुं छुं." (७८१)

हवे बे बगडा, त्रण शून्य ने एक नवक एवुं रूप जे कह्युं छे ते शी रीते आवे?

च । कथितं रूपमित्येवं पृष्टे विधिरिहोच्यते ॥८२॥ पूर्वोक्तभाजकांकाना-मधःपृष्टांकपंक्तिका । क्रमेण लिख्यते सा च स्थापना प्राक् प्रदर्शिता ॥ ८३ ॥ द्वितीयोंकोऽथोर्ध्वपंक्ते-रधःस्थपंक्तिवर्त्तिना । गुण्यते प्रथमांकेन जातं यत्तदधो लिखेत् ॥ ८४ ॥ ऊर्ध्वपंक्तिगतांकस्य गुणितस्यास्य चेदधः । भवत्यंकः कोऽपि तर्हि राशिमेनं निरेकयेत् ॥ ८५ ॥ अधः-पंक्तौ च शून्यं चे-त्तस्यांकस्य भवेदधः । राशिस्तदा तथावस्थः स्थाप्य इत्यग्रतोऽपि च ॥ ८६ ॥ यथा पूर्वस्थापनाया-मूर्ध्वस्थपंक्तिगस्त्रिकः । आद्यं मुक्त्वा द्वितीयो यः स चाधःपंक्तिवर्त्तिना ॥ ८७ ॥ द्विकेनाद्येन गुणितो जाताः षट् ते निरेककाः । पंच जाताश्चतुर्भिस्ते विंशतिस्ते च पंचभिः ॥ ८८ ॥ ताडिताः स्युः शतं ते च सहस्रं दशभिर्हताः । दशघ्ना-स्तेऽप्येकहीना-श्चत्वारो नवकाः स्थिताः ॥ ८९ ॥ ३/२ ३/२ ४/० ५/० १०/० १०/९, ५, २०, १००, १०००, ९९९९. ततश्चायं भावः-सहस्राणि नव नव-त्यधिकाश्च शता नव । एषां शीलांगरूपाणा-मंत्यं रूपं यथोदितं ॥ ९० ॥

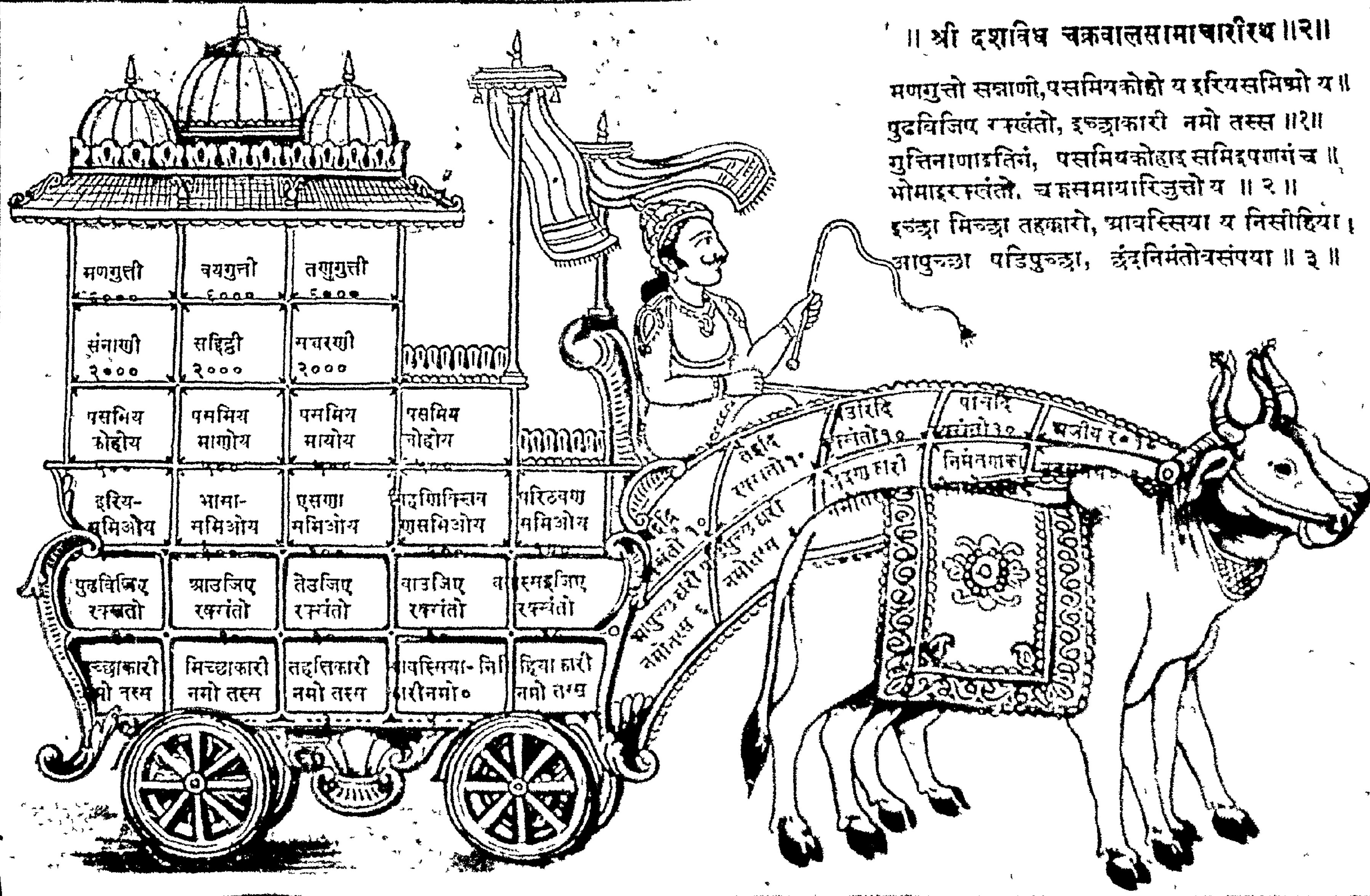
आभिश्च पंक्तिभिः षड्भिः स्थापिताभिरधः क्रमात् । स्याद्रथस्याकृ-

---

एम पूछ्ये सते तेनो विधि कहीए छीए. (७८२) पूर्वोक्त भाजक अंकनी नीचे पूछेला अंकनी पंक्ति अनुक्रमे लखवी. तेनी स्थापना पूर्वे बतावी छे. ३/२ ३/२ ४/० ५/० १०/० १०/९ (७८३)

हवे ऊर्ध्वपंक्तिगत बीजो (त्रण) अंक नीचेनी पंक्तिना पहेला अंक (बे)वडे गुणीए अने जे आवे ते (६) नीचे लखीए. (७८४) गुणेला ऊर्ध्व पंक्तिगत अंकनी नीचे जो कोइपण अंक होय तो आ राशिमांथी एक बाद करीए. (७८५) अने नीचेनी पंक्तिमां ते अंकनी नीचे जो शून्य होय तो ते राशि तेवी ज राखीए. एम आगळ पण समजवुं. (७८६) जेम पूर्व स्थापनामां उपरनी पंक्तिमां प्रथमनो मूकीने बीजो अंक जे त्रणनो छे तेने अधःपंक्तिवर्त्ति एवा आद्य अंक द्विक (२)वडे गुणतां छ थया तेमां-थी एक बाद करतां पांच रह्या, तेने चारवडे गुणतां वीश थया-तेने पांचे गुणता थया १००, तेने दशवडे गुणतां थया हजार, तेने दशवडे गुणीने ए क बाद करतां चार नवडा आवे. ३/२ ३/२ ४/० ५/० १०/० १०/९+५-२०-१००-१०००-९९९९ (७८७-८९) भावार्थ ए छे के नव हजार नवशें नवाणु एटला शीलांगोनुं छेल्लुं (एटले ९९९९ मुं) रूप पूर्वे कह्युं तेवुं आवे. (७९०)

आ (३-३-४-५-१०-१०) छ पंक्ति उपर नीचे क्रमसर स्थापवाथी रथाकृति थाय


।। श्री दशविध चक्रवालसामाचारीरथ ।।२।।
मणगुत्तो सन्नाणी, पसमियकोहो य इरियसमिओ य ॥
पुढविजिए रक्खंतो, इच्छाकारी नमो तस्स ॥१॥
गुत्तिनाणाइतिगं, पसमियकोहाइ समिइपणगं च ॥
भोमाइ रक्खंतो, चउसममायारिजुत्तो य ॥ २ ॥
इच्छा मिच्छा तहक्कारो, आवस्सिया य निसीहिया ।
आपुच्छा पडिपुच्छा, छंदनिमंतोवसंपया ॥ ३ ॥
मणगुत्ती
वयगुत्ती
तणुगुत्ती
संनाणी २०००
सद्दिट्ठी २०००
सच्चरणी २०००
पसमिय कोहोय
पसमिय माणोय
पसमिय मायोय
पसमिय लोहोय
इरिय-समिओय
भासा-समिओय
एसणा समिओय
परिठवण समिओय
पुढविजिए रक्खंतो
आउजिए रक्खंतो
तेउजिए रक्खंतो
वाउजिए रक्खंतो
मिच्छाकारी नमो तस्स
तहत्तिकारी नमो तस्स
निमंतणाकारी

तिस्तस्मा–च्छीलांगरथ उच्यते ॥ ९१ ॥ अन्येऽपि संति भूयांसः सामाचार्यादयो रथाः । ज्ञेयास्तेऽप्यनया रीत्या नात्रोक्ता विस्तृतेर्भयात् ॥ ९२ ॥ मणगुत्तो सन्नाणी पसमिअकोहो अ इरिअसमिओ अ । पुढविजीए रक्खंतो इच्छाकारी नमो तस्स ॥ ९३ ॥ इच्छा मिच्छा तहक्कारो आवसिआ अ निसीहिआ । आपुच्छा पडिपुच्छा छंदनिमंतो· वसंपया ॥ १ ॥ इति दिक्.

गुणैरनेकैरित्याद्यैः प्रथिताः पृथुबुद्धयः । साधुसाध्व्यो भवेत्तेषां जिनेंद्राणां परिच्छदः ॥ ९४ ॥

श्रावकाणां तु भेदौ द्वा–वष्टौ द्वात्रिंशदेव च । सप्तत्रिंशाः शताः सप्त स्थूलभेदविवक्षया ॥९५॥ सम्यक्त्वं बिभ्रते केचि–त्तद्युक्तां विरतिं परे । द्विधा श्राद्धा अविरता विरताविरता इति ॥ ९६ ॥ अणुव्रतानि पंचापि

छे तेथी आने शीलांगरथ कहे छे. (७९१) बीजा पण घणा सामाचारी विगेरेना रथो छे. ते पण बधा आ रीते जाणवा. विस्तारना भयथी अहीं कह्या नथी. (७९२) सामाचारीरथनी एक गाथानो भावार्थ—' मनगुप्तिवडे गुप्त, श्रुतज्ञानी, क्रोधनो उपशम करनार, ईर्यासमितिवान्, पृथ्वीकाय जीवोनी रक्षा करता एवा इच्छाकार सामाचारीवाळा मुनिने नमस्कार थाओ. (७९३) सामाचारी–इच्छा, मिच्छा, तथाकार, आवश्यकी, नैषेधिकी, पृच्छा, प्रतिपृच्छा, छंदना, निमंत्रणा ने उपसंपदा—एम दश प्रकारनी कही छे. इति दिक्.

(१ श्रुत, ३ गुप्ति–३, ४–कषाय–१२, ५ समिति–६०, ६ काय–३६०, १० सामाचारी ३६००, जो ज्ञान पांच लेवामां आवे तो आना पण १८००० भेद थाय.)

बीजो सामाचारीरथ, ३ सन्नाणी सद्दीठी सच्चरणी, ३ गुप्तिमान, ४ कषायोपशमी, ५ समितिमान्, १० पृथ्वीकायादिनी रक्षा करतो, १०विध सामाचारीवान्. एटले—३×३=९×४=३६×५=१८०×१०=१८००×१०=१८००० आ प्रमाणे पण सामाचारी रथ थाय छे.

आ प्रमाणे अनेक गुणोवडे प्रथित, विस्तारवंत बुद्धिवाळा साधु ने साध्वीओ ते जिनेश्वरोनो परिवार होय छे. (७९४)

श्रावकना भेद बे, आठ, बत्रीश अने सात सो साडत्रीश स्थूळभेदनी विवक्षाए थाय छे. (७९५) ते आ प्रमाणे—केटलाक मात्र समकितने धारण करनारा होय छे अने केटलाक उपर कही गया प्रमाणे बार व्रतरूप विरतिने धारण करनारा होय छे. एम श्रावक अविरत अने विरताविरत एवा बे प्रकारना होय छे. (७९६) पांच अणुव्रतोने

षड्भिरुच्चारभंगकैः । पृथक् पृथक् स्वीकृतानि यैस्तेषां षड् भिदोऽभवन् ॥ ९७ ॥ प्रतिपन्नोत्तरगुण–व्रतः केवलदर्शनः । इति द्वयान्विता एते षडित्यष्टौ भिदोऽभवन् ॥ ९८ ॥ एवं सर्वत्राप्यग्रे भाव्यं. द्विविधत्रिविधं प्रोक्तं १ द्विविधद्विविधं २ तथा । द्विविधैकविधं ३ चैक–विधत्रिविधमेव च ४ ॥ ९९ ॥ एकविधद्विविधं ५ चै–कविधैकविधं ६ तथा । श्राद्धानां षडमी प्रोक्ता व्रतोच्चारणभंगकाः ॥ ८०० ॥ न करोमि स्वयं नान्यैः कारयामि च पातकं । स्थूलहिंसादि मनसा वाचांगेनाद्यभंगके ॥ १ ॥ एवमन्येऽपि भंगका भाव्याः २/३ २/२ २/१ १/३ १/२ १/१ षट्स्वप्येतेष्वनुमतिर्गृहस्थैर्न निषिध्यते । एषामनुमतिप्राप्तेः स्त्रीपुत्रादिकृतेष्वपि ॥ २ ॥ अन्यथा हि सर्वदेशविरत्योर्न भिदा भवेत् । त्रिविधं त्रिविधेनेति भंगको गृहिणां न तत् ॥ ३ ॥ एषामुत्तरभंगास्तु जायंत एकविंशतिः । ते चैवमस्याः षड्भंग्याः प्रतिभेदावबोधकाः ॥ ४ ॥ स्थाप्या अधस्तादेष्वंकाः क्रमात्कोष्टेषु षट्स्वपि । एकको द्वौ त्रिकावेको द्विकः षट्कद्वयं ततः ॥ ५ ॥ अयं भावः–भंगो यथोक्त एवाद्ये कोष्ठे नात्रान्यसंभवः । द्वितीये

छ भंग (त्रण योग ने बे करण)ना उच्चारवडे जूदा जूदा स्वीकार करनार होय तेथी ते रीते श्रावकना छ भेद थाय छे. (७९७) उत्तरगुणने अंगीकार करेला तेम ज केवळदर्शन (समकित)वाळा एम बे प्रकारना तथा पूर्वोक्त छ भेदवाळा–ए रीते एकत्र करवाथी आठ प्रकारना श्रावक थाय छे. (७९८) आ प्रमाणे आगळ बधा भेदमां समजी लेवुं. उपर जे श्रावकपणुं उच्चरवाना छ प्रकार कह्या छे ते आ प्रमाणे—द्विविध त्रिविध १, द्विविध द्विविध २, द्विविध एकविध ३, एकविध त्रिविध ४, एकविध द्विविध ५, एकविध एकविध ६, (७९९–८००). पहेला भंगनी समजण पाडे छे के–' हुं स्थूळ हिंसादि पापने मन, वचन अने कायावडे करुं नहीं अने बीजा पासे कराववुं नहीं. ' (८०१) आ प्रमाणे बीजा भंगो पण समजवा. आ छए भंगने विषे गृहस्थो अनुमतिनो निषेध न करे, केमके एने स्त्री–पुत्रादि जे करे तेमां अनुमतिनी प्राप्ति छे. (८०२) जो एम न होय तो सर्वविरति ने देशविरतिमां भेद ज न पडे; तेथी त्रिविध त्रिविधे ए भांगो गृहस्थ माटे कहेल नथी. (८०३) ए छ मूळ भंगना उत्तरभंग २१ थाय छे. ते उत्तरभंग आवी रीते जाणवा. (८०४) छ भेदना छ कोठा करी तेनी नीचे अनुक्रमे १–३–३–२–६–६ मूकवा. (८०५) पहेला कोठामां उपर कही गया प्रमाणे एकडो

तु मनोवाचौ मनोंगे वाक्तनु त्रयं ॥ ६ ॥ भंगानामिति शेषः, मनोवाक्तनुभिर्व्यस्तैः स्यात्तृतीयेऽपि तत्रयं । करणेन कारणेन तुर्ये कोष्ठे च भिद्द्वयं ॥ ७ ॥ त्रयो द्वितीयकोष्ठोक्ता योगभंगा विशेषिताः । करणेन कारणेन षड्भंगा इति पंचमे ॥ ८ ॥ व्यस्ता मनोवचःकायाः षड्विधाः स्युर्विशेषिताः । करणेन कारणेन षष्ठे षड् भंगका इति ॥ ९ ॥ आवश्यकाभिप्रायोऽयं प्रज्ञप्त्यादौ तु कीर्त्तितः ।

ज मूकवो, केमके तेनो भंग एक ज थाय छे. मन ने वचन, मन ने काया ने वचन ने काया. एम बे बे बीजा कोठामां मूकवा. त्रीजामां मन, वचन, काया एम त्रणे व्यस्त (एकला) मूकवा. चोथा कोठामां करण ने कारवण ए बे भेद मूकवा. बीजा कोठामां मूकेला बे बे योगवाळा त्रण भंगने करण अने करावणवडे विशेषित करतां छ भंग थाय. ए पांचमा कोठामां मूकवा. छठ्ठा कोठामां पण करण ने करावणवडे थएला छ भंग मूकवा. आम २१ भंग थाय छे. (८०६–९) आनी विशेष समजण माटे आनी नीचे २१ भंग लखेला छे.

प्रथम ३ योग ने पछी २ करण एम लेतां नीचे प्रमाणे भांगा थाय. प्रथम करण ने पछी योग.

१ त्रण योग ने बे करणनो एक	१ बे करण ने त्रण योगनो एक
३ बे योग ने बे करणना त्रण	३ बे करण ने बे योगना त्रण
६ बे योग ने एक करणना छ	६ एक करण ने बे योगना छ
२ त्रण योग ने एक करणना बे	२ एक करण ने त्रण योगना बे
३ एक योग ने बे करणना त्रण	३ बे करण ने एक योगना त्रण
६ एक योग ने एक करणना छ	६ एक करण ने एक योगना छ
२१	२१

आ एकवीश भेद विगतवार नीचे प्रमाणे–पहेली रीते लख्या छे.

१ मनवचनकायावडे करुं नहीं–करावुं नहीं.	६ मनकायावडे करुं नहीं.
२ मनवचनवडे करुं नहीं–करावुं नहीं.	७ वचनकायावडे करुं नहीं.
३ मनकायावडे करुं नहीं–करावुं नहीं.	८ मनवचनवडे करावुं नहीं.
४ वचनकायावडे करुं नहीं–करावुं नहीं.	९ मनकायावडे करावुं नहीं.
५ मनवचनवडे करुं नहीं.	१० वचनकायावडे करावुं नहीं.

त्रिविधं त्रिविधेनेति भेदोऽपि गृहमेधिनां ॥ १० ॥ तथाहि–स्वयंभूरमणां-भोधि–मत्स्यमांसाशनादिकं । त्रिविधं त्रिविधेनापि प्रत्याख्यात्येत्र कोऽपि यत् ॥ ११ ॥ अस्याल्पविषयत्वेन कादाचित्कतयापि च । नैवावश्यकनिर्युक्तौ भंगकोऽयं विवक्षितः ॥१२॥ षोढा पूर्वोक्तषड्भंग्या स्यादेकैकमणुव्रतं । त्रिंशद्विदोऽथ द्वात्रिंश–त्ससम्यक्त्वोत्तरव्रताः ॥ १३ ॥ तथा–त्रिका द्विका एकका ये प्रत्येकं ते त्रयस्त्रयः । स्थाप्यंते किल पंक्त्योर्ध्वं करणादित्रयांककाः ॥ १४ ॥ एषां नवानामंकाना–मधः पंक्त्या क्रमाल्लिखेत् । मनोवाक्कायसूचायै त्रिशस्त्रिकद्विकैककान् ॥ १५ ॥ आद्यो भंगोऽत्र सावद्यं न कुर्वे कारयामि न । नानुजानामि मनसा वचसा वपुषापि च ॥१६॥ एवमन्येऽपि भंगका भाव्याः, ३ ३ ३, २ २ २, १ १ १× ३ २ १, ३ २ १, ३ २ १, प्रज्ञप्त्याद्युदिता मूल–भंगा नव भवंत्यमी । एषा-

११ मनवचनकायावडे करुं नहीं.
१२ मनवचनकायावडे करावुं नहीं.
१३ मनवडे करुं नहीं–करावुं नहीं.
१४ वचनवडे करुं नहीं–करावुं नहीं.
१५ कायावडे करुं नहीं–करावुं नहीं.
१६ मनवडे करुं नहीं.
१७ वचनवडे करुं नहीं.
१८ कायावडे करुं नहीं.
१९ मनवडे करावुं नहीं.
२० वचनवडे करावुं नहीं.
२१ कायावडे करावुं नहीं.

आवश्यकसूत्रनो आ प्रमाणे अभिप्राय छे. प्रज्ञप्ति विगेरेमां तो गृहस्थने माटे त्रिविध त्रिविध एवो भेद पण कह्यो छे. (८१०) तथाहि—स्वयंभूरमण समुद्रना मत्स्यनुं मांस खावा संबंधी त्रिविधे त्रिविधे पण कोइ श्रावक प्रत्याख्यान करी शके छे; (८११) परंतु आ अल्प विषयवाळुं ने कादाचित्क होवाथी आवश्यकनिर्युक्तिमां आ भंगनी विवक्षा करी नथी. (८१२) पूर्वे कह्या प्रमाणे छ भंग एकेक अणुव्रत आश्री होवाथी पांच अणुव्रतना त्रीश भंग थाय छे, तेमां सम्यक्त्व ने उत्तरगुणरूप बे भेद उमेरवाथी ३२ भेद थाय छे. (८१३) तथा एक पंक्तिमां उपर त्रण तगडा, त्रण बगडा ने त्रण एकडा स्थापन करीए. ए रीते त्रण करण आश्री नव अंक थाय. (८१४) ए नव अंकनी नीचे अनुक्रमे मन, वचन, कायाने सूचवनार त्रण तगडा, त्रण बगडा ने त्रण एकडा लखीए. (८१५) एटले पहेलो भंग मन, वचन, कायावडे करुं नहीं, करावुं नहीं ने अनुमोदुं नहीं एवो थयो. (८१६) आ प्रमाणे बीजा भंगो माटे पण भावना करवी. ३–३–३ । २–२–२ । १–१–१ । ×३–२–१ । ३–२–१ । ३–२–१ ।

मेकोनपंचाश–द्भवंत्युत्तरभंगकाः ॥ १७ ॥ तथाहि–त्रिभिर्मनो–१–वचः–२ काये ३–स्त्रयो भेदा भवंत्यथ । मनोवाग्भ्यां भवेत्तुर्यो ४ मनोंगाभ्यां च पंचमः ५ ॥ १८ ॥ वाक्कायाभ्यां भवेत् षष्ठ ६–स्त्रिभिरेभिश्च सप्तमः ७। एते सप्तापि योज्यंते सप्तभिः करणादिभिः ॥ १९ ॥ ते चैवं–करणं १ कारणं २ चानु–मति ३ श्चेति भिदा त्रयं । भेदश्चतुर्थः करण–कारणाभ्यां प्रकीर्त्तितः ॥ २० ॥ करणानुमतिभ्यां च भेदो भवति पंचमः । कारणानुमतिभ्यां च षष्ठस्तैः सप्तमस्त्रिभिः ॥ २१ ॥ प्रत्येकमेषु भंगेषु पूर्वोक्तसप्तकान्वयात् । उक्ता एकोनपंचाशद्–व्रतोच्चारणभंगकाः ॥२२॥ प्रत्येकं भंगकेष्वेषु कालत्रितययोजनात् । सप्तचत्वारिंशदाढ्यं जायंते भंगकाः शतं ॥ २३ ॥ त्रिकालविषयत्वं च स्यादतीतस्य निंद्या । संवरेणाधुनिकस्य प्रत्याख्यानाद्भविष्यतः ॥ २४ ॥

अईयं निंदामि, पडुप्पन्नं संवरेमि, अणागयं पच्चक्कामि, तथा च–मण १ वयण २ काय ३ मणवय ४–मणतणु ५ वयतणु ६ तिजोगि ७ सगसत्त। कर १ कार २ णुमइ ३ दुतिजुइ तिकालि सीआलभंगसयं ॥२५॥

प्रज्ञप्ति विगेरेमां कहेला त्रण करण, त्रण योगवडे मूळ नव भंगना ४९ उत्तरभंग आ रीते थाय छे. (८१७)

तथाहि–१ मनवडे, २ वचनवडे, ३ कायावडे, ४ मनवचनवडे, ५ मनकायावडे, ६ वचनकायावडे, ७ मनवचनकायावडे. आ प्रमाणे सात भेद थाय छे. पछी ते दरेकना करणवडे सात सात भेद करवा ते आ प्रमाणे—१ करण, २ करावण, ३ अनुमति, ४ करण–करावण, ५ करण–अनुमोदन, ६ करावण–अनुमोदन, ७ करण–करावण–अनुमोदन–आ प्रमाणे प्रथमना सातना सात सात भेद थवाथी कुल ४९ भेद थाय. (९१९–२२) आ दरेक भंगमां त्रण काळनी योजना करवाथी १४७ भेद थाय. (८२३) आनुं त्रिकाळ विषयपणुं अतीतनी निंदाथी, वर्तमानना संवरथी अने भविष्यना प्रत्याख्यानथी थाय छे. (८२४)

अईयं निंदामि, पडुप्पन्नं संवरेमि, अणागयं पच्चक्कामि, तथा च मण १ वयण २, काय ३, मणवय ४–मणतणु ५, वयतणु ६, तिजोगि ७ सगसत्त ॥ कर १, कार २, णुमइ ३, दुतिजुइ, तिकालि सीआलभंगसयं ॥ २५ ॥

(आनो भावार्थ उपर विस्तारथी आवी गयो छे.)

सम्यग् य एतान् जानाति प्रत्याख्यानस्य भंगकान् । स एव कथितः शास्त्रे प्रत्याख्यानविचक्षणः ॥ २६ ॥ अणुव्रतैः पंचभिश्च गुणिता भंगका अमी । पंचत्रिंशाः शताः सप्त तेषु केवलदर्शनैः ॥ २७ ॥ युक्तेषु चोत्तरगुणा—द्वैस्ते स्युः श्रावका इह । सप्तत्रिंशाः सप्तशता व्रतानां मूलभेदतः ॥ २८ ॥

व्रतानां द्व्यादिसंयोगो—द्भवा भेदा भवंति ये । षड्भंग्यादिव्रतोच्चारप्रकाराणां च या भिदः ॥ २९ ॥ परस्परं तद्गुणने व्रतानां भूरयो भिदः । भवंति ताभिस्तावंतः श्रावका इह तद्यथा ॥ ३० ॥ अणुव्रतानां पंचानां भंगाः पंचैकयोगजाः । दश च स्युर्द्वियोगोत्थास्त्रियोगोत्था दशैव च ॥ ३१ ॥ तुर्ययोगोद्भवाः पंच स्यादेकः पंचयोगजः । अथैतद्भंगकोत्पत्तौ करणं प्रतिपाद्यते ॥३२॥ क्रमोत्क्रमाभ्यां द्वे पंक्त्यौ संस्थाप्येते उपर्यधः । विवक्षितव्रतांकाना—मथाधःपंक्तिवर्त्तिना ॥ ३३ ॥ उपांत्यांकेनोर्ध्वपंक्तिगतोंत्योंको विभज्यते । लब्धेन तस्योपांत्यस्यो—परिस्थोंको निहन्यते

आ भंगोने जे सम्यक्प्रकारे जाणे छे तेने ज शास्त्रमां प्रत्याख्यानमां विचक्षण कह्यो छे. (८२६) आ १४७ भंगने पांच अणुव्रतवडे गुणवाथी ७३५ भेद थाय छे, तेमां मात्र समकित ने उत्तरगुणना बे भेद भेळववाथी श्रावको व्रतना मूळ भेदथी ७३७ प्रकारना थाय छे. (८२७–२८)

आ श्रावकना व्रतोना बे विगेरेना संयोगथी जे भेदो थाय छे, अने षड्भंग्यादि व्रत उच्चारणना जे प्रकारो थाय छे तेने परस्पर गुणवावडे ए व्रतोना घणा भेदो थाय छे, तेथी ते भेदोवडे अहीं श्रावको तेटला प्रकारना कहेवाय छे. (८२९–३०) तद्यथा—पांच अणुव्रतना एक संयोगी पांच भेद, बे संयोगी दश भेद, त्रिकसंयोगी दश भेद, चतुःसंयोगी पांच भेद अने पंच संयोगी एक भेद-एम ३१ भेद थाय छे. हवे ए भांगानी उत्पत्तिनुं करण कहे छे. (८३१–३२) विवक्षित व्रतोना अंकोनी बे पंक्तिओ क्रमउत्क्रमवडे उपर नीचे लखवी. $\frac{5}{1}\frac{4}{2}\frac{3}{3}\frac{2}{4}\frac{1}{5}$ पछी नीचेनी पंक्तिमां वर्तता उपांत्य अंकवडे ऊर्ध्व पंक्तिना अंत्य अंकने भागवो. पछी तेनाथी लब्धअंकनो ते उपांत्यनी उपरना अंकनी साथे गुणाकार करवो. ए रीते जे आवे ते द्विसंयोगी भंग

१ छेल्लानी अगाउनो.

॥ ३४ ॥ यज्जातं ते द्विसंयोगा भंगकास्ते च पूर्ववत् । उपांत्यपाश्चात्यां-केन भज्यंते लभ्यते च यत् ॥ ३५ ॥ तेन तस्योपरितनो गुण्यतेंको भवेच्च यत् । ते त्रिसंयोगजा भंगाः स्याच्छेषेष्वप्ययं विधिः ॥ ३६ ॥ भंगेषु नैकयोगेषु करणस्य प्रयोजनं । विवक्षितव्रतमिता भंगका ह्येक-योगजाः ॥ ३७ ॥ अत्रोदाहरणं—

क्रमोत्क्रमाभ्यां पंचांता लिख्यंतेंका द्विकेन च । भक्तेऽधःपंक्त्युपांत्येनो-परिस्थे पंचकेंतिमे ॥ ३८ ॥ लब्धौ द्वौ सार्द्धकौ ताभ्या-मुपांत्य-स्योपरि स्थितः । चतुष्को गुण्यते जाता दश तेऽत्र द्वियोगजाः ॥ ३९ ॥ त्रिकोऽथोपांत्यपाश्चात्यो भज्यंते तेन ते दश । लब्धास्त्रयः सत्रिभागाः सांशैस्तैश्च निहन्यते ॥४०॥ त्रिकस्तस्योपरिगतो दश स्युस्ते त्रियोगजाः । तत्पाश्चात्यचतुष्केण तेषु भक्तेषु लभ्यते ॥ ४१ ॥ सार्द्धं द्वयं तेन तस्यो-परिस्थो गुण्यते द्विकः । जाताः पंच चतुर्योगा भज्यंते पंचकेन ते ॥४२॥ आद्येनाधःपंक्तिगेन प्राप्त एकोऽथ गुणयते । अनेनैकस्तदूर्ध्वस्थ इत्येकः पंचयोगजः ॥ ४३ ॥ स्थापना—

जाणवा. ते भांगा उपर कह्या प्रमाणे १० आवे छे. पछी उपांत्यनी पाछळना त्रणना अंकवडे उपर आवेला दशना अंकने भांगवो. पछी तेना लब्ध अंकने तेनी उपरना त्रणना अंकवडे गुणवा जे आवे ते त्रिक संयोगी भंग समजवा. बीजाओने विषे आ ज विधि जाणवो. (८३३-३६) एकना संयोगवाळाने माटे करणनुं प्रयोजन नथी, केमके तेना विवक्षितव्रत प्रमाण (पांच) एक संयोगी भंग थाय. (८३७) अहीं उदाह-रण आपे छे—

क्रमोत्क्रमवडे पांचे अंको उपर नीचे लखवा. पछी नीचेनी पंक्तिना उपांत्य बेना अंकवडे उपरनी पंक्तिना छेला पांचना अंगने भांगवो एटले अढी आवशे. तेना वडे उपांत्यनी उपरना ४ वडे गुणतां दश द्विसंयोगी भंग आवशे. (८३८-३९) पछी उपांत्यनी पाछळना त्रणना अंकवडे दशने भांगवा, एटले ३⅓ आवशे. तेने तेनी उप-रना त्रणवडे गुणतां दश आवशे, ते त्रिकसंयोगी जाणवा. ते दशने पाश्चात्य चतुष्कवडे भांगतां अढी आवशे तेने तेनी उपरना बेवडे गुणतां पांच आवशे ते चतुःसंयोगी समजवा. ते पांचने नीचेनी पंक्तिना पहेला पांचना आंकवडे भांगतां एक आवे तेने ऊर्ध्व पंक्तिना एकना अंकवडे गुणतां एक ज आवे ते पंचसंयोगी समजवो. स्थापना १/५ २/४ ३/३ ४/२ ५/१ आ प्रमाणे आवे—१/५ २/१० ३/१० ४/५ ५/१ (८४०-४३)

यद्वा–जिज्ञासिताः स्युः संयोगा यावतां तावतोंककान् । एकाद्येकोत्तरा-नूर्ध्व–दमश्रेण्या क्रमान्न्यसेत् ॥ ४४ ॥ यथास्थमंत्यं मुक्त्वा ता–नुपर्यु-परि निक्षिपेत् । एवमेकादियोगोत्थ–भंगसंख्यामितिर्भवेत् ॥ ४५ ॥ तत्र च–सर्वोपरितनांकेन लभ्यंत एकयोगजाः । शेषैरधोऽधःस्थैरंके–र्लभ्यंते द्व्यादियोगजाः ॥ ४६ ॥ अत्रैकको द्विके क्षिप्तो द्विकस्थाने त्रिकोऽभवत् । त्रिकः स चोपरितन–त्रिके षट्कं भवेत्तदा ॥ ४७ ॥ षट्केऽस्मिंश्चोप-रितने चतुष्के योजिते दश । पुनरेकस्त्रिके क्षिप्त–श्चतुष्कः स्यात्स चोर्ध्वगे ॥ ४८ ॥ षट्के क्षिप्तो दशाभूवन् पुनरेकश्चतुष्कके । क्षिप्तः पंचा-भवन्नेक–स्ततोऽधः स्यात्तथा स्थितः ॥ ४९ ॥

अथवा–लभ्यंते द्व्यादिसंयोगा अंकचारणया मिथः । चार्यंते पूर्व-पूर्वांको–ऽनुक्रमादुत्तरोत्तरैः ॥ ५० ॥ सा चैवं–१-२ । १-३ । १-४ । १-५ एवं चत्वार एकचारणया. २-३ । २-४ । २-५ । एवं त्रयो द्वितीयचारणया. ३-४ । ३-५ । एवं द्वौ तृतीयचारणया. ४-५ एकश्चतुर्थचारणया. एवं दश

अथवा जिज्ञासित (इच्छित) एवा संयोगोना अंको एक एक वधता उपरनी श्रेणिमां लखवा. (८४४) पछी अंत्यना अंकने मूकीने तेने उपर उपर नाखवा एटले एकादि संयोगथी थता भंगनी संख्या आवशे. (८४५) तेमां सर्व उपरितन अंकवडे नीचेना अंकने गुणतां एक संयोगीनी संख्या आवशे. पछी नीचे नीचेना अंकोवडे द्व्यादि संयोगीनी संख्या आवशे. (८४६) जेम एकनो अंक बेना अंकमां नाख्यो एटले द्विकने स्थाने त्रण थया. तेने उपरना त्रण साथे मेळवतां छ थया. (८४७) तेमां उपरितन चतुष्क मेळवतां दश (द्विसंयोगी) थया. फरीने एक ने त्रण साथे मेळ-वतां थया चार. तेने उपरना छमां नांखतां दश (त्रिकसंयोगी) थाय. फरी एकने चारमां नांखतां पांच (चतुःसंयोगी) थाय. पांचनी नीचे उपांत्य पांच तेनावडे भांगी पांचनी नीचे एक छे तेनी साथे गुणतां एक ज रहे एटले पंचसंयोगी एक भंग थयो. (८४८–४९)

अथवा अंकनी चारणाथी द्व्यादिसंयोगी संख्या आवे, तेमां पूर्वपूर्वनो अंक उत्तर उत्तरनी संगाते चारववो. ते आ प्रमाणे—१–२, १–३, १–४, १–५ आ चार द्विसंयोगी भंग एकडासाथे चारणा करतां आवे. २–३, २–४, २–५ आ त्रण द्विसंयोगी भंग बगडासाथे चारणा करतां आवे. ३–४, ३–५, आ बे द्विसं-

द्विकसंयोगजा लब्धाः, एवं त्रिकसंयोगजा अपि दश यथा—१-२-३। १-२-४। १-२-५। १-३-४। १-३-५। १-४-५। एवमेकचारणया षट्. २-३-४। २-३-५। २-४-५। इति द्वितीयचारणया त्रयः। ३-४-५ एवं तृतीयचारणया त्वेकः, इति. व्रतानां च द्वादशाना—मेवं विज्ञैर्यथारुचि। भंगानां भावना कार्या द्व्यादिसंयोगजन्मनां ॥ ५१ ॥

योगी भंग त्रगडासाथे चारणा करतां आवे. ४–५ आ एक द्विसंयोगी भंग चोगडासाथे चारणा करतां आवे. एम कुल दश द्विसंयोगी थाय. ए ज प्रमाणे त्रिकसंयोगी पण दश थाय ते आ प्रमाणे—१–२–३, १–२–४, १–२–५, १–३–४, १–३–५, १–४–५ एम छ त्रिकसंयोगीभंग एकडासाथे चारणा करतां आवे. २–३–४, २–३–५, २–४–५ एम त्रण त्रिकसंयोगीभंग बगडा साथे चारणा करतां आवे. ३–४–५ आ एक त्रिकसंयोगीभंग त्रगडासाथे चारणा करतां आवे, एम कुल दश त्रिकसंयोगी भंग थाय. (आ अंक व्रतरूपे समजवा) आ प्रमाणे बार व्रतोना भंगोनी विज्ञ पुरुषे यथारुचि द्व्यादिसंयोगथी थता भंगनी भावना करवी. (८५१)

पांच व्रतो उच्चरनारमां आवी रीते ३१ भंग पडे, ते वधारे स्पष्टता थवा माटे बताव्या छे.

१ कोइ एक पहेलुं व्रत ज उच्चरे.
२ कोइ एक बीजुं व्रत ज उच्चरे.
३ कोइ एक त्रीजुं व्रत ज उच्चरे.
४ कोइ एक चोथुं व्रत ज उच्चरे.
५ कोइ एक पांचमुं व्रत ज उच्चरे.

---

६ कोइ पहेलुं ने बीजुं व्रत उच्चरे.
७ कोइ पहेलुं ने त्रीजुं व्रत उच्चरे.
८ कोइ पहेलुं ने चोथुं व्रत उच्चरे.
९ कोइ पहेलुं ने पांचमुं व्रत उच्चरे.
१० कोइ बीजुं ने त्रीजुं व्रत उच्चरे.
११ कोइ बीजुं ने चोथुं व्रत उच्चरे.
१२ कोइ बीजुं ने पांचमुं व्रत उच्चरे.
१३ कोइ त्रीजुं ने चोथुं व्रत उच्चरे.
१४ कोइ त्रीजुं ने पांचमुं व्रत उच्चरे.
१५ कोइ चोथुं ने पांचमुं व्रत उच्चरे.

---

१६ कोइ पहेलुं, बीजुं, त्रीजुं व्रत उच्चरे.
१७ कोइ पहेलुं, बीजुं, चोथुं व्रत उच्चरे.
१८ कोइ पहेलुं, बीजुं, पांचमुं व्रत उच्चरे.
१९ कोइ पहेलुं, त्रीजुं, चोथुं व्रत उच्चरे.
२० कोइ पहेलुं, त्रीजुं, पांचमुं व्रत उच्चरे.
२१ कोइ पहेलुं, चोथुं, पांचमुं व्रत उच्चरे.
२२ कोइ बीजुं, त्रीजुं, चोथुं व्रत उच्चरे.
२३ कोइ बीजुं, त्रीजुं, पांचमुं व्रत उच्चरे.
२४ कोइ बीजुं, चोथुं, पांचमुं व्रत उच्चरे.
२५ कोइ त्रीजुं, चोथुं, पांचमुं व्रत उच्चरे.

---

२६ कोइ पहेलुं, बीजुं, त्रीजुं, चोथुं व्रत उच्चरे.
२७ कोइ पहेलुं, बीजुं, त्रीजुं, पांचमुं व्रत उच्चरे.
२८ कोइ पहेलुं, बीजुं, चोथुं, पांचमुं व्रत उच्चरे.
२९ कोइ पहेलुं, त्रीजुं, चोथुं, पांचमुं व्रत उच्चरे.
३० कोइ बीजुं, त्रीजुं, चोथुं, पांचमुं व्रत उच्चरे.

---

३१ कोइ पहेलुं, बीजुं, त्रीजुं, चोथुं, ने पांचमुं व्रत उच्चरे.

व्रतोच्चारप्रकाराणा–मप्येवं गुणने मिथः । भवंति भूयो भेदाः षड्भंग्यां तानथ ब्रुवे ॥ ५२॥ एकव्रते षड्भंगा ये द्विविधत्रिविधादिकाः । ते षट्त्रिंशद्भवंत्येवं संयोगे व्रतयोर्द्वयोः ॥ ५३ ॥ आदावाद्यव्रतस्याद्यो भंगकोऽवस्थितोऽश्नुते । द्वितीयव्रतसत्कान् षट् भंगकाननवस्थितान् ॥ ५४ ॥ एवं भंगो द्वितीयोऽपि षट् प्रत्येकं षडप्यमी । लभंते इति षट्त्रिंश–ज्जाता उच्चारभंगकाः ॥ ५५ ॥ व्रतानां त्रिकयोगे तु द्विशती षोडशोत्तरा । शतानि द्वादश चतु–र्योगे षण्णवतिस्तथा ॥ ५६ ॥ सहस्राः सप्त सप्तैव शताः षट्सप्ततिस्तथा। योगे व्रतानां पंचानां भवंत्युच्चारभंगकाः ॥ ५७ ॥ उच्चारभंगका एते व्रतानां प्राक् प्रदर्शितैः । हता एकद्व्यादियोगैः स्युः सर्वाग्रेण भंगकाः ॥ ५८ ॥ यथा व्रतानां पंचाना–मेकयोगैर्हि पंचभिः । हता उच्चारभंगाः षट् स्युस्त्रिंशदेकयोगजाः ॥ ५९ ॥ दशभिर्द्विकयोगे षट्–त्रिंशदुच्चारभंगकाः । हताः स्युस्त्रिशती षष्ट्या–भ्यधिका सर्वसंख्यया ॥ ६० ॥ द्विशती षोडशाढ्या च त्रियोगैर्दशभिर्हताः।

आ प्रमाणे एकसंयोगी ५, द्विसंयोगी १०, त्रिसंयोगी १०, चतुःसंयोगी ५ ने पंचसंयोगी १ कुल ३१ भंगनुं विवरण समजवुं.

उपर प्रमाणे व्रतोच्चारना प्रकारोने पण अंदरअंदर गुणवाथी घणा भेदो थाय छे. तेमांथी षड्भंगी संबंधी भेदो कहे छे. (८५२) एक व्रतना उच्चारमां जे छ भंग द्विविध–त्रिविधादि कह्या छे. तेना बे व्रतने संयोगे ३६ भंग थाय (८५३) ते आ प्रमाणे–पहेला व्रतनो पहेलो भंग ते अवस्थित भंग, तेनी साथे बीजा व्रतना अनवस्थित छए भंग थाय. (८५४) एम बीजो भंग पण अवस्थित तेनी साथे पण बीजा व्रतना अनवस्थित छए भंग थाय. आ प्रमाणे पहेला व्रतना छए भंग साथे बीजा व्रतना छए भंग थता होवाथी उच्चारना भंग ३६ थाय (८५५) त्रण व्रतना संयोगे एकेक त्रिकसंयोगीना भंग २१६–२१६ थाय छे. चतुःसंयोगी एकेकना १२९६–१२९६ थाय (८५६) पांच संयोगी एक भांगाना उच्चार भंग ७७७६ थाय. (८५७) हवे आ व्रतोना पूर्वप्रदर्शित एक इत्यादिक संयोगवडे उच्चारभंगो सर्व मळीने आ प्रमाणे थाय (८५८) पांच व्रतोना एक संयोगी पांचने छ उच्चारभंगवडे गुणवाथी ३० थाय–(८५९) द्विकसंयोगी दश प्रकारने उच्चार भंग ३६ वडे गुणतां ३६० थाय (८६०) त्रिकसंयोगी दश प्रकारने उच्चार भंग २१६ वडे गुणतां २१६० थाय (८६१) चतुःसंयोगी पांचप्रकारने

षष्ट्याढ्यानि त्रियोगानां स्युः शतान्येकविंशतिः ॥ ६१ ॥ चतुर्योगैः पंचभिश्च हता उच्चारभंगकाः । शता द्वादश पूर्वोक्ताः षण्णवत्यधिकाश्च ये ॥ ६२ ॥ स्युः शतानि चतुःषष्टि– रशीत्याभ्यधिकानि ते । चतुर्योगजभंगानां सर्वसंख्या भवेदियं ॥ ६३ ॥ सहस्राः सप्त सप्तैव षट्सप्तत्यधिकाः शताः । एकेन पंचयोगेन हतास्तावंत एव ते ॥ ६४ ॥ इयं च स्थापना प्राज्ञै–स्तादृगाकारसंभवात् । शास्त्रेषु देवकुलिका–कारेति व्यपदिश्यते । ॥ ६५ ॥ पंचस्वणुव्रतेष्वेवं निर्दिष्टानां यथाक्रमं । संयोगजानां भंगानां भवेत् संकलना त्वियं ॥ ६६ ॥ सहस्राः षोडशाष्टौ च शताः षडधिका अथ । उत्तरव्रतभृत्सम्यग्—दृग्योगेऽष्टाधिका अपि १६८०८ ॥ ६७ ॥

द्वादशानां व्रतानां च भंगसंकलना भवेत् । विविच्यमाना षड्भंग्या कोटीशतास्त्रयोदश ॥ ६८ ॥ कोट्यश्चतुरशीतिश्च लक्षाणि द्वादशोपरि । सप्ताशीतिः सहस्राणि द्वाभ्यां युक्तं शतद्वयं ॥ ६९ ॥ अथ शतोपरितनं यद्द्वयं तदुत्तरगुणधारिकेवलसम्यक्त्वधारिरूपं भेदद्वयं ज्ञेयं. अत्रोत्तरगुणाश्च विविधतपोऽभिग्रहरूपा इति ध्येयं. अत्रायमाम्नायः—

षड्भंगा व्रत एकस्मिन् ये निर्दिष्टा जिनैः श्रुते । द्वितीयव्रतयोगे ते

पूर्वे कह्या प्रमाणे उच्चारभंग १२९६ वडे गुणतां चतुःसंयोगीनी सर्व संख्या ६४८० थाय (८६२–८६३) पांच संयोगी एक ज प्रकारने ७७७६ उच्चारभेदवडे गुणतां ७७७६ थाय. (८६४) आ भंगोनी स्थापना करतां तेनो देवकुलिका जेवो आकार थतो होवाथी तेने देवकुलिका एम कहे छे. (८६५) उपर बताव्या प्रमाणे पांच अणुव्रतना संयोगीभंगना उत्तरभेदनी एकंदर संकलना करतां १६८०६ थाय, तेमां उत्तरव्रतधारीनो १ अने मात्र समकितदृष्टिनो १ मेळवतां कुल १६८०८ थाय (८६६–६७)

बार व्रतोना भंगोनी षड्भंगीवडे वहेंचण करतां एकंदर संकलना तेरशें चोराशी क्रोड, बार लाख, सत्याशी हजार, बसो ने बे १३८४१२८७२०२ थाय छे (८६८–६९) आमां बे उपर छे ते केवळ उत्तरगुणधारी ने केवळ समकितधारी संबंधी समजवा. अहीं उत्तरगुण ते विविध तप ने अभिग्रहरूप समजवा. उपर जणावेली संख्या लाववा माटे आ प्रमाणे आम्नाय समजवो.

एक व्रतमां जे छ भंग जिनेश्वरे श्रुतमां कह्या छे तेने बीजा व्रतना योगे साते गु

हन्यंते सप्तभिः किल ॥ ७० ॥ षट् क्षिप्यंतेऽत्र चैवं स्यु–र्भंगका व्रतयो-र्द्वयोः । अष्टचत्वारिंशदेव जातास्ते विधिनामुना ॥ ७१ ॥

अत्र चैवं प्रकारांतरेण वासना–द्वयोर्व्रतयोरूर्ध्वपंक्तिस्थापना. अत्र च "यथा स्वमंत्यं मुक्त्वा तानुपर्युपरि निक्षिपेत्," इति पूर्वोक्तवचनात् अंकक्षेपसंभवो नास्तीति तथैव स्थिता, तथा च एकयोगे द्वौ भंगौ, द्विकयोगश्चैकः, तत्र द्वयोरेकयोगयोः प्रत्येकं षट् भंगा इति द्वादश द्विकयोगस्य षट्त्रिंशदिति अष्टचत्वारिंशदिति. विवक्षितव्रतांकेभ्य एकन्यूनांकसंख्यया । एवं मुहुः कृते शेष–भंगसंकलनाप्यते ॥ ७२ ॥ व्रतेषु च द्वादशसु चरानेकादशे तकि । कृते पूर्वोदिता सर्व–भंगसंकलना स्फुटा ॥ ७३ ॥ त्रिकाल्या गुणने त्वेषां भंगकानां भवंत्यमी । कोटीशतान्येकचत्वा–रिंशच्चोपरि कोटयः ॥ ७४ ॥ द्विपंचाशत्तथालक्षा–ण्यष्टात्रिंशदथोपरि । एकषष्टिः सहस्राणि षड्भिर्युक्ता च षट्शती ॥७५॥ एवं च वक्ष्य-

---

णवा ने तेमां छ नांखवा. एम करवाथी जे अंक आवे ते बे व्रतना भंग समजवा. आ प्रमाणे करवाथी ६×७=४२+६=४८ भंग थया (८७०–७१)

अहीं प्रकारांतर बतावे छे–ए बन्ने व्रतनी ऊर्ध्व पंक्तिए स्थापना करवी. अहीं–"यथा योग्य पोतानो अंत्य अंक मूकीने बाकीना उपर उपर नांखवा." आ प्रमाणे करवाथी अंकक्षेपनो संभव रहेतो नथी, एटले ते ज प्रमाणे अंक रहे छे; तथा एक योगे बे भंग, द्विकयोगे एक. ते एक योगना बे भंग थया छे ते दरेकना छ छ भंग थवाथी १२ ने द्विकयोगना ३६ एटले बे मळीने ४८. विवक्षित व्रतना अंकमांथी एक न्यून अंक संख्यावडे गुणवा. एम वारंवार करवाथी शेषभंगनी संकलना आवशे. (८७२) ए प्रमाणे बार व्रतमां अग्यार वार चरपणुं करवाथी पूर्वे कहेल सर्व भंगनी संकलना स्फुट थशे. (८७३)

श्रावक व्रतभंग प्रकरणनी टीकामां बतावेल छे के–प्रथम व्रतना छ भंगने साते गुणी छ उमेरवा एटले बे व्रतना ४८ आव्या. तेने साते गुणी छ उमेरतां ३४२ भंग त्रण व्रतना आव्या. आ प्रमाणे अग्यार वखत साते गुणवा ने दरेक वखत छ उमेरवा एटले छेवटे बार व्रतना १३८४१२८७२०० भंगनो आंक आवशे. (गुणाकार करी जोतां आ संख्या बराबर आवे छे.) ते आ नीचे बतावेल छे तेमां उत्तरगुण ने मात्र समकितना बे प्रकार उमेरवा. पछी आ संख्याने त्रिकाळ आश्री त्रणवडे गुणतां ४१५२ क्रोड, ३८ लाख, ६१ हजार, ६०६ आवशे. (८७४–७५) आ प्रमाणे आगळ कहेवाशे एवी २१

माणैकविंशतिभंगीनवभंग्येकोनपंचाशद्भंगीभंगकानामपि त्रिकाल्या गुणनं न्याय्यमेव प्रतीमः, सप्तचत्वारिंशशतभंग्यामेव त्रिकाल्याः प्रविष्टत्वादिति ज्ञेयं.

एते व्रतानां भंगास्तु षड्भंग्यैव प्रदर्शिताः । एकविंशत्यादिभिस्तु भंगैः स्युरतिभूरयः ॥ ७६ ॥ तथाहि—एकविंशतिरेकस्मिन् ये भंगास्तान् व्रतद्वये । द्वाविंशतिगुणान् कृत्वा क्षिप्यतेऽत्रैकविंशतिः ॥ ७७ ॥ वारानेकादशैवं च कृते द्रुतमवाप्यते । सर्वसंख्या भंगकानां व्रतेषु द्वादशस्वपि ॥ ७८ ॥ सा चेयं—१२८५५००२६३१०४९२१५ अंकाः सप्तदश.

एकव्रतस्य ये भंगा नव ते दशभिर्हताः । नवान्विताश्च सर्वाग्रं वार एकादशे भवेत् ॥ ७९ ॥ तच्चेदं—९९९९९९९९९९९९ अंकाः द्वादश.

एकव्रतस्याथैकोन—पंचाशद्भंगका हि ये । ते पंचाशद्गुणा एको—नपंचाशद्युता मुहुः ॥ ८० ॥ एकादशे वारे सर्वाग्रं चैवं—२४४१४०६२४९९९९९९९९९९९ अंका एकविंशतिः.

सप्तचत्वारिंशदाढ्यं शतमेकव्रतस्य ये । भंगकास्तेऽष्टचत्वारिं—शदा-

---

भंगी, ९ भंगी अने ४९ भंगी संबंधी भंगनी संख्याने पण त्रण काळवडे गुणवा ते न्याय्य छे. एम अमे जाणीए छीए. ४९ भंगना १४७ भंग ए प्रमाणे त्रणवडे गुणवाथी ज आवे छे.

आ व्रतोना भंगो षड्भंगीवडे ज उपर बताव्या छे. एकवीश विगेरे भंगथी घणा भंगो थाय छे. (८७६) ते आ प्रमाणे—एक व्रत संबंधी २१ भंग, तेने बे व्रतना भंग करवा माटे बावीशे गुणीने २१ उमेरवा.(८७७) आ प्रमाणे अग्यार वखत करवाथी तरत ज बार व्रतना भंगनी संख्या १२८५५००२६३१०४९२१५ (अंक सत्तर) आवशे.(८७८)

हवे एक व्रतना जे नव भंग करेला छे तेने दशवडे गुणीने नव उमेरवा. ए प्रमाणे ११ वार करवाथी बार व्रतना ९९९९९९९९९९९९ (अंक बार) भंग आवशे (८७९)

एक व्रतना ४९ भंग कर्या छे तेने पचासवडे गुणीने तेमां ४९ उमेरवा. एम अग्यार वखत करवाथी बार व्रतना २४४१४०६२४९९९९९९९९९९९ (अंक एकवीश) भंग आवशे. (८८०)

एक व्रतना १४७ भंग पूर्वे कर्या छे तेने १४८ वडे गुणीने तेमां १४७ उमेरवा. आ

द्व्यशतताडिताः ॥ ८१ ॥ सप्तचत्वारिंशदाढ्य–शतोपेताः कृता मुहुः । भवं-

---

प्रमाणे अग्यार वार करवाथी ११०४४३६०७७१९६११५३३३५६५५७६०५ (अंक सत्तावीश) वार अतना भंगो आवशे (८८१-८२)

आ पद्भंगी विगेरे स्थानोमां अनुक्रमे आवती बारे राशी उपर नीचे स्थापन करीए तो अर्ध देवकुलिकाना आकार जेवी भूमिने रोके, तेथी आ पांचे खंड देवकुलिका कहेवाय छे. तेमां प्रथम पद्भंगीवाळी देवकुलिकानी स्थापना नीचे प्रमाणे–

(अंक ११)

१—६
२—४८
३—३४२
४—२४००
५—१६८०६
६—११७६४८
७—८२३५४२
८—५७६४८००
९—४०३५३६०६
१०—२८२४७५२४८
११—१९७७३२६७४२
१२—१३८४१२८७२०२

नव भंगनी देवकुलिका.

(अंक १२)

१—९
२—९९
३—९९९
४—९९९९
५—९९९९९
६—९९९९९९
७—९९९९९९९
८—९९९९९९९९
९—९९९९९९९९९
१०—९९९९९९९९९९
११—९९९९९९९९९९९
१२—९९९९९९९९९९९९

२१ भंगनी खंड देवकुलिका नीचे प्रमाणे–

(अंक १७)

१—२१
२—४८३
३—१०६४७
४—२३४२५५
५—५१५३६३१
६—११३३७९०३
७—२४९४३५७८८७
८—५४८७५८७३५३५
९—१२०७२६९२१७७९१
१०—२६५५९९२२७९१४२३
११—५८४३१८३०१४११३२७
१२—१२८५५००२६३१०४९२१५

४९ भंगनी देवकुलिका.

(अंक २१)

१—४९
२—२४९९
३—१२४९९९
४—६२४९९९९
५—३१२४९९९९९
६—१५६२४९९९९९९
७—७८१२४९९९९९९९
८—३९०६२४९९९९९९९९
९—१९५३१२४९९९९९९९९९
१०—९७६५६२४९९९९९९९९९९
११—४८८२८१२४९९९९९९९९९९९
१२—२४४१४०६२४९९९९९९९९९९९९

त्येकादशे वारे सर्वेऽपि व्रतभंगकाः ॥ ८२ ॥ ते चैवं–११०४४३६०७७१९-६११५३३३५६९५७६९५ अंकाः सप्तविंशतिः.

एतेषु षड्भंग्यादिषु स्थानेषु यथाक्रममागता द्वादशापि राशय उपर्यधोभावेन व्यवस्थाप्यमाना अर्द्धदेवकुलिकाकारां भूमिमास्तृणंतीति. एताः पंचापि खंडदेवकुलिका इति व्यपदिश्यंत इति ज्ञेयं. तत्र षड्भंग्या खंडदेवकुलिकास्थापना.

श्रावकपदनिरुक्तं चैवं–अवाप्तदृष्ट्यादिविशुद्धिसंपत्–परं समाचारमनुप्रभातं । शृणोति यः साधुजनादतंद्र–स्तं श्रावकं प्राहुरमी जिनेंद्राः ॥ ८३ ॥ श्रद्धालुतां श्राति पदार्थचिंतना–द्धनानि पात्रेषु वपत्यनारतं । किरत्यपुण्यानि सुसाधुसेवना–दतोऽपि तं श्रावकमाहुरुत्तमाः ॥ ८४ ॥ श्राति पचति तत्त्वार्थश्रद्धानं निष्ठां नयतीति, श्रा पाके इत्यस्य रूपं, इति स्थानांगवृत्तौ.

एवं च विविधैर्भंगैः स्वीकृतव्रतपालकाः । श्रावकाः श्राविकाश्चैषामर्हतां स्यात्परिच्छदः ॥ ८५ ॥

साधुष्वथो गणधर–पदयोग्या भवंति ये । उत्पत्तिनाशध्रौव्यार्थां त्रिपदीं शिक्षयंति तान् ॥८६॥ अधीत्य त्रिपदीं तेऽपि मुहूर्त्ताद्बीजबुद्धयः ।

श्रावक पदनो अर्थ आ प्रमाणे–प्राप्त करी छे सम्यग्दृष्टि विगेरे विशुद्धरूप संपत्ति जेणे एवो, दररोज प्रभाते सामाचारीने साधुजन पासेथी सांभळनारो अने तंद्रा विनानो जे होय तेने जिनेंद्रो श्रावक कहे छे. (८८३) पदार्थोना चिंतवनवडे श्रद्धालुताने 'श्राति'–धारण करे छे, पोतानुं धन पात्रने विषे निरंतर 'वपंति'–वावे छे–वापरे छे अने सुसाधुना सेवनथी अपुण्य जे पाप तेने 'किरंति'–विखेरी नांखे छे, ते कारणथी पण उत्तम जनो तेने श्रावक कहे छे (८८४) श्राति एटले पचति. तत्त्वार्थ श्रद्धान प्रत्ये निष्ठां नयति–निष्ठा पमाडे छे. ' श्रा पाके ' ए धातुनुं रूप छे एम स्थानांगसूत्रनी वृत्तिमां कहेलुं छे.

आ प्रमाणे विविध प्रकारना भंगोवडे ग्रहण करेला व्रतोने जे पाळे छे, तेवा श्रावक अने श्राविकाओ अरिहंतनी पर्षदा होय छे. (८८५)

हवे साधुओमां गणधरपदने योग्य जे होय तेमने उत्पत्ति, नाश अने ध्रौव्य अर्थवाळी त्रिपदी भगवंत शिखवे छे–संभळावे छे. (८८६) ते त्रिपदीनो अभ्यास करीने

रचयंति द्वादशांगीं विचित्ररचनांचितां ॥ ८७ ॥ ततः सौगंधिकरत्न-चूर्णस्थालं करे धृतं । शक्रः पुरो ढौकयति पदस्थापनहेतवे ॥ ८८ ॥ तिष्ठंति चार्द्धावनताः पदयोग्याः पुरोऽर्हतां । गंधवासांस्तच्छिरस्सु क्षिपंते मुष्टिभिर्जिनाः ॥ ८९ ॥ ददते सूरिमंत्रं च तेभ्यस्तीर्थप्रवर्तकाः । द्रव्यक्षेत्रकालभावै-स्तीर्थानुज्ञां च कुर्वते ॥ ९० ॥ कुर्वंति सर्वे शक्राद्या देवाः पदमहोत्सवं । वर्यैस्तूर्यत्रिकैर्हर्ष-प्रकर्षोल्लसदाशयाः ॥ ९१ ॥

सूत्रं गणधरा एव ग्रथ्नन्त्येते महाधियः । दिशंति केवलानेव प्रायोऽर्थांस्तीर्थपाः पुनः ॥ ९२ ॥ यथोच्चैः सहकारादि-तरुमारूढवान्नरः । स्वजनानामधःस्थाना-मुपकाराय शालिनां ॥ ९३ ॥ फलानां कुरुते वृष्टिं द्वित्राः केचन तेषु च । पतंति तानि गृह्णंति पटेन प्रभविष्णवः ॥ ९४ ॥ अथ ते तान्युपादाय संस्कृत्य च यथाविधि । उपयोज्य प्रीणयंति स्वजनानात्मनोऽपि च ॥ ९५ ॥ तथा तीर्थकरा ज्ञान-कल्पद्रुमशिरःस्थिताः । भव्यानामुपकाराय वर्षंत्यर्थाननुत्तरान् ॥९६॥ गृह्णंति तान् गणधरा विन-

---

तेओ पण बीजबुद्धिवाळा होवाथी मुहूर्त्त (बे घडी) मां द्वादशांगी विचित्र रचनायुक्त रचे छे. (८८७) त्यारपछी गणधरपदनी स्थापना माटे इंद्र सौगंधिक पदार्थोथी भरेलो रत्ननो थाळ हाथमां लइने प्रभुनी पासे धरे छे. (८८८) ते वखते गणधरपदने योग्य मुनिओ अरिहंतनी सामे अर्धअवनतस्थितिए श्रेणिबंध उभा रहे छे. तेमना मस्तक उपर जिनेश्वर भरेली मुष्टिवडे सुगंधी वासक्षेप नाखे छे. (८८९) तेमने सूरिमंत्र आपे छे अने तीर्थना प्रवर्तक तीर्थंकर द्रव्य, क्षेत्र, काळ, भाववडे तेमने तीर्थनी अनुज्ञा आपे छे. (८९०) ते वखते इंद्रादि सर्व देवो ते पदनो महोत्सव श्रेष्ठ एवा त्रणे प्रकारना वाजित्रो वगाडता अत्यंत उल्लसायमान आशयवाळा थइने करे छे. (८९१)

सूत्रो महाबुद्धिवाळा गणधरो ज गुंथे छे अने तीर्थंकरो प्राये केवळ अर्थनो ज उपदेश करे छे. (अर्थ कहे छे.) (८९२) जेम कोइ सहकारादि वृक्ष पर आरूढ थएल मनुष्य नीचे रहेला स्वजनोना उपकार माटे सुंदर (पाकां) फळोनी वृष्टि करे छे-तेमांथी कांइक बे त्रण स्वजनो ते पडतां फळोने वस्त्रवडे ग्रहण करवा शक्तिमान् थाय छे. (८९३-९४) पछी ते फळ मेळवनार ते फळ लइने, यथाविधि संस्कार करीने पोताना स्वजनोने एकठा करीने, तेमने खावा आपी प्रेम उत्पन्न करे छे; पोते पण खाय छे. (८९५) ते ज प्रमाणे ज्ञानरूप कल्पवृक्ष उपर स्थित थयेला तीर्थंकरो भव्यजनोना उपकारने माटे अनुत्तर एवा अर्थने वरसावे छे, (८९६) तेने गणधरो बुद्धिरूप पट विस्तारीने तेमां ग्रहण करे

स्य धिषणापटं । आत्मानं रचितैस्तैश्चा–नुगृह्णंत्यपरानपि ॥ ९७ ॥ यथा फलानि व्यस्तानि न सर्वानुपकुर्वते । कृतार्था न तथैवार्थाः स्युः सूत्ररचनां विना ॥ ९८ ॥ मुक्ताफलानि व्यस्तानि शतानि कुसुमानि वा । नासूत्राण्युपयुज्यंते तथार्था अपि देहिनां ॥ ९९ ॥

यादृक्स्वरूपाः सार्वेंद्राः प्राच्यां सिंहासनस्थिताः । तन्वते देशनां दीप्यमाना लोकोत्तरश्रिया ॥ १०० ॥ तथैव शेषदिक्ष्वर्ह–त्प्रतिमाः सुरनिर्मिताः । विदध्युर्देशनां मूल–स्वरूपादविशेषिताः ॥ १ ॥ जनः कोऽपि न जानाति स्वरूपेषु चतुर्ष्वपि । मूलस्वरूपं कतम–त्कतमद्वात्र कृत्रिमं ॥ २ ॥ तथाहुः–जे ते देवेहिं कया तिदिसिं पडिरूवगा जिणवरस्स । तेसिं पि तप्पभावा तयाणुरूवं हवइ रूवं ॥३॥ प्रतिरूपेषु यत्तेषु नाकिभिर्विहितेष्वपि । रूपं स्याद्भगवत्तुल्यं तन्महिम्नैव तध्धुवं ॥ ४ ॥ अन्यथा तु सुराः सर्वे यदि संभूय कुर्वते । अंगुष्ठप्रमितं रूपं सर्वशक्तिप्रयत्नतः । ॥ ५ ॥ तज्जगज्जैत्ररूपार्ह–त्पादांगुष्ठस्य सन्निधौ । निर्वाणांगारविच्छायं

छे. पछी तेने ग्रन्थ (द्वादशांगी) रूप रचीने पोताने तेम ज परने तेनावडे उपकार करे छे. (८९७) जेम छुटा छुटा पडेला फळो सर्वनो उपकार करी शकता नथी तेम सूत्ररचनाविना अर्थो कृतार्थ थता नथी. (८९८) छुटा मुक्ताफळो तेम ज सेंकडो कुसुमो सूत्रवडे गुंथ्या विना माळा तरीके पहेरवाना उपयोगमां आवता नथी तेम प्राणीओने छुटा अर्थो पण उपयोगी थता नथी. (८९९)

जेवी रीते सर्वज्ञ प्रभु पूर्वदिशाना सिंहासन उपर बेसीने लोकोत्तर लक्ष्मीवडे शोभता सता देशना आपे छे, (९००) तेम बाकीनी त्रण दिशाए पण देवनिर्मित अरिहंतनी प्रतिमा मूळस्वरूपथी अविशेषपणे (तेना सरखी ज) देशना आपे छे. (९०१) तेथी कोइ पण मनुष्य चार स्वरूपमां मूळ स्वरूप कयुं ने कृत्रिम स्वरूपो कयां ते जाणी शकता नथी. (९०२) कह्युं छे के–देवोना करेला ते त्रणे दिशाना प्रतिरूपमां पण भगवंत सदृश रूप ध्रुवपणे प्रभुना महिमाथी ज थाय छे. (९०३) जो के प्रभुना प्रतिरूपने देवो बनावे छे तो पण प्रभुना महिमाथी ज ते प्रतिरूप प्रभुतुल्य थाय छे. (९०४) जो ए कारण न होय तो सर्व देवो एकठा थइने सर्व शक्तिना प्रयत्नथी एक अंगुष्ठ प्रमाणरूप विकुर्वे तो ते जगतना रूपने जीतवावाळा प्रभुना पगना अंगुष्ठनी पासे पण दुर्वादीओना वृंदनी जेम

भवेद्दुर्वादिवृंदवत् ॥ ६ ॥ आहुश्च—यैः शांतरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वं निर्मापितस्त्रिभुवनैकललामभूत । तावंत एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति ॥ ७ ॥ तादृशाच्चार्हतां रूपा—ज्जगद्वाचामगोचरात् । अनंतगुणहीनाः स्यु—रूपतो गणधारिणः ॥ ८ ॥ तेभ्यश्चाहारका देहा अनंतगुणहीनकाः । तेभ्योऽप्यनुत्तरा देवा—स्ततोऽधोऽधः क्रमात्सुराः ॥ ९ ॥ यावद्व्यंतरगीर्वाणा—स्तेभ्यश्च चक्रवर्त्तिनः । वासुदेवा बलदेवा महामांडलिकाः क्रमात् ॥१०॥ अनंतगुणहीनाः स्युस्तच्छेषास्तु नृपादयः । लोकाः सर्वेऽपि षट्स्थान—पतिता रूपतो मिथः ॥ ११ ॥ अनंता १ संख्य २ संख्येय ३—भागहीनाः परस्परं । संख्येया ४ संख्येया ५ नंत ६—गुणहीनाः स्वरूपतः ॥ १२ ॥ तादृग्रूपाश्च तेऽर्हंतो मनोनयनसौख्यदाः । जनानामभिगम्याः स्यु—रुपादेयगिरोऽपि च ॥ १३ ॥ तथा तादृक् प्रभो रूपं निरूप्यानुत्तरं जनाः । त्यक्तरूपाभिमानाः स्यु—र्न नीचैर्गोत्रबंधिनः ॥ १४ ॥ धर्मादेवाप्यते रूप—मीदृगैश्वर्य-

---

बुझी गयेल अग्नि (कोयला) जेवो लागे. (९०५-६) श्री भक्तामरस्तोत्रमां कह्युं छे के—'हे त्रण भुवनना अद्वितीय ललामभूत प्रभु ! जे शांतरागनी रुचिवाळा परमाणुओवडे आपनुं रूप बनाववामां आव्युं छे तेवा परमाणुओ आ जगतमां तेटला ज हता, जेथी आपना रूप सरखुं रूप आ जगतमां बीजुं जणातुं नथी.' (९०७) जगतनी वाचाने अगोचर एवा तेवा प्रकारना अरिहंतना रूप करतां गणधरोनुं रूप अनंतगुणहीन होय छे, (९०८) ते करतां आहारक देह अनंतगुणहीन होय छे, ते करतां अनुत्तर विमानवासी देवोनुं रूप अनंतगुणहीन होय छे. ए प्रमाणे नीचे नीचे उतरतां यावत् व्यंतर देवोनुं रूप अनंतगुणहीन होय छे. ते करतां चक्रवर्त्तीनुं, वासुदेवनुं, बळदेवनुं, महामांडलिकनुं अनुक्रमे अनंत अनंतगुणहीन होय छे. शेष राजादिक सर्वे लोकोनुं रूप अंदर अंदर षट्स्थान पतित होय छे. (९०९-११)—एटले अनंतभागहीन, असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन, असंख्यातगुणहीन, अनंतगुणहीन एवा स्वरूपथी होय छे. (९१२) तेवा प्रकारना रूपवाळा अरिहंतो मन तथा नेत्रने सुख आपनार तेम ज लोकोने तेमनी पासे जवानी इच्छा थाय तेवा तेम ज तेमनी वाणी अंगीकार्य ज थाय एवा होय छे.(९१३) तेवा प्रकारनुं अनुत्तर एवुं प्रभुनुं रूप जोइने जीवो रूपनुं अभिमान तजी दे छे तेथी नीचगोत्रने बांधता नथी. (९१४) तेवा प्रकारनुं अरिहंतनुं रूप जोवाथी जनो एम विचारे छे के—

बंधुरं। इति धर्मे प्रवर्त्तंते तेऽर्हद्रूपनिरूपणात् ॥ १५ ॥ यदीदृग्रूपभाजोऽपि राजवंश्या जिनेश्वराः। यतंते संयमे तर्हि वयं किं न यतामहे ? ॥ १६ ॥ इत्यालोच्याल्पकर्माणो यतंते केऽपि संयमे। बहुधेत्यर्हतां रूपं भवेल्लोकोपकारकृत् ॥ १७ ॥ यथा रूपं तथा संह–ननं संस्थानमेव च। वर्णो गतिः स्वरस्सत्त्वं स्यादुच्छ्वासाद्यनुत्तरं ॥ १८ ॥ अन्यासामपि सर्वासां प्रकृतीनामनुत्तराः। प्रशस्ताः स्युः परीपाका–स्तादृक्त्वान्नामकर्मतः ॥ १९ ॥ असातवेदनीयाद्या दुष्टाः प्रकृतयोऽपि याः। दुग्धाब्धौ निंबनिर्यास–बिंदुवत्ता न दुःखदाः ॥ २० ॥

अर्हतां पादमूले च सदा सन्निहितो भवेत्। प्रायो गणधरो ज्येष्ठः कदाचिदपरोऽपि वा ॥२१॥ परं न स्वामिपादाब्ज–मेकेन गणधारिणा। भवेत्कदापि रहितं त्रिदशेनेव नंदनं ॥ २२ ॥

ज्येष्ठो गणी सोऽपरो वा प्रणम्य परमेश्वरान्। पार्श्वे निषीदत्याग्नेय्या–मन्येऽप्येवं गणाधिपाः ॥ २३ ॥ मुनयः केवलज्ञान–शालिनोऽथ

आवुं ऐश्वर्यथी व्याप्त रूप धर्मथकी ज प्राप्त थइ शके छे एम विचारीने तेओ अरिहंतना रूपने जोवाथी धर्ममां प्रवृत्ति करे छे. (९१५) वळी आवा अद्वितीय रूपना भाजन जिनेश्वरो राजवंशवाळा छतां पण संयममां प्रवृत्ति करे छे तो अमे तेवो प्रयत्न केम न करीए ? (९१६) आ प्रमाणे विचारीने अल्पकर्मवाळा घणा जनो संयममां प्रवृत्ति करे छे. आ रीते घणे प्रकारे अरिहंतनुं रूप लोकोने उपकार माटे थाय छे. (९१७) जेम रूप तेम ज संहनन, संस्थान, वर्ण, गति, स्वर, सत्त्व अने उच्छ्वास पण अनुत्तर होय छे. (९१८) बीजी पण बधी शुभ प्रकृतिओनो उदय तेवा प्रकारना नामकर्मने लीधे अनुत्तर अने प्रशस्त होय छे. (९१९) असातावेदनीय विगेरे अशुभ (दुष्ट) प्रकृतिओ पण क्षीरसमुद्रमां लींबडाना रसना बिंदुनी जेम दुःख आपनारी थती नथी—निष्फळ थाय छे. (९२०)

अरिहंतनी पासे निरंतर प्रायः ज्येष्ठ गणधर रहे छे. कोइ वखत बीजा गणधर पण रहे छे, (९२१) परंतु कोइ पण वखत एक गणधररहित तो प्रभु होता ज नथी, जेम देवतावडे नंदनवन विरहित होतुं नथी तेम. (९२२) हवे बार पर्षदा समवसरणमां केवी रीते बेसे छे ते बतावे छे.—

प्रथम ज्येष्ठ गणधर अथवा बीजा गणधर परमेश्वरने प्रणाम करीने अग्निकोणमां प्रभुनी पासे बेसे छे. तेमनी पाछळ बीजा गणधरो बेसे छे. (९२३) केवळज्ञानी मुनिओ

जिनेश्वरान् । त्रिश्च प्रदक्षिणीकृत्य कृत्वा तीर्थनमस्कृतिं ॥ २४ ॥ यथाक्रमं निविष्टानां पृष्ठतो गणधारिणां । निषीदंति पदस्थानां रत्तंतो गौरवं स्थितेः ॥ २५ ॥ कृतकृत्यतया तादृ–क्कल्पत्वाच्च जिनेश्वरान् । न नमस्यंति तीर्थं तु नमंत्यर्हन्नमस्कृतं ॥ २६ ॥ उक्तं च धनपालेन महात्मना–होही मोहुच्छेओ, तुह सेवाए धुव त्ति नंदामि । जं पुण न वंदिअव्वो, तत्थ तुमं तेण जिज्झामि ॥ २७॥ मनःपर्यायज्ञान्याद्या–स्ततोऽतिशयिसाधवः । नत्वार्हत्तीर्थगणिनः सर्वज्ञांश्चासते ततः ॥ २८ ॥ तेषां च पृष्ठतः शेष–संयता अर्हदादिकान् । प्रणिपत्य निषीदंति विनयेन यथाक्रमं ॥ २९ ॥ तेषां च पृष्ठतो वैमा–निकदेव्योऽर्हदादिकान् । प्रणिपत्यासते तासां पृष्ठे साध्व्यस्तथैव च ॥ ३० ॥ इत्येताः पर्षदस्तिस्रो निषीदंत्यग्निकोणके । प्रविश्य पूर्वद्वारेण कृत्वा चार्हत्प्रदक्षिणां ॥ ३१ ॥ देव्योऽथ भवनज्योतिर्व्यंतराणामिति त्रयं । याम्यद्वारा प्रविश्यास्ते नैर्ऋत्यां दिशि पर्षदां ॥३२॥ सुरास्त्रयोऽमी पूर्वोक्ताः पुनस्तिष्ठंत्यनुक्रमात् । प्रविश्य पश्चिमद्वारा वा-

---

जिनेश्वरने त्रण प्रदक्षिणा दइने तेमने नमस्कार करीने अनुक्रमे बेठेला गणधरोनी पाछळ बेसे छे. पदस्थनी स्थितिनुं गौरव तेओ जाळवे छे. (९२४–२५) केवळज्ञानीओ कृतकृत्य थयेला होवाथी अने तेवो कल्प होवाथी तेओ जिनेश्वरने नमता नथी, परंतु अरिहंते नमस्कार करेला तीर्थने नमस्कार करे छे. (९२६) धनपाळ महात्माए कह्युं छे के–'हे प्रभु ! तमारी सेवाथी (मारा) मोहनो उच्छेद जरुर थशे एम धारी हुं आनंद पामुं छुं, परंतु मोहनो क्षय थया पछी आपने वंदाशे नहीं एम धारीने हुं खेद पामुं छुं.' (९२७) केवळज्ञानीनी पाछळ मनःपर्यवज्ञानी, (अवधिज्ञानी, चौदपूर्वी) विगेरे बेसे छे. तेमनी पाछळ अतिशयवाळा साधुओ बेसे, ते सर्व अरिहंतने, तीर्थने, गणधरने अने केवळीओने नमस्कार करीने बेसे छे. (९२८) तेनी पाछळ सामान्य मुनिओ अरिहंतादिकने विनयपूर्वक नमस्कार करीने अनुक्रमे बेसे, (९२९) तेमनी पाछळ वैमानिक देवीओ अरिहंतादिकने नमस्कार करीने उभी रहे, तेमनी पाछळ साध्वीओ ते ज प्रकारे अरिहंतादिकने नमस्कार करीने उभी रहे. (९३०) आ त्रण पर्षदा पूर्वद्वारवडे समवसरणमां प्रवेश करीने अरिहंतने त्रण प्रदक्षिणा दइने अग्निकोणमां बेसे (९३१) हवे भवनपति, व्यंतर ने ज्योतिषीनी देवीओ ए त्रण पर्षदा दक्षिणद्वारथी प्रवेश करीने नैर्ऋत्यकोणमां बेसे. (९३२) ए ज प्रमाणे भवनपति, व्यंतर ने ज्योतिषीना देवोरूप त्रण

यर्व्या विनयानताः ॥ ३३ ॥ वैमानिकाः सुरास्सेंद्रा मनुजा मनुजस्त्रियः । प्रविशंत्युत्तरद्वारा तिष्ठंत्यैशानकोणके ॥ ३४ ॥ पर्षदो द्वादशाप्येवं निषीदंत्युक्तदिक्ष्विमाः । प्रदक्षिणीकृत्य नत्वा–र्हतो गण्यादिकांस्तथा ॥ ३५ ॥ आयाति यो यज्जातीयः स तत्पर्षदि तिष्ठति । न तत्र मानो द्वेषो वा न भयं न नियंत्रणा ॥ ३६ ॥ महर्द्धिकं समायांतं नमंत्यल्पर्द्धिकाः स्थिताः। व्रजंतोऽपि नमंतोऽमी यांति प्रौढर्द्धिकं स्थितं ॥ ३७ ॥ यो यो यस्य परीवारो यो वा यन्निश्रयाऽऽगतः । त्रिदशो वा मनुष्यो वा स तत्पार्श्वे निषीदति ॥ ३८ ॥

देव्यश्चतुर्द्धा साध्व्यश्च शृण्वंत्यूर्ध्वंदमाः क्षणं । देवाः सर्वे नरा नार्यो निविष्टाः श्रमणास्तथा ॥ ३९ ॥ वृत्तावावश्यकस्येदं चूर्णौ चोत्कटिकासनाः । शृण्वंति साधवोऽथोर्ध्वाः साध्व्यो वैमानिकांगनाः ॥ ४० ॥ उपविश्यैव शृण्वंति देशनामाप्तभास्वतां । पर्षदोऽन्या न वेत्युक्तं वेत्ति

पर्षदाना देवो पश्चिमद्वारे प्रवेश करी विनयवडे नमता सता वायव्य कोणमां बेसे. (९३३) इंद्रो सहित वैमानिक देवो, मनुष्य अने मनुष्यनी स्त्रीओ (ए त्रण पर्षदा) उत्तरद्वारथी प्रवेश करी ईशानकोणमां बेसे. (९३४) आ प्रमाणे बारे पर्षदा प्रभुने प्रदक्षिणा करीने तथा अरिहंत अने गणधरादिकने नमस्कार करीने उपर कह्या प्रमाणे विदिशाओमां बेसे. (९३५) नवो जे आवे ते पोतानी जातिनी पर्षदामां बेसे. तेमां मान, द्वेष, भय के नियंत्रणा बीलकुल होतां नथी (९३६) कोइ महर्द्धिक आवे तो तेने प्रथम बेठेला अल्पर्द्धिवाळाओ नमे अने अल्पर्द्धिवाळा जाय तो बेठेला महर्द्धिकने नमीने जाय. (९३७) जे जेना परिवारनो होय अथवा जे जेनी निश्राए आव्यो होय ते मनुष्य के देव तेनी पासे ज बेसे. (९३८)

उपर जणावेली १२ पर्षदामांथी चार प्रकारनी देवीओ ने साध्वीओ उभा उभा देशना सांभळे अने चार प्रकारना देवो, मनुष्य, मनुष्यनी स्त्रीओ अने साधुओ–(ए ७ पर्षदा) बेसीने देशना सांभळे. (९३९) आवश्यकवृत्तिमां आ प्रमाणे कह्युं छे, परंतु तेनी चूर्णिमां कह्युं छे के–साधुओ उत्कटिकासने रह्या सता सांभळे अने वैमानिकनी देवी तथा साध्वीओ बे पर्षदा ज उभी रहीने सांभळे. (९४०) बाकीनी नव पर्षदा आप्तमां सूर्यसमान परमात्मानी देशना बेसीने सांभळे के उभी रहीने सांभळे ते विषे कांइ कह्युं नथी[1]. तत्त्व केवळी जाणे.

१ बाकीनी नव पर्षदा बेसीने सांभळे एम पण कहेल छे आ गाथाना चोथा पदनो अर्थ पण तेवो करे छे.

तत्त्वं तु तत्त्ववित् ॥ ४१ ॥ अपूर्वं यत्र समव–सरणं नेक्षितं च यैः । अपि द्वादशयोजन्या–स्ते तत्रायांति साधवः ॥ ४२ ॥ अथ चेत्साधव-स्तत्र ते नायांति श्लथादराः । तत्प्रायश्चित्तमर्हंति चतुर्गुरुकसंज्ञकं ॥ ४३ ॥ आगच्छतां च बालानां ग्लानानां जरतामपि । न कोऽप्युपद्रवो नार्त्ति–र्न त्रासः स्यान्न वा श्रमः ॥ ४४ ॥ तावदुत्तुंगसोपान–सहस्रारोहणे भवेत् । न कस्यापि श्रमश्वास–व्यथाः शंभुप्रभावतः ॥ ४५ ॥ स्त्रीक्षेत्रवित्ता-द्युत्थानि पितृघातोदितान्यपि । तत्रागतानां शाम्यंति द्रुतं वैराणि पाप-वत् ॥ ४६ ॥ युद्ध्यमाना मिथः क्रूराः क्रोधरक्तेक्षणाननाः । कंपमाना उदस्तास्त्रा उच्छुंडाः कुंजरा इव ॥ ४७ ॥ भवंति ये तेऽपि तत्रा–गता विस्मृतविग्रहाः । प्रशांतचित्ताः शृण्वंति धर्मं स्वामिप्रभावतः ॥ ४८ ॥ न कोऽपि विकथां कुर्या–द्व्याक्षेपं कोऽपि नापरं । तदेकचित्ताः शृण्वंति जिनानां देशनां जनाः ॥ ४९ ॥

शृण्वंति येऽपि तिर्यंचः स्थिता वप्रे द्वितीयके । तेऽपि विस्मृतजा-त्यादि–वैराः स्युस्तत्प्रभावतः ॥ ५० ॥ पार्श्वस्थं सिंहमानंगं शार्दूलहरिणं

(९४१) ज्यां अपूर्व (नवुं ज) समवसरण थयुं होय अने जेमणे समवसरण जोयुं ज न होय तेवा साधु बार योजनथी पण त्यां आवे. (९४२) जो कोइ साधु शिथिल आदरवाळा थइने न आवे तो तेने चतुर्गुरु नामनुं प्रायश्चित्त आवे. (९४३) समवसरणमां आवता बाळोने, ग्लानोने, वृद्धोने कोइ पण प्रकारनो उपद्रव न थाय, पीडा न थाय, त्रास न थाय अने थाक न लागे. (९४४) एटला बधा उंचा (वीश हजार) पगथीआओ चढतां कोइने पण प्रभुना प्रभावथी श्रम, श्वास के व्यथा न थाय. (९४५) स्त्री, क्षेत्र के द्रव्यादिना हरणादिकथी उत्पन्न थयेला तेम ज पितृघातादिथी थयेला वैरो त्यां आवनारना पापनी जेम तत्काळ शमी जाय छे. (९४६) अंदरअंदर युद्ध करनारा, क्रूर, क्रोधवडे लाल-मुखवाळा, कंपता अने शस्त्रो उंचा करेला होवाथी जाणे उंची करेली सुंढवाळा हाथी ज होय तेम तेओ त्यां आवतां ज प्रभुना प्रभावथी विग्रह (क्लेश)ने भूली जनारा अने प्रशांत चित्तवाळा थइ देशना सांभळे छे. (९४७–४८) त्यां कोइ विकथा करतुं नथी, कोइ बीजाने व्याक्षेप करतुं नथी, सर्वे जनो एक चित्ते प्रभुनी देशना सांभळे छे (९४९)

बीजा गढमां जे तिर्यंचो रहेला छे, ते पण प्रभुना प्रभावथी जातिवैरने पण भूली जइने देशना सांभळे छे. (९५०) पासे रहेला हाथी ने सिंह, हरिण ने शार्दूल, पारेवा ने

तथा । श्येनपारापतं व्याघ्र–च्छागं मार्जारमूषकं ॥ ५१ ॥ महिषाश्वं च नकुल–सर्पं शूकरकुर्कुरं । एकाग्रचित्ताः शृण्वंति प्रभोरत्यमृतं वचः ॥ ५२ ॥ बिभेति तत्र नो बाध्यो बाधकस्तं न बाधते । स्युः सार्वातिशयाच्छांत–रसतृप्ताः समेऽपि ते ॥ ५३ ॥

प्रथमां पौरुषीं याव–द्धर्ममाख्याति पारगाः । अत्रांतरे च यस्तत्र चक्रवर्त्यादिको नृपः ॥ ५४ ॥ श्राद्धोऽमात्यादिको वा य–स्तदभावे च पूर्जनः । जनो जानपदो वापि सज्जयत्यद्भुतं बलिं ॥ ५५ ॥ तण्डुलास्तत्र कलम–शालीनां स्युः सितत्विषः । उद्दामसौरभाः स्निग्धा–स्तनवः कोमला भृशं ॥ ५६ ॥ दुर्बलाकंडिताः पूता बलवत्याऽतिनिस्तुषाः । अखंडाग्राश्चतुःप्रस्थ–प्रमिताढकसंमिताः ॥ ५७ ॥ अर्पिताः स्वजनानां ये तुषभग्नादिशुद्धये । पुनस्तेभ्यः समुच्चित्य शोधिताः शुद्धवारिणा ॥ ५८ ॥ अर्द्धस्विन्नानिमान् रत्नस्थाले निक्षिप्य निर्मले । सज्जिताखिलशृंगारा मौलौ धत्ते सुवासिनी ॥ ५९ ॥ गंधद्रव्याणि दिव्यानि निक्षिपंत्यत्र

श्येन (बाज), बोकडा ने वाघ, उंदर ने बिलाडी, अश्व ने महिष (पाडो), सर्प ने नोळीओ, भुंड ने कुतरो–ए सर्व प्रभुनी अमृतथी पण श्रेष्ठ देशना एकाग्र चित्ते सांभळे छे. (९५१–५२) बाध्य एवा पशुओ त्यां बीता नथी अने बाधक तेने बाध करता नथी. सर्वज्ञना अतिशयथी सर्वे जीवो शांतरसमां तृप्त थयेला होय छे. (९५३)

पहेली पौरुषी पूर्ण थतां सुधी तीर्थंकर देशना आपे छे. ते वखते त्यां चक्रवर्त्यादिक जे अग्रणी राजा होय ते अथवा श्रावक के अमात्य विगेरे, तेने अभावे नगरजनो अने देशना जनो अद्भुत एवो बलि तैयार करे छे. (९५४–५५) ते बलिमां कलमशाळीना तंदुलो (चोखा) उज्वळ वर्णवाळा, उद्दाम सुगंधवाळा, स्निग्ध, पातला, अत्यंत कोमळ, दुर्बळ स्त्रीए खांडेला, पवित्र, बळवाळी स्त्रीए फोतरारहित करेला, अखंड, अणीशुद्ध चार प्रस्थ अथवा एक आढक प्रमाण होय छे. (९५६–५७) ते चोखा प्रथम फोतरा तेम ज खंडित चोखा काढी नाखवा माटे स्वजनोने आपेला होय, तेमनी पासेथी आव्या पछी पण फरीने शोध्या होय अने शुद्ध पाणीवडे धोया होय, पछी तेने अर्ध पक्व[1] करी निर्मळ रत्नना थाळमां नांखीने अखिल शृंगारवडे सज्ज थयेली सौभाग्यवंती स्त्री तेने माथापर लेय. (९५८–५९) तेमां देवताओ दिव्य एवा सुगंधी द्रव्यो नांखे तेथी ते बलि अत्यंत

१ अर्ध पाकेलो–तद्दन पाकेलो नहीं.

नाकिनः । तेनासौ भूरिसौरभ्य--सुभगो जायते बलिः ॥ ६० ॥ नीयते गीतवाद्यादि—महोत्सवपुरस्सरं । श्राद्धेनासौ प्रभोरग्रे श्लाघ्यमानेन धार्मिकैः ॥ ६१ ॥ पूर्वद्वारा प्रविशति बलिरेवं महामहैः । तस्मिन्नागतमात्रे च विरमंति च्चणाज्जिनाः ॥ ६२ ॥ ततः स चक्रवर्त्यादिः श्रावको बलिना सह । तिस्रः प्रदक्षिणाः कृत्वा प्राच्यां प्रभुपदांतिके ॥ ६३ ॥ किरत्याशासु सर्वासु तं बलिं प्रौढमुष्टिभिः । तस्य प्रागेव भूपाता--दर्द्धं गृह्णंति नाकिनः ॥ ६४ ॥ अर्द्धं च शेषस्यार्द्धस्य गृह्णात्येनद्विधायकः । अवशिष्टं यथालाभं गृह्णंत्यन्येऽखिला जनाः ॥ ६५ ॥ मूर्ध्नि न्यस्तेन तस्यैक—कणेनास्य भाग्यतः । रोगाः सर्वेऽपि शाम्यंति पर्जन्येनेव वह्नयः ॥ ६६ ॥ प्रादुर्भवति षण्मासा—वधि रोगो न नूतनः । तस्मान्मौलिस्थिताद्रत्नदीपादिव तमोंकुरः ॥ ६७ ॥

इत्थं बलिविधौ पूर्णे जिनाः प्रथमवप्रतः । अवतीर्य द्वितीयस्य वप्रस्यैशानकोणके ॥ ६८ ॥ देवच्छंदकमागत्य सुखं तिष्ठंति नाकिभिः । अप्यल्पैः कोटिसंख्याकैः सेविता भृतकैरिव ॥ ६९ ॥ ततो द्वितीयपौरु-

---

सुगंधीवाळो ने सुभग थाय. (९६०) पछी ते बलिने गीत वाजित्र साथे महोत्सवपुरस्सर धार्मिक जनोए प्रशंसा करातो श्रावक त्यांथी लइने चाले. (९६१) आ प्रमाणे महामहोत्सव साथे ते बळि पूर्वद्वारे थइने समवसरणमां आवे एटले तरत ज जिनेश्वर क्षणमात्र देशना देवाथी विरमे. (९६२) पछी चक्रवर्ती विगेरे श्रावको बलिसहित प्रभुनी त्रण प्रदक्षिणा आपे अने पूर्व सन्मुख प्रभु पासे आवीने ते बळि मोटी मुठीओ भरीने सर्व दिशामां उछाळे. तेमांथी पृथ्वीपर पड्या अगाउ अर्ध भाग देवताओ अधरथी ज लइ लेय. (९६३–६४) बाकी रहेला अर्ध भागमांथी अर्ध ते बलिना करावनार लेय. बाकी रहेल बळि जेने मळी शके ते सर्व लोको ग्रहण करे. (९६५) भाग्यवडे प्राप्त थएल आ बळिनो एक कण पण माथे राखवाथी वरसादथी जेम अग्नि शांत थइ जाय तेम सर्व रोगो शांत थइ जाय. (९६६) अने मस्तके राखेला ते कणथी छ मास सुधी नवा रोग उत्पन्न न थाय, रत्नमय दीपवडे जेम अंधकारना अंकुरो उत्पन्न न थाय तेम. (९६७)

आ प्रमाणे बळिनो विधि पूर्ण थाय एटले प्रभु पहेला गढमांथी नीकळे. पगथीआ उतरीने बीजा गढमां ईशान कोणे रहेला देवच्छंदामां आवीने जघन्यथी पण क्रोड प्रमाण देववडे सेवकनी जेम सेवाता प्रभु सुखे बेसे. (९६८–६९) पछी बीजी पौरुषीए आद्य

ष्या–माद्योऽन्यो वा गणाधिपः । सिंहासने नृपानीते । पादपीठेऽथवा-र्हतां ॥ ७० ॥ उपविश्यादिशेद्धर्मो–पदेशमतिपेशलं । स च्छद्मस्थोऽपि भव्यानां पृच्छतां सर्ववेदिवत् ॥ ७१ ॥ व्याकुर्वन् विविधान् भावान् संख्यातीत–भवादिकान् । छद्मस्थोऽयं जिनो वेति न छद्मस्थैः प्रतीयते ॥ ७२ ॥ तथाहुः श्रीभद्रबाहुस्वामिपादाः–राओवणीअसीहासणे निविट्ठो व पायपीढंमि । जेट्ठो अण्यरो वा गणहारि कहेइ बीयाए ॥ ७३ ॥ संखाईए वि भवे साहइ जं वा परो उ पुच्छिज्जा । न य णं अणाइसेसी विआणइ एस छउमत्थो ॥ ७४ ॥ पुनः पाश्चात्यपोरुष्यां स्थित्वा सिंहा-सने जिनाः ॥ कुर्वते देशनां सर्वा व्यवस्थात्रापि पूर्ववत् ॥ ७५ ॥

प्राक्कदापि न जातं स्या–द्यत्र तत्र चतुर्विधाः । कुर्वंति देवाः समव-सरणं विधिनामुना ॥७६॥ जातेऽप्यस्मिन्मुहुर्यत्र देवः कश्चिन्महर्द्धिकः । नंतुमेति स तत्रैकः कुरुते भक्तिमानिदं ॥ ७७ ॥ यदापि न स्यात्समव-सरणं स्यात्तदापि हि । वक्ष्यमाणं प्रातिहार्या–ष्टकं नियतमर्हतां ॥ ७८ ॥

अथवा अन्य गणधर राजाए लावेला सिंहासन उपर अथवा प्रभुना पादपीठ उपर बेसीने अति सुंदर एवो धर्मोपदेश आपे. तेओ छद्मस्थ होय छे छतां पण पूछनारा भव्य जीवोना असंख्याता भव विगेरे विविध भावोने सर्वज्ञनी जेम कहे, ते एवी रीते के बीजा छद्मस्थो एम न जाणी शके के आ छद्मस्थ छे के केवळी छे ? (९७०–७२) ते विषे श्री भद्रबाहुस्वामी कहे छे के—" राजाए आणेला सिंहासनपर अथवा प्रभुना पादपीठ उपर बेसीने मोटा अथवा बीजा गणधर बीजी पोरसीए देशना आपे छे. (९७३) ते वखते बीजो कोइ प्रश्न पूछे तो तेने असंख्याता भवो पण कहे छे जेथी आ गणधर छद्मस्थ छे एम कोइ पण जाणी शके नहीं." (९७४) पछी वळी पाछले पहोरे जिनेश्वर सिंहासनपर बिराजीने देशना आपे, ते वखतनी पर्षदादिकनी व्यवस्था बधी पूर्ववत् जाणवी. (९७५)

पूर्वे ज्यां समवसरण थयुं न होय त्यां चारे प्रकारना देवो मळीने उपर जणाव्या प्रमाणे समवसरण रचे. (९७६) ज्यां वारंवार समवसरण थयेल होय त्यां पण कोइ महर्द्धिक देव नमवा आवे तो भक्तिमान् एवो ते एकलो पण समवसरण रचे. (९७७) ज्यारे समवसरण न होय त्यारे पण अरिहंतना आठ प्रातिहार्यो जे आगळ कहे-वाशे ते तो जरुर होय. (९७८) ते प्रातिहार्यो आ प्रमाणे—

अशोकवृक्षः सश्रीको भवेद्योजनविस्तृतः । चलत्किसलयो भव्यान् कराग्रैराह्वयन्निव ॥ ७९ ॥ अधोवृन्तानि पुष्पाणि पंचवर्णानि नाकिनः । तन्वते जानुदघ्नानि जिनानां देशनावनौ ॥ ८० ॥ मालवकैशिकीमुख्य-ग्रामरागांचितोऽर्हतां । आयोजनं ध्वनिर्दिव्य–ध्वनिमिश्रः प्रसर्पति ॥८१॥ चामराश्चंद्ररुचिरा नमनोन्नमनैर्मुहुः । उच्चैः प्रभुनमस्कारा–च्छंसंतीव गतिं सतां ॥ ८२ ॥ स्वर्णसिंहासनं पाद–पीठयुग्मणिमंडितं । अध्यासते जिना-स्तच्च मार्गे व्योम्नि पुरश्चरेत् ॥ ८६ ॥ छत्रत्रयं तथैवाभ्रे चरत्युज्ज्वल-मौक्तिकं । जगद्वंद्योपरिस्थित्या मुदेवोच्चरकंधरं ॥ ८४ ॥ भामंडलं सार्व-पृष्ठे भात्यर्कस्येव मंडलं । प्रपन्नं शरणायेव नियतास्तकदर्थितं ॥ ८५ ॥ सति प्रभौ कुतः कर्म–कृच्छ्रं लासह्यतेंगिभिः । वक्तीतीवांगिनां गर्ज–स्त-त्पुरो देवदुंदुभिः ॥ ८६ ॥ एवं च–अशोकद्रुः १ पुष्पराशिः २ सध्वनि ३ श्चामरा ४ सने ५। छत्रं ६ भामंडलं ७ भेरी ८ प्रातिहार्याष्टकं ह्यदः ॥८७॥

---

१ शोभायमान एवो अने एक योजन विस्तारवाळो अशोक वृक्ष होय के जे चालतो सतो हलता एवा किसलयना मिषथी जाणे भव्यजीवोने बोलावतो होय एम लागे. (९७९) २ प्रभुने देशना आपवानी पृथ्वी उपर देवो नीचे डींटवाळा पांच वर्णना पुष्पोनी जानुप्रमाण वृष्टि करे. (९८०) ३ मालवकैशिकी मुख्य ग्रामरागमां कहेवाती अरिहंतनी देशनानो ध्वनि दिव्य ध्वनिथी मिश्र थइने एक योजन सुधीमां प्रसार पामे. (९८१) ४ चंद्र जेवा उज्वळ चामरो वारंवार नमवावडे ने उंचे जवावडे प्रभुने नमस्कार करनार सज्जनोनी उच्च गति थाय छे, एम कहेता होय एम जणाय छे. (९८२) ५ मणिमंडित अने पादपीठयुक्त स्वर्णमय सिंहासन उपर प्रभु बेसे छे, अने ज्यारे प्रभु विहार करे छे त्यारे ते आकाशमां रह्युं सतुं साथे चाले छे.(९८३) ६ उज्वळ मौक्तिक संबंधी त्रण छत्र जगद्वंद्य प्रभुनी उपर रहेवाथी हर्षवडे उंची कंधरावाळा थया होय तेम आकाशमां चाले छे. (९८४) ७ नियमित अस्त थवाथी कदर्थना पामेलुं सूर्यनुं मंडळ जाणे शरणने माटे आव्युं होय तेम प्रभुनी पाछळ भामंडळ शोभे छे. (९८५) ८ प्रभु वर्तता छतां शामाटे प्राणीओ कर्मजन्य कष्टने सहन करे छे ? एम जीवोने कहेती होय एम देवदुंदुभि प्रभुनी आगळ वाग्या करे छे. (९८६) आ प्रमाणे अशोकवृक्ष, पुष्पराशि, उत्तम ध्वनि, चामर, सिंहासन, छत्र, भामंडळ ने देवदुंदुभि (भेरी) ए आठ प्रातिहार्यो जाणवा. (९८७)

तथा चतुस्त्रिंशता ते-ऽतिशयैः सहिता जगत्। दीपयंति प्रकृत्योपकारिणो भास्करादिवत् ॥ ८८ ॥ अतिशयांश्चैवमाहुः—

तेषां च देहोऽद्भुतरूपगंधो निरामयः स्वेदमलोज्झितश्च १। श्वासोऽब्जगंधो २ रुधिरामिषं च गोक्षीरधाराधवलं ह्यविस्रं ३ ॥ ८९॥ आहारनीहारविधिस्त्वदृश्य ४ श्चत्वार एतेऽतिशयाः सहोत्थाः। क्षेत्रे स्थितिर्योजनमात्रकेऽपि नृदेवतिर्यग्जनकोटिकोटेः १ ॥ ९० ॥ वाणी नृतिर्यक्सुरलोकभाषा-संवादिनी योजनगामिनी च २। भामंडलं चारु च मौलिपृष्ठे विडंबिताहर्पतिमंडलश्रि ३ ॥ ९१ ॥ साग्रे च गव्यूतिशतद्वये रुजो ४ वैरे ५ तयो ६ मार्य ७ तिवृष्ट्य ८ वृष्टयः ९। दुर्भिक्ष १० मन्यस्वकचक्रतो भयं ११ स्युर्नैत एकादश कर्मघातजाः ॥ ९२ ॥

खे धर्मचक्रं १ चमराः २ सपाद-पीठं मृगेंद्रासन ३ मुज्ज्वलं च। छत्रत्रयं ४ रत्नमयध्वजो ५ ह्रि-न्यासे च चामीकरपंकजानि ६ ॥ ९३॥ वप्रत्रयं ७ चारुचतुर्मुखांगता ८ चैत्यद्रुमो ९ ऽधोवदनाश्च कंटकाः १० ।

तथा प्रभु चोत्रीश अतिशयोवडे स्वभावे ज उपकारी एवा सूर्यादिनी जेम जगतमां दीपी रहे छे (९८८) ते अतिशयो आ प्रमाणे—

१ प्रभुनो देह अद्भुत रूप अने गंधवाळो, व्याधिरहित अने प्रस्वेदादि मळरहित होय छे. २ श्वास कमळ जेवो सुगंधी होय छे. ३ रुधिर ने मांस गायना दूध जेवुं उज्ज्वळ अने दुर्गंधरहित होय छे. (९८९) ४ आहार ने निहार चर्मचक्षुथी अगोचर होय छे. आ ४ अतिशयो जन्म साथे ज उत्पन्न थएला होय छे. १ एक योजन प्रमाण समवसरणनी भूमिमां मनुष्य, देवो ने तिर्यंचो कोटाकोटीनी संख्यामां समाय छे. (९९०) २ प्रभुनी वाणी मनुष्य, तिर्यंच ने देवोनी भाषाने अनुसरती अने एक योजनमां संभळाय तेवी होय छे. ३ सूर्यना मंडळनो पण तिरस्कार करे एवुं सुंदर भामंडळ प्रभुना मस्तक पाछळ होय छे. (९९१) ४ चारे दिशाए अढीसें गाउमां व्याधि, वैर, ईति, मारी, अतिवृष्टि, अवृष्टि, दुर्भिक्ष अने स्वचक्र-परचक्रनो भय आ आठ वाना होता नथी. आ ११ अतिशयो घातिकर्मोनो क्षय थवाथी उत्पन्न थाय छे. (९९२)

हवे देवकृत १९ अतिशयो कहे छे. १ आकाशमां धर्मचक्र, २ चामर, ३ सपादपीठ सिंहासन, ४ उज्वळ छत्रत्रय, ५ रत्नमय ध्वज, ६ प्रभुना पग नीचे स्वर्णकमळो, ७ त्रण गढ, ८ सुंदर एवा चार मुख, ९ चैत्यवृक्ष, १० कांटाओनुं अधोमुख थइ जवुं, ११

द्रुमानति ११ दुंदुभिनाद १२ उच्चकै-र्वातोऽनुकूलः १३ शकुनाः प्रदक्षिणाः १४ ॥ ९४ ॥ गंधांबुवर्ष १५ बहुवर्णपुष्प-वृष्टिः १६ कचश्मश्रुनखाप्रवृद्धिः १७ । चतुर्विधामर्त्यनिकायकोटि-र्जघन्यभावादपि पार्श्वदेशे १८ ॥ ९५ ॥ ऋतूनामिंद्रियार्थाना-मनुकूलत्व १९ मित्यमी । एकोनविंशतिर्दैव्या-श्चतुस्त्रिंशच्च मीलिताः ॥ ९६ ॥

यत्तु श्रीसमवायांगसूत्रे एतेषु केचिदतिशया अन्यथा दृश्यंते तन्मतांतरं बोद्धव्यं. चत्वारोऽतिशयाश्चान्ये तेषां विश्वोपकारिणां । पूजा १ ज्ञान २ वचो ३ ऽपाया-पगमाख्या ४ महाद्भुताः ॥ ९७ ॥ अष्टकं प्रातिहार्याणां चत्वारोऽतिशया इमे । इत्येवं द्वादश गुणा अर्हतां परिकीर्त्तिताः ॥ ९८ ॥ गुणैस्ते सकलैः पूर्णा निर्विपक्षस्थितेरिव । नानास्थानाप्तिगर्वेण त्यक्ता दोषैश्च दूरतः ॥ ९९ ॥ तथाहुः-को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषै-स्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश ।। दोषैरुपात्तविविधाश्रयजातगर्वैः स्वप्नांतरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥ १००० ॥

वृक्षोनुं नमवुं, १२ दुंदुभिनो नाद, १३ पवननुं अनुकूळ वावुं, १४ पक्षीओ प्रदक्षिणा आपे, १५ सुगंधी जळनी वर्षा, १६ बहुवर्णना पुष्पोनी वृष्टि, १७ दाढी-मुछना ने मस्तकना केश तथा नखनी अवृद्धि (न वधवुं), १८ जघन्यथी पण प्रभु पासे चार निकायना मळी क्रोड देवोनुं रहेवुं अने १९ छए ऋतुओनुं तेम ज इंद्रियार्थोनुं अनुकूळ वर्तवुं. आ १९ देवकृत अतिशयो छे अने सर्व मळीने (४-११-१९) चोत्रीश अतिशयो थाय छे. (९९३-९६)

श्री समवायांगसूत्रमां केटलाक अतिशयो आ करतां जूदी रीते कहेला देखाय छे ते मतांतर समजवुं. ए विश्वोपकारी प्रभुना चार अतिशय बीजा-पूजातिशय, वचनातिशय, ज्ञानातिशय ने अपायापगमातिशय ए नामना छे. (९९७) आठ प्रातिहार्य अने आ चार अतिशय ए बे मळीने बार अरिहंतना गुणो कहेला छे. (९९८) दोषरूप शत्रुनी स्थिति नहीं होवाथी प्रभु सर्व गुणोवडे परिपूर्ण होय छे अने पोताने अनेक स्थानो मळी गयेला होवाथी दोषोए तो दूरथी ज तेमने तजी दीधा छे. (९९९) श्रीभक्तामरस्तोत्रमां कह्युं छे के-'हे मुनीश ! जो कदाच समस्त गुणोए तमारो निरवकाशपणे आश्रय करेलो छे तो तेमां शुं आश्चर्य छे ? केमके विविधाश्रयनी प्राप्तिवडे थयो छे गर्व जेने एवा दोषोए आपने स्वप्नांतरमां कदाचित् जोया पण नथी. (१०००)

दोषास्तीर्थकृतां यद्य–प्यनंता विलयं गताः । तथाप्यग्रेसरास्तेषा-ममी ह्यष्टादशोदिताः ॥ १००१ ॥ अंतराया ५ दान १ लाभ २–वीर्य ३ भोगो ४ पभोगगाः ५ । हासो ३ रत्य ७ रती ८ भीति ९–र्जुगुप्सा १० शोक एव च ११ ॥ २ ॥ कामो १२ मिथ्यात्व १३ मज्ञानं १४ निद्रा १५ चाविरति १६ स्तथा । रागो १७ द्वेषश्च १८ नो दोषा–स्तेषामष्टाद-शाप्यमी ॥ ३ ॥ हिंसा १ ऽलीक २ मदत्तं च ३ क्रीडा ४ हास्या ५ रती ६ रतिः ७ । शोको ८ भयं ९ क्रोध १० मान ११–माया १२ लोभा १३ स्तथा मदः १४ ॥ ४ ॥ स्युः प्रेम १५ मत्सरा १६ ज्ञान १७–निद्रा १८ अष्टादशेत्यमी । द्वेधापि सप्ततिशत–स्थानके प्रतिपादिताः ॥ ५ ॥

जिनाश्च विहरंत्येते भूमौ विश्वोपकारिणः । भाविभद्रेषु देशेषु भाग्यवल्लो-कशालिषु ॥ ६ ॥ श्राद्धाश्च चक्रवर्त्याद्या–स्तेषां विहरतां सुखं । उदंतशंसिनां नृणां वृत्तिं यच्छंति वार्षिकीं ॥७॥ अर्हत्सुखविहारादि प्रत्यहं ते परापराः । आचक्षते स्वनाथेभ्योऽधिकृतास्तत्र कर्मणि ॥८॥ लक्षाणि स्वर्णटंकाना–मद्धयर्द्धानि त्रयोदश । वृत्तिदानं नियुक्तानां ददते चक्रवर्त्तिनः ॥९॥ वासु-

---

ए परमात्मामांथी अनंता दोषो जो के नाश पामेला छे तथापि दोषोना अग्रेसर तरीके आ अढार दोषो ज गयानुं कहेलुं छे.–१ दानांतराय, २ लाभांतराय, ३ भोगांतराय, ४ उपभोगांतराय, ५ वीर्यांतराय, ६ हास्य, ७ रति, ८ अरति, ९ भय, १० शोक, ११ जुगुप्सा, १२ काम, १३ मिथ्यात्व, १४ अज्ञान, १५ निद्रा, १६ अविरति, १७ राग अने १८ द्वेष. तीर्थकरोमां आ अढारे दोष होता नथी. (१००१–३) बीजी रीते पण १८ दोष कह्या छे ते आ प्रमाणे–१ हिंसा, २ अलीक, ३ अदत्त, ४ क्रीडा, ५ हास्य, ६ रति, ७ अरति, ८ शोक, ९ भय, १० क्रोध, ११ मान, १२ माया, १३ लोभ, १४ मद, १५ प्रेम, १६ मत्सर, १७ अज्ञान अने १८ निद्रा—आ बन्ने प्रकारना अढार दोषो सप्तति-शतस्थानक ग्रंथमां प्रतिपादन करेला छे. (४–५)

विश्वोपकारी एवा ए प्रभु पृथ्वीपर भाविभद्र अने भाग्यवंत लोकोवाळा देशोमां विहार करे छे. (६) सुखेथी विहार करता प्रभुना वृत्तांतने कहेनारा माणसोने चक्रवर्ती विगेरे श्रावको वार्षिक आजीविका करी आपे छे (७) तेथी अरिहंतना सुखविहारादिना समाचार ते कार्यमां जोडेला अनुचरो दररोज पोताना स्वामीने आप्या करे छे. (८) तेमां चक्रवर्ती ते कार्यमां जोडेल अनुचरने साडाबार लाख सोनैयानी आजीविका करी आपे

देवास्तु रौप्याणां लक्षाः सार्द्धास्त्रयोदश । दद्युर्मांडलिकाः सार्द्धा–स्त्रयोदश सहस्रकान् ॥१०॥ अर्हदागमनोदंतं यदा यः कोऽपि शंसति । प्रीतिदानं तदा तस्मै ददते चक्रवर्त्तिनः ॥ ११ ॥ कोटीस्त्रयोदशाद्वयर्द्धाः सौवर्णानां प्रमोदतः । वासुदेवास्तु रौप्याणां कोटीः सार्द्धास्त्रयोदश ॥ १२ ॥ दद्युर्मांडलिका रौप्य–लक्षाः सार्द्धास्त्रयोदश । परेऽपि ददते लोकाः शक्तिभक्त्यनुसारतः ॥ १३ ॥

एवं विहृत्य भूपीठं भव्यजीवान् विबोध्य च । निजायुःप्रांतसमयेऽनशनं कुर्वते जिनाः ॥ १४ ॥ तदा केचिद्गणधराः केचनान्येऽपि साधवः । कुर्वंत्यनशनं सार्द्धं स्युः प्राप्तावसरा यदि ॥ १५ ॥ ततोऽधिरुह्य शैलेशीं सर्वकर्मक्षयक्षणे । संप्राप्य शाश्वतं स्थानं निर्बाधाः सुखमासते ॥ १६ ॥ क्षणं तदांधकारः स्या–द्यतो लोके भवेत्तमः । विच्छेदे जिनतद्धर्म–पूर्वश्रुतहविर्भुजाम् ॥ १७ ॥ तत्रैव समये सर्वे देवेंद्राश्चलितासनाः ज्ञात्वार्हन्निर्वृतिं ज्ञाना–द्वदंत्येवं विषादिनः ॥ १८ ॥ हा ! निर्वृता जगन्नाथा जग-

---

छे. (९) वासुदेव साडाबार लाख रुपैयानी करी आपे छे, अने मांडलिको साडाबार हजार रुपैयानी करी आपे छे. (१०) हवे अरिहंत पधार्यानी पधरामणी जे कोइ चक्रवर्तीने आपे छे तेने ते प्रीतिदान तरीके साडाबार क्रोड सोनैया हर्षथी आपे छे. वासुदेव साडाबार क्रोड रुपैया आपे छे (११–१२) अने मांडलिक साडाबार लाख रुपैया आपे छे तथा बीजा लोको पण पोतानी शक्ति ने भक्ति अनुसारे आपे छे. (१३)

आ प्रमाणे भूपीठ उपर विचरी अनेक भव्यजीवोने प्रतिबोध पमाडी पोताना आयुष्यना अंत समये जिनेश्वर अनशन करे छे. (१४) ते वखते जो पोताने पण अंत्य अवसर प्राप्त थयो होय तो केटलाक गणधरो तेम ज केटलाक साधुओ पण प्रभुनी साथे अनशन करे छे. (१५) पछी सर्व कर्मना क्षयने समये शैलेशीकरणपर आरूढ थइने शाश्वत स्थानने पामीने प्रभु निर्बाध थया सता सुखमां वसे छे. (१६) ते वखते क्षणमात्र सर्व लोकमां अंधकार पसरे छे, कारण के जिनेश्वर, तेनो धर्म अने पूर्वश्रुतरूप अग्निनो विच्छेद थवाथी अंधकार थाय ज. (१७) ते समये सर्व देवेंद्रो आसन चलित थवाथी अरिहंतनो निर्वाणसमय अवधिज्ञानवडे जाणीने विषाद पाम्या सता आ प्रमाणे कहे छे (१८) के–' हा इति खेदे ! जगतना नाथ, जगतने प्रकाश आपवामां सूर्य समान एवा प्रभु निर्वाण पाम्या, तो हवे अमारे उतावळे जइने तेमनो निर्वाण महोत्सव करवो जोइए. (१९) आ प्रमाणे कही पादुका

द्वीपनभास्कराः। तदस्माभिर्द्रुतं कार्य–स्तन्निर्वाणमहोत्सवः ॥ १९ ॥
इत्युक्त्वा पादुके त्यक्त्वा पूर्ववद्विधिपूर्वकं। तत्रस्था एव वंदंते भावतो
जिनभूघनान् ॥ २० ॥ निर्जीवान्यपि वंदंते वपूंषींद्रा यदर्हतां। तदर्हद्द्रव्य-
निक्षेपो वंद्यः सम्यग्दृशामिति ॥ २१ ॥ सामानिकादिनिःशेष–परि-
च्छदसमन्विताः। ततस्ते दिव्यया गत्या निर्वाणस्थानमर्हतां ॥ २२ ॥
उपेत्याश्रुविमिश्राक्षा विषादविधुराननाः। निरानंदा निरुत्साहाः शोचं-
तश्च मुहुर्मुहुः ॥ २३ ॥ तिस्रः प्रदक्षिणाः कृत्वा नत्वा च भगवत्तनूः।
नात्यासन्ना नातिदूर–देशस्थाः पर्युपासते ॥ २४ ॥

धर्मभृत्यान् कुतो नास्मा–नीक्षसे नाथ पूर्ववत्। अकांडेऽयं किमा-
रब्ध–स्त्यागोऽस्माकं निरागसां ॥ २५ ॥ किमात्मंभरिता युक्ता विश्वे-
शानां भवादृशां। अनंतसुखसाम्राज्यं भुज्यतेऽस्मान् विहाय यत् ॥ २६ ॥
वयं क्व यामः किं कुर्मो व्याकुलाश्चिंतयानया। त्यजतैकपदे स्वामिन्!
निरालंबाः कृतास्त्वया ॥ २७ ॥ अद्यारम्यमिदं नाथ जातं क्षेत्रं त्वया

तजी पूर्वनी जेम विधिपूर्वक त्यां रह्या सता ज प्रभुना शरीरने भावपूर्वक वंदन करे. (२०) निर्जीव एवा अरिहंतोना शरीरने इंद्रो पण नमस्कार करे छे, ते उपरथी अरिहंतनो द्रव्यनिक्षेपो सम्यग्दृष्टिने वंदनीय छे, एम सिद्ध थाय छे. (२१) पछी इंद्रो पोताना सामानिक विगेरे सर्वे देवो सहित दिव्यगतिवडे ज्यां अरिहंतनुं निर्वाणस्थान छे त्यां आवीने अश्रुमिश्र नेत्रवाळा, विषादथी विधुर मुखवाळा, निरानंदी, निरुत्साही अने वारंवार शोक करता सता भगवंतना शरीरने त्रण प्रदक्षिणा दइ नमीने नहीं अति नजीक अने नहीं अतिदूर एम बेठा सता सेवा करे. (२२–२४) अने कहे के—

"हे नाथ! अमे आपना धर्मसेवको छीए, अमारी सामुं तमे पूर्ववत् केम जोता नथी? अकाळे अमारा जेवा निरपराधीनो त्याग केम करो छो? (२५) शुं तमारी जेवा विश्वेश्वरने आत्मंभरिता युक्त छे जेथी आ अनंतसुखनुं साम्राज्य अमारा विना–अमने मूकीने भोगवो छो? (२६) हे प्रभु! अमे तमारा विना क्यां जइए? शुं करीए? आवी चिंतावडे व्याकुळ एवा अमने हे स्वामिन्! एकदम तजी देवाथी तमे निरालंबी बनावी दीधा छे. (२७) आजथी मांडीने आ क्षेत्र हे स्वामिन्! तमारा विना दीपक विनानी रात्रि जेवुं अने सूर्य विनाना आकाश जेवुं थइ गयुं छे. (२८) हे स्वामिन्! समवसरणमां

विना । निश्चयस्तदीपग्रहव–द्गतादित्यांतरिक्षवत् ॥ २८ ॥ स्वामिन् भवंतं समव–सरणस्थं महाश्रियं । स्मारं स्मारं मुहुर्वक्षो दीर्यते शतधाद्य नः ॥ २९ ॥ भवान् यद्यपि हे स्वामि–न्ननंतसुखभागभूत् । विशोचामस्तथाप्येवं वयं स्वार्थाय केवलं ॥ ३० ॥

शक्रोऽथ विलपन्नेवं निर्जरैराभियोगिकैः । गोशीर्षचंदनैधांसि बहून्याह(हा)रयेद्रयात् ॥३१॥ ततस्तैर्नंदनानीतै–श्चंदनौघैश्चितात्रयं । अर्हतां च गणीनां च कारयेद्यतिनामपि ॥ ३२ ॥ तत्र प्राच्यां भगवतां चिता भवति वर्त्तुला । याम्यां गणभृतां त्र्यस्रा प्रतीच्यां यतीनां पुनः ॥ ३३ ॥ चतुरस्रा भवेच्चित्या भेदः संस्थानदिग्भवः । श्रीआवश्यकवृत्त्यादौ चितीनामिति दर्शितः ॥ ३४ ॥ ततः क्षीरार्णवानीतैः क्षीरैर्भगवतां तनूः । स्नपयित्वाथ गोशीर्ष–चंदनेनानुलिप्य च ॥ ३५ ॥ परिधाप्योत्तमं हंस–लक्षणं पटशाटकं । वज्रभृत्कुरुते भक्त्या सर्वालंकारभूषिता ॥ ३६ ॥ अन्ये च देवा गणभृ–द्वपूंषि विधिनामुना । परे मुनिशरीराणि स्नपयं-

---

बेठेला अने महाशोभावाळा आपने वारंवार संभारी संभारीने अमारुं वक्षस्थळ सो भागवाळुं थइ जाय छे. (२९) हे भगवन् ! जो के तमे तो अनंत सुखना भाजन थया छो परंतु अमे अमारा केवळ स्वार्थने माटे आ प्रमाणे शोक करीए छीए. (३०) ”

आ प्रमाणे विलाप करता शक्रेंद्र पोताना आभियोगिक देवनी पासे तत्काळ घणा गोशीर्ष चंदनना काष्ठो मंगावे. (३१) पछी नंदनवनमांथी लावेला चंदनना काष्ठवडे त्रण चिताओ–एक अरिहंत माटे, एक गणधरो माटे अने एक सामान्य मुनिओ माटे रचावे. (३२) तेमां पूर्व बाजुए भगवंत माटेनी चिता गोळ करावे, दक्षिणे गणधरो माटेनी चिता तिखुणी करावे अने पश्चिमे मुनिओ माटेनी चिता चोखुणी रचावे. आ चितानी दिशानो ने आकृतिनो भेद श्री आवश्यकवृत्ति विगेरेने अनुसारे बतावेल छे. (३३–३४) पछी क्षीरसमुद्रमांथी मंगावेला जळवडे प्रभुना शरीरने स्नान करावी गोशीर्षचंदनवडे विलेपन करे. (३५) पछी हंसना चित्रवाळुं पटशाटक प्रभुने पहेरावीने प्रभुना शरीरने सर्व अलंकारथी विभूषित इंद्र पोते भक्तिवडे करे. (३६) बीजा देवो ए ज विधि प्रमाणे गणधरोना शरीरने अने अन्य देवो सामान्य मुनिओना शरीरोने स्नान करावी विलपेन करे. (३७) पछी इंद्रनी आज्ञाथी देवताओ त्रण शिबिकाओ तैयार करे–तेमां एक शिबि-

त्यर्चयंति च ॥ ३७ ॥ अथेंद्रवचनात्तिस्रः शिबिकाः कुर्वते सुराः । तत्रै- कस्यां जिनांगानि शक्रः स्थापयति स्वयं ॥ ३८ ॥ गणीनां च मुनीनां च परस्मिन् शिबिकाद्वये । स्थापयंति परे देवा–स्ततः शक्रसुरा अपि ॥३९॥ भक्त्या स्वस्कंधमारोप्य शिबिकाः समहोत्सवं । स्थापयंत्यर्हदादीनां देहां- श्चित्यात्रये क्रमात् ॥४०॥ ततः शक्राज्ञया वह्नि–कुमाराः साश्रुलोचनाः । विमनस्काः क्षिपंत्यग्निं चित्यासु तिसृषु क्रमात् ॥ ४१ ॥ तथैव च ततो वायु–कुमाराः स्वःपतेर्गिरा । द्रुतमुज्ज्वालयंत्यग्निं पवमानैर्विकुर्वितैः ॥ ४२ ॥ ततश्चतुर्विधा देवा आज्ञता वज्रपाणिना । तुरुष्ककाकतुंडादि– भारान् सारान् सहस्रशः ॥ ४३ ॥ कुंभान् मधुघृतानां च जुहुयुर्वह्निदी- प्तये । ततोंगेष्वस्थिशेषेषु संस्कृतेषु हविर्भुजा ॥ ४४ ॥ निर्वापयंति जीमूत–कुमारा वासवाज्ञया । क्षीरोदादाहृतैः क्षीर–कल्पनीरैश्चिताश्च ताः ॥ ४५ ॥ त्रिभिर्विशेषकम्

ततश्च–याम्यामूर्ध्वस्थां जिनानां दाढां गृह्णाति वज्रभृत् । चमरेंद्रो- ऽधस्तनीं तां तत्तद्दिश्याधिपत्यतः ॥ ४६ ॥ वामामुपरिगां दाढा–मिंद्रो

कामां प्रभुना शरीरने इंद्र पोते पधरावे (३८) अने बीजी बे शिबिकामां गणधरोना अने मुनिओना शरीरोने देवताओ पधरावे. पछी इंद्र अने देवताओ भक्तिथी ते शिबिका पोताना स्कंधपर उपाडीने महोत्सवपूर्वक चिता पासे लावे अने त्यां शिबिका नीचे मूकी तेमांथी प्रभुना शरीरने इंद्र पोते चितामां पधरावे अने बीजी बे शिबिकामांथी गणधरोना ने मुनिओना शरीरो अन्य देवो उपाडीने चितामां पधरावे (३९–४०) पछी इंद्रनी आज्ञाथी आंखमां आंसुवाळा अग्निकुमारना देवो विमनस्कपणे त्रणे चितामां अनुक्रमे अग्नि प्रग- टावे (४१) तेवी ज रीते वायुकुमारना देवो इंद्रनी आज्ञाथी वायु विकुर्वे अने ते वायुवडे अग्निने शीघ्र सळगावे (४२) पछी इंद्रे आज्ञा करेला चारे निकायना देवो तुरुष्क, काकतुंड विगेरे सुगंधी द्रव्यो हजारो भार जेटला ते चितामां क्षेपवे, (४३) तेम ज मधु अने घृतना घडाओ पण अग्निने वधारे प्रदीप्त करवा माटे क्षेपवे. पछी ज्यारे अस्थि सिवायनुं सर्व शरीर अग्निवडे बळी जाय त्यारे इंद्रनी आज्ञाथी मेघकुमारना देवो क्षीरसमुद्रमांथी लावेला क्षीरसदृश जळवडे ते त्रण चिताओने शांत करे (४४–४५)

पछी जिनेश्वरनी दक्षिण (जमणी) बाजुनी उपरनी दाढा शक्रेंद्र ग्रहण करे अने ते बाजुनी नीचेनी दाढा चमरेंद्र ग्रहण करे. ए बंने दक्षिण दिशाना स्वामी होवाथी ते

गृह्णाति शूलभृत् । बलींद्रश्चाधस्तनीं तां शेषाः सर्वे सुरासुराः ॥ ४७ ॥ अस्थीन्यथांगोपांगानां सर्वाण्याददते मुदा । अर्हद्भक्त्यनुरागेण केचित्केचिच्च जीततः ॥ ४८ ॥ पूर्वं माहात्म्यमेतेषां क्षेत्रलोके निरूपितं । ग्रंथांतरे प्रसिद्धोऽय-मपि हेतुर्निशम्यतां ॥ ४९ ॥ पूअंति सुरा ताओ अह कोइ पराभवं जइ करेज्जा । तो पक्खालिअ ताओ सलिलेण करंति निअरक्खं ॥ ५० ॥ आस्तां त्रिजगदर्च्यानां-मस्थिग्रहणमर्हतां । सुरा आददतेऽस्थीनि योगभृच्चक्रिणामपि ॥ ५१ ॥ इत्यर्थतो जंबू प्र० वृ० । चिताभस्मापि गृह्णंति शेषं विद्याधरादयः । सर्वोपद्रवनिर्नाश-विधौ परममौषधं ॥ ५२ ॥ रजस्यपि गृहीतेऽस्मा-दहंपूर्विकया नरैः । गर्त्ता भवत्यखातैव चितास्थाने ततोऽर्हतां ॥ ५३ ॥ मा भूदपरलोकांह्रि-स्पर्शादाशातनेत्यथ । सातत्येन च तीर्थस्य प्रवृत्तिर्भवतादिति ॥ ५४ ॥ रत्नैरापूर्य तां गर्त्तां रचितं रत्नकांचनैः । कारयत्यर्हतां चैत्यस्तूपं

प्रमाणे करे. (४६) डाबी बाजुनी उपरनी दाढा ईशान इंद्र ग्रहण करे अने बलींद्र ते बाजुनी नीचेनी दाढा ग्रहण करे, बाकीना बीजा देवताओ प्रभुना अंगोपांगना सर्व अस्थिओ हर्षथी ग्रहण करे. तेमां केटलाक अरिहंतपरनी भक्तिना अनुरागथी अने केटलाक पोतानो आचार छे एम मानीने ग्रहण करे, (४७-४८) एनुं माहात्म्य प्रथम क्षेत्रलोकमां बतावेलुं छे. ग्रंथांतरमां पण प्रसिद्ध एवो तेनो हेतु आ प्रमाणे बतावेलो छे ते सांभळो (४९) 'देवताओ तेने पूजे छे अने कोइ अन्य देव तेनो पराभव करे तो तेवे प्रसंगे तेनुं प्रक्षालन करीने ते जळवडे पोतानी रक्षा करे छे.' (५०) श्री जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिनी वृत्तिमां कह्युं छे के-'त्रण जगतना पूजनिक अरिहंतना अस्थिने देवो ग्रहण करे छे ते वात बाजुपर रहो; योगधारी चक्रवर्त्तीना अस्थिओने पण देवो ग्रहण करे छे. (५१)' विद्याधरो विगेरे चितानी बाकी रहेली भस्म पण ग्रहण करे छे, कारण के ते सर्व उपद्रवोनो नाश करवामां परम औषधरूप छे. (५२) प्रांते तेनी रज पण बीजा सामान्य मनुष्यो 'हुं पहेलो हुं पहेलो' एम बोलता ग्रहण करे छे के जेथी अरिहंतनी चिताने ठेकाणे खोद्या विना ज खाडो पडी जाय छे (५३) पछी 'अन्य जनोना चालवाथी आ भूमिनी आशातना न थाओ' एम विचारीने तेम ज 'सततपणे अहीं तीर्थनी प्रवृत्ति थाओ' एम धारीने इंद्र सुरासुर पासे रत्नोवडे ते खाडो पूरावीने तेनी उपर रत्न-

शक्रः सुरासुरैः ॥ ५५ ॥ गणी(णि)नां च मुनीनां च चित्यास्थानकयोरपि । शक्रः स्तूपौ कारयति रत्नस्वर्णमणीमयौ ॥ ५६ ॥ एवं चतुर्विधा देवा निर्वाणस्य महोत्सवं । यथोचितं विदधते भक्तिनिर्भरचेतसः ॥ ५७ ॥ ततो नंदीश्वरे गत्वा विधायाष्टाहिकोत्सवं । यांति स्वस्वविमानेषु यथास्वं भवनेषु च ॥ ५८ ॥ सुधर्माख्यसभावर्त्ति–चैत्यस्तंभावलंबिषु । समुद्गकेषु यान्यास–न्नस्थीनि प्राक्तनार्हतां ॥ ५९ ॥ तान्यर्चयंति संस्थाप्य सिंहासने समुद्गकान् । समुद्गकेषु तेष्वेव सद्यस्कानि क्षिपंति च ॥ ६० ॥ ततोऽभ्यर्च्य पुनः स्तंभे लंबयंति समुद्गकान् । चैत्यदैवतवत्तानि नित्यमाराधयंति च ॥ ६१ ॥ इदमर्थतः षष्ठांगसूत्रवृत्तौ मल्लिनिर्वाणाधिकारे. सभायां च सुधर्मायां तेषामाशातनाभिया । कामक्रीडां न कुर्वंति जिनभक्ताः सुराधिपाः ॥ ६२ ॥

कालेन कियता चैते गतशोकाः सुरेश्वराः । गीतनाट्यादिसौख्यानि

कांचनवडे अरिहंतनो चैत्यस्तूप करावे. (५४–५५) ते ज प्रमाणे गणधरो अने मुनिओना चितास्थाने पण इंद्र रत्न स्वर्ण ने मणिमय बे जूदा जूदा स्तूपो देवो पासे करावे. (५६) आ प्रमाणे भक्तिथी निर्भरचित्तवाळा चारे प्रकारना देवो यथोचितपणे निर्वाण–महोत्सव करे. (५७) पछी त्यांथी परभार्या ज नंदीश्वरद्वीपे जइने अट्ठाइमहोत्सव करीने सर्वे इंद्रो ने देवो पोताना विमानमां तेम ज भवनमां जाय. (५८) त्यां जइने सुधर्मा नामनी सभामां चैत्यस्तंभने अवलंबीने रहेला दाबडाओमां के जेमां पूर्वना अरिहंतोना अस्थिओ छे, तेनी सिंहासनपर दाबडा मूकीने पूजा करे. पछी तेमां आ वखत लावेल दाढा विगेरे मूके. (५९–६०) त्यारपछी तेनी फरी पूजा करीने ते दाबडा स्तंभ साथे लटकावेल शींकामां मूके अने तेनी देवसंबंधी चैत्यनी जेम निरंतर आराधना करे. (६१) आ प्रमाणे श्रीज्ञाताधर्मकथासूत्रनी वृत्तिमां श्री मल्लिनाथना अधिकारमां अर्थथी कहेल छे. ए सुधर्मा सभामां ते दाढानी आशातनाना भयथी जिनेश्वरना भक्त एवा इंद्रो कामक्रीडा करता नथी. (६२)

हवे तीर्थंकरना निर्वाण पाम्या पछी केटलेक काळे इंद्रो शोकरहित थाय. पछी गीतनाट्यादि संबंधी सुख भोगवता सता आनंदमां (सुखमां) रहे (६३)

भुंजानाः सुखमासते ॥ ६३ ॥ इत्यनंतगुणरत्नशालिना–मर्हतामुदितमागमोदधेः। वर्णनं तदुरुवर्णवर्णिका–कर्णिकारविपिनप्रसूनवत् ॥ ६४ ॥

विश्वाश्चर्यदकीर्त्तिकीर्तिविजयश्रीवाचकेंद्रांतिष—
द्राजश्रीतनयोऽतनिष्ट विनयः श्रीतेजपालात्मजः ।
काव्यं यत्किल तत्र वर्णितजगत्तत्त्वेऽद्भुतस्त्रिंशता
संख्यातः परिपूर्णभावमभजत्सर्गो निसर्गोज्ज्वलः ॥ ६५ ॥

॥ इति श्रीलोकप्रकाशे त्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥ श्रीरस्तु ॥



आ प्रमाणे अनंतगुणशाळी एवा अरिहंतोना पंचकल्याणकोनुं वर्णन आगमोमां कहेलुं छे. ते घणुं विस्तारवाळुं होवाथी तेमांथी माळी जेम वाडीमांथी फूलो वीणी ले तेम वानकी तरीके ग्रहण करीने में रजु कर्युं छे. (६४)

विश्वने आश्चर्य पमाडनार छे कीर्त्ति जेनी एवा वाचकेंद्र श्री कीर्तिविजयना शिष्य अने राजश्री तथा तेजपाळना पुत्र श्री विनयविजये जे काव्य रच्युं छे ते जगत्तत्त्वना वर्णनवाळा आ ग्रंथमां स्वभावे उज्वळ अने अद्भुत एवो आ त्रीशमो सर्ग परिपूर्णभावने पामतो हवो. (६५)

इति श्रीलोकप्रकाशे सर्ग ३० समाप्त.

॥ अथैकत्रिंशत्तमः सर्गः प्रारभ्यते ॥

स्वरूपमर्हतामेव-मुक्तं शास्त्रानुसारतः। अथोच्यते यथाशास्त्रं स्वरूपं चक्रवर्त्तिनां ॥ १ ॥ शृंगग्राहिकया कर्म चक्रवर्त्तित्वसाधनं। पृथग् यद्यपि न प्रोक्तं तीर्थकृन्नामकर्मवत् ॥ २ ॥ तथापि-तीव्रानुभागं यत्सातवेदनीयं घनाणुकं। उच्चैर्गोत्रं तथोत्कृष्टं नामकर्मापि तादृशं ॥ ३ ॥ लाभभोगादिविघ्नानां क्षयोपशमपाटवं। इत्यादिभिस्समुदितैर्जायते चक्रवर्त्तिता ॥४॥ पूर्वोक्तविंशतिस्थानां-तर्गतैरेव कैश्चन। साधुवैयावृत्यदानसत्तपःसंयमादिभिः ॥ ५ ॥ विशिष्टाध्यवसायेन सातवेद्यादिकर्मणां। तादृशः स्यात्परीणामः प्राग्जन्मन्यार्षभेरिव ॥ ६ ॥ तथोक्तमावश्यकनिर्युक्तौ-बिइओ वेयावच्चं किइकम्मं तइयओ कासि। भोगफलं बाहुबलं ॥ इति. तीर्थकृन्नामहेतूनां स्थानानां ननु विंशतेः। कथं चक्रित्वहेतुत्वं पटहेतुत्ववन्मृदः ? ॥ ७ ॥ अत्रोच्यते-यथैकस्मादूसादिक्षो-र्नानाखंड-

सर्ग ३१ मो.

ए प्रमाणे शास्त्रानुसारे अरिहंतनुं स्वरूप कह्युं, हवे जेम शास्त्रमां कह्युं छे तेम चक्रवर्त्तीओनुं स्वरूप कहीए छीए. (१) तीर्थंकर नामकर्मनी जेम शृंगवडे ग्रहण करीने कही शकीए तेवी रीते चक्रवर्त्तीपणाना साधनभूत चक्रवर्तीनामकर्म जो के जूदुं कह्युं नथी, (२) तथापि सातावेदनीय कर्मनो घनप्रदेशसंबंधी जे तीव्र अनुभाग तेम ज उत्कृष्ट एवुं उच्च गोत्र अने तेवुं ज श्रेष्ठ नामकर्म तेम ज लाभ-भोगादि अंतराय कर्मना क्षयोपशमनुं जे अत्यंत पटुपणुं इत्यादि शुभकर्मोना एकत्रपणावडे चक्रवर्तीपणुं प्राप्त थाय छे. (३-४) पूर्वोक्त वीश स्थानकनी अंदर रहेला ज केटलाक स्थानो जेमके साधुपदनी वैयावच्च तेमने दान अने संयम तथा तपादिकना आराधनवडे विशिष्ट अध्यवसाये करीने सातावेदनीय विगेरे कर्मनो भरतचक्रीना पूर्वजन्मनी जेम तेवा प्रकारनो परिणाम थाय छे. (के जेथी जीव चक्रवर्तीपणुं पामे छे.) (५-६) श्री आवश्यकनिर्युक्तिमां कह्युं छे के-' बीजा (भरतना) जीवे वैयावच्च करी अने त्रीजा (बाहुबलिना) जीवे कृतिकर्म कर्युं के जेथी भोगफळकर्म अने बाहुनुं बळ ते बंने जीवे उपार्जन कर्युं. ' इति. अहीं कोइ प्रश्न करे के-' तीर्थंकरनामकर्मना हेतुभूत वीश स्थानको छे ते माटी जेम पटनुं हेतु (न) थाय तेम चक्रवर्तीपणाना हेतु शीरीते थाय ? ' (७) तेने उत्तर आपे छे के-' एक ज प्रकारना शेरडीना रसमांथी

गुडादयः । स्युः सामग्रीभिदोऽत्रापि तथा सम्यग्विभाव्यतां ॥ ८ ॥ स्युर्यथा वैकजातीय–तंतुभ्यो विविधाः पटाः । तेषामेव वरत्रा स्या–त्साभग्र्यंतरभेदतः ॥ ९ ॥ एवं बलत्वविष्णुत्व–नृपत्वादिपदेष्वपि । भाव्यः कर्मपरीणामो–ऽध्यवसायविशेषतः ॥ १० ॥

उद्धृत्य सर्वदेवेभ्यो घर्माया एव च क्षितेः । उत्पद्यतेंगिनश्चक्रि–तथा नान्यगतेः पुनः ॥ ११ ॥ तथोक्तं–सुरनेरइएहिं चि य हवंति हरिअरिहचक्किबलदेवा । चउविहसुरचक्किबला वेमाणिअ हुंति हरिअरिहा ॥१२॥ इति संग्रहण्याद्यभिप्रायः । श्री आवश्यकनिर्युक्तौ तु–मनुष्यगतेरागतस्यापि श्रीवीरस्य प्राग्भवे चक्रित्वमुक्तं, तथाहि–चुलसीइमप्पइट्ठे सीहो नरएसु तिरियमणुएसु । पिअमित्तचक्कवट्टी मूअविदेहाइचुलसीए ॥ १३ ॥ इति ज्ञेयं.

तीर्थंकरवदेतेऽपि जातिगोत्रोन्नतिस्पृशां । वंशेषु भूभृतामेवो–त्पद्यंते

सामग्रीना विविधपणाथी अनेक प्रकारना खांड गोळ विगेरे पदार्थो थाय छे तेम अहीं पण सम्यक् प्रकारे विचारी लेवुं.' (८) वळी जेम एक ज जातना तंतु–तांतणाओथी विविध प्रकारनां वस्त्रो थाय छे, तेम ज सामग्रीना भेदथी दोरडाओ विगेरे पण थाय छे. (९) ते ज रीते बळदेव, वासुदेव अने राजादिपणाने विषे पण अध्यवसायना विशेषपणाथी जूदा जूदा कर्मपरिणाम समजवा. (१०)

सर्व जातिना (चार निकायना) देवमांथी अने पहेली नरकमांथी उद्धरीने–च्यवीने ज जीव चक्रवर्ती थाय छे; अन्य गतिमांथी थता नथी. (११) कह्युं छे के–देव अने नरकरूप बे गतिमांथी ज अरिहंत, चक्रवर्ती, बळदेव ने वासुदेव थाय छे. (देवगति संबंधी विचार करतां) चारे प्रकारना देवो चक्रवर्ती ने बळदेव थाय छे अने वासुदेव ने अरिहंत वैमानिकमांथी ज थाय छे. (१२) आ प्रमाणे संग्रहणी विगेरेनो अभिप्राय छे, परंतु श्रीआवश्यकनिर्युक्तिमां तो मनुष्यगतिमांथी आवेला श्री वीरप्रभुना पूर्वभवना जीवनुं चक्रवर्तीपणुं कहेलुं छे. ते आ प्रमाणे–' मनुष्यपणामां चोराशी लाख वर्षनुं आयु भोगवी, अप्रतिष्ठान नरकवासामां (सातमी नरके) जइ, त्यांथी नीकळीने पछी सिंह, नरकमां गमन, तिर्यंच, मनुष्य अने त्यांथी महाविदेह क्षेत्रमां मूका नगरीमां प्रियमित्र नामे चक्रवर्ती ८४ लाख पूर्वने आयुषे उत्पन्न थया. ' (१३) आ प्रमाणे कहेल छे.

तीर्थंकरनी जेम चक्रवर्ती पण उच्च एवा जाति ने गोत्रमां राजाना ज कुळ (वंश) मां

न त्वनीदृशां ॥ १४ ॥ तद्वच्चतुर्दशस्वप्न–सूचितोत्पत्तयः क्रमात्। जायंते जनकोत्प्रीत–प्रौढजन्ममहोत्सवाः ॥ १५ ॥ अर्हद्वन्नाकनरका–गतयोश्च-क्रिणोः प्रसूः। पश्यति द्वादशे स्वप्ने विमानभवने क्रमात् ॥ १६ ॥ धात्र्ये-काधिकृता स्तन्ये द्वे मज्जनविभूषयोः। अन्योत्संगार्पणे नित्यं परा च क्रीडनादिषु ॥ १७ ॥ एवं च–धात्रीभिः पंचभिः पाल्य–मानाः क्लृप्तो-चिताह्वयाः। ते सुखेनैव वर्द्धंते नंदनस्वर्द्रुमा इव ॥ १८ ॥ साक्षीकृत्य कलाचार्य–मधीताखिलवाङ्मयाः। प्राप्ताशेषकलाश्च स्युः शस्त्रशास्त्र-विशारदाः ॥ १९ ॥ आद्यसंहनना आद्यसंस्थानाः प्राप्तयौवनाः। लक्ष-णानां सहस्रेणा–ष्टोत्तरेण विराजिताः ॥ २० ॥ लोमभिर्दक्षिणावर्त्तै रचि-तेनाधिकश्रिया। महापुरुषचिह्नेन श्रीवत्सेनाप्तवक्षसः ॥ २१ ॥ तथोक्तं श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रे भरतचक्रिवर्णने–' पसत्थलोमविरइय–सिरिव-च्छलंछणविउलवच्छदेसे। ' इति. षट्त्रिंशता नृपगुणै–स्ते प्रशस्तैरलं-कृताः। राज्यं क्रमाद्वर्द्धमानं पालयंति क्रमागतं ॥ २२ ॥

उत्पन्न थाय छे. हलका जाति, कुळ के वंशमां उत्पन्न थता नथी. (१४) अरिहंतनी मातानी जेम ज चक्रवर्तीनी माता पण १४ स्वप्नो जुए छे, अने ते जीव गर्भमां उत्पन्न थाय छे. ते जन्मे छे त्यारे तेना पिता घणो श्रेष्ठ जन्म–महोत्सव करे छे. (१५) अरिहंतनी जेम चक्रवर्तीनी माता पण जो ते पुत्र नरकमांथी आवेल होय तो बारमे स्वप्ने भुवन देखे अने स्वर्गथी आवेल होय तो विमान देखे छे. (१६) ते पुत्रने एक धात्री स्तनपान करावे छे, बीजी मज्जन (स्नान) करावे छे, त्रीजी वस्त्राभूषण पहेरावे छे, चोथी खोळामां बेसाडे छे अने पांचमी तेने रमाडवामां तत्पर रहे छे, (१७) आ प्रमाणे पांच धावमातावडे पाल्यमान होय छे. तेनुं यथोचित नाम पाडवामां आवे छे अने नंदनवनमां रहेला कल्प-वृक्षोनी जेम सुखे सुखे वृद्धि पामे छे. (१८) पछी कळाचार्यने साक्षीरूप ज करीने सर्व शास्त्रनो अभ्यास करे छे, अने समस्त कळाओ मेळवीने शस्त्रना शास्त्रमां विशारद थाय छे. (१९) तेओ प्रथम संघयणवाळा, प्रथम संस्थानवाळा होय छे. अनुक्रमे यौवना-वस्था पामे छे एटले एक हजार ने आठ लक्षणोवडे युक्त थाय छे. (२०) दक्षिणावर्तलोम (रोम)वडे जेनी अधिक शोभा रचायेली होय छे, एवा महापुरुषना चिन्हरूप श्री-वत्सवडे तेमनुं वक्षःस्थळ शोभित होय छे. (२१) श्री जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रमां श्रीभरतच-क्रीना वर्णनमां कह्युं छे के–' प्रशस्त लोमथी विरचित श्रीवत्सना चिन्हथी विपुळ वक्षः-प्रदेशवाळा. ' राजाओना प्रशस्त एवा ३६ गुणोवडे तेओ अलंकृत होय छे अने अनुक्रमे वृद्धि पामता एवा क्रमागत राज्यने तेओ पाळे छे. (२२)

षट्त्रिंशतं नृपगुणांश्चैवमाहुः—अव्यंगो १ लक्षणैः पूर्णो २ रूपसंपत्तिभृत्तनुः ३ । अमदो ४ जगदोजस्वी ५ यशस्वी च ६ कृपालुहृत् ७ ॥ २३ ॥ कलासु कृतकर्मा च ८ शुद्धराजकुलोद्भवः ९ । वृद्धानुग १० स्त्रिशक्तिश्च ११ प्रजारागी १२ प्रजागुरुः १३ ॥ २४ ॥ समर्थनः पुमर्थानां त्रयाणां सममात्रया १४ । कोशवान् १५ सत्यसंधश्च १६ चरदृग् १७ दूरमंत्रदृग् १८ ॥ २५ ॥ आसिद्धि कर्मोद्योगी च १९ प्रवीणः शस्त्र २० शास्त्रयोः २१ । निग्रहा २२ नुग्रहपरो २३ निर्लचं दुष्टशिष्टयोः ॥ २६ ॥ उपायार्जितराज्यश्री २४—र्दानशौंडो २५ ध्रुवं जयी २६ । न्यायप्रियो २७ न्यायवेत्ता २८ व्यसनानां व्यपासकः २९ ॥ २७ ॥ अवार्यवीर्यो ३० गांभीर्यौ ३१—दार्य ३२ चातुर्य ३३ भूषितः । प्रणामावधिकक्रोधः ३४ तात्त्विकः ३५ सात्त्विको ३६ नृपः ॥ २८ ॥ तथा च सूत्रं—' छत्तीसाहिय पत्थिवगुणेहिं संजुत्ते ' इति.

एवं गच्छति कालेऽस्य प्रादुर्भवति कर्हिचित् । चक्रमायुधशालायां

राजाना छत्रीश गुणो आ प्रमाणे कह्या छे.—१ व्यंगताविनाना, २ लक्षणोवडे पूर्ण, ३ रूपसंपत्तियुक्त शरीरवाळा, ४ मदविनाना, ५ जगतमां पराक्रमी गणाय तेवा, ६ यशस्वी, ७ कृपाळु हृदयवाळा, ८ सर्व कळा अने कर्मोने जाणनारा (कळाओने विषे निपुण), ९ शुद्ध राजकुळमां उत्पन्न थयेला, १० वृद्धना अनुयायी, ११ त्रण प्रकारनी (प्रभु, मंत्र अने उत्साह नामनी) शक्तिवाळा, १२ प्रजापर रागी, १३ प्रजाना गुरु (पितातुल्य), १४ समानपणे त्रणे पुरुषार्थने साधनारा, १५ भंडारथी भरपूर, १६ सत्यप्रतिज्ञावाळा, १७ चर पुरुषोरूप दृष्टिवाळा, १८ लांबो विचार करवावाळा, १९ कार्यनी सिद्धि थाय त्यां सुधी उद्यम करनारा, २० शस्त्रमां प्रवीण, २१ शास्त्रमां प्रवीण, २२–२३ दुष्ट अने शिष्ट जनोनो निष्पक्षपातपणे निग्रह–अनुग्रह करवामां तत्पर, २४ साम, दाम, दंड अने भेद-उपायवडे उपार्जन करेल राज्यलक्ष्मीवाळा, २५ दानवीर, २६ निश्चये जय मेळवनार, २७ न्यायप्रिय, २८ न्यायवेत्ता, २९ व्यसनोने तजी देनार, ३० अवार्य वीर्यवाळा, ३१ गांभीर्य, ३२ औदार्य, ३३ चातुर्यथी भूषित, ३४ प्रणामपर्यंत ज क्रोध राखनारा तेम ज ३५–३६ तात्त्विक. ने सात्त्विक. (२३–२८) आ संबंधमां कह्युं छे के—' छत्रीश राजगुणोए करीने संयुक्त ' इति.

आ प्रमाणे (सुखमां) काळ व्यतीत थते सते अन्यदा तेनी आयुधशाळामां चक्र-

प्राच्यं पुण्यमिवांगभृत् ॥ २९ ॥ इदं प्रायोऽस्त्रशालायां स्यादन्यत्रापि कस्यचित् । यथाभवत्सुभूमस्य स्थालमेव तदात्मकं ॥ ३० ॥ ततश्चायुधशालाया अध्यक्षो मुदिताशयः । चक्ररत्नं नमस्कृत्य निवेदयति भूपतेः ॥ ३१ ॥ तदाकर्ण्य प्रमुदित–स्तदाशाभिमुखं नृपः । पदान्युपेत्य सप्ताष्टौ चक्ररत्नं नमस्यति ॥ ३२ ॥ प्रीतिदाने मौलिवर्जं दत्ते सर्वांगभूषणं । वित्तं चास्मै जीविकार्हं सत्काराहांशुकादि च ॥ ३३ ॥ ततः स्नात्वात्तसर्वार्चा–र्हद्रव्यः सपरिच्छदः । उपेत्यायुधशालायां विधिना चक्रमंचति ॥ ३४ ॥ ततः सोऽष्टादश श्रेणी–राहूयेत्यादिशेत्पुरे । महिम्ने चक्ररत्नस्य कुरुताष्टाहिकोत्सवं ॥ ३५ ॥ अर्हत्पितृकृतो योऽर्ह–ज्जन्मन्युक्तो महोत्सवः । यथार्हं सोऽनुसंधेय इहाप्यष्टाहिकोत्सवे ॥ ३६ ॥

अष्टादश श्रेणीश्चैवमाहुः–कुंभार १ पट्टइल्ला २ सुवण्णकारा य ३ सूवकारा य ४ । गंधव्वा ५ कासवगा ६ मालाकारा य ७ कच्छकरा ८

रत्न पूर्वभवनुं पुण्य अंग धारण करीने जाणे आव्युं होय तेम उत्पन्न थाय छे. (२९) आ चक्र प्रायः अस्त्रशाळामां ज प्राप्त थाय छे. कोइने अन्यत्र पण थाय छे. जेम सुभूमचक्रवर्तीने थाळने ज आंगळी उपर फेरववाथी ते चक्ररूप थइ गयुं हतुं तेम. (३०) ते वखते आयुधशाळानो अधिकारी हर्षित थइने चक्रवर्ती पासे जइ नमस्कार करीने चक्ररत्न उत्पन्न थयानुं निवेदन करे छे. (३१) तेनी वात सांभळीने हर्ष पामेल राजा ते दिशानी सन्मुख सात–आठ पगलां जइने चक्ररत्नने नमस्कार करे छे, (३२) पछी प्रीतिदानमां मुकुट विनाना बीजा बधा आभूषणो राजा तेने आपे छे अने जीवितपर्यंतनी आजीविकाने योग्य द्रव्य आपे छे, तेम ज सत्कारने योग्य अन्य वस्त्रादिक आपे छे. (३३) त्यारपछी राजा स्नान करीने पूजाने योग्य सर्व द्रव्यो लइ परिवारसहित आयुधशाळामां आवे छे अने विधिपूर्वक चक्रनी पूजा करे छे. (३४) पछी अढारे श्रेणिओने बोलावीने हुकम करे छे के–'आखा नगरमां चक्ररत्ननो महिमा करवा माटे अष्टाहिका महोत्सव करो.' (३५) अरिहंतना जन्म वखते अरिहंतना पिता जेवो महोत्सव करे छे, जेनी हकीकत पूर्वे कहेली छे ते प्रमाणेनो अष्टाहिकोत्सव अहीं पण यथायोग्य रीते जाणी लेवो. (३६)

अढार श्रेणि आ प्रमाणे–कुंभकार १, पटेल २, सुवर्णकार ३, सूपकार ४, गंधर्व ५, काश्यप (वाणंद) ६, माळाकार ७, कच्छकार ८, तंबोळी ९–आ नव नारुक कह्या

१ कुंभार २ कणबी (खेडुत) ३ सोनी ४ रसोया ५ गानारा ६ वाणंद ७ माळी ८ काछीया ९ तंबोली.

॥ ३७ ॥ तंबोलिया य ९, एए नवप्पयारा य नारुश्रा भणिया । अह णं णवप्पयारे कारुश्रवण्णे पवक्खामि ॥ ३८ ॥ चम्मयर १ जंतपीलग २ गंच्छिय ३ छिंपयग ४ कंसकार य ५ । सीवग ६ गुआर ७ भिल्ला ८ धीवर ९ वण्णाइं अट्ठदस ॥ ३९ ॥ चित्रकारादयस्त्वेतेष्वेवांतर्भवंति.

मुदा पौरजनैः कृप्ते समाप्तेऽष्टाह्निकोत्सवे । निर्गत्यायुधशालाया-श्चक्ररत्नं महोज्ज्वलं ॥ ४० ॥ व्योम्ना संचरते दिव्य-वाद्यवाचालितांबरं । अधिष्ठितं सहस्रेण यक्षाणां वीक्षितं जनैः ॥ ४१ ॥ नगर्यास्तच्च निर्गत्य प्रतिपक्षभयंकरं । प्रतिष्ठते मागधाख्य-तीर्थाभिमुखमुद्धतं ॥ ४२ ॥ ततश्चक्र्यपि सन्नद्य चतुरंगचमूवृतः । अनुगच्छति तच्चक्रं भेरिमुखरितांबरः ॥ ४३ ॥ प्रमाणांगुलजातैक-योजनप्रमितां भुवं । अतिक्रम्य स्थितं तच्च प्रयाणस्यादिमेऽहनि ॥४४॥ क्षेत्रमेतावदेवाति-क्रामति प्रतिवासरं । सुखिनो हि तथैव स्यु-र्बहुसैन्यचमूचराः ॥ ४५ ॥ चक्रिणां भरतादीनां

छे. हवे नव प्रकारना कारुकनुं वर्णन करुं छुं. १ चर्मकार, २ यंत्रपीलक, ३ गंठीक, ४ छीपा, ५ कंसारा, ६ सीवग, ७ गुआर, ८ भिल्ल ने ९ धीवर-आ प्रमाणे १८ वर्ण जाणी लेवा. (३७-३९) चित्रकार विगेरेने एनी अंतर्गत समजी लेवा.

नगरजनोए हर्षपूर्वक करेलो अष्टाह्निकोत्सव पूर्ण थये सते महा उज्ज्वल एवुं चक्ररत्न आयुधशाळानी बहार नीकळे छे. (४०) अने ते चक्र दिव्य वाजित्रोवडे वाचाळ थयेला आकाशमां चाले छे. एक हजार यक्षोए अधिष्ठित एवा तेने सर्व लोको जुए छे. (४१) पछी प्रतिपक्षीने भयंकर एवुं ते चक्ररत्न नगरीनी बहार नीकळीने मागधनामा तीर्थनी सन्मुख उत्कटपणे (आकाशमार्गे) गमन करे छे. (४२) त्यारपछी चक्रवर्ती पण सारी रीते सन्नद्धबद्ध थइने चार प्रकारनी सेनाथी परिवर्या सता भेरी विगेरे वाजित्रोवडे आकाशने पूरता चक्रनी पछवाडे चाले छे. (४३) प्रयाणने पहेले दिवसे प्रमाणांगुलप्रमित एक योजन पृथ्वीनुं अतिक्रमण करीने चक्र स्थिर थाय छे. (४४) दररोज चक्र एटली पृथ्वीनुं ज अतिक्रमण करे छे-एटले पुष्कळ सैन्यमां रहेनारा सैनिको पण एटलुं चालवाथी ज सुखी रहे छे. (४५) भरतादि चक्रवर्तीना मोटा देहवाळा

---

१ मोची २ घांची ३ गुंथनार (पटवा) ४ रंगनारा ५ कंसारा ६ सीवनार (दरजी) ७ गोवाळ ८ भिल्ल ९ माछीमार.

महादेहा नरादयः। सुखेन क्षेत्रमेताव–न्निर्वहंति स्वशक्तितः ॥ ४६ ॥ चक्रिणामितरेषां तु हीयमानांगशक्तयः ॥ इयत्क्षेत्रं निर्वहंति नित्यं दैवतशक्तितः ॥ ४७ ॥ अनुगंगासरित्कूलं गच्छन् दक्षिणपार्श्वतः। तत्रस्थान् सेवकीकुर्वन् देशग्रामपुराधिपान् ॥ ४८ ॥ प्रतीच्छन् प्राभृतान्येषा–मनुयातश्च तैर्नृपैः। आरान्मागधतीर्थस्य स्कंधावारं निवेशयेत् ॥ ४९ ॥ नवयोजनविस्तीर्णो द्वादशयोजनायतः । स्कंधावारो भवत्यस्य राजधानीसमस्थितिः ॥ ५० ॥

अथ वार्द्धकिरत्नं स समाहूयेति शंसति । कुरु पौषधशालां न आवासं च महाद्भुतं ॥ ५१ ॥ ततः पौषधशालायां सोत्तीर्य जयकुंजरात् । प्रविश्य स्रस्तरे दार्भे निषीदति कृताष्टमः ॥ ५२ ॥ ब्रह्मचारी विमुक्तान्यव्यापारस्त्यक्तभूषणः । मागधेशं स्मरत्येक–चित्तोऽस्मिन् पौषधत्रये ॥ ५३ ॥ यस्तु चक्री जिनस्तस्य नाष्टमेन प्रयोजनं । स्मृतिमात्रादसौ कंप्रा–सनस्तमुपतिष्ठते ॥ ५४ ॥ यदाहुः श्रीहेमसूरयः श्रीशांतिचरित्रे–

मनुष्य विगेरे तो पोतानी शक्तिथी एटली जमीन सुधी चालवानो सुखे सुखे निर्वाह करी शके छे. (४६) परंतु दिनपरदिन घटता अंग अने शक्तिवाळा बीजा चक्रीनी सेना एटलुं क्षेत्र देवशक्तिथी निरंतर चाली शके छे. (४७) गंगा नदीनी दक्षिण बाजुना किनारे किनारे चालता अने त्यां रहेला देश, ग्राम अने नगरना अधिपतिओने पोताना सेवक करता, तेम ज तेमना भेटणानो स्वीकार करता अने ते राजाओने पण सैन्यसहित साथे लेता अनुक्रमे मागधतीर्थनी समीपे आवी चक्री स्कंधावारनो निवेश करे, अर्थात् छावणी नांखे. (४८–४९) चक्रवर्तीनी छावणी तेमनी राजधानी जेवडी बार योजन लांबी अने नव योजन विस्तारमां पडे छे. (५०)

हवे चक्रवर्ती वार्धकीरत्नने बोलावीने आज्ञा करे के–'महाअद्भुत आवास अने पोसहशाळाने बनावो.' (५१) ते तरत ज पोसहशाळा बनावे एटले चक्रवर्ती जयकुंजर उपरथी उतरी पौषधशाळामां प्रवेश करी अष्टम तप करीने डाभना संथारा उपर बेसे. (५२) ब्रह्मचारी, अन्य व्यापार तजेला, आभूषणो पण तजी दीधेला एवा चक्री पण पौषधमां ते मागधेश देवनुं एकचित्ते स्मरण करे. (५३) जे तीर्थंकर ते भवमां चक्री पण थाय तेने अठम करवानुं प्रयोजन नथी, तेमनी पासे तो स्मरणमात्र करवाथी ज आसन कंपवावडे ते हकीकत जाणीने ते ते देवो तरत ज आवे छे. (५४) श्री हेमचंद्राचार्य शांतिनाथच-

" ततो मागधतीर्थाभि–मुखं सिंहासनोत्तमे । जिगीपुरप्यनाबद्ध–विकारो न्यषदत्प्रभुः ॥ ५५ ॥ ततो द्वादशयोजन्या तस्थुषो मागधेशितुः । सिंहासनं तदा सद्यः खंजपादमिवाचलत् ॥ ५६ ॥ " इत्यादि.

अथ प्रकृतं–ततश्चतुर्विधाहारे संपूर्णे पौपधत्रये । प्रातस्ततः परिहित–चारुनेपथ्यभूषणः ॥ ५७ ॥ रथं सांग्रामिकं सज्जा–युधमध्यास्य चक्रभृत् । दीप्तोऽग्रे चक्ररत्नेन चमूचक्रैश्च पृष्टतः ॥ ५८ ॥ शब्दाद्वैतं जगत्कुर्वन् प्रवाह इव वारिधेः । तीर्थेन मागधेनांतः–पयोधि प्रविशत्यथ ॥ ५९ ॥ रथांगनाभिद्वयसे गत्वा जलनिधेर्जले । रथं संस्थाप्य कोदंड–मादत्तेऽरिमदापहं ॥ ६० ॥ सटंकारवमारोप्य प्रत्यंचां तत्र योजयेत् । निजनामांकितं बाणं रिपुघ्नं देवताश्रितं ॥६१॥ वैशाखमाश्रयेत्स्थानं वेध्यवेधनकोविदः । स्थानानामिह पंचाना–मिदमेव यदर्हति ॥ ६२ ॥

पंचस्थानानि चैवं–स्थानान्यालीढ १ वैशाख २–प्रत्यालीढानि ३ मंडलं ४ । समपादं ५ चेति. वैशाखस्थानलक्षणं चैवमाहुः–पादौ कार्यौ

रित्रमां कहे छे के–' त्यारपछी मागधतीर्थनी सामे उत्तम सिंहासन उपर तेने जीतवानी इच्छावाळा छतां पण अनाबद्धविकारवाळा प्रभु बेसे छे. (५५) एटले त्यांथी बार योजन दूर रहेला मागधेशनुं सिंहासन लुला पगनी जेम तरत ज चलायमान थाय छे.' (५६) इत्यादि.

हवे कर्त्ता प्रस्तुत वात करे छे–पछी चौविहारवाळा त्रण पौषध पूर्ण थये सते चोथा दिवसनी प्रभाते सुंदर वस्त्राभूषण धारण करीने चक्री आयुधोवडे सज्ज एवा संग्राम संबंधी रथपर बेसे. एटले चक्ररत्न आगळ चाले, तेनावडे देदीप्यमान एवा चक्री पण चाले अने तेनी पाछळ सैन्यसमूह चाले. (५७–५८) समुद्रना प्रवाहनी जेम जगतने शब्दाद्वैत करता चक्री मागधाधिपतिना तीर्थने रस्ते समुद्रमां प्रवेश करे. (५९) समुद्रना जळमां रथनी नाभि सुधी जइने रथने स्थिर करी चक्री शत्रुना तेजने हरनार धनुष्य ग्रहण करे. (६०) पछी टंकारव करवापूर्वक तेनापर प्रत्यंचा चडावे अने पोतानुं नामांकित, शत्रुनो विनाश करनारुं अने देवाधिष्ठित बाण तेनी साथे जोडे. (६१) पछी वेध्यवेधनमां पंडित एवा चक्री वैशाख स्थाननो आश्रय करे, कारण के पांच प्रकारनां स्थानो पैकी आ कार्यमां ते स्थान ज उपयोगी छे. (६२)

पांच स्थानो आ प्रमाणे–१ आलीढ, २ वैशाख, ३ प्रत्यालीढ, ४ मंडळ अने ५ समपाद. वैशाखस्थाननुं लक्षण कहे छे–हे वत्स ! कूट (किल्लो, पर्वतनुं शिखर विगेरे)

सविस्तारौ समहस्तप्रमाणतः । वैशाखस्थानके वत्स ! कूटलक्ष्यस्य वेधने
॥ ६३ ॥ अंतःस्थांश्च बहिःस्थांश्च बाणाधिष्ठायकान् सुरान् । प्रणमाम्यद्य
ते संतु सहाया मे द्विषज्जये ॥ ६४ ॥ बाणाधिष्ठातृदेवानां वश्यानामपि
या नतिः । उचिता साऽधुना शस्त्र-भृतां शस्त्रार्चनादिवत् ॥६५॥ इत्यु-
क्त्वाकर्णमाकृष्य मुक्तस्तेन शरो द्रुतं । शक्रमुक्तः पविरिव याति
द्वादशयोजनीं ॥ ६६ ॥ तत्र मागधदेवस्य गत्वा पतति पर्षदि । भुंजान-
स्य सुखं स्वैरं दिव्यनाट्यानि पश्यतः ॥ ६७ ॥ सौत्पातिकं तमालोक्य
धूमकेतुमिवोदितं । भ्रुकुटीभीषणो वक्ति क्रोधाहंकारदुर्द्धरः ॥ ६८ ॥
मुमूर्षुरेष को मूर्खो यमातिथ्यमपेक्षते । भुजंगास्ये करमिव यश्चिक्षेप
शरं मयि ॥ ६९ ॥ आसनाद्द्रुतमुत्थाय रोषावेशवशंवदः । यावद्बाणं
तमादाय पश्यति क्रूरया दृशा ॥ ७० ॥ तावच्चक्रभृतो नाम-वर्णालीं
तस्य पश्यतः । शाम्यति क्रुधू विषमहेः शृण्वतो जांगुलीमिव ॥ ७१ ॥
विमृशत्येवमुत्पन्नः क्षेत्रेऽस्मिंश्चक्रवर्त्यसौ । तज्जीतमेतदस्माभि-र्मान्यम-

एवा लक्ष्य (निशान) ने वींधती वखते एक हाथप्रमाण पगने पहोळा राखी उभा रहेवुं ते वैशाखस्थान कहेवाय छे. आ प्रमाणे करीने विचारे के-' अंतःस्थ ने बहिःस्थ एवा बाणना अधिष्ठायक देवोने आजे हुं प्रणाम करुं छुं. तेओ मने शत्रुना जयमां सहायकारी थाओ. ' (६४) पोताने वश एवा पण बाणाधिष्ठायक देवने नमस्कार करवा ते शस्त्रधारीने शस्त्रपूजानी जेम अत्यारे उचित छे. (६५) उपर कह्या प्रमाणे बाणाधिष्ठायक देवोने कहीने कान सुधी धनुष्यने खेंची ते बाणने तरत ज छोडे एटले ते शक्रेंद्रना मूकेला वज्रनी जेम बार योजन सुधी जाय, (६६) अने ज्यां मागधकुमारदेव स्वेच्छापूर्वक सुख भोगवे छे अने दिव्य नाटको जोइ रहेल छे त्यां तेनी सभामां जइने पडे. (६७) धूमकेतुना उदयनी जेम उत्पातकारी एवा ते बाणने जोइने क्रोध ने अहंकारवडे दुर्धर एवो ते देव भयंकर भृकुटीवाळो थइने बोले (६८) के-' मरवाने इच्छतो एवो आ कोण मूर्ख यमनो अतिथि थवाने इच्छे छे के जेणे भुजंगना मुखमां हाथ नांखवानी जेम मारा उपर बाण मूक्युं छे ? ' (६९) आम कहीने आसनथी एकदम उभा थइ रोषावेशने वश थयेल एवो ते जेटलामां बाणने लइ क्रूर दृष्टिवडे तेने जुए छे (७०) तेटलामां ते बाण उपर लखेली चक्रवर्तीना नामवाळी वर्णोनी पंक्ति जोइने जांगुली मंत्र सांभळवाथी जेम सर्पनुं विष शमी जाय तेम तेनो क्रोध शमी जाय छे. (७१) एटले ते विचारे के-' आ क्षेत्रमां आ चक्रवर्ती उत्पन्न थयेल छे, तेथी अमारो आचार छे के-अमारे तेनी आज्ञानो स्वी-

स्यानुशासनं ॥ ७२ ॥ अविमृश्योनपुण्येन कोपोऽकारि वृथा मया । इदं नियतमेवामी स्वामिनः सेवका वयं ॥ ७३ ॥ विलंब्य तदलं स्वामी पूज्योऽयमतिथिर्मम । निश्चित्येत्युपदां हार–कोटीरकटकादिकां ॥ ७४ ॥ चिरसंचितरत्नादि सद्वस्तून्यपराण्यपि । उपादाय शरं तं च तीर्थस्यास्य च मृज्जले ॥७५॥ उत्पतन् दिव्यया गत्या द्रागुपागत्य चक्रिणं । तत्सर्वं प्राभृतीकृत्य नत्वा विज्ञपयत्यदः ॥७६॥ स्वामिन् ! मागधतीर्थांतमिदं क्षेत्रं त्वया जितं । अहं त्वत्किंकरोऽस्मीह प्रदेशस्यास्य रक्षकः ॥ ७७ ॥ अथ चक्री तदादाय प्राभृतं प्रीतमानसः । सत्कृत्य बहुमानेन मागधेशं विसर्जयेत् ॥ ७८ ॥ सर्वेषामपि तीर्थानां ये चाधिष्ठायकाः सुराः । जात्या नागकुमारास्ते चक्रिवश्या महर्द्धिकाः ॥ ७९ ॥ तथोक्तं जंबू० प्र० सूत्रवृत्तौ–कुमारपदवाच्यत्वं चास्य नागकुमारजातीयत्वादिति.

ततो रथं परावर्त्य स्वमावासमुपेत्यसौ । वाद्यमानजयातोद्य–त्रिज-

---

कार करवो. (७२) हीनपुण्यवाळा में विचार कर्या विना फोगट कोप कर्यो, कारण के ए स्वामी अने अमे सेवक ए भाव नियत ज छे. (७३) हवे विलंब करवो कामनो नथी. मारे आ स्वामीरूप अतिथिनी पासे शीघ्रपणे जइने तेनी पूजा करवी जोइए.' आम विचारी निश्चय करीने हारो, मुगट, कडां विगेरे आभूषणो, घणा काळथी भेगा करेलां रत्नो अने बीजी वस्तुओ भेटणा तरीके ग्रहण करीने तेम ज ते बाणने पण साथे लइने, ते तीर्थनी मृत्तिका तथा जळ पण साथे लइने दिव्यगतिवडे एकदम उत्पतीने चक्रवर्तीनी पासे ते देव आवे अने नमस्कार करवापूर्वक लावेली वस्तुओ तेमनी पासे भेट तरीके धरीने आ प्रमाणे कहे (७४–७६) के–' हे स्वामिन् ! आ मागधतीर्थपर्यंत क्षेत्र आपे जीत्युं छे. हुं तमारा किंकर तरीके आ स्थळनो रक्षक छुं'. (७७) पछी चक्री तेनुं भेटणुं स्वीकारीने प्रीतियुक्त मनवाळा थइ ते मागधेशनो बहुमानयुक्त सत्कार करी तेने विसर्जन करे. (७८) मागधादि सर्वे तीर्थोना अधिष्ठायक देवो ते चक्रवर्तीने वश थनारा नागकुमारनिकायना (भवनपति) महर्द्धिक होय छे. (७९) श्री जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रनी वृत्तिमां कह्युं छे के–' आमनुं कुमारपदवाच्यपणुं जे छे ते नागकुमारनी जातिवाळा होवाथी समजवुं.'

हवे चक्री रथने पाछो वाळीने वागता एवा जयवाजित्रोवडे त्रण जगतमां प्रसार

गत्प्रसरद्यशाः ॥ ८० ॥ ततः स्नात्वा जिनार्चाश्चा–र्चयित्वा कृतपारणः । प्रकृतीः प्राग्वदाहूया–दिशत्यष्टाह्निकोत्सवं ॥ ८१ ॥ ततो मागधदेवस्य संपूर्णेऽष्टाह्निकोत्सवे । जाग्रज्ज्योतिर्जगज्जैत्रं चक्ररत्नं प्रतिष्ठते ॥ ८२ ॥ वरदामाभिधं तीर्थं शुद्धदक्षिणदिक्स्थितं । याति साधयितुं चक्रं पथा नैर्ऋतगामिना ॥ ८३ ॥ तथोक्तं–आउहघरसालाओ पडिनिक्खमित्ता दाहिणपच्चत्थिमं दिसिं वरदामतित्थाभिमुहे पयाए यावि होत्थत्ति. ततश्च-मूपरिवृत–श्चक्रवर्त्यपि पूर्ववत् । अनुगच्छति तच्चक्र–मिवांगी कर्मणां फलं ॥ ८४ ॥ वर्द्धमानचमूर्भूपै–र्विजित्य स्वीकृतैः पथि । दुर्वारप्रसरः प्रौढ–प्रवाह इव सैंधवः ॥ ८५॥ प्रयाणकानि कतिचि–द्गत्वा नैर्ऋतसंमुखं । ततोऽपाचीमनुसरन् वरदामं प्रयाति सः ॥ ८६ ॥

वरदामांतिके प्राग्वत् स्कंधावारं निवेश्य सः । साधयेद्वरदामेशं देवं मागधदेववत् ॥ ८७ ॥ वरदामाधिपस्याथ संपूर्णेऽष्टाहिकोत्सवे । जेतुं प्रभासतीर्थेशं चक्रं चरति पूर्ववत् ॥ ८८ ॥ स्थितं शुद्धप्रतीच्यां

पामेला यशवाळा थया सता पोताना आवासमां आवे. (८०) पछी स्नान करी, जिनपूजादि करीने पारणुं करे अने पोताना प्रकृति (प्रधान) वर्गने बोलावीने प्रथमनी जेम अष्टाह्निकोत्सव करवानी आज्ञा करे. (८१) मागधदेव संबंधी अष्टाह्निकोत्सव पूर्ण थाय एटले जागृत ज्योतिवाळुं अने जगतने जीतवानी शक्तिवाळुं चक्ररत्न आगळ चाले. (८२) पछी नैर्ऋत दिशा तरफना मार्गे शुद्ध दक्षिणदिशामां रहेला वरदाम तीर्थने साधवा माटे चक्ररत्न चाले. (८३) कह्युं छे के–' आयुधशाळामांथी नीकळीने दक्षिण–पश्चिम दिशाए एटले नैर्ऋत खुणा तरफ वरदाम तीर्थनी सन्मुख चक्र प्रयाण करे. ' त्यारपछी चक्रवर्ती पण प्रथमनी जेम–प्राणी जेम कर्मना फळ पाछळ गमन करे तेम सेनाथी परिवर्या सता चक्रनी पाछळ चाले. (८४) समुद्रना प्रौढ प्रवाहनी जेम दुर्वार प्रसारवाळा चक्री मार्गमां आवता राजाओने जीती, तेमनो स्वीकार करी लश्करमां वधारो करता चाले. (८५) नैर्ऋतदिशा सन्मुख केटलाक प्रयाणो करीने पछी दक्षिणदिशा तरफ वरदाम तीर्थनी सामे चाले. (८६)

पछी प्रथमनी जेम वरदाम तीर्थनी पासे लश्करनो पडाव करीने मागधदेवनी जेम वरदाम तीर्थना स्वामी वरदामदेवने पण जीते. (८७) वरदामेश संबंधी अष्टाह्निकोत्सव पूर्ण थया पछी प्रभास तीर्थना स्वामीने जीतवा माटे चक्र प्रथमनी जेम ते तरफ प्रयाण करे. (८८) प्रथम वायव्य दिशाने मार्गे चालीने पछी शुद्ध पश्चिम दिशामां रहेला प्रभास-

त–द्वायव्यविदिगध्वना । चक्रं प्रवर्त्तते गंतुं प्रत्यक् च वलते पुरः ॥८९॥ वशीकृत्य प्रभासेशं पूर्वोक्तविधिना ततः । तत्सिंधुदेवीभवनाभिमुखं परिसर्पति ॥ ९० ॥ सिंधोर्दक्षिणकूलेन पूर्वदिग्गामिनाध्वना । गत्वाभ्यर्णे सिंधुदेवी–भवनस्याशु तिष्ठति ॥ ९१ ॥ ननु च–सिंधुदेव्यास्तु भवनं भरतस्योत्तरार्द्धके । सिंधुकुंडेऽस्ति तद्द्वीपे कथं तस्यात्र संभवः ? ॥९२॥ अत्रोच्यते–महर्द्धिकानां वेश्मानि स्थाने स्थाने भवंति हि । इंद्राणीनां राजधान्यो यथा नंदीश्वरादिषु । ९३ ॥ ततः सिंधुद्वीपवर्त्ति–भवनाद-परं खलु । इदं भवनमभ्यूह्यं सिंधुदेव्या महाश्रियः ॥ ९४ ॥ निवेश्य चक्रभृत्तत्र स्कंधावारं यथाविधि । कृताष्टमतपाः सिंधु–देवीं मनसि चिंत-येत् ॥ ९५ ॥ साथ कंप्रासना दत्तो–पयोगा चक्रवर्त्तिनं । ज्ञात्वोत्पन्नमु-पादायो–पदां तमुपतिष्ठते ॥ ९६ ॥ एवं च सिंधुदेवीव–द्वैताढ्यादिसुरा अपि । शरमोक्षं विनैव स्यु–रनुकूलाश्चलासनाः ॥ ९७ ॥ कुंभानां रत्न-चित्राणा–मष्टोत्तरसहस्रकं । नानामणिस्वर्णरत्न–चित्रं भद्रासनद्वयं

तीर्थनी तरफ एटले पश्चिम दिशानी सामे चक्र चाले. (८९) पूर्वोक्त विधिए प्रभासेशने पण वश करीने सिंधुदेवीना भुवननी सन्मुख चक्र गति करे. (९०) सिंधुना दक्षिण किनारे पूर्व दिशा तरफना मार्गे चाली सिंधुदेवीना भवन पासे आवीने त्यां चक्र उभुं रहे. (९१) अहीं प्रश्न करे छे के–' सिंधुदेवीनुं भुवन तो उत्तर भरतार्धमां सिंधुप्रपातकुंडमां तेना नामना द्वीपमां छे, तो तेना भुवननो अहिं संभव क्यांथी ? ' (९२) तेने उत्तर आपे छे के–' महर्द्धिक देव-देवीओना भुवन तो स्थाने स्थाने होय छे जेम इंद्रनी इंद्राणी-ओनी राजधानीओ नंदीश्वरद्वीपादिकमां होय छे तेम. (९३) एटले सिंधुद्वीपमां जे तेनुं भुवन छे तेथी जूदुं महर्द्धिक सिंधुदेवीनुं आ भवन समजवुं. (९४) पछी त्यां लश्करनी छावणी नाखीने यथाविधि अष्टम तप करी चक्री सिंधुदेवीनुं मनमां ध्यान करे. (९५) एटले ते आसन कंपवाथी उपयोग दइने चक्रवर्तीने आवेला जाणी भेटणुं लइने चक्री पासे हाजर थाय. (९६) सिंधदेवीनी जेम वैताढ्यादिकना अधिष्ठायक देवो पण बाण मूक्या विना आसन चलित थवाथी ज चक्रवर्ती पासे आवे छे ने अनुकूळ थाय छे. (आज्ञा माने छे) (९७) सिंधुदेवी विचित्र रत्नोथी भरेला १००८ घडा, नाना प्रकारना मणि, स्वर्ण अने रत्नवडे बनावेल बे भद्रासनो, कडां, बाजुबंधो विगेरे बीजा आभूषणो

॥ ९८ ॥ कटकत्रुटीतादीनि भूषणान्यपराण्यपि । चक्रीत्यादिकमादत्ते सिंधुदेव्योपदीकृतं ॥ ९९ ॥ अहं त्वद्देशवास्तव्या तवास्म्याज्ञप्तिकिंकरी । इत्युक्त्वा प्रणिपत्यास्यां गतायां सोऽत्ति पूर्ववत् ॥ १०० ॥

अष्टाह्निकोत्सवांतेऽस्या ऐशानीगामिनाध्वना । वैताढ्यकटकाभ्यर्णमेति चक्रानुगोऽथ सः ॥ १ ॥ सिंधुदेवीभवनतो जेतुं वैताढ्यनिर्जरं । वैताढ्यकूटगमने ऋजुर्मार्गोऽयमेव हि ॥२॥ कटके दाक्षिणात्येऽस्य कटके स्थापितेऽमुना । अष्टमे च कृते सिंहा—सनं चलति तद्विभोः ॥३॥ दत्तोपयोगो वैताढ्यकुमाराख्यः सुरोऽथ सः । गृहीत्वा प्राभृतं ताह—गभिगच्छति चक्रिणं ॥ ४ ॥ आज्ञां स्वीकृत्य नत्वाथ सुरेऽस्मिन् गतवत्यथ । अष्टाह्निकोत्सवांते ऽस्य चक्री चक्रानुगस्ततः ॥ ५ ॥ गुहां तमिस्रामभ्येति प्रतीचीगामिनाध्वना । वैताढ्यकूटोपांताद्धि प्रतीच्यामेव सा गुहा ॥ ६ ॥ गुहायाश्च तमिस्रायाः स्थापयित्वांतिके चमूं । नाकिनं चिंतयत्येष कृतमालं

चक्रवर्तीनी पासे भेट तरीके धरे. चक्री तेनो स्वीकार करे. (९८–९९) सिंधुदेवी कहे के–' हुं अहीं तमारा स्वामित्ववाळा प्रदेशमां रही सती तमारी आज्ञा माननारी सेविका छुं.' आ प्रमाणे कहीने तथा प्रणाम करीने ते जाय एटले चक्री पूर्वनी जेम पारणुं करे. (१००)

सिंधुदेवीना निमित्तनो अष्टाह्निकोत्सव कर्या पछी ईशानकोणना मार्गे वैताढ्य कटकनी समीपे चक्रनी पाछळ गमन करता चक्रवर्ती आवे. (१०१) सिंधुदेवीना भवनथी वैताढ्यदेवने जीतवा माटे वैताढ्यकटक सन्मुख जवानो सरल मार्ग आ ज छे. (२) वैताढ्यना दक्षिण कटकपासे लश्करनी छावणी नाखीने चक्री अट्ठम करे एटले वैताढ्यना स्वामीनुं आसन कंपायमान थाय. (३) दीधो छे अवधिज्ञाननो उपयोग जेणे एवो वैताढ्यकुमारदेव चक्रीने आवेला जाणी उत्तम प्रकारनुं भेटणुं लइने चक्री पासे आवे. (४) ते देव आज्ञा स्वीकारी नमस्कार करी पाछो जाय एटले ते निमित्तनो अष्टाह्निकोत्सव करीने चक्री चक्रनी पाछळ चाले. (५) पश्चिम तरफने मार्गे चालता चक्री तमिस्रा गुफापासे आवे; कारण के वैताढ्यकूटना[1] उपांत भागथी ते गुफा पश्चिमे छे. (६) तमिस्रा गुफापासे सैन्यने स्थापन करीने चक्री अट्ठम तप करी ते गुफाना स्वामी

१ वैताढ्य उपरना कूट पैकी वैताढ्य नामना कूटना समश्रेणीए रहेला नीचेना भागनी पश्चिमे.

कृताष्टमः ॥ ७ ॥ जिगीषुं सोऽपि विज्ञाय चक्रिणं चलदासनः । ढौकयत्येत्य विनम-न्नलंकारांश्चतुर्दश ॥ ८ ॥ ते चैवं–हार १ द्धहार २ इग ३ कणय ४–रयण ५ मुत्तावली ६ उ केऊरे ७ । कडए ८ तुडिए ९ मुद्दा १० कुंडल ११ उरसुत्त १२ चूलमणि १३ तिलयं १४ ॥ ९ ॥ अलंकारानुपादाय स्त्रीरत्नस्योचितानिमान् । विसर्जयति सत्कृत्य कृतमालं नरेश्वरः ॥ १० ॥ अथोत्सवे समासेऽस्य सार्वभौमः समादिशेत् । सेनानीरत्नमाहूय सिंधुनिष्कुटसाधनं ॥ ११ ॥ सिंधुः स्यात्तस्य खंडस्य पूर्वदक्षिणयोर्दिशोः । उत्तरस्यां च वैताढ्यः प्रतीच्यां लवणोदधिः ॥ १२ ॥ यद्यप्येभिस्त्रिभिः कॢप्तं मध्यखंडात्तथाप्यदः । सिंध्वा पृथक्कृतं तस्मा–त्सिंधुनिष्कुटमुच्यते ॥ १३ ॥ स चर्मरत्नमादाय चतुरंगचमूवृतः । प्रस्थानं कुरुते तत्र द्वितीय इव चक्रभृत् ॥ १४ ॥ गर्जदूर्जितनिःस्वान–ध्वानध्वस्तेतरध्वनिः । अनूदितजयारावः क्षुण्णैर्द्विविधभूधरैः ॥ १५ ॥ जयकुंजरमारूढः सच्छत्रश्चलचामरः । कवचच्छन्नसर्वांगो मेघैर्वृत इवोडुपः ॥ १६॥

कृतमालदेवनुं चिंतवन करे–ध्यान करे. (७) ते पण आसन चलित थवाथी जीतवाने इच्छता चक्रीने त्यां आवेला जाणीने तेमनी पासे आवी नमस्कार करी चौद अलंकारो अर्पण करे. (८) ते चौद अलंकारना नाम—१ हार, २ अर्धहार, ३ एकसरो हार, ४ कनकावळी, ५ रत्नावळी, ६ मुक्तावळी, ७ केयूर (बाजुबंध), ८ कडां, ९ त्रुटित (तोटी), १० मुद्रा (वींटी), ११ कुंडळ, १२ उरसुत्त (छाती सुधी लटकतो दोरो), १३ चूडामणि (मुकुट) ने १४ तिलक. (९) स्त्रीरत्नने योग्य आ अलंकारोने स्वीकारीने कृतमालदेवनो सत्कार करी चक्री तेने विसर्जन करे. (१०) तेना निमित्तनो उत्सव समाप्त थये सते चक्री सेनानीरत्नने बोलावीने सिंधुनिष्कुट साधी आववानी आज्ञा करे. (११) ते खंडनी पूर्वे ने दक्षिणे सिंधु नदी, उत्तरे वैताढ्य पर्वत अने पश्चिमे लवणसमुद्र आवेलो छे. (१२) जो के ए त्रणवडे वींटायेल मध्यखंड पण छे, परंतु आ सिंधुए जूदो पाडेल खंड होवाथी ते सिंधुनिष्कुट कहेवाय छे. (१३) चक्रवर्तीनी आज्ञा थतां सेनानी जाणे बीजो चक्री होय तेम चर्मरत्न लइने चतुरंगसेनासाथे ते तरफ प्रस्थान करे. (१४) गाजी रहेला ऊर्जित निःस्वानोना स्वरवडे रोकी दीधा छे बीजा ध्वनि जेणे एवो, खुंदी नांखेला बे प्रकारना [1]भूधरो जेनी पाछळ जयजय शब्द बोलीइ रहेल छे एवो, जयकुंजरपर बेठेलो, माथे छत्र तथा बे बाजुपर चामर ढळातो,

१ खुंदेला भूधरो–पर्वतो अने वश करेला भूधरो–राजाओ.

चर्मरत्नेन सयान–पात्रीभूतेन तेन सः । सिंधुमुत्तीर्य शैलोच्च–वीचीवलयदुस्तरां ॥ १७ ॥ तत्रत्यानां प्रतीपानां चिकित्सक इवाद्भुतः । विरेक-रुधिरश्राव–वह्निकर्मादिकोविदः ॥ १८ ॥ दशांगुल्यौषधीवर्ग–रसपानोपदेशकः । हरत्यस्त्रैः प्रतापोष्णै–रौद्धत्यं सान्निपातिकं ॥ १९ ॥ पंचभिः कुलकं ॥ एवं च–सिंहले यवनद्वीपे नानाम्लेच्छाश्रयेष्विति । रोमारवाल-संडादि–देशेषु विविधेषु सः ॥ २० ॥ म्लेच्छाननेकजातीयान् विजित्य रणकर्मठः । आज्ञामखंडां सर्वत्र प्रवर्त्तयति चक्रिणः ॥ २१ ॥ युग्मं ॥ चक्रवर्त्युचितान्येषां प्राभृतानि सहस्रशः । जितकाशी समादाय सिंधु-मुत्तीर्य पूर्ववत् ॥ २२ ॥ भूरिभिः किंकरीभूतैः सेवितो म्लेच्छपार्थिवैः । वाचालजयवादित्रः स्तूयमानोऽसकृज्जनैः ॥ २३ ॥ उपेत्य चक्रिणं नत्वा ढौकयित्वोपदाश्च ताः । विज्ञो विज्ञपयत्येवं विनयेन कृतांजलिः ॥ २४ ॥ ॥ त्रिभिर्विशेषकं ॥ स्वामिन् ! भवत्प्रसादेन सिंधुखंडो जितो मया । भूपाः

कवचवडे जेणे आखुं शरीर ढांकी दीधेल छे तेथी मेघोथी आवृत जाणे चंद्रमा होय तेवो ते सेनानी सारा प्रवहणरूप थयेल चर्मरत्नवडे पर्वत जेटली उंची वीचीओना वलयवडे दुस्तर एवी सिंधुनदी उतरीने, त्यां रहेला अनेक शत्रु राजाओनो जाणे अद्भुत वैद्य होय तेम रेच, रुधिरनो स्राव, वन्हिकर्म विगेरेमां कुशळ अने दश अंगुलीओरूप औषधिसमूहना रसपानना उपदेशक[1] एवा तेणे प्रतापवडे उष्ण एवा अस्त्रोवडे तेओनुं सान्निपातिक औद्धत्य दूर कर्युं. (१५–१९) एवी रीते सिंहल, यवनद्वीप अने नाना प्रकारना म्लेच्छोना आश्रयभूत रोम, आरवाल, संडादि विविध देशोने विषे अनेक जातिना म्लेच्छोने जीतीने रणसंग्राममां कुशळ सेनानी सर्वत्र चक्रीनी अखंड आज्ञा प्रवर्तावे. (२०–२१) पछी तेमनी पासेथी चक्रवर्त्तीने उचित एवा हजारो भेटणाने ग्रहण करीने सर्वत्र जीत मेळवेल सेनानी प्रथमनी जेम सिंधु नदी उतरीने सेवक थयेला अनेक म्लेच्छ राजाओथी सेवातो, वाचाळ एवा जयवाजित्रो वगडावतो, लोकोथी वारंवार स्तुति करातो सेनानी चक्रवर्ती पासे आवी, नमस्कार करी, भेटणाओ रजु करीने विज्ञ एवो ते विनयवडे अंजळी जोडीने आ प्रमाणे कहे–(२२–२४) ' हे स्वामिन् ! तमारा प्रसादथी में सिंधुनो दक्षिणनिष्कुट जीत्यो छे अने त्यांना बधा राजाओने में आपना सेवको

---

१ दश अंगुळी मुखमां नांखी दासपणुं स्वीकारवारूप परम औषधिना बतावनार.

सर्वेऽपि तत्रत्या मया स्वर्किकरीकृताः ॥ २५ ॥ एते नमंति ते केचि-दिदं तेषां च ढौकनं । प्रह्वीभूतेषु चैतेषु कार्यः स्वामिन्ननुग्रहः ॥ २६ ॥ तदाकर्ण्य प्रमुदित-श्चक्रवर्त्ती चमूपतिं । सत्कृत्य वस्त्रालंकारै-रनुजानाति वेश्मने ॥ २७ ॥ ततः स्वावासमागत्य स भुंक्ते कृतमज्जनः । ततश्च रमते स्वैरं गीतसंगीतकादिभिः ॥ २८ ॥

अथान्यदा कदाचित्तं चक्रीत्याकार्य शंसति । वत्स गच्छ तमिस्राया उद्घाटय कपाटकौ ॥ २९ ॥ प्रमाणमाज्ञेत्यानम्य स्वमंदिरमुपेत्य च । कुर्यात्पौषधशालायां साष्टमं पौषधत्रयं ॥ ३० ॥ आराध्य विधिनैवं च कृतमालं गुहाधिपं । दिने तुर्ये परिहित-शुद्धनेपथ्यभूषणः ॥ ३१ ॥ आत्तपूजोपकरणो-ऽन्वीयमानो नृपादिभिः । दासीदासैश्च विविध-पूजोपस्करपाणिभिः ॥ ३२ ॥ एत्य दर्यास्तमिस्रायाः कपाटौ याम्यदिग्गतौ । प्रमृज्य लोमहस्तेना-भ्युक्षति प्रवरोदकैः ॥ ३३ ॥ चंदनैश्चारुकर्पूर-कस्तूर्यादिविमिश्रितैः । पूजयत्यंबरैर्नाना-विधैश्च सुमदामभिः ॥ ३४ ॥

बनाव्या छे. (२५) तेमांना मारी साथे आवेला आ केटलाक राजाओ आपने नमस्कार करे छे, भेटणुं धरे छे अने साथे आववा तैयार छे, तो आप नम्र थयेला तेओनी उपर अनुग्रह करो. ' (२६) ते सांभळीने हर्ष पामेला चक्रवर्त्ती सेनानीनो वस्त्रालंकारादिवडे सत्कार करीने तेने स्थाने जवानी आज्ञा आपे. (२७) पछी सेनानी पोताने स्थाने आवी स्नान करीने भोजन करे अने गीत-संगीतादिवडे स्वेच्छाए क्रीडा करे. (२८)

अन्यदा चक्री सेनानीने बोलावीने कहे के-' हे वत्स ! तुं जा अने तमिस्रा गुफाना द्वार उघाड. ' (२९) सेनानी आज्ञा प्रमाण करी, नमीने पोताने आवासे आवे. पछी ते पौषधशाळामां जइ अट्ठमतपसाथे त्रण पौषध करे. (३०) ए रीते विधिपूर्वक तमिस्रागुफाधिप कृतमालदेवने आराधीने चोथे दिवसे शुद्ध वस्त्राभूषण धारण करी, पूजाना उपगरणो लइने अनेक राजाओथी परिवर्यो सतो तथा विविध प्रकारना पूजाना साधनो जेना हाथमां छे एवा अनेक दासदासीओथी अनुसरातो तमिस्रा गुफापासे आवीने तेना दक्षिणदिशाना बंने द्वारो लोमहस्त(पींछी)वडे प्रमार्जे. पछी श्रेष्ठ उदकवडे धुए. (३१-३३) सुंदर एवा कर्पूर, कस्तुरी विगेरेथी मिश्रित चंदनवडे अने नाना प्रकारनी पुष्पमाळा तथा वस्त्रोवडे तेनी पूजा करे. (३४) धूपधाणु हाथमां लइने पोते धूप करे

धूपाधानमुपादाय धूपमुत्क्षिपति स्वयं । पंचवर्णप्रसूनानां निकरं रचये-त्पुरः ॥ ३५ ॥ मंगलान्यालिखत्यष्टौ पुरो रजततंडुलैः । पंचांगस्पृष्टभू-पीठ-स्तौ कपाटौ नमत्यसौ ॥ ३६ ॥ प्रयुज्योपायमित्याद्यं प्रयुयुक्षुरिवां-तिमं । उदस्यति करेणोच्चै-र्दंडरत्नं चमूपतिः ॥ ३७ ॥

केवलं मार्दवोपेतो मृध्यतेऽगी मृदादिवत् । काठिन्यवांश्च दूरेण त्य-ज्यते दृषदादिवत् ॥ ३८ ॥ मृदुत्वकठिनत्वाभ्यां संगताभ्यां तु संगतः । गौरवं लभते लोके जनो हीरांकुरादिवत् ॥ ३९ ॥ सामादिषु ततः श्रेष्ठा-वुपायावादिमांतिमौ । न मध्यमौ तु कातर्या-दित्यादि विमृशन्निव ॥ ४० ॥ दृढघाताय सप्ताष्टा-वपसृत्य पदानि सः । त्रिस्ताडयति दंडेन बाढशब्दमथाररीं ॥ ४१ ॥ कृताक्रंदाविव क्रौंचा-रवदंभेन तावथ । विघट्य पृथुवेगेन तस्थतुः स्वस्वतोऽङ्कके ॥ ४२ ॥ द्वयोः संहतयोः सिद्धि-र्न स्यात्कार्यविरोधिनोः । इतीव भेदनीतिज्ञः स कपाटौ व्ययोजयत्

अने पांच वर्णना पुष्पोनो तेनी समीपे पगर भरे. (३५) रुपाना तंदुळोवडे तेनी पासे अष्टमंगळिक आळेखे अने पंचांगवडे जमीननो स्पर्श करीने ते द्वारोने नमस्कार करे. (३६) आ प्रमाणे द्वार उघाडवानो प्रथम (साम) उपाय करीने पछी अंतिम (दंड) उपाय करवाने इच्छतो होय तेम ते सेनानी दंडरत्न हाथमां ग्रहण करे. (३७)

" आ दुनियामां केवळ पोचापणुं धारण करे छे तो ते माटीनी जेम कचराय छे अने केवळ कठिनता धारण करे छे तो ते पथ्थरनी जेम दूरथी ज तजी देवाय छे. (३८) एटले मृदुत्व अने कठिनत्व बंने जेमां मळेला होय ते लोकमां हिराना अंकुरानी जेम गौरवने पामे छे. (३९) तेथी सामादि चार[1] उपायोमां पहेलो ने छेल्लो उपाय श्रेष्ठ जणाय छे; मध्यना बे तो कायरना उपायो जणाय छे. " आम विचारीने ज जाणे होय तेम सेनानी प्रथम पूजादिवडे साम उपाय कर्या पछी दृढपणे प्रहार करवा माटे सात-आठ पगला पाछा भरीने दंडवडे त्रण वार द्वार उपर प्रहार करे के जेथी बारणाओ गाढ शब्द करे (४०–४१) अने क्रौंच पक्षीनी जेम जाणे आक्रंद करतां होय तेवो शब्द करतां मोटा वेगथी ते बंने बारणा उघडी जइने पोतपोतानी पाछळना तोडा साथे अडीने स्थित थाय. (४२) कार्यना विरोधी एवा बे भेळा मळेला होय तो ते कार्यसिद्धि थवा न देय एम भेदनीतिने जाणनारानी जेम सेनानी ए बंने बारणाने छुटा पाडे. (४३)

१ साम, दाम, भेद अने दंड.

॥ ४३ ॥ यश्चात्र द्वादशयोजनानि तुरगारूढः सेनापतिः शीघ्रमपसरती-त्यादिप्रवादः सोऽनागमिक इव लक्ष्यते. इत्यावश्यकटिप्पनके.

सोत्साहः कृतकार्योऽथ चक्रभृच्चरणांतिके । एत्य विज्ञपयत्येवं सेनानी रचितांजलिः ॥ ४४ ॥ वच्मि स्वामिन्नभीष्टं ते तमिस्रोद्घाटिता गुहा । उदीच्यभरतार्द्धस्य मार्गोऽयं सुखदोऽस्तु वः ॥४५॥ श्रुत्वेति मुदितश्चक्री सत्कृत्य पृतनापतिं । प्रस्थानं कुरुते सद्यः सन्नद्धाशेषसैनिकः ॥ ४६ ॥ कुंजरं पर्वतप्रौढ–मारूढो मघवानिव । वज्रोपमां दधद्धेम–सृणिं दिक्प्रसरघृणिं ॥ ४७ ॥ याम्येभकुंभन्यस्तेन मणिरत्नेन शोभितः । गुहां विशति चक्रीशः शशी घनघटामिव ॥ ४८ ॥ मणिरत्नं च तद्भाति कुंभिकुंभस्थले स्थितं । रवेर्बिंबमिव ध्वांत–ध्वंसि पूर्वाद्रिमूर्द्धनि ॥ ४९ ॥ तेन प्रकाशिताध्वासौ द्वादशयोजनावधि । कुर्याद्भित्त्योर्मंडलानि काकिण्या रत्नमुख्यया ॥ ५० ॥ अवस्थितप्रकाशानि स्थिरमार्त्तंडपंक्तिवत् । पांथानां

अहीं 'सेनानी दंडवडे प्रहार करीने अश्व उपर बेठेलो बार योजन पाछो हठी जाय इत्यादि प्रवाद (दंतकथा) छे ते अनागमिक जणाय छे.' एवुं आवश्यकना टिप्पनकमां कह्युं छे.

पछी कृतार्थ एवा सेनानी उत्साहपूर्वक चक्रवर्तीना चरण पासे आवी बे हाथ जोडीने विज्ञप्ति करे (४४) के–' हे स्वामिन् ! तमारुं अभीष्ट तमने निवेदन करुं छुं के तमिस्रा गुफा में उघाडी छे एटले हवे उत्तर भरतार्धमां जवानो आपनो मार्ग सुखकारी थाओ. ' (४५) आ प्रमाणे सेनानीना वचनो सांभळीने चक्री हर्ष पामी तेनो सत्कार करे, अने पछी सर्व सैनिकोने तैयार करीने तत्काळ तमिस्रा गुफा तरफ प्रयाण करे. (४६) पर्वत जेवा प्रौढ हस्ती उपर इंद्रनी जेम चक्रवर्ती आरोहण करे अने जेना तेजनो दिशाओमां प्रसार थइ रह्यो छे एवा वज्र जेवा सोनाना अंकुशने हाथमां धारण करे. (४७) पछी हाथीनी जमणी बाजुना कुंभस्थळ उपर स्थपायेला मणिरत्नवडे शोभित एवा चक्री व दळांनी घटामां चंद्र प्रवेश करे तेम गुफामां प्रवेश करे. (४८) ते वखते हाथीना कुंभस्थळ उपर स्थापन करेल मणिरत्न पूर्वाद्रिपर रहेल अंधकारनो ध्वंस करनार रविना बिंबनी जेवुं शोभे छे. (४९) ते रत्नवडे बार योजन सुधी प्रकाश पडे छे. तेणे प्रकाशित करेला मार्गे चालता चक्री रत्नमां मुख्य काकिणीरत्नवडे बे बाजुनी भींतो उपर (गोळ) मंडळो आळेखे छे (करे छे). (५०) ते मंडळो 'स्थिर सूर्यनी पंक्तिनी जेम

संचरिष्णूना–मुपकुर्वंति तानि च ॥५१॥ मंडलानां स्थितिसंख्यादिस्वरूपं च क्षेत्रलोके वैताढ्याधिकारे प्रोक्तमस्तीति ततो ज्ञेयं. एकोनपंचाशन्मानै–र्मंडलैस्तैर्मतांतरे । अष्टानवत्या स्यान्नित्य–मध्याह्नं तद्गुहोदरं ॥ ५२ ॥

अथ वार्द्धकिरत्नेन सद्यः सज्जितपद्यया । नद्यावुत्तीर्य निमग्न–जलोन्मग्नजलाभिधे ॥ ५३ ॥ यावद्दर्या औत्तराहं द्वारं गच्छति चक्र-भृत् । तावत्कपाटौ तत्रत्यौ स्वयमेवापसर्पतः ॥ ५४ ॥ हयहेषारवाकीर्णं गजगर्जारवोर्जितं । स्फुरद्रथघटत्कारै–रुद्धतैर्धुतभूतलं ॥ ५५ ॥ छन्नाशे-षनभोमार्गं पताकाकेतुकोटिभिः । रणवादित्रनिर्घोषा–टोपकंपितकातरं ॥ ५६ ॥ करालकवचास्त्रालि–भीषणं भटकोटिभिः । दर्शनीयं च भूपालैः सुरैरिव महर्द्धिकैः ॥ ५७ ॥ अगण्यं चक्रिणः सैन्यं निर्गच्छत्कंदरोद-रात् । जानंति म्लेच्छभूपाला नष्टैः पर्यंतवासिभिः ॥ ५८ ॥ चतुर्भिः कलापकं ॥ ततः सन्नह्य ते सर्वे संभूय रणकर्मठाः । युध्यंते चक्रिसैन्येन दत्तदैन्येन विद्विषां ॥ ५९ ॥ खड्गाग्रच्छिन्नमत्तेभ–गलद्रुधिरपिच्छिलं ।

अवस्थित प्रकाशवाळा होय छे, अने तेमां संचार करनारा पंथीओने उपकारक थाय छे. (५१) ए मंडळोनी स्थिति ने संख्यादिस्वरूप क्षेत्रलोकमां वैताढ्य पर्वतना अधिकारने विषे कहेल छे तेथी त्यांथी जाणवुं. कुल मळीने ४९ अने मतांतरे ९८ मंडळोवडे ते गुफानुं उदर निरंतर मध्याह्न जेवुं प्रकाशित रहे छे. (५२)

पछी वार्धकीरत्ने तरतमां ज बांधी दीधेली पाज (पुल)वडे आखा लश्करसहित निमग्नजळा ने उन्मग्नजळा बंने नदी उतरीने चक्री जेटलामां उत्तर तरफना द्वार पासे पहोंचे तेटलामां ते बाजुना द्वार तरत ज स्वयमेव उघडी जाय. (५३–५४) हयना हेषारवथी व्याप्त, गजना गर्जारवथी ऊर्जित, स्फुरायमान एवा रथना घटत्कारवडे उछळी रहेल भूतळवाळा, पताका ने केतु क्रोडोगमे फरकती होवाथी तेनावडे आकाशना मार्गने ढांकी देता, रण-संबंधी वाजित्रोना निर्घोषना आटोपथी कायरजनोना हृदयने कंपावता, विकराळ एवा कवच अने अस्त्रोवडे भीषण, क्रोडोगमे पदातिओथी तेम ज महर्द्धिक देवोनी जेवा हजारो राजाओथी जोवालायक अने अगणित एवुं चक्रीनुं सैन्य गुफामांथी बहार नीकळे एटले नजीक रहेला लोकोने नासता जोइ म्लेच्छ राजाओ तेने जाणे. (५५–५८) लश्करने जोतां ज ते बधा राजाओ रणकर्ममां कुशळ एवा तैयार थइ एकठा थइने शत्रुने दीनता पमाडनार चक्रीना सैन्यनी साथे युद्ध करवा मंडी जाय. (५९) तेमनी साथेना युद्धथी

शिरोभिः स्यान्मिथश्छिन्नैः स्थपुटं तत्र भूतलं ॥ ६० ॥ तत्र शत्रुशराश्लेष–परावृत्ताः शरा निजं । यांत्याश्रयं सजातीया–तिथ्यं कर्तुमिवोद्यताः ॥ ६१॥ भटाः केचिच्छरशतै–र्भांत्यापिच्छं वपुर्गतैः । उत्पन्नपक्षाः स्वर्गंतु–मिव संख्यमुखे हताः ॥ ६२ ॥ केचिन्निष्पिष्टरदन–च्छदा हस्ताग्रवर्त्तिभिः । भटाः खड्गैर्विराजंते मूर्त्ता वीररसा इव ॥ ६३ ॥ केचिद्घातशतोद्भिन्नै–रंत्रकैः कंठवर्त्तिभिः । विभांति वरणस्रग्भि–रिव युद्धे जयश्रियाः ॥ ६४ ॥ कुट्टयंति द्विषां केचि–न्मौलीन् कुद्दालपाणयः । निरंकुशाः काननस्थ–सहकारानिवाध्वगाः ॥ ६५ ॥ केचिच्च कंदुकक्रीडो–त्कटा इव महाभटाः । निर्लोठयंति भूपीठे खड्गाग्रैर्वैरिमस्तकान् ॥ ६६ ॥ अन्ये च रिपुकुंभींद्रा–नारोहंति हतद्विषः । सोपानीकृततद्दंतमुशलाः कुशलाशयाः ॥ ६७ ॥ घनामपि द्विषत्सेनां भिंदंते केचिदायुधैः । शृंगैः शंढा मदोन्मत्ता निम्नगायास्तटीमिव ॥ ६८ ॥ महिषा इव गाहंते केचित्संग्रामपल्वलं । आहत्य द्विण्मुखाब्जानि पृथ्वीं पंकिल·

खड्गवडे भेदायेला हाथीओना मस्तकमांथी गळता रुधिरवडे जमीन व्याप्त थइ जाय. परस्परना छेदेला मस्तकोथी बधी जमीन ढंकाइ जाय. (६०) शत्रुना बाणनी साथे संघट्ट थवाथी पाछा आवता बाणो जाणे सजातीयनुं आतिथ्य करवाने तत्पर थया होय तेम पोताने स्थाने पाछा आवे. (६१) केटलाक सुभटो सेंकडो बाणोवडे भेदायेला पोताना शरीरथी स्वर्गे जवाने माटे जाणे पांखो आवी होय एवा देखावा लागे. (६२) केटलाक सुभटो होठ पीसीने हाथमां रहेला खड्गोवडे मूर्त्तिमंत वीररस होय एवा शोभवा लागे. (६३) केटलाक सुभटो सेंकडो प्रहारथी नीकळेला अने कंठमां वींटाइ गयेलां आंतरडाओवडे जाणे युद्धमां तेने वरवा माटे जयलक्ष्मीए माळा पहेरावी न होय तेवा लागे. (६४) केटलाक कुद्दाळ जेना हाथमां छे एवा सुभटो बगीचामां रहेला आम्रवृक्षने मार्गे जनारा जेम भांगे–त्रोडे तेम निरंकुशपणे शत्रुओना मुकुटोने त्रोडी नाखे. (६५) केटलाक महासुभटो खड्गना अग्रभागवडे वैरीना मस्तकोने कंदुकनी क्रीडा करवानी जेम उंचे उडाडीने जमीनपर पछाडे. (६६) केटलाक कुशळ बुद्धिवाळा सुभटो शत्रुओना हस्ती उपर तेना दांतरूप मुशळने पगथीआरूप करी तेनापर चडीजइने शत्रुओने प्राणरहित करे. (६७) केटलाक सुभटो मदोन्मत्त सांढो नदीना किनाराने त्रोडी पाडे तेम आयुधोवडे घणी शत्रुसेनानो भेद करे. (६८) केटलाक सुभटो पाडाओनी जेम संग्रामरूप पल्वल

यंति च ॥ ६९ ॥ जातायां तत्र रुधिरा—पगायां भटमौलयः । पद्मायंते तटायंते मृतमत्तेभपंक्तयः ॥ ७० ॥ चलन्मत्स्यकुलायंते तरंतः पतिताः शराः । खगायंते नभःस्थाश्च भटमुक्ताः शरोत्कराः ॥ ७१ ॥ दंतादंति-प्रवृत्तेभ—युद्धोद्यद्धुतभुक्कणाः । द्योतंत इव खद्योता—स्तत्र रेणुतमोघने ॥ ७२ ॥ घोरांधकारे तत्राश्व—खुरक्षुण्णरजोभरैः । विध्यंति रिपुमर्माणि वीराः शब्दानुगैः शरैः ॥ ७३ ॥ कबंधास्तत्र धावंतः पथि घ्नंति तरू-नपि । प्रतिपक्षधिया खड्गैः स्फूर्जद्वीररसोद्भटाः ॥ ७४ ॥ तत्र तूर्यारवो-त्फुल्ल—पुलकोत्साहसाहसाः । वीरास्तृणाय मन्यंते जीवितेन समं जगत् ॥ ७५ ॥

यद्येवंविधसंग्रामे परिभूयेत कर्हिचित् । अतुच्छविक्रमैर्म्लेच्छचक्रैश्चक्रिणश्चमूः ॥ ७६ ॥ तदा सन्नह्य सेनानी—र्योद्धुं प्रक्रमते दृढं । तुरंग-रत्नमारूढः खड्गरत्नं करे दधत् ॥ ७७ ॥ एतस्मिन् युध्यमाने च भज्यंते

(खाबोचीया) ने डोळी नांखे अने शत्रुओना मुखरूप कमळोने हणी नाखीने पृथ्वीने कादववाळी करे. (६९) त्यां रुधिरनी नदीओ वहेवा मांडे सते सुभटोना मस्तको तेमां कमळरूप जणाय अने मरण पामेला मदोन्मत्त हाथीओनी श्रेणी तटरूप जणाय. (७०) वळी तेमां पडेला बाणो तरता एवा मत्स्योना समूह जेवा लागे अने सुभटोना मूकेला बाणो आकाशमां रह्या सता पक्षीओ जेवा जणाय. (७१) हाथीओ पोताना दांतवडे परस्पर युद्ध करवामां उद्यत थये सते तेना घर्षणथी उडता अग्निना कणीयाओ उडती रेणुवडे थयेला गाढ अंधकारमां खज्जुआनी जेवा लागे. (७२) घोडाओनी खरीथी खोदायेली जमीनना रजसमूहवडे घोर अंधकार थइ गये सते सुभटो शब्दवेधी बाणोवडे शत्रुओना मर्मने वींधे. (७३) त्यां स्फूरायमान वीररसथी उद्भट एवा सुभटोना धडो दोडता सता मार्गमां प्रतिपक्षीनी बुद्धिए खड्गोवडे वृक्षोपर पण प्रहार करे. (७४) त्यां रणवाजित्रोना रवथी उत्फुल्ल अने पुलकवडे उत्साहित साहसवाळा वीर सुभटो पोताना जीवितसहित आखा जगतने पण तृण समान गणे. (७५)

आवा प्रकारना संग्राममां जो कदाच अत्यंत पराक्रमवाळा म्लेच्छोना समूहथी चक्रीनी सेना कांइक पराभव पामे. (७६) एटले सेनानी पोते दृढपणे बख्तर पहेरी अश्वरत्नपर आरूढ थइ, हाथमां खड्गरत्न धारण करी तरत ज युद्ध करवा तत्पर थाय. (७७) ज्यारे सेनानी युद्ध करवा लागे त्यारे देवताओ पण तेना सामे टकी शके नहीं

नाकिनो यदि । तदा के नाम ते म्लेच्छा गजद्विषि वृका इव ॥ ७८॥ अथासौ भटकोटीर–स्तीव्रशस्त्रज्वरांकुशैः । कुक्षिक्षिप्तैः शमयति प्रतिपक्षमदज्वरं ॥७९॥ तदा च केचिन्नश्यंति केचित्क्रंदंति चार्दिताः । लुठंति केचिद्भूपीठे तिष्ठंत्यन्ये मृता इव ॥८०॥ केचित्त्यजंति शस्त्राणि वस्त्राणीवास्तचेतनाः । क्षिपंति वदने केचि–द्दीनवाचो दशांगुलीः ॥ ८१ ॥ तृणान्याधाय दंतेषु याचंते जीवितं परे । लज्जाविलक्षाः शोचंति चेति केचिदधोमुखाः ॥ ८२ ॥ हा गतं राज्यमस्माकं हा गता स्वैरचारिता । ते धन्याः प्राग्विपन्ना ये धिगस्मान् दुःखदर्शिनः ॥ ८३ ॥ अश्लाघामहि ये शौर्य–मात्मीयं योषितां पुरः । ते कथं कातरास्तासां मुखं दर्शयितास्महे ॥ ८४ ॥ वृथाभूद्दोर्मदोऽस्माकं वृथाभूच्छस्त्रकौशलं । भग्नैः कथमथ स्थेय—मस्माभिर्भटपर्षदि ॥ ८५ ॥

विषण्णा इति ते स्वेष्ट–देवाननुस्मरंति चेत् । तदा ते बोधयंत्येवं खिद्यध्वे किं जडा मुधा ॥ ८६ ॥ एष षट्खंडभूपालैः सेव्यते युद्धनिर्जितैः।

तो पछी म्लेच्छोनो शो आशरो ? तेओ तो सिंहने जोतां वरुओ नासी जाय तेम नासी ज जाय. (७८) सेनानी शत्रुभटोना मदरूप ज्वरने तेनी कुक्षिमां तीव्र शस्त्रोरूप ज्वरांकुश दाखल करीने नाश करे. (७९) ते वखते केटलाक नासी जाय, केटलाक पीडा पाम्या सता रोवा लागे, केटलाक जमीनपर आळोटवा लागे, केटलाक जाणे मरण पामेला होय तेम जमीनपर बेसी जाय, (८०) केटलाक चेतना विनाना जेम वस्त्र तजी देय तेम शस्त्रो तजी देय, केटलाक मोढामां दशे अंगुलीओ नाखीने दीन वाणी बोलवा लागे, (८१) केटलाक दांतमां तृण लइने जीवितनी याचना करवा लागे, केटलाक लज्जाथी विलखा थयेला नीचुं मुख राखीने आ प्रमाणे शोक करवा लागे–(८२) ' हा इति खेदे ! अमारुं राज्य गयुं, अमारुं स्वेच्छाचारीपणुं नाश पाम्युं, जेओ अमारी अगाउ मरण पाम्या छे तेओने धन्य छे अने आवा दुःखने जोनारा अमने धिकार छे. (८३) जे अमो अमारी स्त्रीओ पासे अमारा शौर्यनी प्रशंसा करता हता ते अमो अत्यारे कायर थइ जवाथी तेनी पासे मुख केवी रीते देखाडी शकशुं ? (८४) अमारो भुजानो मद वृथा थयो, अमारुं शस्त्र–कौशल्य वृथा थयुं, भग्न एवा अमे सुभटोनी पर्षदामां केवी रीते बेसी शकशुं ? (८५)

आ प्रमाणे खेद पामेला एवा तेओ जो पोताना इष्ट देवने संभारे तो ते त्यां आवीने तेमने समजावे के 'हे मुर्खो ! केम फोगट खेद पामो छो ? (८६) युद्धमां जीतायेला छ खंडना राजा-

युष्माकमत्र का लज्जा न दुःखं पंचभिः सह ॥ ८७ ॥ पराजयोऽपि शोभायै महता विद्विषा युधि । भवेज्जयोऽपि लज्जायै हीनानां युधि भूभृतां ॥ ८८ ॥ या विधिप्रापितौन्नत्यैः स्पर्द्धा स्वस्यैव साऽहिता । निर्दंताः स्युर्गजा एव खनंतः स्पर्द्धया गिरीन् ॥ ८९ ॥

अथैषामुपरोधेन तद्गृह्या नाकिनोऽपि चेत् । कुर्वंत्युपद्रवं चक्रि-सैन्येऽकालांबुदादिकं ॥ ९० ॥ तदा विज्ञाय तान् शीघ्रं चक्रभृत्सेवकाः सुराः । मृगानिव त्रासयंति तत्कृतोपद्रवैः सह ॥ ९१ ॥ अनन्यगतयस्तेऽथ मध्ये कृत्वाप्तपूरुषान् । नताश्चमूपतिं तेन नीयंते चक्रिणोंतिके ॥ ९२ ॥ ढौकयित्वा प्राभृतानि नत्वा विज्ञपयंत्यदः । प्रभो दृष्टोऽनुभावस्ते वयं स्मः सेवकास्तव ॥ ९३ ॥ अज्ञानात्प्रातिकूल्यं च यदस्माभिः कृतं त्वया । कृपामाधाय सह्यं त–च्छरणागतवत्सल ! ॥ ९४ ॥ चक्र-

---

ओ आ चक्रीने सेवे छे. तो तमने शुं लाज आवे तेम छे. ? पांचनी साथे दुःख होतुं नथी. (८७) युद्धमां मोटा–पराक्रमी शत्रुथी पोतानो पराजय थाय ते पण शोभामाटे छे अने बळहीन राजाओना युद्धमां जो पोतानो जय थाय तो ते पण लज्जा माटे ज छे. (८८) जे विधिना योगे उन्नत अवस्था पामेल होय तेनी साथेनी स्पर्धा ते पोताने ज अहितकारक छे जेमके पर्वतनी साथे स्पर्धा करी तेना पर दांतवडे प्रहार करनार हाथी दांत विनाना थाय ज छे.' (८९)

आ प्रमाणे कह्या छतां म्लेच्छोना उपरोधथी तेना आराधेला देवो चक्रीना सैन्यने अकाळे वर्षा विगेरे करीने उपद्रव करे. (९०) तो ते हकीकतने जाणीने चक्रवर्तीना सेवकभूत देवो तेना उपद्रवो सहित हरणीआओनी जेम तेओने त्रास पमाडीने भगाडी मूके. (९१) पछी बीजुं कोइ पण शरणभूत नथी एम जाणीने ते म्लेच्छराजाओ पोताना आप्तजनने आगळ करीने सेनानी पासे जइ तेने नमे. एटले ते तेओने चक्रवर्त्ती पासे लइ जाय. (९२) तेओ चक्रीने प्रणाम करी भेटणुं धरीने विज्ञप्ति करे के–' हे प्रभो ! अमे तमारो प्रभाव जोयो. आजथी अमे तमारा सेवको छीए. (९३) अज्ञानवडे अमे जे आपनी साथे प्रतिकूळ आचरण कर्युं तेने हे शरणागतवत्सल ! तमे कृपा करीने खमजो.' (९४) पछी चक्री तेमनो सत्कार करीने मीठी वाणीवडे तेओने शांत करे अने

वर्त्यपि सत्कृत्य स्निग्धगीः सांत्वयत्यमून् । सुखं वसंतु निर्भीका मदाज्ञावशवर्त्तिनः ॥ ९५ ॥

सेनापतिमथाहूय चक्रभृद्विनयानतं । आदिशत्युत्तरार्द्धस्थ–सिंधुनिष्कुटसाधनं ॥ ९६ ॥ अस्य प्राच्यां नदी सिंधु–रुदीच्यां हिमवान् गिरिः । दक्षिणस्यां च वैताढ्यः प्रतीच्यां लवणांबुधिः ॥ ९७ ॥ अथ निर्जित्य तान् म्लेच्छा–नादाय प्राभृतानि च । सार्वभौमं नमस्याशु पूर्ववत्पृतनापतिः ॥ ९८ ॥

अथान्यदा चक्ररत्नं ततश्चरति सोत्सवं । कनिष्ठहिमवच्छैला–भिमुखं चक्रिणान्वितं ॥ ९९ ॥ प्रथमं च प्रयातीद–मैशानीगामिनाध्वना । यियासोर्हिमवन्मध्य–मृजुरध्वायमेव यत् ॥ २०० ॥ अंतर्गतान् वशीकुर्वन् देशग्रामपुराधिपान् । प्रयाणैर्योजनांतैः स प्राप्नोत्युपहिमाचलं ॥ १ ॥ निवेश्य कटकं तत्र पूर्ववद्विहिताष्टमः । प्रातस्तुर्येऽह्नि सन्नह्या–रूढः सांग्रामिकं रथं ॥ २ ॥ अनुयातो नृपैः सर्वै–र्वज्रभृत्रिदशैरिव । प्रेरयंस्तुरगान् रथ्यान् रंहसा वायुजित्वरान् ॥ ३ ॥ हिमवद्भूभृतो भित्ति

कहे के–' मारी आज्ञामां वर्तता सता तमे अहीं आनंदथी निर्भय थइने रहो. ' (९५)

पछी चक्रवर्ती सेनापतिने बोलावे अने विनयवडे नम्र एवा तेने आज्ञा करे के–' तमे उत्तरार्धमां रहेला सिंधुना निष्कुटने साधी आवो.' (९६) ए खंडनी पूर्वे सिंधु नदी, उत्तरे हिमवान पर्वत अने दक्षिणे वैताढ्य तथा पश्चिमे लवणसमुद्र आवेल छे. (९७) चक्रवर्तीनी आज्ञाने पामी ते सेनानी त्यां जइ त्यां रहेला म्लेच्छोने जीती तेओना भेटणा लइ चक्रवर्ती पासे आवीने प्रथमनी जेम नमस्कार करे. (९८)

अन्यदा चक्ररत्न त्यांथी उत्सवसहित चूलहिमवान् पर्वत तरफ चाले. चक्री पण तेनी पाछळ सर्व सैन्यसहित चाले. (९९) प्रथम ते ईशान दिशा तरफ गमन करे, केमके हिमवानना मध्यभाग तरफ जवानी इच्छावाळाने आ मार्ग ज सरल छे. (२००) दररोज एक योजनप्रमाण प्रयाण करतां अने मार्गमां आवता देश, ग्राम अने नगरना स्वामीओने जीतीने वश करता अनुक्रमे हिमाचळपर्वत समीपे पहोंचे. (२०१) त्यां सैन्यनी छावणी नाखीने प्रथमनी जेम अठम करे. चोथे दिवसे प्रातःकाळे सन्नद्ध थइने संग्रामसंबंधी रथ उपर चक्री आरूढ थाय. (२०२) पछी देवोए परिवरेला इंद्रनी जेम अनेक राजाओथी परिवरेला चक्री वेगवडे वायुने पण जीते एवा रथना अश्वोने प्रेरणा करीने चलावे. (२०३) ए रीते चलावीने ते कुशळ चक्री रथना अग्रभागवडे हिमवंतपर्वतना

रथाग्रेणातिरंहसा । त्रिस्ताडयित्वा तुरगा–न्निगृह्णाति स कोविदः ॥ ४ ॥ प्राग्वन्नामांकितं बाणं धनुष्यारोप्य निर्भरं । मुंचत्याकर्णमाकृष्यो–न्नतदृष्टिर्विहायसि ॥ ५ ॥ उत्पत्य योजनानि द्वा–सप्ततिं स शरः स्फुरन् । हिमवद्गिरिदेवस्य पुरः पतति दूतवत् ॥ ६ ॥ तं दृष्ट्वा सोऽपि रुष्टः प्राक् पश्यन्नामाथ चक्रिणः । प्रीत्या प्राभृतमादाय राजेंद्रमुपतिष्ठते ॥ ७ ॥ वक्त्येवं सकलं क्षेत्रं त्वयेदं तरसा जितं । त्वत्सेवकोऽस्म्यहं देवो–दीच्यपर्यंतरक्षकः ॥ ८ ॥ सर्वौषधीस्तथा कल्प–द्रुमपुष्पस्रजोऽद्भुताः । हिमवद्गिरिकुंजोत्थं चंदनं तद्ध्रदांबु च ॥ ९ ॥ उपादायोपदां तस्ये–त्यादिकां भूपभूपतिः । तं सत्कृत्य विसृज्याथ व्यावर्त्तयति वाजिनः ॥ १० ॥

अशेषदिक्तटव्याप्त–जयतूर्यत्रजध्वनिः । उपैत्यृषभकूटाद्रिं चक्री शक्र इवर्द्धिमान् ॥ ११ ॥ त्रिः स्पृष्ट्वा तं रथाग्रेण पौरस्त्ये कटकेऽस्य च । रत्नेन काकिणीनाम्ना निजं नाम लिखत्ययं ॥ १२ ॥ तच्चैवं–ओसप्पिणी इमीसे तइयाए समाए पच्छिमे भाए । अहमंसि चक्कवट्टी भरहो इअ

नितंब भागने अति जोरथी त्रण वखत ताडन करे. पछी घोडाओने स्थिर उभा राखे, (२०४) अने प्रथमनी जेम पोतानुं नामांकित बाण धनुष्यपर आरोपण करी धनुष्यने कर्णपर्यंत अत्यंत खेंची उंची दृष्टि करीने आकाशमां छोडे. (२०५) ते स्फुरायमान बाण बोंतेर योजन उंचे जइ हिमवतगिरिना स्वामी देवनी पासे (तेनी सभामां) दूतनी जेम जइने पडे. (२०६) तेने जोइने प्रथम तो ते पण रुष्टमान थाय पण पछी बाण उपर चक्रीनुं नाम वांचीने शांत थइ प्रीतिपूर्वक भेटणुं लइने चक्री पासे आवे, (२०७) अने नमस्कार करीने कहे के–'आ सर्व क्षेत्र तमे पराक्रमवडे जीती लीधेलुं छे तेथी हे देव ! हुं तमारो सेवक छुं अने भरतक्षेत्रना उत्तरना पर्यंतभागनो रक्षक छुं.' (२०८) पछी सर्वौषधि, कल्पवृक्षना पुष्पोनी अद्भूतमाळा, हिमवंतपर्वतना कुंजमां उगेलुं चंदन अने तेना परना (पद्म)द्रहनुं पाणी विगेरे भेट तरीके धरे. (२०८) ते सर्व भेटने ग्रहण करीने चक्री तेनो सत्कार करी विसर्जन करे, अने ते घोडाओने पाछा वाळे. (२१०)

पछी समस्त दिशामां व्यापी रहेला जयवाजित्रोना ध्वनिपूर्वक इंद्रसमान ऋद्धिवाळा चक्री त्यांथी ऋषभकूट समीपे आवे. (२११) ते ऋषभकूटने रथना अग्रभाग वडे त्रण वार स्पर्श करीने पूर्व बाजुना तेना कटक उपर काकिणीरत्नवडे चक्री पोतानुं नाम लखे. (२१२) तेमां आ प्रमाणे लखे–" आ अवसर्पिणीमां त्रीजा आराने पाछले

प्रत्यावृत्तो न गंगां साधयामास तद्वैताढ्यवर्त्तिविद्याधराणामनात्मसात्क-रणेन परिपूर्णोत्तरखंडस्यासाधितत्वात्कथं गंगानिष्कुटसाधनायोपक्रमत इत्यवसेयं. निवेश्य कटकं गंगा—देव्याश्च भवनांतिके । सिंधुवत्साधयत्येप तां नतां निहितोपदां ॥ २८ ॥ यच्चात्र भरतचक्रिणो गंगादेवीभोगेन वर्ष-सहस्रातिवाहनं श्रूयते, तज्जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रे चूर्णौ चानुक्तमपि श्रीऋ-षभचरित्रे प्रोक्तमस्तीति ज्ञेयं.

तस्या अप्युत्सवे पूर्णे चक्ररत्नं ततः पुनः । गंगापश्चिमकूलेन दक्षि-णस्यां प्रतिष्ठते ॥ २९ ॥ क्रमात्खंडप्रपाताया गुहाया द्वारसन्निधौ । उपेत्य चक्रभृत्तत्र स्कंधावारं निवेशयेत् ॥ ३० ॥ कृताष्टमतपाश्चित्ते नक्तमालं गुहाधिपं । चिंतयेत्सोऽप्युपैत्येनं सोपदः कृतमालवत् ॥३१॥ ततस्तस्योत्सवे पूर्णे जिगीषुश्चक्रवर्त्यथ । समादिशति सेनान्ये गंगानिष्कुटसाधनं ॥ ३२ ॥

गंगा प्रत्यग् वहत्यस्य प्राच्यां लवणतोयधिः । वैताढ्यहिमवंतौ च दक्षिणोत्तरयोर्दिशोः ॥ ३३ ॥ चतुर्भिः कृतसीमापि गंगया मध्यखंडतः ।

कह्युं छे के—' ऋषभकूटथी पाछा वळेला चक्री गंगाने साधता नथी कारण वैताढ्यवर्त्ती विद्या-धरोने वश नहीं करेला होवाथी परिपूर्ण उत्तरखंडने साध्या विना गंगानिष्कुटने साधवानो उपक्रम केम करे ? पछी चक्री गंगादेवीना भवनपासे लश्करनो पडाव करीने सिंधुदेवीनी जेम गंगादेवीने साधे, ते नमस्कार करीने भेटणुं धरे. (२२८) अहीं जे भरतचक्रीए गंगादेवी साथेना उपभोगमां हजार वर्ष व्यतिक्रमाव्यानुं सांभळीए छीए ते जंबूद्वीपप्रज्ञ-प्तिसूत्रमां के तेनी चूर्णिमां कहेल नथी. मात्र ऋषभचरित्रमां कहेल छे एम समजवुं.

चक्री त्यां गंगादेवी संबंधी अष्टाहिकोत्सव करे अने ते पूर्ण थये सते चक्ररत्न गंगाना पश्चिम किनाराने मार्गे दक्षिण तरफ चाले. (२२९) अनुक्रमे ते खंडप्रपातागुफानी समीपे आवीने उभुं रहे. तेनी पाछळ चालता चक्री पण त्यां आवीने पडाव करे. (२३०) पछी अष्टमतप करीने चित्तमां ते गुफाना अधिपति नक्तमालदेवनुं ध्यान करे. ते पण आसनकंपथी तरत ज चक्री पासे आवे अने भेटणुं धरी कृतमालदेवनी जेम तेनी आज्ञा स्वीकारे. (२३१) तेना संबंधनो अष्टाहिकोत्सव पूर्ण थये सते जीतवाने इच्छता चक्री गंगाना उत्तरनिष्कुटने साधवानी सेनानीने आज्ञा करे. (२३२)

ए विभागनी पश्चिमे गंगा वहे छे, पूर्वे लवणसमुद्र आवेलो छे अने दक्षिण तेम ज उत्तर दिशाए वैताढ्य ने हिमवत पर्वत आवेला छे. (२३३) आ प्रमाणे ज चतुःसीमा-

पृथक्कृतं विभज्येति गंगानिष्कुटमुच्यते ॥ ३४ ॥ सोऽपि गंगामथोत्तीर्य चर्मरत्नेन सिंधुवत् । म्लेच्छान्निर्जित्य तत्राज्ञां प्रवर्त्तयति चक्रिणः ॥ ३५ ॥ चरितार्थो गृहीत्वा त-त्प्राभृतान्यर्यमद्युतिः । नत्वा चक्रिक्रमौ वक्ति तज्जयं निहितोपदः ॥३६॥ विसृष्टश्चक्रिणाप्येष भूरिसत्कारपूर्वकं । स्वावासे विहितस्नान-भोजनो रमते सुखं ॥ ३७ ॥

चक्री वक्त्यन्यदाकार्य द्वारं भो पृतनापते ! । दर्याः खंडप्रपाताया औत्तराहं प्रकाशय ॥ ३८ ॥ तमिस्रायाम्यदिग्द्वारो-द्घाटने यो विधिः कृतः । तेनैव विधिना द्वार-मुद्घाटयति सोऽप्यदः ॥ ३९ ॥ तेनैव विधिना चक्री विशत्यस्यां चमूवृतः । आत्मा कर्मावृतो मातुः कुक्षाविव शिवाप्तये ॥ ४० ॥ मंडलान्यालिखन् भित्त्यो-र्नद्यावुत्तीर्य ते उभे । निर्याति याम्यद्वारेणो-द्घाटितारऽरिणा स्वयं ॥ ४१ ॥ ननु च-तमि-

वाळा मध्यखंडमांथी गंगाए विभाग पाडीने तेने जूदो पाडेल छे, तेथी ते (उत्तर) गंगा-निष्कुट कहेवाय छे. (२३४) सेनानी पण चर्मरत्नवडे सिंधु नदीनी जेम गंगा नदी उतरीने म्लेच्छोने जीती त्यां चक्रीनी आज्ञा प्रवर्तावे. (२३५) पछी चरितार्थ थयेल सूर्यनी जेवी कांतिवाळो सेनानी ते राजाओना भेटणा लइने चक्रवर्ती पासे आवे अने तेमना चरणने नमीने भेटणुं आगळ धरी म्लेच्छोना जयनी हकीकत निवेदन करे. (२३६) चक्री अत्यंत सत्कारपूर्वक तेने रजा आपे एटले ते पण पोताना आवासे आवी स्नान भोजन करीने आनंदमां प्रवर्त्ते. (२३७)

अन्यदा सेनानीने बोलावीने चक्री आज्ञा करे के-'हे सेनानी ! खंडप्रपाता गुफाना उत्तर बाजुना द्वारने प्रकाशित करो (उघाडो). (२३८) सेनानी पण तमिस्रागुफाना दक्षिण दिशाना द्वार उघाडवा माटे जे विधि कर्यो हतो ते प्रमाणे सर्व विधि अहीं पण करीने तेना द्वार उघाडे. (२३९) पछी चक्री पण पूर्वोक्त विधि प्रमाणे जेम मोक्ष प्राप्तिने माटे कर्मावृत एवो आत्मा मातानी कुक्षिमां प्रवेश करे तेम[1] सेनासहित तेमां प्रवेश करे. (२४०) अंदरनी बंने भींतो उपर मंडळो आळेखीने, बंने नदीओ उतरीने पोतानी मेळे उघडी गयेला बारणावाळा दक्षिणबाजुना द्वारवडे चक्री सेना-सहित गुफानी बहार नीकळे. (२४१) अहीं कोइ शंका करे छे के--चक्री तमिस्रागुफा-

१ मोक्षप्राप्ति मनुष्यभव विना थइ शकती नथी, तेथी मनुष्यपणानी प्राप्ति माटे गर्भ-प्रवेश करवो पडे छे.

स्रया प्रविशति विनिर्गच्छति चक्रभृत् । खंडप्रपातया तत्र किं कारणमिहोच्यते ॥ ४२ ॥ एवं दिग्विजयः सृष्ट्या कृतः स्याद्यच्च शोभनं । कार्यं तत्क्रियते सृष्ट्या सूदर्कं स्यात्तथा च तत् ॥ ४३ ॥ तत्पूर्वोक्तक्रमेणैवोपक्रमंते जयाय ते । प्रवर्त्तयेत्तानेवं हि चक्रं तन्मार्गदेशकं ॥ ४४ ॥

स्कंधावारं निवेश्याथ गंगायाः पश्चिमे तटे । अष्टमं कुरुते चक्री निधानानि नव स्मरन् ॥ ४५ ॥ अथाष्टमपरीपाके निधीनामधिदेवताः । प्रत्यक्षीभूय शंसंति नत्वैवं चक्रवर्तिनं ॥ ४६ ॥ भवता भूरिभाग्येन वयं स्वामिन् वशीकृताः । भृत्यानस्मान्निधींश्चैता-न्नत्रापि स्वीकुरु प्रभो ॥४७॥ यथेच्छमुपयुंक्ष्वामू-स्त्वदायत्तानथ प्रभो । स्वैरं नियोजयास्मांश्च किंकरान्निधिरक्षकान् ॥ ४८ ॥ वशीकृतनिधिश्चक्री ततः पूर्णीकृताष्टमः स्नातभुक्तो निधानानां विधत्तेऽष्टाहिकोत्सवं ॥ ४९ ॥

कदाचिदथ सेनान्य-माहूयाज्ञपयत्यसौ । अपाच्यभरतार्धस्थ-गंगानिष्कुटसाधनं ॥ ५० ॥ प्राच्यपाच्योः समुद्राभ्यां प्रतीच्यामथ गंगया ।

वडे प्रवेश करे अने खंडप्रपातावडे नीकळे तेनुं शुं कारण ? तेने जवाब आपे छे के 'आ रीते ज सृष्टिना एटले सवळी–जमणी बाजुना क्रमवडे करेलो दिग्विजय कहेवाय छे, तेथी लोकमां पण जे शुभ कार्य होय ते सर्व सृष्टिना क्रमवडे ज कराय छे. ते प्रमाणे करवाथी ते कार्यनो परिणाम सारो आवे छे, (२४२) तेथी करीने सर्व चक्रीओ उपर कहेला क्रमवडे ज विजयने माटे यत्न करे छे अने तेमने मार्ग देखाडनार चक्ररत्न पण तेमने ए ज रीते प्रवर्तावे छे.' (२४३–४४)

हवे चक्रवर्ती गंगाना पश्चिम किनारे लश्करनो पडाव करीने नव निधाननुं स्मरण करता सता अट्ठम करे. (२४५) अट्ठम पूर्ण थतां नवनिधिना अधिष्ठायक देवो प्रगट थइने चक्रवर्तीने नमस्कार करी आ प्रमाणे कहे के–' हे स्वामिन् ! अत्यंत भाग्यवाळा एवा तमे अमने वश कर्या छे तो हवे हे प्रभो ! सेवक एवा अमारो अने आ नवे निधानोनो तमे स्वीकार करो. (२४७) हे प्रभो ! आ तमारे वश एवा निधानोनो यथेच्छ उपयोग (उपभोग) करो, अने अमे ते निधिना रक्षको जे तमारा सेवको छीए तेने स्वेच्छाए आपना कार्यमां जोडी द्यो, (२४८) वश थयेला छे निधि जेने एवा चक्री अट्ठम पूर्ण थये सते स्नान–भोजनादि करीने ते निधानो संबंधी अष्टाहिकोत्सव करे. (२४९)

अन्यदा चक्री सेनानीने बोलावीने आज्ञा करे के ' दक्षिण भरतार्धमां रहेला गंगा निष्कुटने साधी आवो.' (२५०) ते निष्कुटनी पूर्वे ने दक्षिणे लवण समुद्र छे. पश्चिमे

वैताढ्येनोत्तरस्यां त–न्निष्कुटं विहितावधि ॥ ५१ ॥ सोऽप्युत्तीर्य तथा गंगां म्लेच्छान्निर्जित्य पूर्ववत् । उपात्तप्राभृतः सर्वं निवेदयति चक्रिणः ॥ ५२ ॥

एवं साधितषट्खंडे कृतकार्येऽथ चक्रिणि । स्वराजधान्यभिमुखं वलते चक्रमुत्सवैः ॥ ५३ ॥ ततश्चक्री गजारूढ–श्चामरच्छत्रशोभितः । निनदन्मंगलातोद्यः साश्चर्यं वीक्षितो जनैः ॥ ५४ ॥ स्वराज्यधान्या अभ्यर्णे स्कंधावारं निवेशयेत् । कृताष्टमतपास्तत्र कुरुते पौषधत्रयं ॥ ५५ ॥ स्वराजधान्यधिष्ठातु–र्देवस्यानेन साधनं । कुरुते तच्च निर्विघ्न–वासस्थैर्यार्थमात्मनः ॥ ५६ ॥ अथाष्टमपरीपाके आरुह्य जयकुंजरं । नदत्सु भूरिवाद्येषु विविधर्द्धिसमन्वितः ॥ ५७ ॥ साश्चर्यं वीक्षितो लोकैः पूर्वपुण्यप्रशंसिभिः । राजधानीं प्रविशति यदा चक्री महोत्सवैः ॥ ५८ ॥ तदाभियोगिका देवा बहिरंतःप्रमार्जितां । सुगंधिनीरैः सिक्तां तां कुर्युर्नानाध्वजांचितां ॥ ५९ ॥ केचिच्च मुदिता देवाः पुरीं विशति चक्रिणि । वृष्टि-

---

गंगा नदी छे अने उत्तरे वैताढ्य पर्वत आवेल छे. आ प्रमाणे ते निष्कुटनो अवधि कह्यो छे. (२५१) सेनानी पण प्रथम प्रमाणे ज गंगाने उतरीने, म्लेच्छोने जीतीने, बधानी पासेथी भेटणुं लइने चक्रवर्त्ती पासे आवे अने ते हकीकत निवेदन करे. (२५२)

आ प्रमाणे छए खंड साधीने चक्री कृतकार्य थये सते चक्र उत्सवपूर्वक राजधानी तरफ वळे. (२५३) तेनी पछवाडे हाथीउपर बेसीने चालता चक्री चामर–छत्रवडे शोभता, मंगळवाजित्रो वागता अने लोकोथी आश्चर्यपूर्वक जोवाता पोतानी राजधानी समीप आवीने त्यां लश्करनो पडाव करे. पछी अट्ठमनो तप करीने त्रण पोसह करे. (२५४–५५) आवी रीते अट्ठमवडे पोतानी राजधानीना अधिष्ठाता देवनी साधना पोताने निर्विघ्नपणे स्थिरतापूर्वक त्यां रहेवानुं थवा माटे करे. (२५६) अट्ठम पुरो थये हाथीउपर बेसीने विविध प्रकारनी ऋद्धिसहित अनेक प्रकारना वाजित्रो वागते सते अने पूर्वपुण्यनी प्रशंसा करता लोकोथी आश्चर्यपूर्वक जोवाते सते चक्रवर्ती ज्यारे महोत्सवपूर्वक पोतानी राजधानीमां प्रवेश करे ते वखते तेना आभियोगिकदेवो नगरीने अंदर ने बहारथी साफ करे, सुगंधी जळवडे सींचे अने नानाप्रकारनी ध्वजाओवडे व्याप्त करे. (२५७–५९) केटलाक हर्ष पामेला देवो चक्री नगरीमां प्रवेश करे ते वखते आभरण,

माभरणस्वर्ण–रत्नवज्रैर्वितन्वते ॥ ६० ॥ तदा तं वहवः काम–भोगद्र-
व्यार्थिनो जनाः । प्रशंसंतः स्तुवंतश्चो–च्चारयंत्याशिषां शतान् ॥ ६१ ॥
बहुभिर्वासरैर्दृष्टा–मपूर्वामिव तां पुरीं । निरीक्षमाणः सानंद–मतिक्रामन्
गृहावलीः ॥ ६२ ॥ नरनारीसहस्राणां नमस्कारांजलीन्मुदा । आददानः
क्रमादेति स्वप्रासादावतंसकं ॥ ६३ ॥ अथावरुह्य नागेंद्रात् सेवकान्नाकिनो
नृपान् । सेनापत्यादिरत्नानि सर्वं चान्यपरिच्छदं ॥ ६४ ॥ सत्कृत्य
विसृजत्याशु गमनाय निजाश्रयान् । स्त्रीभिर्नाट्यैः परिवृतो विशत्यंत-
र्गृहं स्वयं ॥ ६५ ॥ तत्र स्वजनवर्गं स्वं मित्राणि ज्ञातिजानपि । संबंधि-
नश्च भृत्यांश्चा–लापयेत्क्षेमपृच्छया ॥ ६६ ॥ कृतस्नानस्ततो भुंक्ते जिना-
र्चार्चनपूर्वकं । ततोऽद्भुतैर्गीतनाट्या–दिभिर्भुंक्ते सुखानि सः ॥ ६७ ॥

अथ षोडश देवानां सहस्राः पार्थिवास्तथा । सेनापत्यादिरत्नानि
परिवारस्तथाखिलः ॥ ६८ ॥ एत्य विज्ञपयंत्येवं प्रणताश्चक्रवर्त्तिनं ।
जिग्ये क्षेत्रमिदं स्वामिन् चतुरंतावधि त्वया ॥ ६९ ॥ तत्कुर्मश्चक्रवर्त्ति-

---

स्वर्ण, रत्न अने वज्रमणिनी वृष्टि करे. (२६०) ते वखते कामभोग ने द्रव्यना अर्थी घणा जनो चक्रीनी प्रशंसा करे, स्तवे अने सेंकडोगमे आशिषो आपे. (२६१) घणा दिवसोए दीठेली ते नगरीने जाणे अपूर्व जोता होय तेम आनंदपूर्वक जोता अने गृहोनी श्रेणिओनुं अतिक्रमण करता, हजारोगमे नर–नारीओना नमस्काररूपी अंजलिने हर्षथी ग्रहण करता अनुक्रमे पोताना प्रासादावतंसकपासे आवे. (६२–६३) पछी त्यां हाथी उपरथी नीचे उतरीने प्रथम सेवक देवताओने, राजाओने, सेनापति विगेरे रत्नोने अने सर्व अन्य परिवारने सत्कार करीने पोतपोताने स्थानके शीघ्र जवा माटे विसर्जन करे (रजा आपे). पछी स्त्रीओथी अने नृत्य करनाराओथी परिवर्या सता पोताना महेलमां प्रवेश करे. (६४–६५) पछी (पाछळ राजधानीमां रहेला बधा) पोताना स्वजनवर्गने, मित्रोने, ज्ञातिजनोने, संबंधीओने अने सेवकोने कुशळ पूछे. (सर्वनी खबर लेय). (६६) पछी स्नान करी, जिनार्चन करीने भोजन करे. त्यारबाद अद्भुत एवा गीत–नाट्यादिवडे सुखभोग भोगवे. (६७)

अन्यदा सोळ हजार देवो अने सोळ हजार राजाओ तथा सेनापति रत्न विगेरे समस्त परिवार चक्रवर्ती पासे आवीने प्रणामपूर्वक आ प्रमाणे विज्ञप्ति करे–' हे स्वामिन् ! आ भरतक्षेत्र चारे दिशाना छेडापर्यंत आपे जीती लीधुं छे, तेथी अमे महोत्सवपूर्वक

त्वा-भिषेकं समहोत्सवं । यथा वो रुचिरित्येवं चक्री तदनुमन्यते ॥ ७० ॥ अथ राज्याभिषेकार्थ-मष्टमं कुरुते तपः । अभिषेकास्पदं सज्जीकारयत्याभियोगिकैः ॥ ७१ ॥ राजधान्यास्ततस्तेऽस्या ऐशान्यां विमलीकृते । भूतले रचयंत्युच्च-मभिषेकाय मंडपं ॥ ७२ ॥ रत्नबद्धक्षितेस्तस्य रत्नस्तंभशतस्पृशः । विकुर्वंत्यभिषेकार्थं मध्ये पीठं मणीमयं ॥ ७३ ॥ चतुर्दिशं त्रिसोपान-प्रतिरूपकशालिनः । मध्येऽस्य रचयंत्येकं रत्नसिंहासनं महत् ॥ ७४ ॥ इत्यादि विरचय्यैते नत्वा शंसंति चक्रिणं । प्रभो सज्जीकृतोऽस्माभि-रभिषेकाय मंडपः ॥ ७५ ॥ ततश्चक्री गजारूढः सोत्सवं सपरिच्छदः । उपेत्य मंडपे तस्मिन् कृत्वा पीठप्रदक्षिणां ॥ ७६ ॥ तत्र प्राच्यत्रिसोपान-पथेनारुह्य सोत्सवं । सिंहासनमलंकृत्य तिष्ठति प्राङ्मुखः सुखं ॥ ७७ ॥

अथोत्तरप्रोष्ठपदा-प्रमुखे विहितोडुनि । विजयादौ मुहूर्ते च तेऽभिषिंचंति चक्रिणं ॥ ७८ ॥ तथा चोक्तं-अभिषिक्तो महीपालः श्रुति-

---

आपने चक्रीपणानो अभिषेक आपनी रुचि अनुसार करवा इच्छीए छीए.' एटले चक्री ते वातनो स्वीकार करे. (६८-७०) हवे राज्याभिषेकने माटे चक्री अट्ठमतप करे अने राज्याभिषेक करवानुं स्थान आभियोगिक सेवको पासे तैयार करावे. (७१) तेओ आ राजधानीना ईशानकूणमां स्वच्छ करेली जमीन उपर मोटो अभिषेकमंडप रचे. (७२) ते मंडपनी जमीन रत्नोवडे बांधे, तेमां रत्नोना सेंकडो स्तंभो होय छे. तेनी मध्यमां अभिषेकने माटे मणिमय पीठ विकुर्वे (रचे) छे. (७३) ते पीठनी चारे बाजु त्रण त्रण पगथीआ एकसरखा ने शोभिता होय छे. तेनी मध्यमां एक मोटुं रत्नमय सिंहासन रचे छे. (७४) आ प्रमाणे तैयार करीने तेओ चक्रवर्ती पासे आवी नमस्कार करीने ते हकीकत निवेदन करे के-' हे स्वामिन् ! अमे अभिषेक माटे मंडप तैयार कर्यो छे. ' (७५) पछीचक्री हाथीउपर बेसी उत्सवसहित ने परिवारसहित ते मंडप समीपे आवे. त्यां हाथीपरथी उतरी पीठने प्रदक्षिणा करी उत्सवसहित पूर्व बाजुना त्रण पगथीआवडे पीठउपर चडीने पूर्वदिशा सन्मुखना सिंहासनउपर आनंदपूर्वक बेसे. (७७)

पछी उत्तर प्रोष्ठपदा प्रमुख नक्षत्रो आवे सते विजयादि मुहूर्त्तमां बधा मळीने चक्रीने अभिषेक करे. (७८) कह्युं छे के-श्रवण, ज्येष्ठा, लघु (हस्त, अश्विनी, अभिजित्,

ज्येष्ठालघुध्रुवैः । मृगानुराधापौष्णैश्च चिरं शास्ति वसुंधरां ॥ ७९ ॥ विजयमुहूर्त्तश्चैवं—द्वौ यामौ घटिकाहीनौ द्वौ यामौ घटिकाधिकौ । विजयो नाम योगोऽयं सर्वकार्यप्रसाधकः ॥ ८० ॥ प्राग्वर्णितोऽभिषेको यः क्षेत्रलोके सविस्तरः । वैमानिकानामुत्पत्तौ सर्वोऽप्यत्रानुवर्त्त्यतां ॥ ८१ ॥ तथाभिषिक्तं तं गंध—काषाय्या रूक्षितांगकं । सर्वांगालंकृतं कुर्यु—र्भूषणैर्मुकुटादिभिः ॥ ८२ ॥ जय चक्रिन् जय स्वामिन् जयातुल-पराक्रम । राजराज जय प्रौढ—पुण्य भद्रं सदास्तु ते ॥ ८३ ॥ त्वया जितमिदं क्षेत्रं चतुरंतं महौजसा । तत्पालयासंख्यवर्ष—कोटीर्निर्विघ्न-मस्तु ते ॥ ८४ ॥ एवं देवाश्च भूपाश्च पौराश्च सपरिच्छदाः । वदंतो मंगलालापा—नभिषिच्य नमंति तं ॥ ८५ ॥

ततः कृताभिषेकोऽसौ भृत्यानाहूय शंसति । पुर्यामस्यां गजारूढा विष्वगुद्घोषयंत्विति ॥ ८६ ॥ सर्वे महोत्सवं पौराः कुर्वंतु द्वादशाब्दिकं ।

पुष्य) ध्रुव (रोहिणी, त्रण उत्तरा) तथा मृगशिर, अनुराधा ने रेवती नक्षत्रमां करेलो छे राज्याभिषेक जेने एवो राजा घणा काळपर्यंत पृथ्वीने पाळे छे. (७९) विजयमुहूर्त्त आ प्रमाणे छे—प्रथमना बे पहोर एक घडीहीन व्यतीत थये सते अने एक घडी अधिक बे पहोर बाकी रह्ये सते सर्व कार्यनो प्रसाधक एवो विजययोग थाय छे. (८०) पूर्वे क्षेत्रलोकमां वैमानिक-देवनी उत्पत्तिने प्रसंगे जे अभिषेक सविस्तर वर्णवेलो छे ते सर्वे ते ज प्रमाणे अहीं समजी लेवो. (८१) तेवा प्रकारे अभिषेक कर्या पछी गंधकाषायी वस्त्रवडे चक्रीना शरीरने जळरहित करीने (लुहीने) सर्व अंगने मुकुटादि भूषणोवडे अलंकृत करे. (८२) ते वखते ' हे चक्री ! तमे जय पामो, हे स्वामिन् ! तमारो जय थाओ, हे अतुलपरा-क्रमी ! जय पामो, हे राजाओना राजा ! तमे विजय पामो, हे प्रौढपुण्यवाळा ! तमारुं सदा कल्याण थाओ. (८३) तमे आ भरतक्षेत्रने चारे दिशाना पर्यंत भागसुधी महा-पराक्रमवडे जीती लीधुं छे तेने असंख्यकोटी वर्षपर्यंत पाळो अने तमने निर्विघ्नपणुं थाओ. ' (८४) आ प्रमाणे चक्रीने अभिषेक करीने परिवारसहित देवो, राजाओ अने नगरजनो मंगळालापने बोलता सता नमस्कार करे. (८५)

पछी करायेल छे अभिषेक जेने एवा चक्री सेवकोने बोलावीने आ प्रमाणे कहे के— ' तमे हाथी उपर बेसीने आखा नगरमां चोतरफ फरी आ प्रमाणे उद्घोषणा करो (८६) के—' हे पौरजनो ! तमे सर्वे बार वर्षपर्यंत आ महोत्सव करो. ' एवी पद्धति

अष्टाह्निकोत्सवस्येव ज्ञेया सर्वात्र पद्धतिः ॥ ८७ ॥ ततो याम्यत्रिसोपान-मार्गेणोत्तीर्य पीठतः । पट्टहस्तिनमारुह्य चक्री सर्वसमृद्धिभिः ॥ ८८ ॥ प्रासादं निजमागत्य स्नात्वा कृतजिनार्चनः । स्वर्णस्थाले सुखासीनः कुरुतेऽष्टमपारणं ॥ ८९ ॥

वारांस्त्रयोदशैवं च कुर्याद्दिग्विजयेऽष्टमान् । वारांश्च चतुरश्चक्री कुरुते शरमोचणं ॥ ९० ॥ तीर्थत्रये सिंधुगंगा—देव्योर्वैताढ्यनाकिनः। गुहेशयोः कृतमाल—नक्तमालकसंज्ञयोः ॥ ९१ ॥ हिमवद्गिरिदेवस्य विद्याधरमहीभृतां । निधीनां राजधान्याश्चाभिषेकावसरेऽपि च ॥ ९२ ॥ त्रयोदशाष्टमा एवं निर्दिष्टाश्चक्रवर्त्तिनां । तीर्थत्रये हिमवति चतुर्षु शरमोचणं ॥ ९३ ॥ अतुच्छैरुत्सवैरेवं प्रजाभिस्सह चक्रिणः । अब्देषु द्वादशस्वाशु संपूर्णेषु निमेषवत् ॥९४॥ ततो यक्षान्नृपांश्चापि रत्नान्यपि च नागरान् । चक्री यथार्हं सत्कृत्य भुंक्ते राज्यमकंटकं ॥९५॥ युग्मं । षट्खंडराज्ये संजाते निःशल्य इति चक्रिणः । प्रविशत्यस्त्रशालायां चक्ररत्नं महामहैः ॥९६ ॥

चक्रं १ दंड २ स्तथा खड्गं ३ छत्रं ४ चर्म ५ तथा मणिः ६।

बधी अष्टाह्निकोत्सव प्रमाणे जाणवी. (८७) आम कहीने दक्षिण बाजुना त्रण पगथीआओवडे पीठपरथी उतरी पट्टहस्तीपर बेसी चक्री सर्व समृद्धिवडे पोताना प्रासादमां आवे. त्यां स्नानपूर्वक जिनार्चा करी सुखपूर्वक बेसीने सोनाना थाळमां अट्ठम तपनुं पारणुं करे. (८८–८९)

उपर कह्या प्रमाणे दिग्विजयमां कुल तेर वखत अट्ठम तप करे, अने चार वखत बाण मूके. (९०) त्रण तीर्थ, गंगा अने सिंधुदेवी, वैताढ्यकुमारदेव, बे गुफाना स्वामी कृतमाल ने नक्तमालदेव, हिमवद्गिरिदेव, विद्याधर राजाओ, नव निधानो, राजधानी अने अभिषेक अवसर–आ १३ प्रसंगे चक्री अट्ठम करे एम कह्युं छे अने तेमांना त्रण तीर्थे तथा हिमवंत पर्वते–एम चार ठेकाणे बाण मूके एम कह्युं छे. (९१–९३) प्रजासाथे सविशेष उत्सवमां वर्तता चक्रीने बार वर्ष तो एक निमेषमात्रमां पूरा थइ जाय. (९४) पछी यक्षो, राजाओ, रत्नो अने नगरजनोनो यथायोग्य सत्कार करे अने निष्कंटक एवुं राज्य भोगवे. (९५) ए प्रमाणे षट्खंड राज्यनी प्राप्ति चक्रीने निःशल्यपणे थये सते चक्ररत्न मोटा महोत्सवसाथे आयुधशाळामां प्रवेश करे. (९६)

चक्र, दंड, खड्ग, छत्र, चर्म, मणि अने काकिणी आ सात एकेंद्रिय अने १ सेना-

स्युः काकिणीति ७ रत्नानि सप्तैकाक्षाणि चक्रिणां ॥ ९७ ॥ सेनापति १ र्गृहपति २–र्वार्द्धकिश्च ३ पुरोहितः ४ । गजो ५ ऽश्वः ६ स्त्री ७ ति रत्नानि सप्त पंचेंद्रियाण्यपि ॥ ९८ ॥ चक्ररत्नं भवेत्तत्र मुख्यं विजयसाधनं । वज्रतुंबं लोहिताक्षा–रकं जांबूनदप्रधि ॥ ९९ ॥ मणिमौक्तिकजालेना–लंकृतं किंकिणीयुतं । नानारत्नमणिस्वर्ण–घंटिकाजालवेष्टितं ॥ ३०० ॥ सर्वर्त्तुजप्रसूनस्रक्–पूजितं रविबिंबवत् । दीप्रं द्वादशभंभादितूर्यध्वनिनिषेवितं ॥१॥ अनेकदिव्यवादित्र–निर्घोषैः पूरितांबरं । सदा नभःस्थितं यक्ष–सहस्रपरिवारितं ॥ २ ॥ चतुर्भिः कलापकं ॥ अमोघशक्तिकं तच्च खेचरक्ष्माचरादिषु । विना स्वगोत्रं सर्वेषु वैरिषु प्रोत्कटेष्वपि ॥३॥ पाताले वा पयोधौ वा वज्रकोष्ठे स्थितस्य वा । रिपोः शीर्षं छिनत्येत–च्चक्रिमुक्तं चिरादपि ॥४॥ अकृत्वा तच्छिरश्छेदं न कदापि निवर्त्तते । मासैर्बहुभिरब्दैर्वा तं हत्वैवैति चक्रिणं ॥५॥ नाप्नोत्यवसरं याव–त्तावत्तदनुशात्रवं । इव श्येनोऽनुशकुनि वंभ्रमीति दिवानिशं ॥ ६ ॥ इति चक्ररत्नं.

पति, २ गृहपति, ३ वार्धकी, ४ पुरोहित, ५ गज, ६ अश्व अने ७ स्त्री–आ सात पंचेंद्रिय कुल १४ रत्नो चक्रवर्त्तीने होय छे. (९७–९८) तेमां विजयना मुख्य साधनरूप चक्ररत्न वज्रना तुंब (मध्यभाग)वाळुं, लोहिताक्षना आरावाळुं, जांबुनदनी परिघवाळुं, मणिमोतीनी जाळ (माळा)वडे अलंकृत, घुघरीओवाळुं, नानाप्रकारना रत्नमणि अने सुवर्णनी घंटडीओथी वेष्टित, सर्व ऋतुमां थनारा पुष्पोनी माळाओथी पूजित, रविबिंब जेवुं तेजस्वी, बार प्रकारना भंभादि वाजित्रोना ध्वनिथी सेवित, अनेक दिव्य वाजित्रोना निर्घोषथी आकाशने पूरी देनारुं, सदा आकाशमां ज रहेनारुं अने हजार यक्षोथी परिवरेलुं होय छे. (२९९–३०२) अमोघ शक्तिवाळुं ते चक्र स्वगोत्री शिवाय बीजा सर्व प्रोत्कट एवा [1]क्ष्माचर के [2]खेचर एवा कोइ पण उत्कट शत्रुपर चक्रीए मूक्युं सतुं पाताळमां, समुद्रमां के वज्रना कोठामां कोइपण स्थाने शत्रु गये सते तरत अथवा अमुककाळे तेना मस्तकने छेदीने ज पाछुं चक्रीपासे आवे छे. (३–४) तेना मस्तकनो छेद कर्या विना ते कदापि पाछुं आवतुं नथी. घणा दिवसो, मासो के वर्षो अतिक्रमे तो पण तेने हणीने ज चक्रीपासे आवे छे. (५) ज्यांसुधी शत्रुनुं मस्तक छेदवानो अवसर मळतो नथी त्यांसुधी ते श्येन पक्षी जेम तेना भक्ष्यरूप बीजा पक्षीनी पाछळ भमे तेम शत्रुनी पाछळ रात्रदिवस भम्या करे छे. (६) इति चक्ररत्नं.

१ पृथ्वीपर चालनार. २ विद्याधर.

स्याद्दंडरत्नं सर्वत्रा–ऽव्याहतं वज्रनिर्मितं । स्फुरद्रत्नमयैर्दीप्रं पंचभिः पर्वभिः शुभैः ॥७॥ पथि संचरतश्चक्रि–सैन्यस्य सुखहेतवे । क्षुद्राद्रिगर्त्तापाषाण–विषमक्ष्मोपमर्दकं ॥ ८ ॥ युग्मं ॥ प्रयोजनविशेषेण प्रयुक्तं स्वामिना च तत् । सहस्रयोजनोद्विद्धं कुर्यात्खातं भुवि द्रुतं ॥ ९ ॥ परिखाष्टापदस्याद्रे–र्यथा सगरनंदनैः । सहस्रयोजनोद्विद्धा दंडरत्नेन निर्मिता ॥१०॥ भेदनं(कं)शत्रुसैन्यानां कुलिशं भूभृतामिव । नृदेवतिर्यगुत्पन्ना–शेषोपद्रवजिच्च तत् ॥ ११ ॥ ज्वलनप्रभनागेंद्रा–त्सगरस्यांगजन्मनां । योऽभूदुपद्रवः सत्य–प्यस्मिन् स त्वनुपक्रमः ॥ १२ ॥ ध्वंसः सोपक्रमस्यैवो–पद्रवस्य भवेदितः। इतरस्तु भवत्येव वीरांतेवासिदाहवत् ॥ १३ ॥ तथेदं चक्रिणां सर्व मनश्चिंतितसाधकं । महाप्रभावं स्याद्यक्ष–सहस्रसमधिष्ठितं ॥ १४ ॥ इति दंडरत्नं.

खड्गरत्नं भवेत्तीक्ष्ण–धारं नीलाब्जमेचकं । नानारत्नलताचित्र–विचित्रं च सुगंधि च ॥ १५ ॥ रत्नस्वर्णादिरचना–विचित्रोत्कृष्टमुष्टिकं ।

---

२ दंडरत्न—सर्वत्र अव्याहत होय छे, वज्रनुं बनेलुं होय छे, स्फुरायमान रत्नोना शुभ एवा पांच पर्वोवडे दीप्त होय छे. (७) मार्गे चालतां चक्रीना सैन्यना सुखने माटे नाना सरखा टेकरा, खाडा, पाषाण अने विषम पृथ्वीने सम करनार (उपमर्दन करनार) होय छे. (८) कोइ प्रयोजन विशेषे चक्रीए हुकम कर्यो होय तो जमीनमां उंडुं एक हजार योजन खोदी शके छे. (९) जेमके सगरचक्रीना पुत्रोए दंडरत्नवडे अष्टापद पर्वतनी फरती खाइ एक हजार योजन उंडी तेनावडे खोदी हती. (१०) पर्वतने भेदनार वज्रनी जेम शत्रुसैन्यनुं भेदन करे छे. वळी देव, मनुष्य ने तिर्यंचना करेला सर्व उपद्रवोने जीतनार होय छे. (११) सगरचक्रीना पुत्रोने ज्वलनप्रभ नागेंद्र तरफथी ते दंडरत्न छतां पण जे उपद्रव थयो (तेओने बाळी नाख्या) ते उपद्रव अनुपक्रमी हतो. (१२) आ दंडरत्नथी सोपक्रमी उपद्रवनो ज नाश थइ शके छे; निरुपक्रमी उपद्रव तो थाय ज छे. जेम वीरप्रभुना शिष्योने गोशाळे बाळी दीधा तेम. (१३) आ दंडरत्न चक्रीना मनचिंतित सर्व अर्थनुं साधक, महा प्रभाववाळुं ने एक हजार यक्षोवडे अधिष्ठित होय छे. (१४) इति दंडरत्न.

३ खड्गरत्न—तीक्ष्ण धारवाळुं, नीलकमळ जेवुं श्याम, नाना प्रकारनी रत्नमय लताथी चित्रविचित्र अने सुगंधी होय छे. (१५) रत्नस्वर्णादिकथी रचेली

सद्यः शाणोत्तीर्णमिव शश्वत्तेजोभराद्भुतं ॥ १६ ॥ गिरिवज्रादिदुर्भेद-भेदकं शत्रुसैन्यभित् । चराचराणां सर्वेषां छेदनेऽमोघशक्तिकं ॥ १७ ॥ त्रिभिर्विशेषकं । पंचाशदंगुलायामं षोडशांगुलविस्तृतं । स्यादर्द्धांगुलबाहल्य-मेतद्यक्षसहस्रयुक् ॥ १८ ॥ तथोक्तं जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रे-पण्णासंगुलदीहो सोलसअंगुलाइं विच्छिण्णो । अद्धंगुलसोणीको जेट्ठपमाणो असी भणिओ ॥ १९ ॥ यत्तु संग्रहण्यां ' बत्तीसंगुलखग्गो ' इति श्रूयते तन्मध्यममानापेक्षया, यदाह वराहः-अंगुलशतार्द्धमुत्तम ऊनः स्यात्पंचविंशतिं खङ्गः । अनयोश्च संख्ययोर्यो मध्ये स तु मध्यमो ज्ञेयः ॥ २० ॥ इति खड्गरत्नं.

छत्ररत्नं भवेत्पूर्ण-शरच्छीतांशुमंजुलं । नवनवत्या सहस्रै रैशलाकाभिरंकितं ॥ २१ ॥ दर्शनादेव दस्यूनां भुजशस्त्रादिशक्तिहृत् । पुष्टप्रौढस्वर्णदंड-नानाचित्रैश्च चित्रकृत् ॥ २२ ॥ स्थाने च दंडारोपस्य पंजराकारराजितं । परितो मौक्तिकालीभि-र्मणिरत्नैश्च मंडितं ॥ २३ ॥ वृष्ट्या-

---

विचित्र एवी उत्कृष्ट मुठवाळुं होय छे. तरतमां ज शराण उपरथी उतारेलुं होय तेवुं चोतरफ फेलाता तेजवडे अद्भुत होय छे. (१६) पर्वत ने वज्रादिक दुर्भेद्य वस्तुओने पण भेदी शके छे. शत्रुना सैन्यनो नाश करे छे. चर ने स्थिर एवी सर्व वस्तुओना छेदनमां अमोघ शक्तिवाळुं होय छे. (१७) पचास अंगुळ लांबुं ने सोळ अंगुळ पहोळुं होय छे. अर्ध अंगुळ जाडुं अने एक हजार यक्षोवडे अधिष्ठित होय छे. (१८) श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रमां पचास अंगुल लांबुं, सोळ अंगुल पहोळुं अने अर्ध अंगुल जाडुं आ प्रमाणे मोटा प्रमाणवाळुं ज खड्ग कह्युं छे. (१९) संग्रहणीमां जे ३२ अंगुलनुं प्रमाण कह्युं छे ते मध्यम मानवाळा खड्ग माटे समजवुं. ते विषे वराह कहे छे के-५० अंगुळप्रमाण उत्तम अने २५ अंगुळप्रमाण ते जघन्य कहेल छे. आ बे संख्यानी मध्यनी संख्याना प्रमाणवाळुं ते मध्यम जाणवुं. (२०) इति खड्गरत्नं.

४ छत्ररत्न—शरदृऋतुना पूर्णचंद्र जेवुं मंजुल (मनोहर) होय छे. ९९ हजार सुवर्णनी सळीओवाळुं होय छे. (२१) जोवामात्रथी ज शत्रु विगेरेनी भुजा (चोरी)नी ने तेना शस्त्रादिनी शक्तिने हरनारुं होय छे. नाना प्रकारना चित्रोवडे चित्रीत, पुष्ट अने प्रौढ स्वर्णना दंडवाळुं होय छे. (२२) दंडनुं आरोपण करवाने स्थाने एटले छत्रना अग्रभागने स्थाने ते पंजराकार जेवुं शोभे छे. चोतरफ मोती अने मणिरत्नोनी श्रेणिओ-माळाओथी मंडित होय छे. (२३) वृष्टि, ताप, पवन अने शीतादि उपद्रवनुं निवारक होय छे. तपगुण-

तपमरुच्छीता-द्युपद्रवनिवारकं। विषादिनानादोषघ्न-च्छायं प्राप्यं तपोगुणैः ॥ २४ ॥ शीतकाले विशालोष्ण-च्छायं ग्रीष्मे च शीतलं। सर्वर्त्तुसुखदच्छायं विमानमिव जंगमं ॥ २५ ॥ ऐश्वर्यशौर्यधैर्यादि-प्रदलक्षणलक्षितं। चक्रिभाग्यमिवाध्यक्षं राजचिह्नं महोज्ज्वलं ॥ २६ ॥ षड्भिः कुलकं ॥ व्यामप्रमाणमप्येत-द्विस्ताराध्यवसायिना। व्याप्नोति चक्रिणा स्पृष्टं साग्रां द्वादशयोजनीं ॥ २७ ॥ साधिकत्वं चात्र परिपूर्णचर्मरत्नपिधायकत्वेनेति जंबूप्र० वृ०। इति छत्ररत्नं।

चर्मरत्नं भवेच्चारु-श्रीवत्साकारबंधुरं। मुक्तातारार्द्धचंद्रादि-चित्रैश्चित्रं समंततः ॥ २८ ॥ समग्रचक्रभृत्सैन्यो-द्वहनेऽपि मनागपि। न न्यंचति द्विषच्छस्त्रै-र्दुर्भेदं वज्रचर्मवत् ॥ २९ ॥ महानद्यंभोधिपार-प्रापकंयानपात्रवत्। तत्कालं गृहपत्युप्त-शाकधान्यादिसिद्धिकृत् ॥ ३० ॥ तादृक्प्रयोजने ह्यस्मिन् धान्याद्युप्तमहर्मुखे। लुनाति सायं निष्पन्नं रत्नं कौटुंबिकाग्रणीः ॥ ३१ ॥ द्विहस्तमानमप्येतत् स्पृष्टं विस्तारकां

वडे प्राप्य शक्तिवाळुं अने तेनी छायामां रहेनारना विषादि नाना प्रकारना दोषनुं नाश करनारुं होय छे. (२४) शीतकाळे विशाळ एवी उष्ण छाया आपनार अने ग्रीष्मकाळे शीतळ छाया आपनार होय छे. जंगम एवा विमाननी जेम सर्व ऋतुमां सुखकारी छायाने आपे छे. (२५) ऐश्वर्य, शौर्य, धैर्यादिने आपे तेवा लक्षणोथी लक्षित होय छे. जाणे प्रत्यक्ष एवुं चक्रीनुं भाग्य होय एवुं अने महाउज्ज्वळ राजचिन्हरूप होय छे. (२६) एक व्याम अथवा बे हाथ प्रमाण स्वाभाविक होय छे परंतु कार्यपरत्वे तेनो विस्तार करवो होय त्यारे चक्रवर्तीना हाथना स्पर्शथी बार योजन झाझेरुं विस्तार पामे छे. (२७) 'अहीं साधिकपणुं कह्युं छे ते परिपूर्ण बार योजन विस्तृत चर्मरत्नने ढांकी देनार होवाथी समजवुं.' आ प्रमाणे जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिमां कह्युं छे. इति छत्ररत्न.

५ चर्मरत्न—सुंदर एवा श्रीवत्सना आकारवाळुं, मुक्ता, तारा ने अर्धचंद्रादि चित्रोवडे चोतरफ चित्रित, आखी चक्रवर्तीनी सेना तेनी उपर चडाववामां आवे तो पण किंचित्मात्र न नमे एवुं, वज्रना चर्मनी जेम शत्रुओना शस्त्रोथी दुर्भेद (न भेदाय तेवुं), प्रवहणनी जेम महानदी अने समुद्रना पारने पमाडनारुं, गृहपतिना वावेला शाक धान्यादिने तरत ज उगाडनारुं, तेवा खास प्रयोजन वखते तेनी उपर सवारे वावेलुं धान्य-शाकादि सांजे खेडुतोए लणी लेवाय तेवुं, (२८-३१) बे हाथना प्रमाण-

च्चिणा । व्याप्नोति योजनानि द्वा–दशैतदधिकानि वा ॥ ३२ ॥ ननु–चक्रिसैन्यावकाशाय व्यासो द्वादशयोजनः । अस्य स्यादुचितो यच्चा–धिक्यं तत्तु निरर्थकं ॥ ३३ ॥ अत्रोच्यते–सत्येव किंचिदाधिक्ये सुखं तिष्ठति सा चमूः । स्याच्चैवं छत्रयोगेऽस्य संपुटत्वं निरंतरं ॥ ३४ ॥ तथोक्तं–चर्मच्छत्रयोरंतरालपूरणायोपयुज्यते साधिकविस्तार इति जंबूप्र० वृ० श्रीवत्साकारमप्येत–न्नानाकारं यथाक्षणं । स्यात्ततश्छत्रयोगस्य संपुटत्वं न दुर्घटं ॥ ३५ ॥ श्रूयते भरतक्षेत्रा–र्द्धस्योदीच्यस्य साधने । तत्रत्यम्लेच्छपक्षीयै–र्नागैर्मेघमुखाभिधैः ॥ ३६ ॥ मूशलस्थूलधाराभिः सप्ताहानि निरंतरं । वृष्टौ कृतायां भरत–चक्रिसैन्यमहार्त्तये ॥ ३७ ॥ स चक्री छत्रचर्मभ्यां कृत्वा संपुटमद्भुतं । सैन्यमस्थापयत्तत्र वेश्मनीवानुपद्रवं ॥ ३८ ॥ पार्थिवत्वेऽपि तत्साम्या–च्चर्मेति व्यपदिश्यते । अन्यथास्य श्रुतख्यात–मेकाक्षत्वं विरुध्यते ॥ ३९ ॥ दंडोऽप्येवं पार्थिवस्त–त्साम्या-

---

वाळुं अने विस्तार करवानी इच्छावडे चक्रीना हस्तस्पर्शथी बार योजन अथवा तेथी कांइक अधिक विस्तृत थाय तेवुं होय छे. (३२) अहीं कोइ प्रश्न करे छे के—'चक्रीना सैन्यना अवकाश माटे बार योजन बस छे, तेथी अधिक कह्युं छे ते निरर्थक छे.' (३३) तेने उत्तर आपे छे के—' कांइक अधिक होवाथी ज तेमां लश्कर सुखे रही शके, तेम ज छत्रनी साथे बराबर संपुटपणुं आंतरारहितपणे बनी शके. (३४) आ संबंधमां श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्तिमां कह्युं छे के—' चर्मछत्रनो अंतराळ भाग पूर्ण करवा माटे साधिक विस्तारनी जरुर छे.' श्रीवत्सना आकारवाळुं छतां ते योग्य समये नाना प्रकारना आकारवाळुं पण होय छे अने तेनी साथे छत्ररत्ननो योग थाय त्यारे संपुटपणुं पण बराबर थाय छे, ते वात घटमान छे. (३५) शास्त्रमां सांभळीए छीए के भरतक्षेत्रना उत्तरार्धना साधन वखते त्यां रहेला म्लेच्छना पक्षवाळा मेघमुख नामना नागकुमारोए भरतचक्रीनां सैन्यने मोटी पीडा उत्पन्न करवा माटे मुशळप्रमाण स्थूळ धारावडे सात दिवस सुधी अविच्छिन्न वृष्टि करी, ते वखते चक्रीए चर्म ने छत्ररत्ननो अद्भुत संपुट बनावीने उपद्रव विनाना घरनी जेम तेनी अंदर सैन्यने स्थापन कर्युं हतुं. (३६–३८) आ रत्न पृथ्वीकाय छे तो पण ते चर्म समान होवाथी एनो चर्म नामथी व्यपदेश मात्र कराय छे. नहीं तो तेनुं एकाक्ष(एकेंद्रिय)पणुं जे श्रुतमां कहेल छे तेमां विरोध आवे. (३९) दंड पण ए ज रीते पार्थिव छे, दंड जेवा आकारथी

त्तद्व्यपदेशभाक् । भाव्यमेवं पार्थिवत्वं सप्तानामपि धीधनैः ॥ ४० ॥
इति चर्मरत्नं ॥

मणिरत्नं भवेद्विश्वाद्भुतं निरुपमद्युति । वर्यवैडूर्यजातीयं श्रेष्ठं सर्वमणिष्विह ॥ ४१ ॥ सर्वेषामपि भूतानां प्रियं न्यस्तं च मूर्द्धनि । सर्वदुःखहरं क्षेम–तुष्ट्यारोग्यादिकृत्सदा ॥ ४२ ॥ सुरासुरनृतिर्यग्जा–शेषोपद्रवनाशकं । जयप्रदं च संग्रामे शस्त्राघातनिवारकं ॥ ४३ ॥ त्रिभिर्विशेषकं । सदावस्थिततारुण्य–मवर्द्धिष्णुनखालकं । विप्रमुक्तं भयैः सर्वैरिदं कुर्वीत धारकं ॥ ४४ ॥ सांधकारे तमिस्रादा–वुद्योतं कुरुतेऽर्कवत् । अचिंत्यावाच्यमूलं त–द्देवानामपि दुर्लभं ॥ ४५ ॥ इदं हि प्रागुरुच्छत्र–चर्मसंपुटसंस्थिते । सवितेवाकृतोद्योतं सैन्ये भरतचक्रिणः ॥ ४६ ॥ गुहाद्वये प्रविशत–श्चेदमेव हि चक्रिणः । कुंभिकुंभस्थितं ध्वांत–व्रातघाताय कल्प्यते ॥४७॥ चतुरंगुलदीर्घं स्या–दंगुलद्वयविस्तृतं । मध्ये वृत्तोन्नतं तच्च षड्भिः कोणैरलंकृतं ॥ ४८ ॥ इति मणिरत्नं ॥

ज तेनो व्यपदेश ते नामथी कराय छे. आ प्रमाणे साते रत्नोनुं बुद्धिमानोए पार्थिवपणुं समजी लेवुं. (४०) इति चर्मरत्न.

६ मणिरत्न—विश्वमां अद्भुत एवुं अने निरुपम कांतिवाळुं होय छे. श्रेष्ठ एवी वैडूर्यजातिनुं अने सर्व मणिओमां श्रेष्ठ होय छे. (४१) सर्व प्राणीओने प्रिय लागे तेवुं तेम ज जो माथापर राख्युं होय तो सर्व दुःखने हरनारुं अने सदा क्षेम, तुष्टि तथा आरोग्यने करनारुं होय छे. (४२) सुर, असुर, मनुष्य ने तिर्यंचसंबंधी सर्व उपद्रवोनो नाश करनारुं, संग्राममां जय आपनारुं तेम ज शस्त्रना घातने निवारनारुं होय छे. (४३) आ रत्न पोताना धारकने सदा तरुणावस्थाने अवस्थित राखनारुं, नख–केशने न वधवा दे तेवुं अने सर्व भयथी रहित करनारुं होय छे. (४४) तमिस्रागुफा विगेरेना अंधकारमां सूर्यनी जेवो प्रकाश करनारुं अचिंत्य ने अवाच्य स्वरूपवाळुं तेम ज देवोने पण दुर्लभ होय छे. (४५) पूर्वे कही गया प्रमाणे चर्म ने छत्रना संपुटमां रहेला भरत चक्रीना आखा सैन्यमां आ मणिरत्ने सूर्यनी जेवो उद्योत कर्यो हतो. (४६) चक्री ज्यारे वैताढ्यनी बंने गुफामां प्रवेश करे त्यारे हाथीना कुंभस्थळ उपर स्थापन करेलुं आ मणिरत्न ज अंधकारना समूहनो नाश करवामां समर्थ थाय छे. (४७) ते चार अंगुल लांबुं ने बे अंगुळ पहोळुं होय छे. मध्यमां वृत्त ने उन्नत होय छे तेम ज छ खुणा (छ हांश) वडे शोभितुं होय छे. (४८) इति मणिरत्नं.

भवेच्च काकिणीरत्नं षट्तलं द्वादशास्त्रकं । तथाष्टकर्णिकं तौल्ये सुवर्णैरष्टभिर्मितं ॥ ४९ ॥ स्वर्णकारोपकरणं ख्याताधिकरणिर्जने । तामाकृत्यानुकुरुते चतुरस्त्रत्वसाम्यतः ॥ ५० ॥ चतुर्दिशमधोऽथोर्ध्वं तत्रैवं स्युस्तलानि षट् । न्यस्तं भूमाववैषम्या–त्तिष्ठत्येनेह तत्तलं ॥ ५१ ॥ प्रत्येकमध ऊर्ध्वं च चतसृष्वपि दिक्षु च । तच्चतुःकोटिसद्भावाद् द्वादशास्त्रं प्रकीर्त्तितं ॥ ५२ ॥ मिलत्यस्त्रित्रयं यत्र स कोणः कर्णिकोच्यते । उपर्यधश्चतसृणां तासां युक्त्याष्टकर्णिकं ॥ ५३ ॥ सुवर्णः स्यात्कर्ममाषैस्तौल्ये षोडशभिः समं । कर्ममाषप्रमाणं च प्रागत्रास्ति निरूपितं ॥५४॥ सुवर्णैरष्टभिस्तुल्यं काकिणीरत्नमीरितं । एतदार्षभिकालीयं मानं ज्ञेयं विचक्षणैः ॥ ५५ ॥ अन्यथा कालभेदेन मानवैषम्यसंभवे । न भवेत्काकिणीरत्नं सर्वेषां चक्रिणां समं ॥ ५६ ॥ इष्यते तुल्यमेवेदं सर्वेषामपि चक्रिणां । पुरातनेषु शास्त्रेषु तथैव प्रतिपादनात् ॥ ५७ ॥ किंच–केचिदात्मांगुलैराहुः काकिणीमणिरत्नयोः । मानमौत्सेधिकैः केचि–त्तत्प्रमा-

---

७ काकिणीरत्न— छ तळवाळुं, फरतां बार हांशवाळुं ने आठ कर्णिकावाळुं होय छे. तोलमां आठ सोनैया जेटलुं होय छे. (४९) सोनीनुं उपकरण लोकोमां अधिकरणी (एरण) तरीके ओळखाय छे. चतुरस्रपणानी साम्यताथी तेनी आकृति जेवुं आ होय छे. (५०) चार दिशाए, अधो ने ऊर्ध्व एम तेना छ तळ होय छे. एवी रीते होवाथी विषमपणारहित होवाने लीधे भूमि उपर सारी रीते स्थापन करी शकाय छे. (५१) अधो, ऊर्ध्व अने चारे दिशामां चार–चार कोटी होवाथी बार अस्रवाळुं कह्युं छे ते बराबर छे. (५२) ज्यां चार अस्र मळे ते कोण कर्णिका कहेवाय छे, तेथी उपर ने नीचे एवी चार–चार कर्णिका होवाथी अष्टकर्णिक कह्युं छे ते पण बराबर छे. (५३) तोलमां सोळ कर्ममाषवडे एक सुवर्ण कहेवाय छे. कर्ममाषनुं प्रमाण अहीं पूर्वे कहेवामां आवेल छे. (५४) एवा आठ सुवर्ण (आठ तोला) सरखुं तोलमां काकिणीरत्न कह्युं छे. आ मान विचक्षणोए भरतचक्रीना समयनुं जाणवुं. (५५) अन्यथा काळभेदे करीने माननी विषमतानो संभव होवाथी काकिणीरत्न सर्व चक्रीओनुं समान थशे नहीं, (५६) अने आ रत्न तो सर्व चक्रीओनुं तुल्य ज इच्छयुं छे; कारण के पुरातनशास्त्रमां तेवी रीते ज प्रतिपादन करेल छे. (५७) ' केटलाक काकिणी ने मणिरत्ननुं प्रमाण आत्मांगुळे कहे छे, केटलाक उत्सेधांगुळे कहे छे ने केटलाक प्रमाणांगुळवडे कहे छे. ' (५८)

णांगुलैः परे ॥ ५८ ॥ तथा चोक्तं जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्तौ–अत्र चाधिकारे एतानि च मधुरतृणफलादीनि भरतचक्रवर्तिकालसंभवीन्येव गृह्यंते, अन्यथा कालभेदेन तद्वैषम्यसंभवे काकिणीरत्नं सर्वचक्रिणां तुल्यं न स्यात्, तुल्यं चेष्यते तदित्येतस्मादनुयोगद्वारवृत्तिवचनादेतद्देशीयादेव स्थानांगवृत्तिवचनात्–"चतुरंगुलो मणी पुण तस्सद्धं चेव होइ विच्छिण्णो। चउरंगुलप्पमाणा सुवण्णवरकागणी नेया ॥१॥" इहांगुलं प्रमाणांगुलमवगंतव्यं. सर्वचक्रवर्त्तिनामपि काकिण्यादिरत्नानां तुल्यप्रमाणत्वादिति मलयगिरिकृतबृहत्संग्रहणीबृहद्वृत्तिवचनाच्च केचनास्य प्रमाणांगुलनिष्पन्नत्वं, केचिच्च " एगमेगस्स णं रण्णो चाउरंतचक्कवट्टिस्स अट्ठसोवण्णिए कागणिरयणे छत्तले दुवालसंसिए अट्ठकण्णिए अहिगरणिसंठाणसंठिए पण्णत्ते, तस्स णं एगमेगा कोडी उस्सेहंगुलविक्खंभा तं समणस्स भगवओ महावीरस्स अद्धंगुलं, इत्यनुयोगद्वारसूत्रबलादुत्सेधांगुलनिष्पन्नत्वं, केऽपि चैतानि सप्तैकेंद्रियरत्नानि सर्वचक्रवर्त्तिनामात्मांगुलेन ज्ञेयानि,

---

ते विषे श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिनी टीकामां कह्युं छे के–' आ अधिकारमां आ मधुर एवा तृणफळादि भरतचक्रीना काळमां संभवे तेवा ज जाणवा. अन्यथा काळभेदे करीने तेनी विषमता मानवामां आवे तो काकिणीरत्न पण सर्व चक्रीओनुं समान थशे नहीं, अने शास्त्रमां तो तेने तुल्य कह्युं छे. ' श्री अनुयोगद्वारवृत्तिमां तेम ज तेने सदृश ज स्थानांगवृत्तिमां पण ए प्रमाणे ज कहेलुं छे जुओ—' मणिरत्न चार अंगुळ लांबुं ने तेथी अरधुं विस्तारमां होय छे, तेम ज चार अंगुळ प्रमाणवाळुं, सारा वर्णवाळुं काकिणीरत्न पण होय छे. ' अहीं अंगुळ ते प्रमाणांगुळ समजवी. सर्व चक्रवर्तीओना काकिणी विगेरे रत्नो तुल्य प्रमाणवाळा होवाथी अने मलयगिरिकृत बृहत्संग्रहणीनी बृहद्वृत्तिमां ए प्रमाणे कहेल होवाथी. श्रीअनुयोगद्वारसूत्रमां कह्युं छे के—" एक एक चाउरंत चक्रवर्त्तीनुं काकिणीरत्न आठ सोनैयाप्रमाण तोलवाळुं, छ तळवाळुं, बार अस्त्रवाळुं, आठ कर्णिकावाळुं अने अधिकरणीना संस्थानवाळुं कह्युं छे. तेनी एक एक कोटि उत्सेधांगुळना प्रमाणवाळी कही छे ते महावीर परमात्मानी अर्धांगुळप्रमाण जाणवी. " आ कथनना बळथी उत्सेधांगुळनिष्पन्नप्रमाण समजाय छे. वळी केटलाक ' आ साते एकेंद्रिय रत्नो सर्व चक्रीना आत्मांगुळ प्रमाणे प्रमाणवाळा जाणवा अने बाकीना सात पंचेंद्रिय रत्नो तो तत्कालीन पुरुष उचित प्रमाणवाळा ज होय छे. " एम प्रवचनसारो-

शेषाणि तु सप्त पंचेंद्रियरत्नानि तत्कालीनपुरुषोचितमानानीति प्रवचनसारोद्धारवृत्तिबलादात्मांगुलनिष्पन्नत्वमाहुः, अत्र च पक्षत्रये निर्णयः सर्वविद्वेद्यः, अत्र तु बहु वक्तव्यं, तत्तु ग्रंथगौरवभयान्नोच्यते इति ज्ञेयं.

अस्रयो द्वादशाप्यस्य चतुर्भिरंगुलैर्मिताः । स्युः प्रत्येकं समचतुरस्रत्वात्सर्वतः समाः ॥ ५९ ॥ अयं भावः–विष्कंभायामयोर्नात्र विशेषः कोऽपि विद्यते । षण्णामपि तलानां त–च्चतुरंगुलमानता ॥६०॥ तथोक्तं जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रे–' तं चउरंगुलप्पमाणमित्तमित्यादि ' अनुयोगद्वारसूत्रे तु यदस्य काकिणीरत्नस्यैकैका कोटिरुत्सेधांगुलप्रमितोक्ता तन्मतांतरं, तत्सूत्रं प्राग् लिखितमिति ज्ञेयं. जंगमादिबहुविध–विषापहरणक्षमं । तादृग्जातीयगांगेय–निष्पन्नत्वाद्भवेदिदं ॥ ६१ ॥ तदानीं सर्वमानानां तत्प्रामाण्यप्रवर्त्तकं । अनेनैवांकितानि स्यु–स्तानि प्रत्यायकानि यत् ॥ ६२ ॥ यथाधुनाप्याप्तकॢप्त–निर्णयांकं प्रतीतिकृत् । कुडवादि भवेन्मानं व्यवहारप्रवर्त्तकं ॥ ६३ ॥ खटीखंडादिवच्चैत–द्भि-

---

द्धारनीवृत्तिना बळथी (कथनथी) आत्मांगुळप्रमाण (सात एकेंद्रिय रत्नो) कहे छे आ प्रमाणे त्रणे पक्षोनो निर्णय सर्वज्ञ ज जाणी शके छे. अहीं घणुं वक्तव्य छे पण ते ग्रंथगौरवना भयथी कहेता नथी.

काकिणीरत्नने बारे अस्र चार चार अंगुळ प्रमाण होय छे अने ते चोखंडा होवाथी सर्वत्र समान थाय छे. (५९) अहीं आ भाव समजवो—विष्कंभ अने आयाममां अहीं कांइ विशेष नथी अने छए तळ चार अंगुळनी समानतावाळा होय छे. (६०) श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रमां पण ते सर्वतः चार अंगुळ प्रमाणवाळुं ज होय एम कह्युं छे. अनुयोगद्वारसूत्रमां जे आ काकिणीरत्ननी एकेक कोटि उत्सेधांगुळ प्रमाण कही छे ते मतांतर समजवो. तेनो सूत्र–पाठ उपर लखी गया छीए. ए काकिणीरत्न जंगमादि अनेक प्रकारना विषने शमाववाने समर्थ होय छे, केमके ते तेवा प्रकारना सुवर्णमांथी निष्पन्न थयेल होय छे. (६१) ते वखते सर्व प्रकारना मानना प्रामाण्यनुं प्रवर्तक ए होय छे केमके एनावडे ज अंकित करेला ते मानो प्रमाणभूत गणाय छे. (६२) जेम अत्यारे पण आप्त पुरुषनो करेलो निर्णयांक प्रतीतिवाळो गणाय छे. अने तेना उपरथी ज कुडवादि बधा मान व्यवहार प्रवर्तेल होय छे. (६३) खडीना ककडानी जेम एनावडे

स्यादौ मंडलादिकृत् । स्थिरोद्योतं करोत्येत–न्मंडलैर्गुहयोस्तयोः ॥ ६४ ॥ इति काकिणीरत्नं इति. सप्तैकेंद्रियरत्नानि.

अथ सेनापतिरत्नं भवेत्प्रौढपराक्रमः । हस्त्यादिचक्रिसैन्यानां स्वातंत्र्येण प्रवर्त्तकः ॥ ६५ ॥ समग्रभरतव्याप्त–यशोराशिर्महाबलः । स्वभावतः सदोदात्त–स्तेजस्वी सात्त्विकः शुचिः ॥ ६६ ॥ यवनादिलिपौ दक्षो म्लेच्छभाषाविशारदः । ततो म्लेच्छप्रभृतिषु सामदानाद्युपायकृत् ॥ ६७ ॥ विचारपूर्वकाभाषी यथावसरवाक्यवित् । गंभीरमधुरालापो नीतिशास्त्रार्थकोविदः ॥ ६८ ॥ जागरूको दीर्घदर्शी सर्वशस्त्रकृतश्रमः । ज्ञातयुद्धविधिश्चक्र–व्यूहाद्यूहविशेषवित् ॥ ६९ ॥ रिपुमित्रगणस्यापि दंभादंभादिभाववित् । प्रत्युत्पन्नमतिर्धीरो–ऽमूढः कार्यशतेष्वपि ॥ ७० ॥ स्वामिभक्तः प्रजाप्रेष्ठः प्रसन्ननयनाननः । दुर्दर्शनो द्विषां वीर–रसावेशे

भींत विगेरेनी उपर मंडळो आळेखी शकाय छे, अने तेना मंडळोवडे ज बंने गुफाओ स्थिर उद्योतवाळी करवामां आवे छे. (६४) इति काकिणीरत्न.

इति एकेंद्रिय सात रत्नोनुं स्वरूप.

हवे पंचेंद्रिय सात रत्नोनुं स्वरूप कहे छे—

१ सेनापतिरत्न—प्रौढ पराक्रमी होय छे, हस्ती विगेरे चक्रवर्तीनी आखी सेनानो स्वतंत्रपणे प्रवर्तावनार होय छे. (६५) समग्र भरतक्षेत्रमां तेनो यशोराशि विस्तरेल होय छे, महा बळवान होय छे, स्वभावथी ज सदा उदात्त, तेजस्वी, सात्त्विक अने पवित्र होय छे. (६६) यवनादि लिपि वांचवा–लखवामां दक्ष होय छे, म्लेच्छ भाषामां विशारद होय छे, तेथी करीने म्लेच्छ विगेरे राजाओने वश करवामां सामदानादि उपायनो करनार होय छे. (६७) विचारपूर्वक बोलनार होय छे. योग्य अवसरे केम बोलवुं तेने समजनार होय छे. गंभीर, मधुरालापी अने नीतिशास्त्रमां प्रवीण होय छे. (६८) जागरूक (निरंतर जागृत रहेनार), दीर्घदर्शी, सर्वशस्त्रो वापरवा संबंधी श्रम करेल, युद्धविधिनो जाण अने चक्रव्यूहादि व्यूहोनो जाणनार होय छे. (६९) शत्रु ने मित्र समूहनां दंभ अने अदंभादिभावने जाणनार होय छे. प्रत्युत्पन्न मतिवाळो, धीर अने सेंकडो कार्यमां पण न मुंझाय एवो होय छे.[1] (७०) स्वामीभक्त, प्रजाप्रिय, नेत्र ने मुखनी प्रसन्नतावाळो, शत्रुओथी दुःखे जोइ शकाय तेवो अने वीर-

---

१ चक्रीना मंत्रीनी गरज ते सारे छे. चक्रीने जूदो मंत्री होतो नथी.

भयंकरः ॥ ७१ ॥ लंचादिलोभानाकृष्टः स्वामिकार्यैकसाधकः । सल्लक्षणः कृतज्ञश्च दयालुर्विनयी नयी ॥ ७२ ॥ जेतव्यवर्षे निम्नोच्च-जलशैलादिदुर्गवित् । नानाविषमदुर्गाणां भंगादानादिमर्मवित् ॥ ७३ ॥ संधाने प्रतिभिन्नानां संहतानां च भेदने । उपायज्ञोऽप्रयासेन द्विषतैव द्विषं जयन् ॥ ७४ ॥ दशभिः कुलकं ॥ तदुक्तं नीतिशास्त्रे–भंगोऽस्तु कस्याप्येकस्य योधने द्विषतो द्विषा । भवत्युभयथा लाभो मिथो मोदकयोरिव ॥ ७५ ॥ इति सेनापतिरत्नं.

कोष्ठागाराद्यधिकृतो रत्नं गृहपतिर्भवेत् । सर्वेषां चक्रिसैन्यानां भोज्यवस्त्रादिचिंतकः ॥ ७६ ॥ सुलक्षणः सुरूपश्च दानशौंडो विशेषवित् । स्वामिभक्तः कृतज्ञश्च विवेकी चतुरः शुचिः ॥ ७७ ॥ शाल्यादिनानाधान्यानां शाकानां चातिभूयसां । सिद्धिकृत्प्रातरुप्तानां सायं तादृक्प्रयोजने ॥ ७८ ॥ त्रिभिर्विशेषकं ॥ एतस्यैवानुभावेन सैन्यं भरतच-

---

रसना आवेश वखते भयंकर होय छे. (७१) लांच विगेरेना लोभथी न खेंचाय तेवो, स्वामीना कार्यनो अद्वितीय साधक, सारा लक्षणवाळो, कृतज्ञ, दयाळु, विनयी अने न्यायी होय छे. (७२) जीतवायोग्य क्षेत्रमां आवेल नीचा–उंचा भाग, जळ अने पर्वतादि दुर्गनो जाणनार होय छे, तथा विविध प्रकारना विषम दुर्गनो–किल्लानो भंग करवामां अने तेने जीती लेवा विगेरेनी युक्तिने जाणनार होय छे. (७३) जूदा पडेलाओनुं संधान करवामां अने भेळा मळेला होय तेनो भेद करवामां उपायज्ञ अने द्वेष करनारा शत्रुओने वगर प्रयासे शत्रुवडे ज जीती लेनार होय छे. (७४) नीतिशास्त्रमां कह्युं छे के–' शत्रुनी साथे शत्रुनुं युद्ध थाय तो तेमां बेमांथी गमे तेनो भंग–पराजय थाय तेमां लाभ ज छे; केमके बे मोदकने सामसामा अथडाववाथी जे मोदक भांगे ते ठीक ज छे. बन्ने प्रकारे लाभ ज छे. ' (७५) इति सेनापतिरत्नं.

२ गृहपतिरत्न—कोष्ठागार (अन्नादिना कोठार) विगेरेनो अधिकारी अने चक्रवर्तीना सर्व सैन्यनी भोजन–वस्त्रादिकनी चिंता करनारो होय छे. (७६) सारा लक्षणवाळो, रूपवंत, दानशूर, विशेषज्ञ, स्वामीभक्त, कृतज्ञ, विवेकी, चतुर अने पवित्र होय छे. (७७) तेवा प्रकारनुं खास प्रयोजन होय त्यारे शाल्यादि अनेक प्रकारना धान्य अने अनेक प्रकारना पुष्कळ शाक (चर्मरत्न उपर) सवारे वावीने सांजे उगाडनार होय छे. (७८) एना प्रभावथी ज भरतचक्रीनुं सैन्य चर्म अने छत्रना संपुटमां

क्रिणः । चर्मच्छत्रसमुद्गस्थं सप्ताहान्याप भोजनं ॥७९॥ तथोक्तं ऋषभचरित्रे—चर्मरत्ने च सुक्षेत्र इवोप्तानि दिवामुखे । सायं धान्यान्यजायंत गृहिरत्नप्रभावतः ॥ ८० ॥ इति गृहपतिरत्नं ।

अथ स्याद्वार्द्धकीरत्नं दक्षधीस्तक्षकाग्रणीः । स्कंधावारपुरग्राम–निवेशेऽधिकृतः शुचिः ॥ ८१ ॥ स चाधीति व्याकरणे वास्तुशास्त्रार्थतत्त्ववित् । शब्दव्युत्पत्तिशून्यो हि शास्त्रं किमपि नार्हति ॥ ८२ ॥ तथाह सिद्धांतशिरोमणौ भास्कराचार्यः–यो वेद वेदवदनं सदनं हि सम्यग् ब्राह्म्याः स वेदमपि वेद किमन्यशास्त्रं । यस्मादतः प्रथममेतदधीत्य धीमान् शास्त्रांतरस्य भवति श्रवणेऽधिकारी ॥ ८३ ॥ पत्तनग्रामनगर–प्रासादापणवेश्मनां । निवेशने यथौचित्यं दिक्स्थानादिविचक्षणः ॥८४॥ गृहाणां बहवो भेदा वास्तुशास्त्रोदिताश्च ये । तत्र सर्वत्र दक्षोऽसौ शिल्पवित् प्रतिभापटुः ॥ ८५ ॥ तथाहि—ध्रुवं १ धन्यं २ जयं ३ नंदं

रह्युं हतुं त्यारे सात दिवससुधी भोजन मेळवी शक्युं हतुं. (७९) श्रीऋषभचरित्रमां कह्युं छे के—' गृहपतिरत्नना प्रभावथी सारा क्षेत्रनी जेम चर्मरत्नपर सवारे वावेलुं धान्य सांजे उगी शके छे ' (८०) इति गृहपतिरत्न.

३ वार्धकीरत्न—कुशळ बुद्धिवाळो, तक्षको (सुथारो)ने विषे अग्रेसर, लश्करनी छावणी, नगर, गाम विगेरे नवा स्थापन करवामां अधिकारवाळो अने पवित्र होय छे. (८१) ते व्याकरणशास्त्र भणेलो होवाथी वास्तुशास्त्रना अर्थने अने तत्त्वने जाणनार होय छे; कारण के जो कोइ पण मनुष्य शब्दनी व्युत्पत्तिना ज्ञानरहित होय तो ते कोइ पण शास्त्र जाणवामां लायक होतो नथी. (८२) ते विषे सिद्धांतशिरोमणि नामना ग्रंथमां भास्कराचार्ये कह्युं छे के—" सरस्वतीना घररूप वेदवदन (व्याकरण)ने जे मनुष्य सारी रीते जाणे छे, ते वेदने पण जाणे छे; तो पछी अन्य शास्त्रने जाणे तेमां शुं कहेवुं ? तेथी करीने बुद्धिमान मनुष्य प्रथम व्याकरणशास्त्र भणीने ज बीजां शास्त्रो श्रवण करवानो अधिकारी थाय छे. (८३) " वळी ते वार्धकीरत्न पाटण, गाम, नगर, प्रासाद, दुकान अने घर विगेरे बनाववामां तेनी यथायोग्य दिशा, स्थान विगेरे जाणवामां विचक्षण होय छे. (८४) तथा कारीगरीने जाणनार अने कुशळबुद्धिवाळा ते वार्धकी वास्तुशास्त्रमां घरोना जे अनेक प्रकारो कह्या छे ते सर्व प्रकारो जाणवामां निपुण होय छे. (८५) घरना सोळ प्रकार आ प्रमाणे कहेला छे.—ध्रुव १, धन्य २, जय ३, नंद

४ खरं ५ कांतं ६ मनोहरं ७ । सुमुखं ८ दुर्मुखं ९ क्रूरं १० विपक्षं ११ धनदं १२ क्षयं १३ ॥ ८६ ॥ आक्रंदं १४ विपुलं १५ चैव विजयं १६ चेति षोडश । संप्रत्यमीषां पस्त्यानां प्रस्तारः प्रतिपाद्यते ॥ ८७ ॥ लघुर्भवेत्सरलया वक्रया रेखया गुरुः । प्रस्तारचनार्थेभिः कर्तव्या वृत्तजातिवत् ॥ ८८ ॥ तत्रायमाम्नायः—

गुरोरधो लघुं न्यस्येत् पृष्टे त्वस्य पुनर्गुरून् । अग्रतस्तूर्ध्ववद्द्या-द्यावत्सर्वलघुर्भवेत् ॥ ८९ ॥ चत्वारो गुरवः स्थाप्या आद्यपंक्तौ ततः परं । शेषासु पंक्तिषु स्थाप्यो लघुराद्यगुरोरधः ॥ ९० ॥ अग्रे तूर्ध्वपंक्ति-समं रिक्ते स्थाने तु दीयते । गुरुरेवं कृते भंगो-तिमः सर्वलघुर्भवेत् ॥ ९१ ॥

४, खर ५, कांत ६, मनोहर ७, सुमुख ८, दुर्मुख ९, क्रूर १०, विपक्ष ११, धनद १२, क्षय १३, आक्रंद १४, विपुल १५ अने विजय १६. हवे आ सोळ प्रकारना घरोनो प्रस्तार कहे छे.–(८६) सीधी उभी लींटी (।) करवी ते लघु कहेवाय छे अने वांकी (ऽ) जेवी रेखा करवाथी ते (ऽ) गुरु कहेवाय छे. आ लघु अने गुरुए करीने वृत्त-जाति (श्लोकनी जाति)नी जेम घरसंबंधी प्रस्तारनी रचना करवी. (८६) तेमां अहीं आ प्रमाणे आम्नाय (परंपरा) छे.—

पहेला गुरुनी नीचे लघुने स्थापन करवो (मूकवो), तेनी पाछळ (पहेलां) गुरुने मूकवा अने तेनी आगळ (पछी) उपली पंक्तिमां जे रीते गुरु–लघु होय ते ज प्रमाणे मूकवा. आ प्रमाणे छेवट सर्वे (चारे) लघु आवे त्यांसुधी करवुं. (८९) एटले के—पहेली पंक्तिमां चारे गुरु स्थापवा. त्यारपछी बीजी त्रीजी विगेरे बाकीनी पंक्तिओमां पहेला गुरुनी नीचे लघु मूकवो. तेनी पछी उपरनी पंक्तिमां होय ते प्रमाणे गुरु–लघु मूकवा अने तेनी पहेलां जेटला खाली स्थान होय तेमां गुरु ज मूकवा. आम करवाथी छेल्ला (सोळमा) भंगमां सर्वे (चारे) लघु आवशे. (९१) तेनी स्थापना—

---

१ कोइ ठेकाणे ' सुपक्ष ' कह्युं छे.

अथ प्रकृतं—प्रतिशालार्यलिंदाढ्या दिक् स्याल्लघूपलक्षिता। गुरूद्दिष्टाऽनावृता स्या-त्ताश्चतस्रो यथाक्रमं ॥ ९२ ॥ तत्र स्यात्प्रथमे भंगे चतुर्भिर्गुरुभिर्गृहं। एकोऽपवरकोऽलिंद-वर्जितः स चतुर्दिशं ॥ ९३ ॥

	घरनुं नाम.	फळ.	प्रस्तार.				शुभाशुभ.
			पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर	
१	ध्रुव	स्थिरता	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	शुभ
२	धन्य	धनप्राप्ति	।	ऽ	ऽ	ऽ	शुभ
३	जय	जय	ऽ	।	ऽ	ऽ	शुभ
४	नंद	पुत्र	।	।	ऽ	ऽ	शुभ
५	खर	दारिद्र्य	ऽ	ऽ	।	ऽ	अशुभ
६	कांत	सर्वसंपत्	।	ऽ	।	ऽ	शुभ
७	मनोहर	मननो आह्लाद	ऽ	।	।	ऽ	शुभ
८	सुमुख	लक्ष्मी	।	।	।	ऽ	शुभ
९	दुर्मुख	युद्ध	ऽ	ऽ	ऽ	।	अशुभ
१०	क्रूर	विषमता	।	ऽ	ऽ	।	अशुभ
११	विपक्ष(सुपक्ष)	बांधव	ऽ	।	ऽ	।	शुभ
१२	धनद	धन	।	।	ऽ	।	शुभ
१३	क्षय	क्षय	ऽ	ऽ	।	।	अशुभ
१४	आक्रंद	मृत्यु	।	ऽ	।	।	अशुभ
१५	विपुल	आरोग्य	ऽ	।	।	।	शुभ
१६	विजय	सर्वसंपत्	।	।	।	।	शुभ

हवे प्रकृत कहे छे—अहीं दरेक (सोळे प्रकारना) घरमां जे दिशाए लघु मूक्यो छे ते दिशा अलिंदथी[1] व्याप्त छे एटले ते दिशाए अलिंद होय एम जाणवुं, अने जे दिशाए गुरु मूक्यो होय ते दिशा आवरणरहित एटले अलिंद विनानी छे एम जाणवुं ते दिशाओ पूर्वादिकना अनुक्रमे चार छे, (९२) तेमां पहेला भंगमां (पंक्तिमां) चारे गुरुवाळुं घर कह्युं छे, तेथी ते चारे दिशाए अलिंदरहित मात्र एक ज ओरडो छे. तेने ध्रुव नामनुं पहेलुं घर कह्युं छे; तथा धन्य नामनुं जे बीजुं घर छे, तेमां पूर्व दिशाए

१ ओशरी, परसाळ, ओरडी विगेरे नानो भाग.

ध्रुवसंज्ञं गृहं तस्या–द्धन्यं प्राच्यामलिंदयुक् । यस्यां दिशि गृहद्वारं सा च प्राची भवेदिह ॥ ९४ ॥ तथोक्तं विवेकविलासे–पूर्वादिदिग्विनिर्देश्या गृहद्वारव्यपेक्षया । भास्करोदयदिक् पूर्वा न विज्ञेया यथा क्षुते ॥ ९५ ॥ दक्षिणस्यामलिंदः स्या–द्यत्र तज्जयसंज्ञकं । एवं स्युः षोडशे भंगे चतुर्दिशमलिंदकाः ॥ ९६ ॥ वास्तुशास्त्रे फलं चैषामेवमाहुः—

अलिंद होय छे. अहीं जे दिशामां घरनुं (ओरडानुं) द्वार होय तेने ज पूर्व दिशा समजवी. (९३-९४) ते विषे विवेकविलास नामना ग्रंथमां कह्युं छे के—" घरना द्वारनी अपेक्षाए पूर्वादिक दिशा कहेवी, परंतु जे दिशाए सूर्य उगे छे तेने (आ प्रसंगमां) पूर्व दिशा न कहेवी. जेम छींकने विषे सूर्योदयनी अपेक्षाए पूर्वादिक दिशा धारवामां आवती नथी, परंतु जे दिशातरफ मुख राखीने पोते छींक खाधी होय ते ज तेनी पूर्व दिशा कहेवाय छे अथवा बीजाए छींक खाधी होय तो पोतानुं मुख जे तरफ होय ते पूर्व कहेवाय छे तेम. (९५) " तथा जे घरमां दक्षिण दिशाए अलिंद होय ते घर जय नामनुं (त्रीजुं) जाणवुं. आ ज प्रमाणे सोळमां भांगावाळा घरमां चारे दिशाए अलिंद होय छे. (९६) तेनी स्थापना—

ध्रुव १ — SSSS
धन्य २ — ISSS
जय ३ — SISS
नंद ४ — IISS
खर ५ — SSIS
कांत ६ — ISIS
मनोरम ७ — SIIS
सुमुख ८ — IIIS
दुर्मुख ९ — SSSI
क्रूर १० — ISSI
विपक्ष ११ — SISI
धनद १२ — IISI
क्षय १३ — SSII
आक्रंद १४ — ISII
विपुल १५ — SIII
विजय १६ — IIII

स्थैर्यं १ धनं २ जयं(यः) ३ पुत्रान्(त्राः) ४ दारिद्र्यं ५ सर्वसंपदः ६। मनोह्लादः ७ श्रियो ८ युद्धं ९ वैषम्यं १० बांधवा ११ धनं १२ ॥ ९७ ॥ चयश्च १३ मृत्यु १४ रारोग्यं १५ सर्वसंपदिति १६ क्रमात् । ध्रुवादीनां फलं ज्ञेयं सान्वर्थाख्यान्यमून्यतः ॥ ९८ ॥ इयं षोडशभंगीह दिग्मात्रार्थं प्रदर्शिता । एकापवरकादीनां भेदास्त्वेषामनेकशः ॥ ९९ ॥ उक्तं च रत्नमालाभाष्ये—वेश्मनामेकशालानां शतं स्याच्चतुरुत्तरं । द्विपंचाशद् द्विशालानां त्रिशालानां द्विसप्ततिः ॥ ४०० ॥ नंद्यावर्त्तं वर्द्धमानं स्वस्तिकं च तथा परं । सर्वतोभद्रमित्याद्याः स्युर्भेदा वेश्मनां शुभाः ॥ ४०१ ॥ तथाह वराहः—

नंद्यावर्त्तमलिंदैः शालाकुड्यात्प्रदक्षिणांतगतैः । द्वारं पश्चिममस्मिन् विहाय शेषाणि कार्याणि ॥२॥ द्वारा(रो ऽ)लिंदान्तगतः प्रदक्षिणोन्यः

वास्तुशास्त्रमां आ सोळ प्रकारना घरोनुं फळ आ प्रमाणे कह्युं छे—स्थिरता १, धन २, जय ३, पुत्र ४, दारिद्र्य ५, सर्वसंपदा ६, मननो आह्लाद ७, लक्ष्मी ८, युद्ध ९, विषमता १०, बांधव ११, धन १२, चय १३, मृत्यु १४, आरोग्य १५ अने सर्वसंपदा १६. आ प्रमाणे ध्रुव विगेरे घरोनुं अनुक्रमे फळ जाणवुं, कारण के ते ध्रुव विगेरे नामो ज सार्थक छे–तेना नाम प्रमाणे ज तेना शुभाशुभ फळ छे. (९७–९८) आ सोळ भंग एटले सोळ प्रकारनां घरो अहीं दिशामात्रथी ज बताव्या छे. एक ओरडावाळा बे ओरडावाळा विगेरेनी वृद्धि करवाथी तेमना घणा भेदो थाय छे. (९९) ते विषे रत्नमाला भाष्यमां कह्युं छे के—" एक शाळा (ओरडा)नां घरो एक सो ने चार प्रकारनां थाय छे, बे शाळानां घरो बावन (एक सो ने बावन ?) प्रकारनां थाय छे अने त्रण शाळानां घरो बोंतेर (एक सो ने बोंतेर, ?) प्रकारनां थाय छे. (४००) " वळी नंद्यावर्त, वर्धमान, स्वस्तिक अने सर्वतोभद्र विगेरे घरोना शुभ प्रकारो होय छे. (४०१) ते विषे वराह कहे छे के—

" मकाननी भींतथी प्रदक्षिणाना छेडापर रहेला अलिंद एटले ओशरीए करीने नंद्यावर्त्त नामनुं गृह थाय छे. आ घरने विषे पश्चिमदिशाने छोडीने बाकीनी त्रणे दिशाए द्वार कराय छे. (२) द्वार अने अलिंद[1] (ओशरी) ए बेने छेडे रहेल एक

[1] उंबरानी नीचे जे पहोळुं लाकडुं अथवा पत्थर राखवामां आवे छे के जेना उपर आवनार माणस पग मूकीने आवे छे ते अथवा बहार भागना खूणानी बाजुए ओरडीओ करवामां आवे छे ते, आवा बे अर्थ पण अलिंदना करेला छे.

शुभस्ततश्चान्यः । तस्मिंश्च वर्द्धमाने द्वारं तु न दक्षिणं कार्यं ॥ ३ ॥ अपरांतगतोऽलिंदः प्रागंतगतौ तदुत्थितौ चान्यौ । तदवधिविधृतश्चान्यः प्राग्द्वारं स्वस्तिके शुभदं ॥ ४ ॥ अप्रतिषिद्धालिंदं समंततो वास्तु सर्वतोभद्रं । नृपविबुधसमूहानां कार्यं द्वारैश्चतुर्भिरपि ॥ ५ ॥

तथा—वास्तुक्षेत्रोद्गतैर्वल्ली–वृक्षैर्भूखातपूरितैः । वेश्माभ्युदयिकं दुःख–क्षुद्रा वेत्ति विचक्षणाः ॥ ६ ॥ आसन्नफलदा वास्तु–प्ररूढा गर्भिणी लता । अनासन्नफला कन्या वंध्या भवति निष्फला ॥ ७ ॥ वृक्षाः प्लक्षवटाश्वत्थो–दुंबराद्याः शुभाः स्मृताः । अप्रशस्ताः कंटकिनो रिपुचौरादिभीतिदाः ॥ ८ ॥ तथाह वराहः—शस्तौषधिद्रुमलता-

---

प्रदक्षिणा होय, तेथी एक बीजी शुभ प्रदक्षिणा पण होय ते वर्धमान गृह कहेवाय. तेने विषे दक्षिण दिशाए द्वार करवुं नहीं. (३) पश्चिमदिशाना छेडे रहेल ओशरी होय अने पूर्वदिशाना छेडे रहेली ते मकानसाथे जोडायेली बीजी बे ओशरी होय अने ते ओशरीनी मर्यादाथी धारण करायेली एक जूदी ओशरी होय एवुं पूर्वदिशाना द्वारवाळुं शुभने आपनारुं स्वस्तिक नामनुं गृह कहेवाय छे. (४) सर्व बाजुए नथी निषेध करायेलो आलिंदनो जेमां, अर्थात् चोतरफ ओशरीवाळो राजा अने पंडितोना समुदायोने उचित एवुं सर्वतोभद्र नामनुं गृह होय छे. तेने चारे दिशाए द्वारवाळुं करवुं. (५) (चार गृहोनुं स्वरूप वराहसंहितानी साक्षीथी श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्ति टीकाकारे कहेल छे. ते ज प्रमाणे अहीं लोकप्रकाशकारे पण कहेल छे. जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिना मूळमां आ चार नामोनी साथे चक्र नामनो पांचमो प्रासाद पण कहेलो छे. आ संबंधनी विशेष हकीकतना जिज्ञासुए समरांगणसूत्रधार नामना छपायेला शिल्पसंबंधी ग्रंथ विगेरेनी सहाय मेळववी.)

तथा–वास्तु (घर) बनाववानुं जे क्षेत्र (भूमि) होय तेमां वेलाओ के वृक्षो विगेरे जे उगेला होय ते उपरथी तेमां थनारुं घर सुखकारक छे के दुःखकारक छे ? ते विद्वान् पुरुष जाणी शके छे. (६) जेमके वास्तुक्षेत्रमां उगेली लता जो गर्भवाळी होय तो ते शीघ्र फळ आपनारी थाय छे, कन्या (बाल्यावस्थावाळी–कुमारिका) होय तो ते चिरकाळे फळ आपनारी थाय छे अने वंध्या (वांझणी–फळरहित) होय तो तेनुं कांइपण फळ मळतुं नथी. (७) वास्तुना क्षेत्रमां प्लक्ष (पीपळो), वड, अश्वत्थ (पीपळा जेवुं वृक्ष) अने उमरा विगेरेनां वृक्षो उगेला होय तो ते शुभ कहेला छे. कांटावाळा वृक्षो उगेला होय तो ते अशुभ कहेला छे अने ते शत्रु तथा चोरादिकनो भय आपनार थाय छे. (८) ते विषे वराह कहे छे के—" उत्तम औषधि, वृक्ष अने लतावाळी, मधुर,

मधुरा सुगंधा स्निग्धा समानशुषिरा च मही नराणां । अध्यध्वनि श्रमविनोदमुपागतानां धत्ते श्रियं किमुत शाश्वतमंदिरेषु ॥ ९ ॥

विज्ञो वास्तुष्वथायर्क्ष–व्ययांशादीन् विचारयेत् । अमीभिरनुकूलैर्यत् स्यादभ्युदयकृद्गृहं ॥ १० ॥ विवक्षिते गृहक्षेत्रे विस्तारो योंगुलात्मकः । दैर्घ्येणांगुलरूपेण गुण्यते जायतेऽथ यत् ॥ ११ ॥ तत्स्यात्क्षेत्रफलं तस्मि–न्नष्टभक्तेऽधिकं च यत् । तदंकमानस्तत्राय–स्तेषां नामक्रमस्त्वयं ॥ १२ ॥ ध्वजो १ धूमो २ हरिः ३ श्वा ४ गौ ५ खरो ६ हस्ती ७ द्विकः ८ क्रमात् । पूर्वादिबलिनोऽष्टाया विषमास्तेषु शोभनाः ॥ १३ ॥ ईशानांतासु दिक्ष्वेते पूर्वादिक्रमतः स्थिताः । सान्वर्थनामधेयत्वा–त्समाः क्वापि न शोभनाः ॥ १४ ॥ एषां स्थापनव्यवस्था चैवं

सुगंधी, स्निग्ध (चिकाशवाळी–रसवाळी) अने सरखा छिद्रवाळी पृथ्वी उपर मार्गमां चालवाथी श्रमित थयेला राजाओ मात्र विश्रांति लेवा माटे ज थोडो वखत बेठा होय तो पण तेमने तेवी पृथ्वी लक्ष्मीने आपनारी थाय छे, तो पछी तेवी पृथ्वी उपर निरंतर रही शकाय तेवा मकानो कर्यां होय तो ते लक्ष्मीने आपनार थाय तेमां शुं कहेवुं ? (९)"

हवे वास्तुशास्त्रना विद्वाने आय, नक्षत्र, व्यय अने अंश विगेरेनो विचार करवो, कारण के ते सर्वे अनुकूळ होय तो ते घर शुभ उदयने करनारुं थाय छे. (१०) ते आ प्रमाणे—इच्छेला घरनी भूमिनो विस्तार जेटला अंगुलनो होय तेने लंबाइना अंगुलवडे गुणवो. ते प्रमाणे लंबाइ पहोळाइना अंगुलनो गुणाकार करतां जे आवे ते क्षेत्रफळ समजवुं. ते क्षेत्रफळना अंगुलनी संख्याने आठे भांगतां जे शेष वधे, तेटली संख्यावाळो (तेटलामो) ते क्षेत्रनो आय जाणवो. ते आयोनां नाम अनुक्रमे आ प्रमाणे छे. (११–१२)—ध्वज १, धूम २, हरि ३, श्वान ४, बळद ५, गधेडो ६, हाथी ७ अने कागडो ८. आ आठ आयो अनुक्रमे पूर्वादिक दिशाओमां बळवान छे. तेमांना एकी (१–३–५–७) आयो शुभकारक छे. (१३) पूर्वादिकना अनुक्रमे[1] ईशान खुणापर्यंत रहेला आ आठे आयोनां नाम सार्थक होवाथी बेकी (२–४–६–८) आयो कदापि शुभ नथी. (१४) आ आयोने स्थापवानी व्यवस्था विवेकविलास नामना ग्रंथमां आ प्रमाणे कही

---

१ पूर्व–ध्वज, २ अग्नि–धूम, ३ दक्षिण–सिंह, ४ नैर्ऋत–श्वान, ५ पश्चिम–वृषभ, ६ वायव्य–खर, ७ उत्तर–गज, ८ ईशान–काक.

विवेकविलासे–वृषं १ सिंहं २ गजं ३ चैव खेटकर्बटकोट्टयोः । द्विपः पुनः प्रयोक्तव्यो वापीकूपसरस्सु च ॥ १५ ॥ मृगेंद्रमासने दद्या–च्छयनेषु गजं पुनः । वृषं भोजनपात्रेषु छत्रादिषु पुनर्ध्वजं ॥ १६ ॥ अग्निवेश्मसु सर्वेषु गृहे वह्न्युपजीविनां । धूमं नियोजयेत्किंच श्वानं म्लेच्छादिजातिषु ॥ १७ ॥ खरो वेश्यागृहे शस्तो ध्वांक्षः शेषकुटीषु च । वृषः सिंहो गजश्चापि प्रासादपुरवेश्मसु ॥ १८ ॥ इत्यायो वास्तुनः प्रोक्तो नक्षत्रमथ कथ्यते । तत्र सामान्यतो वास्तु–जन्मभं कृत्तिका भवेत् ॥ १९ ॥ यदुक्तं व्यवहारप्रकाशे–भाद्रपदतृतीयायां शनिदिवसे कृत्तिकाप्रथमपादे । व्यतिपाते रात्र्यादौ विष्टयां वास्तोः समुत्पत्तिः ॥२०॥ अथेष्टवास्तुनः क्षेत्र–फलांकेऽष्टगुणीकृते । विभक्ते सप्तविंशत्या शिष्टं भवति जन्मभं ॥ २१ ॥ अस्मादेव च नक्षत्रा–द्गृहाणां स्वामिना सह । राशेर्बलं प्रीतिषड–ष्टमकादि विचिंतयेत् ॥ २२ ॥ सप्त सप्ताग्निभादीनि

छे–" खेट (गाम), कर्बट (नगर) अने किल्लाने विषे वृष, सिंह अने गज आय लेवो. वाव, कूवा अने सरोवरने विषे द्विप (हाथी) आय लेवो, आसनमां सिंह आय लेवो, शय्यामां गज आय लेवो, भोजननां पात्रोमां वृषभ आय लेवो, छत्रादिकने विषे ध्वज आय लेवो, सर्व प्रकारना अग्निना घरो (रसोडा विगेरे)ने विषे तथा अग्निवडे आजीविका करनारना घरोने विषे धूम आय लेवो, म्लेच्छादिक जातिनां घरोमां श्वान आय लेवो, वेश्याना घरमां खर आय श्रेष्ठ छे, बीजा नीच वर्णोनी झुंपडीओने विषे ध्वांक्ष (काक) आय लेवो, तथा प्रासाद, पुर अने सारा घरोने विषे वृष, सिंह अने गज आय लेवा सारा छे. (१५–१८) आ प्रमाणे वास्तुनो आय कह्यो. हवे तेनुं नक्षत्र कहे छे–तेमां सामान्य रीते वास्तुनुं जन्मनक्षत्र कृत्तिका छे. (१९) ते विषे व्यवहारप्रकाशमां कह्युं छे के–" भादरवानी त्रीजने दिवसे, शनिवारे, कृत्तिका नक्षत्रना पहेला पायामां, व्यतिपात योगमां, रात्रिना प्रारंभमां अने विष्टि योगमां वास्तुनी उत्पत्ति थयेली छे. " (२०) हवे इष्ट वास्तु (घर)ना क्षेत्रफळनी जे संख्या होय तेने आठे गुणी सत्तावीशे भांगतां जेटला बाकी रहे तेने ते वास्तुनुं जन्म नक्षत्र जाणवुं. (२१) आ प्रमाणे आवेला घरना जन्म नक्षत्रथी गृहस्वामीनी साथे राशिबळ, प्रीति अने षडाष्टक विगेरे विचारवुं (२२) परिघचक्रनी जेम चक्र करीने तेमां पूर्वादिक दिशाए अनुक्रमे कृत्तिकादिक

न्यस्येत्परिघचक्रवत् । पूर्वादिषु चतसृषु दिक्ष्विमानि यथाक्रमं ॥ २३ ॥ इष्टस्य वास्तुनो जन्म–धिष्ण्यमेवं समेति चेत् । द्वारदिश्यस्य गेहस्य तदोद्योऽभिमुखः शशी ॥ २४ ॥ पाश्चात्यभित्तिदिक्प्राप्ते जन्मभेऽभीष्ट-वास्तुनः । चंद्रो भवति पृष्ठस्थो–ऽनिष्टौ चैतावुभावपि ॥२५॥ तथाहुः–प्रारब्धं संमुखे चंद्रे न वस्तुं वास्तु कल्पते । पृष्ठस्थेस्वामिघाताय द्वयोस्तेन त्यजेद्गृही ॥ २६ ॥ गृह एव निषिद्धोऽयं चंद्रमाः सन्मुख-स्थितः । प्रासादनृपसौधश्री–गृहेषु त्वग्रगः शुभः ॥ २७ ॥

गुरुशिष्यादिवत्तारा वर्ज्यात्रापि विवेकिभिः । तृतीया पंचमी चापि

सात सात नक्षत्रो स्थापन करवा. तेमां इष्ट वास्तुनुं जन्मनक्षत्र जो घरना द्वारनी दिशामां आवे तो ते घरनी सन्मुख चन्द्र छे एम जाणवुं, (२३–२४) अने इष्टगृहनुं जन्मनक्षत्र जो पाछली भींतनी दिशामां आवे तो चन्द्र पाछळ रहेलो छे एम जाणवुं. आ सन्मुख अने पाछळनो ए बंने चन्द्र अशुभ छे. (२५) ते विषे कह्युं छे के–" चन्द्र सन्मुख होय तो प्रारंभेलुं घर वसवा लायक नथी अने चन्द्र पाछळ होय तो घरधणीनो नाश थाय छे, तेथी गृहस्थे आ बन्ने चन्द्र त्याग करवा लायक छे. (२६) " आ सन्मुख रहेलो चन्द्र घरने विषे ज निषेध करेलो छे, परंतु प्रासाद (चैत्य), राजमहेल अने खजानाना घरने (भंडार) विषे तो सन्मुख रहेलो चन्द्र शुभ कहेलो छे. (२७)

कृ. रो. मृ. आ. पु. पु. अ.

पूर्व

उत्तर ध. श. पू. उ. रे. अ. भ.

दक्षिण म. पू. उ. ह. चि. स्वा. वि.

पश्चिम

अ. ज्ये. मू. पू. उ. अ. श्र.

आ घरनी बाबतमां विवेकी पुरुषोए गुरु–शिष्यादिकना संबंधमां जेम अशुभ तारा

सप्तमी चापराः शुभाः ॥ २८ ॥ तथोक्तं—गणयेत्स्वामिनक्षत्रा–द्यावद्धिष्ण्यं गृहस्य च । नवभिस्तु हरेद्भागं शेषं तारा प्रकीर्त्तिता । ॥ २९ ॥ शांता १ मनोरमा २ क्रूरा ३ विजया ४ कलहोद्भवा ५ । पद्मिनी ६ राक्षसी ७ वीरा[1] ८ आनंदा ९ चेति तारकाः ॥ ३० ॥ इति नक्षत्रं ॥

नक्षत्रांकेऽष्टभिर्भक्ते शेषांकेन व्ययो भवेत् । भागाप्राप्तावथाष्टाभि–र्भांक एव व्ययो भवेत् ॥ ३१ ॥ स्यात्रिधासौ च पैशाचो राक्षसो यक्ष एव च । आयेन तुल्योऽभ्यधिको न्यूनश्चायाद्यथाक्रमं ॥ ३२ ॥ तथाह—पैशाचस्तु समायः स्या–द्राक्षसश्चाधिके व्यये । आयान्न्यूनतरो यक्षो व्ययः श्रेष्ठोऽष्टधा स्वयं ॥ ३३ ॥ शांतः १ क्रूरः २ प्रद्योतश्च ३ श्रेया ४ नथ मनोरमः ५ । श्रीवत्सो ६ विभव ७ श्चैव चितात्मको ८ व्ययोऽष्टमः ॥३४॥ अत्र च—एकशेषे व्ययः शांतो द्विशेषे क्रूर इष्यते ।

वर्जवानी छे तेम त्रीजी, पांचमी अने सातमी तारा वर्जवा लायक छे, ते सिवायनी बीजी ताराओ शुभ छे. (२८) ते विषे कह्युं छे के–" गृहस्वामीना नक्षत्रथी घरनुं जन्मनक्षत्र गणवुं. जे संख्या आवे तेने नवे भाग देवो. बाकी जे रहे ते (तेटलामी) तारा कहेली छे. (२९) तेना नाम आ प्रमाणे–शांता १, मनोरमा २, क्रूरा ३, विजया ४, कलहोद्भवा (क्लेश करनारी) ५, पद्मिनी ६, राक्षसी ७, वीरा ८ अने आनंदा ९. (३०) इति नक्षत्रविचार.

हवे व्यय कहे छे–नक्षत्रना अंकने आठे भांगतां जे शेष रहे ते व्यय कहेवाय छे. तेमां जो आठे भाग न चाले तो ते नक्षत्रनो अंकज व्यय कहेवाय छे. (३१) ते व्यय त्रण प्रकारनो छे–पैशाच १, राक्षस २ अने यक्ष ३. तेमां आयनी तुल्य व्यय होय तो ते पैशाच कहेवाय छे. आयथी अधिक होय तो ते राक्षस कहेवाय छे अने आयथी न्यून होय तो ते यक्ष कहेवाय छे. (३२) ते विषे कह्युं छे के–" आयनी समान संख्यावाळो व्यय होय तो ते पैशाच कहेवाय छे. आयनी संख्याथी व्ययनी संख्या अधिक होय तो ते राक्षस कहेवाय छे अने आयनी संख्याथी व्ययनी संख्या न्यून होय तो ते यक्ष कहेवाय छे तेमां यक्ष नामनो व्यय ज श्रेष्ठ छे. " ते व्यय आठ प्रकारनो छे. तेना नाम आ प्रमाणे–शांत १, क्रूर २, प्रद्योत ३, श्रेयान ४, मनोरम ५, श्रीवत्स ६, विभव ७ तथा आठमो चितात्मक ८. (३३–३४) अहीं (नक्षत्रना अंकने आठे भां-

---

१ वाला. इति वा पाठः

एवं यावत् शून्यशेषे भवेच्चितात्मको व्ययः ॥ ३५ ॥ इति व्ययः ॥

व्ययांकेनाभीष्टवेश्म–नाड्यश्चाक्षरसंख्यया । मुक्ते क्षेत्रफले भक्ते त्रिभिः शेषमिहांशकः ॥ ३६ ॥ इंद्रांशः स्यादेकशेषे द्विशेषे च यमांशकः । शून्यशेषे ज राजांशो–ऽधमस्तत्र यमांशकः ॥ ३७ ॥ इत्यंशकः ॥

तथा—वैशाखे श्रावणे मार्गे पौषे फाल्गुन एव च । कुर्वीत वास्तुप्रारंभं न तु शेषेषु सप्तसु ॥ ३८ ॥ एते तूक्ताश्चंद्रमासाः शुक्लप्रतिपदादिकाः । सौरमासांश्चैवमाहुः सूर्यसंक्रांतिचिह्नितान् ॥ ३९ ॥ धामारंभेतोत्तरदक्षिणास्यं तुलालिमेषर्षभभाजि भानौ । प्राक्पश्चिमास्यं मृगकर्ककुंभ–सिंहस्थिते द्व्यंगगते न किंचित् ॥४०॥ तुलालीत्याद्युक्तेऽपि पूर्वोक्तचंद्रमासपंचक एव, न शेषमासेष्विति स्वयं ज्ञेयं. संक्रांते द्विस्व-

---

गतां जो) एक शेष रहे तो शांत नामनो व्यय जाणवो, बे शेष रहे तो क्रूर नामनो व्यय जाणवो. ए ज प्रमाणे यावत् शून्य शेष रहे तो चितात्मक व्यय जाणवो. (३५) इति व्यय विचार.

हवे अंश कहे छे–व्ययनो अंक, इच्छित घरनी नाडी एटले जे नामनुं घर होय तेना अक्षरोनी संख्यानो अंक अने क्षेत्रफळनो अंक, आ त्रणे अंकने एकठा करवा (सरवाळो करवो). पछी तेने त्रणे भांगतां जे शेष रहे तेने अंश जाणवो. (३६) तेमां जो एक शेष रहे तो ते इंद्र अंश जाणवो, बे शेष रहे तो यम अंश जाणवो अने शून्य शेष रहे तो राजा अंश जाणवो. आ त्रणेमां यम अंश अधम–अशुभ छे (बाकीना बे शुभ छे). (३७) इति अंश विचार.

हवे वास्तु प्रारंभ करवानो विचार कहे छे—वैशाख १, श्रावण २, मार्गशीर्ष ३, पोष ४ अने फाल्गुन ५, आ पांच मासमां ज घर चणाववानो प्रारंभ करवो. बाकीना सात मासमां आरंभ करवो नहीं. (३९) अहीं शुक्ल प्रतिपदाथी आरंभ थता चांद्रमासो कह्या छे अने सूर्यमास लेवा होय तो सूर्यनी संक्रांतिवडे युक्त आ प्रमाणे कह्या छे. (३९)—तुला, वृश्चिक, मेष अने वृष ए चार संक्रांतिमां सूर्य होय त्यारे उत्तर अने दक्षिण दिशाना द्वारवाळा घरनो आरंभ करवो तथा मकर, कुंभ, कर्क अने सिंह ए चार सक्रांतिमां सूर्य होय त्यारे पूर्व अने पश्चिम दिशाना द्वारवाळा घरनो आरंभ करवो. परंतु द्विस्वभाव राशि एटले मिथुन, कन्या, धन अने मीन ए चार संक्रांतिमां सूर्य होय त्यारे कोइपण घरनो आरंभ करवो नहीं. (४०) अहीं तुला, वृश्चिक विगेरे संक्रांति आश्री ग्राह्याग्राह्यपणुं कह्युं छे तोपण पूर्वे कहेला पांच चांद्र मासमां ज घरनो आरंभ

भावेषु राशिष्वर्के न कल्पते । एकस्या अप्यभिमुखं सदनं दिक्चतुष्टये ॥ ४१ ॥

अथ दक्षिणपार्श्वेऽप-पीडं सुप्तस्य वास्तुनः । नागस्य स्याच्छिरः १ पृष्ठं २ पुच्छं ३ कुक्षिर्यथाक्रमं ॥ ४२ ॥ भाद्रादिमासत्रितये दिक्षु पूर्वादिषु क्रमात् । मार्गादिमासत्रितये दिक्षु स्युर्दक्षिणादिषु ॥ ४३ ॥ फाल्गुनादित्रये तु स्यु-र्दिक्षु ते पश्चिमादिषु । ज्येष्ठादिषु त्रिषूदीच्या-दीनां चतुष्टये दिशां ॥ ४४ ॥ कर्त्तव्यो वास्तुनः कुक्षौ प्रथमं खननोद्यमः । यथा स्यात्सुखसंपत्ति-र्वैपरीत्ये विपर्ययः ॥ ४५ ॥ तथोक्तं—

करवो, बीजा मासोमां न करवो. एम पोतानी मेळे ज समजी लेवुं. द्विस्वभाव राशिमां एटले मिथुन, कन्या, धन अने मीन राशिमां सूर्यनी संक्रांति होय त्यारे चारे दिशामांथी एक पण दिशाना द्वारवाळा घरनो प्रारंभ करवो योग्य नथी. (४१) इति वास्तुप्रारंभना मासनो निर्णय.

हवे खातनुं मुहूर्त्त कहे छे—नागना आकारवाळो वास्तुपुरुष पोताना शरीरना जमणा पडखाने दबावीने सुतेलो छे. तेनुं मस्तक १, पृष्ठ २, पुच्छ ३ अने कुक्षि ४ आ चार अवयवो अनुक्रमे भाद्रपदादिक त्रण त्रण मासमां पूर्वादिक दिशाना अनुक्रमे होय छे एटले के-भाद्रपद, आश्विन अने कार्तिक ए त्रण मासमां वास्तुपुरुषनुं मस्तक पूर्व दिशामां होय छे, पृष्ठ दक्षिण दिशामां, पुच्छ पश्चिम दिशामां अने कुक्षि उत्तर दिशामां होय छे. ए ज रीते मार्गादिक त्रण मास एटले मार्गशीर्ष, पोष अने माघ मासमां दक्षिणादिक दिशामां होय छे एटले के—दक्षिण दिशामां मस्तक, पश्चिम दिशामां पृष्ठ, उत्तर दिशामां पुच्छ अने पूर्व दिशामां वास्तुपुरुषनी कुक्षि रहेली होय छे. ए ज रीते फाल्गुनादिक त्रण मासमां पश्चिमादिक चार दिशामां होय छे एटले के-फाल्गुन, चैत्र अने वैशाख ए त्रण मासमां वास्तुपुरुषनुं मस्तक पश्चिम दिशामां, पृष्ठ उत्तर दिशामां, पुच्छ पूर्वदिशामां अने कुक्षि दक्षिण दिशामां होय छे. ए ज रीते ज्येष्ठादिक त्रण मासमां उत्तरादिक चार दिशामां होय छे एटले के--ज्येष्ठ, अषाढ अने श्रावण मासमां वास्तुपुरुषनुं मस्तक उत्तरदिशामां, पृष्ठ पूर्वदिशामां, पुच्छ दक्षिण दिशामां अने कुक्षि पश्चिम दिशामां होय छे. (४२-४४) अहीं वास्तुनी कुक्षिने विषे प्रथम खोदवानो उद्यम करवो (खात करवुं). तेथी सुखसंपत्ति प्राप्त थाय छे अने विपरीतपणे करवाथी विपर्यय थाय छे एटले कुक्षि सिवाय बीजा अवयवमां खात करे तो ते अशुभ फळने आपनार थाय छे.

शिरः खनेन्मातृपितृन्निहन्यात् खनेच्च पृष्ठे भयरोगपीडाः । पुच्छं खनेत् स्त्रीशुभगोत्रहानिः स्त्रीपुत्ररत्नान्नवसूनि कुक्षौ ॥ ४६ ॥ इति वास्तुनो दिग्नियमः ॥

विदिग्नियमं त्वेवमाहुः—ईशानादिषु कोणेषु वृषादीनां त्रिके त्रिके । शेषाहेराननं त्याज्यं विलोमेन प्रसर्पतः ॥ ४७ ॥ यदा च मुखमैशान्यां नाभिराग्नेयगा तदा । पुच्छं भवति नैर्ऋत्यां वायव्यां मुत्कलं शुभं ॥ ४८ ॥ एवं च—वृषादौ मुखमैशान्यां सिंहादौ वायुकोणके । वृश्चिकादौ च नैर्ऋत्यां कुम्भादौ हुतभुग्दिशि ॥ ४९ ॥ वृषादौ वायवी श्रेष्ठा सिंहादौ नैर्ऋति त्रिके । वृश्चिकादौ शुभाग्नेयी तथैशानी घटादिषु ॥ ५० ॥ इति खातारभंः ॥

अथ वास्तुनि भागाः स्यु–र्दैवतानां पृथक् पृथक् । भागानां स्वा-

---

(४५) ते विषे कह्युं छे के—" वास्तुपुरुषना मस्तके खात करवामां आवे तो घरधणीना मातापिता मरण पामे, पृष्ठ उपर खात करवाथी भय रोग अने पीडा उत्पन्न थाय, पुच्छ खोदवाथी स्त्री, शुभ अने गोत्र (कुळ)नी हानि–नाश थाय अने कुक्षिमां खात करवाथी स्त्री, पुत्र, रत्न, अन्न अने धननी प्राप्ति थाय छे. (४६) इति वास्तुदिशा नियम.

वास्तुनी विदिशानो नियम आ प्रमाणे कह्यो छे–वृषादिक त्रण त्रण संक्रांतिमां ईशानादिक चार खूणाने विषे विलोम (उलटा) पणाए फरता एवा शेष नागनुं मुख तजवा लायक छे. (४७) ज्यारे शेषनागनुं मुख ईशान खूणामां होय त्यारे तेनी नाभि अग्नि खूणामां होय छे. पुच्छ नैर्ऋत्य खूणामां होय छे अने वायव्य खुणो खाली होय छे तेथी ते शुभ छे. (४८) आथी करीने वृष, मिथुन अने कर्क ए त्रण संक्रांतिमां शेषनुं मुख ईशान खुणामां होय छे. सिंहादिक एटले सिंह, कन्या अने तुला संक्रांतिमां शेषनुं मुख वायव्य खुणामां होय छे. वृश्चिकादिक एटले वृश्चिक, धन अने मकर संक्रांतिमां शेषनुं मुख नैर्ऋत्य खूणामां होय छे. तथा कुंभादिक एटले कुंभ, मीन अने मेष संक्रांतिमां शेषनुं मुख अग्नि खूणामां होय छे. (४९) तथा खातने माटे वृषादिक त्रण संक्रांतिमां वायु खूणो (खाली होवाथी) श्रेष्ठ छे, सिंहादिक त्रण संक्रांतिमां नैर्ऋत खूणो श्रेष्ठ छे, वृश्चिकादिक त्रण संक्रांतिमां अग्नि खुणो श्रेष्ठ छे अने कुंभादिक त्रण संक्रांतिमां ईशान खुणो श्रेष्ठ छे. (५०) इति विदिशा नियम. इति खातारंभ.

हवे वास्तुक्षेत्रना देवो कहे छे–वास्तुना क्षेत्रमां देवताओना जुदा जुदा भाग होय छे.

मिनः पंच–चत्वारिंशत्सुराः स्मृताः ॥ ५१ ॥ तत्र भागाश्चतुःषष्टिः पुरे नृपगृहेषु च । एकाशीतिः शेषगृहे शतं प्रासादमंडपे ॥ ५२ ॥ तथोक्तं सूत्रधारमंडनकृतवास्तुसारे–चतुःषष्ट्या पदैर्वास्तुपुरे राजगृहेऽर्चयेत् । एकाशीत्या गृहे भाग–शतं प्रासादमंडपे ॥ ५३ ॥ ईशः १ पर्जन्यो २ जयें ३ द्रौ ४ सूर्यः ५ सत्यो ६ भृशो ७ नभः ८ । अग्निः ९ पूषा १० थ वितथो ११ गृहक्षत १२ यमौ १३ ततः ॥ ५४ ॥ गंधर्वो १४ भृंगराजश्च १५ मृगः १६ पितृगणास्तथा १७ । दौवारिको १८ ऽथ सुग्रीवः १९ पुष्पदंतो २० जलाधिपः २१ ॥५५॥ असुरः २२ शोष २३ यक्ष्माणौ २४ रोगो २५ ऽहि २६ मुख्य २७ एव च । भल्ला(खल्वा)ट २८ सोम २९ गिरय ३०–स्तथा बाह्ये दिति ३१ र्दितिः ३२॥५६॥ आपा ३३ पवत्सा ३४ वीशाने सावित्रः ३५ सविता ३६ ग्निगौ । इंद्र ३७ इंद्रजयो ३८ ऽन्यस्मिन् वायौ रुद्रश्च ३९ रुद्रराट् ४० ॥ ५७ ॥ मध्ये ब्रह्मास्य ४१

ते सर्व भागोना स्वामी तरीके पीस्तालीश देवो कहेला छे. (५१) तेमां नगर अने राजाना गृहोने विषे सर्व देवोना मळीने चोसठ भाग (पद) होय छे, बाकीना गृहोने विषे एकाशी भाग होय छे अने प्रासाद तथा मंडपने विषे सो भाग होय छे. (५२) ते विषे मंडन नामना सूत्रधारे करेला वास्तुसार नामना ग्रंथमां कह्युं छे के–" नगरने विषे अने राजाना गृहने विषे चोसठ पद (भाग) वडे वास्तुनी पूजा करवी, बीजा गृहोने विषे एकाशी पद वडे अने प्रासाद तथा मंडपने विषे सो पद वडे वास्तुनी पूजा करवी " (५३) तेना पीस्तालीश देवो अनुक्रमे आ प्रमाणे छे–ईश १, पर्जन्य २, जय ३, इंद्र ४, सूर्य ५, सत्य ६, भृश ७, नभ ८, अग्नि ९, पूषा १०, वितथ ११, गृहक्षत १२, यम १३, गंधर्व १४, भृंगराज १५, मृग १६, पितृगण १७, दौवारिक १८, सुग्रीव १९, पुष्पदंत २०, जलाधिप (वरुण) २१, असुर २२, शेष २३, यक्ष्मा २४, राग २५, अहि २६, मुख्य २७, भल्लाट (खल्वाट)२८, सोम २९, गिरि (शैल) ३०, अदिति ३१, अने दिति ३२, आ बत्रीश देवोने चारे दिशाना वहारना भागमां स्थापवा. पछी अंदरना भागमां ईशान खूणामां आय ३३ अने आपवत्स ३४ ए बे देवो स्थापवा, अग्नि खूणमां सावित्र ३५ अने सविता ३६ ए बे देवो स्थापवा, नैर्ऋत खूणामां इंद्र ३७ अने इंद्रजय ३८ ए बे देवो स्थापवा तथा वायव्य खूणामां रुद्र ३९ अने रुद्रराट् ४०. ए

चत्वारो देवाः प्राच्यादिदिग्गताः । अर्यमाख्यो ४२ विवस्वांश्च ४३ मैत्रः ४४ पृथ्वीधरः ४५ क्रमात् ॥ ५८ ॥ ईशकोणादितो बाह्ये चरकी १ च विहा(दा)रिका २ । पूतना ३ पापा ४ राक्षस्यो हेतु(ति)काद्या(ढ्या)श्च निष्पदाः ॥ ५९ ॥ चतुष्षष्टिपदे देवा वास्तुब्रह्मा चतुष्पदः । अर्यमाद्याश्चतुर्भागा द्विद्व्यंशा मध्यकोणगाः ॥ ६० ॥ बहिःकोणेष्वर्द्धभागाः शेषा एकपदाः सुराः । एकाशीतिपदे ब्रह्मा नवार्याद्यास्तु षट्पदाः ॥ ६१ ॥ द्विपदा मध्यकोणेऽष्टौ बाह्ये द्वात्रिंशदेकशः । शते ब्रह्माष्टसंख्यांशो बाह्यकोणेषु सार्द्धकौ ॥ ६२ ॥ अर्यमाद्यास्तु वास्त्वंशाः शेषाः स्युः पूर्ववास्तुवत् । हेमरत्नाक्षताद्यैस्तु वास्तुक्षेत्राकृतिं लिखेत् ॥ ६३ ॥

बे देवो स्थापवा. पछी बराबर मध्य भागमां ब्रह्मा ४१ स्थापवो तेनी पूर्वादिक चार दिशाए अर्यमा ४२, विवस्वान ४३, मैत्र ४४ अने पृथ्वीधर ४५ ए चार देवो अनुक्रमे स्थापवा. (५४–५८) ते उपरांत मंडळनी बहार ईशान विगेरे खुणामां अनुक्रमे चरकी १, विहा (दा) रिका २, पूतना ३ अने पापा ४ ए चार राक्षसीओ शस्त्र सहित स्थापवी. आ चार राक्षसीओ पद (भाग) रहित छे. (एटले के वास्तुनी भूमिमां तेमनुं स्थान नथी. तेथी अलगज छे.) अहीं वास्तु क्षेत्रना चोसठ पद करीए त्यारे मध्यमां रहेला ब्रह्माना चार पद (भाग) जाणवा, अर्यमा विगेरे चार देवोना दरेकना चार चार पद जाणवा. मध्यना खूणामां रहेला आठ देवोना दरेकना बबे भाग जाणवा. बहारना खुणामां रहेला आठ देवोनो दरेकनो अर्ध अर्ध भाग जाणवो. तथा बाकीना चोवीश देवोनो दरेकनो एक एक भाग जाणवो. (कुल ६४ पद थाय छे.) हवे वास्तुक्षेत्रमां एकाशी पदनुं मंडळ करीए त्यारे ब्रह्माना नव पद (९) अर्यमा विगेरे चारना छ छ पद (२४) मध्यना चार खुणाना आठ देवोना बे बे पद (१६) तथा बहारना बत्रीश देवोनुं एक एक पद (३२) छे. (कुल ८१ पद थाय छे). हवे वास्तुक्षेत्रमां सो पदनुं मंडळ करीए त्यारे ब्रह्माना १६, अर्यमादि चारना आठ आठ होवाथी ३२, मध्य खुणाना आठना बबे होवाथी १६, बहारना खुणाना आठना दोढ दोढ होवाथी १२, बाकीना २४ नुं एकेक पद होवाथी २४–एम कुल मळीने सो थाय छे.

हवे वास्तुक्षेत्रनी आकृति सुवर्ण, रत्न के चोखा विगेरेथी आळेखवी. (५९–६३)

६४ चोसठ पदनो वास्तु.

चरकी | विदारिका

ई / दि	प	ज	इं	सू	स	भृ	आ / अ
अ	आप / आपवत्स		अर्यमा		सवित्र / सविता		पू
शै							वि
कु	पृथ्वीधर		ब्रह्मा		वैवस्वत		गृ
भ							य
मु	रुद्र / रुद्रदास		मैत्रगण		इंद्र / जय		गं
ना							भृं
रो / पा	शो	अ	व	पु	सु	नं	मृ / पि

पापा | पूतना

८१ एकाशी पदनो वास्तु.

चरकी — विदारिका

शि	प	ज	इं	सू	स	भृ	आ	अ
दि	आप			अर्यमा		सावित्र		पू
अ	आपवत्स						सविता	वि
शे								गृ
कु	पृथ्वीधर			ब्रह्मा		वैवस्वत		य
भ								गं
मु	रुद्र						इंद्र	भृं
ना		रुद्रदास		मैत्रगण		जय		मृ
रो	पा	शो	अ	व	पु	सु	नं	पि

पापा — पूतना

१०० सो पदनो वास्तु.

चरकी

विदारिका

	ई	प	ज	ई	सू	स	भृ	आ	

दि
अ
शै
कु
भ
मु
ना
रा

आप
आपवत्स

अर्यमा

सवित्र
सविता

अ
पू
वि
गृ
य
गं
भृं
मृ

पृथ्वीधर

ब्रह्मा

वैवस्वत

रुद्र
रुद्रदास

मैत्रगण

श्री
पर्ध

	पाप	शो	अ	व	सु	सु	नं	पितृ	

पापा

पूतना

अभ्यर्च्य पुष्पगंधाद्यै–र्बलिं दध्याज्यमोदनं । दद्यात्सुरेभ्यः सोंकारै–र्नमोंतैर्नामभिः पृथक् ॥ ६४ ॥ वास्त्वारंभे प्रवेशे च श्रेयसे वास्तुपूजनं । अकृते स्वामिनाशः स्या–त्तस्मात्पूज्यो हितार्थिभिः ॥ ६५ ॥ इत्यादि कियद्वास्तुशास्त्रं श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रेऽपि संगृहीतं बोद्धव्यं. तथा च सूत्रं—एगासीतिपदेसु सव्वेसु चेव वत्थूसु णेगगुणजाणए पंडिए विहिण्णू पणयालीसाए देवयाणमित्यादि वार्द्धकिरत्नस्वरूपनिरूपणे. ऐशान्यां देवगृहं महानसं चापि कार्यमाग्नेय्यां । नैर्ऋत्यां भांडोपस्करो–ऽर्थधान्यानि मारुत्यां ॥ ६६ ॥ दंडः प्रकाशे प्रासादे प्रासादकरसंख्यया । सांधकारे पुनः कार्यो मध्यप्रासादमानतः ॥ ६७ ॥ इत्यादि-वास्तुशास्त्रज्ञ–श्चक्रिरत्नं स वार्द्धकिः । मुहूर्त्तमात्राद्रचयेत् स्कंधावारपुरादिकं ॥ ६८ ॥ इति वार्द्धकिरत्नं ॥

भवेत्पुरोहितो रत्नं कुर्वन् शांतिकपौष्टिकं । चतुर्दशानां विद्यानां

पुष्प अने चंदन विगेरेवडे पूजीने पछी दहीं, घी अने भातनुं बलिदान देवुं. ते वखते ॐकारपूर्वक ते ते देवोनुं नाम (चतुर्थी विभक्ति युक्त) लइ पाछळ नमः बोलवुं. आ प्रमाणे सर्व देवोना पृथक् पृथक् मंत्र. बोली पूजा अने बलिदान करवुं. (६४) वास्तुना आरंभमां तथा प्रवेश करती वखते कल्याणने माटे वास्तुनुं पूजन करवुं. जो पूजन न करे तो स्वामीनो विनाश थाय, तेथी पोताना हितनी इच्छावाळा पुरुषोए वास्तुनी पूजा करवी जोइए. (६५) इत्यादि केटलुंक वास्तुशास्त्र श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्रमां पण कहेलुं छे त्यांथी पण जाणी लेवुं. तेमां आ प्रमाणे सूत्र लख्युं छे.–"एकाशी आदिक पदवाळा सर्व प्रकारना वास्तुने विषे अनेक गुणना जाणनार विधिज्ञ पंडितोए पीस्तालीश देवताओनी पूजा करवी." इत्यादि वार्धकीरत्ननुं स्वरूप कहेती वखते कह्युं छे. घरना ईशान खूणामां देवगृह करवुं जोइए. अग्नि खूणामां रसोडुं, नैर्ऋत्य खूणामां वासण विगेरे सामग्री राखवानुं स्थान, अने वायव्य खूणामां धन–धान्य विगेरे राखवानुं स्थान करवुं जोइए. (६६) प्रकाशवाळा प्रासादमां प्रासादना हाथनी संख्या प्रमाणे ध्वजादंड करवो जोइए अने अंधकारवाळा प्रासादमां मध्य प्रासादना मानवडे ध्वजा-दंड करवो जोइए. (६७) इत्यादि वास्तुशास्त्रने जाणनार ते चक्रवर्तीनो वार्धकीरत्न एक मुहूर्त्त मात्रमां ज स्कंधावार, नगर विगेरेनी रचना करी शके छे. (६८) इति वार्धकीरत्न.

४ पुरोहितरत्न—शांतिक पौष्टिकनो करनार, चौद विद्यानो पारगामी अने निर-

पारदृश्वा सदा शुचिः ॥ ६९ ॥ अनेकगुणसंपूर्णः कलावान् कुशलः कविः । विज्ञः शब्दादिशास्त्राणां मंत्रयंत्रादिमर्मवित् ॥ ७० ॥ इति पुरोहितरत्नं ॥

भवत्यथ गजो रत्नं सप्तांग्या भूप्रतिष्ठितः । उत्तुंगो भद्रजातीय ऐरावत इवापरः ॥ ७१ ॥ बलीयान्मांसलः शूरः पटुर्वप्रादिभेदने । दृष्टमात्रोऽपि शत्रूणां सैन्यशस्त्रादिदर्पहृत् ॥ ७२ ॥ शास्त्रोक्तैर्लक्षणैर्न्यैश्चैः प्रशस्तैर्लक्षितः शुचिः । लक्ष्मीलीलागृहं रूप–शाली सर्वसमृद्धिकृत ॥ ७३ ॥ त्रिभिर्विशेषकं ॥ इति गजरत्नं ॥

अश्वो रत्नं भवेच्चारु–प्रकृतिर्विनयान्वितः । द्वात्रिंशदंगुलोत्तुंग–मूर्द्धावस्थितयौवनः ॥ ७४ ॥ चतुरंगुलदीर्घोच्चैः स्तब्धकर्णश्च यौवनात् । पततो हि जरस्यश्व–कर्णो नारीकुचाविव ॥ ७५ ॥ विंशतिं चांगुलान्यस्य बाहा भवति दैर्घ्यतः । बाहा त्वधः शिरोभागा–ज्जानुनोरुपरि स्थिता ॥ ७६ ॥ षोडशांगुलजंघोऽयं चतुरंगुलजानुकः । तावदुच्चखुरोऽशीति–मंगुलान्येवमुच्छ्रितः ॥ ७७ ॥ एकन्यूनांगुलशत–परिणाहो भव-

---

न्तर पवित्र होय छे. (६९) वळी अनेक गुण संपूर्ण, कळावान्, कुशळ, कवि, शब्दादि शास्त्रमां प्रवीण अने मंत्रयंत्रादिना तत्त्वमां पण विज्ञ होय छे. (७०) इति पुरोहितरत्नं

५ गजरत्न—सात अंगवडे पृथ्वीपर प्रतिष्ठित होय छे, उंचो, भद्र जातिनो अने जाणे बीजो ऐरावत होय तेवो होय छे. (७१) बळवान, मांसल, शूर, गढ विगेरेने तोडवामां प्रवीण, देखवामात्रथी ज शत्रुना सैन्यशस्त्रादि अहंकारनो नाश करनारो होय छे. (७२) शास्त्रोक्त एवा प्रत्यक्ष ने प्रशस्त लक्षणोवडे लक्षित तेम ज शुचि होय छे. लक्ष्मीना क्रीडागृह जेवो, रूपशाळी अने सर्व प्रकारनी समृद्धिने प्राप्त करावनार होय छे. (७३) इति हस्तिरत्नं.

६ अश्वरत्न—स्वभावे ज सुंदर अने विनयान्वित होय छे. बत्रीश अंगुळ उंचा मस्तकवाळो अने अवस्थित यौवनवाळो होय छे. (७४) चार अंगुळ दीर्घ ने उंचो तेम ज स्तब्धकर्णवाळो यौवनावस्थाने लइने होय छे, केमके अश्वना कर्ण पण स्त्रीना कुचनी जेम जरावस्थामां नमी पडे छे. (७५) वीश अंगुळ लांबी बाहा होय छे. आ बाहा शिरोभागथी नीचे ने जानुनी उपरनी गणाय छे. (७६) सोळ अंगुळनी जंघावाळो, चार अंगुळनी जानुवाळो, चार अंगुळ उंची खुरावाळो एम एकंदर एंशी अंगुळ उंचो होय छे. (७७) नवाणु अंगुळना परिणाह (बेठक)वाळो अने १०८ अंगुळ लांबो होय छे.

स्यसौ । अष्टोत्तरांगुलशत–दीर्घश्च परिकीर्त्तितः ॥ ७८ ॥ तुंगत्वं स्यात्तु-
रंगाणा–माखुरात् श्रवणावधि । पृष्ठोदरस्य परिधिः परिणाहो भवेदिह
॥ ७९ ॥ आपुच्छमूलमायामो मुखादारभ्य कीर्त्तितः । भवत्यत्रांगुलं
मान–विशेषस्तदृज्ञदर्शितः ॥ ८० ॥ इत्यश्वरत्नमाश्रित्य निर्दिष्टं मान-
मागमे । लोके त्वन्योत्तमहया–पेक्षयेदं तदीरितं ॥ ८१ ॥ जघन्यमध्य-
श्रेष्ठाना–मश्वानामायतिर्भवेत् । अंगुलानां शतं हीनं विंशत्या दशभि-
स्त्रिभिः ॥ ८२ ॥ परिणाहोंगुलानि स्या–त्सप्ततिः सप्तसप्ततिः । एका-
शीतिः समासेन त्रिविधोऽयं यथाक्रमं ॥ ८३ ॥ तथा षष्टिश्चतुःषष्टि-
रष्टषष्टिः समुच्छ्रयः । द्विपंचसप्तकयुता विंशतिः स्यान्मुखायतिः ॥ ८४ ॥
इत्यादि, पृष्ठं तस्य भवेदीष–न्नतं मृदुलमांसलं । सल्लक्षणं कशावेत्र-
लताद्याघातवर्जितं ॥ ८४ ॥ अश्वोचितानेकरत्न–स्वर्णालंकारभासुरः ।
भवत्यसौ च निर्दोषा–रौद्रपद्मलोचनः ॥ ८५ ॥ उदात्तगतिवेगेन
मनःपवनतार्क्ष्यजित् । मृणालांभोनिश्रयापि लाघवेन समुत्पतन् ॥ ८६ ॥

---

(७८) आ अश्वनी उंचाइ जे ८० अंगुळनी कही ते खरीथी मांडीने कर्ण सुधी समजवी अने पीठ तथा उदरनी परिधि ते परिणाह समजवो. (७९) पुच्छना मूळथी मुखपर्यंत लंबाइ समजवी. अहीं अंगुळ ए अमुक प्रकारनुं मान विशेष छे. ते ते विषयना जाणकारे बतावेलुं समजवुं. (८०) अश्वरत्नने आश्रीने आ प्रमाणे मान आगममां कह्युं छे. लोकमां तो उत्तम अश्वने आश्रीने आ प्रमाणे मान कह्युं छे. (८१)—जघन्य, मध्यम अने श्रेष्ठ अश्वनी लंबाइनुं मान सोमां वीश, दश ने त्रण अंगुळ ओछुं कह्युं छे एटले जघन्यनुं ८०, मध्यनुं ९० ने श्रेष्ठनुं ९७ अंगुळ समजवुं. (८२) परिणाह जघन्य, मध्यम ने श्रेष्ठना ७०–७७ ने ८१ अंगुळना अनुक्रमे संक्षेपथी कहेल छे, (८३) तथा ६०–६४ ने ६८ अंगुळ मुखनी उंचाइ होय छे अने लंबाइ २२–२५ ने २७ अंगुळ होय छे. (८४) इत्यादि. तेनी पीठ कांइक नमेली, मृदु, मांसल, सारा लक्षणवाळी अने चाबुक, वेत्र के लताना आघातरहित होय छे. (८५) अश्वने उचित एवा अनेक रत्न अने स्वर्णना अलंकारोवडे शोभतो होय छे, अने निर्दोष तथा अरौद्र पापणयुक्त नेत्रवाळो होय छे. (८६) उदात्त एवी गतिना वेगवडे मन, पवन अने गरुडने पण जीते एवो होय छे. मृणाल अने जळनो आश्रय करीने पण ते एकदम लघुलाघवीकळावडे उत्पतिने उलंघी जनार होय छे. (८६) वळी ते अश्व सारा कुळमां उत्पन्न थयेल, सुजातिवान्, शुचि अने

सुकुलोत्थः सुजातिश्च शुचिः शास्त्रोक्तलक्षणः । तनुस्निग्धोल्लसद्रोमा मेधावी भद्रकोऽल्परुट् ॥ ८७ ॥ अंभःपंकाग्निपाषाण-वालुकोल्लंघने पटुः । अद्रिगर्त्तादिविषम-पथे जितपरिश्रमः ॥ ८९ ॥ लताघातास्यदंशादि-दुष्टचेष्टाविवर्जितः । रिपुष्वतर्कितापाता-त्स्यात्सुशिष्यवदाश्रयः ॥ ९० ॥ कालहेषी रक्तालु-जिह्वो जितपरीषहः । निद्रालुः सर्वदा जाग-रूकश्च समरांगणे ॥ ९१ ॥ तथोक्तं—सदैव निद्रावशगा निद्राछेदश्च वाजिनां । जायते संगरे प्राप्ते कर्करस्य च भक्षणे ॥ ९२ ॥ तथारोहकसर्वांग-सुखावहवपुर्गतिः । प्रशस्तद्वादशावर्त्तो-ऽनश्रुपाती श्रमेऽपि हि ॥ ९३ ॥ सप्तभिः कुलकं ॥ द्वादशावर्त्ताश्चेमे वराहोक्ताः—ये प्रपाणगलकर्णसंस्थिताः पृष्ठमध्यनयनोपरिस्थिताः । ओष्ठसक्थिभुजकुक्षिपार्श्वगा-स्ते ललाटसहिताः सुशोभनाः ॥ ९४ ॥ अत्र प्रपाणमुत्तरोष्ठतलं, सक्थिनी पाश्चात्यपादयोर्जानूपरिभागाः, कुक्षिरत्र वामो, दक्षिणकुक्ष्यावर्त्तस्य गर्हितत्वात्. अत्र कर्णनयनादिस्थानानां द्विसंख्याकत्वे-

---

शास्त्रोक्त लक्षणवाळो होय छे. पातळा स्निग्ध अने उल्लसायमान रोमवाळो, मेधावी, भद्रक अने अल्प क्रोधवाळो होय छे. (८८) पाणी, कादव, अग्नि, पाषाण अने रेतीनुं उल्लंघन करवामां चतुर होय छे. पर्वत, खाडा विगेरे विषम पंथमां पण परिश्रमने जीतनार अर्थात् विनापरिश्रमे तेने उल्लंघनार होय छे. (८९) लताघात (पाटु मारवी अने आस्यदंश (करडवुं) विगेरे दुष्ट चेष्टारहित होय छे. शत्रुओने विषे अतर्कित आपात करनार (पडनार) होवाथी सुशिष्यना आश्रय जेवो होय छे. (९०) अमुक काळे हेषारव करनार (काळहेषी), रक्त ताळु ने जिह्वावाळो, परीषहने जीतनारो, निरंतर निद्राळु अने समरांगणमां जागृत रहेनारो होय छे. (९१) कह्युं छे के–' अश्वो सदैव निद्रावश होय छे. तेमनो निद्राछेद संग्राममां अने खावामां कांकरो आवे त्यारे थाय छे.' (९२) आरोहण करनारने सर्वांग सुख आपे तेवी शरीरनी गतिवाळो, प्रशस्त एवा बार आवर्तवाळो अने श्रम वखते पण आंसु न पाडे तेवो होय छे. (९३) अश्वोना शरीर उपर बार आवर्त होय छे. ते वराहे आ प्रमाणे कह्या छे–१ प्रपाण, २ गळसस्थित, ३ कर्णसंस्थित, ४ पृष्ठोपरि, ५ मध्योपरि, ६ नयनोपरि, ७ ओष्ठ, ८ सक्थि, ९ भुजाए, १० कुक्षीए, ११ पडखे अने १२ ललाटे–सारा शोभता होय.' (९४) अहीं प्रपाण ते उत्तरोष्ठनुं तळ समजवुं. सक्थि एटले पछवाडेना बे पगना जानुनो उपरनो भाग समजवो. कुक्षि ते अहीं वाम बाजुनी समजवी–दक्षिण कुक्षिनो आवर्त तो निंदित गणाय छे. अहीं कर्णनयनादि स्थान

ऽपि जात्यपेक्षया द्वादशैव स्थानानि, स्थानभेदानुसारेण स्थानिभेदा अपि द्वादशैवेति. तत्र कंठे स्थितोऽश्वानां स्याद्देवमणिसंज्ञकः। महालक्षणमावर्त्तः केषांचित्पुण्यशालिनां ॥ ९५ ॥ इत्यश्वरत्नं ॥

स्त्रीरत्नं च भवेत्सर्व–नारीवर्गशिरोमणिः। रूपलक्षणसंयुक्ता मानोन्मानप्रमाणयुक् ॥ ९६ ॥ अवर्द्धिष्णुरोमनखा सदा संस्थितयौवना। आशु स्पर्शमहिम्ना च सर्वरोगोपशांतिकृत् ॥ ९७ ॥ बलवृद्धिकरी भोक्तुः सर्वर्त्तुषु सुखावहा। शीतकाले भवत्युष्णा ग्रीष्मकाले च शीतला ॥९८॥ फुल्लाब्जाक्षी शशिमुखी पीनस्तब्धोन्नतस्तनी। प्रशस्तजघना चारुचरणा गजगामिनी ॥ ९९ ॥ सुस्मिता मधुरालापा सुस्वरा प्रियदर्शना। हावभावविलासादि–चतुरा स्ववंधूपमा ॥ ५०० ॥ इति स्त्रीरत्नं ॥

चतुर्दशैवं रत्नानि चक्रिणां प्राज्यपुण्यतः। स्युः सहस्रेण यक्षाणां सेवितानि पृथक् पृथक् ॥ ५०१ ॥ द्वौ सहस्रौ च यक्षाणां चक्रभृद्देहरक्षकौ। चतुर्दश च रत्नानां सहस्राः षोडशेत्यमी ॥ २ ॥

बे बेनी संख्यावाळा होय छे, छतां जातिनी अपेक्षाए बार स्थानो जाणवा. स्थानभेदना अनुसारे अहीं स्थानना भेदो पण बार ज समजवा. तेमां अश्वना कंठ उपर रहेलो देवमणि नामनो महालक्षणवाळो आवर्त कोइ पुण्यशाळी अश्वने ज होय छे. (९५) इति अश्वरत्नं.

७ स्त्रीरत्न—सर्व नारीवर्गमां शिरोमणि होय छे. रूपलक्षण संयुक्त अने मानोन्मान प्रमाणयुक्त होय छे. (९६) रोम ने नख न वधे तेवी, सदा अवस्थित यौवनवाळी, स्पर्शना महिमाथी शीघ्रपणे सर्व रोगनी शांति करनारी होय छे. (९७) भोक्ताना बळनी वृद्धि करनार, सर्व ऋतुमां सुख आपनार, शीतकाळे उष्ण अने उष्णकाळे शीत स्पर्शवाळी होय छे. (९८) प्रफुल्ल कमळ जेवा नेत्रवाळी, चन्द्र समान मुखवाळी, पीनस्तब्ध ने उन्नत स्तनवाळी, प्रशस्त जघनवाळी, सुंदर चरणवाळी अने हाथी जेवी गतिवाळी होय छे. (९९) सुंदर स्मित करनारी, मधुर बोलनारी, सुंदर स्वरवाळी, प्रियदर्शनवाळी, हावभावविलासादिमां चतुर अने देवांगनानी उपमाने योग्य होय छे. (५००) इति स्त्रीरत्नं.

आ प्रमाणे चौद रत्नो चक्रीने पूर्व पुण्यना योगथी प्राप्त थाय छे. ते दरेक रत्न हजार हजार यक्षोवडे सेवित होय छे. (५०१) बे हजार यक्षो चक्रवर्तीना पोताना देहना रक्षक होय छे. ते अने १४ रत्नना १४००० मळी कुल १६००० यक्षो चक्रीना सेवक होय छे. (२)

अथैवं सार्वभौमानां भवंति निधयो नव । नैसर्प्पः १ पांडुकश्चैव २ पिंगलः ३ सर्वरत्नकः ४ ॥ ३ ॥ महापद्मश्च ५ कालश्च ६ महाकाल ७ स्तथापरः । तथा माणवकः ८ शंखः ९ शाश्वता अक्षया अमी ॥ ४ ॥ पुस्तकानीह नित्यानि संति दिव्यानि तेषु च । आख्यातास्त्वखिला विश्व–स्थितिरेकमिदं मतं ॥ ५ ॥ मतांतरे तु तत्कल्प–पुस्तकप्रतिपादिताः । साक्षात्प्रादुर्भवंत्यर्था–स्तेषु तेषु निधिष्विह ॥ ६ ॥ आकरग्रामनगर–पत्तनानां निवेशनं । मडंबानां द्रोणमुख–स्कंधावाराट्टवेश्मनां ॥७॥ स्थापनाविधयः सर्वे वास्तुशास्त्रेऽधुनापि ये । दृश्यंते तत्पुस्तकानि संति नैसर्पके निधौ ॥ ८ ॥ तत्र वृत्त्यावृतो ग्रामो लोहाद्युद्भव आकरः । नगरं राजधानी स्या–द्रत्नयोनिश्च पत्तनं ॥ ९ ॥ जलस्थलपथोपेत–मिह द्रोणमुखं भवेत् । अर्द्धतृतीयक्रोशांत–र्ग्रामशून्यं मडंबकं ॥ १० ॥ इति प्रथमो निधिः ॥

दीनारनालिकेरादेः संख्येयस्य धनस्य यः । पारिच्छेद्यस्य मुक्तादेः प्रकारश्च समुद्भवे ॥ ११ ॥ प्रस्थादिमेयं यद्धान्यं तोल्यं यच्च गुडादिकं ।

तदुपरांत चक्रवर्तीने नव निधिओ होय छे. तेनां नाम–१ नैसर्प, २ पांडुक, ३ पिंगळ, ४ सर्वरत्नक, ५ महापद्म, ६ काळ, ७ महाकाळ, ८ माणवक ने ९ शंख. आ निधिओ शाश्वत ने अक्षय होय छे. (३–४) ते निधिओमां शाश्वत ने दिव्य पुस्तको होय छे. तेमां अखिल विश्वनी स्थिति लखेली होय छे एवो एक (कोइनो) मत छे. (५) मतांतरे तो ते कल्पपुस्तकमां प्रतिपादित एवा पदार्थो ते ते निधिमांथी साक्षात् प्रगट थाय छे. (६) तेमां खाण, ग्राम, नगर ने पत्तनोना निवेशन, मंडवको, द्रोणमुखो, स्कंधावार (छावणी), हाट अने घरोनी स्थापनानो बधो विषय तथा हाल जे वास्तुशास्त्रमां देखाय छे ते संबंधी पुस्तको नैसर्प नामना पहेला निधिमां होय छे. (७–८) तेमां वाडथी आवृत ते गाम कहेवाय, लोहादि धातु जेमांथी नीकळे ते आकर (खाण) कहेवाय, नगर ते राजधानी कहेवाय अने रत्नयोनि ते पत्तन कहेवाय. (९) जळ ने स्थळ बंने प्रकारना मार्गवाळा ते द्रोणमुख अने अढी गाउ फरतुं कोइ गाम न होय ते मडंबक समजवो. (१०) इति प्रथमो निधिः

धन, सोनैया ने नाळियेर के जे गणाय, मुक्ता विगेरेना प्रकार ते उद्भवती वखते पारिछेद्य, धान्य के जे प्रस्थादिवडे मपाय, गोळ विगेरे जे तोळाय ते सर्वनुं प्रमाण तेवा

तयोः सर्वं प्रमाणं च मानोन्मानं च तादृशं ॥ १२ ॥ शाल्यादिधान्यबीजानां वापार्हाणामनेकधा । उत्पत्तिपद्धतिः सर्वा दर्शिता पांडुके निधौ ॥ १३ ॥ इति द्वितीयः । विधा आभरणानां या नानास्त्रीपुरुषोचिताः । तुरंगाणां गजानां च ख्याताः पिंगलके निधौ ॥ १४ ॥ इति तृतीयः ॥ चक्रिणां यानि रत्नानि चक्रादीनि चतुर्दश । व्यावर्णिता तदुत्पत्तिः सर्वरत्ने महानिधौ ॥ १५ ॥ स्फातिमंति भवंत्येत–न्निधानस्य प्रभावतः । चतुर्दशापि रत्नानी–त्येवमाहुश्च केचन ॥ १६ ॥ इति चतुर्थः ॥ उत्पत्तिः सर्ववस्त्राणां रंगाद्यारचनापि च । ख्याता निधौ महापद्मे विधिश्च क्षालनादिकः ॥ १७ ॥ इति पंचमः ॥ कालज्ञानं निधौ काले ज्योतिःशास्त्रानुबंधि यत् । तथा वंशास्त्रयो येऽर्ह–च्चक्रभृत्सीरिशार्ङ्गिणां ॥ १८ ॥ तेषु वंशेषु यद्भूतं वर्त्तमानं च भावि यत् । शुभाशुभं तद्विज्ञेयं सर्वमस्मान्महानिधेः ॥ १९ ॥ कर्मणां कृषिवाणिज्या–दीनां शिल्पशतस्य च ॥ निरूपिता स्थितिःसर्वा–प्यस्मिन्नेव महानिधौ ॥ २० ॥

प्रकारनुं मानोन्मान अने वाववालायक शाल्यादि अनेक प्रकारना धान्यबीजनी अनेक प्रकारे उत्पत्तिनी पद्धति ते बधुं बीजा पांडुक निधिमां बतावेलुं छे (११–१३) इति द्वितीयः ॥ स्त्री–पुरुषोने उचित तेम ज अश्वने अने गजने उचित अनेक प्रकारना आभरणो संबंधी विधिओ त्रीजा पिंगलक निधिमां बतावेल छे. (१४) इति तृतीयः॥ चक्रीना चक्र विगेरे जे चौद रत्नो तेनी उत्पत्ति सर्वरत्न नामना चोथा निधिमां बतावेली छे. (१५) ए निधानना प्रभावथी चौद रत्नो घणा कांतिवाळा थाय छे, एम केटलाक कहे छे. (१६) इति चतुर्थः ॥ सर्व प्रकारना वस्त्रोनी उत्पत्ति, तेमने रंगवा विगेरेनी रचना तेम ज धोवा विगेरेनो विधि पांचमा महापद्म निधानमां बतावेलो छे.(१७) इति पंचमः ॥ काळ नामना छठ्ठा निधिमां काळज्ञान के जे ज्योतिःशास्त्रानुबंधी छे ते होय छे, तथा अरिहंत, चक्री, वासुदेव ने बलदेवना वंशो, ते वंशमां भूत, वर्तमान अने भविष्यकाळने लगतुं जे शुभाशुभ होय तेनुं जाणपणुं आ महानिधिमांथी थाय छे. (१८–१९) कृषि वाणिज्यादि कर्म अने सो शिल्प ते सर्वनी स्थिति (हकीकत) आ काळनिधिमां बतावेली छे. (२०) इति षष्ठः ॥ अनेक प्रकारनी लोहनी, रुपानी, सोनानी, चंद्रकांत

इति षष्ठः ॥ नानाविधस्य लोहस्य स्वर्णस्य रजतस्य च। मणीनां चंद्रकांतार्क–कांतादीनां महात्विषां ॥ २१ ॥ मुक्तानां स्फटिकानां च प्रवालानां य आकराः । तेषामुत्पत्तिराख्याता महाकाले महानिधौ ॥ २२ ॥ इति सप्तमः ॥ खड्गकुंतादिशस्त्राणां नानावरणवर्मणां । उत्पत्तिर्युद्धनीतिश्च सद्व्यूहरचनादिका ॥ २३ ॥ सामदानादिका दंड–नीतयो विविधाश्च याः । हाकाराद्याश्च ताः सर्वाः प्रोक्ता माणवके निधौ ॥ २४ ॥ ताः स्युर्हाकार १ माकार २ –धिक्काराः ३ परिभाषणं ४ । मंडले बंधनं ५ कारा–क्षेपणं ६ चांगखंडनं ७ ॥ २५ ॥ परिभाषणमाक्षेपा–न्मा गा इत्यादि शंसनं ॥ संरोध इंगिते क्षेत्रे मंडले बंध उच्यते ॥ २६ ॥ तथोक्तं स्थानांगे–' सत्तविहा दंडनीई पण्णत्ता, तं० हक्कारे १ मक्कारे २ धिक्कारे ३ परिभासे ४ मंडलिबंधे ५ चारत्ते ६ छविच्छेदे ७ ॥ इत्यष्टमः ॥ सर्वोऽपि नाट्यकरण–प्रकारो नाटकस्य च । अभिनेयप्रबंधस्य प्रकारा येऽप्यनेकशः ॥ २७ ॥ चतुर्विधस्य काव्यस्य तूर्यांगाणां च भूयसां । नानाविधानामुत्पत्तिः ख्याता शंखे महानिधौ ॥ २८ ॥ काव्यचातुर्विध्यं चैवं

सूर्यकांतादि महातेजवाळा मणिनी, मोतीनी, स्फटिकनी अने प्रवाळादिकनी जे खाणो तेनी उत्पत्ति महाकाळ नामना सातमा निधिमां बतावेली छे. (२१–२२) इति सप्तमः ॥ खड्ग अने भालादि शस्त्रोनी अने नानाप्रकारना बख्तरोनी उत्पत्ति, युद्धनीति अने उत्तम व्यूहरचना विगेरे तेम ज साम, दामादि विविध दंडनीति तथा हाकारादि सर्व नीतिओ माणवक नामना आठमा नीधिमां बतावेल छे. (२३–२४) ते नीतिओ आ प्रमाणे–१ हाकार, २ माकार, ३ धिकार, ४ परिभाषण, ५ मंडळमां बंधन, ६ काराक्षेपण ने ७ अंगखंडन. (२५) आमां परिभाषण ते आक्षेपवडे ' न जा ' इत्यादि कहेवुं ते. अने इंगितक्षेत्रमां जे संरोध ते मंडळे बंध समजवो. (२६) ते विषे स्थानांगसूत्रमां कह्युं छे के–' सात प्रकारनी दंडनीति कही छे. ते आ प्रकारे–हक्कार १, मक्कार २, धिक्कार ३, परिभासा ४, मंडलिबंध ५, चारक्षेपण ६ ने छविच्छेद ७.' इति अष्टमः ॥ सर्वे नाट्य करवाना प्रकारनी, अभिनय प्रबंधवाळा नाटकना अनेक प्रकारोनी, चार प्रकारना काव्यनी ने अनेक प्रकारना वाजित्रोनी विधि एम नानाप्रकारनी उत्पत्ति शंख नामना नवमा महानिधिमां बतावेली छे. (२७–२८) काव्यनुं त्रण प्रकारे चातुर्विध्य आ प्रमाणे–धर्म, अर्थ, काम ने मोक्ष ए

त्रेधा–धर्मार्थकाममोक्षाख्यं पुरुषार्थचतुष्टयं । काव्यं तत्प्रतिबद्धत्वा–द्बुधैरुक्तं चतुर्विधं ॥ २९ ॥ संस्कृतं प्राकृतं चाप–भ्रंशं संकीर्णकेति च । भाषाश्चतस्रस्तद्बद्धं भवेत्काव्यं चतुर्विधं ॥ ३० ॥ तत्र संस्कृतप्राकृते प्रतीते. अपभ्रंशो भवेत्तत्त–द्देशेषु शुद्धभाषितं । संकीर्णा सौरसेन्यादि–र्भाषा प्रोक्ता विचक्षणैः ॥ ३१ ॥ गद्यं पद्यं च गेयं च चौर्णं चेत्यथवा भिदः । तत्र स्याद्गद्यमच्छंदो–बद्धं बद्धं च तैः परं ॥ ३२ ॥ गांधर्वरीत्या यद्बद्धं गेयं गानोचितं हि तत् । चौर्णं भूरि बाहुलक–गमाव्ययनिपात-युक् ॥ ३३ ॥ इति नवमः ॥

नवयोजनविस्तीर्णा द्वादशयोजनायताः । उच्छ्रिता योजनान्यष्टा-वष्टचक्रप्रतिष्ठिताः ॥ ३४ ॥ सौवर्णा विविधै रत्नैः पूर्णा वैडूर्यरत्नजैः । कपाटैश्चारुरचना–रमणीयैरलंकृताः ॥ ३५ ॥ निधिनामसमाख्यानां पल्या-युष्कसुधाभुजां । आवासास्ते महर्द्धीनां सदा स्युर्जाह्नवीमुखे ॥ ३६ ॥ चक्रवर्तिनि चोत्पन्ने तद्भाग्येन वशीकृताः । वर्षं जित्वा वलमानं गृहान् प्रत्यनुयांति तं ॥ ३७ ॥ तथोक्तमृषभचरिते–इत्यूचुस्ते वयं गंगा–मुख-

---

चार पुरुषार्थसंबंधी जे काव्य ते तत्प्रतिबद्ध होवाथी पंडिताए चार प्रकारनुं कह्युं छे. (२९) संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश ने संकीर्णक–ए प्रमाणे जे चार भाषा तत्प्रतिबद्ध काव्य ते पण चतुर्विध कह्युं छे. (३०) तेमां संस्कृत अने प्राकृत भाषा तो प्रसिद्ध छे. ते ते देशमां शुद्ध भाषा तरीके गणाय ते अपभ्रंश अने शौरसेनादि जे भाषा ते संकीर्ण विचक्षणोए कहेल छे. (३१) वळी काव्यना गद्य, पद्य, गेय ने चौर्ण एम चार प्रकार पण कह्या छे. तेमां गद्य ते अछंदोबद्ध अने पद्य ते छंदोबद्ध. (३२) गांधर्व रीतिए जे बद्ध होय ते गानोचित गेय अने घणा बाहुलक, गम, अव्यय ने निपातवाळुं ते चौर्ण. इति नवमः ॥

ए निधानो नव योजन विस्तीर्ण, बार योजन आयत (लांबा), आठ योजन उंचा अने आठ चक्र (पैडा) उपर रहेल होय छे. (३४) वळी ते सुवर्णना होय छे, विविध रत्नोए पूर्ण होय छे, वैडूर्यरत्नना बनावेला कपाटो(बारणाओ)वडे चारु रचनानी रमणिकताथी अलंकृत होय छे. (३५) ते निधिना नाम समान नाम-वाळा, पल्योपमना आयुष्यवाळा अने महर्द्धिक एवा ते निधिना अधिष्ठाता देवोना आवासो गंगा नदीना मुख पासे होय छे. (३६) ज्यारे चक्री उत्पन्न थाय त्यारे तेना भाग्यवडे वशीकृत थयेला एवा ते निधि ते क्षेत्र जीतीने पाछा वळता एवा चक्रीनी पाछळ चाले छे. (३७) श्री ऋषभचरित्रमां कह्युं छे के ते निधिओ चक्रीने कहे छे के–' हे महाभाग्यवान

मागधवासिनः । आगतास्त्वां महाभाग त्वद्भाग्येन वशीकृताः ॥ ३८ ॥ पातालमार्गेणायांति तिष्ठंति च पुराद्बहिः । तेषां नगरतुल्यानां पुर्यामनवकाशतः ॥ ३९ ॥ एवं सेनाश्चतस्रोऽपि पत्त्यश्वेभरथात्मिकाः । पुर्यां न प्रविशंत्यंत–रवकाशविवर्जिताः ॥ ४० ॥ तथोक्तं जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रे– ' णवरि णव महाणिहीओ चत्तारि सेणाओ ण पविसंतीत्यादि ' लोके तु– महापद्मश्च १ पद्मश्च २ शंखो ३ मकर ४ कच्छपौ ५ । मुकुंद ६ कुंदौ ७ नीलश्च ८ चर्चश्च ९ निधयो नव ॥ १ ॥

चतुर्दश सहस्राणि यक्षा रत्नाधिदेवताः । द्वे सहस्रे चांगरक्षाः सहस्राः षोडशेति ते ॥ ४१ ॥ एकातपत्रं षट्खंड–राज्यं नगरनीवृतां । मौलिभृद्भूपतीनां च स्युर्द्वात्रिंशत्सहस्रकाः ॥ ४२ ॥ गजानां च रथानां च निःस्वानाना च वाजिनां । स्युः प्रत्येकंन चतुर–शीतिः शतसहस्रकाः ॥ ४३ ॥ ऋतुकल्याणिकानां स्युः पुरंध्रीणां सहस्रकाः । द्वात्रिंशतश्च सुस्पर्शाः सर्वर्त्तुषु सुखावहाः ॥ ४४ ॥ देशाधिपानां कन्या या उद्वा-

अमे गंगाना मुख पासे रहेनारा छीए अने तमारा भाग्यथी वश थयेला अमे तमारी पासे आव्या छीए. (३८) तेओ पाताळ मार्गे चक्रवर्तीनी पाछल चाले छे अने नगरनी बहार रहे छे, केमके राजधानीना प्रमाण जेटला विस्तारवाळा ते एकेक निधान होवाथी तेनो नगरमां निवास शी रीते थइ शके ? (३९) ते ज रीते चक्रवर्तीनी सेना गज, अश्व, रथ अने पदातिरूप चार प्रकारनी छे ते पण तेने रहेवा जेटलो नगरमां अवकाश न होवाथी नगरीमां प्रवेश करती ज नथी. (४०) जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रमां कह्युं छे के–' एटलुं विशेष के नवनिधि ने चार प्रकारनी सेना नगरमां प्रवेश करती नथी. ' लोकिकमां " १ महापद्म, २ पद्म, ३ शंख, ४ मकर, ५ कच्छप, ६ मुकुंद, ७ कुंद, ८ नील अने ९ चर्च-ए नामना नव निधि कह्या छे. "

चौद हजार चौद रत्नोना अधिष्ठायक यक्षो अने बे हजार चक्रीना अंगरक्षक यक्षो एम कुल १६ हजार यक्षो होय छे.' (४१) एकातपत्रवाळुं छ खंडनुं राज्य होय छे. नगरीओ, देशो ने मुकुटधारी राजाओ प्रत्येक ३२००० होय छे. (४२) हाथी, घोडा, रथ अने वाजित्रो–प्रत्येक ८४ लाख ८४ लाख होय छे. (४३) ऋतुकन्याणी एवी पुरंध्रीओ ३२००० सारा स्पर्शवाळी अने सर्व ऋतुमां सुख आपनारी होय छे. (४४)

१–५०१ मो श्लोक आ ज भाववाळो छे. २ ऋतु एटले अटकाव नियमित आवतो होवाथी कल्याणकारक.

श्चक्रवर्त्तिना। तासामपि सहस्राणि द्वात्रिंशत्स्ववधूश्रियां ॥ ४५ ॥ पुरंध्रीणां भवंत्येवं चतुष्षष्टिः सहस्रकाः। भवंति द्विगुणास्ताभ्यः सुरूपा वारयोषितः ॥ ४६ ॥ एकं लक्षं द्विनवति–सहस्राभ्यधिकं ततः। अंतःपुरीणां निर्दिष्टं भोगार्थं चक्रवर्त्तिनः ॥ ४७ ॥ द्वात्रिंशत्पात्रबद्धानां नाटकानां सहस्रकाः। द्वात्रिंशद् ढौकितानां स्व–कन्योद्वाहेऽखिलैर्नृपैः ॥ ४८ ॥ ग्रामाणां च पदातीनां कोट्यः षण्णवतिः स्मृताः। रत्नस्वर्णाद्याकराणां विंशतिः स्युः सहस्रकाः ॥४९॥ स्तोत्रे तु षोडश सहस्रा रत्नाकराणामुक्ताः संतीति. द्वासप्ततिः पुरवर–सहस्राणि भवंत्यथ। सहस्रा नवनवतिः श्रुता द्रोणमुखा अपि ॥ ५० ॥ अष्टचत्वारिंशदेवं पत्तनानां सहस्रकाः। कर्बटानां मडंबानां सहस्रा जिनसंमिताः ॥ ५१ ॥ द्वीपांतराणां खेटानां स्युः षोडश सहस्रकाः। भवंति कोटयस्तिस्रो हलानामथ गंत्रिणां ॥ ५२ ॥ संवाहानां सहस्राणि चतुर्दश भवंत्यथ। वेलाकुलसहस्राश्च–षट्पंचाशत्प्रकीर्त्तिताः ॥ ५३ ॥ कोटयोऽष्टादशाश्वानां महतां परिकीर्त्तिताः। अभ्रंलिहानेकवर्ण–ध्वजानां दश कोटयः ॥ ५४ ॥ महा-

---

देशाधिपोनी जे कन्या चक्रवर्त्ती परणे छे. तेनी संख्या पण ३२००० नी होय छे. ते देवांगनाओने पण जीते एवी रूपवंत होय छे. (४५) ए रीते एकंदर ६४०००स्त्रीओ होय छे अने ते करतां बमणी १२८००० रूपवंत एवी वारांगनाओ होय छे. (४६) ए प्रमाणे १९२००० अंतःपुरीओ चक्रवर्त्तीने भोगने माटे कहेली छे. (४७) बत्रीशबद्ध एवा नाटको ३२००० होय छे, ते दरेक राजाओए पोतपोतानी कन्याओना विवाह वखते चक्रीने अर्पण करेला होय छे. (४८) पदाति ९६ क्रोड होय छे, ९६ क्रोड ग्राम होय छे अने वीश हजार रत्न अने स्वर्णादिकनी खाणो होय छे. (४९) (एक स्तोत्रमां सोळ हजार रत्नोनी खाणो कहेली छे) बोंतेर हजार मोटा नगरो होय छे, नवाणु हजार द्रोणमुखो होय छे, (५०) अडतालीश हजार पत्तन होय छे, चोवीश हजार कर्बटो ने मडंबो होय छे. (५१) बीजा द्वीपो ने खेडाओ सोळ–सोळ हजार होय छे. त्रण क्रोड हळ अने गाडां होय छे. (५२) संवाह चौद हजार होय छे, अने वेळाकुळ छपन हजार होय छे. (५३) अढार क्रोड मोटा अश्वो होय छे अने आकाश सुधी पहोंचे एवा अनेक वर्णवाळी दश क्रोड ध्वजाओ होय छे. (५४) महावंदी एवा वंदीओ ६४ हजार होय छे.

बंदिबंदिनां च चतुःषष्टिः सहस्रकाः । तथा गोकुलकोट्येका भोज्यं कल्याणनामकं ॥ ५५ ॥ अंगमर्द्दकसंवाहि–सूदभूषणधारिणां । षट्त्रिंशत्कोटयस्तिस्रो लक्षा भोजनवेश्मनां ॥ ५६ ॥ आतोद्यधारिणां तिस्रो लक्षा दीपकधारिणां । पंचलक्षीत्यादि नाना संपत्स्याच्चक्रवर्त्तिनां ॥५७॥ इयं च चक्रवर्त्तिनां समृद्धिः कियती श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रानुसारेण, शेषा च चक्रिसमृद्धिगर्भितश्रीशांतिनाथस्तोत्रानुसारेणेति ज्ञेयं. हारो मुक्तामणिमयः स्याच्चतुःषष्टियष्टिकः । महार्घोऽत्यंतरुचिरः सर्वेषामपि चक्रिणां ॥५८॥

यथागममिति प्रोक्तं स्वरूपं चक्रवर्त्तिनां । अथ तद्वासुदेवानां प्रोच्यते सीरिणामपि ॥ ५९ ॥ एतेऽपि प्राग्भवाचीर्ण–तपःसंयमसंवरैः । अर्जितोत्तमकर्माण उत्पद्यंते सुधाशिषु ॥६०॥ तेभ्यश्च्युत्वोच्चगोत्रेषु महर्द्धिकमहीभृतां । कुलेषु ते प्रजायंते न तु नीचाल्पसंपदां ॥ ६१ ॥ वैमानिकेभ्य एवात्र वासुदेवा भवंति ते । अवश्यं तत्पदप्राप्त्यै प्राक्कल्पितनिदानकाः ॥ ६२ ॥ अत एवातिगार्ध्येन भुक्त्वा भोगाननुत्तरान् । प्रयांति

एक क्रोड गोकुळ होय छे अने कल्याण नामनुं भोजन होय छे. (५५) अंगमर्दक, संवाहक, रसोइआ अने आभूषण जाळवनारा छत्रीश क्रोड होय छे. त्रण लाख भोजनशाळा होय छे. (५६) त्रण लाख वाजित्रधारी अने पांच लाख दीवीना धरनारा होय छे. इत्यादि अनेक प्रकारनी संपत्ति चक्रवर्तीने होय छे. (५७) आ चक्रवर्तीनी ऋद्धि अमे केटलीक जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिने अनुसारे अने बाकीनी चक्रीसमृद्धिगर्भित श्रीशांतिनाथना स्तोत्रने अनुसारे कही छे. सर्व चक्रवर्तीओने चोसठ सरनो मुक्तामणिमय हार होय छे. ते हार मोटी कींमतवाळो अने अत्यंत मनोहर होय छे. (५८) एम अर्थथी चोथा अंगमां कह्युं छे. आ प्रमाणे यथागम[1] चक्रवर्त्तीनुं स्वरूप कह्युं.

हवे वासुदेव ने बळदेवनुं स्वरूप कहीए छीए. (५९) ए वासुदेव ने बळदेव पण पूर्वभवे आचरेला तप, संयम अने संवरवडे उत्तम कर्मने उपार्जन करीने देवलोकमां उत्पन्न थयेला होय छे. (६०) त्यांथी च्यवीने उच्चगोत्रमां अने महर्द्धिक एवा राजाना कुळमां उत्पन्न थाय छे; पण नीचकुळमां के अल्प संपदावाळाने त्यां उपजता नथी. (६१) वासुदेवो वैमानिकमांथी आवीने ज उपजे छे अने तेओ ते पदनी प्राप्तिने माटे पूर्वभवमां अवश्य नियाणुं करेला ज होय छे. (६२) तेथी अति

१ आगममां कह्या प्रमाणे.

नरकेष्वेव ते व्रताऽप्रभविष्णवः ॥ ६३ ॥ बलदेवास्तु देवेभ्यः सर्वेभ्योऽपि भवंति ते । प्राग्भवे निर्निदानत्वा–दंते स्वीकृत्य संयमं ॥ ६४ ॥ स्वर्गं यांत्यथवा मुक्ति–मेषां वैराग्यवासना । खिन्नानां जायते विष्णौ विपन्ने प्रेष्ठबांधवे ॥ ६५ ॥ यत्तु श्रीमहानिशीथे पंचमाध्ययने कुवलयाचार्यप्रबंधे कुवलयप्रभाचार्यो मृत्वा व्यंतरो बभूव १, ततः सूनाधिपो २, मृत्वा सप्तमपृथिव्यां ३, ततो मृगजातिः ४, ततो महिष ५, स्ततो मनुष्य ६, स्ततो वासुदेव इति मनुष्यभवादनंतरमागतस्य वासुदेवत्वमुक्तं तन्मतांतरमिति ज्ञेयं

एतौ च द्वौ विमात्रेयौ भवतो भ्रातरौ मिथः । जगत्यनुत्तरस्नेहौ हली ज्येष्ठो हरिर्लघुः ॥ ६६ ॥ एते जितत्रिखंडाः स्यु–श्चक्रितोऽर्द्धसमृद्धयः । महीभृतां सहस्रैश्च सेव्याः षोडशभिस्सदा ॥ ६७ ॥ त्यक्तनिष्कारणक्रोधाः सानुक्रोशा अमत्सराः । प्रकृत्यैव परगुण–ग्राहिणो गतचापलाः

गृद्धतावडे अनुत्तर एवा भोगने भोगवीने नरकमां ज जाय छे. व्रत लेवाने समर्थ तेओ थता ज नथी. (६३) बळदेव चारे प्रकारना देवोमांथी आवीने उपजे छे. तेओ पूर्वभवमां नियाणुं कर्या विनाना होय छे तेथी ते अंते संयम ग्रहण करीने स्वर्गे अथवा मोक्षे जाय छे; परंतु एमने वैराग्य वासना वहाला बंधुरूप विष्णु (वासुदेव) मरण पाम्या पछी ते कार्यथी खेद पामे छे त्यारे थाय छे. (६४–६५) श्रीमहानिशीथना पांचमा अध्ययनमां कुवलयाचार्यना प्रबंधमां कुवलयाचार्य मरण पामीने व्यंतर थाय छे, त्यांथी च्यवी कसाइखानाना स्वामी थाय छे, मरीने सातमी नरके जाय छे, त्यांथी नीकळी मृग थाय छे, पछी महिष थाय छे, पछी मनुष्य थाय छे अने पछी वासुदेव थाय छे एम कह्युं छे. एटले के मनुष्यमांथी अनंतर वासुदेव थवानुं कह्युं छे ते मतांतर जाणवुं.

ए बंने (बळदेव ने वासुदेव) जुदी जुदी माताना पुत्ररूपे भाइओ थाय छे, परंतु तेमनो स्नेह जगतमां अनुत्तर कह्यो छे. तेमां बळदेव मोटा होय छे ने वासुदेव नाना होय छे. (६६) एओ त्रण खंडने जीते छे अने चक्रवर्ती करतां अर्ध समृद्धिवाळा होय छे. तेओ निरंतर सोळ हजार राजाओथी सेवाय छे. (६७) वासुदेव ने बळदेव बंने निष्कारण क्रोध नहीं करनारा, अनुक्रोशवाळा[1], मत्सरविनाना, स्वभावे ज परगुणने

---

[1] दयायुक्त चित्तवाळा.

॥६८॥ गंभीरमधुरस्वल्पा–लापाः सदुचितस्मिताः। सत्यसंपूर्णवचनाः शरणा-गतवत्सलाः ॥ ६९ ॥ लक्षणानां शतेनाष्टा–धिकेनांचितभूघनाः । उत्कृष्ट-सत्त्वाः संग्राम–शूराः प्राप्तजयाः सदा ॥ ७० ॥ प्रचंडाज्ञा अनलसाः प्रति-पक्षाऽसहिष्णवः । सितच्छत्रेण सततं चामराभ्यां च शोभिताः ॥ ७१ ॥ श्रीवत्सलांछनाः पद्म–नयनाः प्रियदर्शनाः । यशःकीर्तिसुधापूर्ण–त्रैलो-क्या गजगामिनः ॥ ७२ ॥ श्यामलद्युतयस्तत्र वासुदेवा महौजसः । पीत-कौशेयवसना नरसिंहाः स्फुरद्रुचः ॥ ७३ ॥ रत्नेन कौस्तुभाख्येन सदा-लंकृतवक्षसः । उदात्तसत्त्वाः संग्राम–सोत्साहा गरुडध्वजाः ॥ ७४ ॥ तथोक्तं–' जुद्धसूरा वासुदेवा ' पांचजन्याभिधः शंखः १ स्याच्चक्रं च सुदर्शनं २ । गदा कौमोदिकी ३ चापं शार्ङ्गं ४ खड्गस्तु नंदकः ५ ॥७५। मणिश्च ६ वनमाला ७ च सप्तरत्नी भवेदियं। उत्कृष्टा वासुदेवानां सदा देवैरधिष्ठिता ॥ ७६ ॥ तत्राशक्यो वादयितुं शंखोऽन्येन हरिं विना । श्रुत्वैवास्य ध्वनिं दृप्तं वैरिसैन्यं पलायते ॥ ७७॥ दंडरत्नवदुत्कृष्ट–प्रभा-

---

ग्रहण करनारा, चपळता विनाना, गंभीर, मधुर अने स्वल्प आलापवाळा, सारुं अने उचित स्मित करनारा, सत्यथी संपूर्ण वचनवाळा, शरणागतना वत्सल, एक सो आठ लक्षणयुक्त शरीरवाळा, उत्कृष्ट सत्त्ववाळा, संग्रामशूर, निरंतर जयना मेळवनारा, प्रचंड आज्ञावाळा, आळसविनाना, प्रतिपक्षने सहन नहीं करनारा, श्वेत छत्र अने चामरोवडे शोभित, श्रीवत्सना लंछनवाळा, कमळसमान नेत्रवाळा, प्रियदर्शनवाळा, यशःकीर्तिरूप सुधावडे त्रैलोक्यने पूर्ण करनारा अने हाथी सरखी गतिवाळा होय छे. (६८–७२)

तेमां वासुदेव श्याम कांतिवाळा, मोटा पराक्रमवाळा, पीळा वर्णना कौशेय (रेशमी) वस्त्रने धारण करनारा, नरमां सिंहसमान अने स्फुरायमान कांतिवाळा होय छे. (७३) ते निरंतर कौस्तुभ रत्नवडे अलंकृत वक्षःस्थळवाळा, उदात्त सत्त्ववाळा, संग्राममां उत्साहवाळा अने गरुडना चिन्हयुक्त ध्वजावाळा होय छे. (७४) ' जुद्धसूरा वासुदेवा ' एम कह्युं छे. १ पांचजन्य शंख, २ सुदर्शन चक्र, ३ कौमोदिकी गदा, ४ शार्ङ्ग धनुष्य, ५ नंदक खड्ग, ६ कौस्तुभ मणि ने ७ वनमाळा—आ सात सदा देवोए अधिष्ठित एवा रत्नो उत्कृष्टपणे वासुदेवोने होय छे. (७५–७६) तेमां शंख छे ते वासुदेव सिवाय बीजा कोइ वगाडी न शके एवो होय छे. तेना शब्दने सांभळतां ज दर्पधारी वैरीनुं सैन्य पलायन करी जाय छे. (७७) दंडरत्ननी जेवी उत्कृष्ट प्रभाववाळी, बीजाथी न उपाडी शकाय तेवी अने

वाढ्या परेण च। दुर्वहा स्याद्गदा दृप्य-द्वैरिदोर्मदखंडिनी ॥७८॥ दुराकर्ष धनुः शार्ङ्ग-मन्येनाद्भुतशक्तिकं। पलायते शत्रुसैन्यं यस्य टंकारवादपि ॥ ७९ ॥ श्रूयते धातकीखंडं गते चरमशार्ङ्गिणि। द्रौपदीहारिणः सैन्ये पद्मोत्तरमहीपतेः ॥ ८० ॥ पांचजन्यस्य शब्देन तृतीयोंशः पलायितः। शेषो नष्टस्तृतीयोंशो धनुष्टंकारवेण च ॥ ८१ ॥ वनमालाभिधा च स्रक् सदा हृदयवर्त्तिनी। अम्लाना सततं सर्व-र्तुकपुष्पातिसौरभा ॥ ८२ ॥ चक्रादीनां च रत्नानां वर्णनं प्राग् निरूपितं। यथासंभवमत्रापि योजनीयं मनीषिभिः ॥ ८३ ॥ प्रश्नव्याकरणसूत्रे तु वासुदेववर्णने शक्तिः शस्त्रं दृश्यते, मणिश्चात्र न दृश्यते, तथा च तद्ग्रंथः— 'संखचक्कगयसत्तिणंदगधरा इति' शक्तिश्च त्रिशूलविशेष इति तद्वृत्तौ.

भवंति बलदेवास्तु गौरांगा नीलवाससः। योषिद्दृक्कार्मणीभूत-रूपास्तालध्वजान्विताः ॥ ८४ ॥ एषां स्युस्त्रीणि रत्नानि सेवितानि सुरैः सदा। धनुः परैरनाकर्ष्यं मुशलं च हलं वरं ॥ ८५ ॥ त्रीण्यप्यमूनि

दर्पधारी वैरीना भुजामदने खंडन करनारी गदा होय छे. (७८) शार्ङ्ग धनुष्य बीजा चढावी न शके तेवुं, अद्भुत शक्तिवाळुं अने जेना टंकारवमात्रथी पण शत्रुसैन्य पलायन करी जाय एवुं होय छे. (७९) सांभळीए छीए के छेल्ला वासुदेव (कृष्ण) धातकी खंडमां गया हता त्यां द्रौपदीनुं हरण करनारा पद्मोत्तर राजाना सैन्यनो त्रीजो भाग पांचजन्य (शंख) ना शब्दथी अने त्रीजो भाग शार्ङ्ग धनुष्यना टंकारवथी युद्ध क्षेत्रमांथी पलायन करी गयो हतो. (८०–८१) वनमाळा नामनी माळा निरंतर वासुदेवना हृदयवर्त्ती होय छे, ते म्लान थती नथी अने सतत सर्व ऋतु संबंधी पुष्पोनी अत्यंत सुगंधवाळी होय छे. (८२) चक्रादि रत्नोनुं वर्णन जे पूर्वे वर्णवेलुं छे ते यथासंभव अहीं पण बुद्धिमानोए जोडी देवुं. (८३) श्री प्रश्नव्याकरणसूत्रमां वासुदेवना वर्णनमां शक्ति नामनुं शस्त्र देखाय छे अने मणि देखातुं नथी. तेनो पाठ आ प्रमाणे—' शंख चक्र, गदा, शक्ति ने नंदकने धारण करनारा—' आमां शक्ति एटले त्रिशूळ समजवु एम तेनी वृत्तिमां कह्युं छे.

बलदेव गौर शरीरवाळा अने नील वस्त्रवाळा, स्त्रीओनी दृष्टिने कार्मणरूप एवा अद्भुत रूपवाळा, अने तालना चिन्हयुक्त ध्वजावाळा होय छे. (८४) एमने त्रण रत्नो देवोवडे सेवित होय छे. बीजा खेंची न शके एवुं धनुष्य, श्रेष्ठ एवुं हळ अने मूशळ (८५)

द्विषतां पटूनि मदभेदने । दुर्लभानि सुराणाम–प्यमोघानि च सर्वदा ॥ ८६ ॥ उक्तानि चैतानि रामचरित्रेऽनंगलवणमदनांकुशसंग्रामे पद्मस्य बलदेवस्य. तथाहि–पद्मनाभोऽप्यभाषिष्ट ममापि शिथिलायते । धनुः श्वभ्रे स्थितमिव वज्रावर्त्त न कार्यकृत् ॥ ८७ ॥ अभून्मुशलरत्नं च वैरि-निर्दलनक्षमं । कणखंडनमात्रार्ह–मेवैतदपि संप्रति ॥ ८८ ॥ अनंकुशांकु-शीभूतं यद्दृष्टनृपदंतिनां । हलरत्नं तदप्येत–द्भूद्भूपाटनोचितं ॥ ८९ ॥ सदा यक्षै रक्षितानां विपक्षक्षयकारिणां । तेषामेव ममास्त्राणा–मवस्था त्वियमागता ॥ ९० ॥ इत्यादि.

स्युः षोडश सहस्राणि विष्णूनां प्राणवल्लभाः । जगदुत्तरसौभाग्य-शालिन्यः स्ववधूसमाः ॥ ९१ ॥ तथोक्तं दशमांगे–' सोलसदेवीसहस्स वरनयणहिययदइया ' इति, अंतकृत्सूत्रस्याप्यादौ कृष्णवर्णने ' रुप्पि-णीपामोक्खाणं सोलसण्हं देवीसहस्साणं इति ' केचिद्वासुदेवानामर्द्धच-क्रित्वेन द्वात्रिंशत्सहस्राणि प्रेयसीनामहुः. तथोक्तं षष्ठांगे पंचमाध्ययने ' रूप्पिणीपामोक्खाणं बत्तीसाए महिलासाहस्सीणं ' इति ज्ञेयं.

आ त्रणे शत्रुना मदने भेदवामां प्रवीण होय छे. देवोने पण दुर्लभ होय छे अने सदा अमोघ होय छे. (८६) आ हकीकत रामचरित्रमां अनंगलवण ने मदनांकुश साथेना संग्राममां पद्म (राम) नामना बळदेवना अधिकारमां कहेल छे के–पद्मनाभ (रामचंद्र) पण लक्ष्मणने कहे छे के–मारुं आ वज्रावर्त धनुष्य पण अत्यारे शिथिल थाय छे अने खाडामां पडेलुं होय तेम कार्य करतुं नथी. (८७) जे मूशळरत्न वैरीओने दळी नांखवाने समर्थ हतुं ते अत्यारे अनाज खांडवाने योग्य थइ गयुं छे. (८८) अन्य राजाओ-रूप हाथीओने अंकुशरूप नहीं छतां पण अंकुशरूप थतुं हळरत्न अत्यारे जमीन खोदवा योग्य थइ गयुं छे. (८९) निरंतर यक्षोथी रक्षण करातां अने विपक्षनो क्षय करनारा एवा ते ज मारा शस्त्रोनी आवी अवस्था थइ गइ छे. ' इत्यादि. (९०)

वासुदेवने १६००० स्त्रीओ होय छे ते जगतमां उत्तम सौभाग्यवडे शोभती अने देवांगनाओ जेवी होय छे. (९१) दशमा अंगमां कह्युं छे के—' श्रेष्ठ एवी नयनने तेम ज हृदयने वहाली सोळ हजार देवी(राणी)ओ होय छे. ' श्रीअंतकृतसूत्रमां पण कृष्णना वर्णनमां कह्युं छे के—' रुक्मिणी प्रमुख सोळ हजार देवीओना ' इति तथा केटलाक वासुदेवोने अर्धचक्रीपणाथी ३२००० स्त्रीओ कहे छे. ते ज प्रमाणे छठ्ठा अंगना पांचमा अध्ययनमां कह्युं छे के—' रुक्मिणी विगेरे बत्रीश हजार महिलाओना ' इति.

सीरिणां तु प्रियासंख्या–नैयत्यं नोपलभ्यते । ज्ञेयो दिग्विजयोऽमीषां कथंचिच्चक्रवर्त्तिवत् ॥ ९२ ॥ षोडशाशेषसैन्याढ्याः पार्थिवानां सहस्रकाः । आकर्षंत्यंधुकंठस्थं बद्धं शृंखलया हरिं ॥ ९३ ॥ नौष्ठोपपीडं स्वं स्थाम प्रयुंजाना अपीशते । पदाच्चालयितुं ते तं महीधरमिव द्विपाः ॥ ९४ ॥ स तु तान् शृंखलाप्रांत–विलग्नान् कीटकानिव । तांबूलभक्षणव्याजा–दाकर्षत्येकहेलया ॥ ९५ ॥ बलमेवंविधं कोटि–शिलोत्क्षेपक्षमं भवेत् । विष्णूनां द्विगुणं तेभ्यो बलं स्याच्चक्रवर्त्तिनां ॥९६॥ अगोचरं जगद्वाचा–मनंतं बलमर्हतां । प्रकंप्य मेरुं बाल्येऽपि महावीरेण दर्शितं ॥९७॥

घनश्यामस्निग्धवर्णा–धिष्ठिता देवतागणैः । शिला कोटिशिला याम्य–भरतार्द्धे भवेदिह ॥९८॥ चंदनैः कुंकुमोपेतै–रर्चिता कुसुमोत्करैः । सा शिला भाति देवीव भूषणैर्भूषिताभितः ॥ ९९ ॥ सिंधुदेशे दशार्णाद्रि–समीपे वा मतांतरे । योजनायामविष्कंभो–च्छ्रया सास्ति नित्यया ॥ ६०० ॥ आद्यं मतं पद्मचरित्रे, द्वितीयं विचारसप्ततौ.

बळदेवनी प्रिया संबंधी चोक्स संख्या जणाती नथी. एमनो दिग्विजय कथंचित् चक्रवर्त्ती प्रमाणे समजी लेवो. (९२) वासुदेवना बळ उपर दृष्टांत आपे छे—सोळ हजार राजाओ पोताना सर्व सैन्य साथे एक कुवाने सामे कांठे रहेला वासुदेवने सांकळवडे बांधीने होठ भींसीने पोताना बळनो उपयोग करे तो पण जेम हाथी पर्वतने चलावी शके नही तेम एक पगला जेटलुं पण वासुदेवने चलावी शके नहीं, (९३–९४) अने वासुदेव तांबुल खावाने मिषे एक हेलावडे आकर्षण करे तो ते शृंखलाना प्रांत भाग साथे वळगेला ते सर्वने कीडानी जेम पाडी देय. (९५) आ प्रकारनुं वासुदेवोनुं बळ कोटिशिलाने उपाडवाने समर्थ थाय छे. वासुदेवथी बमणुं बळ चक्रवर्तीनुं होय छे, (९६) अने जगतनी वाणीने अगोचर अनंतबळ अरिहंतनुं होय छे के जे बळ बाळपणामां मेरुने कंपावीने महावीरे बताव्युं हतुं. (९७)

मेघना जेवा अत्यंत श्याम ने स्निग्धवर्णवाळी, देवताओना समूहथी अधिष्ठित कोटिशिला नामनी शिला दक्षिण भरतार्धमां होय छे. (९८) केशरयुक्त चंदन अने पुष्पना समूहथी पूजेली ते शिला चार बाजुथी भूषणोवडे भूषित देवीनी जेवी शोभी रहेली होय छे. (९९) मतांतरे ते सिंधु देशमां दशार्ण पर्वतनी समीपे होय छे. एक योजन लंबाइ, पहोळाइ अने उंचाइवाळी ते शिला शाश्वती होय छे. (६००) पहेलो मत पद्मचरित्रनो छे अने बीजो मत विचारसप्ततिनो छे.

विजित्य भरतस्यार्द्ध–मत्र सर्वेऽपि केशवाः । निजं बलं परीक्षंते समुदस्य शिलामिमां ॥ १ ॥ इमां वामभुजस्याग्रे नयत्यादिमकेशवः । द्वैतीयीकश्च शिरसि कंठपीठे तृतीयकः ॥ २ ॥ वक्षःस्थले तुरीयश्च पंचमो जठरोपरि । षष्ठः कटितटेऽथोरु–प्रदेशे सप्तमो हरिः ॥ ३ ॥ आजानु चाष्टमोंत्यश्च कंथचिज्जानुसंनिधौ । क्रमोऽयमवसर्पिण्या–मुत्सर्पिण्यां विपर्ययः ॥ ४ ॥ गणभृच्छांतिनाथस्या–मुष्यां चक्रायुधाभिधः । आदौ सिद्धिं गतोऽनेकैः कलितः साधुसिंधुरैः ॥ ५ ॥ ततस्तस्यैव गण-भृ–त्पुंगवस्य क्रमादिह । द्वात्रिंशता युगैः सिद्धाः संख्येया मुनिकोटयः ॥ ६ ॥ ततः श्रीकुंथुनाथस्याष्टाविंशत्या युगैः सह । सिद्धाः शिलायामेतस्यां संख्येया मुनिकोटयः ॥ ७ ॥ अरस्य चतुर्विंशत्या युगैर्द्वादश कोटयः । श्रीमल्लेर्युगविंशत्या मुनीनां कोटयश्च षट् ॥ ८ ॥ तिस्रः कोट्यः सुव्रतस्य तीर्थे कोटिर्नमिप्रभोः । सिद्धा मुनीनामित्येषा नाम्ना सिद्धशिलाप्यहो ॥९॥

स्वरूपं प्रतिविष्णूना–मप्यूह्यं वासुदेववत् । पर्यंते स्वायुषोऽमीषां

वधा वासुदेवो भरतार्धने जीतीने अहीं आवे छे, अने आ शिलाने उपाडीने पोताना बळनी परीक्षा करे छे. (१) तेमां प्रथम वासुदेव आ शिलाने उंचा करेला डावा हाथना अग्रभाग सुधी उंची करे छे, बीजा मस्तक सुधी, त्रीजा कंठ सुधी, चोथा वक्षःस्थळ सुधी, पांचमा जठर सुधी, छट्ठा कटितट सुधी, सातमा उरुप्रदेश सुधी, आठमा जानु सुधी अने नवमा कांइक जानुथी नीचे सुधी उंची करे छे. अवसर्पिणीनो आ क्रम समजवो, उत्सर्पिणीमां तेथी विपर्यय समजवो. (२–४) आ कोटिशिला उपर शांतिनाथ प्रभुना गणधर चक्रायुध अनेक मुनिमहाराज साथे प्रथम सिद्धिपदने पामेला छे. (५) ते ज गणधरश्रेष्ठथी बत्रीश पाट सुधी संख्याता क्रोडो मुनि अहीं सिद्ध थया छे. (६) त्यारपछी कुंथुनाथ प्रभुना मुख्य गणधर अने तेना २८ पाटो सहित संख्याता क्रोडो मुनि अहीं सिद्ध थया छे. (७) अरनाथ प्रभुना मुख्य गणधरना २४ पाट साथे १२ क्रोड मुनि अहीं सिद्ध थया छे. मल्लिनाथ प्रभुना मुख्य गणधरना २० पाट साथे छ क्रोड मुनि अहीं सिद्ध थया छे. (८) मुनिसुव्रतस्वामीना तीर्थमां त्रण क्रोड ने नमिनाथना तीर्थमां एक क्रोड मुनि अहीं सिद्ध थया छे; तेथी आ शिलानुं बीजुं नाम सिद्धशिला पण छे. (९)

प्रतिवासुदेवनुं स्वरूप पण वासुदेव प्रमाणे समजवुं. तेमना आयुष्यना छेवटना भागे

विष्णुर्जगति जृंभते ॥ १० ॥ मिथश्चोपस्थिते युद्धे मुक्तं विष्णुजिघांसया । जायते विष्णुसाच्चक्रं लंचयेव वशीकृतं ॥ ११ ॥ तेनैवाथ स्वशस्त्रेण चक्रेणामोघशक्तिना । प्रयाति नरकं मृत्वा हरिणा छिन्नमस्तकाः ॥ १२ ॥ नवानां वासुदेवानां काले स्युर्नारदा नव । तेषां मनःप्रिया नाना-देशवार्त्तादिशंसिनः ॥ १३ ॥ तथोक्तं रामचरित्रे तत्कालीननारदस्वरूपं-मरुत्तो रावणं नत्वो-वाच कोऽयं कृपानिधिः । पापादमुष्माद्यो ह्यस्मां-स्त्वया स्वामिन्न्यवारयत् ॥ १४ ॥ आचख्यौ रावणोऽप्यासी-न्नाम्ना ब्रह्मरुचिर्द्विजः । तापसस्याभवत्तस्य भार्या कूर्मीति गुर्व्यभूत् ॥ १५ ॥ तत्रेयुः साधवोऽन्येद्यु-स्तेष्वेकः साधुरब्रवीत् । भवभीत्या गृहवास-स्त्यक्तो यत्साधु साधु तत् ॥ १६ ॥ भूयः सदारसंगस्य विषयैर्लुब्धचेतसः । गृहवासाद्वनवासः कथं नाम विशिष्यते ? ॥ १७ ॥ श्रुत्वा ब्रह्मरुचिस्तत्तु प्रपन्नजिनशासनः । तदैव प्राव्रजत्सा च कूर्म्यभूच्छ्राविका परा ॥ १८ ॥ मिथ्यात्ववर्जिता तत्र सा वसंत्याश्रमे सुतं । सुषुवे नारदं

वासुदेव तेने जीते छे अने राज्य मेळवे छे. (१०) ते बंनेना परस्परना युद्धमां विष्णुने मारवा प्रतिविष्णु चक्र मूके छे. एटले ते चक्र लांचथी वश करेला अधिकारीनी जेम वासुदेवनुं थइ जाय छे. (११) ते ज प्रतिवासुदेवना शस्त्ररूप अमोघ शक्तिवाळुं चक्र वासुदेव प्रतिवासुदेवपर मूके छे. ते तेनुं मस्तक कापी नांखे छे. एटले ते मरण पामीने नरके जाय छे (१२)

नवे वासुदेवना वखतमां नव नारदो थाय छे. तेओ वासुदेवोना मनने प्रिय होय छे अने विविध देशनी वार्तादिक तेमने कहेनारा होय छे. (१३) श्री रामचरित्रमां तेना वखतमां थयेला नारदनुं स्वरूप आ प्रमाणे कह्युं छे-" मरुत्त राजा रावणने नमीने पूछे छे के-हे स्वामिन् ! आ कृपानिधि कोण छे के जेणे तमारी साथे आवीने आ महापापथी मने निवार्यो ? (१४) त्यारे रावण कहे छे के—" ब्रह्मरुचि एवा नामनो ब्राह्मण तापस थयेलो हतो तेने कूर्मी नामनी स्त्री हती ते सगर्भा थइ. (१५) त्यां अन्यदा कोइ साधु आव्या. तेमांथी एक साधु बोल्या के-' संसारना भयथी जेणे सारी रीते गृहवास तज्यो होय ते साधु पण जो विषयमां लुब्धचित्तवाळो थइने फरीने स्वदारानो संग करे तो गृहवासथी वनवासमां वधारे शुं ? ' (१७) ते सांभळीने ब्रह्मरुचि प्रतिबोध पाम्या. तेणे जिनशासन स्वीकार्युं अने तरत ज ते मुनि पासे दीक्षा लीधी; तथा कूर्मी श्रेष्ठ श्राविका थइ. (१८) मिथ्यात्वरहितपणे ते आश्रममां वसतां तेणीए पुत्र

नाम रोदनादिविवर्जितं ॥ १९ ॥ गतायाश्चान्यतस्तस्या–स्तं जहुर्जृंभिकामराः । पुत्रशोकादिंदुमाला–र्यांतिके प्राव्रजच्च सा ॥ २० ॥ तेऽमराः पालयामासुः शास्त्राण्यध्यापयंश्च तं । आकाशगामिनीं विद्यां ददुस्तस्मै क्रमेण च ॥ २१ ॥ अणुव्रतधरः प्राप यौवनं च मनोहरं । स शिखाधारणान्नित्यं न गृहस्थो न संयतः ॥ २२ ॥ कलहप्रेक्षणाकांक्षी गीतनृत्यकुतूहली । सदा कंदर्पकौकुच्य–मौखर्यात्यंतवत्सलः ॥ २३ ॥ वीराणां कामुकानां च संधिविग्रहकारकः । छत्रिकाख्यो वृषीपाणि–रारूढः पादुकासु च ॥ २४ ॥ देवैः स वर्द्धितत्वाच्च देवर्षिः प्रथितो भुवि । प्रायेण ब्रह्मचारी च स्वेच्छाचार्येष नारदः ॥ २५ ॥ इत्येतदनुसारेण परेषामपि भाव्यतां । स्वरूपं नारदर्षीणां यथासंभवमागमात् ॥ २६ ॥ एवं चासौ रामचरित्राद्यनुसारेण सम्यग्दृष्टिरणुव्रतधारी च प्रतीयते. षष्ठांगे तु तत्कालीनस्य नारदस्य स्वरूपमेवमुक्तमर्थतः–कच्छुल्लो नारदो नाम दर्शनेनातिभद्रकः । विनीतश्चेष्टयुद्धत्वा–दंतःकलुषिताशयः ॥२७॥

प्रसव्यो. तेनुं नाम नारद–जन्म वखते रुदन न करवाना कारणथी आप्युं. (१९) कूर्मी कांइक आघीपाछी गइ तेवे अवसरे ते बाळकने जृंभक देवो (पूर्वभवना स्नेहथी) उपाडी गया. पुत्रविरहना शोकथी तेणे इंदुमाळा आर्यानी पासे चारित्र लीधुं. (२०) देवो ते बाळकने पाळवा लाग्या, तेने शास्त्रो भणाव्या अने अनुक्रमे तेने आकाशगामिनी विद्या आपी (२१) ते नारद अणुव्रतधारी थयो. अनुक्रमे मनोहर एवुं यौवन पाम्यो. ते नित्य शिखाने धारण करतो होवाथी गृहस्थ नहीं ने मुनि पण नहीं एवो थयो. (२२) ते नारद कलह जोवानो इच्छक, गीतनृत्यमां कुतूहळी, सदा कंदर्प, कौकुच्य अने मुखरपणावाळो तेम ज अत्यंत वत्सलभाववाळो थयो. (२३) वीरोमां अने कामीओमां संधि ने विग्रह करावनारो, छत्रिक नामनो, हाथमां दर्भनुं आसन धारण करनार अने पादुका उपर आरूढ थनारो थयो (२४) देवोए तेने उछेरेलो होवाथी ते देवर्षि तरीके पृथ्वीपर प्रसिद्ध थयेलो छे. नारदो प्रायः ब्रह्मचारी तेमज स्वेच्छाचारी होय छे. " (२५) आने अनुसारे बीजा नारदोनुं स्वरूप पण आगमोथी यथासंभव जाणवुं. (२६)

आ प्रमाणे रामचरित्रने अनुसारे नारदने समकितदृष्टि अने अणुव्रतधारी समजी शकाय छे. छट्ठा अंगमां तो तत्कालीन नारदनुं स्वरूप आ प्रमाणे अर्थथी कह्युं छे.– 'कच्छुल्ल नामनो नारद जोवामात्रथी ज अतिभद्रक, विनीत, युद्ध(क्लेश) इष्ट होवाथी अंतःकर-

व्रतित्वाध्धृतमाध्यस्थ्यः श्रितानां प्रियदर्शनः । सुरूपो वल्कवसनो मुकुटश्राजिमस्तकः ।।२८।। वक्षःकूलृत्तोत्तरासंगः श्यामेन मृगचर्मणा । यज्ञोपवीतयुक् दंडी कमंडलुं करे दधत् ।। २९ ।। शोभितः कटिसूत्रेण रुद्राक्षजपमालया । विज्ञः कच्छपिकापाणि–र्गीतगांधर्वकौतुकी ।।३०।। आकाशगामी सकल–भूतलाटनलंपटः । विविधानां स विद्यानां निधानं केशवप्रियः ।।३१।। युद्धप्रियस्तदन्वेषी जनानामसमाधिकृत् । पार्थिवांतःपुरादाव–प्यनिरुद्धगतिस्सदा ।। ३२ ।। स चाप्रत्याख्यातपाप–कर्मा विरतिवंचितः । पैशून्यभीरुभिर्भूपै–र्मिथ्यादृगपि पूज्यते ।। ३३ ।। तथोक्तं षष्ठांगवृत्तौ–न प्रतिहतानि सागरोपमकोटीकोट्यंतःप्रवेशनेन सम्यक्त्वलाभतः, न च प्रत्याख्यातानि सागरोपमकोटीकोट्याः संख्यातसागरोपमैर्न्यूनताकरणेन सर्वविरतिलाभतः पापकर्माणि ज्ञानावरणीयादीनि येन स तथा. प्रश्नव्याकरणवृत्तावप्युक्तं–नारदमुनिर्गगनादवततार, अभ्युत्थितश्च सपरिवारेण पांडुना, द्रोपद्या तु श्रमणोपासिकात्वेन मिथ्यादृष्टिमु-

णना कलुषित आशयवाळो, व्रती होवाथी माध्यस्थ्यने धारण करनारो, आश्रितोने प्रिय छे दर्शन जेनुं एवो, रूपवंत, वल्कलना वस्त्रोवाळो, माथे मुकुट (शिखा) ने धारण करनारो, काळा मृगचर्मथी जेणे वक्षःस्थळ उपर उत्तरासंग कर्युं छे एवो, यज्ञोपवीत धारण करनारो, दंडी (दंड राखनारो), कमंडळु हाथमां राखनारो, कटिसूत्र अने रुद्राक्षनी जपमाळावडे शोभतो, विज्ञ, हाथमां कच्छपिका नामनी वीणाने राखनारो, गीतगांधर्वनो कौतुकी, आकाशगामी, सकळ जगतमां फरवानी चाहनावाळो, विविध प्रकारनी विद्याओनो निधान, वासुदेवनी प्रीतिवाळो, युद्धप्रिय, युद्धनुं छळ जोवामां तत्पर, जनोमां असमाधि करनारो, राजाना अंतःपुरोमां पण जेनी गति रोकाती नथी एवो (वगर अटकावे जनारो), पापना त्याग विनानो, विरतिरहित अने तेनी पिशुनताथी भय पामेला राजाओ मिथ्यात्वी छतां पण जेने पूजे छे एवो होय छे. (२७–३३) ' छठ्ठा अंगनी वृत्तिमां कह्युं छे के— ' (सात कर्मोनी) अंतःसागरोपम कोटाकोटीनी स्थिति थवावडे थनारा सम्यक्त्वना लाभथी जेणे मिथ्यात्वने प्रतिहत करेल नथी एवो, अंतःकोटाकोटी सागरोपमनी स्थितिमांथी पण संख्याता सागरोपमनी स्थिति घटाडवाथी थनारा सर्वविरतिना लाभवडे जेणे आश्रवोना पच्चक्खाण कर्यां नथी एवो, तेम ज ज्ञानावरणीयादि पापकर्मोनो जेणे क्षयोपशम कर्यो नथी, एवो नारद होय छे. " प्रश्नव्याकरणनी वृत्तिमां पण कह्युं छे के–' नारद मुनि आकाशमांथी त्यां उतर्यो. पांडुराजाए परिवार सहित तेनुं अभ्युत्थानादि कर्युं, परंतु

निरयमिति कृत्वा नाभ्युत्थित इति. रुद्रा अपि भवंत्येव–मेकादश महो-द्धताः । वशीकृतानेकविद्यो–र्जिताः सम्यक्त्वशालिनः ॥ ३४ ॥

जघन्यमध्यमोत्कृष्टा–स्त्रिधा ये पुरुषा भुवि। तेषूत्कृष्टा अमी प्रोक्ता-स्त्रिधा धर्मादिभेदतः ॥ ३५ ॥ अर्हंतो धर्मपुरुषा–श्चक्रिणो भोगपूरुषाः । वासुदेवाः पुनः कर्म–पुरुषा इति कीर्त्तिताः ॥ ३६ ॥ एते यथोक्ताः पुरुषा विदेहेषु निरंतरं । भवंत्यन्येषु दशसु भरतैरावतेषु तु ॥ ३७ ॥ स्युः क्रमादवसर्पिण्या–मुत्सर्पिण्यां तथोत्क्रमात् । आयुर्देहादिभिस्तुल्या जगतामुपकारिणः ॥ ३८ ॥

इति गदितया रीत्या विश्वे भवंति हि चक्रिणो,
भुजबलजितस्वस्वक्षेत्राः क्षताखिलशात्रवः ।
हरिहलभृदादीनामप्यूह्यतां दिगियं बुधाः,
श्रुतजलनिधेरेषां शेषं विदंतु विशेषतः ॥ ३९ ॥

द्रौपदीए श्रमणोपासिका होवाथी आ मिथ्यादृष्टि मुनि छे, एम जाणीने अभ्युत्थानादि न कर्युं.' इति नारदस्वरूपं. हवे रुद्रोनुं स्वरूप कहे छे.—रुद्रो पण अग्यार थाय छे. ते महाउद्धत होय छे, अनेक विद्याओने वश करेली होवाथी ऊर्जित होय छे अने सम्यक्त्व-शाळी होय छे[1]. (३४)

पृथ्वीपर जे जघन्य, मध्यम ने उत्कृष्ट एम त्रण प्रकारना पुरुषो कह्या छे, तेमां उत्कृष्ट-पुरुषो धर्मादिकना भेदथी त्रण प्रकारे कह्या छे. (३५) ते आ प्रमाणे—अरिहंतने धर्मपुरुष, चक्रवर्त्तीने भोगपुरुष अने वासुदेवने कर्मपुरुष कह्या छे. (३६) ए यथोक्त पुरुषो पांच महाविदेहमां निरंतर होय छे अने भरत–ऐरवतरूप दश क्षेत्रमां तो क्रमथी अवसर्पिणीमां अने उत्क्रमथी उत्सर्पिणीमां आयु देहादिवडे तुल्य अने जगतना उपगारी थाय छे. (३८)

आ प्रमाणे उपर कहेली रीते विश्वमां चक्रवर्तीओ भुजाबळथी पोतपोताना क्षेत्रने जीतनारा अने सर्व शत्रुनो निरास करनारा होय छे. तेमनी तेमज वासुदेव–बळदेवनी हकीकत पण बुधजनोए उपर कह्या प्रमाणे जाणवी. तेमनी शेष हकीकत विस्तारथी शास्त्ररूपी समुद्रथकी जाणवी. (३९)

---

१ रुद्रोने माटे मात्र आ एक ज श्लोक छे. तेना विषे कांइ पण विशेष हकीकत जणाव-वामां आवी नथी. ते क्यारे थाय छे ते पण जणाव्युं नथी.

विश्वाश्चर्यदकीर्त्तिकीर्त्तिविजयश्रीवाचकेंद्रांतिष-
द्राजश्रीतनयोऽतनिष्ट विनयः श्रीतेजपालात्मजः ।
काव्यं यत्किल तत्र निश्चितजगत्तत्त्वप्रदीपे किलै-
कत्रिंशत्तम एष पूर्त्तिमभजत्सर्गो निसर्गोज्ज्वलः ॥ ६४० ॥

॥ इति लोकप्रकाशे एकत्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः श्रीरस्तु ॥ ग्रं. ७१७



विश्वने आश्चर्य करे तेवी कीर्त्ति छे जेनी एवा श्री कीर्त्तिविजयवाचकेंद्रना शिष्य-राजश्री अने तेजपाळना पुत्र विनयवान् विनयविजये जे काव्य रच्युं छे, ते जगतना तत्त्व-रूपप्रदीपने निश्चय करनारा काव्यने विषे आ स्वभावथी ज उज्वळ एवो एकत्रीशमो सर्ग संपूर्ण थयो. (६४०)

॥ इति श्रीलोकप्रकाशे एकत्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥ ग्रं० ७१७

—◇◇卐◇◇—

३२ मा सर्गमां दरेक तीर्थंकरना वर्णनमां आवेली विगतो.

१ पूर्वभव.
  १ खंड ने क्षेत्रनुं–विजयनुं नाम.
  २ नगरीनुं नाम.
  ३ पोतानुं नाम.
  ४ गुरुनुं नाम.
२ क्या स्वर्गे गमन ने आयु प्रस्तुत भवमां
३ देशनुं नाम.
४ नगरीनुं नाम.
५ पितानुं नाम.
६ मातानुं नाम.
७ प्रभुनुं नाम.
८ पांच कल्याणकनी तिथि ने नक्षत्र.
९ गर्भस्थिति.
१० प्रभुनी राशि.
११ पूर्व प्रभुना निर्वाण पछी क्यारे जन्म ?
१२ जन्म पछी पाछळ चोथो आरो केटलो ?
१३ नाम पाडवानुं कारण.
१४ शरीरप्रमाण
१५ आयुप्रमाण.
  १ कौमारावस्थामां
  २ राज्यावस्थामां
  ३ चारित्रावस्थामां
१६ छद्मस्थकाळ.
१७ दीक्षा वखतनी शिबिकानुं नाम
१८ प्रथम पारणुं क्या गाममां कोणे कराव्युं ?
१९ ज्ञानवृक्ष.
२० लांछन शेनुं ?
२१ मुख्य गणधर.
२२ मुख्य साध्वी.
२३ मुख्य श्रावक–श्राविका.

२४ परिवारनी संख्या.
- १ गणधर.
- २ साधु
- ३ साध्वी.
- ४ श्रावक.
- ५ श्राविका.
- ६ केवळज्ञानी.
- ७ मनःपर्यवज्ञानी.
- ८ अवधिज्ञानी.
- ९ चौदपूर्वी.
- १० वैक्रियलब्धिवाळा.
- ११ वादी.

२५ यक्षनुं वर्णन.

२६ यक्षणीनुं वर्णन.

महावीरचरित्रअंतर्गत बधा प्रभु माटे आवती विगतोः—

१ समकित पाम्यापछीना २४ प्रभुना भवो.
२ चोवीश प्रभुना वर्ण.
३ आर्यअनार्य देशमां विहार.
४ उत्कृष्ट तप कोने वारे केटलो ?
५ प्रमादकाळ.
६ उपसर्गो कोने थया–कोने नहीं ?
७ देवदूष्यकाळ.
८ प्रथम दान देनारनी गति.
९ राज्य करीने के राज्य कर्या विना ?
१० विवाह करीने के विवाह कर्या विना ?
११ पाछले त्रीजे भवे राजा के चक्री ?
१२ दीक्षा दिवसे तप.
१३ दीक्षा वखते परिवार.
१४ दीक्षानगरी.
१५ दीक्षावन.
१६ दीक्षा वखते केटला मुष्टिलोच ?
१७ दीक्षासमय.
१८ प्रथम पारणुं शेनुं कर्युं ?
१९ बाळकाळ, मध्यकाळ ने व्रतकाळमां शेनो आहार ?
२० केवळज्ञाननुं स्थान.
२१ केवळज्ञानतप.
२२ केवळज्ञानसमय.
२३ संघस्थापना क्यारे ?
२४ तीर्थनुं व्यवच्छिन्न अवच्छिन्नपणुं.
२५ वीरप्रभुनुं शासन ऋषभप्रभुना शासन पछी केटले काळे प्रवर्त्युं ने केटलो काळ प्रवर्तशे ?
२६ दश अछेरा क्या क्या प्रभुना तीर्थमां ?
२७ सिद्ध थयाना स्थान.
२८ सिद्धि वखते आसन.
२९ मोक्षकल्याणके तप.
३० सिद्धि समये परिवार.
३१ सिद्धिगमननो काळ.
३२ ११ गणधरोनी घणी हकीकत.
३३ परिवारना ११ प्रकारनो सरवाळो.
३४ अनुत्तरोपपातिक संख्या.
३५ प्रकीर्ण ने प्रकीर्णकार बाबत.
३६ केटला पाट सिद्ध.
३७ पूर्वश्रुत ने अपरश्रुतनो काळ.
३८ आदेश बाबत.
३९ मुख्य श्रावक–श्राविकाना नाम बाबत.

॥ अथ द्वात्रिंशत्तमः सर्गः प्रारभ्यते ॥

अथास्यामवसर्पिण्यां क्षेत्रेऽत्रारे तृतीयके । अंतिमस्यैव पल्यस्या–ष्टमे भागे किलांतिमे ॥ १ ॥ सप्ताभूवन कुलकरा आद्यो विमलवाहनः । चक्षुष्मांश्च यशस्वी चा–भिचंद्रश्च प्रसेनजित् ॥ २ ॥ मरुदेवश्च नाभिश्च क्रमादेषामिमाः प्रियाः । चंद्रयशाश्चंद्रकांता सुरूपा प्रतिरूपिका ॥ ३ ॥ चक्षुःकांता च श्रीकांता मरुदेवा स्वभर्तृवत् । एतासामायुरुच्चत्वा–दिकं तदिह वक्ष्यते ॥ ४ ॥ त्रियः सप्तापि चक्षुष्मान् यशस्वी च प्रसेनजित् । प्रियंगुवर्णा गौरोऽभि–चंद्रोऽन्ये कांचनत्विषः ॥ ५ ॥ आद्यसंहननाः सर्वे आद्यसंस्थानशालिनः । याम्यस्य भरतार्द्धस्य मध्ये खंडेऽभवन्नमी ॥ ६ ॥ पल्यस्य दशमो भाग आयुराद्यस्य कीर्त्तितं । ततः पूर्वाण्यसंख्यानि न्यूनन्यूनान्यनुक्रमात् ॥ ७ ॥ आयुर्भवति पंचानां स्यान्नाभेः सप्तमस्य तत् । संख्येयान्येव पूर्वाणि तत्पत्न्या अपि तादृशं ॥ ८ ॥ असंख्यपूर्वायुष्कत्वे

सर्ग ३२ मो.

आ अवसर्पिणीमां आ भरतक्षेत्रमां त्रीजा आरामां छेल्ला पल्योपमनो छेल्लो आठमो भाग बाकी रह्यो त्यारे सात कुलकरो थया. तेना नाम–१ विमलवाहन, २ चक्षुष्मान्, ३ यशस्वी, ४ अभिचंद्र, ५ प्रसेनजित्, ६ मरुदेव ने ७ नाभि. तेमनी प्रियाना नाम अनुक्रमे आ प्रमाणे–१ चंद्रयशा, २ चंद्रकांता, ३ सुरूपा, ४ प्रतिरूपा, ५ चक्षुःकांता, ६ श्रीकांता ने ७ मरुदेवा. एमनुं आयुष्य ने शरीरनी उंचाइ एमना पति प्रमाणे ज हतुं ते अहीं आगळ कहेवाशे. (१–४) साते स्त्रीओ अने चक्षुष्मान्, यशस्वी ने प्रसेनजित् ए त्रण कुलकर प्रियंगु सरखा वर्णवाळा, अभिचंद्र गौर वर्णवाळा ने बीजा त्रण कुलकर (विमळवाहन, मरुदेव ने नाभि) कंचन सरखा वर्णवाळा हता. (५) ए सर्वे प्रथम संहननवाळा ने प्रथम संस्थानवाळा हता अने तेओ दक्षिण भरतार्धना मध्यखंडमां थया हता. (६) पहेला कुलकरनुं आयुष्य पल्योपमना दशमा भागनुं अने त्यारपछीना पांच कुलकरोनुं असंख्याता पूर्वनुं. पण अनुक्रमे एक बीजाथी ओछुं ओछुं अने सातमा नाभिकुलकरनुं संख्याता पूर्वनुं जाणवुं अने तेनी प्रियानुं पण तेटलुं ज आयुष्य समजवुं. (७–८) जो सातमा कुल-

त्वस्य पल्याः कथं भवेत् । निर्वृतिर्मरुदेवाया निजभर्तृसमायुषः ॥ ९ ॥

अयं भावः—पल्योपमस्य कल्प्यंते चत्वारिंशल्लवा यदि । तदा तद-ष्टमोंऽशः स्या-द्यावान् पंचलवात्मकः ॥ १० ॥ तावानभूत्कुलकर-कालः सर्वात्मनाऽपि हि । तत्र पल्यस्य दशमो भाग आद्यस्य जीवितम् ॥ ११ ॥ पल्यस्य दशमांशेन चत्वारिंशद्विभाजिताः । पूर्वोदिताः स्युश्च-त्वारो भागाः कुलकृदायुषि ॥ १२ ॥ आद्ये कुलकरे पूर्णा—युषि पल्योप-मस्य तत् । अंशश्चत्वारिंशदेकः शिष्यतेऽस्मिन् परेऽखिलाः ॥ १३ ॥

विदेहे पश्चिमेऽभूतां सुहृदौ वणिजावुभौ । एकोऽभूत्तत्र मायावी द्वितीयः सरलाशयः ॥ १४ ॥ तयोर्मृत्वाऽथ मायावी क्षेत्रेऽस्मिन् कुंजरोऽ-भवत् । उज्ज्वलो भद्रजातीयो युग्मी कुलकरः परः ॥ १५ ॥ गजोऽसौ प्राग्भवस्नेहाद् दृष्ट्वा तं युग्मिपुंगवं । स्कंधमारोपयामास सुरेंद्रं हस्तिमल्ल-वत् ॥ १६ ॥ ततश्चैतस्य विमल—वाहनेत्यभिधाऽभवत् । परेषु युग्मिषु प्राप गौरवं तेन सोऽधिकम् ॥ १७ ॥

करनुं आयुष्य असंख्याता पूर्वनुं होय तो तेना समान आयुवाळा मरुदेवा मोक्षे केम जाय ? (कारण के उत्कृष्ट क्रोडपूर्वना आयुवाळा मनुष्यो ज मोक्षे जाय छे.) (९)

आयुष्य संबंधी हकीकतनुं रहस्य आ छे.-पल्योपमना जो ४० भाग कल्पीए तो तेनो आठमो अंश पांच भागवाळो आवे. बधा कुलकरनो मळीने एटलो काळ छे. (कारण के पल्योपमनो आठमो भाग त्रीजा आरानो शेष रहे त्यारे कुलकरोनी उत्पत्ति थाय छे एम उपर कह्युं छे.) तेमां पहेला कुलकरनुं आयुष्य पल्योपमना दशमा भागनुं छे. (१०–११) एटले पल्योपमना दशमा भागे पूर्वे कहेला चालीशने भांगता चार भाग आवे. तेटलुं आद्य कुलकरनुं आयुष्य पूर्वोक्त पांच भागथी बाद करीए त्यारे बाकी चालीशीओ एक भाग रहे, तेमां बाकीना बधा कुलकरोना आयुष्यनो समावेश गणवो. (१३)

पश्चिम महाविदेहमां बे वणिक मित्रो हता. तेमां एक मायावी हतो ने एक सरल आशयवाळो हतो. (१४) तेमांथी मायावी मरण पामीने आ क्षेत्रमां उज्वळ ने भद्र जातिनो हाथी थयो. बीजो सरल हतो ते मरण पामीने युगलिक प्रथम कुलकर विमळ-वाहन थयो. (१५) आ हाथीए ते श्रेष्ठ युगलिकने जोइने पूर्वभवना स्नेहथी सुरेंद्रने जेम ऐरावण हाथी पोतानी उपर बेसाडे तेम सूंढवडे उपाडीने पोताना स्कंध उपर बेसा-ड्या, (१६) तेथी ए युगलिकनुं नाम विमळवाहन कहेवायुं अने तेथी करीने ते बीजा युगलिकोमां अधिक गौरवने पाम्या. (१७)

प्रागभूवन् दशविधाः कल्पवृक्षास्ततः पुनः । तेऽवाशिष्यंत विमल-वाहने सति सप्तधा ॥ १८ ॥ तथोक्तं स्थानांगे सप्तमे स्थाने–विमलवाहणे णं कुलगरे सत्तविहा रुक्खा उवभोगत्ताए हव्वमागच्छिंसु, तं०–मत्तंगया य १ भिंगा २ चित्तंगा ३ चेव होंति चित्तरसा ४ । मणियंगा य अणियणा ६ सत्तमगा कप्परुक्खा ७ य ॥ १ ॥ 'कप्परुक्खत्ति' उक्तव्यतिरिक्तसामान्यकल्पितफलदायित्वेन कल्पना कल्पस्तत्प्रधाना वृक्षाः कल्पवृक्षाः.

कालेन हीयमानेन कल्पद्रुपरिहाणितः । युग्मिनां कलहे लोभा-दन्योऽन्यं नीतिविप्लवे ॥१९॥ हाकाराख्यां दंडनीतिं चक्रे विमलवाहनः । कशयेव तुतोदाश्वं तया नीत्यापमार्गगं ॥२०॥ युग्मम् ॥ सलज्जास्तेऽपि तेनैव दंडेन ह्रीवशंवदाः । कदापि न पुनर्नीति-मतिक्रामंति भद्रकाः ॥ २१ ॥ द्वयोः कुलकृतोरेषा कालेनास्या व्यतिक्रमे । माकाराख्या बभूवान्या सा तृतीयचतुर्थयोः ॥ २२ ॥ आद्या स्वल्पापराधानां द्वितीया प्रचुरागसां ।

पूर्वे दश प्रकारना कल्पवृक्षो हता ते विमळवाहनना वखतमां सात प्रकारना रह्या. (१८) ते विषे श्रीस्थानांगसूत्रना सातमा स्थानमां कह्युं छे के—" विमळवाहन कुलकरना वखतमां सात प्रकारना कल्पवृक्षो उपभोगने माटे प्राप्त थया ते आ प्रमाणे— १ मत्तांग, २ भृंगांग, ३ चित्रांग, ४ चित्ररसांग, ५ मण्यंग, ६ अनग्नांग, ने ७ कल्पवृक्ष. अहीं कल्पवृक्ष शब्दे–प्रथम कहेला छ प्रकारथी अन्य सामान्य कल्पित (वांछित) फळदायीपणाए करीने जे कल्पना तत्प्रधान जे वृक्ष ते कल्पवृक्ष (अर्थात् सामान्य रीते वांछित आपनार वृक्ष) समजवुं."

हवे काळना हीयमानपणावडे कल्पवृक्षनी पण परिहानि थवाथी लोभने लीधे अन्योन्य नीतिनो नाश करनार कलह उत्पन्न थये सते हाकार नामनी दंडनीति विमळवाहने शरु करी, ते नीतिथी अश्वने चाबुकवडे ताडन करवाथी पीडा थाय तेवी उन्मार्गे जनार युगलिकने पीडा थवा लागी. (१९–२०) सलज्ज एवा तेओ पण ते दंडनीतिवडे लज्जाने वश थइ भद्रक होवाथी फरी कदापि ते नीतिनुं अतिक्रमण करनारा न थया. (२१) बे कुलकरोनी वखतमां ए नीति चाली पछी तेनो अतिक्रम थवा लाग्यो एटले त्रीजा-चोथा कुलकरना वखतमां बीजी माकार नामनी नीति शरु थइ. (२२) स्वल्प अपराधवाळा माटे पहेली अने प्रचुर अपराधवाळा माटे बीजी नीति वपरावा लागी. पांचमा

पञ्चमादित्रये त्वन्या धिक्काराह्वा बभूव सा ॥२३॥ अल्पागसां भवत्याद्या द्वितीया मध्यमागसां । अत्युत्कृष्टापराधानां दंडनीतिस्तृतीयिका ॥ २४ ॥

नवा १ ष्टौ २ सप्त ३ सार्द्धाः षट् ४ षट् ५ सार्द्धाः पंच ६ पंच च । पंचविंशाः ७ क्रमादेषां देहमाने धनुःशताः ॥ २५ ॥ दशभागीकृतस्यैषा-मायुषः प्रथमोऽशकः । कुमारत्वेऽतिमश्चांशो वार्द्धके परिकीर्त्तितः ॥ २६ ॥ अष्टासु मध्यमांशेषु कुलकृत्पदगौरवः । सप्तानामप्यमीषां स्यु-रेकैको वाहनं गजः ॥ २७ ॥ हस्तिनां च भवत्यायु-र्निजैः कुलकरैः समं ॥ द्वौ सुवर्णकुमारेषू-त्पन्नौ कुलकरौ क्रमात् ॥ २८ ॥ अथोदधिद्वीपकुमा-रेषु द्वौ द्वौ यथाक्रमं । नाभिर्नागकुमारेषु तथा षस्णां प्रिया अपि ॥ २९ ॥ निर्वृता मरुदेवा तु सप्तापि करिणोऽभवन् । नागदेवा मतेऽन्येषां केषांचि-त्त्वाद्य एव सः ॥ ३० ॥ तथोक्तं श्रीज्ञानसागरसूरिकृतावश्यकावचूर्णौ-हस्तिनः सप्तापि षट् च स्त्रियो नागकुमारेषु भवंत्युत्पन्नाः, अन्ये व्याच-क्षते हस्ती एक एव, षट् स्त्रियो नागेषु शेषैर्नाधिकार इति.

विगेरे त्रण कुलकरना वखतमां त्रीजी धिक्कार एवा नामनी नीति शरु थइ. (२३) तेमां अल्प अपराधवाळा माटे पहेली, मध्यम अपराधवाळा माटे बीजी अने अत्युत्कृष्ट अपराधवाळा माटे त्रीजी नीतिनो उपयोग थवा मांड्यो. (२४)

साते कुलकरोनुं देहमान अनुक्रमे-नव सो १, आठ सो २, सात सो ३, साडाछसो ४, छसो ५, साडापांचसो ६ तथा पांच सो ने पचवीश ७ धनुष्य प्रमाण हतुं. (२५) एमना आयुष्यना दश भाग करवा. तेमां पहेलो भाग कुमारपणामां अने छेल्लो भाग वृद्धपणामां कह्यो छे, (२६) तथा मध्यना आठ भाग कुलकरपणाना गौरवने सूचवनारा जाणवा. ते साते कुलकरने एकेक हाथीनुं वाहन हतुं. (२७) ते हाथीओनुं आयु पोतपोताना कुलकर समान समजवुं. सात कुलकरोमांथी प्रथमना बे सुवर्णकुमारमां, बे उदधिकुमारमां, बे द्वीपकुमारमां ने छेल्ला नाभिकुलकर नागकुमारमां (भवनपतिमां) उत्पन्न थया छे. तेमांना प्रथमना छ कुलकरनी स्त्रीओ पतिप्रमाणे ज देवपणे उत्पन्न थएल छे अने सातमा कुलकरनी स्त्री मरुदेवी मोक्षे गयेल छे. साते कुलकरना हाथी कोइना मते नागकुमारमां उत्पन्न थयेल छे अने अन्य मते पहेला कुलकरनो हाथी ज नागकुमारमां गयेल छे. (२८-३०) श्रीज्ञानसागरसूरिकृत श्रीआवश्यकनी अवचूर्णिमां कह्युं छे के—साते हाथीओ अने प्रथमना छ कुलकरनी स्त्रीओ नागकुमारमां उत्पन्न थइ छे. अन्य कहे छे के-हस्ती एक ज अने छ स्त्रीओ नागकुमारमां गयेल छे. बाकीना हाथी क्यां गया तेनो अधिकार बतावेलो नथी. ’

आवश्यकाभिप्रायोऽयं षष्ठोपांगे तु तात्त्विकैः । उक्ताः कुलकराः पंच-दश तेऽमी यथाक्रमं ॥ ३१ ॥ सुमतिश्च १ प्रतिश्रुति २-र्भवेत्सी-मंकरः परः ३ । सीमंधरः ४ क्षेमंकरः ५ क्षेमंधर ६ स्ततः परं ॥ ३२ ॥ विमलवाहन ७ श्चक्षु-ष्मान् ८ यशस्व्य ९ भिचंद्रकः १० । चंद्राभः ११ प्रसेनजिच्च १२ मरुदेव १३ स्तथाऽपरः ॥ ३३ ॥ नाभिः १४ श्रीऋषभ-स्वामि-प्रभोस्तत्त्वाविवक्षया । उक्ताः कुलकराः पद्म-चरित्रे तु चतुर्दश ॥ ३४ ॥ पल्योपमाष्टमांशस्य पंचभागीकृतस्य ये । चत्वारोंशास्तावदायु-र्मतेऽस्मिन् सुमतेः स्मृतं ॥ सर्वेऽप्यन्ये पंचमेंशे द्वादशानां च जीवितं । असंख्येयानि पूर्वाणि नाभेः संख्येयकानि च ॥ ३६ ॥ पंचानां प्रथमा नीतिः प्रथमानां प्रकीर्त्तिता । द्वितीयानां द्वितीया स्या-त्तृतीयानां तृतीयिका ॥ ३७ ॥

नाभेः कुलकरस्याथ मरुदेवामृगीदृशः । भूमौ भाविविनीतायां पुत्रत्वेनादिमो जिनः ॥ ३८ ॥ वर्त्तमानावसर्पिण्याः संबंधिनि तृतीयके ।

आ आवश्यकनो अभिप्राय छे. छठ्ठा उपांगमां तो तात्त्विकोए पंदर कुलकरो[1] थयानुं कह्युं छे. तेना नामनो अनुक्रम आ प्रमाणे छे (३१)—१ सुमति, २ प्रतिश्रुति, ३ सीमंकर, ४ सीमंधर, ५ क्षेमंकर, ६ क्षेमंधर, ७ विमळवाहन, ८ चक्षुष्मान, ९ यशस्वी, १० अभिचंद्र, ११ चंद्राभ, १२ प्रसेनजित्, १३ मरुदेव, १४ नाभि अने १५मा श्रीऋषभ-स्वामी. तत्त्वथी श्रीऋषभस्वामीनी विवक्षा नहीं करवाथी श्रीपद्मचरित्रमां चौद कुलकरो कह्या छे[2]. (३२-३४) आ मतमां पल्योपमना आठमा अंशना पांच भाग करीए एवा चार भागनुं आयुष्य पहेला सुमति कुलकरनुं कह्युं छे, (३५) अने बीजा सर्वे पांचमा अंशमां कह्या छे. तेमां बार कुलकरोनुं आयुष्य असंख्याता पूर्वोनुं अने नाभिकुलकरनुं संख्याता पूर्वनुं कह्युं छे. (३६) प्रथमना पांचमां पहेली एक नीति, बीजा पांचमां बीजी नीति अने त्रीजा पांचमां त्रीजी नीति कही छे. (३७)

नाभिकुलकरनी मरुदेवानामा स्त्रीथी विनीता नगरी ज्यां वसवानी हती ते भूमिमां पुत्रपणे प्रथम जिनेश्वर थया छे. (३८) ते वर्तमान अवसर्पिणीना त्रीजा आराना नेव्याशी पक्ष अने एक त्रुटितांग बाकी रह्या त्यारे थया छे. (३९) तेओ अषाढ मासना

---

१ आमां प्रथमना छ ने ११ मा चंद्राभ वधारे छे. बाकीना ७ प्रथम प्रमाणे ज छे.
२ ८४ लाख पूर्व.

अरे नवाशीतिपक्ष–त्रुटितांगावशेषके ॥ ३९ ॥ शुचिश्यामलतुर्यायां–मा-
गात्सर्वार्थसिद्धितः। स्थितिं समाप्य तत्रत्यां त्रयस्त्रिंशत्पयोधिकां ॥ ४० ॥
त्रयोदशे भवे सोऽस्मा–त्सार्थवाहो धनाभिधः। आसीत्ससार्थः सोऽचा-
ली–द्वसंतपुरमन्यदा ॥ ४१ ॥ वर्षाकाले पथि प्राप्ते कांतारे तस्थिवा-
नसौ। सहागतान्मुनींस्तत्र सस्मार शरदागमे ॥ ४२ ॥ अन्ये जीवंति
कंदाद्यै–र्मुनयस्तु कथं हहा !। ततः प्रगे तानाकार्य स घृतैः प्रत्यलंभयत्
॥ ४३ ॥ तत्र च प्राप सम्यक्त्वं मृत्वा कालांतरेऽथ सः। बभूवोत्तरकुरुषु
युग्मी मृत्वा ततोऽपि च ॥ ४४ ॥ सौधर्मे त्रिदशोऽथाभू–द्विदेहेषु महा-
बलः। ईशाने ललितांगोऽथ वज्रजंघो महीपतिः ॥ ४५ ॥ विदेहेष्वभ-
वत्सोऽथ युग्म्युत्तरकुरुष्वथ। सौधर्मे त्रिदशोऽथाभू–द्विदेहेषु चिकित्सकः
श्रेष्ठिभूपामात्यसार्थ–वाहपुत्रैः सुहृद्वरैः। संयुक्तः स पटूचक्रे कृमि-
कुष्ठार्दितं मुनिं ॥ ४७ ॥ लक्षपाकं ददौ तत्र तैलं वैद्यसुतः स्वयं। गोशी-

कृष्णपक्षनी चतुर्थीए सर्वार्थसिद्धि विमानथी त्यां संबंधी तेत्रीश सागरोपमनी स्थिति पूर्ण करीने मरुदेवा मातानी कुक्षिमां आवेला छे. (४०) तेओ आ भवथी प्रथमना तेरमे भवे धन नामना सार्थवाह हता. ते अन्यदा सार्थसहित वसंतपुर जवा चाल्या. (४१) मार्गमां वर्षाकाळ प्राप्त थवाथी एक अटवीमां टकी जवुं पड्युं. त्यां साथे आवेला मुनि तेने शरदऋतु आवतां सांभर्या. (४२) तेणे विचार्युं के—बीजा मनुष्योए तो कंदादिकथी निर्वाह कर्यो हशे परंतु ए मुनिओनुं शुं थयुं हशे ? (कारणके तेओ तो कंदादि वापरता नथी.) पछी ते मुनिओने बोलावी घीवडे प्रतिलाभ्या. (४३) त्यां ते धनसार्थवाह समकित पाम्या. त्यांथी काळांतरे काळ करीने उत्तरकुरुमां युगलिक थया. त्यांथी पण मरीने त्रीजे भवे सौधर्म देवलोके देव थया. चोथे भवे महाविदेहमां महाबळ नामे राजा थया. पांचमे भवे ईशान देवलोकमां ललितांग नामे देव थया. छठे भवे महाविदेहमां वज्रजंघ राजा थया. सातमे भवे उत्तरकुरुमां युगलिक थया. आठमे भवे सौधर्म देवलोकमां देव थया. नवमे भवे महाविदेहमां वैद्य थया. (४४–४६)

ते भवमां राजानो, श्रेष्ठीनो, अमात्यनो ने सार्थवाहनो एम चारना पुत्रो तेना मित्रो हता, ते भवमां कृमिकुष्ठना व्याधिथी पीडाता मुनिने तेणे चारे मित्रोनी सहायथी निरोगी

१ (आषाढशुक्लषष्ठ्यां स) इति पाठोऽपि श्रेष्ठि–देव०–लाल–जैनपु० प्रतौ लिखितस्तन्मूलं मृग्यं, कल्पसूत्रेऽपि अषाढकृष्णचतुर्थ्येव लिखिता.

र्षचंदनं लक्ष-मूल्यं च रत्नकंबलं ॥ ४८ ॥ वणिग् ददौ विना मूल्यं साधुभक्त्या महाशयः । प्रतिपद्य स चारित्रं संविग्नः प्रययौ शिवं ॥४९॥ चतुर्भिस्सह मित्रैः स यतीभूय चिकित्सकः । देवोऽभूदच्युते तस्माच्च्युत्वा पंचापि ते सुराः ॥५०॥ विजये पुष्कलावत्यां पुरी या पुंडरीकिणी । तत्रार्हद्वज्रसेनस्य समजायंत नंदनाः ॥५१॥ तत्र वैद्यस्य जीवोऽभू-द्वज्रनाभाभिधोऽग्रजः। बाहुः सुबाहुः पीठश्च महापीठ इतीतरे ॥ ५२ ॥ उत्सृज्य सार्वभौमर्द्धिं वज्रनाभोऽनुजैः सह । उपादत्त परिव्रज्या-मर्हतः पितुरंतिके ॥ ५३ ॥ अध्यगीष्ट स पूर्वाणि चतुर्दश परे पुनः । अंगान्येकादशाद्योऽत्र तीर्थकृत्कर्मभागभूत् ॥ ५४ ॥ द्वितीयश्चान्नपानाद्यै-र्भक्तिं कुर्वन्महात्मनां । चक्रिभोगफलं कर्मा-र्जयदार्जवपावनः ॥ ५५ ॥ तार्तीयीकश्च साधूना-मंगसंवाहनादिभिः । लोकोत्तरं बाहुबल-फलं कर्म किलार्जयत् ॥ ५६ ॥ ज्येष्ठप्रशंसामात्सर्या-द्याच्चारित्रिणावपि । वेद-

---

कर्या. (४७) ते कार्यमां वैद्यपुत्रे लक्षपाक तेल पोतानुं वापर्युं अने गौशीर्षचंदन तथा लक्षमूल्यनुं रत्नकंबळ एक वणिक महाशये वगरमूल्ये मात्र मुनिराजपरनी भक्तिथी आप्युं. ते संविग्न वणिक तो चारित्र अंगीकार करीने ते भवमां ज मोक्षे गयो. (४८-४९) चारे मित्रो साथे वैद्यपुत्रे पण दीक्षा लीधी ने ते पांचे जणा बारमा देवलोके देव थया. पांचे देवो स्वर्गमांथी च्यवीने पुष्कलावती विजयनी पुंडरीकिणी नगरीमां वज्रसेन नामना तीर्थंकरना पुत्रो थया. (५०-५१) तेमां वैद्यनो जीव वज्रनाभ नामनो मोटो पुत्र थयो; बीजा चार बाहु, सुबाहु, पीठ ने महापीठ नामना पुत्रो थया. (५२) वज्रनाभे चक्रवर्तीपणानी ऋद्धि (भोगवीने) तजी दइने चारे भाइओनी साथे पोताना पिता वज्रसेन तीर्थंकरनी पासे चारित्र ग्रहण कर्युं. (५३) वज्रनाभे चौद पूर्वनो अभ्यास कर्यो ने बीजा चार मुनिओ अग्यार अंगना अभ्यासी थया. पहेला वज्रनाभे तीर्थंकरनामकर्म उपार्जन कर्युं. (५४) बीजा पुत्र बाहुए महात्माओनी अन्नपानादिवडे भक्ति करीने आर्जवतावडे पवित्र थइ चक्रवर्तीपणाना सुखभोगनी प्राप्ति करावनार भोगफळवाळुं कर्म उपार्जन कर्युं. (५५) त्रीजा सुबाहुकुमारे साधुओना अंगसंवाहनादि वैयावच्चवडे लोकोत्तर एवुं बाहुनुं बळ प्राप्त करावनार कर्म उपार्जन कर्युं. (५६) चोथा ने पांचमा पीठ ने महापीठ मुनिए चारित्र

मर्जयतः पीठ–महापीठौ च योषितां ॥ ५७ ॥ ततः पंचापि सर्वार्थ–सिद्धेऽभूवन् सुधाभुजः । च्युत्वादौ च ततो वज्र—नाभजीवोऽभवज्जिनः ॥ ५८ ॥

मासान् गर्भे नव स्थित्वा चतुर्भिरधिकान् दिनैः । चैत्रस्य श्यामलाष्टम्या–मजनिष्ट जिनेश्वरः ॥ ५९ ॥ गर्भे जन्मनि राज्याप्तौ दीक्षायां केवलोद्भवे । भं प्रभोरुत्तराषाढा राशिः स्याद्धनुराह्वयः ॥ ६० ॥ व्रतोद्वहनधुर्यत्वा–दादौ वृषभवीक्षणात् । स्वप्नेषु मात्रा वृषभां–कत्वाच्च वृषभाभिधाः ॥ ६१ ॥ वृषभः प्रथमो राजा–दिमो भिक्षाचरोऽपि च । आद्योऽर्हन् केवली चेत्य–भूवन् पंचाभिधाः प्रभोः ॥ ६२ ॥

देशोनवर्षवयसि प्रभौ हरिरुपागमत् । जीतमाद्यार्हतो वंश–स्थापनं ज्ञानतो विदन् ॥ ६३ ॥ इक्षुं शक्रकरे वीक्ष्य प्रसारितकरे प्रभौ । वंशमिक्ष्वाकुनामानं स्थापयामास वासवः ॥ ६४ ॥ आकुशब्दो भक्षणार्थे इक्षो·

पालता छतां पण पोताना वडील मुनिओनी थती प्रशंसा न सहन थवाथी मात्सर्यने लइने स्त्रीवेद उपार्जन कर्यो. (५७) त्यांथी काळ करीने पांचे मुनिओ सर्वार्थसिद्ध विमानमां देवपणे उत्पन्न थया. त्यांथी वज्रनाभनो जीव प्रथम च्यवीने प्रथम जिन तरीके मरुदेवानी कुक्षिमां उत्पन्न थयो. (५८)

नव मास ने चार दिवस गर्भमां स्थिति करीने चैत्र वदि ८ नी रात्रिए प्रथम जिनेश्वरनो जन्म थयो. (५९) प्रभु गर्भमां आव्या त्यारे, जन्म वखते, राज्यप्राप्ति अवसरे, दीक्षासमये ने केवळज्ञाननी उत्पत्ति वखते नक्षत्र उत्तराषाढा (मोक्षकल्याणके नक्षत्र अभिजित्) अने राशि धनु समजवी. (६०) व्रतोनुं वहन करवामां धोरी समान होवाथी तेम ज माताए स्वप्नमां प्रथम वृषभ दीठेल होवाथी अने वृषभनुं लांछन (चिन्ह) होवाथी ऋषभ (वृषभ) एवुं नाम स्थापन करवामां आव्युं. (६१) ऋषभदेव, प्रथम राजा, प्रथम भिक्षाचर (साधु), प्रथम अरिहंत ने प्रथम केवली–एवा पांच नाम तेमना थया. (६२)

प्रभु कांइक ऊण एक वर्षनी वयना थया त्यारे प्रभुना वंशनुं स्थापन करवुं ए मारो आचार छे एम ज्ञानवडे जाणीने इंद्र प्रभु पासे आव्या. (६३) इंद्रना हाथमां इक्षु जोइने ते लेवा माटे प्रभुए हाथ लांबो कर्यो तेथी इंद्रे प्रभुना वंशनुं इक्ष्वाकु नाम स्थापन कर्युं. (६४) आकु शब्द भक्षणार्थमां छे. इक्षु जे शेरडी–ते खावानी इच्छा होवाथी भगवान

स्तंद्भक्षणोच्छ्या। इक्ष्वाकुर्भगवानेत–द्वंश्याश्चैक्ष्वाकवः स्मृताः ॥ ६५ ॥ एवं च–इक्ष्वाकुवंशजा ज्ञेया जिना द्वाविंशतिर्बुधैः। हरिवंशसमुद्भूतौ श्रीनेमिमुनिसुव्रतौ ॥ ६६ ॥

तदा च दंपती कौचि–द्विमुच्य सुतनंदने। तालस्याधः प्राविशतां क्रीडायै कदलीगृहं ॥ ६७ ॥ तालतः पतता पक्व–फलेन तनयो मृतः। अकालमृत्युराद्योऽत्रा–वसर्पिण्यामभूदयं ॥ ६८ ॥ अवशिष्टां ततः पुत्रीं प्रतिपाल्य दिवं गतौ। युग्मिनौ दंपती स्वल्प–कषायौ तौ शुभाशयौ ॥ ६९ ॥ अथात्यंतोत्कृष्टरूपां कन्यामेकाकिनीमिमां। दृष्ट्वा न्यवेदयन् युग्मि–मनुजा नाभयेऽन्यदा ॥ ७० ॥ भविष्यति सुनंदेयं ऋषभस्य परिग्रहः। इति प्रज्ञाप्य तान् सर्वान् नाभिराडत्तवानिमां ॥ ७१ ॥

अथ भोगसमर्थं तं विज्ञाय जगदीश्वरं। अकार्षीद्धरिरागत्य तत्पाणिग्रहणोत्सवं ॥ ७२ ॥ विधिं वरोचितं सर्व–मकार्षीत्तत्र वासवः। कन्योचितं द्वयोः कन्योः शच्योऽकार्षुः प्रमोदतः ॥ ७३ ॥ ताभ्यां च

इक्ष्वाकु अने तेमना वंशजो ऐक्ष्वाकु एटले इक्ष्वाकुवंशमां उत्पन्न थयेला कहेवाया. (६५) ए प्रमाणे बावीश तीर्थंकर इक्ष्वाकु वंशमां थयेला अने नेमिनाथ ने मुनिसुव्रतस्वामी ए बे हरिवंशमां थयेला पंडितोए जाणवा. (६६)

हवे अन्यदा कोइ युगलिक दंपती पोताना पुत्र तथा पुत्रीने एक ताडवृक्षनी नीचे मूकीने कदलीगृहमां क्रीडा करवा गया. (६७) तेवामां ताडवृक्षपरथी पडेला एक फळवडे पुत्रनुं मृत्यु थयुं. आ अवसर्पिणीमां आ पहेलुं अकाळ मृत्यु थयुं. (६८) त्यारपछी अवशिष्ट रहेल पुत्रीनुं अमुक वखत प्रतिपालन करीने ते स्वल्पकषायवाळा ने शुभाशयवाळा युगलिक दंपती स्वर्गे गया. (६९) हवे एकदा अत्यंत उत्कृष्ट रूपवाळी ते कन्याने एकली फरती जोइने कोइ युगलिकोए ते हकीकत नाभिराजाने निवेदन करी. (७०) एटले 'ए सुनंदा नामनी ऋषभनी पत्नी थशे ' एम ते सर्वने कहीने ते कन्याने नाभिराजाए ग्रहण करी. (७१)

हवे प्रभुने भोगसमर्थ जाणीने इंद्रे आवीने तेमनो पाणिग्रहण महोत्सव कर्यो. (७२) तेमां वरोचित बधो विधि इंद्रे कर्यो अने कन्या उचित बधो विधि बंने कन्या संबंधी इंद्राणीओए प्रमोदपूर्वक कर्यो. (७३) ते बंने स्त्रीओनी संगाते विविध प्रकारना भोग

सह भुंजाने विविधान् विषयान् विभौ । षट्स्वनीतेषु लक्षेषु पूर्वाणां जन्मकालतः ॥ ७४ ॥ पंचमानुत्तराच्च्युत्वा पीठो बाहुश्च युग्मजौ । जातौ सुमंगलादेव्यां ब्राह्मीभरतसंज्ञकौ ॥ ७५ ॥ महापीठः सुबाहुश्च सुनंदाकुक्षिसंभवौ । सुंदरीबाहुबल्याख्या-वभूतां च सुतासुतौ ॥ ७६ ॥ ततः सुमंगलैकोन-पंचाशतमसूत च । पुनर्युग्मानि पुत्राणां फलानीव द्रुमच्छता ॥ ७७ ॥ शतमेवं च पुत्राणा-मभूत्पुत्रीद्वयं प्रभोः । नमिश्च विनमिश्चेति परौ क्रोडीकृतौ सुतौ ॥ ७८ ॥

युग्मिनां कलहे जातु रीत्या पूर्वोक्तयोत्थिते । निवेदयंति तत्सर्वे ज्ञात्वा ज्ञानाधिकं प्रभुं ॥ ७९ ॥ प्रभुरप्याह राजैव निवारयति दुर्नयात् । स चाभिषिक्तः सर्वेषा-मैश्वर्याद्दुरतिक्रमः ॥ ८० ॥ स राजास्माकमप्यस्तु तैरित्युक्तेऽवदत्प्रभुः । नत्वा नाभिं कुलकरं याचध्वं भूपमीप्सितं ॥८१॥ तैर्विज्ञप्तोऽवदन्नाभि-र्भूयाद्वृषभ एव च । राजेति तेऽभिषेकार्थं यावद्गच्छंति वारिणे ॥ ८२ ॥ तावत्कंप्रासनः शक्रो-ऽभ्यषिंचद् द्रुतमागतः ।

भोगवतां जन्मथी छ लाख पूर्व गया त्यारे पांचमा अनुत्तर विमानमांथी च्यवीने पीठ ने बाहुना जीव सुमंगलादेवीनी कुक्षिमां पुत्री-पुत्रपणे उत्पन्न थया. तेमनो प्रसव थतां तेमनां भरत ने ब्राह्मी नाम स्थापन कर्या. (७४-७५) महापीठ ने सुबाहुना जीव त्यांथी ज च्यवीने सुनंदानी कुक्षिमां उत्पन्न थया. तेमनो प्रसव थतां तेमना बाहुबली ने सुंदरी नाम स्थापन कर्या. (७६) त्यारपछी कल्पवृक्षनी लता फळोने आपे तेनी जेम सुमंगलाए ४९ पुत्रना युगळने अनुक्रमे जन्म आप्यो. (७७) ए रीते ऋषभदेवने १०० पुत्र ने बे पुत्री थयां. नमि ने विनमि ए बे तो प्रभुना खोळे लीधेला (उछेरेला) पुत्रो हता. (७८)

हवे कदाचित् युगलिकोनी अंदर पूर्वे कह्या प्रमाणे कलह उत्पन्न थये सते तेओए आवीने ऋषभ प्रभुने वधारे ज्ञानवाळा जाणी ते हकीकत निवेदन करी. (७९) प्रभुए कह्युं के-' एवा अन्यायनुं तो राजा ज निवारण करी शके. ते राजा अभिषेक करायेल जोइए अने तेनुं ऐश्वर्य बहुलतावडे बीजाओथी अतिक्रम न कराय एवुं जोइए. (८०) युगलिकोए कह्युं के-' अमारे पण तेवो राजा हो ' त्यारे प्रभुए कह्युं के-' तमे नाभिराजाने प्रणाम करीने तमारा इच्छित राजानी मागणी करो.' (८१) तेओए नाभि राजा पासे जइने विज्ञप्ति करी. त्यारे नाभिराजाए कह्युं के-' ऋषभ ज तमारा राजा हो ' त्यारे तेओ तेमने राज्याभिषेक करवा माटे पाणी लेवा गया, तेवामां जेनो आसनकंप

राज्येऽहन्तं धृतच्छत्रं रत्नसिंहासनस्थितं ॥ ८३ ॥ युग्मम् ॥ अर्थांभः पूर्णनलिनी–पत्रभाजनपाणयः । आगतास्ते प्रभुं दृष्ट्वा सर्वालंकारभासुरं ॥ ८४ ॥ विस्मिता मुदिताश्रांत–रुत्कंठासंभृता अपि । उद्यद्विवेकास्तै-र्नीरैः प्रभोरस्नपयन् पदौ ॥ ८५ ॥ तथाह धनपालः परमार्हतः—धन्ना सविम्हयं जेहिं झत्ति कयरज्जमज्जणो हरिणा । चिरधरियन-लिणिपत्ता–भिसेअसलिलेहिं दिट्ठो सि ॥ ८६ ॥ विनयेन ततस्तेषां संतुष्टो वासवो भृशं । विनीतां नगरीमेषां निवासार्थमरीरचत् ॥ ८७ ॥

अस्याः स्वरूपं चैवमाहुः–श्रीविभो राज्यसमये शक्रादेशान्नवां पुरीं । धनदः स्थापयामास रत्नचामीकरोत्करैः ॥८८॥ द्वादशयोजनायामा नव-योजनविस्तृता । अष्टद्वारा महाशाला साभवत्तोरणोज्ज्वला ॥८९॥ धनुषां द्वादश शता–न्युच्चैस्त्वेऽष्टशतं तले । व्यायामे शतमेकं स व्यधाद्वप्रं सखातिकं ॥ ९० ॥ सौवर्णस्य च तस्योर्ध्वं कपिशीर्षावलिर्बभौ । मणिजामरश्रे-

---

थयो छे एवा सौधर्मेंद्रे उतावळे प्रभु पासे आवीने प्रभुने राज्याभिषेक कर्यो अने राजाने योग्य छत्र माथे धारण कर्युं तेमज रत्नसिंहासनपर प्रभुने बेसाड्या. (८२–८३) हवे कमळ-पत्रना भाजन (पडीया) करीने तेमां पाणी भरी युगलिको ते लइने प्रभु पासे आव्या त्यां प्रभुने तो सर्वालंकार संयुक्त जोइने विस्मय पाम्या–हर्षित थया, अने अंतःकरणमां उत्कंठायुक्त थया छतां पण उत्पन्न थयो छे विवेक जेने एवा तेओए लावेला जळवडे प्रभुना पगोनुं प्रक्षालन कर्युं. (८४–८५) धनपाळ 'परमार्हत' आ संबंधमां कहे छे के–'ते वखते इंद्रे उतावळे आवीने जेनो राज्याभिषेक कर्यो छे एवा तेमने नलिनीना पत्रमां अभिषेक जळ लावी, चिरकाल सुधी हाथमां धारण करीने जे युगलिआओए विस्मय सहित जोया छे तेओने धन्य छे.' (८६) त्यारपछी युगलिकोना विनयथी अति संतुष्ट थयेला इंद्रे एमना निवास माटे विनीता नामनी नगरी बनावी दीधी. (८७)

ते नगरीनुं स्वरूप आ प्रमाणे छे.–श्री विभुना राज्यसमये शक्रेंद्रना आदेशथी रत्न–सुवर्णना समूहवडे धनदे नवी पुरीनुं स्थापन कर्युं. (८८) ते नगरी बार योजन लांबी, नव योजन पहोळी, आठ दरवाजावाळी मोटी शाळाओवाळी अने तोरणादिवडे उज्वळ बनावी. (८९) ते नगरीनो गढ १२०० धनुष्य उंचो, जमीनपर आठ सो धनुष्य पहोळो ने उपर एक सो धनुष्य पहोळो फरती खाइवाळो बनाव्यो. (९०) ते गढ उपर सोनाना कांगराओ

लस्थ–नक्षत्रालिरिवोद्गता ॥ ९१ ॥ चतुरस्राश्च त्र्यस्त्राश्च वृत्ताश्च स्वस्ति-कास्तथा । मंदाराः सर्वतोभद्रा एकभूमा द्विभूमकाः ॥ ९२ ॥ त्रिभूमाद्याः सप्तभूमं यावत्सामान्यभूभुजां । प्रासादाः कोटिशस्तत्रा–भूवन् रत्नसुवर्णजाः ॥ ९३ ॥ युग्मं ॥ दिश्यैशान्यां सप्तभूमं चतुरस्रं हिरण्मयं । सवप्रखा-तिकं चक्रे प्रासादं नाभिभूपतेः ॥ ९४ ॥ दिश्यैंद्र्यां सर्वतोभद्रं सप्तभूमं महोन्नतं । वर्त्तुलं भरतेशस्य प्रासादं धनदोऽकरोत ॥ ९५ ॥ आग्नेय्यां भरतस्येव सौधं बाहुबलेरभूत् । शेषाणां च कुमाराणा–मंतरा ह्यभवं-स्तयोः ॥ ९६ ॥ तस्यांतरादिदेवस्य चैकविंशतिभूमिकं । त्रैलोक्यविभ्र-माह्वानं प्रासादं रत्नराजिभिः ॥ ९७ ॥ सवप्रखातिकं रम्यं सुवर्णकल-शावृतं । चंचद्ध्वजपटव्याजा–न्नृत्यंतं निर्ममे हरिः ॥ ९८ ॥ युग्मं ॥ अष्टोत्तरसहस्रेण मणिजालैरसौ बभौ । तावत्संख्यैर्मुखैर्भूरि ब्रुवाण इव तद्यशः ॥ ९९ ॥ कल्पद्रुमैर्वृताः सर्वे–ऽभूवन् सेभहयौकसः । सप्राकारा बृहद्वासः–पताकामालभारिणः ॥ १०० ॥ सुधर्मसदृशी चारु–रत्नमय्य-

---

शोभी रह्या. ते कांगरा मणिमय अमरशैल (मेरु) पर रहेल उगती एवी नक्षत्रनी श्रेणि जेवा जणावा लाग्या. (९१) ते नगरीमां चोखंडा, त्रिकोण, गोळ, स्वस्तिकाकृतिवाळा, मंदार, सर्वतोभद्र, एक भूमिवाळा, बे भूमिवाळा, त्रण भूमिवाळा यावत् सात भूमिवाळा रत्न ने सुवर्णना बनावेला क्रोडोगमे प्रासादो सामान्य राजाओ माटे बनाववामां आव्या. (९२–९३) ईशान कोणमां सात भूमिवाळो, चोखंडो, सुवर्णमय अने गढ तथा खाइ-वाळो प्रासाद नाभिराजा माटे बनाववामां आव्यो. (९४) पूर्वदिशाए सर्वतोभद्र प्रासाद सातभूमिनो, घणो उंचो अने गोळ भरतेश माटे धनदे बनाव्यो. (९५) अग्निकोणमां भरतना जेवो ज प्रासाद बाहुबली माटे बनाववामां आव्यो. बाकीना कुमारो माटे ते बेना आंतरामां जुदा जुदा प्रासादो बनाववामां आव्या. (९६) ते बधानी मध्यमां आदिदेव माटे एकवीश भूमिवाळो, त्रैलोक्यविभ्रम नामनो, रत्नश्रेणिओवडे शोभतो, गढ तथा खाइवाळो, सुवर्णना कळशयुक्त चंचळ एवी ध्वजाओना मिषथी जाणे नृत्य करतो होय तेवो प्रासाद इंद्रे बनाव्यो. (९७–९८) ते प्रासाद एक हजार ने आठ मणिमय जाळी-ओवडे जाणे तेटला मुखोवडे तेमनो यश बोलतो न होय तेवो शोभतो हतो. (९९) आ बधा प्रासादो कल्पवृक्षोवडे विंटायेला हता, हाथीओ अने अश्वोनी शाळाओ सहित हता, फरता गढवाळा हता अने मोटा वस्त्रनी पताकाओना समूहवडे शोभावाळा हता. (१००) युगादिदेवना मुख्य प्रासादनी आगळ सुधर्मासभा जेवी सर्वप्रभा नामनी

भवत्पुरः । युगादिदेवप्रासादात् सभा सर्वप्रभाभिधा ॥ १ ॥ चतुर्दिक्षु व्यराजंत मणितोरणमालिकाः । पंचवर्णप्रभांकूर—पूरडंबरितांबराः ॥ २ ॥ अष्टोत्तरसहस्रेण मणिबिंबैर्विभूषितं । गव्यूतिद्वयमुत्तुंगं मणिरत्नहिरणमयं ॥ ३ ॥ नानाभूमिगवाक्षाढ्यं विचित्रमणिवेदिकं । प्रासादं जगदीशस्य व्यधाच्छ्रीदः पुरांतरा ॥ ४ ॥ युग्मं ॥ सामंतमंडलीकानां नंद्यावर्त्तादयः शुभाः । प्रासादा निर्मितास्तत्र विचित्रा विश्वकर्मणा ॥ ५ ॥ अष्टोत्तरसहस्रं तु जिनानां भवनान्यभुः । उच्चैर्ध्वजाग्रसंक्षुब्ध—तीक्ष्णांशुतुरगाण्यधः ॥ ६ ॥ चतुष्पथप्रतिबद्धा—श्चतुरशीतिरुच्चकैः । प्रासादाश्चार्हतां रम्या हिरण्यकलशैर्बभुः ॥ ७ ॥ सौधानि हिरण्यरत्न—मयान्युच्चैः सुमेरुवत् । कौबेर्यां सपताकानि चक्रे स व्यवहारिणां ॥ ८ ॥ दक्षिणस्यां क्षत्रियाणां सौधानि विविधानि च । अभूवन् शस्त्रागाराणि तेजांसीव निवासिनां ॥ ९ ॥ तद्वप्रांतश्चतुर्दिक्षु पौराणां सौधकोटयः । व्यराजंत द्युसद्यान—समानविशदश्रियः ॥ १० ॥ सामान्यकारुकाणां च बहिः

रत्नमय सुंदर सभा बनावी. (१०१) ते सभानी चारे दिशाए मणिमय तोरणोनी श्रेणि हती ते पांच वर्णनी प्रभाना अंकुराओवडे आकाशने पण भरी देती हती. (२) ए नगरीना मध्यमां धनदे एक हजार ने आठ मणिमय बिंबोथी विभूषित, बे गाउ उंचो, मणि, रत्न ने सुवर्णमय अनेक भूमिओ ने गवाक्षोवाळो तेमज विचित्र मणिमय वेदिकावाळो एक जगदीशनो प्रासाद बनाव्यो. (३–४) ते नगरीमां सामंत अने मांडलिकोना नंद्यावर्त्तादि अनेक शुभजातिना प्रासादो विचित्र प्रकारना विश्वकर्माए बनाव्या. (५) उंचे रहेली ध्वजाना अग्रभागथी सूर्यना अश्वोने क्षोभ पमाडे तेवा एक हजार ने आठ जिनभवनो बनाव्या. (६) चतुष्पथमां बनावेला उंचा मनोहर अर्हतना चोराशी प्रासादो सुवर्णमय कळशोवडे शोभता हता. (७) व्यवहारीओना घरो हिरण्यरत्नमय मेरुपर्वत जेवा उंचा पताका सहित उत्तरदिशामां बनाव्या. (८) दक्षिण दिशामां क्षत्रिओना विविध प्रकारना महेलो बनाव्या अने त्यां रहेनाराओना जाणे तेज होय एवा अनेक शस्त्रागारो बनाव्या. (९) ते नगरीना गढमां चारे दिशाए देवताओना विमान जेवा उज्वळ शोभावाळा कोटिगमे मकानो पौरजनो माटे बनाववामां आव्या. (१०) सामान्य कारुको माटे गढनी बहार चारे दिशाए सर्व प्रकारना धनना आश्रयवाळा क्रोडोगमे घरो बना-

प्राकारतोऽभवन् । कोटिसंख्याश्चतुर्दिक्षु गृहाः सर्वधनाश्रयाः ॥ ११ ॥ अपाच्यां च प्रतीच्यां च कारुकाणां वसुर्गृहाः । एकभूममुखाख्यस्रा-त्रिभूमिं यावदुच्छ्रिताः ॥ १२ ॥

अहोरात्रेण निर्माय तां पुरीं धनदोऽकिरत् । हिरण्यरत्नधान्यानि वासांस्याभरणानि च ॥ १३ ॥ सरांसि वापिकूपादीन् दीर्घिकादेवताल-यान् । अन्यच्च सर्वं तत्राहो-रात्रेण धनदोऽकरोत् ॥ १४ ॥ विपिनानि चतुर्दिक्षु सिद्धार्थश्रीनिवासके । पुष्पाकरं नंदनं चा-भवन् भूयांसि चान्यतः ॥ १५ ॥ प्रत्येकं हेमचैत्यानि जिनानां तत्र रेजिरे । पवनाहृत-पुष्पाणि पूजितानि द्रुमैरपि ॥ १६ ॥ प्राच्यामष्टापदोऽपाच्यां हेमशैलो महोन्नतः । प्रतीच्यां सुरशैलस्तु कौबेर्यामुदयाचलः ॥ १७ ॥ तत्रैवमभ-वन् शैलाः कल्पवृक्षालिमालिताः । मणिरत्नाकराः प्रोच्चै-र्जिनावासप-वित्रिताः ॥ १८ ॥ शक्राज्ञया रत्नमयी-मयोध्यां परनामतः । विनीतां सुरराजस्य पुरीमिव स निर्ममे ॥ १९ ॥ यद्वास्तव्यजना देवे गुरौ धर्मे

व्या. (११) दक्षिणमां ने पश्चिममां कारुकोना एक भूमिथी त्रण भूमि सुधी उंचा त्रिकोण गृहो बनाव्या. (१२).

आ प्रमाणेनी नगरीने एक अहोरात्रमां बनावीने धनदे तेमां हिरण्य, रत्न, धान्य, वस्त्रो अने आभूषणो विगेरे वरसाव्या, (१३) तेम ज सरोवरो, वावो, कुवाओ, दीर्घिकाओ, देवालयो अने बीजुं बधुं एक अहोरात्रमां धनदे बनावी दीधुं. (१४) नगरीनी चारे दिशाए सिद्धार्थ, श्रीनिवास, पुष्पाकर अने नंदन ए नामना चार वनो बनाव्या, ते सिवाय बीजा घणा वनो बनाव्या. (१५) ते प्रत्येक वनमां सुवर्णनुं एकेक जिनचैत्य बनाववामां आव्युं के जे चैत्योने पवनथी उडतां पुष्पोवडे द्रुमो पण पूजे छे, एम जणावा लाग्युं. (१६) ए नगरीनी पूर्वे अष्टापद, दक्षिणे महाउन्नत एवो हेमशैल, पश्चिमे सुरशैल अने उत्तरे उदयाचळ शुभ चार पर्वतो आवेला छे. (१७) ते पर्वतो कल्पवृक्षोनी श्रेणिओथी मंडित, मणिरत्ननी खाणोवाळा अने घणा उंचा जिनप्रासादोथी पवित्रित हता. (१८)

इंद्रनी आज्ञाथी रत्नमय अने जेनुं बीजु नाम अयोध्या छे एवी आ विनीता नगरी इंद्रनी पुरी जेवी धनदे निर्माण करी. (१९)

ते नगरीमां रहेनारा जनो देव, गुरु ने धर्ममां आदरवाळा, स्थैर्यादिगुणयुक्त, सत्य,

च सादराः । स्थैर्यादिभिर्गुणैर्युक्ताः सत्यशौचदयान्विताः ॥ २० ॥ कलाकलापकुशलाः सत्संगतिरताः सदा । विशदाः शांतसद्भावा अहमिंद्रा महोदयाः ॥ २१ ॥ युग्मं ॥ तत्पुर्यामृषभः स्वामी सुरासुरनरार्चितः । जगत्सृष्टिकरो राज्यं पाति विश्वस्य रंजनात् ॥ २२ ॥ अन्वयोध्यमिह क्षेत्र–पुराण्यासन् समंततः । विश्वसृष्टृशिल्पिवृंद–घटितानि तदुक्तिभिः ॥ २३ ॥ विंशतौ पूर्वलक्षेषु गतेषु जनिकालतः । तत्रैवं हरिणा राज्येऽभिषिक्तो वृषभः प्रभुः ॥ २४ ॥ कुर्वन्नश्वगजादीनां संग्रहं सुस्थितां स्थितिं । राज्यस्य सकलां चक्रे न्यायाध्वनि पुरस्सरः ॥ २५ ॥ प्रभुणा दर्शितेष्वेवं मूलशिल्पेषु पंचसु । प्रावर्त्तंत शिल्पशत–कर्माण्यपि ततः परं ॥ २६ ॥ तद्व्यक्तिस्तु प्राग्दर्शिता. प्रावर्त्ततान्नपाकादि–राहारविषयो विधिः । शिल्पं घटादि कृष्यादि–कर्माणि वचसा प्रभोः ॥ २७ ॥ नानारत्नाद्यलंकारैः प्रभोर्देहविभूषणां । दृष्ट्वा देवैः कृतां लोके प्रावर्त्तत विभूषणा ॥ २८ ॥ ब्राह्म्या दक्षिणहस्तेन दर्शिता लिपयोऽखिलाः । एक-

---

शौच ने दयासंयुक्त, कळाकलापमां कुशळ, निरंतर सत्संगतिमां रक्त, विशद (डाह्या), शांत स्वभावी, अहमिंद्र ने मोटा उदयवाळा होता हवा. (२०–२१) ते नगरीमां सुरासुर ने नरार्चित एवा जगत्सृष्टि (व्यवहार) ना करनारा ऋषभदेव विश्वनुं रंजन करवावडे राज्यनुं प्रतिपालन करवा लाग्या. (२२) आ अयोध्या नगरीनी पछी तेनी चोतरफ क्षेत्रो अने नगरो पण हता, ते विश्वकर्माना कहेवाथी तेना शिल्पिओए बनाव्या हता. (२३) जन्मथी वीश लाख पूर्व गया त्यारे इंद्रे प्रभुने राज्यपर स्थापन कर्या. (२४) पछी तेमणे हाथी, घोडाओ विगेरेनो संग्रह कर्यो अने न्यायमार्ग पुरस्सर एवा तेमणे राज्यनी बधी स्थिति सुस्थित बनावी. (२५) प्रभुए बतावेला मूळ पांच शिल्पमांथी सो शिल्प प्रवर्त्या अने बीजा कर्मो प्रवर्त्या. (२६) तेनी विगत प्रथम बताववामां आवेल छे. प्रभुना कहेवा प्रमाणे अन्नपाकादि आहारसंबंधी विधि, घटादि शिल्पो अने कृष्यादि कर्मो प्रवर्त्या. (२७) नाना प्रकारना रत्नना अलंकारोवडे देवोए करेली प्रभुना शरीरनी शोभा जोइने लोकोमां पण आभूषणो कराववानी (पहेरवानी) प्रवृत्ति चाली. (२८) प्रभुए जमणे हाथे ब्राह्मीने सर्व प्रकारनी लिपिओ बतावी अने सुंदरीने डाबा हाथवडे एक बे

ख्यादि च संख्यानं सुंदर्या वामपाणिना ॥ २९ ॥ काष्टपुस्तादिकर्मैवं भरतस्योपदर्शितं । दर्शितं बाहुबलिने स्त्रीनराश्वादिलक्षणं ॥ ३० ॥ वस्तूनां मानमुन्मान–मुपमानं तथाऽपरं । प्रमाणं गणितं चेति पंचकं व्यवहारकृत् ॥ ३१ ॥ मानं द्विधा धान्यमानं रसमानं तथाऽपरं । धान्यमानं सेतिकादि कर्पादि च रसस्य तत् ॥ ३२ ॥ पूगीफलादे: गण्यस्यो–न्मानं संख्यानुमानतः । सहस्रं नालिकेराणां पुंजेऽस्मिन्निति कल्पना ॥ ३३ ॥ उपमानं च तौल्येन पलादिपरिभावनं । हस्तदंडादिना भूमि–वस्त्रादेर्वा मितिः स्फुटा ॥ ३४ ॥ इयद्वर्णमिदं स्वर्ण–मियत्पानीयकं त्विदं । रत्नमित्यादि प्रमाणं गणितं प्राग्निरूपितं ॥ ३५ ॥ प्रोतं दवरके मण्या–दीनां सम्यग् निवेशनं । समुद्रादौ च बोहित्थ–वाहनं पोतमूचिरे ॥ ३६ ॥ व्यवहारो विसंवादे गत्वा राजकुलादिषु । न्यायस्य निश्चयो यद्वा वस्तूनां क्रयविक्रयौ ॥ ३७ ॥ नीतिः सामादिका युद्धं बाहुयुद्धाद्यनेकधा । इषुशास्त्रं धनुर्वेदो

विगेरे संख्या (अंकविद्या) बतावी. (२९) काष्टपुस्तादिकर्म भरतने शिखव्या अने बाहुबलिने स्त्री, पुरुष ने अश्वादिना लक्षणो समजाव्या. (३०) वस्तुओना मान, उन्मान, उपमान, प्रमाण ने गणित ए पांच प्रकारे व्यवहार बताव्यो. (३१) तेमां मान बे प्रकारे– धान्यमान ने रसमान–धान्यमान सेतिकादि अने रसमान कर्पादि समजवुं. (३२) सोपारी विगेरे गणीने वेचवा लायकनी संख्या अनुमानथी नकी करवी–आ नाळीयेरना ढगलामां हजार नाळीयेर छे, एम कल्पनाथी कही देवुं ते उन्मान समजवुं. (३३) तोलवडे करीने आटला पलादि तोलमां छे एम कहेवुं तेम ज हाथ अने दंडादिवडे भूमि तेम ज वस्त्रादिनुं जे स्फुटपणे प्रमाण कहेवुं ते उपमान समजवुं. (३४) आवा वर्णवाळुं आ स्वर्ण छे अथवा आवा पाणीवाळुं आ रत्न छे, एम कहेवुं ते प्रमाण समजवुं अने गणित तो पूर्वे कही आवेल छीए ते प्रमाणे समजवुं. (३५) (आ रीते पांच प्रकारो समजवा.) दोरीमां मणि विगेरे सम्यक् प्रकारे गोठववा ते प्रोत अने समुद्रादिकमां वहाण विगेरे चलाववा ते पोत कहेवाय छे. (आ पण शीखव्युं) (३६) विसंवाद थये सते राजकुलादिमां जइने न्याय मेळववो ते, अथवा वस्तुनो क्रय–विक्रय करवो ते व्यवहार कहेवाय छे. (३७) नीति सामादिक, युद्ध बाहुयुद्धादि अनेक प्रकारनुं, इषुशास्त्र, धनुर्वेद,

राजादीनां च सेवना ॥ ३८ ॥ वैद्यशास्त्रं नीतिशास्त्रं बंधनं निगडादिभिः। मारणं नागपूजाद्या यज्ञा ऐंद्रादयो महाः ॥ ३९ ॥ मेलको गोष्ठिकादीनां पूर्ग्रामादिपरिग्रहः । प्रयोजनविशेषेण ग्रामादिजनसंगमः ॥ ४० ॥ एषु किंचिज्जिने राज्यं भुंजानेऽजायत क्रमात्। किंचिच्च भरते किंचित् प्रावर्त्तत तदन्वपि ॥ ४१ ॥ षड्भिः कुलकं ॥ स्वयं स्वदर्शयत्सर्वाः कलाः शिल्पानि च प्रभुः । तेषामनेकभेदत्वं ततस्तेने जनः क्रमात् ॥ ४२ ॥ स्वस्तिकादिमंगलानि रक्षादिकौतुकानि च । प्रभोः कृतानि देवैः प्राक् प्रावर्त्तत ततो जने ॥ ४३ ॥ केशवस्त्राद्यलंकारै-र्दृष्ट्वा देवैरलंकृतं। जगदीशं परेऽप्येवं कुर्वंति स्म जना भुवि। ॥ ४४ ॥ चूलाकर्मादि बालानां तिथिधिष्ण्यादिसौष्ठवे । लेखशालोपनयनं प्रावर्त्तत विभोर्गिरा । ॥ ४५ ॥ प्रभोरिंद्रकृतं दृष्ट्वा विवाहस्य महोत्सवं । लोका अपि तथा चक्रुः पाणिग्रहणमंगलं ॥ ४६ ॥ युग्मिधर्मनिषेधाय भरताय ददौ प्रभुः । सोदर्यां बाहुबलिनः सुदरीं गुणसुंदरीं ॥ ४७ ॥ भरतस्य च सोदर्यां ददौ ब्राह्मीं

राजादिकनी सेवना केम करवी ? ते, वैद्यशास्त्र, नीतिशास्त्र, निगडादिवडे बंधन, मारण, नागपूजादि यज्ञो, इंद्रादिक महोत्सवो, गोष्ठिकादिनो मेळाप, नगरग्रामादि ग्रहण करवा, कोइ प्रयोजन विशेषे ग्राम्यजननुं एकत्र मळवुं–आ बधामां केटलुंक प्रभु राज्य करते सते थयुं, त्यारपछी अनुक्रमे केटलुंक भरतचक्री राज्य करते सते प्रवर्त्युं अने केटलुंक त्यारपछी पण थयुं. (३८–४१) सर्व कळा अने शिल्पो प्रभुए पोते बताव्या पछी लोकोए तेना अनेक भेदोनो विस्तार पोतपोतानी बुद्धि प्रमाणे कर्यो. (४२) स्वस्तिकादि मंगळो अने रक्षादि कौतुको प्रथम देवोए प्रभुना संबंधमां कर्या पछी लोकोमां प्रवर्त्यां. (४३) केश, वस्त्र अने अलंकारादिवडे देवोए प्रभुने अलंकृत कर्या ते जोइने बीजा लोको पण पृथ्वीपर ते प्रमाणे करवा लाग्या. (४४) बाळकोनुं चूलाकर्म[1] विगेरे अने लेखशाळाए बेसाडवुं विगेरे सारी तिथि ने नक्षत्रमां प्रभुए बताव्या प्रमाणे करवानुं शरु थयुं. (४५) प्रभुनो इंद्रे करेलो विवाहमहोत्सव जोइने लोको पण ते ज प्रमाणे पाणिग्रहण महोत्सव करवा लाग्या. (४६) युग्मधर्मनो निषेध करवा माटे बाहुबलिनी सहोदरी गुणोवडे सुंदर एवी सुंदरी प्रभुए भरतने आपी (४७) अने भरतनी सहोदरी ब्राह्मीने प्रभुए बाहु-

---

१ बाळ उतराववा.

जगत्प्रभुः । भूपाय बाहुबलिने तदादि जनताप्यथ ॥ ४८ ॥ भिन्नगोत्रादिकां कन्यां दत्तां पित्रादिभिर्मुदा । विधिनोपायत प्रायः प्रावर्त्तत तथा ततः ॥ ४९ ॥

एवं च पालयामास तद्राज्यं वृषभो नृपः । त्रिषष्टिं पूर्वलक्षाणि प्रीणितप्राणिमंडलः ॥ ५० ॥ त्र्यशीतौ पूर्वलक्षेषु गतेष्वेवं च जन्मतः । व्यतरद्वार्षिकं दानं जिघृक्षुः संयमं प्रभुः ॥ ५१ ॥ ददतं वार्षिकं दानं दृष्ट्वा च जगदीश्वरं । प्रावर्त्तत जनोऽप्येवं दानं दातुं यथाविधि ॥ ५२ ॥ एवं च धनरत्नादि दानं प्रावर्त्तत क्षितौ । अद्यापि तत एवेद-मविच्छिन्नं प्रवर्तते ॥ ५३ ॥ विभज्यादाज्जिनो राज्य-शतं पुत्रशताय च । ततः पिता स्वपुत्रेभ्यो दद्यादित्यभवत् स्थितिः ॥ ५४ ॥

प्रवर्द्धमानवैराग्यः संप्राप्तः पश्चिमं वयः । सुदर्शनाख्यां शिबिका-मारूढः ससुरासुरः ॥ ५५ ॥ कृतषष्ठतपा उग्र-भोगादीनां सहस्त्रकैः । चतुर्भिः सार्द्धमागत्य विनीतायाः पुरो बहिः ॥ ५६ ॥ स सिद्धार्थवनो-

---

बलिने आपी. त्यारथी लोकोमां ते प्रमाणे प्रवृत्ति चाली. (४८) तेम ज भिन्न गोत्रादिकवाळी अने तेना मातापिताए दीधेली कन्यानुं विधिप्रमाणे पाणिग्रहण करवुं एवी प्रवृत्ति पण त्यारथी ज चाली. (४९)

ए प्रमाणे वृषभ राजाए त्रेसठ लाख पूर्व सुधी अनेक प्राणीवर्गने सुख उपजाववापूर्वक राज्यनी प्रतिपालना करी. (५०) ए रीते जन्मथी त्राशी लाख पूर्व व्यतीत थया त्यारे संयम ग्रहण करवाने इच्छता प्रभु वार्षिकदान आपवा लाग्या. (५१) जगदीश्वरने वार्षिक दान देता जोइने लोको पण ते ज प्रमाणे यथाविधि दान देवामां प्रवर्त्या. (५२) ए रीते धन-रत्नादिनुं दान पृथ्वीपर प्रवर्त्युं के जे अद्यापि अविछिन्नपणे प्रवर्त्ते छे. (५३) प्रभुए राज्यना सो भाग करीने सो पुत्रोने वहेंची दीधा त्यारथी पिता पोताना पुत्रोने भाग वहेंची आपे एवी प्रवृत्ति शरु थइ. (५४)

ए प्रमाणे प्रवर्धमान वैराग्यवाळा अने पश्चिमवयने पामेला प्रभु सुदर्शना नामनी शिबिकामां बेसीने सुरासुरना परिवार साथे, छठ्ठ तप करीने, उग्रभोगादि जातिना चार हजार राजपुरुषोनी साथे विनीतानगरीनी बहार उद्यानमां आव्या. (५५-५६) त्यां सिद्धार्थ-

द्याने तलेऽशोकमहातरोः । चक्रे लोचं चतुर्मुष्टि-मपराह्णे जगत्प्रभुः ॥५७॥ स्वर्णवर्णं स शृंगस्थं केशमुष्टिं च पंचमीं । ररक्ष शक्रविज्ञप्त्या दक्षो दाक्षिण्यसेवधिः ॥ ५८ ॥ अनुप्रव्रजितास्तेऽपि स्वामिमार्गानुगामिनः । अरक्षन् पंचमीं केश-मुष्टिं स्कंधोपरि स्थितां ॥ ५९ ॥ चैत्रस्य श्यामलाष्टम्या-मेवमात्तव्रतः प्रभुः । विजहार क्षितावंगी-कृतमौनाद्यभिग्रहः ॥६०॥

तदानीं च न जानाति लोको भिक्षा नु कीदृशी । कीदृशाः खलु भिक्षाका दीयते सा कथं कदा ॥ ६१ ॥ अनुप्रव्रजितास्तेऽथ कच्छाद्याः क्षुत्तृडर्दिताः । पृच्छंति भोजनोपायं प्रभुं प्रणतमौलयः ॥ ६२ ॥ अजल्पति प्रभौ नित्यं क्षुद्व्यथामसहिष्णवः । गंतुं गृहेऽनुचितमि-त्यभूवंस्तापसा वने ॥ ६३ ॥

अगृह्णन्नबुधैर्लोकै-र्दीयमानं धनादिकं । हस्तिनागपुरं प्रापा-ब्देन क्ष्मां विहरन् विभुः ॥ ६४ ॥ स्वामी किंचिन्न लातीति श्रुत्वा जनमहारवं । दृष्ट्वा च प्रभुनेपथ्यं श्रेयांसाख्यो नृपात्मजः ॥ ६५ ॥ जातजा-

---

वन नामना उद्यानमां अशोक नामना महावृक्षनी नीचे अपरान्हे जगत्प्रभुए चारमुष्टि लोच कर्यो. (५७) पछी मस्तकरूप शृंगपर रहेला स्वर्णसरखा वर्णवाळा एक मुष्टिप्रमाण केशोने इंद्रनी विज्ञप्तिथी दक्ष अने दाक्षिण्यताना भंडार एवा प्रभुए रहेवा दीधा. (५८) स्वामीना मार्गानुयायी अने स्वामीनी साथे प्रव्रजित थयेला राजपुत्रोए पण स्कंधपर रहेल पंचम मुष्टिगत केश रहेवा दीधा. (५९) ए प्रमाणे चैत्रवदि अष्टमीए प्रभुए व्रत ग्रहण कर्युं अने अंगीकार कर्या छे मौनादि अभिग्रह जेणे एवा प्रभुए पृथ्वीपर अन्यत्र विहार कर्यो. (६०)

हवे ते वखते लोको जाणता नहोता के भिक्षा केवी होय ? भिक्षाचर केवा होय ? भिक्षा केम देवाय ? अने क्यारे देवाय ?. (६१) तेथी प्रभुनी साथे प्रव्रजित थयेला कच्छ विगेरे क्षुधा ने तृषाथी पीडित थया सता प्रभुने नमस्कार करीने भोजननो उपाय पूछवा लाग्या; (६२) परंतु प्रभु तो बोलता नहोता-जवाब आपता नहोता एटले निरंतर क्षुधातृषाने सहन नहीं करी शकनारा तेओ पाछा घरे जवुं ते पण अनुचित जाणीने तापसो थया अने वनमां रहेवा लाग्या. (६३)

हवे प्रभु अज्ञानलोको तरफथी देवा माटे धरवामां आवता धनादिकने ग्रहण नहीं करता अनुक्रमे विचरता एक वर्ष लगभग व्यतिक्रमे हस्तिनापुरमां आव्या. (६४) 'स्वामी कांइ लेता नथी' एवो लोकोथी थतो महाशब्द सांभळतां अने प्रभुनो वेश जोतां

तिस्मृतिश्चित्ते चिंतयामासिवानिति । अहो प्रभुर्यतीभूतः किं कुर्वीत धनादिभिः ॥ ६६ ॥ भवादहं तृतीयेऽस्मा–त्स्वामिनश्चक्रवर्त्तिनः । सारथिः सार्द्धमेतेना–भवं पालितसंयमः ॥ ६७ ॥ नवकोटिविशुद्धं त–न्होज्यमस्योपयुज्यते । कर्मचयसहायस्य साधोर्देहस्य धारकं ॥ ६८ ॥ घटमिक्षुरसस्यैकं केनचित्प्राभृतीकृतं । तदा भगवते सोऽदा–न्निर्दोषं विशदाशयः ॥ ६९ ॥ अत्र चावश्यकचूर्णावेक इक्षुरसघट उक्तः, पद्मानंदकाव्यहैमऋषभचरित्रयोस्तु (भक्तामरवृत्तावपि) ते वहव उक्ताः संतीति ज्ञेयं. पाणिभ्यां च गृहीत्वा तं प्रभुः पाणिपतद्ग्रहः । वार्षिकीं पारणां चक्रे बिंदुमप्यकिरन् भुवि ॥ ७० ॥ यतः—माइज्ज घडसहस्सा अहवा माइज्ज सागरा सव्वे । जस्सेआरिसलद्धी सो पाणिपडिग्गही होइ ॥७१॥

त्यांना राजा चंद्रयशाना पुत्र श्रेयांसने जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न थयुं, तेथी ते चित्तमां विचारवा लाग्या के—'अहो! प्रभु तो मुनि थया छे. ते धनादिकने शुं करे? (६५–६६) आ भवथी त्रीजे भवे प्रभु ज्यारे महाविदेहमां चक्रवर्त्ती हता त्यारे हुं तेमनो सारथी हतो, अने एमनी साथे में पण चारित्र लीधुं हतुं अने पाळ्युं हतुं; (६७) तेथी हुं जाणुं छुं के आ प्रभुने तो नवकोटिवडे परिशुद्ध भोजन ज उपयोगी थाय. कारण के साधुने कर्मचयमां सहायक एवा देहने ते मददगार थाय छे.' (६८) श्रेयांस आ प्रमाणे विचारे छे तेवामां कोइए आवीने इक्षुरसनो एक घडो तेने भेट कर्यो. एटले विशद आशयवाळा तेणे ते निर्दोष वस्तु प्रभुने आपी–वहोरावी. (६९) अहीं आवश्यकचूर्णिमां इक्षुरसनो एक घडो कह्यो छे, परंतु पद्मानंद काव्यमां अने हेमाचार्यकृत ऋषभचरित्रमां (तथा [3]भक्तामरनी टीकामां पण) घणा घडा कह्या छे एम जाणवुं. प्रभु पाणिपतद्ग्रह एटले हस्तरूपपात्रवाळा होवाथी प्रभुए ते रस हाथमां ज लीधो अने वर्षीतपनुं पारणुं कर्युं. ते रसमांथी एक बिंदु पण जमीनपर पड्युं नहीं. (७०) कह्युं छे के–हजारो घडा समाइ जाय अथवा सर्व समुद्र पण जेना हाथमां समाइ जाय एवी जेने लब्धि होय ते ज पाणिपात्र (हस्तपात्र) थाय. (७१) ते वखते त्यां पंचदिव्य प्रगट थया अने

---

१ अत्रान्तरे च कश्चि–न्नव्येक्षुरसेन संभृतान् कुम्भान् । युवराजपुरोऽढौकय–दिक्षुवशा यद्विभोर्वंश्याः ॥ १८ ॥ (एकविंशश्लोकवृत्तौ) २ बाहुबलिना पुत्र. ३ आ अवसरे युवराजनी पासे कोइक पुरुषे ताजा इक्षुरसना भरेला घडाओ लावीने मूक्यां, केमके प्रभुना वंशजो इक्षुने वश छे. १८. (२१ मा श्लोकनी टीका)

पंचदिव्यान्यजायंत प्रससार यशो भुवि । श्रेयांसोपक्रमं पात्र-दानं प्रावर्त्तत क्षितौ ॥ ७२ ॥ तथोक्तमावश्यकनिर्युक्तौ—संवच्छरेण लद्धा भिक्का उसहेण लोगनाहेण । सेसेहिं बीअदिवसे लद्धाउ पढमभिक्काउ ॥ १ ॥ अत्र यद्यपि—राधशुक्लतृतीयायां दानमासीद्यदक्षयं । पर्वाक्षय-तृतीयेति तदद्यापि प्रवर्त्तते ॥ १ ॥ इति शत्रुंजयमाहात्म्यवचनात्, चैत्र-कृष्णाष्टम्या अक्षयतृतीयायां साधिकं वर्षं स्यात्तथापि किंचिदाधिक्य-स्याविवक्षया वर्षमुक्तमिति संभाव्यते, अत एव भक्तामरवृत्तावुक्तं—साधिकवर्षं चतसृषु दिक्षु बहल्यादिमंडलानि विभुः। व्यहरन् मुक्ताहारो मुनिभिक्षामूर्खमनुजवशात् ॥ १ ॥

सहस्रमेकं वर्षाणां विजहार क्षिताविति। प्रमादकालस्तत्राहो-रात्रं संकलितोऽभवत् ॥ ७३ ॥ शाखापुरे विनीतायाः पुरिमतालसंज्ञके । उद्याने शकटमुखे न्यग्रोधस्य तरोस्तले ॥ ७४ ॥ विहिताष्टमभक्तस्यो-त्पेदे केवलमुज्ज्वलं। फाल्गुने श्यामैकादश्यां पूर्वाह्णे ध्यानशुद्धितः ॥७५॥

श्रेयांसनो यश पृथ्वीपर विस्तार पाम्यो. आ पृथ्वीपर श्रेयांसथी ज पात्रदाननी प्रवृत्ति शरु थइ. (७२) श्रीआवश्यकनिर्युक्तिमां कह्युं छे के—" श्रीऋषभलोकनाथे एक वर्षे भिक्षा मेळवी. बीजा त्रेवीशे प्रभुए दीक्षाने बीजे दिवसे ज प्रथम भिक्षा प्राप्त करी. " अहीं " वैशाख शुक्ल तृतीयाने दीवसे अक्षय दान अपाणुं तेथी ते दिवस अक्षयतृतीया नामना पर्व तरीके अद्यापि पण प्रवर्ते छे. " आ प्रमाणे श्रीशत्रुंजयमाहात्म्यमां कह्युं छे. चैत्र वदि ८ थी अक्षयतृतीयाए साधिक वर्ष (१३ मास ने १० दिवस) थाय छे, तथापि कांइक अधिकनी विवक्षा न करवाथी एक वर्ष कहेल छे एम जणाय छे. आ ज कारणथी भक्तामरनी वृत्तिमां कह्युं छे के—' साधिक वर्ष पर्यंत चारे दिशामां बहलि विगेरे देशमां विचरता छतां सर्वत्र मुनिभिक्षाथी अज्ञान मनुष्यो होवाथी प्रभु आहार-रहित रह्या. '

ए प्रमाणे प्रभु एक हजार वर्षसुधी पृथ्वीपर विचर्या. तेमां प्रमादकाळ बधो एकत्र करतां एक अहोरात्र जेटलो थयो. (७३) प्रांते विनीतानगरीना पुरिमताल नामना शाखापुरमां शकटमुख नामना उद्यानमां न्यग्रोध (वड) वृक्षनी नीचे अष्टमभक्त कर्यो छे जेणे एवा प्रभुने फागण वदि अग्यारशे पूर्वान्हे ध्यानशुद्धिथी केवळज्ञान उत्पन्न थयुं. (७४-७५) ते वखते भरतचक्री मरुदेवी माताने हाथीपर बेसाडी साथे लइने प्रभुने

---

१ आपणी फागण वदि ८.

तदा च मरुदेवांबा साकं भरतचक्रिणा। गजारूढा प्रभुं नंतु–मागच्छन्ती शिवं ययौ ॥ ७६ ॥ एतस्यामवसर्पिण्यां सिद्धोऽयं प्रथमोऽभवत्। अंतर्मुहूर्त्तमात्रेण .प्रभोः केवललाभतः ॥ ७७ ॥ मरुदेवाशरीरं च देवैः सत्कृत्य संस्कृतं। प्रावर्त्तत ततो लोके शवसत्कृतिसंस्क्रियाः ॥ ७८ ॥ एवं च–आदितस्तद्भवेऽष्टानां निर्वृता मातरोऽर्हतां । अष्टाष्टौ स्वर्गताः शेषा–स्तृतीयतुर्ययोः क्रमात् ॥ ७९ ॥ नाभिर्नागकुमारेऽगा–त्सप्ताष्टाष्टौ ततः क्रमात्। द्वितीयादिषु नाकेषु त्रिष्वगुः पितरोऽर्हतां ॥ ८० ॥ इति प्रवचनसारोद्धाराद्यभिप्रायः, जितशत्रुसुमित्रविजयौ दीक्षितौ सिद्धौ इति तूत्तराध्ययनदीपिकायां. ' जितशत्रुर्ययौ मुक्तिं सुमित्रस्त्रिदिवं गतः ' इति योगशास्त्रवृत्तौ, ' तृप्तो न पुत्रैः सगर ' इति श्लोकवृत्तौ. श्रीवीरमातापित्रोस्तु श्रीआचारांगे द्वादशदेवलोकेऽपि गतिरुक्तेति ज्ञेयं.

शतानि पंच पुत्राणां सप्त नप्तृशतानि च। भरतस्याद्यसमव–सरणे प्राव्रजन् प्रभोः ॥ ८१ ॥ अष्टापदाद्रौ समव–सृते च श्रीजिनेऽन्यदा ।

वांदवा आवता हता, तेवामां ते माता शिवपदने पाम्या–मोक्षे गया. (७६) आ अवसर्पिणीमां ए प्रथम सिद्ध थया, कारण के प्रभुने केवळज्ञाननी प्राप्ति थया पछी अंतर्मुहूर्त्ते तेओ सिद्ध थया. (७७) मरुदेवा माताना शरीरनो देवोए सत्कार करवापूर्वक संस्कार कर्यो, त्यारथी लोकोमां शवनो सत्कार अने संस्कार शरु थया. (७८)

प्रथमथी मांडीने आठ प्रभुनी माता ते ज भवे मोक्षे गया अने बीजा ने त्रीजा आठ आठ प्रभुनी माताओ त्रीजा ने चोथा देवलोकमां अनुक्रमे गया. (७९) नाभिराजा नागकुमारमां देव थया अने बाकीना सात, आठ ने आठ प्रभुना पिता अनुक्रमे बीजा, त्रीजा ने चोथा देवलोकमां गया. (८०) आ प्रमाणे श्रीप्रवचनसारोद्धारनो अभिप्राय छे, परंतु श्रीउत्तराध्ययनसूत्रनी दीपिकामां तो अजितनाथना पिता जितशत्रु ने तेमना भाइ सुमित्रविजय बंने दीक्षा लइने सिद्धिपदने पाम्या, एम कह्युं छे. श्रीयोगशास्त्रनीवृत्तिमां ' तृप्तो न पुत्रैः सगरः ' ए श्लोकनी टीकामां ' जितशत्रुराजा मोक्षे गया अने सुमित्र स्वर्गे गया ' एम कह्युं छे. श्रीवीरप्रभुना मातापितानी गति श्रीआचारांगसूत्रमां बारमा देवलोकनी कही छे. इत्यादि.

हवे ऋषभप्रभुना प्रथम समवसरणमां भरतना पांच सो पुत्रोए अने सात सो पुत्रना पुत्रोए प्रभुपासे चारित्र ग्रहण कर्युं. (८१) अन्यदा प्रभु अष्टापद पर्वते समवसर्या, ते

भरतोऽढौकयद्भोज्य–मनसां पंचभिः शतैः ॥ ८२ ॥ राजपिंडोऽभ्याहृतश्च न यतिग्रहणोचितः। इत्युक्ते स्वामिना खिन्नो भरतोऽथ हरिस्तदा ॥ ८३ ॥ पप्रच्छावग्रहं प्रोचे भगवांस्तं च पंचधा । इंद्रस्य चक्रिणो राज्ञो गृहेशस्य सधर्मणः ॥ ८४ ॥ बाध्यते पूर्वपूर्वोऽत्र–मद्याग्र्येण यथोत्तरं । यथेंद्रावग्रहश्चक्रय–वग्रहेणेह बाध्यते ॥ ८४ ॥ अथ शक्रो विहरतां श्रमणानामवग्रहं । अनुजज्ञे ततस्तुष्टो भरतोऽपि तथाकरोत् ॥ ८६॥ पप्रच्छ भरतोऽथेंद्रं रूपं कीदृगकृत्रिमं । भवतां वर्णिकायै चां–गुलीमेषोऽप्यदीदृशत् ॥ ८७ ॥ अष्टाह्निकोत्सवं चक्रे मुदितो भरतस्ततः। ध्वजोत्सवः प्रववृते स एवेंद्रमहोत्सवः ॥ ८८ ॥ आहारेणोपनीतेना–मुनाथ विदधामि किं । अवादीद्भरतेनेति पृष्टः स्पष्टं सुरेश्वरः ॥ ८९ ॥ गुणाधिकेभ्यः श्राधेभ्यः श्रद्धया दीयतामिति । भरतः श्रावकान् भक्त्या–हूयेत्यूचे कृतांजलिः ॥ ९० ॥ अतः परं भवद्भिर्मे गृहे भोक्तव्यमिच्छया ।

वखते भरते मुनिदान माटे पांचशें गाडां भरीने भोज्य (पक्वान्न) प्रभु पासे धर्युं. (८२) त्यारे प्रभुए राजपिंड ने अभ्याहृत (सामो आवेलो) पिंड मुनिने ग्रहण करवा योग्य नथी एम कह्युं तेथी भरतराजा बहु खेद पाम्या. ते वखते इंद्रे प्रभुने अवग्रहसंबंधी पृच्छा करी. भगवंते कह्युं के—'इंद्रनो, चक्रीनो, राजानो, घरना स्वामीनो ने स्वधर्मी (साधु) नो एम पांच प्रकारनो अवग्रह कह्यो छे. (८३–८४) तेमां आगळ आगळना अवग्रहथी पूर्व पूर्वनो अवग्रह अनुक्रमे बाधा पामे छे. जेम इंद्रनो अवग्रह चक्रीना अवग्रहथी बाधा पामे छे. (अर्थात् इंद्रनो अवग्रह न होय पण चक्रीनो अवग्रह होय तो ते काम आवे छे). (८५) आ प्रमाणे सांभळीने इंद्रे विचरता एवा मुनिओने पोताना अवग्रहमां विचरवानी आज्ञा आपी त्यारे संतुष्ट थइने भरते पण ते रीते कर्युं.

हवे भरत इंद्रने पूछे छे के—'तमारुं स्वाभाविक रूप केवुं होय छे?' ते वखते वानकी तरीके इंद्रे पोतानी एक आंगळी बतावी, तेना तेज सामुं पण चक्री जोइ शक्या नहीं. (८७) ते वखते भरते हर्ष पामीने तेनो अष्टाहिकोत्सव कर्यो. ते वखतथी ध्वजोत्सवनी प्रवृत्ति शरु थइ ते ज इंद्रोत्सव समजवो. (८८) हवे भरते इंद्रने पूछ्युं के—'मारे आ लावेला आहारनुं शुं करवुं?' एटले इंद्रे स्पष्ट रीते कह्युं के–(८९) 'गुणाधिक एवा श्रावकोने श्रद्धापूर्वक आपो.' पछी भरत गुणवान श्रावकोने बोलावी हाथ जोडीने कहेवा लाग्या (९०) के–'आजथी तमारे मारे घरे इच्छापूर्वक जमवुं. भोजन

कार्यं न कार्यं कृष्यादि भोज्योपार्जनहेतवे ॥ ९१ ॥ आसितव्यं सदा स्वच्छैः शास्त्रस्वाध्यायतत्परैः । मह्यं वाच्यश्चोपदेशः समक्षं संगताविति ॥ ९२ ॥ जितो भवान् वर्द्धते च भयं मा हन तन्नृप । ततस्तेऽपि तथा चक्रु–र्निश्चिताः सद्व्रतस्पृशः ॥९३॥ सुखसागरमग्नत्वा–त्प्रमत्तो भरतोऽप्यथ । वचांसि तेषामाकर्ण्य चेतस्येवं व्यचिंतयत् ॥ ९४ ॥ एते वदंति किं हंत जितोऽहं कैर्भयं च किं । आः कषायैर्निर्जितोऽह–मेभ्य एवैधते भयं ॥ ९५ ॥ एवं विबोध्यमानस्तै–र्भरतेशोंतरांतरा । संवेगं याति कर्माणि श्लथानि कुरुते ततः ॥ ९६ ॥

यथेच्छमप्रयासेन भोक्तव्यमिति नैकशः । ख्यापयंतः श्रावकं स्व–मभूवन् भोजनार्थिनः ॥९७॥ ततश्च तावतां भोज्य–मुपस्कर्तुमनीश्वराः । व्यजिज्ञपन्नरेंद्राय सूदास्ते विनयानताः ॥ ९८ ॥ न विद्मो जनवाहुल्यात्कः श्राद्धोऽत्र परश्च कः । ततश्चेत्यादिशद्राजा भोज्यास्ते प्रश्नपूर्वकं

मेळववा माटे तमारे खेती विगेरे उद्यम न करवो. (९१) तमारे निरंतर स्वच्छ थइने शास्त्रना स्वाध्यायमां तत्पर रहेवुं अने मने सर्व समक्ष आ प्रमाणे उपदेश वाक्य कहेवुं के–(९२) 'जितो भवान् वर्द्धते भयं तस्मात् हे नृप ! मा हन'–तुं जीतायेलो छे, भय वधे छे, तेथी हे राजा ! तुं तारा आत्माने हण नहीं.' भरतचक्रीना आ प्रमाणे कहेवाथी तेओ पण ते ज प्रमाणे निश्चित थइने तेम ज व्रतधारी थइने करवा ने कहेवा लाग्या. (९३) सुखसागरमां मग्न थयेल होवाथी भरत प्रमत्तभाव पामतो हतो ते तेमना वचनो सांभळीने चित्तमां आ प्रमाणे विचारवा लाग्यो (९४) के—' हंत इति खेदे ! आ कहे छे के हुं जितायेलो छुं तो केनाथी जितायेलो छुं ? अने भय वधे छे एम कहे छे तो केनो भय वधे छे ? हा. हा. बराबर कहे छे. हुं कषायोथी जितायेलो छुं अने तेनाथी ज भय वधे छे.' (९५) आ प्रमाणे आंतरे आंतरे बोध पमाडातो भरत संवेगने पामे छे अने कर्मोने शिथिल करे छे. (९६)

अहीं भरतराजाए श्रावकोने ' यथेच्छपणे प्रयास कर्या विना अहीं जमवुं ' एम वारंवार कहेलुं होवाथी भोजनार्थी एवा घणा मनुष्यो पोताने श्रावक कहेवरावीने जमवा आववा लाग्या, (९७) तेथी तेटलाओनुं भोजन रांधवामां असमर्थ थवाथी विनयथी नम्रपणे रसोइयाओ भरतचक्री पासे आवी विज्ञप्ति करवा लाग्या. (९८) के—' हे स्वामी ! घणा माणसो जमवा आववाथी अमे समजी शकता नथी के आमां श्रावक

॥ ९९ ॥ अप्राक्षुस्तेऽथ चेद्यूयं श्रावकास्तर्हि कथ्यतां । कः श्राद्धधर्मः किं तत्त्व-त्रयं रत्नत्रयं च किं ॥२००॥ अजानतो निराकृत्य जानतस्तांश्च चक्रभृत्। रत्नेन काकिणीनाम्ना चक्रे रेखात्रयांकितान् ॥ २०१ ॥ षष्ठे षष्ठे च मास्येवं तत्परीक्षां नृपोऽकरोत्। ततस्ते माहना जाताः पर्यंता-त्तमहाव्रताः ॥ २ ॥ स्वसुतांस्ते च साधुभ्यो दत्तवंतो महाशयाः। अभूवन् श्रावकोत्तंसाः संयमाप्रभविष्णवः ॥ ३ ॥ तीर्थंकरस्तुतिप्रायान् श्राद्धधर्मनिरूपकान्। कृत्वार्यान् भरतो वेदान् तेभ्योऽदात्पाठहेतवे ॥४॥ अथैतांश्चक्रिमान्यत्वा-न्मन्यते स्म जनोऽखिलः। दानं च पात्रबुद्ध्यादा-द्द्रव्यवस्त्रगृहादिकं ॥ ५ ॥ देवप्रतिष्ठोद्वाहादि यद्धर्म्यं यच्च लौकिकं। तत्तदेतान् पुरस्कृत्य गृहिकार्यं जनोऽकरोत् ॥ ६ ॥ इत्यष्टौ पुरुषान् याव-दादित्ययशआदिकान्। अभवन्मान्यता तेषां भोजनं च नृपालये॥ ७ ॥ तत्रादित्ययशाः कुर्वन् षष्ठे मासि परीक्षणं। चकार काकिणीरत्ना-भा-

---

कोण छे अने अन्य कोण छे ?' त्यारे भरतचक्रीए आज्ञा करी के-'तमारे तेमने अमुक प्रश्नो पूछीने पछी जमाडवा.' (९९) एटले तेओ जमवा आवनारने पूछवा लाग्या के—'जो तमे श्रावक हो तो कहो श्रावकधर्म शुं ? तत्त्वत्रय ने रत्नत्रय शुं ?' (२००) आ प्रश्नोनो जवाब जे न आपी शके तेने दूर करीने जे बराबर उत्तर आपे तेने चक्रवर्ती पासे मोकलता. चक्री तेने काकिणीरत्नवडे त्रण रेखा करीने अंकित करवा लाग्या. (२०१) पछी छ छ महीने आ प्रमाणे परीक्षा चक्री करवा लाग्या. तेमां पास थनाराओ 'माहन' थया अने पर्यंते तेओमांना केटलाक महाव्रतना धारण करनारा (मुनि) थया. (२) वळी ते महाशयो पोताना पुत्रोने साधुओने शिष्य तरीके आपवा लाग्या. संयम लेवाने असमर्थ एवा तेओ श्रावकावतंस (श्रावकश्रेष्ठ) थया. (२०३)

तीर्थंकरनी स्तुतिवाळा अने श्रावकधर्मनुं निरूपण करनारा एवा वेदो भरते रच्या अने ते श्रावकोने भणवा आप्या. (४) एओ चक्रीने मान्य थवाथी सर्व लोको तेने मानवा लाग्या अने पात्रबुद्धिए द्रव्य, वस्त्र ने गृहादिकनुं दान आपवा लाग्या. (५) देवप्रतिष्ठा ने विवाहादि जे धर्म अने लौकिक एवा गृहस्थीओना कृत्य होय ते लोको तेमने आगळ करीने करवा लाग्या. (६) आ प्रमाणे भरतना पुत्र आदित्ययशाथी मांडीने आठ पेढीसुधी तेनी मान्यता चाली अने राजभुवनमां भोजन करवानुं शरु रह्युं. (७) तेमां आदित्ययशाए छ छ मासे परीक्षा करीने काकिणीरत्न न होवाथी सुवर्णना दोरानी

वाच्चिह्नं सुवर्णजं ॥ ८ ॥ महायशः प्रभृतयः केचिद्रूप्यमयं ततः । पट्टसूत्रमयं केचि–त्ततः सूत्रमयं परे ॥ ९ ॥ यज्ञोपवीतमेतेषां तदद्यापि प्रवर्त्तते । त्रितंतुकं पूर्वरूढ्या तत्त्वशून्यात्मनामपि ॥ १० ॥ साधुमार्गव्यवच्छेदा–दथ कालेन गच्छता । द्विजा मिथ्यात्विनोऽभूवन् केऽप्यासन् श्रावका अपि ॥ ११ ॥ क्रमात् पर्वतसुलस–पिप्पलादादिभिः कृताः । वेदा अनार्यास्ते यज्ञ–जीवहिंसादिदूषिताः ॥ १२ ॥

प्रभोरभूवंश्चतुर–शीतिर्गणधरोत्तमाः । पुंडरीकप्रभृतयो गणास्तावंत एव च ॥ १३ ॥ कल्पसूत्रे च प्रथमगणधरः ऋषभसेन इत्यभिधीयते, पुंडरीकस्यैव नामांतरमित्यन्ये. स्वदीक्षिताश्च चतुर–शीतिः साधुसहस्रकाः । ब्राह्मीसुंदर्यादिसाध्वी–लक्षास्तिस्रः प्रकीर्त्तिताः ॥ १४ ॥ श्रेयांसादिश्राद्धलक्ष–त्रयी पंचसहस्रयुक् । सुभद्रादिश्राविकाणां पंच लक्षास्तथोपरि ॥ १५ ॥ चतुष्पंचाशत्सहस्राः केवलज्ञानिनां पुनः । स्युर्विंशतिः सहस्राणि लोकालोकावलोकिनां ॥ १६ ॥ सकलाक्षरसंयोग–विच्चतुर्दशपूर्विणां । चतुःसहस्री संयुक्ता पंचाशैः सप्तभिः शतैः ॥ १७ ॥

निशानीओ करी. (८) महायशा विगेरेमां केटलाके रूप्यमय, केटलाके पट्टसूत्रमय अने केटलाके सूत्रमय निशानीओ करी. (९) ते यज्ञोपवित कहेवाणी के जे अद्यापि तत्त्वशून्य आत्माओ पण पूर्वरूढिथी त्रण दोरावाळी धारण करे छे. (१०) हवे केटलोक काळ गया पछी साधुमार्गनो व्यवच्छेद थवाथी ते घणा द्विजो मिथ्यात्वी थइ गया; केटलाक श्रावको पण रह्या. (११) अनुक्रमे पर्वत, सुलस अने पिप्पलाद विगेरेए यज्ञ अने जीवहिंसादिवडे दूषित एवा अनार्य वेदो बनाव्या. (१२)

ऋषभप्रभुने पुंडरीक विगेरे चोराशी गणधरो थया अने गण पण तेटला ज प्रवर्त्या. (१३) श्रीकल्पसूत्रमां प्रथम गणधर ऋषभसेन कहेल छे ते पुंडरीकनुं ज नामांतर छे, एम अन्य कहे छे. प्रभुना स्वहस्तदीक्षित ८४००० साधुओ थया. ब्राह्मी–सुंदरी विगेरे त्रण लाख साध्वीओ थइ. (१४) श्रेयांसादि त्रण लाख ने पांच हजार श्रावको थया. सुभद्रा विगेरे पांच लाख ने चोपन हजार श्राविकाओ थइ. लोकालोकावलोकी वीश हजार केवळज्ञानी मुनिओ थया. (१५–१६) सर्वाक्षरसंयोगने जाणनारा चौदपूर्वी मुनि चार हजार सात सो ने पचास थया. (१७) नव हजार अवधिज्ञानी थया. वीश-

अवधिज्ञानभाजां तु सहस्राणि नवाभवन् । शता वैक्रियलब्धीनां षट् सहस्राश्च विंशतिः ॥ १८ ॥ मनःपर्यायभाजां च सहस्रा द्वादशोपरि । पंचाशाः षट्शता ज्ञेयाः पंचाशाः सप्त वा शताः ॥ १९ ॥ वादिनां च सहस्रा द्वा-दशा द्व्यर्द्धाश्च षट्शताः । निर्ग्रंथानां सहस्राणि मुक्तिं प्राप्तानि विंशतिः ॥२०॥ मुक्तिं प्राप्ताश्च साध्वीनां चत्वारिंशत्सहस्रकाः । स्वदीक्षितापेक्षयैषा संख्या सर्वा भवेदिह ॥ २१ ॥ द्वाविंशतिः सहस्राणि शतानि च नवोपरि । अनुत्तरविमानेषू-त्पन्नान्यंतिषदां प्रभोः ॥ २२ ॥

पंचचापशतोत्तुंगः स्वर्णरुक् वृषलांछनः । व्यहार्षीत्पूर्वलक्षं स सहस्राब्दोनितं भुवि ॥ २३ ॥ सच्छ्रीरोमकृताकार-मर्हतां लांछनं भवेत् । व्यक्त्योपलक्ष्यावयवं वृषेभतुरगादिकं ॥ २४ ॥ वरदं चाक्षमालां चापसव्यकरयोर्दधत् । मातुलिंगं पाशकं च बिभ्रद्वामकरद्वये ॥२५॥ यक्षः श्रीगोमुखः स्वर्ण-वर्णांगो गजवाहनः । चतुर्भुजो जयत्यादि-देवसेवकवत्सलः ॥ २६ ॥ वामे धनुर्वज्रचक्रां-कुशान् पाणिचतुष्टये । दक्षिणे वरदं बाणं चक्रं पाशं च बिभ्रती ॥ २७ ॥ देवी चक्रेश्वरी नाम्ना-प्रति-

---

हजार ने छ सो वैक्रियलब्धिवाळा थया. (१८) मनःपर्यवज्ञानी बार हजार छ सो ने पचास अथवा सात सो पचास थया. (१९) वादी बार हजार छ सो ने पचास थया. वीश हजार मुनिओ मोक्षे गया. (२०) साध्वीओ चाळीश हजार मोक्षे गइ. आ बधी संख्या स्वदीक्षितनी अपेक्षाए समजवी. (२१) बावीश हजार ने नव सो प्रभुनी पर्षदाना मुनिओ अनुत्तरविमानमां उत्पन्न थया. (२२)

पांचशें धनुष्य उंचा, स्वर्णसमान वर्णवाळा ने वृषभना लांछनवाळा प्रभुए केवळज्ञान पाम्या पछी एक हजार वर्षे न्यून एक लाख पूर्व पृथ्वीपर विहार कर्यो. (२३) अरिहंतने लांछन शोभावाळा रोममां तेवा आकारवाळुं होय छे. तेमां वृषभ, तुरगादिकना अवयवो प्रत्यक्ष ओळखी शकाय छे. (२४) प्रभुनो यक्ष गोमुख नामनो, दक्षिण तरफना बे हाथमां वरद ने अक्षमाळाने धारण करनारो अने डाबी बाजुना बे हाथमां मातुलिंग (बीजोरुं) ने पाशने धारण करनारो, स्वर्णवर्णी शरीरवाळो, गजना वाहनवाळो, चार भुजावाळो जयवंत वर्ते छे. ते आदिनाथना सेवकोनो वत्सल छे. (२५-२६) यक्षणी चक्रेश्वरी नामनी डाबी बाजुना चार हाथमां धनुष्य, वज्र, चक्र ने अंकुशने धारण करनारी तथा जमणी बाजुना चार हाथमां वरद, बाण, चक्र अने पाशने धारण करनारी,

चक्रा मतांतरे । जयत्यष्टभुजा तार्च्य-वाहना कनकद्युतिः ॥ २८ ॥

पूर्वाणां लक्षमित्येकं श्रामण्यं परिपाल्य सः । अष्टापदं महाशैलं जगाम विहरन् विभुः ॥ २९ ॥ तत्रोत्तमानगाराणां सहस्रैर्दशभिः सह । विधायानशनं षड्भि-रुपवासैरपानकैः ॥ ३० ॥ माघासितत्रयोदश्यां धिष्ण्ये चाभिजिदाह्वये । पूर्वाह्णे प्राप पर्यंका-सनस्थः परमं पदं ॥३१॥ ततः पूर्वोक्तविधिना शक्राद्यैः समहोत्सवे । प्रभोः कृतेंगसंस्कारे गृहीतेषु च सक्थिषु ॥ ३२ ॥ चक्रिरे भस्मना तेन तिलकानि नृपादयः । ततः शेषा यथालाभं भस्ममिश्रमृदादिभिः ॥ ३३ ॥

अत्र चितादिस्वरूपमेवमावश्यकवृत्तौ हारिभद्र्यां-पूर्वेण भगवतश्चिता वृत्ता, दक्षिणेनेक्ष्वाकूणां चिता त्र्यस्रा, अपरेण शेषसाधुचिता चतुरस्रा, ततोऽग्निकुमारा वदनैः खल्वग्निं प्रक्षिप्तवंतस्ततो लोकेऽग्निमुखा देवा इति प्रसिद्धमित्यादि. प्रभोश्चिताग्निमसकृ-द्याचिता माहनैः सुराः । आहुस्तान् याचकांस्ते च तथैव प्रथिता भुवि ॥ ३४ ॥ सदा-

---

आठ भुजावाळी, गरुडना वाहनवाळी अने कनकसमान कांतिवाळी, जेनुं बीजुं नाम अप्रतिचक्रा छे ते जय पामे छे. (२७-२८)

एकंदर एक लाख पूर्वनो श्रमणपर्याय पाळीने पृथ्वीपर विचरता प्रभु अंते अष्टापद पर्वतपर पधार्या. (२९) त्यां पाणी विनाना छ उपवासवडे दश हजार उत्तम मुनिओनी साथे प्रभुए अनशन कर्युं' (३०) अने माघ वदि त्रयोदशीए अभिजित् नक्षत्रमां पूर्वाह्ने पर्यंकासने स्थित रहेला प्रभु परमपदने पाम्या. (३१) पछी पूर्वे कही गया प्रमाणे विधिपूर्वक शक्रादिके ऋषभप्रभुनो महोत्सवपूर्वक अंगसंस्कार कर्यो अने इंद्रादिके दाढा विगेरे लीधी. (३२) पछी नृपादिके तेनी रक्षावडे तिलक कर्या अने त्यारपछी भस्ममिश्र मृत्तिकाविगेरे जे लभ्य थयुं तेनावडे बीजाओए तिलक कर्या. (३३)

अहीं चिता विगेरेनुं स्वरूप हारिभद्री आवश्यकवृत्तिमां आ प्रमाणे कहेल छेः—पूर्व बाजुए भगवंतनी चिता गोळ, दक्षिण बाजुए इक्ष्वाकु मुनिओनी (गणधरोनी) त्रिकोण अने पश्चिमे शेष साधुनी चिता चोखुणी करे. पछी अग्निकुमारदेवो पोताना वदनवडे अग्नि क्षेपन करे, तेथी लोकोमां देवो अग्निमुख होय छे एम प्रसिद्ध थयेल छे. इत्यादि.

प्रभुनी चिताना अग्निनी माहनोए देवो पासे वारंवार याचना करी त्यारे देवोए तेमने याचक कह्या तेथी तेओ याचक तरीके पृथ्वीमां प्रसिद्ध थया. (३४) तेओ ते

निर्वाणमग्निं तं धृत्वा कुंडेषु वेश्मसु । त्रिसंध्यं पूजयंतस्ते संजाता आहिताग्नयः ॥ ३५ ॥ अर्हदैक्ष्वाक्वन्यसाधु–चितात्रयसमुद्भवः । त्रिविधोऽग्निः कष्टपापहरोऽभूदग्निहोत्रिणां ॥ ३६ ॥

अथ वार्द्धकिरत्नेन भरतस्तत्र पर्वते । अचीकरज्जिनगृहं गव्यूतत्रितयोच्छ्रितं ॥ ३७ ॥ योजनायामतदर्द्ध–विष्कंभं तच्चतुर्मुखं । चतुर्विंशदर्हदर्चा मानवर्णान्विता दधौ ॥ ३८ ॥ तस्मिन् सिंहनिषद्याख्ये प्रासादे भरतेश्वरः । अकारयज्जिनार्चानां प्रतिष्ठां मुनिपुंगवैः ॥ ३९ ॥ भ्रातॄणां नवनवतेः प्रतिमामात्मनोऽपि च । तथा स्तूपशतं तत्र चितास्थानेष्वरीरचत् ॥ ४० ॥ नवनवतेर्भ्रातॄणा–मेकं स्तूपं जगद्गुरोः । मा कार्षीत्कश्चिदाक्राम–न्नेतदाशातनामिति ॥ ४१ ॥ संतक्ष्य दंडरत्नेन परितोऽष्टापदं गिरिं । अष्टौ योजनमानास्त–न्मेखलाः स व्यरीरचत् ॥ ४२ ॥ चक्रे लोहमयान् यंत्र–पुरुषान् द्वारपालकान् । ततः क्रमेण सगरा–त्मजैर्वंश्यानुरागतः ॥ ४३ ॥ कृतात्र दंडरत्नेन परिखा दिव्यशक्तिना । भगीरथेन सा गंगा–जलौघैः पूरिता ततः ॥ ४४ ॥

निर्वाणनो अग्नि पोताना घरमां कुंडनी अंदर दाखल करीने त्रिसंध्य तेनी पूजा करवा लाग्या तेथी तेओ आहिताग्नि (अग्निहोत्री) थया. (३५) अरिहंत, इक्ष्वाकु (गणधरो) अने अन्य साधुनी त्रण प्रकारनी चिताथी उत्पन्न थयेलो त्रिविध अग्नि अग्निहोत्रीओने कष्ट ने पापनो हरनार थयो. (३६)

हवे वार्धकीरत्न पासे चक्रीए ते पर्वत उपर एक महान् जिनगृह कराव्युं. ते त्रण गाउ उंचुं, एक योजन लांबुं, अर्ध योजन पहोळुं, चार द्वारवाळुं अने चोवीशे तीर्थंकरना देहमान तथा वर्णवाळी चोवीश प्रतिमावडे अलंकृत कर्युं. (३७–३८) ते सिंहनिषद्या नामना प्रासादमां भरतचक्रीए श्रेष्ठमुनिओ पासे जिनप्रतिमाओनी प्रतिष्ठा करावी. (३९) नवाणु भाइओनी तेम ज पोतानी प्रतिमा करावी अने चिताने स्थाने सो स्तूप बनाव्या. (४०) तेमां ९९ स्तूप ९९ भाइओना ने एक प्रभुनो एम १०० स्तूप आ स्थाननी कोइ चालवाथी आशातना न करो एम विचारी चितास्थाने ज कर्या. (४१) पछी दंडरत्नवडे खोदावीने अष्टापद पर्वत फरती योजन योजनप्रमाण आठ मेखळाओ करी (४२) अने द्वारपाळ तरीके लोहमय यंत्रपुरुषो कर्या. अनुक्रमे सगरचक्रीना पुत्रोए पोताना वंशजना अनुरागथी दंडरत्नवडे दिव्यशक्तिथी पर्वत फरती खाइ करी अने भगीरथे ते खाइ गंगाना जळवडे पूरी. (४३–४४)

अथ प्रकृतं—पुत्रपौत्रादिका शिष्य—प्रशिष्याद्येति च द्विधा । नाभेयस्य भगवतो—ऽभवत्पट्टपरंपरा ॥ ४५ ॥ तत्र शिष्यप्रशिष्यादि—पारंपर्यव्यपेक्षया । पट्टाधिपाः प्रभोः संख्या—तीताः प्रापुः परं पदं ॥ ४६ ॥ आदित्ययशआदीनां या तु निर्वाणपद्धतिः । सर्वार्थसिद्धांतरिता नंदिसूत्रादिषूदिता ॥ ४७ ॥ सापेक्ष्य पुत्रपौत्रादीन् पट्टेशान् कोशलापतीन् । प्रतिलोमानुलोमादि—स्तत्रैवं सिद्धदंडिका ॥ ४८ ॥

पट्टे वृषभदेवस्य प्रथमं भरतेश्वरः । आदर्शगृहसंप्राप्त—केवलो निर्वृतिं ययौ ॥ ४९ ॥ ततो राजादित्ययशा—स्ततो राजा महायशाः । ततश्चातिबलो राजा ततो राजा महाबलः ॥ ५० ॥ तेजोवीर्यः कीर्तिवीर्यो दंडवीर्यो महीपतिः । जलवीर्यश्चेति भूपाः ख्याता वृषभवंशजाः ॥ ५१ ॥ अयं स्थानांगाभिप्रायेण नामक्रमः, आवश्यके तु—राया आइच्चजसे १ महाजसे २ अतिबले य ३ बलभद्दे ४ । बलविरिय ५ कित्तिविरिए ६ जलविरिए ७ दंडविरिए य ८ ॥ १ ॥ इह चान्यथात्वमेकस्यापि नामांतरभावाद्गाथानुलोम्याच्च संभाव्यत इति स्थानांगवृत्तौ. एभिरेवाष्टभिर्मौला—वधारि मुकुटः प्रभोः । वोढुं नाशक्यतान्यैस्तु क्रमा-

---

हवे प्रस्तुत कहे छे—नाभिराजाना पुत्र ऋषभदेवनी पट्टपरंपरा पुत्र—पौत्रादिकथी अने शिष्य—प्रशिष्यादिकथी एम बे प्रकारे चाली. (४५) तेमां शिष्य—प्रशिष्यादि परंपरानी अपेक्षाए प्रभुना असंख्य पट्टाधिप मोक्षे गया. (४६) आदित्ययशा विगेरेनी जे निर्वाणपद्धति सर्वार्थसिद्ध अंतरित छे ते नंदीसूत्रादिकमां कहेली छे. (४७) पुत्रपौत्रादिनी अपेक्षाए कोशळापतिनी पट्टपरंपरा प्रतिलोम—अनुलोमादिवडे सिद्धदंडिकामां आ प्रमाणे बतावेली छे. (४८)

ऋषभदेवनी पाटे प्रथम भरतेश्वर थया ते आदर्शभुवनमां केवळज्ञान पामीने मोक्षे गया. (४९) तेनी पाटे आदित्ययशा, तेनी पाटे महायशा, तेनी पाटे अतिबळ, तेनी पाटे महाबळ, (५०) पछी तेजोवीर्य, पछी कीर्त्तिवीर्य अने पछी दंडवीर्य ने आठमे पाटे जलवीर्य—ए प्रमाणे ऋषभप्रभुना वंशमां राजाओ थया. (५१) स्थानांगने अभिप्राये आ क्रम छे. आवश्यकमां तो—' आदित्ययशा, महायशा, अतिबळ, बळभद्र, बळवीर्य, कीर्त्तिवीर्य, जळवीर्य ने दंडवीर्य—एम आठ पाट कही छे. ' अहीं जे जुदापणुं छे ते नामांतरना कारणथी अथवा गाथाना अनुलोमपणाथी जणाय छे, एम स्थानांगनी वृत्तिमां कह्युं छे. आ आठ पाटसुधीना राजाओए ऋषभप्रभुनो मुकुट मस्तके धारण कर्यो. त्यार-

हीनवपुर्बलैः ॥ ५२ ॥ भुक्त्वैते भरतार्द्धस्य राज्यमादर्शसद्मनि । केवलं प्राप्य प्रपन्न-मुनिवेषाः शिवं ययुः ॥ ५३ ॥

एवं निरंतरं सिद्धिं ययुर्लक्षाश्चतुर्दश । ततः सर्वार्थसिद्धेऽगा-देकस्तस्यान्वये नृपः ॥ ५४ ॥ पुनर्निरंतरं जग्मुः सिद्धिं लक्षाश्चतुर्दश । एकः सर्वार्थसिद्धेऽगा-त्पुनरेवमिति क्रमः ॥ ५५ ॥ तावद्यावदसंख्याः स्यु-र्नृपाः सर्वार्थसिद्धिगाः । चतुर्दशचतुर्दश-लक्षव्यवहिता अपि ॥ ५६ ॥ ततः पुनर्ययुर्मुक्तिं नृपलक्षाश्चतुर्दश । द्वौ च सर्वार्थसिद्धेऽथ मुक्तिं लक्षाश्चतुर्दश ॥ ५७ ॥ भूयः सर्वार्थसिद्धे द्वौ मुक्तौ लक्षाश्चतुर्दश । यावच्च द्विकसंख्याका असंख्येया भवंति ते ॥ ५८ ॥ एवमंतरिता लक्षै-श्चतुर्दशभिरंतरा । निरंतरं नृपवरै-र्गच्छद्भिः पदमव्ययं ॥५९॥ स्युः प्रत्येकमसंख्येया एवंत्रिचतुरादयः । पंचाशदंताः सर्वार्थ-सिद्धिं प्राप्ता महाशयाः ॥ ६० ॥ युग्मं ॥ उक्तं च—चउदसलक्खा सिद्धा निवईणेक्को य होइ सव्वट्ठे । एवं एक्कट्ठाणे पुरिसजुगा होंतऽसंखेज्जा ॥ ६१ ॥ पुणरवि चोद्दसलक्खा सिद्धा निवईण

पछीना पाटे आवेल राजाओ अनुक्रमे हीनशरीर ने हीनबळवाळा होवाथी ते मुकुटने धारण करी शक्या नहीं. (५२) ए आठे पाटना राजाओ भरतार्धना राज्यने भोगवीने आरिसाभुवनमां केवळज्ञान पामी मुनिवेष धारण करी मोक्षे गया. (५३)

सिद्धदंडिका शरु—एम चौद लाख पाटसुधी बधा राजाओ मोक्षे गया पछी तेनी पाटना एक राजा सर्वार्थसिद्धे गया. (५४) पाछा चौद लाख मोक्षे गया पछी एक राजा सर्वार्थसिद्धे गया. ए प्रमाणे त्यांसुधी समजवुं के चौद लाखने आंतरे आंतरे एकेक सर्वार्थसिद्धिए गया ते असंख्य थाय. (५५–५६) त्यारपछी चौद लाख मोक्षे ने बे सर्वार्थसिद्धे गया. त्यारपछी चौद लाख मुक्तिए गया. (५७) फरीथी बे सर्वार्थसिद्धिमां गया अने त्यारपछी चौद लाख मुक्तिमां गया, ते बबेनी संख्यावाळा पण असंख्य थाय त्यांसुधी समजवुं. (५८) पछी चौद चौद लाख निरंतर मोक्षे जनारा राजाओना गाळामां त्रण त्रण अने पछी चार चार सर्वार्थसिद्धे जाय. ते पण असंख्याता थाय त्यांसुधी समजवुं. एम यावत् आंतरे आंतरे पचास पचाससुधी सर्वार्थसिद्धे जनारा पण असंख्याता थाय त्यांसुधी समजवुं. (५९–६०) (अहीं त्रण मागधी गाथाओ छे तेनो अर्थ उपर

दोवि सव्वट्ठे । दुगठाणेवि असंखा पुरिसजुगा होंति नायव्वा ॥ ६२ ॥ जाव य लक्खा चोद्दस सिद्धा पन्नास होंति सव्वट्ठे । पन्नासट्ठाणे वि हु पुरिसजुगा होंतऽसंखेज्जा ॥ ६३ ॥ अनुलोमा भवेत्सिद्ध–दंडिकेयमितोऽन्यथा । रीत्यानयैव भवति विलोमा सिद्धदंडिका ॥ ६४ ॥

तथाहि–सर्वार्थसिद्धे प्रथमं ययुर्लक्षाश्चतुर्दश । तत एकोऽगमत्सिद्धिं पुनर्लक्षाश्चतुर्दश ॥ ६५ ॥ सर्वार्थं जग्मुरेवं च स्युरेकैकेऽप्यसंख्यकाः । मुक्ताश्चतुर्दश चतु–र्दशलक्षकृतांतराः ॥ ६६ ॥ एवं पंचाशदंतानां विमुक्तानां निरंतरं । स्यात्प्रत्येकमसंख्यानां विलोमा सिद्धदंडिका ॥ ६७ ॥ उक्तं च–विवरीयं सव्वट्ठे चउदसलक्खाउ निव्वुओ एगो । सच्चेव य परिवाडी पन्नासा जाव सिद्धीए ॥ ६८ ॥

मुक्तौ सर्वार्थसिद्धे च द्वे द्वे लक्षे निरंतरं । ययुस्ते समसंख्याका एवं त्रिचतुरादयः ॥ ६९ ॥ यावल्लक्षा असंख्येयाः स्युस्तुल्या उभयोरपि । समसंख्या भवेत्सिद्ध–दंडिकेयं तृतीयिका ॥ ७० ॥ उक्तं च–तेण परं

प्रमाणे ज छे.) (६१–६२–६३.) आ अनुलोमसिद्धदंडिका जाणवी. आ रीते ज प्रतिलोमसिद्धदंडिका (त्यारपछी) बीजी जाणवी. (६२)

ते आ रीते— सर्वार्थसिद्धे चौद लाख गया पछी एक सिद्ध थाय. वळी चौद लाख सर्वार्थसिद्धे गया पछी एक सिद्ध थाय. ए एकेक पण चौद चौद लाखना आंतरावाळा असंख्याता थाय. (त्यारपछी चौद लाखना आंतरामां बे सिद्ध थाय ते पण आंतरावाळा असंख्याता थया पछी त्रण त्रण, चार चार) यावत् पचास पचास आंतरे आंतरे सिद्ध थनारा असंख्याता थाय त्यांसुधी समजवुं. आ विलोमसिद्धदंडिका समजवी. (६५–६७) कह्युं छे के—' प्रथमथी विपरीतपणे एटले चौद लाख सर्वार्थे ने एक सिद्धिए. ए परिपाटीए यावत् पचास पचास सिद्ध थाय त्यांसुधी समजवुं. ' (६८) (आ बीजी प्रतिलोमसिद्धदंडिका जाणवी.)

त्यारपछी बे लाख मुक्तिमां बे लाख सर्वार्थे एम सरखी संख्याए जाय, ते असंख्याता थया पछी ते ज रीते त्रण लाख मुक्तिए ने त्रण लाख सर्वार्थे एम असंख्याता थया पछी ए रीते त्रण त्रण लाख, चार चार लाख असंख्याता थाय. एम सरखी संख्यावाळा असंख्याता असंख्याता मुक्तिए ने सर्वार्थसिद्धे जाय. आ त्रीजी समसंख्यासिद्धदंडिका जाणवी. (६९–७०) कह्युं छे के—' त्यारपछी बे बे लाख बे स्थानके एटले

दुदुलक्खाइ दो दो ठाणाइ समगं वच्चंति । सिवगइसव्वट्ठेहिं इणमो तेसिं विहा होइ ॥७१॥ दो लक्खा सिद्धीए दो लक्खा नरवईण सव्वट्ठे । एवं तिलक्ख चउ पंच जाव लक्खा असंखिज्जा ॥ ७२ ॥

ततश्चित्रांतराः ख्याता—श्चतस्रः सिद्धदंडिकाः । एकादिरेकाभ्यधिका तत्राद्या सिद्धदंडिका ॥ ७३ ॥ एकादिद्व्युत्तरान्या स्या—देकादिस्त्र्युत्तरा परा । स्यात्सिद्धदंडिका तुर्या द्वित्र्यादिविषमोत्तरा ॥ ७४ ॥ आदावेको ययौ मुक्तिं द्वौ सर्वार्थेषु जग्मतुः । ततस्त्रयो ययुर्मुक्तिं सर्वार्थेऽथ चतुष्टयं ॥ ७५ ॥ इत्येकोत्तरया वृद्ध्या मुक्तिसर्वार्थसिद्धयोः । तावद्वाच्या असंख्येयाः स्युर्यावत्ते द्वयोरपि ॥ ७६ ॥ इयमेकोत्तरैकादिः स्याच्चित्रांतरदंडिका । द्वितीया द्व्युत्तरैकादिः साप्येवं परिभाव्यते ॥ ७७ ॥ आदावेको ययौ मुक्तिं सर्वार्थे च ततस्त्रयः । ततो मुक्तौ ययुः पंच सर्वार्थे सप्त ते ययुः ॥७८॥ एवं द्व्युत्तरया वृद्ध्या मुक्तिसर्वार्थसिद्धयोः । यावद्भवंत्यसंख्येया—स्तावद्वाच्या द्वयोरपि ॥ ७९ ॥ एकस्ततः परं मुक्तौ सर्वार्थे च चतुष्टयं । मुक्तौ जग्मुस्ततः सप्त सर्वार्थे च ततो दश ॥८०॥

सिद्धगतिमां ने सर्वार्थे जाय. ए प्रकारे तेनुं विधान जाणवुं. बे लाख सिद्धिए ने बे लाख राजाओ सर्वार्थे, ए प्रमाणे त्रण त्रण लाख, चार चार लाख, पांच पांच लाख यावत् असंख्याता लाख सिद्धे ने असंख्याता लाख सर्वार्थे जाय.' (७१–७२)

त्यारपछी चोथी चित्रांतरा सिद्धदंडिका चार प्रकारे जाणवी. एकादि एकाधिक पहेली दंडिका, एकादि बे अधिक बीजी दंडिका, एकादि त्रण अधिक त्रीजी दंडिका अने चोथी बे त्रण विगेरे विषमोत्तर संख्यावाळी दंडिका जाणवी. (७३–७४) तेमां पहेली दंडिकामां एक मुक्तिए, बे सर्वार्थे, त्रण मुक्तिए, चार सर्वार्थे–(७५) आम एकेकनी वृद्धिए सिद्ध थनार ने सर्वार्थे जनारनी संख्या त्यांसुधी समजवी के ते बंने असंख्याता थाय. (७६) आ एकादिएकोत्तरचित्रांतरदंडिका जाणवी. त्यारपछी बीजी एकथी आरंभीने बबे अधिक संख्यावाळी दंडिका आ प्रमाणे समजवी–(७७) एक मोक्षे, त्रण सर्वार्थे, पांच मोक्षे, सात सर्वार्थे. (७८) आ प्रमाणे द्विउत्तर वृद्धिए त्यांसुधी वधवुं के ते रीते मोक्षे जनार ने सर्वार्थे जनारनी संख्या असंख्याती थाय. (७९)त्यारपछी त्रीजी दंडिकामां एक मुक्तिए, चार सर्वार्थे, सात मुक्तिए, दश सर्वार्थे, (८०) एम त्रण

एवं त्र्युत्तरया वृद्ध्या-ऽसंख्येयाः स्युर्द्वयोरपि । तृतीया त्र्युत्तरैकादिः स्याच्चित्रांतरदंडिका ॥ ८१ ॥ चतुर्थी च विचित्रा स्या-त्तस्याः पूर्वं महर्षिभिः । उपायोऽयं वक्ष्यमाणः परिज्ञानाय दर्शितः ॥८२॥ एक ऊर्ध्वमधश्चैकः पुनरूर्ध्वमधः पुनः । ऊर्ध्वाधः परिपाट्यैव-मेकोनत्रिंशतं त्रिकान् ॥ ८३ ॥ स्थापयेत्प्रथमे चात्र प्रक्षिपेन्नैव किंचन । प्रक्षेपाः स्युः क्रमादेते द्वितीयादित्रिकेषु तु ॥ ८४ ॥ दुग २ पण ५ नवगं ९ तेरस १३ सत्तरस १७ दुवीस २२ छच्च ६ अट्ठेव ८ । बारस १२ चउदस १४ तह अट्ठा-वीस २८ छव्वीस २६ पणवीसा २५ ॥ ८५ ॥ एक्कारस ११ तेवीसा २३ सीयाला ४७ सत्तरि ७० सत्तहत्तरिया ७७ । इग १ दुग २ सत्तासीई ८७ इगहत्तरि ७१ मेव बावट्ठी ६२ ॥ ८६ ॥ अउणत्तरि ६९ चउवीसा २४ छायाल ४६ सयं १०० तहेव छव्वीसा २६ । एए किर पक्खेवा बीअतिगाईसु अणुकमसो ॥ ८७ ॥ क्षेपेष्वमीषु क्षिप्तेषु यद्रूपाः स्युस्त्रिका इमे । क्रमात्तावंतस्तावंतः सिद्धिसर्वार्थसिद्धयोः ॥ ८८ ॥ त्रयो मुक्तौ ततः पंच सर्वार्थेऽष्टौ ततः शिवे । ततो द्वादश सर्वार्थे ततः षोडश निर्वृतौ ॥ ८९ ॥ इत्येवमेकोनत्रिंश-त्तमे स्थाने ययुः शिवं । एकोनत्रिंश-

---

त्रण वधतां त्यांसुधी वधवुं के यावत् मोक्षे जनार अने सर्वार्थे जनारनी संख्या असंख्याती थाय. आ त्रीजी एकादित्रिउत्तराचित्रांतरदंडिका जाणवी. (८१) चोथी विचित्रदंडिका जाणवानो उपाय महर्षिओए आ प्रमाणे कह्यो छे-(८२) एक लाइनमां अथवा उपर नीचे ओगणत्रीश त्रगडा मूकवा. पछी तेमां नीचे प्रमाणे प्रक्षेप करवो. तेमां पहेला त्रगडानी नीचे कांइ प्रक्षेप करवो नहीं. बाकीना २८ त्रगडा नीचे आ प्रमाणे प्रक्षेप करवो. (८३-८४) बे, पांच, नव, तेर, सत्तर, बावीश, छ, आठ, बार, चौद, अट्ठावीश, छवीश, पचवीश, अग्यार, त्रेवीश, सुडताळीश, सीत्तेर, सत्तोतेर, एक, बे, सत्ताशी, इकोतेर, बासठ, ओगणोतेर, चोवीश, छेंताळीश, सो अने छवीश. आ प्रमाणे (जुदा जुदा २८) प्रक्षेप बीजा विगेरे त्रिकमां अनुक्रमे करवा. (८५-८७) ए प्रमाणे नाखवाथी जे रूपना अंको थाय ते क्रमे तेटला तेटला सिद्धिमां ने सर्वार्थमां गमन करनार जाणवा. (८८) ते आ रीते—त्रण मुक्तिमां (३-०), पांच सर्वार्थे (३-२), आठ मुक्तिमां (३-५), बार सर्वार्थे (३-९), सोळ मुक्तिमां (३-१३). (८९) वीश सर्वार्थे (३-१७), पचीश मुक्तिए (३-२२), नव सर्वार्थे (३-६),

देषाद्या विषमोत्तरदंडिका ॥ ९० ॥ उक्तं च–सिवगइसव्वट्ठेहिं दो दो ठाणा विसमुत्तरा नेया। जाव उणतीसठाणे गुणतीसं पुण छवीसाए ॥ ९१ ॥ अत्र जावेत्यादि यावदेकोनत्रिंशत्तमे स्थाने त्रिकरूपे षड्विंशतौ प्रक्षिप्तायामेकोनत्रिंशद्भवंति.

ततो भवेद् द्वितीयेह विषमोत्तरदंडिका। पूर्वाचार्योदिताम्नायात् श्रूयतां सा विभाव्यते ॥९२॥ प्रथमाया दंडिकाया अंकस्थानं यदंतिमं। एकोनत्रिंशतं वारान् तल्लिखित्वा यथाक्रमं ॥ ९३ ॥ प्राग्वदाद्यं परित्यज्य द्वितीयादिपदेषु च। प्रागुक्तक्षेपकक्षेपे संख्या भवति यावती ॥ ९४ ॥ तावंतः सर्वार्थसिद्ध–सिद्धयोर्ज्ञेया यथाक्रमं। एवं भवंत्यसंख्येया विषमोत्तरदंडिकाः ॥ ९५ ॥ आद्यायामादिमं स्थानं निर्वाणगतसूचकं। द्वितीयायां दंडिकायां सर्वार्थगतसूचकं ॥ ९६ ॥ तृतीयायां दंडिकायां पुनर्मुक्तिनिरूपकं। चतुर्थ्यां चादिमं स्थानं

अग्यार (३-८) मुक्तिए, पंदर (३-१२) सर्वार्थे, सत्तर (३-१४) मुक्तिए, एकत्रीश (३-२८) सर्वार्थे, ओगणत्रीश (३-२६) मुक्तिए, अठावीश (३-२५) सर्वार्थे, चौद (३-११) मुक्तिए, छवीश (३-२३) सर्वार्थे, पचास (३-४७) मुक्तिए, तोंतेर (३-७०) सर्वार्थे, एंशी (३-७७) मुक्तिए, चार (३-१) सर्वार्थे, पांच (३-२) मुक्तिए, नेवुं (३-८७) सर्वार्थे, चुमोतेर (३-७१) मुक्तिए, पांसठ (३-६२) सर्वार्थे, बोंतेर (३-) मुक्तिए, सत्तावीश (३-२४) सर्वार्थे, ओगणपचास (३-४६) मुक्तिए, एक सो त्रण (३-१००) सर्वार्थे अने ओगणत्रीश (३-२६) मुक्तिए) आ प्रमाणे ओगणत्रीशमे स्थाने ओगणत्रीश मोक्षे गया. ए पहेली विषमोत्तरदंडिका जाणवी. (९०) कह्युं छे के–शिवगतिए ने सर्वार्थे बे बे स्थाने अनुक्रमे एवी रीते जाणवुं के यावत् ओगणत्रीशमे स्थाने त्रणमां छवीश नांखवाथी ओगणत्रीश मुक्तिए जाय. (९१) अहीं जावशब्दे ओगणत्रीशमा त्रिकरूपस्थानमां २६ नो प्रक्षेप होवाथी २९ थाय छे.

हवे बीजी विषमोत्तरदंडिका पूर्वाचार्यकथित आम्नायथी आ प्रमाणे समजवी. (९२) पहेली दंडिकानुं अंत्य अंकनुं स्थान जे २९ आवेल छे. ते २९ नो अंक ओगणत्रीश वार लखवो. पछी अनुक्रमे पूर्वनी जेम पहेलुं स्थान वर्जीने २८ स्थानमां पूर्वप्रमाणे अंकनो प्रक्षेप करवो. ते प्रक्षेपसाथे मेळवतां जे संख्या आवे ते अनुक्रमे सर्वार्थे ने मुक्तिए जनारी समजवी. आ प्रमाणे असंख्याती विषमोत्तरदंडिका थाय. (९३-९५) तेमां पहेलीमां पहेलुं स्थान सिद्धि सूचक, बीजीमां पहेलुं स्थान सर्वार्थसूचक, (९६) त्रीजीमां पहेलुं

पुनः सर्वार्थसूचकं ॥ ९७ ॥ द्वितीयायां यथैकोनत्रिंशद्रूपैंकके क्रमात् । एकोनत्रिंशतं वारान् लिखिते क्षेपकेषु च ॥ ९८ ॥ पूर्वोक्तेषु योजितेषु सर्वार्थसिद्धमोक्षयोः । गतानां जायते संख्या सा चैवं भाव्यते क्रमात् ॥ ९९ ॥ एकोनत्रिंशदत्रादौ सर्वार्थे प्रययुस्ततः । एकत्रिंशद्ययुः सिद्धिं द्विकक्षेपकयोगतः ॥ ३०० ॥ सर्वार्थे च चतुस्त्रिंश-दष्टात्रिंशत्ततः शिवे । पर्यंते पंचपंचाशत् सर्वार्थेऽत्र ययुर्नृपाः ॥ ३०१ ॥

एकोनत्रिंशतं वारान् पंचपंचाशतं न्यसेत् । पूर्वोक्तक्षेपकक्षेपा-द्भाव्या तृतीयदंडिका ॥ २ ॥ क्षेपकास्तु सर्वास्वपि दंडिकासु 'दुगपणनवगं' इत्यादयः पूर्वोक्ता एव ज्ञेयाः. भाव्या एवमसंख्येया विषमोत्तरदंडिकाः । तावद्यावत्समुत्पन्नः पिता श्रीअजितार्हतः ॥ ३ ॥ उक्तं च-विसमुत्तराए पढमा एवमसंखा विसमुत्तरा नेया । सव्वत्थवि अंतिल्लं अन्नाए आइमं ठाणं ॥ ४ ॥ अउणत्तीसं वारा ठावेउं नत्थि पढमि उ-

---

स्थान सिद्धिसूचक, चोथीमां पहेलुं स्थान सर्वार्थसूचक ए प्रमाणे क्रमसर जाणवुं. (९७) बीजी विषमोत्तर दंडिकामां ओगणत्रीशनो अंक २९ वार लखवो अने पछी पूर्व-प्रमाणे क्षेपकनी संख्या जोडवी एटले सर्वार्थे ने मोक्षे जनारनी संख्या अनुक्रमे आ प्रमाणे आवशे. (९८-९९) आदिमां प्रक्षेप न होवाथी २९ सर्वार्थे, बीजीमां बेनो प्रक्षेप होवाथी ३१ मुक्तिए, (३००) त्रीजीमां पांचनो प्रक्षेप होवाथी ३४ सर्वार्थे, चोथीमां नवनो प्रक्षेप होवाथी ३८ मुक्तिए-ए प्रमाणे पर्यंते ५५ राजा सर्वार्थे जनारा आवशे. (कारणके त्यां २९ मां २६ नो प्रक्षेप छे.) (३०१)

हवे त्रीजी विषमोत्तरदंडिकामां उपरनो छेल्लो अंक ५५ छे ते ओगणत्रीश वार लखवो अने तेमां पूर्वप्रमाणे प्रथम स्थानने मूकीने २८ स्थानमां २८ जुदा जुदा अंकनो प्रक्षेप करवो. ए प्रमाणे बे अंक मेळववाथी जे अंक आवे ते सिद्ध ने सर्वार्थे जनार समजवो. आ त्रीजी दंडिका थइ. (२)

क्षेपक अंक बधी दंडिकामां पूर्वे कह्या प्रमाणे बे, पांच, नव विगेरे समजवा. आ प्रमाणे असंख्य विषमोत्तरदंडिका समजवी. ते त्यां सुधी के यावत् अजितनाथजीना पिता जितशत्रु राजा थया. (३) कह्युं छे के-' विषमोत्तरमां पहेलीनी जेम असंख्य विषमोत्तरादंडिका जाणवी. ते बधीमां पहेलीनुं छेल्लुं स्थान ते बीजीनुं आदिस्थान जाणवुं. (४) ते ओगणत्रीश वार स्थापवुं ने तेमां पहेला स्थानमां प्रक्षेप न समजवो. बाकीना

क्खेवो । सेसे अडवीसाए सव्वत्थ दुगाइओ खेवो ॥ ५ ॥ सिवगइपढमादीए बीयाए तह य होइ सव्वट्ठे । इय एगंतरियाए सिवगइसव्वट्ठठाणाइं ॥ ६ ॥ एवमसंखिज्जाओ चित्तंतरगंडिया मुणेयव्वा । जाव जिअसत्तुराया अजिअजिणपिआ समुप्पन्नो ॥ ७ ॥ एवं–सर्वार्थसिद्धनिर्वाणे विहायान्यगतिष्विति । ययौ न पट्टभृत्कोऽपि वंशे श्रीवृषभप्रभोः ॥ ८ ॥ सर्वार्थसिद्धशब्दोऽत्र रूढोऽनुत्तरपंचके । अवकाशो भवत्यत्रै–तावतामन्यथा कथं ॥ ९ ॥ उक्तं च–सर्वार्थशब्देन पंचानुत्तरविमानानि लभ्यंत इति सिद्धदंडिकास्तोत्रावचूर्णौ. एवं च–अनुलोमा १ विलोमा २ च समसंख्या ३ ततः परा । एकद्वित्र्युत्तरा ६ एका–दिकाः स्युर्विषमोत्तराः ॥ १० ॥ एताश्च सप्तधा सिद्ध–दंडिकाः पूर्वमुक्तवान् । चक्रिणः सगराख्यस्य सुबुध्धिः सचिवाग्रणीः ॥ ११ ॥ अष्टापदाद्रियात्रार्थं गतैः सगरनंदनैः । गतिं वृषभवंश्यानां पृष्ट ऐतिह्यकोविदः ॥ १२ ॥

अठ्ठावीश स्थानमां प्रथम कह्या प्रमाणे बे, पांच विगेरे अंकनो प्रक्षेप करवो. (५) तेमां प्रथम दंडिकामां पहेलुं स्थान मुक्ति अने पछी सर्वार्थे, अने बीजी दंडिकामां पहेलुं स्थान सर्वार्थे ने बीजुं मुक्तिए आ प्रमाणे एकांतरे सर्व स्थान समजवा. (६) आ प्रमाणे असंख्याती विचित्रदंडिका यावत् अजितनाथना पिता जितशत्रु राजा थया त्यां सुधी समजवी. (७) आ प्रमाणे ऋषभदेवना वंशमां कोइ पण पट्टधर राजा सर्वार्थसिद्ध के सिद्धस्थान सिवाय बीजे गयेल नथी. (८) सर्वार्थसिद्ध शब्द अहीं पांचे अनुत्तर विमानवाचक समजवो; नहीं तो एकला सर्वार्थसिद्धमां तो संख्याता देवो होवाथी तेनो समावेश ज थइ शके नहीं. (९) कह्युं छे के–' सर्वार्थ शब्दे करीने पांचे अनुत्तर विमान समजवा. ' इति सिद्धदंडिकास्तोत्रावचूर्णौ. ए प्रमाणे अनुलोम १, प्रतिलोम २, समसंख्या ३, एकद्वित्रिउत्तरा एकादिका ४–५–६ अने विषमोत्तरा ७–आ प्रमाणे सात सिद्धदंडिका पूर्वे सगर नामना चक्रीना सचिवाग्रणी सुबुद्धि प्रधाने अष्टापद पर्वते यात्रार्थे गयेला सगर चक्रीना पुत्रोए ऋषभदेवना वंशमां थयेलानी गति पूछी त्यारे पूर्वस्थिति जाणवामां प्रवीण एवा तेणे कहेली ते अहीं दाखल करी छे. (१०–१२) इति सिद्धदंडिका.

१ अनुलोमसिद्धदंडिका. (१)

सिद्धे	१४ लाख	१४ ला.	१४ ला.	१४ ला.	१४ ला.	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	यावत्
सर्वार्थे	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	५०सुधी असंख्य

२ प्रतिलोमसिद्धदंडिका (२)

सर्वार्थे	१४ लाख	१४ ला.	१४ ला.	१४ ला.	१४ ला.	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	यावत्
सिद्धे	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	५०सुधी असंख्य

३ समसंख्या सिद्धदंडिका (३)

सिद्धे	२ लाख	३ लाख	४ लाख	५ ला.	६ ला.	७ ला.	८ ला.	९ ला.	१० ला.	११ ला.	१२ ला.	यावत् असंख्य लाख
सर्वार्थे	२ लाख	३ लाख	४ लाख	५ ला.	६ ला.	७ ला.	८ ला.	९ ला.	१० ला.	११ ला.	१२ ला.	

चोथी चित्रांतर दंडिका. ४. १ एकोत्तरा सिद्धदंडिका. (४)

सिद्ध	१	३	५	७	९	११	१३	१५	१७	१९	२१	२३	यावत्
सर्वार्थ	२	४	६	८	१०	१२	१४	१६	१८	२०	२२	२४	असंख्य.

२ द्विउत्तरा सिद्धदंडिका. (५)

सिद्ध	१	५	९	१३	१७	२१	२५	२९	३३	३७	४१	यावत्
सर्वार्थ	३	७	११	१५	१९	२३	२७	३१	३५	३९	४३	असंख्य.

३ त्रिउत्तरा सिद्धदंडिका. (६)

सिद्ध	१	७	१३	१९	२५	३१	३७	४३	५१	५५	६१	यावत्.
सर्वार्थ.	४	१०	१६	२२	२८	३४	४०	४६	५२	५८	६४	असंख्य.

४ विचित्रा-विषमोत्तर सिद्धदंडिका. (७)

	पहेली.				बीजी.				त्रीजी.			
	मूळ संख्या	क्षेपक अंक	मेळवतां सरवाळो	गति	मूळ संख्या	क्षेपक अंक	मेळवतां सरवाळो	गति	मूळ संख्या	क्षेपक अंक	मेळवतां सरवाळो	गति
१	३	०	३	सिद्धि	२९	०	२९	स.	५५	०	५५	सि.
२	३	२	५	सर्वार्थ	२९	२	३१	सि.	५५	२	५७	स
३	३	५	८	सिद्धि	२९	५	३४	स	५५	५	६०	सि
४	३	९	१२	स.	२९	९	३८	सि	५५	९	६४	स.
५	३	१३	१६	सि.	२९	१३	४२	स	५५	१३	६८	सि
६	३	१७	२०	स.	२९	१७	४६	सि	५५	१७	७२	स.
७	३	२२	२५	सि.	२९	२२	५१	स	५५	२२	७७	सि
८	३	६	९	स.	२९	६	३५	सि	५५	६	६१	स
९	३	८	११	सि.	२९	८	३७	स	५५	८	६३	सि
१०	३	१२	१५	स.	२९	१२	४१	सि	५५	१२	६७	स.
११	३	१४	१७	सि.	२९	१४	४३	स.	५५	१४	६९	सि.
१२	३	२८	३१	स.	२९	२८	५७	सि	५५	२८	८३	स.
१३	३	२६	२९	सि.	२९	२६	५५	स	५५	२६	८१	सि.
१४	३	२५	२८	स.	२९	२५	५४	सि	५५	२५	८०	स
१५	३	११	१४	सि.	२९	११	४०	स	५५	११	६६	सि
१६	३	२३	२६	स.	२९	२३	५२	सि	५५	२३	७८	स.
१७	३	४७	५०	सि.	२९	४७	७६	स	५५	४७	१०२	सि
१८	३	७०	७३	स.	२९	७०	९९	सि	५५	७०	१२५	स.
१९	३	७७	८०	सि.	२९	७७	१०६	स	५५	७७	१३२	सि
२०	३	१	४	स.	२९	१	३०	सि	५५	१	५६	स
२१	३	२	५	सि.	२९	२	३१	स	५५	२	५७	सि
२२	३	८७	९०	स.	२९	८७	११६	सि	५५	८७	१४२	स.
२३	३	७१	७४	सि.	२९	७१	१००	स	५५	७१	१२६	सि.
२४	३	६२	६५	स.	२९	६२	९१	सि	५५	६२	११७	स
२५	३	६९	७२	सि.	२९	६९	९८	स	५५	६९	१२४	सि
२६	३	२४	२७	स.	२९	२४	५३	सि.	५५	२४	७९	स
२७	३	४६	४९	सि.	२९	४६	७५	स	५५	४६	१०१	सि
२८	३	१००	१०३	स.	२९	१००	१२९	सि	५५	१००	१५५	स
२९	३	२६	२९	सि.	२९	२६	५५	स	५५	२६	८१	सि

एवं च-स नवाशीतिपक्षेषु पंचाशल्लक्षकोटिषु। द्वासप्ततिपूर्वलक्ष-न्यूनेषु जलधिष्विह ॥ १३ ॥ अतिक्रांतेषु वृषभ-प्रभोर्निर्वाणकालतः। अजायत जिनः श्रीमा-नजितो जितकल्मषः ॥ १४ ॥ अजायंतारके तुर्ये निर्वृते त्वजितप्रभौ। परिपूर्णाः पयोधीनां पंचाशल्लक्षकोटयः ॥ १५ ॥

जंबूद्वीपे पुरात्रैव प्राग्विदेहविभूषणे। वत्साख्ये विजये शीता-नद्या याम्यतटस्थिते ॥ १६ ॥ सुसीमायामभूत्पुर्यां राजा विमलवाहनः। प्रवव्राजारिदमन-गुरोः पार्श्वे स शुद्धधीः ॥ १७ ॥ मृत्वोत्पन्नश्च विजय-विमानेऽमृतभुक्तया। त्रयस्त्रिंशत्सागरायु-र्भुक्त्वाभूदजितो जिनः ॥१८॥ पूरयोध्या कोशलेषु जितशत्रुः प्रभोः पिता। विजया जननी राशि-र्वृषो हस्ती च लांछनं ॥ १९ ॥ राधशुक्लत्रयोदश्यां माघेऽष्टम्यां सितत्विषि। माघे नवम्यां पौषे चै-कादश्यां विमलद्युतौ ॥ २० ॥ चैत्रस्य शुक्लपंचम्यां पंच कल्याणकान्यथ। चतुर्षु रोहिणी भं स्या-न्मृगशीर्षं च पंचमे ॥ २१ ॥ सर्वेषां च्यवनं स्वर्गा-ज्जायते जन्म चार्हतां। अर्द्धरात्र एव

वृषभप्रभुना निर्वाणकाळथी बोंतेर लाख पूर्वे न्यून अने ८९ पक्षे अधिक पचास लाख क्रोड सागरोपम व्यतीत थये सते जीत्या छे कल्मष (पाप) जेणे एवा श्री अजितनाथ प्रभु थया. (१३-१४) अजितप्रभु निर्वाण पाम्या त्यारे चोथा आराना परिपूर्ण पचास लाख क्रोड सागरोपम थया. (कारण के अजितनाथ प्रभुनुं आयुष्य बोंतेर लाख पूर्वनुं हतुं.) (१५)

श्रीअजितनाथ प्रभुनुं वृत्तांत—पूर्वे आ ज जंबूद्वीपना पूर्वमहाविदेहना भूषणरूप अने शीता नदीना दक्षिण किनारे रहेला वत्स नामना विजयमां सुसीमा नामे नगरी छे तेमां विमळवाहन नामे राजा थया. ते शुद्ध बुद्धिवाळाए अरिदमन गुरुनी पासे दीक्षा लीधी. (१६-१७) ते मरण पामीने विजय नामना अनुत्तर विमानमां देवपणे उत्पन्न थया. त्यां तेत्रीश सागरोपमनुं आयुष्य भोगवीने कोशल देशमां अयोध्या नगरीमां जितशत्रु राजा पिताना अने विजया माताना पुत्र वृषराशि ने हस्तिना लांछनवाळा अजितनाथ थया. (१८-१९) वैशाख शुदि १३, माघ शुदि ८, माघ शुदि ९, पोस शुदि ११ अने चैत्र शुदि ५—आ प्रमाणे तेमना पांच कल्याणकनी तिथि समजवी. तेमां चार कल्याणक रोहिणी नक्षत्रमां अने पांचमुं मृगशीर्ष नक्षत्रमां थयेल समजवुं (२०-२१) सर्वे प्रभुनुं स्वर्गथी च्यवन अने जन्म अर्धरात्रे ज थाय छे. व्रता-

वेला-नैयत्यं न व्रतादिषु ॥ २२ ॥ अहोभिः पंचभिर्न्यूना मासा गर्भ-स्थितौ नव । ततः कृतजनानंदजन्माभूदजितप्रभोः ॥ २३ ॥ द्वासप्तत्या पूर्वलक्षै-रधिके तेजसाधिकः । शेषे तुर्यारकस्यार्द्धे जातोऽसौ जगदीश्वरः ॥ २४ ॥ अत्र तुर्यारकस्यार्द्धं द्वाचत्वारिंशद्वर्षसहस्रोनपंचाशल्लक्षकोटिसागरोपममानमवसेयं. रागाद्यैर्नजितो यस्मा-द्गर्भस्थे वा प्रभौ प्रसूः । द्यूते यन्न जिता पत्या ततोऽभूदजिताभिधः ॥ २५ ॥ अष्टादश पूर्वलक्षाः कौमार्यमभवत्प्रभोः । त्रिपंचाशत्पूर्वलक्षाः सपूर्वांगा नरेंद्रता ॥ २६ ॥ धनुःशतानि सार्द्धानि चत्वारि वपुरुच्छ्रयः । सुप्रभाख्या च शिबिका व्रतकालेऽभवत्प्रभोः ॥ २७ ॥ ब्रह्मदत्तगृहेऽयोध्या-पुरे प्रथमपारणा । छाद्मस्थ्यं द्वादशाब्दानि ज्ञानं सप्तच्छदे तरौ ॥ २८ ॥ सपूर्वांगाः पूर्वलक्षा गृहे स्थित्वैकसप्ततिं । पूर्वांगोनं पूर्वलक्ष-मेकं संयमितां दधौ ॥ २९ ॥ द्वासप्ततिं पूर्वलक्षा-ण्यायुः सर्वमपालयत् । अभूवन् पंचनवतिः प्रभोर्गण-धरोत्तमाः ॥ ३० ॥ स्वदीक्षितानां साधूनां लक्षमेकमभूत्प्रभोः । तिस्रो लक्षाश्च साध्वीनां सहस्रैस्त्रिंशताधिकाः ॥ ३१ ॥ त्रिलक्षी द्विसहस्रोना

दिकमां काळनो नियम नथी. (२२) पांच दिवसे न्यून नव मासनी गर्भस्थिति पूर्ण थये उत्पन्न कर्यो छे लोकमां आनंद जेमणे एवो अजितप्रभुनो जन्म थयो. (२३) बोंतेर लाख पूर्व अधिक अर्ध चोथो आरो शेष रह्ये सते तेजवडे सूर्यनी समान जगदीश्वर अजितनाथ थया. (२४) अहीं चोथा आरानुं अर्ध ४२ हजार वर्षे ऊन पचास लाखक्रोड सागरोपम प्रमाण जाणवुं. रागादिकवडे नहीं जीतावाथी तेम ज प्रभु गर्भमां हता त्यारे माता पतिसाथे द्यूत रमतां पतिथी न जीतावाथी तेथी अजित एवुं नाम पाडवामां आव्युं. (२५) अजितप्रभुना अढार लाख पूर्व कौमारावस्थामां व्यतीत थया अने एक पूर्वांग (८४ लाख वर्ष) युक्त त्रेपन लाख पूर्व राज्यपणुं पाळ्युं. (२६) प्रभुनुं शरीर ४५० धनुष्य उंचुं हतुं. दीक्षा अवसरे तेमनी शिबिका सुप्रभा नामनी हती. (२६) प्रथम पारणुं अयोध्यामां ब्रह्मदत्तने घरे कर्युं. बार वर्ष छद्मस्थपणे रह्या अने सप्तच्छद वृक्षनी नीचे केवळज्ञान पाम्या. (२८) गृहवासमां एक पूर्वांग युक्त एकोतेर लाख पूर्व रह्या अने चारित्रपर्याय एक पूर्वांगे न्यून एक लाख पूर्वनो थयो. (२९) ए प्रमाणे कुल ७२ लाख पूर्वनुं आयु पाळ्युं. अजितप्रभुने ९५ उत्तम गणधरो थया. (३०) प्रभुना स्वदीक्षित एक लाख साधु अने त्रण लाख ने त्रीश हजार साध्वीओ थइ. (३१) श्रावको

श्राद्धानां श्राविका पुनः । पंच लक्षाः पंचचत्वा-रिंशत्सहस्रकाधिकाः ॥ ३२ ॥ विंशतिश्च सहस्राणि केवलज्ञानिनां प्रभोः । द्वाविंशतिः सहस्राणि ते निर्दिष्टा मतांतरे ॥ ३३ ॥ मनोविदां सहस्रा द्वा-दशाढ्याः पंचभिः शतैः । सार्द्धैर्वावधिभाजां तु स्युश्चतुर्नवतिः शताः ॥ ३४ ॥ सप्तत्रिंशच्छता विंशाः स्युश्चतुर्दशपूर्विणां । विंशतिर्वैक्रियवतां सहस्राः सचतुःशताः ॥ ३५ ॥ सहस्राः द्वादश चतुः-शताढ्या वादिनां मताः । प्रत्येकबुद्धा विज्ञेयाः स्वशिष्यसमसंख्यकाः ॥ ३६ ॥ एवं सर्वेषामपि ज्ञेयं. सिंहसेनाभिधः श्रीमान् गणभृत्प्रथमः प्रभोः । तथा प्रवर्त्तिनी फल्गुः सगरो भक्तभूपतिः ॥ ३७ ॥ वरदं मुद्गरं चाक्ष-सूत्रं पाशं च दक्षिणे । दोष्णां चतुष्टये बिभ्रद् वामे करचतुष्टये ॥ ३८ ॥ बीजपूरं चाभयं चां-कुशं शक्तिं समुद्वहन् । महायक्षाभिधो यक्षः श्यामवर्णश्चतुर्मुखः ॥ ३९ ॥ करींद्रवाहनोऽष्टाभि-र्भुजैः पात्यष्ट दिग्गजान् । द्वितीयस्याऽद्वितीयस्य प्रभोश्चरणसेवकान् ॥ ४० ॥ दधाना दक्षिणे पाणि-द्वये वरदपाशकौ । बीजपूरांकुशौ वामे गौरवर्णा चतुर्भुजा ॥४१॥ लोहा-

---

२९८००० थया, श्राविकाओ ५४५००० थइ. (३२) वीश हजार केवळज्ञानी थया. मतांतरे बावीश हजार कह्या छे. (३३) मनपर्यवज्ञानी बार हजार पांचसो ने पचास थया. अवधिज्ञानी ९४०० थया. (३४) ३७२० चौदपूर्वी थया. २०४०० वैक्रियलब्धिवाळा थया. (३५) १२४०० वादी थया. स्वशिष्यनी (मुनिओनी) समसंख्यावाळा प्रत्येकबुद्ध जाणवा. (३६) आ प्रमाणे बधा प्रभु माटे जाणवुं. सिंहसेन नामना प्रभुना प्रथम गणधर थया, फल्गुश्री मुख्य प्रवर्त्तिनी थइ, सगरचक्री भक्त राजा थया.

दक्षिण बाजुना चार हाथमां वरद, मुद्गर, अक्षसूत्र ने पाशने धारण करनार अने डाबी बाजुना चार हाथमां बीजपूर, अभय, अंकुश ने शक्ति धारण करनारो, श्यामवर्णवाळो ने चार मुखवाळो, महायक्ष नामनो यक्ष थयो. (३८-३९) ए हाथीना वाहनवाळो यक्ष आठ भुजाओवडे आठ दिग्गजो के जे अद्वितीय एवा द्वितीय प्रभुना चरणना सेवको हता तेमनुं रक्षण करतो हतो. (४०) दक्षिण बाजुना बे हाथमां वरद अने पाश तथा डाबी बाजुना बे हाथमां बीजपूर ने अंकुशने धारण करनारी, गौरवर्णवाळी, चार

सनाधिरूढा च नाम्नाजितबला सुरी । अजितप्रभुभक्तानां कम्रा दिशति संपदः ॥ ४२ ॥ इति श्रीअजितः

जंबूद्वीपे प्राग्विदेहे विजये रमणीयके । पुर्यां शुभायां विपुल-ब-लोऽभूद्भूपतिः पुरा ॥ ४३ ॥ ग्रैवेयके सप्तमेऽभू-त्संभ्रांतगुरुदीक्षितः । सैकोनत्रिंशदब्ध्यायु-स्त्रिदशोऽथ च्युतस्ततः ॥ ४४ ॥ कुणालदेशे श्राव-स्त्यां जितारिनृपतेः सुतः । अभूत्सेनाकुक्षिरत्नं तृतीयः संभवो जिनः ॥ ४५ ॥ फाल्गुनस्याष्टमी शुक्ला शुक्ला सहचतुर्दशी । मार्गशीर्षस्य राका च कार्तिकासितपंचमी ॥ ४६ ॥ चैत्रस्य पंचमी शुक्ला कल्याणतिथयः प्रभोः । चतुर्षु मृगशीर्षं त-दार्द्रा भवति पंचमे ॥ ४७ ॥ मासा नव-दिनैः षड्भि-रधिका गरभस्थितिः । तुरगो लांछनं राशिः प्रभोर्मिथुन-संज्ञकः ॥ ४८ ॥ ऊनैः षष्ट्या पूर्वलक्षै-स्त्रिंशता लक्षकोटिभिः । वार्द्धीनां श्रीमदजित-निर्वाणाच्छंभवोऽभवत् ॥ ४९ ॥ युक्ताः षष्ट्या पूर्वलक्षै-र्विं-शतिर्लक्षकोटयः । तुर्यारकस्याशिष्यंत वार्द्धीनां प्रभुजन्मनि ॥ ५० ॥

भुजावाळी, लोहासनपर आरूढ थयेली अजितप्रभा नामे देवी अजितप्रभुना भक्तोने सुंदर एवी संपदा आपनारी थइ. (४१-४२) इति श्रीअजितः

श्री संभवनाथ वर्णन—जंबूद्वीपना पूर्वमहाविदेह क्षेत्रमां रमणीय नामना विजयमां शुभा नामनी नगरीमां पहेलां विपुलबळ नामनो राजा हतो. (४३) तेणे संभ्रांत गुरुनी पासे दीक्षा लीधी. मरण पामीने सातमा ग्रैवेयकमां २९ सागरोपमने आउखे देव थयो. त्यांथी च्यवीने कुणालदेशमां श्रावस्ति नामनी नगरीमां जितारि राजानी सेना नामनी राणीनी कुक्षिमां पुत्ररत्नपणे उत्पन्न थया ते त्रीजा संभवनाथ तीर्थंकर थया. (४४-४५) फाल्गुन शुदि ८, मार्गशीर्ष शुदि १४, मार्गशीर्ष शुदि १५, कार्त्तिक वदि ५ अने चैत्र शुदि ५-आ तेमना पांच कल्याणकोनी तिथि छे. चार कल्याणक मृगशीर्ष नक्षत्रमां अने पांचमुं आर्द्रा नक्षत्रमां थयेल छे. (४६-४७) गर्भस्थिति नव मास ने छ दिवसनी, तुरगनुं लांछन अने प्रभुनी राशि मिथुन जाणवी. (४८) श्री अजितनाथजीना निर्वाणथी साठ लाख पूर्व ऊण त्रीश लाख क्रोड सागरोपम व्यतीत थया त्यारे श्री संभवनाथजी गर्भमां आव्या. (४९) ते वखते चोथा आराना वीश लाख क्रोड सागरोपम ने साठ लाख पूर्व बाकी हता. (५०) सर्व अरिहंतोना जन्म समये चोथा आरो जेटलो बाकी रहे तेमां तेमनुं

सर्वेषामर्हतां जन्म—न्युक्तस्तुर्यारकस्य यः । शेषः स स्वायुषा हीनः शेषो भवति निर्वृतौ ॥ ५१ ॥ स्वाम्यभूत्संभवो नाम्ना शुभातिशयसंभवात् । उत्पन्ने वा प्रभौ भूमौ भूरिशस्यसमुद्भवात् ॥ ५२ ॥ पूर्वलक्षाः पंचदश कुमारत्वेऽवसत्प्रभुः । राज्ये चतुश्चत्वारिंश—च्चतुःपूर्वांगसाधिकाः ॥ ५३ ॥ धनुःशतानि चत्वारि स्युः प्रभोर्वपुरुच्छ्रये । सिद्धार्था शिबिकाब्दानि छाद्मस्थ्येऽस्य चतुर्दश ॥ ५४ ॥ सुरेंद्रदत्तः श्रावस्त्यां दाता प्रथमपारणे । तले सालतरोर्ज्ञानं प्रादुरासास्य पंचमं ॥ ५५ ॥ चतुःपूर्वांगोनमेकं पूर्वलक्षं च साधुता । षष्टिश्च पूर्वलक्षाणि सर्वमायुः प्रकीर्त्तितं ॥ ५६ ॥ द्व्याढ्यं शतं गणभृतो । द्वे लक्षे साधवः स्मृताः । लक्षत्रयं च साध्वीनां सषट्त्रिंशत्सहस्रकं ॥५७॥ लक्षद्वयं त्रिनवतिः सहस्राः श्रावकाः प्रभोः । षड् लक्षाणि सहस्राश्च षट्त्रिंशत् श्राविकाः स्मृताः ॥ ५८ ॥ सहस्राणि पंचदश केवलज्ञानशालिनां । सहस्रा द्वादश शतं सार्द्धं मानसवेदिनां ॥ ५९ ॥ नवावधिज्ञानभाजां सहस्राः षट्शताधिकाः । द्वे सहस्रे शतं सार्द्धं स्युश्चतुर्दश पूर्विणः ॥ ६० ॥ वादिनां द्वादश सह—स्रास्तथा वैक्रियस्पृशां । एकोनविंशतिः साष्ट—शताः स्युः सत्सहस्रकाः ॥६१॥ चारूरु-

---

आयुष्य बाद करीए तो तेटलो तेमना निर्वाण पछी बाकी रहे. (५१) शुभातिशयना संभवथी अथवा प्रभु गर्भमां आव्या त्यारथी भूमिमां घणुं धान्य उत्पन्न थवाथी प्रभुनुं नाम संभवनाथ पाडवामां आव्युं. (५२) पंदर लाख पूर्व कुमारावस्थामां व्यतीत थया अने चार पूर्वांग युक्त ४४ लाख पूर्व राज्यनी प्रतिपालना करी. (५३) प्रभुनुं शरीर ४०० धनुष्य उंचुं हतुं. दीक्षा अवसरे शिबिका सिद्धार्था नामनी हती. छद्मस्थपणामां चौद वर्ष रह्या हता. (५४) प्रथम पारणुं श्रावस्तिमां ज सुरेंद्रदत्तने त्यां कर्युं हतुं अने साल वृक्षनी नीचे पांचमुं ज्ञान (केवळज्ञान) प्रगट थयुं हतुं. (५५) चार पूर्वांगे न्यून एक लाख पूर्वनो दीक्षापर्याय अने एकंदर साठ लाख पूर्वनुं आयुष्य कह्युं छे. (५६) संभवनाथजीने १०२ गणधर, बे लाख साधु, ३३६००० साध्वीओ, (५७) २९३००० श्रावको, ६३६००० श्राविकाओ कही छे. (५८) १५००० केवळज्ञानी, १२१५० मनपर्यवज्ञानी, (५९) नव हजार ने छसो (९६००) अवधिज्ञानी, २१५० चौदपूर्वी, (६०) १२००० वादीओ अने १९८०० वैक्रियलब्धिवाळा थया. (६१) चारु

गणभृन्मुख्यः प्रभोः श्यामा प्रवर्तिनी । सदा भक्तो महीपालो मित्रसेनः प्रकीर्त्तितः ॥ ६२ ॥ दक्षिणे नकुलं दामा–भयं बिभ्रत्करत्रये । मातुलिंगं नागमक्ष–सूत्रं वामे करत्रये ॥ ६३ ॥ त्रिनेत्रस्त्रिमुखः श्यामवर्णो बर्हिणवाहनः । षड्भुजस्त्रिमुखो जीया–त्त्रिमुखो नाम यक्षराट् ॥ ६४ ॥ वरदं चाक्षसूत्रं च दक्षिणे करयामले । वामे फलं चाभयं च दधानेति चतुर्भुजा ॥ ६५ ॥ दुरितारिर्गौरवर्णा कल्याणं मेषवाहना । सदा ददाति भव्यानां संभवप्रभुसेविनां ॥ ६६ ॥ इति श्रीसंभवः ।

जंबूद्वीपे प्राग्विदेहे विजयो मंगलावती । तत्र रत्नसंचयायां पुर्यां राजा महाबलः ॥ ६७ ॥ स चादाय परिव्रज्यां गुरोर्विमलवाहनात् । जयंतेऽभूत्त्रयस्त्रिंश–त्पयोधिस्थितिकः सुरः ॥ ६८ ॥ ततोऽयोध्यामहापुर्यां देशे कोशलनामनि । सिद्धार्थासंवरक्ष्माभृ–त्सुतोऽभूदभिनंदनः ॥ ६९ ॥ शुक्ला चतुर्थी वैशाखे माघे शुक्ला द्वितीयिका । शुक्लैव द्वादशी माघे पौषेशुक्ला चतुर्दशी ॥ ७० ॥ आवश्यके तु–' पोसे सुद्धचउद्दसि

नामना मुख्य गणधर, श्यामा नामे प्रवर्त्तिनी अने सदा भक्त मितसेन नामनो राजा कह्यो छे. (६२) दक्षिण बाजुना त्रण हाथमां नकुल, दाम अने अभयने धारण करनार तथा डाबी बाजुना त्रण हाथमां बीजोरु, नाग ने अक्षसूत्रने धारण करनार, त्रण नेत्रवाळो, त्रण मुखवाळो, श्याम वर्णवाळो ने मोरना वाहनवाळो, छ भुजावाळो त्रिमुख नामनो यक्ष जयवंत वर्ते छे. (६३–६४) जमणा बे हाथमां वरद ने अक्षसूत्र अने डाबी बाजुना बे हाथमां फळ ने अभयने धारण करनारी चार भुजावाळी, गौरवर्णवाळी, मेषना वाहनवाळी दुरितारि नामनी देवी संभव प्रभुनी सेवा करनाराओनुं निरंतर कल्याण करे छे. (६५) इति श्री संभवः

श्री अभिनंदनस्वामी वर्णन—आ जंबूद्वीपना पूर्वमहाविदेहमां मंगळावती विजयमां रत्नसंचया नामनी नगरीमां महाबळ नामे राजा थया हता. (६६) तेओ विमळवाहन नामना गुरुपासे प्रव्रज्या अंगीकार करी, काळ करीने जयंत नामना अनुत्तर विमानमां ३३ सागरोपम आउखे देव थया. (६८) त्यांथी च्यवीने कोशळ देशमां अयोध्या नामनी महापुरीमां संवर राजा अने सिद्धार्था नामनी राणीना पुत्र अभिनंदन नामना थया. (६९) वैशाख शुदि ४, माघ शुदि २, माघ शुक्ल १२, पोष शुक्ल १४ ने वैशाख शुदि ८ आ पांच तेमना कल्याणकनी तिथिओ छे. चार कल्याणको अभिचि

अभीइमभिनंदणजिणस्स त्ति ' ज्ञानकल्याणकदिनं दृश्यते, न चेयं शुद्ध-चतुर्दश्येव भाविनीति वाच्यं, तस्या अभीचियोगासंभवात्पौषशुद्धचतु-र्दश्यां हि पुनर्वस्वोरेव प्रायो योगः संभवेदिति. शुक्लाष्टमी च वैशाखे कल्याणतिथयः प्रभोः । चतुर्षु धिष्ण्यमादित्यः पंचमे पुष्यमेव च ॥७१॥ अष्टौ मासा दिनान्यष्टा-विंशतिर्गर्भस्थितिः । वानरो लांछनं राशि-र्मि-थुनाख्योऽभवत्प्रभोः ॥ ७२ ॥ पंचाशत्पूर्वलक्षोनै-र्दशभिर्लक्षकोटिभिः । सागरैर्भगवांस्तुर्यो-ऽभवत्संभवमोक्षतः ॥ ७३ ॥ सपंचाशत्पूर्वलक्षा दशाब्धिलक्षकोटयः । अशिष्यंत प्रभोर्जन्म-काले तुर्यारकस्य च ॥७४॥ यतोऽभिनंद्यते शक्रैः स्तूयते गर्भगोऽप्यतः । अभिनंदननामाभू-द्यद्वा विश्वप्रमोदकृत् ॥ ७५ ॥ लक्षा द्वादश पूर्वाणां सार्द्धाः कौमार्यमष्ट च । पूर्वांगान्यथ षट्त्रिंश-ल्लक्षाः सार्द्धाश्च राजता ॥ ७६ ॥ पूर्वांगैरष्टभिर्न्यूनं पूर्वलक्षं च साधुता । पंचाशत्पूर्वलक्षाणि सर्वमायुः प्रकीर्त्तितं ॥ ७७ ॥ धनुःशतत्रयं सार्द्धं प्रज्ञप्तो वपुरुच्छ्रयः । अभिनंदनदेवस्या-भिनंदितशि-

---

नक्षत्रमां अने पांचमामां पुष्य नक्षत्र जाणवुं. (७०–७१) अहीं आवश्यकसूत्रमां तो पोष मासमां शुद्ध (शुक्ल) पक्षनी चतुर्दशी ने अभीचि नक्षत्र अभिनंदनस्वामीनो ज्ञानकल्याणकनो दिवस देखाय छे. आ शुद्ध चतुर्दशी ज हशे एम न कहेवुं केमके तेमां अभीचि नक्षत्रना योगनो असंभव छे, पोष शुदि चतुर्दशीए तो पुनर्वसु नक्षत्रनो योग ज प्रायः संभवे छे." गर्भस्थिति आठ मास ने अठावीश दिवसनी, वानरनुं लांछन अने प्रभुनी मिथुन राशि जाणवी. (७२) संभवनाथजीना मोक्षथी पचास लाख पूर्वे न्यून दश लाख क्रोड सागरोपम गया त्यारे अभिनंदन प्रभुनो जन्म थयो. एटले अभिनंदनस्वामीना जन्मसमये चोथो आरो पचास लाख पूर्वसहित दश लाख क्रोडपूर्व शेष रह्यो एम जाणवुं. (७३–७४) प्रभु गर्भमां हता त्यारे शक्रे अभिनंदित कर्या–स्तव्या तेथी तेम ज विश्वने प्रमोद करनार होवाथी तेमनुं नाम अभिनंदन स्थापवामां आव्युं. (७५) साडा बार लाख पूर्व कौमारावस्थामां व्यतीत थया अने आठ पूर्वांग युक्त साडीछत्रीश लाख पूर्व राज्यनी प्रतिपालना करी. (७६) आठ पूर्वांग न्यून एक लाख पूर्व साधुपणामां व्यतीत कर्युं. एकंदर पचास लाख पूर्वनुं आयुष्य कहेलुं छे. (७७) अभिनंदित करी छे शिवश्री .(मोक्षलक्ष्मी) जेणे एवा अभिनंदनस्वामीनुं शरीर उंचुं साडात्रण सो धनु-

वश्रियः ॥ ७८ ॥ व्रतेऽर्थसिध्धा शिबिका प्रथमं पारणं प्रभोः । अयो- ध्यायामिंद्रदत्त–मंदिरे समजायत ॥ ७९ ॥ छद्मस्थकालो विज्ञेयो वर्षाण्यष्टादश प्रभोः । ज्ञानद्रुमः प्रियालः स्यात् षोडशं गणिनां शतं ॥ ८० ॥ लक्षास्तिस्रो भगवतः संयतानां महात्मनां । षट्लक्षाः संय- तीनां च सहस्रैस्त्रिशताधिकाः ॥ ८१ ॥ अष्टाशीतिः सहस्राणि श्राध्धा लक्षद्वयं तथा । श्राविकाणां पंचलक्षाः सहस्राः सप्तविंशतिः ॥ ८२ ॥ चतुर्दश सहस्राणि केवलज्ञानशालिनां । एकादश सहस्राः षट् शताः साध्धा मनोविदः ॥८३॥ अवधिज्ञानिनामष्टा–नवतिः स्युः शतानि च । शतानि पंचदश च स्युश्चतुर्दशपूर्विणः ॥ ८४ ॥ सवैक्रियाणामेकोन–विं- शतिः स्युः सहस्रकाः । एकादश सहस्राणि वादिनामभवन् विभोः ॥ ८५ ॥ वज्रनाभो गणधरः प्रथमः प्रथितः प्रभोः । प्रवर्त्तिन्यजिता मित्र–वीर्यो भक्तनृपोऽभवत् ॥ ८६ ॥ मातुलिंगाक्षसूत्राढ्या–पसव्यकर- यामलः । नकुलांकुशयुग्वाम–करयुग्मश्चतुर्भुजः ॥ ८७ ॥ ईश्वराख्यो यक्षराजः श्यामांगो गजवाहनः । अभिनंदनभक्तानां करोति कुशलं सदा ॥ ८८ ॥ बिभ्रती वरदं पाश–मपसव्ये करद्वये । वामे नागांकुशौ

ध्यनुं कह्युं छे. (७८) व्रतारोपण वखते शिबिका अर्थसिद्धा नामनी हती अने प्रथम पारणुं प्रभुए अयोध्यामां इंद्रदत्तने घरे कर्युं हतुं. (७९) प्रभुनो छद्मस्थ काळ अढार वर्षनो अने ज्ञानवृक्ष प्रियाल नामनुं हतुं. अभिनंदन प्रभुने ११६ गणधर हता. (८०) त्रण लाख महात्मा साधुओ, ६३०००० साध्वीओ, २८८००० श्रावको, ५२७००० श्राविकाओ, (८१–८२) १४००० केवळज्ञानी, ११६५० मनःपर्यव- ज्ञानी, (८३) ९८०० अवधिज्ञानी, १५०० चौदपूर्वी, (८४) १९००० वैक्रियलब्धि- वाळा अने ११००० वादीओ थया. (८५) वज्रनाभ नामना प्रथम गणधर थया, अजिता नामनी मुख्य प्रवर्तिनी थइ अने मित्रवीर्य नामना राजा परम भक्त थया. (८६) मातुलिंग ने अक्षसूत्र जेना जमणा हाथमां छे ने नकुळ ने अंकुश जेना डाबा हाथमां छे एवो, चार भुजावाळो ईश्वर नामनो यक्षराज श्याम अंगवाळो ने गजना वाहन- वाळो थयो. ते श्री अभिनंदनस्वामीना भक्तोनुं निरंतर कुशळ करे छे. (८७–८८) जमणा बे हाथमां वरद ने पाश अने डाबा बे हाथमां नाग ने अंकुशने धारण करनारी,

श्याम-कायकांतिश्चतुर्भुजा ॥ ८९ ॥ पद्मासना सुरी काली नाम्ना धाम्नातिभासुरा । वितनोति श्रियां नंदि-मभिनंदनसेविनां ॥ ९० ॥ इति श्रीअभिनंदनः ।

विजये पुष्कलावत्यां धातकीखंडमंडने । प्राग्विदेहेषु विदिता नगरी पुंडरीकिणी ॥ ९१ ॥ एवं श्रीवासुपूज्यांता जिना अष्टौ विचक्षणैः । उत्पन्नाः प्राग्विदेहेषु ज्ञेयाः प्राक्तनजन्मनि ॥ ९२ ॥ अभूदतिबलस्तत्र राजा स्वीकृत्य स व्रतं । सीमंधरगुरोः पार्श्वे जयंते निर्जरोऽभवत् ॥ ९३ ॥ स्थितिं तत्र त्रयस्त्रिंश-त्सागरामनुभूय च । देशेषु कोशलाख्येषु पुरे साकेतनामनि ॥ ९४ ॥ मेघभूपालतनयो मंगलाकुक्षिसंभवः । पंचमः सुमतिर्नाम्ना जिनोऽभूत्क्रौंचलांछनः ॥ ९५ ॥ शुक्ला द्वितीया नभसो वैशाखस्य सिताष्टमी । तस्यैव नवमी शुक्ला चैत्रस्यैकादशी सिता ॥९६॥ चैत्रस्य नवमी शुक्ला कल्याणकदिनाः क्रमात् । स्याच्चतुर्षु मघा धिष्ण्यं पंचमे च पुनर्वसुः ॥ ९७ ॥ प्रभोर्गर्भस्थितिर्मासा नव षड्वासराधिकाः।

चार भुजावाळी, श्याम कांतिवाळी, पद्मना आसनवाळी, नामे करीने काळी परंतु तेजवडे अति भास्वर हती ते अभिनंदनस्वामीना सेवकोनी लक्ष्मीने निरंतर विस्तारे छे. (८९-९०) इति अभिनंदनः

सुमतिनाथ वर्णन-धातकीखंडना मंडनभूत पूर्वमहाविदेहमां पुष्कळावती विजयमां पुंडरीकिणी नामनी नगरी छे. (९१) अहीं सुमतिनाथथी वासुपूज्यसुधीना आठ तीर्थंकरो पूर्वजन्ममां पूर्वमहाविदेहमां उत्पन्न थयेला हता एम विचक्षणोए समजवुं. (९२) ते नगरीमां अतिबळ नामे राजा हता. तेणे सीमंधर गुरुनी पासे चारित्र अंगीकार कर्युं, अने मृत्यु पामीने जयंत विमानमां देवपणे उत्पन्न थया. (९३) त्यां तेत्रीश सागरोपमनुं आयुष्य अनुभवीने कोशळ नामना देशमां साकेत नामना नगरमां मेघ नामना राजानी मंगळा नामनी राणीनी कुक्षिमां पुत्रपणे उत्पन्न थया, ते क्रौंचना लांछनवाळा पांचमा सुमतिनाथ जिनेश्वर थया. (९४-९५) श्रावण शुदि २, वैशाख शुदि ८, वैशाख शुदि ९, चैत्र शुदि ११ ने चैत्र शुदि ९ ए पांच कल्याणकना अनुक्रमे दिवसो जाणवा. तेमांना चार कल्याणक मघा नक्षत्रमां ने पांचमुं पुनर्वसु नक्षत्रमां थयुं. (९६-९७) प्रभुनी गर्भस्थिति नव मास ने छ दिवसनी, त्रणसो धनुष्यप्रमाण शरीर

धनुःशतत्रयं देहो–च्छ्रयो राशिर्मृगाधिपः ॥ ९८ ॥ अभिनंदननिर्वाणा–न्नवभिः कोटिलक्षकैः । चत्वारिंशत्पूर्वलक्ष–न्यूनैः पाथोधिभिः किल ॥९९॥ सुमतेरभवज्जन्म शेषे तुर्यारकस्य च । चत्वारिंशत्पूर्वलक्षा–धिकेऽब्धिकोटिलक्षके ॥ ४०० ॥ हेतोरेकस्य पुत्रस्य सपत्न्योरुभयोरभूत् । विवाद एकदा भूयान् मृते पत्यौ धनाशया ॥ ४०१ ॥ साक्षी न कोऽपि तत्रासीत् पुत्रोऽपि न विवेद सः । विमातरं मातरं वा ताभ्यां साम्येन लालितः ॥ ४०२ ॥ कुंठेषु निर्णये तस्मि–न्नरेंद्रसचिवादिषु । अवादीन्मंगला राज्ञी तदा चोत्पन्नया धिया ॥ ३ ॥ गृहसर्वस्ववत्पुत्रो–ऽप्येष द्वेधा विभज्यतां । अनुमेने विमाता त–न्माता प्रोचे च साश्रुदृक् ॥ ४ ॥ अस्या एवास्तु पुत्रोऽयं गृहद्रव्यादिभिः सह । अस्मिंश्चिरायुषि प्राप्तं सर्वस्वमखिलं मया ॥ ५ ॥ अदापयत्ततस्तस्यै सुतं निश्चित्य मंगला । गर्भस्थस्य प्रभोरेव–मनुभावादभून्मतिः ॥ ६ ॥ स्वयं च शोभनमति–स्तस्मात्सुमतिसंज्ञकः । कौमारं बिभरामास पूर्वलक्षाण्यसौ दश ॥ ७ ॥

अने सिंहराशि समजवी. (९८) अभिनंदनस्वामीना निर्वाणथी ४० लाख पूर्वे न्यून नव लाख क्रोड सागरोपमे सुमतिनाथनो जन्म थयो त्यारे ४० लाख पूर्वे अधिक एक लाख क्रोड सागरोपम प्रमाण चोथो आरो बाकी रह्यो हतो. (४९९–४००) सुमतिनाथ नाम पाडवानुं कारण एवुं बन्युं के एक पुत्रने माटे बे शोक्योने तेमनो पति मरण पाम्ये सते पतिना धननी आशाथी विवाद उत्पन्न थयो. (बंने जणी पुत्र पोतानो छे एम कहेवा लागी) (४०१) तेमां साक्षी कोइ नहोतुं अने पुत्र पोतानी साची माताने के अपरमाताने ओळखतो नहोतो केमके ते बंनेए सरखी रीते तेने उछेर्यो हतो. (४०२) राजा अने मंत्री विगेरे तेनो निर्णय करवामां कुंठितबुद्धिवाळा थये सते मंगळा राणी ते वखते बुद्धि उत्पन्न थवाथी बोल्या (३) के—'गृहसर्वस्वनी जेम आ पुत्रने पण बे भाग करीने वहेंची आपो.' एटले ते वात विमाताए स्वीकारी. खरी माता आंखमां आंसु लावीने बोली (४) के–'अमारा घरना द्रव्यादिक साथे आ पुत्र पण भले एनो थाओ. पुत्र चिरायु थशे एटले हुं बधुं पामी एम मानीश.' (५) आ प्रमाणे तेना कहेवाथी राणीए निश्चय करीने ए पुत्र तेने ज सोंपाव्यो. गर्भमां रहेला पुत्रना प्रभावथी ज तेमने आवी मति उपजी. (६) आ कारणथी अने ते प्रभु पोते शोभनमतिवाळा होवाथी तेमनुं नाम सुमतिनाथ पाडवामां आव्युं. दश लाख पूर्व तेमणे कौमारावस्थामां व्यतीत

एकोनत्रिंशतं स्वामी पूर्वलक्षाण्यपालयत्। सातिरेकाणि पूर्वांगै राज्यं द्वादशभिर्भुवि ॥ ८ ॥ व्रतं द्वादशपूर्वांग–न्यूनं च पूर्वलक्षकं। चत्वारिंशत्पूर्वलक्षा–ण्यायुश्छाद्मस्थ्येऽब्दविंशतिः ॥ ९ ॥ ज्ञानद्रुमः प्रियंगुः स्या–द्व्रतार्थमभयंकरा। शिबिका पारणं चाद्यं पद्मोऽदाद्विजये पुरे ॥ १० ॥

प्रभोः शतं गणभृतां सविंशतिसहस्रकं। लक्षत्रयं स्युर्मुनयो गुणमाणिक्यभूभृतः ॥ ११ ॥ पंच लक्षाः संयतीनां सहस्रैस्त्रिंशताधिकाः। लक्षद्वयं श्रावकाणां सैकाशीतिसहस्रकं ॥१२ ॥ पंच लक्षाः श्राविकाणां सषोडशसहस्रकाः। त्रयोदश सहस्राणि प्रभोः केवलशालिनां ॥ १३ ॥ शतैश्चतुर्भिरर्द्धयर्द्धैः सहस्रा दश साधिकाः। मनोविदां सहस्राश्चै–कादशावधिवेदिनां ॥ १४ ॥ शताश्चतुर्विंशतिश्च स्युश्चतुर्दशपूर्विणां। अष्टादश वैक्रियाढ्य–सहस्राः सचतुःशताः ॥ १५ ॥ सार्द्धैः षड्भिः शतैर्युक्ताः सहस्रा दश वादिनां। चमरो गणभृन्मुख्यः काश्यपी च प्रवर्त्तिनी ॥१६॥ मतांतरे च निर्दिष्टाः सहस्रा दश वादिनां। शतैश्चतुर्भिरर्द्धयर्द्धै–रधिकाः श्रुतकोविदैः ॥ १७ ॥ सत्यवीर्यो नृपो भक्तो यक्षः स्यात्तुंबरुः स च। चतुर्भुजः श्वेतवर्णः श्रीमान् गरुडवाहनः ॥ १८ ॥ दधानो वरदं

कर्या. (७) बार पूर्वांगयुक्त २९ लाख पूर्व पृथ्वीनी प्रतिपालना करी. (८) दीक्षापर्याय बार पूर्वांगे न्यून एक लाख पूर्वनो थयो. ए प्रमाणे एकंदर ४० लाख पूर्वनुं आयुष्य थयुं. छद्मस्थपणामां वीश वर्ष व्यतीत थया. (९) ज्ञानवृक्ष प्रियंगु नामनुं, व्रतार्थे शिबिका अभयंकरा नामनी अने प्रथम पारणुं विजयपुरमां पद्मराजाने त्यां थयुं. (१०)

सुमतिप्रभुने सो गणधर थया, साधु त्रण लाख ने वीश हजार गुणरूप माणिक्यना पर्वत समान थया. (११) पांच लाख ने त्रीश हजार साध्वीओ, २८१००० श्रावको, (१२) ५१६००० श्राविका, १३००० केवळज्ञानी, (१३) १०४५० मनःपर्यवज्ञानी, ११००० अवधिज्ञानी, (१४) २४०० चौदपूर्वी, १८४०० वैक्रियलब्धिवाळा, (१५) १०६५० वादी–मतांतरे श्रुतकोविदोए १०४५० कह्या छे. चमर नामे मुख्य गणधर, काश्यपी नामनी प्रवर्त्तिनी (१६–१७) अने सत्यवीर्य राजा प्रभुनो भक्त थयो. यक्ष तुंबरु नामनो थयो, ते चार भुजावाळो, श्वेत वर्णवाळो ने गरुडना वाहनवाळो थयो. (१८) तेना जमणा बे हाथमां वरद ने शक्ति अने डाबा बे हाथमां गदा

शक्ति–मपसव्यकरद्वये । गदां च नागपाशं च वामहस्तद्वयेऽदधत् ॥१९॥ देवी भवेन्महाकाली स्वर्णवर्णांबुजासना । चतुर्भुजा सवरद–पाशयाम्यकरद्वया ॥ २० ॥ मातुलिंगांकुशोपेत–वामहस्तद्वयानिशं । सुमतिप्रभुभक्तानां पूरयंती मनोरथान् ॥ २१ ॥ इति श्रीसुमतिः ॥

प्रागभूद्धातकीखंडे विजये वत्सनामनि । सुसीमायां महापुर्यां नृपो नाम्नापराजितः ॥ २२ ॥ सोऽभूत्प्रपद्य चारित्रं सुगुरोः पिहिताश्रवात् । एकत्रिंशत्सागरायु–र्देवो ग्रैवेयकेंतिमे ॥ २३ ॥ वत्सदेशे सुकोशायां नगर्यां धरभूपतेः । अभूत्सुतः सुसीमायां राज्ञ्यां पद्मप्रभस्ततः ॥ २४ ॥ माघस्य षष्ठी कृष्णाथ द्वादशी च त्रयोदशी । कार्त्तिकस्यासिता चैत्र–पौर्णिमासी ततः पुनः ॥ २५ ॥ कृष्णा मार्गैकादशी च कल्याणकदिनाः क्रमात् । धिष्ण्यं च पंचस्वप्येषु चित्रासंज्ञकमीरितं ॥ २६ ॥ षड्वासराधिका मासा नव गर्भस्थितिः प्रभोः । कन्याराशिश्च विज्ञेयो लांछनं च सरोरुहं ॥ २७ ॥ त्रिंशत्पूर्वलक्षहीनै–र्नवत्याभूत्सहस्रकैः ।

ने नागपाश धारण करेला हता. (१९) देवी महाकाली नामनी थइ ते स्वर्णसरखा वर्णवाळी, कमळना आसनवाळी, चार भुजावाळी, तेमां जमणा बे हाथमां वरद ने पाश अने डाबा बे हाथमां मातुलिंग ने अंकुश धारण करनारी सुमतिनाथप्रभुना भक्तोना मनोरथोने निरंतर पूरनारी थइ. (२०–२१) इतिश्री सुमतिः

श्रीपद्मप्रभप्रभुवर्णन— पूर्वभवमां धातकीखंडना पूर्वमहाविदेहमां वत्स नामनी विजयमां सुसीमा नामनी महापुरीमां अपराजित नामे राजा हता. (२२) ते पिहिताश्रव नामना गुरुपासे चारित्र अंगीकार करीने नवमा ग्रैवेयकमां ३१ सागरोपमने आउखे देवपणे उत्पन्न थया. (२३) त्यांथी च्यवीने वत्सदेशमां सुकोशा नामनी नगरीमां धर राजा अने सुसीमा राणीना पुत्रपणे पद्मप्रभु नामना छठा जिनेश्वर थया. (२४) माह वदि ६, कार्त्तिक वदि १२, कार्त्तिक वदि १३, चैत्र शुदि १५ अने मार्गशीर्ष वदि ११–आ पांच कल्याणकना दिवसो अनुक्रमे थया. पांचे कल्याणको चित्रा नक्षत्रमां थया. (२५–२६) नव महिना ने छ दिवसनी गर्भस्थिति, कन्याराशि अने कमळनुं लांछन थयुं. (२७) सुमतिनाथ निर्वाण पाम्या पछी त्रीश लाख पूर्वे न्यून नेवुं हजार क्रोड सागरोपमे पद्मप्रभुनो जन्म थयो. (२८) ते वखते चोथो आरो त्रीश लाख पूर्वे अधिक

पद्मप्रभोऽब्धिकोटीना–मर्हत्सुमतिनिर्वृतेः ॥ २८ ॥ सहस्रा अब्धिकोटीनां दश तुर्यारकस्य च । प्रभुजन्मन्यशिष्यंत सत्रिंशत्पूर्वलक्षकाः ॥ २९ ॥ पद्मवन्निर्मलो यस्मा–न्मातुर्गर्भस्थिते प्रभौ । पद्मप्रभांकशय्यायां दोहदात्तादृशाह्वयः ॥ ३० ॥ धनुःशतद्वयं सार्द्धं स्वामिनो वपुरुच्छ्रयः । सार्द्धानि पूर्वलक्षाणि सप्त ज्ञेया कुमारता ॥ ३१ ॥ राज्यैश्वर्यं पूर्वलक्षा–ण्यद्ध्यर्द्धान्येकविंशतिं । सातिरेकाणि पूर्वांगैः पूर्णैः षोडशभिर्दधौ ॥ ३२ ॥ पूर्वलक्षं च पूर्वांगै–रूनं षोडशभिर्व्रतं । त्रिंशत्पूर्वलक्षजीवी मासांश्च षडकेवली ॥ ३३ ॥ शिबिका निर्वृतिकरा प्रथमां पारणां ददौ । ब्रह्मस्थले सोमदेव–श्छत्रौघो ज्ञानपादपः ॥ ३४ ॥ सप्तोत्तरं गणभृतां शतं संयमिनां प्रभोः । तिस्रो लक्षाः सहस्राश्च त्रिंशद्विमलचेतसां ॥ ३५ ॥ लक्षाश्चतस्रः साध्वीनां सहस्राणि च विंशतिः । षट्सप्ततिः सहस्राणि द्वे लक्षे श्रावकोत्तमाः ॥ ३६ ॥ लक्षाः पंच सहस्राश्च पंच स्युः श्राविकाः प्रभोः । सहस्रा द्वादशाभूवन् केवलज्ञानशालिनां ॥ ३७ ॥ सहस्राणि दश प्राहु–स्तथा त्रीणि शतानि च । मनोविदामथ दश सहस्राण्यवधिस्पृशां ॥ ३८ ॥ शतास्त्रयोविंशतिश्च स्युश्च-

---

दश हजार क्रोड सागरोपम बाकी हतो. (२९) पद्मनी जेवा निर्मळ होवाथी तेम ज माताने प्रभु गर्भमां हता त्यारे पद्मनी शय्यामां सुवानो दोहद थयो हतो तेथी ए प्रभुनुं नाम पद्मप्रभ पाडवामां आव्युं. (३०) तेमनुं शरीर अढी सो धनुष्य उंचुं हतुं. साडासात लाख पूर्व कौमारावस्थामां व्यतीत थया, (३१) अने सोळ पूर्वांगयुक्त २१॥ लाख पूर्व राज्यनी प्रतिपालना करी. (३२) सोळ पूर्वांगे न्यून एक लाख पूर्वनो चारित्रपर्याय थयो. एकंदर त्रीश लाख पूर्वनुं आयुष्य भोगव्युं. छ मास ज छद्मस्थपणे रह्या. (३३) दीक्षा अवसरे शिबिका निर्वृतिकरा नामनी हती. प्रथम पारणुं ब्रह्मस्थळ नगरमां सोमदेवने त्यां कर्युं. ज्ञानवृक्ष छत्रौघ नामनुं हतुं. (३४)

पद्मप्रभ प्रभुने १०७ गणधरो, ३३०००० निर्मळ मनवाळा मुनिओ हता. (३५) चार लाख ने वीश हजार साध्वी, २७६००० उत्तम श्रावको, (३६) पांच लाख ने पांच हजार श्राविकाओ, बार हजार केवळज्ञानीओ, (३७) दश हजार ने त्रण सो मनःपर्यवज्ञानी, दश हजार अवधिज्ञानी, (३८) २३०० चौदपूर्वी, नव हजार

तुर्दशपूर्विणां । सहस्राश्च नव प्रोक्ता वादिनां षट्शताधिकाः ॥ ३९ ॥ सहस्राः षोडश शतं चाष्टाढ्यं वैक्रियस्पृशः । सूर्याख्यो गणभृन्मुख्यो रतिसंज्ञा प्रवर्त्तिनी ॥ ४० ॥ नृपश्चाजितसेनाख्यः प्रभुभक्तिपरायणः । यक्षश्च कुसुमो नील–वर्णो हरिणवाहनः ॥ ४१ ॥ अभयं च फलं चाय–मपसव्ये करद्वये । नकुलं चाक्षसूत्रं च धत्ते वामे चतुर्भुजः ॥ ४२ ॥ देवी भवेदच्युताख्या श्यामाख्येयं मतांतरे । चतुर्भुजा श्यामवर्णा भास्वरा नरवाहना ॥ ४३ ॥ युक्तं वरदबाणाभ्यां स्याद्दक्षिणकरद्वयं । कार्मुकाभययुक्तं च वाममस्याः करद्वयं ॥ ४४ ॥ इति पद्मप्रभः ॥

विजये रमणीयाख्ये धातकीखंडमंडने । प्राग्विदेहेषु च शुभा–पुर्यां नंदनरेश्वरः ॥ ४५ ॥ संयमं प्रतिपद्याभूत् स चारिदमनाद्गुरोः । षष्ठे ग्रैवेयके देवो–ऽष्टाविंशत्यब्धिजीवितः ॥ ४६ ॥ काशीदेशे वाराणस्यां प्रतिष्ठनृपतेस्ततः । राज्ञ्यां पृथिव्यां तनयः श्रीसुपार्श्वजिनोऽभवत् ॥४७॥ भाद्रमासेऽष्टमी कृष्णा ज्येष्ठे च द्वादशी सिता । ज्येष्ठे त्रयोदशी शुक्ला

ने छसो वादी (३९) अने १६१०८ वैक्रियलब्धिवाळा थया. सूर्य नामना मुख्य गणधर, रति नामे प्रवर्त्तिनी (४०) अने अजितसेन नामनो राजा प्रभुभक्तिमां परायण थयो. कुसुम नामनो यक्ष नीलवर्णवाळो, हरिणना वाहनवाळो, (४१) अभय ने फळ जमणा बे हाथमां ने नकुळ ने अक्षसूत्र डाबा बे हाथमां धारण करनारो, चार भुजावाळो थयो. (४२) अच्युता नामे देवी मतांतरे श्यामा नामे देवी चार भुजावाळी, श्यामवर्णवाळी, भास्वरशरीरवाळी, नरना वाहनवाळी, (४३) दक्षिणबाजुना बे हाथमां वरद ने बाण अने डाबीबाजुना बे हाथमां कार्मुक ने अभयने धारण करनारी थइ. (४४) इति पद्मप्रभः.

श्रीसुपार्श्वनाथवर्णन—धातकीखंडना मंडनभूत रमणीय नामना विजयमां शुभापुरी नामनी नगरीमां नंद नामना राजा हता. (४५) तेमणे अरिदमन गुरुनी पासे चारित्र अंगीकार कर्युं अने छट्ठा ग्रैवेयकमां २८ सागरोपमने आउखे देवरूपे उत्पन्न थया. (४६) त्यांथी च्यवी काशीदेश, वाराणसी नगरीमां प्रतिष्ठराजानी पृथ्वीराणीनी कुक्षिथी श्रीसुपार्श्वजिन पुत्रपणे उत्पन्न थया. (४७) भाद्रपद वदि ८, ज्येष्ठ शुदि १२, ज्येष्ठ शुदि १३, फाल्गुन वदि ६ अने भाद्रपद वदि ७–९ अनुक्रमे पांच कल्याणकनी तिथिओ

कृष्णा षष्ठी च फाल्गुने ॥ ४८ ॥ श्यामा च सप्तमी भाद्रे कल्याणतिथयः क्रमात् । चतुर्षु भं विशाखा स्या-दनुराधा च पंचमे ॥ ४९ ॥ सैकोनविंशतिदिना मासा गर्भस्थितिर्नव । तुलाराशिश्च विज्ञेयो लांछनं स्वस्तिकं प्रभोः ॥ ५० ॥ अभूत्सुपार्श्वो नवभि-र्वार्द्धिकोटिसहस्त्रकैः । विंशतिपूर्वलक्षोनैः श्रीपद्मप्रभमोक्षतः ॥ ५१ ॥ सहस्त्रमब्धिकोटीनां विंशत्या पूर्वलक्षकैः । अशिष्यताधिकं तुर्या-रकस्य प्रभुजन्मनि ॥ ५२ ॥ शुभपार्श्वः सुपार्श्वः स्या-न्मातुर्गर्भस्थिते प्रभौ । सुपार्श्वताभवद्देहे ततोऽयं तादृशाह्वयः ॥५३॥ मातुरेवं फणशय्या-स्वप्नात्प्रोक्ताः फणाः प्रभोः । एको वा पंच नव वा संप्रदायविशारदैः ॥ ५४ ॥ तथोक्तं सुपार्श्वचरित्रे पद्मानंदे-फणिन्येकफणे पंच-फणे नवफणेऽपि च । सुप्तं स्वप्ने प्रभौ गर्भ-स्थिते माता स्वमैक्षत ॥ ५५ ॥ पृथ्व्या स्वप्नेक्षितं तादृक् सर्पं शीर्षोपरि स्थितं । शक्रो विचक्रे समव-सरणेषु सदा विभोः ॥ ५६ ॥

पूर्वाणां पंच लक्षाणि कौमार्येऽथ नरेंद्रता । पूर्वांगविंशतियुताः पूर्व-

---

थइ. चार कल्याणकमां विशाखा नक्षत्र अने पांचमामां अनुराधा नक्षत्र जाणवुं. (४८-४९) नव मास ने १९ दिवसनी गर्भस्थिति, तुलाराशि अने स्वस्तिकनुं लांछन जाणवुं. (५०) श्रीपद्मप्रभुना मोक्षथी वीश लाख पूर्व न्यून नव हजार क्रोड सागरोपम व्यतीत थया त्यारे सुपार्श्वनाथनो जन्म थयो. (५१) ते वखते वीश लाख पूर्व अधिक एक हजार क्रोड सागरोपम चोथो आरो बाकीमां हतो. (५२) शुभ पासा होवाथी सुपार्श्व अथवा प्रभु गर्भमां स्थित हता त्यारे माताना देहमां सुपार्श्वता-सुंदर पडखापणुं थयुं तेथी सुपार्श्व नाम पाडवामां आव्युं. (५३) माताने फणानी शय्यानुं स्वप्न आवेलुं होवाथी संप्रदायना विशारदोए सुपार्श्वनाथनी प्रतिमाने एक, पांच अथवा नव फणा करवानुं कहेलुं छे. (५४) श्रीसुपार्श्वचरित्रमां पद्मानंदे कह्युं छे के—' पृथ्वीमाताए प्रभु गर्भमां हता त्यारे एक फणा, पांच फणा ने नव फणावाळा सर्प उपर सुतेला पोताना आत्माने स्वप्नमां जोयो हतो. (५५) पृथ्वीदेवीए स्वप्नमां जोयेला तेवा प्रकारना सर्पने शक्रेंद्र समवसरणमां निरंतर प्रभुना मस्तकपर रहेलो रचता हता.' (५६)

पांच लाख पूर्व कौमारावस्थामां अने वीश पूर्वांगयुक्त चौद लाख पूर्व राज्यावस्थामां तेम ज वीश पूर्वांगे न्यून एक लाख पूर्व श्रमणावस्थामां व्यतीत थवाथी एकं-

लक्षाश्चतुर्दश ॥ ५७ ॥ एकं विंशतिपूर्वांग-न्यूनं च पूर्वलक्षकं । श्रामण्यं तत्र छाद्मस्थ्यं मासा नव विभोः स्मृताः ॥ ५८ ॥ विंशतिः पूर्वलक्षाणि सर्वमायुरभूद्विभोः । अभूच्च वपुरौन्नत्यं विभोश्चापशतद्वयं ॥५९॥ मनोहरा स्याच्छिबिका ददौ प्रथमपारणं । महेंद्रः पाडलीखंडे शिरीषो ज्ञानपादपः ॥ ६० ॥

गणेंद्राः पंचनवति-र्लक्षाणि त्रीणि साधवः । लक्षाश्चतस्रः साध्वीनां सहस्रैस्त्रिंशताधिकाः ॥ ६१ ॥ सहस्राः सप्तपंचाश-ल्लक्षे द्वे श्रावकोत्तमाः । सहस्राणि त्रिनवतिः श्राद्धीलक्षचतुष्टयं ॥ ६२ ॥ एकादश सहस्राणि केवलज्ञानशालिनां । पंचाशानि शतान्येक-नवतिश्च मनोविदां ॥ ६३ ॥ अवधिज्ञानभाजां च सहस्रा नव कीर्त्तिताः । स्वगोचरानुसारेण मूर्त्तद्रव्याणि पश्यतां ॥ ६४ ॥ सहस्रौ त्रिंशदधिकौ द्वौ चतुर्दशपूर्विणां । वैक्रियाणां पंचदश सहस्रास्त्रिंशताधिकाः ॥ ६५ ॥ स्युः प्रभोर्वादिनामष्टौ सहस्राः सचतुःशताः । विदर्भो मुख्यगणभृ-त्प्रभोः सोमा प्रवर्त्तिनी ॥ ६६ ॥ दानवीर्यो नृपो भक्तो यक्षो मातंगसंज्ञकः । चतुर्भुजो नीलवर्णः श्रीमान् कुंजरवाहनः ॥ ६७ ॥ स राजते बिल्वपाश-युग्दक्षिणकरद्वयः । नकुलांकुशसंयुक्त-वामहस्तद्वयोऽपि च ॥ ६८ ॥ जात्यचामी-

---

दर वीश लाख पूर्वनुं आयुष्य थयुं. तेमां छद्मस्थपणे मात्र नव मास रह्या. शरीरनी उंचाइ बसो धनुष्यनी थइ. (५७-५९) दीक्षा अवसरे शिबिका मनोहरा नामनी अने प्रथम पारणुं पाडलीखंड नगरमां महेंद्र राजाने त्यां थयुं. शिरीष नामनुं ज्ञानवृक्ष हतुं.(६०)

श्रीसुपार्श्वनाथने ९५ गणधर, त्रण लाख साधुओ, चार लाख ने त्रीश हजार साध्वीओ, (६१) २५७००० श्रावको, ४९३००० श्राविकाओ, (६२) ११००० केवळज्ञानी, ९१५० मनःपर्यवज्ञानी, (६३) ९००० अवधिज्ञानी, तेओ पोताना ज्ञानानुसार रूपी द्रव्यने जोनारा हता. (६४) २०३० चौदपूर्वीओ, १५०३० वैक्रियलब्धिवाळा (६५) अने ८४०० वादी थया. मुख्य गणधर विदर्भ नामना, प्रवर्त्तिनी सोमा नामनी (६६) अने दानवीर्य राजा प्रभुनो भक्त थयो. मातंग नामनो यक्ष चार भुजावाळो, नील वर्णवाळो, शोभीतो, कुंजरना वाहनवाळो थयो. (६७) तेना जमणा बे हाथ बील्व ने पाशयुक्त अने डाबा बे हाथ नकुळ ने अंकुशयुक्त हता. (६८)

करज्योति-र्गजासीना चतुर्भुजा । धत्तेऽक्षसूत्रं वरद-मपसव्ये करद्वये ॥ ६९ ॥ दधाति शूलमभयं या च वामकरद्वये । सुपार्श्वसेविनां शांतिं देवी शांता करोतु सा ॥ ७० ॥ इति सुपार्श्वः ॥

श्रीवर्माख्यो नृपः पूर्वं सौधर्मेऽभूत्सुरस्ततः । ततश्चाजितसेनाख्यो विख्यातश्चक्रवर्त्यभूत् ॥ ७१ ॥ इंद्रस्ततोऽच्युतेऽथायं धातकीखंडमंडने । विजये मंगलावत्यां प्राग्विदेहविभूषणे ॥ ७२ ॥ श्रीरत्नसंचयापुर्यां पद्मनामा नृपोऽभवत् । युगंधरगुरोः पार्श्वे स प्रव्रज्यामुपाददे ॥ ७३ ॥ वैजयंतविमानेऽभू-त्ततो देवो महर्द्धिकः । त्रयस्त्रिंशत्सागरायु-स्ततश्च्युत्वा स्थितिक्षये ॥ ७४ ॥ पूर्वदेशे चंद्रपुर्यां महसेनमहीपतेः । चंद्रप्रभोऽभू-द्भगवान् लक्ष्मणाकुक्षिसंभवः ॥ ७५ ॥ अत्र चंद्रप्रभजन्मपुर्या नाम 'चंदाणण त्ति' आवश्यके. चैत्रस्य पंचमी कृष्णा पौषस्य द्वादशी शितिः । पौषफाल्गुनयोः कृष्णा त्रयोदशी च सप्तमी ॥ ७६ ॥ भाद्रस्य सप्तमी श्यामा कल्याणकदिना विभोः । अनुराधा चतुर्षु स्याद्धिष्ण्यं ज्येष्ठा च पंचमे ॥ ७७ ॥ प्रभोर्गर्भस्थितिर्मासा नव सप्तदिनाधिकाः ।

जात्यवंत सुवर्ण सरखी कांतिवाळी, हाथीना वाहनवाळी, चार भुजावाळी, जमणा बे हाथमां अक्षसूत्र ने वरद अने डाबा बे हाथमां शूळ ने अभयने धारण करनारी शांता नामनी देवी सुपार्श्वनाथना भक्तोने शांति करो. (६९-७०) इति श्रीसुपार्श्वः

श्रीचंद्रप्रभप्रभुवर्णन—श्रीवर्म नामनो राजा पूर्वे सौधर्म देवलोकमां देव थयो हतो ते त्यांथी च्यवीने अजितसेन नामना विख्यात चक्रवर्ती थया. (७१) त्यांथी बारमा अच्युत देवलोकमां इंद्र थया. त्यांथी च्यवीने धातकीखंडना मंडनभूत अने पूर्वमहाविदेहना आभूषणभूत मंगळावती विजयमां श्रीरत्नसंचया नामनी नगरीमां पद्मनामे राजा थया. तेमणे युगंधर गुरुनी पासे चारित्र अंगीकार कर्युं (७२-७३) अने वैजयंत विमानमां तेत्रीश सागरोपमने आउखे महर्द्धिक देव थया. त्यांथी स्थितिक्षये च्यवीने पूर्वदेशमां चंद्रपुरी नगरीमां महसेन राजानी लक्ष्मणा नामनी राणीनी कुक्षिथी चंद्रप्रभ नामे जिनेश्वर थया. (७४-७५) 'अहीं आवश्यकसूत्रमां चंद्रप्रभनी जन्मपुरीनुं नाम चंद्रानना कहेल छे ' चैत्र वदि ५, पौष वदि १२, पोष वदि १३, फाल्गुन वदि ७ अने भाद्रपद वदि ७-आ तेमना पांच कल्याणकनी तिथिओ जाणवी. चार कल्याणकमां अनुराधा नक्षत्र अने पांचमामां ज्येष्ठा नक्षत्र जाणवुं. (७६-७७) प्रभुनी

शशभृल्लांछनं राशि-र्वृश्चिकाख्योऽभवत्प्रभोः ॥ ७८ ॥ वार्द्धीनां नवभिः कोटि-शतैः सुपार्श्वनिर्वृतेः । अभूत्प्रभोर्जन्म दश-पूर्वलक्षोनकैः किल ॥ ७९ ॥ अधिकं दशभिः पूर्व-लक्षैस्तुर्यारके तदा । शतमंभोधिकोटीनां शिष्यते स्मेशजन्मनि ॥ ८० ॥ प्रभौ गर्भगते मातु-श्चंद्रपानमनोरथात् । यद्वेंदुसौम्यलेश्यत्वा-त्स्वामी चंद्रप्रभाभिधः ॥ ८१ ॥ पूर्वलक्षद्वयं सार्द्धं सार्द्धाः षट् पूर्वलक्षकाः । चतुर्विंशतिपूर्वांगा-धिकाः कौमार्यराज्ययोः ॥ ८२ ॥ चतुर्विंशतिपूर्वांग-न्यूनं च पूर्वलक्षकं । श्रामण्यं तत्र मासानां त्रयं छद्मस्थतास्थितिः ॥ ८३ ॥ पूर्वाणां दश लक्षाणि सर्वमायुरभूत्प्रभोः । धनुषां च शतं सार्द्धं भगवद्वपुरुच्छ्रयः ॥ ८४ ॥ मनोरमाख्या शिबिका प्रथमां पारणां ददौ । पद्मखंडे सोमदत्तो नागाख्यो ज्ञानभूरूहः ॥ ८५ ॥

गणेशाश्च त्रिनवति-रध्यर्द्धं लक्षयोर्द्वयं । संयतानां संयतीनां लक्षास्तिस्रस्तथोपरि ॥ ८६ ॥ स्युरशीतिः सहस्राणि श्राद्धा मुनिमिता मताः । पंचलक्षी नवसह-स्रोनाश्चोपासिका मताः ॥ ८७ ॥ सर्व-

---

गर्भस्थिति नव मास ने सात दिवसनी, चंद्रनुं लांछन अने प्रभुनी राशि वृश्चिक जाणवी. (७८) सुपार्श्वनाथना निर्वाणथी दश लाख पूर्वे न्यून नवसो क्रोड सागरोपमे चंद्रप्रभनो जन्म थयो. (७९) ते वखते दश लाख पूर्वे अधिक एक सो क्रोड सागरोपम प्रमाण चोथो आरो बाकी हतो. (८०) प्रभु गर्भमां हता त्यारे माताने चंद्रपाननो मनोरथ थयो हतो तेथी तेम ज चंद्रसमान सौम्य लेश्या(कांति)वाळा होवाथी तेमनुं नाम चंद्रप्रभ पाडवामां आव्युं. (८१) अढी लाख पूर्वे कौमारावस्थामां अने चोवीश पूर्वांगयुक्त साडाछ लाख पूर्व राज्यावस्थामां व्यतीत थया. (८२) चोवीश पूर्वांगे न्यून एक लाख पूर्व श्रमणावस्थामां व्यतीत थया. ए रीते एकंदर दश लाख पूर्वनुं चंद्रप्रभ प्रभुनुं आयुष्य जाणवुं. छद्मस्थावस्थामां त्रण मास ज रह्या. एमनुं शरीर दोढसो धनुष्य प्रमाण उंचुं हतुं. (८३-८४) दीक्षा अवसरे मनोरमा नामे शिबिका हती. प्रथम पारणुं पद्मखंड नगरमां सोमदत्तने त्यां थयुं. ज्ञानवृक्ष नाग नामनुं हतुं. (८५)

चंद्रप्रभप्रभुने गणधर ९३, अढी लाख साधुओ, त्रण लाख ने ८० हजार साध्वीओ, अढी लाख श्रावको ने ४९१००० श्राविकाओ, (८६-८७) १०००० केवळज्ञानी,

ज्ञानां सहस्राणि दशाष्टौ च मनोविदां। अष्टावधिस्पृशां वैक्रि–याढ्यानां च चतुर्दश ॥ ८८ ॥ सहस्रे द्वे भगवतः स्याच्चतुर्दशपूर्विणां । अभूवन् वादिनां सप्त–सहस्राः षट्शताधिकाः ॥ ८९ ॥ दिन्नो गणधरो मुख्यः सुमनाश्च प्रवर्त्तिनी। भक्तश्च मघवा भूमान् यक्षः स्याद्विजयाभिधः ॥ ९० ॥ स च त्रिनेत्रो हरित–वर्णांगो हंसवाहनः। चक्रयुग्दक्षिणकरो वामपाणौ समुद्गरः ॥ ९१ ॥ प्रभोर्ज्वालाभिधा देवी भृकुटिश्च मतांतरे। चतुर्भुजा पीतवर्णा वरालकाख्यवाहना ॥ ९२ ॥ वरालको जीवविशेषः। सा खड्गमुद्गरौ धत्ते हस्तयोरपसव्ययोः। फलकं परशुं चैव सव्ययोः करपद्मयोः ॥ ९३ ॥ इति चंद्रप्रभः ॥

विजये पुष्कलावत्यां प्राग्विदेहेषु पुष्करे। नगर्यां पुंडरीकिण्यां महापद्मोऽभवन्नृपः ॥ ९४ ॥ स सर्वजगदानंद–गुरुपार्श्वे धृतव्रतः। एकोनविंशत्यब्ध्यायु–रानते त्रिदशोऽभवत् ॥ ९५ ॥ शून्यदेशेऽथ काकंद्यां पुर्यां सुग्रीवभूपतेः। रामाराज्ञीकुक्षिभवः पुत्रोऽभूत्सुविधिर्जिनः

८००० मनःपर्यवज्ञानी, ८००० अवधिज्ञानी, १४००० वैक्रियलब्धिवाळा, (८८) २००० चौदपूर्वी अने ७६०० वादीओ थया. (८९) गणधरमां मुख्य दिन्न नामना, साध्वीमां मुख्य सुमना प्रवर्त्तिनी अने मघवा नामनो राजा भक्त थयो. यक्ष विजय नामनो थयो. (९०) ते त्रण नेत्रवाळो, हरितवर्णवाळो, हंसना वाहनवाळो, दक्षिण हाथमां चक्र ने डाबा हाथमां मुद्गरवाळो थयो. (९१) प्रभुनी यक्षिणी ज्वाळा नामनी मतांतरे भृकुटी नामनी थइ. ते चार भुजावाळी, पीत वर्णवाळी, वरालक नामना वाहनवाळी (वरालक जीवविशेष जाणवो), (९२) जमणा बे हाथमां खड्ग ने मुद्गर अने डाबा बे हाथमां फलक ने परशुने धारण करनारी थइ. (९३) इति श्रीचंद्रप्रभः

श्रीसुविधिनाथ वर्णन— पुष्करार्धद्वीपना पूर्वमहाविदेहमां पुष्कळावती विजयमां पुंडरीकिणी नगरीमां महापद्म नामे राजा हतो. (९४) तेमणे सर्व जगदानंद नामना गुरुनी पासे चारित्र ग्रहण कर्युं. त्यांथी काळ करीने आनत नामना नवमा देवलोकमां १९ सागरोपमने आउखे देवपणे उत्पन्न थया. (९५) त्यांथी च्यवीने शून्य देशमां काकंदीपुरीमां सुग्रीव राजानी रामा राणीनी कुक्षिथी सुविधिजिन पुत्रपणे उत्पन्न थया.

॥ ९६ ॥ फाल्गुने नवमी श्यामा कृष्णा मार्गस्य पंचमी । श्यामा षष्ठी च तस्यैव तृतीया कार्तिकेसिता ॥ ९७ ॥ भाद्रस्य नवमी शुक्ला कल्याणतिथयः प्रभोः । पंचस्वप्येषु नक्षत्रं मूलं राशिर्धनुर्भवेत ॥ ९८ ॥ अष्टौ मासाः स्थितिर्गर्भे षड्विंशतिदिनाधिकाः । मकरो लांछनं देहोच्छ्रयश्च धनुषां शतं ॥ ९९ ॥ नवत्यांभोधिकोटीनां पूर्वलक्षद्वयोनया । श्रीचंद्रप्रभनिर्वाणा–ज्जातः श्रीसुविधिर्जिनः ॥ ५०० ॥ दश कोट्यः सागराणां पूर्वलक्षद्वयाधिकाः । तुर्यारके स्म शिष्यंते श्रीमत्सुविधिजन्मनि ॥ ५०१ ॥ शुभक्रियापरत्वेन विख्यातः सुविधिः प्रभुः । माता वा गर्भकालेऽभू–त्सुविधिर्यत्ततस्तथा ॥ ५०२ ॥ पंचाशदेव पूर्वाणां कुमारत्वे सहस्रकाः । अष्टाविंशतिपूर्वांगा–धिकास्ते राज्यसंस्थितौ ॥ ३ ॥ अष्टाविंशतिपूर्वांग–न्यूनं च पूर्वलक्षकं । व्रते छद्मस्थता तत्र प्रभोर्मासचतुष्टयं ॥ ४ ॥ पूर्वलक्षद्वयं सर्व–मायुरासीज्जगत्पतेः । सूरप्रभाख्या शिबिका मल्लिः स्याद् ज्ञानभूरुहः ॥५॥ पुष्याभिख्यः श्वेतपुरे पारणां प्रथमां

---

(९६) फाल्गुन वदि ९, मार्गशीर्ष वदि ५, मार्गशीर्ष वदि ६, कार्त्तिक वदि ३ ने भाद्रपद शुदि ९ ए पांच कल्याणकनी तिथि जाणवी. पांचे कल्याणक मूळ नक्षत्रमां थया. प्रभुनी राशि धनु जाणवी. (९७–९८) आठ मास ने २६ दिवसनी गर्भस्थिति, मकरनुं लांछन अने देह सो धनुष्य उंचो जाणवो. (९९) श्रीचंद्रप्रभप्रभुना निर्वाणथी बे लाख पूर्वे ऊन नेवुं क्रोड सागरोपमे सुविधिनाथ उत्पन्न थया. (५००) सुविधिनाथना जन्म वखते चोथो आरो बे लाख पूर्वे अधिक दश कोटी सागरोपम बाकी हतो. (५०१) शुभ क्रियामां तत्पर होवाथी तेम ज माताने गर्भकाळे सुविधिमां तत्परता थएल होवाथी सुविधिनाथपणे प्रसिद्ध थया. (५०२) पचास हजार पूर्व कौमारावस्थामां अने २८ पूर्वांगे अधिक पचास हजार पूर्व राज्यावस्थामां व्यतीत थया. (३) २८ पूर्वांगे न्यून एक लाख पूर्व व्रतपणामां रह्या. तेमां छद्मस्थभाव चार मासनो ज हतो. (४) कुल आयुष्य जगत्पति सुविधिनाथनुं बे लाख पूर्वनुं हतुं. दीक्षा अवसरे सूरप्रभा नामे शिबिका हती अने ज्ञानवृक्ष मल्ली नामनुं हतुं. (५) प्रथम पारणुं श्वेतपुरमां पुष्य राजाने त्यां थयुं हतुं.

ददौ। अष्टाशीतिर्गणभृतो द्वे लक्षे मुनिसत्तमाः ॥ ६ ॥ लक्षमेकं च साध्वीनां सहस्राणि च विंशतिः। एकोनत्रिंशत्सहस्रा द्वे लक्षे श्रावकोत्तमाः ॥ ७ ॥ श्राविकाणां चतुर्लक्षी सहस्राण्येकसप्ततिः। केवलज्ञानभाजां स्युः शतानि पंचसप्ततिः ॥ ८ ॥ शताः पंचसप्ततिश्च मनःपर्यायशालिनां। अवधिज्ञानिनामष्टौ सहस्राः सचतुःशताः ॥ ९ ॥ शताः पंचदशाभूवन् सच्चतुर्दशपूर्विणां। लसद्वैक्रियलब्धीनां सहस्राणि त्रयोदश ॥ १० ॥ वादिनां षट्सहस्राणि गणी ज्येष्ठो वराहकः। प्रवर्त्तिनी वारुणीति युद्धवीर्यो नृपोऽर्चकः ॥ ११ ॥

अजिताख्यो यक्षराजः श्वेतश्रीः कूर्मवाहनः। मातुलिंगाक्षसूत्राढ्य–वामेतरकरद्वयः ॥ १२ ॥ तथा च कुंतनकुल–शालिवामकरद्वयः। एवं चतुर्भुजः प्रीतिं दत्ते सुविधिसेविनां ॥ १३ ॥ देवी सुतारा गौरांगी धत्ते वृषभवाहना। अक्षसूत्रं च वरद–मपसव्यकरद्वये ॥ १४ ॥ दधती कलशं चैवां–कुशं वामकरद्वये। सुविधिप्रभुभक्तानां पिपर्त्ति द्रुतमीप्सितं ॥ १५ ॥ इति सुविधिः ॥

पुष्करस्थप्राग्विदेहे विजये वत्सनामनि। अभूत्पुर्यां सुसीमायां

सुविधिप्रभुने ८८ गणधर, बे लाख मुनिओ, (६) १२०००० साध्वीओ, बे लाख ने ओगणत्रीश हजार श्रावको, (७) ४७१००० श्राविकाओ, ७५०० केवळज्ञानी, (८) ७५०० मनःपर्यवज्ञानी, ८४०० अवधिज्ञानी, (९) १५०० चौदपूर्वी, १३००० वैक्रियलब्धिवाळा (१०) अने ६००० वादीओ थया. मुख्य गणधर वराहक नामे, प्रवर्त्तिनी वारुणी नामे अने युद्धवीर्य नामनो राजा प्रभुनो भक्त थयो. (११)

अजित नामनो यक्ष श्वेत वर्णवाळो, कूर्मना वाहनवाळो, दक्षिण बाजुना बे हाथमां मातुलिंग ने अक्षसूत्र अने डाबी बाजुना बे हाथमां कुंत ने नकुलने धारण करनारो, चार भुजावाळो श्रीसुविधिजिनना सेवकोने प्रीति उत्पन्न करनार थयो. (१२–१३) देवी सुतारा नामे गौर वर्णवाळी, वृषभना वाहनवाळी, अक्षसूत्र ने वरद बे जमणा हाथमां अने कळश ने अंकुश बे डावा हाथमां धारण करनारी सुविधिप्रभुना भक्तोने शीघ्र वांछितने आपनारी थइ. (१४–१५) इति श्रीसुविधिः

श्रीशीतळनाथ वर्णन—पुष्करवरद्वीपना पूर्वमहाविदेहमां वत्स नामनी विजयमां

पद्मनामा महीपतिः ॥ १६ ॥ सार्थवाहगुरोः पार्श्वे स च स्वीकृत्य संयमं । देवोऽभूत्प्राणतस्वर्गे विंशत्यर्णवजीवितः ॥ १७ ॥ ततो मलयदेशेऽभू–त्पुरे भद्दिलनामनि । श्रीशीतलो दृढरथो–र्वीशनंदात्मजो जिनः ॥ १८ ॥ वैशाखषष्ठ्यां श्यामायां च्युतः स्वर्गाज्जिनेश्वरः । माघस्य कृष्णद्वादश्यां जातो दीक्षामवाप च ॥ १९ ॥ पौषश्यामचतुर्दश्यां लेभे केवलमुज्ज्वलं । राधकृष्णाद्वितीयायां प्रभुः प्रापापुनर्भवं ॥ २० ॥ पूर्वाषाढा च नक्षत्रं कल्याणेष्वेषु पंचसु । नव मासा दिनैः षड्भि–र्युक्ता गर्भस्थितिः प्रभोः ॥ २१ ॥ न्यूनाभिः पूर्वलक्षेण नवभिर्वार्द्धिकोटिभिः । सुविधिप्रभुनिर्वाणा–ज्जातः श्रीशीतलो जिनः ॥ २२ ॥ एका कोटी सागराणां पूर्वलक्षाधिका किल । अशिष्यतारके तुर्ये शीतलप्रभुजन्मनि ॥ २३ ॥ शेषस्तुर्यारकस्योक्तो नवानां जन्मनीह यः । स द्विचत्वारिंशदब्द–सहस्रन्यून ऊह्यतां ॥ २४ ॥ इतः परेषामष्टानां यश्च जन्मनि वक्ष्यते । शेषस्तुर्यस्यारकस्य सातिरेकः स ऊह्यतां ॥ २५ ॥ सचतुरशीतिसहस्रैः शरदां लक्षैश्च पंचषष्टिमितैः । अरनाथावधि विज्ञेय–मंतरमेवं धियां निधिभिः ॥ २६ ॥ युग्मं ॥

सुसीमा नामनी नगरीमां पद्मनामे राजा हतो. (१६) तेणे सार्थवाह नामना गुरुनी पासे संयम ग्रहण कर्युं अने प्राणत नामना दशमा देवलोकमां वीश सागरोपमने आउखे देवपणे उत्पन्न थया. (१७) त्यांथी च्यवीने मलयदेशमां भद्दिलपुर नामना नगरमां दृढरथ राजा ने नंदा राणीना पुत्रपणे उत्पन्न थया. ते शीतळ नामना जिनेश्वर थया. (१८) वैशाख वदि छठे स्वर्गमांथी च्यव्या, माघ वदि १२ शे जन्म्या अने ते ज तिथिए दीक्षा अंगीकार करी, पोष वदि १४शे उज्वळ केवळज्ञान प्राप्त कर्युं अने वैशाख वदि २ अपुनर्भवपणाने–मोक्षने पाम्या. (१९–२०) तेमना पांचे कल्याणको पूर्वाषाढा नक्षत्रमां थया छे. तेमनी गर्भस्थिति नव मास ने छ दिवसनी जाणवी (२१) सुविधिनाथना निर्वाणथी एक लाख पूर्वे न्यून नव कोटी सागरोपमे शीतळनाथजी थया. (२२) शीतळनाथना जन्म वखते चोथो आरो एक क्रोड सागरोपम एक लाख पूर्व अधिक बाकी रह्यो हतो. (२३) अहीं नव प्रभुना जन्ममां चोथो आरो शेष रह्यानुं जे प्रमाण कह्युं छे ते ४२००० वर्षे न्यून जाणवुं. (२४) हवे पछी जे बीजा आठ प्रभुना जन्मने विषे शेष रहेल चोथा आरानुं प्रमाण कहेवाशे ते ६५ लाख ने ८४००० वर्षे न्यून एटले कुल ६६२६००० वर्षे न्यून जाणवुं. अरनाथसुधी, ए प्रमाणे बुद्धिमानोए अंतर जाणवुं.

प्रशशाम पितुर्दाहो गर्भस्थेशानुभावतः । नंदाराज्ञीकरस्पर्शात् शीतलः प्रथितस्ततः ॥ २७ ॥ जगत्तापहरत्वेन भगवान् शीतलोऽथवा । अभूद्राशिर्धनुर्नामा श्रीवत्सो लांछनं प्रभोः ॥ २८ ॥ कुमारत्वं सहस्राणि पूर्वाणां पंचविंशतिः । पंचाशच्च सहस्राणि पूर्वाणां राज्यवैभवं ॥ २९ ॥ व्रते पूर्वसहस्राणि पूर्णानि पंचविंशतिः । सर्वमायुः पूर्वलक्षं छाद्मस्थ्यं च त्रिमासिकं ॥ ३० ॥ शुक्रप्रभाख्या शिबिका प्रथमां पारणां ददौ । पुनर्वसू रिष्टपुरे प्लक्षो ज्ञानद्रुमः प्रभोः ॥ ३१ ॥

एकाशीतिर्गणधरा लक्षमेकं च साधवः । आर्याः षट्काधिकं लक्षमेकं साध्व्योऽभवन् विभोः ॥ ३२ ॥ लक्षद्वयं श्रावकाणां नवाशीतिसहस्रयुक् । सहस्राण्यष्टपंचाश–च्चतुर्लक्षी तथास्तिकाः ॥ ३३ ॥ सर्वज्ञानां सहस्राणि सप्त चेतोविदां पुनः । सहस्राः सप्त कथिता अधिकाः पंचभिः शतैः ॥ ३४ ॥ द्विसप्ततिः शतान्यास–न्नवधिज्ञानशालिनां । चतुर्दशपूर्वभृतां चतुर्दश शतानि च ॥ ३५ ॥ लसद्वैक्रियलब्धीनां द्वादशैव सहस्रकाः । सहस्राः पंच संयुक्ता वादिनामष्टभिः शतैः ॥ ३६ ॥ धनूंषि नवतिर्देहो नंदो मुख्यो गणाधिपः । प्रवर्त्तिनी च

---

(२६) गर्भमां रहेला प्रभुना प्रभावथी तेमना पिता दृढरथ राजाने जे दाह थयेलो ते नंदा राणीना करस्पर्शथी शमी गयो ते उपरथी अथवा जगतनो ताप हरनार होवाथी प्रभुनुं नाम शीतळनाथ पाडवामां आव्युं. तेमनी राशि धनु हती अने लांछन श्रीवत्सनुं हतुं. (२७–२८) कुमारपणामां २५००० पूर्व, राज्यवैभवमां ५० हजार पूर्व (२९) अने व्रतावस्थामां २५००० पूर्व–एम सर्व मळीने एक लाख पूर्वनुं आयुष्य हतुं. छद्मस्थपर्याय त्रण मासनो ज हतो. (३०) दीक्षा अवसरे शुक्रप्रभा नामे शिबिका हती. प्रथम पारणुं रिष्टपुरमां पुनर्वसु राजाने त्यां थयुं हतुं. ज्ञानवृक्ष प्लक्ष नामनुं हतुं. (३१)

शीतळनाथजीने ८१ गणधर, एक लाख साधुओ, एक लाख ने छ अधिक साध्वीओ, (३२) २८९००० श्रावको, ४५८००० श्राविका, (३३) ७००० केवळज्ञानी, ७५०० मनःपर्यवज्ञानी, (३४) ७२०० अवधिज्ञानी, १४०० चौदपूर्वी, (३५) १२००० वैक्रियलब्धिवाळा अने ५८०० वादीओ थया. (३६) प्रभुनुं शरीर ९० धनुष्यनुं अने नंद नामना मुख्य गणधर, सुयशा नामे प्रवर्त्तिनी तथा सीमंधर नामे राजा

सुयशा भक्तः सीमंधरो नृपः ॥ ३७ ॥ ब्रह्मा यक्षश्चतुर्वक्त्रः श्वेतवर्ण-स्त्रिलोचनः । पद्मासनो दिशोऽष्टापि पालयन्नष्टभिर्भुजैः ॥ ३८ ॥ मुद्गरं मातुलिंगं च पाशकं चाभयं तथा । अपसव्ये दधात्येष स्पष्टं पाणिच-तुष्टये ॥ ३९ ॥ नकुलं च गदामेव–मंकुशं चाक्षसूत्रकं । दधाति धीर-धुर्योऽयं वामे पाणिचतुष्टये ॥ ४० ॥ देव्यशोका नीलवर्णा पद्मासीना चतुर्भुजा । दधाना वरदं पाश–मपसव्यकरद्वये ॥ ४१ ॥ वामपाणिद्वये चैषा दधती फलमंकुशं । शीतलप्रभुभक्तानां वितनोति समीहितं ॥ ४२ ॥ इति श्रीशीतलः ॥

बभूव पुष्करद्वीपे विजये रमणीयके । प्राग्विदेहे शुभापुर्यां नलि-नीगुल्मभूपतिः ॥ ४३ ॥ वज्रदत्तगुरोः पार्श्वे स स्वीकृत्य व्रतं सुधीः । देवोऽभूदच्युतस्वर्गे द्वाविंशत्यर्णवस्थितिः ॥ ४४ ॥ शून्यदेशे सिंहपुर्यां प्रेयस्यां विष्णुभूपतेः । विष्णुनाम्न्यां सुतो जज्ञे श्रेयांस इति विश्रुतः ॥ ४५ ॥ ज्येष्ठस्य श्यामला षष्ठी द्वादशी च त्रयोदशी । फाल्गुनस्या-

---

भक्त थयो. (३७) ब्रह्मा नामनो यक्ष चार मुखवाळो, श्वेत वर्णवाळो, त्रण लोचनवाळो, पद्मना आसनवाळो, आठ भुजाओवडे आठे दिशाओने पाळनारो, (३८) चार जमणा हाथमां मुद्गर, मातुलिंग, पाश ने अभयने धारण करनारो (३९) तथा डाबा चार हाथमां नकुल, गदा, अंकुश ने अक्षसूत्रने धारण करनारो वीरजनोमां धुरंधर थयो. (४०) देवी अशोका नामनी नील वर्णवाळी, पद्मना आसनवाळी, चार भुजावाळी, जमणा बे हाथमां वरद ने पाश अने डाबा बे हाथमां फळ ने अंकुश धारण करनारी शीतळप्रभुना भक्तोना इच्छितने पूरनारी थइ. (४१–४२) इति श्रीशीतळः ॥

श्रीश्रेयांसनाथवर्णन— पुष्करवरद्वीपमां पूर्व महाविदेहमां रमणीयक नामना विज-यमां शुभा नामनी नगरीमां नलिनीगुल्म नामे राजा हता. (४३) ते वज्रदत्त गुरुनी पासे चारित्र अंगीकार करीने बारमा अच्युत कल्पमां २२ सागरोपमने आउखे देव थया. (४४) त्यांथी च्यवीने शून्य देशमां सिंहपुरीमां विष्णु नामे राजानी विष्णु नामनी प्रियाना पुत्रपणे उत्पन्न थया, ते श्रेयांसनाथना नामथी प्रसिद्ध थया. (४५) ज्येष्ठ वदि ६, फाल्गुन वदि १२, फाल्गुन वदि १३, माह वदि ०)) अने श्रावण वदि ३–ए पांच

सिते माघमासस्य च कुहूः किल ॥ ४६ ॥ तृतीया श्रावणे कृष्णा कल्याणकदिनाः प्रभोः । चतुर्षु श्रवणं धिष्ण्यं धनिष्ठा पंचमे पुनः ॥४७॥ गर्भे स्थितिः प्रभोर्मासा नव षड्वासराधिकाः । खड्गी जीवः प्रभोर्लक्ष्म राशिर्मकरसंज्ञकः ॥ ४८ ॥ चतुरशीत्याब्दलक्षैः पूर्वोक्ताब्दैः शतेन च । अब्धीनामूनया वार्द्धि-कोट्या शीतलनिर्वृतेः ॥ ४९ ॥ श्रेयांसस्याभवज्जन्म तदा तुर्यारकस्य च । शिष्यते स्मार्णवशतं स्वायुःपूर्वोक्तवर्षयुक् ॥ ५० ॥ शय्यामाक्रामत्सुराधि-ष्ठितां गर्भस्थिते प्रभौ । निर्विघ्नमंबेति श्रेय-स्करत्वात्तादृशाभिधः ॥ ५१ ॥ कुमारत्वेऽब्दलक्षाणि निर्दिष्टान्येकविंशतिः । द्विचत्वारिंशदब्दानां लक्षाणि राज्यवैभवे ॥ ५२ ॥ लक्षाणि व्रतपर्याये चाब्दानामेकविंशतिः । एवं लक्षाणि चतुर-शीतिः सर्वायुराहितं ॥ ५३ ॥ छाद्मस्थ्यं मासयोर्युग्मं शिबिका विमलप्रभा । सिद्धार्थाख्यपुरे नंदः पारणां प्रथमां ददौ ॥ ५४ ॥ तिंदुको ज्ञानवृक्षः स्या-दशीतिधनुरुच्छ्रितं । वपुः षट्सप्ततिश्चोक्ताः प्रभोर्गणभृतः श्रुते ॥ ५५ ॥ प्रभोश्चतुरशीतिश्च सहस्राणि मुमुक्षवः । लक्षमेकं

कल्याणकना दिवसो जाणवा. चार कल्याणकमां श्रवण नक्षत्र अने पांचमा कल्याणकमां धनिष्ठा नक्षत्र जाणवुं. (४६–४७) गर्भस्थिति नव मास ने छ दिवसनी, खड्गी (गेंडा)नुं लांछन अने मकरराशि जाणवी. (४८) शीतळनाथना निर्वाण पछी ८४ लाख वर्ष अने पूर्वे कहेला छे तेटला (६६ लाख २६ हजार) वर्ष अने सो सागरोपमे न्यून एक क्रोड सागरोपमे श्रेयांसनाथनो जन्म थयो. त्यारे चोथो आरो सो सागरोपम, स्वायु अने पूर्वोक्त (६५ लाख ८४ हजार) वर्षे अधिक बाकी रह्यो हतो. (४९–५०) प्रभु गर्भमां हता त्यारे सुराधिष्ठित शय्यानुं माताए निर्विघ्नपणे आक्रमण कर्युं तेथी अने प्रभुना श्रेयस्कारीपणाथी श्रेयांस नाम स्थापन कर्युं. (५१) कौमारपणामां २१ लाख वर्ष, राज्यवैभवमां ४२ लाख वर्ष (५२) अने व्रतपर्यायमां २१ लाख वर्ष एम कुल ८४ लाख वर्षनुं प्रभुनुं आयुष्य संपूर्ण थयुं. (५३) छद्मस्थपणे बे मास ज रह्या. दीक्षा अवसरे शिबिका विमळप्रभा नामनी अने प्रथम पारणुं सिद्धार्थ नामना नगरमां नंद राजाने त्यां कर्युं. (५४) ज्ञानवृक्ष तिंदुक नामनुं हतुं अने ८० धनुष्यप्रमाण शरीर हतुं. प्रभुने ७६ गणधरो, (५५) ८४००० मुमुक्षुओ (साधुओ) एक लाख ने त्रण हजार साध्वीओ,

च साध्वीनां सहस्रत्रितयाधिके ॥ ५६ ॥ श्राद्धा लक्षद्वयमथै–कोनाशी-तिसहस्रकाः । चतुर्लक्ष्यष्टचत्वारिं–शत्सहस्राण्युपासिकाः ॥ ५७ ॥ शतानि पंचषष्टिश्चा–भूवन्निःशेषवेदिनां । षट् सहस्राणि शमिनां मनः-पर्यायवेदिनां ॥ ५८ ॥ स्फुरद्वैक्रियलब्धीना–मेकादश सहस्रकाः । सहस्रा वादिनां पंचा–वधिज्ञानभृतां च षट् ॥ ५९ ॥ सचतुर्दशपूर्वाणां शतान्यासंस्त्रयोदश । कौस्तुभो मुख्यगणभृ–द्धारिणी च प्रवर्त्तिनी ॥ ६० ॥ त्रिपृष्ठवासुदेवोऽभू–त्प्रभुभक्तनृपः प्रभोः । यक्षश्च मनुजा-भिख्य ईश्वराख्यो मतांतरे ॥ ६१ ॥ स त्रिनेत्रः श्वेतवर्णो वृषारूढश्च-तुर्भुजः । मातुलिंगगदायुक्त–सद्दक्षिणकरद्वयः ॥ ६२ ॥ नकुलं चाक्ष-सूत्रं च दधद्वामकरद्वये । श्रियं श्रेयांसभक्तानां वितनोति समीहितं(तां) ॥ ६३ ॥ श्रीवत्साख्या प्रभोर्देवी मानवी वा मतांतरे । सिंहासीना गौरवर्णा सा निर्दिष्टा चतुर्भुजा ॥ ६४ ॥ धत्ते दक्षिणयोः पाण्यो–र्वरदं मुद्गरं च सा । धत्ते च वामयोः पाण्योः क्रमात्कलशमंकुशं ॥ ६५ ॥ इति श्रीश्रेयांसः ॥

विजये मंगलावत्यां पुष्करप्राग्विदेहगे । सद्रत्नसंचयापुर्यां राजा

---

(५६) २७९००० श्रावको. ४४८००० श्राविकाओ, (५७) ६५०० केवळज्ञानी, ६००० मनःपर्यवज्ञानी, (५८) ११००० वैक्रियलब्धिवाळा, ५००० वादीओ, ६००० अवधिज्ञानी, (५९) १३०० चौदपूर्वी थया. कौस्तुभ नामना मुख्य गणधर, धारिणी नामे प्रवर्त्तिनी (६०) अने त्रिपृष्ठ वासुदेव प्रभुनो परम भक्त थयो. मनुज नामनो मतांतरे ईश्वर नामनो यक्ष, (६१) त्रण नेत्रवाळो, श्वेत वर्णवाळो, वृषभना वाहनवाळो, चार भुजावाळो, जमणी बे भुजामां मातुलिंग ने गदा धारण करनारो (६२) अने डाबी बे भुजामां नकुळ ने अक्षसूत्रने धारण करनारो, श्रेयांसनाथना भक्तोना इच्छित पूरनारो थयो. (६३) प्रभुनी देवी श्रीवत्सा नामनी मतांतरे मानवी नामनी सिंहना आसनवाळी, गौरवर्णवाळी, चार भुजावाळी, बे जमणा हाथमां वरद ने मुद्गर अने बे डाबा हाथमां कळश ने अंकुशने धारण करनारी थई. (६४–६५) इति श्रीश्रेयांसः ॥

श्रीवासुपूज्यवर्णन—पुष्करवरद्वीपना पूर्व महाविदेहमां मंगळावती विजयमां रत्न-

पद्मोत्तरोऽभवत् ॥ ६६ ॥ गुरोः श्रीवज्रनाभस्य पार्श्वे स प्राप्य संयमं । सुरोऽभूत्प्राणतस्वर्गे विंशत्यर्णवजीवितः ॥ ६७ ॥ चंपापुर्यामंगदेशे वसुपूज्यमहीपतेः । राज्ञ्या जयायास्तनुजो वासुपूज्यस्ततोऽभवत् ॥ ६८ ॥ उज्ज्वला नवमी ज्येष्ठे भूतेष्टा फाल्गुने शितिः । फाल्गुनेऽमावसी माघे द्वितीया च समुज्ज्वला ॥ ६९ ॥ शुक्लाषाढस्य भूतेष्टा कल्याणकदिनाः प्रभोः । आहिर्बुध्नं पंचमे भं चतुर्षु शततारिका ॥ ७० ॥ दिनानि विंशतिर्मासा–श्चाष्टौ गर्भस्थितिः प्रभोः । राशिः कुंभो लांछनं च महिषः किल कीर्त्तितः ॥ ७१ ॥ पूज्यते वसुभिः शक्रै–र्वासुपूज्यः स्मृतस्ततः । वसुपूज्यनृपापत्य–मिति वा तादृशाह्वयः ॥ ७२ ॥ द्विसप्तत्यब्दलक्षोनै–श्चतुष्पंचाशताब्धिभिः । जन्माभूद्वासुपूज्यस्य श्रीमच्छ्रेयांसनिर्वृतेः ॥७३॥ षट्चत्वारिंशदब्धीनां शेषस्तुर्यारके तदा । वेदनाग (८४) सहस्राढ्य–बाणर्त्तु (६५) लक्षवर्षयुक् ॥ ७४ ॥ अष्टादशाब्दलक्षाणि कुमारत्वेऽवसद्विभुः । ततः प्रपेदे चारित्रं पृथिवीशिबिकां श्रितः ॥ ७५ ॥ चतुष्पंचाशदब्दानां लक्षाणि व्रतमादधौ । द्विसप्तत्यब्दलक्षायु–र्धनुस्सप्तति-

---

संचया नगरीमां पद्मोत्तर नामे राजा हता. (६६) तेओ वज्रनाभ गुरुपासे संयम ग्रहण करीने प्राणत देवलोकमां वीश सागरोपमने आउखे उत्पन्न थया. (६७) त्यांथी च्यवीने अंगदेशमां चंपापुरी नगरीमां वसुपूज्य राजा ने जया राणीना पुत्र वासुपूज्य नामे तीर्थंकर थया. (६८) ज्येष्ठ शुदि ९, फाल्गुन वदि १४, फाल्गुन वदि ०)), माघ शुदि २ अने अशाड शुदि १४–आ पांच कल्याणकना दिवसो जाणवा. चार कल्याणकमां शततारिका (शतभिषा) ने पांचमा कल्याणकमां उत्तराभाद्रपद (आहिर्बुध्न) नक्षत्र जाणवुं. (६९–७०) आठ मास ने वीश दिवसनी गर्भस्थिति, कुंभराशि अने महिषनुं लांछन जाणवुं. (७१) इंद्रे वसुवडे पूजेला होवाथी तेम ज वसुपूज्य राजाना अपत्य होवाथी वासुपूज्य नाम स्थापन कर्युं. (७२) श्रेयांसनाथना निर्वाणथी ७२ लाख वर्षे ऊन ५४ सागरोपमे वासुपूज्यनो जन्म थयो. (७३) ते वखते चोथो आरो ६५ लाख ८४ हजार वर्षे न्यून अने ७२ लाख वर्षे अधिक ४६ सागरोपम बाकी रह्यो हतो. (७४) अढार लाख वर्ष कुमारावस्थामां व्यतीत करीने पछी पृथिवी नामनी शिबिकामां आरोहण करीने चारित्र अंगीकार कर्युं. (७५) ५४ लाख वर्ष चारित्र धारण कर्युं. एकंदर ७२ लाख वर्षनुं आयुष्य अने ७० धनुष्यनुं शरीर हतुं. (७६) प्रथम पारणुं महापु-

मुच्छ्रितः ॥ ७६ ॥ महापुरे सुनंदाख्यः प्रथमां पारणां ददौ । छाद्म-
स्थ्यमेको मासोऽभूद् ज्ञानद्रुः पाटलाभिधः ॥ ७७ ॥

जगत्प्रभोर्गणभृतः षट्षष्टिः साधवः पुनः । द्विसप्ततिः सहस्राणि साध्वीनां लक्षमेव च ॥ ७८ ॥ सहस्राः पंचदश च द्वे लक्षे श्रावकोत्तमाः । चतुर्लक्षी श्राविकाणां षट्त्रिंशच्च सहस्रकाः ॥ ७९ ॥ सर्वज्ञानां सहस्राः षट् मनोज्ञानवतामपि । अवधिज्ञानिनां पंच सहस्राः सचतुःशताः ॥ ८० ॥ चतुर्दशपूर्वभृतां सहस्रं द्विशतोत्तरं । स्फुरद्वैक्रियलब्धीनां सहस्राणि दशाभवन् ॥ ८१ ॥ वादिनां सप्त चत्वारिं-शच्छतानि मतांतरे । द्विचत्वारिंशच्छतानि तत्त्वं जानाति केवली ॥ ८२ ॥ सुभूमो गणभृन्मुख्यो धरणी च प्रवर्त्तिनी । द्विपृष्ठवासुदेवश्च नृपश्चरणसेवकः ॥८३॥

यक्षः कुमारः श्वेतांगः श्वेतयानश्चतुर्भुजः । मातुलिंगबाणशालि-सद्दक्षिणकरद्वयः ॥ ८४ ॥ कोदंडनकुलाभ्यां च शोभितो वामहस्तयोः । पिपर्त्ति श्रीवासुपूज्य-जिनसेविसमीहितं ॥ ८५ ॥ प्रवराख्या प्रभोर्देवी चंडाख्या च मतांतरे । चतुर्भुजा श्यामवर्णा सत्तुरंगमवाहना ॥ ८६ ॥

रमां सुनंद नामना राजाने त्यां कर्युं. छद्मस्थपणुं एक मासनुं ज हतुं ने ज्ञानवृक्ष पाटल नामे हतुं. (७७) (वासुपूज्यस्वामीए विवाह के राज्य स्वीकार्या शिवाय ज चारित्र ग्रहण कर्युं हतुं एम केटलाक कहे छे अने केटलाक विवाह कर्यो हतो एम कहे छे.)

जगत्प्रभु वासुपूज्यने ६६ गणधर, ७२००० साधुओ, एक लाख साध्वीओ, (७८) २१५००० श्रावको, ४३६००० श्राविकाओ, (७९) ६००० केवळज्ञानीओ, ६००० मनःपर्यवज्ञानीओ, ५४०० अवधिज्ञानी, (८०) १२०० चौदपूर्वी, १०००० वैक्रियलब्धिवाळा (८१) अने ४७०० मतांतरे ४२०० वादीओ थया. तत्त्वकेवळी जाणे. (८२) सुभूम नामे मुख्य गणधर, धरणी नामे प्रवर्त्तिनी अने द्विपृष्ठ नामे वासुदेव चरणसेवक थयो. (८३)

कुमार नामनो यक्ष श्वेत वर्णवाळो, श्वेत वाहनवाळो, चार भुजावाळो, दक्षिणनी बे भुजामां मातुलिंग ने बाण अने डाबी बे भुजामां कोदंड ने नकुलने धारण करनारो श्रीवासुपूज्यना सेवकोना समीहितने पूरनारो थयो. (८४-८५) प्रवरा नामे मतांतरे चंडा नामे देवी चार भुजावाळी, श्याम वर्णवाळी, शोभिता अश्वना वाहनवाळी, बे

दधाति वरदं शक्तिं भुजयोरपसव्ययोः। दधाति सव्ययोः पुष्पं गदां चैषा महाशया ॥ ८७ ॥ इति श्रीवासुपूज्यः ॥

धातकीखंडभरते महापुर्यां नृपोऽभवत्। पद्मसेनाह्वयः सर्व-गुप्तर्षेः सोऽग्रहीद्व्रतं ॥ ८८ ॥ ततः सुरः सहस्रारे-ऽष्टादशार्णवजीवितः। भूत्वा पांचालदेशेऽभू-त्पुरे कांपील्यनामनि ॥ ८९ ॥ श्यामाराज्ञीकुक्षिरत्नं कृतवर्ममहीपतेः। पुत्रः पवित्रचारित्र-विमलो विमलाह्वयः ॥ ९० ॥ वैशाखद्वादशी शुक्ला माघे शुक्ला तृतीयिका। माघे चतुर्थी शुक्ला च पौषे षष्ठी तथोज्ज्वला ॥ ९१ ॥ आषाढे सप्तमी कृष्णा कल्याणकदिनाः प्रभोः। आहिर्बुध्नं चतुर्षु स्या-द्धिष्ण्यं पौष्णं च पंचमे ॥ ९२ ॥ मासा अष्टौ दिनान्येक-विंशतिर्गर्भस्थितिः। राशिर्मीनाह्वयो लक्ष्म शूकरः कीर्तितः प्रभोः ॥ ९३ ॥ गर्भस्थेऽस्मिन्मातुरास्तां मत्यंगे विमले इति। अंतर्बहिश्च विमल-तया वा विश्ववर्यया ॥ ९४ ॥ विमलो नामधेयेना-देयनामा स कीर्तितः। षष्टिचापोन्नतः षष्टि-लक्षाब्दायुर्जगद्विभुः

जमणा हाथमां वरद ने शक्ति अने डाबा बे हाथमां पुष्प ने गदाने धारण करनारी, सुंदर आशयवाळी थइ. (८६-८७) इति श्रीवासुपूज्यः ॥

श्रीविमळनाथ वर्णन—धातकीखंडना भरतक्षेत्रमां महापुरी नामनी नगरीमां पद्मसेन नामना राजा हता. तेमणे सर्वगुप्त मुनिनी पासे चारित्र ग्रहण कर्युं. (८८) त्यांथी सहस्रार नामना आठमा देवलोकमां १८ सागरोपमने आउखे देव थया. त्यांथी च्यवीने पांचाळदेशमां कांपील्यपुर नगरमां कृतवर्म राजा अने श्यामा राणीना पुत्र पवित्र चारित्रवडे विमळ (निर्मळ) एवा विमळ नामना तीर्थंकर थया. (८९-९०) वैशाख शुदि १२, माघ शुदि ३, माघ शुदि ४, पौष शुदि ६ अने आषाढ वदि ७-ए पांच कल्याणकनी तिथिओ जाणवी. चार कल्याणक उत्तराभाद्रपद नक्षत्रमां अने पांचमुं कल्याणक पौष्ण (पुष्य) नक्षत्रमां जाणवुं. (९१-९२) ८ मास ने २१ दिवसनी गर्भस्थिति, मीनराशि अने शूकरनुं लांछन जाणवुं. (९३) प्रभु गर्भमां हता त्यारे मातानी बुद्धि अने अंग निर्मळ थवाथी तेम ज अंतर ने बाह्य विश्वमां श्रेष्ठ एवी निर्मळतावाळा होवाथी विमळ नामना आदेयनामवाळा जगमां प्रसिद्ध थया. साठ धनुष्यनुं शरीर अने ६० लाख वर्षनुं प्रभुनुं आयुष्य हतुं. (९४-९५) श्रीवासुपूज्यना निर्वाणथी साठ लाख वर्षे न्यून

॥ ९५ ॥ युग्मं ॥ श्रीवासुपूज्यनिर्वाणा–त्रिंशता सागरोपमैः । पष्टिलक्षशरन्न्यूनै–र्जन्माभूद्विमलप्रभोः ॥ ९६ ॥ तुर्यारकेऽवधयः शेषाः षोडश प्रभुजन्मनि । पूर्वोदितैर्वर्षलक्षै–स्तत्सहस्रैश्च साधिकाः ॥ ९७ ॥ तुर्यारकस्य शेषो यो जिनजन्मनि वक्ष्यते । इतः प्रभृति स स्वस्वा–युषाभ्यधिक ऊह्यतां ॥ ९८ ॥ लक्षाः पंचदशाब्दानां कुमारत्वेऽवसद्विभुः । लक्षाणि त्रिंशतं राज्ये लक्षाः पंचदश व्रते ॥ ९९ ॥ तत्र द्विमासी छाद्मस्थ्यं शिबिका च व्रतक्षणे । देवदिन्ना जयो धान्य–कटे प्रथमदायकः ॥ ६०० ॥ जंबूतरुतले स्वामी पंचमज्ञानमाप सः । निर्दिष्टाः सप्तपंचाश–द्विभोर्गणधरोत्तमाः ॥ ६०१ ॥ अयमावश्यकाभिप्रायः, समवायांगे तु षट्पंचाशद्गणधरा उक्ता इति ज्ञेयं. अष्टषष्टिः सहस्राणि साधूनां शीलशालिनां । लक्षमेकं च साध्वीनां शतैः साधिकमष्टभिः ॥ ६०२ ॥ लक्षद्वयं च श्राद्धानां सहस्रैरष्टभिर्युतं । चतुर्लक्षी श्राविकाणां सहस्रा जिनसंमिताः ॥ ३ ॥ शतानि पंचपंचाश–त्केवलज्ञानशालिनां । मनःपर्यायचिद्भाजां तावंत्येव शतानि च ॥ ४ ॥ अष्टचत्वारिंशदेव शतान्यवधिशालिनां । एकादशशतान्यस्य सच्चतुर्दशपूर्विणां ॥ ५ ॥ लसद्वैक्रियलब्धीनां सहस्राणि नवाभवन् । वादिनां

त्रीश सागरोपमे विमळप्रभुनो जन्म थयो. (९६) विमळनाथना जन्म वखते चोथो आरो १६ सागरोपम, ६० लाख वर्ष ने पूर्वे कहेला बीजा वर्षोए अधिक बाकी हतो. (९७) चोथो आरो जिनजन्ममां जे कहेवामां आवशे ते अहींथी मांडीने पोतपोताना आयुषे अधिक समजवो. (९८) पंदर लाख वर्ष प्रभु कौमारावस्थामां रह्या, ३० लाख वर्ष राज्यावस्थामां व्यतीत थया अने १५ लाख वर्ष चारित्रावस्थामां व्यतिक्रम्या. (९९) तेमां छद्मस्थावस्था बे मास प्रमाण जाणवी. व्रतावसरे शिबिका देवदिन्ना नामनी अने धान्यकटमां जयराजा प्रथम दाता (पारणुं करावनार) थया. (६००) जंबूवृक्षनी नीचे प्रभु केवळज्ञान पाम्या. तेमना परिवारमां ५७ गणधरो, (६०१) (आ आवश्यकनो अभिप्राय छे. समवायांगमां तो ५६ गणधरो कहेला छे.) चारित्रशाळी एवा ६८००० साधुओ, एक लाख ने आठ सो साध्वीओ (२) २०८००० श्रावको, ४२४००० श्राविकाओ, (३) ५५०० केवळज्ञानी, ५५०० मनःपर्यवज्ञानी, (४) ४८०० अवधिज्ञानी, ११०० चौदपूर्वी, (५) ९००० वैक्रियलब्धिवाळा अने ३६०० वादी थया. (६)

च सहस्राणि त्रीणि षट् च शताः किल ॥ ६ ॥ मंदरो मुख्यगणभृ-
द्वराख्या च प्रवर्त्तिनी । स्वयंभूर्वासुदेवश्चा-भवद्भक्तनृपः प्रभोः ॥ ७ ॥
यक्षश्च षण्मुखः श्वेत-वर्णांगः शिखिवाहनः । स द्वादशभुजस्तीर्था-
धिष्ठाता विमलप्रभोः ॥ ८ ॥ फलं चक्रं च बाणं च खड्गं पाशाक्षसू-
त्रके । स भुजेष्वपसव्येषु षट्सु धत्ते महाबलः ॥ ९ ॥ नकुलं चक्रमि-
ष्वासं फलकं चांकुशाभये । भुजेषु षट्सु वामेषु धत्ते मत्तेभविक्रमः
॥ १० ॥ देव्यभूद्विजयाभिख्या विदिता च मतांतरे । वर्णतो हरिता-
लाभा पद्मासीना चतुर्भुजा ॥ ११ ॥ तनोति शं बाणपाश-युग्दक्षिण-
करद्वया । धार्मिकाणां धनुर्नाग-शालिवामकरद्वया ॥ १२ ॥ इति
श्रीविमलः ॥

नृप ऐरावतक्षेत्रे धातकीखंडवर्तिनि । रिष्टपुर्यामभूत्पद्म-रथश्चि-
त्ररथान्मुनेः ॥ १३ ॥ संप्राप्य संयमं विंश-त्यब्ध्यायुः प्राणतेऽभवत् ।
सुरः स पुर्ययोध्यायां देशे कोशलनामनि ॥ १४ ॥ सिंहसेनस्य नृपतेः

मंदर नामना मुख्य गणधर, वरा नामनी प्रवर्त्तिनी अने स्वयंभू नामे वासुदेव प्रभुनो मुख्य भक्त थयो. (७) षण्मुख नामनो यक्ष श्वेत वर्णवाळो, मोरना वाहनवाळो अने बार भुजावाळो विमळ प्रभुना शासननो अधिष्ठाता थयो. (८) महाबळवान एवा तेना जमणा छ हाथमां फळ, चक्र, बाण, खड्ग, पाश अने अक्षसूत्र हता (९) ने डाबा छ हाथमां मदोन्मत्त हाथीनी जेवा पराक्रमवाळो ते नकुळ, चक्र, धनुष्य, फलक, अंकुश ने अभयने धारण करतो हतो. (१०) देवी विजया नामनी मतांतरे विदिता नामनी थइ. ते हरिताल जेवा वर्णवाळी, पद्मना आसनवाळी, चार भुजावाळी, (११) जमणा बे हाथमां बाण ने पाश अने डाबा बे हाथमां धनुष्य ने नागने धारण करनारी, धार्मिक जनोना सुखने विस्तारनारी थइ. (१२) इति श्रीविमलः ॥

श्रीअनंतनाथवर्णन—धातकीखंडना ऐरावतक्षेत्रमां रिष्टपुरीमां पद्मरथ नामे राजा हता, तेमणे चित्ररथ नामना मुनिपासे चारित्र ग्रहण कर्युं. काळ करीने प्राणत देवलोकमां वीश सागरोपमने आउखे उत्पन्न थया. त्यांथी च्यवीने कोशलदेशमां अयोध्यापुरीमां सिंहसेन राजानी राणी सुयशानी कुक्षिथी उत्पन्न थएल अनंतजित् नामना पुत्र चौदमा

सुयशाकुक्षिसंभवः । तनयोऽनंतजिन्नाम्ना जिनेंद्रोऽभूच्चतुर्दशः ॥ १५ ॥ श्रावणे सप्तमी कृष्णा वैशाखस्य त्रयोदशी । भूतेष्टा चासिते पक्षे वैशाखस्य चतुर्दशी ॥ १६ ॥ चैत्रस्य पंचमी शुभ्रा कल्याणकदिनाः प्रभोः । पंचस्वप्येषु नक्षत्रं रेवती परिकीर्त्तितं ॥ १७ ॥ नव गर्भस्थितिर्मासाः प्रभोः षडूदिवसाधिकाः । अंकः श्येनो मीनराशि-र्धनुः पंचाशदुच्छ्रयः ॥ १८ ॥ ज्ञानादीनामनंतत्वा-दनंत इति कीर्त्यते । अनंतमणिदाम्नां वा मात्रा स्वप्ने निरीक्षणात् ॥ १९ ॥ विमलस्वामिनिर्वाणा-न्नवभिः सागरोपमैः । त्रिंशल्लक्षशरन्न्यूनै-रनंतोऽजायत प्रभुः ॥ २० ॥ शिष्यंते स्म तदा तुर्या-रके सप्त पयोधयः । लक्षैः सहस्त्रैर्वर्षाणां पूर्वोक्तैरधिकाः किल ॥ २१ ॥ सप्त सार्द्धा वर्षलक्षाः कुमारत्वेऽवसद्विभुः । भूपालत्वं पंचदश-वर्षलक्षाण्यपालयत् ॥ २२ ॥ सार्द्धानि सप्त वर्षाणां लक्षाणि व्रतमादधौ । लक्षाणि त्रिंशदब्दानां सर्वमायुरभूत्प्रभोः ॥ २३ ॥ व्रते सागरदत्ताख्या शिबिका विजयाभिधः । वर्द्धमानग्रामवासी प्रभोः प्रथमदायकः ॥ २४ ॥ मासत्रयं च छाद्मस्थ्ये-ऽश्वत्थश्च ज्ञानभूरुहः । प्रभो-

---

तीर्थंकर थया. (१३-१५) श्रावण वदि ७, वैशाख वदि १३, वैशाख वदि १४, वैशाख वदि १४ अने चैत्र शुदि ५-ए पांच कल्याणकना दिवसो जाणवा. पांचे कल्याणकमां नक्षत्र रेवती जाणवुं. (१६-१७) गर्भस्थिति नव मास ने ६ दिवसनी, मीनराशि ने श्येननुं लांछन जाणवुं. पचास धनुष्यनुं शरीर जाणवुं. (१८) ज्ञानादिक अनंत होवाथी तेम ज मणिनी अनंत माळाओ माताए स्वप्नमां देखेल होवाथी अनंत नाम स्थापन कर्युं. (१९) विमळस्वामीना निर्वाणथी त्रीश लाख वर्षे न्यून नव सागरोपमे अनंतनाथजी थया. (२०) ते वखते चोथो आरो सात सागरोपम अने त्रीश लाख वर्ष पूर्वे कहेला वर्षो (६५८४०००) ए अधिक बाकी रह्यो हतो. (२१) प्रभु साडासात लाख वर्ष कौमारावस्थामां रह्या, १५ लाख वर्ष भूपाळपणानी प्रतिपालना करी (२२) अने ७॥ लाख वर्ष चारित्रावस्थामां रह्या-ए रीते कुल ३० लाख वर्षनुं आयुष्य पूर्ण थयुं. (२३) दीक्षा अवसरे सागरदत्ता नामे शिबिका हती. प्रथम पारणुं वर्धमानग्रामवासी विजये कराव्युं. (२४) त्रण मास छद्मस्थावस्थामां रह्या, ज्ञानवृक्ष अश्वत्थ नामनुं हतुं. प्रभुना

गणभृतः श्रेष्ठाः पंचाशत्परिकीर्त्तिताः ॥ २५ ॥ इत्यावश्यकाभिप्रायः, समवायांगे तु चतुष्पंचाशद्गणधरा उक्ता इति ज्ञेयं.

षट्षष्टिश्च सहस्राणि साधूनां सत्त्वशालिनां । द्वाषष्टिः संयतीनां च सहस्राण्यभवन् विभोः ॥ २६ ॥ लक्षद्वयं च श्राद्धानां षट्सहस्राधिकं प्रभोः । श्राविकाणां चतुर्लक्षी सहस्राश्च चतुर्दश ॥ २७ ॥ तथा पंचसहस्राणि केवलज्ञानशालिनां । तावंत्येव सहस्राणि मनोज्ञानवतामपि ॥ २८ ॥ चत्वारोऽवधिभाजां च सहस्रास्त्रिशताधिकाः । सहस्रमेकं पूर्णं च सच्चतुर्दशपूर्विणां ॥ २९ ॥ लसद्वैक्रियलब्धीनां सहस्राण्यष्ट जज्ञिरे । द्वाभ्यां शताभ्यामधिका त्रिसहस्री च वादिनां ॥ ३० ॥ यशोनामाद्यगणभृ-त्पद्माख्या च प्रवर्त्तिनी । पुरुषोत्तमो विष्णुश्च सदा चरणसेवकः ॥ ३१ ॥ दधत्पद्मखड्गपाशा-नपसव्ये करत्रये । नकुलं फलकं चाक्ष-सूत्रं वामकरत्रये ॥ ३२ ॥ पातालयक्षस्त्रिमुखो रक्तो मकरवाहनः । षड्भुजः कुरुते प्रीति-मनंतप्रभुसेविनां ॥ ३३ ॥ युग्मं ॥ आदधाना खड्गपाशौ वामेतरकरद्वये । वामे करद्वये शश्व-द्दधाना फलकांकुशौ ॥ ३४ ॥

गणधरश्रेष्ठो पचास कह्या छे (२५) ए आवश्यकनो अभिप्राय छे. श्रीसमवायांगमां तो ५४ कह्या छे.

अनंतप्रभुने सत्त्वशाळी एवां ६६००० साधुओ, ६२००० साध्वीओ, (२६) २०६००० श्रावको, ४१४००० श्राविकाओ, (२७) ५००० केवळज्ञानी, ५००० मनःपर्यवज्ञानी, (२८) ४३०० अवधिज्ञानी, १००० चौदपूर्वी, (२९) ८००० वैक्रियलब्धिवाळा अने ३२०० वादीओनो परिवार थयो. (३०) प्रथम गणधर यश नामना, प्रथम प्रवर्तिनी पद्मा नामनी अने पुरुषोत्तम नामना वासुदेव प्रभुना भक्त थया. (३१) पाताळ नामनो यक्ष त्रण मुखवाळो, रक्त वर्णवाळो, मकरना वाहनवाळो, छ भुजावाळो, जेनी दक्षिण बाजुनी त्रण भुजामां पद्म, खड्ग अने पाशने धारण करनारो अने डाबी बाजुनी त्रण भुजामां नकुल, फलक ने अक्षसूत्रने धारण करनारो अनंतप्रभुनी सेवा करनारने प्रीति उपजावनार थयो. (३२–३३) जमणी बाजुना बे हाथमां खड्ग अने पाश तथा डाबी बाजुना बे हाथमां फलक ने अंकुशने निरंतर धारण करनारी पद्मना

पद्मासना गौरवर्णा देव्यंकुशा चतुर्भुजा । अनंतप्रभुभक्तानां दत्तेऽनंतां सुखश्रियं ॥ ३५ ॥ इत्यनंतजित् ॥

भारते भद्दिलपुरे धातकीखंडमंडने । नृपो दृढरथोऽसौ च गुरोर्विमलवाहनात् ॥ ३६ ॥ आदाय संयमं जज्ञे विजयेऽनुत्तरे सुरः । द्वात्रिंशदर्णवायुष्क-स्ततः शून्याख्यनिर्वृति ॥ ३७ ॥ पुरे रत्नपुरे भानो-र्नृपस्य तनयोऽभवत् । सुव्रतायाः कुक्षिरत्नं धर्मनाथो जिनेश्वरः ॥ ३८ ॥ वैशाखे सप्तमी शुक्ला तृतीया माघजोज्ज्वला । माघे त्रयोदशी शुक्ला तथा पौषस्य पूर्णिमा ॥ ३९ ॥ ज्येष्ठस्य पंचमी शुक्ला कल्याणकदिनाः प्रभोः । पुष्यं च पंचस्वप्येषु भं राशिः कर्क एव च ॥४०॥ अनंतस्वामिनिर्वाणा-च्चतुर्भिः सागरोपमैः । जातो दशाब्दलक्षोनैः श्रीधर्मो जगदीश्वरः ॥४१॥ शिष्यंते स्म तदा तुर्या-रकस्यांभोधयस्त्रयः । पंचषष्टिश्चाब्दलक्षा वेदनागसहस्रकाः ॥ ४२ ॥ स्वयं धर्मस्वभावत्वा-द्गर्भस्थे वाभवद्विभौ । माताऽतिधार्मिकी तस्मा-द्धर्मनाथ इति स्मृतः ॥ ४३ ॥ देहोच्छ्रयः पंचचत्वा-रिंशच्चापमितः स्मृतः । वज्रं च लांछनं वर्ष-लक्षाणि दश जीवितं

आसनवाळी, गौर वर्णवाळी, तेम ज चार भुजावाळी अंकुशा नामना देवी अनंतप्रभुना भक्तोने पारावार सुखलक्ष्मीने आपनारी थइ. (३४-३५) इति श्रीअनंतः ॥

श्री धर्मनाथजीवर्णन—धातकीखंडना मंडनभूत भरतक्षेत्रमां भद्दिलपुर नामना नगरमां दृढरथ नामनो राजा हतो. तेणे विमळवाहन नामना गुरुपासे चारित्र अंगीकार कर्युं. मरण पामीने विजय नामना अनुत्तर विमानमां ३२ सागरोपमने आउखे देव थया. त्यांथी च्यवीने शून्य नामना देशमां रत्नपुर नामना नगरमां भानु नामना राजानी सुव्रता नामनी राणीनी कुक्षिथी धर्मनाथ नामे जिनेश्वरनो जन्म थयो.(३६-३८) वैशाख शुदि ७, माघ शुदि ३, माघ शुदि १३, पोस शुदि १५ ने ज्येष्ठ शुदि ५-ए पांच तेमना कल्याणकनी तिथिओ जाणवी. पांचे कल्याणकोमां नक्षत्र पुष्य जाणवुं, राशि कर्क जाणवी. (३९-४०) अनंतनाथना निर्वाणथी दश लाख वर्ष ऊण चार सागरोपमे, धर्मनाथ प्रभु थया. (४१) ते वखते चोथो आरो त्रण सागरोपम, दश लाख वर्ष तथा ६५ लाख ने ८४००० वर्ष बाकी रह्यो हतो. (४२) पोते धर्मना स्वभाववाळा होवाथी अने प्रभु गर्भस्थ हता त्यारे माता अति धार्मिकी थयेल होवाथी धर्मनाथ एवुं नाम स्थापन कर्युं. (४३) प्रभुनुं शरीर ४५ धनुष्यनुं, लांछन वज्रनुं अने दश लाख वर्षनुं आयुष्य हतुं. (४४) तेमां अढीलाख

॥ ४४ ॥ वर्षलक्षद्वयं सार्द्धं कुमारत्वे व्रतेऽपि च । राज्ये पुनः प्रभुः पंच-
वर्षलक्षाण्यपूरयत् ॥ ४५ ॥ शिबिका नागदत्ताख्या छाद्मस्थ्यं मासयो-
र्द्वयं । धर्मसिंहः सौमनस-ग्रामेऽदादाद्यपारणां ॥ ४६ ॥ ज्ञानवृक्षश्च
निर्दिष्टो दधिपर्ण इति प्रभोः । द्वि(त्रि)चत्वारिंशदादिष्टाः श्रीजिनस्य गणा-
धिपाः ॥ ४७ ॥ चतुःषष्टिः सहस्राणि संयतानां जिनेशितुः । तथा सह-
स्रा द्वाषष्टिः साध्वीनां सचतुःशताः ॥ ४८ ॥ चतुस्सहस्राभ्यधिके द्वे लक्षे
श्राद्धपुंगवाः । चतुर्लक्षी श्राविकाणां सहस्राश्च त्रयोदश ॥ ४९ ॥ शतानि
पंचचत्वारिं-शत्केवलजुषां विभोः । तावंत्येव शतान्येव मनःपर्यायिणामपि
॥ ५० ॥ त्रयोऽवधिज्ञानभाजां सहस्राः षट्शताधिकाः । वयं वैक्रियल-
ब्धीनां सहस्राः सप्त कीर्त्तिताः ॥ ५१ ॥ शतानि नव चोक्तानि सच्चतु-
र्दशपूर्विणां । वादिनां च सहस्रे द्वे शतैरष्टभिरन्विते ॥५२॥ अरिष्टो मुख्य-
गणभृत् शिवार्या च प्रवर्तिनी । विष्णुः पुरुषसिंहश्च नृपश्चरणसेवकः ॥५३॥

बीजपूराभयगदा-स्त्रिषु दक्षिणपाणिषु । गदापद्माक्षनकुलान् दध-
द्वामेषु च त्रिषु ॥ ५४ ॥ त्रिमुखः किन्नरो यक्षो रक्तांगः कूर्मवाहनः ।
षड्भुजोऽभीष्टमाधत्ते श्रीधर्मप्रभुसेविनां ॥ ५५ ॥ देवी च पन्नगाभिख्या

वर्ष कुमारावस्थामां, पांच लाख वर्ष राज्यावस्थामां अने अढी लाख वर्ष व्रतावस्थामां व्यतीत कर्या. (४५) दीक्षा अवसरे शिबिका नागदत्ता नामनी अने छद्मस्थ पर्याय बे मासनो हतो. प्रथम पारणुं सौमनस ग्रामे धर्मसिंहे कराव्युं. (४६) ज्ञानवृक्ष दधिपर्ण नामनुं हतुं. धर्मनाथ प्रभुने ४२ (४३) गणधरो, (४७) ६४००० साधुओ, ६२४०० साध्वीओ, (४८) २०४००० श्रावको, ४१३००० श्राविकाओ, (४९) ४५०० केवळज्ञानी, तेटला ज एटले ४५०० मनःपर्यवज्ञानी, (५०) ३६०० अवधिज्ञानी, ७००० वैक्रियलब्धिवाळा, (५१) ९०० चौदपूर्वी अने २८०० वादीनो परिवार थयो. (५२) अरिष्ट नामना मुख्य गणधर, शिवार्या नामे प्रवर्त्तिनी अने पुरुषसिंह नामनो वासुदेव प्रभुनो चरणसेवक (भक्त) थयो. (५३.)

त्रण जमणा हाथमां बीजपुर, अभय ने गदा तथा डाबा त्रण हाथमां गदा, पद्माक्ष ने नकुलने धारण करनार, रक्त वर्णवाळो, कूर्मना वाहनवाळो छ भुजावाळो अने त्रण मुखवाळो किन्नर नामनो यक्ष श्री धर्मनाथ प्रभुना सेवकोना अभीष्टने पूरनार थयो. (५४-५५) तथा पन्नगा नामे मतांतरे कंदर्पा नामे देवी चार भुजावाळी, गौर वर्णवाळी, मत्स्य-

सा कंदर्पा मतांतरे । चतुर्भुजा गौरवर्णा राजते मत्स्यवाहना ॥ ५६ ॥ उत्पलांकुशसंयुक्त–सद्दक्षिणकरद्वया । पद्माभयांचिता वामपाण्योर्दत्ते सुखं सतां ॥ ५७ ॥ इति श्रीधर्मनाथः ॥

श्रीषेणभूपतिः पूर्वं तद्राज्ञी चाभिनंदिता । उभौ युगलिनौ जातौ ततो जातौ सुधाभुजौ ॥५८॥ ततश्चामिततेजःश्री–विजयाख्यौ महर्धिकौ । ततश्च प्राणतस्वर्गे सुपर्वाणौ बभूवतुः ॥ ५९ ॥ बलदेववासुदेवौ ततो जातौ महाभुजौ । बलोऽभूदच्युताधीशो हरिस्त्वाद्यां भुवं ययौ ॥ ६० ॥ उध्धृतस्तु ततोऽवाप्य खेचराधीशतां हरिः । परिव्रज्याच्युतस्वामि–सामानिकसुरोऽभवत् ॥ ६१ ॥ ततश्च्युत्वादिमो वज्रा–युधाह्वश्चक्रवर्त्यभूत् । तदंगजोऽपरस्त्वासीत् सहस्रायुधसंज्ञकः ॥६२॥ ग्रैवेयके तृतीये तौ जग्मतुर्जनकांगजौ । मतांतरे च नवमे गतौ ग्रैवेयकेऽथ तौ ॥ ६३ ॥ विजये पुष्कलावत्यां जंबूद्वीपे ततश्च्युतौ । नगर्यां पुंडरीकिण्या–मभूतां सोदरावुभौ ॥ ६४ ॥ मेघरथदृढरथौ श्रीमेघरथमेकदा । प्रशशंस मुदेशान–सुरेंद्रः सुरपर्षदि ॥ ६५ ॥ अहो मेघरथस्यांतः स्फुरन् जीवदयारसः ।

ना वाहनवाळी, बे जमणी भुजामां उत्पल ने अंकुशवाळी अने डाबी बे भुजामां पद्म ने अभयवाळी सज्जनोने सुख आपनारी थई. (५६–५७) इति श्रीधर्मनाथः ॥

श्री शांतिनाथवर्णन—पूर्वभवे श्रीषेण नामना राजा ने अभिनंदिता नामे राणी हता. ते बंने मरण पामीने युगलिक थया. त्यांथी देव थया. (५८) त्यांथी च्यवीने अमिततेज ने श्रीविजय नामना महर्द्धिक थया. त्यांथी प्राणत देवलोकमां देव थया. (५९) त्यांथी च्यवीने महापराक्रमी बळदेव ने वासुदेव थया. त्यांथी मरण पामीने बळदेव अच्युतेंद्र थया ने वासुदेव पहेली नरके गया. (६०) वासुदेवनो जीव नरकमांथी नीकळीने खेचराधीशपणुं पामी, दीक्षा अंगीकार करी अच्युतेंद्रनो सामानिक देव थयो. (६१) त्यांथी च्यवीने अच्युतेंद्रनो जीव वज्रायुध नामे चक्री थया ने सामानिक देव तेनो सहस्रायुध नामे पुत्र थयो. (६२) ते पिता–पुत्र मरण पामीने त्रीजे ग्रैवेयके देव थया. मतांतरे नवमा ग्रैवेयके देव थया. (६३) त्यांथी च्यवीने जंबूद्वीपना पूर्व महाविदेहमां पुष्कलावती विजयमां पुंडरीकिणी नगरीमां बंने भाइओ मेघरथ अने दृढरथ नामना थया. एकदा ईशानेंद्रे देवोनी पर्षदामां मेघरथ राजानी प्रशंसा करी (६४–६५) के–'अहो !

न शक्यते शोषयितुं कृतयत्नैः सुरैरपि ॥ ६६ ॥ अश्रद्दधानस्तत्कश्चि-देवः शूलभृतो वचः । परीक्षितुं नृपं दक्ष-मन्यो भूलोकमाययौ ॥६७॥ पूर्ववैराद्युद्ध्यमानौ श्येनपारापतावथ । अधिष्ठाय स दंभेना-जगाम नृप-सन्निधौ ॥ ६८ ॥ ऊचे पारापतस्तत्र रक्ष रक्ष कृपानिधे ! । श्येनो हिन-स्ति मां पीनो दीनं निःशरणं हहा ॥ ६९ ॥ ऊचे वीक्ष्य भयार्त्तं तं समुत्पन्नकृपो नृपः । यमादपि प्रकुपिता-न्मा भैषीर्नाथ ते भयं ॥ ७० ॥ कंपमाने खगे तस्मि-न्नृपोत्संगमुपाश्रिते । श्येनोऽपि सहसागत्य क्षुधा-क्षामोऽब्रवीदिति ॥ ७१ ॥ रक्ष रक्ष क्षुधा मार्य-माणं मां दक्षपुंगव ! । देहि देहि चिरात्प्राप्तं भक्ष्यं पारापतं मम ॥ ७२ ॥ एकस्योपेक्षसे प्राणां-स्तानन्यस्य च रक्षसि । तुल्येऽपि कोऽयं जीवत्वे पंक्तिभेदः किलावयोः ॥ ७३ ॥ श्येनमूचे नृपः पक्षिन् ! दीनोऽयं मुच्यतां खगः । गृहाण नानापक्वान्नं दयाधर्मोऽस्तु ते महान् ॥ ७४ ॥ श्येनः प्रोचे च

मेघरथ राजाना अंतःकरणमां एटलो जीवदयानो रस छे के जेनुं शोषण करवाने प्रयत्न करता देवो पण समर्थ थइ शके नहीं.' (६६) ते शूळभृत (ईशानेंद्र)नुं वचन नहीं सद्दहीने कोइ मिथ्यामतिदेव पोताने डाह्यो मानतो सतो मेघरथ राजानी परीक्षा करवा पृथ्वीपर आव्यो. (६७) ते वखते पूर्वना वैरथी परस्पर युद्ध करता श्येन ने पारापत (पारेवा) मां ते दंभवडे अधिष्ठित थइने मेघरथ राजापासे आव्यो. (६८) पारापत राजाने कहे छे के–'हे कृपानिधि ! मारी रक्षा करो, रक्षा करो. आ महापीन (मजबूत) एवो श्येनपक्षी निःशरण ने दीन एवा मने मारी नाखे छे.' (६९) तेने भयार्त्त जोइने उत्पन्न थइ छे कृपा जेने एवा राजाए कह्युं के–'कोपेला एवा यमथी पण हवे बीश नहीं, हवे तने भय नथी.' (७०) एटले ते पक्षी कंपायमान थतो सतो राजाना खोळामां भराइ गयो. श्येन पण एकदम आवीने क्षुधाथी दुर्बळ थयो सतो आ प्रमाणे बोल्यो (७१) के–'हे दक्षपुंगव ! मने मारी नाखती एवी क्षुधाथी मारुं रक्षण कर, रक्षण कर. घणे काळे पामेला आ मारा भक्ष्य पारापतने मने आप, आप. (७२) तमे एकना प्राणनी उपेक्षा करो छो अने एकना प्राणनी रक्षा करो छो. तुल्य एवा जीवत्वमां आवो पंक्तिभेद अमारा उपर आप केम करो छो ? ' (७३) राजाए श्येनने कह्युं के–' हे पक्षी ! आ पक्षी दीन छे, तेने मूकी दे, तेना बदलामां नाना प्रकारना पक्वान्नने ग्रहण कर. तने मोटो दयाधर्म थशे.' (७४) श्येन कहे छे के—' धर्माधर्मनी विचारणा तमारा जेवा तृप्तने थाय,

भूपाल! धर्माधर्मविचारणा। भवादृशां स्यात्तृप्तानां क्षुधार्त्तानां तु सा कुतः ।।७५।। विना सद्यस्कमांसं च नाहारोऽस्मादृशां परः। तद् द्रुतं दीयतामेष हत्या वा गृह्यतां मम ॥ ७६ ॥ नृपोऽथाचिंतयत्पारा–पतोऽयं सर्वथा मया। रक्षणीयोऽयमप्यंगी तर्पणीयो बुभुक्षितः ॥ ७७ ॥ श्येनं तत्तर्पयाम्येनं निजैर्मांसैर्यथोभयोः। दया स्यान्ननु देहेऽस्मिन् कः स्नेहः क्षणभंगुरे ॥ ७८ ॥ ततस्तुलायामारोप्य मायापारापतं नृपः। उत्कृत्य स्वोरुमांसानि तोलयामास सात्त्विकः ॥ ७९ ॥ यथा यथा स्वमांसानि तुलायां भूधवो न्यधात्। तथा तथा प्रववृधे कपोतो वीवधेन सः ॥ ८० ॥ दीनानने पुरजने क्रंदत्यंतःपुरेऽखिले। तुलामारुह्य सोत्साहं रसेनः श्येनमित्यवक् ॥ ८१ ॥ गृहाण श्येन! देहं मे कृतार्थं जीवरक्षणात्। तृप्तिस्तवाभयं चास्य भूयान्मम च निर्जरा ॥ ८२ ॥ तं देहेऽपि गतस्नेहं निस्संदेहं जिनागमे। नृपं वीक्ष्य दयावीरं तुष्टस्तुष्टाव निर्जरः ॥ ८३ ॥ साधु साधु महाधीर! वीरकोटीर! सांप्रतं। ईशानेशोऽनिशं

अमारा जेवा क्षुधार्त्तने क्यांथी थाय? (७५) वळी अमारा जेवाने तरतना मांस शिवाय बीजो आहार होतो नथी, माटे तरत ज मने ए पक्षी आपी द्यो; नहीं तो पछी मारी हत्या ल्यो.' (७६) राजा विचारे छे के–'आ पारापत तो मारे सर्वथा रक्षणीय छे अने आ भूख्या पक्षीने पण तृप्त करवो जोइए, (७७) तेथी मारा मांसवडे आ श्येनने तृप्त करुं के जेथी बंनेनो बचाव ने दया थाय. आ क्षणभंगुर देह उपर शुं स्नेह करवो?' (७८) पछी त्राजवुं मंगावी तेना एक बाजुना पल्लामां मायावी पारापतने मूकी ते सात्त्विक पोताना साथळनुं मांस कापीने बीजा पल्लामां मूकी तोळवा लाग्या. (७९) अहीं जेम जेम राजा पोतानुं मांस तुलामां मूके छे तेम तेम कपोत तोलमां वधतो जाय छे. (८०) ते वखते आ स्थिति जोइने नगरजनो दीन मुखवाळा थइ गया. आखुं अंतःपुर आक्रंद करवा लाग्युं. त्राजवामां पारेवा जेटलो मांसनो तोल न थवाथी उत्साहसहित त्राजवामां चडीने राजाए श्येनने कह्युं (८१) के—'हे श्येन! जीवरक्षाथी कृतार्थ थयेला आ मारा देहने ज तुं ग्रहण कर जेथी तने तृप्ति थाय, अने अभय मळे ने मने निर्जरा थाय.' (८२) ए रीते देहने विषे निःस्नेह अने जिनागममां निःसंदेह दयावीर एवा राजाने जोइने ते देव अत्यंत संतुष्ट थइ स्तुति करवा लाग्यो (८३) के–'साधु, साधु. हे

स्तौति सत्त्वं ते देवपर्षदि ॥ ८४॥ शंसितोऽसि दयावीर ! यादृशः शूलपाणिना । ततः शतगुणोत्साहो वीक्षितोऽसि परीक्षणे ॥ ८५ ॥ खेदितोऽसि वृथा राज–न्नपराधं क्षमस्व मे । इति ब्रुवाणः पुष्पाणां वृष्टिं हृष्टस्ततान सः ॥ ८६ ॥ प्रादुष्कृत्य स्वरूपं स्वं सज्जीकृत्य च भूपतिं । चमत्कारचलन्मौलिः सुरः स्वर्गं जगाम सः ॥ ८७ ॥ करुणावज्रायुधनाटके उत्तराध्ययनलघुवृत्तौ च वज्रायुधचक्रवर्त्तिभवेऽयं देवपरीक्षणादिर्व्यतिकर उक्तोऽस्तीति ध्येयं, तथा करुणावज्रायुधे परीक्षकौ द्वौ देवावुक्तौ इति ज्ञेयं.

गुरोर्घनरथात्प्राप्य दीक्षां मेघरथो नृपः । मृत्वा सर्वार्थसिद्धेऽभूत्परमस्थितिकः सुरः ॥८८॥ जीवो दृढरथस्यापि भविष्यन् गणभृद्विभोः । मृत्वा तत्रैव देवोऽभू–च्च्युत्वा मेघरथोऽथ च ॥८९॥ कुरुदेशशिरोरत्ने पुरे श्रीहस्तिनापुरे । विश्वसेनस्य भूभर्त्तुः पुत्रोऽभूदचिरांगजः ॥९०॥ प्रभौ गर्भे समुत्पन्ने शशामोपद्रवोऽखिले । देशे जनानां मार्यादि–स्ततः शांतिरिति स्मृतः

महावीर ! हे वीरकोटीर ! आजे ईशानेंद्रे वारंवार देवसभामां तमारी प्रशंसा करी छे. (८३–८४) हे दयावीर ! शूळपाणिए जेवी तमारी प्रशंसा करी ते करतां सोगणो उत्साह तमारी परीक्षा करता में तमारामां जोयो छे. (८५) हे राजन् ! में वृथा तमने खेद पमाड्यो छे, ते मारो अपराध क्षमा करो.' आ प्रमाणे हर्षित थइने पुष्पोनी वृष्टि करी, (८६) पछी पोतानुं स्वरूप प्रगट करी, राजाने बराबर सज्ज करी, चमत्कारवडे चलित मुकुटवाळो ते देव स्वर्गे गयो. (८७) करुणावज्रायुध नाटकमां अने उत्तराध्ययन लघुवृत्तिमां तो वज्रायुध चक्रीना भवमां आ देवपरीक्षणादि वृत्तांत कह्यो छे, तथा करुणावज्रायुध नाटकमां बे देवो परीक्षा करवा आव्यानुं कह्युं छे–इति ज्ञेयं.

घनरथ नामना तीर्थंकर गुरुनी पासे दीक्षा अंगीकार करीने मेघरथ राजा सर्वार्थसिद्ध विमानमां उत्कृष्ट आउखे देव थया. (८८) दृढरथ पण मरण पामीने त्यां ज देव थयो. ते शांतिनाथ प्रभुना गणधर थशे. हवे मेघरथ राजानो जीव स्वर्गथी च्यवीने कुरुदेशना शिरोरत्न जेवा हस्तिनापुर नगरमां विश्वसेन राजानी अचिरा राणीना पुत्र थया. (८९–९०) प्रभु गर्भमां आव्या एटले आखा देशमां मारी विगेरेनो उपद्रव हतो ते सर्व शांत थइ गयो तेथी अथवा शांति एटले क्रोधनो विजय (पराभव) अथवा

॥ ९१ ॥ अथवा-शांतिः स्यात्क्रोधविजयः शांतिर्वोपद्रवक्षयः । शांतिः शांतरसो वा त-त्प्रधानत्वात्तथाभिधः ॥ ९२ ॥ भाद्रस्य सप्तमी श्यामा ज्येष्ठे कृष्णात्रयोदशी । ज्येष्ठे चतुर्दशी कृष्णा पौषे च नवमी सिता ॥ ९३ ॥ ज्येष्ठे त्रयोदशी कृष्णा कल्याणकदिनाः प्रभोः । धिष्ण्यं च पंचस्वप्येषु कीर्त्तितं यमदैवतं ॥ ९४ ॥ नव मासाः स्थितिर्गर्भे स्वामिनः षड्दिनाधिकाः । चत्वारिंशत्कार्मुकानि प्रज्ञप्तो वपुरुच्छ्रयः ॥ ९५ ॥ पादत्रयेण पल्यस्य वर्षलक्षेण चोनितैः । त्रिभिः पयोधिभिः शांति-र्धर्मनिर्वाणतोऽभवत् ॥ ९६ ॥ पल्यपादत्रयी शेषा तदा तुर्यारकेऽभवत् । पूर्वोक्तैः शरदां लक्षैः सहस्रैश्च समन्विता ॥ ९७ ॥ राशिर्मेषो मृगो लक्ष्म वर्षलक्षं च जीवितं । तुल्यैश्चतुर्भिर्भागैस्त-त्पूरयामास विश्वजित् ॥ ९८ ॥ पंचविंशतिमब्दानां सहस्राणि कुमारतां । तावत्कालं च बुभुजे मंडलाधीशतामपि ॥ ९९ ॥ पंचविंशतिमेवाब्द-सहस्रान् सार्वभौमतां । कालं तावंतमेवायं व्रतपर्यायमाश्रयत् ॥ ७०० ॥ सर्वार्था शिबिका वर्ष-मेकं छद्मस्थता मता । सुमित्रो मंदिरपुरे पारणां प्रथमां ददौ ॥ ७०१ ॥ अत्र वर्षमेकं छद्मस्थता मता इत्यावश्यका-

---

शांति एटले उपद्रवोनो नाश अथवा शांति एटले शांत रस, आ सर्व ते प्रभुमां मुख्यपणे होवाथी तेमनुं नाम शांतिनाथ थयुं. (९१-९२) भादरवा वदि ७, ज्येष्ठ वदि १३, ज्येष्ठ वदि १४, पोष शुदि ९ अने ज्येष्ठ वदि १३ आ तेमना कल्याणकना दिवसो थया. तेमना पांचे कल्याणकोमां नक्षत्र भरणी जाणवुं. (९३-९४) गर्भस्थिति ९ मास ने ६ दिवसनी ने ४० धनुष्यनुं शरीर जाणवुं. (९५) धर्मनाथना निर्वाण पछी पोणा पल्योपमे ने एक लाख वर्षे ऊण त्रण सागरोपमे शांतिनाथनो जन्म थयो. (९६) ते वखते चोथो आरो पोणो पल्योपम, एक लाख वर्ष ने पूर्वे कहेला वर्षोए अधिक शेष रहेल जाणवो. (९७) प्रभुनी राशि मेष ने लंछन मृगनुं जाणवुं. लाख वर्षनुं आयुष्य तेना चार सरखा भाग पाडवा अने तेवा चार भागे आयुष्य पूर्ण थयेलुं जाणवुं. (९८) एक भागना २५००० वर्ष कौमारावस्थामां, एक भाग मंडळाधीशपणामां, (९९) एक भाग चक्रवर्तीपणामां ने एक भाग व्रतपर्याय तरीके जाणवो. (७००) दीक्षा अवसरे शिबिका सर्वार्था नामनी जाणवी. एक वर्ष छद्मस्थकाळ जाणवो. प्रथम पारणुं मंदिरपुरमां सुमित्र राजाने त्यां थयुं. (७०१) अहीं जे एक वर्ष छद्मस्थता कही छे ते

पेक्षया, सप्ततिशतस्थानकापेक्षया च पाठः—ननु ज्येष्ठासितचतुर्दश्याः पौषसितनवमीं यावद्गणने साधिकाः सप्त मासाः स्युः, यदि चाधिकमासः संभवेत्तदापि साधिका अष्ट मासा एव स्युः, तत्कथं वर्षं संभवति छाद्मस्थ्यकालमानमिति चेत्सत्यं, परमर्द्धाधिक्ये रूपं (पूर्णं) देयमिति गणितज्ञवचनानुवृत्त्येदमप्युक्तं भावीति संभाव्यते, ग्रंथांतरे तु तदनपेक्षणादधिकमासापेक्षणाच्च साधिकमासाष्टकसंभवे नव मासा अप्युक्ता दृश्यंते इति ध्येयं.

नंदीनामा ज्ञानवृक्षः प्रज्ञप्तोऽस्य जिनेशितुः । षट्त्रिंशदेव गणभृ—द्वरा भगवतः स्मृताः ॥ २ ॥ इदं गणधरमानमावश्यकानुसारेण, समवायांगे तु श्रीशांतेर्नवतिर्गणधरा इति दृश्यते. द्वाषष्टिश्च सहस्राणि साधवः शुद्धसंयमाः । संयतीनां चैकषष्टिः सहस्राः षट्शताधिकाः ॥ ३ ॥ श्रावकाणां सनवति—सहस्रं लक्षयोर्द्वयं । श्राविकाणां त्रिलक्षयाढ्या त्रिनवत्या सहस्रकैः ॥ ४ ॥ सर्वज्ञानां सहस्राश्च चत्वारस्त्रिशताधिकाः । शतानि चत्वारिंशच्च मनःपर्यायशालिनां ॥ ५ ॥ सहस्राणि त्रीण्यभूव—न्नवधिज्ञानधारिणां । अष्टौ शतानि प्रोक्तानि सच्च-

---

आवश्यकने अभिप्राये जाणवी. सप्ततिशतस्थानकनी अपेक्षाए तो ननु इति प्रश्ने 'ज्येष्ठ वदि १४ शे दीक्षा ने पोष शुदि ९ मे केवळज्ञान ए रीते गणतां तो साधिक सात मास थाय. कदि (पोष मास) अधिक मासनो संभव होय तो पण साधिक आठ मास थाय, पण छद्मस्थकाळ एक वर्षनो शी रीते संभवे ?' तेने उत्तर आपे छे के तारुं कहेवुं सत्य छे, परंतु अर्धथी अधिक पूर्ण समजवुं एवुं गणितज्ञनुं वचन छे, ते अनुसारे आ कथन करेलुं हशे एम संभवे छे.' ग्रंथातरमां तो तेवी अपेक्षा नहीं करीने अने अधिक मासनी अपेक्षा करीने साधिक आठ मासनो संभव होवाथी नव मास कहेला पण देखाय छे. इति ज्ञेयं.

प्रभुनुं ज्ञानवृक्ष नंदी नामनुं कहेलुं छे. शांतिनाथने गणधरो ३६ कहेला छे. (७०२) 'आ संख्या आवश्यक अनुसारे जाणवी. समवायांगमां तो श्री शांतिनाथने ९० गणधरो कहेला देखाय छे. ' बीजो परिवार नीचेप्रमाणे—६२००० शुद्ध संयमधारी साधुओ, ६१६०० साध्वीओ, (३) २९०००० श्रावको, ३९३००० श्राविकाओ, (४) ४३०० केवळज्ञानी, ४००० मनःपर्यवज्ञानी, (५) ३००० अवधिज्ञानी, ८०० चौदपूर्वी,

तुर्दशपूर्विणां ॥ ६ ॥ बिभ्रतां वैक्रियां लब्धिं सहस्राः षण्महात्मनां । वादिनां च सहस्रे द्वे निर्दिष्टे सचतुःशते ॥ ७ ॥ जीवो दृढरथस्याथ च्युत्वा सर्वार्थसिद्धितः । प्रथमः प्रथमानश्रीः श्रीशांतेर्योगजोऽभवत् ॥ ८ ॥ गणाधिपाग्रणीः सोऽभू–चक्रायुध इति प्रभोः । प्रवर्तिनी च सुमति–र्भक्तः कोणाचलो नृपः ॥ ९ ॥ वराहवाहनः क्रोड–वदनः श्यामलद्युतिः । बीजपूरकसत्पद्म–युग्दक्षिणकरद्वयः ॥ १० ॥ नकुलं चाक्षसूत्रं च दधद्वामकरद्वये । यक्षो विजयते दक्षो गरुडाख्यश्चतुर्भुजः ॥ ११ ॥ पुस्तकोत्पलसंयुक्त–सद्दक्षिणकरद्वया । कमंडलुं च कमलं दधत्यन्यकरद्वये ॥ १२ ॥ पद्मासना चतुःपाणि–र्निर्वाणी कनकच्छविः । श्रीशांतिनाथभक्तानां कुरुते मंगलावलीं ॥ १३ ॥ इति श्रीशांतिः ॥

आवर्त्तनाम्नि विजये जंबूद्वीपस्य मंडने । प्राग्विदेहे खड्गिपुर्यां नृपः सिंहाह्वयोऽभवत् ॥ १४ ॥ स संवरगुरोः पार्श्वे प्रतिपद्य शुभव्रतं । त्रयस्त्रिंशत्सागरायुः सर्वार्थे त्रिदशोऽभवत् ॥ १५ ॥ कुरुदेशे गजपुरे

---

(६) ६००० मुनिओ वैक्रियलब्धिवाळा अने २४०० वादी साधुओ जाणवा. (७) दृढरथनो जीव सर्वार्थसिद्धिथी च्यवीने विस्तारवंत शोभावाळा शांतिनाथना जे प्रथम पुत्र थया ते चक्रायुध नामे गणधरना अग्रणी थया. प्रवर्त्तिनी सुमति नामे थइ अने कोणाचळ नामनो राजा भक्त थयो. (८–९) वराहना वाहनवाळो, क्रोड (सुवर) समान मुखवाळो, श्याम कांतिवाळो, दक्षिणना बे हाथ बीजपूरक ने सत्पद्मवाळा अने डाबा बे हाथ नकुल ने अक्षसूत्रवाळा छे जेना एवो, दक्ष अने चारभुजावाळो गरुड नामनो यक्ष जयवंत वर्ते छे. (१०–११) पुस्तक ने उत्पल संयुक्त जेना जमणा बे हाथ छे अने कमंडळ ने कमळवाळा बे डाबा हाथ छे जेना एवी पद्मना आसनवाळी, चार भुजावाळी, कनकसमान कांतिवाळी निर्वाणी नामनी देवी श्री शांतिनाथना भक्तोने मंगळोनी श्रेणि करे छे. (१२–१३) इति श्रीशांतिः ॥

श्रीकुंथुनाथवर्णन— जंबूद्वीपना मंडनरूप पूर्व महाविदेहमां खड्गीपुरीमां सिंह नामनो राजा हतो. (१४) तेणे संवर नामना गुरुपासे शुभ व्रत (चारित्र) अंगीकार कर्युं. काळ करीने सर्वार्थसिद्धमां ३३ सागरोपमने आउखे देव थया. (१५) त्यांथी

ततः सूरमहीपतेः । सुतोऽभूत्कुंथुनामार्हन् श्रीदेवीकुक्षिमौक्तिकं ॥ १६ ॥ श्रावणे नवमी कृष्णा राधे कृष्णा चतुर्दशी । चैत्रे च पंचमी कृष्णा तृतीया च मधोः सिता ॥ १७ ॥ वैशाखकृष्णप्रतिपत् कल्याणकदिनाः प्रभोः । नक्षत्रं कृत्तिकासंज्ञं पंचस्वप्येषु कीर्त्तितं ॥ १८ ॥ नव गर्भस्थितिर्मासाः प्रभोः पंचदिनाधिकाः । पंचत्रिंशत्कार्मुकाणि ख्यातो देहोच्छ्रयः प्रभोः ॥ १९ ॥ मेषो लक्ष्म वृषो राशिः स्तूपो यद्रत्नजो भुवि । मात्रा निरीक्षितः स्वप्ने ततः कुंथुरिति श्रुतः ॥ २० ॥ श्रीशांतिनाथनिर्वाणा–त्पल्यार्द्धेनाभवत्प्रभुः । श्रीकुंथुः पंचनवति–सहस्राब्दोनताजुषा ॥ २१ ॥ पादः पल्योपमस्यैकः शेषस्तुर्यारके तदा ॥ पंचषष्ठ्या वर्षलक्षैः सहस्रैश्चोदितैर्युतः ॥ २२ ॥ त्रयोविंशतिमब्दानां सहस्रान् पर्यपूरयत् । चतुर्ष्वंशेषु प्रत्येकं सार्द्धसप्तशताधिकान् ॥ २३ ॥ कौमार्ये मंडलेशत्वे चक्रित्वे संयमे च सः । सर्वायुः पंचनवतिः सहस्राः शरदां प्रभोः ॥ २४ ॥ विजया शिबिकाब्दानि छाद्मस्थ्ये षोडश प्रभोः । प्रथमां पारणां व्याघ्र–सिंहश्चक्रपुरे ददौ ॥ २५ ॥ ज्ञानवृक्षश्च तिलका–भिधानः

च्यवीने कुरुदेशमां गजपुर नगरमां सूरमहीपतिना पुत्र कुंथु नामना तीर्थंकर श्रीदेवी मातानी कुक्षिमां मौक्तिकरूपे उत्पन्न थया. (१६) श्रावण वदि ९, वैशाख वदि १४, चैत्र वदि ५, माह शुदि ३ अने वैशाख वदि १–आ पांच कल्याणकनी तिथिओ समजवी. पांचे कल्याणकमां कृत्तिका नक्षत्र जाणवुं. (१७–१८) ९ मास ने पांच दिवसनी गर्भस्थिति, ३५ धनुष्यनुं शरीर, (१९) मेषनुं लंछन अने वृषराशि जाणवो. माताए रत्ननो स्तूप पृथ्वीपर रहेलो स्वप्नमां जोएल होवाथी कुंथु नाम स्थापन कर्युं. (२०) शांतिनाथना निर्वाणथी ९५००० वर्षे न्यून अर्ध पल्योपमे कुंथुनाथनो जन्म थयो. (२१) ते वखते चोथो आरो पा पल्योपम, ९५००० वर्ष ने ६५८४००० वर्ष बाकी रह्यो हतो. (२२) कुंथुनाथनुं आयुष्य ९५००० वर्षनुं हतुं ते चार विभागे पूर्ण कर्युं हतुं. एक भाग २३७५० वर्ष प्रमाण कौमारावस्थामां, एक भाग मंडळिकपणामां, एक भाग चक्रवर्तीपणामां ने छेल्लो एक भाग संयमावस्थामां व्यतीत कर्यो हतो. (२३–२४) दीक्षावसरे शिबिका विजया नामनी हती अने छद्मस्थपणामां सोळ वर्ष व्यतीत थया हता. प्रथम पारणुं चक्रपुरमां व्याघ्रसिंह राजाने त्यां थयुं हतुं. (२५) ज्ञानवृक्ष-

कीर्त्तितः प्रभोः । पंचत्रिंशद्गणभृतः श्रीकुंथुस्वामिनः स्मृताः ॥ २६ ॥ षष्टिः सहस्राः साधूनां साध्वीनां षट्शताधिकाः । श्रावकाणां लक्षमेको-नाशीतिश्च सहस्रकाः ॥ २७ ॥ लक्षास्तिस्रः श्राविकाणां सैकाशीति-सहस्रकाः । द्वात्रिंशद् द्वाविंशतिर्वा केवलज्ञानिनां शताः ॥ २८ ॥ त्रयस्त्रिंशच्छताश्चत्वा-रिंशा मानसवेदिनां । अवधिज्ञानभाजां च शतानि पंचविंशतिः ॥ २९ ॥ सच्चतुर्दशपूर्वाणां शताः षट् सप्तति-स्पृशः । शतान्यथैकपंचाश-त्सद्वैक्रियजुषामिह ॥ ३० ॥ वादिनां च सहस्रे द्वे शंबो गणधरोऽग्रिमः । प्रवर्त्तिनी दामिनी च कुबेरो भक्त-भूपतिः ॥ ३१ ॥ गंधर्वयक्षः श्यामांगो हंसगामी चतुर्भुजः । अपसव्ये करद्वंद्वे दधद्वरदपाशकौ ॥ ३२ ॥ मातुलिंगांकुशौ वामे दधानः पाणि-यामले । श्रीकुंथुनाथभक्तानां समर्थयति वांछितं ॥ ३३ ॥ बीजपूरक-शूलाढ्य-सद्दक्षिणकरद्वया । मुसंढिपद्मसंशोभि-वामहस्तांबुजद्वया ॥ ३४ ॥ चतुर्भुजाच्युता देवी बलाख्या च मतांतरे । मयूरवाहना स्वर्ण-द्युतिः शं कुरुते सतां ॥ ३५ ॥ इति श्रीकुंथुनाथः ॥

तिलक नामनुं हतुं. श्रीकुंथुनाथस्वामीने ३५ गणधर, (२६) ६०००० साधुओ, ६०६०० साध्वीओ, १७९००० श्रावको, (२७) ३८१००० श्राविकाओ, ३२०० अथवा २२०० केवळज्ञानी, (२८) ३३४० मनःपर्यवज्ञानी, २५०० अवधिज्ञानी, (२९) ६७० चौदपूर्वी, ५१०० वैक्रियलब्धिवाळा (३०) अने २००० वादीओनो परिवार थयो. मुख्य गणधर शंब नामे, मुख्य प्रवर्त्तिनी दामिनी नामे अने मुख्य भक्त कुबेर नामे राजा थयो. (३१) गंधर्व नामनो यक्ष श्यामवर्णवाळो, हंसना वाहनवाळो, चार भुजा-वाळो, जमणा बे हाथमां वरद ने पाश अने डाबा बे हाथमां मातुलिंग ने अंकुशने धारण करनारो श्रीकुंथुनाथना भक्तोना वांच्छितने पूरनार थयो. (३२-३३) देवी अच्युता अथवा बला नामे दक्षिण बाजुना बे हाथमां बीजपूरक ने शूलने धारण कर-नारी अने डाबी बाजुना बे हाथमां मुसंढी ने पद्मने धारण करनारी, तेनावडे शोभित करकमळवाळी, चार भुजावाळी, मयूरना वाहनवाळी अने स्वर्णसमान कांतिवाळी सज्ज-नोने सुखनी आपनारी थइ. (३४-३५) इति श्रीकुंथुनाथः ॥

जंबूद्वीपे प्राग्विदेहे वत्साख्ये विजये नृपः । सुसीमायां धनपतिः प्रव्रज्य संवराद्गुरोः ॥ ३६ ॥ त्रयस्त्रिंशत्सागरायुः सर्वार्थे निर्जरोऽभवत् । ततः कुरुषु देशेषु नगरे हस्तिनापुरे ॥ ३७ ॥ सुदर्शनस्य नृपते–र्देवी-कुक्षिसमुद्भवः । अरनामाभवन्नंद्या–वर्त्तांकोऽष्टादशो जिनः ॥ ३८ ॥ द्वितीया फाल्गुने शुक्ला मार्गे च दशमी सिता । उज्ज्वलैकादशी मार्गे द्वादशी कार्त्तिके सिता ॥ ३९ ॥ मार्गे च दशमी शुक्ला कल्याणकदिना इमे । एषु पंचसु नक्षत्रं रेवती परिकीर्त्तितं ॥ ४० ॥ अष्टघस्राधिका मासा नव गर्भस्थितिर्विभोः । राशिर्मीनस्तथा त्रिंश–च्चापानि वपुरुच्छ्रयः ॥ ४१ ॥ वंशादिवृद्धिकरणा–दरो नाम्ना जिनोऽभवत् । महारत्नारकस्व-प्ना–नुसाराद्वा तथाभिधः ॥ ४२ ॥ पल्योपमस्य पादेन न्यूनेन शरदा-मिह । एककोटिसहस्रेण वेदनाग (८४) सहस्रकैः ॥ ४३ ॥ श्रीकुंथुस्वा-मिनिर्वाणा–ज्जन्माभवदरप्रभोः । तदा तुर्यारेऽब्दकोटि–सहस्रमवशि-ष्यते ॥ ४४ ॥ पूर्वोक्तैः शरदां लक्षैः सहस्रैश्च समन्वितं । युक्तं चायु-ष्ककालेन श्रीमदष्टादशार्हतः ॥ ४५ ॥ अपूरयत्कुमारत्वे सहस्राण्येक-

---

श्री अरनाथवर्णन—जंबूद्वीपना पूर्व महाविदेहमां वत्सा नामनी विजयमां सुसीमा नामनी नगरीमां धनपति नामे राजा हतो. तेणे संवर नामना गुरु पासे चारित्र अंगीकार कर्युं. त्यांथी मरण पामीने सर्वार्थसिद्ध विमानमां ३३ सागरोपमने आउखे देवपणे उत्पन्न थया. त्यांथी च्यवीने कुरु नामना देशमां हस्तिनापुर नगरमां सुदर्शन नामना राजानी देवी नामनी राणीनी कुक्षिथी नंद्यावर्त्तना लांछनवाळा अढारमा अर नामना तीर्थंकर थया. (३६–३८) फाल्गुन शुदि २, मार्गशीर्ष शुदि १०, मार्गशीर्ष शुदि ११, कार्त्तिक शुदि १२ अने मार्गशीर्ष शुदि १०–आ पांच कल्याणकना दिवसो जाणवा. ए पांचे कल्याणकमां नक्षत्र रेवती जाणवुं. (३९–४०) गर्भस्थिति ९ मास ने ८ दिवसनी राशि मीन अने ३० धनुष्य प्रमाण शरीर जाणवुं. (४१) वंशादिनी वृद्धि करवाथी तेम ज महारत्नना अरको स्वप्नमां जोयेल होवाथी अरनाथ नाम स्थापन कर्युं. (४२) श्री कुंथुनाथना निर्वाणथी एक हजार क्रोड वर्षे अने ८४००० वर्षे न्यून पा पल्योपमे अरनाथनो जन्म थयो. ते वखते चोथो आरो एक हजार क्रोड अने पूर्वे कह्या प्रमाणेना वर्षो तथा ८४००० वर्ष बाकी रह्यो हतो. (४३–४५) श्री अरनाथ प्रभुए २१०००

विंशतिं । वर्षाणां मंडलेशत्वे चक्रित्वे संयमेऽपि च ॥ ४६ ॥ शरत्स-हस्रांश्चतुर–शीतिमेवमपालयत् । आयुः सर्वं तत्र वर्ष–त्रयं छद्मस्थता विभोः ॥ ४७ ॥ शिबिका वैजयंत्याद्य–भिक्षां राजपुरे ददौ । नाम्ना-ऽपराजितश्चूता–ख्यस्तु ज्ञानतरुः प्रभोः ॥ ४८ ॥ त्रयस्त्रिंशद्गणभृतः पंचाशत्संयतात्मनां । सहस्राः संयतीनां च निर्दिष्टाः षष्टिरागमे ॥ ४९ ॥ एकं लक्षं सहस्राश्च–तुरशीतिरुपासकाः । लक्षत्रयं श्राविकाणां द्वासप्त-तिसहस्रयुक् ॥ ५० ॥ शतान्यष्टाविंशतिश्च केवलज्ञानशालिनां । द्वे सहस्रे शताः पञ्चै–कपञ्चाशा मनोविदाम् ॥ ५१ ॥ अवधिज्ञानिनां द्वे च सहस्रे षट्शताधिके । शतानि षट् दशाढ्यानि सच्चतुर्दशपूर्विणां ॥ ५२ ॥ शतास्त्रिसप्ततिश्चोक्ता बिभ्रतां वैक्रियश्रियं । वादिनां षोडश शताः शिष्टैर्व्यक्तीकृताः श्रुते ॥ ५३ ॥ कुंभो गणभृतां मुख्यो रक्षिता-ख्या प्रवर्त्तिनी । सुभूमनामा नृपतिः सदा चरणसेवकः ॥ ५४ ॥ बीजपूरं शरं खड्गं मुद्गरं पाशकं तथा । अभयं च क्रमाद्बिभ्रत् षट्सु दक्षिणपाणिषु ॥ ५५ ॥ दधानो नकुलं चापं फलकं शूलमंकुशं । अक्षसूत्रं च वामेषु करेषु षट्स्वपि क्रमात् ॥ ५६ ॥ त्रिलोचनः श्याम-वर्णः षडास्यः शंखवाहनः । स द्वादशभुजो यक्षे–द्राख्यो यक्षो ह्यरप्रभोः

वर्ष कौमारपणामां, २१००० वर्ष मंडलिकपणामां, २१००० वर्ष चक्रीपणामां अने २१००० वर्ष संयमीपणामां व्यतिक्रमाव्या. (४६) ए रीते कुल ८४००० वर्षनुं आयुष्य पाळ्युं. तेमां छद्मस्थावस्था त्रण वर्षनी जाणवी. (४७) शिबिका वैजयंती नामे जाणवी. प्रथम पारणुं राजपुरमां अपराजित राजाने त्यां थयुं. ज्ञान-वृक्ष चूत (आम्र) नामनुं जाणवुं. (४८) अरनाथ प्रभुने ३३ गणधरो, ५०००० साधुओ, ६०००० साध्वीओ, (४९) १८४००० श्रावको, ३७२००० श्राविकाओ, (५०) २८०० केवळज्ञानी, २५५१ मनःपर्यवज्ञानी, (५१) २६०० अवधिज्ञानी, ६१० चौदपूर्वी (५२) ७३०० वैक्रियलब्धिवाळा अने १६०० वादीओनो परिवार सिद्धांतमां व्यक्त कहेलो छे. (५३) कुंभ नामना मुख्य गणधर, रक्षिता नामनी प्रवर्त्तिनी अने सुभूम नामनो राजा तेमनो सदानो चरणसेवक (भक्त) थयो. (५४) यक्षेंद्र नामनो यक्ष बार भुजावाळो, तेमां जमणी बाजुनी छ भुजामां बीजपूर, शर, खड्ग, मुद्गर, पाश ने अभयने धारण करनारो तथा डाबी बाजुनी छ भुजामां नकुल, चाप, फलक, शूळ, अंकुश ने अक्षसूत्रने धारण करनारो, छ मुखवाळो, त्रण लोचनवाळो, श्याम वर्णवाळो अने शंखना वाहनवाळो अरनाथनो भक्त थयो. (५५-५७) धारिणी

॥ ५७ ॥ मातुलिंगोत्पलोपेत–सद्दक्षिणकरद्वया । पद्माक्षसूत्रसंयुक्ता–ऽवामवामकरद्वया ॥ ५८ ॥ देवी श्रीधारणी नील–वर्णा पद्मावरासना। चतुर्भुजा क्षिणोत्यार–मरस्वाम्यंह्रिसेविनां ॥ ५९ ॥ इति श्रीअरः ॥

विजये सलिलावत्यां जंबूद्वीपस्य मंडने । प्रत्यग्विदेहे पूर्वीत–शोका तत्राभवन्नृपः ॥ ६० ॥ नाम्ना महाबलः षड्भि–र्मित्रैर्युक्तः स संयमं । वरधर्मर्षितः प्राप्य मनस्येवमचिंतयत् ॥ ६१ ॥ इति षष्ठांगाभिप्रायः, सप्ततिशतस्थानके तु मल्लेः प्राग्भवे श्रमण इति नाम श्रूयते ॥ प्रव्रज्यावसरे स्नेहा–तिरेकादनुयायिभिः । तुल्यं कार्यं तपोऽस्माभि–रिति संधाविधायिभिः ॥ ६२ ॥ मित्रैरमीभिः सदृशं करिष्यामि तपो यदि । तुल्य एव भविष्यामि तदामीभिर्भवांतरे ॥ ६३ ॥ युग्मं ॥ ततः केनाप्युपायेन करोम्येभ्यस्तपोऽधिकं । ज्येष्ठो येन भवाम्यत्रा–मुत्राप्येभ्यस्तपोबलात् ॥ ६४ ॥ ततो वृथा व्यथाशंसी मायया वर्द्धयंस्तपः ॥ मुधा बबंध स्त्रीवेदं धिङ्मायां स्वोपघातिनीं

नामनी देवी जमणी बाजुना बे हाथमां मातुलिंग अने उत्पल अने डाबी बाजुना बे हाथमां पद्म ने अक्षसूत्रने धारण करनारी, नील वर्णवाळी, श्रेष्ठ पद्मना आसनवाळी, चार भुजावाळी अरनाथ प्रभुना चरणसेवीना कष्टने नाश करनारी थइ. (५८–५९) इति श्रीअरनाथः ॥

श्री मल्लिनाथवर्णन—जंबूद्वीपना मंडनरूप पश्चिममहाविदेहमां सलिलावती नामनी विजयमां वीतशोका नामनी नगरीमां महाबळ नामे राजा हतो. तेणे वैश्रमण, अचळ, धरण, पूरण, वसु ने अभिचंद्र ए छ मित्रो साथे वरधर्म ऋषिपासे चारित्र अंगीकार कर्युं. (आवो श्रीज्ञाताधर्मकथा नामना छट्ठा अंगनो अभिप्राय छे–सप्ततिशतस्थानक ग्रंथमां तो मल्लिनाथनुं पूर्वभवे श्रमण एवुं नाम कहेल छे.) तेणे मनमां आ प्रमाणे विचार कर्यो (६०–६१) के–' अमे प्रव्रज्या लीधी त्यारे परस्परना स्नेहना अतिरेकपणाथी आपणे बधाए एक सरखो तप करवो एवी प्रतिज्ञा करी छे. हवे जो हुं आ बधानी सरखो तप करुं तो आवता भवमां तेमनी सरखो ज थाउं, (६२–६३) माटे कोइपण उपायवडे तेमनाथी अधिक तप करुं के जेथी ते तपना प्रभावे आ भवमां अने आवता भवमां पण तेमनाथी ज्येष्ठ थाउं. (६४) आ प्रमाणे विचारीने खोटी खोटी व्याधिनुं बानुं काढी तेमनाथी विशेष तप मायावडे कर्यो जेथी फोगट स्त्रीवेद बांध्यो.–' आवी

॥ ६५ ॥ अर्जिताईत्पदः स्थानै–र्विंशत्याराधितैस्ततः । मित्रैस्सह जयंतेऽभू–त्परमस्थितिकः सुरः ॥ ६६ ॥ मिथिलायां विदेहेषु ततः कुंभमहीपतेः । कुक्षौ राज्ञ्याः प्रभावत्याः पुत्रीत्वेनोदपद्यत ॥ ६७ ॥ जेत्री मोहादिमल्लानां ततो मल्लिरिति श्रुता । मातुर्वा माल्यशय्यायां दोहदात्ताहशाह्वया ॥ ६८ ॥ चतुर्थी फाल्गुने शुक्ला मार्गे चैकादशी सिता । मार्गे एकादशी शुभ्रा मार्गे चैकादशी सिता ॥ ६९ ॥ फाल्गुने द्वादशी शुभ्रा कल्याणकदिना अमी । चतुर्ष्वश्विनी धिष्ण्यं भरणी पंचमे पुनः ॥ ७० ॥ प्रभोर्गर्भस्थितिर्मासा नव सप्तदिनाधिकाः । राशि-र्मेषो भगवत्याः कुंभो लक्ष्म प्रकीर्त्तितं ॥ ७१ ॥ पंचपंचाशता वर्ष–सहस्रैरूनके गते । सहस्रे वर्षकोटीनां निर्वाणात् श्रीअरप्रभोः ॥ ७२ ॥ जन्म मल्लिजिनस्याभू–च्छेषं तुर्यारके तदा । जिनायुः शरदां लक्षाः (६५) सहस्राश्च (८४) पुरोदिताः ॥ ७३ ॥

शरच्छतं कुमारत्वे व्रते नवशताधिकाः । चतुष्पंचाशत्सहस्रा अहो-रात्रमकेवली ॥ ७४ ॥ सहस्राः पंचपंचाश–च्छरदां सर्वजीवितं ।

पोतानो ज घात करनारी मायाने धिक्कार छे !' (६५) ते भवमां वीश स्थानकना आराधनवडे अरिहंतपद उपार्जन कर्युं. छए मित्रो साथे काळधर्म पामीने जयंत विमानमां उत्कृष्ट (३३ सागरोपम) आयुवाळो देव थयो. (६६) त्यांथी च्यवीने महाबळ राजानो जीव विदेहदेशमां मिथिलानगरीमां कुंभ राजानी प्रभावती राणीनी कुक्षिथी पुत्रीपणे उत्पन्न थया. (६७) मोहादि मल्लोने जीतनार होवाथी तेम ज माताने माळानी शय्यामां सुवानो दोहद थवाथी मल्लि नाम स्थापन कर्युं. (६८) फाल्गुन शुदि ४, मार्गशीर्ष शुदि ११, मार्गशीर्ष शुदि ११, मार्गशीर्ष शुदि ११ ने फाल्गुन शुदि १२–ए पांच कल्याणकना दिवसो जाणवा. चार कल्याणकमां अश्विनी नक्षत्र अने पांचमा कल्याणकमां भरणी नक्षत्र जाणवुं (६९–७०) प्रभुनी गर्भस्थिति ९ मास ने ७ दिवसनी, राशि मेष अने लांछन कुंभनुं कहेलुं छे. (७१) श्रीअरनाथना निर्वाणथी ५५ हजार वर्ष न्युन एक हजार क्रोड वर्ष व्यतीत थये श्रीमल्लिनाथनो जन्म थयो. ते वखते चोथो आरो ६५ लाख ८४००० वर्ष अने ५५००० वर्ष बाकीमां हतो. (७२–७३)

तेमणे एक सो वर्ष कुमारावस्थामां ने ५४९०० वर्ष श्रमणावस्थामां व्यतीत कर्या. तेमां एक अहोरात्र ज छद्मस्थावस्थामां व्यतीत करी; बाकीनो बधो काळ केवळी अवस्थामां व्यतीत कर्यो. (७४) कुल ५५००० वर्षनुं आयु पूर्ण कर्युं. मल्लि-

समुच्छ्रयः शरीरस्य धनुषां पंचविंशतिः ॥ ७५ ॥ अयोध्यानगरीनेता चंपावाराणसीनृपौ । श्रावस्तीहस्तिनागेशौ कांपील्यपुरनायकः ॥ ७६ ॥ एतान् प्राग्जन्मसुहृदो विज्ञातस्वामिनीगुणान् । चित्रकृत्प्रमुखोदंतै-र्भूरिस्नेहवशीकृतान् ॥ ७७ ॥ समेतान् युगपत्पाणि-ग्रहाय प्रतिबोध्य च । स्वर्णस्वप्रतिमोपाया-त्सार्द्धं प्राव्राजयत्प्रभुः ॥ ७८ ॥ त्रिभिर्वि-शेषकं । जयंती शिबिका विश्व-सेनोऽदादाद्यपारणां । मिथिलानगरी-वासी अशोको ज्ञानपादपः ॥ ७९ ॥

अष्टाविंशतिरादिष्टाः स्वामिन्या गणधारिणः । चत्वारिंशत्सहस्राणि साधूनां विशदात्मनां ॥ ८० ॥ साध्वीनां पंचपंचाश-त्सहस्राः कीर्त्तिताः श्रुते । श्रावकाणां लक्षमेकं सत्र्यशीतिसहस्रकं ॥ ८१ ॥ त्रिलक्षी श्राविकाणां च ससप्ततिसहस्रकाः । एवं चतुर्विधः संघः सद्गुणाढ्यः प्रभोरभूत् ॥ ८२ ॥ सर्वज्ञानां सहस्रे द्वे श्रीमल्लेर्द्विशताधिके । मनो-विदां सहस्रं च सार्द्धसप्तशताधिकं ॥ ८३ ॥ द्वाविंशतिं शतान्याहु-रवधिज्ञानशालिनां । शतानि साष्टषष्टीनि षट् चतुर्दशपूर्विणां ॥ ८४ ॥ अत्रेयं मनोज्ञानिनामवधिज्ञानिनां संख्या सप्ततिशतस्थानकाभिप्रायेण,

---

प्रभुनुं शरीर पचवीश धनुष्यनुं हतुं. (७५) अयोध्या, चंपा, वाराणसी, श्राव-स्ति, हस्तिनागपुर अने कांपिल्यपुरना स्वामी ए छ प्रभुना पूर्वजन्मना मित्रो हता. तेओ चित्रकार विगेरेना कहेवाथी प्रभुना गुणोने जाणीने अत्यंत स्नेहने वश थया. तेओ एक साथे पाणिग्रहण करवा आव्या. तेमने स्वर्णमय बनावेला पोताना प्रतिबिंबथी प्रति-बोध पमाडीने पोतानी साथे ज दीक्षा लेवरावी. (७६–७८) दीक्षावसरे शिबिका जयंती नामनी हती अने प्रथम पारणुं मिथिलानगरीवासी विश्वसेन राजाए कराव्युं हतुं. ज्ञानवृक्ष अशोक नामनुं हतुं. (७९)

श्रीमल्लिनाथ प्रभुने २८ गणधर, पवित्र आत्मावाळा ४०००० साधुओ, (८०) ५५००० साध्वीओ, १८३००० श्रावको, (८१) ३७०००० श्राविकाओ—आ प्रमाणे प्रभुनो सद्गुणाढ्य एवो चतुर्विध संघ थयो. (८२) श्रीमल्लिनाथने २२०० केवळज्ञानी, १७५० मनःपर्यवज्ञानी, (८३) २२०० अवधिज्ञानी, ६६८ चौदपूर्वी, (८४) (अहीं मनोज्ञानी ने अवधिज्ञानीनी जे संख्या कही छे ते सप्ततिशतस्थानकने अभिप्राये कही

षष्ठांगे तु अष्ट शतानि मनोविदां, द्वे सहस्रे चावधिज्ञानिनां, तुर्यांगे तु सप्तपंचाशच्छतानि मनोविदामेकोनषष्टिश्च शतान्यवधिज्ञानिनामुक्तानीति ज्ञेयं. सवैक्रियाणामेकोन–त्रिंशतं प्रोचिरे शतान् । शतैश्चतुर्भिः सहितं सहस्रं वादिनां मतं ॥ ८५ ॥ भिषग्ज्येष्ठो गणी बंधु–मती चाभूत्प्रवर्त्तिनी । अजिताख्यो महीपालो–ऽभवद्भक्तो जगत्प्रभोः ॥ ८७ ॥ वरदं परशुं शूल–मभयं दक्षिणे दधत् । दोष्णां चतुष्टये वामे पुनः पाणिचतुष्टये ॥ ८७ ॥ बीजपूरं तथा शक्तिं मुद्गरं चाक्षसूत्रकं । दधानोऽष्टभुजो हस्ति–वाहनश्चतुराननः ॥ ८८ ॥ इंद्रायुधद्युतिर्यक्षः कूबरः कुरुते श्रियं । श्रीमल्लिनाथभक्तानां कुबेरोऽसौ मतांतरे ॥ ८९ ॥ वरदं चाक्षसूत्रं च या दक्षिणकरद्वये । बीजपूरं तथा शक्तिं धत्ते वामकरद्वये ॥ ९० ॥ पद्मासना श्यामवर्णा सा वैरोट्या चतुर्भुजा । पिपर्त्ति प्रार्थितं प्रीता श्रीमल्लिजिनसेवनात् ॥ ९१ ॥ इति श्रीमल्लिः ॥

शिवकेतुरभूत्पूर्वं सौधर्मे त्रिदशस्ततः । ततः कुबेरदत्तोऽथ

छे. छट्ठा अंगमां तो ८०० मनोज्ञानी अने २००० अवधिज्ञानी कह्या छे. चोथा अंगमां ५७०० मनोज्ञानी अने ५९०० अवधिज्ञानी कह्या छे.) २९०० वैक्रियलब्धिवाळा ने १४०० वादीओनो परिवार थयो. (८५) मुख्य गणधर भिषक् नामना, मुख्य साध्वी बंधुमती नामनी अने अजित नामनो राजा जगत् प्रभुनो भक्त थयो. (८६) कूबर नामनो यक्ष जमणा चार हाथमां वरद, परशु, शूळ ने अभय तथा डाबा चार हाथमां बीजपूर, शक्ति, मुद्गर ने अक्षसूत्रने धारण करनारो, आठ भुजावाळो, हाथीना वाहनवाळो, चार मुखवाळो, इंद्रायुध (वज्र) समान कांतिवाळो श्रीमल्लिनाथना भक्तोने लक्ष्मीने आपनारो थयो. तेनुं बीजुं नाम कुबेर मतांतरे छे. (८७–८९) प्रभुनी देवी वैरोट्या नामनी जमणा बे हाथमां वरद ने अक्षसूत्र ने डाबा बे हाथमां बीजपूर ने शक्तिने धारण करनारी, पद्मना आसनवाळी, श्याम वर्णवाळी, चार भुजावाळी श्रीमल्लिनाथनी सेवा करवाथी सेवा करनारना प्रार्थितने प्रीतिवडे पूर्ण करनारी थइ. (९०–९१) इति श्रीमल्लिः ॥

श्रीमुनिसुव्रतजिनवर्णन—पूर्वभवे शिवकेतु नामे राजा हता ते प्रथम स्वर्गे देव थया,

सुरः स्वर्गे तृतीयके ॥९२॥ वज्रकुंडलनामाथ ब्रह्मस्वर्गे सुरस्ततः। ततोऽस्मिन् भरतक्षेत्रे चंपापुर्यां रमाजुषि ॥ ९३ ॥ नृपः श्रीवर्म(ब्रह्म)नामाऽसौ सुनंदगुरुसन्निधौ । प्रव्रज्य परमायुष्को देवोऽभूदपराजिते ॥ ९४ ॥ ततो मगधदेशेऽभू–त्पुरे राजगृहे जिनः। पद्मावतीकुक्षिजन्मा सुमित्रनृपतेः सुतः ॥ ९५ ॥ पौर्णमासी श्रावणस्य कृष्णा ज्येष्ठस्य चाष्टमी। फाल्गुने द्वादशी शुक्ला द्वादशी फाल्गुनेऽसिता ॥ ९६ ॥ कृष्णा च ज्येष्ठनवमी कल्याणकदिना अमी। एषु सर्वेषु नक्षत्रं निर्दिष्टं श्रवणाह्वयं ॥ ९७ ॥ नव गर्भस्थितिर्मासाः प्रभोरष्टदिनाधिकाः । कूर्मांको मकरो राशि–र्धनुर्विंशतिरुच्छ्रयः ॥ ९८ ॥ प्रभौ गर्भस्थिते माता मुनिवत्सुव्रताभवत् । स्वयं च सुव्रतस्तस्मा–न्नाम्नार्हन्मुनिसुव्रतः ॥९९॥ चतुष्पंचाशता वर्ष–लक्षैः श्रीमल्लिनिर्वृतेः । त्रिंशद्वर्षसहस्रोनै–र्जन्माभूत्सुव्रतप्रभोः ॥ ८०० ॥ लक्षाण्येकादशाब्दानां वेदनागसहस्रकाः । तुर्यारके स्म शिष्यंते युता श्रीसुव्रतायुषा ॥ १ ॥ कौमार्येऽब्दसहस्राणि

त्यांथी च्यवी कुबेरदत्त थइने त्रीजे स्वर्गे गया. (९२) त्यांथी वज्रकुंडळ थइने पांचमे देवलोके गया. त्यांथी च्यवी आ भरतक्षेत्रमां लक्ष्मीवडे युक्त चंपापुरीमां श्रीवर्म (ब्रह्म) नामे राजा थइ सुनंद गुरुनी पासे चारित्र लइने अपराजितविमानमां परमायुष्य (३३ सागरोपम) वाळा देव थया. (९३–९४) त्यांथी च्यवीने मगध देशमां राजगृह नगरमां सुमित्र राजानी पद्मावती नामनी राणीनी कुक्षिथी पुत्रपणे जिनेश्वर जन्म्या. (९५) श्रावण शुदि १५, ज्येष्ठ वदि ८, फाल्गुन शुदि १२, फाल्गुन वदि १२ अने जेठ वदि ९—आ पांच कल्याणकना दिवसो जाणवा. पांचे कल्याणकमां नक्षत्र श्रवण जाणवुं. (९६–९७) गर्भस्थिति नव मास ने ८ दिवसनी, कूर्मनुं लांछन, मकरराशि अने २० धनुष्य उंचुं शरीर जाणवुं. (९८) प्रभु गर्भमां हता त्यारे माता मुनि जेवी सुव्रतवाळी थइ तेथी तेम ज पोते सुव्रतवाळा होवाथी तेमनुं नाम मुनिसुव्रत आपवामां आव्युं. (९९) श्रीमल्लिनाथना मोक्षथी त्रीश हजार वर्षे न्यून चोपन लाख वर्षे श्रीमुनिसुव्रतनो जन्म थयो. (८००) ते वखते चोथो आरो ११ लाख ८४००० वर्ष ने सुव्रतना आयुना ३०००० वर्ष जेटलो बाकीमां हतो. (८०१) मुनिसुव्रतस्वामी कौमारावस्थामां साडासात

---

१ त्रिषष्टिमां प्राणत देवलोक कहेल छे.

सप्त सार्द्धान्यथोषितः । राज्ये पंचदशाब्दानां सहस्राणि ततः पुनः ॥ २ ॥ सार्द्धान्यब्दसहस्राणि सप्त व्रतमपालयत् । त्रिंशदब्दसहस्राणि सर्वमायुरपालयत् ॥ ३ ॥ मोहापराजितस्यास्य शिबिका त्वपराजिता । पुरे राजगृहे ब्रह्म–दत्तोऽदादाद्यपारणां ॥ ४ ॥ मासा एकादश छद्म–स्थतामुष्य विभोर्मता । ज्ञानवृक्षश्चंपकोऽभू–दष्टादश गणाधिपाः ॥ ५ ॥ त्रिंशत्सहस्राः साधूनां साध्वीनां खशरै (५०)र्मिताः । श्राद्धानां लक्ष-मेकं च द्वासप्ततिसहस्रयुक् ॥ ६ ॥ सार्द्धास्त्रिलक्षाश्चार्हत्यः सर्वज्ञानां तथा शताः । अष्टादश पंचदश मनःपर्यायवेदिनां ॥ ७ ॥ अवधिज्ञान-भाजाम–प्यष्टादश शताः स्मृताः । शतानि पंच दधतां पूर्वाणि च चतुर्दश ॥ ८ ॥ सवैक्रियाः सहस्रे द्वे वादिनां द्विशताधिकं । सहस्रमेकं गणभृ–न्मुख्यो मल्लिरिति श्रुतः ॥ ९ ॥ प्रवर्त्तिनी पुष्पवती सदाभक्त-नृपः प्रभोः । विजिताख्योऽभवद्यक्षो वरुणश्चतुराननः ॥ १० ॥ बीज-पूरं गदां बाणं शक्तिं करचतुष्टये । दक्षिणे नकुलं पद्मं धनुः पर्शुं च वामके ॥ ११ ॥ दधानोऽष्टभुजः सौख्यं कुर्याद् वृषभवाहनः । त्रिलो-

---

हजार वर्ष रह्या, राज्यावस्थामां पंदर हजार वर्ष रह्या (२) अने साडासात हजार वर्ष सुधी व्रतनुं पालन कर्युं–ए प्रमाणे कुल ३० हजार वर्षना आयुष्यनी प्रतिपालना करी. (३) मोहथी नहीं जीतायेला एवा आ प्रभुना दीक्षावसरनी शिबिका अपराजिता नामनी हती, राजगृहनगरमां ब्रह्मदत्त राजाए प्रथम पारणुं कराव्युं. (४) ११ मासनो छद्मस्थपर्याय हतो, ज्ञानवृक्ष चंपक नामनुं हतुं. मुनिसुव्रतस्वामीना परिवारमां १८ गणधर, (५) ३०००० साधुओ, ५०००० साध्वीओ, १७२००० श्रावको, (६) ३५०००० श्राविकाओ, १८०० केवळज्ञानी, १५०० मनःपर्यवज्ञानी (७) १८०० अवधिज्ञानी, ५०० चौदपूर्वी, (८) २००० वैक्रियलब्धिवाळा अने १२०० वादी थया. मल्लि नामे मुख्य गणधर, (९) पुष्पवती नामे प्रवर्त्तिनी अने विजित नामनो राजा सदा प्रभुनो भक्त थयो. वरुण नामनो यक्ष चार मुजावाळो, बीजपूर, गदा, बाण ने शक्ति जमणा चार हाथमां अने नकुल, पद्म, धनु ने परशु डाबा चार हाथमां धारण करनारो कुल आठ भुजावाळो, वृषभना वाहनवाळो, त्रण लोचन-वाळो, श्वेत वर्णवाळो, जटा मुकुटथी भूषित एवो ते प्रभुना भक्तोने सुख करनारो थयो.

चनः श्वेतवर्णो जटामुकुटभूषितः ॥ १२ ॥ वरदं चाक्षसूत्रं च या दक्षिणकरद्वये । धत्ते तथा बीजपूरं शक्तिं वामकरद्वये ॥ १३ ॥ सा भद्रासनमारूढा स्वर्णवर्णा चतुर्भुजा । तस्याच्छुप्ता बभौ देवी नरदत्ता मतांतरे ॥ १४ ॥ इति श्रीमुनिसुव्रतः ॥

जंबूद्वीपस्य भरते कौशांब्यां पुरि भूपतिः । सिद्धार्थो नंदगुर्वंते परिव्रज्यामुपाददे ॥ १५ ॥ ततोऽभूत्प्राणतस्वर्गे विंशत्यर्णवजीवितः । उदात्तवैभवो देव-स्ततश्च्युत्वा स्थितिक्षये ॥ १६ ॥ विदेहदेशे मिथिला-पुर्यां विजयभूपतेः । वप्राराज्ञीकुक्षिरत्नं नमिनामा जिनोऽभवत् ॥ १७ ॥ आश्विनस्य पौर्णमासी श्रावणस्यासिताष्टमी । नवम्याषाढस्य कृष्णा मार्गस्यैकादशी सिता ॥ १८ ॥ राधस्य दशमी कृष्णा कल्याणकदिना इति । सर्वेष्वप्यश्विनी धिष्ण्यं राशिर्मेषः स्मृतः प्रभोः ॥ १९ ॥ अष्टघस्राधिका मासा नवाभूद्गर्भस्थितिः । नीलाब्जं लक्ष्म चापानि देहः पंचदशोच्छ्रितः ॥ २० ॥ गर्भस्थिते प्रभौ दुर्ग-रोधिनो रिपवो

(१०-१२) देवी अच्छुप्ता नामनी जमणा बे हाथमां वरद ने अक्षसूत्र अने डावा बे हाथमां बीजपुर ने शक्तिने धारण करनारी, भद्रासनपर आरूढ थयेली, स्वर्ण सरखा वर्णवाळी, चार भुजावाळी थइ. तेनुं मतांतरे नरदत्ता एवुं बीजुं नाम छे. (१३-१४) इति श्रीमुनिसुव्रतः ॥

श्रीनमिनाथ वर्णन—जम्बूद्वीपना भरतक्षेत्रमां कौशांबीपुरीमां सिद्धार्थ नामे राजा हतो. तेणे नंदगुरुनी पासे चारित्र अंगीकार कर्युं. (१५) मरण पामीने प्राणत नामना दशमा देवलोकमां वीश सागरोपमने आउखे मोटी समृद्धिवाळो देव थयो. स्थितिक्षये त्यांथी च्यवीने विदेहदेशमां मिथिला नगरीमां विजय राजानी वप्रा राणीनी कुक्षिथी नमि नामे पुत्रपणे उत्पन्न थइ तीर्थंकर थया. (१६-१७) आश्विन शुदि १५, श्रावण वदि ८, आषाढ वदि ९, मागशर शुदि ११ अने वैशाख वदि १०—ए पांच कल्याणकना दिवसो जाणवा. पांचे कल्याणकमां नक्षत्र अश्विनी जाणवुं. प्रभुनी राशि मेष जाणवी. (१८-१९) गर्भस्थिति नव मास ने आठ दिवसनी, नील कमळनुं लांछन अने पंदर धनुष्य उंचो देह जाणवो. (२०) प्रभु गर्भमां हता त्यारे किल्लाने रोकीने रहेला

नताः । तस्मान्नाम्ना नमी रागा–घरीणां नमनेन वा ॥ २१॥ षड्भिश्च शरदां लक्षै–र्मुनिसुव्रतनिर्वृतेः । दशवर्षसहस्रोने–रजायत नमिप्रभुः ॥ २२ ॥ लक्षाणि पंच वर्षाणां सहस्रा वार्द्धिदिग्मिताः (८४) । जिनायुश्चावशिष्यंते तदा तुर्यारके ध्रुवं ॥ २३ ॥ सार्द्धे वर्षसहस्रे द्वे कुमारत्वेऽवसद्विभुः । पंच वर्षसहस्राणि प्राज्यं राज्यमपालयत् ॥ २४ ॥ पुनः सार्द्धे सहस्रे द्वे पालयामास संयमं । दशाब्दानां सहस्राणि सर्वमायुरपूपुरत् ॥ २५ ॥ शिविका देवकुर्वाख्या श्रीनमिस्वामिनो व्रते । आद्यां वीरपुरे भक्त्या दिन्नो दत्ते स्म पारणां ॥ २६ ॥ मासा नवैव छाद्मस्थ्यं बकुलो ज्ञानभूरुहः । प्रभोर्गणभृतः सप्त–दश पेशलसंयमाः ॥ २७ ॥ महर्षीणां सहस्राणि विंशतिः कीर्त्तितान्यथ । साध्वीनामेकचत्वारिं–शदेव च सहस्रकाः ॥ २८ ॥ लक्षं सहस्रैः सप्तत्या समन्वितमुपासकाः । लक्षास्तिस्रोऽष्टचत्वारिं–शत्सहस्राण्युपासिकाः ॥२९॥ केवलज्ञानिनामेकं सहस्रं षट्शताधिकं । शता द्वादश पंचाशाः षष्ट्याढ्या वा मनोविदां ॥ ३० ॥ अवधिज्ञानिनां षड्भिः सहस्रमधिकं शतैः ।

राजाओ आवीने नम्या तेथी तेम ज रागादि शत्रुओने नमावनार होवाथी नमि नाम स्थापन करवामां आव्युं. (२१) मुनिसुव्रतस्वामीना निर्वाणथी दश हजार वर्ष न्यून छ लाख वर्ष व्यतीत थये नमिनाथनो जन्म थयो. (२२) ते वखते चोथो आरो पांच लाख ८४००० वर्ष अने प्रभुना आयुना १०००० वर्ष जेटलो बाकी रह्यो हतो. (२३) नमिप्रभुए अढी हजार वर्ष कुमारपणामां व्यतीत कर्या, पांच हजार वर्ष प्राज्य एवा राज्यनी प्रतिपालना करी (२४) अने अढी हजार वर्ष चारित्रनी प्रतिपालना करी. ए रीते दश हजार वर्षनुं आयुष्य पूर्ण कर्युं. (२५) नमिस्वामीना दीक्षावसरे शिबिका देवकुरु नामनी हती, प्रथम पारणुं वीरपुरीमां दिन्न नामना राजाए भक्तिपूर्वक कराव्युं. (२६) प्रभुनो छद्मस्थपर्याय नव मासनो हतो, ज्ञानवृक्ष बकुल नामनुं हतुं. नमिप्रभुना परिवारमां १७ गणधर, शुद्ध संयमवाळा (२७) २०००० महर्षिओ, ४१००० साध्वीओ, (२८) १७०००० श्रावको, ३४८००० श्राविकाओ, (२९) १६०० केवळज्ञानीओ, १२५० अथवा १२६० मनःपर्यवज्ञानी, (३०) १६००

चतुर्दशपूर्वभृता–मध्यर्द्धा च चतुःशती ॥ ३१ ॥ सहस्रं वादिनां पंच–सहस्रा वैक्रियस्पृशां । शुभाख्यो गणभृन्मुख्यो–ऽनिलाख्या च प्रवर्त्तिनी ॥ ३२ ॥ प्रभोर्भक्तनृपश्चक्री हरिषेणाभिधोऽभवत् । यक्षश्च भृकुटिर्जीया–च्चतुर्वक्त्रस्त्रिलोचनः ॥ ३३ ॥ सुवर्णवर्णो वृषभ–वाहनो दक्षिणैर्भुजैः । बीजपूरं तथा शक्तिं मुद्गरं चाभयं दधत् ॥ ३४ ॥ वामैश्च नकुलं पर्शुं वज्रमेवाक्षसूत्रकं । दधानोऽष्टभुजः सम्यग्दृष्टिः प्रीणाति धार्मिकान् ॥ ३५ ॥ दधाना वरदं खड्ग–मपसव्ये करद्वये । बीजपूरककुंताभ्यां व्यग्रवामकरद्वया ॥ ३६ ॥ चतुर्भुजा श्वेतवर्णा गांधारी हंसवाहना । देवी दिशति कल्याणं श्रीनमिस्वामिसेविनां ॥ ३७ ॥ इति श्रीनमिः ॥

अभूद्राजा धनस्तस्य नाम्ना धनवती प्रिया । दंपती तावभूतां द्वौ सुरौ सौधर्मताविषे ॥ ३८ ॥ खेटश्चित्रगतिस्तस्य प्रिया रत्नवतीति तौ । भवे तृतीये जज्ञाते सौधर्मस्वर्गतश्च्युतौ ॥ ३९ ॥ ततो माहेंद्रनाके तौ देवौ जातौ प्रियौ मिथः । ततो धनस्य जीवोऽभू–द्राजा

अवधिज्ञानी, ४५० चौदपूर्वी, (३१) १००० वादी अने ५००० वैक्रियलब्धिवाळा मुनिओ हता. मुख्य गणधर शुभ नामना, प्रवर्त्तिनी अनिला नामनी (३२) अने हरिषेण चक्री प्रभुनो भक्त हतो. भृकुटि नामनो यक्ष चार मुखवाळो, त्रण लोचनवाळो, सुवर्णसमान वर्णवाळो, वृषभना वाहनवाळो, चार जमणी भुजामां बीजपूर, शक्ति, मुद्गर ने अभय तथा चार वाम भुजामां नकुल, परशु, वज्र ने अक्षसूत्रने धारण करनारो, आठ भुजावाळो अने सम्यग्दृष्टि धार्मिकजनोने प्रेम करनारो थयो. (३३–३५) गांधारी नामे देवी जमणा बे हाथमां वरद ने खड्ग तथा डाबा बे हाथमां बीजपूरक ने कुंतने धारण करनारी, चार भुजावाळी, श्वेत वर्णवाळी, हंसना वाहनवाळी श्रीनमिस्वामीने सेवन करनारनुं कल्याण करनारी थइ. (३६–३७) इति श्रीनमिः ॥

श्रीनेमिनाथवर्णन—पूर्वभवमां धन नामे राजा अने तेनी धनवती नामे प्रिया ते दंपती मरण पामीने सौधर्म देवलोकमां बंने देव थया. (३८) त्यांथी च्यवीने चित्रगति नामे विद्याधर ने तेनी प्रिया रत्नवती नामे त्रीजा भवे थया. (३९) तेओ मरण पामीने माहेंद्र नामना चोथा देवलोकमां बंने देव थया. त्यांथी च्यवीने धननो

नाम्नापराजितः ॥ ४० ॥ धनवत्याश्च जीवोऽभू-दपराजितभूपतेः । राज्ञी प्रीतिमती जातौ ततो द्वावारणे सुरौ ॥ ४१ ॥ ततोऽपराजितस्यात्मा सुप्रतिष्ठाभिधो नृपः । मतांतरेऽभूच्छंखाख्यो जंबूद्वीपस्य भारते ॥ ४२ ॥ पुरे राजगृहेऽथास्य प्रियैवाभूद्यशोमती । जीवश्च्युत्वा प्रीतिमत्याः स्वर्गादारणसंज्ञकात् ॥ ४३ ॥ गुरोरतियशःपार्श्वा-त्तावुरीकृत्य संयमं । ज्येष्ठायुष्कौ सुहृद्देवौ जातौ द्वावपराजिते ॥ ४४ ॥ जीवोऽथ यो यशोमत्याः स च च्युत्वापराजितात् । अजायतोग्रसेनस्य नाम्ना राजीमती सुता ॥ ४५ ॥ सुप्रतिष्ठस्य जीवोऽथ ततश्च्युत्वापराजितात् । समुत्पेदे कुशार्त्ताख्ये देशे शौर्यपुरे पुरे ॥ ४६ ॥ समुद्रविजयाख्यस्य दशार्हस्य महीपतेः । सुतोऽभवच्छिवादेवी-कुक्षिजन्मा जिनेश्वरः ॥ ४७ ॥ कार्त्तिके द्वादशी कृष्णा श्रावणे पंचमी सिता । षष्ठी च श्रावणे शुक्ला-मावास्याश्विनमासि च ॥ ४८ ॥ आषाढस्याष्टमी शुक्ला कल्याणकदिनाः प्रभोः । चित्रानक्षत्रमेतेषु राशिः कन्याह्वयः स्मृतः ॥ ४९ ॥ दिनैरष्टाभिरधिका मासा गर्भस्थितिर्नव । शंखो लक्ष्म दशे-

जीव अपराजित नामे राजा थयो (४०) अने धनवतीनो जीव अपराजित राजानी राणी प्रीतिमती नामे थयो. त्यांथी मरण पामीने ते बंने आरण नामना अग्यारमा देवलोकमां देवपणे उत्पन्न थया. (४१) त्यांथी च्यवीने अपराजितनो जीव सुप्रतिष्ठ नामनो मतांतरे शंख नामनो जंबूद्वीपना भरतक्षेत्रमां राजगृहनगरमां राजा थयो. प्रीतिमतीनो जीव आरण नामना देवलोकथी च्यवीने ते राजानी यशोमती नामे प्रिया तरीके थयो. (४२-४३) अतियश नामना गुरु पासे संयम ग्रहण करीने ते बंने अपराजित विमानमां उत्कृष्ट आयुवाळा मित्र देव थया. (४४) अपराजित विमानथी च्यवीने यशोमतीनो जीव उग्रसेन राजानी राजीमती नामे पुत्री थयो. (४५) सुप्रतिष्ठनो जीव अपराजित विमानथी च्यवीने कुशार्त्त देशमां शौर्यपुर नामना नगरमां समुद्रविजय नामना दशार्ह महीपतिनी शिवादेवी राणीनी कुक्षिमां उत्पन्न थइ जिनेश्वर थयो. (४६-४७) कार्त्तिक वदि १२, श्रावण शुदि ५, श्रावण शुदि ६, आश्विन वदि ०)) अने आषाढ शुदि ८-ए पांच कल्याणकना दिवसो जाणवा. ए पांचे कल्याणकमां नक्षत्र चित्रा जाणवुं. राशि कन्या नामनी जाणवी. (४८-४९) नव मास ने आठ दिवसनी गर्भस्थिति, शंखनुं लांछन अने दश धनुष्यनुं शरीर जाणवुं. (५०)

१ अतियशसः इति भिन्ने वक्तव्ये समासश्चिन्त्यः.

श्वास-प्रमितो वपुरुच्छ्रयः ॥ ५० ॥ रिष्टरत्नमयीं चक्र-धारामैक्षत यत्प्रसूः । प्रभौ गर्भस्थिते रिष्ट-नेमिरित्याख्यया ततः ॥ ५१ ॥ अमंगलव्यपोहाया-ऽकारोऽत्र परिभाव्यतां । पापवृक्षे चक्रधारा-तुल्यो वा तत्तथाह्वयः ॥ ५२ ॥ एकवर्षसहस्रोनैः पंचभिः शरदां गतैः । लक्षैः श्रीनमिनिर्वाणात् श्रीनेमिरुदपद्यत ॥५३॥ श्रीनेमिगर्भावसरे पंचाशीतिः सहस्रकाः । शेषास्तुर्यारकेऽब्दानां जिनायुर्युक्तया(क्ता चा)भवन् ॥५४॥

कदाचित्कौतुकान्नेमि-र्वयस्यप्रेरितो ययौ । हरेरायुधशालायां तत्रा-स्त्राण्यखिलान्यपि ॥ ५५ ॥ लीलया कलयामास पांचजन्ये च वादिते । त्रस्तातुराश्वेभनरा सा पुरी चुक्षुभेऽखिला ॥ ५६ ॥ कृष्णोऽपि द्रुतमा-गत्य परीक्ष्य च विभोर्बलं । विषसादेति राज्यं मे सुखेनैष ग्रहीष्यति ॥ ५७ ॥ तत आकाशवागेव-मभून्नेमिरयं जिनः । प्रव्रजिष्यति कौमार्ये इत्युक्तं नमिनार्हता ॥ ५८ ॥ अभ्यर्थितो विवाहाय जलक्रीडामिषात्ततः । सांतःपुरेण कृष्णेन नर्ममर्मचटूक्तिभिः ॥ ५९ ॥ कृते मौने भगवता

माताए प्रभु गर्भमां हता त्यारे स्वप्नमां रिष्टरत्नमयी चक्रधारा जोयेली होवाथी रिष्टनेमि एवुं प्रभुनुं नाम प्रख्यात थयुं. (५१) रिष्ट शब्द अमंगळसूचक छे तेथी तेने दूर करवा माटे अ अक्षर उमेरीने अरिष्टनेमि कर्युं. अथवा प्रभु पापरूपी वृक्षमां चक्रधारातुल्य होवाथी ते रिष्टनेमि नाम पण यथार्थ थयुं. (५२) श्रीनमिनाथना निर्वाणथी एक हजार वर्ष न्यून पांच लाख वर्ष व्यतिक्रम्ये सते श्रीनेमिनाथनो प्रादुर्भाव थयो. (५३) श्रीनेमिनाथनी गर्भोत्पत्ति वखते तेमना आयुष्यसहित ८५००० वर्ष चोथो आरो शेष रह्यो हतो. (५४)

अन्यदा कदाचित् नेमिकुमार मित्रोनी प्रेरणाथी कृष्णवासुदेवनी आयुधशाळामां गया. त्यां रहेला बधा अस्त्रो लीलावडे कळी लीधा-तेनो उपयोग जाणी लीधो. पछी पांचजन्य शंख वगाड्यो. तेना स्वरथी हाथी, घोडा अने मनुष्यो त्रास पाम्या. आखी नगरी क्षोभायमान थइ. (५५-५६) कृष्ण उतावळे त्यां आव्या अने प्रभुना बळनी परीक्षा करीने खेद पाम्या. तेणे धार्युं के-'आ मारुं राज्य सुखे ग्रहण करी शकशे.' (५७) ते वखते आकाशवाणी थइ के-'आ नमिकुमार कौमारावस्थामां ज चारित्र ग्रहण करशे, एम नमिनाथ प्रभु कही गया छे.' (५८) पछी जळक्रीडाना मिषथी हास्य ने मर्मयुक्त चाटु उक्तिवडे अंतःपुरसहित कृष्णे विवाहने माटे नेमिप्रभुनी प्रार्थना करी. (५९) प्रभु मौन रह्या एटले सौए उद्घोषणा करी के-'विवाह स्वीकार्यो.' 'निषेध

सर्वैरुद्घोषितं ततः । विवाहः स्वीकृत इति न निषिद्धं हि संमतं ॥६०॥ ततः साडंबरं राजी–मत्याः कर्त्तुं करग्रहं । ययौ मुक्त्याप्तिसंकेत–मिव कर्त्तुं प्रियस्त्रियाः ॥ ६१ ॥ ततो जन्यजनातिथ्यं कर्त्तुमार्त्तान्नियंत्रितान् । पशून् वीक्ष्य परावृत्तः स प्राव्राजीद्दयामयः ॥६२॥ शतानि शरदां त्रीणि कुमारत्वेऽथ संयमे । शतानि सप्त सर्वायुः सहस्रं शरदां प्रभोः ॥ ६३ ॥ चतुष्पंचाशद्दिनानि छाद्मस्थ्यमभवद्विभोः । वरदत्तो द्वारिकाया–माद्यभिक्षां प्रभोर्ददौ ॥ ६४ ॥ शिबिका द्वारवत्याख्या वेतसो ज्ञानभूरुहः । अष्टादश गणाधीशा एकादश मतांतरे ॥ ६५ ॥ अष्टादश सहस्राः स्युः साधूनां गुणशालिनां । चत्वारिंशत्सहस्राश्च साध्वीनां विमलात्मनां ॥ ६६ ॥ श्रावकाणां लक्षमेको–नसप्ततिसहस्रयुक् । लक्षास्तिस्रः सहस्राः षट् त्रिंशच्चोपासिका मताः ॥ ६७ ॥ सातिरेकं पंचशत्या सहस्रं सर्ववेदिनां । सहस्रमेकं संपूर्णं मनःपर्यायवेदिनां ॥ ६८ ॥ सहस्रमवधिज्ञान–भाजां पंचशताधिकं । शतानि तस्य चत्वारि सच्चतुर्दशपूर्विणां ॥ ६९ ॥ लसद्वैक्रियलब्धीनां शताः पंचदशोदिताः । वादिनां स्युः

न कर्यो ते संमत गणाय छे.' (६०) पछी आडंबरसाथे राजीमतीनुं पाणीग्रहण करवा माटे चाल्या, ते जाणे पूर्वभवोनी प्रिय प्रियाने मोक्षप्राप्तिनो संकेत करवा गया होय एम लाग्युं. (६१) त्यां जतां मार्गमां जानमां आवनार अतिथिओनुं आतिथ्य करवा माटे नियंत्रित करेला पशुओनो आर्त्तस्वर सांभळीने दयामय एवा प्रभु पाछा वळ्या ने संयम ग्रहण कर्युं. (६२) नेमिप्रभुए कुमारावस्थामां त्रण सो वर्ष ने श्रमणावस्थामां सात सो वर्ष व्यतिक्रमाव्या. एकंदर हजार वर्षनुं आयुष्य पाळ्युं. (६३) प्रभुनो छद्मस्थकाळ मात्र ५४ दिवसनो ज थयो. प्रथम भिक्षा द्वारिकापुरीमां वरदत्ते प्रभुने आपी. (६४) दीक्षा अवसरे शिबिका द्वारवती नामनी हती अने ज्ञानवृक्ष वेतस नामनुं हतुं.

नेमिप्रभुना परिवारमां १८ मतांतरे ११ गणधर, (६५) गुणशाळी एवा १८००० मुनिओ, निर्मळ आत्मावाळी चाळीश हजार साध्वीओ, (६६) १६९००० श्रावको, ३३६००० श्राविकाओ, (६७) १५०० केवळज्ञानी, १००० मनःपर्यवज्ञानी, (६८) १५०० अवधिज्ञानी, ४०० चौदपूर्वी, (६९) १५०० वैक्रियलब्धिवाळा अने देवोथी

शतान्यष्टा–वजय्यानां सुरैरपि ॥ ७० ॥ वरदत्तो गणी मुख्यो यत्तदिन्ना प्रवर्त्तिनी । पितृव्यपुत्रः कृष्णाख्यो वासुदेवश्च सेवकः ॥ ७१ ॥ मातुलिंगं च परशुं बिभ्रच्चक्रं च दक्षिणे । करत्रयेऽथ नकुलं शूलं शक्तिं च वामके ॥ ७२ ॥ गोमेधयक्षस्त्रिमुखः श्यामः पुरुषवाहनः । षड्भुजो नेमिभक्तानां वितनोति समीहितं ॥ ७३ ॥ आम्रलुंबिपाशयुक्ता–पसव्य-करयामला । पुत्रांकुशव्यग्रवाम–करयुग्माधिकद्युतिः ॥ ७४ ॥ मृगेंद्र-वाहना जात्य–स्वर्णज्योतिश्चतुर्भुजा । श्रीनेमिभक्तान् पात्यंबा–देव्यंबेव हितावहा ॥ ७५ ॥ इति श्रीनेमिः ॥

कमठो मरुभूतिश्च द्वावभूतां सहोदरौ । ब्राह्मणौ कमठस्तत्र भ्रातुर्जायामरीरमत् ॥ ७६ ॥ ज्ञातः कुर्वंस्तमन्यायं कदाचिन्मरुभूतिना । भूपाय ज्ञापितस्तेना–प्यन्यायीति विडंबितः ॥ ७७ ॥ अनात्मज्ञस्तत-श्चासौ भ्रातरि द्वेषमुद्वहन् । तापसोऽभूत्सोदरेण खिंस्यमानश्च तं न्यहन् ॥ ७८ ॥ मरुभूतिरभून्मृत्वा श्वेतेभः कमठः पुनः । महाविषः कुर्कुटाहि–

पण अजय्य एवा ८०० वादी थया. (७०) गणधरमां मुख्य वरदत्त, प्रवर्त्तिनी यक्ष-दिन्ना अने काकाना पुत्र कृष्ण वासुदेव मुख्य सेवक थया. (७१) गोमेध नामनो यक्ष जमणी बाजुना त्रण हाथमां मातुलिंग, परशु ने चक्र अने डाबी बाजुना त्रण हाथमां नकुल, शूळ ने शक्तिने धारण करनारो, त्रण मुखवाळो, श्यामवर्णवाळो, पुरुषना वाहनवाळो अने छ भुजावाळो नेमिनाथना भक्तोना वांच्छित पूरनार थयो. (७२–७३) अने अंबा नामे देवी जमणा बे हाथमां आम्रलुंबी ने पाश तथा डाबा बे हाथमां पुत्र ने अंकुशने धारण करनारी, अधिक कांतिवाळी, सिंहना वाहनवाळी, जातिवंत स्वर्ण जेवा वर्णवाळी, चार भुजावाळी श्रीनेमिनाथना भक्तनी मातानी जेवी हितावह ने रक्षण करनारी थइ. (७४–७५) इति श्रीनेमिः ॥

श्रीपार्श्वनाथवर्णन—कमठ अने मरुभूति नामे बे सहोदर बंधु ब्राह्मणजातिना हता, तेमां कमठ भाइनी स्त्रीसाथे लुब्ध थयो. (७६) आवो अन्याय करता तेने एक वखत मरुभूतिए जाण्यो एटले तेणे ते हकीकत राजाने जणावी. राजाए कमठने अन्यायी जाणीने तेनी विडंबना करी (काढी मूक्यो). (७७) अनात्मज्ञ (पोतानी भूल-ने नहीं समजनार) एवो ते भाइनी उपर द्वेष वहन करतो सतो तापस थयो. भाइए तेनी वधारे फजेती करी तेथी तेणे तेने हणी नाख्यो. (७८) मरुभूति मरण पामीने श्वेत

दंष्टस्तेनाहिना मृतः ॥ ७९ ॥ गजः सुरः सहस्रारे स सर्पोऽभूच्च नारकः । नारकोऽभूत्पुनः सर्पः स देवोऽभूच्च खेचरः ॥ ८० ॥ खेचरोऽथाच्युतस्वर्गे सर्पश्च नरके ययौ । ततोऽच्युतसुरः पृथ्वी–नाथोऽभूच्छबरः परः ॥ ८१ ॥ राजा ग्रैवेयके देवः शबरोऽभूच्च नारकः । नारकोऽसौ मृगेंद्रोऽभूद्–ग्रैवेयकः सुरः पुनः ॥ ८२ ॥ अयोध्यायां महापुर्यां जंबूद्वीपस्य भारते । आनंदनामा भूपोऽभू–द्दामोदरगुरोः स च ॥ ८३ ॥ पार्श्वचरित्रे तु महाविदेहे सुवर्णबाहुनामा चक्री अष्टमभवे भगवानासीदिति दृश्यते. चारित्रं प्राप्य सिंहेन तेन क्षुण्णोऽपि स क्षमः । देवोऽभूत्प्राणतस्वर्गे विंशत्यंभोनिधिस्थितिः ॥ ८४ ॥ सिंहश्च मृत्वा नरके ययावेवं च पंचसु । भवेषु मरुभूत्यात्मा मारितः कमठात्मना ॥ ८५ ॥ ततः कमठजीवोऽसा–वुध्धृत्य नरकात्ततः । कठो दरिद्रविप्रोऽभू–त्क्रमाद्दुःखेन तापसः ॥ ८६ ॥ मरुभूतेरथो जीव–श्च्युत्वा प्राणततावि॰षात् । काशीदेशे वाराणस्यां पुर्यामाश्चर्यकृच्छ्रियां ॥ ८७ ॥ अश्वसेनस्य

हाथी थयो. कमठ महाविषवाळो कुर्कुट जातिनो सर्प थयो. तेना डसवाथी हाथी मरण पाम्यो. (७९) ते आठमा सहस्रार देवलोकमां देव थयो. ते सर्प नारकी थयो. नरकमांथी नीकळीने ते पाछो सर्प थयो. देव च्यवीने खेचर (विद्याधर) थयो. (८०) खेचर मरण पामीने बारमा देवलोके गयो. सर्प मरीने नरके गयो. अच्युतदेव च्यवीने पृथ्वीनाथ (राजा) थयो. बीजो नरकमांथी नीकळीने भिल्ल थयो. (८१) राजा मरण पामीने ग्रैवेयकमां देव थयो. भिल्ल नरके गयो. ते नारकी त्यांथी नीकळीने सिंह थयो. ग्रैवेयकसुर त्यांथी च्यवीने जंबूद्वीपना भरतमां अयोध्या नामनी महापुरीमां आनंद नामे राजा थयो. (पार्श्वनाथचरित्रमां आठमे भवे महाविदेहमां सुवर्णबाहु नामे चक्री थया एम जणावेल छे.) हवे आनंद राजा दामोदर नामना गुरुपासे चारित्र अंगीकार करीने सिंहना पराभवथी मरण पामी प्राणत नामना दशमा स्वर्गमां वीश सागरोपमनी स्थितिवाळा देव थया. (८२–८४) सिंह मरण पामीने नरके गयो. आ प्रमाणे पांच भवमां कमठना जीवे मरुभूतिना जीवने मरण पमाड्यो. (८५) कमठनो जीव नारकीमांथी उद्धरीने कठ नामनो दरिद्री ब्राह्मण थयो. ते अनुक्रमे दुःखने लीधे तापस थयो. (८६) मरुभूतिनो जीव प्राणत देवलोकथी च्यवीने काशीदेशमां आश्चर्य उत्पन्न करे तेवी शोभावाळी वाराणसी नगरीमां अश्वसेन राजानी वामाराणीनी कुक्षिरूप शुक्तिथी

भूभर्तुः। सुतोऽद्भुतगुणोत्तरः। वामाराज्ञीकुक्षिशुक्ति–मुक्ताफलमभूज्जिनः ॥ ८८ ॥ कृष्णा चतुर्थी चैत्रस्य पौषस्य दशमी सितिः। पौषस्यैकादशी कृष्णा चतुर्थी चासिता मधौ ॥ ८९ ॥ श्रावणस्याष्टमी शुक्ला कल्याणानां दिना इमे। विशाखाधिष्ण्यमेतेषु राशिश्च स्वामिनस्तुला ॥ ९० ॥ प्रभोर्गर्भस्थितिर्मासा नव षड्भिर्दिनैर्युताः। भुजंगो लांछनं हस्ता नवैव वपुरुच्छ्रयः ॥ ९१ ॥ रात्रौ यांतमहिं पार्श्वे–ऽपश्यद्गर्भक्षणे प्रसूः। ततः पार्श्वाभिधः स्वामी त्रैलोक्यं पश्यतीति वा ॥ ९२ ॥ श्रीनेमिनाथनिर्वाणात् त्र्यशीत्याब्दसहस्रकैः। अध्यर्द्धषट्शतोपेतैः श्रीपार्श्वोऽजायत प्रभुः ॥ ९३ ॥ वामेयगर्भकालेऽस्य चतुर्थस्यारकस्य च। सार्द्धाः शतास्त्रयोऽब्दाना–मवशिष्टतया स्थिताः ॥ ९४ ॥ त्रिंशदब्दानि कौमार्ये व्रते वर्षाणि सप्ततिः। दिनानि तत्र चतुर–शीतिश्छद्मस्थमीरितं ॥ ९५ ॥ सर्वायुः शतमब्दानां विशाला शिबिका व्रते। धन्यः कोपकटग्रामे पारणां प्रथमां ददौ ॥ ९६ ॥

पंचाग्नीन् साधयन् कष्टं सासहिः कठतापसः। प्रभुणा दर्शिते

मुक्ताफळ समान-अद्भुत गुणोवाळो पुत्र थयो. (८७–८८) चैत्र वदि ४, पोस वदि १०, पोस वदि ११, चैत्र वदि ४ अने श्रावण शुदि ८–ए पांच कल्याणकनी तिथि जाणवी. पांचे कल्याणकमां विशाखा नक्षत्र जाणवुं अने स्वामीनी राशि तुला जाणवी. (८९–९०) गर्भस्थिति नव मास ने छ दिवसनी, सर्पनुं लांछन अने नव हाथ शरीरनी उंचाइ जाणवी. (९१) प्रभु गर्भमां हता त्यारे माताए रात्रे पडखे थइने जता सर्पने जोयो तेथी तेम ज त्रैलोक्यने (पासे होय तेम) जोनारा होवाथी प्रभुनुं नाम पार्श्व स्थापन कर्युं. (९२) नेमिनाथना निर्वाणथी ८३६५० वर्ष व्यतीत थये श्रीपार्श्वनाथ प्रभु थया. (९३) ते वखते एटले पार्श्वप्रभु गर्भमां आव्या त्यारे चोथो आरो ३५० वर्ष बाकी रह्यो हतो. (९४) पार्श्वप्रभु त्रीश वर्ष कौमारावस्थामां रह्या अने ७० वर्ष श्रमणपणे रह्या. कुल १०० वर्षनुं आयु भोगव्युं. तेमां ८४ दिवसो छद्मस्थपणामां व्यतीत थया. व्रतावसरे शिबिका विशाळा नामनी हती. प्रभुए प्रथम पारणुं कोपकट ग्रामे धन्यने त्यां कर्युं. (९५–९६)

हवे कठ तापस पंचाग्निने साधतो घणुं कष्ट सहन करतो हतो. प्रभु संसारी-

सर्पं प्रज्ज्वलत्काष्ठकोटरात् ॥ ९७ ॥ लज्जितस्तपसा तेन मेघमाली सुरोऽभवत् । ववर्षातितरां रोषा-दुपद्रोतुं जिनेश्वरं ॥ ९८ ॥ धरणेंद्र-त्वमासाद्य स सर्पो विचलासनः । भक्त्याच्छाद्य फणैरेन-मुपसर्गं न्यवर्त्तयत् ॥ ९९ ॥ ततस्त्रयोऽथवा सप्त फणा एकादशापि च । भवंति पार्श्वनाथस्ये-त्युक्तं पूर्वमहर्षिभिः ॥ १०० ॥

धातकी ज्ञानवृक्षः स्यात् श्रीपार्श्वस्य जगत्प्रभोः । प्रभोरष्टौ गणभृतो नामतः कीर्त्तयामि तान् ॥ १ ॥ शुभ १ स्तथार्यघोषश्च २ वशिष्ठो ३ ब्रह्मचार्यपि ४ । सोमश्च ५ श्रीधरश्चैव ६ वीरभद्रो ७ यशोऽभिधः ८ ॥ २ ॥ अयं श्रीकल्पसूत्रस्याभिप्रायः, आवश्यकसप्ततिशतस्थानकादिषु च दश गणभृत उक्ताः संति, किंच श्रीकल्पसूत्रपार्श्वचरित्रादौ श्रीपार्श्वस्य धातकी ज्ञानवृक्ष उक्तः, श्रीउत्तराध्ययनबृहद्वृत्तौ तु अशोक उक्त इति ज्ञेयं.

षोडशैव सहस्राणि साधूनां भावितात्मनां । अष्टात्रिंशत्सहस्राणि साध्वीनां च शुभात्मनां ॥ ३ ॥ श्राद्धानां सचतुःषष्टि-सहस्रं

पणामां तेनी पासे गयेला ते वखते काष्ठना कोटरमां बळतो सर्प देखाड्यो तेथी ते तापस बहु लज्जा पाम्यो. ते मरण पामीने मेघमाली देव थयो. पार्श्वजिनेश्वरे दीक्षा लीधा पछी छद्मस्थावस्थामां ते मेघमाळीए अत्यंत रोषथी तीव्रधाराए वरसाद वरसावीने तेमने उपद्रव कर्यो. (९७–९८) अग्निमां बळतो सर्प मरण पामीने धरणेंद्र थयेलो ते आसन चलित थवाथी त्यां आव्यो. तेणे भक्तिवडे प्रभुने फणाथी आच्छादित करीने ते उपसर्गनुं निवारण कर्युं, (९९) तेथी त्रण, सात अथवा अग्यार फणा पार्श्वनाथनी मूर्त्ति उपर, करवामां आवे छे एम पूर्वे महर्षिओए कह्युं छे. (१००)

श्रीपार्श्व जगत्प्रभुनुं ज्ञानवृक्ष धातकी नामनुं हतुं. तेमने मुख्य आठ गणधर थया तेना नाम हुं कहुं छुं (१) ते आ प्रमाणे—शुभ, आर्यघोष, वशिष्ठ, ब्रह्मचारी, सोम, श्रीधर, वीरभद्र अने यश. (२) आ कल्पसूत्रनो अभिप्राय छे. श्रीआवश्यकसूत्र अने सप्ततिशतस्थानकादिमां तो दश गणधरो कह्या छे. वळी श्रीकल्पसूत्र ने पार्श्वचरित्रादिमां श्रीपार्श्वनाथनुं ज्ञानवृक्ष धातकी कह्युं छे, पण श्रीउत्तराध्ययन बृहद्वृत्तिमां अशोक कह्युं छे.

श्रीपार्श्वनाथना परिवारमां भावितात्मा एवा १६००० साधुओ, शुभात्मा एवी ३८००० साध्वीओ, (३) १६४००० श्रावको, तेमां प्रभुनो अग्रेसर श्रावक सूर्य नामनो

लक्ष्मीरितं । अग्रेसरः श्रावकश्च प्रभोः सूर्य इति स्मृतः ॥ ४ ॥
लक्षास्तिस्रस्तथैकोन–चत्वारिंशत्सहस्रकाः । श्राविकाणां तासु मुख्या
सुनंदा नामतः स्मृता ॥ ५ ॥ सर्वज्ञानां सहस्रं च मनःपर्याय-
वेदिनां । पंचाशदधिकाः सप्त शताः प्रोक्ता मनीषिभिः ॥ ६ ॥ अवधि-
ज्ञानभाजां च चतुर्दश शताः प्रभोः । सच्चतुर्दशपूर्वाणा–मध्यर्द्धा
त्रिशती मता ॥ ७ ॥ विकुर्वणासमर्थानां शतान्येकादशाथ च । सुरा-
सुरैरजय्यानां षट्शती वादिनामभूत् ॥ ८ ॥ शुभाभिधो गणी मुख्य
आर्यदिन्नो मतांतरे । प्रवर्त्तिनी पुष्पचूला भक्तभूपः प्रसेनजित् ॥ ९ ॥
बीजपूरोरगोपेता–पसव्यकरयामलः । नकुलं च भुजंगं च दधद्वामकर-
द्वये ॥ १० ॥ श्यामवर्णः फणिफणा–चक्रमंडितमस्तकः । चतुर्भुजश्चतु-
र्वक्त्रो गजास्यः कूर्मवाहनः ॥ ११ ॥ नाम्ना श्रीवामनो यक्षः पार्श्वा-
ख्यश्च मतांतरे । श्रीपार्श्वनाथभक्तानां सान्निध्यं कुरुते सदा ॥ १२ ॥
आबिभ्रती पद्मपाशा–वपसव्ये करद्वये । सव्ये करद्वये कम्रौ दधती च
फलांकुशौ ॥ १३ ॥ चतुर्भुजा हेमवर्णा कुर्कुटोरगवाहना । श्रीपार्श्व
स्मरतां दत्ते देवी पद्मावती श्रियं ॥ १४ ॥ इति श्रीपार्श्वः ॥

कहेलो छे. (४) ३३९००० श्राविका, तेमां मुख्य सुनंदा नामनी कही छे. (५) १००० केवळज्ञानी ने ७५० मनःपर्यवज्ञानी बुद्धिमानोए कहेला छे. (६) १४०० अवधिज्ञानी, ३५० चौदपूर्वी, (७) ११०० वैक्रियविकुर्वणा करवाने समर्थ मुनिओ अने सुरासुरने पण अजय्य एवा ६०० वादी मुनिओ थया. (८) गणधरमां मुख्य शुभ नामे मतांतरे आर्यदिन्न नामे थया, प्रवर्त्तिनी पुष्पचूला अने भक्तराजा प्रसेनजित् थया. (९) श्रीपार्श्वनाथनो यक्ष वामन नामनो मतांतरे पार्श्व नामनो जमणा बे हाथमां बीजपूर ने सर्प अने डाबा बे हाथमां नकुल ने भुजंगने धारण करनारो, श्याम वर्णवाळो, फणिना फणाओना समूहथी मंडित मस्तकवाळो, चार भुजावाळो, चार मुखवाळो, हाथी जेवा मुखवाळो अने कूर्मना वाहनवाळो थयो. ते श्रीपार्श्वनाथ प्रभुना भक्तोनी नित्य सान्निध्य करे छे. (१०–१२) देवी पद्मावती नामनी जमणा बे हाथमां पद्म ने पाशने धारण करनारी अने डाबा बे हाथमां सुंदर एवा फळ ने अंकुशने धारण करनारी, चार भुजावाळी, सुवर्णसरखा वर्णवाळी, कुर्कुट जातिना सर्पना वाहनवाळी, श्रीपार्श्वनाथनुं स्मरण करनारने लक्ष्मी आपनारी थइ. (१३–१४) इति श्रीपार्श्वः ॥

पश्चिमेषु विदेहेषु नयसाराभिधोऽभवत् । ग्रामनाथः स काष्ठार्थं वनेऽगात् स्वाम्यनुज्ञया ॥ १५ ॥ भोजनावसरे वांछ–न्नतिथीनां समागमं । सार्थभ्रष्टान् ददर्शर्षीन् क्षुधार्त्तान्मार्गविच्युतान् ॥ १६ ॥ ततस्तान् परमप्रीत्या प्रणम्य परिचर्यं च । शुद्धाशनादिभिः पश्चा–त्स्वयं मार्गमदर्शयत् ॥ १७ ॥ प्रापितस्तत्र सम्यक्त्वं योग्योऽयमिति साधुभिः । ततो भवे द्वितीयेऽसौ सौधर्मे त्रिदशोऽभवत् ॥ १८ ॥ ततो मरीचिनामाभू–त्पुत्रो भरतचक्रिणः । स प्रवव्राज वैराग्या–त्समीपे वृषभप्रभोः ॥ १९ ॥ अधीतैकादशांगोऽपि सोऽथ तापादिपीडया । पीडितो भृशमुद्विग्न–श्चेतस्येवं व्यचिंतयत् ॥ २० ॥ मया न शक्यते वोढुं दुर्वहः संयमो न च । गृहेऽपि शक्यते गंतुं गर्हितेनावकीर्णिना ॥ २१ ॥ ततस्त्रिदंडिनामेष नव्यं वेषमकल्पयत् । विजहारार्हता सार्द्धं शुद्धं धर्मं प्ररूपयन् ॥ २२ ॥ अनेकान् राजपुत्रादीन् प्रतिबोध्येति शास्त्यसौ । जैनधर्मं प्रपद्यध्वं गत्वा श्रीजिनसन्निधौ ॥ २३ ॥

श्रीमहावीरजिनवर्णन— पश्चिम महाविदेहमां नयसार नामनो ग्रामाधिप हतो, ते पोताना स्वामीनी आज्ञाथी वनमां काष्टने माटे गयो. (१५) भोजनावसरे अतिथिना समागमने इच्छता एवा तेणे सार्थभ्रष्ट (साथथी छुटा पडी गयेला) क्षुधार्त्त अने मार्ग भूलेला एवा मुनिओ दीठा. (१६) एटले तेमने परम प्रीतिथी नमस्कार करीने शुद्ध अशनादि देवावडे परिचर्या करी अने पछी पोते साथे जइने मार्ग बताव्यो. (१७) मुनिए आ योग्य जीव छे एम जाणीने उपदेशवडे तेने समकित प्राप्त कराव्युं. त्यांथी बीजे भवे ते सौधर्म देवलोके देव थयो. (१८) त्यांथी च्यवीने त्रीजे भवे भरतचक्रीनो पुत्र मरीचि नामे थयो. तेणे वैराग्यथी वृषभ प्रभुनी पासे दीक्षा लीधी. (१९) अग्यार अंग भण्या छतां तापादिकनी पीडाथी पीडित थयेल ते अत्यंत उद्विग्न थइने आ प्रमाणे चिंतववा लाग्यो (२०) के–' आ दुःखे वहन करवा योग्य संयमने वहन करवाने हुं समर्थ नथी, तेम ज व्रत भंग थवाथी गर्हित थयेला मारे घरे पण जइ शकाय तेम नथी. ' (२१) आम विचारीने तेणे त्रिदंडीना नवा वेषनी कल्पना करी, अने शुद्ध धर्मने प्ररूपता सता प्रभुनी साथे विचरवा लाग्या. (२२) अनेक राजपुत्रादिकने प्रतिबोध पमाडीने ते एम कहेता के–' श्रीजिनेश्वर पासे जइने जैन धर्मने अंगीकार करो. ' (२३)

कदाचित्समवासार्षी–दयोध्यायां जिनेश्वरः। तत्रागतो नमस्यार्थं पप्रच्छ भरतः प्रभुं ॥ २४ ॥ एतस्यामवसर्पिण्या–मस्मिंश्च भरते प्रभो!। भविष्यति जिनः कोऽपि जनोऽस्यां पर्षदि स्थितः ॥ २५ ॥ तदोचे भगवानेष मरीचिस्तनयस्तव। चतुर्विंशोऽत्र भाव्यर्हन् महावीराह्वयो नृप ॥ २६ ॥ चक्री च प्रियमित्राख्यो विदेहेषु भविष्यति। प्रथमो वासुदेवोऽपि भरतेऽत्रैष एव च ॥ २७ ॥ भरतोऽपि ततो गत्वे–त्यूचे नत्वा कृतांजलिः। जिनश्चक्री हरिर्भावी मरीचे भाग्यवानसि ॥ २८ ॥ पारिव्राज्यं न ते वंदे न च ते चक्रिशार्ङ्गिता। भविष्यसि जिनो हि त्वं प्रणमामि ततो मुदा ॥ २९ ॥ एवमुक्त्वा विनीतांत–र्विनीते नृपतौ गते। मरीचिर्मानसाविष्टा–ऽमानमानोऽब्रवीदिति ॥ ३० ॥ आद्योऽहं वासुदेवानां पिता मे चक्रवर्त्तिनां। पितामहो जिनेंद्राणां ममाहो उत्तमं कुलं ॥ ३१ ॥ प्रथमो वासुदेवोऽहं मूकायां चक्रवर्त्यहं। चरमस्तीर्थराजोऽहं पर्याप्तमियतैव मे ॥ ३२ ॥ कुर्वन्नेवमहंकारं नीचैर्गोत्रं

अन्यदा श्रीजिनेश्वर अयोध्यामां समवसर्या. तेमने नमवा आवेला भरतचक्रीए प्रभुने पूछ्युं (२४) के–' आपनी पर्षदामां एवो कोइ मनुष्य छे के जे आ अवसर्पिणीमां आ भरतमां तीर्थंकर थाय ? ' (२५) भगवंते कह्युं के–'आ तारो पुत्र मरीचि हे नृप! आ चोवीशीमां ज चोवीशमा महावीर नामे तीर्थंकर थशे. (२६) वळी महाविदेहमां प्रियमित्र नामे चक्रवर्ती थशे अने आ भरतमां पहेला वासुदेव थशे.' (२७) आ प्रमाणे सांभळीने भरतचक्रीए मरीचि पासे जइने अंजळी जोडी नमस्कार करीने कह्युं के–' हे मरीचि! तु तीर्थंकर, चक्री ने वासुदेव थइश तेथी तुं भाग्यवान छुं. (२८) हुं तारा परिव्राजकपणाने के चक्री तथा वासुदेवपणाने नमस्कार करतो नथी परंतु तीर्थंकर थवानो छुं तेथी हुं हर्षवडे तने नमस्कार करुं छुं.' (२९) आ प्रमाणे कहीने विनीत अंतःकरणवाळा चक्री विनीतामां गये सते मनमां व्यापी गयुं छे अमान अभिमान जेने एवो मरीचि बोल्यो (३०) के—' हुं वासुदेवमां पहेलो, मारा पिता चक्रवर्तीमां पहेला अने मारा पितामह जिनेश्वरमां पहेला तेथी अहो! मारुं कुळ उत्तम छे. (३१) हुं पहेलो वासुदेव थइश, मूका नगरीमां चक्रवर्ती थइश ने छेल्लो तीर्थंकर थइश तेथी मने तमाम वस्तु प्राप्त छे. एटलाथी ज हुं खरेखरो उच्च छुं. ' (३२) आ प्रमाणे अहंकार

बबंध सः । जातिलाभकुलादीना–महंकारो हि पातयेत् ॥ ३३ ॥

कदाचित्कपिलं राज–कुमारं प्रत्यबूबुधत् । प्रैरयच्चापि चारित्रं ग्रहीतुं साधुसन्निधौ ॥ ३४ ॥ ततो बहुलकर्मायं मरीचिमवददिभो । किं सर्वथा न धर्मोऽस्ति भवदीयेऽत्र दर्शने ॥ ३५ ॥ ततो मरीचिरूचे तं भाविताबद्भवस्थितिः । मार्गे ममापि धर्मोऽस्ति मार्गे जैनेऽपि विद्यते ॥ ३६ ॥ उत्सूत्रवचसानेन मरीचिः समुपार्जयत् । संसारमेकपाथोधि–कोटाकोटिमितं तदा ॥ ३७ ॥ ततस्तुर्ये भवे ब्रह्म–लोकस्वर्गेऽभवत्सुरः । कोल्लाकसन्निवेशेऽथ विप्रोऽभूत्पंचमे भवे ॥ ३८ ॥ ततश्च मृत्वा भूयांसं कालं संसारमाटिटत् । भवास्ते च न गण्यंते भवानां सप्तविंशतौ ॥ ३९ ॥ षष्ठे भवे च स्थूणायां नगर्यां ब्राह्मणोऽभवत् । सौधर्मकल्पे देवोऽभूद्भवे मृत्वा च सप्तमे ॥ ४० ॥ भवेऽष्टमे ततश्चैत्य–सन्निवेशेऽभवद् द्विजः । ईशानदेवलोकेऽथ निर्जरो नवमे भवे ॥ ४१ ॥ मंदराख्ये सन्निवेशे ब्राह्मणो दशमे भवे । एकादशे भवे देवो–ऽभवत्स्वर्गे तृतीयके ॥ ४२ ॥ भवे च द्वादशे पुर्यां श्वेतांब्यां ब्राह्मणोऽभवत् ।

करवाथी तेमणे नीच गोत्र बांध्युं. जाति, लाभ अने कुळादिकनो मद (अहंकार) प्राणीने नीचा पाडी दे छे. (३३)

अन्यदा मरीचिना उपदेशथी कपिल नामनो राजकुमार प्रतिबोध पाम्यो. मरीचिए साधुपासे जइने चारित्र लेवा प्रेरणा करी, (३४) परंतु बहुलकर्मी एवा तेणे मरीचिने कह्युं के—' हे विभो ! शुं तमारा दर्शनमां सर्वथा धर्म नथी ? ' (३५) त्यारे मरीचि तेटली भवस्थिति वधवानी होवाथी बोल्या के—'मारा मार्गमां पण धर्म छे अने जैनमार्गमां पण धर्म छे.' (३६) आ उत्सूत्र वचनथी मरीचिए एक कोटाकोटी सागरोपम संसार वधार्यो. (३७) त्यांथी मरण पामीने चोथे भवे ब्रह्म देवलोकमां देव थया. त्यारपछी पांचमे भवे कोल्लाक सन्निवेशमां विप्र थया. (३८) त्यांथी मरण पामीने घणो काळ संसारमां रखड्या. तेमां करेला पारावार भवो मुख्य २७ भवोमां गणत्रामां आव्या नथी. (३९) छठ्ठा भवे स्थूणानगरीमां ब्राह्मण थया. मरण पामीने सातमे भवे सौधर्मकल्पमां देव थया. ४०) आठमा भवमां चैत्यसन्निवेशमां ब्राह्मण थया. नवमा भवे ईशान देवलोकमां देव थया. (४१) दशमे भवे मंदर नामना सन्निवेशमां ब्राह्मण थया. अग्यारमे भवे त्रीजा स्वर्गमां देव थया. (४२) बारमे भवे श्वेतांबीमां ब्राह्मण थया. तेरमे भवे चोथा देवलोकमां देव

त्रयोदशे च माहेंद्रे कल्पेऽभूत्रिदशो भवे ॥ ४३ ॥ ततः कियंतं कालं च भ्रांतोऽसौ भवसागरे। चतुर्दशे ततो राज–गृहेऽभूद्ब्राह्मणो भवे ॥४४॥ भवे पंचदशे ब्रह्म–लोकस्वर्गे सुरोऽभवत्। मरीच्यादिनृभवानां षट्के सोऽभूत्रिदंडिकः॥४५॥ षोडशे च भवे विश्व–भूत्याख्यो युवराजसूः। संभूतिमुनिपादांते पप्रेदे संयमं स च ॥ ४६ ॥ अन्यदा मासतपसः पारणायां स जग्मिवान्। मुनिर्गोचरचर्यायां तत्र धेनुहतोऽपतत् ॥४७॥ दृष्टः पितृव्यपुत्रेण हसितः कुपितो भृशं। गां शृंगयोर्गृहीत्वा द्राग् नभस्यभ्रमयद्रुषा ॥ ४८ ॥ निदानं कृतवांश्चैवं भूयासं तपसामुना। भूयिष्ठवीर्यो मृत्वा च महाशुक्रेऽभवत्सुरः ॥ ४९ ॥ वासुदेवस्त्रिपृष्ठाख्यो–ऽजायताष्टादशे भवे। बाल्येऽप्यदारयत्सिंहं यः स्थाम्ना जीर्णवस्त्रवत् ॥ ५० ॥ नरके सप्तमेऽथैको–नविंशतितमे भवे। सिंहोऽभूद्विंशतितमे चतुर्थे नरके गतः ॥ ५१ ॥ निर्गत्य नरकात्तुर्यात् स बभ्राम भवान् बहून्। द्वाविंशेऽथ भवे नृत्वं प्राप्य पुण्यान्युपार्जयत् ॥ ५२ ॥ भवे ततस्त्रयोविंशे। प्रियमि-

---

थया. (४३) त्यारपछी पाछा केटलोक काळ संसारसागरमां भम्या. चौदमे भवे राजगृहमां ब्राह्मण थया. (४४) पंदरमे भवे पांचमा ब्रह्मदेवलोकमां देव थया. मरीचि विगेरे छ मनुष्य भवोमां ते त्रिदंडी थया हता. (४५) सोळमे भवे विश्वभूति नामे युवराज थया. तेमणे संभूतिमुनिनी पासे दीक्षा लीधी. (४६) अन्यदा मासखमणने पारणे विश्वभूति मुनि गोचरचर्या माटे शहेरमां गया. त्यां एक गायना धक्काथी मुनि पडी गया. (४७) ते जोइने तेना काकानो पुत्र विशाखनंदी हस्यो. ते जोइ मुनिने घणो कोप उत्पन्न थयो. तेणे गायने शींगडावडे पकडी क्रोधथी आकाशमां फेरवी फेंकी दीधी (४८) अने नियाणुं कर्युं के—' मारा आ घणा तपना प्रभावथी हुं घणी शक्तिवाळो थाउं. ' सत्तरमे भवे महाशुक्र नामना सातमा देवलोकमां देव थया. (४९) अढारमे भवे त्रिपृष्ठ नामे वासुदेव थया. बाल्यावस्थामां ज तेणे सिंहने पोताना बळवडे जीर्ण वस्त्रनी जेम फाडी नाख्यो. (५०) ओगणीशमे भवे सातमी नरकमां नारकी थया. वीशमे भवे सिंह थया. २१ मे भवे चोथी नरके नारकी थया. (५१) चोथी नरकमांथी नीकळीने ते (त्रीजी वार) घणा भवमां भम्या. २२ मा भवे मनुष्यपणुं पामीने पुण्य उपार्जन कर्युं, (५२) तेथी २३ मे भवे प्रियमित्र नामे चक्रवर्त्ती थया. ते चक्री चारित्र

त्राभिधोऽभवत् । चक्रभृत्स च चारित्रं धृत्वा शुक्रेऽभवत्सुरः ॥ ५३ ॥ ततश्च्युत्वेह भरत-क्षेत्रेऽहिच्छत्रिकापुरे । जितशत्रुमहीपाल-भद्रादेव्योः सुतोऽभवत् ॥ ५४ ॥ पंचविंशतिलक्षाब्द-जीवितो नंदनाह्वयः । दीक्षां लक्षाब्दशेषायु-राददे पोट्टिलाद्गुरोः ॥ ५५ ॥ अयमावश्यकाभिप्रायः, समवायांगसूत्रवृत्त्योस्तु भगवान् पोट्टिलाभिधानो राजपुत्रो बभूव, तत्र वर्षकोटिं प्रव्रज्यां पालितवान्, ततो नंदनाभिधानो राजसूरित्युक्तमस्तीति ज्ञेयं. यावज्जीवं ततो मास-क्षपणानि निरंतरं । कुर्वन् स विंशतिस्थाना-न्याराध्यार्हत्यमार्जयत् ॥ ५६ ॥ सुरोऽभूत्प्राणतस्वर्गे षड्विंशतितमे भवे । विंशत्यब्ध्यायुर्विमाने पुष्पोत्तरावतंसके ॥ ५७ ॥

भवे ततः सप्तविंशे ग्रामे ब्राह्मणकुंडके । विप्रस्यर्षभदत्तस्य देवानंदाह्वयस्त्रियां ॥ ५८ ॥ मरीचिभवबद्धेन स नीचैर्गोत्रकर्मणा । कुक्षौ प्रभुक्तशेषेण विश्वेशोऽप्युदपद्यत ॥ ५९ ॥ अर्हंतश्चक्रिणश्चैव सीरिणः शार्ङ्गिणोऽपि च । तुच्छान्वयेषूत्पद्यंते कदाचित्कर्मदोषतः ॥ ६० ॥ जायंते तु कदाप्येते तादृग्वंशेषु नोत्तमाः । इति दत्तोपयोगस्य सुरेंद्रस्यानु-

---

लइने २४ मे भवे महाशुक्र (७ मा) देवलोकमां देव थया. (५३) त्यांथी च्यवीने २५ मे भवे आ भरतक्षेत्रमां अहिछत्रिका नगरीमां जितशत्रु राजा ने भद्रादेवीना पुत्र थया. (५४) त्यां तेनुं नंदन नाम पाडयुं, तेमनुं २५ लाख वर्षनुं आयुष्य हतुं. एक लाख वर्ष बाकी रह्या त्यारे पोट्टिल नामना गुरुपासे चारित्र लीधुं. (५५) आ आवश्यकसूत्रनो अभिप्राय छे. समवायांगसूत्र ने तेनी वृत्तिमां तो भगवान पोट्टिल नामना राजपुत्र थया. त्यां एक कोटि वर्ष प्रव्रज्या पाळी आनते देव थया. त्यारपछी नंदन नामे राजपुत्र थया एम कह्युं छे. नंदन मुनिए यावज्जीव निरंतर मासखमण कर्या अने वीशस्थानक आराधवावडे अरिहंत नामकर्म उपार्जन कर्युं. (५६) छवीशमे भवे प्राणत नामना दशमा देवलोके वीश सागरोपमना आयुवाळा पुष्पोत्तरावतंसक विमानमां देव थया. (५७)

त्यारपछी २७ मे भवे ब्राह्मणकुंडग्रामे ऋषभदत्त ब्राह्मणनी देवानंदा नामनी स्त्रीनी कुक्षिमां मरीचिना भवमां बांधेल नीचगोत्रकर्म भोगवतां शेष रहेलुं तेना कारणथी विश्वेश (तीर्थंकर) थवाना छतां उत्पन्न थया. (५८-५९) अरिहंत, चक्री, वासुदेव, बळदेव कदाचित कर्मना दोषथी ब्राह्मणादि तुच्छ कुळमां उपजे, (६०) परंतु उत्तमपुरुषो तेवा वंशमां जन्मे तो नहीं ज. आ प्रमाणे उपयोग देवाथी शक्रेंद्रे जाण्युं तेथी

शासनात् ॥ ६१ ॥ पुरे क्षत्रियकुंडाख्ये सिद्धार्थस्य महीपतेः । त्रिशलाया महाराज्ञ्याः कुक्षावक्षीणसंपदः ॥ ६२ ॥ मुक्त्वा द्व्यशीत्यहोरात्रातिक्रमे नैगमेषिणा । अजायत सुतत्वेन चतुर्विंशो जिनेश्वरः ॥ ६३ ॥

एवं च—उसह १ ससि २ संति ३ सुव्वय ४ । नेमीसर ५ पास ६ वीर ७ सेसाणं ८ ॥ तेर १ सग २ बार ३ नव ४ नव ५ । दस ६ सगवीसा य ७ तिन्नि ८ भवा ॥ ६४ ॥ इति समर्थितं । श्रीसमवायांगे कोटिसमवाये 'तित्थकरभवग्गहणातो छट्ठे पोट्टिलभवग्गहणे' इति सूत्रे श्रीवीरस्य देवानंदागर्भस्थितिस्त्रिशलाकुक्ष्यागतिश्चेति भवद्वयं विवक्षितमस्तीति ज्ञेयं.

तेमणे आज्ञा करवाथी नैगमेषीदेवे अहीं आवीने क्षत्रियकुंड ग्राममां सिद्धार्थ राजानी अक्षीण संपदावाळी त्रिशला महाराणीनी कुक्षिमां प्रभुने व्याशी रात्री अतिक्रम्या पछी मूक्या अने त्यां चोवीशमा तीर्थंकर पुत्रपणे जन्म्या. (६१–६३)

समकित पाम्या पछीना भवोनी गणत्रीने अंगे कह्युं छे के—' ऋषभदेव, चंद्रप्रभु, शांतिनाथ, मुनिसुव्रत, नेमीश्वर, पार्श्व, वीर अने बाकीना १७ प्रभुना अनुक्रमे तेर–सात–बार–नव–नव–दश–सत्तावीश अने त्रण–त्रण भव जाणवा. ' (६४) श्रीसमवायांगे कोटिसमवाये—" तीर्थंकरना भवग्रहणथी (पाछला) छट्ठा पोट्टिलना भवग्रहणमां–एम कहेवावडे आ सूत्रमां श्रीवीरप्रभुना देवानंदागर्भस्थिति अने त्रिशलानी कुक्षिमां आगति एम बे भवनी जूदी विवक्षा करी छे एम जाणवुं. "

(श्रीसमवायांगसूत्रनी छापेली टीकामां पृष्ठ $\frac{१०६}{१}$ मां कह्युं छे के—भगवान पोट्टिल नामना राजपुत्र थया. त्यां एक क्रोड वर्ष प्रव्रज्या पाळी ते एक भव, त्यांथी देव थया ते बीजो भव, त्यांथी छत्राग्रनगरीमां नंदन नामे राजपुत्र थया ते त्रीजो भव, त्यांथी एक लाख वर्ष सर्वदा मासक्षपणवडे तप तपीने दशमा देवलोके पुष्पोत्तरवरविजयपुंडरीक नामना विमानमां देव थया ते चोथो भव. त्यांथी ब्राह्मणकुंड ग्राममां ऋषभदत्त ब्राह्मणनी भार्या देवानंदानी कुक्षिमां उत्पन्न थया ते पांचमो भव. त्यांथी ब्राशीमे दिवसे क्षत्रियकुंडग्रामनगरे सिद्धार्थ महाराजानी त्रिशला नामनी राणीनी कुक्षिमां इंद्रना आज्ञाकारी हरिनैगमेषि नामना देवे संहर्या ने तीर्थंकरपणे जन्म्या ते छट्ठो भव. ए रीते भव ग्रहण कर्या विना बीजी कोइ रीते भगवंतनुं छट्ठा भवग्रहणपणुं शास्त्रमां जाणवामां आव्युं नथी. आ रीते ज छट्ठा भवग्रहणपणुं कहेलुं छे. जे भवना ग्रहणथी आ छट्ठो भव ते भव आनाथी पाछळ गणतां छट्ठो ज थाय, तेथी तीर्थंकरना भवग्रहणथी पाछले छट्ठे पोट्टिलना भवे क्रोड वर्ष चारित्र पाळ्युं एम कहेवुं ते मळतुं आवे छे.)

आषाढे धवला षष्ठी चैत्रे शुक्ला त्रयोदशी । मार्गस्य दशमी कृष्णा वैशाखे दशमी सिता ॥ ६५ ॥ कार्त्तिकस्यामावसीनि कल्याणकदिनाः प्रभोः । अभूद्गर्भापहारे तु त्रयोदश्याश्विने सितिः ॥ ६६ ॥ फाल्गुन्य उत्तरा धिष्ण्यं कल्याणकचतुष्टये । तथा गर्भापहारेऽपि निर्वाणे स्वातिरिष्यते ॥ ६७ ॥ द्वयोर्महिलयोर्गर्भे स्थितिः संकलिता विभोः । नव मासाः सातिरेकाः सप्तभिः किल वासरैः ॥ ६८ ॥ श्रीपार्श्वनाथनिर्वाणाद्भूज्जन्मांतिमार्हतः । साधिकेनाष्टसप्तत्या शतेन शरदामिह ॥ ६९ ॥ श्रीवीरगर्भकाले च वर्षाणां पञ्चसप्ततिः तुर्यारकेऽवशिष्टाऽऽसीत् सार्धमासाष्टकाधिका ॥ ७० ॥ राशिरासीद्विभोः कन्या लांछनं च मृगाधिपः । देहोच्छ्रयः सप्त हस्ताः प्रशस्तांगद्युतिश्रियः ॥ ७१ ॥ गुणागतानि नामानि त्रीण्यभूवन् जगद्विभोः । वर्द्धमानः श्रमणश्च महावीर इति स्फुटं ॥ ७२ ॥ अवतीर्णे प्रभौ ग्राम–राष्ट्रादि यदवर्द्धत । ततः पितृभ्यां विहितमादिमं नाम सार्थकं ॥ ७३ ॥ तपस्यति श्राम्यतीति नाम श्रमण

अषाढ शुदि ६, चैत्र शुदि १३, मार्गशीर्ष वदि १०, वैशाख शुदि १० अने कार्तिक वदि ०)) ए पांच कल्याणकना दिवसो जाणवा. प्रभुनो गर्भापहार आसो वदि १३ शे जाणवो. चार कल्याणकमां उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र जाणवुं. गर्भापहारमां पण ते नक्षत्र जाणवुं अने निर्वाणमां स्वाति नक्षत्र जाणवुं. (६५–६७) प्रभुनी बंने महिलाना गर्भनी मळीने एकत्रित स्थिति सात दिवसे करीने अधिक नव मासनी जाणवी. (६८) श्रीपार्श्वनाथना निर्वाणथी कांइक अधिक १७८ वर्षे वीरप्रभुनो जन्म जाणवो. (६९) श्रीवीरप्रभुना गर्भकाळे चोथो आरो ७५ वर्ष ने ८॥ मास बाकीमां हतो.[1] (७०) प्रभुनी राशि कन्या अने लंछन सिंहनुं जाणवुं. देहनी उंचाइ सात हाथनी अने प्रशस्त एवी अंगनी द्युति (कांति) तेम ज शोभा हती. (७१) गुणथी प्राप्त थयेला प्रभुना त्रण नाम हता. वर्धमान, श्रमण ने महावीर. (७२) प्रभु गर्भमां आव्या त्यारथी सिद्धार्थराजा ग्रामराष्ट्रादिथी वृद्धि पाम्या तेथी मातापिताए सार्थक एवुं पहेलुं वर्धमान नाम पाडयुं. (७३) तपस्या करवाथी, श्रम करवाथी श्रमण एवुं बीजुं सार्थक नाम

---

१ कुल २९३ वर्षे ने ८॥ मासमां प्रभु २९० वर्षे निर्वाण पामतां ३ वर्ष ने ८॥ मास चोथो आरो बाकी रहेशे.

इत्यभूत् । तृतीयं नाम शक्रेण विहितं तन्निशम्यतां ॥ ७४ ॥

प्रशशंसान्यदा शक्रः स्वामिधैर्यं स्वपर्षदि । अश्रद्दधानस्तत्कश्चि-द्देवो भूलोकमीयिवान् ॥ ७५ ॥ क्रीडति स्वामिनि क्रूर-सर्परूपमदी-दृशत् । निक्षिप्ते स्वामिना दूरं तस्मिन्निर्भीकचेतसा ॥ ७६ ॥ कुमार-रूपमाधाय चिक्रीड प्रभुणा सह । छलेन स्कंधमारोप्य प्रभुं स ववृधे भृशं ॥ ७७ ॥ तथाप्यभीतो भगवान् शनैर्मुष्ट्या जघान तं । ततः शक्रो ऽयधात्तुष्टो महावीराभिधं विभुं ॥ ७८ ॥ तथोक्तं-बालत्तणे वि सूरो पयइए गुरुपरक्कमो भयवं । वीरत्ति कयं नामं सक्केणं तुट्ठचित्तेणं ॥ ७९ ॥ श्रीयोगशास्त्रगच्छाचारवृत्त्यादौ तु यदा प्रभुणा जन्मोत्सवे मेरुः कंपितस्तदा शक्रेणैतन्नाम कृतमित्यस्तीति ज्ञेयं. पूर्ववैरिसंगमसुरोपहितकालचक्राप्रधृष्यत्वादिंद्रादयो वीरनाम्नानमुच्चैरुच्चेरुरिति तत्त्वार्थवृ०

स्वामी कनकवर्णांग-स्तथा पंचदशापरे । पद्मप्रभवासुपूज्यौ

थयुं. त्रीजुं महावीर नाम शक्रे पाडयुं तेनी हकीकत सांभळो-(७४)

अन्यदा शक्रेंद्रे पोतानी पर्षदामां स्वामीना धैर्यनी प्रशंसा करी. तेने नहीं सद्दहीने एक देव पृथ्वीपर आव्यो. (७५) तेणे क्रीडा करता एवा स्वामीनी पासे क्रूर सर्पनुं रूप देखाडयुं. एटले तेनाथी नहीं व्हीता चित्तवाळा प्रभुए तेने दूर फेंकी दीधो. (७६) एटले ते देव कुमारनुं रूप करीने प्रभुनी साथे रमवा आव्यो अने छळथी प्रभुने पोताना स्कंधपर चडावीने घणो ज वधवा लाग्यो; (७७) तथापि अभीत (नहीं भय पामेला) एवा भगवाने धीमेथी तेनापर मुष्टिवडे प्रहार कर्यो. (एटले देव संकोच पामी, अपराध खमावी स्वस्थानके गयो). आ हकीकतथी संतुष्ट थयेला इंद्रे प्रभुनुं महावीर एवुं नाम स्थापन कर्युं. (७८) कह्युं छे के—' बाळकपणामां पण शूर अने स्वभावे ज अति पराक्रमवाळा भगवाननुं वीर एवुं नाम तुष्टमान थयेला शक्रे स्थापन कर्युं. (७९) श्रीयोगशास्त्र ने गच्छाचारनी वृत्ति विगेरेमां तो ज्यारे प्रभुए जन्मोत्सव समये मेरुने कंपाव्यो त्यारे शक्रेंद्रे महावीर नाम स्थापन कर्युं एम कहेलुं छे तथा श्रीतत्त्वार्थनी वृत्तिमां ' पूर्ववैरी संगमसुरे करेला काळचक्रथी पण प्रभु डग्या नहीं त्यारे इंद्रादिक वीर नामथी उंचे स्वरे बोलता हवा ' एम कह्युं छे.

वीरप्रभुनो कनकसमान वर्ण हतो तेम ज बीजा १५ प्रभुनो पण तेवो वर्ण हतो,

पद्मरागारुणद्युती ॥ ८० ॥ नीलवर्णौ मल्लिपार्श्वौ–वुज्ज्वलौ नवमाष्टमौ । सजलांभोधरश्यामौ श्रीनेमिमुनिसुव्रतौ ॥ ८१ ॥

अनंगीकृतसाम्राज्यो गृहवासेऽवसद्विभुः । त्रिंशद्वर्षाणि चारित्रं ततश्च प्रत्यपद्यत ॥ ८२ ॥ षड्भिर्मासैः किलाभ्यर्द्धैः शरदो द्वादशाधिकाः । छद्मस्थता प्रभोस्तत्र यत्तपोऽभूत्तदुच्यते ॥ ८३ ॥ द्वे षण्मासक्षपणके तत्रैकं पंचभिर्दिनैः । न्यूनं नव चतुर्मास–क्षपणान्यकरोद्विभुः ॥ ८४ ॥ सार्द्धद्विमासक्षपणे त्रिमासक्षपणे अपि । द्वे द्वे द्विमासक्षपणा–न्यकार्षीत् षड् जिनेश्वरः ॥ ८५ ॥ सार्द्धैकमासक्षपणे द्वे मासक्षपणानि च । द्वादश द्वासप्ततिश्च पक्षक्षपणकान्यथ ॥ ८६ ॥ द्विघस्त्रा भद्रप्रतिमा महाभद्रा चतुर्दिना । प्रतिमा सर्वतोभद्रा दशभिर्दिवसैर्मिता ॥ ८७ ॥ एकोनत्रिंशदधिकं षष्ठभक्तशतद्वयं । त्रिशत्येकोनपंचाशा पारणानां समुच्चिता ॥ ८८ ॥ अष्टमानि द्वादशैकं प्रव्रज्यादिनमित्यसौ । सर्वसंकलने छद्मस्थताद्धा स्यात्पुरोदिता ॥ ८९ ॥ सर्वं चतुर्विधाहारं स्वामिनेदं तपः कृतं । द्वित्राण्यपि दिनानीह न च भुक्तं निरंतरं ॥ ९० ॥

पद्मप्रभ ने वासुपूज्यनी पद्मरागमणिनी जेवी रक्त कांति हती, (८०) मल्लिनाथ ने पार्श्वनाथ नील वर्णना हता, नवमा ने आठमा (सुविधिनाथ ने चंद्रप्रभ) उज्वळ वर्णना हता अने जळसहित अंभोधर (मेघ) समान श्याम वर्णवाळा श्रीनेमिनाथ ने मुनिसुव्रतस्वामी हता. (८१)

साम्राज्यने अंगीकार कर्या सिवाय त्रीश वर्ष प्रभु गृहवासमां रह्या. त्यारपछी चारित्र ग्रहण कर्युं. (८२) बार वर्ष ने साडाछ मास प्रभुनुं छद्मस्थपणुं रह्युं. तेमां प्रभुए जे तप कर्यो ते कहे छेः—(८३) वे छमासी–तेमां एक पांच दिवस ऊणो अने नव चउमासी तप प्रभुए कर्या. (८४) अढीमासी, त्रणमासी बबे ने बे मासक्षपण छ जिनेश्वरे कर्या. (८५) दोढमासी बे, मासक्षपण बार ने पाक्षिक तप ७२ कर्या. (८६) बे दिवसनी भद्र प्रतिमा, चार दिवसनी महाभद्र प्रतिमा ने दश दिवसनी सर्वतोभद्र प्रतिमा प्रभुए आराधी. (८७) २२९ छठ, बार अठम, एक प्रव्रज्यानो दिवस ने ३४९ कुल पारणाना दिवस–आ बधानी संकळना करवाथी पूर्वे कह्या प्रमाणे छद्मस्थपणानो काळ पूर्ण थाय छे. (८८–८९) आ तप चउविहारवडे स्वामीए कर्यो छे अर्थात् तपमां पाणी वापर्युं नथी अने निरंतर एटले उपराउपरी बे के त्रण दिवस पण आहार लीधो नथी. (९०)

नाप्रीतिमद्गृहे वासः १ स्थेयं प्रतिमया सदा २। न गेहिविनयः कार्यो ३ मौनं ४ पाणौ च भोजनं ५ ॥ ९१ ॥ अभिग्रहानिमान्पंचा-भिगृह्य परमेश्वरः। आर्यानार्येषु देशेषु विजहार क्षमानिधिः ॥ ९२ ॥ एवं विजहुर्वृषभ–नेमिपार्श्वजिनेश्वराः। आर्यानार्येषु शेषास्तु सदार्येष्वेव विंशतिः ॥ ९३ ॥ एकोनत्रिंशतं वर्षाण्यध्यर्द्धान्यंतिमो जिनः। पक्षो-नानि च सर्वज्ञ–पर्यायं पर्यपूरयत् ॥ ९४ ॥ बभार व्रतपर्यायं द्विचत्वा-रिंशदब्दकं। एवं द्विसप्ततिर्वर्षा–ण्यायुः सर्वमभूद्विभोः ॥ ९५ ॥ अयं कल्पसूत्राद्यभिप्रायः, समवायांगे तु साधिकानि द्विचत्वारिंशद्वर्षाणि व्रतपर्यायः, साधिकानि द्विसप्ततिवर्षाणि सर्वायुरित्युक्तमिति ज्ञेयं. तपो वृषभतीर्थेऽभू–दुत्कृष्टं वार्षिकं तथा। षाण्मासिकं वीरतीर्थे शेषेषु चाष्टमासिकं ॥ ९६ ॥ प्रमादकालोऽहोरात्र—प्रमितो वृषभेशितुः। अंतर्मुहूर्त्तं वीरस्य शेषाणां स न विद्यते ॥ ९७ ॥ श्रीवीरनेतुर्भूयांसः श्रीपार्श्वस्य च तेऽल्पकाः। द्वाविंशतेश्च शेषाणा–मुपसर्गा न जज्ञिरे ॥ ९८ ॥ शक्रन्यस्तं देवदूष्यं स्कंधे वृषभवीरयोः। संवत्सरं सातिरेकं

अप्रीतिवाळे स्थळे वास न करवो १, निरंतर काउसग्गध्याने उभा रहेवुं २, गृहस्थनो विनय न करवो ३, मौनपणे रहेवुं ४ अने हाथमां लइने ज भोजन करवुं ५ (९१) आ पांच अभिग्रह करीने क्षमानिधि एवा प्रभुए आर्य ने अनार्य देशोमां विहार कर्यो. (९२) ए रीते वृषभदेव, नेमिनाथ ने पार्श्वजिनेश्वरे पण आर्य अने अनार्य देशोमां विहार कर्यो छे. बाकीना वीश प्रभु आर्यदेशमां ज विचर्या छे. (९३) २९ वर्ष ने ५॥ मास प्रभुए सर्वज्ञपर्यायवडे परिपूर्ण कर्या छे. (९४) एकंदर व्रतपर्याय ४२ वर्षनो थवाथी कुल ७२ वर्षनुं आयु वीरप्रभुनुं पूर्ण थयुं छे. (९५) आ कल्पसूत्रादिनो अभिप्राय छे. सम-वायांगमां तो साधिक ४२ वर्ष व्रतपर्याय ने साधिक ७२ वर्षनुं सर्वायु कहेलुं छे. ऋषभ प्रभुना तीर्थमां उत्कृष्ट वार्षिक तप, वीरप्रभुना तीर्थमां छमासी तप ने बाकीना २२ प्रभुना तीर्थमां अष्टमासी तप करवामां आवतो हतो. (९६)

प्रमादकाळ ऋषभप्रभुनो एक अहोरात्र, वीरप्रभुनो अंतर्मुहूर्त्त अने बावीश प्रभुनो बिलकुल नहीं. (९७) श्री वीरप्रभुने घणा अने पार्श्वप्रभुने अल्प थया छे ने बावीश प्रभुने बिलकुल उपसर्गो थया ज नथी. (९८) शक्रे स्थापेलुं देवदूष्य ऋषभदेव तथा वीरप्रभुने

शेषाणां सर्वदा स्थितं ॥ ९९ ॥ अत्र श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रे श्रीऋषभदेवस्य श्रीकल्पसूत्रे श्रीमहावीरस्य साधिकं वर्षं देवदूष्यस्थितिरुक्ता, श्रीसप्ततिशतस्थानकग्रंथे च—सक्को य लक्खमुल्लं सुरदूसं ठवइ सव्वजिणखंधे । वीरस्स वरिसमहिअं सयावि सेसाण तस्स ठिई ॥ १ ॥ इत्युक्तमिति ज्ञेयं.

चंद्रप्रभाख्या शिबिका बहुलो भैक्ष्यमादिमं । कोल्लाकसन्निवेशेऽदात् सालो ज्ञानतरुः प्रभोः ॥ १००० ॥ अष्टावाद्यास्तद्भवे सिद्धा अर्हत्प्रथमभैक्ष्यदाः । शेषास्तृतीये सेत्स्यंति सिद्धाः केऽपि च तद्भवे ॥१॥ वासुपूज्यमल्लिनेमि—पार्श्ववीरजिनेश्वराः । प्रवव्रजुर्वयस्याद्ये—ऽनुपात्तराज्यसंपदः ॥ २ ॥ प्रवव्रजुर्भुक्तराज्याः शेषा वयसि पश्चिमे । मंडलेशाः परे तेषु चक्रिणः शांतिकुंथ्वराः ॥ ३ ॥ अभोगफलकर्माणौ मल्लिनेमिजिनेश्वरौ । निरीयतुरनुद्वाहौ कृतोद्वाहाः परे जिनाः ॥ ४ ॥ सार्वभौमोऽभवत्पूर्वं श्रीनाभेयजिनेश्वरः । इतो भवे तृतीयेऽन्ये जिनाः सर्वेऽपि पार्थिवाः

सा तिरेक संवत्सर सुधी अने शेष तीर्थंकरोने सर्वदा रहेलुं छे. (९९) श्री जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रमां श्रीऋषभदेवने अने श्रीकल्पसूत्रमां श्रीमहावीरने साधिक वर्ष देवदूष्यनी स्थिति कही छे. श्री सप्ततिशतस्थानक ग्रंथमां तो—'शक्र लाखमूल्यनुं देवदूष्य सर्व प्रभुना स्कंधपर स्थापन करे छे, ते वीरप्रभुने एक वर्ष झाझेरुं रह्युं छे अने बीजा सर्व प्रभुने कायम रह्युं छे.' एम कहेल छे.

दीक्षावसरे शिबिका चंद्रप्रभा नामनी अने प्रथम पारणुं कोल्लाकसन्निवेशमां बहुले कराव्युं. ज्ञानवृक्ष साल नामनुं जाणवुं. (१०००) प्रभुने प्रथम भिक्षा आपनारमां प्रथमना आठ तद्भवे सिद्ध थया छे बाकीना १६ प्रभुने पारणुं करावनार केटलाक तद्भवे ने केटलाक त्रीजे भवे सिद्ध थया छे. (१) वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ ने वीरप्रभु—ए पांच तीर्थंकरोए राज्यसंपदा स्वीकार्या सिवाय प्रथमावस्थामां ज प्रव्रज्या ग्रहण करी छे. (२) बाकीना १९ प्रभुए राज्य भोगवीने पश्चिम वयमां प्रव्रज्या ग्रहण करी छे. तेमां पण १६ मंडलिक राजा हता अने शांति, कुंथु ने अर ए त्रण चक्रवर्ती थया हता. (३) जेमने भोगफळकर्म नहोतुं एवा मल्लिनाथ ने नेमिनाथे विवाह कर्या विना चारित्र लीधुं अने बाकीना २२ प्रभुए विवाह कर्या पछी लीधेल छे. (४)

॥ ५ ॥ श्रीपार्श्वोऽपि तच्चारित्रानुसारेण चक्र्यासीदिति दृश्यते.

सुमतिर्नित्यभक्तेन मल्लिपार्श्वौ कृताष्टमौ । चतुर्थेन द्वादशान्ये कृतषष्ठाः प्रवव्रजुः ॥ ६ ॥ वासुपूज्यः शतैः षड्भि-र्मल्लिपार्श्वौ त्रिभिः शतैः । एको वीरः सहस्रैश्च चतुर्भिर्वृषभो नृणां ॥ ७ ॥ व्रतं भेजुः सहस्रेण सह शेषा वृषध्वजः । विनीतायां द्वारिकायां नेमिर्जन्मपुरेऽपरे ॥ ८ ॥ सिद्धार्थवन उद्याने प्राव्राजीद्वृषभः प्रभुः । वने विहारगेहाख्ये वासुपूज्यो जिनेश्वरः ॥ ९ ॥ श्रीधर्मो वप्रकाभिख्ये विंशो नीलगुहाह्वये । श्रीपार्श्व आश्रमपदे ज्ञातखंडेंतिमो जिनः ॥ १० ॥ सहस्राम्रवणे शेषा-श्चतुर्भिर्मुष्टिभिस्तथा । नाभेयः कृतवान् लोचं मुष्टिभिः पंचभिः परे ॥ ११ ॥ मल्लिश्रेयांससुमति-नेमिपार्श्वजिनेश्वराः । पूर्वाह्ने जगृहु-र्दीक्षां पश्चिमाह्ने परे जिनाः ॥ १२ ॥ आद्येनाद्यपारणायां लब्धोऽब्दे-नैक्षवो रसः । परमान्नं द्वितीयेऽह्नि लेभे सर्वैः परैर्जिनैः ॥ १३ ॥ बाल्ये सुधाभुजः सर्वे शुद्धाहाराशिनो व्रते । आद्यः कल्पद्रुफलभुग्-

---

श्री नाभेय जिनेश्वर (ऋषभदेव) पाछला त्रीजे भवे चक्रवर्ती हता; बीजा बधा सामान्य राजाओ हता. (५) ' श्री पार्श्व प्रभु तेना चरित्र अनुसारे पाछले त्रीजे भवे चक्री हता.'

सुमतिनाथे नित्यभक्तपणे, मल्लिनाथ ने पार्श्वनाथे अट्टम करीने, बार प्रभुए चतुर्थभक्त करीने अने बाकीना ९ प्रभुए छट्ठ करीने दीक्षा लीधी हती. (६) वासुपूज्ये ६०० नी साथे, मल्लिनाथ ने पार्श्वनाथे ३०० नी साथे, वीरप्रभुए एकला, ऋषभदेवे ४००० साथे अने बाकीना १९ प्रभुए हजार हजार मनुष्य साथे दीक्षा लीधी हती. ऋषभदेवे विनीतामां, नेमिनाथे द्वारिकामां अने बाकीना २२ प्रभुए जन्मवाळी नगरीमां ज दीक्षा लीधी. (७-८) वृषभप्रभुए सिद्धार्थवन उद्यानमां, वासुपूज्ये विहारगेह वनमां, धर्मनाथे वप्रक नामना वनमां, मुनिसुव्रते नीलगुहा नामना वनमां, पार्श्वनाथे आश्रमपद वनमां, वीरप्रभुए ज्ञातखंडवनमां अने बाकीना १८ प्रभुए सहस्राम्र वनमां चारित्र ग्रहण कर्युं. तथा ऋषभदेवे चारमुष्टि लोच कर्यो अने बीजा बधा प्रभुए पंचमुष्टि लोच कर्यो. (९-१०-११) मल्लिनाथ, श्रेयांसनाथ, सुमतिनाथ, नेमिनाथ अने पार्श्वनाथे पूर्वाह्ने दीक्षा लीधी अने बीजा १९ प्रभुए पश्चिमाह्ने लीधी. (१२) आद्य प्रभुने आद्य पारणुं एक वर्षे इक्षुना रसथी थयुं अने बाकीना बधा प्रभुए दीक्षाने बीजे ज दिवसे परमान्नवडे पारणुं कर्युं. (१३) बाळकाळमां सर्वे प्रभु अंगुठावडे अमृतभोजी, व्रत लीधा पछी सर्वे शुद्ध आहारना

गार्हस्थ्येऽन्येऽन्नभोजिनः ॥ १४ ॥ विनीतायाः पुरः शाखा—पुरे पुरिमतालके । उद्याने शकटमुखे वृषभः प्राप केवलं ॥ १५ ॥ बहिः श्रीजृंभिकाग्रामा—दुपर्जुवालिकातटं । केवलं प्राप वीरोऽन्ये स्वस्वदीक्षावनेषु च ॥ १६ ॥

श्रीपार्श्वनेमिनाभेय—मल्लीनामष्टमस्पृशां । केवलं वासुपूज्यस्य चतुर्थभक्तशालिनः ॥ १७ ॥ शेषाणां कृतषष्ठाना—मुत्पन्नं सन्नकल्मषं । सर्वेषामपि पूर्वाह्णे पश्चिमाह्णेंतिमप्रभोः ॥ १८ ॥ आद्ये समवसरणे सर्वेषामर्हतामिह । उत्पन्नं तीर्थमंत्यस्य जिनेंद्रस्य द्वितीयके ॥ १९ ॥ यावदुत्पद्यते तीर्थ—मग्रिमस्य जिनेशितुः । तावत्पूर्वस्य पूर्वस्य भवेत्तीर्थमखंडितं ॥ २० ॥ अस्यामवसर्पिण्यां तु—आद्यात्सुविधिपर्यंतं शांतेश्चांत्यजिनावधि । अष्टस्वष्टस्वंतरेषु तीर्थमासीन्निरंतरं ॥ २१ ॥ मध्ये सप्तस्वंतरेषु नवमात्षोडशावधि । यावत्कालमभूत्तीर्थ—विच्छेदः स निरूप्यते ॥ २२ ॥ पुष्पदंतशीतलयोः शीतलश्रेयसोरपि । एकैकः पल्य-

---

भोजी ने गृहस्थपणामां आद्य प्रभु कल्पवृक्षना फळना भोगी; बीजा बधा प्रभु अन्नभोजी जाणवा. (१४) विनीता नगरीना पुरिमताल नामना शाखापुरमां शकटमुख नामना उद्यानमां ऋषभप्रभु केवळज्ञान पाम्या, (१५) वीरप्रभु जृंभिका गामनी बहार ऋजुवालिका नदीना तट उपर केवळज्ञान पाम्या अने बीजा बधा प्रभु पोतपोताना दीक्षावनमां केवळज्ञान पाम्या. (१६)

श्रीपार्श्वनाथ, नेमिनाथ, ऋषभदेव ने मल्लिनाथने अठ्ठम तपवडे केवळज्ञान थयुं, वासुपूज्यने चतुर्थभक्तवडे केवळज्ञान उत्पन्न थयुं (१७) अने बाकीना १९ प्रभुने छठ्ठ तप कर्ये सते पापनो नाश करनार केवळज्ञान थयुं. श्रीवीरप्रभुने पश्चिमाह्ने केवळज्ञान थयुं अने बीजा बधा प्रभुने पूर्वाह्णे थयुं. (१८) बधा अरिहंतोना तीर्थनी स्थापना प्रथम समवसरणे थइ, अंत्य प्रभुनी बीजा समवसरणमां थइ. (१९) ज्यांसुधीमां बीजा प्रभुनुं तीर्थ प्रवर्ते त्यांसुधी पूर्व पूर्व प्रभुनुं शासन अखंडपणे प्रवर्त्या करे; (२०) परंतु आ अवसर्पिणीमां तो पहेलाथी सुविधिनाथसुधी ने शांतिनाथथी अंत्य जिन वीरप्रभुसुधी आठ आठ आंतरामां अविच्छिन्नपणे तीर्थ प्रवर्त्युं. (२१) मध्यना नवमाथी सोळमासुधीना सात आंतरामां जेटलो काळ तीर्थ विच्छेद पाम्युं ते कहीए छीए-(२२) ' पुष्पदंत (सुविधिनाथ) ने शीतळनाथना अने शीतळनाथ ने श्रेयांसनाथना आंतरामां पा पा पल्योपम तीर्थ—व्युच्छेद

तुर्यांश–स्तीर्थमत्र्त्यदंतरे ॥ २३ ॥ त्रयः पल्यचतुर्थांशाः श्रेयांसवासुपूज्ययोः । वासुपूज्यविमलयो–स्तुर्यः पल्योपमांशकः ॥ २४ ॥ त्रयः पल्यस्य तुर्यांशा विमलानंतयोरपि । एकः पल्यचतुर्थांशो मध्ये चानंतधर्मयोः ॥ २५ ॥ एकः पल्यस्य तुर्यांशो धर्मशांत्योः किलांतरे । केचित्पल्योपमान्याहुः पल्यतुर्यांशकास्पदे ॥ २६ ॥ तथाहुः सप्ततिशतस्थानके–इगइगतिगेगतिगइग इगं सइइगारपलिअचउभागे । बितन्ने इअ पलिए सुविहाइसु सत्ततिरथंते ॥ २७ ॥ दुष्षमारकपर्यंतं तीर्थं वीरजिनेशितुः । प्रवर्त्ततेऽव्यवच्छिन्नं छिन्नजन्मजरामयं ॥ २८ ॥ द्वाविंशतिसहस्राब्द–न्यूनैकपूर्वलक्षयुक् । तीर्थं वीरस्याब्धिकोटा–कोटी नाभेयतीर्थतः ॥ २९ ॥ कालमानमिदं चादि–जिनतीर्थप्रवृत्तितः । श्रीवीरतीर्थपर्यंतं यावद् ज्ञेयं विचक्षणैः ॥ ३० ॥

उपसर्गा १ स्तथा गर्भा–पहारो २ ऽभाविता सभा ३ । चमरोत्पतनं ४ चंद्र–सूर्यावतरणं ५ तथा ॥ ३१ ॥ हरेरमरकंकायां गमनं ६

रह्यो, (२३) श्रेयांस ने वासुपूज्यना आंतरामां पोणुं पल्योपम, वासुपूज्य ने विमळनाथना आंतरामां पा पल्योपम, (२४) विमळनाथ ने अनंतनाथना अंतरमां पोणुं पल्योपम, अनंतनाथ ने धर्मनाथना आंतरामां पा पल्योपम ने धर्मनाथ ने शांतिनाथना आंतरामां पा पल्योपम' अहीं केटलाक पल्योपमना चोथा भागने बदले आखुं पल्योपम कहे छे. (२५–२६) श्री सप्ततिशतस्थानकमां कह्युं छे के–एक, एक, त्रण, एक, त्रण, एक ने एक–आ प्रमाणे कुल अग्यार पल्योपमना चोथा भाग (२॥। पल्योपम) जाणवा. अन्य सुविधि विगेरे सात तीर्थंकरोना आंतरामां पल्योपम पल्योपम कहे छे. (२७) छेदी नाख्या छे जन्म, जरा ने मरण जेणे एवुं वीरप्रभुनुं शासन पांचमा दुष्षमारकना प्रांत सुधी अव्यवच्छिन्नपणे प्रवर्तशे. (२८) श्रीऋषभदेवना तीर्थ पछी वीरप्रभुनुं तीर्थ बावीश हजार वर्षे न्यून अने एक लाख पूर्वे अधिक एक कोटाकोटी सागरोपमे प्रवर्त्युं. (२९) आ काळमान आदिजिने तीर्थ प्रवर्ताव्युं त्यांथी (एटले एक हजार वर्षे न्यून एक लाख वर्षनुं तेमनुं आयुष्य बाकी हतुं त्यारे प्रवर्ताव्युं त्यांथी) वीर प्रभुनुं तीर्थ प्रवर्त्युं त्यां सुधी विचक्षणोए समजवुं. (३०)

आ अवसर्पिणीमां दश आश्चर्य (अछेरां) थयां ते आ प्रमाणे—१ केवळज्ञान थया पछी उपसर्ग, २ गर्भापहार, ३ अभावित पर्षदा, ४ चमरेंद्रनो उत्पात, ५ चंद्रसूर्यनुं मूळ-

श्रीजिनेश्वरः ७। हरिवंशकुलोत्पत्ति ८-रर्चा चासंयतात्मनां ९ ॥ ३२ ॥ साष्टकशतस्य सिद्धि-र्ज्येष्ठावगाहनावतां १० । अनंतकालभावीनि दशाश्चर्याण्यमून्यहो ॥ ३३ ॥ आद्यानि पंचाश्चर्याणि तीर्थेऽस्यापराणि तु । नेमिमल्लिशीतलश्री-सुविधिप्रथमार्हतां ॥ ३४ ॥

नाभेयोऽष्टापदे वीरो-ऽपापायां पुरि निर्वृतः । वासुपूज्यश्च चंपायां नेमी रैवतकाचले ॥३५॥ अन्ये संमेतशिखरे पर्यंकासनसंस्थिताः । श्रीनेमि-वीरवृषभाः कायोत्सर्गासनाः परे ॥३६॥ आद्यः षड्भिरुपवासै-र्द्वाभ्यां वीरः शिवं गतः । शेषा मासक्षपणेन तपसा निर्वृतिं ययुः ॥ ३७॥ आद्यः सहस्रै-र्दशभिः षड्भिस्तैर्विमलो जिनः । अनंतजित्सप्तभिस्तैः श्रीशांतिर्नवभिः शतैः ॥३८॥ सप्तमैकोनविंशौ च पंचभिः पंचभिः शतैः । सिद्धः पद्मप्रभः सार्द्धं त्रिभिरष्टोत्तरैः शतैः ॥ ३९ ॥ नेमिः षट्त्रिंशदधिकैः साधूनां पंचभिः शतैः । षड्भिः शतैर्वासुपूज्यो धर्मः साष्टशतेन च ॥ ४० ॥ त्रयस्त्रिंशत्साधुयुक्तः पार्श्वनाथः शिवं ययौ । एकाकी चरमः स्वामी

विमाने अवतरण, ६ वासुदेवनुं अमरकंका जवुं, ७ स्त्रीतीर्थंकर. ८ हरिवंशकुलोत्पत्ति, ९ असंयतिनी पूजा अने १० ज्येष्ठ अवगाहनावाळा १०८ नी एक समये सिद्धि. आवा आश्चर्यो अनंते काळे थाय छे. (३१-३३) आ दश आश्चर्यमां प्रथमना पांच आश्चर्य वीरप्रभुना तीर्थमां, बाकीना पांचमांथी नेमिनाथ, मल्लिनाथ, शीतळनाथ, सुविधिनाथ ने ऋषभप्रभुना तीर्थमां एकेक समजवुं. (३४)

ऋषभप्रभु अष्टापदे, वीरप्रभु अपापानगरीए, वासुपूज्य चंपानगरीए अने नेमिनाथ रैवताचळे सिद्धिपद पाम्या (३५) अने बाकीना २० प्रभु संमेतशिखरे सिद्धिपदने पाम्या. श्रीनेमिनाथ, वीरप्रभु ने ऋषभदेव पर्यंकासने अने बाकीना २१ प्रभु कायोत्सर्गासने सिद्धिपदने पाम्या छे. (३६) ऋषभदेव छ उपवासे ने वीरप्रभु बे उपवासे मोक्षे गया, बाकीना २२ प्रभु मासक्षपणना तपवडे निर्वृतिपदने पाम्या. (३७) ऋषभदेव दश हजारसाथे, विमळनाथ छ हजारसाथे, अनंतनाथ सात हजारसाथे, शांतिनाथ ९०० नी साथे, सातमा सुपार्श्वनाथ ने ओगणीशमा मल्लिनाथ पांचशें पांचशेंनी साथे, पद्मप्रभु ३०८ नी साथे, नेमिनाथ ५३६ नी साथे, वासुपूज्य छशेंनी साथे, धर्मनाथ १०८ नी साथे, पार्श्वनाथ ३३ साधुनी साथे, वीरप्रभु एकला ने बाकीना १२ प्रभु हजार

सहस्रेणान्विताः परे ॥ ४१ ॥ अष्टात्रिंशत्सहस्राणि पंचाशीतिसमन्विता । चतुःशती जिनैः सार्द्धं निर्वृताः सर्वसंख्यया ॥ ४२ ॥ तृतीयषष्ठनवम–द्वादशा अपराह्णके । शेषाः श्रेयांसपर्यंताः पूर्वाह्णे वृषभादयः ॥ ४३ ॥ धर्मारनमिवीराश्चा–परात्रे शिवं गताः । शेषास्तु पूर्वरात्रेऽष्टौ सिद्धाः श्रीविमलादयः ॥ ४४ ॥

इंद्रभूतिरग्निभूति–र्वायुभूतिरमी त्रयः । सहोदरास्तथा व्यक्त–सुधर्माणौ द्विजोत्तमौ ॥ ४५ ॥ षष्ठो मंडितपुत्राख्यो मौर्यपुत्रश्च सप्तमः । अकंपितोऽचलभ्राता मेतार्यश्च प्रभासकः ॥ ४६ ॥ अमी गणधरा एका–दश श्रीचरमप्रभोः । अथैषां परिवारादि–स्वरूपं किंचिदुच्यते ॥ ४७ ॥ वसुभूतिसुताः पृथ्वी–कुक्षिजाः प्रथमे त्रयः । पंचशिष्यशतोपेता गौर्बरग्रामवासिनः (वेदवेदांगपारगाः) ॥ ४८ ॥ कोल्लाकाख्यसन्निवेश–वास्तव्यौ तुर्यपंचमौ । वारुणीमातृकस्तत्र । तुरीयो धनमित्रभूः ॥ ४९ ॥ पंचमो भद्दिलाकुक्षि–रत्नं धम्मिलनंदनः । उ-

---

हजार मुनिओनी साथे मोक्षे गया छे. (३८–४१) सर्व संख्याए ३८४८५ मुनिओ २४ प्रभुनी साथे मोक्षे गया छे. (४२) त्रीजा, छठ्ठा, नवमा ने बारमा—ए चार प्रभु अपराह्णे अने बाकीना ऋषभदेवथी श्रेयांसनाथसुधीना ८ (१–२–४–५–७–८–१०–११ मा) पूर्वाह्णे, धर्मनाथ, अरनाथ, नमिनाथ ने वीरप्रभु पाछली रात्रे मोक्षे गया छे ने बाकीना आठ (१३–१४–१६–१७–१९–२०–२२–२३ मा) प्रभु श्रीविमळनाथ विगेरे पूर्व रात्रिए मोक्षे गया छे. (४३–४४)

वीरप्रभु गणधरवर्णन—इंद्रभूति, अग्निभूति, वायुभूति, (आ त्रण सहोदर) तथा व्यक्त, सुधर्मा (आ बे द्विजोत्तम), छठ्ठा मंडितपुत्र, सातमा मौर्यपुत्र, अकंपित, अचळभ्राता, मेतार्य ने प्रभास—आ अगियार श्रीचरम प्रभुना गणधरो जाणवा. ए गणधरोना परिवारादिनुं स्वरूप कांइक कहे छे. (४५–४७) प्रथमना त्रण वसुभूतिना पुत्र, पृथ्वीनी कुक्षिथी थयेला, गौर्बर गामना रहेनारा, पांच सो पांच सो शिष्योना परिवारवाळा, (वेद–वेदांगना पारगामी) हता. (४८) चोथा ने पांचमा कोल्लाकसन्निवेशना रहेनारा हता, तेमां चोथा धनमित्र पिता ने वारुणी माताना पुत्र अने पांचमा धम्मिलना नंदन भद्दिलानी कुक्षिथी थयेला हता. ए बंने पांच सो पांच सो शिष्योथी सेवा कराता हता.

पाल्यमानौ द्वावेतौ शिष्याणां पंचभिः शतैः ॥ ५० ॥ तथा मौर्यसन्निवेश-वासिनौ षष्ठसप्तमौ । धनदेवसुतः षष्ठः सप्तमो मौर्यनंदनः ॥ ५१ ॥ विजयातनुजौ सार्द्ध-शतत्रयपरिच्छदौ । देशाचाराद्विरुद्धा पृथक्पितृकता तयोः ॥ ५२ ॥ तत्र देशे मृते स्वामिनि सूनं भर्त्तरि गामिनी । आचीर्णत्वादविरुद्धो भवान्तरपरिग्रहः ॥५३॥ जयंतीतनुजो देव-नंदनोऽकंपिताह्वयः । मिथिलापुरवास्तव्यः शतत्रयपरिच्छदः ॥ ५४ ॥ नवमो कोशलावासी नंदाभूर्वसुनन्दकः । तुंगिकाख्यसन्निवेश-वास्तव्यो दशमो गणी ॥ ५५ ॥ स दत्तपुत्रो वरुण-देवागर्भसमुद्भवः । एकादशो राजगृह-वासी द्विजकुलध्वजः ॥ ५६ ॥ सोऽतिभद्राकुक्षिरत्नं सर्वेऽपि नवमादयः । उपासिता व्यक्तभक्ति-सक्तैः शिष्यशतैस्त्रिभिः ॥ ५७ ॥ ज्येष्ठा १ च कृत्तिका २ स्वातिः ३ श्रुतिः ४ र्यमदैवतं ५ । मघा ६ ब्राह्म्यं ७ सदाषाढा ८ मार्गो ९ ऽश्विन्यो १० च पुष्यभं ११ ॥५८॥ एकादशानां जन्मर्क्षा-ण्येतानि गणधारिणां । गृहस्थत्वादिपर्याय-परिमाणमथ ब्रुवे ॥ ५९ ॥ गार्हस्थ्येऽब्दानि पंचाशत् छाद्मस्थ्ये त्रिंशदेव च । सर्वज्ञत्वे द्वादश द्वा-

(४९–५०) छठ्ठा ने सातमा मौर्यसन्निवेशना रहेनारा हता. तेमां छठ्ठा धनदेवना पुत्र ने सातमा मौर्यना पुत्र हता. ते बंनेनी माता विजया हती अने तेमने साडात्रणसो साडात्रणसो शिष्योनो परिवार हतो. तेमनुं जुदा जुदा पितापणुं त्यांना देशाचारथी अविरुद्ध हतुं. (५१–५२) ते देशमां ते वखते कुळमां भरथार मरण पामे तो स्त्री बीजा भर्तारने ग्रहण करी शकती होवाथी ते आचीर्ण होवाने लीधे अविरुद्ध छे. (५३) आठमा अकंपित देव नामना पिताना ने जयंती माताना पुत्र मिथिलापुरमां रहेनार त्रणसोना परिवारवाळा हता. (५४) नवमा कोशलावासी ने नंदामाता ने वसुपिताना पुत्र हता. दशमा तुंगिका नामना सन्निवेशमां रहेनार, दत्तपिताना पुत्र, वरुणादेवीना गर्भथी उत्पन्न थयेल हता. अग्यारमा राजगृहवासी द्विजकुळमां ध्वजसमान (बलना ने) अतिभद्राना पुत्र हता. नवमा, दशमा ने अग्यारमा प्रगटपणे भक्तिमां आसक्त एवा त्रण सो त्रण सो शिष्योथी सेवा कराता हता. (५५–५७) ज्येष्ठा १, कृत्तिका २, स्वाति ३, श्रवण ४, उत्तराफाल्गुनी ५, मघा ६, रोहिणी ७, उत्तराषाढा ८, मृगशीर्ष ९, अश्विनी १० अने पुष्य ११—अग्यार गणधरना ए जन्म नक्षत्र जाणवा. हवे तेना गृहस्थत्वादिपर्यायनुं प्रमाण अने सर्वायु कहीए छीए. (५८–५९) पहेला गणधरनुं गृहस्थपणामां ५० वर्ष, छद्मस्थपणामां ३० वर्ष अने

नवतिश्चायुरादिमे ॥ ६० ॥ अग्निभूतौ च षट्चत्वा–रिंशद् द्वादश षोडश। गार्हस्थ्यादिषु सर्वायुः स्युश्चतुःसप्ततिः समाः ॥ ६१ ॥ वायुभूतौ द्विचत्वारिं–शद्दशाष्टादशापि च । गृहस्थत्वादिभावेषु सर्वायुः सप्ततिः समाः ॥ ६२ ॥ व्यक्तस्वामिनि पंचाशद् द्वादशाष्टादशापि च । त्रिषु भावेषु सर्वायु–रशीतिः शरदः स्मृताः ॥ ६३ ॥ पंचाशच्च द्विचत्वारिं–शदष्टौ शरदः क्रमात् । सुधर्मस्वामिनो गार्ह–स्थ्यादिष्वायुश्च तच्छतं ॥ ६४ ॥ संवत्सरास्त्रिपंचाश–च्चतुर्दश च षोडश । गार्हस्थ्यादिषु षष्ठस्य त्र्यशीतिरखिलं जनुः ॥ ६५ ॥ मौर्यस्याब्दाः पंचषष्टि–श्चतुर्दश च षोडश । गृहित्वादिषु भावेषु शतं पंचोनमन्वितं ॥६६॥ अकंपितस्याष्टचत्वा–रिंशन्नवैकविंशतिः । गृहित्वादिषु वर्षाणि सर्वायुरष्टसप्ततिः ॥ ६७ ॥ नवमस्य षट्चत्वारिं–शद् द्वादश चतुर्दश । त्रिषु भावेषु वर्षाणि सर्वमायुर्द्विसप्ततिः ॥ ६८ ॥ मेतार्यस्य च षट्त्रिंश–द्दश षोडश वत्सराः । पर्यायेषु त्रिषु प्रोक्तं द्वाषष्टिः सर्वजीवितं ॥ ६९ ॥ प्रभासस्य षोडशाष्टौ क्रमात् षोडश वत्सराः । पर्यायेषु त्रिष्वशेषं चत्वारिंशच्च जीवितं ॥ ७० ॥ सिद्धा

बार वर्ष सर्वज्ञपणामां कुल ९२ वर्षनुं आयुष्य हतुं. (६०) अग्निभूतिनुं ४६ वर्ष गृहस्थपणामां, बारवर्ष छद्मस्थपणामां ने १६ वर्ष सर्वज्ञपणामां कुल ७४ वर्षनुं आयुष्य हतुं. (६१) वायुभूतिनुं ४२–१० ने १८ एम गृहस्थत्वादिभावने विषे वर्ततां कुल ७० वर्षनुं आयु हतुं. (६२) व्यक्तस्वामीनुं ५०, १२ ने १८ वर्ष त्रणे भावमां वर्ततां कुल ८० वर्षनुं आयु हतुं. (६३) सुधर्मास्वामीनुं ५०–४२–८ वर्ष गृहस्थत्वादिभावमां वर्ततां कुल १०० वर्षनुं आयु हतुं. (६४) छठ्ठा मंडितपुत्रनुं ५३–१४ ने १६ वर्ष गृहस्थादिभावमां वर्ततां कुल ८३ वर्षनुं आयु हतुं. (६५) मौर्यपुत्रनुं ६५–१४ ने १६ वर्ष गृहस्थादिभावमां वर्ततां कुल ९५ वर्षनुं आयु हतुं. (६६) अकंपितनुं ४८–९ ने २१ वर्ष गृहस्थादिभावमां वर्ततां कुल ७८ वर्षनुं आयु हतुं. (६७) नवमा अचळभ्रातानुं ४६–१२ ने १४ वर्ष गृहस्थादिभावमां वर्ततां कुल ७२ वर्षनुं आयु हतुं. (६८) मेतार्यनुं ३६–१० ने १६ वर्ष गृहस्थादि त्रणे भावमां वर्ततां कुल ६२ वर्षनुं आयु हतुं. (६९) प्रभासनुं १६–८ ने १६ वर्ष गृहस्थादि त्रणे पर्यायमां वर्ततां कुल ४० वर्षनुं आयु हतुं. (७०) ए अग्यारे गणधरो राजगृहीपासे वैभारगिरि उपर एक मासनुं

एकादशाप्येते गिरौ वैभारनामनि । निर्वाणमनशना मासं पुरे राजगृहा-ऽभिधे ॥ ७१ ॥ नव सिद्धिं गता वीरे नाथे जीवत्यथादिमः । सिद्धे प्रभौ द्वादशभि-र्विंशत्याब्दैश्च पंचमः ॥ ७२ ॥ सुधर्मस्वामिनः शिष्यः प्रशिष्यस्त्रिशलाभुवः । चरमः केवली जंबु-स्वामी चामीकरद्युतिः ॥ ७३ ॥ स राजगृहवास्तव्य ऋषभदत्तनंदनः । धारिणीकुक्षिसंभूत आजन्म ब्रह्मचार्यभूत् ॥ ७४ ॥ षोडशाब्दानि गार्हस्थ्यं छद्मस्थत्वं च विंशतिं । सर्वज्ञत्वं चतुश्चत्वा-रिंशतं पर्यपालयत् ॥ ७५ ॥ अशीतिवर्षाणि सर्वायुः परिपूर्यान्तिमप्रभोः । शिवं गते चतुःषष्ट्या वर्षैर्गत शिवश्रियं ॥ ७६ ॥ अत्र च–अकंपिताचलभ्रात्रो–र्मेतार्यप्रभासयोः । एकाभूद्वाचना तस्माद्वीरस्येतुर्गणा नव ॥ ७७ ॥ एकवाचनिकः साधु–समुदायो भवेद्गणः । तेऽन्येषामर्हतां ज्ञेया गणभृत्संख्यया समाः ॥ ७८ ॥ समुदिता गणाधीशाः सर्वेषामर्हतां समे । स्युर्द्विपंचाशदधिका–श्चतुर्दश शता इह ॥७९॥

श्रीवीरस्वामिनः साधु–सहस्राणि चतुर्दश । षट्त्रिंशच्च सहस्राणि

अनशन करीने सिद्धिपदने पाम्या छे. (७१) एमांथी नव वीरप्रभुनी हयातिमां सिद्धिस्थानने पाम्या छे. प्रथम गणधर प्रभुना निर्वाण पछी १२ वर्षे ने पांचमा सुधर्म गणधर प्रभुना निर्वाण पछी २० वर्षे सिद्धिपदने पाम्या छे. (७२) त्रिशलामाताना पुत्र वीरप्रभुना प्रशिष्य अने सुधर्मास्वामीना मुख्य शिष्य जंबूस्वामी सुवर्णसरखी कांतिवाळा ते छेल्ला केवळी थया छे. (७३) तेओ राजगृहीना रहेनार ऋषभदत्तना पुत्र धारिणीनी कुक्षिथी थयेला हता ने जन्मथी ज ब्रह्मचारी रह्या हता. (७४) तेओ गृहस्थपणामां १६ वर्ष, छद्मस्थपणामां २० वर्ष ने सर्वज्ञपणामां ४४ वर्ष रहेवाथी कुल ८० वर्षनुं आयु परिपूर्ण करीने अंतिम प्रभु सिद्ध थया पछी ६४ वर्षे सिद्धिपदने पाम्या छे. (७५–७६) आ ११ गणधरमां अकंपित ने अचळभ्रातानी तेम ज मेतार्य ने प्रभासनी एक वाचना होवाथी वीरप्रभुना गण नव थया छे. (७७) एक वाचनावाळा साधुना समुदायने गण कहेवाय छे. बीजा बधा प्रभुना गणधरनी संख्या जेटला ज गण थया छे. (७८) सर्व अरिहंतना सर्व गणधरोनी संख्या एकत्र करीए तो १४५२ नी थाय छे. (७९)

श्रीवीरप्रभुना परिवारमां १४००० साधु ने ३६००० महात्मा एवी साध्वीओ

संयतीनां महात्मनां ॥ ८० ॥ इदं किल चतुरशीतिसहस्रादिकमृषभादीनां तीर्थकृतां श्रमणपरिमाणं प्रधानसूत्रविरचनसमर्थान् श्रमणानधिकृत्य वेदितव्यं, इतरथा पुनः सामान्यश्रमणाः प्रभूततरा अपि तस्मिन् तस्मिन् ऋषभादिके आसीरन् इति नंदीवृत्तौ, गच्छाचारवृत्तौ च. श्राद्धानां लक्षमेकोन–षष्ट्या युक्तं सहस्रकैः । लक्षत्रयं श्राविकाणा–मष्टादशसहस्रयुक् ॥ ८१ ॥ सर्वज्ञानां शताः सप्त पंच मानसवेदिनां । सहस्रमेकमवधि–ज्ञानिनां त्रिशतान्वितं ॥ ८२ ॥ वैक्रियाणां शताः सप्त सच्चतुर्दशपूर्विणां । त्रयः शता वादिवर–मुनीनां च चतुःशती ॥ ८३ ॥ सर्वेऽष्टाविंशतिर्लक्षाः सर्वेषां साधवोऽर्हतां । अष्टाचत्वारिंशता च सहस्रैरधिकाः स्मृताः ॥ ८४ ॥ संयतीनां चतुश्चत्वा–रिंशल्लक्षाः सहस्रकाः । षट्चत्वारिंशदेवाथ षट्संयुक्ता चतुःशती ॥ ८५ ॥ लक्षाणि पंचपंचाशत् श्रावकाणां गुणौकसां । सहस्रैरष्टचत्वारिं–शतोपेतानि निश्चितं ॥ ८६ ॥ एका कोटी पंच लक्षा–प्यष्टात्रिंशत्सहस्रकाः सर्वाग्रं श्राविकाणां च सर्वेषामर्हतामिह ॥ ८७ ॥ षट्सप्ततिसहस्राढ्यं लक्षमेकं शताधिकं । सर्वेषामर्हतामुक्तं सर्वाग्रं सर्ववेदिनां ॥ ८८ ॥ लक्षमेकं तथा

जाणवी. (८०) अहीं ८४००० विगेरे ऋषभादि तीर्थंकरोना श्रमणनुं परिमाण कहेलुं छे ते प्रधानसूत्र रचवामां समर्थ श्रमणोने आश्रीने जाणवुं. ते विना सामान्य साधुओ घणी मोटी संख्यामां ते ते ऋषभादिक प्रभुना परिवारमां थया हता, एम श्री नंदीसूत्रनी वृत्तिमां तथा गच्छाचारनी वृत्तिमां कहेलुं छे. श्री वीरप्रभुना श्रावको १५९००० ने श्राविकाओ ३१८०००, (८१) केवळज्ञानीओ ७००, मनःपर्यवज्ञानी ५००, अवधिज्ञानी १३००, (८२) वैक्रियलब्धिवाळा ७००, चौदपूर्वी ३०० अने वादि मुनिओ ४०० हता. (८३)

चोवीशे प्रभुना मळीने साधु अठ्ठावीश लाख ने ४८ हजार अने साध्वीओ ४४ लाख ४६ हजार चार सो ने छ थाय छे (८४- ८५) गुणवडे श्रेष्ठ श्रावको ५५ लाख ने ४८ हजार ने श्राविकाओ १०५३८००० थाय छे. (८६--८७) सर्व प्रभुना केवळज्ञानीनी संख्या १७६१०० नी कहेली छे (८८) अने मनःपर्यवज्ञानीनी संख्या १४५५९१ नी

पंच–चत्वारिंशत्सहस्रकाः । शताः पंचैकनवति–युक्ता मानसवेदिनां ॥ ८९ ॥ लक्षमेकं त्रयस्त्रिंश–त्सहस्राः सचतुःशताः । उक्ता जिनानां सर्वेषा–मवधिज्ञानशालिनः ॥ ९० ॥ त्रयस्त्रिंशत्सहस्राणि शतानि नव चोपरि । अष्टानवत्युपेतानि स्युश्चतुर्दशपूर्विणः ॥ ९१ ॥ लक्षद्वयं तथा पंच–चत्वारिंशत्सहस्रकाः । अष्टाढ्ये द्वे शते सर्वे लसद्वैक्रियलब्धयः ॥ ९२ ॥ षड्विंशतिः सहस्राणि लक्षमेकं शतद्वयं । वादिनो मुनयः सर्वे भवंत्येवं समुच्चिताः ॥ ९३ ॥ उक्ता विशेषमुनयो येऽमी गणधरादयः । तैर्वर्जिताः सर्वसाधु–संख्याः पूर्वनिरूपिताः ॥ ९४ ॥ सामान्यमुनिसंख्याः स्युः सर्वेषामर्हतामिह । यथायोगं भावनीयास्ताः सर्वास्तात्त्विकैः स्वयं ॥९५॥ एकोनविंशतिर्लक्षाः षडशीतिः सहस्रकाः । एकपंचाशदधिकाः सामान्यमुनयोऽखिलाः ॥ ९६ ॥ तथोक्तं–गणहर १ केवलि २ मण ३ ओहि ४ पुव्वि ५ वेउव्वि ६ वाइ ७ मुणिसंखं । मुणिसंखाए सोहिय नेया सामन्नमुणिसंखा ॥ ९७ ॥

द्वाविंशतिः सहस्राणि तथा नव शतानि च । वृषभस्यानुत्तरौपपातिका मुनयो मताः ॥ ९८ ॥ श्रीनेमिपार्श्ववीराणां षोडश द्वादशाष्ट च ।

कहेली छे. (८९) अवधिज्ञानीओनी संख्या १३३४०० नी कहेली छे. (९०) ३३९९८ नी संख्या चौदपूर्वीनी कहेली छे. (९१) वैक्रियलब्धिवाळानी संख्या २४५२०८ नी कही छे. (९२) अने वादी मुनिओनी संख्या १२६२०० नी कही छे—आ प्रमाणे एकत्र संख्या थाय छे. (९३) जे अहीं गणधरादिक विशेष मुनिओनी संख्या (८६१९४९) कही छे तेने पूर्वे कहेली सर्व साधुओनी (२८४८०००) संख्यामांथी बाद करवाथी जे संख्या आवे ते सर्व तीर्थंकरोना सामान्य साधुओनी संख्या थाय छे ते यथायोग्य रीते प्रत्येक तीर्थंकरोमां पण तात्त्विकोए पोतानी मेळे जाणी लेवी. (९४–९५) आ प्रमाणे करतां सामान्य मुनिओनी संख्या १९ लाख छाशी हजार ने एकावननी थाय छे.(९६) ते विषे कह्युं छे के–गणधर, केवळी, मनःपर्यवज्ञानी, अवधिज्ञानी, चौदपूर्वी, वैक्रियलब्धिवाळा अने वादिओरूप विशिष्ट मुनिओनी (आठ लाख एकसठ हजार नव सो ने ४९ नी) संख्याने कुल मुनिसंख्यामांथी बाद करतां सामान्य मुनिओनी संख्या थाय छे. (बंने मळीने २८४८०००) थाय छे. (९७)

श्री वृषभदेवना अनुत्तरोपपातिक मुनिओनी संख्या २२९०० नी कही छे. (९८) श्री नेमि, पार्श्व ने वीरप्रभुनी अनुक्रमे १६००, १२०० ने ८०० नी संख्या कही छे.

क्रमाच्छ्तास्ते शेषाणां न ज्ञायंतेऽधुनार्हतां ॥ ९९ ॥ येषां जिनानां यावंतः शिष्यास्तै रचितानि च । प्रकीर्णकानि तावंति तेषामित्युदितं श्रुते ॥ ११०० ॥ तावंत एव प्रत्येक–बुद्धा अपि निरूपिताः । प्रकीर्णकानां ब्रूमोऽथ स्वरूपं किंचिदागमात् ॥ १ ॥ अर्हदुक्तानुसारेण श्रमणा यन्महाधियः । रचयंतीह तत्सर्वं शास्त्रं ज्ञेयं प्रकीर्णकं ॥ २ ॥ उत्कालिकमंगबाह्यं दशवैकालिकादिकं । अंगबाह्यं कालिकं य–च्चोत्तराध्ययनादिकं ॥ ३ ॥ प्रकीर्णकानि सर्वाणि तानि ज्ञेयानि धीधनैः । प्रत्येकबुद्धैरन्यैर्वा रचितानि महात्मभिः ॥ ४ ॥

अत्र च मतत्रयं–श्रीऋषभादिजिनानां चतुरशीतिसहस्रादिप्रमाणैः स्वस्वशिष्यै रचितानि तावत्संख्याकान्येव प्रकीर्णकानीति केचित् । ऋषभादिजिनानां स्वस्वतीर्थभाविभिश्चतुर्विधबुद्ध्युपेतैरपरिमितैः साधुभिर्विरचितानि अपरिमितान्येव प्रकीर्णकानीत्यन्ये, ऋषभादिजिनानां स्वस्वतीर्थभाविभिरपरिमितैः प्रत्येकबुद्धैर्विरचितानि अपरिमितान्येव प्रकीर्णकानीत्यपरे, इत्याद्यर्थतो नंदीसूत्रवृत्तितोऽवसेयं, गच्छाचारवृत्तिर्वा विलोकनीयेति.

बाकीना २० प्रभुनी अनुत्तरोपपातिकनी संख्या अधुना जाणवामां नथी. (९९) जे प्रभुना जेटला शिष्यो होय तेमना रचेला तेटला प्रकीर्णको होय एम श्रुतमां कह्यु छे. (११००) अने प्रत्येकबुद्ध पण तेटला ज कह्या छे. प्रकीर्णकोनुं स्वरूप आगमाधारे कांइक कहीए छीए. (१) अरिहंतना कथनने अनुसारे महाबुद्धिमान श्रमणो जे शास्त्र रचे छे ते अहीं प्रकीर्णक जाणवा. (२) उत्कालिक अंगबाह्य दशवैकालिकादि जाणवा अने अंगबाह्य कालिक उत्तराध्ययनादि जाणवा, (३) सर्व प्रकीर्णको बुद्धिमानोए ते प्रकारना जाणवा के जे प्रत्येकबुद्धोए अथवा अन्य महात्माओए ज रचेला होय. (४) अहीं त्रण मत छे ते आ प्रमाणे—

श्रीऋषभादि तीर्थंकरोना ८४००० विगेरे प्रमाणवाळा पोतपोताना शिष्यरूप मुनिओए जे रचेला तेटला ज प्रकीर्णको जाणवा, एम केटलाक कहे छे. केटलाक कहे छे के–ऋषभादि जिनोना स्वस्वतीर्थभावी चतुर्विध बुद्धियुक्त अपरिमित साधुओए रचेला अपरिमित ज प्रकीर्णको जाणवा. वळी बीजा एम कहे छे के–ऋषभादि जिनोना स्वस्वतीर्थभावी अपरिमित प्रत्येकबुद्धोए रचेला अपरिमित ज प्रकीर्णको जाणवा. इत्यादि अर्थथी श्रीनंदीसूत्रवृत्तिथी जाणवुं. अथवा गच्छाचारनी वृत्ति जोवी.

पट्टाधिपानसंख्येयान् यावत् श्रीवृषभप्रभोः । अविच्छिन्ना गतिर्मोक्षे प्रावर्त्तत महात्मनां ॥ ५॥ तानष्टौ चतुरो यावत् क्रमात् श्रीनेमिपार्श्वयोः त्रीन् वीरस्य परेषां तु संख्येयान्निखिलार्हतां ॥ ६ ॥ अंतर्मुहूर्त्तेऽतिक्रांते श्रीनाभेयस्य केवलात् । प्रावर्त्तत गतिर्मोक्षे नेमेर्वर्षद्वये गते ॥ ७ ॥ पार्श्वस्य त्रिषु वर्षेषु चतुर्षु चरमप्रभोः । शेषाणां पुनरेकादि–दिवसाति-क्रमे सति ॥ ८ ॥

अभूत्प्रवृत्तिः पूर्वाणा–माद्यात्कुंथुजिनावधि । असंख्यकालं संख्येय–कालं पार्श्वजिनावधि ॥ ९ ॥ एकं सहस्रं वर्षाणां महावीरस्य साभवत् । एतावान् पूर्वविच्छेद–कालोऽपि सकलार्हतां ॥ १० ॥ परं वर्षसहस्राणां विंशतिश्चरमेशितुः । पार्श्वस्य नासौ सर्वेषा–मातीर्थमपरं श्रुतं ॥ ११ ॥ श्रुतेष्वंगादिष्वबद्धा ज्ञानिभिश्च प्रकाशिताः । आदेशास्ते शताः पंचां–त्यस्यान्येषामनेकधा ॥ १२ ॥ कुरुटोत्कुरुटौ साधू सप्तमं नरकं गतौ ।

श्रीऋषभप्रभुना असंख्याता पट्टाधिप एवा महात्माओनी अविच्छिन्नपणे मोक्षगति जाणवी. (५) श्रीनेमिनाथना आठ पाट ने पार्श्वनाथना चार पाट मोक्षे गयेल जाणवा. श्रीवीरप्रभुना त्रण पाट जाणवा. बाकीना सर्व तीर्थंकरोना संख्याता पाट मोक्षे गयेल जाणवा. (६) श्रीऋषभदेवस्वामीने केवळज्ञान प्राप्त थयुं त्यारपछी एक अंतर्मुहूर्त्ते मोक्षमार्ग शरु थयो, नेमिनाथना केवळज्ञान पछी बे वर्षे, श्रीपार्श्वनाथप्रभुना केवळज्ञान पछी त्रण वर्षे, छेल्ला महावीरस्वामीना केवळज्ञान पछी चार वर्षे अने बाकीना वीश प्रभुना केवळ-ज्ञान पछी एक विगेरे दिवस गया पछी मोक्षमार्ग शरु थयो. (७–८)

पूर्वोनी प्रवृत्ति प्रथम जिनेश्वरथी कुंथुनाथ सुधी असंख्य काळ जाणवी, अने त्यांथी पार्श्वजिन सुधी संख्यात काळ जाणवी. (९) श्री वीर परमात्मा पछी एक हजार वर्ष सुधी प्रवृत्ति जाणवी. पूर्वविच्छेदकाळ पण सर्व जिनेश्वरोनो ए प्रमाणे ज जाणवो, (१०) पूर्व विनाना बीजा श्रुतनो काळ पूर्वना विच्छेद पछी वीश हजार वर्ष सुधी एटले कुल २१ हजार वर्ष सुधी जाणवो. श्री पार्श्वनाथ माटे आवो काळ न समजवो. (तेमनी पछी तो वीर प्रभु थतां सुधी पूर्वश्रुत रहेल छे.) अने बाकीना प्रभु माटे तेमनुं तीर्थ चालतां सुधी अपरश्रुतनो–पूर्वविनाना श्रुतनो काळ जाणवो, (११) जे अंगादिश्रुतमां गुंथायेला न होय अने ज्ञानीओए प्रकाशित करेला होय ते आदेशो समजवा. तेवा आदेशो अंत्य प्रभुसंबंधी ५०० जाणवा अने अन्य प्रभुसंबंधी अनेक प्रकारना जाणवा. (१२) कुरुट

बाल्येंगुष्ठाग्रसंपर्का–न्मेरुर्वीरेण कंपितः ॥ १३ ॥ विहाय वलयाकारं स्वयंभूरमणांबुधौ । संति पद्मानि मत्स्याश्च समग्राकारशालिनः ॥ १४ ॥ अत्यंतं स्थावरा सिद्धा मरुदेवा महासती । असंदब्धाः श्रुते ज्ञेया आदेशा एवमादयः ॥ १५ ॥

श्रेयांसः श्रावको मुख्यः श्रीनाभेयजिनेशितुः । ते नंदसूर्यशंखाख्या–स्त्रयाणां नेमितोऽर्हतां ॥ १६ ॥ सुभद्रा महासुव्रता सुनंदा सुलसापि च । मुख्याः स्युः श्राविका आद्य–नेमिपार्श्वांतिमार्हतां ॥ १७ ॥ शेषाणां त्वप्रसिद्धा इति.

इंद्रभूतिर्गणी मुख्य–श्चंदना च प्रवर्त्तिनी । श्रेणिको नृपतिर्भक्तः सम्यक्त्वं क्षायिकं दधत् ॥ १८ ॥ यक्षः श्रीवर्द्धमानस्य मातंगो गजवाहनः । द्विभुजो नकुलोपेता–पसव्यकरपंकजः ॥ १९ ॥ वामे करे च रुचिरं दधानो बीजपूरकं । श्यामांगकांतिः पुष्णाति श्रियं श्रीवीरसेविनां ॥ २० ॥ देवी सिद्धायिका सिंह–वाहनाढ्या चतुर्भुजा । पुस्तकाभयसंयुक्ता–पसव्यकरयामला ॥ २१ ॥ बीजपूरकवीणाढ्य–

ने उत्कृष्ट साधु सातमी नरके गया. बाल्यावस्थामां अंगुठाना संपर्कथी वीरप्रभुए मेरु कंपाव्यो, (१३) स्वयंभूरमण समुद्रने विषे वलयाकारने मूकीने समग्र आकारवाळा पद्मो ने मत्स्यो छे. (१४) अत्यंत स्थावर एवा (स्थावरमांथी तरत आवेला एवा) महासती मरुदेवा सिद्धिपदने पाम्या' इत्यादि आदेशो श्रुतने विषे असंदब्ध जाणवा.(१५)

श्री नाभेयजिनना मुख्य श्रावक श्रेयांस हता अने नेमि, पार्श्व तथा वीरप्रभुना नंद, सूर्य ने शंख नामना मुख्य श्रावक जाणवा. (१६) तेम ज सुभद्रा, महासुव्रता, सुनंदा ने सुलसा ए चार अनुक्रमे आद्य जिन, नेमि, पार्श्व ने वीरप्रभुनी मुख्य श्राविका जाणवी. (१७) शेष तीर्थंकरोना मुख्य श्रावक ने श्राविकाना नाम अप्रसिद्ध छे.

श्री वीरप्रभुना मुख्य गणधर इंद्रभूति, मुख्य प्रवर्त्तिनी चंदना ने क्षायिक समकितने धारण करनार नृपति श्रेणिक भक्त जाणवा. (१८) श्रीवीरप्रभुनो यक्ष मातंग नामनो, गजना वाहनवाळो, बे भुजावाळो, तेमां जमणी भुजामां नकुलने धारण करनार अने वाम भुजामां सुंदर एवा बीजपूरने धारण करनार, श्याम अंगकांतिवाळो, श्रीवीर परमात्मानी सेवा करनारने लक्ष्मी आपनारो थयो. (१९–२०) देवी सिद्धायिका नामे सिंहना वाहनवाळी, चार भुजावाळी, जमणा बे हाथमां पुस्तक ने अभय अने डावा बे

वामपाणिद्वया सतां । श्रीवीरभक्ता हरित–वर्णा दिशतु वांछितं ॥२२॥

यथास्यामवसर्पिण्या–मेवं प्राप्ता महोदयं । चतुर्विंशतिरर्हंत–स्तथा भाव्याः परास्वपि ॥ २३ ॥

इहैतदवसर्पिणीभरतवर्षभूयोषितो–
विशेषसुषमाकृतो जिनवराश्चतुर्विंशतिः ।
मयाऽप्रतिमया मुदा प्रतिहतामयाश्चिन्मयाः
स्तुता विगतविक्रियाः कृतधियां क्रियासुः श्रियं ॥ २४ ॥
विश्वाश्चर्यदकीर्त्तिकीर्तिविजयश्रीवाचकेंद्रांतिष–
द्राजश्रीतनयोऽतनिष्ट विनयः श्रीतेजपालात्मजः ।
काव्यं यत्किल तत्र निश्चितजगत्तत्त्वप्रदीपोपमे
सर्गोऽयं प्रथितो निसर्गसुभगो द्वात्रिंश एषोऽभवत् ॥ २५ ॥

॥ इति श्रीलोकप्रकाशे द्वात्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥ श्रीरस्तु ॥

हाथमां बीजपूरक ने वीणाने धारण करनारी हरितवर्णवाळी श्री वीर परमात्माना भक्तोना वांच्छितने आपो. (२१–२२)

जेम आ अवसर्पिणीमां उपर कही गया प्रमाणे चोवीश तीर्थंकरो महोदयने प्राप्त करनारा थया तेम बीजी अवसर्पिणीमां पण जाणी लेवुं. (२३)

अहीं आ अवसर्पिणी अने भारतवर्षनी पृथ्वीरूपी बन्ने स्त्रीने विशेष सुख करनारा, सर्व आमयनो विनाश करनारा, ज्ञानमय अने विक्रिया रहित एवा २४ तीर्थंकरोनी में मोटा हर्षथी स्तवना करी ते बुद्धिमानोने लक्ष्मीप्रत्ये आपो. (११२४)

विश्वने आश्चर्य पमाडनार छे कीर्त्ति जेमनी एवा श्री कीर्त्तिविजय वाचकेंद्रना शिष्य अने राजश्री तथा तेजपाळना पुत्र श्री विनयविजये जे आ काव्य रच्युं छे ते निश्चित एवा जगत्तत्त्वने प्रकाश करवामां दीपकसमान आ काव्यमां स्वभावे ज सुभग एवो आ बत्रीशमो सर्ग संपूर्ण थयो. (११२५)

इतिश्री

गणधरो संबंधी यंत्र.

वीरप्रभुशिष्य	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	सुधर्माशिष्य.
गणधरनाम	इंद्रभूति	अग्निभूति	वायुभूति	व्यक्त	सुधर्मा	मंडितपुत्र	मौर्यपुत्र	अकंपित	अचलभ्राता	मेतार्य	प्रभास	जंबूकुमार
नगरनाम	गौवर	गौवर	गौवर	कोल्लाक सं.	कोल्लाक सं.	मौर्य सं.	मौर्य सं.	मिथिला	कोशला	तुंगीक सं	राजगृह	राजगृहनगर
पितानाम	वसुभूति	वसुभूति	वसुभूति	धनमित्र	धम्मिल	धनदेव	मौर्य	देव	वसु	दत्त	वल	ऋषभदत्त
मातानाम	पृथ्वी	पृथ्वी	पृथ्वी	वारुणी	भद्दिला	विजया	विजया	जयंती	नंदा	वरुणादेवी	अतिभद्रा	धारिणी
जन्मनक्षत्र	ज्येष्ठा	कृत्तिका	स्वाति	श्रवण	उत्तरा फाल्गुनी	मघा	रोहिणी	उत्तरा षाढा	मृगशीर्ष	अश्विनी	पुष्य	—
गृहस्थपणो	५०	५६	४२	५०	५०	५३	६५	४८	४६	३६	१६	१६
छद्मस्थपणो	३०	१२	१०	१२	४२	१४	१४	९	१२	१०	८	२०
केवलीपणो	१२	१६	१८	१८	८	१६	१६	२१	१४	१६	१६	४४
सर्वायु	९२	८४	७०	८०	१००	८३	९५	७८	७२	६२	४०	८०
शिष्यपरिवार	५००	५००	५००	५००	५००	३५०	३५०	३००	३००	३००	३००	५००
गोत्र	गौतम	गौतम	गौतम	भारद्वाज	अग्निवेश्य	वाशिष्ट	काश्यप	गौतम	हारितायन	कोडीन	कोडीन	काश्यप

चोवीशे तीर्थंकरना मुनिओ संबंधी यंत्र.

अंक.	प्रभुनाम.	गणधर.	केवली.	मनःपर्यवी.	अवधिज्ञानी	चौदपूर्वी.	वैक्रियलब्धि वाला.	वादी.	सातनो सरवालो.	सामान्यमुनि.	कुलमुनि संख्या.
१	ऋषभदेव	८४	२००००	१२७५०	९०००	४७५०	२०६००	१२६५०	७९८३४	४१६६	८४०००
२	अजितनाथ	९५	२००००	१२५००	९४००	३७२०	२०४००	१२४००	७८५१५	२१४८५	१०००००
३	संभवनाथ	१०२	१५०००	१२१५०	९६००	२१५०	१९८००	१२०००	७०८०२	१२९१९८	२०००००
४	अभिनंदन	११६	१४०००	११६५०	९८००	१५००	१९०००	११०००	६७०६६	२३२९३४	३०००००
५	सुमति	१००	१३०००	१०४५०	११०००	२४००	१८४००	१०४५०	६५८००	२५४२००	३२००००
६	पद्मप्रभ	१०७	१२०००	१०३००	१००००	२३००	१६१०८	९६००	६०४१५	२६९५८५	३३००००
७	सुपार्श्व	९५	११०००	९१५०	९०००	२०३०	१५३००	८४००	५४९७५	२४५०२५	३३००००
८	चंद्रप्रभ	९३	१००००	८०००	८०००	२०००	१४०००	७६००	४९६९३	२००३०७	२५००००
९	सुविधि	८८	७४००	७५००	८४००	१५००	१३०००	६०००	४३९८८	१५६०१२	२०००००
१०	शीतल	८१	७०००	७५००	७२००	१४००	१२०००	५८००	४०९८१	५९०१९	१०००००
११	श्रेयांस	७६	६५००	६०००	६०००	१३००	११०००	५०००	३५८७६	४८१२४	८४०००
१२	वासुपूज्य	६६	६०००	६०००	५४००	१२००	१००००	४७००	३३३६६	३८६३४	७२०००
१३	विमल	५७	५५००	५५००	४८००	११००	९०००	३२००	२९५५७	३८४४३	६८०००
१४	अनंत	५०	५०००	५०००	४३००	१०००	८०००	३२००	२६५५०	३९४५०	६६०००
१५	धर्म	४३	४५००	४५००	३६००	९००	७०००	२८००	२३३४३	४०६५७	६४०००
१६	शांति	३६	४३००	४०००	३०००	८००	६०००	२४००	२०५३६	४१४६४	६२०००
१७	कुंथु	३५	३२००	३३४०	२५००	६७०	५१००	२०००	१६८४५	४३१५५	६००००
१८	अर	३३	२८००	२५५१	२६००	६१०	७३००	१६००	१७४९४	३२५०६	५००००

१९	मल्लि	२८	२२००	१७५०	२२००	६६८	२९००	१४००	११९४६	२८८५४	४००००
२०	मुनिसुव्रत	१८	१८००	१५००	१८००	५००	२०००	१२००	८८१८	२११८२	३००००
२१	नमि	१७	१६००	१२५०	१६००	४५०	५०००	१०००	१०९१७	९०८३	२००००
२२	नेमि	११	१५००	१०००	१५००	४००	१५००	८००	६७११	११२८९	१८०००
२३	पार्श्व	१०	१०००	७५०	१४००	३५०	११००	६००	५२१०	१०७९०	१६०००
२४	महावीर	११	७००	५००	१३००	३००	७००	४००	३९११	१००८९	१४०००
कुल.		१४५२	१७६९००	१४५५९१	१३३४००	३३९९८	२४५२०८	१२६२००	८६१९४९	१९८९०५१	२८४८०००

वादी मुनिओनी संख्या लोकप्रकाशकारे विमळनाथजीनी २६०० लखेली ते प्रमाणे गणतां संख्यामां ४०० वधवाथी श्री प्रवचनसारोद्धार सटीकमां तपासतां तेना टीकाकारे स्पष्टपणे त्रण हजार ने बसो कह्या छे, परंतु दृष्टिदोषना कारणथी तेना मूळमां ब नो छ थइ गयेल जणाय छे. ते उपरथी आ ग्रंथमां पण विमळनाथ चरित्रमां ३६०० लखायेला जणाय छे. श्रीसत्तरीसयस्थान प्रकरणमां ने तेना यंत्रमां पण आ ज कारणथी ३६०० लखायेला परंतु सरवाळो बधा ग्रंथोमां १२६२०० नो ज होवाथी ३२०० बराबर लागे छे. ज्ञानपंचमीनी बुकमां ज्ञानपंचमीना देवना अर्थनी नोटमां बे त्रण संख्यामां जुदी संख्या लखी छे ने अरनाथना भूलथी १६०० ना १५०० लख्या छे ते प्रसंगे लख्युं छे.

श्रीमान् तीर्थंकर, चक्रवर्ती, वासुदेव विगेरेनुं क्रमसूचक यंत्र.

अंक	तीर्थंकर.	चक्रवर्ती.	वासुदेव.	बळदेव.	प्रतिवासुदेव.
१	ऋषभदेव	भरत १			
२	अजितनाथ	सगर २			
३	संभवनाथ				
४	अभिनंदन				
५	सुमतिनाथ				
६	पद्मप्रभ				
७	सुपार्श्वनाथ				
८	चंद्रप्रभ				
९	सुविधिनाथ		..		
१०	शीतळनाथ				
११	श्रेयांसनाथ		त्रिपृष्ठ १	अचळ १	अश्वग्रीव १
१२	वासुपूज्य		द्विपृष्ठ २	विजय २	तारक २
१३	विमळनाथ		स्वयंभू ३	भद्र ३	मेरक ३
१४	अनंतनाथ		पुरुषोत्तम ४	सुप्रभ ४	मधु ४
१५	धर्मनाथ		पुरुषसिंह ५	सुदर्शन ५	निशुंभ ५
		मघवा ३			
		सनत्कुमार ४			
१६	शांतिनाथ	शांतिनाथ ५			

१७	कुंथुनाथ	कुंथुनाथ ६			
१८	अरनाथ	अरनाथ ७			
			पुरुषपुंडरीक ६	आनंद ६	बालि ६
		सुभूम ८			
			नंदन ७	दत्त ७	प्रह्लाद ७
१९	मल्लिनाथ				
२०	मुनिसुव्रत				
		महापद्म ९			
			लक्ष्मण ८	रामचंद्र ८	रावण ८
२१	नमिनाथ				
		हरिषेण १०			
		जय ११			
२२	नेमिनाथ				
			कृष्ण ९	बळभद्र ९	जरासंध ९
		ब्रह्मदत्त १२			
२३	पार्श्वनाथ				
२४	महावीरस्वामी				

१ जे तीर्थंकरनी लाइनमां चक्री के वासुदेवादि लख्या छे ते तेमना विचरता वखतमां थयेला समजवा अने जे नीचे जुदा खानामां लख्या छे ते तेमनुं शासन वर्तता थयेला समजवा.

॥ अथ त्रयस्त्रिंशत्तमः सर्गः प्रारभ्यते ॥

तथास्यामवसर्पिण्यां प्रथमश्चक्रवर्त्तिषु । अभूद्भरत इत्यादि–देवस्य तनुजोऽग्रिमः ॥ १ ॥ सुमंगलाकुक्षिरत्नं पंचचापशतोच्छ्रितः । स्वर्णरुक् चतुरशीति–पूर्वलक्षसुजीवितः ॥ २ ॥ साधिताशेषषट्खंडः स चादर्श–गृहेऽन्यदा । निरंगुलीयकां पश्य–न्नंगुलीं पर्यभावयत् ॥३॥ शरीरासारतां द्राक् च लेभे केवलमुज्ज्वलं । प्रदत्तसाधुवेषश्च शक्रेणागत्य वंदितः ॥ ४ ॥ सहस्रैर्दशभी राज्ञां सेवितः स्वीकृतव्रतैः । विहृत्य लक्षं पूर्वाणा–मवाप परमं पदं ॥ ५ ॥ इति भरतः ॥

अयोध्यायां नगर्यां च द्वितीयश्चक्रवर्त्यभूत् । स्वर्णवर्णः सार्द्धचतु–र्धनुःशतसमुच्छ्रितः ॥ ६ ॥ द्वासप्ततिपूर्वलक्ष–जीवितः सगराह्वयः । सुमित्रविजयक्ष्माप–यशोमत्योस्तनूद्भवः ॥ ७ ॥ अजितस्यार्हतश्चासौ पितृव्यतनयोऽभवत् । यतः सुमित्रविजयो

सर्ग ३३ मो.

आ अवसर्पिणीमां प्रथमजिनेश्वरना मोटा पुत्र भरत, चक्रवर्तीओमां प्रथम थया. (१) ते सुमंगलादेवीनी कुक्षिमां रत्नसमान, पांच सो धनुष्य उंचा देहवाळा, सुवर्णसमान कांतिवाळा अने ८४ लाख पूर्वना आयुवाळा हता. (२) समस्त छ खंड साध्या पछी एकदा आदर्शभुवनमां हता ते वखते हाथनी एक अंगुळी मुद्रिकाविनानी देखतां तेमणे शरीरनी असारता भावी अने तरत ज उज्ज्वळ केवळज्ञान पाम्या. शक्रेंद्रे आवीने मुनिवेष आप्यो अने (ते धारण कर्या पछी) वांद्या. (३–४) चारित्रने स्वीकारेला एवा दश हजार राजाओथी सेवाता ते एक लाख पूर्वसुधी पृथ्वीपर विचरीने परमपदने पाम्या. (५) इति भरतः १.

बीजा चक्रवर्ती सगर नामना अयोध्या नगरीमां थया. ते सुवर्णसमान देहना वर्णवाळा, साडाचार सो धनुष्यनी उंचाइवाळा, ७२ लाख पूर्वना आयुवाळा अने सुमित्रविजय राजा तथा यशोमतीना पुत्र हता. (६–७) ए अजितनाथजीना काकाना पुत्र हता, कारणके सुमित्रविजयनो जितशत्रु राजा सहोदर हतो. (८) ते पण पोताना

जितशत्रुश्च सोदरौ ॥ ८ ॥ सोऽपि स्वपुत्रमरण-प्राप्तवैराग्यवासनः। अजितस्यार्हतः पार्श्वे परिव्रज्य शिवं ययौ ॥ ९ ॥ इति सगरः ॥

अभून्नगर्यां श्रावस्त्यां समुद्रविजयो नृपः। भद्रा प्रियतमा तस्य मघवा तनयस्तयोः ॥ १० ॥ द्विचत्वारिंशदर्ध्यर्द्धा धनुषां वपुरुच्छ्रयः। लक्षाणि पंचवर्षाणा-मायुष्कं चास्य कीर्त्तितं ॥ ११ ॥ संसारानित्यतां ध्यायन् जातवैराग्यवासनः। सोऽगाद्गृहीतचारित्रः स्वर्गलोकं तृतीयकं ॥ १२ ॥ इति मघवा ॥

कुरुजंगलदेशे च हस्तिनागपुरे पुरे। कुरुवंशे महीशोऽभू-दश्वसेनाह्वयो महान् ॥ १३ ॥ सहदेवी च तद्भार्या शीलसौभाग्यशालिनी सनत्कुमारस्तत्पुत्र-श्चतुर्थश्चक्रवर्त्यभूत् ॥ १४ ॥ अद्व्यर्द्धान्येकचत्वारिं-शद्धनूंषि स उच्छ्रितः। तथा त्रिवर्षलक्षायु-र्जगदुत्कृष्टरूपवान् ॥ १५ ॥ तस्मिन्नवसरे कोऽपि सौधर्मेंद्रस्य पर्षदि। ईशानस्वर्गवास्तव्यः संगमाख्यः सुरोऽविशत् ॥ १६ ॥ तत्तेजसा सुराः सर्वे प्रत्यूषे तारका इव। तार्किका इव वा जैने बभूवुर्गततेजसः ॥ १७ ॥ गते तस्मिन् सुरैः सर्वैः पृष्टः

पुत्रोना मरणथी वैराग्य वासनाने पामीने अजितनाथपासे प्रव्रज्या अंगीकार करी मोक्षे गया. (९) इति सगरः २.

श्रावस्तिनगरीमां समुद्रविजय नामे राजा हता. तेने भद्रा नामे प्रियतमा हती. तेमना मघवा नामे पुत्र (त्रीजा चक्रवर्त्ती) थया. (१०) तेमनुं देहमान ४२॥ धनुष्यनुं ने आयुष्य पांच लाख वर्षनुं हतुं. (११) संसारनी अनित्यता ध्यातां वैराग्यवासना उत्पन्न थवाथी तेमणे चारित्र अंगीकार कर्युं अने मरण पामीने त्रीजे देवलोके देव थया. (१२) इति मघवा. ३.

कुरुजंगल देशमां हस्तिनागपुर नगरमां कुरुवंशमां अश्वसेन नामना महान् राजा थया. (१३) तेने शील सौभाग्यशाळी सहदेवी नामे भार्या हती. तेना पुत्र सनत्कुमार नामे चोथा चक्री थया. (१४) तेमना देहनी उंचाइ ४१॥ धनुष्यनी हती अने त्रण लाख वर्षनुं आयु हतुं. जगतमां उत्कृष्ट रूपवाळा हता. (१५) ते अवसरे सौधर्मेंद्रनी सभामां ईशानस्वर्गवासी कोइ संगम नामनो देव कार्यप्रसंगे आव्यो. (१६) तेना तेजथी सर्वे सौधर्मकल्पवासी देवो प्रभाते तारानी जेवा अने जैननी पासे तार्किकोनी जेवा तेजविनाना थइ गया. (१७) ते देवना गया पछी सर्वे देवोए सौधर्मेंद्रने

सौधर्मनायकः । जगावयं भवे पूर्वे भावितात्माभवन्मुनिः ॥ १८ ॥ आचामाम्लवर्द्धमानं तत्राकार्षीत्तपो महत् । तेजस्तदनुभावेन बिभर्त्त्ययमनुत्तरं ॥ १९ ॥ स्वामिन्नन्यस्य कस्यापि रूपमस्त्यधुनेदृशं । इति पृष्टः सुराधीशः शशंसैवमसंशयः ॥२०॥ रूपं सनत्कुमारस्य वर्त्तते चक्रवर्त्तिनः । देवेभ्योऽप्यधिकं नास्मा–दृशां वचनगोचरः ॥ २१ ॥ अश्रद्दधानौ तत्कौत्ति–द्विप्रीभूयागतौ सुरौ । रूपं दिदृक्षू चक्री च तदासीत्स्नानवेश्मनि ॥ २२ ॥ अभ्यक्तस्त्यक्तशृंगारो रूपमालोक्य विस्मितौ । तौ प्रत्युवाच द्रष्टव्यं रूपं मयि सभास्थिते ॥ २३ ॥ ततः स्नातोऽलंकृतश्च दृष्टः सिंहासने स्थितः । ताभ्यां विषण्णचित्ताभ्यां तेन पृष्टे च कारणे ॥२४॥ रोगोत्पत्तिं जगदतु–स्ततः स्वीकृत्य संयमं । सहते स्म गदान् सप्त सप्तवर्षशतावधि ॥ २५ ॥ तथोक्तं योगशास्त्रवृत्तौ–कच्छू १ शोष २ ज्वर ३ श्वासा ४–रुचि ५ कुक्ष्य ६ क्षिवेदनाः ७ । सप्ताधिसेहे पुण्यात्मा सप्त

पूछयुं के—' आवुं आवुं अत्यंत तेज केम छे ? ' इंद्रे कह्युं के—' पूर्वभवे ए भावितात्मा मुनि हता. (१८) ते भवमां तेमणे मोटो आचामाम्लवर्धमानतप कर्यो हतो तेना प्रभावथी ए देव अनुत्तर तेजने पामेल छे. ' (१९) फरी देवोए पूछयुं के—' अत्यारे आवुं अपूर्व तेज बीजा कोइनुं छे ? ' आ प्रमाणे इंद्रने पूछवाथी इंद्रे निःशंसयपणे कह्युं (२०) के—' हाल सनत्कुमार चक्रीनुं रूप देवो करतां पण अधिक छे, ते अमारे वचनगोचर पण थइ शके तेम नथी अर्थात् अमे पण ते रूपनुं वर्णन करी शकीए तेम नथी. ' (२१) आ प्रमाणे इंद्रना वचनने नहीं सद्दहीने कोइ बे देव विप्रनुं रूप करी चक्रीपासे तेमनुं रूप जोवा आव्या. ते वखते चक्री स्नानगृहमां हता. (२२) अभ्यंगन करावेलुं हतुं ने शृंगार तजी दीधेला हता. ते वखते तेमनुं रूप जोइने ते आवेल देवो विस्मय पाम्या. तेमने चक्रीए कह्युं के–' मारुं रूप तो हुं सभामां बेठो होउं त्यारे जोवुं. ' (२३) पछी चक्री स्नान करी वस्त्रालंकार धारण करी सभामां आवीने बेठा. एटले ते बे विप्रो पण आव्या. तेमने आ वखतनुं रूप जोइने विषण्णचित्तवाळा थयेला जोइने चक्रीए कारण पूछयुं. (२४) एटले तेमणे शरीरमां रोगोत्पत्ति थइ गयानुं कह्युं, तेथी वैराग्य पामीने ते चक्रीए चारित्र ग्रहण कर्युं अने सात महाव्याधिओ सात सो वर्षसुधी सहन कर्या. (२५) श्री योगशास्त्रनी वृत्तिमां कह्युं छे के–' कच्छु १, शोष २, ज्वर ३, श्वास ४, अरुचि ५, कुक्षिवेदना ६, अक्षिवेदना ७ आ सात व्याधि ते पुण्या-

वर्षशतानि सः ॥ २६ ॥ उत्तराध्ययनवृत्तेरयमेवाभिप्रायः, ऋषिमंडले तु–कंडू १ अभत्तसद्धा २ तिव्वा वेअणा उ अच्छि ३ कुच्छीसु ४ । कासं ५ सासं च ६ जरं ७ अहियासइ सत्त वाससए ॥ १ ॥ मरणसमाधिप्रकीर्णके तु–सोलस रोगायंका सहिया सह चक्किणा चउत्थेण। वाससहस्सा सत्त उ सामन्नधुरं उवगएणं ॥ १ ॥ सप्तवर्षसहस्राण्यष्टादश रोगानधिसह्येति तु उत्तराध्यनदीपिकायां. शक्रप्रशंसाऽश्रद्धाना–त्पुनर्देवैः परीक्षितः। प्राप्तश्चिकित्सानाकांक्षी तृतीयं स्वर्गमुत्तमः ॥ २७ ॥ इति सनत्कुमारः ॥

श्रीशांतिः पंचमश्चक्री षष्ठः कुंथुजिनेश्वरः । अरोऽर्हन् सप्तमस्तेषां चरितं प्राग्निरूपितं ॥ २८ ॥

हास्तिनाख्ये पुरेऽनंत–वीर्योऽभूत्पृथिवीपतिः । रेणुकायाः स्वसा तस्य प्रियाभूज्जितशत्रुजा ॥ २९ ॥ तस्मिन्नवसरे दुःस्थो विप्रो व्युच्छिन्नवंशकः । अग्निनामा भ्रमन् प्राप तापसाश्रममेकदा ॥ ३० ॥ सुतत्वेनाग्रहीदग्निं जमः कुलपतिश्च तं । ततः स जमदग्न्याख्य–स्तापसोऽभून्महा-

---

त्माए सात सो वर्ष सुधी सहन कर्या. (२६) श्री उत्तराध्ययनवृत्तिनो पण आ अभिप्राय छे. ऋषिमंडळमां तो–कंडु १, अभक्तश्रद्धा–अरुचि २, तीव्र अक्षिवेदना ३, तीव्र कुक्षिवेदना ४, कास ५, श्वास ६ ने ज्वर ७–आ व्याधिओ सात सो वर्षसुधी सहन कर्या'. एम कहेल छे. वळी मरणसमाधिप्रकीर्णकमां ' श्रमणपणानी धुराने प्राप्त थयेला चोथा चक्रीए सात हजार वर्ष सुधी सोळ रोगांतक (महारोग) सहन कर्या '–एम कहेल छे. श्री उत्तराध्ययननी दीपिकामां तो ' सात हजार वर्षसुधी अढार रोगने सहन कर्या ' एम कह्युं छे. फरीने पाछी इंद्रे चक्रीनी प्रशंसा करी तेने नहीं सद्दहीने आवेला देवे कोइ पण प्रकारनी व्याधिनी चिकित्साने ते चक्री इच्छता नथी ए बाबतनी परीक्षा करी. ते चक्री मृत्यु पामीने त्रीजा स्वर्गमां उत्पन्न थया. (२७) इति सनत्कुमारः ४

श्री शांतिनाथ पांचमा चक्री, श्री कुंथुनाथ छठ्ठा चक्री अने श्री अरनाथ सातमा चक्री थया. तेमनुं चरित्र पूर्वे निरूपण करेल छे. (२८) ५–६–७

हस्तिनापुर नामना नगरमां अनंतवीर्य नामे राजा थया. जितशत्रु राजानी पुत्री रेणुकानी बहेन तेनी राणी थइ. (२९) ते अवसरे अग्नि नामनो दुःखी अने व्युच्छिन्न वंशवाळो विप्र एकदा भमतो भमतो कोइ तापसना आश्रममां आव्यो. (३०) त्यांना

तपाः ॥ ३१ ॥ जैनशैवौ तदा वैश्वा–नरधन्वंतरी सुरौ । विवदंतौ नृलो-कं चा–गतौ धर्मं परीक्षितुं ॥ ३२ ॥ परीक्षणीयो जैनेषु प्रथमं दृश्यतेऽत्र यः । परीक्ष्यस्तापसश्रेष्ठः शैवेष्वित्यत्र संगरः ॥ ३३ ॥ तदा भावयतिः पद्म–रथाख्यो मिथिलापतिः । गुरुश्रीवासुपूज्यांते गच्छन् व्रतजिघृक्षया ॥३४॥ प्रातिलोमानुलोमाभ्या–मुपायैर्विविधैरसौ । परीक्षितो न चुक्षोभ पवनैरिव मंदरः ॥ ३५ ॥ अगातां तौ ततो देवौ जमदग्निं परीक्षितुं । चटकौ दंपती भूत्वा तस्थ श्मश्रुण्यतिष्ठतां ॥ ३६ ॥ अनुमन्यस्व मां कांते गत्वाऽयामि हिमालयं । इत्यूचिवांसं चटकं चटकाथैवमब्रवीत् ॥३७॥ द्रुतं नैति भवानन्य–कांतासक्तः स्वभावतः । लंपटानां कुतो मोक्षः–परस्त्री-नागपाशतः ॥ ३८ ॥ स स्माहावश्यमेष्यामि न चेद्गोघातपातकैः । गृह्येऽथवा विनश्यामि पापैर्विश्वस्तघातिनां ॥ ३९ ॥ चटकोचे प्रिया-लीकैः पर्याप्तं शपथांतरैः । तापसस्यास्य पापेन गृह्येऽहमिति शप्यतां ॥ ४० ॥ ततः स तापसः क्रुद्धः खगौ धृत्वा करेण तौ । उवाच

कुलपति जमे वे अग्निने पुत्रपणे ग्रहण कर्यो. त्यारथी ते जमदग्नि नामनो महातप करनारो तपस्वी थयो. (३१) जैनधर्मी ने शैवधर्मी एवा वैश्वानर ने धन्वंतरी नामना बे देवो परस्पर वाद करता धर्मनी परीक्षा करवा माटे मनुष्यलोकमां आव्या. (३२) जैनमां जे प्रथम एटले धर्मनी शरुआतवाळो देखाय तेनी परीक्षा करवी अने पछी शैवधर्मी ताप-समां जे श्रेष्ठ गणाता होय तेनी परीक्षा करवी एवो निर्णय कर्यो. (३३) ते वखते भाव-यति एवो मिथिलापति पद्मरथ नामनो राजा श्रीवासुपूज्य गुरुनी पासे व्रत लेवानी इच्छाथी जतो हतो. (३४) तेनी ए देवोए अनुलोम–प्रतिलोम एवा विविध उपायोवडे परीक्षा करी, पण ते पवनवडे मेरुपर्वत चलित न थाय तेम चलित थया नहीं. (३५) पछी ते देवो जमदग्निनी परीक्षा करवा गया अने चकला चकलीनुं रूप करी तेनी दाढीमां रह्या. (३६) तेमांथी चकलो बोल्यो के–' हे कांता ! मने रजा आप. हुं हिमालय जइने पाछो तरत आवीश' आम कहेता चकलाने चकलीए कह्युं (३७) के–' स्वभावथी ज अन्य-कांतामां आसक्त एवा तमे उतावळा पाछा न आवो, केमके लंपटो परस्त्रीरूपी नागपाश-मांथी शी रीते छुटी शके ? ' (३८) एटले चकलो बोल्यो के–' हुं अवश्य आवीश. जो न आवुं तो गौहत्यानुं पातक मने लागे अथवा विश्वासघातीना पापथी मारो विनाश थाय.' (३९) त्यारे चकली बोली के–' हे प्रिय ! बीजा सोगन लेवाथी सर्युं. आ तापसनुं पाप मने लागे एवा सोगन खाओ.' (४०) आ प्रमाणे सांभळीने ते तापस क्रोधायमान थयो अने बंने

मयि किं पाप–मीदृगाजन्म सुव्रते ॥ ४१ ॥ ऊचतुस्तौ खगौ पापं पापर्षे किमतः परं । अनुत्पादितपुत्रेण यत्त्वया चर्यते तपः ॥ ४२ ॥ ततो भ्रष्टमनाः सोऽभू–त्स्त्रीपाणिग्रहणोत्सुकः । मिथ्यादृशां हि वैराग्यं कुलटाचित्तचंचलं ॥ ४३ ॥ अखिद्यत सुरो धन्वं–तरिस्तं वीक्ष्य तादृशं । किमेभिस्तापसैर्मूढै–रित्यभूदयमार्हतः ॥ ४४ ॥

भूरिकन्यं ययाचेऽसौ जितशत्रुमृषिर्नृपं । त्वामिच्छंतीं ददामीति सोऽवादीच्छापभीरुकः ॥ ४५ ॥ क्षामं भिक्षाचरं वीक्ष्य निखिलाः कृतथूत्कृतीः । कुब्जीचक्रेऽसकौ शापा–देकोनं कन्यकाशतं ॥ ४६ ॥ रेणुक्रीडापरां लघ्वीं रेणुकानामकन्यकां । फलैः प्रलोभ्य मामेषा वृणोतीत्यवदन्नृपं ॥ ४७ ॥ नृपेण दत्तामादाय तां प्रसन्नः परा अपि । बटुः कन्याः पटूकृत्य वने नीत्वा पुपोष तां ॥ ४८ ॥ तातवत्परिपोष्यापि

पक्षीने हाथवडे पकडी कह्युं के–' जन्मथी मांडीने व्रतधारी एवा मारामां शुं एवुं पाप छे के चकलीए ए पाप लेवानुं कह्युं ? ' (४१) एटले ते बंने पक्षी बोल्या के–' हे पापर्षि ! आथी वधारे पाप क्युं छे के तमे पुत्रोत्पत्ति कर्या सिवाय तप तपो छो ? ' (४२) आ प्रमाणे पक्षीओना वचनो सांभळी तापसनुं मन चलित थयुं अने ते कोइ पण स्त्रीसाथे पाणिग्रहण करवाने उत्सुक थया, कारण के मिथ्यात्वीनो वैराग्य कुलटाना चित्त जेवो चंचळ होय छे. (४३) जमदग्निनी आ प्रमाणे स्थिति जोइने धन्वंतरी देव खेद पाम्यो अने विचार्युं के–' आ मूढ एवा तापसोथी शुं ? अर्थात् एओमां वास्तविक धर्म जणातो नथी ' आम विचारीने ते श्रावक थयो. (पछी बंने देव स्वर्गे गया). (४४)

अहीं जमदग्निए घणी कन्यावाळा जितशत्रु राजा पासे जइने एक कन्यानी मागणी करी एटले तेना शापथी भय पामता राजाए कह्युं के–' जे कन्या तमने इच्छशे ते आपीश. '(४५) परंतु आ दुर्बळ भिक्षाचरने जोइने बधी कन्याओए थुथुकार कर्यो एटले ए तापसे एक ऊणी सो (९९) कन्याओने शापवडे कुबडी करी दीधी. (४६) पछी धूळमां क्रीडा करती सौथी नानी रेणुका नामनी कन्याने फळवडे लोभावीने आ मने इच्छे छे एम तेणे राजाने कह्युं. (४७) एटले राजाए तेने आपी. तेने लइने प्रसन्न थयेला ते तापसे कुबडी करेली बधी कन्याओने पाछी यथास्वरूप करी अने रेणुकाने लइने ते वनमां–पोताना आश्रममां आव्यो. त्यां ते तेनुं पोषण करवा लाग्यो. (४८) पितानी जेम परिपालन कर्या छतां कामने वश एवो अने अंगो

सोऽथ कामवशंवदः । जरन्नरीरमद्वालां श्लथांगोऽप्यश्लथस्पृहः ॥ ४९ ॥ ऋतुकालेऽथ तेनोक्ता सा बाला त्वत्कृते चरुं । साधयामि यतस्ते स्या-न्नंदनो ब्राह्मणोत्तमः ॥ ५० ॥ सावग् द्वौ साधय चरू तत्र ब्राह्मः कृते मम । अन्यः क्षात्रोऽनंतवीर्य-प्रियाया मत्स्वसुः कृते ॥ ५१ ॥ साधितौ द्वौ चरू तेन ब्राह्मक्षत्रमहोनिधी । ततः साऽचिंतयच्चित्ते रेणुका दीर्घया दृशा ॥ ५२ ॥ मा भूत्सुतोऽपि मे मद्व-दारण्यो हरिणादिवत् । ध्यात्वेति स्वयमादत्ता क्षात्रतेजःकरं चरुं ॥ ५३ ॥ द्वितीयं चापरा तेन जातौ कुलविलक्षणौ । रामः पुत्रो रेणुकायाः परस्याः कृतवीर्यकः ॥ ५४ ॥

कोऽपि विद्याधरो भ्रष्ट-नभोगतिरुपासितः । रामेण विद्या तद्दत्ता पार्शवी साधिता क्रमात् ॥ ५५ ॥ स्वसृप्रेम्णान्यदा चागा-द्रेणुका हस्तिनापुरे । भुक्ता चानंतवीर्येण श्याली जातसुताप्यभूत् ॥ ५६ ॥ ससुतामपि तां निन्ये जमदग्निर्निजं गृहं । क्रुद्धश्च पर्शुरामस्तां सडिंभां मातरं न्यहन् ॥ ५७ ॥ तद्भगिन्योदितं पत्ये क्रुद्धोऽथानंतवीर्यराट् ।

शिथिल थयेल छतां जेनी स्पृहा शिथिल थइ नथी एवो ते वृद्ध तापस ते बाळानी साथे कामक्रीडा करवा लाग्यो. (४९) अन्यदा ऋतुकाळे तापसे ते बाळाने कह्युं के-'तारे माटे एक चरु साधुं के जेथी तने ब्राह्मणोत्तम पुत्र थाय.' (५०) एटले ते रेणुका बोली के 'तमे बे चरु साधो, तेमां ब्राह्मचरु मारे माटे अने क्षात्रचरु अनंतवीर्यनी प्रिया मारी बहेनने माटे.' (५१) आम कहेवाथी तेणे ब्राह्म अने क्षत्रना तेजना निधान समान बे चरु साध्या. ए वखते रेणुका दीर्घदृष्टिथी विचारवा लागी (५२) के-'मारो पुत्र पण मारी जेम वनमां रहेनारो हरिणादिक जेवो न थाओ' आम विचारीने क्षात्रतेज करनार चरु पोते ग्रहण कर्यो (५३) अने बीजो पोतानी बहेनने आप्यो तेथी कुळमां विलक्षण एवा बंनेने पुत्र थया. रेणुकानो पुत्र राम नामनो थयो अने तेनी ब्हेनने कृतवीर्य नामनो पुत्र थयो. (५४)

अन्यदा कोइ विद्याधर आकाशगमन करतां भ्रष्ट थयेलो भूमिपर पडेलो तेनी रामे सारी रीते उपासना (चाकरी) करी, तेथी तेणे रामने पार्शवी (परशु संबंधी) विद्या आपी. तेणे अनुक्रमे ते विद्या साधी. (५५) बहेनना प्रेमथी अन्यदा रेणुका हस्तिना-पुरमां आवी. त्यां अनंतवीर्ये ते श्याळीने भोगवी अने तेने पुत्र पण थयो. (५६) जमदग्नि पुत्रसहित तेने पोताना आश्रममां लइ गयो. तेने जोइ क्रोध पामेला परशुरामे पुत्रसहित माताने हणी नाखी. (५७) आ वात रेणुकानी बहेने पोताना पति अनंत-

ीडनार्थं गते रामे द्राग्ममर्द तदाश्रमं ॥ ५८ ॥ ततश्च पर्शुरामेणा–नंतवीर्यो निपातितः। कृतवीर्यस्ततस्तस्य पदेऽभूत्पृथिवीपतिः ॥ ५९ ॥ तेन क्रुद्धेन नीतश्च जमदग्निर्यमालयं। रिपोस्ताते हते स्वस्य तातदुःखं हि शाम्यति ॥ ६० ॥

ततश्च पर्शुरामेण प्रज्ज्वलत्पर्शुतेजसा। कृतवीर्यः क्षयं नीतो निखिलैः क्षत्रियैः सह ॥ ६१ ॥ कृतवीर्यप्रिया तारा ततो गुर्वी पलायिता। कृपया तापसैस्त्राता स्वाश्रमे भूमिवेश्मनि ॥ ६२ ॥ क्रमाच्चतुर्दशस्वप्न–सूचितोऽस्याः सुतोऽभवत्। चखाद भूमिमित्युक्तः सुभूम इति तापसैः ॥ ६३ ॥

हस्तिनापुरसाम्राज्यं रामः स्वीकृत्य भूतलं। निःक्षत्रियं सप्तवारां–श्चकार क्रोधदुर्द्धरः ॥ ६४ ॥ अन्यदा क्षत्रियान्वेषी सुभूमालंकृताश्रमे। जगाम रामस्तत्रास्य जज्वाल परशुः क्रुधा ॥ ६५ ॥ कोऽप्यत्र क्षत्रियोऽस्तीति पृष्टः कुलपतिर्जगौ। तापसाः क्षत्रियाः संती–त्युक्तेऽसौ व्यरम-

---

वीर्यने करी एटले क्रोधायमान थयेला तेणे राम क्रीडा करवा माटे बहार गयेल ते वखते त्यां जइने तत्काळ तेनो आश्रम तोडीफोडी नाख्यो. (५८) ए वात जाणीने पर्शुरामे अनंतवीर्यने मारी नाख्यो एटले तेने स्थानके कृतवीर्य पृथ्वीपति (राजा) थयो. (५९) ते कृतवीर्ये क्रोधायमान थइने जमदग्निने मारी नाख्यो. 'शत्रुना पिताने हणवाथी पोतानुं पितासंबंधी दुःख शांत थाय छे'. (६०)

पछी जाज्वल्यमान पर्शुना तेजथी पर्शुरामे कृतवीर्यने मारी नाख्यो. ते साथे समग्र क्षत्रीओने पण मारी नाख्या. (६१) ते वखते कृतवीर्यनी स्त्री तारा सगर्भा हती ते भागी गइ. तेने कोइ तापसे कृपावडे पोताना आश्रमना भोंयरामां राखीने तेनुं रक्षण कर्युं. (६२) अनुक्रमे तेने चौद स्वप्नसूचित पुत्र थयो. ते बाल्यावस्थामां माटी खावा लाग्यो तेथी तापसोए तेनुं नाम सुभूम पाड्युं. (६३)

अहीं पर्शुरामे हस्तिनापुरनुं राज्य स्वीकारीने दुर्धर क्रोधवाळा तेणे सात वार निःक्षत्रिय (क्षत्रीविनानी) पृथ्वी करी. (६४) अन्यदा क्षत्रियोने शोधतो राम सुभूमथी अलंकृत आश्रममां आव्यो. त्यां तेनी पर्शु के जे क्षत्रियने देखीने जाज्वल्यमान थती हती ते क्रोध करीने जाज्वल्यमान थइ. (६५) एटले तेणे कुलपतिने पूछ्युं के–'अहीं कोइ पण क्षत्रिय छे?' कुलपतिए कह्युं के–'आ तापसो क्षत्रियो ज छे.' आम कहेवाथी

स्क्रुधः ॥ ६६ ॥ हतानां क्षत्रियेंद्राणां दंष्ट्रिकाभिरबीभरत् । स्थालमेकं महद्रामः संग्रामोद्दामदोर्मदः ॥ ६७ ॥ य एताः पायसीभूताः भोच्यते स त्वदंतकः । इति नैमित्तिकेनोक्तो रामस्तन्निर्णिनीषया ॥ ६८ ॥ अवारितं पुरे सत्रा–गारं निर्माय तत्र च । दंष्ट्रास्थालांकितं सिंहा–सनमाद्दावतिष्ठिपत् ॥ ६९ ॥

विद्याधरो मेघनादः सुतां पद्मश्रियं ददौ । सुभूमाय निमित्तज्ञ–गिरा तं चक्रिणं विदन् ॥ ७० ॥ सुभूमस्तातवृत्तांतं ज्ञात्वा गदितमंबया । क्रुद्धो रामं संजिहीर्षु–र्द्राग् ययौ हस्तिनापुरं ॥ ७१ ॥ गत्वा सिंहासने तस्मिन्निषण्णः सिंहशाववत् । दंष्ट्रास्ताः पायसीभूता बुभुजे च भुजोर्जितः ॥ ७२ ॥ हतेषु मेघनादेन तदारक्षिद्विजातिषु । रामोऽप्यागात्तत्र काल–दूताहूत इव द्रुतं ॥ ७३ ॥ मुक्तः सुभूमे रामेण परशुः प्रज्ज्वलन्नपि । स्वयमेव शशामाशु न्यायभाजीव दुर्जनः ॥ ७४ ॥ चक्रत्वी-

---

तेनो क्रोध विराम पाम्यो. (६६) संग्रामोने विषे उद्दाम दोर्मदवाळा पर्शुरामे पोते हणेला क्षत्रियेंद्रोनी दाढाओवडे एक मोटो थाळ भर्यो. (६७) 'जेना जोवाथी आ दाढाओ क्षीर जेवी थइ जशे अने ते क्षीरनुं जे भोजन करशे ते तने मारनार थशे' एम नैमित्तिके कहेलुं होवाथी रामे तेनो निर्णय करवा माटे ते नगरमां एक अवारित एवी कोइने अटकायत नहीं करनारी दानशाळा शरु करी अने तेना मुखद्वारपासे ज ए दाढावाळा स्थाळयुक्त एक सिंहासन स्थापन कर्युं. (६८–६९)

अहीं मेघनाद नामना विद्याधरे निमित्तज्ञनी वाणीथी सुभूमने चक्री थनार जाणीने पोतानी पद्मश्री नामनी पुत्री तेनी साथे परणावी. (७०) पोतानी माताना कहेवाथी पोताना पितासंबंधी वृत्तांत जाणीने क्रोधायमान थयेल सुभूम पर्शुरामने हणवा माटे एकदम हस्तिनापुर गयो. (७१) ते दानशाळापासे गयो अने त्यां सिंहासन पडेलुं जोइने सिंहना बाळकनी जेम तेनी उपर बेठो. तेना जोवाथी ज दाढा क्षीररूप थइ गइ एटले बळवान भुजावाळो ते बधी क्षीर खाइ गयो. (७२) मेघनाद तेनी साथे आवेलो हतो तेणे ते दानशाळाना रक्षक ब्राह्मणोने मारी नाख्या. ए हकीकत जाणीने काळदूते बोलाव्यो होय तेम पर्शुराम तरत ज उतावळो त्यां आव्यो. (७३) आवतां वेंत ज तेणे जाज्वल्यमान पर्शु सुभूमउपर मूकी; परंतु न्यायवान पासे दुर्जन शांत थइ जाय तेम ते स्वयमेव शांत थइ गइ. (७४) एटलामां तो चक्ररत्नपणे परिणमी गयेल थाळरूपचक्र

भवत्स्थालं सुभूमप्रेरितं ततः। शिरश्चिच्छेद रामस्य पुण्यतः किं न संभवेत् ॥ ७५ ॥

त्रिःसप्तकृत्वो निर्विप्रं स चकार महीतलं। वैरनिर्यातनं कुर्व–स्त्रिगुणं मत्सरोल्बणः ॥ ७६ ॥ निर्जिताशेषषट्खंडः स चंडक्रोधदुर्द्धरः। विप्रघातान्निववृते न मनागपि निर्दयः ॥ ७७ ॥ सोऽन्यदा धातकीखंड–भरतं जेतुमुत्सुकः। निवारितोऽपि मंत्र्याद्यै–र्भृशं दुःशकुनैरिव ॥ ७८ ॥ रत्नेन चर्मणांभोधिं तरीतुमुपचक्रमे। अभूच्च बुद्धिर्देवानां चर्मरत्नभृतां तदा ॥ ७९ ॥ बिभ्रत्येवेदमन्येऽमी विश्राम्यामि क्षणं त्वहं। युगपच्चिंतयित्वेति सर्वैस्तन्मुमुचे श्लथं ॥ ८० ॥ ततः स चर्मणा तेन पापेनेव गरीयसा। ममज्ज वार्द्धौ देहेन दुर्गतावात्मना पुनः ॥८१॥ तथोक्तं–तुर्यात्कषायात्पंचत्वं प्राप्य षट्खंडभूपतिः। सप्तमं नरकं प्राप–दष्टमश्चक्रवर्त्यसौ ॥८२॥ अष्टाविंशतिकोदंडो–त्तुंगदेहोऽयमीरितः। षष्टिवर्षसहस्रायुश्चामीकरतनुद्युतिः ॥ ८३ ॥ इति सुभूमः ॥

सुभूमे राम उपर मूक्युं, तेथी रामनो शिरच्छेद थइ गयो. 'पुण्यथी शुं संभवतुं नथी?' (७५)

पछी ते सुभूमे त्रण सप्तक एटले २१ वार पृथ्वीतळने ब्राह्मणरहित कर्युं. 'तीव्र रोषथी वैरनुं निर्यातन त्रणगणो बदलो वाळे त्यारे थाय छे.' (७६) प्रचंड क्रोधथी दुर्धर एवो ते निर्दय सुभूम समस्त छ खंडने साध्या छतां विप्रना घातथी किंचित् पण निवर्त्यो (पाछो वळ्यो) नहीं. (७७) अन्यदा धातकीखंडना भरतने जीतवाने ते उत्सुक थयो. दुःशकुननी जेम मंत्री वगेरेए बहु रीते वार्या छतां चर्मरत्नवडे लवणसमुद्र तरी जवाने ते तैयार थयो. (अने बधुं लश्कर चर्मरत्नपर चडावीने चाल्यो) ते वखते चर्मरत्नने उपाडनारा दरेक देवोनी आवी बुद्धि थइ (७८–७९) के–'आ रत्नने बीजा देवो उपाडे छे तेथी हुं क्षणमात्र विसामो लउं.' आ प्रमाणे समकाळे सर्वे (हजारे) देवोनी एवी बुद्धि थवाथी बधा देवोए ते चर्मरत्न छोडी दीधुं. (८०) महापापथी जेम संसारसमुद्रमां डूबी जाय तेम ते चर्मरत्नसहित सुभूम चक्री शरीरवडे समुद्रमां डूबी गयो अने आत्मावडे नरकमां गयो. (८१) कह्युं छे के–'चोथा कषाय (अनंतानुबंधी लोभ) थी छ खंडनो राजा आठमो चक्रवर्ती सुभूम सातमी नरके गयो.' (८२) ते अठावीश धनुष्य उंचा देहवाळो, साठ हजार वर्षना आयुवाळो अने सुवर्ण जेवी देहनी कांतिवाळो हतो. (८३) इति सुभूमः ८

आसीद्वाणारसी नाम काशीदेशे महापुरी । तत्र पद्मोत्तरो नाम राजा ज्वाला च तत्प्रिया ॥८४॥ अत्र—जम्म विणीय १ अउज्झा २ सावत्थी ३ पंच हत्थिणपुरंमि ८ वाणांरसि ९ कंपिल्ले १० रायगिहे चेव ११ कंपिल्ले १२ ॥ १ ॥ इत्यावश्यकनिर्युक्त्यभिप्रायेण नवमस्य चक्रिणो वाणारसी जन्मपुरी प्रतीयते, श्रीशांतिसूरिकृताष्टादशोत्तराध्ययनवृत्तौ त्वस्य कुरुदेशे हस्तिनागपुरमुक्तमस्तीति ज्ञेयं.

विष्णुनामा तयोः पुत्रो हर्यक्षस्वप्नसूचितः । महापद्मः परश्चक्रिसूचकस्वप्नसूचितः ॥८५॥ तदोज्जयिन्यां श्रीवर्मो राजा तस्य पुरोहितः । नमुचिर्नाम मिथ्याद्द-गभूत्तस्मिन् पुरेऽन्यदा ॥ ८६ ॥ मुनिसुव्रतनाथस्य विनेयः सुव्रताह्वयः । मूरिर्भूरिपरीवारो विहरन् समवासरत् ॥ ८७ ॥ गच्छतस्तन्नमस्यार्थं पू—र्जनान् वीक्ष्य भूपतिः । उपाचार्यमुपेयाय युक्तो नमुचिनामुना ॥ ८८ ॥ वदन् वितंडावादेन नमुचिर्गुरुभिस्सह । शिष्येण लघुनैकेन सद्यो वादे पराजितः ॥ ८९ ॥ विलक्षीभूतवदन—स्ततो द्विष्टः

काशी देशमां वाणारसी नामे मोटी नगरी हती. त्यां पद्मोत्तर नामे राजा हता अने ज्वाळा नामे तेनी प्रिया हती. (८४) अहीं ' चक्रीओनो जन्म विनीता १, अयोध्या २ ने श्रावस्तिमां ३, पांच चक्रीनो हस्तिनापुरमां–४–५–६–७–८, पछी वाणारसी ९, कांपिल्य १०, राजगृही ११ अने कांपिल्य १२ मां समजवो.' आ प्रमाणे आवश्यकनिर्युक्तिना अभिप्रायथी नवमा चक्रीनी जन्मपुरी वाणारसी होवानुं प्रतीत थाय छे, परंतु श्री शांतिसूरिकृत उत्तराध्ययनसूत्रना १८ मा अध्ययननी वृत्तिमां तो एनो जन्म कुरुदेशमां हस्तिनापुर नगरमां कह्यो छे.

पद्मोत्तर ने ज्वाळानो प्रथम पुत्र सिंहस्वप्नसूचित विष्णु नामनो थयो अने पछी बीजो पुत्र चक्रवर्तीना जन्मसूचक चौद स्वप्नवडे महापद्मनामे थयो. (८५) ते वखते उज्जयिनीमां श्रीवर्म नामे राजा हतो. तेने नमुचि नामे प्रधान हतो ते मिथ्यादृष्टि हतो. अन्यदा ते नगरमां मुनिसुव्रतस्वामीना शिष्य सुव्रत नामना आचार्य घणा परिवार सहित विचरता विचारता समवसर्या. (८६–८७) तेने वंदन करवा माटे नगरजनोने जता जोइने राजा नमुचि प्रधानसहित त्यां गयो. (८८) त्यां गुरुनी साथे वितंडावादवडे वाद करतां नमुचिने जोइने एक लघुशिष्ये थोडा वखतमां ज तेने वादमां पराजित कर्यो. (८९) एटले विलखा मुखवाळो थइने ते पोताने स्थाने गयो. पछी दुष्ट बुद्धिवाळो अने द्वेषी एवो ते

स दुष्टधीः । मुनीन् हंतुं गतो रात्रौ देवेन स्तंभतो दृढं ॥ ९० ॥ प्रातर्नृपादिभिर्लोकै–र्दृष्टः कष्टेन मोचितः । धिक्कृतो ह्रीविलक्षास्यः स ययौ हस्तिनापुरं ॥ ९१ ॥ मंत्री जातो महापद्म–युवराजस्य तत्र सः । जग्राह सिंहसामंतं दुष्टं जनपदद्रुहं ॥ ९२ ॥ ततो वरं वृणीष्वेति महापद्मोऽब्रवीदमुं । स स्माहास्तु वरः कोशे याचिष्येऽवसरे विभो ! ॥ ९३ ॥

ततो महापद्ममात्रा–ऽकारि जैनरथो महान् । लक्ष्मीनाम्न्या सपत्न्या च शैव्या ब्राह्मरथोऽत्र च ॥ ९४ ॥ आदावुत्सवमाश्रित्य विवादे प्रसृते तयोः । द्वयोः साम्याय भूपस्तौ रथौ द्वावप्यवारयत् ॥ ९५ ॥ महापद्मस्ततोऽध्यासी–द्धिग्मां जातमनर्थकं । मयि सत्यपि यन्मातु–र्हतो रथमनोरथः ॥ ९६ ॥ अहो ममापि न मनाग् पित्रा दाक्षिण्यमीक्षितं । इति देशांतरं द्रष्टुं स मानी निरगात्ततः ॥ ९७ ॥ यदि राज्यमहं लप्स्ये तदा मातुर्मनोरथं । पूरयिष्यामि निर्माय क्ष्मामर्हच्चैत्यमंडितां ॥ ९८ ॥

नमुचि रात्रे गुरुमहाराजने हणवा गयो, एटले देवे तेने दृढपणे स्तंभित करी दीधो. (९०) प्रभाते राजाविगेरे लोकोए ते स्थितिमां तेने जोयो अने महाकष्टे छुटो कराव्यो. अहीं धिक्कार पामेलो अने लज्जावडे विलक्ष वदनवाळो थयेलो ते उज्जयिनी छोडीने हस्तिनापुर गयो. (९१) त्यां ते महापद्म युवराजनो मंत्री थयो. त्यां रह्यो सतो ते ते देशनो द्रोह करनारा सिंह नामना दुष्ट सामंतने बांधी लाव्यो. (९२) तेना पराक्रमथी तुष्टमान थयेला महापद्मकुमारे ' वर माग ' एम तेने कह्युं. ते बोल्यो के–' हाल तो हे स्वामी ! ए वर भंडारमां राखो, अवसरे मागीश. ' (९३)

हवे महापद्मनी माताए एक जैनरथ घणो मोटो कराव्यो अने तेमनी सपत्नी शैवधर्मी लक्ष्मी नामे हती तेणे ब्राह्मरथ कराव्यो. (९४) ते रथने फेरववानो प्रथम उत्सव करवानी बंने राणीओए आग्रहपूर्वक मागणी करी एटले राजाए समानता जाळववा माटे बंनेना रथनो महोत्सव बंध रखाव्यो. (९५) ते वखते महापद्म विचारवा लाग्यो के–' निरर्थक जन्मेला एवा मने धिक्कार छे के मारी हयाति छतां मारी मातानो मनोरथ हणाइ गयो ! (९६) अहो ! मारा पिताए मारुं कांइ पण दाक्षिण्य साचव्युं नहीं.' एम विचारीने मानी एवो महापद्म देशांतर जोवानी इच्छाथी त्यांथी नीकळी गयो (९७) अने विचार्युं के–" जो हुं राज्य पामीश तो प्रथम मातानो मनोरथ पूर्ण करीश अने आ पृथ्वी जिनचैत्योवडे मंडित करीश अर्थात् संख्याबंध जिनचैत्यो करावीश. " (९८)

ध्यायन्निति भुवि भ्राम्यन् स लेभे विविधाः श्रियः । निधानानि नव प्राप रत्नानि च चतुर्दश ॥ ९९ ॥ साधयित्वा च षट्खंड–राज्यं प्राज्य-पराक्रमः । हस्तिनापुरमागत्य स ननाम पितुः पदौ ॥ १०० ॥ स्त्रीरत्नं चास्य मदना–वली नागवतीभवा । जनमेजयराजस्य सुता चंपा-पतेरभूत् ॥ १ ॥

सुव्रतस्वामिशिष्यस्य सुव्रतस्यांतिके मुनेः । पद्मोत्तरश्च विष्णुश्च वैराग्यरसवासितौ ॥ २ ॥ व्रतं जगृहतुः पद्मो–त्तरस्तत्र ययौ शिवं । विष्णुश्चोत्पन्नविविध–लब्धिर्विहृतवान् भुवि ॥ ३ ॥ महापद्मोऽभिषिक्तोऽथ चक्रित्वेऽशेषपार्थिवैः । मातुर्मुदे रथं जैनं पुरेऽभ्रमयदुत्सवैः ॥ ४ ॥ चकार भारतीं भूमिं जिनचैत्यैरलंकृतां । परःशतैः पुरग्राम–दुर्गशैलवनादिषु ॥ ५ ॥ तस्थिवत्सु चतुर्मासीं हस्तिनाख्यपुरेऽन्यदा । सुव्रतर्षिषु दुष्टात्मा नमुचिर्जैनसाधुषु ॥ ६ ॥ महापद्मादयाचिष्ट प्रभोर्न्यासीकृतं वरं । सोऽपि तेनार्थितं राज्यं ददौ यज्ञोत्सवा-

---

आ प्रमाणे विचारीने पृथ्वीपर भमतो ते विविध प्रकारनी संपदा पाम्यो. नव निधान पाम्यो अने चौद रत्नो मेळव्या. (९९) पछी अत्यंत पराक्रमवाळा तेणे छ खंड साध्या–बधा राजाओने वश कर्या अने पछी हस्तिनापुर आवी पिताना चरणमां नमस्कार कर्यो. (१००) चंपापति जनमेजय राजा अने नागमतीनी पुत्री मदनावली तेनुं स्त्रीरत्न थयुं. (१)

अन्यदा मुनिसुव्रतस्वामीना शिष्य सुव्रताचार्यनी पासे वैराग्य रंगथी वासित थयेला पद्मोत्तरराजाए अने विष्णुकुमारे चारित्र ग्रहण कर्युं. तेमां पद्मोत्तरराजा मोक्षे गया अने अनेक लब्धिओ जेने उत्पन्न थयेल छे एवा विष्णुकुमार मुनि पृथ्वीपर विहार करवा लाग्या. (२–३) अहीं पद्मोत्तर राजाए दीक्षा लीधी ते ज वखते समस्त राजाओए मळीने महापद्मने चक्रीपणानो अभिषेक कर्यो. पछी माताने हर्ष पमाडवा माटे घणा उत्सवपूर्वक तेमनो करावेलो जैनरथ आखा नगरमां फेरवाव्यो. (४) तेम ज पुर, ग्राम, दुर्ग, पर्वत अने वन विगेरे सर्व ठेकाणे सेंकडो जैनचैत्यो करावीने तेवडे तेणे समग्र भरतखंडनी पृथ्वी सुशोभित करी. (५) अन्यदा सुव्रताचार्य हस्तिनापुरमां आवीने चातुर्मास रह्या. ते वखते जैन साधुप्रत्ये परमद्वेषी दुष्टात्मा नमुचिए महापद्मपासे थापणरूप राखेलो वर माग्यो. महापद्मे पण

वधि ॥ ७ ॥ युग्मम् ॥ अथैनं पार्थिवं नव्यं सर्वे सेवितुमैयरुः । पाखंडिनो विना जैन-मुनीन् छिद्रं तदेव च ॥ ८ ॥ पुरस्कृत्याब्रवीत्सोऽपि साधू-नाहूय संसदि । भो यूयं लोकमर्यादा-मपि वित्थ न किं जडाः ? ॥९॥ युग्मम् ॥ यन्नंतुं नागता नव्य-नृपं तदथ गच्छत । दूरं विहाय मद्देशं न चेन्नि-ग्रहमाप्स्यथ ॥ १० ॥ बोधितोऽप्यवदद्दुष्टः स चेत्सप्तदिनोपरि । यः कोऽपि भवतामत्र स्थाता हंतव्य एव सः ॥ ११ ॥ ततो लब्धिमतैकेन साधुना विष्णुमाह्वयन् । सूरयो वत्सरशतान् षष्टिं तीव्रतपोजुषं ॥ १२ ॥ ततो विष्णुकुमारेण बोधितोऽपि कदाग्रही । पदत्रयमितं स्थानं याचितस्त-द्ददौ क्रुधा ॥ १३ ॥ त्रिपद्याः परतस्तिष्ठन् शीर्षच्छेद्यो भवत्विति । तेनोक्ते क्रुधितो विष्णु-र्विचक्रे वैक्रियं वपुः ॥ १४ ॥ द्वाभ्यामाक्रम्य पादाभ्यां प्राक्प्रत्यग्वार्धिवेदिके । नमुचेरमुचन्मूर्ध्नि तृतीयं चरणं ततः ॥ १५ ॥ इत्युपदेशमालाकर्णिकाद्यभिप्रायः, त्रिषष्टीयपद्मचरित्रोत्तराध्य-

---

तेनो यज्ञ चालता सुधी (७-८ दिवस) तेणे प्रार्थना कर्या प्रमाणे राज्य सोंप्युं. (६-७) आ नवा राजानी सर्वे सेवा करवा आव्या, सर्वे पाखंडीओ तेनी पासे आवी गया; मात्र जैन मुनि न आव्या. ते छिद्र पामीने ते वातने आगळ करी जैनसाधुने सभामां बोलावी तेणे कह्युं के-' हे मूर्खो ! शुं तमे लोकमर्यादा पण जाणता नथी ? (८-९) केमके नवा राजाने प्रणाम करवा माटे पण तमे आव्या नथी, तो हवे तमे मारो देश मूकीने दूर चाल्या जाओ नहीं तो हुं तमारो निग्रह करीश. ' (१०) तेने घणी रीते समजाव्या छतां ते दुष्ट बोल्यो के-' सात दिवस पछी जो तमारामांथी कोइ पण अहीं मारा राज्यमां रहेशे तो तेने मारी नांखवामां आवशे.' (११) आ प्रमाणे तेनो हुकम थतां आचार्ये लब्धिवाळा एक मुनिने छ हजार वर्षथी तीव्र तप करता विष्णुकुमारने (मेरुपर्वतनी चूलिकापरथी) बोलाववा मोकल्यो. (१२) तेणे जइने बधी हकीकत कही एटले तेणे गुरुपासे आवीने बधी वात सांभळी. पछी ते नमुचिपासे गया. विष्णुकुमारे बहु रीते समजाव्या छतां ते कदाग्रही नमुचि समज्यो नहीं. छेवटे तेमणे त्रण पगला जमीन मागतां नमुचिए क्रोधायमान थइने आपी अने कह्युं के-' त्रण पगलांथी बहार रहेशो तो शिरच्छेद करवामां आवशे.' आम कहेवाथी क्रोधायमान थयेला विष्णुकुमार मुनिए वैक्रिय शरीर विस्तार्युं, (१३-१४) अने तेना बे पगवडे पूर्वने पश्चिम लवणसमुद्रनी वेदिकानुं आक्रमण करीने-तेनी जगती उपर बे पग मूकीने त्रीजो पग नमुचिना मस्तक-पर मूक्यो. (१५) आ प्रमाणे उपदेशमाळाकर्णिका विगेरेनो अभिप्राय छे. त्रिषष्टीय-

यनवृत्त्याद्यभिप्रायस्त्वेवं–अपातयत्पातकिनं नमुचिं भूतले ततः । एवं ज्ञातस्वरूपेण महापद्मेन चक्रिणा । क्षमितः शमितो देवां–गनाभिः शमगीतिभिः ॥ १६ ॥ ततः स्तुतो जनैः सर्वैः प्रशशाम महाशयः । आलोचितातिचारोऽसौ केवलं प्राप्य निर्वृतः ॥ १७ ॥

कालांतरे महापद्म–श्चक्रवर्त्यपि चिंतयन् । संसारासारतां दीक्षां कक्षीकृत्य ययौ शिवं ॥१८॥ त्रिंशदब्दसहस्रायु–स्तुंगश्चापानि विंशतिं । नवमोऽनवमश्चक्री महापद्मोऽयमीरितः ॥ १९ ॥ इति पद्मः ।

महाहरिरभूद्राजा कांपील्यपुरभूपतिः । तस्य मेराभिधा भार्या हरिषेणः सुतस्तयोः ॥२०॥ साधिताशेषषट्खंडो दशमश्चक्रवर्त्यसौ । कदाचिच्चिंतयामास चतुरश्चतुरोचितं ॥२१॥ मया समृद्धिर्लब्धेयं प्राग्भवाचरितैः शुभैः । ततोऽमुत्र हितं कुर्वे भविष्यद्भद्रसिद्धये ॥ २२ ॥ कक्षीकृत्य ततो दीक्षां तपः कृत्वा च दुष्करं । अवाप्य केवलज्ञानं स लेभे शाश्वतं सुखं ॥२३॥ दशवर्षसहस्रायुः स्वर्णकांतिर्महामतिः । कोदंडान्युच्छ्रितः पंच–दशासौ

पद्मचरित्रनो ने उत्तराध्ययनवृत्तिनो अभिप्राय तो आवो छे के 'महापापी एवा नमुचिने पृथ्वीपर पाडी दीधो. ते वखते आ हकीकत जाणवाथी तरत ज महापद्म चक्रीए त्यां आवीने विष्णुकुमारने खमाव्या अने देवांगनाओए शांतिमय संगीत करवावडे शांत कर्या.' (१६) त्यारपछी सर्व लोकोए आवीने नमस्कार कर्या अने स्तव्या एटले ते महाशय शांत थया. पछी ते अतिचारने आलोची प्रतिक्रमीने विष्णुकुमार मुनि केवळज्ञान पामी मोक्षे गया. (१७)

काळांतरे महापद्म चक्रवर्ती पण संसारनी असारता चिंतवीने दीक्षा अंगीकार करी मोक्षे गया. (१८) तेमनुं आयुष्य त्रीश हजार वर्षनुं अने शरीर वीश धनुष्यनुं हतुं. आ प्रमाणे श्रेष्ठ एवा नवमा चक्री महापद्मनुं चरित्र कह्युं. (१९) इति पद्मः ९

कांपिल्यपुर नगरमां महाहरि नामे राजा हता. तेने मेरा नामे भार्या हती. तेनो पुत्र हरिषेण नामे थयो (२०) समस्त छ खंड साधीने ते दशमा चक्री थया. अन्यदा चतुर एवा तेमणे चतुर पुरुषने योग्य होय तेवुं चिंतव्युं (२१) के–' में पूर्वभवमां आचरेला शुभकार्यवडे आ ऋद्धि मळेल छे तो हवे आगामी भवनुं हित करुं के जेथी भविष्यकाळमां कल्याणनी–मोक्षनी सिद्धि थाय.' (२२) आम विचारी दीक्षा अंगीकार करीने दुष्कर तप तपी केवळज्ञान पामी तेणे शाश्वतसुख मेळव्युं. (२३) ते महामतिनुं दश हजार वर्षनुं आयु हतुं, स्वर्णसमान देहकांति हती अने पंदर धनुष्य प्रमाण शरीर हतुं.

कीर्तितः श्रुते ॥ २४ ॥ इति हरिषेणः ।

अश्वसेनाभिधोऽथासी–द्राजा राजगृहे पुरे । वप्रा तस्य प्रिया प्रेष्ठा जयनामा तयोः सुतः ॥ २५ ॥ एकादशश्चक्रवर्ती सोऽन्यदा भावयन् हृदि । भवस्वरूपं संप्राप्त–वैराग्यो जगृहे व्रतं ॥ २६ ॥ स द्वादशधनुस्तुंगः प्राप्य केवलमुज्ज्वलं । आयुर्वर्षसहस्राणि त्रीण्यापूर्य ययौ शिवं ॥ २७ ॥ इति जयः ।

ब्रह्माह्वयोऽभवद्राजा कांपील्यपुरभूपतिः । चुलनी दयिता तस्य ब्रह्मदत्तस्तयोः सुतः ॥ २८ ॥ अस्य च ब्रह्मराजस्य चत्वारः सुहृदोऽभवन् । कणेरदत्तः कुरुराट् काशीशः कटको नृपः ॥ २९ ॥ दीर्घराजः कोशलेशः पुष्पचूलोंगभूपतिः । पंचापि वर्षवारेण तेऽवसन्नेकपत्तने ॥ ३० ॥ द्वादशाब्दं वयः प्राप्ते ब्रह्मदत्ते पितास्य च । व्यपद्यत शिरःशूलात् शेषैर्मित्रैस्ततः क्रमात् ॥ ३१ ॥ बालस्य मित्रपुत्रस्य पालनायानुवत्सरं । एकैकेन स्थेयमिति प्रतिज्ञातं हितावहैः ॥ ३२ ॥ अथ तत्र स्थितो दीर्घ-

---

ए प्रमाणे शास्त्रमां कहेल छे. (२४) इति हरिषेणः १०.

राजगृह नगरमां अश्वसेन नामे राजा हतो. वप्रा नामे तेनी वहाली प्रिया हती. तेमनो जय नामे पुत्र थयो. (२५) ते अग्यारमा चक्री थया. एकदा तेमणे संसारस्वरूप हृदयमां विचारता वैराग्य उत्पन्न थवाथी चारित्र अंगीकार कर्युं. (२६) बार धनुष्यना शरीरवाळा ने त्रण हजार वर्षना आयुष्यवाळा ते केवळज्ञान पामी आयु पूर्ण करीने मोक्षे गया. (२७) इति जयः ११

कांपिल्यपुरमां ब्रह्म नामे राजा हतो. तेने चुलनी नामे स्त्री हती. तेमने ब्रह्मदत्त नामे पुत्र थयो हतो. (२८) ते ब्रह्मराजाने चार मित्रो हता. १ कुरुदेशनो राजा कणेरदत्त, २ काशीदेशनो राजा कटक, ३ कोशलदेशनो राजा दीर्घ अने ४ अंगदेशनो राजा पुष्पचूल–एमां ए राजाओ एक एक वर्षना वारा प्रमाणे एक एक मित्रना राज्यमां एकठा मळीने रहेता हता. (२९–३०) ब्रह्मदत्त बार वर्षनो थयो ते वखते मस्तकशूळना व्याधिथी तेना पिता ब्रह्मराजा मरण पाम्यो. एटले बाकीना चार मित्र राजाओए ब्रह्मदत्तनुं हित इच्छीने बाळ एवी मित्रपुत्रनुं परिपालन करवा माटे एकेक वर्ष वारा फरती तेना राज्यमां रहेवुं एवी प्रतिज्ञा करी. (३१–३२) पहेले वर्षे त्यां रहेल दीर्घराजा

राज्ञो रक्तामरीरमत् । चुलनीं राज्यसर्वस्वैः सहोढूढामिव स्त्रियं ॥ ३३ ॥ मंत्री च ब्रह्मराजस्य धनुर्नामा व्यचिंतयत् । मार्जार इव दुग्धस्य राज्यस्यास्यैष रक्षकः ॥ ३४ ॥ मित्रपत्नीं रमयता यशो गमयता निजं । धिगनेन ब्रह्ममैत्री शातिता लज्जया सह ॥ ३५ ॥ मैवं स्त्रीराज्यलुब्धोऽयं ब्रह्मदत्तं वधीदिति । धनुर्वरधनुं पुत्रं तद्यत्नाय न्ययोजयत् ॥ ३६ ॥ ब्रह्मदत्तोऽपि विज्ञाय दीर्घराजकुचेष्टितं । दृष्टांतैर्विविधैः स्पष्टं स्वाभिप्रायमदीदृशत् ॥ ३७ ॥ संयोज्य वायसं हंस्या तौ हत्वा चैवमब्रवीत् । एताविव मया घात्यौ नीतिविप्लवकारिणौ ॥३८॥ अहं काकस्त्वं पिकीति बालो न्यायमदर्शयत् । जारेण चुलनीरयुक्ता प्राह बालाद्बिभेषि किं ? ॥३९॥ एकदा भद्रहस्तिन्या संयोज्य मृगहस्तिनं । ऊचाने पूर्ववद्बाले राज्ञीं दीर्घो जगाविति ॥ ४० ॥ नावयोर्जीवितं कांते जीवत्यस्मिन् सुते

तेनी साथे रक्त थयेली चुलनीनी साथे राज्य सर्वस्वनी साथे ज परणेली स्त्रीनी जेम कामक्रीडा करवा लाग्यो. (३३) आ बधुं जोइने ब्रह्मराजानो धनु नामनो मंत्री विचारवा लाग्यो के—' मार्जारने जेम दूध सोंपवामां आवे तेम आने आ राज्यनो रक्षक कर्यो छे. (३४) आ दीर्घराजाए मित्रपत्नीसाथे रमतां अने पोताना यशने गुमावतां लज्जानी साथे ब्रह्मराजाप्रत्येनी मैत्रीनो पण नाश कर्यो छे. तेने धिक्कार छे ! (३५) पण हवे स्त्री अने राज्यमां लुब्ध एवो ए ब्रह्मदत्तपुत्रनो वध न करो ' एम विचारी धनुमंत्रीए पोताना वरधनु नामना पुत्रने तेनुं रक्षण करवा राख्यो–तेनी योजना करी. (३६) ब्रह्मदत्त पण दीर्घराजानुं कुचेष्टित समजी जइने विविध दृष्टांतोवडे पोतानो अभिप्राय स्पष्टपणे तेने जणाववा लाग्यो. (३७) कागडाने हंसीसाथे जोडी दइने ते बंनेने हणी नाखी आ प्रमाणे बोल्यो के–' आनी जेम जे नीतिनो लोप करशे तेने हुं मारी नाखीश.' (३८) आ हकीकत सांभळीने जार एवा दीर्घराजाए चुलनीने कह्युं के—' हुं कागडो ने तुं कोयल— आ प्रमाणे आ बालके न्याय बताव्यो छे ' एटले चुलनी कहे छे के— ' आवा बाळकथी तेम शामाटे बीहो छो ! ' (३९) एकदा भद्र जातिनी हाथिणी साथे मृगहस्तीनो[1] संबंध करावीने पूर्व प्रमाणे ज ब्रह्मदत्त बोल्यो, एटले चुलणी राणीने दीर्घराजाए कह्युं (४०) के—' हे प्रिया ! आ

१ हलकी जातनो हाथी.

तव । तदस्मै यदि वा प्रेम्णो देयोऽवश्यं जलांजलिः ॥ ४१ ॥ एतादृग्दुर्वधः पुत्र–स्तादृक् प्रेमापि दुस्त्यजं । इति दोलावलंबिन्यां चुलन्यामयमब्रवीत् ॥ ४२ ॥ नाहं न च त्वं सत्यस्मिन् मत्सत्त्वे बहवोंगजाः । व्यापाद्योऽयमवश्यं तन्मां जीवंतं यदीच्छसि ॥ ४३ ॥ ततः प्राणसमः पुत्रः प्राणेशस्तु ततोऽधिकः । ध्यात्वेत्यात्मजघातं सा तद्दाक्षिण्यादमन्यत ॥ ४४ ॥ उक्तं च–नितंबिन्यः पतिं पुत्रं पितरं भ्रातरं च्चणात् । आरोपयंत्यकार्येऽपि दुर्वृत्ताः प्राणसंशये ॥ ४५ ॥

अथ मंत्री धनुर्दीर्घ–राजमूचे कृतांजलिः । यामि तीर्थमहं जीर्णः पुत्रस्त्वां सेविता मम ॥ ४६ ॥ धीमाननर्थं मा कार्षी–र्यातितोऽयमितो बहिः । इत्यूचे मंत्रिणं दीर्घो दंभकोमलया गिरा ॥४७॥ त्वयैव स्वत्प्रभो राज्यं सनाथं साच्चिणो वयं । तत्तपस्व तपोऽत्रैव स्वैरं सुरसरित्तटे

तारो पुत्र जीवतो रहेशे तो आपणुं जीवित समजवुं नहीं; माटे क्यां तो एने ने क्यां तो आपणा प्रेमने अवश्य जलांजलि आपवी पडशे.' (४१) आ प्रमाणे तेना वचनो सांभळीने चुलनीनुं मन हिंचोळे चडयुं के एक बाजु आवो (चक्रवर्ती थनार) पुत्र दुर्वध (वध न करी शकाय तेवो) छे अने बीजी बाजु दीर्घसाथेनो प्रेम पण दुस्त्यज (तजी न शकाय तेवो) छे. आवी रीते विचारमां पडेली चुलनी प्रत्ये दीर्घ बोल्यो (४२) के—'आ पुत्र छते तो तुं ने हुं जीववाना ज नथी. वळी हुं छतां तारे घणा पुत्रो थशे, माटे जो मने जीवतो रहेवा इच्छती हो तो तारे अवश्य आ पुत्रने मारी नांखवो ज पडशे.' (४३) आ प्रमाणे सांभळीने "प्राणसमान पुत्र छे अने आ प्राणेश तेथी पण अधिक छे" एम विचारीने तेनी दाक्षिण्यताथी पुत्रनो वध करवानुं चुलनीए कबूल कर्युं. (४४) कह्युं छे के—'दुराचरणी स्त्री पतिने, पुत्रने, पिताने तेम ज भाइने क्षणमात्रमां प्राणसंशयरूप अकार्यमां पण आरोपण करे छे अर्थात् तेमां जोडी दे छे—प्राणनो नाश करे छे.' (४५)

हवे धनुमंत्री दीर्घराजा पासे आवी हाथ जोडीने कहे छे के—'हुं वृद्ध थयो छुं तेथी तीर्थे निवास करवा जाउं छुं अने मारो पुत्र तमारी सेवा करशे.' (४६) ते सांभळीने 'आ मंत्री अहींथी बहार गयो सतो अनर्थ म करो' एम धारीने दीर्घराजाए दंभवडे कोमळ एवी वाणीथी मंत्रीने कह्युं के—'तमारावडे ज तमारा स्वामीनुं आ राज्य सनाथ छे. अमे तो साक्षीरूप छीए, तेथी तमे अहीं ज गंगा नदीने किनारे निवास

॥ ४८ ॥ ततः स्वर्गापगातीरे सत्रागारे स तस्थिवान् । पुरांतःपुरवार्तां च विदन् सर्वां सुतोदितां ॥ ४९ ॥

कन्यका पुष्पचूलस्य ब्रह्मदत्तकृतेऽर्थिना । चुलनीदीर्घराजाभ्यां जिघांसुभ्यां छलेन तं ॥ ५० ॥ सुतं हंतुं जतुगृहं चुलनीदीर्घकारितं । ज्ञात्वा सुरंगां द्विक्रोशां धनुश्छन्नामकारयत् ॥ ५१ ॥ तत्सर्वं पुष्पचूलस्य धनुना ज्ञापितं रहः । ततः सोऽपि सुतास्थाने दासीमप्रेषयद्वरां ॥ ५२ ॥ जातेऽथ सुतवीवाहे सुतं प्रैषीत्स्नुषान्वितं । जातुके वासभवने चुलनी कुलनीलिका ॥ ५३ ॥ बालं सुप्तं सुतं सद्यः परिणीतं स्नुषान्वितं । अंत्यदेहापि चुलनी जिघांसामास धिक् स्मरं ॥ ५४ ॥ जाग्रत्येव ब्रह्मदत्ते मित्रचित्रकथारसैः । जज्वाल चुलनीक्षिप्तो ज्वलनोऽस्मिन् गृहेऽभितः ॥ ५५ ॥ ततोऽधःस्थसुरंगां च्मां मंत्रिपुत्रेण दर्शितां । लूतापुटवदुद्भिद्य निरगान्मित्रयुक् ततः

करीने स्वेच्छापूर्वक तप तपो.' (४७–४८) आम कहेवाथी ते गंगा नदीने किनारे दानशाळामां रह्यो अने तेना पुत्रनी कहेली नगरनी ने अंतःपुरनी वार्ता बधी यथार्थ सांभळवा लाग्यो. (४९)

कोइ पण प्रकारनो छळ करीने ब्रह्मदत्तने मारी नांखवाने इच्छता एवा चुलनी ने दीर्घराजाए ब्रह्मदत्तने माटे पुष्पचूल राजानी पुत्रीनी मागणी करी. तेणे ते मागणी स्वीकारी. (५०) पछी ब्रह्मदत्तने हणवा माटे चुलनी ने दीर्घराजाए एक लाखनुं घर तेने शयन करवा सारु कराव्युं. ए वात जाणीने धनुमंत्रीए ते लाखना घरथी बे गाउसुधी सुरंग प्रच्छन्न रीते करावी. (५१) पछी ए वात धनुमंत्रीए पुष्पचूल राजाने जणावी एटले तेणे पण पुत्रीने बदले एक सुंदर दासीने मोकली. (५२) पछी पुत्रनो विवाह थये सते पुत्रवधू सहित पुत्रने ते लाखना घरमां कुळने काळुं करनारी चुलनीए सुवा माटे मोकल्या. (५३) कर्त्ता कहे छे के–' जुओ ! बाळक, पुत्र, सुतेलो, तरतनो परणेलो अने पुत्रवधू सहित तेने पण मारवा माटे अंत्यदेहा (छेल्ला शरीरवाळी–चरमशरीरी) एवी पण चुलनी तैयार थइ तेथी एवा कामदेवने धिक्कार छे ! ' (५४) अहीं ब्रह्मदत्त पोताना मित्र वरधनुसाथे विचित्र कथारसने लीधे हजु जागे छे तेवामां तो चुलनीए क्षेपन करेलो अग्नि आ लाखना घरने चोतरफथी बाळवा लाग्यो. (५५) ते वखते मंत्रीपुत्रे बतावेली शय्यानी नीचेना भागमां रहेली सुरंगनी पृथ्वीने करोळीयाना पडनी जेम

॥ ५६ ॥ धनुना धारितावश्वा–वारुह्यैतावुभावपि । निशि तस्यामयासिष्टां पंचाशद्योजनीं द्रुतं ॥ ५७ ॥ अतिश्रमाद्विपन्नौ तौ तुरंगौ पंचहायनौ । ततः पद्भ्यां प्रस्थितौ तौ छन्नं दीर्घचमूभयात् ॥ ५८ ॥ प्राच्यपुण्यानुभावेन ब्रह्मदत्तः पदे पदे । पर्यणैषीद्बहुतरा भूचरीः खेचरीः कनीः ॥ ५९ ॥ क्रमात्स भूरिसंपत्तिः पितृमित्रैस्त्रिभिर्नृपैः । ससैन्यैः कृतसाहाय्यः कांपील्यपुरमभ्यगात् ॥ ६० ॥ रुद्धेऽभितः पुरे तस्मिन् दीर्घोऽपि निरगाद्बहिः । तयोः प्रववृते युद्धं रामरावणयोरिव ॥ ६१ ॥ अयुध्य(ध्ये)तामथ ब्रह्म–दत्तदीर्घौ परस्परं । शस्त्रच्छलेन रोषाग्निं क्षिपंतौ चिरसंचितं ॥ ६२ ॥ खिन्नस्य ब्रह्मदत्तस्य दुर्जये बलवत्यरौ । अलंचक्रे करं चक्र–रत्नं पुण्यमिवांगभृत् ॥ ६३ ॥ दत्तायां दीर्घनिद्रायां तेन दीर्घस्य दृप्यतः । चक्रिन् जयजयेत्यस्मिन् पुष्पाणि ववृषुः सुराः ॥६४॥ साधयित्वाथ षट्खंडां पृथिवीं प्रौढशासनः । निदानोपार्जितांश्चक्री भोगान् भुंक्ते स्म गृद्धिभाक् ॥ ६५ ॥

भेदीने ब्रह्मदत्त मित्र सहित तेमांथी बहार नीकळयो. (५६) त्यां धनुमंत्रीए तैयार राखेला बे अश्वोपर आरोहण करीने ते बंने बाकी रहेली रात्रिमां ज उतावळा पचास योजन नीकळी गया. (५७) त्यां पांच पांच वर्षनी वयवाळा ते घोडा अतिश्रम लागवाथी मरण पाम्या. एटले पछी ते बंने दीर्घराजानुं लश्कर आवी पहोंचवाना भयथी पगपाळा छानी रीते आगळ चाल्या. (५८) पूर्वपुण्यना प्रभावथी ब्रह्मदत्त स्थाने स्थाने घणी भूचरी ने खेचरी कन्याओ परण्यो. (५९) अनुक्रमे ते घणी संपत्ति मेळवीने पिताना त्रणे मित्रोए सैन्यसहित करेली सहायवडे कांपिल्यपुर आव्यो. (६०) तेणे चोतरफथी सैन्यवडे नगरने वींटी लीधुं एटले दीर्घराजा पण नगरनी बहार नीकळयो. पछी ते बंनेनुं–ब्रह्मदत्त ने दीर्घराजानुं युद्ध राम–रावणनी जेवुं प्रवर्त्युं. (६१) ब्रह्मदत्त ने दीर्घ शस्त्रने मिषे चिरकाळना एकत्र करेला रोषाग्निने चेपवता सता परस्पर लडवा लाग्या. (६२) एवी रीते बळवंत ने दुर्जय शत्रुनी साथे लडतां ब्रह्मदत्त खिन्न थयो. एटलामां अंगधारी पुण्यनी जेवा चक्ररत्ने आवीने तेना हाथने शोभाव्यो. (६३) तरत ज ते चक्रवडे ब्रह्मदत्ते दीर्घराजाने दीर्घनिद्रा पमाड्यो अर्थात् मारी नांख्यो. ते वखते 'हे चक्री ! जयवंता वर्तो, तमारो जय थाओ' एम बोलता देवोए तेमना पर पुष्पनी वृष्टि करी. (६४) पछी षट्खंड पृथ्वीने साधीने प्रौढ शासनवाळो ब्रह्मदत्त नियाणावडे उपार्जन करेला भोगोने तेमां अत्यंत आसक्त थइने भोगववा लाग्यो. (६५)

मां प्राप्तराज्यमाकर्ण्य तूर्णं मित्रापतेरिति । दुर्दशासु सहायं यं चक्री स्माह द्विजं पुरा ॥६६॥ स चक्रिणमुपेयाय दीयमाने च वांछिते । ऐच्छत् पत्नीधिया भोज्यं प्रतिगेहं सदक्षिणं ॥६७॥ आरभ्य स्वगृहाच्चक्री ददौ तस्मै तदीहितं । अन्यदा प्राक्संस्तुतोऽन्य–स्तं विप्रः कोऽप्युपागमत् ॥ ६८ ॥ सोऽयाचिष्ट मुदा चक्रि–भोज्यं कल्याणनामकं । नेदं ते जीर्यतीत्युक्ते कृपणोऽसीत्यवक् स तं ॥ ६९ ॥ सकुटुंबं द्विजं चक्री स्वं भोजनमभोजयत् । ततः सर्वं स्मरोन्मत्तं तत्कुटुंबमभून्निशि ॥ ७० ॥ मातृपुत्रसुतावप्तृ–स्नुषाश्वशुरभेदमुक् । तत्कुटुंबं निशां सर्वा–मप्रवर्त्तत मैथुने ॥ ७१ ॥ ततस्त्रपातुरस्त्यक्त्वा कुटुंबं निर्ययौ वहिः । विप्रोऽजानन् निजं दोषं चक्रिणि द्वेषमुद्वहन् ॥ ७२ ॥ कंचित्काणीकृताश्वत्थ–पत्रं कर्करिकाकणैः । ऐक्षत क्वाप्यजापालं सूक्ष्मवेधकृतश्रमः ॥७३॥ चक्रिणं शिक्षयाम्यद्य मत्कुटुंबविडंबिनं । ध्यात्वेति तं वशीचक्रे स द्रव्यैर्दक्षिणा-

---

ब्रह्मदत्तने पूर्वे दुर्दशाना वखतमां एक द्विजे सहाय करेली तेणे कहेलुं के–' हे मित्र ! मने राज्य प्राप्त थयानुं सांभळ एटले तुं तरत मारीपासे आवजे ' तेथी ते द्विज चक्रीपासे आव्यो. तेने जे इच्छे ते आपवानुं चक्रीए कह्युं एटले तेणे पत्नीनी बुद्धि (सलाह) प्रमाणे आखा भरतक्षेत्रमां प्रत्येक गृहे भोजन ने दक्षिणा मळे एम माग्युं. (६६–६७) चक्रीए तेना मागवा प्रमाणे पोताना घरथी ज शरुआत करीने प्रथम भोजन आप्युं. अन्यदा पूर्वना परिचयवाळो बीजो कोइ विप्र चक्रीपासे आव्यो. (६८) तेणे हर्षवडे चक्रवर्तीना कल्याण भोजननी याचना करी. चक्रीए कह्युं के–' ते तने जरशे (पचशे) नहीं. ' एटले विप्र बाल्यो के–' तमे कृपण छो. ' (६९) चक्रीए सहकुटुंब ते विप्रने पोतानुं भोजन जमाडयुं, तेथी तेनुं आखुं कुटुंब रात्रे कामोन्मत्त थयुं. (७०) एटले माता–पुत्र, पुत्री—पिता, पुत्रवधू–सासरो विगेरेना भेद विना तेनुं कुटुंब आखी रात्री मैथुनक्रियामां प्रवर्त्युं. (७१) आम थवाथी पेलो विप्र लज्जातुर थइ पोताना कुटुंबने तजी दइने पोताना दोष न जाणतो अने चक्रीपर द्वेषने वहन करतो त्यांथी बहारगाम नीकळी गयो. (७२) तेणे मार्गे जतां सूक्ष्मवेध करवामां जेणे प्रयास करेलो छे एवा अने कांकरावडे पीपळाना पानने कांणा करता (विंधता) एवा एक अजापाळ (भरवाड) ने दीठो. (७३) तेने जोइने ' मारा कुटुंबने विडंबना पमाडनार चक्रीने बराबर शिक्षा आपुं. ' एम विचारीने ते विप्रे दक्षिणामां मळेला द्रव्यवडे ते भरवाडने

गतैः ॥ ७४ ॥ धृतच्छत्रो गजारूढो योऽयमेति चमूवृतः विनाशयेर्द्दशौ तस्य द्रुतं कर्कशकर्करैः ॥ ७५ ॥ स कुड्यांतरितश्चक्र-वर्त्तिपापैरिवेरितः। लघुहस्तस्तथाकार्षीत् पार्श्वस्थेषु सुरेष्वपि ॥ ७६ ॥ जुष्टः सुरसहस्राभ्या-मंसस्थाभ्यां नृनिर्जरः । पामरेणांधलीचक्रे चीणे पुण्ये वृथा बलं ॥७७॥ तथोक्तं-प्रतिकूलतामुपगते हि विधौ, विफलत्वमेति बहुसाधनता । अव-लंबनाय दिनभर्त्तुरभू-न्न पतिष्यतः करसहस्रमपि ॥ ७८ ॥

ततश्च-धृतो नश्यन्नजापाल-श्चक्रियोधैरुदायुधैः । अदर्शयत्ताड्यमानो विप्रं तत्र प्रयोजकं ॥ ७९ ॥ क्रुद्धेन चक्रिणाघाति स विप्रः सान्वय-स्तथा । पुरोहितादयोऽन्येऽपि मूलादुन्मूलिता द्विजाः ॥ ८० ॥ तथाप्य-शांतकोपेन मंत्रीत्यूचेऽथ चक्रिणा । ढौकय स्थालमेकैकं नित्यं विप्राक्षि-भिर्भृतं ॥ ८१ ॥ श्लेष्मातकफलैः पूर्णं सोऽपि पात्रमढौकयत् । स्पृशन् विप्राक्षिबुद्ध्या त-न्मुमुदेंतर्दुराशयः ॥ ८२ ॥ अनुभूयांधतामेवं क्रूरः

वश कर्यो. (७४) पछी तेने समजाव्युं के-' हाथीउपर बठेलो, माथे छत्र धरावेलो अने सेनाथी परिवरेल जे आ आवे छे तेना बे नेत्रने कर्कश एवा कांकरावडे तुं फोडी नांख.' (७५) ते भरवाडे चक्रवर्तीनी पासे देवोनी हाजरी छतां भींतनी ओथे रहीने चक्रवर्तीना पापे ज जाणे तेने प्रेरणा करी होय तेम लघुहस्तरूप कळावडे ते प्रमाणे कर्युं अर्थात् चक्रीना बंने नेत्र फोडी नांख्या. (७६) खंभापर रहेला बे हजार देवताओथी सेवाता एवा नृनिर्जर (चक्री) ने पामर एवा भरवाडे अंध कर्यो, माटे 'पुण्य चीण थये सते बळ नकामुं छे.' (७७) कह्युं छे के-' विधाता प्रतिकूळ थये सते घणुं साधनपणुं पण निष्फळ-पणाने पामे छे. जुओ ! सूर्यने नीचे पडती वखते करसहस्र-हजार हाथ (किरण) पण अवलंबनभूत थता नथी.' (७८)

पछी भागता एवा अजापाळने उंचा करेला आयुधोवाळा चक्रीना योद्धाओए पकड्यो. तेने ताडना करतां तेणे आ कार्यना प्रयोजक (प्रेरक) विप्रने बतावी दीधो. (७९) क्रोधायमान थयेला चक्रीए ते विप्रने सहकुटुंब मारी नंखाव्यो अने पुरोहितादि बीजा द्विजोने पण मूळथी उन्मूलित करी नांख्या. (८०) तेम करतां पण कोप शांत न थवाथी चक्रीए मंत्रीने कह्युं के-' तमारे दररोज ब्राह्मणोनी आंखो कढावीने तेनो भरेलो एकेको थाळ मारी पासे धरवो (मूकवो). (८१) मंत्री श्लेष्मातकना फळ (चीकणा गुंदां) वडे थाळ भरीने दररोज तेमनी पासे मूकवा लाग्यो. तेमां ब्राह्मणोनी आंखो छे एवी बुद्धिथी ते फळोने चोळतो माठा अंतःकरणवाळो चक्री खुशी थवा लाग्यो. (८२) आ

षोडशवत्सरीं । विपद्य रौद्रध्यानेन सप्तमं नरकं ययौ ॥ ८३ ॥ सप्तवर्ष-शतायुष्कः सप्त चापानि चोच्छ्रितः । चक्रभृत्सप्तमः पष्टात् सप्तमीमगम-द्भुवं ॥ ८४ ॥ इति ब्रह्मदत्तः ॥

गोत्रतः काश्यपाः सर्वे वर्णतः स्वर्णकांतयः । अमी भुवनविख्याता-श्चक्रिणो द्वादशोदिताः ॥ ८५ ॥ पट्टराज्यो द्वादशानां चक्रिणां द्वाद-शाभवन् । स्त्रीरत्नाख्याश्चतुर्थांगे सुभद्राद्या इमाश्च ताः ॥ १ ॥—पढमा होइ सुभद्दा १ भद्द २ सुणंदा ३ जया य ४ विजया ५ य । कण्हसिरी ६ सूरसिरी ७ पउमसिरी ८ वसुंधरा ९ देवी१० ॥ १ ॥ लच्छिमती ११ कुरुमती १२ इत्थिरयणाण णामाइं ।

तृतीयश्च चतुर्थश्च गतौ स्वर्गं तृतीयकं । अष्टमश्च द्वादशश्च सप्तमीं जग्मतुर्भुवं ॥ ८६ ॥ शेषाश्च चक्रिणो येऽष्टौ गतास्ते परमं पदं । प्राव्राजीद्भरतस्तत्र नृपायुतपरिच्छदः ॥ ८७ ॥ भूपतीनां सहस्रेण विरक्तेनान्विताः परे । प्राव्रजंश्चक्रिणः सर्वे विनात्र द्वादशाष्टमौ ॥ ८८ ॥ ऋषभाजितयोर्वारे भरतः सगरः क्रमात् ।

प्रमाणे सोळ वर्ष पर्यंत अंधपणाने अनुभवीने ते क्रूर एवो ब्रह्मदत्त रौद्रध्याने मरण पामी सातमी नरके नारकीपणे उत्पन्न थयो. (८३) सात सो वर्षना आयुष्यवाळो ने सात धनुष्यना शरीरवाळो ने छठ्ठाथी सातमो अर्थात् बारमो चक्री सातमी नरकपृथ्वीए गयो. (८४) इति ब्रह्मदत्तः १२ ॥

काश्यपगोत्री अने वर्णे सुवर्णसमान वर्णवाळा आ भुवनमां विख्यात एवा आ बार चक्रवर्तीओ कह्या छे. (८५) ए बार चक्रीने बार पटराणीओ स्त्रीरत्न तरीके ओळखाती थइ तेना सुभद्रादि नामो आ प्रमाणे चोथा अंगमां कह्या छे—प्रथम १ सुभद्रा, २ भद्रा, ३ सुनंदा, ४ जया, ५ विजया, ६ कृष्णश्री, ७ सुरश्री, ८ पद्मश्री, ९ वसुंधरा, १० देवी, ११ लक्ष्मीवती ने १२ कुरुमती· ए स्त्रीरत्ननां नामो छे.

गति—त्रीजा ने चोथा चक्री त्रीजे देवलोके गया, आठमा ने बारमा चक्री सातमी नरके गया (८६) अने बाकीना आठ चक्री परमपदने पाम्या. (परिवार)—तेमां पहेला भरत चक्री दश हजार मुनिना परिवारसाथे अने बीजा नव चक्रीओए विरक्त एवा हजार–हजारना परिवारसाथे चारित्र लीधुं हतुं. (८७–८८) (समय)— भरत ने सगर चक्री अनुक्रमे ऋषभदेव ने अजितनाथने वारे थया, त्रीजा ने चोथा चक्री धर्मनाथ

जातौ तृतीयतुर्यौ च धर्मशांत्योरिहांतरे ॥ ८९ ॥ त्रयश्च चक्रिणोऽर्हंतः शांत्याद्याः स्वयमेव हि । अरमल्ल्योरंतराले सुभूमश्चक्रवर्त्यभूत् ॥ ९० ॥ नवमोऽभून्महापद्मो मुनिसुव्रतवारके । दशमो नमिवारेऽभून्नमिनेम्यंतरे जयः ॥ ९१ ॥ अभवद्ब्रह्मदत्तश्चां-तरे श्रीनेमिपार्श्वयोः । स्वरूपं चक्रिणामेव-मुक्तं वक्ष्येऽथ शार्ङ्गिणां ॥ ९२ ॥

त्रिपृष्ठश्च १ द्विपृष्ठश्च २ स्वयंभूः ३ पुरुषोत्तमः ४ । तथा पुरुषसिंहश्च ५ पुरुषः पुंडरीकतः ६ ॥ ९३ ॥ दत्तो ७ नारायणः ८ कृष्णो ९ वासुदेवा अमी नव । अचलो १ विजयो २ भद्रः ३ सुप्रभश्च ४ सुदर्शनः ५ ॥ ९४ ॥ आनंदो ६ नंदनः ७ पद्मो ८ राम ९ श्चेति यथाक्रमं । अमी विष्णुविमात्रेया बलदेवाः स्मृता नव ॥ ९५ ॥

अश्वग्रीव १ स्तारकश्च २ मेरको ३ मधुकैटभः ४ । निशुंभ ५ बलि ६ प्रह्लाद ७-रावण ८ मगधेश्वरः ९ ॥ ९६ ॥ नवानां वासुदेवानां नवामी प्रतिविष्णवः । वासुदेवकरात्तस्व-चक्रेण प्रासमृत्यवः ॥ ९७ ॥

ने शांतिनाथना आंतरमां थया, (८९) त्यारपछी त्रण अरिहंतो शांतिनाथ विगेरे पोते ज चक्री थया, आठमा सुभूम अरनाथ ने मल्लिनाथना आंतरामां थया, (९०) नवमा महापद्म मुनिसुव्रतस्वामीने वारे थया, दशमा चक्री नमिनाथने वारे थया, अग्यारमा जयचक्री नमिनाथ ने नेमिनाथना आंतरामां थया, (९१) अने बारमा ब्रह्मदत्त चक्री नेमिनाथ ने पार्श्वनाथना आंतरामां थया. आ प्रमाणे चक्रवर्तीओनुं स्वरूप कह्युं, हवे वासुदेवोनुं चरित्र कहीए छीए. (९२)

इति चक्रवर्तीचरित्र.

वासुदेव विगेरेनां चरित्रो.

१ त्रिपृष्ठ, २ द्विपृष्ठ, ३ स्वयंभू, ४ पुरुषोत्तम, ५ पुरुषसिंह, ६ पुरुषपुंडरीक, ७ दत्त, ८ नारायण (लक्ष्मण) ने ९ कृष्ण. आ नव वासुदेव जाणवा.

१ अचळ, २ विजय, ३ भद्र, ४ सुप्रभ, ५ सुदर्शन, ६ आनंद, ७ नंदन, ८ पद्म, (रामचंद्र) ने ९ राम (बळभद्र) आ नव अनुक्रमे वासुदेवनी अपरमाताथी जन्मेला बळदेवो जाणवा. (९३-९५)

१ अश्वग्रीव, २ तारक, ३ मेरक, ४ मधुकैटभ, ५ निशुंभ, ६ बलि, ७ प्रह्लाद, ८ रावण ने ९ मगधेश्वर (जरासंध). (९६) आ नव वासुदेवना शत्रु नव प्रतिवासुदेव अनुक्रमे जाणवा. ते वासुदेवना हाथमां गयेला पोताना सुदर्शनचक्रथी ज मृत्यु पामे छे. (९७)

अथ पूर्वभवाद्येषां वच्मि किंचित् श्रुतोदधेः । जीवो वीरार्हतो राज–गृहे यः षोडशे भवे ॥ ९८ ॥ कोट्यष्टायुर्विश्वभूति–र्युवराजात्मजोऽभवत् । वनेऽतिनंदने सोऽगा–द्वसंते रंतुमन्यदा ॥ ९९ ॥ विशाखनंदिना नुन्नो वने तत्र रिरंसुना । विश्वनंदी नरेंद्रस्त–त्पितृव्यः स्वीयसूनुना ॥२००॥ सामंतविजयव्याजा–द्विश्वभूतिं ततो वनात् । निःसारयामास शूरः सोऽप्यगात्तत्पुरं ततः ॥ १ ॥ विधेयं तं च वीक्ष्याशु तस्मिन् व्रजति तद्वनं । विशाखनंदी प्रविष्ट–स्तत्रोचे संवशो भटैः ॥ २ ॥ दंभोऽयं मत्पितृव्येन मां निस्सारयितुं वनात् । सुतं च तत्रासयितुं कृत इत्युच्चुकोप सः ॥ ३ ॥ समीपस्थं कपित्थद्रुं ततो मुष्ट्या प्रहृत्य सः । तत्फलौघं प्रपात्योर्व्यां योधांस्तानभ्यधात्क्रुधा ॥ ४ ॥ मौलीन् वः पातयाम्येवं भक्तिः स्याद्राज्ञि चेन्न मे । यूयं जीवत रे स्वामि–संयुता मदुपेक्षिताः ॥ ५ ॥

हवे तेना पूर्वभव विगेरे कांइक श्रुतसमुद्रथी जाणीने कहुं छुं—

पहेला वासुदेव वीरप्रभुना जीव सोळमे भवे राजगृहमां विश्वभूति नामे युवराजना पुत्र तरीके आठ करोड वर्षना आयुष्यवाळा थया हता. ते अन्यदा वसंतऋतुमां नंदनथी पण मनोहर एवा वनमां क्रीडा करवा गया हता. (९८–९९) तेने तेना काका विश्वनंदीए ते वनमां क्रीडा करवा इच्छता एवा पोताना पुत्र विशाखनंदीनी प्रेरणाथी सामंत राजाने जीतवा जवाना मिषथी ते वनमांथी बहार काढ्यो. त्यारे शूरवीर एवो ते पण सामंतने नगरे गयो. (२००–१) ते त्यां तेने आज्ञावर्ती जोइ पोताने नगरे आवी उतावळे ते वनमां जवा लाग्यो. एटले त्यां उभेला सुभटोए ते वनमां विशाखनंदी पोतानी प्रियासहित गयेल छे (तेथी तमाराथी जवाशे नहीं.) एम कह्युं. (२) ते सांभळी विश्वभूतिए विचार्युं के–' मारा काकाए आ वनमांथी मने काढवा माटे अने पोताना पुत्रने दाखल करवा माटे आ दंभ कर्यो छे. ' आम विचारीने ते अति कोपायमान थयो. (३) पछी तेणे नजीकमां रहेला कोठाना झाडने मुष्टिवडे प्रहार करीने तेना सर्व फळोने पृथ्वीपर पाडी दइ ते योद्धाओने क्रोधवडे कह्युं (४) के–" हे सुभटो ! जो मने राजा विश्वनंदी प्रत्ये भक्ति न होत तो तमारा मस्तको आ रीते ज छुटा पाडी नांखत. तमे तमारा स्वामी सहित मारी उपेक्षाथी ज जीवता रहो. " (५)

---

१ सप्रियः इति लिखितप्रतिपाठः

इत्युक्त्वानर्थमूलत्वं भोगानां परिभावयन् । संभूतमुनिपादांते संयमे प्रत्यपादि सः ॥ ६ ॥ स दुष्करं तपः कुर्व–न्नेकदा मथुरापुरे । मासक्षपणपर्यंते गतो गोचरचर्यया ॥ ७ ॥ तत्राहत्यैकया धेन्वा कृशीयान् पातितो भुवि । तत्रोद्वाहार्थमेतेन दृष्टो विशाखनंदिना ॥ ८ ॥ हसितश्च क ते बंधो कपित्थच्यावनं बलं । ततः क्रुद्धः स तां धेनुं शृंगे धृत्वांबरेऽक्षिपत् ॥ ९ ॥ निदानं कृतवांश्चैवं तीव्रेण तपसामुना । भूयिष्ठवीर्यो भूयास–मजय्यस्त्रिदशैरपि ॥ १० ॥ निदानं तदनालोच्य ततो मृत्वा समाधिना । अभूत्स्वर्गे महाशुक्रे उत्कृष्टस्थितिकः सुरः ॥ ११ ॥

इतश्च पोतनपुरे प्रजापतिरभून्नृपः । मृगावतीं स्वपुत्रीं स वीक्ष्य कामवशोऽभवत् ॥ १२ ॥ देशे पुरेंतःपुरे च रत्नस्य जनिमीयुषः । नृप एव प्रभुरिति लोकसंमतिपूर्वकं ॥ १३ ॥ तां पत्नीकृत्य बुभुजे तादृक्कर्मानुभावतः । विश्वभूतिसुरश्च्युत्वा तस्याः कुक्षाववातरत् ॥ १४ ॥ त्रिपृष्ठ-

---

आ प्रमाणे कही सांसारिक भोगोनुं अनर्थमूळपणुं विचारता एवा तेणे संभूतमुनिनी पासे चारित्र अंगीकार कर्युं. (६) दुष्कर तपने तपता एवा ते मुनि अन्यदा मथुरापुरीए गया अने मासक्षपणने अंते गोचरचर्याए नीकळ्या. (७) त्यां कोइ गाये ते दुर्बळ थइ गयेला मुनिने माथुं मारीने पृथ्वीपर पाडी दीधा. ते वखते त्यां विवाहप्रसंगे आवेला विशाखनंदीए तेमने पडी जता दीठा. (८) एटले ते हांसी करीने बोल्यो के–' हे बंधो ! पेलुं कोठा पाडी देवावाळुं बळ क्यां गयुं ? ' ते सांभळीने तेणे क्रोधायमान थइ ते गायने शींगडावडे उपाडी आकाशमां फेरवीने फेंकी दीधी. (९) पछी नियाणुं कर्युं के–'आ तीव्र तपना बळथी हुं अत्यंत बळवाळो अने देवोथी पण अजय एवो थाउं.' (१०) आ नियाणाने आलोव्या विना समाधिवडे मरण पामीने सातमा महाशुक्र देवलोकमां उत्कृष्ट आयुवाळो देव थयो. (११)

हवे पोतनपुर नगरमां प्रजापति नामे राजा छे, ते पोतानी पुत्री मृगावतीने (अति रूपवान्) जोइने कामवश थयो. (१२) पछी देशमां, नगरमां अने अंतःपुरमां जे रत्न उत्पन्न थाय तेनो स्वामी राजा ज होय एवी लोकोनी संमति मेळवीने ते मृगावतीने पोतानी स्त्री करी तेनी साथे कामक्रीडा करवा लाग्यो. तेवा प्रकारना कर्मना उदयथी विश्वभूतिनो जीव स्वर्गमांथी च्यवीने तेनी कुक्षिथी पुत्रपणे उत्पन्न थयो. (१३–१४)

वासुदेवोऽसा-वशीतिधनुरुच्छ्रितः । तथा चतुरशीत्यब्द-लक्षायुरचला-
नुजः ॥ १५ ॥ इति त्रिपृष्ठः ॥

युद्धे सुरूपवेश्यार्थं निर्जितो विंध्यशक्तिना । सुभद्रगुरुपादांते दीक्षां पर्वतकोऽग्रहीत् ॥ १६ ॥ भूयासं तपसानेन विंध्यशक्तिविनाशकः । निदानमिति सोऽकार्षी-त्पुरे कनकवस्तुनि ॥ १७ ॥ ततो मृत्वा प्राणतेऽभू-द्देवश्च्युत्वा ततः पुनः । अभूत्पुरे द्वारवत्यां ब्रह्मभूपोमयोः सुतः ॥ १८ ॥ स च सप्ततिचापोच्चो द्विपृष्ठ इति नामतः । द्वासप्तत्यब्दलक्षायु-र्विजयाख्यबलानुजः ॥ १९ ॥ इति द्विपृष्ठः ।

धनदत्तनृपो द्यूते बलिभूपेन निर्जितः । सुदर्शनगुरोः पार्श्वे प्रव्रज्यां प्रतिपन्नवान् ॥ २० ॥ स च तीव्रं तपः कुर्वन् श्रावस्त्यां विहरन् गतः । संस्मृतप्राक्तनद्वेषी तत्र क्रोधवशंवदः ॥ २१ ॥ बलिभूपवधाय स्या-मिति कृत्वा निदानकं । उत्पन्नो लांतके कल्पे ततश्च्युत्वा स्थितिक्षये ॥ २२ ॥ रुद्रो राजा द्वारवत्यां पृथिवी स्त्री तयोः सुतः । स्वयंभूर्वासुदेवोऽभू-त्तृतीयो

आ त्रिपृष्ठ वासुदेव ८० धनुष्य उंचा शरीरवाळा अने ८४ लाख वर्षना आयुवाळा अचळ बळदेवना नाना भाइ समजवा. (१५) इति त्रिपृष्ठः १

रूपवंत वेश्याने माटे विंध्यशक्तिनी साथे युद्ध करवामां जीताएला पर्वतके सुभद्र नामना गुरुनी पासे दीक्षा लीधी. (१६) कनकवस्तुपुरवासी तेमणे अत्यंत तप तपीने प्रांते " हुं आ तपवडे विंध्यशक्तिनो विनाश करनार थाउं. " एवुं नियाणुं कर्युं. (१७) त्यांथी मरण पामीने दशमे देवलोके देव थयो. त्यांथी च्यवीने द्वारवती नगरीमां ब्रह्म-नामे राजा अने उमा नामनी राणीना पुत्रपणे उत्पन्न थयो. (१८) तेमनुं नाम द्विपृष्ठ पाडवामां आव्युं. तेनुं शरीर ७० धनुष्यनुं अने आयुष्य ७२ लाख वर्षनुं हतुं. ते विजय नामना बळदेवना नाना भाइ थया. (१९) इति द्विपृष्ठः २

धनदत्त राजाने द्यूतमां बलिराजाए जीत्यो तेथी तेणे सुदर्शन गुरुनी पासे प्रव्रज्या अंगीकार करी. (२०) तीव्र तपने करता तेओ विहार करतां श्रावस्तिनगरीए गया. त्यां पूर्वना द्वेषी बलिराजाने जोइने क्रोधवश थया, (२१) तेथी नियाणुं कर्युं के-' मारा तपना प्रभावथी हुं बलिराजाने मारनार थाउं. ' पछी मरण पामीने छठ्ठा लांतक देवलोके गया. त्यांथी स्थितिक्षये च्यवीने द्वारवतीमां रुद्र नामे राजा अने पृथ्वी नामनी तेमनी स्त्रीना

भूरिविक्रमः ॥ २३ ॥ स षष्टिवर्षलक्षायुः षष्टिचापसमुच्छ्रितः । अनुजो भद्रसंज्ञस्य बलदेवस्य कीर्त्तितः ॥ २४ ॥ इति स्वयंभूः ।

समुद्रदत्तः प्राव्राजीत् हृतायां निजयोषिति । श्रेयांसगुरुपादांते प्रव्रज्योग्रं तपोऽतनोत् ॥ २५ ॥ चक्रे वधाय स्त्रीहर्त्तुः श्रावस्त्यां स निदानकं । मृत्वोत्पन्नः सहस्रारे ततश्च्युत्वायुषः क्षये ॥ २६ ॥ द्वारवत्यां नृपः सोमः सीता राज्ञी तयोः सुतः । पुरुषोत्तमनामाभू–द्वासुदेवस्तुरीयकः ॥ २७ ॥ स त्रिंशद्वर्षलक्षायुः पंचाशद्धनुरुच्छ्रितः । अनुजः सुप्रभाख्यस्य बलदेवस्य कीर्त्तितः ॥ २८ ॥ इति पुरुषोत्तमः ।

सेवालनामा भूपालो रणे वैरिपराजितः । कृष्णाख्यस्य गुरोः पार्श्वे वैराग्यादग्रहीद्व्रतं ॥ २९ ॥ निदानं सोऽरिघाताय पुरे राजगृहेऽकरोत् । माहेंद्रे च समुत्पन्नः स्वर्गे च्युत्वा ततः पुनः ॥ ३० ॥ शिवो राजाऽम्मका राज्ञी नगरेऽश्वपुराह्वये । ख्यातः पुरुषसिंहोऽभू–न्नयस्तनयस्तयोः

पुत्र स्वयंभू नामना त्रीजा वासुदेव अत्यंत पराक्रमवाळा थया. (२२–२३) ते साठ लाख वर्षना आयुवाळा ने ६० धनुष्यना शरीरवाळा हता तेम ज भद्र नामना बळदेवना नाना भाइ हता. (२४) इति स्वयंभूः ३

समुद्रदत्ते पोतानी स्त्रीनुं हरण थवाथी श्रेयांस नामना गुरुपासे प्रव्रज्या अंगीकार करी अने उग्र तप कर्यो. (२५) श्रावस्तिनगरीमां तेणे पोतानी स्त्रीना हरण करनारने मारनार थवानुं नियाणुं कर्युं. मरण पामीने सहस्रार नामना आठमा देवलोकमां देव थया. त्यांथी स्थितिक्षये च्यवीने द्वारवतीमां सोमराजा ने सीता राणीना पुत्रपणे उत्पन्न थया. ते चोथा पुरुषोत्तम नामे वासुदेव थया. (२६–२७) तेमनुं त्रीश लाख वर्षनुं आयुष्य ने पचास धनुष्यप्रमाण शरीर हतुं, तेम ज ते सुप्रभ नामना बळदेवना नाना भाइ हता. (२८) इति पुरुषोत्तमः ४

सेवाल नामना राजाने युद्धमां वैरीए पराजित कर्या. तेमणे वैराग्य पामीने कृष्ण नामना गुरुपासे चारित्र अंगीकार कर्युं. (२९) तेमणे राजगृहपुरमां पूर्वशत्रुनो घात करनार थवानुं नियाणुं कर्युं. मरण पामीने चोथा माहेंद्र देवलोकमां देवपणे उत्पन्न थया. त्यांथी च्यवीने शिव नामना राजा अने अम्मका नामनी राणीना पुत्र अश्वपुर नामना नगरमां न्याययुक्त पुरुषसिंह नामे प्रख्यात थया. (३०–३१) आ पांचमा वासुदेव

॥ ३१ ॥ अयं च पंचचत्वारिं–शत्कोदंडसमुच्छ्रितः । तथा दशाब्दलक्षायुः ख्यातः सुदर्शनानुजः ॥ ३२ ॥ इति पुरुषसिंहः ।

प्रियमित्रोऽपि भार्यायां हृतायामाददे व्रतं । श्रीगंगगुरुपादांते काकंद्यां च गतोऽन्यदा ॥ ३३ ॥ निदानमकरोत्तत्र प्रियाहर्तुर्वधाय सः । मृत्वोत्पन्नो ब्रह्मलोके ततः पूर्णस्थितिश्च्युतः ॥ ३४ ॥ लक्ष्मीवत्याः कुक्षिरत्नं महाशिवनृपात्मजः । पुरुषपुंडरीकाख्यो–ऽभवच्चक्रपुरे हरिः ॥ ३५ ॥ पंचषष्टिसहस्राब्द–जीव्यानंदबलानुजः । एकोनत्रिंशतं तुंग–श्चापान्ययमुदीरितः ॥ ३६ ॥ इति पुरुषपुंडरीकः ।

राजांगजोऽभूल्ललित–मित्रः स क्ष्मापपर्षदि । राज्यायोग्योऽयमित्यूचे मंत्रिणा भूपतेः पुरः ॥ ३७ ॥ राज्ञोऽपमाने जातेऽथ भूपभूराददे व्रतं । सागरस्य गुरोः पार्श्वे मिथिलायां गतोऽन्यदा ॥ ३८ ॥ वधाय मंत्रिणस्तस्य निदानं चकृवानथ । सौधर्मे त्रिदशः सोऽभू–त्संपूर्णस्थितिकस्ततः ॥ ३९ ॥ वाराणस्यामग्निसिंह–नृपशेषवतीसुतः । वासुदेवोऽ-

---

४५ धनुष्यना शरीरवाळा ने दश लाख वर्षना आयुष्यवाळा सुदर्शन नामना बळदेवना नाना भाइ हता. (३२) इति पुरुषसिंहः ५

प्रियमित्रे पण पोतानी स्त्रीनुं बीजाए हरण करवाथी श्रीगंग गुरुनी पासे चारित्र अंगीकार कर्युं. अन्यदा काकंदीनगरीए गया. (३३) त्यां पोतानी प्रियानुं हरण करनारना मारनार थवानुं नियाणुं कर्युं. मरण पामीने पांचमा ब्रह्मदेवलोके देव थया. त्यांथी स्थिति पूर्ण थये च्यवीने चक्रपुरनामना नगरमां महाशिव नृपना पुत्र लक्ष्मीवतीनी कुक्षिमां रत्नसमान पुरुषपुंडरीक नामना छट्टा वासुदेव थया. (३४–३५) तेओ ६५ हजार वर्षना आयुवाळा, २९ धनुष्यना शरीरवाळा अने आनंद नामना बळदेवना नाना भाइ हता. (३६) इति पुरुषपुंडरीकः ६

ललितमित्र नामे राजपुत्रने माटे मंत्रीए राजसभामां 'आ राज्यने अयोग्य छे' एम राजाने कह्युं, (३७) तेथी राजा तरफथी अपमान थये सते ते राजपुत्रे सागर गुरुनी पासे चारित्र अंगीकार कर्युं. अन्यदा ते मिथिलानगरीए गया. (३८) त्यां मंत्रीने मारनार थवानुं नियाणुं कर्युं. मरण पामीने पहेला सौधर्म देवलोके देव थया. त्यांथी पूर्णस्थितिए च्यवीने वाराणसीनगरीमां अग्निसिंह राजा अने शेषवती

भवन्नाम्ना दत्तो मत्तपराक्रमः ॥४०॥ षट्पंचाशत्सहस्राब्द–जीवितः सप्तमः स च । षड्विंशतिधनुस्तुंगो नंदनस्यानुजः स्मृतः ॥ ४१ ॥ इति दत्तः ।

भरतेऽत्र क्षेमपुरे नयदत्तवणिक्सुतौ । धनदत्तवसुदत्तौ सुनंदाकुक्षिसंभवौ ॥ ४२ ॥ तत्र सागरदत्तोऽभू–त्पुत्रो गुणधरोऽस्य च । पुत्री गुणवती पित्रा धनदत्ताय सा ददे ॥ ४३ ॥ मात्रा च रत्नप्रभया श्रीकांताख्याय सा ददे । वसुदत्तेन तज्ज्ञातं याज्ञवल्क्यसुहृन्मुखात् ॥ ४४ ॥ वसुदत्तस्ततो भ्रातृ–स्नेहाद्गत्वाऽवधीन्निशि । श्रीकांतं सोऽपि खड्गेन वसुदत्तमुभौ ततः ॥ ४५ ॥ विंध्याटव्यां मृगौ जाता–वनूढा गुणवत्यपि । अभून्मृगी कृते तस्या–स्तत्र युध्ध्वा मृतावुभौ ॥ ४६ ॥ मिथो वैरपरावेवं भूयसश्चक्रतुर्भवान् । धनदत्तोऽप्यभूद्भ्रातृ–वियोगेनोन्मना भृशं ॥ ४७ ॥ भ्रमन्निशि मुनीन् दृष्ट्वा क्षुधितोऽयाचताशनं । श्राद्धीकृतस्तैः प्रज्ञाप्य धर्मं सौधर्ममासदत् ॥ ४८ ॥ महापुरे ततश्च्युत्वा धारणीमेरु-

---

राणीना पुत्र दत्त नामे मदोन्मत्त पराक्रमी सातमा वासुदेव थया. (३९–४०) तेनुं ५६ हजार वर्षनुं आयु ने छवीश धनुष्य उंचुं शरीर हतुं अने ते नंदन नामना बळदेवना नाना भाइ हता. (४१) इति दत्तः ७

आ भरतक्षेत्रमां क्षेमपुर नामना नगरमां नयदत्त नामना वणिकना सुनंदानी कुक्षिथी थयेला धनदत्त ने वसुदत्त नामना बे पुत्रो हता. (४२) ते ज नगरमां सागरदत्त नामे एक वणिक रहेतो हतो, तेने गुणधर नामे पुत्र ने गुणवती नामे पुत्री हती. ते पुत्री धनदत्त वेरे तेना पिताए आपी हती (४३) अने रत्नप्रभा माताए श्रीकांतने आपी हती. वसुदत्ते आ वात याज्ञवल्क्य नामना पोताना मित्रना मुखे सांभळी. (४४) एटले भाइना स्नेहथी वसुदत्ते श्रीकांतने त्यां जइने रात्रे तेने मारी नांख्यो. तेणे वसुदत्तने खड्गवडे मारी नांख्यो, एटले ते बंने मरण पामीने विंध्याटवीमां मृग थया. कौमारावस्थामां ज मरण पामीने गुणवती पण हरणी थइ. तेने माटे युद्ध करता ते बंने मृगो मरण पाम्या. (४५–४६) आ प्रमाणे परस्पर वैरना अनुबंधथी ते बंनेए घणा भवो कर्या. अहीं धनदत्त पण भाइना वियोगथी अत्यंत उन्मत्त दशावाळो थयो. (४७) रात्रे भमतां तेने मुनि मळ्या. क्षुधित थयेला तेणे मुनिपासे खावानुं माग्युं. मुनिए उपदेशवडे तेने श्रावक बनाव्यो अने धर्म समजाव्यो, तेथी ते मरण पामीने सौधर्म देवलोके गयो. (४८) त्यांथी च्यवीने महापुरमां धारणी ने मेरुनो पुत्र पद्मरुचि नामे श्रावक-

देहभूः । अभूत्पद्मरुचिर्नाम श्रेष्ठी श्रावकपुंगवः ॥ ४९ ॥ स चैकस्या-सन्नमृत्योः परमेष्ठिनमस्क्रियां । वृषभस्य ददौ सोऽभू-च्छत्रच्छायनृपांगजः ॥ ५० ॥ दत्ताराज्ञ्याः कुक्षिजातो नाम्ना च वृषभध्वजः । स तत्रैव पुरे भ्राम्यन् वृषमृत्युभुवं ययौ ॥ ५१ ॥ प्राप्तश्च जातिस्मरणं तत्र चैत्यमचीकरत् । भित्तावालेखयामास तत्रासन्नमृतिं वृषं ॥ ५२ ॥ परमेष्ठिनमस्कार-दायिनं पुरुषं च तं । अलीलिखत्समीपस्थ-सपर्याणतुरंगमं ॥ ५३ ॥ श्रेष्ठी पद्मरुचिस्तच्चा-पश्यत्तच्चैत्यमागतः । वृषभाय नमस्कार-दानं स्वं वीक्ष्य विस्मितः ॥ ५४ ॥ नियुक्तैः पुरुषैस्तत्र पृष्टश्चोचे यथास्थितं । मया तुरगमारुह्य गच्छता गोकुले पुरा ॥ ५५ ॥ वृषभस्य नमस्कारो ददे तदिह चित्रितं । केनापि दृश्यते भित्तौ विस्मितोऽहं तदीक्षणात् ॥ ५६ ॥ ततो नियुक्तपुरुषै-र्विज्ञप्तो वृषभध्वजः । पूर्वोपकारिणं पद्म-रुचिमेत्य नमोऽकरोत् ॥ ५७ ॥ राज्यं मम गृहाणेदं त्वं मे देवो गुरुः प्रभुः । इत्युक्त्वा तेन सौहार्द-मद्वैतमतनोदयं ॥ ५८ ॥ तौ श्राद्ध-

---

श्रेष्ठ एवो श्रेष्ठी थयो. (४९) तेणे एक वखत एक आसन्नमृत्युवाळा वृषभने नमस्कारमंत्र संभळाव्यो. ते वृषभ मरण पामीने छत्रच्छाय राजानो पुत्र दत्ता राणीनी कुक्षिथी उत्पन्न थयेलो वृषभध्वज नामे थयो. ते ज नगरमां फरतो फरतो ते राजपुत्र वृषभना मृत्युस्थाने आव्यो. (५०–५१) त्यां तेने जातिस्मरण थयुं एटले तेणे त्यां एक चैत्य बंधाव्युं अने तेनी भींतउपर आसन्नमृत्युवाळा वृषभनुं चित्र कढाव्युं. (५२) तेनी समीपे परमेष्ठि नमस्कारमंत्र संभळावनार पुरुषनुं चित्र कराव्युं तेम ज पासे उभेलो पलाणसहित घोडो चित्राव्यो. (५३) अन्यदा पद्मरुचि श्रेष्ठी ते चैत्ये आव्यो, त्यां ते वृषभने नमस्कार संभळावता पोताने चित्रमां जोइने विस्मय पाम्यो. (५४) राजपुत्रना राखेला पुरुषोए तेने विस्मय पामेल जोइने कारण पूछ्युं एटले तेणे यथास्थित हकीकत कही बतावी के–' पूर्वे घोडापर बेसीने गोकुळे जतां में आ वृषभने नमस्कारमंत्र आप्यो हतो. तेनुं चित्र कोइए आ भींत उपर चितरेलुं जणाय छे. ते जोवाथी हुं आश्चर्य पाम्यो.' (५६–५६) नियुक्त पुरुषोए तरत ज वृषभध्वजपासे जइने आ वात जणावी एटले ते तरत ज त्यां आव्यो अने पूर्वोपकारी पद्मरुचिने तेणे नमस्कार कर्यो (५७) अने कह्युं के–' आ मारुं राज्य तमे ग्रहण करो, तमे ज मारा देव, गुरु तेम ज प्रभु छो.' आ प्रमाणे कहीने तेणे अद्वैत एवुं सौहार्द (मित्रपणुं) बताव्युं. (५८) पछी ते बंने श्रावकधर्म

धर्ममाराध्यो–त्पन्नौ स्वर्गे द्वितीयके । ततः पद्मरुचिश्च्युत्वा मेरोरपरतोऽभवत् ॥ ५९ ॥ नंदावर्त्तपुरे वैता–ढ्याद्रौ नंदीश्वरांगजः । नाम्ना च नयनानंदः कनकाभातनूद्भवः ॥ ६० ॥ स राजादाय चारित्रं तुर्ये स्वर्गेऽभवत्सुरः । ततश्च्युत्वा क्षेमापुर्यां प्राग्विदेहेष्ववातरत् ॥ ६१ ॥ विपुलवाहनभूप–पद्मावत्योः सुतो नृपः । श्रीचंद्रनामा प्रव्रज्य ब्रह्मलोकेंद्रतां ययौ ॥ ६२ ॥ ततश्च्युत्वा पद्मनामा बलदेवोऽष्टमोऽभवत् । रामोऽपराजिताकुक्षि–जातो दशरथात्मजः ॥ ६३ ॥ वृषभध्वजजीवस्तु सुग्रीवोऽभूत्कपीश्वरः । पूर्वं कृतोपकारत्वा–दत्यंतं पद्मवत्सलः ॥ ६४ ॥ श्रीकांतोऽपि भवान् भ्रांत्वा मृणालकंदपत्तने । शंभुर्हेमवतीजातो नृपोऽभूद्वज्रकंबुभूः ॥ ६५ ॥ वसुदत्तस्य जीवो यः श्रीकांतमवधीत्पुरा । विजयस्य स पुत्रोऽभू–च्छंभुराजपुरोधसः ॥ ६६ ॥ रत्नचूडाकुक्षिजन्मा श्रीभूतिर्नामतः स च । क्रमेण प्राप्ततारुण्यः पितृभ्यां परिणायितः ॥ ६७ ॥ गुणवत्यथ सानर्थमूलं भ्रांत्वा भवान् बहून् । पुरोधस्तनयस्यास्य श्रीभूतेरभवत्सुता ॥६८॥ सरस्वतीकुक्षिजाता नाम्ना वेगवतीति सा । क्रमेण ववृधे पद्म–लतिकेव

आराधीने बीजा देवलोकमां देव थया. पद्मरुचि त्यांथी च्यवीने मेरुपर्वतनी अपर बाजुए वैताढ्य पर्वतउपर नंदावर्तपुरमां नंदीश्वर ने कनकाभानो पुत्र नयनानंद नामे थयो. (५९–६०) ते राजा थइ चारित्र लइने चोथे स्वर्गे देव थयो. त्यांथी च्यवीने क्षेमापुरीमां पूर्वमहाविदेहमां विपुलवाहन राजा ने पद्मावतीनो पुत्र श्रीचंद्रनामे थयो. ते दीक्षा लइने पांचमा ब्रह्मलोकमां इंद्र थयो. (६१–६२) त्यांथी च्यवीने पद्म अथवा राम नामे आठमा बळदेव दशरथ राजा ने अपराजिता राणीना पुत्र थया. (६३) वृषभध्वजनो जीव सुग्रीव नामे वानराधिपति थयो. ते पूर्वे उपकार करनार पद्म (रामचंद्र) नी साथे अत्यंत वात्सल्यभाव धराववा लाग्यो. (६४) श्रीकांतनो जीव पण भवमां भमीने मृणालकंद नगरे वज्रकंबुनो पुत्र ने हेमवतीथी जन्मेलो शंभु नामनो राजा थयो. (६५) वसुदत्तनो जीव के जेणे पूर्वे श्रीकांतने मार्यो हतो ते शंभु राजाना पुरोहित विजयनो रत्नचूडानी कुक्षिथी भूति नामे पुत्र थयो. ते अनुक्रमे तारुण्य (यौवन) पाम्यो एटले तेना मातापिताए तेने परणाव्यो. (६६–६७) बधा अनर्थनुं मूळ गुणवती बहु भवोमां भमीने आ पुरोहितना पुत्र श्रीभूतिनी स्त्री सरस्वतीनी कुक्षिथी वेगवती नामे पुत्री थइ. सरोवरमां पद्मलता वधे तेम ए वेगवती अनुक्रमे वृद्धि पामी. (६८–६९) तरुणावस्थाने

सरोवरे ॥ ६९ ॥ उत्तारुण्यान्यदा सा च कायोत्सर्गस्थितं मुनिं । सुदर्शनं जनैः पूज्य–मानं वीक्ष्येदमभ्यधात् ॥ ७० ॥ अयं मुनिर्मया दृष्टः क्रीडन्नंगनया समं । हास्यात्तयोदितोऽप्येष कलंकः प्रथितो जने ॥ ७१ ॥ जग्राहाभिग्रहं सोऽपि शासनन्यक्क्रियाभिया । उत्तीर्णेऽस्मिन् कलंकेऽहं पारयिष्यामि नान्यथा ॥ ७२ ॥ वेगवत्यथ सोत्सून–मुखा दैवतरोषतः । ज्ञातसाधुव्यतिकरै–र्जनकाद्यैश्च भर्त्सिता ॥ ७३ ॥ अध्यक्षं सर्वलोकाना–मित्यूचे रचितांजलिः । निर्दोषोऽप्येष निर्ग्रंथो धिग्मया मंदभाग्यया ॥ ७४ ॥ अलीकदोषारोपेण दूषितः कृतहास्यया । तत् श्रुत्वा मुदिताः सर्वे जनास्तं मुनिमस्तुवन् ॥ ७५ ॥ त्रिभिर्विशेषकं । दिव्यानुभावादुल्लाघा साभवद्वेगवत्यपि । निशम्य जैनधर्मं च श्राविकाभूत्तदादितः ॥७६॥ अथ वेगवतीरूप–मोहितः शंभुभूपतिः । ययाचे तत्पिता मिथ्या–दृशे तस्मै ददौ न तु ॥ ७७ ॥ ततश्च शंभुः श्रीभूतिं हत्वा तां बुभुजे बलात् । भवांतरेऽहं भूयासं त्वद्वधायेति साशपत् ॥ ७८ ॥ मुक्ता सा

पामेली तेणे अन्यदा कायोत्सर्गध्याने रहेला सुदर्शन नामना मुनिने लोकोथी पूजाता जोइने आ प्रमाणे कह्युं (७०) के–' आ मुनिने में स्त्रीसाथे क्रीडा करता जोयेला छे.' हास्यमात्रथी तेणे कहेलुं आ कलंक लोकमां विस्तार पाम्युं. (७१) एटले मुनिए पण शासननी हीलना थवाना भयथी अभिग्रह कर्यो के–' आ कलंक उतरे त्यारे ज हुं कायोत्सर्ग पारीश, अन्यथा पारीश नहीं. ' (७२) शासनदेवताना रोषथी वेगवती विलखा मुखवाळी थइ अने जाण्यो छे साधुसंबंधी व्यतिकर जेणे एवा तेना मातापिताविगेरेए तेणीनी घणी निर्भर्त्सना करी. (७३) एटले तेणे पण सर्व लोकोनी समक्ष त्यां आवी हाथ जोडीने कह्युं के–' आ निर्ग्रंथ मुनि तद्दन निर्दोष छे. तेने कलंक आपनार अने निर्भाग्य एवी मने धिकार छे. में मात्र हांसीवडे खोटा दोषारोपथी मुनिने दूषित कर्या हता. ' आ प्रमाणे सांभळीने सर्व लोको हर्ष पाम्या अने ते मुनिनी स्तवना करवा लाग्या. (७४–७५) दिव्यानुभावथी ते वेगवती पण निर्दोष थइ. पछी जैन धर्म सांभळीने ते दिवसथी ते श्राविका थइ. (७६) हवे वेगवतीना रूपथी मोहित थयेल शंभु राजाए तेना पितापासे तेनी मागणी करी परंतु ते शंभु मिथ्यादृष्टि होवाथी तेने तेणे आपी नहीं. (७७) एटले शंभु राजाए श्रीभूतिने मारी नांखीने बळात्कारे तेने भोगवी. एटले वेगवतीए ' भवांतरमां हुं तारा

शंभुना दीक्षां जग्राह चरणांतिके । आर्याया हरिकांताया ब्रह्मलोकमियाय च ॥ ७९ ॥ मिथिलायां ततश्च्युत्वा सीता नाम महासती । जाता वेगवतीजीवो सा भामंडलयुग्मजा ॥ ८० ॥ रावणस्य विनाशाय शंभुजीवस्य साभवत् । मुनेर्मृषाकलंकस्य दानात्तं प्राप सा स्वयं ॥८१॥ शंभुजीवोऽपि संसारे भ्रामं भ्रामं द्विजोऽभवत् । पार्श्वे विजयसेनर्षेः प्रभासाख्योऽग्रहीद्व्रतं ॥ ८२ ॥ कनकप्रभनामान—मन्यदा खेचरेश्वरं । यांतं सम्मेतयात्रायै सोऽपश्यत्परमर्द्धिकं ॥ ८३ ॥ ईदृकूसमृद्धिर्भूयास—मनेन तपसेति सः । कृत्वा निदानमुत्पन्नः स्वर्गलोके तृतीयके ॥ ८४ ॥ ततश्च्युत्वा हरिस्वप्न—सूचितः समभूत्सुतः । कैकसीकुक्षिजो रत्न—श्रवसो राक्षसेशितुः ॥ ८५ ॥ भीमेन राक्षसेंद्रेण मेघवाहनभूभुजे । पूर्वं प्रदत्तो यो हारो नवमाणिक्यनिर्मितः ॥ ८६ ॥ नागानां च सहस्रेण रक्षितो निधिराजवत् । अनीशैर्वोढुमखिलैः पूर्वजैः पूजितः क्रमात् ॥८७॥

वधने माटे थइश ' एवो तेने श्राप दीधो. (७८) एटले शंभु राजाए तेने मूकी दीधी. पछी वेगवतीए हरिकांता नामनी आर्याना चरणसमीपे दीक्षा लीधी अने मरण पामीने पांचमा ब्रह्मदेवलोकमां गइ. (७९) त्यांथी च्यवीने वेगवतीना जीवे मिथिला नगरीमां सीता नामे महासती तरीके भामंडळनी साथे युगलपणे जन्म धारण कर्यो. (८०) ते शंभुनो जीव जे रावण थयो तेना विनाश माटे कारणभूत थइ. पूर्व भवमां मुनिने कलंक आपेलुं होवाथी तेने सीताना भवमां कलंक प्राप्त थयुं. (८१) शंभुनो जीव पण संसारमां भमतो भमतो प्रभास नामे ब्राह्मण थयो. तेणे विजयसेन मुनिनी पासे दीक्षा लीधी. (८२) तेमणे अन्यदा कनकप्रभ नामना परम ऋद्धिवाळा विद्याधरेश्वरने सम्मेत तीर्थनी यात्राए जता जोया. (८३) ते जोइने आ तपना प्रभावथी हुं आवो समृद्धिवाळो थाउं एवुं तेमणे नियाणुं कर्युं. मरण पामीने त्रीजे देवलोके देव थयो. (८४) त्यांथी च्यवीने रत्नश्रवा राक्षसनी स्त्री कैकसीनी कुक्षिथी सिंहस्वप्नसूचित पुत्र थयो. (८५) भीम नामना राक्षसनिकायना व्यंतरेंद्रे मेघवाहन राजाने पूर्वे नव माणिक्यनो बनावेलो जे हार आप्यो हतो अने निधिराजनी जेम एक हजार नागोथी सेवातो हतो तथा तेने वहन करवाने—पहेरवाने असमर्थ एवा बधा पूर्वजोथी अनुक्रमे सेवातो हतो ते हार बाळक एवा ते पुत्रे

तं च हारं स बालोऽपि न्यधात्कंठे कराहृतं । मुखैस्तद्रत्नसंक्रांतैः सोऽभूद्दशमुखाह्वयः ॥ ८८ ॥

त्रैलोक्यकंटकं चैनं वाली निर्जित्य संगरे । वैराग्येण प्रवव्राजा–कार्षीच्च विविधं तपः ॥ ८९ ॥ तं पुष्पकाव्हमानाधि–रूढो दशमुखो व्रजन् । अष्टापदाचलेऽपश्य–त्प्रतिमास्थं स्खलद्गतिः ॥ ९० ॥ दृष्ट्वा च वालिनं क्रुद्धो–ऽवादीदेवं दशाननः । निर्जित्य मां भयादेव दंभेन व्रतमग्रहीः ॥ ९१ ॥ मां बाहुमूले निक्षिप्य यथाऽभ्राम्यस्त्वमंबुधीन् । तथा त्वां साद्रिमुत्क्षिप्य लवणाब्धौ क्षिपाम्यहं ॥ ९२ ॥ इत्युदीर्य विदार्य क्ष्मा–मष्टापदगिरेस्तले । प्रविश्य युगपद्विद्या–सहस्रं मनसि स्मरन् ॥ ९३ ॥ धराधरं तमुद्दध्रे चलयन्नचलातलं । झलज्झालायितांभोधि पतद्गिरिशिरःशतं ॥ ९४ ॥ अद्याप्ययं मयि क्रोधा–दनर्थं कुरुते हहा । मा भूद्भरतचैत्यानां भ्रंशोंतरिति चिंतयन् ॥ ९५ ॥ अवधिज्ञानवान्नाना–लब्धिर्वाली महामुनिः । गतस्पृहः शरीरेऽपि चैत्यत्राणाय केवलं ॥ ९६ ॥ अपीडय-

---

(रावणे) हाथवडे उपाडीने पोतानी डोकमां नाख्यो. ते हारना नव रत्नमां संक्रांत थता नव मुखोथी एकंदर ते दशमुख नामथी प्रख्यात थयो. (८६–८८)

ते दशमुख त्रैलोक्यकंटक तरीके प्रसिद्धि पाम्यो. तेने संग्राममां जीतीने वालि विद्याधरे वैराग्यथी दीक्षा अंगीकार करी अने विविध प्रकारना तप तपवा लाग्या. (८९) तेवामां पुष्पक विमानमां बेसीने जता दशमुखे अष्टापद पर्वत उपर कायोत्सर्गध्याने रहेला ते मुनिने जोया. कारणके त्यां तेनुं विमान स्खलना पाम्युं. (९०) एवीरीते विमाननी थयेली स्खलनाथी अने तेना कारण तरीके वालिमुनिने जोवाथी क्रोधायमान थयेलो दशानन एम बोल्यो के–' मने जीतीने मारा भयथी ज तें चारित्र ग्रहण कर्युं छे. ते वखते मने बाहुमूळमां क्षेपन करीने जेम तें समुद्र फरतो मने फेरव्यो हतो तेम तने आ पर्वत सहित उपाडीने हुं लवणसमुद्रमां नांखी दउं छुं.' (९१–९२) आ प्रमाणे कहीने पृथ्वीने विदारी अष्टापदपर्वतनी नीचे प्रवेश करी तेणे हजारे विद्यानुं स्मरण कर्युं. (९३) पछी पृथ्वीतळने चळावता तेणे ते पर्वतने उपाड्यो ते वखते समुद्रना जळ उछळवा लाग्या अने पर्वतना सेंकडो शिखरो पडवा लाग्या. (९४) वालिमुनिए आ हकीकत जाणीने विचार्युं के–' हजु पण आ रावण मारा उपरना क्रोधथी अहो ! महा अनर्थ करे छे, परंतु तेना आ कृत्यथी भरतचक्रीए आ पर्वतपर करावेला चैत्योनो भ्रंश

त्पदांगुष्ठा-ग्रेणाष्टापदभूमिकां । तेनाक्रांतश्च भारार्त्त-कंधरो दशकंधरः ॥ ९७ ॥ भयार्त्तः संकुचद्गात्रो रावयन् सकलां महीं । आरावीद्भृशमाक्रंदै-स्ततोऽभूद्रावणाह्वयः ॥ ९८ ॥

अभूतां सोदरावस्य भानुकर्णबिभीषणौ । स्वसा चंद्रणखा पट्ट-राज्ञी मंदोदरीति च ॥ ९९ ॥ भानुकर्णस्य कुंभकर्ण इति, चंद्रणखायाः सूर्पणखेति च नामांतरं. धनदत्तवसुदत्त-सुहृद्यो ब्राह्मणः पुरा । आसीन्नाम्ना याज्ञवल्क्यः क्रमात्सोऽभूद्विभीषणः ॥३००॥ निहतः शंभुना राज्ञा श्रीभूतिर्यः पुरोहितः । शुभध्यानात्स चोत्पेदे स्वर्गे च्युत्वा ततोऽभवत् ॥ १ ॥ सुप्रतिष्ठपुरे विद्या-धरो नाम्ना पुनर्वसुः । द्वासप्ततिकलाशाली चतुरः सुभगः सुधीः ॥ २ ॥ युग्मं । स चैकदा त्रिभुवना-नंदस्य चक्रवर्त्तिनः । सुतां कामवशो जह्रे नामतोऽनंगसुंदरीं ॥ ३ ॥ पुंडरीकाख्यविजया-द्गच्छन्निजपुरीं प्रति । चक्रभृत्प्रहितैर्विद्या-धरैः स रुरुधे युधे । ॥ ४ ॥ विद्यास्त्रैर्विविधैर्नाग-तार्क्ष्यांभोदानिलादिभिः । एतस्य युद्ध्य-

---

न थाओ. ' एम मनमां विचारीने अवधिज्ञानवाळा, अनेक प्रकारनी लब्धिवाळा अने शरीरने विषे पण स्पृहा विनाना वालि महामुनिए केवळ चैत्योना रक्षणने माटे पगना अंगुठाना अग्रभागवडे अष्टापद पर्वतनी भूमिकाने दबावी, तेथी आक्रांत थयेलो-दबायेलो अने भारवडे पीडित थयेली कंधरावाळो दशकंधर (रावण) भयार्त्त ने संकुचित गात्रवाळो थयो. तेणे अत्यंत आक्रंदवडे सर्व पृथ्वीने शब्दवाळी करी. त्यारथी ते रावण कहेवायो. (९५-९८)

रावणने भानुकर्ण ने विभीषण नामना बे भाइओ हता. चंद्रणखा नामे बहेन हती अने मंदोदरी नामे पट्टराणी हती. (९९) भानुकर्णनुं बीजुं नाम कुंभकर्ण ने चद्रणखानुं बीजुं नाम सूर्पणखा जाणवुं. पूर्वे धनदत्त ने वसुदत्तनो मित्र ब्राह्मण के जे याज्ञवल्क्य नामनो हतो ते अनुक्रमे विभीषण थयो हतो. (३००) शंभुराजाए पूर्वे जे श्रीभूति नामना पुरोहितने मार्यो हतो ते शुभ ध्यानथी मरण पामीने स्वर्गे गयो हतो ते त्यांथी च्यवीने सुप्रतिष्ठपुरमां पुनर्वसु नामे विद्याधर थयो ते बहोंतेर कळावान्, चतुर, सुभग अने बुद्धिमान् थयो. (१-२) तेणे एकदा त्रिभुवनानंद चक्रवर्तीनी अनंगसुंदरी नामनी पुत्रीनुं कामना वशथी हरण कर्युं. (३) तेने पुंडरीक नामनी विजयथी पोतानी नगरीए जतां चक्रवर्तीना मोकलेला विद्याधरोए युद्ध करवा माटे अटकाव्यो. (४) तेमनी साथे नाग, तार्क्ष्य, अंभोद ने अनिलादि विविध प्रकारना विद्याशस्त्रोथी युद्ध करतां तेनी

मानस्य वैयग्र्यात्स्वविमानतः ॥ ५ ॥ क्वचिद्वननिकुंजे सा पपातानंग-
सुंदरी । विरराम ततो युद्धा-द्विरक्तात्मा पुनर्वसुः ॥ ६ ॥
समुद्रगुरुपादांते ततः स्वीकृत्य संयमं । काश्यां गतोऽन्यदाऽकार्षी-न्नि-
दानमिति चेतसा ॥७॥ अभविष्यं भवेऽस्मिंश्च-चक्रिणोऽहंबलोऽधिकः ।
तन्मत्तश्चक्रिसैन्यार्त्ता-ऽयास्यन्नानंगसुंदरी ॥ ८ ॥ भवांतरेऽपि भूयासं
तपसानेन तादृशः । तथा प्राणप्रिया भूयात् सैषा मेऽनंगसुंदरी ॥ ९ ॥
पुनर्वसुस्ततो जातः सुरः स्वर्गे तृतीयके । चारित्रोपार्जितं तत्र बुभुजे
शं यथास्थिति ॥ १० ॥

अतितीव्रं तपोऽकार्षी-द्वनस्थानंगसुंदरी । विहितानशना चांते जग्र-
सेऽजगरेण सा ॥ ११ ॥ ततः समाधिना मृत्वा देवलोके तृतीयके ।
सुरत्वेन समुत्पेदे बुभुजे चाद्भुतं सुखं ॥ १२ ॥

इतश्च-नैमित्तिकोक्त्या स्ववधं ज्ञात्वा दशरथात्मजात् । प्रैषीद्दशरथं
हंतुं दशग्रीवो बिभीषणं ॥ १३ ॥ नारदर्षिर्दशरथ-मुभुजे द्राक् सधर्मणं ।

व्यग्रताने लीधे तेना विमानमांथी अनंगसुंदरी कोइ वनना निकुंजमां पडी गइ. एटले ते पुनर्वसु युद्धथी विराम पाम्यो अने तेनो आत्मा संसारथी विरक्त थयो. (६) तेथी समुद्रगुरुना चरणसमीपे तेणे चारित्र अंगीकार कर्युं. अन्यदा ते काशीमां गयो त्यां तेणे मनमां आ प्रमाणे नियाणुं कर्युं. (७) के 'आ भवमां जो हुं चक्रवर्ती करतां अधिक बळवाळो पण होत तो चक्रीना सैन्यथी आर्त्त थयेला मारा हाथथी अनंगसुंदरी छुटी शकत नहीं, (८) माटे भवांतरमां पण आ तपना प्रभावथी हुं एवो बळवान थाउं अने आ अनंगसुंदरी मारी प्राणप्रिया थाय.' (९) आ प्रमाणे नियाणुं करनार पुनर्वसु मुनि मरण पामीने त्रीजे देवलोके देव थया. त्यां चारित्रना प्रभावथी उपार्जन करेलुं सुख यथास्थिति एटले स्थिति प्रमाणे भोगव्युं (१०)

विमानमांथी पडेली अनंगसुंदरीए अति तीव्र तप कर्यो. प्रांते अनशन कर्युं. ते स्थितिमां तेने अजगर गळी गयो. (११) त्यां समाधिवडे मरण पामीने ते त्रीजे देव-लोके देवपणे उत्पन्न थइ. त्यां तेणे अद्भुत सुख भोगव्युं. (१२)

हवे अहीं नैमित्तिकनां कथनथी पोतानो वध दशरथ राजाना पुत्रथी थवानो जाणीने दशरथ राजाने मारी नांखवा माटे दशग्रीवे बिभीषणने मोकल्यो. (१३) नारदमुनिए आ वात दशग्रीवनी राजसभामां सांभळीने तरत ज पोताना सधर्मी दशरथराजापासे

अजिज्ञपद्दशग्रीव–संसद्याकर्ण्य तां कथां ॥ १४ ॥ श्रुत्वा दशरथोऽप्येव–मयोध्याया विनिर्ययौ । समर्प्य मंत्रिणे राज्यं वेषांतरतिरोहितः ॥ १५॥ मूर्त्ति दशरथस्याथ कृत्वा लेप्यमयीं सुधीः । वेश्मन्यस्थापयन्मंत्री राज्ञः प्रख्यापयन् रुजं ॥ १६ ॥ बिभीषणोऽपि तत्रैत्य संरंभात्तमसि स्थितां । तन्मूर्त्ति लेप्यजां हत्वा कृतकृत्यो न्यवर्त्तत ॥ १७ ॥

अथो दशरथो भ्राम्य–न्नयासीदुत्तरापथे । स्वयंवरोत्सवोद्रंगे द्रंगे कौतुकमंगले ॥ १८ ॥ पतिंवरां पर्यणैषी–द्राज्ञः शुभमतेः सुतां । अद्भुतां तत्र कैकेयीं द्रोणमेघसहोदरीं ॥ १९ ॥ अस्मासु सत्सूद्वहति कन्यां कार्पटिकः कथं । इतीर्ष्यया प्रववृते योध्धुं शेषनृपव्रजः ॥ २० ॥ कैकेय्या सारथित्वेन कृतसाहाय्यको नृपः । प्रतिपक्षान् पराजिग्ये कैकेय्यै च वरं ददौ ॥ २१ ॥ कैकेयीं परिणीयाथ बलैर्नैकैर्महाबलः । जग्राह नगरं राजगृहं निर्जित्य तत्प्रभुं ॥ २२ ॥ लंकेश्वरभयात्तत्र तस्थुषोऽस्य महीपतेः । चतुर्दिग्जैत्रदोर्वीर्या–श्चत्वारोऽथाभवन् सुताः ॥ २३ ॥ तत्रापराजिता

आवीने जणावी. (१४) ए वात सांभळीने दशरथ राजा अयोध्यामांथी नीकळी गया. राज्य मंत्रीने सोंप्युं अने पोते वेषांतर करीने अदृश्य थइ गया. (१५) अहीं बुद्धिमान मंत्रीए दशरथ राजानी मूर्त्ति लेप्यमय बनावीने राजमहेलना अंधारा ओरडामां राखी अने ' दशरथ राजा व्याधिग्रस्त छे ' एवी वात जाहेर करी. (१६) विभीषणे पण त्यां आवीने उतावळा अंधकारमां रहेली दशरथराजानी लेप्यमयी मूर्त्तिने हणी नांखी अने कृतकृत्य थइने पाछो गयो. (१७)

दशरथ राजा भमता भमता उत्तरापथमां गया. त्यां कौतुकमंगळ नामना नगरमां स्वयंवरनो उत्सव हतो. (१८) ते प्रसंगमां दाखल थइने शुभमति राजानी पुत्री अने द्रोणमेघनी बहेन कैकेयी जे अद्भुत रूपवाळी हती तेने परण्या. (१९) ते प्रसंगे त्यां अनेक राजाओ आवेला हता ते बधा राजाओ ' अमने बधाने मूकीने आ कन्या कापडीने केम वरे ? ' एम ईर्ष्याथी कहेता सता लडवाने तैयार थइ गया. (२०) ते वखते दशरथ राजाने कैकेयीए तेना सारथि थइने अत्यंत सहाय करी तेथी ते बधा प्रतिपक्षीओने दशरथराजाए जीत्या. एटले तेणे कैकेयीने वरदान आप्युं. (२१) कैकेयीने परणीने घणा सैन्यवडे महाबळवान थयेला दशरथराजाए राजगृहना राजाने जीती तेनुं नगर पोते ग्रहण कर्युं. (२२)लंकेश्वरना भयथी त्यां ज रहेला दशरथ राजाने चारे दिशामां रहेला राजाओने जीते एवा बाहुना वीर्यवाळा चार पुत्रो थया. (२३) तेमां प्रथम

देवी हर्येत्तेभेंदुभास्करैः । तनयं सूचितं स्वप्नै–र्बलं पद्ममजीजनत् ॥२४॥
स्वर्गात्सनत्कुमाराख्या–च्च्युत्वा जीवः पुनर्वसोः । समुत्पेदे सुमित्रायाः
कुक्षावत्त्वामभाग्यभूः ॥ २५ ॥ सिंहेभसूर्यचंद्राग्नि–श्रीवार्द्धिस्वप्नसूचितं ।
नारायणाभिधं विष्णुं सुमित्रा सुषुवे सुतं ॥ २६ ॥ सुतं चासूत कैकेयी
भरतं भरतोपमं । प्रासूत सुप्रभा पुत्रं शत्रुघ्नं शत्रुखंडनं ॥ २७ ॥

जीवोऽथानंगसुंदर्या–श्च्युत्वा कल्पात्तृतीयकात् । पत्न्यां प्रियंकरा-
नाम्न्यां द्रोणमेघस्य भूपतेः ॥ २८ ॥ सुताभवद्विशल्याख्या मातुर्व्याधिं
चिरंतनं । या जहारागता गर्भे जाता सा निरुपद्रवा ॥ २९ ॥ प्राक्
तप्ततपसोऽमुष्याः स्नानांभोभिर्जनेऽभवत् । व्रणसंरोहणं शल्या–पहारो
रोगसंज्ञयः ॥ ३० ॥

राज्याभिषेकायाहूतं रामं दशरथोऽप्यथ । विससर्ज वनायार्त्तः
कैकेयीवरयांचया ॥ ३१ ॥ सह लक्ष्मणसीताभ्यां पद्मस्य वनमीयुषः ।
जहार रावणः सीतां छलात्सूर्पणखोदितां ॥ ३२ ॥ ज्ञातसीताव्यतिकरौ

अपराजिता राणीए हाथी, सिंह, चंद्र ने सूर्य–ए चार स्वप्नवडे सूचित पद्म नामना बळ-देवने जन्म आप्यो. (२४) सनत्कुमार देवलोकथी च्यवीने पुनर्वसुनो जीव अत्यंत भाग्यशाळी एवो सुमित्रा नामनी राणीनी कुक्षिमां उत्पन्न थयो. (२५) सिंह १ हाथी २ सूर्य ३ चंद्र ४ अग्नि ५ लक्ष्मी ६ ने समुद्र ७— ए सात स्वप्नोथी सूचित नारायण (लक्ष्मण) नामना वासुदेव थनार पुत्रने ते सुमित्राए जन्म आप्यो. (२६) कैकेयीए भरत जेवा भरत नामना पुत्रने जन्म आप्यो अने सुप्रभाराणीए शत्रुनुं खंडन करनार शत्रुघ्न नामना पुत्रने जन्म आप्यो. (२७)

अनंगसुंदरीनो जीव त्रीजा देवलोकमांथी च्यवीने द्रोणमेघराजानी प्रियंकरा नामनी राणीथी विशल्या नामनी पुत्रीपणे उत्पन्न थयो. ते गर्भमां आवतां ज घणा वखतनो मातानो व्याधि दूर थयो अने तेनो निरुपद्रवपणे जन्म थयो. (२८–२९) पूर्वभवमां तपेला तपना प्रभावथी आ विशल्याना स्नानना जळथी लोकोमां व्रणसंरोहण, शल्यनो अपहार ने रोगनो संचय थवा लाग्यो. (३०)

अहीं अन्यदा राज्याभिषेक माटे बोलावेला रामचंद्रने दशरथ राजाए कैकेयीए करेली पोताने आपेला वरदाननी मागणीथी पीडा पामीने वनवास माटे विसर्जन कर्या. (३१) लक्ष्मण ने सीता सहित रामचंद्र वनमां गया. त्यां सूर्पणखाना कहेवाथी रावणे छळ करीने सीतानुं हरण कर्युं. (३२) जाण्यो छे सीतानो व्यतिकर जेणे

पद्मनारायणावथ। विद्याधराधिपैर्नैकैः सुग्रीवादिभिराश्रितौ ॥ ३३ ॥
गत्वा नभोऽध्वना लंकां मानिना दशमौलिना। योद्धुं प्रववृताते तौ
शत्रुप्राणापहारिणौ ॥३४॥ अथात्यंतं हितोऽवादी–द्दशवक्त्रं बिभीषणः।
मंत्र्यादिभिर्हितैर्नीति–शास्त्रविज्ञैः समन्वितः ॥ ३५ ॥ कार्षीद(र)नीतिं
मा भ्रात–र्द्राक् प्रत्यर्पय जानकीं। आतिथेयीयमेवास्तु रामस्याभ्यागत-
स्य नः ॥ ३६ ॥ यम एवास्य मच्छत्रो–रातिथेयीं करिष्यति। एतद्गृह्यो
वदन्नेवं त्वमप्येनमनुव्रज ॥ ३७ ॥ इति निर्भर्त्सितो बाढं भ्रात्रा दुर्नय-
कारिणा। रामं बिभीषणो न्याय्यं शिश्राय प्राग्जनुःसुहृत् ॥ ३८ ॥

जायमानेऽथ संग्रामे दशमौलिर्बिभीषणं। हंतुं युद्ध्यंतमक्षैप्सी–
च्छक्तिं सद्योऽरिघातिनीं ॥ ३९ ॥ सौमित्रिमवदद्राम–स्तदायं हन्यते
हहा। बिभीषणः संश्रितोऽस्मान् धिग् नः संश्रितघातिनः ॥ ४० ॥ ल-
क्ष्मणः पुरतो गत्वा पृष्ठे कृत्वा बिभीषणं। आचिक्षेप दशग्रीवं क्रुद्धः

एवा पद्म ने नारायण (रामचंद्र ने लक्ष्मण) ने सुग्रीवादिक अनेक विद्याधरोना राजाओ आवी आवीने मळ्या–तेमना आश्रित थया. (३३) शत्रुना प्राणने अपहरण करनारा एवा ते बंने आकाशमार्गे लंकानगरीए गया अने अत्यंत अभिमानी एवा दशमुख (रावण)नी साथे युद्ध करवामां प्रवर्त्या. (३४) अहीं नीतिशास्त्रने जाणनारा हितेच्छु मंत्रीविगेरेवडे युक्त एवा अतिहितेच्छु बिभीषणे दशमुखने कह्युं (३५) के—' हे भ्रात ! अनीति न करो अने जानकी (सीता)ने पाछी आपी द्यो. सामा आवेला प्राहुणारूप रामनुं आपणी तरफथी एवी रीते आतिथेय (परोणागत) थाओ.' (३६) ते सांभळी रावणे कह्युं के—' यमराजा ज आ मारा शत्रुनुं आतिथेय करशे. बाकी तेनो पक्षपाती आम बोलतो एवो तुं पण एनी पासे चाल्यो जा.' (३७) आ प्रमाणे अन्यायकारी भाइए अत्यंत निर्भर्त्सित करेला बिभीषणे न्यायी एवा रामनो के जे पूर्वभवना मित्र हता तेमनो आश्रय कर्यो. (३८)

हवे संग्राम चालतां दशमौलिए युद्धमां उतरेला बिभीषणने मारवा माटे तत्काळ शत्रुनो घात करे एवी अमोघविजया नामनी शक्ति तेना उपर नांखी. (३९) ते वखते लक्ष्मणप्रत्ये रामे कह्युं के–'हा ! हा ! आ आपणो आश्रित थयेलो बिभीषण हणाय छे. आश्रितनो घात थवा देनार आपणने धिक्कार छे !' (४०) वडीलबंधुना आवा वचन सांभळीने लक्ष्मण बिभीषणनी आगळ थयो अने तेने पोतानी पाछळ करी दीधो. पछी

सौमित्रेर्दक्षिणं करं । अलंचक्रे वशीभूतं चिरपालितपक्षिवत् ॥ ५९ ॥ सचक्रं चूर्णयिष्यामी–त्युन्माद्यंतं दशाननं । चक्रे तेनैव चक्रेण विष्णुः पाटितवक्षसं ॥ ६० ॥ ततश्च ज्येष्ठबहुले–कादश्यामपराह्णके । यामे तृतीये नरकं चतुर्थं रावणो ययौ ॥ ६१ ॥ लंकाराज्येऽभिषिच्याथ पद्मराजो विभीषणं । सीतामादाय सौमित्र–सेवितः कोशलां ययौ ॥ ६२ ॥ तत्र त्रिखंडभूपालै–रभिषिक्तः सुरैरपि । लक्ष्मणो वासुदेवत्वे बलत्वे पद्मभूपतिः ॥ ६३ ॥ द्वादशाब्दसहस्रायु–स्तुंगश्चापानि षोडश । अष्टमो वासुदेवोऽथ–मुक्तः पद्मानुजः श्रुते ॥ ६४ ॥ इति लक्ष्मणः ॥

गंगदत्तो वणिग्मातु–रपमानाद्विरागवान् । द्रुमसेनर्षिपादांते प्रव्रज्यां प्रतिपन्नवान् ॥ ६५ ॥ निदानं चकृवानेवं सोऽन्यदा हस्तिनापुरे । भूयासं तपसानेन जनानां वल्लभो भृशं ॥ ६६ ॥ ततः स्वर्गे महाशुक्रे स संजातः समाधिना । वृंदारको महासौख्यो महाकांतिर्महास्थितिः ॥ ६७ ॥

चिंता करीने तेना हाथमां आवी घणा वखतथी पाळेला वशीभूत पक्षीनी जेम स्थिर थयुं. (५९) ते वखते चक्रसहित लक्ष्मणने पण चूर्ण करी नाखवाना अभिमानवाळा दशानन उपर लक्ष्मणे चक्र मूक्युं. तेणे तेना हृदयने फाडी नांख्युं–शतखंड करी नांख्युं. (६०) ए रीते ज्येष्ठ कृष्ण एकादशीए बपोर पछीना वखते त्रीजे पहोरे मरण पामीने रावण चोथी नरके गयो. (६१) लंकाना राज्यउपर पद्मे विभीषणनो अभिषेक कर्यो. अने सीताने लइने सौमित्रिथी सेवित रामचंद्र अयोध्यामां आव्या. (६२) त्यां भरतक्षेत्रना दक्षिण बाजुना त्रण खंडना सर्व राजाओए अने देवोए मळीने लक्ष्मणनो वासुदेव तरीके अने पद्मनो बलदेव तरीके अभिषेक कर्यो. (६३) आठमा वासुदेव बार हजार वर्षना आयुवाळा ने सोळ धनुष्यना शरीरवाळा रामचंद्रना नानाभाइ तरीके शास्त्रोमां वर्णवेला छे. (६४) इति लक्ष्मणः ८ ।

गंगदत्त नामनो वणिक माताना अपमानथी वैराग्यवाळो थयो. तेणे द्रुमसेन मुनिनी पासे प्रव्रज्या अंगीकार करी. (६५) ते अन्यदा हस्तिनापुर गया. त्यां तेमणे 'आ तपना प्रभावथी लोकोनो अत्यंत वल्लभ थाउं' एवुं नियाणुं कर्युं. (६६) अने समाधिपूर्वक मरण पामीने ते महाशुक्र नामना सातमा देवलोकमां महाकांतिवाळा, महासुखवाळा अने पूर्णस्थितिवाळा देव थया. (६७)

इतश्च मथुरापुर्यां हरिवंशे नृपोऽभवत् । बृहद्बलाह्वयस्तस्य तनयो यदुसंज्ञकः ॥ ६८ ॥ तत्सुतो भूपतिः शूर–स्तस्याभूतामुभौ सुतौ । नृपौ शौरिसुवीराख्यौ जाग्रन्नीतिपराक्रमौ ॥ ६९ ॥ शूरः शौरिं न्यस्य राज्ये व्रते प्रववृते स्वयं । ततः शौरिः कनिष्ठाय मथुराराज्यमार्पयत् ॥ ७० ॥ स्वयं कुशार्त्तदेशेषु चक्रे शौरिपुरं नवं । जज्ञिरेंधकवृष्ण्याद्या—स्तनयाः शौरिभूपतेः ॥ ७१ ॥ भोजवृष्ण्यादयोऽभूवन् सुवीरनृपतेः सुताः । न्यवीविशन्नवीनं च स सौवीराख्यपत्तनं ॥ ७२ ॥ भोजवृष्णिमहीनेतु–र्मथुरानगरीपतेः । उग्रसेनोऽभवत्पुत्रो योऽसौ राजीमतीपिता ॥ ७३ ॥ नृपस्यांधकवृष्णेश्च सुभद्राकुक्षिसंभवाः । दशाभूवंस्तनुभुवो दशार्हा इति ये श्रुताः ॥ ७४ ॥ समुद्रविजयो १ ऽक्षोभ्य २–स्तिमितः ३ सागरस्तथा ४ । हिमवा ५ नचलाभिख्यो ६ धरणः ७ पूरणोऽपि च ८ ॥ ७५ ॥ अभिचंद्रो ९ वसुदेव १०–स्तेषु प्राच्यनिदानतः । वसुदेवोऽतिसौभाग्यात् स्त्रीणामासीदतिप्रियः ॥ ७६ ॥

गंगदत्तस्य जीवोऽय–मष्टमाद्देवलोकतः । स्थितिक्षये ततश्च्युत्वा मथुरायां महापुरि ॥ ७७ ॥ वसुदेवस्य भूपस्य देवकीकुक्षिजोंगजः ।

अहीं मथुरापुरीमां हरिवंशमां बृहद्बळ नामे राजा थयो, तेनो पुत्र यदु नामे थयो. (६८) तेनो पुत्र शूर नामे राजा थयो. तेने बे पुत्र शौरि ने सुवीर नामे जागृत एवी नीति ने पराक्रमवाळा थया. (६९) शूर राजाए शौरिने राज्यपर स्थापन करीने पोते व्रत अंगीकार कर्युं. शौरिए पोताना नानाभाइ सुवीरने मथुरानुं राज्य आप्युं (७०) अने पोते कुशार्त्त देशमां शौरिपुर नामनुं नवुं शहेर वसाव्युं. शौरि राजाने अंधकवृष्णि विगेरे पुत्रो थया. (७१) अने सुवीर राजाने भोजवृष्णि विगेरे पुत्रो थया. तेणे सौवीर नामनुं नवीन नगर वसाव्युं. (७२) भोजवृष्णि मथुरा नगरीनो स्वामी थयो. तेने उग्रसेन नामनो पुत्र थयो के जे राजीमतीना पिता थाय. (७३) अंधकवृष्णि राजाने सुभद्रा राणीनी कुक्षिथी दश पुत्रो थया. ते दशार्ह नामथी प्रसिद्धि पाम्या. (७४) तेना नाम समुद्रविजय १, अक्षोभ्य २, स्तिमित ३, सागर ४, हिमवान् ५, अचळ ६, धरण ७, पूरण ८, अभिचंद्र ९ ने वसुदेव १०. तेमां पूर्व भवे नियाणुं करेलुं होवाथी अत्यंत सौभाग्यपणुं प्राप्त थवाथी वसुदेव स्त्रीओने अत्यंत प्रिय थया. (७५–७६)

हवे गंगदत्तनो जीव आठमा देवलोकथी आयुक्षये च्यवीने मथुरा नामनी महापुरीमां वसुदेव राजानी देवकी नामनी राणीनी कुक्षिथी कृष्ण नामे पुत्र थया, ते नवमा वासुदेव

कृष्णाख्यो वासुदेवोऽभू–न्नवमोऽनवमद्युतिः ॥ ७८ ॥ रामाख्यो बलदेवोऽभू–द्रोहिणीकुक्षिसंभवः । अस्य भ्राता विमात्रेयः परमप्रीतिभाजनं ॥ ७९ ॥ अयं श्रीनेमिनाथस्य पितृव्यतनयः स्मृतः । यतः समुद्रविजय–वसुदेवौ सहोदरौ ॥ ८० ॥ अयं वर्षसहस्रायु–र्दशचापोच्छ्रितोऽभवत् । बिभ्रत्क्षायिकसम्यक्त्वं श्राद्धो नेमिजिनेशितुः ॥ ८१ ॥ इति कृष्णः ॥

पंचाशीतिर्वत्सराणां लक्षाण्याद्यस्य जीवितं । द्वितीयस्यायुरब्दानां लक्षाणि पंचसप्ततिः ॥ ८२ ॥ पंचषष्टिस्तृतीयस्य वर्षलक्षाणि जीवितं । तुर्यस्य पंचपंचाश–द्वर्षलक्षास्तदीरितं ॥ ८३ ॥ लक्षाण्येवं सप्तदश पंचमस्यायुरद्भुतं । षष्ठस्याब्दसहस्राणि पंचाशीतिर्भवेदिदं ॥ ८४ ॥ पंचषष्टिः सहस्राणि वर्षाणां सप्तमस्य तत् । वत्सराणां पंचदश–सहस्राण्यष्टमस्य च ॥ ८५ ॥ शतानि द्वादशाब्दानां नवमस्यायुरीरितं । नवानां बलदेवानां क्रमः प्रोक्तोऽयमायुषां ॥ ८६ ॥ बलदेवास्त्रयश्च्युत्वा–ऽनुत्तराख्यविमानतः । जातास्त्रयो महाशुक्रा–द्ब्रह्मलोकात् त्रयः क्रमात् ॥८७॥ विश्वनंदिः १ सुबुद्धिश्च २ तथा सागरदत्तकः ३ । अशोको ४ ललित ५ श्चैव वराह ६ धनसेनकौ ७ ॥ ८८ ॥ तथापराजितो ८ राज–

अनवम (अतिसुंदर) कांतिवाळा थया. (७७–७८) तेमना मोटा भाइ रोहिणी राणीनी कुक्षिथी थयेला राम नामना बळदेव थया. ए कृष्णनी अपरमाताना पुत्र छतां परमप्रीतिना भाजन थया. (७९) ए बंने नेमिनाथना काकाना पुत्र कह्या छे. कारण के समुद्रविजय (नेमिनाथना पिता) ने वसुदेव बंने सहोदर हता. (८०) आ कृष्ण एक हजार वर्षना आयुवाळा, दश धनुष्य उंचा शरीरवाळा, क्षायिक समकितने धारण करनारा अने नेमिनाथना श्रावक हता. (८१) इति कृष्णः ९ ।

नव बळदेवमां पहेलानुं आयुष्य ८५ लाख वर्षनुं, बीजानुं ७५ लाख वर्षनुं, त्रीजानुं ६५ लाख वर्षनुं, चोथानुं ५५ लाख वर्षनुं, पांचमानुं १७ लाख वर्षनुं, छठ्ठानुं ८५ हजार वर्षनुं, सातमानुं ६५ हजार वर्षनुं, आठमानुं १५ हजार वर्षनुं अने नवमानुं १२०० वर्षनुं हतुं. (८२–८६) त्रण बळदेव अनुत्तरमांथी च्यवीने, त्रण महाशुक्रथी च्यवीने, त्रण ब्रह्मदेवलोकथी च्यवीने थया हता. (८७) ए बळदेवोना स्वर्गनी अगाउना भवमां विश्वनंदी १, सुबुद्धि २, सागरदत्त ३, अशोक ४, ललित ५, वराह ६,

ललित ९ श्चेति तीर्थपाः। नामानि बलदेवानां स्वर्गात्प्राच्यभवे जगुः ॥ ८९ ॥ बलदेवा ययुर्मुक्ति-पदमष्टौ यथाक्रमं। दशाब्धिजीवितोंत्यश्च ब्रह्मलोके सुरोऽभवत् ॥ ९० ॥ उत्सर्पिण्यां भविष्यंत्यां ततश्च्युत्वात्र भारते। भाविनः कृष्णजीवस्या-ऽर्हतस्तीर्थे स सेत्स्यति ॥ ९१ ॥ सप्तम्यां प्रथमो विष्णुः षष्ठ्यां पंच गताः क्रमात्। पंचम्यां च चतुर्थ्यां च तृतीयायां क्षितौ परे ॥ ९२ ॥

विष्णवो बलदेवाश्च सर्वे गौतमगोत्रजाः। पद्मनारायणौ तु द्वौ ज्ञेयौ काश्यपगोत्रजौ ॥ ९३ ॥ पंचाभूवंस्त्रिपृष्ठाद्या वारेषु हरयः क्रमात्। श्रेयांसस्वामिमुख्यानां पंचानामर्हतामिह ॥ ९४ ॥ अंतराले च षष्ठोऽभू-दरनाथसुभूमयोः। सप्तमोऽप्यंतरालेऽभू-त्सुभूममल्लिनाथयोः ॥ ९५ ॥ मुनिसुव्रतनम्योश्चां-तराले रामलक्ष्मणौ। श्रीनेमिजिनवारे च कृष्णोऽभून्नवमो हरिः ॥ ९६ ॥

तथोक्तं-दो तित्थेस सचक्कि १, २ अट्ठ य जिणा १० तो पंच केसीजुआ ५,-१५, दो चक्काहिव ३, ४ तिन्नि चक्कियजिणा १६-१७-१८

धनसेन ७, अपराजित ८ अने ललितराज ९ नामो तीर्थंकरोए कह्या छे. (८८-८९) आठ बळदेवो मोक्षे गया छे अने दश सागरोपमने आउखे छेल्ला बळदेव ब्रह्मदेवलोके गया छे. (९०) ते आवती उत्सर्पिणीमां त्यांथी च्यवीने आ भरतक्षेत्रमां मनुष्यपणे उत्पन्न थशे अने कृष्णना जीव के जे अरिहंत थशे तेना तीर्थमां सिद्धिपदने पामशे. (९१) पहेला वासुदेव सातमीए, त्यारपछीना पांच छट्ठीए अने त्यारपछीना त्रण अनुक्रमे पांचमी, चोथी ने त्रीजी नरके गया छे. (९२)

बधा बळदेव ने वासुदेव (८-८) गौतमगोत्री छे. अने पद्म ने नारायण (रामचंद्र ने लक्ष्मण) ए बे काश्यपगोत्री थया छे. (९३) त्रिपृष्ठ विगेरे पांच वासुदेवो अनुक्रमे श्रेयांसनाथ विगेरे पांच प्रभुना वारामां थया छे. (९४) छट्ठा वासुदेव अरनाथ ने सुभूमचक्रीना आंतरामां अने सातमा वासुदेव सुभूम ने मल्लिनाथना आंतरामां थया छे. (९५) आठमा वासुदेव ने बळदेव एटले राम-लक्ष्मण मुनिसुव्रत ने नमिनाथना आंतरामां अने कृष्ण नामना नवमा वासुदेव नेमिनाथने वारे थया छे. (९६)

कह्युं छे के—बे तीर्थंकर साथे ज बे चक्री थया १-२-१-२, पछी आठ तीर्थंकर थया. (३ थी १०) त्यारपछी पांच तीर्थंकर वासुदेवसाथे थया. (५) (११ थी १५) त्यार-

५-६-७ तो केसि ६ चक्की ८ हरि ७ । तित्थेसो इगु तो १९ सचक्कि य ९ जिणो २० केसी ८ सचक्की १० जिणो २१, चक्की ११ केसव ९ संजुओ जिणवरो २२ चक्की य १२ तो दो जिणा २३, २४ ॥ ९७ ॥ चक्रिवासुदेवयोश्च क्रममेवमाहुः-चक्किदुगं हरिपणगं पणगं चक्कीण केसवो चक्की । केसव चक्की केसव दुचक्कि केसी य चक्की य ॥ ९८ ॥

त्रयोऽर्हंतश्चक्रिणो य-श्चांत्योऽर्हत्पदद्वयं । दधौ द्वाभ्यां शरीराभ्यां तीर्थकृद्वासुदेवयोः ॥ ९९ ॥ तदस्यामवसर्पिण्यां षष्टिर्देहाः प्रकीर्त्तिताः । त्रिषष्टेः शलाकापुंसा-मेकोनषष्टिरंगिनः ॥ ४०० ॥

भीमावलि १ जितशत्रुः २ रुद्रो ३ विश्वानलोऽपि ४ च । सुप्रतिष्ठः ५ पंचमः स्या-द्भवेत् षष्ठोऽचलाह्वयः ६ ॥ १ ॥ पुंडरीको ७ जितधरो ८ जितनाम ९ स्तथापरः । पेढालः १० सत्यकिश्चेति ११ रुद्रा एकादशोदिताः ॥ २ ॥ गतौ रुद्रावादितो द्वौ सप्तमीं नरकावनीं । ततः क्रमात्पंच षष्ठी-मष्टमः पंचमीं भुवं ॥ ३ ॥ तुर्यां च नवमदशमौ तृतीयां नरक-

---

पछी बे चक्री थया ३-४, त्यारपछी त्रण तीर्थंकरो (१६-१७-१८ मा)ज चक्री थया. ५-६-७, त्यारपछी वासुदेव ६ ठा, चक्री ८ मा, वासुदेव ७ मा, पछी १९ मा तीर्थंकर, पछी चक्री ९ मा, तीर्थंकर २० मा, वासुदेव ८ मा, चक्री १० मा, तीर्थंकर २१ मा, चक्री ११ मा, वासुदेव ९ मा, तीर्थंकर २२ मा, चक्री १२ मा अने बे तीर्थंकर २३ मा ने २४ मा थया. (९७) चक्रवर्ती ने वासुदेवनो क्रम आ प्रमाणे— बे चक्री, पांच हरि (वासुदेव), पांच चक्री, एक केशव (वासुदेव), १ चक्री, १ केशव, १ चक्री, १ केशव, २ चक्री, १ केशव, १ चक्री-ए प्रमाणे २१ जाणवा. (९८)

त्रण अरिहंतो ज चक्री थया. छेल्ला तीर्थंकर पहेला वासुदेव पण थया हता एटले तीर्थंकर ने वासुदेवना शरीरमां जीव तरीके एक ज हता; (९९) तेथी आ अवसर्पिणीमां ६३ शलाकापुरुषना देह ६० अने जीव ५९ हता. (४००)

आ चोवीशीमां थयेला ११ रुद्रोना नाम—भीमावलि १, जितशत्रु २, रुद्र ३, विश्वानळ ४, सुप्रतिष्ठ ५, अचळ ६, पुंडरीक ७, जितधर ८, जितनाभ ९, पेढाळ १० अने सत्यकी ११-आ प्रमाणे कह्या छे. (१-२) ए रुद्रोमांथी प्रथमना बे सातमीए, त्यारपछी पांच छठीए, आठमा पांचमीए, नवमा-दशमा चोथीए अने अग्यारमा त्रीजी

च्चिर्ति । एकादशो जगामेति नवमे पूर्वे ईरितं ॥ ४ ॥ आद्यो वृषभवारेऽभूद् द्वितीयोऽजितवारके । अष्टानामर्हतां तीर्थे-ष्वष्टौ च पुष्पदंततः ॥ ५ ॥ एकादशः सत्यकिश्च तीर्थे वीरजिनेशितुः । तीर्थव्यक्तिः प्रतिहरि-बलानां वासुदेववत् ॥ ६ ॥

त्रिषष्टिरेते कथिताः शलाका-पुमांस ऐश्वर्यगुणाभिरामाः ।
क्षेत्रे किलास्मिन् भरतेऽत्र काले-ऽवसर्पिणीनामनि नाममात्रात् ॥ ७ ॥

विश्वाश्चर्यदकीर्त्तिकीर्त्तिविजयश्रीवाचकेंद्रांतिष-
द्राजश्रीतनयोऽतनिष्ट विनयः श्रीतेजपालात्मजः ।
काव्यं यत्किल तत्र निश्चितजगत्तत्त्वप्रदीपोपमे,
संपूर्णः प्रथितो निसर्गसुभगः सर्गस्त्रयस्त्रिंशता ॥ ४०८ ॥

॥ इति श्रीलोकप्रकाशे त्रयस्त्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥ श्रीरस्तु ॥

नरके गयेला छे. आ प्रमाणे नवमा पूर्वमां कहेलुं छे. (३-४) ते अग्यारमां पहेला ऋषभदेवने वारे, बीजा अजितनाथने वारे, पुष्पदंतथी एटले सुविधिनाथथी आठ प्रभु (९ माथी १६ मा) ने वारे त्यारपछीना आठ (त्रीजाथी दशमा) ने छेल्ला ११ मा सत्यकि वीरप्रभुने वारे थयेला छे. प्रतिवासुदेव ने बळदेव कया प्रभुने वारे थया ? ते वासुदेव प्रमाणे ज जाणी लेवुं. (५-६)

उपर प्रमाणे आ अवसर्पिणीमां आ भरतक्षेत्रमां थयेला ऐश्वर्यगुणवडे अभिराम एवा त्रेशठशलाका पुरुषोने नाममात्रथी कह्या अर्थात् संक्षेपथी तेमनुं चरित्र कह्युं. (७)

विश्वमां आश्चर्य पमाडे एवी कीर्त्तिवाळा श्रीकीर्त्तिविजय वाचकेंद्रना शिष्य अने तेजपाळ तथा राजश्रीना पुत्र विनये (विनयविजय उपाध्याये) जे आ काव्य रच्युं छे ते निश्चित एवा त्रण जगतना तत्त्वने जोवामां दीपकसमान आ लोकप्रकाश नामना काव्यमां स्वभावे ज सुभग एवो तेत्रीशमो सर्ग संपूर्ण थयो. (४०८) ॐ श्री श्री श्री

॥ अथ चतुस्त्रिंशत्तमः सर्गः प्रारभ्यते ॥

इत्यस्या अवसर्पिण्या यथोक्ता उत्तमा नराः । वाच्यास्तथावसर्पिण्यु–त्सर्पिणीष्वखिलासु ते ॥ १ ॥ स्यातां किंत्ववसर्पिण्या–मादिमौ जिनचक्रिणौ । तृतीयारकपर्यंते परे तुर्यारकेऽखिलाः ॥ २ ॥ उत्सर्पिण्यां तु सर्वेऽमी स्युस्तृतीयारके क्रमात् । परं तुर्यारकस्यादा–वंतिमौ जिनचक्रिणौ ॥ ३ ॥ यादृश्यंतेऽवसर्पिण्या–मायुर्देहादिका स्थितिः । उत्सर्पिणीमुखे तादृग् जिनचक्र्यादिदेहिनां ॥ ४ ॥ भाव्यमेवं प्रातिलोम्यं पदार्थेष्वखिलेष्वपि। उत्सर्पिण्यवसर्पिण्यो–र्व्यक्त्या नु कियदुच्यते ॥ ५ ॥ अथ प्रकृतं–इत्येवमवसर्पिण्यां दुःषमसुषमारके । पूर्णे सति प्रविशति पंचमो दुःषमारकः ॥ ६ ॥ अस्मिन् कालेऽपि पूर्वोक्तं भूमिवृक्षादिवर्णनं । अनुसंधीयतां किंत्व–नंतघ्नन्यूनपर्यवं ॥ ७ ॥ स्यात्संहननमत्रादौ संस्थानमपि षड्विधं । व्यवच्छेदे क्रमादेकं सेवार्त्तमवतिष्टते ॥ ८ ॥ यथास्यामवस-

---

सर्ग ३४ मो.

आ प्रमाणे यथोक्त उत्तम पुरुषो आ अवसर्पिणीमां थयेला जाणवा. ए ज प्रमाणे बधी अवसर्पिणी–उत्सर्पिणीमां थाय छे; (१) परंतु अवसर्पिणीमां पहेला जिन ने चक्री त्रीजा आरानी प्रांते थाय छे अने बाकीना बधा जिन ने चक्री चोथा आरामां थाय छे. (२) उत्सर्पिणीमां ते सर्वे (२३ ने ११) अनुक्रमे त्रीजा आरामां थाय छे ने छेल्ला जिन ने चक्री तेना चोथा आराना प्रारंभमां थाय छे. (३) जेवी अवसर्पिणीना अंतमां आयुष्य ने देहादिकनी स्थिति होय छे ते ज प्रमाणे उत्सर्पिणीना प्रारंभमां जिन, चक्री विगेरे जीवोनी स्थिति होय छे. (४) ए प्रमाणे सर्व पदार्थमां उत्सर्पिणी अवसर्पिणीनी प्रतिलोम स्थिति जाणवी. तेमां व्यक्तिवडे केटलुं कही शकाय ? अर्थात् व्यक्तिवडे कही शकाय नहीं. (५) हवे प्रकृत वात कहे छे—प्रथम कही गया प्रमाणे अवसर्पिणीमां दुःषमसुषमा नामनो चोथो आरो समाप्त थये सते पांचमो दुःषमा नामनो आरो प्रवेश पामे छे—शरु थाय छे. (६) ते काळमां पण पूर्वे कह्या प्रमाणे भूमिवृक्षादिकना वर्णननुं अनुसंधान करी लेवुं, परंतु ते चोथा आरा करतां अनंतगुणा न्यून पर्यववाळुं समजवुं. (७) ए आरानी आदिमां संहनन अने संस्थान छए होय छे परंतु संघयणमां क्रमथी विच्छेद थतां छेवटे एकलुं सेवार्त्त रहे छे. (८)

पिण्या–मरेऽस्मिन् प्रथमं गतं । दिवं गते स्थूलभद्रे वज्रर्षौ तच्चतुष्टयं ॥ ९ ॥ त्रिंशमब्दशतं चायुः स्यादत्रादौ शरीरिणां । कालक्रमाद्धीयमान–मंते विंशतिवार्षिकं ॥ १० ॥ सप्तहस्तमितं देहं स्यादत्रादौ शरीरिणां । एकहस्तमितं चांते हीयमानं यथाक्रमं ॥ ११ ॥ चतुर्थारकजाताना–मिह मोक्षोऽपि संभवेत् । एतस्मिन्नरके जात–जन्मनां तु भवेन्न सः । ॥ १२ ॥ जाते तु निर्वाणोच्छेदे संहननानुसारतः । शरीरिणो यथाकर्म स्युश्चतुर्गतिगामिनः ॥ १३ ॥ दुर्लक्षणो पुत्र इव वर्द्धमानेऽरकेऽत्र च । क्रमादुच्छेदमायांति सद्भावाः केवलादयः ॥ १४ ॥ न मनःपर्यवज्ञानं न चात्र परमावधिः । क्षपकोपशमश्रेण्यौ नैवमाहारकं वपुः ॥ १५ ॥ लब्धि-र्नात्र पुलाकाख्या नाप्यंत्यं संयमत्रयं । सामायिकं स्याच्छेदोप–स्थापनीयं च कुत्रचित् ॥१६॥ नात्र तादृग्लब्धिमंतो नार्हतो न च चक्रिणः । वासु-देवादयो नैव शलाकापुरुषा इह ॥ १७ ॥ जातिस्मृत्यवधिज्ञान–वैक्रियो-द्भावनादयः । ये भावा अव्यवच्छिन्ना–स्तेऽपि कालानुभावतः ॥ १८ ॥

ते आवी रीते—आ अवसर्पिणीमां स्थूळभद्र स्वर्गवासी थया पछी पहेलुं संघयण विच्छेद पाम्युं अने वज्रर्षिना स्वर्गवासी थया पछी त्यारपछीना चार संघयण विच्छेद पाम्या छे. (९) आ पांचमा आराना प्रारंभमां प्राणीओनुं उत्कृष्ट आयु १३० वर्षनुं होय छे, तेमां कालक्रमे हानि थतां–घटतां घटतां पांचमा आराने छेडे वीश वर्षनुं रहे छे. (१०) आ आरानी आदिमां सात हाथनुं शरीर होय छे ते अनुक्रमे घटतुं घटतुं एक हाथनुं रहे छे. (११) चोथा आरामां जन्मेलानो आ आरामां मोक्ष संभवे छे; आ आरामां जन्मेलाने मोक्षनी प्राप्ति थती नथी. (१२) निर्वाणनो उच्छेद थये सते संहननने अनु-सारे जीवो पोतपोताना कर्म प्रमाणे चारे गतिमां जनारा होय छे. (१३) दुर्लक्षण-वाळा पुत्रनी जेम आ आरो वृद्धि पामते सते अनुक्रमे केवळज्ञानादि सद्भावो उच्छेद पामे छे. (१४) आ आरामां केवळज्ञान उपरांत मनःपर्यवज्ञान, परमावधिज्ञान, क्षपक ने उपशमश्रेणि, आहारक शरीर, पुलाकलब्धि अने अंतना त्रण चारित्र (परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसंपराय ने यथाख्यात) एटले कुल दश वाना (जंबूस्वामीना निर्वाण पछी) होता नथी. सामायिक ने छेदोपस्थापनीय चारित्र पण क्यांक क्यांक होय छे. (१५–१६) आ आरामां तेवा लब्धिमानो, अरिहंत, चक्रवर्ती अने वासुदेवादि शलाका पुरुषो होता नथी. (१७) जातिस्मरणज्ञान, अवधिज्ञान अने वैक्रिय शरीर विगेरे अव्यवच्छिन्न छतां पण काळना प्रभा-

१ आयु १२० वर्षनुं प्रारंभमां अने अंते शरीर बे हाथनुं अन्यत्र कहेल छे.

भवंति विरला एव गुणा इव दुरात्मनि । आर्हतानामपीह स्यु–र्मतभेदा अनेकशः ॥१९॥ युग्मं ॥ जनाः प्रायेण बहुल–कषाया दुर्नयप्रियाः । अधर्मरागिणो धर्म–द्विष्टा मर्यादयोज्झिताः ॥ २० ॥ ग्रामाः श्मशानतुल्याः स्यु–र्ग्रामाभनगराणि च । कुटुंबिनश्चेटतुल्या राजानश्च यमोपमाः ॥ २१ ॥ वित्तं गृह्णंति लोभांधा महीपाला नियोगिनां । प्रजानां तेऽधमाश्चैवं मात्स्यो न्यायः प्रवर्त्तते ॥ २२ ॥ उत्तमा मध्यमाचारा मध्यमाश्चांत्यचेष्टिताः । विसंस्थुलाश्च देशाः स्यु–र्दुर्भिक्षाद्यैरुपद्रवैः ॥ २३ ॥ मितं वर्षति पर्जन्यो न वर्षत्यपि कर्हिचित् । वर्षत्यकाले काले च न जनैः प्रार्थितोऽपि सः ॥ २४ ॥ अन्नं निष्पद्यतेऽनेके–रुपायैः सेचनादिभिः । निष्पन्नमपि तत्कीर–शलभाद्यैर्विनश्यति ॥ २५ ॥ वदान्या धार्मिका न्याय–प्रियास्ते निर्धना जनाः । अनीतिकारिणो दुष्टाः कृपणाश्च धनैर्भृताः ॥ २६ ॥ निर्धना बह्वपत्याः स्यु–र्धनिनोऽपत्यवर्जिताः । आढ्या

वथी दुरात्मामां गुणोनी जेम बहु विरल देखवामां आवे छे, अने अरिहंतना मतने माननाराओमां जुदा जुदा अनेक मतभेदो पण थाय छे. (१८–१९) आ काळमां मनुष्यो पण प्राये बहु कषायोवाळा, अन्यायप्रिय, अधर्मना रागी, धर्मना द्वेषी अने मर्यादारहित होय छे. (२०) आ काळमां धीमे धीमे ग्रामो स्मशानतुल्य, नगरो ग्रामतुल्य, कुटुंबीओ दासतुल्य अने राजाओ यमतुल्य थशे. (२१) लोभांध एवा राजाओ अधिकारीओने दंडीने तेनुं द्रव्य ग्रहण करशे अने अधम एवा अधिकारीओ प्रजानुं द्रव्य ग्रहण करशे. आ प्रमाणे मात्स्यन्याय[1] प्रवर्तशे. (२२) उत्तमो मध्यम आचारवाळा, मध्यमो कनिष्ठ आचारवाळा थशे अने देशो दुर्भिक्षादिकना उपद्रवथी विसंस्थुळ थइ जशे. (२३) वरसाद बहु थोडो आवशे, कोइ वखत वरसशे ज नहीं, अकाळे वरसशे अने काळे लोको तरफथी प्रार्थना कराया छतां पण वरसशे नहीं. (२४) पाणी सिंचवा विगेरे अनेक उपायोवडे अन्न पाकशे तो तेनो पाछो पोपट अने शलभ विगेरे पक्षीओ विनाश करी नाखशे. (२५) धार्मिको अने न्यायप्रिय मनुष्यो निर्धन थशे अने अनीति करनारा, दुष्टो अने कृपणो धनवडे भरपूर थशे. (२६) निर्धनो बहु बाळबच्चावाळा थशे, धनवानो अपत्य (बाळक) विनाना थशे. धनाढ्यो मंदाग्निवाळा ने व्याधिवाळा थशे अने

---

१ मत्स्यमां मोटो मत्स्य नाना मत्स्यने गळी जाय एवो न्याय ज प्रवर्ते छे.

मंदाग्नयो रुग्णा दृढाग्न्यंगाश्च दुर्विधाः ॥ २७ ॥ दृढांगा नीरुजो मूर्खाः कृशांगाः शास्त्रवेदिनः । विलसंति खलाः स्वैरं प्रायः सीदंति साधवः ॥ २८ ॥ अतिवृष्टिरवृष्टिश्च मूषकाः शलभाः शुकाः । स्वचक्रं परचक्रं च स्युर्भूम्नेतीतयो भुवि ॥ २९ ॥ रात्रौ चौराः पीडयंति प्रजां भूपाः करैर्दिवा । नीरसामपि शैलक्ष्मा–मिव दावाग्निभानवः ॥ ३० ॥ आधिकारिण एव स्यु–र्नृपाणामधिकारिणः । लंचासेवादिभिर्वश्या न्यायमार्गानपेक्षिणः ॥ ३१ ॥ नृपा मिथ्यादृशो हिंस्रा मृगयादिषु तत्पराः । विप्रादयोऽपि लोभांधा लोकानां विप्रलंभकाः ॥ ३२ ॥ असंयता अविरता नानानाचारसेविनः । गुरुंमन्यास्तेऽपि विप्राः पूज्यंते भूरिभिर्जनैः ॥३३॥ पाखंडिनोऽपि विविधैः पाखंडैर्भद्रकान् जनान् । प्रतारयंति दुःखाब्धेर्वयं निस्तारका इति ॥ ३४ ॥ म्लेच्छमिथ्यादृगादीनां स्वस्वाचारे दृढास्थता । आर्हतानां च शुद्धेऽपि धर्मे न प्रत्ययो दृढः ॥ ३५ ॥ पंचा-

---

दुर्भागीओ दृढ अग्निवाळा ने दृढ शरीरवाळा थशे. (२७) मूर्खो दृढ अंगवाळा ने निरोगी थशे, शास्त्रज्ञो कृश शरीरवाळा (दुबळा) थशे. खळजनो स्वेच्छाए विलास करनारा थशे अने साधुजनो प्राये सीदाशे. (२८) वळी १ अतिवृष्टि, २ अनावृष्टि, ३ मूषक, ४ शलभ, ५ शुक, ६ स्वचक्रनो भय ने ७ परचक्रनो भय—आ सात ईतिओ पृथ्वीपर वारंवार थशे. (२९) रात्रे प्रजाने चोर पीडा करशे, दिवसे राजा करवडे प्रजाने पीडशे. नीरस एवी पण पर्वतनी पृथ्वीने दावाग्नि ने भानु (सूर्य) जेम रात–दिवस पीडा करे तेम नीरस एटले कसविनानी एवी पण प्रजाने रात्रे चोरो पीडशे अने दिवसे राजा करवडे पीडशे. (३०) राज्यना अधिकारीओ आधि–उपाधिना करनारा थशे, लांच ने सेवादिवडे ते वश थशे अने न्यायमार्गनी अपेक्षा विनाना थशे. (३१) राजाओ प्राये मिथ्यादृष्टि, हिंसक अने शिकारादिमां तत्पर थशे, विप्रादिक पण लोभांध, लोकोने ठगनारा, असंयत, अविरत अने अनेक प्रकारना अनाचार सेवनारा छतां पण पोताने गुरुतरीके माननारा थशे. ते विप्रो पण घणा लोकोथी पूजाशे. (३२–३३) पाखंडीओ पण विविध प्रकारना पाखंडोथी भद्रकजनोने छेतरशे अने अमे ज दुःखसमुद्रमांथी तारनारा छीए एम कहेशे. (३४) म्लेच्छो अने मिथ्यादृष्टिओ पोतपोताना आचारमां दृढ आस्थावाळा थशे अने आर्हतो (श्रावको) तो शुद्ध धर्ममां पण दृढ विश्वासवाळा नहीं थाय. (३५) अन्य तापसादिको पंचाग्निसाधन,

ग्निमाघस्नानादी—न्यन्ये कष्टानि कुर्वते । आर्हतास्त्वलसायंते सुकरावश्यकादिषु ॥ ३६ ॥ यत्याभासा गणं त्यक्त्वा स्युः केचित्स्वैरचारिणः । श्राद्धा अप्यनुगच्छंति तान् बाला ग्रहिलानिव ॥ ३७ ॥ गणस्थिताश्च निर्ग्रंथा धर्मोपकरणेष्वपि । ममत्वाभिनिवेशेन स्युः परिग्रहविप्लुताः ॥ ३८ ॥ आराधयंति नो शिष्या गुरून् गुणगुरूनपि । विज्ञंमन्या गुरुभ्योऽपि विनयं न प्रयुंजते ॥ ३९ ॥ तनयाश्चावजानंति मातापित्रादिकानिति । जानंति किममी तत्त्वं जराजर्जरबुद्धयः ॥ ४० ॥ परस्परं विरुध्यंते स्वजनाः सोदरादयः । परकीयैश्च सौहार्दं कुर्वते हार्ददर्शिनः ॥ ४१ ॥ बाल्ये प्रव्राजिताः शिष्याः पाठिताः शिक्षिताः श्रमात् । गुरोस्तेऽपि प्रतीपाः स्यु—र्ये कीटाः कुंजरीकृताः ॥ ४२ ॥ प्रहिता ये वणिज्यायै विश्वस्तैरन्यभूमिषु । श्रेष्ठिनां तेऽपि सर्वस्वं मुष्णंत्याढ्यीकृता अपि ॥ ४३ ॥ छलेनाश्वास्य जल्पाद्यैः क्षत्रिया घ्नंति वैरिणः । प्राये-

---

माघस्नानादि अनेक प्रकारना कष्टो सहन करशे अने श्रावको तो सहेलाइथी थइ शके एवा आवश्यकादिकमां पण आळस करशे. (३६) केटलाक यत्याभासो[1] गच्छने तजी दइने स्वेच्छाचारी थशे अने जेम बाळको गांडा माणसनी पाछळ जाय तेम केटलाक श्रावको पण तेना अनुयायी थशे. (३७) गण (गच्छ) मां रहेला निर्ग्रंथ मुनिओ पण धर्मोपगरणने विषे ममत्वना अभिनिवेशथी परिग्रहधारी जेवा थशे. (३८) गुणे करीने गुरु (गुणवान्) एवा गुरुनी पण शिष्यो आराधना करशे नहीं, एटले के पोताने गुरुथी पण विशेष विज्ञ माननारा एवा तेओ गुरुनो पण विनय नहीं करे. (३९) पुत्रो पण मातापितादिकनी अवगणना करशे अने 'आ जराथी जर्जर बुद्धिवाळा थइ गयेला तत्त्वने शुं जाणे ?' एम कहेशे. (४०) स्वजनो अने सहोदरो विगेरे परस्पर विरुद्धता धरावशे अने प्रेमदर्शी बनीने परजनोनी संगाते प्रेमभाव धरावशे. (४१) बाळपणामांथी दीक्षा आपीने भणावेला—शिक्षित करेला अर्थात् कीडीमांथी कुंजर जेवा करेला शिष्यो पण गुरुनुं प्रतिपक्षीपणुं करशे. (४२) वेपारीओए विश्वास करीने जेमने परदेशमां व्यापार माटे मोकलेला होय तेवा नोकरो शेठे द्रव्यवान् बनावेला होय छतां पण शेठनुं बधुं द्रव्य पोतानुं करी बेसशे (चोरी लेशे). (४३) क्षत्रियो कपटयुक्त वाणीवडे आश्वासन आपीने वैरीओने हणी नाखशे अने मृत्युना भीरु एवा तेओ प्राये अनीतियुद्ध ज

---

१ मुनिवेषवाळा पण मुनिनो आचार पाळनारा नहीं ते.

णाऽनीतियुद्धानि कुर्वते मृत्युभीरवः ॥ ४४ ॥ स्नुषाः श्वशुरयोः सम्यग् विनयं न वितन्वते । प्रसादमुचितं तेऽपि वधूटीषु न कुर्वते ॥ ४५ ॥ यैः सर्वस्वव्ययैः पोषं पोषमुद्वाह्य वर्द्धिताः । तेभ्यः पितृभ्यो भिन्नाः स्युः क्रोधांधाः स्त्रीमुखाः सुताः ॥ ४६ ॥ प्रविश्य हृदयं पत्युः खरा वक्रमुखी वधूः । पितृपुत्रौ पृथक्कुर्या–त्कुंचिकेवाशु तालकं ॥ ४७ ॥ मातापित्रोरविश्वासः श्वश्रूश्वशुरयोः पुनः । विश्वासः परमः पत्नी–वचसा हंति मातरं ॥ ४८ ॥ नापि पुष्णंति संपन्नाः पितृमात्रादिपक्षजान् । पत्नीवर्ग्यांश्च पुष्णंति वित्तवस्त्राशनादिभिः ॥ ४९ ॥ स्नुषासुतेषु प्रौढेषु गृहे विषयसेविषु । सेवंते विषयान् वृद्धाः पितरोऽपि गतत्रपाः ॥ ५० ॥ वलीलुलितचर्मापि पलितश्वेतकूर्चकः । कंप्रः श्लथोऽपि नो बाला–मुद्वहन् लज्जते जनः ॥ ५१ ॥ विक्रीणते सुताः केचि–द्दुरवस्थाः सुतानपि । आसन्नमृत्यवे दद्युः स्वपुत्रीं धनलिप्सवः ॥ ५२ ॥ राजामात्यादयो येऽपि

करशे. (४४) पुत्रवधू सासु–ससरानो सम्यक्प्रकारे विनय नहीं करे अने ते सासुससरा पण उचित प्रसाद पुत्रवधूप्रत्ये नहीं करे. (४५) जेने सर्वस्वना व्यये करीने पोषण करी करीने परणावीने वृद्धि पमाड्या होय तेवा पुत्रो पण क्रोधांध ने स्त्रीमुखा थइने पिताथी जुदा थशे. (४६) खर–कठोर अने वक्रमुखी एवी वधू पतिना हृदयमां पेसीने कुंची जेम ताळाना बे भागने जुदा पाडे तेम शीघ्र पिता–पुत्रने जुदा पाडशे. (४७) पुत्रो मातापितानो अविश्वास करशे अने सासु–ससरानो विश्वास करशे. वळी पत्नीना वचनथी माताने पण हणशे–मार मारशे. (४८) पुत्रो द्रव्यसंपन्न थया सता पिता–माता विगेरेना पक्षीओने पोषण आपशे नहीं, परंतु द्रव्य वस्त्र ने अशन–खानपानादिवडे स्त्रीना संबंधीओनुं–सासरीयानुं पोषण करशे. (४९) प्रौढावस्थावाळा थयेला पुत्र ने पुत्रवधू जे घरमां विषयसेवन करता होय त्यां लज्जाविनाना वृद्ध माता–पिता पण विषयसेवन करशे. (५०) चामडीमां वळीओ पडी गया होय, माथे धोळा पळी आव्या होय ने दाढी–मुछ पण श्वेत थइ गया होय, शरीर कंपतुं होय, विसंस्थूल थइ गयुं होय छतां तेवो पुरुष बाळाने[1] परणतां लाजशे नहीं. (५१) केटलाक निर्दयो पुत्रीने वेचशे, दुरवस्था पाम्या सता पुत्रोने पण वेचशे अने धनना इच्छको पोतानी पुत्रीने आसन्नमृत्युवाळा मनुष्यने पण आपशे. (५२) राजा, अमात्यादिको जे कोइ न्यायमार्गना प्रवर्तक होय

१ लघुवयनी कन्या.

न्यायमार्गप्रवर्त्तकाः । ते परान् शिक्षयंतोऽपि स्वयं स्युर्व्यभिचारिणः ॥ ५३ ॥ साकूतोक्तिकटाक्षौघैः स्तनदोर्मूलदर्शनैः । गणिका इव चेष्टंते निस्त्रपाः कुलयोषितः ॥ ५४ ॥ मातुः स्वसुः समक्षं स्युः पुत्राद्या भाषा-वादिनः । श्वशुरादिसमक्षं च वदंत्येवं स्नुषा अपि ॥ ५५ ॥ वंचकाः स्वार्थनिष्ठाश्च स्युर्मिथः स्वजना अपि । वृत्तिं कुर्वंति वणिजो दंभैः कूट-तुलादिभिः ॥ ५६ ॥ हानिः प्रत्युत वाणिज्ये दुष्कराजीविका नृणां । न च लाभेऽपि संतुष्टि-स्तृष्णा स्यादधिकाधिका ॥ ५७ ॥ बहवो दुर्विधा लोकाः खिद्यंते धनकांक्षया । विषयाणां तृष्णयैव पूरयंत्यखिलं जनुः ॥ ५८ ॥ रूपचातुर्युदारेषु निजदारेषु सत्स्वपि । परदारेषु मन्यंते रंत्वा-त्मानं गुणाधिकं ॥ ५९ ॥ स्यादकिंचित्करो लोके सरलः सत्यवाग्जनः । कुटिलो वक्रवादी च प्रायः स्याज्जनतादृतः ॥ ६० ॥ वेश्मवीवाहसीमंता-दिषु संसारकर्मसु । ऋणं कृत्वापि वित्तानि विलसंति घना जनाः ॥६१॥

ते बीजाओने शिखामण आपशे छतां पोते व्यभिचारी थशे. (५३) लाजविनानी कुळस्त्रीओ पण आकूतवाळी वाणीवडे अने कटाक्षोना समूहवडे तेम ज स्तन अने हाथनुं मूळ देखाडवावडे गणिकानी जेवी चेष्टा करशे. (५४) माता ने बहेननी समक्ष पुत्रादि अपशब्दो बोलशे अने श्वशुरादिनी समक्ष वधू पण तेवा शब्दो बोलशे. (५५) स्वजनो पण अंदर अंदर एकबीजाने छेतरनारा अने स्वार्थनिष्ठ थशे. वणिको कपटवडे अने खोटा तोल-मान-मापादिवडे आजीविका चलावशे, (५६) परंतु एम करवाथी उलटी वेपारमां हानि थशे अने मनुष्योने आजीविका दुष्कर थइ पडशे. वळी लाभ प्राप्त थये सते पण संतोष थशे नहीं, उलटी तृष्णा अधिकाधिक वधती जशे. (५७) घणा दुर्भागी मनुष्यो धननी इच्छाथी बहु खेद पामशे अने विषयोनी तृष्णावडे ज आखो जन्म पूरो करशे. (५८) रूप अने चातुरीवडे उदार (श्रेष्ठ) एवी स्त्री छतां पण परदारागमन करीने पोताना आत्माने गुणाधिक मानशे. (५९) लोको सरल अने सत्यवादी मनुष्योने बहु थोडुं मान आपशे अने कुटिल तेम ज वक्रवादी मनुष्यने प्रायः जनता विशेष आदर आपशे. (६०) घणा मनुष्यो घर बांधवामां अने विवाह तथा सीमंतादि संसारी काममां देवुं करीने पण द्रव्य वापरशे (६१) अने चैत्य, उपाश्रय, देवपूजा, प्रतिष्ठा, उत्स-

चैत्योपाश्रयदेवार्चा–प्रतिष्ठाद्युत्सवेषु तु । उपदेशं न शृण्वंति शक्ता अप्येडमूकवत् ॥ ६२ ॥

श्रद्धाहानिर्द्रव्यहानि–र्धर्महानिर्यथाक्रमं । आयुर्हानिर्वपुर्हानिः सारहानिश्च वस्तुषु ॥ ६३ ॥ कौटिल्यमग्रजः स्वल्पं वेत्त्यनल्पं ततोऽनुजः । यथाकनिष्ठमित्येवं तद्वर्द्धताधिकाधिकं ॥ ६४ ॥ मणिमंत्रौषधीतंत्रा--स्तादृग्माहात्म्यवर्जिताः । देवा भवंति नाध्यक्षाः सम्यगाराधिता अपि ॥ ६५ ॥ स्वल्पतुच्छाऽरसफलाः सहकारादयो द्रुमाः । गोमहिष्यादयोऽप्यल्प–दुग्धास्तान्यरसानि च ॥ ६६ ॥ दुर्णयो वर्द्धते कूट–तुलादिर्लोभवृद्धितः । ततः स्युर्जलदास्तुच्छाः पृथिवी नीरसा ततः ॥ ६७ ॥ औषध्यस्तेन निस्सारा मानवानां ततः क्रमात् । आयुर्देहबलादीनां परिहाणिः प्रवर्त्तते ॥ ६८ ॥ तथोक्तं तंदुलवैचारिके—संघयणं संठाणं उच्चत्तं आउयं च मणुआणं । अणुसमयं परिहायई ओसप्पिणिकालदोसेण ॥६९॥ कोहमयमायलोभा ओसन्नं वड्ढए य मणुआणं । कूडतुलकूडमाणा तेण-

---

चादिकने विषे द्रव्य वापरवानो उपदेश पण सांभळशे नहीं, ते वखते तो शक्तिमान् छतां पण बकरा जेवा मुंगा बनी जशे. (६२)

आ काळमां अनुक्रमे श्रद्धाहानि, द्रव्यहानि, आयुहानि, वपुहानि अने वस्तुओमां सारपणानी हानि थया करशे. (६३) मोटो भाइ कुटिलता थोडी करी जाणशे, तेना करतां अनुज (नानो) भाइ वधारे कुटिलता करी जाणशे, (वधारे कुटिलता करशे.) अने जेम जेम कनिष्ठ तेम तेम कुटिलता अधिकाधिक वृद्धि पामशे. (६४) मणि, मंत्र, औषधि, तंत्र विगेरे तथाप्रकारना माहात्म्यरहित थइ जशे अने देवो सम्यक् प्रकारे आराध्या छतां पण प्रायः प्रत्यक्ष थशे नहीं. (६५) सहकार विगेरे वृक्षो स्वल्प, तुच्छ अने रसविनाना फळने आपनारा थशे. अने गाय भेंश विगेरे पण अल्प दुध आपनारी अने ते पण रस विनानुं आपनारी थशे. (६६) खोटा तोला विगेरे दुर्नय (अन्याय) लोभनी वृद्धिथी वृद्धि पामशे अने तेथी वरसाद तुच्छ (थोडो) अने पृथ्वी नीरस थशे. (६७) पृथ्वी नीरस थवाथी औषधि (धान्यादि) निःसार थशे, तेथी मनुष्योना आयु, देह, बळादिनी अनुक्रमे परिहानि थती जशे. (६८)

श्री तंदुलवैचारिकप्रकीर्णकमां कह्युं छे के–" मनुष्योना संघयण, संस्थान, उंचाइ, आयु, अवसर्पिणी काळना दोषथी प्रतिसमय हानिभावने पामशे (६९) अने ते मनुष्योना क्रोध, मद, माया ने लोभ प्राये वधता जशे. खोटा तोला, खोटा मान थशे

गुमाणेण सव्वंपि ॥ ७० ॥ विसमा अज्जतुत्ताओ विसमाणि य जणवएसु माणाणि । विसमा रायकुलाइं तेण उ विसमाइं वासाइं ॥ ७१ ॥ विसमेसु अ वासेसु हुंति असाराइं ओसहिबलाइं । ओसहिदोब्बल्लेण य आउं परिहायइ नराणं ॥ ७२ ॥

बकुशाश्च कुशीलाश्च स्युर्द्विधैवात्र साधवः । न स्युः पुलाकनिर्ग्रंथ-स्नातकाः कालदोषतः ॥ ७३ ॥ यस्यातिचारपंकेन चारित्रं बकुशं भवेत् । बकुशः श्रमणः स स्यात् बकुशं नाम कर्बुरं ॥ ७४ ॥ स च द्विधोपकरण-देहातिचारभेदतः । आद्यस्तत्रर्तुबद्धेऽपि काले निर्णेक्ति चीवरं ॥७५॥ परिधत्ते विभूषायै श्लक्ष्णं सारं नदीहते । दंडपात्रादिकं मृष्टं कृतशोभं बिभर्त्ति च ॥ ७६ ॥ मात्राधिकं चेहते तत् बकुशोऽयमिहादिमः । अन्य-स्तु नखकेशादि विना कार्यं विभूषयन् ॥ ७७ ॥ बकुशो द्विविधोऽप्येष स्वस्येच्छति परिच्छदं । पांडित्यादियशःकांक्षी सुखशीलः क्रियालसः ॥ ७८ ॥ तथोक्तं पंचनिर्ग्रंथ्यां-तह देससव्वछेया-रिहेहिं संबलेहिं

ए अनुमानथी ए सर्वनी वृद्धि थती जशे. (७०) तोला विगेरे विषम थशे अने जनपदमां मान-माप पण विषम थशे. राजकुळमां विषमता आवशे तेथी वरसाद पण विषम आवशे. (७१) वरसाद विषम आववाथी औषधिओना बळ पण असार थशे (धान्यो कसविनाना उगशे) अने औषधिना दुर्बळपणाथी मनुष्योनुं आयु पण परिहानि पामशे. " (७२)

आ पांचमा आरामां साधुओ बकुश ने कुशील ए बे प्रकारना ज थशे. काळदोषथी पुलाक, निर्ग्रंथ के स्नातक मुनिओ नहीं थाय. (७३) जेमनुं चारित्र अतिचाररूप पंकवडे करीने बकुश होय ते बकुशश्रमण कहेवाय, बकुश एटले कर्बुरसमान जाणवुं. (७४) ए बकुश बे प्रकारना छे. उपकरणबकुश अने देहातिचारबकुश. तेमांना पहेला ऋतुबद्धकाळे पण वस्त्रने धुए छे, (७५) तथा झीणा अने सारा देखाववाळा वस्त्रो धारण करे छे, दंडपात्रादिकने घटारी मठारीने शोभावाळा करीने तेने धारण करे छे (७६) अने प्रमाणथी अधिक उपकरणो पहेला प्रकारना बकुश मुनि राखे छे. बीजा प्रकारना बकुश मुनि नखकेशादिनी कार्यविना पण विभूषा करे छे. (७७) आ बंने प्रकारना बकुशो पोतानो परिवार वधारवा इच्छे छे अने पांडित्यादि बतावीने यशना इच्छक, सुखशील अने क्रियामां आळसु होय छे. (७८) पंचनिर्ग्रंथी प्रकरणमां कह्युं छे के-" तेम ज

संजुओ बउसो । मोहक्खयत्थमज्भु–ट्ठिओ य सुत्तंमि भणियं च ॥ १ ॥ उवगरणदेहचुक्खा रिद्धीजसगारवा सिया निच्चं । बहुसबलछेयजुत्ता निग्गंथा बाउसा भणिया ॥ २ ॥

शीलं यस्येह चारित्रं कुत्सितं स कुशीलकः । प्रतिसेवाकषायाभ्यां द्विविधः स प्रकीर्त्तितः ॥ ७९ ॥ द्वैधोऽप्ययं पंचविधो ज्ञानदर्शनयोर्भवेत् । तपश्चारित्रयोश्चैव यथासूक्ष्मे च तादृशः ॥ ८० ॥ स ज्ञानादिकुशीलो यो ज्ञानादीनुपजीवति । यथासूक्ष्मस्तु स स्याद्यः प्रीयते स्वप्रशंसया ॥ ८१ ॥ ज्ञानादिषु कुशीलाः स्युः पंचामी प्रतिसेवया । कषायतोऽथ ज्ञानादि-कुशीलान् ब्रूमहे परान् ॥ ८२ ॥ यः कषायैः संज्वलनै–स्तपो ज्ञानं च दर्शनं । अनुयुंक्ते कषायेण स ज्ञानादिकुशीलकः ॥ ८३ ॥ शापं यच्छंश्च चारित्र–कुशीलः स्यात्कषायतः । यथासूक्ष्मश्च मनसा यः क्रोधादिकषायकृत् ॥ ८४ ॥ यद्वा कषायैः क्रोधाद्यै–र्यो ज्ञानादिविराधकः । कषायतः स ज्ञानादि–कुशील इह कीर्त्तितः ॥ ८५ ॥ पुलाकमिह निः-

---

देश अथवा सर्व छेदने योग्य संबळ (दोष) तेणे करीने युक्त ते बकुश, परंतु ते मोहना क्षयमाटे अभ्युत्थित थयेला होय छे, एम सूत्रमां कहेलुं छे. (१) ते बकुशना बे भेद–१ उपकरण ने २ देहशुश्रूषा. जेओ ऋद्धिगारव ने यशगारववाळा नित्य होय, बहु दोषवाळा चारित्रयुक्त होय तेने बकुशनिर्ग्रंथ कह्या छे. (२)

हवे त्रीजा कुशील निर्ग्रंथमाटे कहे छे. शील ते अहीं चारित्र. ते जेनुं कुत्सित होय ते कुशीलक कहीए. तेना पण बे प्रकार–१ प्रतिसेवाकुशील ने २ कषायकुशील—ए प्रमाणे कह्या छे. (७९) ए बंने पांच प्रकारना छे–१ ज्ञान, २ दर्शन, ३ तप, ४ चारित्र ने ५ यथासूक्ष्म. (८०) तेमां ज्ञानादि कुशील ज्ञानादिवडे जे उपजीविका करे ते प्रथमना चार प्रकारे अने जे पोतानी प्रशंसावडे प्रीति पामे–राजी थाय ते यथासूक्ष्म कुशील. (८१) आ ज्ञानादिने विषे प्रतिसेवना कुशीलना पांचे प्रकार समजवा. हवे कषायवडे ज्ञानादि कुशीलना पांच प्रकार कहे छे. (८२)–जे संज्वलन कषायवडे तप, ज्ञान, दर्शनने जोडे तेने कषायथी ज्ञानादि कुशील कहीए. (८३) जे श्राप आपे ते कषायथी चारित्रकुशील कहीए अने मनवडे जे क्रोधादि कषाय करे ते यथासूक्ष्म कषाय कुशील कहीए. (८४) अथवा क्रोधादि कषायोवडे जे ज्ञानादिकना विराधक होय ते कषायथी ज्ञानादि कुशील कहीए. (८५) हवे पुलाक माटे कहे छे.–पुलाक ते निःसार

सारं धान्यं तादृक्चरित्रयुक् । स लब्धिप्रतिसेवाभ्यां पुलाको द्विविधः स्मृतः ॥ ८६ ॥ यतिर्यया चक्रिसैन्य–मपि चूर्णयितुं क्षमः । लब्धिः सा स्यात्पुलाकाख्या तां संघादिप्रयोजने ॥ ८७ ॥ प्रयुंजानो भवेल्लब्धि–पुलाकोऽन्यस्तु पंचधा । ज्ञानदर्शनचारित्र–लिंगसूक्ष्मविभेदतः ॥ ८८ ॥ ज्ञानं दोषैः स्खलिताद्यैः शंकिताद्यैश्च दर्शनं । मूलोत्तरातिचारैश्च चारित्रं यो विराधयेत् ॥ ८९ ॥ स ज्ञानादिपुलाकः स्या–त्कुर्यान्निःकारणं च यः वेषांतरं भवेल्लिंग–पुलाकः स श्रुतोदितः ॥ ९० ॥ संयताकल्प्यवस्तूनां मनसा यो निषेवकः । स निर्दिष्टो यथासूक्ष्म–पुलाकः श्रुतपारगैः ॥९१॥

विनिर्गतो मोहनीय–कर्माख्याद्ग्रंथतोऽत्र यः । स निर्ग्रंथो द्विधा क्षीणो–पशांतमोहभेदतः ॥ ९२ ॥ शुक्लध्यानजलैः स्नातो दूरं कर्ममलोज्झितः । स स्नातकः स योगी चा–योगी चेति द्विधा भवेत् ॥ ९३ ॥

ततश्च–अरकेऽस्मिंश्च बकुश–कुशीलाख्येऽपि संयमे । भवेत्क्रमेणापकर्षः शक्तिसत्त्वादिहानितः ॥ ९४ ॥ सत्यप्येवं भवेयुर्ये मूढाः संघे चतु-

---

धान्य तेवा चारित्रवाळा ते पुलाकनिर्ग्रंथ. ते लब्धि अने प्रतिसेवावडे बे प्रकारना कह्या छे. (८६) मुनि जे लब्धिवडे चक्रवर्तीना सैन्यने पण चूर्ण करवाने समर्थ थाय ते पुलाकलब्धि कहेवाय छे. ते लब्धिना संघादिकनो प्रयोजने उपयोग करे सते लब्धिपुलाक कहेवाय छे. बीजा प्रतिसेवनापुलाक ज्ञान, दर्शन, चारित्र, लिंग ने सूक्ष्म एवा भेदथी पांच प्रकारे छे. (८७–८८) स्खलितादि दोषे करीने ज्ञानने, शंकितादिवडे दर्शनने अने मूळगुण के उत्तरगुणमां अतिचार लगाडवावडे चारित्रने जे विराधे ते ज्ञानादिपुलाक कहेवाय छे अने निष्कारण जे वेषांतर करे तेने लिंगपुलाक श्रुतमां कहेल छे, (८९–९०) तेम ज संयति (मुनि)ने अकल्प्य एवी वस्तुनो मनथी पण जे सेवनार होय तेने श्रुतपारगामीओए यथासूक्ष्मपुलाक कहेल छे. (९१)

हवे निर्ग्रंथ माटे कहे छे—मोहनीयकर्मरूप ग्रंथथी जे नीकळी गया अर्थात् जेनुं मोहनीयकर्म नाश पाम्युं ते निर्ग्रंथ कहेवाय छे. तेना बे प्रकार क्षीणमोह ने उपशांतमोहरूप थाय छे. (९२) शुक्लध्यानरूप जळवडे जे नाह्या अने कर्ममळरहित–तेनाथी दूर थया ते स्नातक. ते सयोगी अने अयोगी एम बे प्रकारना होय छे. (९३)

आ पांचमा आरामां बकुश ने कुशील ए बे प्रकारना संयम होय छे. तेमां पण शक्तिसत्त्वादिकनी हानिथी अनुक्रमे अपकर्ष थतो जाय छे. (९४) आम छतां पण जे

विधे। धर्मे च नास्तिकाः कार्या–स्ते भव्यैः संघतो बहिः ॥ ९५ ॥ यथा घृतादिवस्तूनां पूर्वकालव्यपेक्षया। स्नेहमाधुर्यादिहानि–र्यद्यप्यध्यक्षमीक्ष्यते ॥ ९६ ॥ तथापि कार्यं तत्साध्यं स्यात्तैरेव घृतादिभिः। न पुनस्तत्पदन्यस्तैः स्वच्छैरपि जलादिभिः ॥ ९७ ॥ पूर्वर्ष्यपेक्षयैवं च हीनहीनगुणैरपि। मोक्षमार्गाप्यवाप्तिः स्या–न्निर्ग्रंथैरेव नापरैः ॥ ९८ ॥ विषमेऽपि च कालेऽस्मिन् भवंत्येव महर्षयः। निर्ग्रंथैः सदृशाः केचि–च्चतुर्थारकवर्त्तिभिः ॥ ९९ ॥

यथास्यामवसर्पिण्या–मेतस्मिन् पंचमेऽरके। त्रयोविंशतिरादिष्टा उदयाः सततोदयैः ॥ १०० ॥ विंशतिः १ प्रथमे तत्र युगप्रधानसूरयः। उदये स्युर्द्वितीयस्मिन् त्रयोविंशतिरेव ते २ ॥ १ ॥ तृतीयेऽष्टाढ्यनवतिः ३ चतुर्थे चाष्टसप्ततिः ४। पंचसप्तति ५ रेकोन–नवतिः ६ शतमेव ७ च ॥ २ ॥ सप्ताशीति ८ स्तथा पंच–नवतिश्च ९ ततः परं। सप्ताशीतिः १० षट्सप्तति ११–रष्टसप्ततिरेव च १२ ॥ ३ ॥ चतुर्नवति १३ रेवाष्टौ १४ त्रयः १५ सप्त १६ चतुष्टयं १७। शतं पंचदशोपेतं १८ त्रयस्त्रिंशं

मूढ चतुर्विध संघमां के धर्ममां नास्तिक होय अर्थात् चतुर्विध संघ के धर्म नथी एम कहेतो होय तेने भव्यजनोए संघथी बहार करवो. (९५) जेम घृतादि वस्तुमां पूर्वकाळनी अपेक्षाए स्नेह अने माधुर्यादिनी हानि प्रत्यक्ष जोवामां आवे छे (९६) तो पण तेनाथी साधवालायक कार्य (मिष्टान्नादिक) ते ज घृतादिक वडे थाय छे–करवामां आवे छे. पण तेना स्थानके स्थापित करवामां आवेला स्वच्छ एवा जळादिकथी थतुं नथी. (९७) ते ज रीते पूर्व मुनिओनी अपेक्षाए हीन हीन गुणवाळा छतां पण मोक्षमार्गनी प्राप्ति तो तेवा निर्ग्रंथ मुनिओथी ज थाय छे–बीजाथी थती नथी. (९८) आ विषमकाळमां पण कोइ मुनिओ चोथा आराना निर्ग्रंथ मुनिओ जेवा पण होय छे. (९९)

जेमके—आ अवसर्पिणीमां आ पांचमा आरामां सतत उदयवाळा परमात्माए २३ उदय थवाना कह्या छे. (१००) तेमांना पहेला उदयमां २०, बीजामां २३, त्रीजामां ९८, चोथामां ७८, पांचमामां ७५, छठ्ठामां ८९, सातमामां १००, आठमामां ८७, नवमामां ९५, दशमामां ८७, अग्यारमामां ७६, बारमामां ७८, तेरमामां ९४, चौदमामां १०८, पंदरमामां १०३, सोळमामां १०७, सतरमामां १०४, अढारमामां ११५, ओग-

शतं १९ शतं २० ॥ ४ ॥ पंचाधिकाथ नवति २१-र्नवतिश्च नवाधिका २२ । चत्वारिंशत् २३ क्रमादेते यथोक्तोदयसूरयः ॥ ५ ॥

श्रीसुधर्मा १ च वज्रश्च २ सूरिः प्रतिपदाभिधः ३ । हरिस्सहो ४ नंदिमित्रः ५ शूरसेन ६ स्तथापरः ॥ ६ ॥ रविमित्रः ७ श्रीप्रभश्च ८ सूरिर्मणिरथाभिधः ९ । यशोमित्रो १० धनशिखः ११ सत्यमित्रो १२ महामुनिः ॥ ७ ॥ धम्मिल्लो १३ विजयानंद १४-स्तथा सूरिः सुमंगलः १५ । धर्मसिंहो १६ जयदेवः १७ सुरदिन्नाभिधो गुरुः १८ ॥ ८ ॥ वैशाख १९ श्चाथ कोडिन्यः २० सूरिः श्रीमाथुराह्वयः २१ । वणिक्पुत्रश्च २२ श्रीदत्त २३ उदयेष्वाद्यसूरयः ॥ ९ ॥

स्यात्पुष्पमित्रो १ ऽर्हन्मित्रः २ सूरिर्वैशाखसंज्ञकः ३ । सुकीर्त्ति ४ स्थावर ५ रथ-सुताश्च ६ जयमंगलः ७ ॥ १० ॥ ततः सिद्धार्थ ८ ईशानो ९ रथमित्रो १० मुनीश्वरः । आचार्यो भरणीमित्रो ११ दृढमित्राह्वयोऽपि च १२ ॥ ११ ॥ संगतिमित्रः १३ श्रीधरो १४ मागध १५ श्चामराभिधः १६ । रेवतीमित्र १७ सत्कीर्त्ति-मित्रो १८ च सुरमित्रकः १९ ॥ १२ ॥ फल्गुमित्रश्च २० कल्याण २१-सूरिः कल्याणकारणं । देवमित्रो २२ दुःप्रसह २३ उदयेष्वंत्यसूरयः ॥ १३ ॥

ओगणीशमामां १३३, वीशमामां १००, एकवीशमामां ९५, बावीशमामां ९९ अने त्रेवीशमामां ४० ए प्रमाणे कुल २००४ युगप्रधान आचार्यो थशे. (१०१-१०५)

ए त्रेवीशे उदयमां पहेला पहेला आचार्य श्रीसुधर्मा १, वज्र २, प्रतिपद ३, हरिस्सह ४, नंदिमित्र ५, शूरसेन ६, रविमित्र ७, श्रीप्रभ ८, मणिरथ ९, यशोमित्र १०, धनशिख ११, महामुनि सत्यमित्र १२, धम्मिल्ल १३, विजयानंद १४, सुमंगळसूरि १५, धर्मसिंह १६, जयदेव १७, सुरदिन्न नामना गुरु १८, वैशाख १९, कोडिन्य २०, माथुर २१, वणिक्पुत्र २२ अने श्रीदत्त २३-आ नामना थशे. (६-९)

ए त्रेवीशे उदयमां छेल्ला आचार्य पुष्पमित्र १, अर्हन्मित्र २, वैशाख ३, सुकीर्त्ति ४, स्थावर ५, रथसुत ६, जयमंगळ ७, सिद्धार्थ ८, ईशान ९, रथमित्र मुनीश्वर १०, भरणीमित्र आचार्य ११, दृढमित्र १२, संगतिमित्र १३, श्रीधर १४, मागध १५, चामर १६, रेवतीमित्र १७, सत्कीर्त्तिमित्र १८, सुरमित्र १९, फल्गुमित्र २०, कल्याणना कारणरूप कल्याणसूरि २१, देवमित्र २२ अने दुःप्रसह २३ नामना थशे. (१०-१३)

श्रीसुधर्मा च जंबूश्च प्रभवः सूरिशेखरः । शय्यंभवो यशोभद्रः संभूतिविजयाह्वयः ॥ १४ ॥ भद्रबाहुस्थूलभद्रौ महागिरिसुहस्तिनौ । धनसुंदरश्यामार्यौ स्कंदिलाचार्य इत्यपि ॥ १५ ॥ रेवतीमित्रधर्मौ च भद्रगुप्ताभिधो गुरुः । श्रीगुप्तवज्रसंज्ञार्य–रक्षितौ पुष्पमित्रकः ॥ १६ ॥ प्रथमस्योदयस्यैते विंशतिः सूरिसत्तमाः ।

त्रयोविंशतिरुच्यंते द्वितीयस्याथ नामतः ॥ १७ ॥ श्रीवज्रो नागहस्ती च रेवतीमित्र इत्यपि। सिंहो नागार्जुनो भूत–दिन्नः कालकसंज्ञकः ॥ १८ ॥ सत्यमित्रो हारिलश्च जिनभद्रो गणीश्वरः । उमास्वातिः पुष्पमित्रः संभूतिः सूरिकुंजरः ॥ १९ ॥ तथा माढरसंभूतो धर्मश्रीसंज्ञको गुरुः । ज्येष्ठांगः फल्गुमित्रश्च धर्मघोषाह्वयो गुरुः ॥ २० ॥ सूरिर्विनयमित्राख्यः शीलमित्रश्च रेवतिः । स्वप्नमित्रो हरिमित्रो द्वितीयोदयसूरयः

स्युस्त्रयोविंशतेरेव–मुदयानां युगोत्तमाः । चतुर्युक्ते सहस्रे द्वे मीलिताः सर्वसंख्यया ॥ २२ ॥ एकावताराः सर्वेऽमी सूरयो जगदुत्तमाः । श्रीसुधर्मा च जंबूश्च ख्यातौ तद्भवसिद्धिकौ ॥ २३ ॥ अनेकातिशयोपेता

हवे पहेला उदयना वीश युगप्रधान आचार्योना नाम आ प्रमाणे–१ श्रीसुधर्मा, २ जंबू, ३ सूरिशेखरसमान प्रभव, ४ शय्यंभव, ५ यशोभद्र, ६ संभूतिविजय, ७ भद्रबाहु, ८ स्थूलभद्र, ९ महागिरि, १० सुहस्ति, ११ धनसुंदर, १२ श्यामार्य, १३ स्कंदिलाचार्य, १४ रेवतीमित्र, १५ धर्म, १६ भद्रगुप्त नामना गुरु, १७ श्रीगुप्त, १८ वज्र, १९ आर्यरक्षित, २० पुष्पमित्र.

हवे बीजा उदयना २३ युगप्रधान आचार्योना नाम कहे छे.–(१४–१७) १ श्रीवज्र, २ नागहस्ती, ३ रेवतीमित्र, ४ सिंह, ५ नागार्जुन, ६ भूतदिन्न, ७ कालक, ८ सत्यमित्र, ९ हारिल, १० जिनभद्र गणीश्वर, ११ उमास्वाति, १२ पुष्पमित्र, १३ आचार्योमां हस्तीसमान संभूति, १४ माढरसंभूत, १५ धर्मश्री, १६ ज्येष्ठांग, १७ फल्गुमित्र, १८ धर्मघोष नामना गुरु, १९ विनयमित्र, २० शीलमित्र, २१ रेवति, २२ स्वप्नमित्र ने २३ हरिमित्र. (१८–२१)

ए प्रमाणे २३ उदयमां थनारा युगोत्तम (युगप्रधान) पुरुषो सर्व मळीने बे हजार ने चार सर्व संख्याए थाय छे. (२२) आ बधा जगदुत्तम आचार्यो एकावतारी जाणवा. तेमां श्रीसुधर्मा ने जंबू तद्भवसिद्धिक समजवा. (२३) आ युगप्रधानो अनेक अतिशय-

महासत्त्वा भवंत्यमी । घ्नंति सार्द्धद्वियोजन्यां दुर्भिक्षादीनुपद्रवान ॥२४॥ एकादशसहस्राश्च लक्षाश्च षोडशाधिकाः । युगप्रधानतुल्याः स्युः सूरयः पंचमारके ॥ २५ ॥ तथोक्तं दुष्षमारकसंघस्तोत्रे–जुगपवरसरिससूरी दूरीकयभवियमोहतमपसरं । वंदामि सोलसुत्तर इगवसलक्खे सहस्से य ॥ १ ॥ संतु श्रीवर्द्धमानस्येत्यादि दीवालीकल्पे तु–जुगप्पहाणसमाणा एगारस लक्ख सोलस सहस्सा । सूरिओ हुंति अरए पंचमए जाव दुप्पसहे ॥ २ ॥ कोटीनां पंच पंचाश–ल्लक्षास्तावंत एव च । सहस्राश्च शताः पंच सर्वे स्वाचारसूरयः ॥ २६ ॥ त्रयस्त्रिंशच्च लक्षाणि सहस्राणां चतुष्टयी । चतुःशत्येकनवतिः सूरयो मध्यमा गुणैः ॥ २७ ॥ अस्मिन्नेवारकेऽभूवन् पूर्वाचार्या महाशयाः । श्रीजगच्चंद्रसूर्याद्या–स्तपागच्छान्वयक्रमे ॥ २८ ॥ सूरयो वप्पभट्टयाख्या अभयदेवसूरयः । हेमाचार्याश्च मलय–गिर्याद्याश्चाभवन् परे ॥ २९ ॥ विजयंतेऽधुनाप्येवं मुनयो नयकोविदाः । अत्युग्रतपसश्चारु–चारित्रमहिमाद्भुताः ॥ ३० ॥ एवं मध्य-

---

वाळा तेम ज महासत्त्वशाळी होय छे. तेमना प्रभावथी अढी योजन (दश गाउ)मां दुर्भिक्षादि उपद्रवो नाश पामे छे. आ पांचमा आरामां सोळ लाख ने अग्यार हजार युगप्रधान सरखा आचार्यो थशे. (२४–२५) श्री दुष्षमारकसंघस्तोत्रमां कह्युं छे के–" युगप्रधान–सदृश सोळ लाख ने अग्यार हजार आचार्यो के जेमणे भविक जीवना मोहरूप अंधकारनो प्रसार दूर कर्यो छे एवा थशे. एमने हुं वंदना करुं छुं. (१) " संतु श्रीवर्द्धमानस्य ए पदनी शरुआतवाळा दीवाळीकल्पमां तो–' युगप्रधानसरखा अग्यार लाख ने सोळ हजार आचार्यो पांचमा आरामां यावत् दुष्प्रसहसूरिपर्यंत थशे. (२) ' एम कहेल छे.

पांच क्रोड, पचाश लाख, पचास हजार ने पांचसें सर्वे उत्तम आचारवाळा आचार्यो थशे. (२६) तेत्रीश लाख, चार हजार, चारसें ने एकाणुं मध्यम गुणवाळा आचार्यो थशे. (२७) आ आरामां महाशय एवा पूर्वाचार्यो श्रीजगच्चंद्रसूरि विगेरे तपागच्छना अन्वयक्रममां थया छे. (२८) श्रीवप्पभट्टीसूरि, श्री अभयदेवसूरि, हेमचंद्राचार्य, मलयगिरि विगेरे बीजा घणा आचार्यो थया छे. (२९) अत्यारे पण न्यायमां प्रवीण अने अत्युग्र तप करनारा तेम ज चारित्रना महिमावडे अद्भुत एवा केटलाक मुनिओ विजयवंत वर्ते छे. (३०) आ प्रमाणे मध्यम दृष्टिए विचार करीने विवेकीओए पांचमा आरामां शुद्ध

स्थया दृष्ट्या पर्यालोच्य विवेकिभिः । न कार्यः शुद्धसाधूनां संशयः पंचमेऽरके ॥३२॥ दुष्षमारकपर्यंता–वधि संघश्चतुर्विधः । भविष्यत्यव्यवच्छिन्न इत्यादिष्टं जिनैः श्रुते ॥३३॥ तथोक्तं भगवत्यां–जंबूद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए देवाणुप्पियाणं केवइयं कालं तित्थे अणुसज्जिस्सति ? गो० जंबू० भारहे इमीसे ओस० ममं एक्कवीसं वाससहस्साइं तित्थे अणुसज्जिस्सति, इति भग० श० ८ उ० ८ । दीवालीकल्पे तूक्तं–वासाण वीससहस्सा नव सय तिम्मास पंचदिणपहरा । इक्का घडिया दोपल अक्खर अडयाल जिणधम्मो ॥ १ ॥

पर्यंते त्वरकस्यास्य सूरिर्दुःप्रसहाभिधः । रत्निद्वयोच्छ्रितो विंशत्यब्दजीवी भविष्यति ॥ ३४ ॥ स्वर्गाच्च्युत्वा समुत्पन्नो गृहे द्वादशवत्सरीं । स्थित्वा सामान्यसाधुत्वे चत्वार्यब्दान्यसौ शुचिः ॥ ३५ ॥ चत्वार्यब्दानि सूरित्वे स्थित्वाष्टाब्दानि च व्रते । स्वर्गमेष्यति सौधर्म–मंते कृत्वाष्टमं कृती ॥ ३६ ॥ दशवैकालिकं जीत–कल्पमावश्यकं च सः । अनुयोगद्वारनंदी–नतेंद्रो धास्यति श्रुतं ॥ ३७ ॥ साध्वी तदा च फल्गुश्रीः

साधुओसंबंधी संशय न करवो, (३१) केमके दुषम आराना छेडापर्यंत अव्यवच्छिन्नपणे चतुर्विधसंघ रहेशे. एम जिनेश्वरोए सिद्धांतमां कहेलुं छे. (३२–३३) श्री भगवतीसूत्रमां कह्युं छे के–' हे भगवंत ! जंबूद्वीपमां भरतक्षेत्रमां आ अवसर्पिणीमां आप देवानुप्रियनुं तीर्थ केटला काळसुधी अविच्छिन्न वर्त्तशे ? ' प्रभु कहे छे के–' हे गौतम ! आ जंबूद्वीपमां भरतक्षेत्रमां आ अवसर्पिणीमां मारुं तीर्थ एकवीश हजार वर्षपर्यंत अविच्छिन्न वर्त्तशे. ' आ प्रमाणे भगवती शतक ८, उद्देशा ८ मामां कह्युं छे. दीवाळीकल्पमां तो कह्युं छे के–' वीश हजार नवसो वर्ष, त्रण मास, पांच दिवस, पांच प्रहर, एक घडी, बे पळ ने ४८ अक्षर सुधी जैनधर्म रहेशे. (१) ' (आ संख्यानुं कारण समजातुं नथी)

आ आराने छेडे दुःप्रसह नामना सूरि बे हाथ उंचा शरीरवाळा ने वीश वर्षना आयुवाळा थशे. (३४) ते स्वर्गथी च्यवीने मनुष्यपणुं पामशे. बार वरस गृहवासमां रहेशे, चार वर्ष सामान्य पवित्र साधुपणे रहेशे (३५) अने चार वर्ष आचार्यपणे रहेशे. एकंदर आठ वर्ष श्रमणपणामां रही अंते अट्ठम करी सौधर्म देवलोके देव थशे. (३६) ते काळे दशवैकालिक, जीतकल्प, आवश्यक, अनुयोगद्वार ने नंदी एटलुं श्रुत जेने इंद्र नम्या छे एवा ते आचार्य धारण करशे. (३७) ते वखते साध्वी फल्गुश्री नामे,

श्रावको नागिलाभिधः । सत्यश्रीः श्राविका चेति ज्ञेयः संघश्चतुर्विधः ॥ ३८ ॥ यतः—एगो साहू एगा य साहुणी सड्ढो य सड्ढी वा । आणा-जुत्तो संघो सेसो पुण अट्ठिसंघाओ ॥ ३९ ॥ उत्कृष्टं श्रुतमेतेषां दशवैकालिकावधि । षाण्मासिकतपस्तुल्यं षष्ठभक्तं भविष्यति ॥ ४० ॥ मंत्रीशः सुमुखाभिख्यो राजा विमलवाहनः । भविष्यतस्तदा लोके नीतिमार्गप्रवर्त्तकौ ॥ ४१ ॥ अयं दुःप्रसहाचार्यो—पदेशेन करिष्यति । चैत्यस्यांतिमसुद्धारं राजा श्रीविमलाचले ॥ ४२ ॥ कोट्येकैकादश लक्षाः सहस्राणि च षोडश । उत्तमानां क्षितीशानां संख्यैषा दुष्षमारके ॥४३॥ कोटयः पंचपंचाश—ल्लक्षाश्चापि सहस्रकाः । तावंतोऽथ शताः पंच पंचपंचाशदन्विताः ॥ ४४ ॥ ५५५५५५५५५ इयंतो दुःषमाकाले निर्दिष्टाः सर्वसंख्यया । नवभिः पंचकैर्नाम—धारिणोऽधमसूरयः ॥ ४५ ॥ इत्यर्थतो दीपालिकाकल्पे.

एवं च सर्ववर्षाव—सर्पिणीष्वखिलास्वपि । पंचमानामरकाणां यथार्हं भाव्यतां स्थितिः ॥ ४६ ॥ एवमुक्तस्वरूपस्य पंचमस्यारकस्य च । प्रांते मूलाद् ज्ञातिधर्मो विवाहादिर्विलीयते ॥ ४७ ॥ धर्मो विलीयते शाक्या—

श्रावक नागिल नामे अने श्राविका सत्यश्री नामे थशे. ए रीते चतुर्विध संघ थशे. (३८) कह्युं छे के—' एक साधु, एक साध्वी, एक श्रावक ने एक श्राविका पण आज्ञायुक्त होय तो तेने संघ कहेवो, ते सिवायनाने अस्थिनो संघ समजवो. ' (३९) पांचमा आराना प्रांत भागे एओनुं उत्कृष्ट श्रुत दशवैकालिकसुधी ने उत्कृष्ट तप छठनो ते षाण्मासिक तप जेवो थशे (गणाशे). (४०) राजा विमळवाहन ने मंत्री सुमुख नामनो ते वखते लोकमां नीतिमार्गना प्रवर्तक थशे. (४१) आ राजा दुःप्रसह आचार्यना उपदेशथी श्रीविमळाचळउपरना चैत्यनो छेल्लो उद्धार करशे. (४२) आ दुषमा आरामां एक क्रोड, अग्यार लाख अने सोळ हजार उत्तम राजाओ थशे. (४३) पंचावन क्रोड, पंचावन लाख, पंचावन हजार, पांचसो ने पंचावन ए प्रमाणे नव पांचडारूप संख्यावाळा आ दुःषमकाळमां नामधारी अधम सूरिओ (आचार्यो) थशे. आ प्रमाणे अर्थथी दीपालिकाकल्पमां कहेल छे.

ए रीते सर्व (पांच भरत ने पांच ऐरवत) क्षेत्रमां सर्व अवसर्पिणीना पांचमा आरामां यथायोग्यपणे स्थिति समजवी. (४६) ए प्रमाणे उक्त स्वरूपवाळा पांचमा आराने प्रांते मूळथी विवाहादि ज्ञातिधर्म नाश पामशे. (४७) शाक्यादि अन्य पाखंडीओनो

थान्यपाखंडिनामपि । राजधर्मो दुष्टशिष्ट–निग्रहानुग्रहादिकः ॥ ४८ ॥ धर्मोऽथ श्रुतचारित्र–लक्षणोऽपि विलीयते । साध्वादिनाशे तन्नाशः पात्रनाशे घृतादिवत् ॥ ४९ ॥ तथा चोच्छिद्यते वह्नि–रन्नपाकादिभिस्सह । अतिस्निग्धेऽतिरूक्षे च काले भवति नैष यत् ॥ ५० ॥ अनतिस्निग्धरूक्षेषु सुषमदुष्षमादिषु । कालेषूत्पद्यते वह्नि–स्तत्साध्याश्च क्रिया अपि ॥ ५१ ॥

एवं पूर्णे पंचमेऽरे–ऽनंतैर्वर्णादिपर्यवैः । हीयमानैः प्रविशति दुष्षमदुष्षमारकः ॥ ५२ ॥ स च कालो महाभीष्मः शून्योऽशेषजनक्षयात् । प्रवर्द्धमानदुःखार्त्त–लोकहाहारवाकुलः ॥ ५३ ॥ तस्मिन् कालेऽतिकठिना दूरोदंचितधूलयः । वाता वांति भृशं भीष्मा असह्याः प्राणहारिणः ॥ ५४ ॥ धूमायंते दिशोऽभीक्ष्णं परितोऽतिरजस्वलाः । प्रसृत्वरांधतमसै–र्निरालोका दिवानिशं ॥ ५५ ॥ कालरौक्ष्येणांगरौक्ष्या–दसह्यमहितं महः । शीतं मुंचति शीतांशु–रुष्णं चोष्णकरः खरः ॥ ५६ ॥ सूर्य-

धर्म पण नाश पामशे. दुष्टनो निग्रह ने शिष्टनो अनुग्रह करवारूप राजधर्म नाश पामशे. (४८) श्रुत अने चारित्रलक्षण धर्म पण नाश पामशे, केमके साधु विगेरेनो नाश थये सते पात्रनाशे घृतादिना नाशनी जेम ते नाश पामे ज. (४९) तथा अन्नपाकादिनी साथे अग्नि पण नाश पामशे, कारण के अतिस्निग्ध के अतिरूक्ष काळमां अग्नि होतो ज नथी. (५०) अनतिस्निग्धरूक्ष एटले अतिस्निग्ध नहीं अने अतिरूक्ष नहीं एवा सुषमदुःषमादि काळमां ते अग्नि अने तेथी साध्य एवी क्रियाओ प्रवर्ते छे. (५१)

आ प्रमाणे पांचमो आरो पूर्ण थये सते तेना करतां अनंता वर्णादि पर्यवे हीन थतो दुष्षमदुष्षम नामनो छठ्ठो आरो प्रवेश करशे. (५२) ते काळ महाभीष्म, अशेष (समस्त) जननो क्षय थवाथी शून्य, वधता जता दुःखोथी पीडा पामता लोकोना हाहारवथी आकुळ प्रवर्तशे. (५३) ते काळे अति कठिन, दूरथी पुष्कळ धूळने उडाडनारा, अत्यंत भीष्म (भयंकर), असह्य अने प्राणहारी वायरा वाशे. (५४) वारंवार दिशाओ धूम्रमय, चोतरफ रजयुक्त अने अंध करे एवा तामसवडे रात्रि–दिवस लोकोवडे न जोइ शकाय तेवी थशे. (५५) काळना रौक्ष्यपणाथी अंगनुं अत्यंत रौक्ष्यपणुं थशे अने तेथी सूर्य–चंद्रनुं तेज असह्य ने अहितकारी थइ पडशे. चंद्रमा अत्यंत शीतता मूकशे अने सूर्य अत्यंत उष्णता मूकशे. (५६) ए सूर्य ने चंद्र जगतने उपकारी छतां

चंद्रमसावेतौ जगतामुपकारिणौ । हंत कालपरावर्त्ते स्यातां तावेव दुःखदौ ॥ ५७ ॥ सर्जादिक्षारसदृश–रसवाःपूरवर्षिणः । करीषरसतुल्यांबु–मुचोऽम्लरसवारयः ॥ ५८ ॥ अग्निवद्दाहकृद्वारि–किरो विषमयोदकाः । वज्रोदकाः पर्वतादि–प्रतिभेदप्रभूष्णवः ॥ ५९ ॥ विद्युत्पातकृतोऽभीक्ष्णं कर्करादिकिरोऽसकृत् । जनानां विविधव्याधि–वेदनामृत्युकृज्जलाः ॥६०॥ तदा चंडानिलोद्धूत–तीव्रधारातिपातिनः । कर्णद्रोहिध्वनिकृतो–ऽसकृद्वर्षंति वारिदाः ॥ ६१ ॥ चतुर्भिः कलापकं । एषां क्षारादिमेघानां श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्त्योः कालमानमुक्तं न दृश्यते–' अभिक्खणं अभिक्खणं अरसमेहा विरसमेहा खारमेहा खत्तमेहा यावत् वासं वासं वासिहिंति ' एतद्वृत्तावपि अभीक्ष्णं पुनः पुनरित्यादि. कालसप्ततौ तु एतेषां कालमानमेवं दृश्यते.–तो खारग्गिविसंबिल–विज्जूघणा सगदिणा पिहु कुपवणं । वरिसिअ बहुरोगिजलं काहंति समं गिरिथलाई ॥ १ ॥ ग्रंथांतरे तु–' एते क्षारमेघादयो वर्षशतोनैकविंशतिवर्षसहस्रप्रमाणदुष्षमाका-

---

खेदनी वात छे के काळना परावर्तपणाथी ते बंने दुःखने आपनारा थई पडशे. (५७) साजी विगेरे क्षारसदृश रसवाळा पाणीना वरसाद वरसशे, तेम ज करीषना रसतुल्य पाणीना, अम्ल रसवाळा पाणीना, अग्नि जेवा दाह करनारा पाणीना अने विषमय रसवाळा पाणीना वरसाद वरसशे अने वज्रजेवा पाणीना वरसाद पर्वतोने पण भेदवाने समर्थ एवा वरसशे (५८–५९) वारंवार विजळी पाडशे, वारंवार कराओ पाडशे, लोकोने विविध प्रकारना व्याधिनी वेदना अने मृत्युने उपजावनारा जळ वरसशे, (६०) तेम ज प्रचंड पवनथी उद्धत एवी तीव्र धारावाळा, कर्णद्रोही ध्वनिना करनारा वरसादो वारंवार वरसशे. (६१) आ क्षारादि मेघोनुं काळमान श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रमां तथा तेनी वृत्तिमां कहेल जणातुं नथी. तेना मूळमां तो ' अरसमेघ, विरसमेघ, क्षारमेघ, क्षतमेघ, यावत् विषमेघ वारंवार वरसशे.' एम कहेल छे. तेनी वृत्तिमां पण अभीक्ष्ण एटले वारंवार इत्यादि लख्युं छे. काळसप्ततिप्रकरणमां तो एनुं काळमान आ प्रमाणे कह्युं छे—' क्षार, अग्नि, विष, अम्ल ने विद्युत्–आ पांच प्रकारना मेघ सात सात दिवस वरसशे. माठा पवनयुक्त बहुरोगी जळने वरसीने बधा पर्वत ने स्थळने सरखा करी नाखशे. ' ग्रंथांतरमां तो—" ए क्षार मेघादि सो वर्षे न्यून एकवीश हजार वर्ष दुष्षमाकाळना (पांचमा आराना) व्यतिक्रम्ये सते वरसशे ' एम कहेल छे. जे मेघो

लातिक्रमे वर्षिष्यंतीति ' दृश्यते. ये जगज्जीवनास्ताप-च्छिदः सर्वेप्सितागमाः। एवं तेऽपि प्रवर्त्तंते मेघाः कालविपर्यये ॥ ६२ ॥

नगरग्रामखेटादीन् द्विपदांश्च चतुष्पदान् । अपदान् खेचरान् भूमि-चरानंभश्चरानपि ॥ ६३ ॥ अरण्यवासिनो द्वीप-वासिनः शैलवासिनः । विद्याधरान्नैकविद्या-साधनोर्जितशक्तिकान् ॥ ६४ ॥ त्रसान् द्वित्रिचतुःपंचें-द्रियांश्च स्थावरानपि । वृक्षगुल्मलतागुच्छौ-षधीर्नानातृणादिकान् ॥ ६५ ॥ विना वैताढ्यवृषभ-कूटेभ्योऽन्यान् धराधरान् । गंगासिंध्वादिसिंधुभ्यः परान् सर्वान् जलाश्रयान् ॥ ६६ ॥ विध्वस्येत्यादिकान् सर्वान् भावांस्ते विषमा घनाः । भस्मीकुर्वंति दशसु क्षेत्रेषु भरतादिषु ॥ ६७ ॥ पंचभिः कुलकं । वर्षंति वैताढ्यादीना-मुपर्यपि घना अमी । तत्रस्था अपि नश्यंति खेचरास्तत्पुराणि च ॥ ६८ ॥ किंतु ते भूधरास्तेषां प्रासादाः शिखराणि च । न मनागपि भिद्यंते शाश्वतं ह्यविनश्वरं ॥ ६९ ॥

जगतने जीवन आपनार, तापनो नाश करनार, सर्व इच्छितने पूरनार छे ने पण काळनो विपर्यय थये सते आवी रीतनी (अनिष्ट) प्रवृत्ति करे छे. (६२)

ए विषम वरसादो नगर, ग्राम, खेडा विगेरेने, द्विपद, चतुष्पद, अपद[1]ने, तेम ज खेचर, भूमिचर ने जळचरने, अरण्यवासी, द्वीपवासी ने शैलवासीने, अनेक विद्यासाधनथी ऊर्जित शक्तिवाळा विद्याधरने, बेइंद्री, तेइंद्री, चौरेंद्री, पंचेंद्रियरूप त्रसोने, वृक्ष, गुल्म, लता, गुच्छ, औषधि अने अनेक प्रकारना तृणादिरूप स्थावरोने, वैताढ्य ने ऋषभकूट सिवायना बधा पर्वतोने, गंगा ने सिंधु सिवायनी बीजी नदीओने, सर्व जळाशयोने इत्यादि सर्व भावोने विध्वंस करीने भरतादि दशे क्षेत्रोमां भस्मीभूत करी नाखशे. (६३-६७) आ वरसादो वैताढ्यादि पर्वतोनी उपर पण वरसे छे तेथी त्यां रहेला खेचरो तेम ज तेना नगरो पण नाश पामे छे. (६८) मात्र ते पर्वत अने तेना प्रासाद तेम ज शिखरो किंचित् पण भेदाता नथी, कारण के ते शाश्वत अने अविनश्वर छे. (६९)

---

१ अपद-सर्पादिक.

अस्मिंश्च भरतक्षेत्रे श्रीशत्रुंजयपर्वतः । तत्रापि काले भविता शाश्वतप्राय एव यत् ॥ ७० ॥ अशीतिं योजनान्येष विस्तृतः प्रथमेऽरके । द्वितीये सप्ततिं षष्टिं तृतीये कथितोऽरके ॥ ७१ ॥ योजनानि च पंचाश–त्तुरीये पंचमे पुनः । योजनानि द्वादश स्युः सप्तहस्तास्ततोंऽतिमे ॥ ७२ ॥ उत्सर्पिण्यां कराः सप्ता–रके त्वाद्ये द्वितीयके । योजनानि द्वादश स्यु–र्मानमेवं परेष्वपि ॥ ७३ ॥ पंचाशतं योजनानि मूले यो विस्तृतोऽभवत् । दशोपरि तथाष्टोच्चो विहरत्यादिमेऽर्हति ॥ ७४ ॥ विच्छिन्नेऽपि हि तीर्थेऽस्मिन् कूटमस्यर्षभाभिधं । सुरार्चितं स्थास्यतीह पद्मनाभजिनावधि ॥ ७५ ॥ अस्मिन्नृषभसेनाद्याः संख्यातीता जिनेश्वराः। निर्वाणैश्च विहारैश्च बहुशोऽपावयन्महीं ॥ ७६ ॥ भाविनः पद्मनाभाद्या अर्हंतोऽत्र महागिरौ । निजैर्विहारनिर्वाणैः पावयिष्यंति मेदिनीं ॥ ७७ ॥ वर्त्तमानावसर्पिण्या–मस्यां नेमिजिनं विना। त्रयोविंशतिरर्हंतो निन्युरेनं कृतार्थतां ॥ ७८ ॥ पंचभिर्मुनिकोटीभिः सहात्र वृषभप्रभोः । निर्वृतश्चैत्रराकायां पुंडरीको गणाधिपः ॥ ७९ ॥ चतुर्मासीं स्थितावत्रा–जित·

आ भरतक्षेत्रमां श्रीशत्रुंजय पर्वत ते काळे पण रहेशे. कारण के ते शाश्वतप्राय छे. (७०) ते पर्वत पहेले आरे ८० योजननो, बीजे आरे ७० योजननो, त्रीजे आरे ६० योजननो, चोथे आरे ५० योजननो, पांचमे आरे १२ योजननो अने छठ्ठे आरे सात हाथनो होय छे. (७१–७२) उत्सर्पिणीमां पहेले आरे ७ हाथनो, बीजे आरे १२ योजननो ए प्रमाणे अवसर्पिणीथी विपर्यय मान समजवुं. (७३) श्रीऋषभदेव भगवान विचरता हता त्यारे (त्रीजा आराने छेडे) शत्रुंजय पर्वत पचास योजन मूळमां विस्तारवाळो, उपर दश योजन विस्तारवाळो अने आठ योजन उंचो हतो. (७४) पांचमा आराने छेडे आ तीर्थ विच्छेद पामे सते पण एतुं ऋषभ नामनुं कूट देवोथी पूजायुं सतुं पद्मनाभ तीर्थंकर थशे त्यां सुधी कायम रहेशे. (७५) आ पर्वतनी पृथ्वी ऋषभसेन विगेरे जिनेश्वरोए विहारवडे ने निर्वाणवडे पवित्र करेली छे. (७६) भावी काळे थनारा पद्मनाभादि अरिहंतो आ पर्वतउपरनी पृथ्वी पोताना निर्वाण अने विहारवडे पावन करशे. (७७) वर्तमान अवसर्पिणीमां नेमिनाथ विनाना २३ तीर्थंकरोए आ पर्वतनी पृथ्वीने कृतार्थ करी छे. (७८) पांच करोड मुनि साथे चैत्र शुदि पुनमे श्री वृषभप्रभुना पुंडरीक नामना गणधर आ तीर्थे निर्वाण पाम्या छे. (७९) आ तीर्थपर अजि-

शांती जिनेश्वरौ । क्षेत्रमेतदनंतानां सिद्धानां विशदात्मनां ॥ ८० ॥ श्रीनेमिगणभृन्नंदि–षेणो यात्रार्थमागतः। सत्प्रभावाश्रयं यत्रा-जितशांति-स्तवं व्यधात् ॥ ८१ ॥ जनकोटौ यथाकामं भोजितायां यदर्ज्यते । तदेकेनोपवासेन सुकृतं सिद्धभूधरे ॥ ८२ ॥ इत्याद्यर्थतः श्रीशत्रुंजयक-ल्पादौ. प्रायः पापविमुक्ताः स्यु–स्तिर्यंचोऽत्र निवासिनः। प्रयांति सद्गता-वेव स्पृष्ट्वैनं श्रद्धया गिरिं ॥ ८३ ॥ सर्वेषामपि तीर्थानां यात्रया विश्वव-र्त्तिनां । यावदुत्पद्यते पुण्यं तावत्सिद्धाद्रियात्रया ॥ ८४ ॥ यश्चैत्यं जि-नबिंबं वा कारयेत्सिद्धपर्वते । स भुक्त्वा सार्वभौमत्वं भवेद्देवो महर्द्धिकः ॥ ८५ ॥

ध्वजं छत्रं पताकां च स्थालभृंगारचामरान् । विद्याधरो भवेद्दत्त्वा रथं दत्त्वा च चक्रभृत् ॥ ८६ ॥ आहुर्विद्याप्राभृते च नामान्यस्यैकविंशतिं। यथानुभावं क्लृप्तानि मुनिस्वर्गिनरादिभिः ॥ ८७ ॥ तथाहुः–विमलगिरि १ मुत्तिनिलओ २ सित्तुंजो ३ सिद्धखित्त ४ पुंडरिओ ५। सिरिसिद्धसेहरो

तनाथ अने शांतिनाथ प्रभुए चतुर्मास करेल छे. अनंता निर्मळ आत्मावाळा सिद्धोनुं आ क्षेत्र छे. (८०) श्री नेमिनाथ प्रभुना नंदिषेण नामना गणधर अहीं यात्रा करवा आव्या हता. तेमणे प्रगटप्रभाववाळुं अजितशांति स्तोत्र अहीं रचेलुं छे. (८१) क्रोड मनुष्योने यथेच्छ रीते जमाडतां जे पुण्य उपार्जन थाय तेटलुं पुण्य आ सिद्धाचळपर्वते एक उपवास करवाथी थाय छे. (८२) इत्यादि अर्थथी श्री शत्रुंजयकल्पादिकमां कह्युं छे. अहींना निवासी तिर्यंचो पण प्रायः पापविमुक्त थाय छे अने श्रद्धापूर्वक आ गिरिने फरसवाथी जीव सद्गतिमां ज जाय छे. (८३) विश्ववर्ती सर्वे तीर्थोनी यात्राथी जेटलुं पुण्य थाय तेटलुं पुण्य आ सिद्धाद्रिनी एक यात्राथी थाय छे. (८४) जे कोइ आ सिद्धपर्वतउपर चैत्य करावे के जिनबिंब पधरावे ते सार्वभौमपणुं (चक्रीपणुं) भोगवीने महर्द्धिक देव थाय छे. (८५)

आ तीर्थे ध्वज, छत्र, पताका, स्थाळ, भृंगार, चामर विगेरे दे छे–मूके छे ते विद्याधर-पणुं पामे छे अने रथ आपनार (मूकनार) चक्रवर्ती थाय छे. (८६) श्री विद्याप्राभृत-मां आ तीर्थना २१ नाम आपेला छे के जे नामो यथानुभाव मुनि, देवो अने मनुष्योए करेला (स्थापेला) छे. (८७) ते नामो आ प्रमाणे–" विमळगिरि १, मुक्तिनिलय २,

६ सिद्ध-पव्वओ ७ तित्थराओ य ८ ॥ १ ॥ बाहुबली ९ मरुदेवो १० भगीरहो ११ सहसपत्त १२ सयपत्तो १३। कूडसयट्ठुत्तरओ १४ नगाहिराओ १५ सहसकमलो १६ ॥ २ ॥ ढंको १७ कवडिनिवासो १८ लोहिच्चो १९ तालज्झओ २० कयंबुत्ति २१ । सुरनरमुणिकयनामो सो विमलगिरी जयउ तित्थं ॥ ३ ॥

एष चाऽशाश्वतो नाशा-न्मूलाऽनाशाच्च शाश्वतः । ततः सोभय-धर्मत्वा-च्छाश्वतप्राय उच्यते ॥ ८८ ॥

अथ प्रकृतं-अंगारमुर्मुरप्राया भूमिर्भस्ममयी तदा । देहिभिर्दुष्क-रस्पर्शा सतीव व्यभिचारिभिः ॥ ८९ ॥ कुरूपाश्च कुवर्णाश्च दुर्गंधा दुष्टलक्षणाः । हीनदीनस्वरा दुष्ट-गिरोऽनादेयभाषिताः ॥ ९० ॥ निर्लज्जाः क्लेशकपट-वैरद्रोहपरायणाः । निर्मर्यादा मिथो युद्ध-वधबंधविसंस्थुलाः ॥ ९१ ॥ अकार्यकारिणो नित्य-मन्यायोत्पात(द)तत्पराः । पित्रादिविनया-ज्ञादि-व्यवहारविवर्जिताः ॥ ९२ ॥ भूम्ना काणांधबधिरा न्यूनांगुल्यादयः

शत्रुंजय २, सिद्धक्षेत्र ४, पुंडरीक ५, श्रीसिद्धशेखर ६, सिद्धपर्वत ७, तीर्थराज ८, बाहुबलि ९, मरुदेव १०, भगीरथ ११, सहस्रपत्र १२, शतपत्र १३, अष्टोत्तरशतकूट १४, नगाधिराज १५, सहस्रकमळ, १६, ढंक १७, कोडी (कपर्दी) निवास १८, लौहित्य १९, तालध्वज २० अने कदंब २१-आ प्रमाणे सुर, नर ने मुनिना करेला जेना नामो छे, ते विमळगिरि तीर्थ जयवंत वर्तो " (१-३)

आ पर्वत नाश पामतो होवाथी ते अशाश्वत छे अने मूळथी नाश पामतो न होवाथी शाश्वत छे. ए प्रमाणे उभयधर्मी होवाथी ते शाश्वतप्राय कहेवाय छे. (८८)

अथ प्रकृतं-ते काळे पांचमा आराने छेडे-छट्ठा आराना प्रारंभमां भूमि अंगाराजेवी, मुर्मुरजेवी तेम ज भस्ममयी होय छे, ते जेम व्यभिचारी पुरुष सती स्त्रीने स्पर्श करी न शके तेम प्राणीओने दुष्कर स्पर्शवाळी थाय छे. (८९) ते काळे मनुष्यो कुरूपी, कुवर्णी, दुर्गंधी, दुष्टलक्षणी, हीनदीन स्वरवाळा, दुष्ट वाणीवाळा, अनादेय भाषावाळा, निर्लज्ज, क्लेश-कपट-वैर ने द्रोह करवामां तत्पर, मर्यादाविनाना, अंदरअंदर युद्ध-वध ने बंधथी विसंस्थुल स्थितिवाळा, अकार्यकारी, निरंतर अन्याय ने उत्पातमां तत्पर, (अन्यायथी धन उपार्जन करवामां तत्पर) पित्रादिना विनय के आज्ञादि व्यवहारथी विवर्जित, प्राये काणा, अंध के बधिर, न्यून आंगळी विगेरेवाळा, दुर्बळ, हाथे ठुंठा, पगे पांगळा, श्याम वर्ण-

कृशाः । कुणयः पंगवः श्यामाः कामार्त्ता बाल्यतोऽपि हि ॥ ९३ ॥ प्ररू-
ढप्रौढकठिन-रोमाणः शूकरादिवत् । असंस्कृतश्मश्रुकेशाः प्रवृद्धनखराः
खराः ॥ ९४ ॥ कृतांतसदृशाः काला नीलीकुंडोद्गता इव । स्थूलव्यक्त-
स्नसाजाल-नद्धाः स्फुटितमौलयः ॥ ९५ ॥ बाल्येऽपि कपिलश्वेत-मू-
र्द्धजा वलिभिः श्लथाः । अशक्ता निपतद्दंता जरसा जर्जरा इव ॥ ९६ ॥
घटोद्भटमुखा वक्र-नासिकाः कुटिलेक्षणाः । उत्कंडूयाः क्षतशत-विग-
लत्पूयशोणिताः ॥ ९७ ॥ खरोष्ट्रगतयः संह-ननेनांत्येन निर्बलाः । कुसं-
स्थानाः कुप्रमाणाः कुस्थानशयनासनाः ॥ ९८ ॥ सदाप्यशुचयः स्नान-
ब्रह्मचर्यादिवर्जिताः । शास्त्रसंस्काररहिता मूर्खा विकृतचेष्टिताः ॥ ९९ ॥
निस्सत्त्वाश्च निरुत्साहाः सोच्छिष्टा नष्टतेजसः । शीतोष्णपवनव्याधि-
प्रमुखार्त्तिशताश्रयाः ॥ २०० ॥ प्रस्वेदमलसंदोह-बीभत्सा धूलिधूसराः ।
बहुक्रोधमानमाया-लोभमोहभयोदयाः ॥ १ ॥ व्रतैर्मूलोत्तरगुणैः प्रत्या-
ख्यानैश्च वर्जिताः । सम्यक्त्वेनापि रहिताः प्रायः स्युर्मनुजास्तदा ॥ २ ॥

वाळा, बाळपणाथी ज कामार्त्त, भूंडनी जेवा प्ररूढ-प्रौढ-कठिन रोमराजिवाळा, दाढी-मुछना वाळोनो संस्कार कर्या विनाना, वधेला छे नखो जेना एवा, कर्कश, यमराज जेवा अने गळीना कुंडमांथी नीकळ्या होय तेवा श्याम, स्थूळ अने व्यक्त एवी नसोनी जाळ-वाळा, फुटेला माथावाळा, बाल्यावस्थाथी ज कपिलश्वेत (कावरा) केशोवाळा, आव-ळीओवडे श्लथ, अशक्त, पडी गयेला दांतवाळा, जरावस्थावडे जर्जर थयेला होय तेवा, घडा जेवा उद्भट मुखवाळा, वांकी नासिकावाळा, कुटिल नेत्रवाळा, वृद्धि पामेली खर-जवाळा, सेंकडो क्षतमांथी परु ने लोही नीकळ्या करे छे एवा सेंकडो चांदायुक्त शरीर-वाळा, खर ने उंट जेवी गतिवाळा, छेल्ला संघयणे करीने निर्बळ, माठा संस्थानवाळा, खराब प्रमाणवाळा, माठे स्थाने शयन आसन करनारा, निरंतर अपवित्र, स्नान अने ब्रह्मचर्यादिथी वर्जित, शास्त्रसंस्कार विनाना, मूर्ख, विकृत चेष्टावाळा, निःसत्त्व, निरु-त्साह, उच्छिष्टतावाळा, नष्टतेज, शीत-उष्ण-पवन ने व्याधि प्रमुखने लइने सेंकडो प्रका-रनी आर्त्ति(पीडा)वाळा, प्रस्वेद ने मळना समूहथी बीभत्स, धूळिवडे धूसर थयेला, बहु क्रोध-मान-माया-लोभ-मोह ने भयना उदयवाळा, मूळ-उत्तरगुणरूप व्रतोथी अने प्रत्या-ख्यानथी वर्जित, सम्यक्त्वे करीने पण रहित एवा प्राये मनुष्यो होय छे (१९०-२०२)

कदाचिदेषां केषांचित् सम्यक्त्वं संभवत्यपि । संक्लिष्टाध्यवसायत्वा-द्विरतिस्तु न सर्वथा ॥ ३ ॥ तथोक्तं भगवत्यां-' ओसण्णं धम्मसन्नपब्भट्टा ' जंबूद्वीपप्रज्ञप्त्यां च-' ओसण्णं धम्मसन्नसम्मत्तपरिब्भट्टा ' ओसन्नमिति प्रायोग्रहणात्क्वचित्सम्यक्त्वं प्राप्यतेऽपीति भावः.

प्रायः कच्छपमत्स्यादि-मांसक्षौद्रादिभोजिनः । तुच्छधान्याशिनः केऽपि बह्वाहारा बहुक्षुधः ॥ ४ ॥ प्रायो विपद्योत्पद्यंते तिर्यक्षु नरकेषु ते । तिर्यग्भ्यो नरकेभ्यश्च ते प्रायेण स्युरागताः ॥ ५ ॥

चतुष्पदा मृगव्याघ्र-सिंहाश्वोतुवृकादयः । पक्षिणो ढंककंकाद्याः सरटाद्याः सरीसृपाः ॥ ६ ॥ एतेऽपि सर्वे नरक-तिर्यग्दुर्गतिगामिनः । स्युर्मांसभक्षिणः क्रूरा-ध्यवसायाश्च निर्दयाः ॥ ७ ॥ षष्ठस्य चारकस्यादौ नरा हस्तद्वयोच्छ्रिताः । हीयमानाः क्रमादंते चैकहस्तोच्छ्रिता मताः ॥ ८ ॥ उत्कृष्टमायुरेतेषा-मादौ वर्षाणि विंशतिः । अंते षोडश वर्षाणि हीयमानं शनैः शनैः ॥ ९ ॥ तथोक्तं-' सोलसवीसइवासपरमा-

---

कदाचित् तेमांना कोइक मनुष्योने सम्यक्त्व संभवे छे पण संक्लिष्ट अध्यवसायवाळा होवाथी विरति तो सर्वथा होती ज नथी. (३) श्रीभगवतीसूत्रमां कह्युं छे के-' प्राये धर्मसंज्ञाथी ज भ्रष्ट होय छे. ' जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिमां कह्युं छे के-' प्राये धर्मसंज्ञा ने सम्यक्त्वथी परिभ्रष्ट होय छे ' ओसन्न एटले प्रायःशब्द ग्रहण करेल होवाथी क्वचित् सम्यक्त्व पामी शके छे, एम समजवुं.

ए मनुष्यो प्राये काचबा ने माछला विगेरेना मांसना तेम ज मद्य विगेरेना खानारा, कोइ तुच्छ धान्यना खानारा तेम ज बहु आहारवाळा ने बहु क्षुधावाळा होय छे. (४) ए मनुष्यो मरण पामीने प्राये तिर्यंचमां ने नरकमां उत्पन्न थाय छे अने तेओ प्राये नरकने तिर्यंचगतिमांथी ज आवेला होय छे. (५)

हवे चतुष्पद हरण, वाघ, सिंह, अश्व, वरगडा, बीलाडा विगेरे, पक्षीओ ढंक, कंकविगेरे, सरिसृप सरडा विगेरे-ए सर्वे नरक ने तिर्यंचरूप दुर्गतिगामी होय छे; कारण के ते मांसभक्षी क्रूर अध्यवसायवाळा ने निर्दय होय छे. (६-७) छठ्ठा आराना आदिमां मनुष्यो बे हाथ उंचा होय छे. ते अनुक्रमे घटता घटता छठ्ठा आराने अंते एक हाथ उंचा रहे छे. (८) एमनुं आयुष्य छठ्ठा आराना आदिमां वीश वर्षनुं होय छे, अंते धीमे धीमे घटतुं सोळ वर्षनुं रहे छे. (९) श्री जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रमां कह्युं छे के-' हे श्रमणायुष !

उआ समणाउसो ' इति श्रीजंबू० प्र० सूत्रे, एतद्वृत्तावपि–इह कदाचित् षोडश वर्षाणि, कदाचिच्च विंशतिर्वर्षाणि परममायुर्येषां ते इति. वीरचरित्रे तु षोडश स्त्रीणां वर्षाणि, विंशतिः पुंसां परमायुरिति.

वैताढ्यपर्वतादर्वा–ग्गंगायास्तटयोर्द्वयोः । बिलानि स्युर्नव नव तावंति सिंधुकूलयोः॥ १० ॥ षट्त्रिंशति बिलेष्वेवं दक्षिणार्द्धनिवासिनः। वसंति मनुजाः पक्षि–पशुगोधोरगादयः ॥ ११ ॥ वैताढ्यात्परतः सिंधु–गंगयोः कुलयोर्द्वयोः । षट्त्रिंशति बिलेष्वेते वसंत्युत्तरपार्श्वगाः ॥ १२ ॥ द्वासप्ततिर्बिलान्येवं स्युः क्षेत्रेषु दशस्वपि । तेषु तिष्ठंति बीजानि सर्वेषामपि देहिनां ॥ १३ ॥ रथचक्राक्षमात्रोंडो रथाध्वमात्रविस्तृतः । तदा जलप्रवाहः स्यात् सरितोः सिंधुगंगयोः ॥ १४ ॥ तावदप्युदकं तासां भूरिभिर्मत्स्यकच्छपैः । आकीर्णं पंकिलं भूरि–जीवमल्पतमांबुकं ॥ १५ ॥ ननु क्षुल्लहिमवदा–दिषु शैलेषु नैधते । अरकाणां परावर्त्त–स्ततस्तज्जातजन्मनां ॥ १६ ॥ गंगादीनां निम्नगानां हानिः षष्ठेऽरके कथं । किं चैवं

ते सोळथी मांडीने वीश वर्षना परमायुवाळा होय छे. ' तेनी वृत्तिमां पण कह्युं छे के–' कदाचित् सोळ वर्षनुं ने कदाचित् वीश वर्षनुं परमायु जेमनुं होय छे ते. ' श्री वीरचरित्रमां तो सोळ वर्षनुं स्त्रीनुं अने वीश वर्षनुं पुरुषनुं परमायु समजवुं एम कह्युं छे.

वैताढ्यपर्वतनी समीपमां आ बाजु गंगानदीना बंने तटउपर नव नव बिलो होय छे अने सिंधुना किनाराउपर पण ते ज प्रमाणे नव नव बिल होय छे. (१०) ए रीते कुल ३६ बिलमां भरतना दक्षिणार्धमां रहेनारा मनुष्यो तेम ज पशु, पक्षी, घो अने सर्पादि रहे छे. (११) वैताढ्यनी बीजी बाजु (उत्तर तरफ) गंगा ने सिंधुना बंने किनारे मळीने छत्रीश बिलो छे. तेमां उत्तर बाजुना मनुष्यो ने तिर्यंचो रहे छे. (१२) आ प्रमाणे कुल ७२ बिलो दशे क्षेत्रोमां होय छे. तेमां सर्व जीवो बीजमात्र रहे छे. (१३) ते वखते गंगा ने सिंधुनो जळप्रवाह रथना पैडाना मध्य भाग जेटलो (वचली धरी डूबे एटलो) उंडो अने रथना मार्ग (चीला) जेटलो पहोळो होय छे. (१४) तेटलुं पण ते नदीनुं पाणी घणा मत्स्य कच्छप विगेरेथी व्याप्त होय छे, कादववाळुं होय छे अने घणा जीवोवाळुं ने अल्प जळवाळुं होय छे. (१५) अहीं शिष्य प्रश्न करे छे के–"क्षुल्लहिमवतादि पर्वतमां आराओनी परावृत्ति असर करती नथी तो तेमांथी उत्पन्न थयेली गंगाविगेरे नदी-

कथमेतासां विघटेन न नित्यता ॥ १७ ॥ अत्रोच्यते—हिमवत्पर्वतो-त्थस्य हानिर्न स्यान्मनागपि । गंगादीनां प्रवाहस्य स्वकुंडनिर्गमावधि ॥ १८ ॥ ततः परं त्वेष यथा शुभकालानुभावतः । नद्यंतरसहस्रानु-षं-गेण वर्द्धते क्रमात् ॥ १९ ॥ तथा नद्यंतराऽसंगा—द्भूरितापात्तथा क्षितेः। शुष्यत्यपि प्रवाहोऽयं दुष्टकालानुभावतः ॥ २० ॥ पद्मादिह्रदनिर्गच्छ—त्प्र-वाहापेक्षयैव च । स्याच्छाश्वतत्वमेतासां ततो युक्तं यथोदितं ॥ २१ ॥ चतुर्भिः कलापकं ।

निवसंति मनुष्यास्ते प्रागुक्तेषु बिलेष्वथ । भीष्मेषु घोरध्वांतेषु स्तेनाः कारागृहेष्विव ॥ २२ ॥ कृताऽकार्या इव बहि—स्तेऽहि नागंतु-मीशते । गोपतेरुग्रप्रतापस्य करसंतापभीरवः ॥ २३ ॥ निशायामपि नेशा-स्ते निर्गंतुं बिलतो बहिः । असह्यं ददतो जाड्यं विधोर्भीता निशाचरात् ॥ २४ ॥ रजनी गतचंद्रापि निशाचरवधूरिव । भवेत्प्राणोपघाताय तेषां शीनार्त्तिवेपिनां ॥ २५ ॥ ततः प्रातः प्रदोषे च नात्युष्णे नातिशीतले।

ओनी छठ्ठा आरामां हानि केम थाय छे ? वळी जो ए प्रमाणे होय तो तेमनी नित्यतामां दोष केम न कहेवाय? "(१६–१७) तेने उत्तर आपे छे के—"हिमवत पर्वतमांथी नीकळे छे त्यांथी ते तेना प्रपातकुंडमांथी नीकळे छे त्यां सुधी गंगानदीविगेरेना प्रवाहमां किंचित् पण हानि थती नथी. (१८) त्यारपछी ते प्रवाह जेम शुभकाळानुभावथी बीजी हजारो नदीनो प्रवाह मळवाथी अनुक्रमे वधतो जाय छे (१९) तेम दुष्टकाळा-नुभावथी बीजी नदीओनो प्रवाह न मळवाथी अने पृथ्वीना अत्यंत तापथी आ प्रवाह सुकाय पण छे. (२०) पद्मादिद्रहमांथी नीकळता प्रवाहनी अपेक्षाए ज ते नदीओनुं शाश्वतपणुं छे तेथी जे कहेवामां आवेल छे ते युक्त ज छे. " (२१)

ते काळना मनुष्यो पूर्वे कह्या ते बिलो के जे भयंकर अने घोर अंधकारवाळा होय छे, तेमां जेम चोर कारागृहमां (बंदीखानामां) रहे तेम रहे छे. (२२) अकार्य करनार मनुष्यनी जेम तेओ प्रचंड तापवाळा सूर्यना किरणोना संतापथी भय पाम्या सता दिवसे पण बहार नीकळी शकता नथी. (२३) रात्रे पण असह्य जडताने आपनारा निशाचर एवा चंद्रथी भय पाम्या सता बिलनी बहार नीकळी शकता नथी. (२४) चंद्रविनानी रात्री पण शीतथी धृजता एवा तेओने निशाचरनी वधूनी जेम प्राणघात माटे थाय छे. (२५) तेथी प्रभाते अथवा प्रदोष समये (सांजे) ज्यारे अति उष्णता के अति शीत-

निर्गच्छंति बिलेभ्यस्ते शृगाला इव भीलवः ॥ २६ ॥ उपेत्य गंगासिंधुभ्यो गृहीत्वा मत्स्यकच्छपान् । स्थले क्षिपंति पाकार्थं सद्यस्का दुर्जरा हि ते ॥ २७ ॥ दिवा तरणितापेन रात्रौ शैत्येन भूयसा । तेषामाहारयोग्याः स्युः क्वथिता नीरसाश्च ते ॥ २८ ॥ मंदाल्पजठराग्नीना–मपक्वाः सरसाश्च ते । न जीर्यंतेऽग्न्यभावाच्च तेषां पाकोऽप्यसंभवी ॥ २९ ॥ आदाय पूर्वनिक्षिप्तान् प्सांति ते मत्स्यकच्छपान् । भविष्यद्भोजनार्थं च निक्षिपंति पुनर्नवान् ॥ ३० ॥ जीविका स्यात्सदाप्येषां यदेवं पापसाधनं । स्युस्तिर्यंचो नारकाश्च प्रायस्तत्तेऽपि पापिनः ॥ ३१ ॥ सूत्रे च प्रायःशब्दोक्तेः क्षुद्रान्नकृतजीविकः । अक्लिष्टाध्यवसायश्च कश्चित्स्वर्गेऽपि गच्छति ॥ ३२ ॥ तथाहुः–' ओसण्णमंसाहारा मच्छाहारा खुड्डाहारा ' इत्यादि. तथा ' ओसण्णं णरगतिरिक्खजोणिएसु उववज्जिहिंति त्ति श्रीजंबू० प्र० सूत्रे.

तदा षड्वर्षवयसो गरभं दधते स्त्रियः । सकृच्छ्रं सुवतेऽभीक्ष्ण–

ळता न होय त्यारे बीकण शियाळनी जेम तेओ बिलनी बहार नीकळे छे. (२६) बहार नीकळीने गंगा–सिंधुमांथी मत्स्यो ने कच्छपोने ग्रहण करी तेने पकववा माटे स्थळउपर नाखे छे, कारण के तरतना काढेला ते तेमने पचता नथी. (२७) दिवसे सूर्यना तापथी ने रात्रे अत्यंत शीतथी कोही गयेला ने नीरस थयेला ते मत्स्यादि तेमने खावा योग्य थाय छे. (२८) मंद ने अल्प जठराग्निवाळा तेओने अपक्व ने सरस एवा मत्स्यादि पचता नथी, तेम अग्निनो अभाव होवाथी तेने पकववानो पण असंभव छे. (२९) पूर्वे जमीनमां नाखेला (दाटेला) मत्स्यने तथा कच्छपोने काढी लइने तेओ खाय छे अने आगळ खावा माटे बीजा पाछा तेमां नाखे छे (दाटे छे). (३०) निरंतर आ प्रमाणे जे पापने साधनारी तेमनी आजीविका छे तेथी एवा पाप करनारा तेओ पण प्रायः नारकी ने तिर्यंचो थाय छे. (३१) सूत्रमां प्रायः शब्द होवाथी तेमांना कोइक मनुष्यो क्षुद्रान्नवडे जीविका करनारा अने अक्लिष्ट अध्यवसायवाळा होय ते स्वर्गे पण जाय छे. (३२) तथाहुः– प्राये मांसाहारी, मच्छाहारी, क्षुद्रान्नाहारी, इत्यादि, तथा प्राये नरक तिर्यग्योनिमां उपजे छे. आ प्रमाणे श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रमां कह्युं छे.–

ते वखते छ वर्षनी स्त्री गर्भ धारण करे छे, घणा कष्टसाथे प्रसवे छे अने वारंवार

अपत्यानि बहूनि ताः ॥ ३३ ॥ बहुभिः पुत्रपौत्राद्यैः क्लिश्यंतेऽल्पायुषोऽपि ते । पापिनः पापिभिर्बाल-विट्चरैर्विट्चरा इव ॥ ३४ ॥ यूकामत्कुण-लिक्षाद्या येऽप्यमी क्षुद्रजंतवः । तुदंति तेऽपि दुष्टास्ता-नजीर्णान्नान् गदा इव ॥ ३५ ॥

एवं षष्ठेऽरके पूर्णे संपूर्येतावसर्पिणी । उत्सर्पिणी प्रविशति ततोऽमुष्या विलक्षणा ॥ ३६ ॥ आरंभसमये योऽय-मुत्सर्पिण्या भवेदिह । पंचदशानां कालानां स एवादिक्षणो भवेत् ॥ ३७ ॥ ते चामी-आवल्या १ नप्राण २-स्तोक ३ लव ४ मुहूर्त्त ५ दिन ६ निशाः ७ करणं ८ । नक्षत्र ९ पक्ष १० मास ११-र्त्वय १२ नानि च १३ हायन १४ युगं १५ च ॥ ३८ ॥ यद्यपि ग्रंथांतरे ऋतोराषाढादित्वेन कथनादत्र श्रावणमासे ऋतोरारंभो न घटते, तथापि भगवतीवृत्त्युक्तस्य ऋतौ श्रावणादिपक्षस्याश्रयणान्न दोष इति जंबू० प्र० वृ० । एवं च-नभःश्यामप्रतिपदि करणे बालवाभिधे । उत्सर्पिणी प्रविशति नक्षत्रेऽभिजिदाह्वये ॥ ३९ ॥ तदैव

गर्भ धारण करवाथी घणा अपत्योवाळी ते होय छे. (३३) अल्पायुषी छतां ते पापीओ पापी एवा पुत्रपौत्रादिकवडे भुंडना बच्चांओवडे भुंडोनी जेम पीडाय छे-क्लेश पामे छे. (३४) जेने अन्न जरतुं न होय तेने जेम व्याधिओ हेरान करे तेम जू, माकड, लीख विगेरे क्षुद्र जंतुओ दुष्ट एवा तेओने घणा हेरान करे छे. (३५)

आ प्रमाणे छठो आरो पूर्ण थये सते आ अवसर्पिणी पूर्ण थाय छे. त्यारपछी एनाथी विलक्षण एवी उत्सर्पिणी प्रवेश करे छे. (३६) आ उत्सर्पिणीना आरंभ समये जे समय होय छे ते काळना पंदर प्रकारना प्रारंभनो आदि क्षण कहेवाय छे. (३७) काळना १५ प्रकार आ प्रमाणे—१ आवळी, २ आनप्राण, ३ स्तोक, ४ लव, ५ मुहूर्त, ६ दिन, ७ निशा, ८ करण, ९ नक्षत्र, १० पक्ष, ११ मास, १२ ऋतु, १३ अयन, १४ हायन (वर्ष), १५ युग. (३८) जो के ग्रंथांतरमां ऋतुनी शरुआत अषाडथी थती होवाथी अहीं श्रावण मासे ऋतुनो आरंभ घटशे नहीं, तथापि श्री भगवतीनी वृत्तिमां कहेली ऋतुमां श्रावणादिपक्षनो आश्रय करेलो होवाथी दोष नथी. एम श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्ति वृत्तिमां कह्युं छे. तेथी करीने श्रावणमासनी कृष्ण प्रतिपदाए अने बालव करणे तेम ज अभिजित् नक्षत्रे उत्सर्पिणीनो प्रवेश थाय छे. (३९) ते ज वखते दुष्षमदुष्षमा नामनो उत्सर्पिणीनो

च प्रविशति दुष्षमदुष्षमाभिधः। अरकः प्रथमोऽमुष्या उत्सर्पिण्या मुखाधमः ॥ ४० ॥ अस्मिन् सर्वपदार्थानां वर्णगंधादिपर्यवाः। क्षणे क्षणे विवर्द्धते प्रभृति प्रथमक्षणात् ॥ ४१ ॥ प्राग्भावितोऽवसर्पिण्यां यथानंतगुणक्षयः। वर्णादीनामुपचयो भाव्योऽत्रानुक्षणं तथा ॥ ४२ ॥ मनुजाः प्राग्वदत्रापि बिलवासिन एव ते। आयुर्देहादिपर्यायैः किंतु वर्द्धिष्णवः क्रमात् ॥ ४३ ॥ प्रथमं षोडशाब्दानि जनानामिह जीवितं। वर्षाणि विंशतिं चांते वर्द्धमानं शनैः शनैः ॥ ४४ ॥ एकहस्तोच्चवपुषः प्रथमं मनुजा इह। वर्द्धमानाः क्रमादंते भवंति द्विकरोच्छ्रिताः ॥ ४५ ॥ आहारादिस्वरूपं तु तेषामत्रापि पूर्ववत्। प्रयांति दुर्गतावेव मांसाहारा अमी अपि ॥ ४६ ॥

एवमाद्येऽरके पूर्णे द्वितीयः प्रविशत्यरः। दुःषमाख्यः प्रातिलोम्या—त्प्रागुक्तदुष्षमोपमः ॥ ४७ ॥ प्रथमे समयेऽथास्य पुष्करावर्त्तवारिदः। प्रादुर्भवेन्महीमाश्वा—सयन्नर्हन्निवामृतैः ॥ ४८ ॥ पुष्करं नाम शस्तांबु

पहेलो आरो पण प्रारंभमां अधम एवो प्रवेश पामे छे. (४०) आ काळमां सर्व पदार्थोना वर्णगंधादिपर्यव आदिना प्रथम क्षणथी क्षणे क्षणे वृद्धि पामे छे. (४१) पूर्वे अवसर्पिणीमां जेम अनंत गुण क्षय कह्यो हतो तेम उत्सर्पिणीमां प्रतिक्षणे वर्णादिकनो उपचय पण अनंतगुणो समजवो. (४२) मनुष्यो आ आरामां पण पूर्वनी जेम बिलमां रहेनारा ज होय छे. पण आयुदेहादि पर्यवोवडे क्रमसर वृद्धि पामनारा होय छे. (४३) प्रारंभमां १६ वर्षनुं मनुष्योनुं आयुष्य होय छे ते अनुक्रमे वधतुं वधतुं वीश वर्षनुं थाय छे. (४४) अने प्रारंभमां मनुष्योनुं शरीर एक हाथनुं होय छे ते अनुक्रमे वधतुं वधतुं आ आराने अंते बे हाथनुं थाय छे. (४५) आहारादिनुं स्वरूप तो तेमनुं आ आरामां पण पूर्वनी जेम ज (छट्ठा आरानी जेम ज) होय छे अने मांसाहारी एवा ते आराना मनुष्यो पण दुर्गतिमां ज जाय छे. (४६)

ए प्रमाणे पहेलो आरो पूर्ण थये सते बीजो दुष्षमा नामे आरो प्रवेश करे छे. ते प्रतिलोमपणाथी पूर्वे कही गयेला दुष्षमा आरा जेवो ज होय छे. (४७) आ आराने प्रथम समये अरिहंतनी जेम अमृत समान देशना जेवा जळवडे पृथ्वीने आश्वासन आपतो सतो पुष्करावर्त मेघ प्रगट थाय छे. (४८) पुष्कर एटले प्रशस्त एवुं जळ तेनावडे आवृत्ति पमाडे

तेनावर्त्तयति क्षितेः । संहरत्यशुभावस्थां पुष्करावर्त्तकस्ततः ॥ ४९ ॥ स-
त्क्षेत्रप्रमाणः स्या–द्विष्कंभायामतः स च । तीव्रार्कतापच्छेदाय चंद्रो-
दय इव क्षितेः ॥ ५० ॥ क्षणात्क्षेत्रमभिव्याप्य सर्वं स मृदु गर्जति ।
सांत्वयन्निव भूलोकं दुष्टमेघैरुपद्रुतं ॥ ५१ ॥ स चाभितः प्रथयति
विद्युतो द्युतिमालिनीः । शुभकालप्रवेशार्हा इव मंगलदीपिकाः ॥ ५२ ॥
मुशलस्थूलधाराभिः स च वर्षन् दिवानिशं । निर्वापयति भूपीठं स्वादु-
स्वच्छहितोदकः ॥ ५३ ॥ स सप्तभिरहोरात्रै–रंतः स्नेहामृतार्द्रितां ।
क्ष्मां कुर्याच्छांतसंतापां प्राणेश इव वल्लभां ॥ ५४ ॥ ततस्तस्मिन्नुपरते
पुष्करावर्त्तकांबुदे । प्राप्तवार इव प्रादु–र्भवति क्षीरवारिदः ॥ ५५ ॥
सप्त प्राग्वदहोरात्रान् सोऽपि वर्षन् दिवानिशं । चारुगोक्षीरतुल्यांबु–र्वर्णा-
दीन् जनयेत्क्षितौ ॥ ५६ ॥ क्षीराब्दे विरते तस्मिन् घृतमेघो घृतोदकः
सप्त वर्षन्नहोरात्रान् स्नेहं जनयति क्षितेः ॥ ५७ ॥ अहोरात्रांस्ततः सप्त
वर्षन्नमृतवारिदः । नानौषधीर्जनयति नानावृक्षलतांकुरान् ॥ ५८ ॥ रस-

---

छे–पृथ्वीनी अशुभावस्थाने संहरे छे तेथी ते पुष्करावर्त कहेवाय छे. (४९) ते मेघ विष्कंभ ने आयामथी ते ते क्षेत्र प्रमाण अने पृथ्वीने लागेला तीव्र सूर्यना तापना छेदने माटे (तपेली जमीनने शांत करवा माटे) चंद्रना उदय जेवा होय छे. (५०) अने ते मेघ प्रथमना दुष्ट मेघोए उपद्रवित करेली पृथ्वीने जाणे शांत करतो होय तेम क्षणमात्रमां आखा क्षेत्रमां व्यापीने मृदुगर्जारव करे छे. (५१) अने शुभकाळना प्रवेशने योग्य जाणे मंगळदीपिका होय तेवी कांतियुक्त वीजळीओने चोतरफ विस्तारे छे. (वधे चमकारा करे छे.) (५२) रात्र–दिवस मुशल जेवी स्थूळधारावडे वरसतो ते वरसाद स्वादु, स्वच्छ ने हितकारी जळने वरसतो बधी जमीनने शांत करी दे छे. (५३) ए प्रमाणे सात अहोरात्र वरसवाथी प्राणेश जेम वल्लभाने शांत संतापवाळी करे तेम सर्व पृथ्वीने अंतःस्नेहामृतवडे आर्द्र करे छे. (५४) त्यारपछी ते पुष्करावर्त मेघ उपरत थये सते पोतानो वारो आव्यो होय तेम क्षीरनो मेघ प्रादुर्भाव पामे छे. (५५) ते वरसाद पण पूर्वना वरसादनी जेम सात अहोरात्रसुधी सतत वरसे छे अने ते पृथ्वीने सुंदर गोक्षीरना वर्ण सरखा जळथी वर्ण, गंध, रस ने स्पर्शवाळी करे छे. (५६) ते क्षीरमेघ विराम पामे सते घृतमेघ घृतोदकने सात अहोरात्र सुधी सतत वरसावे छे अने ते पृथ्वीमां स्नेहने (स्निग्धताने) उत्पन्न करे छे. (५७) त्यारपछी अमृतमेघ अमृत जळने सात अहोरात्रसुधी सतत वरसावे छे ते नाना प्रकारनी औषधिओने तेम ज नाना प्रकारना वृक्ष ने लताना अंकुराने उत्पन्न करे छे. (५८) त्यारपछी रसमेघ सात अहो-

मेघस्ततः सप्ता–होरात्रान् सुरसोदकः । वनस्पतिषु तिक्तादीन् जनयेत्पंचधा रसान् ॥ ५९ ॥ पंचानामेव भेदानां यद्रसेषु विवक्षणं । तल्लवणमधुरयो–रभेदस्य विवक्षया ॥ ६० ॥ माधुर्यरससंसर्गो लवणे स्फुटमीक्ष्यते । स्वादुत्वं लवणक्षेपे भवेत्सर्वरसेषु यत् ॥ ६१ ॥ अत्युत्तमा अमी मेघाः पुष्करावर्त्तकादयः । जनयंति जगत्स्वस्थं पंचेव परमेष्ठिनः ॥६२॥ आद्योऽत्र शमयेद्दाहं द्वितीयो जनयेच्छुभान् । वर्णगंधरसस्पर्शान् भुवः स्नेहं तृतीयकः ॥ ६३ ॥ तुर्यो वनस्पतीन् सर्वान् पंचमस्तद्गतान् रसान्। आहुः प्रयोजनान्येवं पंचानामप्यनुक्रमात् ॥ ६४ ॥

ततः क्रमाद्भवेद्भूमि–र्भूरिभिर्नवपल्लवैः । वृक्षगुच्छलतागुल्म–तृणादिभिरलंकृता ॥ ६५ ॥ तदा प्रसन्ना तृप्ता च भूमिर्भाति नवांकुरा । रोमांचितेव भूयिष्ठ–कालेन कृतपारणा ॥ ६६ ॥ प्राप्तधातुक्षया शुष्का या मृतेवाभवन्मही । सा पुनर्यौवनं प्रापि तत्कालेन रसायनैः ॥ ६७ ॥ मनोरमां सुखस्पर्शां प्रोत्फुल्लद्रुममंडितां । तदा विलोक्य ते भूमिं मोदंते

रात्र सुधी सुरसोदक वरसावे छे. ते वनस्पतिओमां तिक्तादि पांच प्रकारना रसने उत्पन्न करे छे. (५९) अहीं जे पांच रस कह्या छे ते लवण ने मधुररसना अभेदनी विवक्षाथी कह्या छे. (६०) कारण के माधुर्य रसनो संसर्ग लवणने विषे प्रगट देखाय छे. सर्व रसमां लवणना क्षेपनथी स्वादुपणुं थाय छे. (६१) आ पुष्करावर्त विगेरे मेघ अत्युत्तम छे. ते पंचपरमेष्ठिनी जेम जगतनी स्वस्थताने उत्पन्न करे छे. (६२) एमां प्रथमनो मेघ दाहने शमावे छे, बीजो मेघ शुभ एवा वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, उत्पन्न करे छे, त्रीजो मेघ जमीनमां स्निग्धता लावे छे, चोथो मेघ सर्व वनस्पतिओ उत्पन्न करे छे अने पांचमो मेघ तद्गतरसने उपजावे छे. ए प्रमाणे पांचे प्रकारना मेघना अनुक्रमे प्रयोजन कहेल छे. (६३–६४)

त्यारपछी अनुक्रमे जमीन घणा नवपल्लववाळा वृक्ष, गुच्छ, लता, गुल्म ने तृणादिवडे अलंकृत थाय छे. (६५) ते वखते जमीन प्रसन्न, तृप्त, नवा अंकुरावाळी, रोमांचित थयेल होय तेवी अने घणे काळे पारणुं करेल होय तेवी थाय छे. (६६) जे पृथ्वी धातुक्षयने पामेली, शुष्क अने मरण पामेला जेवी देखाती हती ते सारा वखतमां रसायणवडे नवुं यौवन पामती होय तेवी देखाय छे. (६७) ते वखते मनोरम, सुख स्पर्शवाळी,

बिलवासिनः ।।६८।। ततो बिलेभ्यस्ते मातृ–गर्भेभ्य इव निर्गताः । अपूर्वमिव पश्यंति विश्वं प्राप्तमहासुखाः ॥ ६९ ॥ गणशस्तेऽथ संभूय वदंत्येवं परस्परं । जातो भोः सुखकृत्कालो रमणीयं च भूतलं ॥ ७० ॥ वनस्पतिभिरेभिश्च दलपुष्पफलांचितैः । मधुरैः पावनैः पथ्यै–राहारो नो भवत्वथ ॥ ७१ ॥ अतः परं च यः कोऽपि मत्स्यकूर्मादिजांगलैः । करिष्यत्यशुभैर्वृत्तिं स पापोऽस्मद्गणा हिः ॥ ७२ ॥ तस्य नामापि न ग्राह्यं वीक्षणीयं मुखं न च । छायाप्यस्य परित्याज्या दूरेंगस्पर्शनादिकं ।।७३।। इति व्यवस्थां संस्थाप्य ते रमंते यथासुखं । भूतलेऽलंकृते विष्वग् रम्यैस्तृणलतादिभिः ॥ ७४ ॥ कुतश्चित्पुरुषात्तेऽथ जातिस्मृत्यादिशालिनः । क्षेत्राधिष्ठातृदेवाद्वा कालानुभावतोऽपि च ॥ ७५ ॥ ते जनाः प्राप्तनैपुण्या व्यवस्थामपरामपि । कुर्वंति नगरग्राम–निकायरचनादिकां ॥ ७६ ॥ अन्नपाकांगसंस्कार– वस्त्रालंकरणान्यपि । विवाहराजनीत्यादि क्रमात्सर्वं प्रवर्त्तते ॥ ७७ ॥ तथोक्तं जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्तौ एतदरकवर्णने–

विकस्वर वृक्षोथी मंडित एवी ते भूमिने जोइने बिलवासी मनुष्यो हर्ष पामे छे. (६८) तेथी बिलमांथी माताना गर्भमांथी नीकळे तेम नीकळीने महासुखने पामेला तेओ अपूर्व एवा विश्वने जोता होय तेम चमत्कार पामे छे. (६९) पछी तेओ समुदायमां एकठा थइने परस्पर कहेवा लागे छे के–" अरे भाइओ ! सुखकारी काळ थवाथी भूतळ रमणीक थयेल छे. (७०) हवे आपणो आहार पत्र पुष्प ने फळवाळी अने मधुर पावन अने पथ्य एवी आ औषधिओवडे थाओ. (७१) हवे पछी जे कोइ मत्स्य कूर्मादिना मांसादि अशुभ पदार्थवडे वृत्ति करशे (खाशे) ते पापीने अमारा समूहमांथी बहार समजवो. (७२) तेनुं नाम पण न लेवुं. तेनुं मुख पण न जोवुं. तेनी छाया पण तजवी तो पछी अंगस्पर्शनादिकनी वात तो दूर ज जाणवी." (७३) आ प्रमाणे व्यवस्था स्थापन करीने तेओ सुंदर एवा तृण ने लतादिवडे अलंकृत एवी पृथ्वीपर सुख उपजे तेम रमवा (रहेवा) लागे छे. (७४) त्यारपछी तेमांथी कोइक जातिस्मरणवाळा मनुष्यथी अथवा क्षेत्रना अधिष्ठायक देवना कथनथी अने काळना अनुभावथी ते लोको निपुणता प्राप्त करीने नगर ग्राम विगेरेनी बीजी व्यवस्थाओ पण करे छे. (७५–७६) अने ते ज रीते अन्ननो पाक, अंगनो संस्कार अने वस्त्रालंकारो तेम ज विवाह ने राजनीति विगेरे बधुं अनुक्रमे प्रवर्ते छे. (७७) श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिनी वृत्तिमां ए आराना वर्णनमां कह्युं छे के–" बीजे

द्वितीयारे पुरादिनिवेशराजनीतिव्यवस्थादिकृज्जातिस्मारकादिपुरुषद्वारा वा क्षेत्राधिष्ठायकदेवप्रयोगेण वा कालानुभावजनितनैपुण्येन वा तस्य सुसंभवत्वादिति. कालसप्ततौ तु-द्वितीयारके नगरादिस्थितिकारिणः कुलकरा भवंतीत्युक्तं। तथाहि-"बीए उ पुराइकरो जाइसरो विमलवाहन १ सुदामो २। संगम ३ सुपास ४ दत्तो ५ सुमुह ६ सुमई ७ कुलगरत्ति ॥ १ ॥" स्थानांगसप्तमस्थानेऽप्युक्तं-"भरहे वासे आगमेस्साए ओसप्पिणीए सत्त कुलकरा भविस्संति, तं जहा-मित्तवाहणे १ सुभोमे २ य सुप्पभे ३ य सयंपभे ४। दत्ते ५ सुहुमे ६ सुबंधू ७ य आगमेसाण होक्खत्ति ॥ १ ॥

षट् संस्थानानि ते दध्युः क्रमात्संहननानि च। यांति कर्मानुसारेण जना गतिचतुष्टये ॥७८॥ उत्कर्षादरकस्यादौ ते विंशत्यब्दजीविनः। अंते च त्रिंशदधिक-शतवर्षायुषो जनाः॥ ७९ ॥ आदौ स्युर्द्विकरोत्तुंग-वपुषस्ते ततः क्रमात्। वर्द्धमानोच्छ्रया अंते सप्तहस्तसमुच्छ्रिताः ॥८०॥ वर्णगंधरसस्पर्श-जीवितोच्चत्वपर्ययैः। वर्द्धमानैर्वर्द्धमानैः पूर्णेऽस्मिन्

आरे नगरादिनुं वसाववुं तथा राजनीतिसंबंधी व्यवस्थादि करनार जातिस्मारकादि[1] पुरुषद्वारा अथवा क्षेत्राधिष्ठायक देवना प्रयोगथी अथवा कालानुभावजनितनिपुणताथी तेनो सारी रीते थवानो संभव छे." कालसप्ततिमां तो बीजे आरे नगरादि स्थितिना करनारा कुलकरो थशे एम कह्युं छे. ते आ प्रमाणे-"बीजे आरे नगरादि करनारा जातिस्मरणवाळा विमलवाहन १, सुदाम २, संगम ३, सुवास ४, दत्त ५, सुमुख ६ ने सुमति ७ ए कुलकरो जाणवा" (१) श्री स्थानांगसूत्रना सातमा स्थानमां पण कह्युं छे के-"भरतक्षेत्रमां आवती उत्सर्पिणीमां सात कुलकरो थशे. १ मित्तवाहन, २ सुभूम, ३ सुप्रभ, ४ स्वयंप्रभ, ५ दत्त, ६ सुधर्म ने ७ सुबंधु-आ प्रमाणे आगामी काळे थशे." (२)

ते काळना मनुष्यो अनुक्रमे छए संस्थानना अने छए संघयणना धारण करनारा तेम ज कर्मानुसारे चारे गतिमां जनारा थाय छे. (७८) उत्कृष्टथी ते आरानी आदिमां वीश वर्षना आयुवाळा अने अंते एक सो त्रीश वर्षना आयुवाळा जनो थशे. (७९) प्रारंभमां बे हाथ उंचा शरीरवाळा अने अनुक्रमे वृद्धि पामता ते आराने अंते सात हाथनी ऊंचाइवाळा मनुष्यो होय छे. (८०) वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, जीवित, उच्चत्व विगेरे पर्यवोवडे

---

१ जेने जातिस्मरण ज्ञान थयुं छे तेवा

दुष्षमारके ॥ ८१ ॥ तृतीयोऽरः प्रविशति दुःषमसुषमाभिधः । स प्रातिलो-
म्यात्पूर्वोक्त—चतुर्थारकसन्निभः ॥ ८२ ॥

तृतीयस्यारकस्य पक्षेषु गतेषु प्रथमक्षणात् । एकोननवतावाद्य—जिनो-
त्पत्तिः प्रजायते ॥ ८३ ॥ तथाहुः—कालदुगे तिचउत्था—रएसु एगूणनव-
इपक्खेसु । सेसगएसु सिज्झंति हुंति पढमंतिमजिणंदा ॥ ८४ ॥ एषोऽ-
वसर्पिणीजात—चतुर्विंशजिनोपमः । प्रायोंगमानवर्णायुः—कांतिप्रभृतिपर्यवैः
॥ ८५ ॥ इत्युत्सर्पिण्यवसर्पि—ण्यर्हच्चक्र्यादयोऽखिलाः । प्रातिलोम्या-
नुलोम्याभ्यां भाव्यास्तुल्या मनीषिभिः ॥ ८६ ॥ मिथोंतरं तावदेव
यस्योत्पत्तिर्यदोदिता । शेषेऽरकेऽवसर्पिण्यां सोत्सर्पिण्यां गतेऽरके ॥८७॥
गतेऽरकेऽवसर्पिण्यां यस्योत्पत्तिर्यदोदिता । शेषेऽरके सोत्सर्पिण्यां स्वयं
भाव्या विवेकिभिः ॥ ८८ ॥

त्रयोविंशतिरर्हंत—स्तथैकादश चक्रिणः । अरकेऽस्मिन् भवंत्येवं सर्वे-
ऽपि केशवादयः ॥ ८९ ॥ आयुरब्दशतं त्रिंश—मादावत्रांगिनां भवेत् ।

वधता वधता ए दुष्षम आरक पूर्ण थये सते त्रीजो आरो दुष्पमसुषम नामनो प्रवेश पामे छे. ते प्रतिलोमपणे पूर्वे कहेला अवसर्पिणीना चोथा आरा जेवो होय छे. (८१–८२)

आ आराना प्रथम क्षणथी नेव्याशी पक्षो गये सते प्रथम जिननी उत्पत्ति थाय छे. (८३) कह्युं छे के–बंने प्रकारना काळमां त्रीजा ने चोथा आराना नेव्याशी पक्षो गये सते ने रह्ये सते पहेला ने छेल्ला जिनेंद्र सिद्धि पामे छे ने नवा थाय छे. (८४) आ प्रथम तीर्थंकर अवसर्पिणीगत चोवीशमा प्रभुसरखा अंगमान, वर्ण, आयु, कांति विगेरे पर्यवोमां प्राये समान होय छे. (८५) ए प्रमाणे उत्सर्पिणी ने अवसर्पिणीमां अरिहंत ने चक्री विगेरे बधा शलाकापुरुषोने प्रातिलोम्ये ने आनुलोम्ये करीने बुद्धिमानोए जाणी लेवा. (८६) एक बीजा अरिहंतादि वच्चेनुं अंतर पण तेटलुं ज समजवुं. जे जे प्रभुनी उत्पत्ति अवसर्पिणीमां जे आरो बाकी रह्ये सते कहेली छे ते ज प्रमाणे उत्सर्पिणीमां ते प्रभुनी उत्पत्ति तेटलो आरो गये सते समजवी. (८७) अवसर्पिणीमां जे प्रभुनी उत्पत्ति जेटलो आरो गये सते कही छे तेमनी उत्पत्ति उत्सर्पिणीमां तेटलो आरो बाकी रह्ये सते विवेकीओए पोतानी मेळे भाववी—समजवी. (८८)

त्रेवीश अरिहंतो ने अग्यार चक्रवर्ती तथा सर्व वासुदेव विगेरे आ त्रीजा आरामां थशे. (८९) आ आराना प्रारंभमां १३० वर्षनुं आयु अने धीमे धीमे वधतुं वधतुं अंते

पूर्वकोटिमितं चांते वर्द्धमानं शनैः शनैः ॥ ९० ॥ आदौ स्युः सप्तहस्तोच्च–वपुषो मनुजास्ततः। वर्द्धमानाः पंचचाप–शतोच्चांगाः स्मृताः श्रुते ॥ ९१ ॥

एवं पूर्णे तृतीयेऽरे चतुर्थः प्रविशत्यरः। स प्राक्तनतृतीयाभः सुषमदुष्षमाभिधः ॥ ९२ ॥ एकोननवतौ पक्षे–ष्वतीतेष्वादिमक्षणात्। चतुर्विंशस्यार्हतोऽस्मि–न्नुत्पत्तिः स्याज्जिनेशितुः ॥ ९३ ॥ अरकेऽस्मिन् भवत्येवं द्वादशश्चक्रवर्त्यपि। तत्पद्धतिस्तु सर्वापि विज्ञेया पूर्ववर्णिता ॥ ९४ ॥ उत्सर्पिण्यां स्युस्त्रिषष्टिः शलाकापुरुषा इति। दशक्षेत्र्यां तृतीयारे तुर्याऽराद्यांशसंयुते ॥ ९५ ॥ (एवं पंचमषष्ठारा–वपि भाव्यौ विपर्ययात्। पूर्वोदितावसर्पिण्या द्वितीयाद्यारकोपमौ ॥९६॥) उत्सर्पिण्यां यथैष्यंत्यां क्षेत्रेऽस्मिन् भरताभिधे। पद्मनाभाभिधः श्रीमान् प्रथमोऽर्हन् भविष्यति ॥ ९६ ॥

स च श्रेणिकराजस्य जीवः सीमंतकेऽधुना। नरके वर्त्तते रत्न–प्रभायां प्रथमक्षितौ ॥ ९७ ॥ स्थितिं स तत्र चतुर–शीतिवर्षसहस्रिकां।

क्रोड पूर्वनुं थशे. (९०) प्रारंभमां सात हाथ ऊंचा शरीरवाळा मनुष्यो थशे अने अनुक्रमे वधतां वधतां पांचशें धनुष्यनुं शरीर थशे एम श्रुतमां कह्युं छे. (९१)

आ प्रमाणे त्रीजो आरो पूर्ण थये सते चोथो आरो प्रवेश करशे ते पूर्वना त्रीजा आरा जेवो ने सुषमदुष्षमा नामनो थशे. (९२) ते आराना प्रथम क्षणथी ८९ पक्षो व्यतीत थये सते आ आरामां चोवीशमा प्रभुनी उत्पत्ति थशे. (९३) आ आरामां पूर्वनी रीते बारमा चक्रवर्ती पण थशे. तेनी पद्धति बधी पूर्वे कही गया प्रमाणे समजवी. (९४) ए प्रमाणे दशे क्षेत्रमां उत्सर्पिणीमां चोथा आराना आद्य अंश सहित त्रीजा आरामां त्रेसठ शलाकापुरुषो थाय छे. (९५) (ए प्रमाणे पांचमो—छठ्ठो आरो पण विपर्ययपणे समजवो. ते पूर्वे कहेल अवसर्पिणीना बीजा ने पहेला आरा समान समजवा)–(९६)

आवती उत्सर्पिणीमां आ भरत नामना क्षेत्रमां पद्मनाभ नामना श्रीमान् प्रथम अरिहंत थशे. (९६) ते श्रेणिक राजानो जीव अत्यारे रत्नप्रभा नामनी प्रथम पृथ्वीमां सीमंतक नामना नरकावासमां वर्ते छे. (९७) तेमनी स्थिति त्यां मध्यम एवी ८४००० वर्षथी

मध्यमारमनुभूयाब्दैः कियद्भिरधिकां ततः ॥ ९८ ॥ पादमूले भारतस्य वैताढ्यस्य महागिरेः । देशे दूरगतक्लेशे पांडुवर्द्धनसंज्ञके ॥ ९९ ॥ शतद्वाराभिधपुरे सुतरत्नं भविष्यति । सुमतेः कुलकरस्य भद्रास्त्रीकुक्षिसंभवः ॥ २०० ॥ श्रीवीरपद्मनाभयोरंतरं चैवं—चुलसीवाससहस्सा वासा सत्तेव पंच मासा य । वीरमहापउमाणं अंतरमेयं वियाणाहि ॥१॥ इति नंदीवृत्तौ. इदं वीरमहापद्मयोर्निर्वाणोत्पादयोरंतरं ज्ञेयं. श्रेणिकराजजीवस्य तु नरके किंचिदुक्तांतरकालादधिकमेवायुः संभवि, श्रेणिके मृते तु कियत्कालं वीरार्हत इह विहारात्तावतः कालस्य तदायुष्यधिकत्वादिति.

स चतुर्दशभिः स्वप्नैः सूचितः शक्रपूजितः । जनिष्यते दिने यस्मिन् तस्मिंस्तत्र पुरेऽभितः ॥ १ ॥ अंतर्बहिश्च पद्मानां रत्नानां चातिभूयसां । वृष्टिर्भविष्यति प्राज्या वारामिव तपात्यये ॥ २ ॥ ततः पित्रादयस्तस्य मुदिता द्वादशे दिने । करिष्यंति महापद्म इति नाम गुणानुगं ॥ ३ ॥ साधिकाष्टाब्दवयस—मथैनं सुमतिः पिता । स्थापयिष्यति राज्ये स्वे ततो

कांइक अधिक छे. तेने अनुभवीने (भोगवीने) भरतक्षेत्रमां आवेला वैताढ्य महागिरिना पादमूळमां जेमांथी क्लेश नाश पामेल छे एवा पांडुवर्धन नामना देशमां शतद्वार नामना नगरमां सुमति नामना कुलकरनी भद्रा नामनी स्त्रीनी कुक्षिथी पुत्ररत्नपणे उपजशे. (९८–२००) श्रीवीरप्रभु ने पद्मनाभनुं अंतर आ प्रमाणे—'८४ हजार वर्ष सात वर्ष ने पांच मासनुं वीरप्रभु ने महापद्म प्रभुनुं अंतर जाणवुं.' (१) इति नंदीवृत्तौ. आ अंतर वीरप्रभुना निर्वाण ने महापद्म प्रभुनी उत्पत्तिनुं जाणवुं, तेथी श्रेणिकराजाना जीवनुं नरकायु आ अंतर ध्यानमां लेतां ८४००० वर्षथी अधिक संभवे छे; केमके आ पांच वर्ष ने सात मासनुं तथा श्रेणिकराजाना मरण पछी केटलोक काळ वीरप्रभु विचर्या हता तेथी तेटला काळनुं तेना आयुष्यमां अधिकपणुं समजवुं.

ते चौद स्वप्नवडे सूचित अने इंद्रपूजित प्रभु जे दिवसे जन्मशे ते दिवसे ते नगरनी चोतरफ अंदर ने बहार अत्यंत पद्मोनी ने रत्नोनी वृष्टि ग्रीष्मऋतुसंबंधी ताप गया पछी पुष्कळ जळनी वृष्टि थाय तेवी थशे, (१–२) तेथी मातापिता विगेरे हर्ष पाम्या सता बारमे दिवसे महापद्म एवुं गुणनिष्पन्न नाम स्थापन करशे. (३) कांइक झाझेरी आठ वर्षनी वये सुमति पिता तेमने राज्यपर स्थापन करशे एटले ते राजा थशे. (४)

राजा भविष्यति ॥ ४ ॥ राज्यं पालयतस्तस्य शक्रस्येव महौजसः । देवौ महर्द्धिकावेस्य सेविष्येते पदद्वयं ॥ ५ ॥ यक्षाणां दाक्षिणात्यानां पूर्णभद्राभिधः प्रभुः । माणिभद्रश्चौत्तराह-यक्षाधीशः सुरेश्वरः ॥ ६ ॥ एतौ द्वावपि यक्षेंद्रौ प्रभोस्तस्य करिष्यतः । सेनान्याविव सैन्यस्य कार्यं शत्रुजयादिकं ॥ ७ ॥ सामंतादिस्ततस्तस्य श्रेष्ठिपौरजनादिकः । मिथः परिच्छदः सर्वः संभूयैवं वदिष्यति ॥ ८ ॥ अहो सुरेंद्रौ कुर्वाते अस्मा-स्माकं महीपतेः । सेनाकार्यं महाश्चर्य-पुण्यप्राग्भारशालिनः ॥ ९ ॥ महापद्मनृपस्याथ देवसेन इति स्फुटं । नामास्तु गुणनिष्पन्नं द्वितीयं रुचिरं ततः ॥ १० ॥ देवसेननृपस्याथ राज्यं पालयतः क्रमात्। उत्पत्स्यते हस्तिरत्नं चतुर्दंतं महोज्ज्वलं ॥ ११ ॥ शक्रमैरावणारूढ-मिव तं तेन हस्तिना । विचरंतं शतद्वार-पुरे वीक्ष्य जनाः समे ॥ १२ ॥ वदिष्यंति मिथस्ते य-द्देवसेनमहीपतेः । वाहनं विमलो हस्ती ततो विमलवाहनः ॥ १३ ॥ तृतीयमिति नामास्तु त्रिनामैवं भविष्यति । महापद्मो देवसेनो राजा विमलवाहनः ॥१४॥ एवं त्रिंशतमब्दानि राज्यं भुक्त्वा महाशयः ।

तेमने राज्य पाळता सता शक्रनी जेवा महापराक्रमी बे महर्द्धिक देवो आवीने तेमना चरणद्वयनी सेवा करशे. (५) दक्षिण बाजुनी यक्षनिकायना इंद्र पूर्णभद्र नामे अने उत्तर बाजुनी यक्षनिकायना इंद्र माणिभद्र नामे ए बंने यक्षेंद्रो ते प्रभुना सैन्यना सेनापतिनी जेम शत्रुनो जय करवानुं कार्य करशे. (६-७) ते वखते तेमना सामंतादिको अने श्रेष्ठि तेम ज पौरजनादिको अने सर्व परिवार अंदर अंदर एकठा थइने एम कहशे (८) के-' अहो ! अमारा आ महीपतिनुं सेनासंबंधी कार्य इंद्रो करे छे तेथी ते महा आश्चर्यकारी पुण्यना प्राग्भारवाळा जणाय छे, (९) तेथी ए महापद्मराजानुं देवसेन एवुं बीजुं गुणनिष्पन्न, सुंदर ने प्रगट एवुं नाम हो.' (१०) ए देवसेन राजाने राज्य पाळता सता अनुक्रमे चार दांतवाळो ने महाउज्वळ हस्तिरत्न उपजशे (प्राप्त थशे.) (११) शक्र जेम ऐरावत हस्तिपर आरुढ थाय तेम ते हस्तिपर आरुढ थइने शतद्वारपुरमां तेमने फरता जोइने सर्वे जनो अंदर अंदर कहेशे के-' देवसेन राजानुं वाहन विमळ हस्ति छे तेथी तेनुं विमळवाहन एवुं त्रीजुं नाम हो.' ए रीते तेमना महापद्म, देवसेन ने विमळवाहन-ए त्रण नाम थशे. (१२-१४) ए प्रमाणे त्रीश वर्षनी वय थतां सुधी राज्य भोगवीने ए

दानं दत्त्वाब्दिकं प्रौढो-त्सवैः स प्रव्रजिष्यति ॥ १५ ॥ द्वादशाब्दानि साद्धानि पक्षेणाभ्यधिकान्यथ । छद्मस्थत्वे तपः कृत्वा स केवलमवाप्स्यति ॥ १६ ॥ सप्रतिक्रमणो धर्मो यथा पंचमहाव्रतः । मुनीनां श्रावकाणां च द्वादशव्रतबंधुरः ॥ १७ ॥ महावीरेण जगदे जगदेकहितावहः । महापद्मोऽपि भगवांस्तथा सर्वं वदिष्यति ॥ १८ । युग्मं । अस्य प्रभोर्गणधरा एकादश गणा नव । श्रीवीरवद्भविष्यंति वर्णलक्ष्मोच्छ्रयाद्यपि ॥ १९ ॥ कल्याणकानां पंचानां तिथिमासदिनादिकं। श्रीवर्द्धमानवज्ज्ञावि पद्मनाभप्रभोरपि ॥ २० ॥ सार्द्धषण्मासहीनानि वर्षाणि त्रिंशतं च सः । पालयिष्यति सर्वज्ञ-पर्यायं सुरसेवितः ॥ २१ ॥ द्विचत्वारिंशदब्दानि श्रामण्यमनुभूय च । द्विसप्तत्यब्दसर्वायुः परमं पदमेष्यति ॥ २२ ॥

सुपार्श्वो वर्द्धमानस्य पितृव्यो यः प्रभोरभूत् । सूरदेवाभिधो भावी स द्वितीयो जिनोत्तमः ॥ २३ ॥ पोट्टिलस्य च यो जीवः स तृतीयो भविष्यति । सुपार्श्वनाम्ना देहादि-मानैर्नेमिजिनोपमः ॥ २४ ॥ यस्तु हस्तिनापुरवासी भद्रासार्थवाहीपुत्रो द्वात्रिंशद्भार्यात्यागी वीरशिष्यः

महाशय वार्षिकदान आपी प्रौढ महोत्सवपूर्वक चारित्र ग्रहण करशे. (१५) छद्मस्थपणामां साडाबार वर्ष एक पक्ष अधिक रही तप करीने केवळज्ञान प्राप्त करशे. (१६) पछी प्रतिक्रमण युक्त पांच महाव्रतरूप धर्म मुनि माटे अने बारव्रतरूप धर्म श्रावको माटे जेम महावीर प्रभुए कह्यो हतो तेम जगतना अद्वितीय हितेच्छु एवा महापद्मप्रभु पण ते ज प्रमाणे सर्व कहेशे. (१७-१८) ए प्रभुना ११ गणधर ने नव गण वीरप्रभु प्रमाणे थशे, तेम ज वर्ण, लंछन अने शरीरनी उंचाइ पण ते ज प्रमाणे थशे. (१९) पांच कल्याणकनी तिथिओ, मास, दिवस विगेरे बधुं पद्मनाभप्रभुनुं महावीरस्वामी प्रमाणे समजवुं. (२०) सुरसेवित एवा ते प्रभु साडाछ मासे ऊणा त्रीश वर्ष सर्वज्ञपर्याय पाळशे. (२१) ए रीते ४२ वर्ष श्रमणपणुं अनुभवी, बोंतेर वर्षनुं सर्वायु भोगवी परमपदने पामशे. (२२)

वर्धमान प्रभुना काका सुपार्श्व नामे जे हता तेनो जीव सुरदेव नामना बीजा जिनोत्तम (पार्श्वनाथ जेवा) थशे. (२३) पोट्टिलनो जीव ते सुपार्श्व नामे देहादिना मान विगेरेमां नेमिनाथ जेवा थशे. (२४) ' जे हस्तिनापुरवासी भद्रा सार्थवाहीना पुत्र, बत्रीश स्त्रीना त्यागी, वीरप्रभुना शिष्य, सर्वार्थसिद्धमां उत्पन्न थयेल छे अने

सर्वार्थसिद्धोत्पन्नो महाविदेहात्सेत्स्यन्नौपपातिकोपांगे प्रोक्तः स त्वन्य एव. जीवो दृढायुषस्तुर्यो जिन भावी स्वयंप्रभः । कार्त्तिकात्मा च सर्वानु–भूतिः पंचमतीर्थकृत् ॥ २५ ॥

श्रावस्त्यां शंखशतका–वभूतां श्रावकोत्तमौ । तत्र कोष्ठकचैत्ये च श्रीवीरः समवासरत् ॥२६॥ भगवंतं नमस्कर्त्तुं शंखाद्याः श्रावका ययुः । ततो निवर्त्तमानांस्तान् श्राद्धः शंखोऽब्रवीदिति ॥ २७ ॥ उपस्कारयत प्राज्य–माहारमशनादिकं । यथा तदद्य भुंजानाः पाक्षिकं पर्व कुर्महे ॥ २८ ॥ ते च शंखवचः श्राद्धा–स्तथेति प्रतिपेदिरे । शंखश्च निर्मलमति–र्गृहे गत्वा व्यचिंतयत् ॥ २९ ॥ न श्रेयानद्य भुक्त्वा मे पौषधः पाक्षिकेऽहनि । तत्कुर्वेऽपोषणेनैव विशुद्धं पर्वपौषधं ॥ ३० ॥ शंखमागमयंते स्म श्राद्धास्ते सज्जभोजनाः । अनागच्छति तस्मिंश्च तदाह्वानाय तद्गृहे ॥३१॥ शतका-परनामा द्राक् पुष्कली श्रावको ययौ। शंखभार्योत्पला चास्य चकाराभ्या-गतोचितिं ॥ ३२ ॥ ततः पौषधशालायां शंखाढ्यायां विवेश सः। प्रतिक्र-

---

महाविदेह क्षेत्रमां उत्पन्न थइ सिद्धिपदने पामशे एम उपपातिक उपांगमां कह्युं छे ते तो आनाथी जुदा ज जाणवा." दृढायुष्यनो जीव चोथा स्वयंप्रभ नामे जिन थशे. कार्त्तिक शेठनो जीव सर्वानुभूति नामे पांचमा प्रभु थशे. (२५)

श्रावस्तिमां शंख ने शतक नामे बे उत्तम श्रावको हता. ते नगरना कोष्टक नामना उद्यानमां श्रीवीरप्रभु समवसर्या. (२६) भगवंतने वांदवाने शंखादि श्रावको गया. तेओने वांदीने पाछा वळतां तेमने शंखे कह्युं (२७) के–' अशनादिक आहार पुष्कळ तैयार करो के आजे ते जमीने पछी काले पाक्षिक पर्व करीए (आराधीए) ' (२८) ते श्रावकोए शंखनुं वचन कबूल कर्युं. निर्मळ मतिवाळो शंख घरे जइने विचारवा लाग्यो (२९) के–' आजे जमीने काले पाक्षिक दिवसे पौषध करवो ते मने श्रेयकारी जणातुं नथी, तेथी आजे जम्या विना ज कालनो पर्वपौषध विशुद्ध करुं.' (एम कहीने तेणे पौषधशाळामां जइने पौषध लीधो) (३०) पेला श्रावको भोजन तैयार करीने शंखनी राह जोवा लाग्या, पण शंख न आववाथी तेने बोलाववा तेने घरे शतक जेनुं बीजुं नाम पुष्कली हतुं ते श्रावक गयो. शंखनी भार्या उत्पलाए तेनी अभ्यागत उचितता जाळवी. (३१–३२) पछी शंखनी पौषधशाळामां तेणे प्रवेश कर्यो अने ईर्यावही पडिकमीने शंखश्रावकने

श्चेर्यापथिकं शंखश्रावकमित्यवक् ॥ ३३ ॥ सिद्धमन्नादि तच्छीघ्र-माग-च्छ श्रावकव्रजे । तद् भुक्त्वाद्य यथा पर्व-पौषधं प्रतिजागृमः ॥३४॥ ऊचे शंखः पौषधिको-ऽपोषणोनास्मि सांऽप्यथ । इत्यवेदयत्ततस्सर्वेषां तत्त बुभुजिरे ततः ॥३५॥ शंखोऽथापारयित्वैव पौषधं प्रागमज्जिनं । प्रातः श्राद्धाः परेऽप्येवं शुश्रुवुर्देशनां प्रभोः ॥ ३६ ॥ देशनांते श्रावकास्ते गत्वा शंखस्य सन्निधौ । यथादिपुरपालंभं ह्यः साध्वस्मानहीलयः ॥ ३७ ॥ ततस्तान् भगवानूचे मा शंखं हीलयंतु भोः । सुदृष्टिर्दृढधर्मायं सुष्ठु जागरितो निशि ॥ ३८ ॥ एवं यो वर्द्धमानेन स्तुतस्तादृशपर्षदि । विदेहे सेत्स्यमानोऽसौ पंचमांग उदीरितः ॥ ३९ ॥ स्वर्गेऽस्यायुरपि प्रोक्तं श्रुते पल्यचतुष्टयं । षष्ठो जिनस्तु श्रीमल्लि-जिनस्थाने भविष्यति ॥ ४० ॥ ततश्च-संख्येय एव कालः स्या-द्भाविषष्ठजिनोदये । तत् षष्ठजिनजीवो यः शंखोऽन्यः संति बुध्यते ॥ ४१ ॥ स्थानांगवृत्तौ त्वयमेव शंखो भावितीर्थकृत्तथा प्रोक्तस्तदाशयं न वेद्मीति.

कह्युं (३३) के-"बधुं अन्नादि तैयार थयुं छे माटे श्रावक समुदाय साथे जमवा माटे शीघ्र चालो, त्यां जमीने पछी आपणे पर्वपौषधनी प्रतिजागरणा करीए." (३४) शंख बोल्यो के-" हुं तो जम्या विना ज पौषध करीश." तेणे जइने सर्वने ते वात करी एटले बाकीनाओ जम्या. (३५) हवे शंख पौषध पार्या विना ज बीजे दिवसे सवारे प्रभु पासे वंदन करवा आव्यो ने वंदन कर्युं. बीजा श्रावको पण आव्या ने प्रभुनी देशना सांभळी. (३६) देशनाने अंते तेओए शंख श्रावक पासे जइने ओलंभो देवापूर्वक कह्युं के-'काले भली अमारी हीलणा करी !' (३७) एटले ते श्रावकोने प्रभुए कह्युं के-' हे श्रावको ! तमे शंखनी हीलना न करशो, ते सुदृष्टि ने दृढधर्मा छे. रात्रे एणे बहु सारी जागरिका करी छे.' (३८) आ प्रमाणे श्रीवर्धमानस्वामीए तेवी पर्षदामां तेनी प्रशंसा करी. ते (स्वर्गे जइ) महाविदेह क्षेत्रमां (मनुष्य थइ) सिद्धिपदने पामशे एम पांचमा अंगमां कह्युं छे. (३९) स्वर्गमां तेनुं आयुष्य पण चार पल्योपमनुं छे एम श्रुतमां कह्युं छे. आवती चोवीशीमां छठा प्रभु मल्लिजिनसरखा थशे, (४०) परंतु भावी छठा जिनेश्वर थता सुधीमां संख्यातो काळ ज व्यतीत थशे. एटले छठा जिन थनार शंखनो जीव ते अन्य जाणवो. (४१) स्थानांगवृत्तिमां तो आ शंखने ज भावी तीर्थंकर थनार कहेल छे तेनो आशय समजी शकातो नथी.

जीवः शंखस्य षष्ठोऽर्हन् भावी देवश्रुताभिधः। भविष्यत्युदयाख्योऽर्हन्नंदीजीवश्च सप्तमः ॥ ४२ ॥ अष्टमोऽर्हन् सुनंदस्य जीवः पेढालसंज्ञकः। आनंदजीवो नवमः पोट्टिलाख्यो जिनेश्वरः ॥ ४३ ॥ दशमः शतकस्यात्मा शतकीर्त्तिर्भविष्यति। शंखस्यायं सहचरः पुष्कलीत्यपराह्वयः ॥४४॥ श्रीहैमवीरचरित्रे तु नवमः केकसीजीवो दशमस्तु रेयलिजीव इति दृश्यते.

सुता चेटकराजस्य सुज्येष्ठा स्वीकृतव्रता। आतापनां करोति स्म निर्वस्त्रांतरुपाश्रयं ॥ ४५ ॥ इतः परिव्राट् पेढालो विद्यासिद्धो गवेषयन्। विद्यादानोचितं पात्र-मपश्यत्तां महासतीं ॥ ४६ ॥ यद्यस्या ब्रह्मचारिण्याः कुक्षिजस्तनयो भवेत्। तस्यार्हः स्यात्तदा व्याघ्री-दुग्धस्य स्वर्णपात्रवत् ॥ ४७ ॥ विचिंत्यैवं धूमिकया व्यामोहं विरचय्य सः। तद्योनावक्षिपद्बीजं क्रमाज्जातश्च दारकः ॥४८॥ सह मात्रान्यदा सोऽगा-जिनाभ्यर्णं तदा जिनं। विद्याभृत्कालसंदीपः को मां हंतेति पृष्टवान् ॥ ४९ ॥

छठ्ठा अरिहंत देवश्रुत नामना शंखना जीव थशे अने सातमा उदय नामना अरिहंत नंदीना जीव थशे. (४२) आठमा सुनंदना जीव पेढाल नामे तीर्थंकर थशे. नवमा आनंदना जीव पोट्टिल नामे जिनेश्वर थशे. (४३) दशमा शतकना जीव शतकीर्ति नामे प्रभु थशे. आ शंखनो मित्र जेनुं बीजुं नाम पुष्कली हतुं ते जाणवो. (४४) श्रीहैमवीर चरित्रमां तो नवमा केकसीना जीव ने दशमा रेयलिना जीव कह्या छे.

चेडा राजानी पुत्री सुज्येष्ठा जेणे चारित्र लीधेल हतुं. ते वस्त्र रहित उपाश्रयमां रहीने आतापना लेती हती. (४५) ते वखते पेढाल नामनो विद्यासिद्ध परिव्राजक विद्यादानने उचितपात्रने शोधतो त्यां आवी चडयो. तेणे आ महासतीने जोइ. (४६) तेणे विचार्युं के-जो आ ब्रह्मचारिणीनी कुक्षिथी पुत्र थाय तो ते वाघणना दुध माटे स्वर्णना पात्रनी जेम मारी विद्या आपवाने पात्र (योग्य) थाय. (४७) आम विचारी धूम्र विकुर्ववावडे व्यामोह पमाडीने तेनी योनिमां बीजनुं क्षेपन कर्युं. अनुक्रमे तेने पुत्र थयो (तेनुं सत्यकी नाम पाडयुं) (४८) मातानी संगाते ते अन्यदा प्रभुनी पासे गयो. ते वखते विद्याधर कालसंदिपे आवीने मारो-हणनार कोण थशे ?' एम प्रभुने पूछयुं. (४९) प्रभुए कह्युं के (आ) सत्यकी थशे.

---

१ आ शंख ने शतक(पुष्कलीना) संबंधमां पृष्ठ ६३१-२ उपर जे हकीकत छे तेमां जमीने रात्रिपौषध करवानुं समजवुं, शंखे जम्या वगर (उपवास करीने) शेष दिवसे रात्रिपौषध लइ लीधेल छे अने ते पौषध पार्या विना सवारे प्रभु पासे बधा श्रावको आव्या छे एम समजवुं.

स्वामिनोक्ते सत्यकिनि तमुपेत्य जहास सः । मारयिष्यसि मां त्वं रे इत्युक्त्वाऽपातयत्पदोः ॥ ५० ॥ अपहृत्यान्यदा साध्वी–सकाशाज्जनकेन सः । समग्रा ग्राहितो विद्या धीरः साधयति स्म ताः ॥ ५१ ॥ रोहिण्या विद्यया व्यापा–दितो जन्मसु पंचसु । षष्ठे जन्मनि षण्मासा—युषा तुष्टापि नादृता ॥ ५२ ॥ प्राग्जन्मसाधनात्तुष्टा भवेऽस्मिन् सप्तमे च सा । ललाटे विवरं कृत्वा हृदि तस्य विवेश च ॥ ५३ ॥ ललाटविवरं त्वक्षि जातं दिव्यानुभावतः । जघान कालसंदीपं स पेढालं च दांभिकं ॥ ५४ ॥ प्राप्तो विद्याधरेंद्रत्वं नत्वा सर्वान् जिनेश्वरान् । नाट्यपूजां प्रभोः कृत्वा रमते स्म यथासुखं ॥ ५५ ॥ महादेव इति ख्यातो रुद्र एकादशः स च । एकादशो जिनो भावी सत्यकी सुव्रताभिधः ॥ ५६ ॥

द्वारकाधिपतिः कृष्ण–वासुदेवो महर्द्धिकः । भक्तः श्रीनेमिनाथस्य सद्धर्मः श्रावकोऽभवत् ॥ ५७ ॥ अष्टादशसहस्राणि वंदमानोऽन्यदा मु-

---

ते सांभळी तेनी पासे आवी ते हसीने वोल्यो के–' अरे ! तुं मने मारीश ! ' एम कहीने तेने पोताना पगमां पाडी दीधो. (५०) अन्यदा साध्वी पासेथी तेना पिताए तेनुं हरण कर्युं अने तेने वधी विद्याओ आपी. ते धीरे ते वधी विद्याओ साधी. (५१) रोहिणी विद्याए पांच जन्ममां सत्यकीना जीवने आ विद्या साधतां मारी नाख्यो हतो, छठा जन्ममां छ महीना शेष आयुष्य रह्युं त्यारे तुष्टमान थइ हती पण तेणे पोतानुं अल्प आयु जाणी स्वीकारी नहोती, (५२) आ सातमा जन्ममां तेना पूर्व जन्मनी साधनाथी ते तुष्टमान थइ अने तेना ललाटमां विवर करी ते विवरद्वारा तेणे तेना हृदयमां प्रवेश कर्यो. (५३) ललाटनुं विवर दिव्यानुभावथी नेत्ररूप थयुं. (एटले ते त्रण नेत्रवाळो थयो.) पछी तेणे काळसंदीपने मार्यो अने दांभिक एवा पेढाळ विद्याधरने (पोताना बापने) पण मार्यो. (५४) पछी ते विद्याधरेंद्रपणाने पाम्यो. ते सत्यकी विद्यावडे सर्व जिनेश्वरोने नमीने प्रभुनी पासे नाट्यपूजा करी, यथेच्छपणे–जेम सुख उपजे तेम (स्त्रीओनी साथे) रमतो हतो. (५५) ते महादेवना नामथी प्रसिद्ध थयो अने अग्यारमो रुद्र थयो. ए सत्यकी भावी चोवीशीमां अग्यारमा सुव्रत नामे तीर्थंकर थशे. (५६)

द्वारकाधिपति महर्द्धिक एवा कृष्ण वासुदेव श्रीनेमिनाथना भक्त होइने सद्धर्मशाळी श्रावक थया हता. (५७) अन्यदा तेमणे अढारहजार मुनिओने वांद्या–ते महान् गुरु-

नीन्। स वंदनेन गुरुणा सम्यक्त्वं क्षायिकं दधौ ॥ ५८ ॥ सप्तमक्षिति-योग्यानि दुःकृतान्यपवर्त्तयन्। चक्रे तृतीयक्ष्माहार्णि तीर्थकृन्नाम चार्जयत् ॥ ५९ ॥ तथोक्तं–तित्थयरत्तं सम्मत्त–खाइयं सत्तमीइ तइयाए। वंदणएणं विहिणा बद्धं च दसारसीहेण ॥ ६० ॥ कृष्णजीवोऽममाख्यः स द्वादशो भविता जिनः। सुरासुरनराधीश–प्रणतक्रमपंकजः ॥ ६१ ॥ वसुदेवहिंडौ तु–कण्हो तइयपुढवीओ उवट्टित्ता भारहे वासे सयदुवारे नयरे पत्तमंडलियभावो पव्वज्जं पडिवज्जिय तित्थयरनामं पवज्जित्ता वेमाणिए उववज्जित्ता दुवालसमो अममनाम तित्थयरो भविस्सइ इत्युक्तमिति ज्ञेयं.

बलदेवस्य जीवोऽर्हं–न्निष्कषायस्त्रयोदशः। कृष्णाग्रजः कृष्णतीर्थे सेत्स्यतीत्यन्य एव सः ॥ ६२ ॥ 'भवसिद्धिओ य भयवं? सिज्झिस्सइ कण्हतित्थंमि'। इत्यावश्यकनिर्युक्तिवचनात्. श्रीनेमिचरित्रेऽपि '— 'गच्छंत्यवश्यं तेऽधस्ता–त्त्वं गामी वालुकाप्रभां। श्रुत्वेति कृष्णः सद्योपि

वंदनथी तेणे क्षायिक समकित प्राप्त कर्युं, (५८) सातमी नरक योग्य दुष्कृतनी अपवर्तना करीने त्रीजी नरक पृथ्वी योग्य कर्युं अने तीर्थंकरनामकर्म उपार्जन कर्युं. (५९) कह्युं छे के–' तीर्थंकरत्व, क्षायिक सम्यक्त्व अने सातमीथी त्रीजी नरकनुं आयु विधिपूर्वक वंदन करवाथी दशारसिंह जे कृष्ण तेणे बांध्युं. ' (६०) ए कृष्णनो जीव बारमा अमम नामे तीर्थंकर सुर असुर अने मनुष्योना स्वामीओए नम्या छे चरणकमळ जेमना एवा थशे. (६१) श्रीवसुदेव हिंडिमां तो–' कृष्ण त्रीजी नरक पृथ्वीमांथी नीकळी, भरतक्षेत्रमां शतद्वार नगरमां मांडलिकराजा थइ, चारित्र लइ, तीर्थंकरनामकर्म उपार्जन करी वैमानिक देवपणे उत्पन्न थइ बारमा अमम नामे तीर्थंकर थशे.' एम कहेलुं छे.

बळदेवना जीव तेरमा निष्कषाय नामे तीर्थंकर थशे. कृष्णना मोटाभाइ बळभद्र कृष्णना (अममतीर्थंकरना) तीर्थमां सिद्धिपदने पामवाना छे तेथी तीर्थंकरना जीव बळदेव ते बीजा समजवा. (६२) श्री आवश्यक निर्युक्तिमां कह्युं छे के–'हे भगवंत ! ते भव्यसिद्धि छे?' उत्तर–हा, ते कृष्णना तीर्थमां सिद्धिपदने पामशे.' 'श्रीहेमचंद्राचार्यकृत श्रीनेमिचरित्रमां (द्वारकाना दाहनी कथाने प्रसंगे दीक्षा संबंधी वात करतां तेनो आशय जाणीने प्रभुए कह्युं के वासुदेवो दीक्षा लइ शकता ज नथी.) तेओ अवश्य नीचे (नरकमां) ज जाय छे, तमे पण त्रीजी वालुकाप्रभा पृथ्वीमां जशो.' आ प्रमाणे सांभळीने तत्काळ कृष्ण अत्यंत विधुर (विह्वळ)

नितांतविधुरोऽभवत् ॥६३॥ भूयोऽप्यधत्त सर्वज्ञो मा विषीद जनार्दन। तत उद्धृत्य मर्त्यस्त्वं भावी वैमानिकस्ततः ॥ ६४ ॥ उत्सर्पिण्यां प्रसर्पन्त्यां शतद्वारपुरेशितुः । जितशत्रोः सुतोऽर्हस्त्वं द्वादशो नामतोऽममः ॥ ६५ ॥ ब्रह्मलोकं बलो गामी मर्त्यो भावी ततश्च्युतः । ततोऽपि देवतश्च्युत्वा भाव्यत्र भरते पुमान् ॥ ६६ ॥ उत्सर्पिण्यां प्रसर्पत्या–मममाख्यस्य केशव । तीर्थनाथस्य ते तीर्थे स मोक्षमुपयास्यति ॥ ६७ ॥

भावी जीवश्च रोहिण्या निष्पुलाकश्चतुर्दशः । जिनो वृजिनहृद्देव–नरदेवनतक्रमः ॥ ६८ ॥

पुरे राजगृहेऽथासी–त्प्रसेनजिन्महीपतेः । नागाख्यो रथिकस्तस्य प्रेयसी सुलसाभिधा ॥ ६९ ॥ तया सुतार्थी स्वपति–रिंद्रादीन्मानयन् सुरान् । अन्यां परिणयेत्युक्तो न मेनेऽत्यंततन्मनाः ॥ ७० ॥ तस्याः सम्यक्त्वविषयां प्रशंसां शक्रनिर्मितां । अश्रद्दधत्सुरः कोऽपि मुनिरूपः समेत्य तां ॥ ७१ ॥ ऊचे तव गृहे लक्ष–पाकं तैलं यदस्ति तत् । दीयतां भिषजोक्तं मे ततः सा मुमुदे भृशं ॥७२॥ आहरंत्याश्च तत्तूर्णं भग्नं देवेन

बनी गया. (६३) एटले फरीने सर्वज्ञ प्रभुए कह्युं के–' हे जनार्दन ! तमे खेद न पामो, ते नरकमांथी नीकळीने तमे मनुष्य थइ वैमानिक देव थशो (६४) अने त्यांथी चवीने आवती उत्सर्पिणीमां शतद्वारपुरना राजा जितशत्रुना पुत्र थइ बारमा अमम नामे तीर्थंकर थशो. (६५) बळभद्र ब्रह्म देवलोकमां जइ त्यांथी चवी मनुष्य थइ देव थशे अने त्यांथी चवीने आ भरतक्षेत्रमां प्रसर्पती (हवे पछी आवती) उत्सर्पिणीमां हे केशव ! बारमा अमम नामना तीर्थंकरना (तमारा) तीर्थमां मोक्षे जशे. (६६–६७)

रोहिणीनो जीव निष्पुलाक नामना चौदमा तीर्थंकर दुःखनो नाश करनारा तथा नर अने देवोए नम्या छे चरणकमळ जेना एवा थशे. (६८)

राजगृहनगरमां प्रसेनजितराजानो नाग नामनो रथिक (सारथि) हतो. तेने सुलसा नामे स्त्री हती. (६९) पुत्रार्थी होवाथी इंद्रादिक देवोनी मानता करनारा पोताना पतिने तेणीए ' बीजी स्त्री परणो ' एम कह्युं, परंतु तेनापर अत्यंतरागी एवा तेणे ते वात मानी नहीं. (७०) सम्यक्त्वना विषयमां तेणीनी शक्रे करेली प्रशंसा सांभळीने तेने नहीं सद्दहतो एवो कोइ देव मुनिनुं रूप करीने तेनी पासे आव्यो. (७१) मुनिरूप देवे कह्युं– ' तमारा घरमां लक्षपाक तेल छे ते वैद्ये मने वापरवानुं कह्युं छे तेथी आपो. ' ते सांभळीने सुलसा घणी हर्षित थइ. (७२) पछी तेल लइने उतावळे आवतां तेणीनुं भाजन देवे भांगी

भाजनं । एकं (वं) द्वितीयं तृतीयं नाखिद्यत तथाप्यसौ ॥ ७३ ॥ ततस्तुष्टेन देवेन द्वात्रिंशद्गुटिका ददे । आसां प्रभावाद् द्वात्रिंश-द्भवितारः सुतास्तव ॥ ७४ ॥ प्रयोजनेऽहं स्मर्त्तव्य इत्युक्त्वा स तिरोदधौ । सर्वाभिरेकः पुत्रोऽस्त्वि-त्याजक्षे गुटिकास्त्वसौ ॥ ७५ ॥ द्वात्रिंशत्यथ गर्भेषु कुर्वत्सु जठरव्यथां । स्मृतः स देवश्चक्रे द्राक् स्वास्थ्यं सा सुषुवे सुतान् ॥ ७६ ॥ सा चेयं सुलसा पंच-दशोऽर्हन्निर्ममाभिधः । षोडशो रेवतीजीव-श्चित्रगुप्तो भविष्यति ॥ ७७ ॥ तथाहि—

गोशालमुक्तया तेजो-लेश्यया कृशितांगकः । अन्येद्युर्मेंढिकग्रामे श्रीवीरः समवासरत् ॥ ७८ ॥ अभूत्सलोहितं वर्च-स्ततो वार्त्ता जनेऽभवत् । गोशालकतपस्तेजो-दग्धोऽर्हन्मृत्युमेष्यति ॥ ७९ ॥ तत् श्रुत्वा सिंहनामान-मनगारं महारवैः । रुदंतं प्रभुराहूये-त्येवं स्माह कृपानिधिः ॥ ८० ॥ त्वया किं खिद्यते नाहं मरिष्याम्यधुना भुवि । विहृत्याब्दान् पंचदशा-ध्यर्द्धान् गंतास्मि निर्वृतिं ॥ ८१ ॥ किं च त्वं गच्छ नगरे

नाख्युं. एम बीजुं त्रीजुं भाजन पण भागी नाख्युं तो पण ते जरा पण खेद न पामी. (७३) तेथी तुष्टमान थयेला देवे तेने ३२ गुटिका आपी अने कह्युं के-' आ गुटिकाना प्रभावथी तमने ३२ पुत्रो थशे. (७४) वळी कांइ काम पडे तो मने संभारजो.' एम कहीने ते देव अदृश्य थयो. पछी 'आ बधी गुटिका एक साथे खावावडे (बत्रीश लक्षणो) एक पुत्र थाओ' एम विचारी ते बधी गुटिकाओ खाइ गइ. (७५) एटले तेना गर्भमां ३२ जीवो उत्पन्न थया. तेटला गर्भथी जठरमां बहु व्यथा थवाने लीधे ते देवने संभार्यो. तेणे तरत ज स्वस्थता करी. अनुक्रमे ३२ पुत्रो जन्म्या. (७६) ते सुलसानो जीव पंदरमा निर्मम नामे तीर्थंकर थशे. रेवतीनो जीव चित्रगुप्त नामे सोळमा तीर्थंकर थशे. (७७) तेनी हकीकत आ प्रमाणे—

गोशाळे मूकेली तेजोलेश्याथी दुर्बळ शरीरवाळा थयेला वीरप्रभु अन्यदा मेंढिक गामे समवसर्या. (७८) प्रभुने पुंठे लोही पडवा मांड्युं तेथी लोकोमां वार्ता थवा लागी के-' गोशाळाना तपतेजथी दग्ध थयेला अरिहंत मृत्यु पामशे.' (७९) ते सांभळीने मोटे स्वरे रुदन करता सिंह नामना अणगारने पोतानी पासे बोलावीने कृपानिधि प्रभुए आ प्रमाणे कह्युं (८०) के-' तुं शामाटे खेद पामे छे ? हुं हमणा मरण पामवानो नथी. हजु पृथ्वीपर साडापंदर वर्ष विचरीने पछी मोक्षे जवानो छुं. (८१) तेम छतां तुं

रेवतिश्राविकागृहे । द्वे कुष्मांडफले ये च मदर्थं संस्कृते तया ॥ ८२ ॥ ताभ्यां नार्थः किंतु बीज–पूरपाकः कृतस्तया । स्वकृते तं च निर्दोष–मेषणीयं समाहर ॥ ८३ ॥ ततश्च मुनिना तेन याचिता रेवती मुदा । कृतार्थं मन्यमाना स्वं ददौ तस्मै तदौषधं ॥ ८४ ॥ भगवानपि नीराग–मनास्तदुदरेऽक्षिपत् । तत्क्षणात्नीरोगोऽभू–त्संघः सर्वश्च पिप्रिये ॥ ८५ ॥ अर्जितानेकसुकृत–संचया रेवती तु सा । षोडशस्तीर्थकृद्भावी चित्रगुप्तोऽभिधानतः ॥ ८६ ॥

गवालिजीवः समाधि–र्भावी सप्तदशो जिनः । संवराख्योऽष्टादशोऽर्हन् भावी जीवश्च गार्गलेः ॥८७॥ एकोनविंशतितमो जीवो द्वीपायनस्य च । यशोधराख्यस्तीर्थेशो भविता भवितारकः॥८८॥ जिनोऽथ विंशतितमः कर्णजीवो भविष्यति । जीवोऽर्हन्नारदस्यैक–विंशो मल्लजिनेश्वरः ॥ ८९॥

विद्याधरः श्रावकोऽभू–त्परिव्राडंबडाभिधः । सोऽन्यदा देशनां श्रुत्वा वर्द्धमानजिनेशितुः ॥ ९० ॥ गच्छन् राजगृहं चंपा–नगर्याः प्रभुणोदितः । सुलसाया मम क्षेम–किंवदंतीं निरूपयेः ॥ ९१ ॥ इति

आ नगरमां रेवति श्राविकाने त्यां जा. तेणे बे कोळाना फळ मारे अर्थे संस्कारित कर्यां छे, (८२) तेनुं प्रयोजन नथी, परंतु तेणे बीजोरापाक पोताने माटे करेलो छे ते निर्दोष ने एषणीय छे ते लइ आव.' (८३) पछी सिंहमुनिए हर्षवडे त्यां जइने रेवती पासे बीजोरापाकनी याचना करी. एटले पोताना आत्माने कृतार्थ मानती एवी तेणीए ते औषध तेमने आप्युं. (८४) नीराग मनवाळा भगवंते तेने उदरमां क्षेपव्युं तेथी तत्त्वण रोग रहित थइ गया, एटले सर्व संघ घणो हर्षित थयो. (८५) अनेक प्रकारना सुकृतनो संचय करीने ते रेवती चित्रगुप्त नामना सोळमा तीर्थंकर थशे. (८६)

गवालीनो जीव समाधि नामना सत्तरमा प्रभु थशे अने गार्गलीनो जीव संवर नामे अढारमा जिन थशे. (८७) द्वीपायननो जीव यशोधर नामे ओगणीशमा तीर्थंकर भव्यजीवोने तारनार थशे. (८८) कर्णनो जीव वीशमा विजय नामे प्रभु थशे, नारदनो जीव एकवीशमा मल्ल नामे जिनेश्वर थशे. (८९)

अंबड नामे परिव्राजक अनेक विद्याओने धारण करनार अन्यदा वर्धमान प्रभुनी देशना सांभळीने श्रावक थयो. (९०) तेने चंपानगरीथी राजगृहे जतां प्रभुए कह्युं के–'सुलसाने मारा सुखशाताना समाचार कहेजे.' (९१) इति स्थानांगवृत्तौ, कोइ जग्याए

स्थानांगवृत्तौ. कचिद्धर्मलाभमवीवददिति श्रूयते. अंबडोऽचिंतयत्पुण्य-वतीयं सुलसा सती । संदेशं संदिशत्येवं यस्यै श्रीत्रिजगद्गुरुः ॥ ९२ ॥ करोम्यस्याः परीक्षां च गुणास्तस्याः क ईदृशः । ध्यात्वेति गत्वा ते-नोचे परिव्राड्वेषधारिणा ॥ ९३ ॥ भक्त्या मे भोजनं देहि धर्मस्ते भविता महान् । ततो जगाद सा शुद्ध-सम्यक्त्वैकदृढाशया ॥ ९४ ॥ प्रदत्ते भोजने येभ्यो धर्मः संजायते महान् । विदिता एव ते भ्रातः साधवो विजितेंद्रियाः ॥ ९५ ॥ सोंतरिक्षे ततः पद्मा-सनासीनो जनान् बहून् । विस्मापयामास मास-तपस्वीति जनार्चितः ॥ ९६ ॥ लोकः पप्रच्छ भगवं-स्तपःपारणयानया । पावयिष्यसि कं धन्यं स प्राह सुलसा-मिति ॥ ९७ ॥ दिष्ट्या तव गृहे भाग्यै-स्तपस्वी पारयिष्यति । सुलसो-क्ता जनैरूचे किं नः पाखंडिकैरिति ॥ ९८ ॥ अंबडोऽपि तदाकर्ण्या-चिंतयद्युक्तमादिशत् । संदेशं जिनराजोऽस्यै यस्याः सम्यक्त्वमीदृशं ॥ ९९ ॥ ततः परिवृतः पौरै-रुपेत्य सुलसागृहे । एनां प्रोक्तात्तसंदेशः

धर्मलाभ कहेवानुं कह्युं एम संभळाय छे. ते सांभळी अंबड विचारवा लाग्यो के-'आ सुलसा सती खरेखरी पुण्यवान् जणाय छे के जेने श्री त्रिजगद्गुरु आवो संदेशो कहेव-रावे छे, (९२) तो हवे हुं तेनी परीक्षा करुं के तेना एवा कया गुण छे?' एम विचारी तेणे परिव्राजकना वेषमां तेने त्यां जइने कह्युं के-(९३) 'भक्तिपूर्वक मने भोजन आप, तने मोटो धर्म थशे.' ते सांभळीने तेणे शुद्ध सम्यक्त्वना अद्वितीय दृढ आशयथी कह्युं (९४) के-'हे भ्राता! जेमने भोजन देवाथी महान् पुण्य थाय ते तो विजितेंद्रिय एवा साधुओ ज प्रसिद्ध छे.' (९५) त्यारपछी त्यांथी नीकळीने अंबड अंतरिक्षमां पद्मासन वाळीने अधर रही घणा जनोने विस्मय पमाडतो हवो. लोको तेने मास तपस्वी मानीने पूजता हवा. (९६) लोकोए तेने पूछ्युं के-'हे भगवंत! आ तमारा तपना पारणावडे तमे कोने पवित्र करशो?' ते बोल्यो के-'सुलसाने' (९७) त्यारे लोकोए सुलसाने कह्युं के-'तारा भाग्यथी तारे घरे आ तपस्वी पारणुं करशे.' त्यारे सुलसा बोली के-'मारे पाखंडीवडे शुं?' (९८) अंबडे ते सांभळीने विचार्युं के-'जिने-श्वरे जेनुं समकित आवुं (निर्मळ ने दृढ) छे तेने संदेश कहेवराव्यो छे ते युक्त छे.' (९९) आम विचारीने पछी पुरजनोथी परिवर्यो सतो ते सुलसाने घरे गयो अने

प्रशशंस मुहुर्मुहुः ॥ ४०० ॥ भविष्यत्यंबडः सोऽयं द्वाविंशो देवतीर्थकृत्। त्रयोविंशोऽनंतवीर्यो जीवो द्वारमदस्य सः ॥ १ ॥ यस्त्वंबडो महाविदेहे सेत्स्यन्नौपपातिकेऽभिहितः सोऽन्य एव संभाव्यते इति स्थानांगवृत्तौ.

चतुर्विंशः स्वातिजीवो भद्रकृन्नाम तीर्थकृत्। भविष्यति चतुर्थार-स्यादौ श्रीवृषभोपमः ॥ २ ॥ अयं भाविजिननामक्रमः श्रीवीरचरित्रोध्धृतपद्यदीवालीकल्पानुसारेण. श्रीजिनप्रभसूरिकृतप्राकृतगद्यदीवालीकल्पाभिप्रायस्त्वेवं–तइओ उदाइजीवो सुपासो, चउत्थो पोट्टिलजीवो सयंपभो, पंचमो दढाउजीवो सव्वाणुभूई, छट्ठो कत्तियजीवो देवसुओ, सत्तमो संखजीवो उदओ, अट्ठमो आणंदजीवो पेढालो, नवमो सुनंदजीवो पुट्टिलो, दसमो सयगजीवो सयकित्ती, इगारसमो देवईजीवो मुणिसुव्वओ, वारसमो कण्हजीवो अममो, तेरसमो सच्चईजीवो निक्कसाओ, चउदसमो बलदेवजीवो निप्पुलाओ, पन्नरसमो सुलसाजीवो निम्ममो, सोलसमो रोहिणीजीवो चित्तगुत्तो, केई भणंति कक्किपुत्तो सित्तुंजे उद्धारं करित्ता

प्रभुए कहेल संदेश कही वारंवार तेनी प्रशंसा करी. (४००) ते अंबड आ बावीशमा देव नामना तीर्थंकर थशे. त्रेवीशमा अनंतवीर्य नामना तीर्थंकर द्वारमदनो जीव थशे. (१) जे अंबड महाविदेहमां सिद्धिपद पामशे एम औपपातिक सूत्रमां कहेल छे ते बीजो अंबड संभवे छे. इति स्थानांगवृत्तौ.

चोवीशमा भद्रकृत नामना तीर्थंकर स्वातिना जीव थशे. ते उत्सर्पिणीना चोथा आरानी आदिमां ऋषभदेवनी जेवा थशे. (२)

आ भावी जिनोनो नामक्रम श्रीवीरचरित्रमांथी उद्धरेल पद्यबंध दिवाळीकल्पने अनुसारे लखेल छे. श्रीजिनप्रभसूरिकृत प्राकृत गद्य दीवाळीकल्पमां तो आ प्रमाणे कहेल छे–त्रीजा उदाइना जीव सुपास, चोथा पोट्टिलना जीव स्वयंप्रभ, पांचमा दृढायुना जीव सर्वानुभूति, छट्ठा कार्त्तिकना जीव देवसुत, सातमा शंखना जीव उदय, आठमा आनंदना जीव पेढाळ, नवमा सुनंदना जीव पुट्टिल, दशमा शतकना जीव शतकीर्त्ति, अग्यारमा देवकीना जीव मुनिसुव्रत, बारमा कृष्णना जीव अमम, तेरमा सत्यकीना जीव निष्कषाय, चौदमा बळदेवना जीव निष्पुलाक, पंदरमा सुलसाना जीव निर्मम, सोळमा रोहिणीना जीव चित्रगुप्त. कोइ कहे छे के–कलंकीना पुत्र शत्रुंजयपर उद्धार करी जिनभवनोवडे मंडित पृथ्वी करीने तीर्थंकरनामकर्म उपार्जन करी स्वर्गे जइ चित्रगुप्त जिनवर थशे. अहीं

जिणभवणमंडियं पुहविं काउं अजियतित्थयरनामो सग्गं गंतुं चित्तगुत्तो जिणवरो होही. इत्थ य बहुसुयमयं पमाणं. सत्तरसमो रेवईजीवो समाही, अट्ठारसमो सयलजीवो संवरो, तेवीसइमो अरजीवो अणंतविरिओ, चउवीसइमो बुद्धजीवो भद्दंकरो. उक्तशेषाः प्राग्वत्.

अत्र तृतीयो य उदायी उक्तः, स तु स्थानांगसूत्रोक्तवीरशासननिबद्धतीर्थकृन्नामनवजीवांतःपाती कोणिकपुत्रः, यः कोणिकेऽपक्रांते पाडलिपुत्रं नगरं न्यवीविशत्, यश्च स्वभवने पर्वदिनेषु सद्गुरूनाहूय परमसंविग्नः पौषधाद्यन्वतिष्ठत्, एकदा च देशनिर्घाटितरिपुराजपुत्रेण द्वादशवार्षिकद्रव्यसाधुना अभव्येन पौषधिकः कंकायःकर्त्तिकया कंठकर्त्तनेन विनाशितः सोऽयमिति.

समवायांगसूत्रे तु—महापउमे १ सुरादेवे २ सुपासे य ३ सयंपभे ४। सव्वाणुभूति ५ अरहा दिवगुत्ते ६ जिणुत्तमे ॥ १ ॥ उदए ७ पेढालपुत्ते य ८ पोट्टिले ९ सतएति य १०। मुणिसुव्वते य अरहा ११ सव्वभावविदु जिणे ॥ २ ॥ अममे १२ णिक्कसाए य १३ णिप्पुलाए य १४

बहुश्रुत कहे ते प्रमाण. सतरमा रेवतीना जीव समाधि, अढारमा सयलना जीव संवर, त्रेवीशमा अरना जीव अनंतवीर्य अने चोवीशमा बुद्धना जीव भद्रंकर. बाकीना प्रथम कह्या प्रमाणे जाणवा.

अहीं त्रीजा जे उदायी कह्या ते स्थानांग सूत्रमां कहेला वीरप्रभुना शासनमां नव जीवोए तीर्थंकर नामकर्म बांध्युं छे तेमांना कोणिकना पुत्र समजवा. जेणे कोणिक मरण पाम्ये सते पाटलिपुत्र नगर वसाव्युं. जे पोताना भुवनमां पर्वदिवसे सद्गुरुने बोलावीने परम संविज्ञ एवो पौषध लइने रहेतो हतो. एकदा तेणे देशमांथी काढी मूकेला शत्रु राजाना पुत्रे—बार वर्ष सुधी द्रव्यसाधुपणे रहेला अभव्ये कंकलोहनी छरीवडे पौषधिक एवा तेमने कंठ कापवावडे मारी नाख्या हता ते आ उदायी समजवा.

श्री समवायांगसूत्रमां तो—महापद्म १, सुरादेव २, सुपास ३, स्वयंप्रभ ४, सर्वानुभूति ५, देवगुप्त ६, उदय ७, पेढालपुत्र ८, पोट्टिल ९, शतक १०, मुनिसुव्रत ११, सर्व भावने जाणनार अमम १२, निष्कषाय १३, निष्पुलाक १४, निर्मम १५, चित्रगुप्त १६, समाधि

निल्लामे १५ । निक्कसाए १६ तयाली य १७ आगमेस्साए होक्खई ॥ ३ ॥ संवरे १८ अणिअट्टी य १९, विजए २० विमलेत्ति य २१ । देवोववाए २२ अरहा अणंतविजए २३ भद्देति य २४ ॥ ४ ॥ इति नामक्रमो दृश्यते.

तेषां पूर्वभवनामान्यपि तत्रैवेत्थं दृश्यन्ते.—सेणिअ १ सुपास २ उदए ३ पोट्टिल ४ अणगार तह दढाऊ ५ य । कत्तिए ६ संखे ७ तहा नंद ८ सुनंदे ९ अ सयए अ १० ॥१॥ बोधव्वा देवई चेव ११ सच्चइ १२ तह वासुदेव १३ बलदेवे १४ । रोहिणी १५ सुलसा १६ चेव तत्तो खलु रेवती १७ चेव ॥ २ ॥ तत्तो हवइ सयाली १८ बोधव्वे खलु तहा भयाली य १९ । दीवायणे अ २० कण्हे २१ तत्तो खलु नारए चेव २२ ॥ ३ ॥ अंबडे अ २३ तहा साइ-बुद्धे अ २४ होइ बोधव्वे । उस्सप्पिणि आगमेस्साए तित्थयराणं तु पुव्वभवा ॥ ४ ॥ इति, प्रवचनसारोद्धारेऽप्येवं दृश्यते.

किं चात्र वासुदेवजीवस्त्रयोदशजिनः प्रोक्तः. अंतकृत्सूत्रे तु द्वादशस्तदुक्तं—आगमेस्साए उस्सप्पिणीए पुंडेसु जणवएसु सतदुवारे नयरे बारसमो अममो णाम अरहा भविस्सइत्ति. अत्र द्वादशतीर्थकरोत्पत्तिः

१७, संवर १८, अनिवट्टि १९, विजय २०, विमल २१, देवोपपात २२, अनंतवीर्य २३, ने भद्र २४ ए आवती चोवीशीमां थनार प्रभुना नाम छे (४) आवा नामनो क्रम देखाय छे.

तेमना पूर्वभवना नाम तेमां ज आ प्रमाणे कह्या छे.—१ श्रेणिक, २ सुपार्श्व, ३ उदय, ४ पोट्टिल अणगार, ५ दृढायु, ६ कार्तिक, ७ शंख, ८ नंद, ९ सुनंद, १० शतक, ११ देवकी, १२ सत्यकी, १३ वासुदेव (कृष्ण), १४ बलदेव, १५ रोहिणी, १६ सुलसा, १७ रेवती, १८ शताली, १९ भयाली, २० द्वीपायन, २१ कृष्ण, २२ नारद, २३ अंबड अने २४ स्वाति बुद्ध—आ प्रमाणे आगामी चोवीशीमां थनारा तीर्थंकरोना पूर्वभवना नामो जाणवा (४) प्रवचनसारोद्धारमां पण ए ज प्रमाणे देखाय छे.

अहीं वासुदेवनो जीव तेरमा तीर्थंकर कह्या छे. अंतकृत्सूत्रमां तो बारमा कह्या छे. ते आ प्रमाणे—' आगामी उत्सर्पिणीमां पृथक् जनपदमां शतद्वार नगरमां बारमा अमम नामे तीर्थंकर थशे. ' अहीं बारमा तीर्थंकरनी उत्पत्ति उत्सर्पिणीना त्रीजा आराना कांइक

१ थनार तीर्थंकरोना नाममां अमम नाम १२ मा प्रभुनुं समवायांगमां ज छे अने पूर्वभवना नाममां कृष्णनुं नाम तेरमुं तेमां ज कह्युं छे.

साधिकषोडशाब्धिव्यतिक्रमे स्यात्, विमलजिनस्थानीयत्वात्तस्य, इयांश्च कालो नारकभवाद्यैश्चतुर्भिर्भवैः पूर्वोक्तैः सुपूरः स्यात्, त्रयोदशजिनस्तु वासुपूज्यस्थानीयः, तदुत्पत्तिस्तु साधिकषट्चत्वारिंशदब्धिव्यतिक्रमे तावान् कालस्तु पूर्वोक्तैर्भवैर्दुष्पूरो वासुदेवजीवस्येति ध्येयं. अत्र चैतेषां पक्षाणां विसंवादे बहुश्रुताः सर्वविदो वा प्रमाणमिति ज्ञेयं.

ये च नोक्ता व्यतिकरा जिनानां भाविनामिह । केचित्तेऽत्यंतविदिताः केचिच्चाविदिता इति ॥ ३ ॥

दीर्घदंतो १ गूढदंतः २ शुद्धदंतस्तृतीयकः ३ । श्रीदंत ४ श्रीभूति ५ सोमाः ६ पद्मः ७ सप्तमचक्रभृत् ॥ ४ ॥ महापद्मश्च ८ शमश्च ९ चक्री च विमलाभिधः १० । विमलवाहनो ११ रिष्टो १२ भाविनश्चक्रवर्त्तिनः ॥५॥ इति पद्मदीवालीकल्पकालसप्ततिकयोः, किंतु दीवालीकल्पे श्रीदंतस्थाने श्रीचंद्रो दृश्यते. पूर्वोक्तप्राकृतदीवालीकल्पे तु अष्टमो नायको नवमो महापद्म उक्तः, शेषाः प्राग्वत्. समवायांगे तु–भरहे य १ दीहदंते य २ गूढदंते य ३ सुद्धदंते य ४ । सिरिगुत्ते य ५ सिरिभूई ६ सिरिसोमे य ७ सत्तमे ॥ १ ॥ पउमे य ८ महापउमे ९ विमलवाहणे

अधिक सोळ सागरोपम व्यतिक्रमे थाय छे, कारण के ते विमळनाथ तीर्थंकरना स्थानके छे. एटलो काळ नारकभव विगेरे चार भव पूर्वे कह्या प्रमाणे थाय त्यारे पूरो थाय छे. तेरमा जिनेश्वर तो वासुपूज्यने स्थाने गणाय. तेमनी उत्पत्ति तो साधिक ४६ सागरोपम व्यतिक्रमे थाय. तेटलो काळ तो पूर्वे कह्या प्रमाणे वासुदेवना चार भवथी पण पूर्ण थइ शके नहीं एम जाणवुं. अहीं ए पक्षोना विसंवादमां बहुश्रुत अथवा सर्वज्ञ कहे ते प्रमाण जाणवुं.

भावी जिनवरोना पूर्व भवना व्यतिकरो जे अहीं नथी कह्या तेमां केटलाक बहु प्रसिद्ध अने केटलाक अप्रसिद्ध होवाथी कहेल नथी, एम जाणवुं (३)

हवे भावी चक्रवर्तीना नामो कहे छे. १ दीर्घदंत, २ गूढदंत, ३ शुद्धदंत, ४ श्रीदंत, ५ श्रीभूति, ६ सोम, ७ पद्म, ८ महापद्म, ९ शम, १० विमळ, ११ विमळवाहन अने १२ रिष्ट (४–५) आ प्रमाणे पद्म दीवाळीकल्प ने काळसप्ततिकामां कहेल छे, परंतु दीवाळीकल्पमां श्रीदंतने स्थाने श्रीचंद्र देखाय छे. पूर्वोक्त प्राकृत दीवाळीकल्पमां तो आठमा नायक ने नवमा महापद्म कह्या छे;–बाकीना पूर्व प्रमाणे कहेल छे. श्रीसमवायांगमां तो कह्युं छे के–१ भरत, २ दीर्घदंत, ३ गूढदंत, ४ शुद्धदंत, ५ श्रीगुप्त, ६ श्रीभूति,

१० विपुलवाहणे ११ चेव । रिट्ठे १२ वारसमे वुत्ते आगमेस्साण होक्खन्ति ॥ २ ॥

नंदिश्च १ नंदिमित्रश्च २ तथा सुंदरबाहुकः ३ । महाबाहु ४ रतिबलो ५ महाबल ६ बलाभिधौ ७ ॥ १ ॥ द्विपृष्ठश्च ८ त्रिपृष्ठश्च ९ वासुदेवा अमी नव । उत्सर्पिण्यां भविष्यन्त्यां भविष्यंति महर्द्धिकाः ॥ २ ॥ इति पद्यदीवालीकल्पकालसप्ततिकयोः, प्राकृतदीवालीकल्पे तु-सुंदरबाहुरित्यत्र सुंदरो बाहुश्चेति द्वावुक्तौ, त्रिपृष्ठश्च नोक्त इति, शेषं प्राग्वदिति. नंदे य १ नंदिमित्ते य २ दीहबाहू ३ तहा महाबाहू ४ । अतिबल ५ महब्बले ६ बलभद्दे य ७ सत्तमे ॥ १ ॥ दुविट्ठू य ८ तिविट्ठू य ९ आगमिस्साण विण्हुणो । इति समवायांगे.

रामा बलो १ वैजयंतो २-ऽजितो ३ धर्मश्च ४ सुप्रभः ५ । सुदर्शनः ६ स्यादानंदो ७ नंदनः ८ पद्म ९ इत्यपि ॥ १ ॥ इति प्रागुक्तग्रंथयोः. प्राकृतदीवालीकल्पे तु-आद्यो वैजयंतो नवमः संकर्षणाख्यः, शेषं प्राग्वत्. जयंत १ विजए २ भद्दे ३ सुप्पभेय ४ सुदंसणे ५ । आणंदे ६ णंदे ७ पउमे ८ संकरिसणे य ९ अपच्छिमे ॥ १ ॥ इति तु समवायांगे.

---

७ श्रीसोम, ८ पद्म ९ महापद्म, १० विमळवाहन, ११ विपुळवाहन अने १२ रिष्ट आ प्रमाणे (चक्रवर्तीओ) आगामी काळे थशे. (१-२)

१ नंदि, २ नंदिमित्र, ३ सुंदरबाहु, ४ महाबाहु, ५ रतिबळ, ६ महाबळ, ७ बळ, ८ द्विपृष्ठ, ९ त्रिपृष्ठ-आ प्रमाणे नव वासुदेव महर्द्धिक आवती उत्सर्पिणीमां थशे. (१-२) आ प्रमाणे पद्य दीवाळीकल्प ने काळसप्ततिकामां कह्युं छे. प्राकृत दीवाळीकल्पमां तो सुंदरबाहुनी जग्याए सुंदर ने बाहु एम बे कह्या छे अने त्रिपृष्ठ कह्या नथी. ते सिवाय उपर प्रमाणे कहेल छे. श्री समवायांगसूत्रमां १ नंद, २ नंदिमित्र, ३ दीर्घबाहु, ४ महाबाहु, ५ अतिबळ, ६ महाबळ, ७ बळभद्र, ८ द्विपृष्ठ ने ९ त्रिपृष्ठ-आ प्रमाणे आगामी विष्णुना नामो कह्या छे.

बलदेव १ बळ, २ वैजयंत, ३ अजित, ४ धर्म, ५ सुप्रभ, ६ सुदर्शन, ७ आनंद, ८ नंदन अने ९ पद्म (१). आ प्रमाणे पूर्वे कहेला बे ग्रंथमां नव बळदेवना नामो कह्या छे. प्राकृत दीवाळीकल्पमां तो पहेला वैजयंत ने नवमा संकर्षण नामना कह्या छे. बाकी पूर्व प्रमाणे कहेल छे. श्रीसमवायांगमां १ जयंत, २ विजय, ३ भद्र, ४ सुप्रभ, ५ सुदर्शन, ६ आनंद, ७ नंद, ८ पद्म अने छेल्ला ९ संकर्षण-आ प्रमाणे नव बळदेवना नामो कह्या छे.

तिलको १ लोहजंघश्च २ वज्रजंघश्च ३ केसरी४। बलि ५ प्रह्लादनामानौ ६ तथा स्यादपराजितः ७॥९॥ भीमः ८ सुग्रीव ९ इति च भाविनः प्रतिकेशवाः । इहापि समवायांगे बलिर्नास्ति. सप्तमो भीमोऽष्टमो महाभीमश्चेति दृश्यते.

उत्सर्पिण्यां भविष्यंतः शलाकापुरुषा अमी ॥ १० ॥ एकषष्टिर्भाविनोऽमी अरकेऽत्र तृतीयके । शलाकापुरुषौ च द्वौ चतुर्थेऽरे भविष्यतः ॥ ११ ॥

अथ प्रकृतं–सिद्धे जिने चतुर्विंशे चक्रिणि द्वादशे मृते । संख्येयपूर्वलक्षाणि धर्मनीती प्रवर्त्स्यतः ॥ १२ ॥ यदुक्तं प्रवचनसारोद्धारे–उस्सप्पिणि अंतिमजिण तित्थं सिरिरिसहनाहपज्जाया । संखिज्जा जावइया तावयमाणं धुवं भविही ॥ १ ॥ इह तीर्थप्रवृत्तिकालमानमिदमुक्तं, नीतिरपि पंचमारकपर्यंत इव धर्मं यावदेव स्थास्यतीति संभाव्यते.

क्रमात्कालानुभावेन स्वल्पस्वल्पकषायकाः । नापराधं करिष्यंति मनुष्या भद्रकाशयाः ॥ १३ ॥ शास्तारोऽपि प्रयोक्ष्यंते न सौम्या दंड-

---

१ तिलक, २ लोहजंघ, ३ वज्रजंघ, ४ केसरी, ५ बलि, ६ प्रह्लाद, ७ अपराजित, ८ भीम अने ९ सुग्रीव–आ प्रमाणे भावी प्रतिवासुदेवना नामो जाणवा. आमां पण समवायांगमां बलि नथी अने सातमा भीम ने आठमा महाभीम कहेल छे.

आ प्रमाणे उत्सर्पिणीमां शलाकापुरुषो (६३) थशे. (१०) तेमां ६१ त्रीजा आरामां थशे. अने बे चोथा आरामां थशे. (११)

हवे प्रकृत कहे छे—चोवीशमा जिनेश्वर सिद्ध थया पछी अने बारमा चक्रवर्ती मृत्यु पाम्या पछी संख्याता लाख पूर्व सुधी धर्म अने नीति प्रवर्तशे. (१२) श्री प्रवचनसारोद्धारमां कह्युं छे के–'उत्सर्पिणीना छेल्ला तीर्थंकर के जेओ श्री ऋषभदेव जेवा थवाना छे तेमनुं तीर्थ संख्याता पूर्वो सुधी ध्रुवपणे प्रवर्तशे ' (१) अहीं तीर्थप्रवृत्तिनुं आ काळमान कह्युं छे. नीति पण अवसर्पिणीमां पांचमा आराना प्रांत सुधी प्रवर्तती हती तेम उत्सर्पिणीमां पण ज्यां सुधी धर्म प्रवर्तशे त्यां सुधी नीति पण रहेशे एम संभवे छे.

हवे त्यारपछी अनुक्रमे काळना अनुभावथी ओछा ओछा कषायवाळा अने भद्रक आशयवाळा मनुष्यो थशे. तेओ अपराध करशे नहीं (१३) शास्ता (शिक्षा करनार)नुं

सुत्वणां । अभावादपराधानां नापि दंडप्रयोजनं ॥ १४ ॥ तेषामल्पापराधानां दंडनीतिप्रवर्त्तका: । चक्रिवंश्याः कुलकराः क्रमात्त्रिः पंच भाविनः ॥ १५ ॥ तेषां ह्यकारमाकार–धिक्कारा दंडनीतयः । पंचानां प्रथमानां स्यु–स्तिस्रो संत्वनुसारतः ॥ १६ ॥ द्वितीयानां च द्वे नीत्यौ स्यातामंत्यविवर्जिते । तृतीयानां च पंचानां ह्यकार एव केवलं ॥ १७ ॥ एवं कुलकरेष्वेषु व्यतिक्रांतेषु कालतः । जनाः सर्वेऽहमिंद्रत्वं प्रपत्स्यंते पराऽवशाः ॥ १८ ॥ स्वत एव प्रवर्त्तंते ते न्यायेष्वेव मानवाः । न ते शासितुमर्हंति तेषां शास्ता न कश्चन ॥ १९ ॥

एवं चात्रावसर्पिणीप्रातिलोम्यौचित्येनोत्सर्पिणीषु चतुर्थारकस्यादौ चतुर्विंशतितमजिननिर्वाणानंतरं पंचदश कुलकरा उक्ताः, परमेतन्निर्णेतुं न शक्यते यदुत्सर्पिण्यां द्वितीयारकपर्यंते कुलकरा भवंति उत चतुर्थारकस्यादौ भवंति? यत एष निर्णयो ह्यनंतरभविष्यदुत्सर्पिण्यनुसारेण कर्तुं शक्यते, भविष्यदुत्सर्पिण्यां च कुलकरानाश्रित्य शास्त्रे भूयान् विसं-

प्रयोजन पण रहेशे नहीं, कारण के सौम्य मनुष्यने कांइ आकरो दंड करी शकातो नथी. एटले अपराधोनो ज अभाव थवाथी दंड करवानुं प्रयोजन रहेशे नहीं. (१४) तेमने अल्प अपराधवाळाने दंडनीतिना प्रवर्तक (दंड आपनारा) छेल्ला चक्रवर्तीना वंशज त्रण वार पांच एटले पंदर कुलकरो थशे. (१५) तेमांना पहेला पांचना वखतमां हाकार, माकार ने धिक्कार ए त्रणे प्रकारनी दंडनीति अपराधना प्रमाणमां प्रवर्तशे. (१६) बीजा पांच कुलकरोना वखतमां छेल्ली त्रीजी (धिक्कार) नीति सिवायनी बे नीति प्रवर्तशे अने त्रीजा पांच कुलकरोना वखतमां पहेली हाकार नामनी एक ज नीति प्रवर्तशे. (१७) ए प्रमाणे ए (१५) कुलकरो काळना क्रमे व्यतीत थये सते काळस्वभावथी सर्वे जनो अहमिंद्रत्व प्राप्त करशे के जेमां परवशपणुं बीलकुल नथी. (१८) ते मनुष्यो स्वतः ज न्यायमां प्रवृत्ति करे छे. तेओ शासन करवाने योग्य ज होता नथी, तेथी तेना शास्ता पण कोइ होता नथी. (१९)

ए प्रमाणे अहीं अवसर्पिणीना प्रतिलोमना उचितपणाथी उत्सर्पिणीना चोथा आरानी आदिमां चोवीशमा तीर्थंकरना निर्वाण पछी पंदर कुलकरो कह्या छे, पण एनो निर्णय करी शकाय तेम नथी के उत्सर्पिणीमां बीजा आराने पर्यंते कुलकरो थाय छे के चोथा आरानी आदिमां थाय छे ? कारण के आ वातनो निर्णय अनंतर थनारी उत्सर्पिणीने अनुसारे करी शकाय छे, परंतु भावी उत्सर्पिणीमां कुलकरोने आश्रीने घणो

वादो दृश्यते. तथाहि–कालसप्ततिकादीपालिकाकल्पादिषु च द्वितीयारकपर्यंते विमलवाहनादयः सप्त कुलकरा उक्ताः, स्थानांगे तु सप्तमे स्थानके सप्त कुलकरा उक्ताः, तत्र सुमतिनामापि नोक्तं, दशमे तु सीमंकरादयो दशोक्तास्तत्र सुमतिनामोक्तं परं प्रांते न. समवायांगे तु सप्त तथैव, दश तु विमलवाहनादयः सुमतिपर्यंता उक्ताः । स्थानांगनवमस्थानके च सुमतिपुत्रत्वेन पद्मनाभोत्पत्तिरुक्ता, तथा जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रे च द्वितीयारके कुलकरा मूलत एव नोक्ताः, चतुर्थारके तु एकस्मिन् पक्षे मूलतो नोक्ताः, पक्षांतरे च पंचदशोक्तास्तथाहि–जाव ओसप्पिणीए पच्छिमे तिभागे वत्तव्वया सा भाणियव्वा कुलगरवज्जा उसभसामिवज्जा. अण्णे पढंति तीसे णं समाए पढमे तिभाए इमे पण्णरस कुलगरा समुप्पज्जिस्संति, तं जहा–सुमइ जाव उसभे सेसं तं चेव । दंडनीईओ पडिलोमाओ णेयव्वाओ. अत्र च ऋषभनामा कुलकरो न तु ऋषभस्वामिनामा तीर्थकृदिति तद्वृत्तौ. एवं च कुलकरानाश्रित्य दुष्षमाकालानुभावाद्वाचनाभेदजनितेषु उत्सर्पिणीकालभाविकुलकराणां भिन्नभिन्ननामताव्यस्तना-

---

विसंवाद शास्त्रमां देखाय छे. ते बतावे छे—कालसप्ततिका ने दीवाळीकल्प विगेरेमां बीजा आराने पर्यंते विमलवाहनादि सात कुलकरो थशे एम कह्युं छे. ठाणांगजीना सातमा ठाणामां पण सात कुलकरो कह्या छे तेमां सुमतिनुं नाम ज नथी. तेना ज दशमा ठाणामां सीमंकरादिक दश कुलकरो कह्या छे तेमां सुमतिनुं नाम कह्युं छे, पण ते छेल्लुं कह्युं नथी. समवायांगमां सात ते प्रमाणे ज कह्या छे अने दश तो विमलवाहनथी सुमतिपर्यंत कह्या छे, तथा स्थानांगना नवमा स्थानमां सुमति कुलकरना पुत्र तरीके पद्मनाभनी उत्पत्ति कही छे. तथा श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्रमां बीजा आरामां कुलकरो मूळथी ज कह्या नथी. चोथे आरे एक पक्षे मूळथी कह्या नथी अने पक्षांतरे पंदर कह्या छे. ते आ प्रमाणे–'अवसर्पिणीमां त्रीजा आराने पाछला त्रीजे भागे जे वक्तव्यता कही छे ते कुलकरने वर्जीने तथा ऋषभदेवने वर्जीने बाकीनी अहीं कहेवी. बीजा कहे छे के–ते चोथा आराना पहेला त्रीजा भागमां पंदर कुलकरो उपजशे. ते आ प्रमाणे–सुमति यावत् ऋषभ; बाकी बधां नामो ते ज प्रमाणे जाणवा. दंडनीति प्रतिलोमपणे जाणवी. अहीं ऋषभ नामना कुलकर (जुदा) समजवा. ऋषभस्वामी नामना तीर्थंकर न समजवा. एम तेनी वृत्तिमां कह्युं छे. आ प्रमाणे कुलकरोने आश्रीने दुष्षमा काळना अनुभावथी वाचनाभेदजनित उत्सर्पिणी काळ भावी कुलकरोनी

मतान्यूनाधिकनामताभिन्नारकभाविताभिधायकेषु शास्त्रवाक्येषु सत्सु तत्त्वं सर्वविद्वेद्यमिति ज्ञेयं.

अथ प्रकृतं–क्रमेणात्यंतसारस्या–द्व्युच्छिन्ने पावके सति । अग्निपक्वान्नाशनादि–स्थितिर्विच्छेत्स्यतेऽखिला ॥ २० ॥ क्रीडिष्यंति यथेच्छं ते प्रादुर्भूतैस्तुक्रमात् । कल्पद्रुमैर्दशविधैः पूर्यमाणमनोरथाः ॥ २१ ॥ पंचचापशतोत्तुंगाः स्युर्नित्यसनाशनार्थिनः । उत्कर्षतः पूर्वकोट्या–युषोऽत्र प्रथमं जनाः ॥ २२ ॥ एकपल्योपमोत्कृष्टा–युषः क्रोशोच्चभूघनाः । चतुर्थभक्त भोक्तारः पर्यंते ते च भाविनः ॥ २३ ॥ प्रवर्द्धमानपर्याये पूर्णे तुर्येऽरके क्रमात् । सुषमा नाम सुखकृत् पंचमारः प्रवेक्ष्यति ॥ २४ ॥ एकक्रोशोच्छ्रिता एक–पल्योपमपरायुषः । तत्रैकाहांतराहारा भाविनः प्रथमं जनाः ॥ २५ ॥ द्विक्रोशोच्चाश्च पर्यंते द्विपल्यपरमायुषः । षष्ठभक्तकृताहारा भविष्यंति नरोत्तमाः ॥ २६ ॥ अरके पंचमे पूर्णे–ऽथैवं पर्यायवृद्धितः । षष्ठोऽरकोऽथ सुषम–सुषमाख्यः प्रवेक्ष्यति ॥ २७ ॥ द्विक्रोशतुं-

---

भिन्न भिन्न नामता, व्यस्त नामता, न्यूनाधिक नामता तेम ज भिन्नारक भाविताना अभिधायक शास्त्रवाक्यो सते तेनुं तत्त्व सर्वविद् वेद्य समजवुं.

हवे प्रस्तुत कहे छे–अनुक्रमे अत्यंत सारस्यपणाथी अग्नि व्युच्छिन्न थये सते अग्निथी पकवेलुं अन्न खावा विगेरेनी सर्व स्थिति विच्छेद जशे. (२०) अने मनुष्यो तेमना मनोरथने पूरनारा दश प्रकारना कल्पवृक्षो अनुक्रमे प्रादुर्भाव पामवाथी यथेच्छ क्रीडा करशे. (२१) ते आराना प्रारंभमां पांचशें धनुष्य उंचा शरीरवाळा, दररोज भोजनना अर्थी अने करोड पूर्वना उत्कृष्ट आयुष्यवाळा मनुष्यो थशे. (२२) अने ते आराने अंते एक पल्योपमना उत्कृष्ट आयुष्यवाळा एक गाउ उंचा शरीरवाळा अने एकांतरे भोजन करनारा मनुष्यो थशे. (२३) आ प्रमाणे प्रवर्धमान पर्यायवाळो चोथो आरो पूर्ण थये सते अनुक्रमे सुखने करनार पांचमो सुषमा नामनो आरो प्रवेश करशे. (२४) तेना प्रारंभमां मनुष्यो एक कोश उंचा शरीरवाळा एक पल्योपमना उत्कृष्ट आयुवाळा ते एकांतर आहार करनारा थशे. (२५) ए आराने प्रांते बे गाउ उंचा शरीरवाळा, बे पल्योपमना उत्कृष्ट आयुवाळा ने बे दिवसने आंतरे आहार करनारा उत्तम मनुष्यो थशे. (२६) ए प्रमाणे पर्यायनी वृद्धिथी पांचमो आरो पूर्ण थये सते सुषमसुषमा नामनो छठ्ठो आरो प्रवेश करशे. (२७) तेना प्रारंभमां बे गाउ उंचा शरीरवाळा, बे पल्योपमना उत्कृष्ट

गाश्चात्रादौ द्विपल्योत्कृष्टजीविताः । द्विदिनांतरभोक्तारो भाविनो भुवि युग्मिनः ॥ २८ ॥ अंते क्रोशत्रयोत्तुंगा–स्त्रिपल्यपरमायुषः । भवितारो युगलिन–स्त्रिदिनांतरभोजिनः ॥ २९ ॥ उत्कृष्टं ह्यरकप्रांते युग्मिनामुच्छ्रयादिकं । तेभ्यः पूर्वेषां तु तेषां किंचिदूनोनमेव तत् ॥ ३० ॥ एवं पंशुलिकादीनां वृद्धिरप्यूह्यतां स्वयं । कल्पवृक्षादिभावानां पर्यायाणां च भूयसां ॥ ३१ ॥ एवं पूर्णे कालचक्रे पुनरप्यवसर्पिणी । पुनरुत्सर्पिणी-त्येवं कालचक्रं पुनः पुनः ॥ ३२ ॥

उन्नमच्च विनमच्च संततं, पारिणामिकगुणेन संगतं ।
चक्रमेतदसकृद्विवर्त्तयन्, क्रीडतीव भुवि कालबालकः ॥ ३३ ॥

विश्वाश्चर्यदकीर्त्तिकीर्त्तिविजयश्रीवाचकेंद्रांतिष–
द्राजश्रीतनयोऽतनिष्ट विनयः श्रीतेजपालात्मजः ।
काव्यं यत्किल तत्र निश्चितजगत्तत्त्वप्रदीपोपमे
सर्गः प्रापदशेषतां परिमितश्चारुश्चतुस्त्रिंशता ॥ ३४ ॥

॥ इति श्रीलोकप्रकाशे चतुस्त्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः । श्रीरस्तु ॥

आयुवाळा ने बे दिवसने आंतरे भोजन करनारा युगलिक मनुष्यो पृथ्वीपर थशे. (२८) ते आराने अंते त्रण गाउ उंचा शरीरवाळा, त्रण पल्योपमना उत्कृष्ट आयुवाळा अने त्रण दिवसने आंतरे भोजन करनारा युगलिको थशे. (२९) आ आराने प्रांते युगलिकोना शरीरनुं उंचपणुं विगेरे उत्कृष्ट थशे. तेनी पूर्वेनुं ते ज आरानुं शरीर, आयु विगेरे कांइक कांइक ओछुं ओछुं जाणवुं. (३०) ए प्रमाणे पांसळी[1] विगेरेनी वृद्धि तेम ज कल्पवृक्षादि भावोनुं अनेक प्रकारना पर्यायोनुं वृद्धिपणुं स्वयमेव समजवुं. (३१) ए प्रमाणे काळचक्र पूर्ण थये सते फरीने पण अवसर्पिणी ने उत्सार्पिणी तेम ज पुनः पुनः काळचक्र समजवा.(३२)

पारिणामिक गुणे करीने संगत, उन्नम्र ने विनम्र एम सतत प्रवर्ततुं काळचक्र वारंवार फरतुं सतुं पृथ्वीपर ते काळरूपी बाळक क्रीडा करतुं होय एम जणाय छे. (३३)

विश्वने आश्चर्य उत्पन्न करनार छे कीर्ति जेमनी एवा कीर्तिविजय वाचकेंद्रना शिष्य अने राजश्री तथा तेजपाळना पुत्र विनये जे आ काव्य रच्युं छे ते आ निश्चित एवा जगत्तत्वने बताववाने प्रदीप समान काव्यमां चारु एवो चोत्रीशनी संख्याना परिमाणवाळो एटले चोत्रीशमो सर्ग संपूर्ण थयो. (४३४)

इति श्रीलोकप्रकाशे चतुस्त्रिंशत्तमःसर्गः समाप्त.

---

१ उत्सर्पिणीना चोथा आराने अंते युगलिकोना शरीरमां पांसळी ६४, पांचमा आराने अंते १२८ अने छठ्ठा आराने अंते २५६ समजवी.

अथ पंचत्रिंशत्तमः सर्गः प्रारभ्यते ॥

अनंतकालचक्रैः पुद्गलपरावर्तः । द्रव्यक्षेत्रकालभाव–भेदात्स च चतुर्विधः ॥ १ ॥ एकैकश्च भवेद् द्वेधा सूक्ष्मबादरभेदतः । अष्टानामप्यथैतेषां स्वरूपं किंचिदुच्यते ॥ २ ॥

औदारिकवैक्रियाणा–हारकतैजसोचिताः । भाषोच्छ्वासमनःकर्म–योग्याश्चेत्यष्ट वर्गणाः ॥ ३ ॥ सजातीयपुद्गलानां समूहो वर्गणोच्यते । मौक्तिकानां मिथस्तुल्य–गुणानामिव राशयः ॥ ४ ॥ कुचिकर्णो यथा नाना–वर्णासंख्येयधेनुकः । चक्रे गवां सवर्णानां समुदायान् पृथक् पृथक् ॥ ५ ॥ तथाकृते चामूर्वस्ताः सुज्ञानाः सुग्रहा यथा । तथा तीर्थंकरोद्दिष्टाः पुद्गलवर्गणा अपि ॥ ६ ॥ तथाहि–एकाकिनः संति लोके येऽनंताः परमाणवः । एकाकित्वेन तुल्यानां तेषामेकात्र वर्गणा ॥ ७ ॥ द्व्यणुकानामनंतानां द्वितीया वर्गणा भवेत् । त्र्यणुकानामनंतानां तृतीया किल

सर्ग ३५ मो.

अनंता काळचक्रोथी एक पुद्गळपरावर्तन थाय. ते पुद्गळ परावर्तन द्रव्य, क्षेत्र, काळ ने भाव एम चार प्रकारनुं छे. (१) ते दरेक बे प्रकारे छे. सूक्ष्म ने बादर–ए रीते कुल आठ प्रकारना पुद्गळपरावर्तननुं स्वरूप कांइक कहे छे. (२)

औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, भाषा, उछ्वास, मन अने कर्मने योग्य एवी आठ प्रकारनी वर्गणाओ छे. (३) परस्पर श्वेतादि तुल्य गुणवाळा सजातीय पुद्गलोनो समूह ते (तुल्यगुणवाळा) मोतीओनी राशिनी जेम वर्गणा कहेवाय छे. (४) कुचिकर्ण नामनो शेठ जेम जुदा जुदा वर्णवाळी असंख्यात गायोना समूहमांथी एक सरखा वर्णवाळी गायोना समूहने पृथक् पृथक् राखतो हतो (५) तेम करवाथी ते गायो तेने जेम सुज्ञात अने सुग्रह थती हती तेम तीर्थंकरकथित पुद्गळ वर्गणाओ पण सारी रीते समजी शकाय तेवी अने सारी रीते ग्रहण करी शकाय तेवी थाय छे. (६) तेनी विशेष स्पष्टता करे छे–एकाकी (छुटा छुटा) जे अनंत परमाणुओ लोकने विषे छे ते एकाकीपणे तुल्य होवाथी तेनी अहीं एक वर्गणा समजवी. (७) बे अणुवाळा अनंता (स्कंधो)नी बीजी वर्गणा, त्रण परमाणुवाळा अनंता स्कंधोनी त्रीजी वर्गणा (८) एवी रीते द्विप्र-

वर्गणा ॥ ८ ॥ यावदेवमनंतानां गण्यप्रदेशशालिनां । स्कंधानां वर्गणा गण्या द्व्यणुकत्वादिजातिभिः ॥ ९ ॥ असंख्येयप्रदेशाना-मप्येकैकाणुवृद्धितः । असंख्येया वर्गणाः स्युः प्राग्वज्जातिविवक्षया ॥ १० ॥ तथानंताणुजातानां स्कंधानामपि वर्गणाः । भवंत्येकैकाणुवृद्ध्या-ऽनंता इति जिनैः स्मृतं ॥ ११ ॥ अत्यल्पाणुमयत्वेन स्थूलत्वादखिला अपि । ग्रहे नायांति जीवानां ग्रहणानुचिता इति ॥ १२ ॥

अथोल्लंघ्याखिला एताः सिद्धानंतांशसंमितैः । अभव्येभ्योऽनंतगुणैः परमाणुभिरुद्गतैः ॥ १३ ॥ स्कंधैर्याः स्युः समारब्धा वर्गणा विस्रसावशात् । जघन्या ग्रहणार्हाः स्यु-स्ताः किलौदारिकोचिताः ॥ १४ ॥ आभ्यश्चैकैकाणुवृद्धा मध्यमा ग्रहणोचिताः । तावद् ज्ञेया यावदौदा-रिकार्होत्कृष्टवर्गणाः ॥ १५ ॥ उत्कृष्टौदारिकार्हाभ्य-श्चैकेनाप्यणुनाधिकाः । भवंति पुनरप्यौदा-रिकानर्हा जघन्यतः ॥१६॥ ततश्चैकैकाणुवृद्धा अनर्हा मध्यमा बुधैः । तावद् ज्ञेया पुनर्याव-दुत्कृष्टाः स्युरनर्हकाः ॥ १७ ॥ एता बह्णु-

---

णुकत्वादि जातिवडे यावत् गण्य (संख्याता) परमाणुओवाळा अनंता स्कंधोनी संख्याती वर्गणाओ जाणवी. (९) ते करतां एकेक परमाणु वधता असंख्याता असंख्याता परमाणुओना अनंता अनंता स्कंधोनी पूर्वनी जेम जातिनी विवक्षाए असंख्याती वर्गणा जाणवी. (१०) ते करतां एकेक परमाणु वधता अनंता अनंता परमाणुओना स्कंधोनी अनंती अनंती वर्गणाओ जातिपणे पण अनंती जाणवी एम श्रीजिनेश्वरे कह्युं छे. (११) ए बधी अत्यल्प परमाणुओवाळी अने स्थूल (अवगाहनावाळी) होवाथी जीवोने ग्रहण करवाने अनुचित होवाथी ग्रहणमां आवती नथी. (१२)

हवे ते बधीने उल्लंघीने सिद्धने अनंतमे भागे ने अभव्यथी अनंतगुणा परमाणुओथी बनेला स्कंधोवडे विस्रसा परिणामे (स्वभावे) बनेली वर्गणाओ औदारिक शरीर योग्य जघन्य ग्रहण प्रायोग्य जाणवी. (१३-१४) ए वर्गणाओ करतां एकेक परमाणुओए वधता स्कंधोवाळी वर्गणाओ मध्यम ग्रहण योग्य त्यां सुधी जाणवी के ज्यां सुधी औदारिक उत्कृष्ट ग्रहण प्रायोग्य वर्गणा थाय. (१५) उत्कृष्ट औदारिक ग्रहण प्रायोग्य वर्गणाथी एक प्रदेश वधती परमाणुओवाळी अनंती औदारिकने अयोग्य एवी जघन्य वर्गणा जाणवी. (१६) त्यारपछी एकेक अणुए वधती औदारिक अयोग्य मध्यम वर्गणाओ बुधजनोए त्यां सुधी जाणवी के यावत् उत्कृष्ट औदारिक अनर्ह (अयोग्य) वर्गणा थाय.

निष्पन्न–त्वात्सूक्ष्माः परिणामतः । तत औदारिकानर्हाः स्थूलस्कंधोद्भवं हि तत् ॥ १८ ॥ यथा यथाणुभूयस्त्वं परिणामस्तथा तथा । स्कंधेषु सूक्ष्मः स्यात्तेषा–मल्पत्वे स्थूलमिष्यते ॥ १९ ॥ औदारिकापेक्षयैव किलैताः प्रचुराणुकाः । स्युः सूक्ष्मपरिणामाश्च वैक्रियापेक्षया पुनः ॥ २० ॥ स्वल्पाणुजातत्वात्स्थूल–परिणामा अमूस्ततः । वैक्रियानुचिताः सूक्ष्म–स्कंधोत्थं प्राच्यतो हि तत् ॥ २१ ॥

उत्कृष्टौदारिकानर्हा यास्ता एकाणुनाधिकाः । जघन्या वैक्रियार्हाः स्यु–स्ततो द्व्याद्यणुभिर्युताः ॥ २२ ॥ मध्यमा वैक्रियार्हाः स्यु–स्तदर्होत्कृष्टकावधि । जघन्यमध्यमोत्कृष्टा वैक्रियानुचितास्ततः ॥ २३ ॥ वैक्रियापेक्षया भूयो–ऽणुकाः सूक्ष्मा अमूः किल । आहारकापेक्षया च स्थूलाः स्तोकाणुका इति ॥ २४ ॥ एवमग्रेऽपि भाव्यं.

---

(१७) ए वर्गणाओ बहु अणुओथी निष्पन्न थयेली होवाथी स्वभावे ज सूक्ष्म परिणामवाळी होय छे तेथी ते औदारिक शरीरने अग्रहण प्रायोग्य छे केमके औदारिक शरीर स्थूळ स्कंधोथी उत्पन्न थाय छे. (१८) जेम जेम परमाणुओनुं वधारेपणुं थाय छे तेम तेम स्कंधोने विषे परिणाम सूक्ष्म थाय छे अने जेम जेम परमाणुओ ओछा होय छे तेम तेम परिणाम स्थूळ होय छे. (१९) आ वर्गणाओ औदारिकने आश्रयीने ज प्रचुर अणुओवाळी अने सूक्ष्म परिणामवाळी होय छे अने वैक्रियनी अपेक्षाए तो स्वल्प परमाणुओथी उत्पन्न थयेली होवाथी स्थूळ परिणामवाळी होय छे तेथी ते वैक्रियने अनुचित (ग्रहणने अयोग्य) होय छे; केमके ते वैक्रिय शरीर पूर्वना औदारिक करतां वधारे सूक्ष्म स्कंधोथी उत्पन्न थयेलुं होय छे. (२०–२१)

औदारिकने अयोग्य एवी उत्कृष्ट वर्गणा करतां एक अणुवडे अधिक ते जघन्य वैक्रियने ग्रहण योग्य वर्गणा समजवी. तेमां बे आदि अणुओयुक्त थवाथी मध्यम वैक्रिय योग्य वर्गणाओ थाय छे. ते वैक्रिय योग्य उत्कृष्ट वर्गणा सुधी समजवी. त्यारपछी वैक्रियने अयोग्य एवी जघन्य, मध्यम ने उत्कृष्ट वर्गणाओ जाणवी; (२२–२३) केमके ते वैक्रियनी अपेक्षाए वधारे अणुओवाळी अने सूक्ष्म परिणामवाळी छे; तथा आहारकनी अपेक्षाए ते स्थूल परिणामवाळी अने ओछा अणुओवाळी होय छे. (२४) ए प्रमाणे आगळ पण समजवुं.

जघन्यमध्यमोत्कृष्टा–स्तत आहारकोचिताः । तदनर्हास्ततस्त्रेधा ततश्च तैजसोचिताः ॥ २५ ॥ ततस्तथैव त्रिविधा–स्तैजसानुचितास्ततः । त्रेधा भाषोचिता भाषा–नुचिताश्च ततस्त्रिधा ॥ २६ ॥ आनप्राणोचितास्त्रेधा तदनर्हास्ततस्त्रिधा । मनोऽर्हास्तदनर्हाश्च त्रिविधाः स्युस्ततः क्रमात् ॥ २७ ॥ जघन्यमध्यमोत्कृष्टाः कर्मणामुचितास्ततः । भवंति वर्गणास्त्रेधा याभ्यः कर्म प्रजायते ॥ २८ ॥ इतोऽप्यूर्ध्वं ध्रुवाचित्ता–द्यो याः संति वर्गणाः । नार्थाभावात्ता इहोक्ताः प्रोक्तास्त्वावश्यकादिषु ॥ २९ ॥ तदर्थिना च ते ग्रंथा भावनीयाः सवृत्तयः । क्षेत्रावगाहाद्युक्तानां वर्गणानामथोच्यते ॥ ३० ॥

एता यथोत्तरं सूक्ष्मा ज्ञेया बह्वणुका अपि । प्रथमौदारिकानर्ह–वर्गणायाः प्रभृत्यथ ॥ ३१ ॥ सर्वा अप्यंगुलासंख्य–भागमात्रावगाहनाः । यथोत्तरं च सूक्ष्मत्वा–त्स ऊनोनो विभाव्यताम् ॥ ३२ ॥ औदारिकोचिता यावत् क्षेत्रं स्पृशति वर्गणा । तदनर्हा ततो न्यूनं भाव्या इत्यखिला अपि

त्यारपछी आहारकने उचित जघन्य, मध्यम ने उत्कृष्ट वर्गणा जाणवी. त्यारपछी तेने अयोग्य त्रण प्रकारनी जाणवी. त्यारपछी तैजसने उचित त्रण प्रकारनी जाणवी. (२५) पछी तैजसने अनुचित त्रण प्रकारनी जाणवी. पछी त्रण प्रकारनी भाषाने उचित, पछी त्रण प्रकारनी भाषाने अनुचित, (२६) पछी त्रण प्रकारनी आनप्राण (श्वासोश्वास) ने उचित, पछी त्रण प्रकारनी आनप्राणने अनुचित, पछी त्रण प्रकारनी मनने उचित, पछी त्रण प्रकारनी मनने अनुचित एम अनुक्रमे जाणवुं. (२७) पछी जघन्य, मध्यम ने उत्कृष्ट त्रण प्रकारनी कार्मणने उचित वर्गणाओ जाणवी के जेथी कर्मबंध थाय छे अर्थात् जे कर्मबंध करवामां उपयोगी थाय छे. (२८) एनी पछी बीजी ध्रुव अचित्तादिक वर्गणाओ छे, पण ते अहीं जरुरनी न होवाथी कही नथी. आवश्यकादिकमां ते कहेली छे. (२९) तेना अर्थीओए ते ग्रंथो वृत्तिसहित वांचवा. हवे उपर कहेली वर्गणाओनो क्षेत्रावगाह विगेरे कहे छे. (३०)

ए वर्गणाओ यथोत्तर बहु परमाणुओवाळी छतां सूक्ष्म अवगाहवाळी जाणवी. तेमां प्रथम औदारिक अनर्ह वर्गणाओथी मांडीने बधी वर्गणाओ अंगुळना असंख्यातमा भागनी अवगाहनावाळी जाणवी. ए अवगाहनानुं उत्तरोत्तर सूक्ष्मपणुं होवाथी ते अंगुलनो असंख्यातमो भाग ऊन ऊन जाणवो. (३१–३२) औदारिकोचितवर्गणा जेटला क्षेत्रने अवगाहे (स्पर्शे) छे ते करतां तेने अनर्ह एवी त्यारपछीनी वर्गणा न्यूनक्षेत्रने

॥ ३३ ॥ औदारिकवैक्रियाद्यं-तरालेष्वत्र वर्गणाः । उक्ता एकैकाणुवृद्ध्या-नर्हा या उभयोरपि ॥ ३४ ॥ ताश्च सिद्धानामनंत-तमभागेन संमिताः । अभव्येभ्योऽनंतगुणा मानतः परिकीर्त्तिताः ॥ ३५ ॥ औदारिकाद्यष्टकस्य जघन्या ग्रहणोचिताः । उक्ता या वर्गणास्ताभ्य उत्कृष्टा ग्रहणोचिताः ॥ ३६ ॥ स्वस्वानंततमे भागे यावंतः परमाणवः । एकैकवृद्धैस्तावद्भि-रधिकाः स्युः किलाणुभिः ॥ ३७ ॥ अत एवांतराले स्यु-र्जघन्योत्कृष्टयोस्तयोः । अनंता वर्गणा मध्या एकैकाणुविशेषिताः ॥ ३८ ॥ सर्वाः परिणमंत्येता वर्गणा विस्रसावशात् । यथास्वमुपयुज्यंते ततश्चौदारिकादिषु ॥ ३९ ॥ अयोग्याः स्युः पुनर्योग्याः योग्याः पुनरयोग्यकाः-परिणामपरावर्त्ता-द्विवर्त्तंते हि वर्गणाः ॥ ४० ॥

स्पर्शी छे एम उत्तरोत्तर बधी वर्गणाओ माटे समजवुं. (३३) अहीं औदारिक ने वैक्रियादिना अंतराळे जे वर्गणाओ एकेक अणुए वधती अने बंनेने अयोग्य कही छे (३४) ते वर्गणाओ सिद्धने अनंतमे भागे अने अभव्योथी अनंतगुणी मानथी कहेली छे. (३५) औदारिकादि आठ प्रकारमां जघन्य ग्रहणोचित जे वर्गणाओ कही छे ते करतां उत्कृष्ट ग्रहणोचितवर्गणाओ पोतपोताने अनंतमे भागे जेटला परमाणुओ आवे तेटला परमाणुओ पैकी एक एक वधारीए तेटला परमाणुओवडे अधिक होय छे. (३६–३७) आथी करीने ज ते जघन्य अने उत्कृष्टनी वच्चेनी एक एक परमाणुवडे वधती मध्यम वर्गणाओ अनंती थाय छे. (३८) ए बधी वर्गणाओ विस्रसावशे ज परिणमे छे अने तेथी औदारिकादिकने विषे यथायोग्यपणे जोडाय छे. (३९) प्रथम अयोग्या, पछी योग्या, योग्या पछी पाछी अयोग्या होय छे अने ते वर्गणाओ परिणामना परिवर्तनपणाथी परावर्तपणाने पामे छे (पलटाय छे). (४०)

ग्रहण अग्रहण प्रायोग्य वर्गणाओनो क्रम.

सर्वाग्रहण प्रायोग्य वर्गणा.

१ औदारिक ग्रहण प्रायोग्य वर्गणा. जघन्य–मध्यम–उत्कृष्ट.	४ वैक्रिय अग्रहण प्रायोग्य वर्गणा. जघन्य–मध्यम–उत्कृष्ट.
२ औदारिक अग्रहण प्रायोग्य वर्गणा. जघन्य–मध्यम–उत्कृष्ट.	५ आहारक ग्रहण प्रायोग्य वर्गणा. जघन्य–मध्यम–उत्कृष्ट.
३ वैक्रिय ग्रहण प्रायोग्य वर्गणा. जघन्य–मध्यम–उत्कृष्ट.	६ आहारक अग्रहण प्रायोग्य वर्गणा. जघन्य–मध्यम–उत्कृष्ट.

७ तैजस ग्रहण प्रायोग्य वर्गणा. जघन्य-मध्यम-उत्कृष्ट.	१२ आनप्राण अग्रहण प्रायोग्य वर्गणा. जघन्य-मध्यम-उत्कृष्ट.
८ तैजस अग्रहण प्रायोग्य वर्गणा. जघन्य-मध्यम-उत्कृष्ट.	१३ मन ग्रहण प्रायोग्य वर्गणा. जघन्य-मध्यम-उत्कृष्ट.
९ भाषा ग्रहण प्रायोग्य वर्गणा. जघन्य-मध्यम-उत्कृष्ट.	१४ मन अग्रहण प्रायोग्य वर्गणा. जघन्य-मध्यम-उत्कृष्ट.
१० भाषा अग्रहण प्रायोग्य वर्गणा. जघन्य-मध्यम-उत्कृष्ट.	१५ कार्मण ग्रहण प्रायोग्य वर्गणा. जघन्य-मध्यम-उत्कृष्ट.
११ आनप्राण ग्रहण प्रायोग्य वर्गणा. जघन्य-मध्यम-उत्कृष्ट.	ध्रुव अचित्तादि वर्गणाओ.

औदारिकप्रभृतयएताआहारकावधि । अष्टस्पर्शाः पंचवर्ण-रसा गंधद्वया न्विताः ॥ ४१ ॥ एकवर्णरसगंधः स्याद् द्विस्पर्शश्च यद्यपि । परमाणु-स्तथाप्येते समुदायव्यपेक्षया ॥ ४२ ॥ तैजसाद्या वर्गणा अ-प्येवं वर्णादिभिः स्मृताः । स्पर्शतस्तु चतुःस्पर्शा-स्तेषां मृदुलघुध्रुवौ ॥४३॥ अन्यौ द्वौ च स्निग्ध शीतौ स्निग्धोष्णौ वा प्रकीर्त्तितौ । रूक्षोष्णौ रूक्षशीतौ वा विज्ञैर्वेद्यौ यथागमं ॥४४॥ अयं पंचसंग्रहवृत्तिशतकबृहट्टी-काद्यभिप्रायः, कर्मप्रकृतिप्रज्ञप्त्याद्यभिप्रायेण त्वेतासु स्निग्धोष्णरूक्षशी तरूपमेव स्पर्शचतुष्टयं स्यान्नान्यदिति.

तेमां औदारिकथी आहारक सुधीनी वर्गणाओ अष्टस्पर्शी, पंचवर्णी पंचरसवाळी, ने बे गंधवाळी होय छे. (४१) जो के परमाणुओ तो एक वर्ण, एक रस, एक गंध ने बे स्पर्शवाळा होय छे, परंतु आठ स्पर्शादिक जे कहेल छे ते समुदायनी (स्कंधनी) अपेक्षाए कहेल छे. (४२) तैजसादि वर्गणा पण ए ज रीते (प्रथमनी सर्व प्रकारनी वर्गणा प्रमाणे) वर्ण, गंध, रसवडे (पांच वर्ण, पांच रस, बे गंधवाळी) होय छे, परंतु स्पर्शथी चार स्पर्शवाळी होय छे. तेमां मृदु अने लघु ए बे स्पर्श ध्रुवपणे (निरंतर) होय छे अने बीजा बे स्निग्ध ने शीत अथवा स्निग्ध ने उष्ण होय छे एम कह्युं छे अथवा तो रूक्ष ने उष्ण के रूक्ष ने शीत ए बे होय छे. एम विज्ञ पुरुषोए आगमना कथनथी समजवुं. (४३-४४) आ पंचसंग्रहवृत्ति, शतकबृहट्टीका विगेरेनो अभिप्राय छे. कर्मप्रकृति अने प्रज्ञप्ति विगेरेना अभिप्राये तो ए वर्गणाओमां स्निग्ध, उष्ण, रूक्ष ने शीत ए चार स्पर्श ज होय छे; बीजा होता नथी.

सर्वलोकगतान् सर्वा-नणूनेकोऽसुमानिह । औदारिकादिसप्तक-त्वेन स्वीकृत्य मुंचति ॥ ४५ ॥ कालेन यावता काल-स्तावानुक्तो जिनेश्वरैः । द्रव्यतः पुद्गलपरा-वर्तो बादर आगमे ॥ ४६ ॥ आहारकांगभावेन स्वीकृत्योत्सर्जनं पुनः । न संभवेत्सर्वाणूनां मितवारं हि तद्भवेत ॥ ४७ ॥ सप्तानामथ चौदारि-कादीनां मध्यतः पुनः । भावेनैकेनैव चौदा-रिकांगत्वादिनाणुसान ॥ ४८ ॥ सर्वान् परिणमय्याणू-नेक एव विमुंचति । कालेन यावता नाम्नान् द्रव्यतः सूक्ष्म इष्यते ॥ ४९ ॥

सर्वेऽथ लोकाकाशस्य प्रदेशा निरनुक्रमं । स्पृश्यंते मरणैः सर्वे जीवेनैकेन यावता ॥ ५० ॥ तावान् कालो बादरः स्यात् क्षेत्रतः पुद्गलोऽत्र च । खांशा अपूर्वस्पृष्टास्ते गण्याः स्पृष्टचरास्तु न ॥ ५१ ॥ यस्मिन् विवक्षिते व्योम-प्रदेशे स्यान्मृतोऽसुमान् । पुनस्तदव्यवहित-प्रदेशे म्रियतेऽथ सः ॥ ५२ ॥ कालांतरे पुनरपि तृतीये तदनंतरे । म्रियते गण्यते सैष प्रदेशः खलु लेख्यके ॥ ५३ ॥ एवं लोकाभ्रप्रदेशैः

हवे पुद्गळपरावर्त समजावे छे-सर्व लोकमां रहेला सर्व परमाणुओने एक जीव औदारिक विगेरे सात वर्गणापणे स्वीकारीने (ग्रहण करीने) जेटलाकाळे मूके तेटला काळनुं जिनेश्वरोए बादर द्रव्य पुद्गलावर्त आगममां कह्युं छे. (४५-४६) एमां आहारक वर्जवानुं कारण ए छे के सर्व परमाणुओनुं आहारक शरीरपणे स्वीकार करीने मूकवानुं संभवी शके तेम ज नथी. कारणके आखा भवचक्रमां परिमित (चार) वखत ज आहारक शरीर विकुर्वी शकाय छे. (४७) हवे ए सात औदारिकादि वर्गणामांथी कोइ पण एक वर्गणापणे सर्व परमाणुओने परिणमावीने एक ज जीव जेटले काळे मूके ते काळनुं नाम द्रव्यथी सूक्ष्म पुद्गळपरावर्त कहीए. (४८-४९)

लोकाकाशना सर्व प्रदेशोने एक जीव अनुक्रम विना मरणवडे जेटलाकाळे स्पर्शे तेटलाकाळे बादरक्षेत्र पुद्गळ परावर्तन थाय. एमां नवा आकाश प्रदेशने स्पर्शे ते गणवा; प्रथम स्पर्श करेलाने फरी फरीने स्पर्शे ते गणवा नहीं. (५०-५१) हवे कोइपण विवक्षित आकाशप्रदेशे जीव मरण पाम्यो, त्यारपछी कोइ काळे तेने लगता ज आकाशप्रदेशे मरण पामे, (५२) वळी त्यारपछी कोइ काळे तेने लगता प्रदेशे मरण पामे तेने लेखामां गणवा. (५३) ए रीते क्रमसर लोकाकाशना सर्व प्रदशोने एक जीव मृत्युवडे

---

१ आहारक विना.

सर्वैरपि यथाक्रमं। जीवेन मृत्युना स्पृष्टैः सूक्ष्मोऽसौ क्षेत्रतो भवेत् ॥५४॥ खप्रदेशे व्यवहिते एकद्व्यादिप्रदेशकैः। भवेद्यन्मरणं तच्च गण्यते नात्र लेख्यके ॥ ५५ ॥ जीवो यद्यप्यसंख्येयान् खांशान् जघन्यतोऽपि हि। अवगाह्यैव म्रियते संख्येयान्न तु कर्हिचित् ॥ ५६ ॥ तथाप्यत्रावधीभूत एक एव विवक्ष्यते। नभःप्रदेशो मरण-स्पृष्टोऽन्येऽस्पृष्टका इति ॥ ५७॥

कालचक्रस्य समयै-र्निखिलैर्निरनुक्रमं। मरणैर्नांगिना स्पृष्टैः कालतो बादरो भवेत् ॥ ५८ ॥ कालचक्रस्य कस्यापि म्रियते प्रथमक्षणे। अन्यस्य कालचक्रस्य द्वितीयसमयेऽसुमान् ॥ ५९ ॥ तृतीयस्य पुनः काल-चक्रस्यैव तृतीयके। समये म्रियते देवा-त्तदैवायुःक्षये सति ॥ ६० ॥ कालचक्रस्य समयैः सर्वैरेवं यथाक्रमं। मरणैर्नांगिना स्पृष्टैः सूक्ष्मः स्यादेष कालतः ॥ ६१ ॥ यत्र चाद्यद्वितीयादि-क्षणक्रमसतीत्य च। मरणं स्यात्कालचक्रं लेख्यके तन्न गण्यते ॥ ६२ ॥

भावतः पुद्गलपरा-वर्त्तं सूक्ष्मं तथापरं। उपदेष्टुं यथाशास्त्रं वक्त-

---

फरसे त्यारे तेटला काळनुं सूक्ष्म क्षेत्र पुद्गळ परावर्तन थाय. (५४) आमां एक बे विगेरे प्रदेशोथी व्यवहित आकाशप्रदेशे मरण पामे ते प्रदेशो अहीं लेखामां गणवाना नथी. (५५) जो के जीव जघन्यथी पण असंख्यात आकाशप्रदेशने अवगाहीने ज मरण पामे छे, संख्याता प्रदेशोने स्पर्शीने कदापि मरण पामतो नथी. (५६) तथापि तेना अवधिभूत एक आकाशप्रदेशने ज मरणवडे स्पर्शेल गणवो, बीजाने अस्पृष्ट गणवा. (५७)

हवे काळचक्रना सर्व समयोने एक जीव अननुक्रमे मरणवडे जेटला काळे स्पर्शे तेटला काळे बादर काळपुद्गळ परावर्त थाय. (५८) अने कोइ पण काळचक्रना प्रथम समये जीव मरण पामे, त्यारपछी कोइ पण काळचक्रना बीजा समये मरण पामे, त्यारपछी वळी कोइ पण काळचक्रना त्रीजा समये मरण पामे,[1] एम अनुक्रमे काळचक्रना सर्व समयोने मरणवडे स्पर्शे त्यारे तेटला काळनुं सूक्ष्म काळपुद्गळपरावर्तन थाय. (५९-६१) जे पहेलो, बीजो, त्रीजो एम समयना क्रम शिवाय गमे ते समये कोइ पण काळचक्रमां मरण थाय ते आमां लेखे गणाय नहीं. (६२)

हवे भावपुद्गळपरावर्त्त सूक्ष्म ने बादर बंने प्रकारनुं कहेवाने माटे यथाशास्त्र वक्त-

---

१ अहीं मूळमां बीजा काळचक्रना बीजे समये, त्रीजा काळचक्रना त्रीजे समये एम अर्थ थाय छे तेवो अर्थ अन्यत्र कोइ ठेकाणे जणातो नथी, अहीं आवा शब्द केम लख्या हशे ते समजी शकातुं नथी.

व्यांतरमुच्यते ॥ ६३ ॥ एकस्मिन् समये जीवा ये पृथ्वीकायिकादयः । प्रविशंत्यवशाः कर्म–नुन्नाः सूक्ष्माग्निकायिषु ॥६४॥ लोकाकाशप्रमाणानां खखंडानां महीयसां । असंख्यानां खप्रदेशैः प्रमितास्तेंगिनः स्मृताः ॥६५॥ ये पुनः पूर्वमुत्पन्ना–स्तेजस्कायतयांगिनः । पुनर्विपद्योत्पद्यंते स्वकायेष्वेव कर्मभिः ॥ ६६ ॥ ते पूर्वोद्दिष्टसूक्ष्माग्नि–प्रविशज्जीवराशिषु । न लेख्यके समायांति ते हि पूर्वप्रविष्टकाः ॥६७॥ एकक्षणप्रविशद्भ्य एभ्यः सूक्ष्माग्निकायिकाः । पूर्वप्रविष्टा ये ते स्यु–रसंख्येयगुणाधिकाः ॥ ६८ ॥ यतो जघन्यतोऽप्येतें–तर्मुहूर्त्तायुषोंगिनः । प्रतिक्षणं चासंख्येया उत्पद्यंते नवा नवाः ॥६९॥ तेभ्यः कायस्थितिस्तेषा–मसंख्येयगुणाधिका । एकैकस्य ह्यसंख्येय–कालचक्राणि सा गुरुः ॥ ७० ॥ ततोऽप्यस्या अनुभाग–बंध–स्थानानि तानि च । असंख्येयगुणानि स्युः संयमस्थानकानि च ॥ ७१ ॥ कायस्थितौ ह्येकैकस्यां स्थितिबंधा असंख्यशः । यथा जघन्यतः काय–स्थितिरंतर्मुहूर्त्तिका ॥७२॥ ततः परैकसमया–धिकान्या द्विक्षणाधिका । त्रिक्षणाभ्यधिका याव–दुत्कृष्टा सर्वतोंतिमा ॥७३॥ एकैकस्मिन्ननुभाग–

व्यांतर कहे छे—(६३) एक समये पृथ्वीकायिकादिकना जेटला जीवो परवशपणे कर्मनी प्रेरणाथी सूक्ष्म अग्निकायमां प्रवेश करे छे. (६४) ते जीवो असंख्य लोकाकाशना प्रदेशप्रमाण कह्या छे. (६५) वळी जे पूर्वे तेजस्कायपणे जीवो उपजेला छे अने फरीथी कर्मवडे पोतानी ज कायमां मरण पामीने पाछा उत्पन्न थाय छे (६६) ते पूर्वोद्दिष्ट सूक्ष्म अग्निकायमां प्रवेश करती जीवराशिमां गणवाना नथी, केमके ते तो पूर्वे तेमां प्रवेशेला छे. (६७) एक समये तेमां (सूक्ष्म अग्निकायमां) प्रवेश करता आ जीवो करतां सूक्ष्म अग्निकायमां पूर्वप्रविष्ट जीवो असंख्यगुणा अधिक छे, (६८) कारण के जघन्यथी पण ए अंतर्मुहूर्त्तना आयुवाळा जीवो प्रतिक्षण नवा नवा असंख्याता उपजे छे. (६९) ते जीवोनी संख्या करतां तेनी कायस्थिति असंख्यगुणाधिक छे. केमके ते एकेकनी उत्कृष्टी कायस्थिति असंख्याता काळचक्रनी छे. (७०) ते करतां पण ते कायस्थितिना अनुभागबंधस्थानो अने संयमस्थानको असंख्यातगुणा छे, (७१) केमके एकेक कायस्थितिमां स्थितिबंधस्थान असंख्याता होय छे. जेमके जघन्यथी कायस्थिति अंतर्मुहूर्त्तनी छे तेथी आगळ पहेली एक समयाधिक, बीजी बे समयाधिक, त्रीजी त्रिसमयाधिक एम यावद् उत्कृष्ट सर्वथी छेल्ली स्थिति जाणवी. (७२–७३) ते एकेक

बंधस्थानान्यसंख्यशः । स्थितिबंधे भवंतीति निर्दिष्टं तत्त्ववेदिभिः ॥ ७४ ॥ तथाहुः—एगसमयंमि लोए सुहुमगणिजिआउ जे उ पविसंति । ते हुंत संखलोग—प्पएसतुल्ला असंखिज्जा ॥ ७५ ॥ तत्तो असंखगुणिया अगणिकाया तेसिं कायठिई । तत्तो संजमअणुभाग—बंधट्ठाणाणिसंखाणि ॥ ७६ ॥ एवं च प्रवचनसारोद्धारसूत्रवृत्त्याद्यभिप्रायेण सूक्ष्माग्निकायिकजीवकायस्थितेरनुभागबंधस्थानानि भावपुद्गलपरावर्त्तनिरूपणायोपक्रांतानि. पंचसंग्रहकर्मग्रंथसूत्रवृत्त्यादिषु तु सामान्यत एवानुभागबंधस्थानान्युक्तानि, तथाहि—भावपुद्गलपरावर्त्तमाह—अणुभागट्ठाणेसुं अणंतरपरंपराविभत्तेहिं । भावंमि बायरो सो सुहुमो सव्वेसणुक्कमसो ॥ १ ॥ इति पंचसंग्रहे.

अथात्रानुभागबंधस्थानस्वरूपनिरूपणायोपक्रम्यते—प्राग् यानि कर्मयोग्यानि द्रव्याण्युक्तानि तान्यथ। स्वाधिष्ठिताभ्रप्रदेशा—वगाढानीह चेतनः ॥ ७७ ॥ उपादाय कर्मतया द्राक् परिणमयत्ययं । किंचित्साधर्म्यतो

स्थितिबंधमां तेना अनुभागबंधस्थानो असंख्याता असंख्याता छे एम तत्त्ववेदी महात्माओए कह्युं छे. (७४) तथाहुः—" एक समये लोकमां सूक्ष्म अग्निकायमां जे जीवो प्रवेश करे छे ते असंख्याता लोकाकाशना प्रदेशप्रमाण असंख्याता जाणवा. (७५) ते करतां असंख्यातगुणा अग्निकाय जीवो छे. तेनी कायस्थिति ने ते दरेक स्थितिना अनुभागबंधस्थान तथा संयमस्थान तेथी असंख्यातगुणा छे. (७६)

आ प्रमाणे श्रीप्रवचनसारोद्धारसूत्र वृत्त्यादिनाअभिप्रायवडे सूक्ष्म अग्निकाय जीवोनी कायस्थितिना अनुभागबंधस्थानो भावपुद्गळपरावर्त कहेवानी शरुआतमां लीधा छे. पंचसंग्रह, कर्मग्रंथसूत्रवृत्त्यादिकमां तो सामान्यथी ज अनुभागबंधना स्थान कह्या छे. तथाहि—' भावपुद्गळपरावर्त कहे छे—अनुभागबंधना स्थान अनंतर ने परंपरपणे (आगळ—पाछळ) एम बधा वेदाय ते बादरभावपुद्गळपरावर्तन ने अनुक्रमे ते सर्व स्थानो वेदाय ते सूक्ष्मभावपुद्गळपरावर्तन जाणवुं (१) इति पंचसंग्रहे.

हवे अहीं अनुभागबंधना स्थाननुं स्वरूप कहेवानो आरंभ करे छे—पूर्वे जे कर्मयोग्य द्रव्यो कह्या छे तेमांथी स्वअधिष्ठित आकाशप्रदेशावगाढ जे होय तेने ज चेतन ग्रहण करीने ते समये ज कर्मपणे परिणमावे छे. कांइक साधर्म्यपणुं होवाथी अग्निनुं दृष्टांत अहीं

वह्नि-दृष्टांतोऽत्र निरूप्यते ॥ ७८ ॥ यथा दहनयोग्यानि द्रव्याणि ज्वलनोऽपि हि । स्वगोचरस्थितान्येव प्रापयेद्वह्निरूपतां ॥ ७९ ॥ न तु स्वविषयातीता-न्यथितां नेतुमीश्वरः । जीवोऽपि स्वप्रदेशेभ्यो द्रव्यमेवं बहिःस्थितं ॥ ८० ॥ नैव कर्मयोग्यमपि कर्मतां नेतुमीश्वरः । गृह्णाति तानि जीवश्च सर्वैरात्मप्रदेशकैः ॥ ८१ ॥ तथाहि-जीवप्रदेशाः सर्वेऽपि शृंखलावयवा इव । स्युः परस्परसंबद्धाः प्रतीका वपुषीव वा ॥ ८२ ॥ एकस्मिन्नपि तज्जीव-प्रदेशे व्यापृते सति। सर्वेऽपि व्याप्रियंतेऽन्ये ग्रहीतुं कर्मणां दलं ॥ ८३ ॥ यथा घटाद्युपादातुं कराग्रे व्यापृते सति । मणि-बंधकूर्परांसा-द्योऽप्यवयवाः परे ॥ ८४ ॥ व्याप्रियंते मंदमंद-तरमंद-तमं ध्रुवं । एवं सर्वात्मप्रदेश-व्यापारः कर्मसंग्रहे ॥ ८५ ॥ इदं च कर्म-द्रव्याणां ग्रहणं सादि भाव्यतां । तद्द्रव्यदेशकालाद्यैः स्यादनादिप्रवाहतः ॥ ८६ ॥ एषां च कर्मद्रव्याणां भागप्राप्तिर्यथा भवेत् । एकेनाध्यवसायेन गृहीतानां तथोच्यते ॥ ८७ ॥

कहेवामां आवे छे. (७७-७८) अग्नि पण दहन योग्य द्रव्यो जे स्वगोचर स्थित होय तेने ज अग्निपणे पमाडे छे. (७९) जे स्वविषयातीत होय तेने अग्निपणुं पमाडी शकतो नथी (अर्थात् तेने बाळी शकतो नथी) तेम जीव पण स्वप्रदेशथी बहिःस्थित (बहार रहेला) कर्मयोग्य पुद्गलोने पण कर्मपणुं पमाडी शकवाने समर्थ थतो नथी. हवे जे स्व-प्रदेशावगाढ होय ते कर्मयोग्य द्रव्योने सर्व आत्मप्रदेशोवडे ग्रहण करे छे. (८०-८१) तथाहि 'जीवना प्रदेशो सर्वे सांकळना अवयवोनी जेम परस्पर संबद्ध होय छे अथवा शरीरना अवयवोनी जेवा होय छे.' (८२) तेमांनो एक जीवप्रदेश पण कर्मना दळ ग्रहण करवा माटे व्यापार करे छे त्यारे बीजा बधा प्रदेशो पण व्यापार करे छे. (८३) जेम घटादिकने उपाडवा माटे हाथनो अग्रभाग वापर्ये सते कांडुं, कोणी, खभा विगेरे बीजा बधा अवयवो मंद, मंदतर, मंदतमपणे ध्रुव (चोकस) व्यापार करे छे. तेम कर्मना संग्र-हमां (ग्रहण करवामां) पण बधा आत्मप्रदेशो व्यापार करे छे (८४-८५) आ कर्म-द्रव्योनुं ग्रहण द्रव्य, देश, काळादिनी अपेक्षाए सादि समजवुं, अने प्रवाहनी अपेक्षाए अनादि समजवुं. (८६) हवे एक अध्यवसायवडे ग्रहण करेला ए कर्मद्रव्योनी भागप्राप्ति जे रीते थाय छे (अर्थात् जेवी रीते भाग पडे छे) ते कहे छे. (८७)—

क्रमान्महत्तरो भागो महास्थितिककर्मणां । एवं स्थित्यनुसारेण भागोऽष्टास्वपि कर्मसु ॥ ८८ ॥ आयुषस्तत्र सर्वेभ्यः स्तोको भागो भवेदिह । सर्वेभ्योऽल्पस्थितिकत्वा–द्विशेषाभ्यधिकस्ततः ॥ ८९ ॥ कर्मांशानां भवेद्भागः कर्मणोर्नामगोत्रयोः । परस्परापेक्षया तु द्वयोः स्यादेतयोस्समः ॥९०॥ ज्ञानदर्शनावरणां–तरायाणां बृहत्तमः । भागः स्यान्नामगोत्राभ्यां त्रयाणां च मिथः समः ॥ ९१ ॥ तेभ्योऽपि मोहनीयस्य भवेद्भागो बृहत्तमः। न्याय्यो महास्थितेरस्य महतां ह्यखिलं महत् ॥९२॥ वेदनीयस्य भागः स्या–न्मोहादल्पस्थितेरपि । सर्वेभ्योऽपि महीयान् य–त्तत्र हेतुर्निशम्यतां ॥ ९३ ॥ भागेऽल्पे वेदनीयस्य स्फुटत्वं सुखदुःखयोः । नानुभावयितुं शक्त–मिदं तादृक् स्वभावतः ॥ ९४ ॥ वेदनीयं च भवति प्रभूतदलिकं यदि । तदा स्वफलभूते ते सुखदुःखे स्फुटात्मके ॥ ९५ ॥ ईष्टे व्यक्त्या दर्शयितुं नान्यथेत्यंशकल्पना । एकाध्यवसायोपात्त–कर्मद्रव्येषु भाव्यतां ॥ ९६ ॥ स चैकोऽध्यवसायः स्या–न्नानावैचित्र्यभाजनं ।

अनुक्रमे मोटो भाग मोटी स्थितिवाळा कर्मने मळे छे. एम स्थितिने अनुसारे आठे कर्मने विषे भागप्राप्ति थाय छे. (८८) तेमां आयुष्यने सर्व करतां थोडो भाग मळे छे, कारण के तेनी स्थिति सर्वथी अल्प छे. तेना करतां विशेषाधिक कर्मांशोनो भाग नाम ने गोत्र ए बे कर्मने मळे छे. परस्परनी अपेक्षाए ते बंने सरखी स्थितिवाळा होवाथी बंनेने सरखो भाग मळे छे. (८९–९०) ते करतां ज्ञानावरण, दर्शनावरण ने अंतरायकर्मने मोटो भाग मळे छे, कारण के नामगोत्र करतां तेनी स्थिति वधारे छे. परस्परमां ते त्रणेने सरखो भाग मळे छे. (कारण के ते त्रणेनी सरखी स्थिति छे.) (९१) ते करतां मोहनीय कर्मने मोटो भाग मळे छे ते न्याय्य छे, कारण के तेनी स्थिति सर्वथी वधारे छे. एटले मोटानुं बधुं मोटुं होय छे. (९२) वेदनीय कर्मने मोहनीय कर्म करतां अल्प स्थितिवाळुं होवा छतां सर्व करतां वधारे भाग मळे छे. तेमां हेतु शुं छे? ते सांभळो—(९३) जो वेदनीय कर्मने अल्प भाग मळे तो तेनो तेवा प्रकारनो स्वभाव होवाथी ते सुख–दुःखनुं स्फुटपणुं अनुभवावी शके नहीं, (९४) तेथी जो वेदनीय प्रभूत दळवाळुं होय तो ते स्वफळभूत सुखदुःख स्फुटपणे व्यक्तिवडे बतावावाने समर्थ थाय; अन्यथा व्यक्तपणे बतावावाने समर्थ थइ शके नहीं. आ अंशनी कल्पना एक अध्यवसायवडे ग्रहण करेला कर्मद्रव्यनी जाणवी. (९५–९६) ते एक अध्यवसाय नाना प्रकारनी विचित्रतानुं भाजन

अस्मिन्नेकस्वरूपे हि भवेत्कर्मापि तादृशं ॥ ९७ ॥ विना कारणभेदं हि कार्यभेदो न संभवेत् । कर्मवैचित्र्यबीजस्य तदस्यापि विचित्रता ॥ ९८ ॥ अयं विचित्रतागर्भो-ऽध्यवसायः स्वयं भजेत् । संक्लेशं वा विशुद्धिं वा तादृक्सामग्र्यपेक्षया ॥ ९९ ॥ सामग्री च द्रव्यक्षेत्र-कालभावात्मिका तथा । संक्लिष्टो वा विशुद्धो वा-ध्यवसायः शरीरिणाम् ॥ १०० ॥ कदाप्यष्टविधे बंधे हेतुर्भवति कर्हिचित् । सप्तविधे षड्विधे च कदाप्येकविधेऽपि सः ॥ १ ॥ उक्तं च-कहं एगज्झवसायगहियं दलियं अट्ठविहाइ बंधत्ताए परिणमइ ? उच्यते-तस्स अज्झवसाणमेव तारिसं, जेण अट्ठविहाइ बंधत्ताए परिणमइ, जहा कुंभगारो मिइपिंडेण सरावाईणि परिणामेइ तस्स तारिसो परिणामो, तेणं परिणामेणं संजुत्तस्स दलियं अट्ठविहाइत्ताए परिणमइ.

प्राग्वच्च रचनांशानां सप्तषड्विधबंधयोः । सर्वत्र वेदनीयांशो ज्येष्ठोऽन्येषां यथास्थिति ॥ २ ॥ यदा त्वेकं वेदनीयं कर्म बध्नात्यसौ तदा ।

होय छे. जो कदाच आ अध्यवसाय एक ज स्वरूपवाळो होय तो कर्म पण एक ज स्वरूपवाळुं होवुं जोइए, (९७) केमके कारणना भेद विना कार्यनो भेद संभवे नहीं; तेथी कर्मनी विचित्रताना बीजरूप आत्री (अध्यवसायनी) पण विचित्रता समजवी. (९८) आ विचित्रतावाळो अध्यवसाय पोतानी मेळे तेवा तेवा प्रकारनी सामग्रीनी अपेक्षाए संक्लेशने अथवा विशुद्धिने पामे छे, (९९) अने जे सामग्री छे ते द्रव्य, क्षेत्र, काळ अने भावरूप छे, तेना वडे जीवोना अध्यवसाय संक्लिष्ट के विशुद्ध थाय छे. (१००) ते अध्यवसाय कोइ वखत अष्टविध बंधमां, कोइ वखत सप्तविध बंधमां, कोइ वखत षड्विध बंधमां अने कोइ वखत एकविधबंधमां हेतुभूत थाय छे. (१०१) कह्युं छे के-'एक अध्यवसाये ग्रहण करेला कर्मदलिक अष्टविध बंधकपणे शा कारणथी परिणमे ? ' उत्तर-" तेना अध्यवसाय ज तेवा छे के जेथी अष्टविध बंधकपणे परिणमे छे. जेम कुंभार माटीना पिंडने सरावला विगेरेपणे परिणमावे छे. तेनो तेवो परिणाम होय छे तेथी तेवा परिणामे युक्त कर्मदलिक अष्टविधपणे परिणमे छे. "

पूर्वे कह्या प्रमाणे सप्तविध, षड्विध बंधनी रचनाना अंशमां वेदनीयनो अंश सर्वथी मोटो होय छे, ते शिवायना बीजा कर्मोना अंश पोतपोतानी स्थिति प्रमाणे होय छे. (२)

सर्वं योगवशोपात्तं दलं तस्यैव भाव्यतां ॥३॥ तथोक्तं पंचसंग्रहे–जं समयं जावइयाइं बंधए ताण एरिसविहीए। पत्तेयं पत्तेयं भागे निव्वत्तए जीवो ॥ ४ ॥ बध्नाति मूलप्रकृती–र्यथाल्पाल्पास्तथा तथा। प्रदेशबंधमुत्कृष्टं कुरुतेऽल्पिष्टमन्यथा ॥ ५ ॥ न्याय्यमेतच्च खंडादे–र्यथांशः प्राप्यते महान्। विभाजकेषु स्तोकेषु तेषु भूयस्सु चाल्पकः ॥ ६ ॥ आहुश्च–जह जह य अप्पपगईण बंधगो तहतहत्ति उक्कोसे। कुणइ पएसबंधं जहन्नयं तस्स वच्चासे ॥ ७ ॥

इह पूर्वं कर्मयोग्य–वर्गणावर्त्तिनोऽणवः। स्वाभाविकरसाढ्याः स्यु–र्हेतवः सर्वकर्मणां ॥ ८ ॥ यदा तु जीवैर्गृह्यंते तदा तेषु किलाणुषु। कषायाध्यवसायेन ग्रहणक्षण एव वै ॥ ९ ॥ अविभागपरिच्छेदा रससंबंधिनोऽमिताः। प्रादुर्भवंति सर्वेभ्यो जीवेभ्योऽनंतसंगुणाः ॥१०॥ विविधाश्च स्वभावाः स्यु–र्ज्ञानावारकतादयः। जीवानां पुद्गलानां चा–चिंत्यशक्तिकता यतः ॥ ११ ॥ यथा शुष्कतृणादीनां पूर्वं ये परमाणवः। प्रायेणैक-

---

ज्यारे आ जीव एकलुं वेदनीय कर्म ज बांधे छे त्यारे योगना वशथी ग्रहण करेल सर्व दळ ते वेदनीयनुं ज समजवुं. (३) श्रीपंचसंग्रहमां कह्युं छे के–'जे समये जेटला कर्मो बंधाय ते समये आ विधि प्रमाणे जीव प्रत्येक प्रत्येकना भागनी वहेंचण करे छे. (४) मूळ प्रकृति जेम जेम ओछी बंधाय तेम तेम प्रदेशबंध उत्कृष्ट करे अने जेम जेम मूळ प्रकृति वधारे बंधाय तेम तेम (त्यारे त्यारे) प्रदेशबंध अल्पिष्ट करे. (५) जुओ खंड विगेरेना जेम जेम विभाजक (भाग पडावनार) ओछा होय तेम तेम अंश मोटा मळे अने भाग पडावनार वधारे होय त्यारे अंश नानो मळे ए न्याय्य ज छे. (६) कह्युं छे के– 'जेम जेम जीव अल्प प्रकृतिओनो बंधक होय तेम तेम प्रदेशबंध उत्कृष्ट करे अने तेना व्यत्यासमां (फेरफारमां वधारे प्रकृतिओ बंधाती होय त्यारे) जघन्य प्रदेशबंध करे. (७)

अहीं प्रथम कर्मयोग्य वर्गणामां वर्तता अणुओ सर्व कर्मना हेतुभूत स्वाभाविक रसवाळा होय छे. (८) तेने ज्यारे जीव ग्रहण करे छे त्यारे ते अणुओमां सकषायी अध्यवसायवडे ग्रहण समये ज ते रससंबंधी अविभागपरिच्छेद सर्व जीवोथी अनंतगुणा अपरिमित थइ जाय छे. (९–१०) वळी ते पुद्गलो ज्ञानावारकतादि विविध स्वभाववाळा थाय छे केमके जीव तथा पुद्गलो अचिंत्य शक्तिवाळा छे. (११) जेम सुका घास

स्वरूपाः स्युः स्वाभाविकरसास्तथा ॥ १२ ॥ गवादिभिर्गृहीतास्ते क्षीरा-
दिरसरूपतां । सप्तधातुपरीणामा—च्चांति चानेकरूपतां ॥ १३ ॥ तथैका-
ध्यवसायात्ते—ष्वपि कर्मदलाणुषु । रसोद्भेदोऽनंतभेदो भवेत्तद्दर्श्यते
स्फुटं ॥ १४ ॥ तथाहि—अभव्येभ्योऽनंतगुणैः सिद्धानंतांशसंमितैः ।
निष्पन्नानणुभिः स्कंधा—नादत्ते प्रतिक्षणं ॥ १५ ॥ अविभागपरिच्छे-
दान् करोत्येषु रसस्य च । सर्वजीवानंतगुणान् प्रत्येकं परमाणुषु ॥ १६ ॥
योऽर्द्धार्द्धेन च्छिद्यमानो रसांशः सर्वविद्धिया । न दत्तेंऽशं सोऽविभाग—परि-
च्छेद इह स्मृतः ॥ १७ ॥ तत्रैकसमयोपात्ते कर्मस्कंधेऽत्र येऽणवः । सर्वा-
ल्पिष्टरसाश्छिद्य—मानास्तेऽपि रसांशकैः ॥ १८ ॥ सर्वजीवानंतगुणान्
प्रयच्छंति रसांशकान् । एषां चाल्परसाणूनां निचयो वर्गणादिमा
॥ १९ ॥ अन्यासां वक्ष्यमाणानां वर्गणानामपेक्षया । स्युर्भूयांसोऽणवोऽ-
त्राल्प—रसा हि बहवोऽणवः ॥ २० ॥ रसाविभागभागेन तत एकेन
येऽधिकाः । द्वितीया वर्गणा तेषा—मणूनामिह कीर्त्तिता ॥ २१ ॥ इयं च

विगेरेमां पूर्वे जे परमाणुओ होय छे ते प्राये एक स्वरूपवाळा ने स्वाभाविक रसवाळा होय छे. (१२) ते गायविगेरेना ग्रहण करवाथी क्षीरादि रसरूपताने तेम ज सप्तधातुपणे परिणमवाथी अनेकरूपताने पामे छे. (१३) ते ज रीते एक अध्यवसाये ग्रहण करेला ते कर्मदळाणुमां रसनो उद्भेद अनंत भेदवाळो थाय छे. ते स्फुट रीते देखाडीए छीए. (१४) तथाहि—अभव्यथी अनंतगुणा ने सिद्धने अनंतमे भागे एटला परमाणुओवडे निष्पन्न थयेला स्कंधोने जीव प्रतिक्षण ग्रहण करे छे, (१५) अने ते प्रत्येक परमाणुमां रसना अविभाग परिच्छेद सर्व जीवथी अनंतगुणा करे छे. (१६) जे रसांशनो सर्वज्ञनी बुद्धिए अर्ध-अर्धपणे छेद करतां छेवट अंश न थइ शके—भाग न पडे तेने अहीं अविभाग परिच्छेद कहीए. (१७) तेमां एक समये ग्रहण करेला कर्मस्कंधोमां जे परमाणु सर्व करतां अल्प रसवाळा होय ते पण रसांशवडे छेदाता सता सर्व जीवथी अनंतगुणा रसांशने आपे छे. एवा अल्प रसवाळा परमाणुओनो जे समूह ते पहेली वर्गणा. (१८–१९) आगळ कहेवाशे एवी बीजी वर्गणाओनी अपेक्षाए आ वर्गणाना अल्प रसवाळा परमाणुओ बहु विशेष होय छे, कारण के जे अल्परसवाळा परमाणुओ होय ते घणा होय छे. (२०) पहेली वर्गणा करतां एक रसाविभाग भागवडे अधिक एवा जे परमाणुओ छे तेवा परमाणुओना समूहनी बीजी वर्गणा कही छे. (२१) आ वर्गणा परमाणुओनी अपेक्षाए पहेली वर्गणा

वर्गणा हीना परमाणुव्यपेक्षया । आद्याया वर्गणाया य–देते तेभ्यो रसाधिकाः ॥ २२ ॥ रसाविभागभागस्ये–त्येकैकस्य प्रवृद्धितः । वर्गणाः परमाणूनां तावद्वाच्या मनीषिभिः ॥२३ ॥ भवंति वर्गणा याव–त्सिद्धानंतांशसंमिताः । अभव्येभ्योऽनंतगुणा–स्ता रसांशविशेषिताः ॥ २४ ॥ रसभागांश्च यच्छंति सर्वांत्यवर्गणाणवः । सर्वाद्यवर्गणाणुभ्यः किलानंतगुणाधिकान् ॥ २५ ॥

राशिश्चासां वर्गणानां स्पर्द्धकं प्रथमं भवेत् । समूहो हि वर्गणाना–मिह स्पर्द्धकमुच्यते ॥ २६ ॥ एकैकेन रसांशेन वृद्धाश्च परमाणवः । अथैतस्मान्न लभ्यंते प्रथमस्पर्द्धकात्परं ॥ २७ ॥ सर्वजीवानंतगुणै रसांशैरेव चाधिकाः । संप्राप्यंते त एवेदं पूर्णं स्पर्द्धकमादिमं ॥ २८ ॥ क्रमाद्रसनिरंशांशे–र्वृद्धौ हि स्पर्द्धकं भवेत् । स्यादन्यस्पर्द्धकारंभो निरंशांशक्रमत्रुटौ ॥ २९ ॥ आद्यस्पर्द्धकपर्यंता–णुभ्यो येऽथ रसांशकैः । सर्वजीवानंतगुणैः प्रवृद्धाः परमाणवः ॥ ३० ॥ तेषां च समुदायः स्यात् प्रथमा वर्गणा किल । द्वितीयस्य स्पर्द्धकस्य ततः स्यात्पूर्ववत्क्रमः ॥ ३१ ॥ एकै-

---

करतां हीन छे, कारण के आ बीजी वर्गणाना अणुओ पहेली वर्गणाना अणुओ करतां अधिक रसवाळा छे. (२२) आ प्रमाणे अकेक रसाविभाग भागवडे वधती वर्गणाओ बुद्धिमानोए त्यां सुधी कहेवी ज्यां सुधी रसांशवडे वधती ते वर्गणाओ अभव्योथी अनंतगुणी अने सिद्धना अनंतमा भाग जेटली थाय. (२३–२४) सर्वांत्यवर्गणाना अणुओ सर्वाद्यवर्गणामां रहेला अणुओ करतां अनंतगुणाधिक रसांशने आपे छे. (एटला रसांशो तेमां होय छे.) (२५)

आ वर्गणाओनी राशि ते प्रथम स्पर्धक समजवो, केमके अहीं वर्गणाओना समूहना स्पर्धक कहेला छे. (२६) ए पहेला स्पर्धकथी आगळ एकेक रसांशे वधता परमाणुओ लभ्य थइ शके नहीं (जगतमां होय ज नहीं), परंतु सर्व जीवोथी अनंतगुणा रसांशे वधता परमाणुओ ज लभ्य थइ शके–ए रीते पहेलुं स्पर्धक पूर्ण थयुं जाणवुं. (२७–२८) अनुक्रमे रसना निरंश अंशोथी वधता परमाणुओ मळे त्यारे नवा स्पर्धको थाय छे, ए अन्य स्पर्धकनो आरंभ निरंशांशक्रमत्रुटिने अंते थाय छे. (२९) पहेला स्पर्धकना छेल्ला अणुओनी पछी सर्व जीवथी अनंतगुणा रसांशवडे वधता जे परमाणुओ होय तेनो समूह ते बीजा स्पर्धकनी पहेली वर्गणा छे. त्यारपछी पूर्वनी जेम क्रम समजवो. (३०–३१)

केन रसांशेन प्रवृद्धैः परमाणुभिः । आरब्धा वर्गणा याव-त्सिद्धानंतांशसंमिताः ॥ ३२ ॥ एतासां वर्गणानां च समुदायो भवेदिह । द्वितीयं स्पर्द्धकं पूर्णी-भूतेऽस्मिन् स्पर्द्धके पुनः ॥३३॥ एकद्व्याद्यैः रसच्छेदैः-र्न प्राप्यंतेऽणवोऽधिकाः। प्राप्यंते किं तु ते सर्व-जीवानंतगुणाध्रुवं ॥ ३४ ॥ अणूनां प्राग्वदेतेषां समूहो वर्गणादिमा । तृतीयस्य स्पर्द्धकस्य ततः स्यात्पूर्ववत्क्रमः ॥ ३५ ॥ भवंति स्पर्द्धकान्येवं प्रवृद्धानि रसांशकैः । सिद्धानंततमभाग-तुल्यानीति जिना विदुः ॥ ३६ ॥

अनुग्रहाय शिष्याणां दृष्टांतोऽत्र निरूप्यते । असद्भावस्थापनया वर्गणास्पर्द्धकानुगः ॥ ३७ ॥ आद्यस्य स्पर्द्धकस्याद्या वर्गणा कल्प्यते यथा । रसांशशतसंयुक्तै-रारब्धा परमाणुभिः ॥ ३८ ॥ अथैकैकरसच्छेद-वृद्धाणुरथाभिरादितः । दशभिर्वर्गणाभिः स्या-त्पूर्णं स्पर्द्धकमादिमं ॥ ३९ ॥ ततो दशोत्तरशत-रसांशैः परमाणुभिः । नाप्यते वर्गणारब्धा नापि द्व्याद्यंशकाधिकैः ॥ ४० ॥ किंतु त्रिंशशतरस-च्छेदाढ्यैः परमाणुभिः। प्राप्यते वर्गणारब्धा द्वितीये स्पर्द्धकेऽग्रिमा ॥ ४१ ॥ ततः पुनरपि

एकेक रसांशवडे वधता परमाणुओथी बनेली वर्गणाओ सिद्धना अनंतमा भाग जेटली थाय त्यारे ते वर्गणाओना समुदायनुं बीजुं स्पर्धक थाय. आ स्पर्धक पूर्ण थये सते पाछा एक बे विगेरे रसांशे वधता परमाणुओ न पामीए किंतु सर्व जीवथी अनंतगुणा रसांशोथी वधता परमाणुओ पामीए. (३२-३४) तेवा परमाणुओना समुदायनी त्रीजा स्पर्धकनी पहेली वर्गणा. त्यारपछी पूर्वे प्रमाणे क्रम जाणवो. (३५) एवी रीते रसांशोवडे वधता परमाणुओना स्पर्धको सिद्धना अनंतमा भागप्रमाण थाय छे एम जिनेश्वरो कहे छे. (३६).

अहीं शिष्यना अनुग्रहमाटे असद्भाव स्थापनावडे वर्गणा अने स्पर्धकने अनुसरतुं दृष्टांत कहे छे.(३७) पहेला स्पर्धकनी पहेली वर्गणा सो रसांशवाळा परमाणुओथी शरु करवी.(३८) हवे ते प्रथम वर्गणा करतां एकेक रसांशथी वधता अणुओथी थयेली दश वर्गणाओवडे (१०९ सुधी) पहेलुं स्पर्धक पूर्ण करवुं. (३९) त्यारपछी एक सो दश रसांशवाळा परमाणुओथी एटले एक बे विगेरे रसांशोथी वधता परमाणुओ पामीए नहीं तेथी बीजी वर्गणा त्यांथी (१२९ सुधी) शरु थाय नहीं; (४०) परंतु एकसो त्रीश रसांशवाळा परमाणुओ पामीए एटले तेटला रसांशवाळा परमाणुओथी वर्गणाओनो आरंभ थाय अने ते बीजा स्पर्धकनी पहेली वर्गणा कहेवाय. (४१)

प्राग्व-द्रसैकैकलवाधिकैः । परमाणुभिरारब्धा लभ्यंते खलु वर्गणाः ॥ ४२ ॥ क्रमवृद्धौ रसांशानां समाप्तानां समाप्यते । द्वितीयं स्पर्द्धकमिति स्युरनंतान्यमून्यहो ॥४३॥ रसांशवृद्धैरणुभि-रारब्धाश्च यथोत्तरं । अल्पाणुका वर्गणाः स्युः स्थापनात्र विलोक्यतां ॥ ४४ ॥ इति प्रतिज्ञातं अनुभागस्वरूपं निर्व्यूढं.

एतेषां चानुभागानां बंधस्थानान्यसंख्यशः। तेषां निष्पादका येऽध्यवसायास्तेऽप्यसंख्यशः ॥ ४५ ॥ तथाहि-एकप्रादेशिकी श्रेणि-र्या लोकस्य घनाकृतेः । असंख्येयतमे तस्या भागे येऽभ्रप्रदेशकाः ॥ ४६ ॥ तावंति

त्यारपछी एकेक रसांशे वधता परमाणुओ पामीए एटले तेनी बीजी वर्गणाओ थाय. (४२) ए रीते क्रमथी वधता रसांशोवाळा परमाणुओ समाप्त थाय एटले के ज्यारे एक रसांश वधता परमाणुओ न मळे त्यारे बीजुं स्पर्धक (१३९ सुधी) पूर्ण थाय. ते बीजा स्पर्धकमां एवी वर्गणाओ अनंती थाय, (४३) परंतु ए प्रमाणे यथोत्तर रसांशवडे वधता परमाणुओथी आरंभ कराती वर्गणाओ ओछा ओछा परमाणुओवाळी थाय, एने माटे अहीं करेली स्थापना जुओ. (४४.) आ प्रमाणे प्रतिज्ञात करेलुं अनुभागनुं स्वरूप कह्युं.

प्रतिपरमाणुमां रसांश एकेक वर्गणामां परमाणु

रसांश	१००	१०१	१०२	१०३	१०४	१०५	१०६	१०७	१०८	१०९
परमाणु	१०००	९७५	९५०	९२५	९००	८७५	८५०	८२५	८००	७७५
वर्गणा	पहेली	बीजी	त्रीजी	चोथी	पांचमी	छठ्ठी	सातमी	आठमी	नवमी	दशमी

उपर प्रमाणे पहेलुं स्पर्धक थया पछी ११० थी १२९ सुधीना रसांशवाळा परमाणु न मळे. पछी १३० थी १३९ सुधी मळे तेनुं बीजुं स्पर्धक थाय.

प्रतिपरमाणु रसांश एकेक वर्गणामां परमाणु बीजा स्पर्धकनी वर्गणा.

रसांश	१३०	१३१	१३२	१३३	१३४	१३५	१३६	१३७	१३८	१३९
परमाणु	७५०	७२५	७००	६७५	६५०	६२५	६००	५७५	५५०	५२५
वर्गणा	पहेली	बीजी	त्रीजी	चोथी	पांचमी	छठ्ठी	सातमी	आठमी	नवमी	दशमी

आनी पछीना स्पर्धको माटे अने वर्गणानी संख्या माटे उपर प्रमाणे समजवुं.

ए अनुभागनां बंधस्थानो असंख्याता छे. तेना निष्पादक एवा अध्यवसायो पण असंख्याता छे. (४५). तथाहि-घनीकृत लोकनी एक प्रदेशिकी जे श्रेणी तेना असंख्या-

योगस्थानानि तेभ्योऽसंख्यगुणाधिकाः । तीव्रमंदाद्यो भेदा एकेकप्रकृतेः स्मृताः ॥ ४७ ॥

प्रकृत्योरवधिज्ञान–दर्शनावरणाख्ययोः । स्युर्लोकानामसंख्यानां खप्रदेशैर्मिता भिदः ॥ ४८ ॥ भेदा असंख्या एवानु–पूर्वीष्वपि चतसृषु । एवं शाठ्या भिदोऽसंख्याः प्रकृतिष्वपरास्वपि ॥ ४९ ॥ तथोक्तं–ओहिणाणावरणओहिदंसणावरणपगईओ असंखेज्जलोगागासप्पएसमित्ताओ खेज्जइ भागे जत्तिया आगासपएसा तत्तियाओ. एकैकस्मिन्नुक्तयोग–स्थाने प्राप्यंत एव यत् । सकला बंधमाश्रित्य पूर्वोक्ताः प्रकृतेर्भिदः ॥ ५० ॥ ततः प्रकृतिभेदाः प्रा–गसंख्येयगुणाधिकाः । योगस्थानेभ्यो यदुक्ता–स्तद्युक्तमुपपद्यते ॥ ५१ ॥ उक्तं च–जोगट्ठाणेहिंतो असंखेज्जगुणाओ पगईओ । एक्केक्के जोगट्ठाणे वट्टमाणे एयाओ सव्वाओ ॥१॥ बंधइत्ति काउं । तेभ्यः प्रकृतिभेदेभ्य–श्चासंख्येयगुणाधिकाः । स्थितिभेदा जघन्याद्या ज्येष्ठांताः क्षणवृद्धितः ॥ ५२ ॥ स्थितिर्लघ्वी स्थिति-

---

तमा भागमां जेटला आकाशप्रदेशो होय तेटला योगस्थानो जाणवा. ते करतां असंख्यगुणाधिक तीव्र मंदादि भेदो एकेक प्रकृतिना कह्या छे. (४६–४७) ते आ प्रमाणे—

तीव्रतम	तीव्रतर	तीव्र
मंद	मंदतर	मंदतम
अतिमंद	अतिमंदतर	अतिमंदतम

अवधिज्ञानावरण ने अवधिदर्शनावरण प्रकृतिना भेदो असंख्य लोकाकाशना प्रदेश जेटला छे. (४८) चार आनुपूर्वीने विषे पण असंख्य भेदो छे. ए प्रमाणे बीजी प्रकृतिओमां पण असंख्य भेदो जाणवा. (४९). तेने माटे कह्युं छे के–'अवधिज्ञानावरण ने अवधिदर्शनावरण प्रकृतिना असंख्य लोकाकाशना जेटला प्रदेशो थाय तेटला भागो समजवा–' एकेक उक्त योगस्थाने बंधने आश्रीने पूर्वे कह्या तेटला बधा प्रकृतिना भेद पामीए, (५०) तेथी प्रथम प्रकृतिभेदो योगस्थानो करतां असंख्येय गुणाधिकजे कह्या छे ते युक्त ज छे. (५१). कह्युं छे के–'योगस्थानो करतां असंख्यातगुणी प्रकृतिओ छे, कारण के एकेक योगस्थाने वर्तता जीव बधी प्रकृतिओ बांधे छे. ।१।' हवे ते प्रकृतिभेद करतां असंख्येयगुणाधिक स्थितिभेदो जघन्यथी मांडीने उत्कृष्टपर्यंत समय समयनी वृद्धिथी थाय छे. (५२)

स्थानं प्रथमं परिकीर्त्तितं। सैकक्षणा द्वितीयं सा तृतीयं द्विक्षणाधिका ॥ ५३ ॥ इत्यादि. प्रतिप्रकृतिभेदं य–त्स्थितिभेदा असंख्यकाः । ततः प्रकृतिभेदेभ्य–स्तेऽसंख्येयगुणा इति ॥ ५४ ॥ स्थितिबंधाध्यवसाया–स्तेभ्योऽसंख्यगुणाधिकाः । एकैकस्मिन् स्थितिस्थाने बध्यमाने हि देहिभिः ॥ ५५ ॥ तद्धेतवोऽध्यवसाया नानाजीवव्यपेक्षया। असंख्येय-लोकवियत्–प्रदेशप्रमिताः स्मृताः ॥ ५६ ॥ एभ्यश्चाध्यवसायेभ्यो–ऽप्य-संख्येयगुणानि च। जिनैर्दृष्टान्यनुभाग–बंधस्थानानि कर्मसु ॥ ५७ ॥ जंतोर्लेश्यापरीणाम–विशेषाः संभवंति ये । कषायोदयसंमिश्रा–स्तीव्र-मंदादयोऽमिताः ॥ ५८ ॥ जघन्यादेकसमय–स्थितिकास्ते जिनैः स्मृताः। उत्कर्षतोऽष्टसमय–स्थितिकाः समवेदिभिः ॥ ५९ ॥ स्युः साधकतमास्ते चा–नुभागबंधनं प्रति। ततोऽनुभागबंधस्य स्थानान्युच्यंत उत्तमैः ॥६०॥ एकैकस्मिन् स्थितिबंधा–ध्यवसाये ह्यसंख्यशः। दृष्टाः केवलिभिर्नाना–नुभागबंधहेतवः ॥ ६१ ॥ कषायमिश्रलेश्यानां तीव्रमंदादयो भिदः । स्थितिबंधाशयेभ्यः स्युः–स्तदसंख्यगुणा हि ते ॥ ६२ ॥ अनुभागसृजो

सर्व करतां लघु स्थिति ते पहेलुं स्थितिस्थान कह्युं छे, तेथी एक समय अधिक ते बीजुं, बे क्षण अधिक ते त्रीजुं इत्यादि स्थितिस्थानो समजवा, (५३) जेथी करीने दरेक प्रकृतिभेदे स्थितिभेद असंख्याता थाय छे तेथी प्रकृतिभेद करतां स्थितिस्थान असंख्यात-गुणा सिद्ध थाय छे. (५४) स्थितिबंधना अध्यवसाय स्थान ते करतां असंख्यगुणाधिक जाणवा, केमके जीवोवडे एकेक स्थितिस्थान बंधाता होय त्यारे तेना हेतुभूत अध्यवसायो अनेक जीवोनी अपेक्षाए असंख्याता लोकाकाशना प्रदेशप्रमाण कह्या छे. (५५–५६) ए अध्यवसायो करतां कर्मने विषे रहेला अनुभागना बंधस्थान असंख्यातगुणा जिने-श्वरोए कह्या छे. (दीठा छे) (५७). प्राणीओने कषायोदय संमिश्र अने तीव्रमंदादिक अपरिमित जे लेश्यापरिणामविशेषो संभवे छे. (५८) ते जघन्यथी एक समयनी स्थितिवाळा अने उत्कृष्टथी आठ समयनी स्थितिवाळा समवेदी एवा जिनेश्वरोए कह्या छे. (५९) ते स्थानो अनुभागबंधप्रति साधकतम कारणभूत होय छे तेथी उत्तम एवा परमा-त्माए तेने अनुभागबंधना स्थान कह्या छे. (६०) एकेक स्थितिबंध अध्यवसाये असंख्याता अनुभागबंधना हेतु केवळीओए दीठा छे. (कह्या छे.) (६१) तीव्रमंदादि भेदो कषायमिश्र लेश्याना होय छे तेथी स्थितिबंधना अध्यवसायो करतां ते असंख्यातगुणा होय छे. (६२)

जीवा-ध्यवसायाश्च ते द्विधा । कषायमिश्रलेश्यानां परिणामात् शुभा-
शुभाः ॥ ६३ ॥ शुभैराधत्तेऽनुभागं क्षीरखंडरसोपमं । जीवः कर्मपुद्ग-
लाना-मन्यैर्निंबरसोपमं ॥६४॥ अध्यवसायनामाना अशुभाश्च शुभाश्च ते ।
संख्यातिगानां लोकानां प्रदेशैः प्रमिताः स्मृताः ॥ ६५ ॥ शुभा विशेषा-
भ्यधिकाः केवलं कथिता जिनैः । अशुभाः किंचिदूनाः स्यु-र्युक्तिस्तत्र
निशम्यतां ॥ ६६ ॥ यानेव रसबंधस्या-ध्यवसायान् क्रमस्थितान् ।
संक्लिश्यमान ऊर्ध्वोर्ध्व-मारोहत्यसुमानिह ॥ ६७ ॥ विशुद्ध्यमानस्तानेवा-
वरोहति क्रमादधः । शुभानां प्रकृतीनां तु रसबंधे विपर्ययः ॥ ६८ ॥
संक्लिश्यमानोऽवरोह-त्यारोहच्छुध्यमानकः । उभये च ततस्तुल्याः सौध-
सोपानपंक्तिवत् ॥ ६९ ॥ केवलं क्षपको येष्व-ध्यवसायेषु संस्थितः ।
क्षपकश्रेणिमारोह-त्तेभ्यो नासौ निवर्तते ॥ ७० ॥ क्षपकस्य ततः
श्रेष्ठा-ध्यवसायव्यपेक्षया । ऊचिरेऽध्यवसायाः प्रा-गशुभेभ्योऽधिकाः
शुभाः ॥ ७१ ॥ एभ्योऽनुभागबंधस्य स्थानेभ्योऽनंतसंगुणाः । एकाध्य-

---

तेथी अनुभागने सर्जनारा जीवोना अध्यवसायो कषायमिश्र लेश्याना परिणामने लीधे शुभ अने अशुभ एम बे प्रकारना छे. (६३) शुभ अध्यवसायथी जीव क्षीर-खांडना रस जेवो अनुभाग (रस) उत्पन्न करे छे, अने ए करतां अन्य (अशुभ अध्यव-साय) थी लींबडाना रस जेवो कटुक रस उत्पन्न करे छे. (६४) ते शुभ अने अशुभ बंने प्रकारना अध्यवसायो असंख्याता लोकाकाशना प्रदेशप्रमाण छे. (६५) ते बंनेमां शुभ अध्यवसाय कांइक अधिक जिनेश्वरोए कह्या छे अने अशुभ अध्यवसाय कांइक न्यून कह्या छे. तेमां युक्ति छे ते सांभळो. (६६) रसबंधना क्रमस्थित जे अध्यवसायो उपर जीव संक्लिश्यमान थतो सतो उपर उपर आरोहण करे छे, ते ज अध्यवसायोथी अनुक्रमे विशुद्धयमान थयो सतो नीचे उतरे छे, पण शुभ प्रकृतिना रसबंधमां तेथी विपर्यय छे. (६७–६८) एटले के संक्लिश्यमान थयो सतो नीचे उतरे छे अने विशुद्धयमान थयो सतो उपर चडे छे. ए रीते ते बन्ने महेलना पगथीआनी श्रेणिनी जेम तुल्य थाय छे, (६९) परंतु केवळ क्षपक जीव जे अध्यवसायोमां स्थित रह्यो सतो क्षपकश्रेणीपर आरोहण करे छे ते अध्यवसायथी ते पाछो निवर्ततो नथी, (७०) तेथी क्षपकना श्रेष्ठ अध्यवसायोनी अपेक्षाए पूर्वे अशुभ करतां शुभ अध्यवसायो अधिक कह्या छे. (७१) ए अनुभागबंधना स्थानो करतां एक अध्यवसाये ग्रहण करेला कर्मयोग्य

वसायोपात्ताः कर्माहंदलिकाणवः ॥ ७२ ॥ तेभ्योऽप्यनंतगुणिताः कर्माणुषु रसांशकाः । तच्च भावितमेव प्राक् । वर्गणास्पर्द्धकोक्तिभिः ॥ ७३ ॥ तथोक्तं पंचसंग्रहे–सेढिअसंखेज्जंसे जोगट्ठाणा तओ असंखिज्जा । पगडीभेया तत्तो ठिइभेया होंति तत्तोवि ॥ ७४ ॥ ठिइबंधज्झवसाया तत्तो अणुभागबंधठाणाणि । तत्तो कम्मपएसा–णंतगुणातो रसच्छेया ॥७५॥

अथ प्रकृतं–जीवोनुभागबंधाध्य–वसायस्थानकान्यथ । मरणेन स्पृशत्येकः सर्वाणि निरनुक्रमं ॥ ७६ ॥ कालेन यावता काल–स्तावान् केवलिनोदितः । भावतः पुद्गलपरा–वर्त्तो बादर आगमे ॥ ७७ ॥ एतान्येव स्पृशत्येकः क्रमात्कालेन यावता । भावतः पुद्गलपरा–वर्त्तः सूक्ष्मश्च तावता ॥ ७८ ॥ अयं भावः–कश्चित्सर्वजघन्यैगी यः कषायोदयात्मके । वर्त्तमनोऽध्यवसाय–स्थाने प्राप्तो मृतिं ततः ॥ ७९ ॥ भूयसापि हि कालेन स एवांगी द्वितीयके । आद्यात्परेऽध्यवसाय–स्थानके म्रियते यदि ॥ ८० ॥ तदेव मरणं तस्य गण्यते लेख्यके बुधैः । नान्यान्युत्क्रमभावीनि तान्यनंतान्यपि स्फुटं ॥ ८१ ॥ कालांतरे चेद्भूयोऽपि द्वितीय-

---

दलिकना अणु अनंतगुणा छे. (७२) ते करतां अनंतगुणा ते कर्माणुओमां रसांशो छे. ते पूर्वे वर्गणा ने स्पर्द्धकनी उक्तिवडे बतावेल छे. (७३) तथोक्तं पंचसंग्रहे. "श्रेणिना असंख्यातमे भागे योगस्थान, ते करतां असंख्यातगुणा प्रकृतिभेदो, ते करतां असंख्यातगुणा स्थितिभेद, ते करतां असंख्यातगुणा स्थितिभेदना अध्यवसायस्थान, ते करतां असंख्यातगुणा अनुभागबंधना स्थान, ते करतां अनंतगुणा कर्मप्रदेशो ने ते करतां अनंतगुणा तेमां रहेला रसच्छेदो जाणवा. (७४–७५)

अथ प्रकृतं–जीव सर्व अनुभागबंधनाअध्यवसाय स्थानोने अनुक्रम विना मरणेवडे जेटले काले स्पर्शे तेटला काळने आगममां केवळीए भावथी बादरपुद्गळपरावर्त कहेल छे. (७६–७७) ए बधा अध्यवसाय स्थानो क्रमसर जेटला काळे स्पर्शे तेटला काळने भावथी सूक्ष्मपुद्गलपरावर्त कहेल छे. (७८) एनो आ सार छे के–जे कोइ जीव सर्व जघन्य कषायोदयरूप अध्यवसाय स्थाने वर्ततो मरण पामे, (७९) त्यारपछी घणे काळे ते ज जीव पहेलाथी बीजा अध्यवसायस्थाने ज्यारे मरण पामे (८०) त्यारे ते मरण बुधजनो लेखामां गणे छे. उत्क्रमभावी बीजा अन्य अध्यवसायोए मरण पामे सते ते लेखामां गणाता नथी के जे मरणो प्रगटपणे अनंता होय छे. (८१)

स्मादनंतरे । तृतीये म्रियते सोऽध्य–वसायस्थानके स्थितः ॥ ८२ ॥ तदा तृतीयं मरणं गण्यते तस्य लेख्यके । त्यक्तक्रमाणि शेषाणि नानंतान्यपि तान्यहो ॥ ८३ ॥ एवं क्रमेण सर्वाणि तानि कालेन यावता । स्पृश्यंते म्रियमाणेन तेन संसारवारिधौ ॥ ८४ ॥ तावान् कालः स्यादनंत—कालचक्रमितो महान् । भावतः पुद्गलपरा–वर्त्तः सूक्ष्मो जिनोदितः ॥ ८५ ॥

क्षेत्रतः पुद्गलपरा–वर्त्तो यः सूक्ष्म ईरितः । उपयोगी मार्गणायां स एवाद्रियते श्रुते ॥ ८६ ॥ तथोक्तं जीवाभिगमसूत्रे सांतमिथ्यादृष्टिस्थितिनिरूपणाधिकारे–' जे से साइए सपज्जवसिए मिच्छद्दिट्ठी से जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं अणंताओ ओसप्पिणिउस्सप्पिणिओ कालओ, खेत्तओ अवड्ढं पोग्गलपरियट्टं देसूणमित्यादि. येऽन्ये च पुद्गलपरा–वर्त्ताः सप्तात्र दर्शिताः । ते स्युः प्ररूपणामात्रं न काप्येषां प्रयोजनं ॥ ८७ ॥ बादरेषु चतुर्थेषु (चतुर्षु च बादरेषु) दर्शितेषु यथाविधि । भवंति सुगमाः सूक्ष्मा इत्येवैषां प्रयोजनं ॥ ८८ ॥ नन्वत्र पुद्गलपरा–वर्त्तोऽ-

---

कालांतरे फरीने ते ज जीव बीजाथी अनंतर त्रीजे अध्यवसायस्थाने रह्यो सतो मरण पामे (८२) त्यारे ते त्रीजुं मरण लेखामां गणाय. बाकीना अनंत मरणो पण क्रमविनाना अध्यवसायवाळा गणतीमां लेवाता नथी. (८३) ए प्रमाणे क्रमसर सर्वे अध्यवसायस्थानो जेटला काळे मरणवडे आ संसारवारिधिमां एक जीव स्पर्शे (८४) तेटलो महान् काळ के जे अनंतकाळचक्रप्रमाण थाय छे तेटलो काळ भावथी सूक्ष्म पुद्गलपरावर्तनो जिनेश्वरोए कह्यो छे. (८५).

क्षेत्रथी सूक्ष्मपुद्गलपरावर्त जे कहेल छे ते ज मार्गणामां उपयोगी छे. श्रुतमां तेनो ज आदर करेल छे. (८६) तथोक्तं श्री जीवाभिगमसूत्रे सांतमिथ्यादृष्टिस्थितिनिरूपणाधिकारे–' जे सादिसपर्यवसित मिथ्यादृष्टि होय ते जघन्य अंतर्मुहूर्त्त अने उत्कृष्ट असंख्याती उत्सर्पिणी–अवसर्पिणी काळथी, क्षेत्रथी देशोन अपार्ध पुद्गलपरावर्त इत्यादि.' अहीं बीजा जे सात पुद्गलपरावर्तो बताव्या छे ते प्ररूपणा मात्र समजवा. तेनुं कांइ पण प्रयोजन नथी. (८७) वळी चार बादर तो एटला माटे ज बतावेला छे के ते यथाविधि बतावे सते सूक्ष्म जाणवा सुगम पडे, ए ज तेनुं प्रयोजन छे. (८८) ननु इति प्रश्ने–' अहीं जे पुद्गलपरावर्त परमाणुओनी दशांतररूप कहेल छे, ते तो द्रव्य पुद्गल-

णूनां दशांतरं। तद्द्रव्यपुद्गलपरा–वर्त्त एवास्ति नापरे॥ ८९॥ तत्कथं पुद्गलपरा–वर्तशब्दः प्रवर्त्तते। क्षेत्रशालादिभेदेषु ब्रूमहे श्रूयतामिह॥ ९०॥ परावर्त्तः पुद्गलानां शब्दव्युत्पत्तिकारणं। प्रवृत्तिहेतुस्त्वनंत–कालचक्रप्रमाणता॥ ९१॥ द्वावर्थधर्मौ भजतः शब्दसंबंधहेतुतां। शब्दव्युत्पादकः शब्द–प्रवृत्तिजनकोऽपि च॥ ९२॥ यो गच्छति स गौरत्र शब्दव्युत्पत्तिकृद्गतिः। शृंगसास्नादिमत्त्वं तु सार्थे शब्दप्रवृत्तिकृत्॥ ९३॥ व्युत्पत्तिहेतुसत्त्वेऽपि प्रवृत्तिहेत्वभावतः। गच्छत्यपि गजाश्वादौ गोशब्दो न प्रवर्त्तते॥ ९४॥ व्युत्पत्तिहेत्वभावेऽपि गत्यभावात् स्थिते गवि। प्रवृत्तिहेतुसद्भावात् गोशब्दोऽसौ प्रवर्त्तते॥ ९५॥ तथा क्षेत्रादिभेदेषु शब्द एव प्रवर्तते। व्युत्पत्तिहेत्वभावेऽपि प्रवृत्तिहेतुयोगतः॥ ९६॥

एतच्च पुद्गलपरावर्तस्वरूपं प्रायः पंचसंग्रहकर्मग्रंथप्रवचनसारोद्धारसूत्रवृत्त्याद्यनुसारेण प्रोक्तं, श्रीभगवतीसूत्रद्वादशशतकचतुर्थोद्देशक-

---

परावर्त ज छे, बीजा नथी. (८९) तो पछी क्षेत्रकाळादि भेदमां पुद्गलपरावर्त शब्द केम प्रवर्ते छे? तेनुं कारण अमे कहीए छीए ते सांभळो (९०) पुद्गळोनो परावर्त ए तो शब्दोनी व्युत्पत्ति मात्र अर्थ छे; बाकी प्रवृत्ति हेतु तो अनंत काळचक्रनी प्रमाणता छे. (९१) बे प्रकारना अर्थ शब्दसंबंधनी हेतुताने भजे छे. १ शब्दव्युत्पादक ने २ शब्दप्रवृत्तिजनक. (९२) जे गमन करे तेने गो (वृषभ) कहीए ते शब्दनो व्युत्पत्तिकृत अर्थ छे अने शृंग (शींगडा) तथा गळकंबळादिवाळापणुं ते शब्दनो प्रवृत्तिकृत अर्थ छे. (९३) व्युत्पत्ति हेतु छतां पण प्रवृत्तिहेतुना अभावथी गमन करे छे छतां पण गज ने अश्वादिमां गोशब्द प्रवर्ततो नथी (९४) अने व्युत्पत्तिहेतुनो अभाव सते पण एटले गतिनो अभाव सते पण स्थित रहेल वृषभमां प्रवृत्ति हेतुना सद्भावथी गोशब्द प्रवर्ते छे (९५) ते ज रीते व्युत्पत्तिहेतुनो अभाव सते पण प्रवृत्तिहेतुना योगथी क्षेत्रादि भेदोने विषे पण ए (पुद्गलपरावर्त) शब्द प्रवर्ते छे. (९६)

आ पुद्गळपरावर्तनुं स्वरूप प्राये पंचसंग्रह, कर्मग्रंथ, प्रवचनसारोद्धारसूत्रवृत्त्यादिने अनुसारे कहेल छे. श्री भगवतीसूत्र बारमा शतकना चोथा उद्देशानी वृत्तिमां तो

वृत्तौ तु-औदारिकार्हद्रव्याणि सर्वाण्यप्येकदेहिना । अनुभूय विमुच्यंते औदारिकवपुष्टया ॥ ९७ ॥ कालेन यावता तावान् भवत्यौदारिकाभिधः । पुद्गलानां परावर्त इत्युक्तं तत्त्वदर्शिभिः ॥ ९८ ॥ भाव्याः शेषाः अप्येवं विबुधैर्वैक्रियादयः । आहारकशरीरार्ह-पुद्गलानां त्वसंभवी ॥ ९९ ॥ प्रत्येकमेते चानंत-कालचक्रमिता मताः । पुद्गलानामनंतत्वा-देकत्वाद्ग्राहकस्य च ॥ २०० ॥ अतीताश्च भवंत्येते-ऽनंताः सर्वशरीरिणां । भविष्यंतश्च भाव्यंतां पूर्वोक्तेंद्रिययुक्तिवत् ॥ १ ॥ सा चैवं-न भवंत्येव केषांचित् केषांचिच्च भवंति ते । एकद्वित्र्यादिसंख्येया-ऽसंख्यानंता यथाभवं ॥ २ ॥

कार्मणस्तैजसश्चौदा-रिकानप्राणसंभवौ । मानसो वाचिकश्चाथ वैक्रियश्चेत्यनुक्रमात् ॥ ३ ॥ यथोत्तरं कालतोऽमी सप्तानंतगुणाधिकाः । उपपत्तिं वदंत्येवं तत्र प्राचीनसूरयः ॥ ४ ॥ सूक्ष्मत्वात्कार्मणाणूनां ग्रहणाच्च प्रतिक्षणं । अचिरेण समाप्यंते ते तत्कालस्ततोऽल्पकः

एम कह्युं छे केः-" औदारिक योग्य सर्व द्रव्यो एक जीव औदारिकशरीरपणे अनुभवीने जेटला काळे मूके तेटला काळनुं औदारिक नामनुं पुद्गलपरावर्त थाय, एम तत्त्वदर्शीओए कह्युं छे. (९७-९८) बाकीना छ वैक्रियादिक पुद्गलपरावर्त पण विबुधोए ते ज प्रमाणे भाववा. आहारक शरीर योग्य पुद्गलो माटे तो असंभव छे. (९९) ए प्रत्येक पुद्गलपरावर्तो पुद्गलोनुं अनंतपणुं होवाथी अने ग्राहकनुं एकपणुं होवाथी अनंत काळचक्रप्रमाण कह्या छे. (२००) एवा पुद्गलपरावर्तो सर्व शरीरीओए (जीवोए) अतीतकाळे अनंता कर्या छे अने पूर्वे कहेली इंद्रियोसंबंधी युक्तिनी जेम भावी पण अनंता थवाना छे. (२०१) ते आ प्रमाणे-केटलाकने भविष्यकाळे न थाय अने केटलाकने एक-बे-त्रण विगेरे संख्याता, असंख्याता के अनंता जेटलुं तेने संसारमां रहेवानुं होय ते प्रमाणे थाय. (२०२)

कार्मण, तैजस, औदारिक, श्वासोच्छ्वास, मानस, वाचिक ने वैक्रिय-ए अनुक्रमे यथोत्तर काळथी ए साते अनंतगुणाधिक जाणवा. तेनी उपपत्ति प्राचीन आचार्यो आ प्रमाणे कहे छे. (३-४) कार्मण परमाणुओनुं सूक्ष्मपणुं होवाथी अने प्रतिसमये ग्रहण करवापणुं होवाथी ते परावर्त थोडा काळमां समाप्त थइ जाय छे तेथी तेनो काळ अल्प कह्यो

॥ ५ ॥ तैजसाः पुद्गलाः स्थूलाः कार्मणापेक्षया ततः । कालोऽस्य भूयानल्पं हि गृह्यते स्थूलमेकदा ॥ ६ ॥ सर्षपबदरन्यायादिति शेषः. औदारिकाणां स्थूलत्वा–दशश्वद्ग्रहणादपि । भूयान् कालोऽस्य ते ग्राह्या यदौदारिकदेहिना ॥ ७ ॥ आनप्राणाणवः सूक्ष्मा यद्यप्येभ्य-स्तथापि ते । पर्याप्तैरेव गृह्यंते तत्कालोऽस्य ततो बहुः ॥ ८ ॥ सूक्ष्म-त्वेऽपि मनःपुद्ग–लानां स्याद्भूरिकालता । एकाक्षादिमहाकाय–स्थितौ तेषामनादृतेः ॥ ९ ॥ भाषा द्व्यक्षाद्यवस्थायां । यद्यप्यस्ति तथा-प्यसौ । भृशं स्थूला मनोऽणुभ्य–स्तदत्रानल्पकालता ॥ १० ॥ भूयि-ष्ठकाललभ्यत्वा–द्वैक्रियांगस्य सर्वतः । वैक्रियः पुद्गलपरा–वर्त्तोऽनंत-गुणाधिकः ॥ ११ ॥ पश्चानुपूर्व्या सप्तामी भूरिभूरितराः स्मृताः । जीवस्य दीर्घकालीनाः स्तोकाः स्युर्बहवः परे ॥ १२ ॥ इत्याद्यधिकं भगवतीवृत्तितोऽवसेयं.

छे. (५) तैजसना पुद्गळो कार्मणनी अपेक्षाए स्थूळ छे तेथी तेनो काळ कार्मणथी वधारे कह्यो छे, कारण के स्थूळ वर्गणाओ एक समये ओछी ग्रहण करी शकाय छे. (६) सरसव ने बोरना न्यायथी. हवे औदारिकनुं तैजस करतां स्थूळपणुं होवाथी अने निरंतर ग्रहणपणुं न होवाथी तेनो वधारे काळ थाय छे, केमके तेने औदारिक शरीरी ज ग्रहण करे छे. (७) आनपान (श्वासोछ्वास) ना अणुओ जो के एना (औदारिकना) करतां सूक्ष्म छतां पर्याप्त जीवो ज ग्रहण करे (पर्याप्तपणामां ज ग्रहण थाय) तेथी एनो काळ एना करतां वधारे थाय छे. (८) तेना करतां मनोवर्गणा (मनना पुद्गलो) सूक्ष्म छतां पण एकेंद्रियादि मोटी कायस्थितिवाळा जीवो तेने ग्रहण करता नथी, तेथी तेनो काळ वधारे थाय छे. (९) भाषा जो के बेइंद्रियादिक अवस्थामां पण छे तथापि मनोवर्गणा करतां ते अत्यंत स्थूल होवाथी तेनो काळ वधारे थाय छे. (१०) वैक्रिय-शरीरीपणुं सर्व करतां घणे लांबे काळे लभ्य थतुं होवाथी सर्व करतां वैक्रियपुद्गल-परावर्त्त अनंतगुणाधिक काळप्रमाण थाय छे. (११) पश्चानुपूर्वीए आ साते पुद्गल-परावर्त्तो घणा अने अतिघणा कह्या छे, कारण के जीवने दीर्घकालीन पुद्गलपरावर्त्त थोडा थाय छे अने अल्पकालीन वधारे थाय छे. (१२) इत्यादि अधिक भगवती-वृत्तिथी जाणवुं.

एवं वर्णितरूपपुद्गलपरावर्तैरनंतैर्मित-स्त्रैलोक्याखिलवस्तुवृंदवि-दुरैः कालो व्यतीतः स्मृतः । एतस्माच्च भवेदनंतगुणितः कालः किला-नागतो-ऽनादिः सांत इहादिमस्तदपरोऽनंतः सहादिः पुनः ॥ १३ ॥ तथाहुः-ओसप्पिणी अणंता पुग्गलपरियट्टओ मुणेयव्वो । ते णंतातीयद्धा अणागयद्धा अणंतगुणा ॥१॥ यत्पंचमांगे गदितं त्वनागते काले व्यतीता-त्समयाधिकत्वं । आनंत्यसाम्यादुभयोरनागते तद्वर्त्तमानक्षणसंगतेश्च ॥ १४ ॥ एवं च-अतीतकालादिह सर्वकालः क्षणाधिकः स्याद् द्विगुण-स्तथैव । कालो व्यतीतोऽपि च सर्वकाला-जिनैः प्रणीतः समयोनमर्द्धं(र्द्धः) ॥ १५ ॥ कालोऽखिलोऽनागतकालतः स्यात् पूर्वोक्तयुक्त्या द्विगुणः क्षणोनः । क्षणाधिकार्द्धं किल सर्वकाला-त्कालो भविष्यन् भवतीति सिद्धं ॥ १६ ॥ तथोक्तं-' अणागतद्धाणं तीतद्धाणं समयाहियातीतद्धाणं अणागतद्धातो समयूणा ' अत्र वृत्तिः-अतीतानागतौ कालावनादित्वा-नंतत्वाभ्यां समानौ, तयोश्च मध्ये भगवतः प्रश्नसमयो वर्त्तते, स चावि-नष्टत्वेनातीते न प्रविशति, इत्यविनष्टत्वसाधर्म्यादनागते क्षिप्तः, ततः

ए प्रमाणे वर्णव्युं छे स्वरूप जेनुं एवा अनंतपुद्गलपरावर्त प्रमाण काळ व्यतीत थयेल छे एम त्रण लोकमां रहेल अखिल वस्तुसमूहना जाणनारे (केवळीओए) कह्युं छे. ए करतां अनंतगुणो अनागतकाळ छे. अतीत काळ अनादिसांत छे अने अनागतकाळ सादिअनंत छे. (१३) तथाहुः—' अनंती उत्सर्पिणीओए एक पुद्गलपरावर्त जाणवुं. एवा अतीतकाळे अनंता थया अने अनागतकाळे ते करतां अनंतगुणा थइ शके तेम छे." (१) पांचमा अंगमां जे अनागत काळनुं अतीतकाल करतां समयाधिकपणुं कह्युं छे ते बंनेनी आनंत्यपणामां समानता होवाथी अने अनागतमां वर्तमान समय उमेरवाथी कहेल छे. (१४) ए रीते अतीतकाळ करतां सर्वकाळ एक समयाधिक द्विगुण कहेवाय. तेमां अतीतकाळ जिनेश्वरोए सर्वकाळनी अपेक्षाए समयोन अर्ध कह्यो छे. (१५) अना-गतकाळ करतां सर्वकाळ पूर्वोक्त युक्तिए एक क्षणे ऊण बमणो थाय अने सर्वकाळ करतां भविष्यत् काळ क्षणाधिकअर्ध थाय एम समजवुं. (१६) तथोक्तं-' अनागतकाळ अतीतकाळ करतां समयाधिक अने अतीतकाळ अनागतकाळ करतां समयोन. ' आनी टीका-अतीत ने अनागतकाळ अनादिपणाथी अने अनंतपणाथी समान छे. ते बेनी वच्चे

समयातिरिक्तानागताद्धा भवति.

इह कश्चिदाह—अतीताद्धातोऽनागताद्धाऽनंतगुणा, अत एवानंतेनापि कालेन गतेन नासौ क्षीयते इत्यत्रोच्यते—इह समत्वमुभयोरप्यंताभावमात्रेण विवक्षितमिति भगवतीश० २५ उ० ५.।

शिष्टोपदिष्टार्थवचोगरिष्ठः, क्षणाद्यनेकात्मविधो वरिष्ठः।
स्वहेतुतोजीवितसर्वलोको, दिष्ट्या समाप्तः किल दिष्टलोकः॥ १७॥
विश्वाश्चर्यदकीर्त्तिकीर्त्तिविजयश्रीवाचकेंद्रांतिष—
द्राजश्रीतनयोऽतनिष्ट विनयः श्रीतेजपालात्मजः।
काव्यं यत्किल तत्र निश्चितजगत्तत्त्वप्रदीपोपमे
पंचत्रिंश इहैव पूर्त्तिमगमत्सर्गो निसर्गोज्ज्वलः॥ १८॥

॥ इति श्रीलोकप्रकाशे पंचत्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः, तत्समाप्तौ च समाप्तोऽयं दिष्टलोकः।

भगवंतने प्रश्ननो समय वर्ते छे ते विनष्ट थयेल न होवाथी अतीतकाळमां प्रवेश पामी शके नहीं, एटले अविनष्टत्वना साधर्म्यपणाथी तेने अनागतकाळमां नाख्यो छे. एटले अनागतकाळ समयाधिक थाय छे.

अहीं कोइ कहे छे के—अतीतकाळ करतां अनागतकाळ अनंतगुणो छे तेथी ज अनंतो काळ गया छतां ते क्षय पामतो नथी. ए संबंधमां कहे छे के—अहीं बंनेनुं समपणुं जे कह्युं छे ते अंतना अभाव मात्रथी ज कह्युं छे. इति भगवतीशतक २५ ना उद्देशा पांचमामां कह्युं छे.

शिष्ट पुरुषोना कहेला अर्थ ने वचनोवडे गरिष्ठ, क्षण (समय) आदि अनेक प्रकारनो, वरिष्ठ एवो, स्वहेतुवडे उज्जीवित कर्यो छे सर्व लोक जेणे एवो काळलोक भाग्ययोगे संपूर्णपणाने पाम्यो छे. (१७)

विश्वमां आश्चर्यकारक छे कीर्त्ति जेनी एवा श्रीकीर्त्तिविजयवाचकेंद्रना शिष्य अने राजश्री तथा तेजपाळना पुत्र विनये जे काव्य रच्युं छे, ते आ निश्चित एवा जगत्त्रयनुं स्वरूप बतावबाने दीपक समान लोकप्रकाश नामना ग्रंथमां स्वभाववडे उज्ज्वळ एवो आ पांत्रीशमो सर्ग संपूर्ण थयो छे. (१८.)

इति लोकप्रकाशे पंचत्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः

इति काललोकः समाप्तः

अथ षट्त्रिंशत्तमः सर्गः प्रारभ्यते ॥

। अथ श्रीभावलोकप्रकाशः प्रारभ्यते ।

शंखेश्वरं प्रणिदधे प्रकटप्रभावं, त्रैलोक्यभावनिवहावगमस्वभावं ।
भावारिवारणहरिं हरिसेवनीयं, वामेयमीश्वरममेयमहोनिधानं ॥१॥

स्वरूपं भावलोकस्य यथागममथ ब्रुवे ।
गुरुश्रीकीर्तिविजय–दीपोद्योतितहृद्गृहः ॥ २ ॥

स्वतस्तैस्तैर्हेतुभिर्वा तत्तद्रूपतयात्मनां । भवनान्यौपशमिका–द्यो भावाः स्मृता इति ॥ ३ ॥ भवंत्यमीभिः पर्यायै–र्वोपशमनादिभिः । जीवानामित्यमी भावा–स्ते च षोढा प्रकीर्तिताः ॥ ४ ॥ आद्यस्तत्रौपशमिको द्वितीयः क्षायिकाह्वयः । क्षायोपशमिको भाव–स्तार्तीयीको निरूपितः ॥ ५ ॥ तुर्य औदयिको भावः पंचमः पारिणामिकः । द्व्यादिसंयोगनिष्पन्नः षष्ठः स्यात्सान्निपातिकः ॥ ६ ॥

सर्ग ३६ मो.

श्री शंखेश्वरपार्श्वनाथनुं हमे ध्यान करीए छीए. ते वामामाताना पुत्र केवा छे? प्रगट प्रभाववाळा, त्रण लोकमां रहेला भावोना समूहना स्वभावने जाणनारा, भावशत्रुरूप गजनुं निवारण करवाने सिंहसमान, इंद्राए सेवनीय अने पारावार तेजना निधान छे. (१)

ए प्रभुने प्रणाम करीने श्री कीर्तिविजय गुरुमहाराजरूप दीपवडे प्रकाशित थयेल छे हृदयरूपी गृह जेनुं एवो हुं (विनयविजय) हवे जेम आगममां कह्युं छे तेम भावलोकनुं स्वरूप कहुं छुं. (२)

पोतानी मेळे अथवा ते ते हेतुओवडे करीने ते ते रूपपणे आत्मानुं जे थवुं ते औपशमिकादिक भावो कहेला छे. (३) अथवा आ उपशमनादि पर्यायोवडे करीने जीवोना आवा भावो थाय छे. ते भाव छ प्रकारना कह्या छे. (४) पहेलो औपशमिक, बीजो क्षायिक, त्रीजो क्षायोपशमिक, चोथो औदयिक, पांचमो पारिणामिक अने छठो बे त्रण विगेरे भावोना संयोगथी निष्पन्न थयेलो सान्निपातिक (५–६).

हवे ते भावोनुं स्वरूप कहे छे—

यः प्रदेशविपाकाभ्यां कर्मणामुदयोऽस्य यत्। विष्कंभणं स एवौप-शमिकस्तेन वा कृतः ॥७॥ क्षयः स्यात्कर्मणामात्यं-तिकोच्छेदः स एव यः। अथवा तेन निर्वृत्तो यः स क्षायिक इष्यते ॥८॥ अभावः समुदीर्णस्य क्षयोऽथोपशमः पुनः। विष्कंभितोदयत्वं य-दनुदीर्णस्य कर्मणः ॥९॥ आभ्यामुभाभ्यां निर्वृत्तः क्षायोपशमिकाभिधः। भावस्तृतीयो निर्दिष्टः ख्यातोऽसौ मिश्र इत्यपि ॥ १० ॥ उदयावलिकायां य-त्प्रविष्टं क्षीणमेव तत्। तदन्यत्तु भवेत्कर्म, शेषमत्रोपशांतिमत् ॥ ११ ॥ वह्नेर्विध्यातशेषस्य भस्मच्छन्नस्य साम्यभृत्। क्षीणोपशांतं स्यात्कर्म-व्यवस्थाद्वितयान्वितं ॥ १२ ॥ नन्वौपशमिकाद्भावो भिद्यते नैष कर्म यत्। तत्रापि क्षीणमु-दित-मुपशांतं भवेत्परं ॥ १३ ॥ अत्रोच्यते-स्यात्क्षयोपशमे कर्म-प्रदे-शानुभवात्मकः। उदयोऽप्यनुभागं तु नैषां वेदयते मनाक् ॥ १४ ॥ प्रदेशैरप्युपशमे कर्मणामुदयोऽस्ति न। विशेषोऽयमुपशम-क्षयोपशमयोः स्मृतः ॥ १५ ॥ आगमश्चात्र-से णूणं भंते णेरइयस्स वा तिरिक्खजो-

---

जे प्रदेश ने विपाक बंने प्रकारे कर्मना उदयने रोकवो ते औपशमिक अथवा तेथी उत्पन्न थयेल आत्मानो भाव ते औपशमिक. कर्मोनो जे आत्यंतिक उच्छेद ते क्षायिक अथवा तेथी निष्पन्न थयेल भाव ते क्षायिक कहेवाय छे. (७-८) उदीर्णकर्मनो अभाव ते क्षय अने अनुदीर्णकर्मना उदयने रोकी देवो ते उपशम-आ बंने (क्षय ने उपशम) वडे उत्पन्न थयेलो भाव ते त्रीजो क्षायोपशमिक भाव कहेलो छे. तेनुं बीजुं नाम मिश्र पण कहेवाय छे. (९-१०) आ भावमां उदयावलीमां प्रविष्ट थयेला कर्मनो क्षय थाय छे अने शेषकर्म उपशांतिवाळा थाय छे. (११) अग्नि बुझाइ गयो होय अने कांइक बाकी रह्यो होय ते भस्मथी ढंकाइ गयो होय तेना समानपणाने धारण करनार बे प्रकारनी व्यवस्थायुक्त आ भावमां कर्मो क्षीण अने उपशांत थाय छे. (१२) अहीं शिष्य प्रश्न करे छे के-'औपशमिक भावथी आ भाव जुदो पडी शकशे नहीं, कारण के ते भावमां पण उदितनो क्षय अने अनुदित उपशांत होय छे.' (१३) गुरु उत्तर आपे छे के-'क्षयोपशम भावमां कर्मोनो प्रदेशानुभवरूप उदय होय छे, विपाकानु-भव किंचित् पण होतो नथी अने उपशम भावमां तो प्रदेशे पण कर्मोनो उदय होतो नथी. आ उपशम ने क्षयोपशममां तफावत छे.' (१४-१५) आगममां आ प्रमाणे कह्युं

रियस्स वा मणुस्सस्स वा देवस्स वा जे कडे कम्मे, णत्थि णं तस्स अवेयइत्ता मोक्खो ? हंता गो० ! से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति ? एवं खलु गो० ! मए दुविहे कम्मे पन्नत्ते, तं० पदेसकम्मे य अणुभावकम्मे य, तत्थ णं जं पदेसकम्मं तं नियमा वेदेइ, तत्थ णं जं तं अणुभावकम्मं तं अत्थेगतियं वेदेति, अत्थेगतियं नो वेदेति, णातमेयं अरहता, विण्णायमेतं अरहता, अयं जीवे इमं कम्मं अज्झोवगमियाए वेदणाए वेदिस्सति, अयं जीवे इमं कम्मं उवक्कमियाए वेदणाए वेदिस्सति, अहाकम्मं अहानिकरणं जहा जहा तं भगवया दिट्ठं, तहा तहा विपरिणमिस्सतीति, से तेणट्ठेणं एवं वुच्चति.

यः कर्मणां विपाकेना–नुभवः सोदयो भवेत् । स एवौदयिको भावो निर्वृत्तस्तेन वा तथा ॥ १६ ॥ य एव जीवाजीवानां स्वरूपानुभवं प्रति । प्रह्वीभावः परीणामः स एव पारिणामिकः ॥ १७ ॥ परिणामेन निर्वृत्त इति चात्र न संभवेत् । अस्यां निरुक्तौ सादित्वं जीवत्वादेः प्रसज्यते ॥ १८ ॥

छे के–' हे भगवंत ! नारकीने, तिर्यंचोने, मनुष्योने तथा देवोने तेना करेलां जे कर्मो तेनो वेद्या विना तो क्षय थतो ज नथीने ?' भगवंत कहे छे के–' थाय छे पण खरो.' गौतमस्वामी पूछे छे के–' हे प्रभु ! आप एम शा कारणे कहो छो ?' प्रभु कहे छे के–' हे गौतम ! में कर्म बे प्रकारना कह्या छे. १ प्रदेशकर्म ने २ अनुभावकर्म. तेमां जे प्रदेशकर्म छे ते तो निश्चये वेदाय छे अने जे अनुभावकर्म छे तेमांथी कोइक वेदाय छे ने कोइक वेदातां नथी. आ अरिहंते जाणेलुं छे अने अरिहंते विशेष रीते जाणेलुं छे के आ जीव आ कर्मने अज्झोवमिक वेदनाए (विपाकउदये) वेदशे अने आ जीव आ कर्म उपक्रमिक वेदनाए (प्रदेशउदये) वेदशे. जे कर्म जेवा निकरणपणे जेवी जेवी रीते भगवंते दीठुं छे ते कर्म तेवी रीते विपरिणमशे एम समजवुं. आ कारणे एम कहेलुं छे.

हवे जे कर्मनो विपाकवडे अनुभव ते उदय कहेवाय छे अने जे उदय ते ज औदयिक भाव कहेवाय छे अथवा ते उदयथी उत्पन्न थयेलो जे भाव ते औदयिक भाव समजवो. (१६) जे जीव के अजीवने स्वरूपानुभव करवामां जे तत्परता ते ज परिणाम कहेवाय छे. तेने ज पारिणामिक भाव जाणवो. (१७) परिणामवडे निर्वृत्त थयेलो–बनेलो भाव ते पारिणामिक भाव एवो अर्थ अहीं संभवतो नथी, केमके एवी व्युत्पत्ति एटले अर्थ करवाथी तो जीवत्वादिकनुं सादिपणुं थाय. (१८)

अत्र चाद्यास्त्रयः प्रादु-र्भवेयुः कर्मघाततः। रजोऽभ्रविगमे तिग्म-रश्मिकांतिकलापवत् ॥ १९ ॥ सर्वतो देशतश्चेति विघातः कर्मणां द्विधा। आद्यः स्ववीर्यापेक्षोऽन्यः सकर्मात्मप्रयोगजः ॥ २० ॥ तुर्यस्तु भावः स्वोपात्त-कर्मोदयसमुद्भवः । सुरामदोदयाद्गीत-नृत्तहास्यादिभाववत् ॥ २१ ॥ पारिणामिकभावस्तु निर्दिष्टो निर्निमित्तकः। अत एव स्वार्थिकोऽत्र प्रत्ययो राक्षसादिवत् ॥ २२ ॥ आदिमाश्च त्रयो भावा जीवानामेव निश्चिताः। अंतिमौ तौ पुनर्जीवा-जीवसाधारणौ स्मृतौ ॥ २३ ॥

एकत्र द्व्यादिभावानां सन्निपातोऽत्र वर्त्तनं। यो भावस्तेन निर्वृत्तः स भवेत्सान्निपातिकः ॥ २४ ॥ कर्मग्रंथसूत्रवृत्तितत्त्वार्थभाष्यभावप्रकरणादिष्वयमेव भावषट्कोद्देशक्रमः, अनुयोगद्वारसूत्रमहाभाष्यसूत्रवृत्त्यादिषु तु औदयिकौपशमिकक्षायिकक्षायोपशमिकपारिणामिकसान्निपाति-

---

आ भावोमां प्रथमना त्रण भावो कर्मना घातथी उत्पन्न थाय छे. रज अने वादळाना दूर थवाथी थती सूर्यनी कांतिनी जेम. (१९) कर्मनो विघात सर्वथी अने देशथी एम बे प्रकारे थाय छे. तेमां पहेला (सर्वथी विघात) स्व(आत्म)वीर्यनी अपेक्षाथी थाय छे अने बीजो (देशथी विघात) सकर्म एवा आत्माना प्रयोगथी थाय छे. (२०) चोथो (औदयिक) भाव पोताना बांधेला कर्मना उदयथी उत्पन्न थाय छे. मदिरापानना उदयथी थता गीत, नृत्य, हास्यादि भावनी जेम. (२१) पांचमो पारिणामिक भाव निर्निमित्तक (आत्माना वीर्य के क्रियानी अपेक्षारहित) कह्यो छे तेथी अहीं राक्षसादि शब्दनी जेम स्वार्थमां इक प्रत्यय समजवो. (२२) आ पांच पैकी प्रथमना त्रण भावो जीवोने ज होय छे अने चोथो ने पांचमो ए बे भाव जीव-अजीव बंनेने साधारण कह्या छे. (२३).

एकत्र बे विगेरे भावोनो जे सन्निपात-मेळा थवुं तेनुं जे वर्तन तेथी उत्पन्न थतो भाव ते सान्निपातिक भाव कह्यो छे. (२४) कर्मग्रंथसूत्रवृत्ति, तत्त्वार्थभाष्य, भावप्रकरणादिने विषे आ प्रमाणे ज छ भावना उद्देशनो क्रम कहेलो छे. अनुयोगद्वार सूत्र ने महाभाष्य सूत्रनी वृत्त्यादिकमां तो औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, पारिणामिक ने सान्निपातिक ए प्रमाणे क्रम कहेलो छे. तेमां कर्मग्रंथादि सूत्रोने विषे जे

का भावा इति. तत्र कर्मग्रंथादिसूत्रेषु यत्प्रवचनोक्तक्रमलंघनं तत्र लाघवं कालस्वामिभेदतारतम्यं च हेतुमामनंति.

आंतर्मौहूर्तिकत्वेन यत आद्योऽल्पकालिकः । तथाल्पस्वामिक इति प्रथमं स प्ररूपितः ॥ २५ ॥ न प्राप्नुयुर्यद्बहवः परिणाममिहेदृशं । भावस्तदौपशमिको मितस्वामिक इष्यते ॥ २६ ॥ भूरिभेदो भूरिकालो भूरिस्वामिक एव च । क्षायिको ह्यौपशमिका–त्तदुक्तस्तदनंतरं ॥ २७ ॥ क्षायोपशमिकः पश्चा–त्क्षायिकात्तत एव च । एवमौदयिकः प्रोक्तः क्षायोपशमिकादनु ॥ २८ ॥ ततो भूरिकर्मयोगात् स्वामिसाधर्म्यतोऽपि च । युक्तं क्षायोपशमिका–दन्वौदयिकशंसनं ॥ २९ ॥ अत्यंतभिन्नः पूर्वेभ्यो महाविषय एव यत् । पारिणामिक इत्युक्तो भावादौदयिकादनु ॥ ३० ॥ पूर्वेषां द्व्यादिसंयोगा–दाविर्भवति यन्ननु । तद्युक्तमुदितः सर्व–पर्यंते सान्निपातिकः ॥ ३१ ॥

द्वौ नवाष्टादशाथैक–विंशतिश्च त्रयः क्रमात् । एषामुत्तरभेदाः स्यु–

प्रवचनोक्त क्रमनुं उल्लंघन करेलुं छे तेमां लाघव अने काळ, स्वामि अने भेदनुं तारतम्य ज हेतुभूत छे. ते आ प्रमाणे.—

प्रथम उपशम भाव कहेल छे केमके ते आंतर्मौहूर्तिक स्थितिवाळो होवाथी अल्पकालिक छे अने तेना स्वामी पण अल्प होय छे. (२५) कारण के अहीं तेवा प्रकारना परिणामने घणा जीवो पामता नथी, तेथी आ औपशमिक भावना स्वामी थोडा कह्या छे. (२६) ए औपशमिक भावथी घणा भेदवाळो, घणा काळनी स्थितिवाळो अने घणा स्वामीवाळो होवाथी क्षायिक भाव त्यारपछी (बीजो) कहेलो छे. (२७) अने ते ज कारणोथी क्षायिकनी पछी क्षायोपशमिक भाव कहेलो छे. औदयिक भाव पण ते ज कारणोथी क्षायोपशमिकनी पछी कहेलो छे. (२८) घणा कर्मोना योगवाळो होवाथी अने स्वामीना साधर्म्यपणाथी क्षायोपशमिकनी पछी औदयिक कहेल छे ते युक्त छे. (२९) पूर्वना बधा भावोथी अत्यंत भिन्न होवाथी अने महाविषयवाळो होवाथी औदयिक भावनी पछी परिणामिक भाव कहेलो छे. (३०) पूर्वे कहेला भावोमांथी बे–त्रण विगेरेना संयोगथी उत्पन्न थतो होवाथी सर्वनी प्रांते सान्निपातिक भाव कहेल छे ते युक्त ज छे. (३१)

पूर्वोक्त भावोना अनुक्रमे बे, नव, अढार, एकवीश अने त्रण ए प्रमाणे उत्तर भेदो छे. ते एकत्र करतां ५३ भेद थाय छे. (३२) (औपशमिकना बे, क्षायिकना नव,

त्रिपंचाशच्च मीलिताः ॥ ३२ ॥ औ० २ क्षायि० ९ क्षायो० १८ औद० २१ पा० ३ सर्व० ५३ । सान्निपातिकभावस्तु षड्विंशतिविधो भवेत् । तत्रोपयुक्ताः षड्भेदा विंशतिस्त्वप्रयोजकाः ॥ ३३ ॥

सम्यक्त्वं यद्भवत्यादौ ग्रंथिभेदादनंतरं । स्याच्चोपशमश्रेण्यां सम्यक्त्वं चरणं तथा ॥ ३४ ॥ द्वावौपशमिकौ भावौ प्रोक्तावेतौ महर्षिभिः । ब्रूमहे क्षायिकस्याथ नवभेदान् यथागमं ॥ ३५ ॥ ये ज्ञानदर्शने स्यातां निर्मूलावरणक्षयात् । सम्यक्त्वं यच्च सम्यक्त्व–मोहनीयक्षयोद्भवं ॥ ३६ ॥ चारित्रं यच्च चारित्र–मोहनीयक्षयोत्थितं । याश्च दानाद्यंतराय–पंचकक्षयसंभवाः ॥ ३७ ॥ दानलाभभोगवीर्यो–पभोगलब्धयोऽद्भुताः । नवामी क्षायिका भावा भवेयुः सर्ववेदिनां ॥ ३८ ॥

मतिश्रुतावधिमनः–पर्यायाणां चतुष्टयं । मत्यज्ञानश्रुताज्ञान–विभंगा इति च त्रयं ॥ ३९ ॥ यतो ज्ञानावरणीय–क्षयोपशमसंभवाः । ततः क्षायोपशमिका भावाः सप्तोदिता अमी ॥ ४० ॥ ज्ञानी सम्यक्त्वयो-

---

क्षायोपशमिकना १८, औदयिकना २१ अने पारिणामिकना त्रण–कुल ५३.) सान्निपातिक भाव २६ प्रकारनो छे. तेमां उपयोगी भेद ६ छे; बाकीना २० उपयोगमां आवनारा नथी. (३३)

अनादि मिथ्यात्वीने ग्रंथिभेद करवाथी अनंतर प्रथम औपशमिक सम्यक्त्व थाय छे अने उपशम श्रेणि मांडे त्यारे उपशम भावनुं समकित ने चारित्र बंने थाय छे. (३४) तेथी महर्षिओए ए रीते औपशमिक भाव बे प्रकारे कहेल छे. हवे क्षायिक भावना नव भेद आगमानुसारे कहे छे. (३५) ज्ञानावरणीय ने दर्शनावरणीय कर्म समूळ निर्मूळ थवाथी जे केवळज्ञान ने केवळदर्शन प्राप्त थाय छे ते बे २, समकित मोहनीयना क्षयथी उत्पन्न थतुं क्षायिक समकित ३, चारित्रमोहनीयना क्षयथी उत्पन्न थतुं क्षायिक (यथाख्यात) चारित्र ४ अने दानादिक पांच अंतरायनो क्षय थवाथी उत्पन्न थता क्षायिकभावना दान ५, लाभ ६, भोग ७, उपभोग ८ अने वीर्य ९. आ नव प्रकार क्षायिकभावना छे. ते सर्वज्ञने प्राप्त थाय छे. (३६ थी ३८.).

हवे क्षायोपशमिक भावना १८ भेद कहे छेः–मति, श्रुत, अवधि ने मनःपर्यव–ए चार ज्ञान अने मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान तथा विभंगज्ञान–ए त्रण अज्ञान–कुल ७ ज्ञानावरणीय कर्मना क्षयोपशमथी उत्पन्न थता होवाथी ते क्षायोपशमिक भावना कहे-

मेना-ऽज्ञानी मिथ्यात्ववांश्च सः। क्षायोपशमिकत्वं च-प्यज्ञानानामपि स्फुटं ॥ ४१ ॥ अचक्षुश्चक्षुरवधि-दर्शनानीति च त्रयं । दर्शनावरणीयाख्य-क्षयोपशमसंभवं ॥ ४२ ॥ सम्यक्त्वं यदनंतानु-बंधिदर्शनमोहयोः । भवेत्क्षयोपशमतः क्षायोपशमिकं ततः ॥ ४३ ॥ यत् द्वादशकषायादि-चारित्रमोहकर्मणः । भवेत्क्षयोपशमतः क्षायोपशमिकं ततः ॥ ४४ ॥ संकल्पवल्रुसात्प्राणाति-पातादेर्यन्निवर्त्तनं । आरंभोत्थादनिवृत्तिः संयमासंयमो ह्ययं ॥ ४५ ॥ एष चारित्रमोहस्य यत्कषायाष्टकात्मनः । भवेत्क्षयोपशमतः क्षायोपशमिकस्ततः ॥ ४६ ॥ दानादिलब्धयः पंच छद्मस्थानां भवंति याः । क्षायोपशमिकयो विघ्न-क्षयोपशमजा हि ताः ॥ ४७ ॥ भावा अष्टादशाप्येवं क्षायोपशमिका इमे । कर्मक्षयोपशमतो यद्भवंत्युक्तया दिशा ॥ ४८ ॥

थाय छे. (३९-४०) तेमां सम्यक्त्वना संयोगथी जीव ज्ञानी कहेवाय छे अने मिथ्यात्वना संयोगथी अज्ञानी कहेवाय छे तेथी अज्ञानोने माटे पण ज्ञानावरणीय कर्मनुं क्षायोपशमिकपणुं सिद्ध थाय छे. (७) (४१) चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन ने अवधिदर्शन ए त्रण दर्शनावरणीय कर्मना क्षयोपशमथी उत्पन्न थाय छे. (८-१०) (४२) अनंतानुबंधी चतुष्क अने दर्शनमोहनीयना क्षयोपशमथी थतुं सम्यक्त्व ते पण क्षायोपशमिक कहेवाय छे. (११) (४३) बार कषायादि चारित्रमोहनीय कर्मना क्षयोपशमथी जे चारित्र (सर्वविरति) प्राप्त थाय छे ते क्षायोपशमिक भावनुं चारित्र कहेवाय छे. (१२) (४४) संकल्पीने (निरपेक्षपणे निरपराधि त्रसजीवनी) हिंसादिकथी जे निवर्तवुं अने आरंभ (विगेरे)थी उत्पन्न थयेली हिंसादिकथी न निवर्तवुं ते संयमासंयम (देशविरति) छे. (१३) (४५) आ देशविरति चारित्रमोहनीयना आठ कषायोना क्षयोपशमथी प्राप्त थाय छे तेथी ते क्षायोपशमिक समजवी. (४६) छद्मस्थ जीवोने दानादि पांच लब्धिओ अंतराय कर्मना क्षयोपशमथी उत्पन्न (प्राप्त) थाय छे तेथी ते पांच क्षायोपशमिकी समजवी. (१४ थी १८) (४७) ए प्रमाणे क्षयोपशम भावना १८ भेद समजवा के जे उपर कह्या प्रमाणे कर्मोना क्षयोपशमथी उत्पन्न थाय छे. (४८)

(चार प्रकारना ज्ञान, त्रण प्रकारना अज्ञान, प्रथमना त्रण दर्शन, समकित, देशविरति, सर्वविरति अने दान, लाभ, भोग, उपभोग ने वीर्यरूप पांच प्रकारनी लब्धि. कुल १८ भेद क्षयोपशम भावना जाणवा.)

अथाज्ञानमसिद्धत्व-मसंयम इमे त्रयः। लेश्याषट्कं कषायाणां गतीनां च चतुष्टयं ॥ ४९ ॥ वेदास्त्रयोऽथ मिथ्यात्वं भावा इत्येकविंशतिः। कर्मणामुदयाज्जाता-स्तत औदयिकाः स्मृताः ॥ ५० ॥ अतत्त्वे तत्त्वबुद्ध्यादि-स्वरूपं भूरिदुःखदं । मिथ्यात्वमोहोदयज-मज्ञानं तत्र कीर्तितं ॥ ५१ ॥ यदभ्यधायि-जह दुठ्वयणमवयणं कुच्छियसीलं असीलमसईए । भन्नइ तह नाणंपि हु मिच्छद्दिट्ठिस्स अन्नाणं ॥ ५२ ॥ असिद्धत्वमपि ज्ञेय-मष्टकर्मोदयोद्भवं । प्रत्याख्यानावरणीयो-दयाच्च स्यादसंयमः ॥ ५३ ॥ लेश्याः कषायनिष्पंद इति येषां मतं मतं । तेषां मते कषायाख्य-मोहोदयभवा इमाः ॥ ५४ ॥ येषां मते त्वष्टकर्म-परिणामात्मिका इमाः। अष्टकर्मोदयात्तेषां मतेऽसिद्धत्ववन्मताः ॥ ५५ ॥ येषां योगपरीणामो लेश्या इति मतं मतं । तेषां त्रियोगिजनक-कर्मोदयभवा इमाः ॥ ५६ ॥ इति कर्मग्रंथवृत्त्यभिप्रायः, तत्त्वार्थवृत्तौ च मनोयोगपरीणामो लेश्या इत्युक्तं, तथाहि-ननु कर्मप्रकृतिभेदानां द्वाविंशं

हवे औदयिक भावना २१ भेद कहे छे-अज्ञान, असिद्धत्व ने असंयम-ए त्रण, छ लेश्या, चार कषाय, चार गति, त्रण वेद ने एक मिथ्यात्व-आ २१ प्रकार कर्मोना उदयथी जीवने प्राप्त थाय छे. तेथी ते औदयिक भाव कहेवाय छे. (४९-५०) तेमां अतत्त्वमां तत्त्वबुद्धि विगेरे स्वरूपवाळुं, अत्यंत दुःख आपनारुं अने मिथ्यात्वमोहनीयथी उत्पन्न थनारुं अज्ञान कहेलुं छे. (५१) कह्युं छे के-' जेम दुर्वचन ते अवचन अने असतीनुं कुत्सितशील ते अशील कहेवाय तेम मिथ्यादृष्टिनुं ज्ञान पण अज्ञान कहेवाय छे. (५२) आठे प्रकारना कर्मोना उदयथी उत्पन्न थतुं असिद्धत्व छे. प्रत्याख्यानावरणीय कषायना उदयथी असंयम प्राप्त थाय छे. (५३) जेना मते कषायना निष्पंदरूप लेश्या छे तेना मते कषायमोहनीयना उदयथी उत्पन्न थयेली छ लेश्याओ छे. (५४) जेना मते अष्टकर्मना परिणामरूप लेश्या छे, तेना मते असिद्धत्वनी जेम अष्ट कर्मोदयजन्य लेश्या समजवी. (५५) अने जेना मते योगपरिणामरूप लेश्या छे, तेना मते त्रियोगीजनक कर्मना उदयथी उद्भवेली लेश्या समजवी. (५६) आ प्रमाणे कर्मग्रंथवृत्तिनो अभिप्राय छे. तथा तत्त्वार्थवृत्तिमां मनोयोगना परिणामरूप लेश्या कही छे ते आ प्रमाणे-' शिष्य प्रश्न करे छे के-' कर्मप्रकृतिना १२२ भेदनी प्रसिद्ध

शतं प्रकृतिगणनया प्रसिद्धसाम्नायेन च तत्र लेश्याः न परिगणितास्तदेतत्कथमुच्यते—वक्ष्यते नामकर्मणि मनःपर्याप्तिः, पर्याप्तिश्च करणविशेषो, येन मनोयोग्यपुद्गलानादाय चिन्तयन्ति, ते च मन्यमानाः पुद्गलाः सहकरणान्मनोयोग उच्यते, मनोयोगपरिणामश्च लेश्या इति.

एवं मतत्रयेऽपि यथास्वं लेश्यानामंतर्भावो वाच्यः। अत्र मतत्रयेऽस्य पटीयोऽन्ये चानीदृशा इत्यादि द्रव्यलोके लेश्याधिकारे प्रपंचितमस्ति.

कषायाः स्युः क्रोधमान—मायालोभा इमे पुनः । कषायमोहनीयाख्य—कर्मोदयसमुद्भवाः ॥ ५७ ॥ गतयो देवमनुज—तिर्यग्नरकलक्षणाः । भवंतीह गतिनाम—कर्मोदयसमुद्भवाः ॥ ५८ ॥ नोकषायमोहनीयो—दयोद्भूता भवंत्यथ । स्त्रीपुंनपुंसकाभिख्या वेदाः खेदाश्रया भृशं ॥ ५९ ॥ मिथ्यात्वमपि मिथ्यात्व—मोहनीयोदयोद्गतं । एवमौदयिका भावा व्याख्याता एकविंशतिः ॥ ६० ॥

ननु निद्रादयो भावा—स्तत्तत्कर्मोदयोद्गताः। अन्येऽपि संति तत्कथं

आम्नाय प्रमाणे गणना करतां तेमां लेश्या आवती नथी तो तमे मनोयोगना परिणामरूप तेने केम कहो छो ? ' तेनो उत्तर आपे छे के—' आगळ नामकर्ममां मनःपर्याप्ति कहेवाशे. ते पर्याप्ति करणविशेष छे. के जे करणवडे मनोयोग्य पुद्गलोने ग्रहण करी चिंतवन कराय छे ते मनरूप थयेला पुद्गलो सहकारी कारण होवाथी मनोयोग कहेवाय छे. ते मनोयोगना परिणामरूप लेश्या छे एम समजवुं. '

उपर प्रमाणे त्रण मतमां यथायोग्यपणे लेश्यानो अंतर्भाव समजवो. ' आ त्रण मतमां छेल्लो मत ठीक छे अने पहेला बे मत बराबर नथी ' इत्यादि द्रव्यलोकमां लेश्याधिकारमां सविस्तर कहेलुं छे.

हवे चार कषाय—क्रोध, मान, माया, लोभ, ते कषायो कषायमोहनीयकर्मना उदयथी थयेला छे. (५७) देव, मनुष्य, तिर्यंच ने नारकीरूप चार गति छे ते गतिनामकर्मना उदयथी प्राप्त थाय छे. (५८) अत्यंत खेद आपनार स्त्री, पुरुष ने नपुंसक नामना त्रण वेद नोकषायमोहनीयकर्मना उदयथी प्राप्त थाय छे. (५९) मिथ्यात्वमोहनीयना उदयथी मिथ्यात्व प्राप्त थाय छे. आ प्रमाणे औदयिक भावना २१ भेदनुं विवरण समजवुं. (६०)

अहिं शिष्य प्रश्न करे छे के— ' ते ते कर्मना उदयथी जीवने प्राप्त थता निद्रादिक भाव विगेरे बीजा घणा भावो छे, तो औदयिक भावना भेदनी संख्या २१ नी ज केम कही छे ? ' (६१) तेने उत्तर आपे छे के—' सावर्ण्यवडे, साहचर्यवडे, आक्षेपथी अने उपलक्षणथी

गणनात्रैकविंशतेः ॥ ६१ ॥ अत्रोच्यते–यथासंभवमेष्वेवां–तर्भाव्या अपरेऽपि ते। सावर्ण्यसाहचर्याभ्या–माक्षेपाद्वोपलक्षणात् ॥ ६२ ॥ निद्रापंचकमाक्षिप्त–मज्ञानग्रहणाद्यतः। स्यादज्ञानं मोहनीया–वरणद्वितयोदयात् ॥ ६३ ॥ गतिग्रहणतः शेष–नामकर्मभिदां व्रजः। आक्षिप्यतेऽविनाभावा–त्सावर्ण्याद्वोपलक्ष्यते ॥ ६४ ॥ आयूंषि वेदनीये द्वे गोत्रे द्वे इत्यमून्यपि। आक्षिप्यंतेऽत्र गत्यैवा–ऽनन्यथाभावतः खलु ॥ ६५ ॥ जात्यादिनामगोत्रायु–र्वेद्यानां कर्मणां ध्रुवं। भवधारणहेतूना–मसत्येकतरेऽपि यत् ॥ ६६ ॥ गतिर्न संभवत्येवा–ऽव्यभिचारि ततः स्फुटं। ज्ञेयमेषां साहचर्य–मर्हत्यपि तथेक्षणात् ॥ ६७ ॥ हास्यादि षट्कमाक्षिप्तं वेदानां ग्रहणादिह। यदेतेऽव्यभिचारेण वेदोपग्रहकारिणः ॥ ६८ ॥ यद्वा कषायग्रहणा–द्धास्यादीनां परिग्रहः। सावर्ण्यात्सहचाराच्च कषायनोकषाययोः ॥ ६९ ॥ इत्यर्थतस्तत्त्वार्थवृत्तौ. कर्मग्रंथवृत्तावप्युक्तं–ननु निद्रापंचकसातादिवेदनीयरत्यरतिप्रभृतयः प्रभूततरभावा अन्येऽपि कर्मोदय-

---

ए बीजा भावोनो यथासंभव अंतर्भाव करी लेवो. (६२) जेमके निद्रापंचकनो अज्ञान ग्रहण करेल होवाथी तेमां आक्षेप (समावेश) करवो. कारण के जे अज्ञान छे ते मोहनीय अने ज्ञानावरणीय तथा दर्शनावरणीय ए बे प्रकारना आवरणरूप कर्मना उदयथी ज थाय छे.(६३) गति ग्रहण करवाथी नामकर्मनी बीजी प्रकृतिओना समूहनो तेमां आक्षेप करी लेवो. कारण के ते प्रकृतिओनो उदय गतिविना थतो नथी तेथी अथवा तो तेना सावर्ण्यपणाथी तेनुं उपलक्षण करी लेवुं. (६४) आयुकर्म, बे प्रकारनुं वेदनीय ने बे प्रकारनुं गोत्रकर्म तेनो पण गतिथी ज आक्षेप करी लेवो, कारण के तेनो उदय पण गतिविना थतो नथी. (६५) जात्यादि नामकर्म, गोत्र, आयु ने वेदनीय कर्म के जे भवधारणना हेतुभूत छे, तेमांथी एकनो पण अभाव होय तो गतिनाम संभवे ज नहीं, तेथी तेनुं अव्यभिचारीपणुं प्रगट ज छे अने साहचर्यपणुं पण ते ज प्रकारे सिद्ध छे.- (६६–६७) त्रण वेदना ग्रहण करवाथी हास्यादि षट्कनो तेमां समावेश करी लेवो, कारण के ते अव्यभिचारीपणे वेदोदयने उपग्रह करनारा छे. (६८) अथवा चार कषाय ग्रहण करवाथी हास्यादि षट्कनो तेमां समावेश करी लेवो. कारणके कषाय अने नोकषायनुं सावर्ण्यपणुं अने सहचारीपणुं छे. (६९) आ प्रमाणे अर्थथी तत्त्वार्थवृत्तिमां कहेल छे. कर्मग्रंथनी वृत्तिमां पण कह्युं छे के–' निद्रापंचक, सातादि वेदनीय, रति अरति विगेरे घणा भावो

जन्याः संति, तत्किमित्येतावंत एवेति निर्दिष्टाः ? सत्यं, उपलक्षणत्वा-दन्येऽपि द्रष्टव्याः, केवलं पूर्वशास्त्रेषु एतावंत एव निर्दिष्टा दृश्यंते, इत्य-त्राप्येतावंत एवास्माभिः प्रदर्शिता इति.

जीवत्वमथ भव्यत्व–मभव्यत्वमिति त्रयः । स्युः पारिणामिका भावा नित्यमीदृक्स्वभावतः ॥ ७० ॥ यदभव्यो न भव्यत्वं भव्यो वा नैत्यभव्यतां । कदाप्यजीवो जीवत्वं जीवो वा न ह्यजीवतां ॥ ७१ ॥

जीव एवात्र जीवत्वं स्वार्थिकः प्रत्ययो ह्ययं । भाविसिद्धिर्भवेद्भव्यः सिद्ध्यनर्हस्त्वभव्यकः ॥ ७२ ॥ भावाः संति परेऽप्यस्ति–त्वादयः पारि-णामिकाः । किंतु जीवाजीवसाधा–रणा इत्यत्र नोदिताः ॥ ७३ ॥ जीव-स्यैव परं ये स्यु–र्न त्वजीवस्य कर्हिचित् । तेऽपि पंचाशदत्रोक्ताः सदौ-पशमिकादयः ॥ ७४ ॥ तथोक्तं तत्त्वार्थभाष्ये–जीवत्वभव्यत्वाभव्यत्वा-दीनि च जीवत्वं भव्यत्वमभव्यत्वमित्येते त्रयः पारिणामिका भावा भवंति. आदिग्रहणं किमर्थमित्यत्रोच्यते–अस्तित्वमन्यत्वं कर्तृत्वं भोक्तृत्वं गुण-

---

बीजा पण कर्मोदयजन्य छे ते छतां आटला (२१) ज औदयिक भाव केम कह्या छे ? ' तेने उत्तर आपे छे के 'तारुं कहेवुं सत्य छे, परंतु उपलक्षणथी बीजा भेदो पण ग्रहण करी लेवा केवळ पूर्व शास्त्रोमां आटला ज भेद बताव्या छे तेथी अमे अहीं पण तेटला ज भेद कह्या छे.'

हवे जीवत्व, भव्यत्व अने अभव्यत्व ए त्रण भेद निरंतर एवो स्वभाव होवाथी पारिणामिक भावना कहेला छे. (७०) कारण के अभव्य कदापि पण भव्य थतो नथी, भव्य अभव्य थतो नथी, अजीव जीवत्व पामतो नथी अने जीव अजीवत्व पामतो नथी. (७१) जीव ते ज जीवत्व ए रीते अहीं स्वार्थमां त्वप्रत्यय समजवो जेनी भाविकाळे सिद्धि थवानी छे ते भव्य अने जे सिद्धिने अयोग्य छे ते अभव्य जाणवा. (७२) बीजा अस्तित्वादिक पण पारिणामिक भाव छे, परंतु ते जीव अने अजीवने साधारण होवाथी अहीं कहेवामां आव्या नथी. (७३) उपर जे औपशमिकादि चार भावना पचास भेद कहेवामां आव्या छे ते जीवने ज होय छे, कदी पण अजीवने होता नथी. (७४) श्री तत्त्वार्थभाष्यमां कह्युं छे के–' जीवत्व, भव्यत्व अने अभव्यत्व विगेरे एटले जीवत्व, भव्यत्व ने अभव्यत्व ए त्रण भेद पारिणामिक भावना छे. ' अहीं आदि शब्द शामाटे ग्रहण कर्यो छे ? ' तेने उत्तर आपे छे के– ' अस्तित्व, अन्यत्व, कर्तृत्व

वत्त्वमसर्वगतत्वमनादिकर्मसंतानबद्धत्वं प्रदेशवत्त्वमरूपत्वं नित्यत्वमित्येवमादयोऽप्यनादिपारिणामिका जीवस्य भावा भवंति धर्मादिभिस्तु समाना इत्यादिग्रहणेन सूचिता इति। अजीवानां कर्तृत्वभोक्तृत्वादिकं चैवं तत्त्वार्थटीकायां–कर्तृत्वं सूर्यकांतेऽपि सवितृकिरणगोमयसंगमादुपलभ्यतेऽग्निनिर्वृत्तावेतत्सामान्यं, भोक्तृत्वं मदिरादिष्वत्यंतं प्रसिद्धं, भुक्तोऽनया गुड इति. क्रोधादिमत्त्वाद्गुणवत्त्वं ज्ञानाद्यात्मकत्वाद्वा परमाण्वादावपि गुणवत्त्वमेकवर्णादित्वात्समानं, अनादिकर्मसंतानबद्धत्वमिति कार्मणशरीरमप्यनादिकर्मसंतानबद्धमिति चेतनाचेतनयोर्धर्मसाम्यं, भाष्यकारः पुनरप्यादिग्रहणं कुर्वन् ज्ञापयत्यत्रानंतधर्मकमेकं, तत्राशक्याः प्रस्तारयितुं सर्वे धर्माः प्रतिपदं, प्रवचनज्ञेन पुंसा यथासंभवमायोजनीयाः, क्रियावत्त्वं पर्यायोपयोगिता प्रदेशाष्टकनिश्चलता एवंप्रकाराः संति भूयांस इति.

सान्निपातिकभावानां कुर्महेऽथनिरूपणम् । तत्र स्युर्द्विकसंयोगा दश ते नामतस्त्वमी ॥ ७५ ॥ आद्यः स्यादौपशमिक–क्षायिकाख्यसमन्वये।

भोक्तृत्व, कर्तृत्व, असर्वगतत्व, अनादिकर्मसंतानबद्धत्व, प्रदेशवत्त्व, अरूपत्व, नित्यत्व, विगेरे पण अनादि पारिणामिक भावो जीवना होय छे. ते धर्मास्तिकायादि अजीवोनी साथे पण समान होय छे. एम आदि शब्दना ग्रहणथी सूचव्युं छे. हवे अजीवोनुं कर्तृत्व, भोक्तृत्व विगेरे आ प्रमाणे तत्त्वार्थ टीकामां कह्युं छे.–सूर्यकांतने विषे पण सूर्यना किरण अने गोमयना संगम थकी अग्नि उत्पन्न करवामां कर्तृत्व उपलब्ध थाय छे तेथी ते रीते सामान्यता छे. भोक्तृत्व मदिरादिकने विषे अत्यंत प्रसिद्ध छे जेमके आणे (मदिराए) गोळ खाधो छे. ए रीते भोक्तृत्व पण समान छे. हवे क्रोधादिवाळो होवाथी अथवा ज्ञानादिवाळो होवाथी जेम जीवने विषे गुणवत्त्व छे तेम परमाणु विगेरेने विषे पण एकगुणवर्णादि होवाथी गुणवत्त्वनी समानता छे. तथा अनादिकर्मसंतानबद्धत्व बाबत विचार करतां कार्मणशरीर पण अनादिकर्मसंतानबद्ध छे. ए प्रमाणे चेतन अने अचेतनना धर्मनुं साम्यपणुं छे. भाष्यकार वळी फरीथी आदि शब्दने ग्रहण करता सता अहीं जीव अने अजीवने अनंत धर्मवाळा कहे छे, तेथी ते सर्वे धर्मो दरेक पदे जुदा पाडवा अशक्य छे; माटे प्रवचनना जाण पुरुषे यथासंभव तेनी योजना करी लेवी. क्रियावत्त्व, पर्यायोपयोगिता, प्रदेशाष्टकनिश्चळता (आठ रुचकप्रदेशनुं निश्चळपणुं) इत्यादि अनेक प्रकारो पण समानभावी छे.

हवे सान्निपातिक भावोनुं निरूपण करीए छीए. तेमां द्विकसंयोगी दश भांगा थाय छे तेना नाम आ प्रमाणे–१ औपशमिक ने क्षायिक, २ औपशमिक ने क्षायोपशमिक,

द्वितीयस्त्वौपशमिक-चायोपशमिकान्वये ॥ ७६ ॥ तृतीयश्चौपशमिकौ-दयिकाख्यसमागमे । चतुर्थ औपशमिक-पारिणामिकसयुतौ ॥ ७७ ॥ क्षायिकचायोपशमि-कान्वयोत्थस्तु पंचमः । क्षायिकौदयिकाभ्यां च षष्ठो भंगः समन्वये ॥ ७८ ॥ सप्तमस्तु चायिकेण पारिणामिकसंगमे । अष्टमः स्यादौदयिक-क्षायोपशमिकान्वये ॥ ७९ ॥ पारिणामिकमिश्राभ्यां मिश्राभ्यां नवमो मतः । दशमः स्यादौदयिक-पारिणामिकयोगजः ॥ ८० ॥

त्रिकसंयोगजा भंगा दश तत्रायमादिमः । चयचयोपशमजो-पशमोत्थैः समागतैः ॥ ८१ ॥ चायिकौदयिकाख्यौप-शमिकाख्यैर्द्वितीयकः । तृतीयश्चौपशमिक-चायिकपारिणामिकैः ॥ ८२ ॥ औदयिकौपशमिक-चायोपशमिकैः परः । पारिणामौपशमिक-चायोपशमिकैः परः ॥ ८३ ॥ स्यात्षष्ठश्चौपशमिकौ-दयिकपारिणामिकैः । क्षायिकौदयिकचायो-पशमिकैस्तु सप्तमः ॥ ८४ ॥ पारिणामिकमिश्राख्य-चायिकैरष्टमः स्मृतः । नवमः स्यादौदयिक-चायिकपारिणामिकैः ॥ ८५ ॥ पारिणामिकमिश्राख्यौ-दयिकैर्दशमोऽपि च । चतुःसंयोगजाः पंच भंगकास्ते त्वमी श्रुताः ॥ ८६ ॥

चायिकश्चौपशमिकः क्षायोपशमिकोऽपि च । औदयिकश्चेत्यमीभि-र्योगे प्रथमभंगकः ॥ ८७ ॥ क्षायिकोऽथौपशमिकः क्षायोपशमिकाह्वयः । पारि-

---

३ औपशमिक ने औदयिक, ४ औपशमिक ने पारिणामिक, ५ चायिक ने चायोपशमिक, ६ चायिक ने औदयिक, ७ चायिक ने पारिणामिक, ८ औदयिक ने चायोपशमिक, ९ मिश्रथयेला पारिणामिक ने चायोपशमिक ने १० औदयिक ने पारिणामिक. (७६-८०)

हवे त्रिकसंयोगी १० भांगा बतावे छे.—

१ क्षायिक, चायोपशमिक ने औपशमिक, २ चायिक, औदयिक ने औपशमिक, ३ औपशमिक, चायिक ने पारिणामिक, ४ औदायिक, औपशमिक ने चायोपशमिक, ५ पारिणामिक, औपशमिक ने चायोपशमिक, ६ औपशमिक, औदयिक ने पारिणामिक, ७ चायिक, औदयिक ने चायोपशमिक, ८ पारिणामिक, चायोपशमिक ने चायिक, ९ औदयिक, चायिक ने पारिणामिक, १० पारिणामिक, क्षायोपशमिक ने औदयिक.

हवे चतुःसंयोगी पांच भांगा कहे छे (८१-८६)

१ चायिक, औपशमिक, चायोपशमिक ने औदयिक, २ चायिक, औपशमिक, चायोपशमिक ने पारिणामिक, ३ क्षायिक, औपशमिक, पारिणामिक ने औदयिक, ४

शामिक इत्येषां योगे भंगो द्वितीयकः ॥ ८८ ॥ क्षायिकौपशमिकाख्यौ पारिणामिक इत्यपि । औदयिकश्चेत्यमीषां योगे भंगस्तृतीयकः ॥ ८९ ॥ क्षायोपशमिकश्चौप–शमिकौदयिकाह्वयौ । पारिणामिक इत्येषां योगे भंगस्तुरीयकः ॥ ९० ॥ क्षायिकौदयिकाभिख्यौ क्षायोपशमिकाह्वयः । पारिणामिक एतेषां योगे भंगस्तु पंचमः ॥ ९१ ॥ पंचसंयोगजश्चैकः स्यादौपशमिकादिभिः । पंचभिः सन्निपतितैः षड्विंशतिरमी समे ॥ ९२ ॥

क्षायोपशमिक, औपशमिक, औदयिक ने पारिणामिक, ५ क्षायिक, औदयिक, क्षायोपशमिक ने पारिणामिक. (८७–९१) पंचसंयोगी एक भांगो उपर जणावेला पांच भावोना संयोगथी थाय छे. ए रीते कुल २६ भांगा थाय छे. (९२)

द्विकसंयोगी १०	त्रिकसंयोगी–१०	चतुःसंयोगी–५
१ औपशमिक–क्षायिक	१ औप० क्षायिक-क्षायोप०	१ औप० क्षायिक–क्षायो० औदयिक.
२ औपशमिक–क्षायोपशमिक	२ औप० क्षायिक-औदयिक	२ औप० क्षायिक–क्षायो० पारिणामिक.
३ औपशमिक–औदयिक	३ औप० क्षायिक-पारिणा०	३ औप० क्षायिक–औद० पारिणामिक.
४ औपशमिक–पारिणामिक	४ औप० क्षायोप-औदयि०	४ औप० क्षायो० औद० पारिणामिक.
५ क्षायिक-क्षायोपशमिक	५ औप० क्षायोप-पारिणा०	५ क्षायिक–क्षायो० औद० पारिणामिक.
६ क्षायिक–औदयिक	६ औप० औदयि० पारिणा.	**पंचसंयोगी १**
७ क्षायिक–पारिणामिक	७ क्षायिक–क्षायोप० औदयिक	१ औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, औदयिक, पारिणामिक.
८ क्षायोपशमिक-औदयिक	८ क्षायिक–क्षायोप० पारिणामिक.	
९ क्षायोपशमिक–पारिणामिक	९ क्षायिक–औदयिक–पारिणामिक.	
१० औदयिक-पारिणामिक	१० क्षायोप० औदयिक–पारिणामिक.	

आ कुल २६ भांगामांथी नीचेना ६ भंग उपयोगी छे. २० नाममात्र छे.

१ द्विकसंयोगी–क्षायिक–पारिणामिक.
२ त्रिकसंयोगी–क्षायिक–औद० पारिणा०
३ त्रिकसंयोगी–क्षायो० औद० पारिणा०
४ चतुःसंयोगी–औप० क्षायो० औद० पारि०
५ चतुःसंयोगी-क्षायिक० क्षायो० औद० पारि०
६ पंचसंयोगी उपर प्रमाणे—

उपरमांथी प्रथम भंग सिद्धमां होय, बीजो भंग सर्वज्ञने होय, त्रीजो–चोथो ने पांचमो चारे गतिमां प्राप्त थाय अने छट्ठो–क्षायिकसमकिती उपशमश्रेणी मांडनार मनुष्यने होय.

सप्तमो द्विकयोगोत्थो नवमो दशमोऽपि च । त्रियोगजौ चतुर्योगे भंगौ चतुर्थपंचमौ ॥ ९३ ॥ एकः पंचकसंयोगी षडमी सान्निपातिकाः । जीवेषु संभवंत्यन्ये विंशतिः संभवोज्झिताः ॥ ९४ ॥ यत्तु तत्त्वार्थवृत्तावेवमुक्तं, एषामेवौपशमिकादीनां द्विकादियोगेन सान्निपातिको निष्पद्यते षड्विंशतिविकल्पः, तत्रैकादश विरोधित्वादसंभवंतस्त्यक्ता विकल्पाः पंचदशोपात्ताः संभविनः, प्रशमरतौ षष्ठ इत्यन्यः पंचदशभेद इति वचनादिति तदभिप्रायं सम्यग् न विद्मः, यतोऽनुयोगद्वारवृत्तावेवमुक्तं, तदेवमेको द्विकसंयोगभंगको, द्वौ द्वौ त्रिकयोगचतुष्कयोगभंगकौ, एकस्त्वयं पंचकयोग इत्येते षड्भंगका अत्र संभविनः प्रतिपादिताः, शेषास्तु संयोगमात्रतयैव प्ररूपिता इति स्थितं.

एतेषु च षट्सु भंगकेषु मध्ये एकस्त्रिकसंयोगो, द्वौ चतुष्कयोगावित्येते त्रयोऽपि प्रत्येकं चतसृष्वपि गतिषु संभवंतीति निर्णीतमिति, गतिचतुष्टयभेदात्ते किल द्वादश वक्ष्यंते. ये तु शेषा द्विकत्रिकपंचकयोगलक्ष-

---

एमां द्विकसंयोगी १ सातमो, त्रिकसंयोगी बे नवमो ने दशमो, चतुःसंयोगी बे चोथो ने पांचमो अने पांचसंयोगी १ ए प्रमाणे कुल ६ सान्निपातिक भांगा जीवमां संभवे छे. बाकीना वीश संभवता नथी. (९३–९४) तत्त्वार्थवृत्तिमां एम कह्युं छे के– ' ए औपशमिकादिक भावोना द्विकादि योगे करीने सन्निपातिक भावना २६ विकल्प थाय छे, तेमांना ११ विकल्प विरोधी होवाथी संभवता नथी तेथी ते तजी देवा, बाकीना १५ विकल्पो संभवे छे ते ग्रहण करवा तेनो, तेम ज प्रशमरतिमां छठ्ठो सान्निपातिक भाव १५ भेदवाळो कह्यो छे एम कह्युं छे तेनो अभिप्राय अमे सम्यग् रीते जाणी शकता नथी,' श्री अनुयोगद्वारनी वृत्तिमां एम कह्युं छे के–'एक द्विकसंयोगी भांगो, बे बे त्रिकसंयोगी ने चतुःसंयोगी भांगा अने एक पंचसंयोगी भांगो–ए प्रमाणे छ भंग संभवे छे ' तेथी कह्या छे; बाकीना भंगो संयोगमात्रथी थता होवाथी कहेला छे.'

हवे ए छ भांगामां एक त्रिकसंयोगी ने बे चतुःसंयोगी एम त्रण भांगा चारे गतिमां संभवे छे एम निर्णय कर्यो छे. एटले तेना गति चतुष्टयवडे गुणता १२ भेद थाय छे. बाकी एक द्विकसंयोगी, एक त्रिकसंयोगी ने एक पंचसंयोगी–ए त्रण भांगा सिद्धमां,

---

१ प्रशमरतिमां जे १५ भेद कह्या छे तेनो अभिप्राय तो ६ भेद जे संभवे छे तेना उत्तरभेद १५ थाय छे ते ज कहेल जणाय छे.

णास्त्रयो भंगाः सिद्धकेवल्युपशांतमोहानां यथाक्रमं निर्णीतास्ते च यथो- क्तैकस्थानसंभवित्वात्त्रय एवेत्यनया विवक्षया सान्निपातिको भावः स्थानांतरे पंचदशविध उक्तो द्रष्टव्यः. यदाह—अविरुद्धसन्निवाइय—भेया एते पण्णरसत्ति '

संभवत्सु च षट्स्वेषु सप्तमो द्विकयोगजः। सिद्धानामेव निर्दिष्टः क्षायिकपारिणामिकः ॥ ९५ ॥ ज्ञानादिक्षायिकं ह्येषां जीवत्वं पारिणामिकं। सिद्धानामन्यभावानां हेत्वभावादसंभवः ॥ ९६ ॥ त्रिकसंयोगजो यस्तु नवमः प्राग्निरूपितः। स सर्वज्ञे क्षायिकाख्यौ—दयिकपारिणामिकः ॥ ९७ ॥ जीवत्वादि यतस्तस्य वर्त्तते पारिणामिकं। औदयिकी नरगति— र्ज्ञानादि क्षायिकं तथा ॥ ९८ ॥ त्रिकसंयोगजो यस्तु दशमः प्राक् प्रदर्शितः। स चतुर्धा भवेन्मिश्रौ—दयिकपारिणामिकः ॥ ९९ ॥ यतः क्षायोपशमिका—नींद्रियाणि भवंत्यथ। औदयिकी श्वभ्रगति—र्जीवत्वं पारिणामिकं ॥ १०० ॥ एवं तिर्यगादिगत्य—भिलापेन त्रयः परे। भवंति भंगकास्ते च स्वयं वाच्या विवेकिभिः ॥ १ ॥ चतुस्संयोगजौ यौ च भंगौ

केवळीमां अने उपशांतमोहीमां अनुक्रमे संभवे छे. एटले तेना त्रण ने उपर जणावेला बार एम कुल १५ सान्निपातिक भावना भेद आ प्रकारे थाय छे. तेथी स्थानांतरे ते अनुसारे सान्निपातिक भाव पंदर प्रकारनो कहेलो छे एम जाणवुं. कह्युं छे के—'अविरुद्धसन्निवाइय—भेया एते पणरस त्ति ' आ अविरुद्ध एवा सान्निपातिक भेद पंदर छे.

सान्निपातिकना २६ भेदमां संभवित भेद छ कह्या छे, तेमां द्विकसंयोगी सातमो क्षायिक ने पारिणामिक रूप भेद सिद्धमां ज कहेलो छे. (९५) तेमने ज्ञानादि क्षायिक भावना छे अने जीवत्व पारिणामिक भावनुं छे. सिद्धमां बीजा भावोना हेतुनो अभाव होवाथी बीजा भावोनो असंभव छे. (९६) त्रिकसंयोगी नवमो भंग क्षायिक, औदयिक ने पारिणामिकरूप छे ते सर्वज्ञमां संभवे छे. (९७) तेमने जीवत्वादि पारिणामिक भावनुं, औदयिकी नरगति अने क्षायिक भावना ज्ञानादि छे. (९८) त्रिकसंयोगी दशमो भंग जे क्षायोपशमिक, औदयिक ने पारिणामिकरूप छे ते चार प्रकारे छे; (९९) केमके क्षायोपशमिकी इंद्रियो, औदयिकी नरकगति ने जीवत्व पारिणामिक भावनुं नरक गतिवाळा जीवोने होय छे. (१००) ते ज प्रमाणे तिर्यंच, मनुष्य ने देवगति माटे पण प्ररूपणा विवेकी सज्जनोए करी लेवी. (१०१) चतुःसंयोगी जे चोथो ने पांचमो

तुरीयपंचमौ । प्रत्येकं तावपि स्यातां गतिभेदाच्चतुर्विधौ ॥ २ ॥ तथाहि– सम्यक्त्वमौपशमिकं कृतत्रिपुंजदेहिनां । खानि मिश्राणि जीवत्वं स्यात्तेषां पारिणामिकं ॥ ३ ॥ गतिर्भवत्यौदयिकी यदेषां नरकादिका । चतुःसंयोगजस्तुर्य–श्चतुर्भेदो भवेदिति ॥ ४ ॥ सम्यक्त्वं क्षायिकं खानि मिश्राणि पारिणामिकं । जीवत्वमेवौदयिकी गतिः स्यान्नरकादिका ॥ ५ ॥ चतुःसंयोगजश्चैवं पंचमोऽपि चतुर्विधः । नृणामुपशमश्रेण्यां पंचसंयोगजः पुनः ॥ ६ ॥ यो हि क्षायिकसम्यक्त्वी मनुजः प्रतिपद्यते । विशुद्ध्योपशमश्रेणीं क्षायिकं तस्य दर्शनं ॥ ७ ॥ चारित्रं चौपशमिकं तन्मोहोपशमाद्भवेत् । गतिरौदयिकी खानि क्षायोपशमिकान्यथ ॥ ८ ॥ जीवत्वमथ भव्यत्वं भवेतां पारिणामिके । पंचसंयोगजस्यैक–विधस्यैवं हि संभवः ॥ ९ ॥ सान्निपातिकभेदानां षण्णां संभविनामिति । उक्ता भेदाः पंचदश प्रतिभेदविवक्षया ॥ १० ॥

जीवेषु षडमी भावा यथासंभवमाहिताः । अजीवेषु त्वौदयिक–पारिणामिकसंज्ञकौ ॥ ११ ॥ तथाहि–धर्माधर्मास्तिकाय–कालेषु पारि-

बे भंग संभवित कह्या छे ते पण चारे गतिमां होवाथी चार प्रकारना समजवा. (२) ते आ रीते–समकित उपशमभावनुं के जेणे त्रण पुंज कर्या छे[1]. क्षायोपशमिकी इंद्रियो, पारिणामिक भावनुं जीवत्व ने औदयिकी नरकादिगति–ए रीते चतुःसंयोगी चोथो भंग ४ गति आश्री चार प्रकारे समजवो, (३–४) अने चतुःसंयोगी पांचमा भंगमां क्षायिकभावनुं समकित, क्षायोपशमिकी इंद्रियो, पारिणामिकभावनुं जीवत्व अने औदयिकी भावनी नरकादिगति समजवी. ए रीते तेना पण चारगति आश्री चार प्रकार समजवा; तथा पंचसंयोगी एक भंग मनुष्यने उपशमश्रेणिमां लभ्य थाय छे; (५–६) केमके जे क्षायिक सम्यक्त्वी मनुष्य विशुद्धिवडे उपशमश्रेणि मांडे तेने क्षायिकभावनुं समकित, मोहनीय कर्मनो उपशम करवाथी उपशमभावनुं चारित्र, औदयिकी मनुष्य गति, क्षायोपशमिकी इंद्रियो अने जीवत्व तथा भव्यत्व पारिणामिकभावनुं आ प्रमाणे पंचसंयोगी एक भंगनो संभव छे. (७–९) ए प्रमाणे सान्निपातिकभावना छ संभवित भेदना उत्तर भेद १५ प्रतिभेदनी विवक्षापूर्वक कह्या. (१०)

उपर प्रमाणे छ भाव जीवने विषे जे रीते संभवे छे ते रीते कही बताव्या. हवे अजीवने विषे औदयिक ने पारिणामिक बे भाव होय छे. (११) ते आ रीते–धर्मास्ति-

[1] अहीं जेणे 'त्रण पुंज कर्या छे एम कहेवानो हेतु समजातो नथी.

णामिकः। एक एवानाद्यनंतो निर्दिष्टः श्रुतपारगैः ॥ १२ ॥ चलनस्थि-त्युपष्टंभा–वकाशदानधर्मकाः। सर्वदामी परिणताः परिणामेन तादृशा ॥ १३ ॥ आवल्यादिपरीणामो–ररीकारान्निरंतरं। अनाद्यनंतो भावः स्या–त्कालस्य पारिणामिकः ॥ १४ ॥ वर्त्तनालक्षणः कालः क्षणाव-ल्यादिकः परः। इति द्वेधा निगदितः कालः केवलशालिभिः ॥ १५ ॥ तेन तेन स्वरूपेण वर्त्ततेऽर्था जगत्सु ये। तेषां प्रयोजकत्वं य–द्वर्त्तना सा प्रकीर्त्तिता ॥ १६ ॥ सा लक्षणं लिंगमस्य वर्त्तनालक्षणस्ततः। सर्वक्षेत्र-द्रव्यभाव–व्यापी कालो भवत्ययं ॥ १७ ॥ समयावलिकादिस्तु समय-क्षेत्रवर्त्तिषु। द्रव्यादिष्वस्ति न ततो बहिर्वर्त्तिषु तेष्वयं ॥ १८ ॥ अन्या-न्यसमयोत्पत्ते–रेकक्षणात्मकोऽप्ययं। आवल्यादिपरीणामं सदा परि-णमत्यहो ॥ १९ ॥

स्यात्पुद्गलास्तिकाये तु साद्यंतः पारिणामिकः। भवेदौदयि-कोऽप्यस्मिन् भावः स्कंधेषु केषुचित् ॥ २० ॥ स्कंधानां द्व्यणुकादीनां साद्यंतः पारिणामिकः। तेन तेन स्वरूपेण साद्यंतपरिणामतः ॥ २१ ॥

काय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय ने काळ ए चारने विषे एक पारिणामिकभाव अनादिअनंत स्थितिवाळो छे, एम श्रुतपारगामीओए कह्युं छे. (१२) तेमां चलन, स्थिति अने अवकाश देवाना धर्मवाळा प्रथमना त्रण तेवा परिणामे सर्वदा प्रणमेला छे (१३) अने आवळी विगेरे परिणामने अंगीकार करवाथी निरंतर अनादिअनंतपणे पारिणामिक भाव काळमां पण वर्ते छे. (१४) काळ ते वर्तनालक्षण अने समय आवळी विगेरे एम बे प्रकारनो केवळज्ञानीओए कह्यो छे. (१५) ते ते स्वरूपे जे पदार्थो जगतमां वर्ते छे तेनुं प्रयोजकपणुं ते वर्तना कहेली छे. (१६) तेवुं लक्षण अथवा लिंग (चिन्ह) छे जेनुं ते वर्तनालक्षण काळ सर्व क्षेत्र, द्रव्य ने भावव्यापी छे. (१७) अने समय आवलिकादि काळ समयक्षेत्र(अढी द्वीप)वर्ती द्रव्यादिकमां छे; तेनी बहारना द्रव्यादिकमां नथी. (१८) अन्य अन्य समयनी उत्पत्तिथी आ एक समयात्मक काळ पण आवलिकादि परिणामे सदा परिणमे छे. (१९)

पुद्गलास्तिकायमां पारिणामिक भाव सादिसांत छे अने औदयिकभाव पण केटलाक स्कंधोमां सादिसांतपणे छे. (२०) द्व्यणुकादि स्कंधोमां ते ते स्वरूपे सादिसांत परिणाम होवाथी पारिणामिकभाव सादिसांतपणे छे. (२१) परमाणुओ पण स्कंधनी

स्यादेवं परमाणूनां साद्यंतः पारिणामिकः । स्कंधांतर्भावतो वर्ण–गंधादिव्यत्ययादपि ॥ २२ ॥ अनंताण्वात्मकाः स्कंधा ये जीवग्रहणोचिताः । स्यात्पारिणामिको भाव–स्तेषामौदयिकोऽपि च ॥ २३ ॥ शरीरादिनामकर्मो–दयेन जनितो यथा । औदारिकादिस्कंधानां तत्तद्देहतयोदयः ॥ २४ ॥ ये जीवग्रहणानर्हाः स्कंधाः सूक्ष्माश्च येऽणवः । तेषां नौदयिको भावः केवलं पारिणामिकः ॥ २५ ॥ उदय एवौदयिक इति व्युत्पत्त्यपेक्षया । कर्मस्कंधेष्वौदयिको भावो भवति तद्यथा ॥ २६ ॥ क्रोधादीनां य उदयो जीवानां जायते स वै । कर्मस्कन्धोदयो ज्ञेयः कर्मस्कंधात्मका हि ते ॥ २७ ॥ कर्मस्कंधाश्रिता एवं नन्वौपशमिकादयः । संभवंतः कथं भावा अजीवेषु न कीर्त्तिताः ॥ २८ ॥ सत्यं ते संभवंत्येव तेषां किंच निरूपणे । अविवक्षैव हेतुत्वं बिभर्त्ति प्राक्तनादृता ॥ २९ ॥ भवत्वौदयिकोऽप्येवं संभवन्नविवक्षितः । समाने संभवे पंक्ति–भेदोऽयं कथमर्हति ॥ ३० ॥ सत्यमेष पंक्तिभेदो विज्ञैः

अंदर रहेला होवाथी तथा तेना वर्ण–गंधादिकनो फेरफार थतो होवाथी ते परमाणुओनो पण पारिणामिकभाव सादिसांत होय छे. (२२) अनंत परमाणुरूप जे स्कंधो जीवने ग्रहण करवा योग्य छे तेमां पारिणामिकभाव होय छे, तथा शरीरादि नामकर्मना उदयथी जनित औदयिकभाव पण होय छे. जेमके औदारिकादि स्कंधोनो ते ते देहरूपे उदय थाय छे माटे. (२३–२४) जे जीवने ग्रहण करवाने अयोग्य स्कंधो छे अने सूक्ष्म एवा छुटा परमाणुओ छे तेने औदयिक भाव नथी; केवळ पारिणामिकभाव ज छे. (२५) उदय ते ज औदयिक एवी व्युत्पत्तिनी अपेक्षाए अर्थ थतो होवाथी कर्मस्कंधोने विषे औदयिकभाव छे ते आ प्रमाणे–(२६) जीवोने क्रोधादिकनो जे उदय थाय छे ते कर्मस्कंधोनो उदय जाणवो, कारण के ते कर्मस्कंधात्मक ज छे. (२७) शिष्य प्रश्न करे छे के–'ए रीते गणतां तो औपशमिकादि भावो पण कर्मस्कंधाश्रित ज छे तो ते भावो अजीवने विषे केम कह्या नथी ?' (२८) तेने उत्तर आपे छे के–'तारुं कहेवुं सत्य छे ते रीते ते भावो पण संभवे छे, परंतु तेना निरूपणमां पूर्वपुरुषोए आदरेली अविवक्षा ज हेतुरूप छे.' (२९) शिष्य कहे छे के–' जो संभव छतां तेनी विवक्षा करी नथी तो औदयिक माटे पण ते ज रीते मानवुं जोइए, केमके समान संभवपणामां एवो पंक्तिभेद केम योग्य गणाय?' (३०)तेने उत्तर आपे छे के–' तारुं कहेवुं सत्य छे, केटलाक सुज्ञोए एवा पंक्तिभेदनुं निवारण

कैश्चिन्निराकृतः। अजीवेषूदितो यत्तैः केवलं पारिणामिकः ॥ ३१ ॥ तथोक्तं कर्मग्रंथवृत्तौ–नन्वेवं कर्मस्कंधाश्रिता औपशमिकादयो भावा अजीवानां संभवंत्यतस्तेषामपि भणनं प्राप्नोति, सत्यं, तेषामविवक्षितत्वादत एव कैश्चिदजीवानां पारिणामिक एव भावोऽभ्युपगम्यत इति.

जीवाजीवाश्रिता भावा इति सम्यग्निरूपिताः। अधिकृत्याथ कर्माणि कुर्मो भावप्ररूपणं ॥ ३२ ॥ क्षायिकश्चौपशमिको मिश्रश्च पारिणामिकः। तथौदयिक इत्येते पंचापि मोहनीयके ॥ ३३ ॥ ज्ञानदर्शनावरणां–तरायेषु च कर्मसु। भावा भवंति चत्वार एवौपशमिकं विना ॥ ३४ ॥ तत्रापि केवलज्ञान–दर्शनावरणाख्ययोः । विपाकोदयविष्कंभा–भावान्मिश्रो न संभवेत् ॥ ३५ ॥ वेदनीयनामगोत्रा–युषां तु त्रय एव ते । विना मिश्रौपशमिकौ परिणामक्षयोदयाः ॥ ३६ ॥ तत्र च–क्षय आत्यंतिकोच्छेदः स्वविपाकोपपादकः । उदयः परिणामस्तु जीवांशैर्मिश्रता भृशं ॥ ३७ ॥ यद्वा–तत्तद्द्रव्यक्षेत्रकाला–ध्यवसायव्यपेक्षया। संक्रमा-

---

कर्युं छे. तेथी अजीवोमां एकलो पारिणामिकभाव ज कह्यो छे. (३१) तेने माटे कर्मग्रंथनी वृत्तिमां कह्युं छे के–' ननु इति प्रश्ने--कर्मस्कंधाश्रित औपशमिकादि भावो अजीवोमां संभवे छे तो ते भावोनुं पण कहेवापणुं प्राप्त थशे. ' तेने उत्तर आपे छे के–' तारुं कहेवुं सत्य छे, परंतु तेमां ते भावोनी अविवक्षा ज कारणभूत छे. तेथी ज केटलाक आचार्यो अजीवोने एकलो पारिणामिक भाव ज कहे छे. '

उपर प्रमाणे जीव तथा अजीवने आश्रीने भावो सम्यक् प्रकारे निरूपित कर्या, हवे कर्मोने आश्रीने भावोनुं निरूपण करे छे. (३२) मोहनीय कर्ममां क्षायिक, औपशमिक, क्षायोपशमिक, औदयिक ने पारिणामिक–ए पांचे भावो होय छे. (३३) ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय ने अंतराय ए त्रण कर्ममां औपशमिक विना चार भावो ज होय छे. (३४) तेमां पण केवळज्ञानावरण ने केवळदर्शनावरणने विपाकोदयना विष्कंभनो अभाव होवाथी क्षायोपशमिकभाव संभवतो नथी. (३५) वेदनीय, नाम, गोत्र ने आयु–ए चार कर्मने क्षायोपशमिक ने औपशमिक विना पारिणामिक, क्षायिक ने औदयिक ए त्रण भाव होय छे. (३६) तेमां क्षय ते आत्यंतिक उच्छेद, पोताना विपाकने आपे ते औदयिक अने जीवांश साथे अत्यंत मिश्रता ते पारिणामिक, (३७) अथवा ते ते द्रव्य,

दितया वा यः परिणामः स एव सः ॥ ३८ ॥ उपशमोऽत्रानुदया-वस्था भस्मावृताग्निवत् । स मोहनीय एव स्या-द्द ज्ञात्वन्येषु कर्मसु ॥ ३९ ॥ सर्वोपशम एवायं विज्ञेयो न तु देशतः । यद्देशोपशमस्तु स्या-दन्येषा-मपि कर्मणां ॥ ४० ॥ चतुर्णां घातिनामेव क्षयोपशम इष्यते । कर्मस्व-ष्टास्वपीह स्युः परिणामक्षयोदयाः ॥ ४१ ॥

नृतिर्यग्देवनरक-रूपे गतिचतुष्टये । पंचापि भावा ज्ञेया य-ज्जीवत्वं पारिणामिकं ॥ ४२ ॥ सम्यक्त्वमौपशमिकं क्षायिकं चेंद्रियाणि च । क्षायोपशमिकान्यासु गतिरौदयिकी भवेत् ॥ ४३ ॥ तौ द्वावेव सिद्धगतौ क्षायिकपारिणामिकौ । ज्ञानादि क्षायिकं तत्र जीवत्वं पारिणामिकं ॥ ४४ ॥ एवं च-गत्यादिमार्गणाद्वारे-ष्वेवं स्युर्नियतास्त्रयः । क्षायिकौपश-मिकौ तु भजनीयौ यथाग्रथं ॥ ४५ ॥ यत्क्षायिकौपशमिक-भावयोः सति संभवे । वाच्याः पंचान्यथा मिश्रौ-दयिकपारिणामिकाः ॥ ४६ ॥

क्षेत्र, काळ अने अध्यवसायनी अपेक्षाए अथवा संक्रमादिपणे जे परिणमवुं ते पारिणामिक भाव छे. (३८) उपशम ते अहींया भस्मथी ढांकेला अग्निनी जेवी अनुदयावस्था छे. ते भाव मोहनीयकर्मने ज होय छे, बीजा कर्मोने होतो नथी. (३९) अहीं सर्वथी उपशम समजवो पण देशथी समजवो नहीं, कारण के देशथी उपशम तो बीजा कर्मोनो पण थाय छे. (४०) क्षयोपशम चार घाती कर्मनो ज इच्छाय छे अने पारिणामिक, क्षायिक ने औदयिक आ त्रण भाव आठे कर्मोने होय छे. (४१)

कर्म	ज्ञाना०	दर्शना०	वेदनी	मोहनी	आयु	नाम	गोत्र	अंतराय
भाव	४	४	३	५	३	३	३	४

हवे चार गति आश्रयी भावो कहे छे.-मनुष्य, तिर्यंच, देव ने नरकरूप चारे गतिमां पांचे भाव होय छे. ते आ प्रमाणे-पारिणामिक भावनुं जीवत्व, औपशमिक ने क्षायिक समकित, क्षायोपशमिकी इंद्रियो अने औदयिकी गति. (४२-४३) सिद्धगतिमां क्षायिक ने पारिणामिक बे भाव ज होय छे. तेमां क्षायिक ज्ञानादि अने पारिणामिक जीवत्व. (४४) ए रीते गत्यादि मार्गणाद्वारोने विषे पण नियत त्रण भाव-क्षायोपशमिक, औदयिक ने पारिणामिक होय छे अने क्षायिक ने औपशमिक ए भाव तो कथंचित् होवाथी भजनारूप छे. (४५) क्षायिक ने औपशमिकनो संभव सते पांच भाव कहेवा, अन्यथा क्षायोपशमिक, औदयिक अने पारिणामिक ए त्रण भाव कहेवा. (४६)

एवं कर्मस्वमी भावा यथाम्नायं निरूपिताः। अथो गुणस्थानकेषु कुर्मो भावप्ररूपणां ॥४७॥ सम्यग्दृष्ट्यादिषु गुण–स्थानकेपु चतुर्ष्विह। भावास्त्रयोऽथ चत्वारो लभ्यंते किल तद्यथा ॥४८॥ त्रयः क्षायोपशमिक–सम्यग्दृष्टेर्भवंति यत्। गतिरौदयिकी तेषां जीवत्वं पारिणामिकं ॥ ४९ ॥ क्षायोपशमिकं सम्यगूदर्शनं चेंद्रियाणि च। चत्वारश्चौपशमिक–क्षायिकदर्शनस्पृशः ॥५०॥ सम्यक्त्वमौपशमिकं तेषां च क्षायिकं भवेत्। मिश्राणि खानि जीवत्वं गतिश्चात्रापि पूर्ववत् ॥ ५१ ॥ अनिवृत्तिवादराख्य–सुसूक्ष्मसंपराययोः। चत्वारः पंच वा भावा–स्त्रयस्तत्र च पूर्ववत् ॥५२॥ सम्यक्त्वमौपशमिकं श्रेणावुपशमस्पृशि। क्षायिकं क्षपकश्रेण्यां द्विधाप्येवं चतुष्टये ॥ ५३ ॥ पंचमस्त्वौपशमिक–चारित्रान्वय इष्यते। शास्त्रांतरे तत्कथित–मनयोर्गुणयोरपि ॥ ५४ ॥ तथोक्तं कर्मग्रंथवृत्तौ–एषामेव चतुर्णां मध्ये ऽनिवृत्तिवादरसूक्ष्मसंपरायगुणस्थानकद्वयवर्तिनोऽप्यौपशमिकचारित्रस्य शास्त्रांतरे प्रतिपादनादौपशमिकचारित्रप्रक्षेपे पंचम इति. तथोपशांत-

---

ए प्रमाणे कर्मने विषे आ भावो यथाम्नाय निरूपित कर्या. हवे गुणस्थानोने विषे भावनी निरूपणा करवामां आवे छे. (४७)" सम्यग्दृष्टि विगेरे चार (चोथुं, पांचमुं, छठुं ने सातमुं) गुणस्थानोने विषे त्रण अथवा चार भाव लाभे छे ते आ प्रमाणे–(४८) त्रण भाव क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टिने होय छे. औदयिकी गति, पारिणामिक जीवत्व अने क्षायोपशमिक सम्यक्त्व अने इंद्रियो; तथा चार भाव औपशमिक अथवा क्षायिक समकितीने होय छे. तेने समकित औपशमिक अथवा क्षायिक, क्षायोपशमिकी इंद्रियो अने पारिणामिक जीवत्व तथा औदयिकीगति पूर्ववत् जाणवी. (४९–५१) अनिवृत्तिबादर ने सूक्ष्मसंपराय ए बे नवमा दशमा गुणस्थानके चार अथवा पांच भाव होय छे. तेमां त्रण तो पूर्ववत्, (५२) अने उपशमश्रेणिवाळाने औपशमिक सम्यक्त्व अने क्षपकश्रेणिवाळाने क्षायिक समकित एटले बेमांथी एक उमेरतां चार भाव थाय. (५३) अने पांचमो भाव क्षायिक समकिती उपशमश्रेणि मांडे त्यारे उपशमभावनुं चारित्र होवाथी औपशमिक वधे छे. आ बे गुणठाणे ते प्रमाणे होवानुं शास्त्रांतरमां पण कह्युं छे. (५४) श्रीकर्मग्रंथवृत्तिमां कह्युं छे के–' ए चार भावमां अनिवृत्तिबादर अने सूक्ष्मसंपराय गुणस्थानकवर्ती जीवोने पण औपशमिक चारित्रनुं शास्त्रांतरमां कथन होवाथी औपशमिकभावनुं चारित्र उमेरवाथी पांच भाव थाय छे, तथा उपशांतमोह अग्यारमे गुण-

मोहेऽपि चत्वारः पंच वा स्मृताः । पंच क्षायिकसम्यक्त्व-भृतोऽन्यस्य चतुष्टयं ॥ ५५ ॥ चत्वारोऽपूर्वकरणे क्षीणमोहे च ते स्मृताः । त्रयस्तु पूर्ववन्मिश्रौ-दयिकपारिणामिकाः ॥ ५६ ॥ सम्यक्त्वं क्षायिकं क्षीण-मोहे भावस्तुरीयकः । क्षायिकं चौपशमिक-मपूर्वकरणे पुनः ॥ ५७ ॥ मिथ्यादृष्टौ तथा सास्वा-दने मिश्रगुणेऽपि च । सयोगिकेवल्याख्ये चाऽयोगिकेवलिसंज्ञके ॥ ५८ ॥ पंचस्वर्मीषु प्रत्येकं त्रयो भावा उदाहृताः । तत्राद्यत्रितये मिश्रौ-दयिकपारिणामिकाः ॥ ५९ ॥ अंत्यद्वये त्वौदयिक-क्षायिकपारिणामिकाः । ज्ञानादि क्षायिकं शेषौ गतिजीवत्वगोचरौ ॥ ६० ॥

भावाः स्वाम्यादिभेदेन विशिष्यैवं निरूपिताः । सामान्यतः संभविनो भावान् वच्मि गुणेष्वथ ॥ ६१ ॥ त्रयस्त्रिषु गुणस्थाने-ष्वाद्येषु ते च पूर्ववत् । तुर्यादिष्वष्टसु पुनः प्रत्येकं पंच कीर्त्तिताः ॥ ६१ ॥ तथाहि-सम्यक्त्वमौपशमिकं चतुर्थादिगुणाष्टके । क्षायिकं च चतुर्थादि-ष्वेकादशसु संभवेत् ॥ ६३ ॥ मिश्रं सम्यक्त्वेंद्रियादि चतुर्थादिचतुष्टये । एवं चा-

---

ठाणे पण चार अथवा पांच भाव कह्या छे तेमां पांच क्षायिक समकितीने अने बीजाने चार भाव समजवा. (५५) अपूर्वकरण-आठमे अने क्षीणमोह बारमे चार भाव कह्या छे, तेमां त्रण तो पूर्ववत्-क्षायोपशमिक, औदयिक ने पारिणामिक. (५६) उपरांत बारमे गुणठाणे क्षायिक समकित होवाथी क्षायिकभाव चोथो समजवो अने अपूर्वकरणे औपशमिक अथवा क्षायिक समकित होवाथी एक भाव उमेरतां चार भाव थाय छे. (५७) मिथ्यादृष्टि, सास्वादन ने मिश्र-ए त्रण गुणठाणे तेम ज सयोगी तेरमे अने अयोगी चौदमे गुणठाणे पांच भावो पैकी त्रण भाव कह्या छे. तेमां प्रथमना त्रण गुणठाणे क्षायोपशमिक, औदयिक ने पारिणामिक छे अने छेल्ला बे गुणठाणे औदयिक, क्षायिक ने पारिणामिक समजवा. एटले ज्ञानादि क्षायिकभावना ने गति तथा जीवत्व बीजा बे भावना जाणवा. (५८-६०)

उपर प्रमाणे स्वाम्यादिकना भेदे करीने विशेष रीते चौद गुणस्थानके भावो कह्या. हवे सामान्य संभवित भाव गुणस्थानोमां कहे छे. (६१) " पहेला त्रण गुणस्थानमां त्रण भावपूर्व प्रमाणे छे. चोथाथी अग्यारमा सुधी आठ गुणस्थानने विषे दरेकमां पांच भाव कह्या छे. (६२) ते आ प्रमाणे-औपशमिक सम्यक्त्व चोथाथी अग्यारमा सुधीना आठ गुणस्थाने होय छे. चोथाथी चौदमा सुधी अग्यार गुणस्थाने क्षायिक सम्यक्त्व होय छे. (६३) चोथाथी सातमा सुधी चार गुणठाणे क्षायोपशमिक सम्यक्त्व अने इंद्रियादिक

रित्रे चाष्टमादौ त्रय एकादशे तु खं ॥ ६४ ॥ गतिः सर्वत्रौदयिकी जीवत्वं पारिणामिकं । एवं भावित एतेषु तावत्पंचकसंभवः ॥ ६५ ॥ क्षीणमोहे च चत्वार–स्त औपशमिकं विना । अंत्यद्वये त्रयो भावा मिश्रोपशमिकौ विना ॥ ६६ ॥

पंचाप्येवं मूलभेदा गुणस्थानेषु भाविताः । एतेष्वेवाथ भावानां प्रतिभेदान् प्रतन्महे ॥ ६७ ॥ दश मिथ्यादृष्टिसास्वा–दनयोर्गुणयोः स्मृताः । क्षायोपशमिकाख्यस्य प्रतिभेदा जिनैर्यथा ॥ ६८ ॥ विघ्नक्षयोपशमजाः पंच दानादिलब्धयः । अज्ञानत्रितयं चक्षु–रचक्षुर्दर्शने इति ॥ ६९ ॥ भेदा द्वादश मिश्राख्ये सम्यक्त्वं मिश्ररूपकं । दानादिपंचकं ज्ञान–दर्शनानां त्रयं त्रयं ॥ ७० ॥ ज्ञानाज्ञानान्यतरांश–बाहुल्यमिह संभवेत् । क्वचित्क्वचिच्चोभयांश–समता वात्र यद्यपि ॥ ७१ ॥ तथापि

होय छे. आठमा विगेरे त्रण गुणठाणे इंद्रियो ने चारित्र बंने क्षयोपशमभावना होय छे, अने अग्यारमे इंद्रियो ज क्षायोपशम भावनी होय छे. (६४) गति बधे औदयिकी होय छे, जीवत्व पारिणामिकभावनुं होय छे. आ प्रमाणे ए आठ गुणठाणे पांच भावोनो संभव कह्यो. (६५) क्षीणमोह गुणठाणे औपशमिक विना चार भाव होय छे अने छेला बे (१३–१४) गुणस्थाने क्षयोपशम ने उपशमविना त्रण भाव होय छे. (६६)

चौद गुणस्थाने मूळ भावनुं यंत्र.

गुणठाणुं	मि.	सा.	मि.	अ.	दे.	प्र.	अप्र.	नि.	अनि	सूक्ष्म	उप.	क्षीण.	सयोगी	अयोगी
केठलामुं	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
मूलभाव	३	३	३	५	५	५	५	५	५	५	५	५	३	३

ए प्रमाणे पांच मूळभेद गुणस्थानोमां कह्या हवे गुणस्थानोमां ते ते भावोना उत्तरभेद कहेवाय छे. (६७) मिथ्यादृष्टि ने सास्वादन गुणस्थाने क्षायोपशमिक भावना दश भेद जिनेश्वरोए कह्या छे ते आ प्रमाणे:–(६८) अंतरायकर्मना क्षयोपशमथी दानादि पांच लब्धिओ, त्रण अज्ञान, चक्षु अने अचक्षुदर्शन एम दश समजवा. (६९) मिश्रगुणठाणे बार भेद क्षयोपशमभावना कह्या छे –मिश्ररूप सम्यक्त्व, दानादि पांच लब्धिओ, ज्ञानत्रय अने दर्शन त्रय–कुल १२ (७०) जो के अहीं कोइ ठेकाणे ज्ञान के अज्ञानमांथी कोइना पण अंशनी बहुलता संभवे छे अथवा क्वचित् उभयांशनुं समपणुं पण संभवे छे;

मिश्रैर्ज्ञानांश-बाहुल्यस्य विवक्षया । उक्तं ज्ञानत्रयं मिश्र-गुणस्थाने गुणाश्रये ॥ ७२ ॥ अस्मिंश्च यद्गुणस्थाने दर्शनत्रयमीरितं । तच्च सैद्धांतिकमता-पेक्षयेति विभाव्यतां ॥ ७३ ॥ स्युर्द्वादशैवाविरत-सम्यग्दृश्यपि मिश्रवत् । क्षायोपशमिकं(का) मिश्र-स्थाने सम्यक्त्वमत्र तु ॥७४॥ द्वादशस्वेषु सद्देश-विरतिक्षेपतः स्मृताः । क्षायोपशमिका भावा-स्त्रयोदशैव पंचमे ॥ ७५ ॥ एतेभ्यो देशविरति-त्यागे द्वादश ये स्थिताः । तेष्वेव सर्वविरति-मनोज्ञानसमन्वये ॥ ७६ ॥ षष्ठसप्तमयोर्भावा भवंत्येते चतुर्दश । क्षायोपशमिकाख्येन सम्यक्त्वेन विना त्वमी ॥ ७७ ॥ त्रयोदशाष्टमे भावा नवमे दशमेऽपि च । अष्टमादिषु सम्यक्त्वं क्षायोपशमिकं न यत् ॥ ७८ ॥ एकादशद्वादशयो-र्गुणस्थानकयोरमी । विना क्षायोपशमिकं चारित्रं द्वादशोदिताः ॥ ७९ ॥ एकादशे गुणस्थाने यदौपशमिकं परं । चारित्रं क्षायिकं च स्यात् केवलं द्वादशे गुणे ॥ ८० ॥ दर्शनत्रितयं ज्ञान-चतुष्कं लब्धिपंचकं । अमी भावा द्वादशोप-शांतक्षीणविमोहयोः ॥ ८१ ॥ इति क्षायोपशमिक-प्रतिभेदा विभाविताः ।

---

(७१) तथापि ज्ञानांशनी बहुलतानी अपेक्षाए विज्ञ पुरुषोए अहीं गुणाश्रयभूत मिश्रगुणस्थाने ज्ञानत्रय कहेल छे. (७२) आ मिश्रगुणस्थाने जे दर्शनत्रय कहेल छे ते सैद्धांतिकना मतनी अपेक्षाए (विभंगज्ञानमां अवधिदर्शन मानेलुं होवाथी) समजवा. (७३) अविरत सम्यग्दृष्टि नामना चोथागुणस्थाने क्षायोपशमिकभावना १२ भेद मिश्रगुणठाणानी जेम समजवा. मात्र अहीं मिश्रने स्थाने सम्यक्त्व कहेवुं. (७४) पांचमे गुणठाणे आ बारमां एक देशविरति भळवाथी क्षायोपशमिकभावना १३ प्रकार समजवा. (७५) ए तेरमांथी देशविरति नीकळी जवाथी बाकीना जे १२ रह्या तेमां सर्वविरति अने मनःपर्यवज्ञान भळवाथी छठ्ठे सातमे गुणस्थाने १४ भेद होय छे. आठमे, नवमे अने दशमे गुणठाणे क्षयोपशम समकितविना बाकीना १३ भेद होय छे कारण के आठमे, नवमे अने दशमे गुणस्थाने क्षायोपशमिक सम्यक्त्व होतुं नथी. (७६-७८) अग्यारमे ने बारमे गुणस्थाने पण क्षायोपशमिक चारित्र विना १२ भेद होय छे, (७९) कारण के अग्यारमे गुणस्थाने केवळ औपशमिक ने बारमे गुणस्थाने केवल क्षायिक चारित्र ज होय छे (८०) उपशांतमोह अने क्षीणमोह गुणस्थाने त्रण दर्शन, चार ज्ञान अने दानादि लब्धिपंचक-आ बार प्रकार क्षयोपशम भावना होय छे. (तेरमे, चौदमे गुणस्थाने क्षायोपशमिकभाव होतो ज नथी.) (८१) आ प्रमाणे क्षायोपशमिक-

गुणस्थानेष्वौदयिक–प्रतिभेदान् ब्रवीम्यथ ॥ ८२ ॥

अज्ञानाद्या औदयिका भावा य एकविंशतिः। सर्वेऽपि ते स्युर्मिथ्यात्व–गुणस्थाने शरीरिणां ॥ ८३ ॥ सास्वादने च मिथ्यात्वं विना त एव विंशतिः। अज्ञानेन विनैकोन–विंशतिर्मिश्रतुर्ययोः ॥ ८४ ॥ वेदाः ३ कषाया ४ गतयो ४ लेश्या ६ श्चासंयमोऽपि १ च। असिद्धत्व २ ममी तुर्य–तृतीयगुणयोः स्मृताः ॥ ८५ ॥ एकोनविंशतेरेभ्यो देवश्वभ्रगती विना। शेषाः सप्तदश ख्याता गुणस्थाने हि पंचमे ॥ ८६ ॥ नरतिर्यग्गती लेश्या असिद्धत्वमसंयमः। वेदाः कषाया इत्येते स्युर्गुणे देशसंवरे ॥ ८७ ॥ प्रमत्ते च पंचदश भावा औदयिकाः स्मृताः। उदयेऽत्र भवेतां य–न्नतिर्यग्गत्यसंयमौ ॥ ८८ ॥ अप्रमत्ते द्वादशाद्य–लेश्यात्रयविनाकृताः। कषाय ४ वेद ३ नृगति १–स्त्र्यंत्यलेश्यमसिद्धता ॥ ८९ ॥ नवमाष्टमयोस्तेजः–पद्मलेश्ये विना दश। नृगत्यसिद्धता शुक्ल–लेश्यावेदकषायकाः ॥ ९० ॥ लोभः संज्वलनः शुक्ल–लेश्या नृगत्यसिद्धते। चत्वार एवौदयिका भवंति दशमे गुणे ॥ ९१ ॥ आद्यास्त्रयः कषाया य–त्रयो

भावना प्रतिभेद कह्या. हवे गुणस्थानोए औदयिकभावना प्रतिभेदो कहे छे. (८२)

अज्ञानादि जे एकवीश प्रकार औदयिकभावना कह्या छे ते सर्वे मिथ्यात्वगुणस्थाने रहेला जीवोने होय छे. (८३) सास्वादने मिथ्यात्वविना वीश होय छे. त्रीजा अने चोथा गुणस्थाने अज्ञान विना १९ होय छे. (८४) ते आ प्रमाणे–त्रण वेद, ४ कषाय, ४ गति, ६ लेश्या, १ असंयम, १ असिद्धत्व–कुल १९ त्रीजा अने चोथा गुणस्थाने कहेला छे. (८५) पांचमे गुणस्थाने आ ओगणीशमांथी देव ने नरकगतिविना बाकीना १७ प्रकार होय छे. (८६) ते आ प्रमाणे–नर ने तिर्यंच बे गति, ६ लेश्या, १ असिद्धत्व, १ असंयम, ३ वेद ने ४ कषाय–आ १७ देशविरति गुणस्थाने होय छे. (८७) प्रमत्तगुणठाणे तिर्यंच गति ने असंयम ए बे उदयमां न होवाथी बाकीना १५ प्रकार औदयिकभावना होय छे. (८८) अप्रमत्तगुणठाणे प्रथमनी त्रण लेश्याविना बार होय छे ते आ प्रमाणे–४ कषाय, ३ वेद, १ मनुष्यगति, ३ छेल्ली लेश्या अने १ असिद्धत्व. (८९) आठमे नवमे गुणठाणे तेजो ने पद्म बे लेश्याविना १० होय ते आ प्रमाणे–१ नरगति, १ असिद्धत्व, १ शुक्ललेश्या, ३ वेद ने ४ कषाय (९०) दशमे गुणठाणे १ नरगति, १ असिद्धत्व, १ शुक्ललेश्या ने १ संज्वलन लोभ– ए चार औदयिकभावना प्रकार होय

वेदाः षडप्यमी । भावा औदयिकाः सूक्ष्म–संपराये भवंति न ॥ ९२ ॥ एकादशे विना लोभं द्वादशेऽपि त्रयोदशे । त्रयोंऽत्यलेश्यासिद्धत्व–मनुष्यगतिलक्षणाः ॥ ९३ ॥ असिद्धत्वं च नृगतिर्द्वे गुणस्थानकेंतिमे । लेश्या न स्यात्तत्र यस्मा–दयोगित्वमलेश्यता ॥९४॥ एवमौदयिका भावा गुणस्थानेषु भाविताः । तथौपशमिकौ भावौ भावयामो गुणेष्वथ ॥९५॥

सम्यक्त्वमौपशमिक–मेकं तुर्यादिपंचके । तादृक्सम्यक्त्वचारित्रे नवमादित्रये पुनः ॥ ९६ ॥ चारित्रमौपशमिकं नवमादिगुणत्रये । शास्त्रांतरेषु यत्प्रोक्तं केश्चित्तेषां मतं ह्यदः ॥ ९७ ॥ येषां मते तु नवमे दशमे च गुणास्पदे । क्षिप्तोत्थं स्याद्व्रतं कृत्स्नं तन्मोहानुपशांतितः ॥ ९८ ॥ तन्मते त्वौपशमिकं व्रतमेकादशे गुणे । पूर्वे तु मन्वते सद्ध–स्तत्सामीप्यादनागतं ॥ ९९ ॥ इत्यौपशमिकौ भावौ गुणस्थानेषु भावितौ । प्रतिभेदा विभाव्यंते क्षायिकस्य गुणेष्वथ ॥ २०० ॥

छे, (९१) कारण के प्रथमना त्रण कषाय ने त्रण वेद ए छ औदयिक भावना प्रकार सूक्ष्मसंपराय गुणठाणे होता नथी. (९२) अग्यारमे, बारमे ने तेरमे पण लोभविना बाकीना अंत्य (शुक्ल) लेश्या, नरगति ने असिद्धत्व ए त्रण होय छे. (९३) चौदमे गुणठाणे लेश्याविना मनुष्यगति ने असिद्धत्व ए बे प्रकार होय छे, कारण के अहीं अयोगीपणुं होवाथी लेश्या होती नथी. (९४) आ प्रमाणे औदयिकभावना उत्तर भेदो गुणठाणे कह्या. हवे औपशमिकभावना बे भेद गुणस्थानो परत्वे कहे छे. (९५)

औपशमिक सम्यक्त्व ए एक भेद चोथा विगेरे पांच (चोथाथी आठमा सुधीना) गुणस्थानकोए होय छे अने उपशमभावनुं समकित ने चारित्र ए बंने नवमा विगेरे त्रण (९–१०–११) गुणठाणे होय छे. (९६) नवमा विगेरे त्रण गुणस्थाने शास्त्रांतरमां औपशमिक चारित्र कहेल छे. तेमना मते आ हकीकत समजवी, (९७) परंतु जेमना मते नवमे दशमे गुणस्थाने क्षयोपशमभावनुं चारित्र कह्युं छे ते समग्र चारित्रमोहनो उपशम करेलो न होवाथी कह्युं छे. (९८) तेमने मते औपशमिक चारित्र मात्र अग्यारमे गुणस्थाने ज जाणवुं. प्रथमना मतवाळा आचार्योए तत्सामीप्यपणाथी उपशमभावनुं चारित्र प्राप्त नहीं थया छतां पण (नवमे दशमे) मानेलुं छे. (९९) आ प्रमाणे गुणस्थानोने विषे औपशमिकभावना बे उत्तरभेद कह्या. हवे गुणस्थानोमां ज क्षायिकभावना उत्तर भेदो कहे छे. (२००)

सम्यक्त्वं क्षायिकं प्रोक्तं तुरीयादिगुणाष्टके । क्षीणमोहे च चारित्र–सम्यक्त्वे क्षायिके उभे ॥ २०१ ॥ लब्धयः पंच दानाद्याः केवले ज्ञान-दर्शने । तथा सम्यक्त्वचारित्रे नवेत्यंत्यगुणद्वये ॥ २ ॥ इत्येवं क्षायिका भेदा गुणस्थानेषु भाविताः । पारिणामिकभावस्य प्रतिभेदानथ ब्रुवे ॥३॥

अभव्यत्वं च भव्यत्वं तथा जीवत्वमित्यमी । मिथ्यादृष्टिगुणस्थाने भावाः स्युः पारिणामिकाः ॥ ४ ॥ द्वितीयादिक्षीणमोह–पर्यंतेषु गुणेषु च । स्यातां जीवत्वभव्यत्वे अभव्यत्वविनाकृते ॥ ५ ॥ स्यादेकमेव जीवत्वं चरमे च गुणद्वये । सप्रभेदा गुणस्थाने–ष्वेवं भावाः प्ररूपिताः ॥ ६ ॥ कथं न ननु भव्यत्व–भावोंतिमगुणद्वये । निर्वाणगमनार्हो हि भव्योऽर्हद्भिर्यतः स्मृतः ॥ ७ ॥ अत्रोच्यते–प्रत्यासन्नभाविसिद्धा–वस्थायां तदभावतः । अत्रापि भव्यत्वाभावः शास्त्रकृद्भिर्विवक्षितः ॥ ८ ॥ यद्वाऽपरेण केनापि हेतुना न विवक्षितं । भव्यत्वमिह शास्त्रेषु नोक्तमस्माभिरप्यतः ॥ ९ ॥

चोथा विगेरे आठ (चोथाथी ११ मा सुधी) गुणठाणे क्षायिक सम्यक्त्व कह्युं छे. क्षीणमोह गुणठाणे चारित्र ने सम्यक्त्व बंने क्षायिकभावना कह्या छे. (१) छेल्ला बे (१३–१४) गुणठाणे दानादि पांच लब्धिओ, केवळज्ञान ने केवळदर्शन तथा, सम्यक्त्व ने चारित्र ए प्रमाणे नवे प्रकार कह्या छे. (२) आ प्रमाणे गुणस्थानोमां क्षायिकभावना भेद कह्या. हवे पारिणामिकभावना भेद कहे छे–मिथ्यादृष्टि गुणस्थाने अभव्यत्व, भव्यत्व अने जीवत्व ए त्रण पारिणामिकभावना प्रकार होय छे. (४) बीजाथी बारमा क्षीणमोहसुधीना ११ गुणस्थाने अभव्यत्व विना बाकीना बे–जीवत्व ने भव्यत्व प्रकार होय छे. (५) छेल्ला बे गुणठाणे एक जीवत्व ज होय छे. आ प्रमाणे उत्तरभेदो सहित गुणस्थानोए पांच भावो कह्या. (६) अहीं शिष्य शंका करे छे के–' भव्यत्व छेल्ला बे गुणठाणे केम कह्युं नथी ? कारण के तीर्थंकरोए भव्यत्वने निर्वाणगमनने योग्य कहेल छे. ' (७) तेने उत्तर आपे छे–' सिद्धावस्था अति नजीकमां प्राप्त थवानी होवाथी भव्यत्वनी अपेक्षा न होवाथी अहीं पण भव्यत्वनो अभाव शास्त्रकारोए कहेलो छे, (८) अथवा बीजा कोइ पण हेतुथी भव्यत्वनी विवक्षा शास्त्रमां ए बे गुणठाणे करी नथी तेथी अमे पण कहेल नथी. ' (९)

सान्निपातिकभावोऽथ गुणस्थानेषु भाव्यते । अनेकधा स च यथा गुणस्थानं परापरैः ॥ १० ॥ यावतां यत्र भावानां भेदा यावंत ईरिताः । तेषां तत्र गुणस्थाने कृते संकलने सति ॥ ११ ॥ स्यात्तावद्भेदनिष्पन्नो भावोऽयं सान्निपातिकः । नामग्राहं गुणस्थाने–ष्वेषोऽथ परिभाव्यते ॥१२॥ मिथ्यादृष्टावौदयिक–भावा यथैकविंशतिः । दश क्षायोपशमिका–स्त्रयश्च पारिणामिकाः ॥ १३ ॥ एवं भावाश्चतुस्त्रिंश–ज्जाताः संकलिताः समेचतुस्त्रिंशद्भेदजात–स्ततोऽत्र सान्निपातिकः ॥ १४ ॥ भवेत्सास्वादने चैष द्वात्रिंशद्भेदभावितः । त्रयस्त्रिंशद्भेदजातो मिश्रे स्यात्सान्निपातिकः ॥ १५ ॥ पंचत्रिंशद्भेदभूतो गुणस्थाने तुरीयके । पंचमे च चतुस्त्रिंश–द्जातिभेदसमुद्भवः ॥ १६ ॥ प्रमत्ते च त्रयस्त्रिंश–द्भेदजः सान्निपातिकः । अप्रमत्तगुणस्थाने त्रिंशद्भेदसमुत्थितः ॥ १७ ॥ सप्तविंशतिभेदोत्थो गुणस्थानेऽथसष्टमे । नवमे च गुणस्थाने सोऽष्टाविंशतिनिर्मितः ॥ १८ ॥ स सूक्ष्मसंपराये स्याद् द्वाविंशतिसमुद्भवः । तथोपशांतमोहेऽयं भेदविंशतिभावितः ॥ १९ ॥ क्षीणमोहेऽयमेकोन–विंशतिप्रतिभेदजः । स सयोगिनि सर्वज्ञे त्रयोदशभिदुद्भवः ॥ २० ॥ अयोगिनि द्वादशभि–

हवे सान्निपातिकभाव गुणस्थानोए कहे छे. ते गुणस्थानोना परापरपणाथी अनेक प्रकारे थाय छे, (१०) परंतु पांच मूळभावना उत्तरभेदो जे जे गुणस्थाने जेटला जेटला कह्या छे तेनो सरवाळो करवाथी सान्निपातिकभावना उत्तरभेदनी संख्या आवी शकशे. एटला माटे भावोना नाम ग्रहण पूर्वक गुणस्थानोमां तेनी संख्या कहे छे. (११–१२) मिथ्यादृष्टि गुणठाणे औदयिकभावना २१, क्षायोपशमिकभावना १०, पारिणामिकभावना ३ एम कुल ३४ उत्तरभेद थाय छे, तेथी पहेले गुणठाणे सान्निपातिकभाव ३४ भेदवाळो थाय छे, (१३–१४) सास्वादने ३२ भेदवाळो थाय छे, मिश्रे ३३ भेदवाळो सान्निपातिकभाव छे, (१५) चोथे गुणस्थाने ३५ भेदवाळो थाय छे, पांचमे ३४ भेदवाळो थाय छे, (१६) प्रमत्ते ३३ भेद सान्निपातिकना थाय छे. अप्रमत्तगुणस्थाने ३० भेद थाय छे, (१७) आठमे २७ भेदवाळो थाय छे, नवमे २८ भेदवाळो थाय छे,(१८) सूक्ष्मसंपराये २२ भेदवाळो थाय छे, उपशांतमोहे २० भेदवाळो थाय छे, (१९) क्षीणमोहे १९ भेदवाळो थाय छे, सयोगी सर्वज्ञ गुणस्थानके १३ भेदवाळो थाय छे. (२०)

भेदैः स्यात्सान्निपातिकः । ज्ञेया भेदास्तु सर्वेऽमी सर्वत्रोक्तानुसारतः ॥ २१ ॥ अत्र नवमदशमयोर्गुणस्थानयोरौपशमिकचारित्रांगीकारपक्षे द्वावौपशमिकौ भावौ, अन्यथा चैक एवेति ज्ञेयं.

चतुर्भंग्याथ भाव्यंते भावा औदयिकादयः । साद्यंत १ साद्यनंता २ ना–दिसांता ३ नाद्यनंतकाः ४ ॥ २२॥ गत्या दिरत्रौदयिकः सादिः सांतो भवेद्यतः । नृदेवतिर्यग्नरक–गतीनां सादिसांतता ॥ २३ ॥ सादिश्चानंत इत्येष भंगस्त्वत्र न संभवेत् । सादिकानां गतीनां य–दनंतत्वमसंभवि ॥ २४ ॥ अनादयोऽपि मिथ्यात्वा–द्य औदयिकाश्च ये । भव्यानाश्रित्य विज्ञेया–स्तेऽत्र भंगे तृतीयके ॥ २५ ॥ अभव्यापेक्षया त्वेते भाव्या

अने अयोगीगुणस्थाने बार भेदवाळो सान्निपातिकभाव थाय छे. आ बधा भेदो पूर्वे कही गया प्रमाणे समजवा. (२१) अहीं नवमा दशमा गुणस्थाने औपशमिक चारित्र अंगीकार करनारना पक्षथी बे औपशमिकभाव होय छे, अन्यथा एक होय छे एम समजवुं.

गुणस्थान संख्या	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
गुणस्थान नाम	मि.	सा.	मि.	अ.	दे.	प्र.	अ.प्र.	नि	अनि.	सू.	उ.	क्षी.	स.	अ.
क्षायोपशमिकभेद	१०	१०	१२	१२	१३	१४	१४	१३	१३	१३	१२	१२	०	०
औदयिकभेद	२१	२०	१९	१९	१७	१५	१२	१०	१०	४	३	३	३	२
औपशमिकभेद	०	०	०	१	१	१	१	१	२ का. १	२ वा. १	२	०	०	०
क्षायिकभेद	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	२	९	९
पारिणामिकभेद	३	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	१	१
सान्निपातिकभेद	३४	३२	३३	३५	३४	३३	३०	२७	२८ वा २७	२२ वा २१	२०	१९	१३	१२

हवे औदयिकादिभाव चार भंगीवडे कहे छे – १ सादिसांत, २ सादिअनंत, ३ अनादिसांत अने ४ अनादिअनंत. (२२) अहीं गत्यादि औदयिकभाव सादिसांत होय छे, कारण के नर, देव, तिर्यक् ने नरकगतिनी सादिसांतता छे. (२३) सादि-अनंत भंग अहीं संभवतो ज नथी, कारण के गतिनुं सादिपणुं छे तेथी तेनुं अनंतपणुं असंभवित छे. (२४) मिथ्यात्वादि औदयिकभाव भव्योने आश्रीने त्रीजा भांगावाळा एटले अनादिसांत जाणवा अने अभव्यने आश्रयीने चोथा भांगावाळा–एटले अनादि-

भंगे तुरीयके । भावनैवं कषायादि–भावानां क्रियते यथा ॥ २६ ॥ वेदत्रयं च मिथ्यात्वं कषायाणां चतुष्टयं । लेश्याश्च षडसिद्धत्व–मज्ञानासंयमावपि ॥ २७ ॥ अमी औदयिकाः सप्त–दश भव्यव्यपेक्षया । भंगे तृतीये तुर्ये च भंगेऽभव्यव्यपेक्षया ॥ २८ ॥ सम्यक्त्वमौपशमिकं चारित्रमपि तादृशं । द्वावौपशमिकावेतौ केवलं सादिसांतकौ ॥ २९ ॥ आदिसम्यक्त्वलाभे च–च्छ्रेण्यां वेदमवाप्यते । चारित्रमप्युपशम–श्रेण्यामेवेदमाप्यते ॥ ३० ॥ तयोश्चावश्यपातेन भंगोऽत्र प्रथमः स्थितः । तदाश्रित्यौपशमिकं शून्या भंगास्त्रयः परे ॥ ३१ ॥

चारित्रं क्षायिकमथ दानादिलब्धिपंचकं । आश्रित्य क्षायिको भावो भंगे स्यात्सादिसांतके ॥ ३२ ॥ तथोक्तं महाभाष्ये–सम्मत्तचरित्ताई साईसंतो अ उवसमिओ । दाणाइलद्धिपणगं चरणं पि अ खाइओ भावो ॥ १ ॥ ननु चारित्रमस्त्येव सिद्धस्यापीति तत्कथं । तत्साद्यनंते भंगे स्याद्वात्राकर्ण्यतोत्तरं ॥ ३३ ॥ न चरित्री नाचरित्री न चरित्राचरित्र्यपि ।

अनंत जाणवा. कषायादि भावोनी भावना पण ए प्रमाणे करी लेवी. ते आ प्रमाणे–(२५–२६) त्रण वेद, मिथ्यात्व, ४ कषाय, ६ लेश्या, असिद्धत्व, अज्ञान ने असंयमरूप १७ औदयिकभाव भव्यनी अपेक्षाए त्रीजा भंगमां अने अभव्यनी अपेक्षाए चोथा भंगमां भावना करवी. (२७–२८) औपशमिक सम्यक्त्व ने चारित्र ए बंने केवळ सादिसांत ज समजवा, (२९) कारण के आदि सम्यक्त्वना लाभ वखते अने उपशमश्रेणि मांडती वखते उपशमभावनुं सम्यक्त्व लाभे छे अने चारित्र पण उपशमभावनुं उपशमश्रेणिमां ज लाभे छे (३०) तेमांथी अवश्य पात थतो होवाथी अहीं प्रथमभंग–सादिसांत ज प्राप्त थाय छे. बाकीना त्रण भंग औपशमिकभाव आश्रीने शून्य छे. (३१)

क्षायिकभावमां क्षायिक चारित्र ने दानादि लब्धिपंचकने आश्रयीने क्षायिकभाव सादिसांत भांगे छे. (३२) महाभाष्यमां कह्युं छे के–' औपशमिक सम्यक्त्व ने चारित्र अने क्षायिकभावनी दानादि पांच लब्धि ने चारित्र सादिसांत भांगे छे. ' (१) अहीं शिष्य प्रश्न करे छे के–' सिद्धने पण चारित्र होय छे एम कहेल छे, तो क्षायिकभावनुं चारित्र सादिअनंत भांगे होवुं जोइए. ' तेने उत्तर आपे छे के–(३३) सिद्धने न

सिद्धा एवंविधाः प्रोक्ताः पंचमांगे जिनेश्वरैः ॥ ३४ ॥ ' सिद्धे नो चरित्ती ' इत्यादि च तत्सूत्रं. सम्यक्त्वं क्षायिकमथ केवले ज्ञानदर्शने । इत्येतत्त्रयमाश्रित्य क्षायिकः साद्यनंतकः ॥ ३५ ॥ शेषौ तु भंगकावत्र शून्यावेव स्थितावुभौ । अनादिसांतोऽनाद्यंतः क्षायिकः संभवेन्न यत् ॥ ३६ ॥ इच्छंति सिद्धस्याप्यन्ये चारित्रं लब्धिपंचकं । सिद्धत्वेऽपि हि निर्मूल-मेतदावरणक्षयात् ॥ ३७ ॥ एषामावरणाभावे-ऽप्यसत्त्वं यदि कल्प्यते । क्षीणमोहादिकेष्वेवं तदभावः प्रसज्यते ॥ ३८ ॥ तदेतन्मतमाश्रित्य चारित्रे लब्धिपंचके । सिद्धेषु स्वीकृते साद्य-नंतः स्यात्क्षायिकः परं ॥ ३९ ॥ शेषा भंगास्त्रयः शून्याः क्षायिकस्याप्यपेक्षया। भंगव्यवस्था क्रियते क्षायोपशमिकेष्वथ ॥ ४० ॥

छाद्मस्थिकानि ज्ञानानि चत्वार्याश्रित्य निश्चितं । क्षायोपशमिको भावः सादिः सांत इति स्मृतः ॥ ४१ ॥ भंगो द्वितीयः शून्योऽत्रा-प्येषां सम्यक्त्वसंश्रयात् । यदुत्पातोंतश्च पुन—र्मिथ्यात्वे केवलेऽपि च ॥ ४२ ॥

चरित्री, न अचरित्री, न चरित्राचरित्री–एवा प्रकारना पांचमां अंगमां श्रीजिनेश्वरे कहेला छे. (३४) "सिद्धे नो चरित्ती." इत्यादि ते विषयनुं सूत्र छे॰ क्षायिक सम्यक्त्व अने केवळज्ञान तथा केवळदर्शन ए त्रण भेदने आश्रयीने क्षायिकभाव सादिअनंत भांगे छे. (३५) बाकीना बे भंग आ भावमां शून्य छे, कारण के अनादिसांत अने अनादिअनंत ए बंने भांगा क्षायिकभावमां संभवता नथी. (३६) अन्य आचार्यो सिद्धने पण चारित्र अने दानादि लब्धिपंचक इच्छे छे, केमके सिद्धत्वमां एना आवरणोनो समूळ नाश थयेलो छे, (३७) अने एना आवरणनो अभाव सते पण जो तेनुं असत्त्वपणुं मानीए तो क्षीणमोहादिने विषे पण तेनो अभाव प्राप्त थशे. (३८) एमना मतने आश्रयीने चारित्र ने दानादि लब्धिपंचक सिद्धमां स्वीकारीए तो ते ते छ प्रकारनो क्षायिकभाव पण सादिअनंत भांगे गणी शकाय. (३९) एटले बाकीना त्रणे भंग क्षायिकनी अपेक्षाए शून्य गणाय. हवे क्षायोपशमिकने आश्रयीने भंगव्यवस्था कहे छे. (४०)

छाद्मस्थिक चार ज्ञानने आश्रयीने निश्चये क्षायोपशमिक भाव सादि सांत ज कहेलो छे (४१) बीजो भांगो अहीं पण शून्य समजवो॰ कारण के ते (ज्ञानो)नी उत्पत्ति समकितने आश्रीने छे अने तेनो अंत पाछो मिथ्यात्वे जाय त्यारे अथवा केवळज्ञान पामे त्यारे थाय छे. (४२) मतिअज्ञान ने श्रुतअज्ञान भव्यनी अपेक्षाए अनादि-

मत्यज्ञानश्रुताज्ञाने स्यातां भव्यव्यपेक्षया । अनादिसांते तुर्ये च भंगेऽभव्यव्यपेक्षया ॥ ४३ ॥ क्षायोपशमिकोऽचक्षु–दर्शनापेक्षया भवेत् । भंगे तृतीये भव्याना–मभव्यानां तुरीयके ॥ ४४ ॥ विभंगज्ञानमवधि–चक्षुषी किल दर्शने । दानाद्या लब्धयः पंच संयमौ देशसर्वतः ॥ ४५ ॥ सम्यक्त्वमेषामित्येका–दशानां च व्यपेक्षया । क्षायोपशमिको भावः साद्यंतः केवलं भवेत् ॥ ४६ ॥ विशेषावश्यकसूत्रवृत्त्योस्तु केनापि हेतुना षण्णामेव क्षायोपशमिकानां भंगकव्यवस्थोक्ता, ततः शेषाणामचक्षुर्दर्शनादीनां द्वादशानां यथासंभवमस्माभिर्लिखितेति ज्ञेयं.

पारिणामिकभावोऽपि सर्वपुद्गलगोचरः । सादिः सांतश्च विज्ञेयः पर्यायपरिवृत्तितः ॥ ४७ ॥ शून्य एव भवेद्भंगो द्वितीयोऽत्रापि पूर्ववत् । सादीनां द्व्यणुकादीनां ह्यनंतत्वमसंभवि ॥ ४८ ॥ तथा भवति भव्यत्वमाश्रित्य पारिणामिकः । अनादिसांतः सिद्धा हि नाभव्या न च भव्यकाः ॥ ४९ ॥ तथोक्तं–' सिद्धे न भव्वे नो अभव्वे ' इति. अभव्यत्वं च जीवत्वं चाश्रित्यानाद्यनंतकः । स्यात्पारिणामिको भावो–ऽन-

---

सांत छे अने अभव्यनी अपेक्षाए चोथे भांगे एटले अनादिअनंत छे. (४३) अचक्षुदर्शनसंबंधी क्षायोपशमिक भाव भव्योने त्रीजे भांगे छे अने अभव्योने चोथे भांगे छे (४४) विभंगज्ञान अने अवधि तथा चक्षुदर्शन, दानादि पांच लब्धि अने देशविरति ने सर्वविरति तथा सम्यक्त्व–ए अग्यार प्रकारने अंगे क्षायोपशमिकभाव केवळ सादिसांत भांगे छे. (४५–४६) विशेषावश्यकसूत्र ने तेनी वृत्तिमां कोइ पण हेतुए छ ज क्षायोपशमिकना प्रकारनी भंग व्यवस्था कही छे (एटले अमे छ भेदनी विवक्षा ते प्रमाणे कही छे) अने बाकीना अचक्षुदर्शनादि बार प्रकारनी भंगव्यवस्था यथासंभव अमे लखी छे एम समजवुं.

पारिणामिकभाव के जे सर्व पुद्गलगोचर छे ते पर्यायनी परावृत्तिथी सादिसांत छे. (४७) बीजो भंग अहीं पण पूर्ववत् शून्य छे, कारण के द्व्यणुकादि स्कंधोनुं सादिपणुं छे, तेथी तेनुं अनंतपणुं असंभवित छे. (४८) भव्यत्व आश्री पारिणामिकभाव अनादिसांत भांगे छे, कारण के सिद्धो अभव्य पण नथी अने भव्य पण नथी. (४९) कह्युं छे के–" सिद्धे नो भव्वे नो अभव्वे" इति. अभव्यत्व अने जीवत्वने आश्रयीने पारिणामिकभाव अनादिअनंत छे. कारण के ए बेनो उद्भव के क्षय नथी. (५०) आ प्रमाणे

योर्यन्नोद्भवत्तयौ ॥ ५० ॥ एवमुक्तचतुर्भङ्ग्या या भावानामवस्थितिः । सा भावकाल इत्युक्तो महाभाष्यप्रणेतृभिः ॥ ५१ ॥ साईसपज्जवसिओ चउभंगविभागभावणा एत्थ । उदइयाईयाणं तं जाणसु भावकालं तु ॥ ५२ ॥ इत्याद्यर्थतो विशेषावश्यकसूत्रवृत्त्योः ।

भावानां भगवदुपज्ञशास्त्रदृष्ट्या, दिग्मात्रं गदितमिहातिमात्रतुष्ट्या ।
पूर्णेऽस्मिन्निति गुणभाजि भावलोके, ग्रंथोऽयं समुदवहत्समाप्तिलक्ष्मीं ॥ ५३ ॥

विश्वाश्चर्यदकीर्त्तिकीर्त्तिविजयश्रीवाचकेंद्रांतिष-
द्राजश्रीतनयोऽतनिष्ट विनयः श्रीतेजपालात्मजः ।
काव्यं यत्किल तत्र निश्चितजगत्तत्त्वप्रदीपोपमे,
षट्त्रिंशत्तम एष निर्भररसः सर्गः समाप्तः सुखं ॥ ५४ ॥

इति श्रीलोकप्रकाशे षट्त्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥ श्रीरस्तु ॥

कहेली चार भंगीवडे भावोनी जे अवस्थिति कही तेने ज महाभाष्यना प्रणेताओए भावकाळ कहेलो छे. (५१) तेमणे कह्युं छे के—साईसपज्जवसिओ, चउभंगविभागभावणा एत्थ। उदइयाईयाणं, तं जाणसु भावकालं तु ॥ ५२ ॥ इत्यादि अर्थथी विशेषावश्यकसूत्रवृत्तिमां कहेल छे.

भगवंतना कहेला शास्त्रनी दृष्टिवडे करीने अहीं अमे भावोनुं दिशामात्र स्वरूप अति हर्षवडे कह्युं छे. गुणना भाजनरूप आ भावलोक पूर्ण थये सते आ ग्रंथ पण समाप्तिरूपी लक्ष्मीने प्राप्त थाय छे. (५३)

विश्वने आश्चर्य आपनार छे कीर्त्ति जेमनी एवा श्रीकीर्तिविजय उपाध्यायना शिष्य अने राजश्री ने तेजपाळना पुत्र विनयवंत विनयविजये कहेला निश्चित एवा जगतना तत्त्वने प्रदर्शित करवामां दीपकसमान आ लोकप्रकाश ग्रंथमां निर्भर रसवाळो आ छत्रीशमो सर्ग सुखे समाप्त थयो छे. (५४)

॥ इति श्रीलोकप्रकाशे ३६ मो सर्ग समाप्त ॥

॥ अथ सप्तत्रिंशत्तमः सर्गः प्रारभ्यते ॥

पार्श्वं शंखेश्वरोत्तंसं प्रणम्य परमेश्वरं । लोकप्रकाशग्रंथस्य करोम्यु-
क्तार्थबीजकं ॥ १ ॥ मंगलाचरणं ताव-दभिधेयप्रयोजने । शिष्टप्रसाद-
नौद्धत्य-त्यागो ग्रंथस्य नाम च ॥२॥ अंगुलयोजनरज्जु-पल्याब्धिनिरू-
पणानि गुणकारः । भागाहृतिसंख्येया-संख्यानंतानि चादिमे सर्गे ॥ ३ ॥
द्रव्यक्षेत्रकालभाव-लोकानां नाममात्रतः । आख्याथ धर्माधर्माभ्र-सिद्धा-
ख्यातिर्द्वितीयके ॥ ४ ॥ द्वारैः सप्तत्रिंशता यै-रुक्ताः संसारिणोंगिनः ।
सर्गे तृतीयके तेषां द्वाराणामस्ति विस्तृतिः ॥ ५ ॥ पृथ्वीकायादयः
सूक्ष्माः सर्गे तुर्येऽथ पंचमे । त एव बादराः षष्ठे तिर्यंचो द्वींद्रियादयः
॥ ६ ॥ मनुष्याः सप्तमे देवा अष्टमे नवमे पुनः । नारका दशमे जन्म-
संवेधः सर्वदेहिनां ॥ ७ ॥ महाल्पबहुताकर्म-प्रकृतीनां च कीर्तनं ।

सर्ग ३७ मो.

श्रीशंखेश्वरमंडन परम ऐश्वर्यवान् श्रीपार्श्वनाथ परमात्माने नमस्कार करीने श्रीलोक-
प्रकाश ग्रंथनुं बीजक-पूर्वे कही गयेल हकीकतनी अनुक्रमणिका कहुं छुं. (१)

मंगलाचरण, अभिधेय, प्रयोजन, शिष्टप्रसादन, औद्धत्य त्याग, ग्रंथनुं नाम, (२)
अंगुळ-योजन-रज्जु-पल्योपम ने सागरोपमनुं स्वरूप, गुणाकार, भागाकार, संख्येय,
असंख्येय ने अनंतना प्रकारो विगेरे प्रथम सर्गमां कह्युं छे. (३)

बीजा सर्गमां द्रव्यलोक, क्षेत्रलोक, काळलोक ने भावलोकनुं नाममात्र आख्यान
अने धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय ने सिद्धनुं स्वरूप बतावेलुं छे. (४)

त्रीजा सर्गमां जे ३७ द्वारोवडे संसारीजीवोनुं स्वरूप बताववानुं छे ते ३७ द्वारनो
विस्तार-तेनुं स्वरूप बतावेलुं छे (५)

चोथा सर्गमां पृथ्वीकायादि पांच सूक्ष्म स्थावरनुं स्वरूप कह्युं छे.

पांचमा सर्गमां पृथ्वीकायादि पांच बादर स्थावरनुं स्वरूप कह्युं छे.

छठ्ठा सर्गमां द्वींद्रियादि तिर्यंचोनुं, सातमा सर्गमां मनुष्योनुं, आठमा सर्गमां देवोनुं,
नवमा सर्गमां नारकोनुं अने दशमा सर्गमां सर्व जीवोना जन्मनो संवेध कह्यो छे. (६-७)
तेमज दशमा सर्गमां मोटो अल्पबहुत्व अने कर्मप्रकृतिओनुं स्वरूप कह्युं छे तथा

एकादशे पुद्गलास्ति–कायस्वरूपवर्णनं ॥ ८ ॥ इति द्रव्यलोकः।

क्षेत्रलोकेऽथ लोकस्य सामान्येन निरूपणं। दिशां निरूपणं लोके रज्जुखंडुककीर्तनं ॥ ९॥ संवर्त्तितस्य लोकस्य स्वरूपं च निदर्शनं। महत्तायामस्य रत्न–प्रभापृथ्वीनिरूपणं ॥ १० ॥ व्यंतराणां नगरादि–समृद्धिपरिकीर्त्तनं। इत्यादि द्वादशे सर्गे सविशेषं निरूपितं ॥ ११ ॥ स्वरूपं भवनेशानां तदिंद्राणां च वर्णिता। सामानिकाग्रपत्न्यादि–संपत्सर्गे त्रयोदशे ॥ १२ ॥ चतुर्दशे च सप्तानां नरकाणां निरूपणं। प्रस्तट-स्थितिलेश्यायु–र्वेदनाद्युक्तिपूर्वकं ॥ १३ ॥ सर्गे पंचदशे तिर्य–ग्लोके द्वीपाब्धिशंसनं। जंबूद्वीपस्य जगती–द्वारतत्स्वामिवर्णनं ॥ १४॥ क्षेत्रस्य भरतस्याथ वैताढ्यस्य च भूभृतः। सगुहस्य सकूटस्य गिरेर्हिमवतोऽपि च ॥ १५ ॥ पद्मह्रदस्य श्रीदेव्या गंगादिसरितामपि। दाढानगांतरद्वी-

---

अग्यारमा सर्गमां पुद्गळास्तिकायना स्वरूपनुं वर्णन छे. (८) आ रीते ११ सर्गमां द्रव्यलोक पूर्ण थाय छे.

क्षेत्रलोकमां–बारमा सर्गमां सामान्यथी क्षेत्रनुं निरूपण, दिशानुं निरूपण, लोकमां रज्जु अने खंडुनुं स्वरूप, संवर्तित लोकनुं स्वरूप अने तेनी महत्ता ने आयामउपर दृष्टांत तथा रत्नप्रभा विगेरे पृथ्वीनुं निरूपण, व्यंतरोनी नगरादि समृद्धिनुं परिकिर्त्तन–आ सर्व सविशेषपणे निरूपित करेल छे. (९–११)

तेरमा सर्गमां भुवनपतिनुं स्वरूप तथा तेना इंद्रोना नाम तथा तेना सामानिक देवो, अग्रमहिषीविगेरेनी संपदा विस्तारथी कही छे. (१२)

चौदमा सर्गमां सात नरकनुं निरूपण तेना प्रस्तर, दरेक प्रस्तरे शरीरस्थिति, लेश्या, आयु अने वेदना विगेरे कहेवापूर्वक बताव्युं छे. (१३)

पंदरमा सर्गमां तिर्यक्लोकनुं स्वरूप, असंख्यात द्वीप–समुद्रनुं वर्णन, जंबूद्वीपनी जगतिनुं ने तेना द्वारनुं तेम ज तेना स्वामीनुं वर्णन छे. आ सर्गमां विजयदेवनी ऋद्धिनुं बहु विस्तारथी वर्णन छे. (१४)

सोळमा सर्गमां भरतक्षेत्र, वैताढ्यपर्वत, तेनी गुफाओ तथा कूटो, हिमवंतपर्वत. पद्मद्रह, श्रीदेवी, गंगा विगेरे नदीओ, लवणसमुद्रमां नीकळेली बे पर्वतनी आठ दाढाओ, तेनी उपर रहेला अंतरद्वीपो, तेमां रहेला युगलिको, हैमवतक्षेत्र, तेमां रहेल वृत्तवैताढ्य, महाहिमवंतपर्वत, तेनी उपरना द्रहमांथी नीकळती नदीओ अने तेना पर रहेल द्रह ने कूटो,

प–तद्धात्रिसुप्तिवर्णनं ॥ १६ ॥ ततो हैमवतक्षेत्र–नद्दैताढ्याद्रिवर्णनं । ततो महाहिमवतः सरित्कूटह्रदस्पृशः ॥ १७ ॥ क्षेत्रस्य हरिवर्षस्य निषधाद्रेश्च वर्णनं । शीताशीतोदयोः पंच–ह्रदवत्योश्च षोडशे ॥ १८ ॥

देवकुरूत्तरकुरु–पूर्वापरविदेहकाः । सामान्यतश्चतुर्भेति महाविदेहवर्णनं ॥ १९ ॥ विजयानां वक्षस्कारां–तर्नदीनां च कीर्त्तनं । विजयेषु च वैताढ्य–षट्खंडनगरीस्थितिः ॥ २० ॥ गंधमादनसन्माल्य–वतोश्च गजदंतयोः । उत्तरासां कुरूणां च विस्तरेण निरूपणं ॥ २१ ॥ यमकाद्रयोर्ह्रदानां च कांचनद्रुमाणामपि । जंबूतरोः सकूटस्य साधिपस्य निरूपणं ॥ २२ ॥ सौमनसविद्युत्प्रभ–गजदंतनिरूपणं । स्थितिर्देवकुरूणां च विचित्रचित्रभृभृतोः ॥ २३ ॥ ह्रदानां कांचनाद्रीणां तरोः शाल्मलिनोऽपि च । इत्यादि वर्णनं व्यक्त्या सर्गे सप्तदशे कृतं ॥ २४ ॥ मेरुश्चतुर्वनः कूट–मेखलाचूलिकादियुक् । साभिषेकशिलश्चाष्टा–दशे सर्गे निरूपितः ॥ २५ ॥

गिरेर्नीलवतः कूट–ह्रददेव्यादिशालिनः । शीतानारीकांतयोश्च नाममात्रेण वर्णनं ॥ २६ ॥ क्षेत्रस्य रम्यकाख्यस्य रुक्मिणोऽपि च भूभृतः ।

हरिवर्षक्षेत्र, निषधपर्वत, शीता शीतोदा नदी अने पांच पांच द्रहोनुं वर्णन छे. (१५–१६)

सतरमा सर्गमां देवकुरु ने उत्तरकुरुक्षेत्र, पूर्व ने पश्चिम महाविदेह, आ प्रमाणे सामान्यथी चार प्रकारना महाविदेहनुं वर्णन, तेमां रहेली विजयो, वक्षस्कारपर्वतो, अंतर्नदीओ, विजयमां रहेल वैताढ्य, तेना छ खंड अने मुख्य नगरीओ, गंधमादन ने माल्यवंत, गजदंतानुं वर्णन, उत्तरकुरुक्षेत्रनुं विस्तारथी निरूपण, यमकाद्रि, द्रहो, कंचनगिरिओ, जंबूवृक्षनुं तेना कूटोसहित वर्णन, तेना अधिपतिनुं वर्णन, सौमनस ने विद्युत्प्रभ गजदंतानुं वर्णन, देवकुरुक्षेत्रनुं वर्णन, तेमां रहेला चित्र ने विचित्र पर्वतो, द्रहो, कंचनगिरिओ, शाल्मलीवृक्ष विगेरेनुं वर्णन छे. (१७–२४) अढारमा सर्गमां मेरुपर्वतनुं वर्णन, तेना चार वन, तेमां आवेला कूटो, मेरुनी त्रण मेखळा, उपर आवेली चूलिका अने पांडकवनमां आवेल तीर्थंकरोना जन्माभिषेकनी शिलाओ ने सिंहासनोनुं वर्णन छे.(२५)

ओगणीशमा सर्गमां नीलवंतपर्वत, तेनी उपर कूटो, द्रह, तेनी अधिष्ठायकदेवी, द्रहमांथी नीकळती शीता ने नारीकांता नदीनुं नाममात्र वर्णन, रम्यकक्षेत्र, रुक्मिपर्वत,

हैरण्यवतवर्षस्य गिरेः शिखरिणोऽपि च ॥ २७ ॥ क्षेत्रस्यैरवताख्यस्य षट्खंडस्य पुरीस्पृशः । वर्णनं च क्षेत्रशैला–दीनां साम्यनिरूपणं ॥ २८ ॥ सर्वाग्रमद्रिकूटानां खेटश्रेणीपुरामपि । नंदीकुंडह्रदादीनां चक्रिरत्नार्हतामपि ॥ २९ ॥ चंद्रसूर्यग्रहादीनां सज्जंबूद्वीपवर्तिनां । एकोनविंशे सर्गेऽत्र सर्वमित्यादि वर्णितं ॥ ३० ॥

विस्तृता पंचभिर्द्वारैः सूर्येंद्वोर्मंडलादिभिः । चाररीतिर्भयोगश्च दिनवृद्धिक्षयादि च ॥ ३१ ॥ ध्रुवराहोः पर्वराहो–स्तिथ्युत्पत्तेश्च शंसनं । द्वारैश्च पंचदशभि–र्नक्षत्राणां निरूपणं ॥ ३२ ॥ इत्यादि विंशतितमे सर्वं सर्गे निरूपितं । एकविंशेऽत्र सर्गेऽथ वर्णनं लवणोदधेः ॥ ३३ ॥ सशिखस्य सपाताल–कुंभस्य द्वीपशालिनः । सुस्थितादिसुराढ्यस्य चंद्रार्कादिद्युतिस्पृशः ॥ ३४ ॥ युग्मं ॥ धातकीखंडकालोद–वर्णनं पूर्ववत्ततः । द्वाविंशे वर्णितं सर्गे पृथक्क्षेत्रादिकीर्त्तनैः ॥ ३५ ॥

तथैव पुष्करार्द्धस्य मानुषोत्तरभूभृतः । ततोऽखिलनरक्षेत्रे क्षेत्रशैलादिसंग्रहः ॥ ३६ ॥ ततः शाश्वतचैत्यानां सर्वसंख्यानिरूपणं । ज्योे-

---

हैरण्यवतक्षेत्र, शिखरीपर्वत, ऐरवतक्षेत्र, तेना छ खंड अने मध्यनी नगरी विगेरेनुं वर्णन, क्षेत्र ने पर्वतादिनुं उत्तरदक्षिणमां साम्यपणुं, तेम ज सर्व पर्वतो, कूटो, विद्याधरनी श्रेणिओ, ते परना नगरो, कुल नदीओ, प्रपातकुंडो, द्रहो, चक्रवर्ती, तेनां रत्नो, अरिहंतो, तथा जंबूद्वीपवर्त्ती सूर्य, चंद्र, ग्रहादिकनी एकंदर संख्या विगेरे सर्व आपेल छे. (२६–३०)

वीशमा सर्गमां मंडलादिक पांच द्वारवडे सूर्य–चंद्रनी गतिनी रीत विस्तारथी बतावी छे ने तेनी साथे नक्षत्रना योगनुं, दिनवृद्धि ने क्षयादिकनुं, ध्रुवराहुनुं ने पर्वराहुनुं, तिथिनी उत्पत्तिनुं अने पंदर द्वारोवडे नक्षत्रोनुं निरूपण करेलुं छे. (३१–३२)

एकवीशमा सर्गमां लवणसमुद्रनुं, तेनी शिखानुं–पाताळ कळशाओनुं, ए समुद्रमां रहेला द्वीपोनुं, सुस्थितादि देवनुं अने चंद्र–सूर्यादि ज्योतिषीओनुं वर्णन करेलुं छे. (३३–३४)

बावीशमा सर्गमां जुदा जुदा क्षेत्रादिक कहेवावडे धातकीखंडनुं अने कालोदधिनुं पूर्ववत् वर्णन बताववामां आव्युं छे. (३५)

तेवीशमा सर्गमां पुष्करार्धद्वीपनुं ने मानुषोत्तर पर्वतनुं वर्णन आपेलुं छे अने नरक्षेत्र (अढीद्वीप) मां आवेला समस्त क्षेत्र अने पर्वतादिकनो संग्रह करेलो छे, तेम

विशेऽखिलं सर्गे विविच्येत्यादि दर्शितं ॥ ३७ ॥ नृक्षेत्रात्परतश्चंद्र-सू-र्यादिश्रेणिकीर्तनं । पुष्करान्धिक्षीरवर-द्वीपाब्ध्यादिनिरूपणं ॥ ३८ ॥ क्रमान्नंदीश्वरद्वीप-चैत्यव्याख्यानविस्तृतिः । इत्याद्युक्तं चतुर्विंशे स्वयं-भूरमणावधि ॥ ३९ ॥

पंचविंशे स्थिरचंद्र-ज्योतिश्चक्रव्यवस्थितिः । ऊर्ध्वलोकेऽथ सौधर्मे-शानयोर्देवलोकयोः ॥ ४० ॥ विमानावलयः पुष्पा-वकीर्णाश्च यथास्थिति । विमानमानप्रासाद-परिपाट्यः सभा अपि ॥ ४१ ॥ उत्पद्यंते यथा देवा अभिषिच्यंत एव ते । पूजयंति यथा सिद्धान् यथा भोगांश्च भुंजते ॥ ४२ ॥ यादृक्स्वरूपा भाषां च यां भाषंते सुधाभुजः । भवंति देव्यो यादृश्यः सेवंते च रतं यथा ॥ ४३ ॥ आहारो यादृगेषां तु-च्छ्वासश्च यावदंतरः । यथा मनुष्यलोकेऽमी आयांति स्नेहयंत्रिताः ॥ ४४ ॥ प्रेम्णा वशीकृता यांति यावतीषु मही-ष्वधः । लक्ष्ये महर्द्धिकं यांति यथावधिदृशो यथा ॥ ४५ ॥ लोकपालाग्र-

---

ज सर्व शाश्वत चैत्योनी संख्यानुं विस्तार साथे निरूपण कर्युं छे. (३६–३७)

चोवीशमा सर्गमां मनुष्यक्षेत्रनी बहार आवेला स्थिर ज्योतिषी पैकी सूर्य चंद्रनी श्रेणिनुं वर्णन कर्युं छे. तथा पुष्करवर समुद्र, क्षीरवरद्वीप, क्षीरवरसमुद्र विगेरेनुं वर्णन, अनुक्रमे आवता नंदीश्वरद्वीपनुं अने ते द्वीपमां आवेला शाश्वता चैत्योनुं विस्तारथी वर्णन अने अंते स्वयंभूरमण समुद्र सुधीनुं वर्णन आपेलुं छे. (३८–३९) पचवीशमा सर्गमां चर अने स्थिर एवा चंद्रादि ज्योतिषीनी व्यवस्थितिनुं सविस्तर वर्णन छे.

छवीशमा सर्गमां ऊर्ध्वलोकनुं वर्णन शरु थाय छे. तेमां सौधर्म ने ईशान देवलोकनी हकीकत, तेना विमानोनी श्रेणिओ, पुष्पावकीर्ण विमानो, तेनुं मान, तेमां प्रासादनी अने सभाओनी परिपाटी, नवो देव केवी रीते उपजे ?, तेना अभिषेकनी हकीकत, तेणे कराती सिद्धोनी पूजा, तेनाथी भोगवाता भोग, देवोना स्वरूपनुं वर्णन, देवो केवी भाषा बोले छे ? देवीओना स्वरूपनुं वर्णन, तेनी साथेना विलासनुं (कामक्रीडानुं) वर्णन, तेमनो जेवा प्रकारनो आहार ने तेओ आहार अने श्वासोच्छ्वास केटले अंतरे ले छे ? मनुष्यलोकमां स्नेहना आकर्षणथी तेनुं आववुं, प्रेमना वशीकरणथी केटली नरकपृथ्वी सुधी तेनुं जवुं, महर्द्धिक देवस्वरूप, तथा तेमना अवधिज्ञाननुं प्रमाण तथा लोकपाळ,

महिषी–सामानिकादिशालिनोः । शक्तिसंपद्विवरणं सौधर्मेशाननाथयोः ॥ ४६ ॥ षड्विंशतितमे सर्गे इत्याद्यखिलमीरितं ।

सप्तविंशे ततः सर्गे तृतीयतुर्यनाकयोः ॥ ४७ ॥ वर्णनं ब्रह्मलोकस्य तमस्कायस्य मूलतः । कृष्णराजी तद्विमान–लौकांतिकसुधाभुजां ॥ ४८ ॥ स्वर्गस्य लांतकस्याथ सकिल्बिषिकनाकिनः । जमालेश्चरितं शुक्र–सहस्रारादिवर्णनं ॥ ४९ ॥ यावदच्युतनाकस्य कीर्त्तनं रामसीतयोः । चरितं तदनु ग्रैवे–यकानुत्तरवर्णनं ॥ ५० ॥ ततः सिद्धशिलाख्यानं लोकांतस्य च संशनं । इत्यादिवर्णनैरेवं क्षेत्रलोकः समापितः ॥ ५१ ॥ ॥ इति क्षेत्रलोकः ॥

दिष्टलोकेऽथ कालस्य युक्तिव्यक्तिर्मतद्वये । ऋतूनां वर्णनं षण्णां निक्षेपाः कालगोचराः ॥ ५२ ॥ समयावलिकाक्षुल्ल–भवादिपरिकीर्त्तनं । घटीमुहूर्त्तदिवस–पक्षमासादिशंसनं ॥ ५३ ॥ सूर्यर्तुचंद्रनक्षत्रा–भिवर्द्धिताह्वयाः क्रमात् । मासा वर्षाण्यथैतेषा–मुपपत्त्यादिवर्णनं

अग्रमहिषी (इंद्राणी), सामानिक विगेरे देवोथी शोभता एवा सौधर्मेंद्र ने ईशानेंद्रनी शक्ति अने संपत्तिनुं वर्णन विगेरे आपेलुं छे. (४०–४६)

सत्तावीशमा सर्गमां त्रीजा ने चोथा देवलोकनुं वर्णन, पांचमा ब्रह्मदेवलोकनुं वर्णन, तेने अंगे मूळथी नीकळेला तमस्कायनुं, कृष्णराजीनुं अने तेना (कृष्णराजीना) अंतरे रहेला लोकांतिकना विमानोनुं वर्णन, लांतक देवलोकनुं वर्णन, त्रण प्रकारना किल्बिषिक देवोनुं वर्णन, जमालिनुं चरित्र, शुक्र सहस्रारादि देवलोकोनुं यावत् अच्युत देवलोक सुधीनुं वर्णन, राम–सीतानुं चरित्र, ग्रैवेयक ने अनुत्तर विमानोनुं वर्णन, त्यारपछी सिद्धशिलानुं अने लोकांते रहेला सिद्धोनुं वर्णन आपेलुं छे. आ प्रमाणे १६ सर्गमां (१२ थी २७ सुधीमां) क्षेत्रलोक पूर्ण करेलो छे. (४७–५१)

त्रीजा काळलोकमां २८ मा सर्गमां काळने द्रव्य तरीके मानवा संबंधी बे मतने आश्रीने युक्तिनी स्पष्टता, छ ऋतुनुं वर्णन, काळगोचर निक्षेपा, समय, आवळी, क्षुल्लकभवनुं वर्णन, घडी, मुहूर्त्त, दिवस, पक्ष, मास विगेरेनुं वर्णन, सूर्य, ऋतु, चंद्र, नक्षत्र ने अभिवर्द्धित–एम पांच प्रकारना मास, वर्ष अने तेनी उपपत्तिनुं वर्णन, युगनी आदि क्यारे थाय ? दरेक युगमां आवता मास, ऋतु, अयनो ने दिनसोनुं प्रमाण, अधिकमास,

॥ ५४ ॥ युगस्यादिर्युगे मास–र्त्वयनानि दिनानि च । अधिमासा-वमरात्रा–वृत्तयो विषुवंति च ॥ ५५ ॥ करणान्यृत्वयनादे–र्नक्षत्रानयनं विधोः । रवेश्च करणान्येषां बवादिकरणान्यपि ॥ ५६ ॥ पौरुष्यादिपरीमाणं तस्मात्तिथ्यादिनिश्चयः । सर्गेऽष्टाविंशतितमे इत्यादि युगवर्णनं ॥ ५७ ॥

युगात्प्रभृत्यब्दशत–सहस्रादिक्रमेण च । शीर्षप्रहेलिकांतांक–स्वरूपप्रतिपादनं ॥५८॥ अरत्रयस्याद्यस्याव–सर्पिण्यां वर्णनं स्थितेः । कल्पद्रुयुग्मिलोकादे–रेकोनत्रिंश ईरितं ॥ ५९ ॥

अर्हतां पद्धतिः सर्वा निर्वाणावधि जन्मतः । उक्ता त्रिंशत्तमे सर्गे एकत्रिंशे ततः पुनः ॥ ६० ॥ चक्रिदिग्विजयः संप–न्निधिरत्नादिरस्य च । सामान्यतः शार्ङ्गिसीरि–प्रतिविष्ण्वादिकीर्त्तनं ॥ ६१ ॥

सर्गे द्वात्रिंशत्तमेऽथ संक्षेपात्प्राग्भवादितः । जिनानां वृषभादीनां चरित्रस्य निरूपणं ॥ ६२ ॥

एतस्यामवसर्पिण्यां वर्णनं जातजन्मनां । त्रयस्त्रिंशे चक्रिविष्णु–बलदेवादिसन्नृणां ॥ ६३ ॥

अवमरात्रिओ ने विषुवतनी आवृत्ति, ऋतु, अयन अने नक्षत्रादि साथे चंद्रमानो योग, तेना करणो, सूर्यना करणो, बीजा बवादि करणो, पौरुषी विगेरेनुं परिमाण, तेनावडे तिथि आदिनो निश्चय विगेरे बतावेल छे. (५२–५६)

२९ मा सर्गमां युगथी मांडीने सो, हजार विगेरेना क्रमथी शीर्षप्रहेलिका सुधीना अंकोनुं निरूपण, अवसर्पिणीना पहेला त्रण आरानुं वर्णन तेम ज कल्पवृक्ष अने युगालिकादिनुं वर्णन आपेलुं छे. (५८–५९) त्रीशमा सर्गमां जिनेश्वरोनी जन्मथी मांडीने निर्वाणपर्यंतनी सर्व परिस्थितिनुं विस्तारथी वर्णन कर्युं छे. (६०) ३१ मा सर्गमां चक्रवर्तीना दिग्विजयनी हकीकत, तेनी संपत्तिनुं वर्णन, नव निधि ने चौद रत्नोनुं वर्णन तथा वासुदेव, बळदेव ने प्रतिवासुदेवनुं सामान्य वर्णन आपेलुं छे. (६१) ३२ मा सर्गमां ऋषभादि जिनेश्वरोनुं पूर्वभवथी मांडीने संक्षेपथी चरित्र वर्णवेलुं छे. (६२)

३३ मा सर्गमां आ अवसर्पिणीमां थयेला चक्रवर्ती, वासुदेव, बळदेव विगेरे सत्पु-

अरस्य पंचमस्याथ स्वरूपेण निरूपणं । अरेऽस्मिन् पंचमे ये चो-
दयास्तत्सूरयश्च ये ॥ ६४ ॥ तेषां नामानि सर्वाग्र-माचार्यादिमहात्मनां ।
ख्याता ततोऽरके षष्ठे धर्मोच्छेदादिका स्थितिः ॥ ६५ ॥ गिरेः शत्रुंजय-
स्याथ वृद्धिहान्यादिशंसनं । बिलवासिजनावस्थो-त्सर्पिण्यां च तथो-
त्क्रमात् ॥ ६६ ॥ षण्णामराणां पर्याय-वृद्ध्याख्यानं यथाक्रमं । एतदुत्स-
र्पिणीभावि-जिनचक्र्यादिकीर्त्तनं ॥ ६७ ॥ इत्यादिकं चतुस्त्रिंशे सर्गे
सर्वं निरूपितं ।

पंचत्रिंशेऽथ पुद्गल-परावर्त्तश्चतुर्विधः ॥ ६८ ॥ औदारिकादिका कार्म-
णांता या वर्गणाष्टधा । अनुभागस्पर्द्धकानि कर्मणां परमाणुषु ॥ ६९ ॥
एषां स्वरूपं मानं चा-तीतानागतकालयोः । संपूर्णो दिष्टलोकोऽय-मि-
त्यादिपरिकीर्त्तने ॥ ७० ॥ भावलोकेऽथ भावानां षण्णां सम्यग्निरूपणं ।
सर्गे षट्त्रिंश इत्येवं भावलोकः समर्थितः ॥ ७१ ॥

एभिर्विचारैर्मणिरत्नसारैः, पूर्णः सुवर्णोद्यदलंकृतिश्च । समौक्तिक-

---

रुषोनुं चरित्र वर्णवेलुं छे. (६३–६४)

३४ मा सर्गमां आ पांचमा आराना स्वरूपनुं निरूपण अने तेमां थनारा उदयो तथा आचार्योनुं वर्णन, तेमनां नामो अने ए महात्माओनी कुल संख्या बतावी छे. त्यारपछी छठा आराना प्रारंभमां थनार तीर्थोच्छेदादि स्थिति, शत्रुंजयगिरिनी वृद्धि-हानि अने छठा आरामां बिलवासी थनारा मनुष्यादिनुं वर्णन आप्युं छे. तेम ज उत्सर्पिणीमां उत्क्रष्टपणे थनारी वधी स्थिति, पर्यायवृद्धिवडे वधती छए आरानी स्थिति, आवती उत्सर्पिणीमां थनारा जिन तथा चक्री विगेरेनुं वर्णन आपवामां आव्युं छे. (६५–६७)

३५ मा सर्गमां चार प्रकारना पुद्गळपरावर्तननुं स्वरूप, औदारिकथी मांडीने कार्मण सुधीनी आठे वर्गणानुं स्वरूप, कर्मना परमाणुओमां रहेला अनुभागना स्पर्द्धकोनुं स्वरूप, अतीत, अनागतकाळनुं मान इत्यादि परिकीर्त्तनवडे दिष्ट(काळ)लोक संपूर्ण करेलो छे. (६८–७०) ३६ मा सर्गमां भावलोकनुं स्वरूप आपेलुं छे, तेमां छ भावोनुं सम्यक् प्रकारे निरूपण कर्युं छे अने भावलोक समाप्त कर्यो छे. (७१)

उपर जणाव्या प्रमाणे सारभूत विचाररूप मणिरत्नोवडे पूर्ण, सुवर्णना उद्यत अलंकारवाळो (सारा वर्ण ने अलंकारवाळो), मौक्तिक (मुक्ति) नी शोभावाळो अने वि-

श्रीविबुधादृतोऽयं, ग्रंथोऽस्तु सिद्धये जिनराजकोशः ॥ ७२ ॥ अनाभोगो भूयान्न सदनुभवः शास्त्रविभवो, न सामग्री तादृग् न पटुघना वाक्यरचना । श्रियं तत्राप्येवं यदयमभजद् ग्रंथनृपतिः, कृती हेतुस्तत्रोल्लसति सुमनःकोविदकृपा ॥ ७३ ॥ सन्तः शास्त्रसुधोर्मिधौतहृदया ये पूर्णचंद्राग्रजा, वंद्यास्तेऽद्य सदा कवित्वकुमुदोल्लासेऽनवद्योद्यमाः । येऽपि द्वेषसितित्विषोऽतिकठिनास्तान्वस्तुतः संस्तुतान्, मन्ये प्रस्तुतकाव्यकांचनकषान् सम्यक्परीक्षाक्षमान् ॥ ७४ ॥

विश्वाश्चर्यदकीर्त्तिकीर्त्तिविजयश्रीवाचकेंद्रान्तिष-
द्राजश्रीतनयोऽतनिष्ट विनयः श्रीतेजपालात्मजः ।
काव्यं यत्किल तत्र निश्चितजगत्तत्त्वे स्थितः पूर्णतां
सप्तत्रिंश उदीतचिद्रविरुचिः सर्गो निसर्गोज्ज्वलः ॥ ७५ ॥

॥ इति श्रीलोकप्रकाशे सप्तत्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥ तत्समाप्तौ च समाप्तोऽयं श्रीलोकप्रकाशः ॥ श्रीरस्तु ॥

बुधजनोए स्वीकारेलो जिनराजना कोशरूपी आ ग्रंथ भव्यजनोनी सिद्धिने माटे हो. (७२)

आ ग्रंथमां सदनुभववाळो शास्त्र विभव नथी, घणे ठेकाणे अनाभोग (स्खलना) थयेल हशे, तेवा प्रकारनी सामग्री नथी, तेम ज एवी सुंदर वाक्यरचना पण नथी; तो पण आ ग्रंथरूपी नृपति जे शोभाने पामे छे तेमां विद्वज्जनोनी कृपा ज उत्तम हेतुभूत छे. (७३) शास्त्ररूपी अमृतना तरंगोवडे उज्वल थयेला अने पूर्णचंद्रना वडील बंधु जेवा तेम ज कवितारूपी कमळने विकस्वर करवामां निर्मळ उद्यमवाळा एवा जे सत्पुरुषो छे ते तो सारे वंद्य छे ज, पण जेओ द्वेषरूपी सूर्य जेवा अति कठोर छे तेओने पण प्रस्तुत कवितारूपी सुवर्णने कसवामां कसोटी जेवा—सम्यक् प्रकारे परीक्षा करवामां समर्थ होवाथी वस्तुगतिए हुं स्तवेला ज मानुं छुं. (७४)

सकळ जगतने आश्चर्य पमाडनारी छे कीर्ति जेनी एवा कीर्त्तिविजय उपाध्यायना शिष्य अने माता राजश्री तथा पिता तेजपाळना पुत्र विनयविजय उपाध्याये आ काव्यग्रंथनी रचना करी छे ते जगतना तत्त्वने निश्चय करनारा आ ग्रंथमां उदय पामेला ज्ञानरूपी सूर्यनी कांतिसमान अने स्वभावथी ज उज्वळ एवो आ साडत्रीशमो सर्ग पूर्ण थयो छे. (७५)

॥ इति श्रीलोकप्रकाशे सप्तत्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः । तत्समाप्तौ च समाप्तोऽयं श्रीलोकप्रकाशः ॥ श्रीरस्तु ॥

॥ अथ ग्रंथकर्त्तुः प्रशस्तिः ॥

श्रेयः श्रीवर्द्धमानो दिशतु शतमखश्रेणिभिः स्तूयमानः, स क्ष्माभृत्सेव्यपादः कृतसदुपकृतिर्गोपतिर्नूतनो वः। कालेऽप्यस्मिन् प्रदोषे कटुकुमतिकुहूकल्पितध्वांतपोषे, प्रादुष्कुर्वंति गावः प्रसृमरविभवा मुक्तिमार्गं यदीयाः ॥ १ ॥ तत्पट्टेऽथेंद्रभूतेरनुज उदभवच्छ्रीसुधर्मा गणींद्रो, जंबूस्तत्पट्टदीपः प्रभव इति भवांभोधिनौस्तस्य पट्टे । सूरिः शय्यंभवोऽभूत्स मनकजनकस्तत्पदांभोजभानु–स्तत्पट्टैरावतेंद्रो जनविदितयशाः श्रीयशोभद्रसूरिः ॥ २ ॥ तत्पट्टभारधुर्यौ, गणधरवर्यौ श्रियं दधाते द्वौ । संभूतविजयसूरिः, सूरिः श्रीभद्रबाहुश्च ॥ ३ ॥ श्रीस्थूलभद्र उदियाय तयोश्च पट्टे, जातौ महागिरिसुहस्तिगुरू ततश्च । पट्टे तयोः श्रियमुभौ दधतुर्ग-

अथ ग्रंथकर्तानी प्रशस्तिः.

शतमख (इंद्रो–घुवडो) नी श्रेणिओवडे स्तुति कराता, क्षमाभृत (राजाओ–पर्वतो) वडे जेना पाद (पग–किरण) सेवाय छे, तथा जे सर्व प्राणीओ उपर उपकार करे छे एवा नवीन सूर्य जेवा ते श्री वर्धमानस्वामी तमोने कल्याण आपो, के जेनी विस्तारना वैभववाळी गो (वाणी–किरण) कटु कुमतिरूपी अमावास्या संबंधी अंधकारनुं (अज्ञाननुं) पोषण करनारा आवा प्रदोष (दोषवाळा–सांजना) समये पण मुक्तिमार्गने प्रकाशित करे छे. (१)

ते श्रीवर्धमानस्वामीनी पाटे श्रीइंद्रभूति (गौतम) गणधरना नाना भाइ (गुरुभाइ) श्रीसुधर्मास्वामी गणधर थया, तेनी पाटना दीपकरूप श्रीजंबूस्वामी थया. तेनी पाटे संसारसमुद्रमां नौकासमान श्रीप्रभवस्वामी थया. तेना चरणकमळने विकस्वर करवामां सूर्यसमान श्रीशय्यंभवसूरि थया. ते मनकना पिता हता. तेनी पाटे ऐरावतेंद्र जेवा अने लोकमां प्रसिद्ध यशवाळा श्रीयशोभद्रसूरि थया. (२) तेनी पाटरूपी भारने वहन करवामां वृषभसमान अने गणधरने विषे श्रेष्ठ एवा श्रीसंभूतविजयसूरि अने श्रीभद्रबाहुसूरि लक्ष्मी (शोभा) ने धारण करनारा थया. (३) ते बन्नेनी पाटे श्रीस्थूलभद्रसूरि उदय पाम्या. त्यारपछी श्रीमहागिरि अने श्रीसुहस्ति

णींद्रौ, श्रीसुस्थितो जगति सुप्रतिबद्धकश्च ॥ ४ ॥ तत्पट्टभूषणमणिर्गु-रुरिंद्रदिन्नः, श्रीदिन्नसूरिरथ तस्य पदाधिकारी । पट्टे रराज गुरुसिंहगिरि-स्तदीये, स्वामी च वज्रगुरुरस्य पदे बभूव ॥ ५ ॥

श्रीवज्रसेनसुगुरुर्विभरांबभूव, पट्टं तदीयमथ चंद्रगुरुः पदेऽस्य । सामं-तभद्रगुरुरुन्नतिमस्य पट्टे चक्रेऽस्य पट्टमभजद्गुरुदेवसूरिः ॥ ६ ॥ प्रद्यो-तनस्तदनु तस्य पदे च मान—देवस्तदीयपदभृद्गुरुमानतुंगः । वीरस्त-तोऽथ जयदेव इतश्च देवा—नंदस्ततश्च भुवि विक्रमसूरिरासीत् ॥ ७ ॥ तस्माद्बभूव नरसिंह इति प्रतीतः, सूरिः समुद्र इति पट्टपतिस्तदीयः । सूरिः पदेऽस्य पुनरप्यजनिष्ट मान—देवस्ततश्च विबुधप्रभसूरिरासीत् ॥ ८ ॥ जयानंदः पट्टे श्रियमपुषदस्यास्य च रवि—प्रभस्तत्पट्टेशः समजनि यशोदेवमुनिराट् । ततः प्रद्युम्नाख्यो गुरुरुदयमित्साथ पुनर—प्यभून्माना-द्देवो गुरुविमलचंद्रश्च तदनु ॥ ९ ॥ तस्मादुद्योतनाख्यो गुरुरभवदितः

नामना गुरु (सूरि) थया. ते बन्नेनी पाटे श्रीसुस्थित अने श्रीसुप्रतिबद्धक नामना बन्ने गणींद्रो जगतमां लक्ष्मी (शोभा) ने धारण करनार थया. (४) तेमना पट्टरूपी भूषणना मणिसमान श्रीइंद्रदिन्न नामना गुरु थया. तेना पट्टना अधिकारी श्रीदिन्न नामना सूरि थया. तेनी पाटे श्रीसिंहगिरि नामना गुरु शोभता हता. तेनी पाटे श्री वज्रगुरुस्वामी थया. (५) तेना पट्टने श्रीवज्रसेन गुरु धारण करता हता. तेने स्थाने श्रीचंद्रगुरु थया. तेना पट्ट उपर श्रीसामंतभद्र गुरु उन्नति करनार थया. तेना पट्टने श्रीदेवसूरि नामना गुरु भजता हता. (६) त्यारपछी श्रीप्रद्योतनसूरि थया. तेने स्थाने श्रीमानदेवसूरि थया. तेना पट्टने धारण करनार श्रीमानतुंग नामना गुरु थया. त्यारपछी श्रीवीर नामना सूरि थया. त्यारपछी श्रीजयदेवसूरि थया. त्यारपछी श्रीदेवानंदसूरि अने त्यारपछी पृथ्वीपर श्रीविक्रम नामना सूरि थया. (७) त्यारपछी श्रीनरसिंह नामे प्रसिद्ध सूरि थया. तेना पट्टना स्वामी श्रीसमुद्र नामना सूरि थया. तेने स्थाने श्रीमानदेव सूरि अने त्यारपछी श्रीविबुधप्रभ सूरि थया. (८) तेना पट्ट उपर श्रीजयानंद सूरि लक्ष्मीनुं पोषण करता हता. तेनी पाटे श्रीरविप्रभ सूरि थया. तेनी पाटना स्वामी श्रीयशोदेव मुनिराज थया. त्यारपछी श्रीप्रद्युम्न नामना गुरु उदय पाम्या. त्यारपछी श्रीमानदेव थया. त्यारपछी श्रीविमलचंद्र गुरु थया. (९) त्यारपछी श्रीउद्योतन नामना गुरु थया. त्यारपछी श्रीसर्वदेव नामना

सर्वदेवो मुनींद्र–स्तस्माच्छ्रीदेवसूरिस्तदनु पुनरभूत्सर्वदेवस्ततश्च । जज्ञाते सूरिराजौ प्रगुणगुणयशोभद्रसन्नेमिचंद्रौ, विख्यातौ भूतलेऽस्मिन्नविरतमुदितौ नूतनौ पुष्पदंतौ ॥ १० ॥ मुनिचंद्रमुनिस्ततोऽद्भुतोऽथा–ऽजितदेवश्च तदंतिषद्वरेण्यः । अपरः पुनरस्य शिष्यमुख्यो, भुवि वादी विदितश्च देवसूरिः ॥ ११ ॥ अजितदेवगुरोरभवत्पदे, विजयसिंह इति प्रथितः क्षितौ । तदनु तस्य पदं दधतावुभा–वभवतां गणभारधुरंधरौ ॥ १२ ॥ सोमप्रभस्तत्र गुरुः शतार्थी, सतां मणिः श्रीमणिरत्नसूरिः । पट्टे मणिः श्रीमणिरत्नसूरे–र्जज्ञे जगच्चंद्रगुरुर्गरीयान् ॥ १३ ॥ तेषामुभावंतिषदावभूतां, देवेंद्रसूरिर्विजयाच्च चंद्रः । देवेंद्रसूरेरभवच्च विद्या–नंदस्तथा श्रीगुरुधर्मघोषः ॥ १४ ॥ श्रीधर्मघोषादजनिष्ट सोम–प्रभोऽस्य शिष्याश्च युगप्रमेयाः । चतुर्दिगुत्पन्नजनावनाय, योधा इव प्राप्तविशुद्धबोधाः ॥१५॥ श्रीविमलप्रभसूरिः, परमानंदश्च पद्मतिलकश्च । सूरिवरोऽप्यथ सोम–

मुनींद्र थया. त्यारपछी श्रीदेवसूरि अने त्यारपछी फरीथी श्रीसर्वदेव नामना बीजा सूरि थया. त्यारपछी आ भूतळने विषे प्रसिद्ध जाणे के निरंतर उदय पामेला नवीन सूर्य–चंद्र होय एम घणा गुणवाळा श्रीयशोभद्र अने श्रीनेमिचंद्र नामना सूरिराज थया. (१०) त्यारपछी अद्भुत एवा श्रीमुनिचंद्र नामना मुनि थया. त्यारपछी तेना शिष्योने विषे श्रेष्ठ एवा श्रीअजितदेव अने बीजा तेना मुख्य शिष्य श्रीदेवसूरि नामना वादी पृथ्वीमां प्रसिद्ध थया. (११) तेमांना श्रीअजितदेव गुरुने स्थाने पृथ्वीपर प्रसिद्ध एवा श्रीविजयसिंह सूरि थया. त्यारपछी तेना पट्टने धारण करनारा, गच्छना भारने वहन करवामां धुरंधर एवा बे सूरि थया. (१२) तेमां पहेला श्रीसोमप्रभ गुरु शतार्थी (एक गाथाना सो अर्थ करनारा) हता अने बीजा श्रीमणिरत्न सूरि सत्पुरुषोना मणिसमान हता. त्यारपछी श्रीमणिरत्नसूरिना पट्ट उपर मणि समान श्रीजगच्चंद्र नामना मोटा सूरि थया. (१३) तेमना श्रीदेवेंद्रसूरि अने श्रीविजयचंद्रसूरि ए बे मुख्य शिष्यो थया. त्यारपछी श्रीदेवेंद्रसूरिना शिष्य श्रीविद्यानंदसूरि अने श्रीधर्मघोष गुरु थया. (१४) श्रीधर्मघोषनी पछी तेना शिष्य श्रीसोमप्रभसूरि थया. तेने चार दिशामां उत्पन्न थयेला मनुष्योनुं रक्षण करवा माटे योद्धाओनी जेवा चार शिष्यो विशुद्ध बोधने पामेला थया. (१५) तेमनां नाम आ प्रमाणे–श्रीविमलप्रभसूरि १, परमानंदसूरी २, पद्मतिलक सूरीश्वर ३,

प्रभपट्टेशश्च सोमतिलकगुरुः ॥ १६ ॥ शिष्यास्त्रयस्तस्य च चंद्रशेखरः, सूरिर्जयानंद इतीह सूरिराट् । स्वपट्टसिंहासनभूमिवासवः, शिष्यस्तृतीयो गुरुदेवसुंदरः ॥ १७ ॥ श्रीदेवसुंदरगुरोरथ पंच शिष्याः, श्रीज्ञानसागरगुरुः कुलमंडनश्च । चंन्द्रद्गुणाश्च गुणरत्नगुरुर्महात्मा, श्रीसोमसुंदरगुरुर्गुरुसाधुरत्नः ॥ १८ ॥ श्रीदेवसुंदरमुनीश्वरपट्टनेतुः, श्रीसोमसुंदरगुरोरपि पंच शिष्याः । तत्र स्वपट्टवियदंगणभानुमाली, मुख्योऽतिपद्गणधरो मुनिसुंदराख्यः ॥ १९ ॥ अन्ये श्रीजयचंद्रः, सूरिः श्रीभुवनसुंदराह्वश्च । श्रीजिनसुंदरसूरि–र्जिनकीर्त्तिश्चेति सूरींद्राः ॥ २० ॥ मुनिसुंदरसूरिपट्टभानु–र्गुरुरासीदथ रत्नशेखराख्यः । दधदस्य पदं बभूव लक्ष्मी–पदयुक्सागरसूरिरीश्वरार्च्यः ॥ २१ ॥ सुमतिसाधुगुरुस्तदनु प्रभा–मुदवहद्दधदस्य पदं प्रभुः । पदमदीदिपदस्य च हेमयुग्–विमलसूरिरुदात्तगुणोदयः ॥ २२ ॥ पट्टे तस्य बभूवुरुग्रतपसो वैरंगिकाग्रेसरा, आनंदाद्विमलाह्वया

अने श्रीसोमतिलक नामना गुरु ४, ए सर्वे सोमप्रभसूरिना पट्टेश हता. (१६) ते सोमतिलक सूरिना त्रण शिष्यो हता–श्रीचंद्रशेखरसूरि, श्री जयानंद नामना सूरिराज अने पोताना पट्टरूपी सिंहासन उपर भूमींद्र (राजा) समान त्रीजा शिष्य श्री देवसुंदर गुरु थया. (१७) त्यारपछी श्रीदेवसुंदर गुरुना पांच शिष्यो थया–श्री ज्ञानसागर गुरु १, देदीप्यमान गुणवाळा श्रीकुलमंडनसूरि २, महात्मा श्री गुणरत्न गुरु ३, श्री सोमसुंदर गुरु ४ अने श्री साधुरत्न गुरु ५, (१८). त्यारपछी श्री देवसुंदरमुनीश्वरनी पाटना नेता जे श्री सोमसुंदर गुरु हता तेने पण पांच शिष्यो हता. तेमां पोताना पट्टरूपी गगनांगणमां सूर्यसमान मुख्य शिष्य श्री मुनिसुंदर नामना गणधर हता. (१९) बीजा श्री जयचंद्रसूरि, त्रीजा श्री भुवनसुंदर नामना, चोथा श्री जिनसुंदर सूरि अने पांचमा श्री जिनकीर्त्तिसूरींद्र थया. (२०) त्यारपछी श्री मुनिसुंदरसूरिना पट्ट उपर सूर्यसमान श्रीरत्नशेखर नामना गुरु थया. तेमना पट्टने धारण करनार अने राजाओने पण पूजवालायक लक्ष्मीशब्दवडे युक्त सागर एटले श्री लक्ष्मीसागर सूरि थया. (२१) त्यारपछी तेना पदने धारण करनार अने साधुओना गुरु श्री सुमति नामना प्रभु (सूरि) प्रभाने वहन करता हता, तेना पदने मोटा गुणना उदयवाळा हेमशब्द सहित विमल एटले श्री हेमविमलसूरि दीपाववा लाग्या. (२२) तेनी पाटे उग्र तपवाळा, वैराग्यवंतमां अग्रेसर अने भव्योनो उपकार

गणभृतो भव्योपकारोद्धुराः । ये नेत्रेभशरामृतद्युतिमिते (१५८२) वर्षे क्रियोद्धारत–श्चक्रुः स्वां जिनशासनस्य शिखरे कीर्त्तिं पताकामिव ॥ २३ ॥ प्रमादाभ्रच्छन्नं चरणतरणिं मंदकिरणं पुनश्चक्रे दीप्रं रुचिररुचिरब्दात्यय इव । सृजन् पद्मोल्लासं सुविशदपथश्चंद्रमधुरो, दिदीपे निःपंकः स इह गुरुरानंदविमलः ॥ २४ ॥ विजयदानगुरुस्तदनु द्युतिं, तपगणोऽधिकभाग्यनिधिर्दधौ । श्रुतमहोदधिरेधितसद्विधि-र्विधुयशा जिनधर्म-धुरंधरः ॥ २५ ॥ भूत्पट्टे तस्योल्लसितविजयो हीरविजयो, गुरुर्गीर्वाणौघप्रथितमहिमास्मिन्नपि युगे । प्रबुद्धो म्लेच्छेशोऽप्यकबरनृपो यस्य वचसा, दयादानोदारो व्यतनुत महीमार्हतमयीं ॥ २६ ॥ तदनु विजयसेनसूरिराज–स्तपगणराज्यधुरं दधार धीरः । अकबरनृपतेः पुरो जयश्री–र्यमवरीदुरुवादिवृंददत्ता ॥ २७ ॥ जयति विजयदेवः सूरिरेतस्य पट्टे,

---

करवामां तत्पर एवा श्रीआनंदविमल नामना गणधर थया. तेमणे संवत १५८२ वर्षे क्रियानो उद्धार करीने जिनशासनना शिखरउपर पताकानी जेम कीर्त्तिने फेलावी हती. (२३) पद्म एटले कमळनो अने बीजा पक्षमां पद्मा एटले ज्ञानादिक लक्ष्मीनो उल्लास करता, निर्मळ मार्गवाळा अने पापरूपी पंकरहित एवा ते आनंदविमल नामना गुरु चंद्रनी जेम मनोहर दीपता हता. शरदृऋतुनी जेम मनोहर कांतिवाळा तेमणे प्रमादरूपी वादळाथी ढंकायेला अने तेथी करीने ज मंद किरणोवाळा (मंद तेजवाळा) चारित्ररूपी सूर्यने देदीप्यमान कर्यो हतो. (२४) त्यारपछी तेमनी पाटे तपगच्छमां अधिक भाग्यना निधिसमान, श्रुतना सागरसमान, सारा विधानने वृद्धि पमाडनार, चंद्र जेवा उज्वळ यशवाळा अने जिनधर्ममां धुरंधर एवा श्रीविजयदान नामना गुरु कांतिने धारण करता हता. (२५) तेमनी पाटे विजयवडे उल्लास पामता श्रीहीरविजय नामना गुरु थया. तेमनो महिमा आ कलियुगमां पण देवोना समूहे विस्तार्यो हतो. तेमना वचनथी म्लेच्छना स्वामी अकबर बादशाह पण बोध पाम्या हता तथा दया अने दानमां उदार एवा तेमणे आखी पृथ्वी अरिहंतना धर्ममय करी हती. (२६) त्यारपछी तेमनी पाटे धीर एवा श्रीविजयसेन सूरिराजे तपगच्छरूपी राज्यनी धूसरीने धारण करी. तेमने अकबर बादशाहनी समक्ष मोटा वादीओना समूहे आपेली जयलक्ष्मी वरी हती. (२७) तेमनी पाटे मुकुटना मणिनी जेम जेनी कीर्तिरूपी कांतिनो प्रताप देदीप्यमान हतो, जेनी मोटी तपलक्ष्मी विस्तार पामी हती एवा तथा शुद्ध बुद्धिवाळा, इंद्रभूति (गौतम) गणधरनी

मुकुटमणिरिवोच्चकीर्त्तिकान्तिप्रतापः। प्रथितपृथुतपःश्रीः शुद्धधीरिन्द्रभूतेः, प्रतिनिधिरतिदक्षो जंगमः कल्पवृक्षः ॥ २८ ॥ तेन श्रीगुरुणाहितो निजपदे दीपोपमोऽदीदिपत्, सूरिः श्रीविजयादिसिंहसुगुरुः प्राज्यैर्महोभिर्जगत्। भूमौ स प्रतिबोध्य भव्यनिवहान् स्वर्गेऽप्यथ स्वर्गिणः, प्राप्तो बोधयितुं गुरौ विजयिनि प्रेमाणमुत्सृज्य नः ॥ २९ ॥ तदनु पट्टपतिर्विहितोऽधुना, विजयदेवतपागणभूभृता। गुणगणप्रगुणोऽतनुभाग्यभूर्विजयते गणभृद्विजयप्रभः ॥ ३० ॥ निर्ग्रंथः श्रीसुधर्माभिधगणधरतः कोटिकः सुस्थितार्या-च्चंद्रः श्रीचंद्रसूरेस्तदनु च वनवासीति सामंतभद्रात्। सूरेः श्रीसर्वदेवाद्वटगण इति यः श्रीजगच्चंद्रसूरे-र्विश्वे ख्यातस्तपाख्यो जयति विजयतामेष गच्छो गरीयान् ॥ ३१ ॥ इतश्च—

श्रीहिरविजयसूरी-श्वरशिष्यौ सोदरावभूतां द्वौ। श्रीसोमविजयवाचक-वाचकवरकीर्त्तिविजयाख्यौ ॥ ३२ ॥ तत्र कीर्त्तिविजयस्य किं

प्रतिकृतिरूप, अति दक्ष अने जंगम कल्पवृक्ष जेवा श्रीविजयदेव नामना सूरि थया. (२८) ते श्रीगुरुए (विजयदेवसूरिए) पोतानी पाटे स्थापन करेला सूरि श्रीविजयसिंह नामना सुगुरु दीपकनी जेम पोताना मोटा तेजवडे जगतने दीपाववा लाग्या. तेओ पृथ्वीपर भव्यजनोना समूहने प्रतिबोध करीने पोताना गुरु विजयमान (विद्यमान) छतां देवोने प्रतिबोध करवा माटे अमारा प्रेमनो त्याग करीने स्वर्गमां प्राप्त थया. (२९) त्यारपछी हमणा श्रीविजयदेव नामना तपगच्छना स्वामीए पोतानी पाटना स्वामी तरीके स्थापन करेला, मोटा गुणसमूहने धारण करनार अने मोटा भाग्यना स्थानरूप श्री विजयप्रभ नामना गणधर विजय पामे छे. (३०).

श्रीसुधर्मा नामना गणधरथी निर्ग्रंथ नामनो गण (गच्छ) प्रसिद्ध थयो, श्रीसुस्थित आचार्यथी कोटिक नामनो गण, श्रीचंद्रसूरिथी चंद्र नामनो गण, (वनमां रहेनारा) श्री सामंतभद्रथी वनवासी एवा नामनो गण, श्रीसर्वदेव नामना सूरिथी वट गण एवा नामनो गण प्रसिद्ध थयो; तथा श्रीजगच्चंद्र नामना सूरिथी विश्वने विषे जे तप नामनो गण प्रसिद्ध थयो ते मोटो गच्छ जगतमां विजय पामो. (३१)

अहीं–श्रीहीरविजयसूरीश्वरना बे शिष्यो श्रीसोमविजय वाचक (उपाध्याय) अने वाचकवर श्री कीर्तिविजय नामना सहोदर भाइओ हता. (३२) तेमां चंद्रनी जेवा

स्तुमः, सुप्रभावममृतद्युतेरिव । यत्करातिशयतोऽजनिष्ट म-त्प्रस्तरादपि सुधारसोऽसकौ ॥ ३४ ॥ प्रतिक्रियां कां बहुपक्रियाणां, गरीयसीनामनुसर्त्तुमीशे । ज्ञानादिदानैरुपचर्य सोऽयं, यैः कल्पितः कीटकणोऽपि कुंभी ॥ ३४ ॥ विनयविजयनामा वाचकस्तद्विनेयः, समदृभदणुशक्तिर्ग्रंथमेनं महार्थं । तदिह किमपि यत्स्यात्सूत्रमुत्सूत्रकाद्यं, मयि विहितकृपैस्तत्कोविदैः शोधनीयं ॥ ३५ ॥ सच्छाये सुमनोरमेऽतिफलदे काव्येऽत्र लीलावने, प्राज्ञेंदिदिरमोदके सहृदयश्रेणीमरालाश्रिते । दोषः कंटकिशाखिवद्यदि भवेन्मन्ये गुणत्वेन तं, येन व्यर्थमनोरथस्तदनुदृग् नोष्ट्रः खलः खिद्यते ॥ ३६ ॥

उत्तराध्ययनवृत्तिकारकैः, सुष्ठु भावविजयाख्यवाचकैः । सर्वशास्त्रनिपुणैर्यथागमं, ग्रंथ एष समशोधि सोद्यमैः ॥ ३७ ॥ जिनविजयाभि-

श्रीकीर्तिविजयना सुप्रभावनी अमे शी रीते स्तुति करी शकीए ? के जेना हाथना (चंद्रपक्षे किरणना) अतिशयथी मारा जेवा पत्थरथकी पण आवो अमृतरस झर्यो छे. (३३) तेमना मोटा उपकारोनो प्रतिकार करवाने माटे हुं ज्ञानादिकना दानथी घणो उपकार करुं तो पण समर्थ थइ शकुं तेम नथी, केमके तेओए मने एक लघुकीटने पण हाथी जेवो करी दीधो छे. (३४) तेमना शिष्य अल्प शक्तिवाळा विनयविजय नामना उपाध्याये (में) आ मोटा अर्थवाळो ग्रंथ रच्यो छे, तेथी आ ग्रंथमां कांइ पण उत्सूत्रादि भूलचूक थइ होय ते मारापर कृपा करीने पंडितोए शुद्ध करवी. (३५) सारी छायां[1]वाळा, अतिमनोहर, मोक्षादिक मोटा फळने आपनारा, पंडितोरूपी भमराने आनंद आपनारा अने सज्जनोनी श्रेणिरूपी हंसोए आश्रय करेला आ काव्यरूपी क्रीडावनमां जो कदाच कोइक कांटावाळा वृक्षनी जेम दोष रही गयो होय तो तेने हुं गुणकारक (सारो) मानुं छुं, केमके तेथी तेवी दोषदृष्टिवाळो खळरूपी उंट व्यर्थ मनोरथवाळो थइने खेद पामे नहीं. (३६).

श्रीउत्तराध्ययननी वृत्तिने करनारा अने सर्वशास्त्रमां निपुण एवा श्रीभावविजय नामना उपाध्याये आगमने अनुसरीने यत्नपूर्वक आ ग्रंथ सुधार्यो छे. (३७) शोधवुं

१ पूर्वना ग्रंथने अनुसरीने जे कहेवुं ते तेनी छाया कहेवाय छे.

धुनयायो, ग्रंथेऽस्मिन्नकृतायमं सुतरां । लिखितप्रथमादर्शाः, शोधनशि-
क्षणादिपटुमतयः ॥ ३८ ॥ वसुखाश्वेंदुप्रमिते (१७०८), वर्षे हर्षेण जीर्ण-
दुर्गपुरे । राधोज्ज्वलपंचम्यां, ग्रंथः पूर्णोऽयमजनिष्ट ॥ ३९ ॥

एतद्ग्रंथग्रथन—प्रचितात्सुकृतान्निरंतरं भूयात् । श्रीजिनधर्मप्राप्तिः,
श्रोतुः कर्तुश्च पठितुश्च ॥ ४० ॥ द्रव्यक्षेत्रादिभावा य इह निगदिताः
शाश्वतास्तीर्थकृद्भि—र्जीवा वा पुद्गला वा कलितनिजकलाः पर्ययापेक्षया
ते । यावत्तिष्ठंति तावज्जगति विजयतां ग्रंथकल्पद्रुमोऽयं, विद्वद्वृंदार-
काद्यैः प्रमुदितसुमनाः कल्पितप्राप्तसिद्धिः ॥ ४१ ॥

इति श्रीलोकप्रकाशनामा ग्रंथः संपूर्णः ।

श्रीरस्तु । ग्रंथाग्रं (श्लोकसंख्या) २०६२१ ।

अने लखवुं विगेरे कार्यमां निपुण बुद्धिवाळा श्रीजिनविजय नामना गणिए आनी प्रथम प्रत लखीने आ ग्रंथमां घणो सारो उद्यम कर्यो छे. (३८) संवत १७०८ वर्षे वैशाख शुदि पंचमीने दिवसे जीर्णदुर्ग (जुनागढ) पुरमां आ ग्रंथ पूर्ण थयो छे. (३९).

आ ग्रंथ रचतां प्राप्त थयेला सुकृतथी श्रोताने, कर्ताने अने भणनारने निरंतर जिन-धर्मनी प्राप्ति थाओ. (४०). तीर्थकराए आ जगतमां द्रव्य, क्षेत्रादिक जे भावो—पदार्थो कह्या छे तथा जीव अने पुद्गळो जे पोतपोतानी कळा—अंश सहित कह्या छे, ते सर्व पर्यायनी अपेक्षाए ज्यांसुधी रहे त्यांसुधी उत्तम विद्वानोने पूजवालायक अने देवोने आनंद आपनार तथा इष्ट अर्थनी सिद्धिने करनार आ ग्रंथरूपी कल्पवृक्ष जगतने विषे विजयवंत वर्तो. (४१).

